मलयाळम

महाभारतम्

तुञ्चत्त अॆळुत्तच्छन्

हिन्दी-अनुवाद सहित देवनागरी-लिप्यन्तरणकार

श्री को० अ० सुब्रह्मण्य अय्यर
भूतपूर्व उपकुलपति, लखनऊ-विश्वविद्यालय एवं
वाराणसी संस्कृत विश्वविद्यालय

प्रकाशक

भुवन वाणी ट्रस्ट

वर्तमान पताः— मौसम बाग़ (सीतापुर रोड), लखनऊ—२२६०२०



'प्रत्येक क्षेत्र, प्रत्येक सत की बानी।
सम्पूर्ण विश्व मे घर-घर है पहुँचानी॥'

प्रथम सस्करण— जुलाई, १९७५ ई०

पृष्ठसंख्या—१८×२२÷८=१२१६

मूल्य— ७०·०० रुपया

मुद्रक

बाणी प्रेस

'प्रभाकर निलयम्', ४०५/१२८, चोपटियाँ रोड, लखनऊ–२२६००३

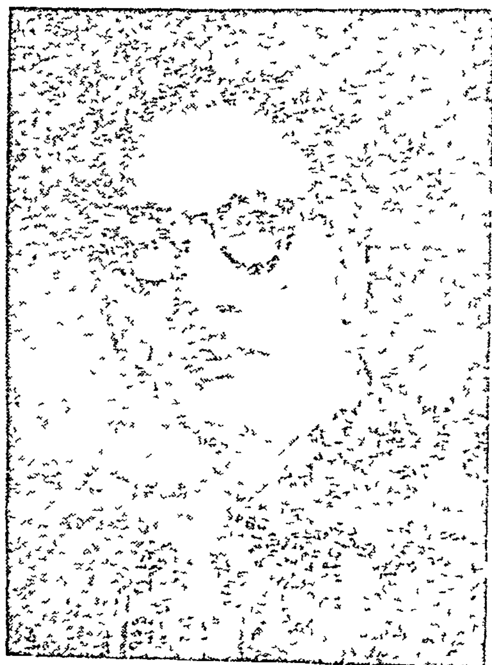
"पद्मपत्रमिवाम्भस"

उत्तरप्रदेश शासन, काग्रेस सगठन, गाधी आश्रम एव सभी रचनात्मक कार्यक्रमो मे, अनन्य निष्ठा, अनन्य निस्पृहभाव से जल-कमलवत् आजीवन संलग्न श्री विचित्र भाई (श्री विचित्रनारायण शर्मा, अध्यक्ष गांधी स्मारकनिधि उ० प्र०) से कौन परिचित नही ! सत्ता और जनता—सर्वत्र उनको प्राप्त समादर ने ट्रस्ट को अपरिमित बल प्रदान किया है। वे हमारे ट्रस्ट के महान् सरक्षक है।

भुवन वाणी ट्रस्ट के भाषाई सेतुकरण की पुष्कल सफलता मे श्री विचित्र भाई की सर्वोपरि सहायता है। सत्य यह है कि आज कल की अनेक व्यवहारिक जटिलताओ मे, उनकी आये दिन की सहायता के विना, ट्रस्ट का कार्य-संचालन ही दूभर हो जाता—प्रशसा मात्र ही हाथ लगती। अस्तु, मलयाळम के वृहद्ग्रथ 'अॅलुत्तच्छन् विरचित महाभारत' के सानुवाद लिप्यन्तरण से उनको माल्यार्पण करते हुए हम आज अपने को कृतकृत्य मान रहे है।

माल्यार्पण

अॅलुत्तच्छन् * विरचित



लिप्यन्तरण * देवनागरी

मलयाळम महाभारत का सानुवाद

१० जुलाई, १९७५

रथयात्रा-दिवस

[signature]

प्रतिष्ठाता—भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ—३

विषय-सूची



प्रकाशकीय

प्रस्तुत ग्रन्थ के अनुवादक और नागरी लिप्यन्तरणकार, हमारे प्रदेश के प्रकाण्ड विद्वान् श्री को० अ० सुब्रह्मण्य अय्यर द्वारा लिखित उपोद्घात (पृष्ठ ९-२४) के बाद कुछ लिखने को अवशेष नही रहता। अलबत्ता पृष्ठ ८ पर, मलयाळम की वर्णमाला, उसका नागरी रूप, कुछ विशिष्ट उच्चारण, और मुद्रण-प्रकाशन सम्बन्धी सूचनाएँ—इस सम्बन्ध मे कुछ पंक्तियाँ मैंने प्रस्तुत की है।

वयोवृद्ध, महामना श्री अय्यर महोदय ने, अपनी प्रतिकूल स्वास्थ्य की अवस्था मे भी, अत्यन्त तत्परता, स्नेह और निस्पृह भाव से, १२५० पृष्ठ के इस विशाल मलयाळम ग्रन्थ का सानुवाद लिप्यन्तरण दो ढाई वर्ष मे पूरा करके ट्रस्ट के हवाले कर दिया, यह मेरे श्रम पर उनकी करुणा, ट्रस्ट के पुनीत उद्देश्य के प्रति उनका आशीर्वाद ही है। यह भार, कैसे उदार और सदाशय मन से लेने की उन्होने कृपा की, यह उपोद्घात पृष्ठ ११ और २४ मे उन्ही के शब्दो मे परिलक्षित है।

रहा प्रकाशन। वड़ा खर्चीला काम था। इसमे देश के उदार श्रीमन्त जन और उत्तर प्रदेश शासन की आशिक सहायता रही। साथ-साथ मे अन्य भाषाओ के लगभग वीस ग्रन्थों का प्रकाशन भी चल रहा था। भगवान् की कृपा से भारत सरकार के हिन्दी सलाहकार श्री रमाप्रसन्न नायक और तत्कालीन गृहमन्त्री श्री उमाशंकर जी दीक्षित की दृष्टि ट्रस्ट के भाषाई सेतुकरण के पुष्कल कार्यो की ओर गई। उनकी सस्तुति, पर शिक्षा एव समाजकल्याण मन्त्रालय, भारत सरकार की कृपा हुई। फलस्वरूप, ग्रन्थ के शेषाश को पूरा करके अखिल देश की जनता के सामने प्रस्तुत करने की नौवत आई। शिक्षामन्त्रालय के मर्मज्ञ विद्वान् डाइरेक्टर श्री सनत्कुमार चतुर्वेदी जी की वड़ी कृपा रही। हम इन महानुभावो का, भाषाई सेतुकरण के राष्ट्रीय कार्य में उत्तरोत्तर दृढ और कार्यरत रहने का सकल्प लेते हुए, आभार प्रर्दन करते है।

सहर्ष सूचना है कि अेळुत्तच्छन् कृत मलयाळम 'महाभारत' के सम्पूर्ण होते ही, उसी महान् कवि की दूसरी प्रख्यात रचना 'अध्यात्म रामायण' का सानुवाद नागरी लिप्यन्तरण का प्रकाशन आरभ हो गया है।

नन्दकुमार अवस्थी

प्रतिष्ठाता—भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ-३

ज्ञातव्य—मलयाळम भाषा के ५ विशिष्ट 'वर्ण'—ळ, ऴ, ऱ, ट़, ऩ, का उच्चारण इस प्रकार है—'ळ' मूर्धन्य, जिह्वा को उलट कर जिह्वाग्र से 'प' के स्थान पर तालु स्पर्श कर 'ल' का उच्चारण करने पर प्रकट होता है। 'ऴ' मूर्धन्य, जिह्वा उलटकर जिह्वाग्र से 'प' के स्थान पर तालु स्पर्शकर 'र' का उच्चारण करने पर 'ऴ' के समान ध्वनि उत्पन्न करता है। 'ऱ' यह मूर्धन्य वर्ण हिन्दी 'र' की अपेक्षा जिह्वा को कुछ अधिक उलटकर जिह्वाग्र से अधिक स्फुरण करते हुए, अन्यथा 'ऱ' के बजाय 'ऴ' जैसा सुनाई देगा। 'ट़' हिन्दी 'ट' के समीप है। जीभ को वर्त्स्य पर एक क्षण चिपका कर तुरत हटा लेना चाहिए 'That' के अंतिम 'टी' के उच्चारण के सदृश। 'ऩ' का उच्चारण जिह्वाग्र को दोनो दन्तावलियों के बीच मे मुंह के भीतर ही रखकर, इस दन्त्य वर्ण मे मिलता-जुलता देवनागरी का 'न', 'न' की अपेक्षा जीभ को जरा ऊपर रखकर स्पर्श किया जाता है।

मलयाळम मे ए और ओ की मात्राएँ ह्रस्व और दीर्घ दो प्रकार की होती हैं। इनमे ह्रस्व के लिए ॆ और ॊ तथा दीर्घ के लिए े और ो देवनागरी मे क्रमश. प्रयुक्त हैं। पौलोम और आस्तीक पर्व मे ॅ ॉ, और शेष ग्रन्थ मे ॆ ॊ का प्रयोग हुआ है। ह्रस्व ऎकार और ऒकार के लिए ॆ ॊ— ये चिह्न आचार्य विनोबा भावे, अ० भा० विक्रम परिषद, अ० भा० काशिराजन्यास और भुवन वाणी ट्रस्ट लखनऊ द्वारा प्रयोग मे लाये जा रहे हैं। ये लेखन-मुद्रण मे सरल और सुन्दर हैं। उदाहरण—'जॆहि' और 'जॆठ' एव घॊडदौड' और 'घॊडा'। देवनागरी लिपि मे मलयाळम के उकारात शब्दो के ऊपर किन्ही अवसरो पर चन्द्र ॅ भी लगा देते है। उच्चारण उकार नही वरन् असम्पूर्ण अर्थात् ह्रस्व 'अकार' जैसा होता है। जैसे 'वलियतुँ' के 'त' को विस्तार से न पढे। मलयाळम शब्द का अन्तिम सस्वर अक्षर हिन्दी की भाँति हलन्त नही बोला जायगा। यथा राम को Rama पढें, न कि हिन्दी के अनुकरण पर राम्।

मलयाळम-देवनागरी वर्णमाला

അ अ क	ആ आ का	ഇ इ कि	ഈ ई की	ഉ उ कु
ഊ ऊ कू	ഋ ऋ कृ	ൠ ॠ कॄ	ഌ ऌ	ൡ ॡ
എ ऎ कॆ	ഏ ए के	ഐ ऐ कै	ഒ ऒ कॊ	ഓ ओ को
	ഔ औ कौ	അം अं कं	അഃ अः कः	
ക क	ഖ ख	ഗ ग	ഘ घ	ങ ङ
ച च	ഛ छ	ജ ज	ഝ झ	ഞ ञ
ട ट	ഠ ठ	ഡ ड	ഢ ढ	ണ ण
ത त	ഥ थ	ദ द	ധ ध	ന न ऩ
പ प	ഫ फ	ബ ब	ഭ भ	മ म
യ य	ര र	ല ल	വ व	ശ श
ഷ ष	സ स	ഹ ह	ള ळ	ക്ഷ क्ष
	ഴ ऴ,ऴ	റ ऱ,ऱ	ററ ट़	

—नन्दकुमार अवस्थी

उपोद्घात

१ भारतीय भाषाओ के बीच 'मलयाळम' का स्थान विकसितो में है, क्योकि उसकी शब्दराशि समृद्ध है और उसका साहित्य प्राचीन और सर्वतोमुख है। यद्यपि 'मलयाळम' बोलनेवालो की सख्या हिन्दी आदि कुछ अन्य भाषाभाषियों की सख्या की अपेक्षा बहुत कम है तथापि उनमें शिक्षितो का अनुपात बहुत अधिक होने के कारण 'मलयाळम' भाषा और साहित्य का श्लाघनीय विकास हुआ है।' आज मलयाळम-भाषियो की सख्या क्या है, यह मैं निश्चितरूप से नही कह सकता हूँ। मेरा अनुमान है कि वह लगभग दो या सवा दो करोड होगी। वह अपनी मलयाळम लिपि मे लिखी जाती है जिसका विकास भी अन्य भारतीय लिपियो की भाँति, सम्राट् अशोक के समय की ब्राह्मी लिपि से हुआ था। मलयाळम लिपि भी वर्णचिह्नो का एक समूह है और इसमे वर्णचिह्नो के बनाने की रीति वही है जो देवनागरी, बङ्गला आदि अन्य लिपियो मे प्रसिद्ध है। यह रीति प्राचीन है और भारत की अपनी है। यद्यपि वर्णचिह्नो के बनाने की रीति भारतीय भाषाओ की वही है तथापि ये लिपि तो परस्पर भिन्न है और हर एक लिपि विशेष प्रयत्न करके सीखने से ही पढ़ी जा सकती है। एक लिपि के सीखने से अन्य लिपियाँ, बिना पृथक् प्रयत्न किये, नही पढी जा सकती हैं। इसका नतीजा यह है कि हम भारतीय अपनी मातृभाषा के अतिरिक्त अन्य भारतीय भाषाओ को सीखने के लिए बहुत कम प्रयत्न करते है। दो या अधिक भारतीय भाषा जाननेवाले भारतीयो की संख्या बहुत कम है। समस्त भारतवर्ष की जनता मे कोई एक लिपि पढना और लिखना जाननेवालो का अनुपात जब पचीस प्रतिशत भी नही हुआ है, तो दो-दो, तीन-तीन लिपि जाननेवालों का जनता मे अनुपात ए— भी नही होगा।



श्री को० अ० सुब्रह्मण्य अय्यर
भू० पू० उपकुलपति लखनऊ वि० वि०
और वाराणसी संस्कृत विश्वविद्यालय

२ आज भारत मे प्रचलित लिपियो मे देवनागरी लिपि एक है। उसी का सबसे अधिक प्रचार और प्रसार है। इसका मुख्य कारण यह है कि भारतीय भाषाओ मे सबसे अधिक व्यापक हिन्दी भाषा इस लिपि मे लिखी जाती है। हिन्दी के अतिरिक्त मराठी भाषा भी इसी लिपि मे लिखी जाती है। तीसरी वात यह है कि भारत की सबसे प्राचीन और भारत के सभी प्रदेशो मे व्याप्त सस्कृतभापा प्राय इसी लिपि मे लिखी जाती है। जिन प्रदेशो मे सस्कृत पहले अन्य लिपियो मे लिखी जाती थी वहाँ भी कम से कम पिछले पचास वरसो मे वह देवनागरी लिपि मे लिखी जा रही है। समस्त भारत मे सस्कृत को देवनागरी मे लिखना और छापना, अब लोग अत्यन्त स्वाभाविक समझने लगे है।

इतना होते हुए भी स्मरण रहे कि अव भी देवनागरी के अतिरिक्त दस-पन्द्रह अन्य लिपियाँ भी तत्तद्भाषाओ के लिए प्रयुक्त की जा रही है। यह मानना ही पड़ेगा कि इतनी लिपियो का सद्भाव राष्ट्र के एकी-करण मे वाधक है। मै यह नही कहता हूँ कि जहाँ अनेक देशो की भाषाएँ एक ही लिपि मे लिखी जाती है वहाँ उन देशो का एकीकरण अनायास से हो जाता है। इसका एक ज्वलन्त उदाहरण पश्चिम योरप है। पश्चिम योरप अनेक देशो मे विभक्त है और हर एक देश की अपनी भाषा अलग है। परन्तु इन सव भापाओ की एक ही अक्षरमाला है, जो A से प्रारम्भ होकर Z मे समाप्त होती है, और जर्मनी के Gothic Script को छोडकर, सव जगह एक ही प्रकार लिखी जाती है। परन्तु इस अक्षरमाला और लिपि की एकता से पश्चिम योरप का कभी एकीकरण नही हुआ। इसका प्रमाण यह है कि पिछली दो-तीन शताब्दियो मे वहाँ एक के वाद एक लगातार देशो के परस्पर युद्ध ही होते रहे है। अन्त मे वहाँ ऐसी परिस्थिति पैदा हो गयी है कि अगर एक महायुद्ध और हुआ तो ये देश न केवल स्वय नष्ट होगे अपितु अन्य देशो का भी, यानी सारे ससार का भी नाश करेगे। अस्तु, यह दूसरा विषय है। जहाँ तक भारत से सवन्ध है, स्वातत्र्य के बाद हम महसूस करने लगे है कि हमारी एकता मे कमी है। देश, भाषा, जाति आदि उपाधियो पर आश्रित भिन्न-भिन्न अनेकतावाद राष्ट्र मे सुनाई दे रहे है जिनको मान्यता देने से जो राष्ट्रकार्य सव मिलजुलकर एक होने से आसानी से किये जा सकते है वे नही हो पा रहे है। भारतीय सस्कृति मे भेद और अभेद सदा से रहे है, भेद तो गौण रूप मे और अभेद प्रधान रूप मे। इन दोनों को उस स्थिति मे रखना वहुत आवश्यक है। यह न हो कि उनका गुणप्रधानभाव पलट जाय। इसलिए यह वहुत आवश्यक है कि एकी-करण की अनुकूल वातो को प्रोत्साहन दिया जाय और उसकी प्रतिकूल

वातों का निरोध हो जाय। इसलिए मै इस पक्ष का हूँ कि स्वतन्त्रभारत की एक एकीकरण भाषा हो और वह एक एकीकरण लिपि मे लिखी जाय। अगर यह पक्ष ग्राह्य है तो इसका एक ही निष्कर्ष हो सकता है और वह यह कि हिन्दी भाषा का और देवनागरी लिपि का अधिक से अधिक प्रचार और प्रसार होना चाहिए। इसमें क्या सन्देह हो सकता है कि अगर समस्त भारतीय भाषाएँ हिन्दी और मराठी की तरह देवनागरी लिपि में लिखी जायँ तो यह राष्ट्र के एकीकरण को एक कदम आगे वढाना है। हर एक भारतीय अगर हिन्दी वोल सकता है और लिख सकता है तो राष्ट्र का एकीकरण निकट आगया है। इसी प्रकार अगर हर एक भारतीय अपनी भारतीय भाषा को देवनागरी लिपि मे भी लिखेगा, तो वह भी एकीकरण के निकट होने का एक चिह्न है। एकीकरण को निकट लाने के लिए इस प्रकार अनेक कदम एक साथ उठाने पड़ेंगे। नही तो इसमे समय अधिक लगेगा जो वाछनीय नही है। हमारा दावा यह है कि हमारी सस्कृति एक उच्चकोटि की सस्कृति है। एक उच्चकोटि की सस्कृति का यही लक्षण है कि जिस देश मे उसका निर्माण होता है केवल उस देश की जनता के लिए वह निर्मित नही की जाती है, परन्तु मानव मात्र के लिए निर्मित की जाती है। प्राचीन भारत मे जिस अद्भुत सस्कृत भाषा का निर्माण हुआ वह केवल भारतीयो के लिए नही निर्मित की गयी। वह भारत से अनेक अन्य देशो मे गयी, वहाँ की जनता ने उसे अपनाया और उसमे साहित्य निर्माण किया। इस युग मे भारत एक भाषा और एक साहित्य का नही परन्तु अनेक भाषाओ और साहित्यो का निर्माण कर रहा है। क्यों ?। केवल अपनी जनता के लिए नही। सारे संसार के लिए है। ये सव भाषाएँ, लिपियाँ और साहित्य इस जगत् को भारत की देन है। इनको ससार के कोने-कोने में पहुँचाना है। जैसे "वाणी-सरोवर" के हर एक अक के प्रारम्भ मे छपा है:—

"प्रत्येक क्षेत्र प्रत्येक सत की वानी। सम्पूर्ण विश्व मे घर घर है पहुँचानी ।।"

३. यह एक वहुत वड़ा काम है। एक वहुत वडी इमारत खड़ी करनी है। इसमे कार्यसिद्धि तभी होगी जव भारत के सभी प्रदेशो के रहनेवाले असख्य कर्मचारी लग जायेगे और वरसो लगे रहेगे। जव भुवनवाणी ट्रस्ट के मुख्यन्यासी और वाणी सरोवर के सम्पादक प० नन्दकुमार अवस्थी जी ने हमसे पूँछा कि "क्या आप इस वड़ी इमारत के निर्माण मे एक ईंट कही लगा सकते हैं?", तव हमने उत्तर दिया, "अगर आप हमको इस योग्य समझते है तो हम यह काम वड़ी खुशी से करेगे। हम मलयाळम साहित्य के चार सौ वरस पुराने, महाकवि तुञ्चत्त् एळुत्तच्छन् की कृति मलयाळम महाभारत का लिप्यन्तरण और हिन्दी अनुवाद कर सकते है"। प० नन्दकुमार जी ने

हमारे प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया और लिप्यन्तरण और अनुवाद का काम विना विलम्व के प्रारम्भ हुआ। अव तीन चार साल के वाद समाप्त भी हो गया है। वह देवनागरी लिपि मे छपा हिन्दी अनुवाद सहित 'मलयाळम महाभारत' अव पाठको के सामने है।

४ महाकवि तुञ्चत्त् एऴुत्तच्छन्—एऴुत्तच्छन् का मलयाळम साहित्य मे प्राय. वही स्थान है जो हिन्दी साहित्य मे महाकवि तुलसीदास का है। दोनो महाकवियो का समय भी करीव-करीव समान है। 'एऴुत्तच्छन्' आधुनिक मलयाळम भापा और साहित्य के पिता समझे जाते है। उन्होने प्राचीन और अर्वाचीन रचना-रीतियो का समन्वय किया है। तमिळ के प्रभाव से विकल 'पाट्टु' और सस्कृतप्रचुर 'मणिप्रवाळम्' के वीच मलयाळम की अपनी निजी शैली को स्थिर किया है। उन्होने न केवल साहित्यिक और सास्कृतिक दृष्टि से अपितु आध्यात्मिक दृष्टि से भी एक नवोत्थान प्रारम्भ किया है। अपने किळिप्पाट्टु की शैली द्वारा वेदान्त के तत्त्वो का प्रचार करनेवाले, और कोई कवि जनता का आराधन के पात्र नही वन सके।

यह माना जाता है कि महाकवि का जन्म केरल राज्य के अन्तर्गत पुराने मलवार जिले के पोन्नानि तालूक के तृक्कण्टियूर् अश मे स्थित तृक्कण्टियूर् मन्दिर के पास 'तुञ्चन् परम्पु' नामक विख्यात स्थान के पास एक घर मे हुआ था। यद्यपि उनके समय, और अन्य वातो के सम्वन्ध मे निश्चित रूप से कुछ कहा नही जा सकता है तथापि गवेषक विद्वानो मे इतना मतैक्य तो अवश्य है कि उनका जीवनकाल सन् १४७५ और सन् १५७५ के वीच मे ही रहा होगा। उनके माता-पिता के जाति के और नाम तक के सवन्ध मे सन्देह है। एक प्रचलित ऐतिह्य यह है कि उनके पिता एक नम्पूतिरि ब्राह्मण थे और माता एक 'नायर' जाति की स्त्री थी। विद्वानो का, विशेपत महाकवि उल्लूर परमेश्वर अय्यर का गहरे विचार के वाद प्राप्त अभिप्राय यह है कि इस ऐतिह्य मे कुछ भी तत्त्व नही है[1]। ज्यादातर यही सभव मालूम होता है कि वे जाति के नायर थे। जहाँ तक उनकी शिक्षा से सवन्ध है उन्होने 'अपने अध्यातमरामायण'[2] मे कहा है कि उनके वडे भाई 'रामन्' ही उनके मुख्य गुरु थे। 'रामन्' के छोटे भाई होने के कारण ये 'रामानुजन्' कहलाने लगे। कुछ विद्वानो ने यह भी सभावना की है कि उनका नाम 'शङ्करन्' या 'सूर्यनारायणन्' था। औरो के मत में ये दोनो नाम उनके शिष्यो के थे, उनके नही। 'रामानुजन्' नाम की ही केरल मे अधिक प्रसिद्धि है। फिर भी यह निश्चित रूप से कहा नही जा

१. उल्लूर. एस परमेवश्र अय्यर—केरल साहित्य चरित्रम् II पृ. ४८३.
२. एऴुत्तच्छन्—अध्यातमरामायणम्. पृ. ४. संस्करण मंगलोदयम् प्रेस—तृशिवपेरूर (त्रिचूर) ११०१ (सन् १९२६)

सकता है कि उनका नाम क्या था। वे 'तुञ्चत्त् एळुत्तच्छन्' अर्थात् 'तुञ्चत्त् घराने का आचार्य' इस नाम से ही आज तक केरल मे विख्यात है। इसमे उनका व्यक्तिगत नाम अन्तर्गत नही है।

प्राथमिक विद्याभ्यास के बाद उन्होने अपने बडे भाई और अन्य गुरुओ के चरणो मे बैठकर सस्कृत मे काव्य, नाटक आदि से लेकर वेदान्तशास्त्र तक के विविध विषयों का अभ्यास किया और मलयाळम मे अपने समय तक के समस्त साहित्य का अगाध परिशीलन किया। इस बात के असख्य प्रमाण उनकी कृतियो मे बिखरे मिलते है। यौवन से ही उनको देश-पर्यटन करने का शौक था। देशसचार करने के बाद अपने जन्मस्थान तृक्कण्टियूर वापस आये और वहाँ एक पाठशाला स्थापित करके वे अध्यापक-वृत्ति में प्रवृत्त हुए। माना जाता है कि उन्होने विवाह किया और एक पुत्री के पिता भी हुए। तृक्कण्टियूर मे जब अध्यापक वृत्ति करते थे तभी उन्होने अध्यात्मरामायण, महाभारत आदि कृतियो की रचना की। वार्धक्य मे उन्होने एक बार और देशसंचार किया, विशेषत: तीर्थों के दर्शन के लिए, ऐसा कहा जाता है। बाद मे जो गुरुमठ चिट्टूर मे स्थापित हुआ वह भी इस द्वितीय देशसचार के बादही हुआ, इसमे कोई संदेह नही है। सन्देह केवल इस बात पर है कि मठस्थापना स्वय एळुत्तच्छन् ने की थी, अथवा उनके शिष्य सूर्यनारायण ने की थी। यह भी सभावना तिरस्करणीय नही है कि एळुत्तच्छन् के आदेशानुसार उनके शिष्य सूर्यनारायणन् ने गुरुजी के स्वर्गवास के बाद मठ की स्थापना की और गुरुजी की पुत्री अथवा नातनी से उनका योगदण्ड, भस्म की थैली, खडाऊँ, भागवत आदि ग्रन्थ ले जाकर बाद मे उनकी प्रतिष्ठा मठ मे की। सन् १८६८ मे जो अग्निकाण्ड मठ मे हुआ था उसमे अनेक पदार्थ नष्ट हुए, कुछ कमरे जल गये और पास के गाँव के कुछ भवन भी जल गये, परन्तु गुरुजी का योगदण्ड और खडाऊँ बच गये। वे आज भी पीठ पर रखे उपलब्ध है। पीठ के पास ही किसी गुरु के शिला-पट्टमय ढक्कन सहित एक समाधि भी है। यह समाधि तो शिष्य आचार्य सूर्यनारायण का भी हो सकता है, परन्तु योगदण्ड और खड़ाऊँ महाकवि एळुत्तच्छन् के ही थे, इसमे कोई सन्देह नही हो सकता है। शिष्य सूर्य-नारायण के समय से मठ मे कुछ पुण्यदिन आज भी मनाये जा रहे है—जैसे महाकवि के श्राद्ध का दिन—यानी मास मार्गशीर्ष उत्तर नक्षत्र का दिन जब, यही माना जाता है कि उन्होने समाधि प्राप्त की। स्थानीय श्रीराम के मन्दिर मे नवरात्रि के दिन दीप जलाये जाते है और माह-फागुन मे रथोत्सव भी होता है। यही माना जाता है कि यह सब महाकवि एळुत्तच्छन् की स्मृति मे ही किया जाता है।

५ एळुत्तच्छन् की कृतियाँ—यहाँ प्रश्न उठता है कि महाकवि की असली कृतियाँ कौन-कौन है। निम्नलिखित ग्रन्थ उनके नाम से कही न

कही प्रसिद्ध हुए है—१-अध्यात्मरामायण, २-उत्तररामायण, ३-महाभारतम् ४-देवीमाहात्म्य, ५-ब्रह्माण्डपुराणं, ६-शतमुखरामायणम् (सीताविजय) ७-भागवत, ८-हरिनामकीर्तन, ९-चिन्तारत्नं १०-कैवल्यनवनीत, ११-रामायण इरुपत्तिनालुवृत्त, १२-केरलनाटकम् । एळुत्तच्छन् के सम्बन्ध मे वही बात हुई जो पहले कालिदास के सम्बन्ध मे हो चुकी थी-- यानी, औरो ने अपनी कृतियो का प्रचार बढाने के लिए उनको कालिदास के नाम आरोपित कर दिया था। परन्तु यह मिथ्यारोपण विद्वानो की विवेकदृष्टि मे टिक नही सकता है। जहाँ तक एळुत्तच्छन् से सम्बन्ध है, अध्यात्मरामायण, महाभारत, देवीमाहात्म्य, इन तीनो के सम्बन्ध मे विद्वानो का कोई मतभेद नही है। औरो के सम्बन्ध मे किसी न किसी समालोचक विद्वान् ने एळुत्तच्छन् के कर्तृत्व पर सन्देह समुद्भावित किया है। इसलिए उनके विषय मे सोच-विचारकर निर्णय करना है।

उत्तररामायण के सम्बन्ध मे विद्वानो ने दिखलाया है कि यह ग्रन्थ सस्कृत अध्यात्मरामायण के उत्तरकाण्ड पर, जो अतीवसक्षिप्त है, आधारित नही है। अधिक संभव यह है कि वह वाल्मीकि के उत्तरकाण्ड पर, अथवा उस पर आश्रित कण्णश्शरामायण पर आधारित है। कई समालोचको के अनुसार भागवत मे इतनी गलतियाँ है कि वह एळुत्तच्छन् जैसे विद्वान् की कृति हो ही नही सकती है, पर श्री परमेश्वर अय्यर का अन्तिम निष्कर्ष नीचे दिया जायगा। शतमुखरामायण भी, जिसका दूसरा नाम 'सीताविजयं' है, एळुत्तच्छन् की कृति है इस बात का साधक कोई भी अन्तरङ्ग प्रमाण नही मिलता है। 'हरिनामकीर्तन' के सम्बन्ध मे विद्वानो मे मतभेद है। जहाँ श्री नारायण पिल्ले और श्री अच्युत मेनन, एळुत्तच्छन् के कर्तृत्व के पक्ष मे है वहाँ श्री उल्लूर परमेश्वर अय्यर उसे महाकवि की कृति नही मानते हैं। 'चिन्तारत्न' वेदान्त के तत्त्वो का सरलरीति से प्रतिपादन करनेवाला एक उपदेशग्रन्थ है। कहा जाता है कि महाकवि ने उसे अपनी पुत्री या भान्जी की शिक्षा हेतु लिखा था, परन्तु इसके लिए कोई प्रमाण नहीं है। उसके कविता गुणो के निचले स्तरके होने के कारण समालोचक विद्वान् उसे एळुत्तच्छन् की कृति नही मानते हैं। 'रामायण इरुपत्तिनालुवृत्त (चौवीसवृत्त)' के विषय मे अब विद्वानो का ऐकमत्य हो गया है कि वह एळुत्तच्छन् की कृति नही है। वह लडकियो की शिक्षा के लिए पाठशालाओ मे इस्तेमाल किया जाता है। यह माना जाता है कि उसके अन्तर्गत भगवान् के नामो के उच्चारण मे लड़कियो की भगवद्भक्ति, शब्दव्युत्पत्ति और सगीतवासना उत्पन्न हो जाती है। इस ग्रन्थ के चौवीसो वृत्त द्राविड वृत्त है। ग्रन्थकर्ता ने कवि पुन की रामायणचम्पू की अनेक बातों का अपहरण किया। इसी प्रकार भोजचम्पू और आश्चर्यचूडा-मणि आदि परग्रन्थो से भी अनेक आशयो का अपहरण हुआ है। अतएव इस

ग्रन्थ को एऴुत्तच्छन् की कृति मानना बिलकुल असभव है। 'भागवतं' के विषय में विद्वानो मे बड़ा मतभेद चला है। बहुत विचार करने के बाद उल्लूर श्री परमेश्वर अय्यर निम्नलिखित निष्कर्ष पर पहुँचे—"एऴुत्तच्छन् ने श्रीमद्-भागवत का अनुवाद वार्धक्य मे ही प्रारम्भ किया और कुछ अंशो को अपनी पुत्री या अपने किसी शिष्य से लिखवाया होगा। ऐसे अशो को अन्त मे स्वय देखकर सशोधन करने के लिए उनको समय नही मिला होगा। इसलिए कुछ त्रुटियाँ रह गयी है पर कृति एऴुत्तच्छन् की ही है। यह कोई आश्चर्य की बात नही है कि चिटूर के गुरुमठ मे आज भी भागवतं की पूजा की जाती है।"

६. अब सदिग्ध ग्रन्थों का विचार छोडकर महाकवि की असली कृतियो का स्वरूप समझने का प्रयत्न करना उपयुक्त होगा। जैसे पहले ही कहा गया है– अध्यात्मरामायण, महाभारत और देवीमाहात्म्य इन तीनो कृतियो के कर्तृत्व के विषय मे विवाद नही है। तीनो "किळिप्पाट्टु" = "चिड़िया-गीत" है। किळिप्पाट्टु मलयाळम साहित्य की एक विशेष शाखा है। इसकी विशेपता यह है कि इसमे कथा को कहनेवाली एक चिड़िया, यानी, एक शुकी होती है। कुछ लोग मानते है कि कथा सुनाने की यह रीति सबसे पहले एऴुत्तच्छन् ने ही अपनायी थी और बाद मे असंख्य कवियो ने उनका अनुसरण किया। जो मानते है कि यह रीति एऴुत्तच्छन् के पहले की है वे कोई प्रमाण नही दे पा रहे है। हाँ, एऴुत्तच्छन् ने अपने किळिप्पाट्टु मे जो छन्द इस्तेमाल किये है इनमे से कुछ उनके पहले की कृतियो में भी उपलब्ध है, परन्तु छन्द एक चीज है और किळिप्पाट्टु दूसरी चीज है। एऴुत्तच्छन् के बाद यह रीति मलयाळम साहित्य मे रूढमूल हो गयी और असख्य किळिप्पाट्टु लिखे गये हैं और आज भी लिखे जा रहे है। इतनी वडी सख्या मे आज तक किळिप्पाट्टु ग्रन्थों की उत्पत्ति होने पर भी उनमे कोई भी एऴुत्तच्छन् के महाभारत का तुल्य नही है। उन्ही के अध्यात्मरामायण और देवीमाहात्म्य, महाभारत से कुछ निचले स्तर के है। वे दोनों कृतियाँ सस्कृतग्रन्थो के अनुवाद हैं। यद्यपि दोनो मे महाकवि के मूल मे अनुपलब्ध कुछ अंशो को अपनी प्रतिभा के अनुसार जोड दिया है, फिर भी अनुवादक होने के कारण उनपर शब्द और अर्थ दोनो के विषय मे नियन्त्रण था। महाभारतं की बात दूसरी थी। यहाँ अनुवाद नही करना था। संस्कृत मे लिखे एक समुद्रसमान ग्रन्थ का मलयाळम मे सक्षेप करने का काम था। मूलकथा की रक्षा करते हुए असख्य वर्णनो और धर्म, नीति आदि उपदेशो को ग्रन्थविस्तारभय से छोड़ना था, अनेक उपाख्यानो को त्यागकर कुछ मार्मिक उपाख्यानो को रखना था। इस प्रकार के काम मे शब्दविषय नियन्त्रण

१. उल्लूर परमेश्वर अय्यर—केरल साहित्य चरित्रम् II पृ. ५३९-५४०

वहुत कम है और कवि को अपने मूलसिद्धान्त और स्वाभाविक भावो को प्रकट करने के लिए और अपनी प्रतिभा को उड़ने देने के लिए पर्याप्त अवसर मिल जाते है। महाकवि एळुत्तच्छन् एक दार्शनिक थे, बड़े भक्त भी थे। वे मूलत. वेदान्ती थे, पर किसी भी दर्शन के प्रति द्वेष स्वल्प मात्रा मे भी उनके दिल मे न था। अपनी कृतियो को भक्तिग्रन्थ का रूप देने का उनका पूरा उद्देश्य था। जहाँ अध्यात्मरामायणं एक राम-भक्ति का ग्रन्थ वना, वहाँ महाभारत एक कृष्णभक्ति का ग्रन्थ है। सस्कृत के समुद्रतुल्य महाभारत को सक्षिप्त करना उनका मुख्य उद्देश्य था, परन्तु लम्वी-लम्वी भगवान् की स्तुतियाँ भी अपने महाभारत मे उन्होने जगह-जगह जोड दी है। उन अवसरो पर महाकवि ग्रन्थविस्तार से नही डरते है। कथा कहने के बीच मे भगवान् का सकीर्तन करने का शौक उनको है। शान्तिपर्व की युधिष्ठिरकृत श्रीकृष्णस्तुति इसका एक अच्छा उदाहरण है। उतने लम्वे न सही, पर उस प्रकार के अनेक भक्तिरसमय सदर्भ महाभारत मे विखरे मिलते है। इस प्रकार के नामसकीर्तनो और स्तुतियो के अवसर पर उनकी भक्ति वस्तुत. परव्रह्म के प्रति है जो सारे विश्व की सृष्टि, स्थिति और सहार के कारण है। ऐसे अवसरो पर उनकी दृष्टि मे राम, कृष्ण, शिव, विष्णु, व्रह्मा आदि मे कोई भेद नही है। जहाँ श्रीकृष्ण की स्तुति चल रही है वहाँ रामावतार के योग्य विशेपणो और सवोधनपदो का प्रयोग मिलता है, वहाँ श्रीराम की भी स्तुति वीच मे आ जाती है जैसे कि ऊपर निर्दिष्ट युधिष्ठिरकृत श्रीकृष्ण-स्तुति मे। उसमे कहा है—"तू ही ने हनुमान द्वारा सीता का वृत्तान्त सुना है", "तुम ही सुग्रीव के दु ख का नाश करने वाले हो"। इस प्रकार श्रीकृष्ण के नामसकीर्तन द्वारा रामायण-कथा की मुख्य घटनाओ का निर्देश हो जाता है। कहने का अभिप्राय यह है कि एळुत्तच्छन् की भक्ति व्यापक थी।

जैसे पहले ही कहा गया है— मुख्य कथा की रक्षा करते हुए, अपनी विद्वत्ता और प्रतिभा का नियन्त्रण न करते हुए महाकवि ने मलयाळम-सस्कृत के सुन्दर मेल की भापा मे एक अति-विस्तृत कथा को सरल और लोकप्रिय शैली में सक्षेप किया है। कहने के लिए तो यह पूर्वग्रन्थ का सक्षेप है परन्तु एक प्रतिभाशाली कवि का स्वतन्त्र काव्य के समान भी है। इस सक्षेपग्रन्थ मे भी प्रकरणानुसार सभी रसो की अभिव्यक्ति वड़े सुन्दर ढग से की गयी है। भक्तिरस की चर्चा तो हो चुकी है। कवि एळुत्तच्छन् प्रकृतिवर्णन मे और युद्धवर्णन मे अत्यन्त कुशल है। कर्णपर्व का भीम और दुश्शासन के युद्ध का वर्णन इस तत्त्व का एक अच्छा उदाहरण है। ऐसा कोई पाठक नही होगा जो इस युद्धवर्णन को पढ़कर रौद्ररस का अनुभव न करे। कौरव-पाण्डवो

के अन्य युद्धों के वर्णन भी साहित्यिक दृष्टि से उच्चकोटि के है, यह मानना ही पड़ेगा। एळुत्तच्छन् की लेखन-शैली की कुछ विशेषताएं है जिन पर पाठको का ध्यान आकृष्ट करना अनुपयुक्त नही होगा। अनेक स्थलों पर प्रश्नोत्तर के रूप मे कथा कही गयी है। कही-कहीं कहना कठिन है कि कौन प्रश्न पूँछ रहा है और कौन उत्तर दे रहा है। कवि ने अनुमान करके समझने का भार पाठक के ऊपर छोड़ दिया है। यद्यपि अनुमान करने मे कोई कठिनाई नही है, फिर भी प्रसादगुण की दृष्टि से इसे एक दोष कहना अन्याय नही होगा। एक और कमी यह है कि कभी-कभी पात्रों का निर्देश उनके नाम से न करके उनके पिता या माता या अन्य कोई वन्धु के नाम से किया गया है। जैसे युधिष्ठिर को युधिष्ठर न कहकर दण्डिपुत्र (दण्डी = यम), मार्ताण्डात्मजसुतन् (मार्तण्ड = सूर्य का आत्मज = पुत्र = यम), पितृपतिजन् (पितृपति = यम), पुण्डरीकप्रियनन्दननन्दनन् (पुण्डरीकप्रिय = सूर्य का नन्दन = यम) कहा गया है। अर्जुन के विषय में कवि के मन में मुख्य बात यह थी कि वह इन्द्र का पुत्र कहलाता था। अतएव उसे अर्जुन न कहकर 'अदितिसुतवरतनयन्' (अदितिसुत = देव, देवो का वर = नायक = इन्द्र, उसका तनय = अर्जुन), आदितेयाधिपपुत्रन् (आदितेय = देव, उनका अधिप = इन्द्र, उसका पुत्र = अर्जुन), त्रिदशपतिसुतन् (त्रिदश = देव, उनका पति = इन्द्र, उनका सुत = अर्जुन), अमरवरतनयन् (अमरवर = इन्द्र, उसका तनय = अर्जुन), विबुधपतिसुतन् (विबुध = देव, उनका पति = इन्द्र, उनका सुत = अर्जुन), अदितितनयवरनन्दनन् (अदितितनय = देव, उनका वर = इन्द्र, उनका नन्दन = अर्जुन), वज्रधरात्मजन् (वज्रधर = इन्द्र, उनका आत्मज = अर्जुन), धराधरवाहनसूनुः (धराधर = मेघ, वही वाहन जिसका = इन्द्र, उनका सूनु = अर्जुन), मेघवाहननन्दनन् आदि विशेषणपदो के द्वारा निर्देश किया गया है। कभी कभी पात्र का निर्देश पिता के भी पूर्वज पितामह के नाम से किया गया है। जैसे अभिमन्यु को 'आदितेयाधिपपुत्र-तनयन्' कहा है (आदितेयाधिप = इन्द्र, उनका पुत्र = अर्जुन, उनका तनय = अभिमन्यु)। कभी कभी गुरुशिष्यसवन्ध के आधार पर भी पात्रों का निर्देश हुआ है। जैसे द्रोणाचार्य को 'अङ्गजारातिशिष्यशिष्यन्' कहा है (अङ्गज = कामदेव, उसका अराति = शिव, उनका शिष्य = परशुराम, उनका शिष्य = द्रोण)। यद्यपि इस प्रकार के निर्देश प्राय: जल्दी समझ में आ जाते है तथापि कभी-कभी सोचना पडता है जिससे समझने मे विलम्ब हो जाता है। उसका एक अच्छा उदाहरण यह है 'शङ्करशिष्यशिष्यप्रियशिष्यशिष्यन्' (महाभारत—द्रोणपर्व)। यह कौन है। शिवजी के शिष्य के शिष्य के प्रियशिष्य के शिष्य। निश्चित रूप से कहा नही जा सकता है। प्रसङ्ग तो द्रोणवध का है। द्रोण और धृष्टद्युम्न में युद्ध होनेवाला है।

इस प्रकार निर्दिष्ट कोई वीर युद्ध करने के लिए आगे वढ रहा है। कौन ? द्रोण या धृष्टद्युम्न, दोनो मे एक हो सकता है। और कोई नही। पर वात स्पष्ट नही है।

८ किळिप्पाट्टु साहित्य पद्य मे लिखा गया है, गद्य मे नही। यहाँ प्रश्न उठता है कि यह पद्य किन किन छन्दो या वृत्तो में लिखा गया है ? यहाँ स्मरण योग्य पहली वात यह है कि यह पद्य सस्कृत के छन्दो मे नही लिखा गया है। कुछ विद्वानो के मत मे किळिप्पाट्टु शैली, यानी एक शुकी द्वारा कथा सुनवाने की शैली एळुत्तच्छन् की सवसे पहले आविष्कृत है। जो इस शैली को एळुत्तच्छन् से भी पुरानी मानते हैं वे कुछ दृढ़ प्रमाण नही दे पा रहे है। हाँ, किळिप्पाट्टु मे एळुत्तच्छन् ने जो वृत्त इस्तेमाल किये है उनमे से कुछ उनसे पहले की कृत्तियो मे उपलव्ध है। किळिप्पाट्टु मे प्राय. चार वृत्त दिखाई देते हैं.--(१) केक (२) काकळि (३) कळकाञ्चि (४) अन्ननट। इनमे से पहले तीन एळुत्तच्छन् से पहले के है जैसे कि गुरुदक्षिणप्पाट्टु मे दिखाई देते है। अव इन चारो का स्वरूप समझने का प्रयत्न करना उपयुक्त होगा। यद्यपि सस्कृत और द्राविड वृत्तशास्त्रो के कुछ साधारण नियम है तथापि उनमे भेद ही अधिक है। मलयाळम द्राविड परिवार की एक भाषा है। इसलिए इसकी अपनी कविताशैली तमिळ् की कविताशैली से मिलती जुलती है। जहाँ तक छन्द शास्त्र से सम्वन्ध है, तमिळ् और सस्कृत मे पर्याप्ति अन्तर है। सस्कृत के श्लोक मे प्राय चार पाद होते है। प्रथम और द्वितीय पाद मिलकर श्लोक का पूर्वार्ध वनते है, तृतीय और चतुर्थपाद मिलकर उसका उत्तरार्ध वनते है। जैसे गद्य की इकाई वाक्य है, वैसे ही सस्कृत पद्य की इकाई श्लोक है। तमिळ पद्य मे श्लोक के स्थान मे दो पादों से वनी 'ईरटि' ही पद्य की इकाई होती है। यह नाम 'ईर्' = दो, 'अटि' = पाद, इन दो तमिळ शव्दो से व्यत्पन्न है। इसका यह अर्थ नही कि तमिळ् मे चार पादवाली पद्य की इकाई विलकुल नही है। पर उनकी सख्या वहुत कम है। दूसरी वात यह है कि जिस प्रकार सस्कृत के श्लोक मे अर्थ की दृष्टि से परिपूर्णता है। उस प्रकार की परिपूर्णता 'ईरटि' मे नही है। जैसे सस्कृत के वृत्तो मे गुरुलघुनियम, मात्रानियम या अक्षरनियम है वैसा कोई नियम तमिळ में नही है। तमिळ मे 'अश' की मान्यता है। 'अश' का स्वरूप ही अत्यन्त भिन्न है। वह दो प्रकार का है : नेरश और निरयश। प, पल्, पा, पाल् जैसे एक ही स्वरवाले वर्णसमुदाय को 'नेरश' कहते है। पर, परल्, परा, परान् जैसे दो स्वरवाले वर्णसमुदाय को 'निरयश' कहते है। इस प्रकार के अशो से तमिळ मे गण वनते है। संस्कृत मे तो अक्षरो से गण वनते हैं। इस एक वात मे तमिळ और सस्कृत वृत्तो का भेद समझ मे आ जाता है। 'निरयश'

मे दोनों स्वर ह्रस्व हो सकते हैं। अथवा पहला स्वर ह्रस्व और दूसरा दीर्घ भी हो सकता है। वर्णनियम और मात्रानियम, इन दोनों में से एक मलयाळम मे अवश्य दिखाई देता है। तमिळ के वृत्तो की भाँति मलयाळम के वृत्त भी गाये जाते हैं, यही उनका मुख्य सादृश्य है। मलयाळम की वृत्त-व्यवस्था मे प्रायः श्लोक के घटक-पादो की सख्या अनियत है। कभी कभी कीर्तनो मे पादसख्या का नियम भी दिखाई देता है। जहाँ नियम है वहाँ प्रायः सस्कृत की भाँति चार-चार पादो का एक शील (श्लोक) वनता है। गानशैली का ही प्राधान्य है। यही कारण है कि गुरुलघुक्रम कुछ गौण हो गया है। किळिप्पाट्टु प्रायेण ताल के साथ गाया नही जाता है। अतएव इसमे अक्षर-नियम है। गाते समय लघु अक्षर दीर्घ किया जा सकता है, पर दीर्घ अक्षर प्रायः लघु नही किया जाता है। जिस प्रकार सस्कृत के आर्याच्छन्द मे चार मात्राओ का एक गण वनता है उसी प्रकार यहाँ भी नियत सख्या की मात्राओ से गण बनता है। दो, तीन अथवा पाँच मात्राओ के गण हो सकते है। पर इन गणों के अन्दर गुरुलघुक्रम का कोई प्राधान्य नही है। गण की कुल कितनी मात्राएँ होनी चाहिए इतना ही नियत है। मलयाळम-वृत्तो की परम्परा मे एक गण मे तीन अक्षर और पाँच मात्राएँ होती है। सस्कृत छन्दःशास्त्र मे तीन-तीन अक्षरों के आठ गण माने गये है जो इस प्रकार है; इनमे — दो मात्राओं का, और ⏑ एक मात्रा का चिह्न है:--

य = ⏑ — —, र — ⏑ —, त — — ⏑, भ — ⏑ ⏑, ज ⏑ — ⏑,

स ⏑ ⏑ —, म — — —, न ⏑ ⏑ ⏑। केवल य, र और त में तीन अक्षरो के होते हुए पाँच मात्राएँ भी हो जाती है। औरों मे मात्राएँ अधिक या कम है। जव ईरटि मे दो पाद होते है और हर एक मे चार-चार गण होते है तब उसे 'काकळि' वृत्त कहते हे। काकळि मे 'र' गण का सबसे अधिक प्रयोग होता है, उससे कम 'त' गण का और उससे भी कम 'य' गण का। लघु का दीर्घ की तरह उच्चारण हो सकता है, इसलिए भ, ज, स, न इन गणों का भी प्रयोग हो सकता है। केवल मगण का प्रयोग नही होता है क्योकि उसमें पाँच से अधिक मात्राएँ होती हैं। संस्कृत की दृष्टि से काकळि एक बारह अक्षरवाला वृत्त है। काकळि का उदाहरण यह है--

पा रं प ळिक्कि लुं भा र तं चोल्लु वा— २० मात्राएँ
— — ⏑ | — ⏑ — | — ⏑ — | — ⏑ —
ना रुं म टिक्कोण्ट दु रितट् ड ळ। सभापर्व— ५
— — ⏑ | — — ⏑ ⏑ | — — ⏑ ⏑

कभी-कभी क मे लघु अक्षरों के बने

जाते है। कळकाञ्चि काकळि से साम्य रखनेवाला वृत्त है, क्योकि उसमे भी दो ही पाद है और हर एक पाद में बीस मात्राएँ होती है। अन्तर इतना ही है कि उसमे प्रथम पाद के आरम्भ के दो या तीन गण पाँच-पाँच लघु अक्षरो से वनते हैं। उदाहरण --

स क ल शु क कु ल वि म ल ति ल कि त क ळे व र

⌣⌣⌣⌣⌣।⌣⌣⌣⌣⌣।⌣⌣⌣⌣⌣।—⌣⌣

सा रस्य पी यू प सा र सर् वस्य मे। अध्य. रा. सुन्द.।

——⌣।——⌣।—⌣—।—⌣—

यहाँ प्रथम पाद के प्रथम तीन गण पाँच-पाँच लघु अक्षरो से बने हैं। इसलिए प्रथमपाद कळकाञ्चि है। द्वितीय पाद मे लघु अक्षरो के वने गण नही है। इसलिए वह काकळि ही है। महाभारत का सभापर्व करीव-करीव सपूर्ण काकळि मे ही लिखा है। एक उदाहरण लीजिए.--

दा न या गा दि कळ्क कुळ् ळ फलं कण् टु महा-सभा-प।

—⌣—।— ⌣ —।—⌣⌣।— —⌣।

यह काकळि है क्योकि इसमे पॉच-पॉच मात्रा वाले चार गण है। जहाँ मात्रा की कमी है वहाँ गाने से पूरी की जाती है। काकळि और कळ-काञ्चि मे मुख्य भेद यह है कि जहॉ काकळि के पाद मे वारह अक्षर होते है वहाँ कळकाञ्चि के पाद मे वारह से अधिक होते है क्योकि इसमे पाँच-पाँच लघु अक्षरो के गण होते हे और कुल चार गण भी होते है। स्मरण रहे कि दोनो मे कुल मात्राओ की सख्या वीस है। मणिकाञ्चि भी काकळि से साम्य रखता है। इसमे दो ही पाद होते हे और हर एक मे वीस मात्राएँ होती है। कळकाञ्चि से मणिकाञ्चि का इतना ही भेद है कि मणिकाञ्चि मे दोनो पादो का प्रथम गण पॉच अक्षरोवाला होता है। कळकाञ्चियो के वीच कही-कही मणिकाञ्चि दिखाई देता है। एक सारा पर्व या अध्याय मणिकाञ्चि मे लिखा नही मिलता है। कभी-कभी इच्छानुसार काकळि मे केवल पॉच लवु अक्षरो के वने गण भी मिलते है। ऐसी काकळि को 'मिश्रकाकळि' कहते है। उदाहरण:--

शि व शि व म नो ह रे शी ल व ति सा टु रं

⌣⌣⌣⌣⌣।—⌣—।—⌣⌣⌣।—⌣—।

जन् म सा फल य दं चोल लु कै वल य द। महा-शल्य.।

—⌣—।—⌣—।—⌣—।—⌣—।

इसमे प्रथम पाद का प्रथम गण केवल लघु अक्षरो से वना है। तृतीय गण मे एक गुरु है और तीन लघु है। द्वितीय पाद के अन्तिम गण मे अगर एक अक्षर कम है तो उसे ऊनकाकळि कहते है। यह पर्वों के आरम्भ मे दिखाई देता है। उदाहरण.---

तर ते व रि क रि कर तड् ङि रि म म

— — ⌣ । ⌣ ⌣ ⌣ । — — ⌣ । ⌣ ⌣ ⌣

चित्तं मु हु र पि तेळिन्ञ्नि तल लो । महा-सभा-१

— — ⌣ । ⌣ ⌣ ⌣ । ⌣ — ⌣ । — — ।

यहाँ द्वितीय पाद के अन्तिम गण का एक अक्षर कम है। प्रतीत होता है कि केवल वैचित्र्य के लिए कवि ने इस प्रकार का गण सन्निविष्ट किया है। पाँच छ पक्तियो के बाद साधारण काकळि मे लिखा गया है। अगर दोनो पादो का अन्तिम गण दो ही अक्षरवाला है तो उसे द्रुतकाकळि कहते है। एक अक्षर कम रखने का अभिप्राय यह है कि तीन या चार मात्राओ का गण बनाना। परन्तु जहाँ कम रखा है वहाँ तीन मात्राओं का गण रखा है। कभी-कभी द्रुतकाकळि मे 'म' गण भी रख देते है। यह द्रुतकाकळि किळिप्पाट्टु कृतियो मे नही दिखाई देता है।

केका का हर एक पाद इस प्रकार के छ गण होते है—३,२,२; ३,२,२। हर एक गण मे कम से कम एक अक्षर गुरु होना चाहिये। सब गुरु हो सकते है। हर एक पाद मे कुल चौदह अक्षर होते है। इनमें से अगर छः ही गुरु है तो पाद मे कुल बीस मात्राएँ हो सकती है। प्रथम पाद अगर गुरु अक्षर से प्रारम्भ होता है तो द्वितीय पाद को भी गुरु अक्षर से प्रारम्भ करना चाहिए। पाद के मध्य मे यति आवश्यक है। इस प्रकार हर एक पाद मे छ· अक्षर गुरु और अवशिष्ट आठ लघु होते है। मात्राएँ कुल बीस होती है। अगर सभी अक्षर गुरु है तो मात्राएँ अठाईस होंगी। इसका नतीजा यह है कि प्रायः मात्राओ की सख्या बीस और अठाईस के बीच मे रहती है। उदाहरणः—

चिन्तिच्चु धृ त राष्ट्रन् वि दु रर् त न्ने नोक्कि महा-उद्योग २२ मात्राएं

— — ⌣ ⌣ ⌣ — — ⌣ ⌣ — ⌣ — — —

वेन् तु रु कुन् नु म नं निद् र यिल ले तु मेन् नान् २२ मात्राएं

—⌣ ⌣ — ⌣ ⌣ — —⌣— — ⌣ — —

ता त ने न्नो रु भक्ति व हु मा नर ने हड् डळ् २३ मात्राएं

— ⌣ — — ⌣ —⌣ ⌣ ⌣ — — — — —

चे त सि स दा का ल मुए टा क नि मिर त माय २१ मात्राएं

— ⌣ ⌣ ⌣ — — ⌣ — — ⌣ ⌣ — ⌣ —

प रर त्री ज न से व दे व नं मृ ग य युं २० मात्राएं

⌣ — — ⌣ ⌣ — ⌣ — ⌣ — ⌣ ⌣ ⌣ —

वि रक्ति व रा तो रु मद् य पा न वु मे टं २१ मात्राएं

⌣ —⌣ ⌣ — — ⌣ — ⌣ — ⌣ ⌣ — —

अन्नन्नट के पाद में छ गण होते है जिनके प्रथम अक्षर लघु होते है और द्वितीय अक्षर गुरु। पाद के मध्य मे, अर्थात् तीन गणो के वाद यति होना चाहिये। जहाँ अक्षर लघु है वहाँ पाठ से दीर्घ किया जाता है। महाभारत के कर्णपर्व से पहले अन्नन्नट वृत्त मलयाळम साहित्य में कही प्रयुक्त नही दिखाई देता है यह महाकवि और महाविद्वान् उल्लूर परमेश्वर अय्यर का मत है[1]। उदाहरण —

ह र! ह र! ह र! शि व! शि व! शि व! महा-कर्ण.।.

‿— ‿— ‿— ‿— ‿— ‿—

पु र ह र! मु र ह र! न त प द!

‿— ‿— ‿— ‿— ‿— ‿—

यहाँ अनेक लघु अक्षरो का दीर्घ की तरह उच्चारण करना है और नियमत. किया भी जाता है।

केका, काकळि, कळकाञ्चि और अन्नन्नट, ये ही चार वृत्त प्राय. किळिप्पाट्टु मे दिखाई देते है और एळुत्तच्छन् का महाभारत एक किळिप्पाट्टु है। परन्तु किळिप्पाट्टु के अतिरिक्त और भी प्रकार की कविताएँ मलयाळम साहित्य मे प्रचलित है। उनमे प्रयुक्त कुछ छन्दो के सम्वन्ध में भी दो शब्द कह देना अनुपयुक्त नही होगा। उनमे से सवसे अधिक प्रसिद्ध तुळ्ळल्पाट्टु = कूदगान है। तुळ्ळल् तीन प्रकार के होते है— ओट्टन्, परयन् और शीतङ्कन्। निम्नलिखित वृत्त तीनो के साधारण है। इनमे तरङ्गिणी का नाम पहले आता है। उसमे दो-दो मात्राओं के आठ गण होते है। चौथे गण के वाद मध्य मे यति भी चाहिए। संस्कृत की दृष्टि से यह समवृत्त कहा जायगा, परन्तु ऐसा कोई वृत्त सस्कृत के शास्त्रकारो ने लक्षित नही किया है। उदाहरण:—

अ णि। म ति। क लि। यु। सु र। वा। हि नि। युं।

‿ ‿। ‿ ‿। ‿ ‿। —। ‿ ‿। —। ‿ ‿। —।

फ णि। प ति। ग ण। फ ण। ग णि। क ळु। म णि। ग्रुं।

‿ ‿। ‿ ‿। ‿ ‿। ‿ ‿। ‿ ‿। ‿ ‿। ‿ ‿। —।

द्वितीय उदाहरण मे यतिभङ्ग है, परन्तु पाठ के समय वह ठीक किया जाता है। सस्कृत मे भगवत्पाद आद्य शङ्कराचार्य का सुप्रसिद्ध स्तोत्र 'भज गोविन्द' इस वृत्त मे लिखा गया है:—

भ ज। गो। विं। दं। भ ज। गो। वि। दं

‿ ‿। —। —। —। ‿ ‿। —। —। —।

---

१. उल्लूर परमेश्वर अय्यर--केरल साहित्य चरित्रम् II पृ. ५०३

मलयाळम का उदाहरण लीजिये:--

कोण्टा । ल । द्मण । वि । ल्लुं । शर । वुं ।
कण्टी । ले । तुं । वरु । णमि । दानी ।

अगर द्वितीय पाद मे दो गण कम है तो यह 'ऊनतरङ्गिणी' कहलाता है। जैसे:—

सुर । वधु । मा । रुटे । नटु । विलि । दानीं
नर । वधु । चे । रुक । थि । ल्ले ।
उ । च्छ्रय । कां । चन । वळ । कटे । नटु । विल्
पि । च्चळ । वळ । यतु । पो । ले ।

यहाँ द्वितीय और चतुर्थ पादों में दो-दो गण कम है। संस्कृत के अनुष्टुप् छन्द के अन्तर्गत वक्त्र नाम का प्रयोग 'तुळ्ळल्' में मिलता है। उदाहरण:--

वि र वे टे गु रु वा यूर्
⏑ ⏑ ⏑ ⏑ ⏑ ⏑ — —
म रु वुं तन् पु रान् कृष्णन
⏑ ⏑ — — ⏑ — — —

त्रिष्टुप् छन्द के अन्तर्गत 'स्वागता' का भी प्रयोग मिलता है। उदाहरण:--

निल लु निल ले ट सु यो ध न कर् ण्णा
— ⏑ — । ⏑ ⏑ ⏑ । — ⏑ ⏑ । — — ।

जगती छन्द के अन्तर्गत सुमङ्गलां वृत्त का प्रयोग भी तुळ्ळल् साहित्य मे दिखाई देता है। जैसे:–

म तं न मुक क भि म तं वृ को द रा
⏑ — ⏑ । — ⏑ ⏑ । ⏑ — ⏑ । — ⏑ — ।

त्रिष्टुप् छन्द के अन्तर्गत 'शिताग्रा' वृत्त भी है जिसमे चार-चार मात्रावाले गण होते है। शर्त यह है कि प्रथम गण 'ज' हो, अर्थात् मध्य-गुरु हो। उदाहरण:--

वि दग् ध । ना कि य । न ळन् टे । दू तन्
⏑ — ⏑ । — ⏑ ⏑ । ⏑ — ⏑ । — —
वि दर्भ । नल पु र । म टुत् तु । कण्टु
⏑ — ⏑ । — ⏑ ⏑ । ⏑ — ⏑ । — —

जब पाद में छ मात्राओ के बाद यति है, तदनन्तर आठ मात्राएँ है, फिर यति है, इस प्रकार कुल चौदह मात्राएँ है, तो उसे मदमन्थरा कहते है। अक्षर अधिकांश लघु होना चाहिए। उदाहरण.--

प ल व टि वुं व न नु च म ञ्ञु
⌣ ⌣ ⌣ ⌣ — — ⌣ ⌣ — —

त ल मु टि युं व न नु ति क ञ्ञु
⌣ ⌣ ⌣ ⌣ — — ⌣ ⌣ — —

अन्त मे मैं भुवनवाणी ट्रस्ट के मुख्यन्यासी प० नन्दकुमार अवस्थी जी के प्रति अपनी श्रद्धा और कृतज्ञता प्रकट करता हूँ जिन्होने मेरे इस महाकवि एऴुत्तच्छन् कृत महाभारत के लिप्यन्तरण और हिन्दी अनुवाद को प्रकाशन योग्य समझकर स्वल्प समय मे ही अपनी ग्रन्थमाला मे प्रकाशित किया है। मैंने तो अपनी परदेशी की हिन्दी मे अपना अनुवाद का काम किया है। कवि तुञ्चत् एऴुत्तच्छन् की शैली भी अध्यात्मपरायण होने के कारण कही-कही जटिल हो उठी है। आशा है पाठकगण इसकी रिआयत रखकर, देवनागरी कलेवर मे मलयाळम भाषा और महाभारत जैसे सद्ग्रन्थ का लाभ उठाएँगे। अवस्थी जी के सुपुत्र प० विनयकुमार अवस्थी भी मेरी कृतज्ञता के पात्र है जिन्होने मलयाळम लिपि को वहुत जल्दी सीखकर मुद्रण के प्रारम्भ से ही प्रूफ को मूल मलयाळम महाभारत से मिलाकर सशोधन किया और मेरे प्रूफ-संशोधन के काम को हल्का किया है। उसी प्रकार भुवनवाणी ट्रस्ट मुद्रणालय के शिल्पी कलाकार भी प्रशसा और साधुवाद के अतीव पात्र है। साक्षात् न होने पर भी, वाणी-सरोवर मे प्रकाशित नाना भाषाई ग्रन्थो के विभिन्न नवसिर्जित देवनागरी अक्षरो की, अन्य प्रेसो मे दुर्लभ, कृति ही उनकी कुशलता और कर्मठता की साक्षी है। अवस्थी जी से यह जानकर वडा हर्ष है कि वे सव सामान्य कर्मचारी की भाँति नही, वरन् ईमानदारी और तन्मयता के साथ सस्था मे काम करते है। भुवनवाणी ट्रस्ट के लिए यह भी एक भगवान् की कृपा है।

॥ शुभमस्तु ॥

को. अ. सुब्रह्मण्य अय्यर

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची

१ उल्लूर परमेश्वर अय्यर—केरल साहित्य चरित्रम्— II पृ ४८१-५६०।
२ आर् नारायण पणिक्कर—केरल भाषा साहित्य चरित्रम् II
अध्याय ९३, पृ २३२-४०२।
३ ए. आर राजराजवर्म्म—वृत्तमञ्जरी—प्रथम एन वी एस सस्करण-१९६४
४. एऴुत्तच्छन्-महाभारत-प्रथम. एन वी एस. सस्करण—१९६७।
५. एऴुत्तच्छन्-महाभारत-मगलोदय प्रेस, त्रिच्चूर १९३६।
६ एऴुत्तच्छन्-अध्यात्मरामायण—मगलोदय प्रेस, त्रिच्चूर १९२६।

कवि तुञ्चत्तुँ एऴुत्तच्छन्टॆं

श्री महाभारतम्

॥ हरिः श्री गणपतये नम ॥

किळिप्पाट्टु

श्रीमयमाय रूप तेटु पॆंङ्किळिप्पॆंण्णे ।
सीमयिल्लात सुख नल्कणमॆंनिक्कु नी । १
श्यामळकोमळनायीटुन्न नारायणन्-
तामरसाक्षन्कथ केळ्प्पानाग्रहिच्चु ञान् २

हिन्दी अनुवाद

कवि तुञ्चत् एऴुत्तच्छन् कृत श्री महाभारत

॥ हरि. श्री गणपतये नम ॥

एक पक्षिगीत[1]

हे श्रीयुत्‌रूपवाली शुककन्ये ! मुझे असीम सुख प्रदान करो । मुझे श्यामल, कोमल और कमलनेत्र भगवान् नारायण की कथा सुनने की वडी इच्छा हुई है । उसे मुझे वडी भक्ति के साथ ठीक सुनानेवाला

---

१ 'पक्षिगीत' मलयाळम साहित्य का एक विशिष्ट काव्य-प्रकार है । इसमे कथा सुनाने वाली अथवा गानेवाली मादा पक्षी प्राय एक शुकी (तोती) होती है । इस प्रकार के काव्य का उद्‌भव कवि एऴुत्तच्छन् के महाभारत के पहले ही हुआ होगा । उसके वाद भी अनेक पक्षिगीत (की रचनाएँ) रची गयी व आज भी रची जा रही है । एऴुत्तच्छन् ने यह कल्पना की है कि जव नैमिषारण्य मे द्वादशवार्षिक सत्र (द्वादशवर्षीय यज्ञ) हो रहा था और वहाँ सूत जी ने शौनक आदि मुनियो के प्रार्थना करने पर उनको जब महाभारत की कथा सुनाई, तब एक शुकी भी उसे सुन रही थी । कवि ने शुकी से प्रार्थना की कि मुझे भी उस कथा को सुनाओ । उसने जो सुनाया वही प्राकृत ग्रन्थ है । प्राय भक्तिरस-प्रधान काव्यो मे ही शुकी कथा सुनाती है । कवि एऴुत्तच्छन् ने अपने महाभारत को भक्ति-रस-प्रधान वनाया है ।

आरुळ्ळतुरुतरभक्तिपूण्डॅन्नोटतु
नेरॉटे चोल्लीटुवानॅन्नतोर्त्तिरिक्कुम्पोळ् ई
कारणनाय करुणानिधि नारायणन्-
कारुण्यवशाल् निन्नॅ काणाय् वन्नितुमिप्पोळ् । ४
पैदाहादिकळ् तीर्त्तु वैकातॅ परयेण
कैतवमूर्त्ति कृष्णन्तन्नुटॅ कथामृतम् । ५
एतॉरु दिक्किल्निन्नु वन्नुवॅन्नतु चोल्ली-
टादरवोटुमॅन्नु केट्टु पैङ्किळि चोन्नाळ् । ६
मामुनिश्रेष्ठन्मारां शौनकादिकळ् मेवु
नैमिशारण्य तन्निल्निन्नु वन्नितुमिप्पोळ् । ७
धीमानामुग्रश्रवस्साकिय सूतन् चोन्नान्
मामुनिमार्क्कु केळ्प्पान् भारतकथामृतम् । ८
अक्कथयोक्कक्केळ्प्पानित्र पार्त्तितु ञानु
दुःखङ्ङळतु केट्टाल् पिन्नॅयुण्टाकयिल्ल । ९
सक्तियु नशिच्चीटु भक्तियुमुरच्चीटु
भुक्तियिल् विरक्तियु मुक्तियु ताने वरुम् । १०
शक्तियोटनुदिन युक्तना शिवन् तन्टॅ
व्यक्तियु विचारिच्चाल् व्यक्तमाय्क्काणाय् वरुम् । ११

कौन है—मै ऐसा सोच ही रहा था, तब मूलकारण, करुणानिधि भगवान् नारायण की (दया) से तुम्हारा दर्शन हुआ । १-४ अव भूख और प्यास को शान्त करने वाला कैतवमूर्ति[1] श्रीकृष्ण का कथामृत पिलाओ । यह भी वतलाओ कि अभी कहाँ से आ रही हो । यह सुनकर शुककन्या ने कहा—५-६ मै अभी नैमिषारण्य से आ रही हूँ, जहाँ शौनक आदि महामुनि रहते है । वहाँ वुद्धिमान सूत उग्रश्रवा ने महामुनियो को भारत-कथामृत सुनाया । उसे पूरा सुनने के लिए मै भी इतनी देर वहा- रही (कि जिससे पूरी कथा सुन सकी) क्योकि उसे सुनने के वाद कोई दु ख नही पैदा होगा । विपयासक्ति का नाश हो जायगा, भक्ति स्थिर हो जायगी, भुक्ति[2] से विरक्ति[3] और मुक्ति सहज ही उत्पन्न होगी । जो शिवजी सदा

१ छली दैत्य-राक्षसो को छल से मारने के कारण श्रीकृष्ण जी को कैतवमूर्ति कहा जाता है २ विपयभोग ३ वैराग्य ।

युक्तनायोट्टु जीवन् परनोटरिञ्ञालुम्
भक्तवत्सलनाकुं कृष्णन्टॅ कारुण्यत्ताल् । १२
एङ्किलक्कथयॅल्लामेन्नॅ नी केळ्प्पिक्कणम्
सङ्कटमुण्टु पार संसार निनच्चु मे । १३
पङ्कजविलोचनन्तङ्कथ चॉल्लामॅङ्किल्
पङ्कङ्ङळकन्नुपो पण्डुपण्टुळ्ळतेल्लाम् । १४
आदरवोट्टुकूटॅ नैमिशवनत्तिङ्कल्
द्वादशसंवत्सरंकॉण्टॉटुङ्ङीटुन्नोरु । १५
यागवु तुटङ्ङिङ्ङनार् शौनकादिकळायो-
रागमज्ञोत्तमन्माराकिय मुनीन्द्रन्मार् । १६
आगमिच्चितु मुनिसारॅस्सेविप्पानप्पोळ्
वेगमोटुग्रश्रवस्साकिय सूतन्तानुम् । १७
आगतनाय सूतन्तन्नॅ मामुनिजन-
मेकान्ते सल्कारचॅप्तासनादिकळ् नल्कि । १८
इक्कलिमलमुळ्ळिल् पटाय्वान् तक्कतॉरु
सल्कथ चॉल्लण नीयॅन्नवर् चोन्ननेरम् । १९

अपनी शक्ति के साथ है, उनका प्रत्यक्ष दर्शन प्राप्त होगा। यह भी जान लीजिए कि भक्तवत्सल श्रीकृष्ण की दया से जीव परतत्त्व (ब्रह्म) से युक्त हो जायगा। ७-१२ (कवि ने कहा—) अगर ऐसा है तो वह पूरी कथा मुझे सुनाओ, क्योंकि इस संसार पर विचार करते हुए मुझे अपार दुःख होता है। अगर पंकजविलोचन (भगवान्) की कथा सुनाओगी तो मेरे पुराने से पुराने पाप-पंक भी धुल जायँगे। १३-१४ शौनक आदि उत्तम शास्त्र के ज्ञाता मुनीन्द्रों ने नैमिषवन के बीच बारह वर्ष में समाप्त होनेवाला एक याग बड़ी श्रद्धा के साथ प्रारम्भ किया। तब सूत उग्रश्रवा मुनियों की सेवा करने के लिए शीघ्र वहाँ पधारे। महामुनियों ने अभ्यागत सूतजी का एकान्त में सत्कार करके उनको आसनादि प्रदान किया, और कहा एक ऐसी सत्कथा सुनाओ, जिससे इस कलियुग का मल स्पर्श न कर सके, (व दूर हो जाय)। १५-१९ (सूतजी ने उत्तर दिया) अगर ऐसा है तो मैं 'भारत' सुना सकता हूँ, जिसे वैशम्पायन ने जनमेजय को भली प्रकार सुनाया था। 'भारत' सुनानेवालों और भक्ति

एँङ्किल् वैशम्पायनन् जनमेजयनोटुँ
भगियिलरियिच्च भारत चॉल्लामल्लो । २०
भारत चोल्लुन्नोक्कुं भक्तरायँ केळ्क्कुन्नोर्क्कुं
पारातँ गतिवरुमॅन्नरुळ्चेय्तु मुनि । २१
पाराशर्यख्यन् कृष्णनॅन्नतुँ सत्यमत्रे ।
पारमार्थिकमाय तत्त्ववुमतिलत्रे । २२
भवणल्गीता श्रीमल्सहस्रनामादिकळ्
भगवान् वेदव्यासन् भारतमितिलाक्कि २३
निगमादिकळ्पोलुमतिनाल् वन्दिक्कुन्नु
सकलपुरुषार्थङ्ङळुमुण्टतिल् नूनम् । २४
भोगीशवागीशलोकेशादिजनङ्ङळ्क्कु-
माकवालितिनुटँ महत्त्व चॉल्लावल्ले । २५
ओर्क्कुम्पोळपौरुषेयत्वमुण्डितिन्नतो
साक्षाल् वेदङ्ङळ्क्कलॅयॅन्नल्लो चॉल्लीटुन्नु । २६
एङ्किल् पौरुपेयमार्पमायपौरुपे-
यागियायँ वरुमेन्ते भारत वन्नुकूट्टु । २७

के साथ सुननेवालो की गति शीघ्र ही अच्छी होगी—ऐसा, जो मुनि पाराशर्य कृष्ण ने कहा है, वह सत्य है। यह भी सत्य है कि पारमार्थिक तत्त्व उसी मे (प्रतिपादित) है। भगवान् वेदव्यासजी ने भगवद्गीता और श्रीमत्सहस्रनामादि[1] को भारत के अन्तर्गत बनाया है और उसी के द्वारा निगमादि[2] की भी वन्दना करते है। इसमे कोई सन्देह नही कि सारे पुरुपार्थ (महाभारत) मे है। २०-२४ इसी लिए भोगीश[3], वागीश,[4] लोकेश[5] आदि इस (महाभारत) का महत्त्व बतला सकते है। विचार किया जाय तो यह अपौरिपेय है, माना कि अपौरुपेयत्त्व साक्षात् वेदो के लिए ही कहा गया है। इस स्थिति मे भारत पौरुपेय, आर्प[6] और अपौरुपेयागी[7] ही हो सकता है। इसको द्वैपायन (महर्पि व्यास) के ओष्ठ से प्रकट हुआ कहा गया है, यह नही कि द्वैपायन का रचा हुआ। वेद तो चतुरानन (ब्रह्मा) के मुख से उत्पन्न है और यह तो वसुधात्मज (वेदव्यास)

१ विष्णु-सहस्रनाम स्तोत्र २ वेद आदि ३ शेपनाग ४ बृहस्पति ५ इन्द्र आदि लोकपाल ६ ऋपिरचित ७ किसी पुरुप के न बनाए हुए के समान।

द्वैपायनोष्ठस्फुटनिस्सृतमॅन्नाकुन्नु
द्वैपायनेन कृतमॅन्नतो चॉल्लीलल्लो । २८
चतुराननमुखसम्भवं वेदमितु
वसुधात्मजमुखसंभवमेन्नेयुळ्ळु । २९
ब्रह्मज वेदमितु विष्णुजमॅन्नाकयाल्
ब्रह्मत्तॅ प्रतिपादिच्चीटुन्नतितिलल्लो । ३०
संगमटुळ्ळ विषयङ्ङळिल् निवृत्तमायॅ
मंगल वरुत्तुन्न भगवत्सगिसग ३१
कैवन्नुकूटुमितु केळ्क्किलॅन्नुरचेय्तु
कैवणङ्ङिडनान् भूदेवतङ्ङळॅ सूतन् । ३२
दैवभक्तन्माराय शौनकादिकळप्पोळ्
पावनमाय सूतभाषित केट्टु चॉन्नार् । ३३
वैशम्पायनन् चॉन्न भारतंतन्नॅ चॉल नी
सशय तीरुमतिलिल्लातॅ मटॉन्निल्ल । ३४
पाशङ्ङळ् नशिच्चुं तन्नाशय तॅळियिक्कुम्
केशवचरितवुमित्र मटॉन्निलिल्ल । ३५
कर्मकौशलङ्ङळु साख्ययोगादिकळुं
धर्मार्थकाममोक्ष सधिप्पानुपायवु ३६

के मुखसे, इतना ही भेद है। वेद ब्रह्मज[1] है और यह विष्णुज[2] और इसी मे तो ब्रह्म का प्रतिपादन भी हुआ है। इसको सुनने से (ससार की ओर) आकर्षण पैदा करने वाले विषयो से निवृत्ति और भगवत्सगियो से मगल पैदा करने वाला सग प्राप्त हो जाता है। इतना कहकर सूतजी ने ब्राह्मणो को हाथ जोडे। २५-३२ देवभक्त शौनकादि मुनियो ने सूत जी के पावन कथन को सुनकर कहा—वैशम्पायन जी का कहा भारत ही सुनाओ। सदेह सब दूर हो जायँगे, क्योकि ऐसी कोई वस्तु नहीं है जो उसमे न हो। वह (काम, क्रोध आदि) पाशो को नष्ट करके मन को शान्त करेगा। केशवचरित का ऐसा वर्णन और कही नही है। सारे कर्म-कौशल, सांख्य, योग आदि दर्शन और धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्राप्त करने के उपाय निर्मल वेदव्यास जी ने इसमे बतलाये हैं। सुख की

१ ब्रह्मा जी से उत्पन्न २ विष्णु के अवतार वेदव्यास से उत्पन्न।

निर्मलन् वेदव्यासनितिङ्कल् प्रयोगिच्चु
शर्मसाधनम्कितिन्मीतॅ मटॉन्निल्लल्लो । ३७
अक्कथयॉक्कॅवकेळक्कानुण्टवसरमिप्पोळ्
सल्गुणनिधे सूत ! चॉल्लु नी मटियातॅ । ३८
तत्त्वज्ञनाय सूतन् विप्रमामुनिकळॅ-
च्चित्तत्तिलुऱप्पिच्चु वन्दिच्चु भक्तियोटे । ३९
सत्यज्ञानानन्दानन्ताद्वयामृतनाकु-
मुत्तमोत्तमन् कृष्णनुतन्नॅयु ध्यानचॅय्नान् । ४०
पाराशर्याख्यन् परमाचार्यन् वेदव्यासन्
कारुण्यमूर्त्ति कृष्णनाकिय गुरुविनॅ ४१
पारातॅ वणङ्ङिनान् भारतीदेवियेयु
वारणाननाय विघ्नेशन् पादङ्ङळुम् ४२
वारिजोद्भवनादियाय देवन्मारेयु
श्रीशुकसमनाय वैशम्पायननॅयु
आशय तन्निल् चेर्त्तु पऱञ्ञुतुटङ्ङिनान् । ४३

सिद्धि के लिए इससे बढकर कोई साधन नही हैं। उन सब कथाओं को सुनने के लिए हमको बड़ी उत्सुकता है। हे सद्गुणनिधि सूत जी ! अविलम्ब सुनाओ। ३३-३८ तत्त्वज्ञ सूतजी ने विप्रो और महामुनियों का ध्यान किया और भक्ति के साथ वन्दन किया। और सत्यज्ञानानन्दात्मक, अद्वय, अमृत, उत्तमोत्तम श्रीकृष्ण जी का भी ध्यान किया, और परमाचार्य, गुरु, कारुण्यमूर्त्ति, पाराशर्य, वेदव्यास कृष्ण को, भारती देवी को और गजानन विघ्नेश जी (श्री गणेश) के चरणो को प्रणाम किया। और कमल से उत्पन्न ब्रह्मा आदि देवो को और श्रीशुक जी के समान वैशम्पायन को अपने मन मे रखकर कहना प्रारम्भ किया। ३९-४३

संग्रहविवरणम् ।

नालायि वेदङ्ङळॆप्पकुत्त वेदव्यासन्
पौलोम तन्निल् चॊन्नान् भारतसक्षेपवुम् । १
चित्रमामुदकोपाख्यानवु भृगुकुल-
विस्तारङ्ङळु वह्नितन्नुटॆ शापदियुं- २
आस्तीकंतन्निल् नागगरुडारुणोत्पत्ति
दुग्धाब्धिमथनमुच्चैश्रवस्सुण्टायतुं ३
अस्तिकन् सर्वसत्रमॊळिच्चप्रकारवुं
अस्तिकन्ननुग्रहं सर्वङ्ङळ् कॊटुत्ततुं ४
परिभाषारूपङ्ङळ् पौलोमास्तिकङ्ङळॆ-
न्नरुळिच्चॆय्तु वेदव्यासना मुनिवरन् । ५
सभवपर्व तन्निल् मुन्निले सोमान्वय-
संभव नृपेन्द्रपारम्पर्य देवासुर- ६
सभव भुवि तेषामशावतरणवुं ।
अम्भोजरिपुकुलसन्तति सन्धिप्पिप्पा- ७

विषयानुक्रमणिका

जिन वेदव्यास जी ने वेद को चार भागो मे विभक्त किया, उन्होने पौलोमपर्व मे भारत का सक्षेप बतलाया है। और विचित्र उदकोपाख्यान, भृगुकुल का विस्तार, अग्नि-शाप आदि की कथाएँ भी है। आस्तीक पर्व में नागों, गरुड और अरुण की उत्पत्ति, क्षीरसागर का मथन, उच्चैश्रवा का प्रादुर्भाव, अस्तीक का सर्पसत्र[1] को समाप्त कराना, सर्पो का अस्तीक पर अनुग्रह करना,—यह सब वर्णित है। मुनिवर वेदव्यास जी ने कहा है कि पौलोम और आस्तीक पर्व परिभाषा के रूप में है। १-५ और सभवपर्व मे पहले सोमवश की उत्पत्ति, राजाओ की परम्परा, देवों और असुरो का जन्म और पृथ्वी पर उनका[2] अशावतार वर्णित है। चन्द्रवश की सन्तति को जारी रखने के लिये कृष्णद्वैपायन ने आदर के साथ विचित्रवीर्य के क्षेत्रो (पत्नियो) मे धृतराष्ट्र आदि तीन पुत्रो को उत्पन्न किया। ६-८ वेदव्यास जी ने सुन्दर ढग से निम्नलिखित बातें

---

१ नागयज्ञ २ देव और दानव दोनो का अशावतार।

नम्पोटु विचित्रवीर्यक्षेत्रङ्ङळिल् कृष्णन्
सम्भविप्पिच्चु धृतराष्ट्रादि पुत्रत्रयम् । ८
मार्त्ताण्डसुतन्नु माण्डव्यशापोत्पत्तियु
शूद्रयोनियिलवन् विदुरनायवारु ९
धार्तराष्ट्रोल्पत्तियु पाण्डुपुत्रोल्पत्तियुं
पार्थिवनाय पाण्डु तापसशापवशाल् १०
माद्रीसगम कॉण्टु मरणं प्रापिच्चतु-
मास्थया शेषक्रिया पुत्रन्मार् चॅय्तवारुम् । ११
पाण्डवरुटॆ नगरप्रवेशनादियु
पाण्डुपूर्वजनवरोटु वर्त्तिच्चवारुम् १२
शारद्वतोत्पत्तियु भरद्वाजोत्पत्तियुम्
भरद्वाजात्मजनामश्वत्थामोल्पत्तियुम् १३
विद्यभ्यासवु गुरुदक्षिणादियु तम्मिल्
विद्वेष मुळुत्ततु धृष्टद्युम्नोल्पत्तियु १४
जातुषगृहदाह काननप्रवेशवुम्
मातुराधिकळ् कण्टु वातनन्दनतापं १५
हिडुम्बवध भीमहिडुम्बीसमागम
हिडुम्बितन्निल् भीमतनयनुण्टायतुम् १६

सभवपर्व मे लिखी है—माण्डव्य द्वारा मार्त्ताण्डपुत्र का शाप और उसका शूद्रयोनि मे विदुर के रूप मे जन्म, धृतराष्ट्र और पाण्डु के पुत्रो की उत्पत्ति, राजा पाण्डु का तपस्वी के शाप के अनुसार माद्री के साथ सगम होने पर प्राप्त मृत्यु और उनके पुत्रो के द्वारा उनकी अन्त्येष्टि का अनुष्ठान, ९-११ पाण्डवो का नगर-प्रवेश आदि, उनके साथ पाण्डु के अग्रज (धृतराष्ट्र) का वर्ताव, शारद्वत की उत्पत्ति, भरद्वाज की उत्पत्ति, भरद्वाज के पुत्र अश्वत्थामा की उत्पत्ति, विद्याभ्यास, गुरुदक्षिणा आदि, परस्पर द्वेष का बढना, धृष्टद्युम्न की उत्पत्ति, लाक्षागृह का दाह, काननप्रवेश, माता के दुःखो को देखकर वात-नन्दन (भीमसेन) का अन्तस्ताप, हिडिम्ब का वध, भीम और हिडिम्बी का समागम, हिडिम्बी से भीमपुत्र (घटोत्कच) का जन्म, १२-१६ एकचक्र मे निवास, वकासुर का निग्रह आदि, एकान्त मे वेदव्यास जी का आगमन और उनके साथ सवाद

एकचक्रावासवु वकनिग्रहादियुम्
एकान्ते वेदव्यासप्राप्तिसवादादियुम् १७
द्रौपदीस्वयवराकर्णनयात्रादियुम्
तापसद्विजसमागमसल्लापादियुम् १८
अगारवर्णोपाख्यानत्तिल् वासिष्ठादिवुम्
शृगाररसपूर्णसवरणोदन्तवुम् १९
धौम्यतापसवरोपाध्यायोपलब्धियुम्
ब्राह्मणरायिप्पाञ्चालालय पुक्कवारुम् २०
धार्मिकन् धृष्टद्युम्ननुत्सव घोषिच्चतुम्
काम्यांगि पाञ्चालिक्कु भूपतिप्रवोधनम् २१
यन्त्रच्छेदवु पंचेन्द्रोपाख्यानवु पिन्नें-
वकुन्तीनन्दनन् राजसञ्चय जयिच्चतुम् २२
द्रौपदीस्वयवर विदुरागमनवुम्
भूपतिनियोगत्ताल् धर्मजाभिषेकवुम् २३
अर्धराज्यवुमिन्द्रप्रस्थलब्धियु तत्र
सत्वर श्रीनारदनॆंळुन्नळ्ळियवारुम् २४
सुन्दोपसुन्दोपाख्यानादियु पाञ्चालिया
सुन्दरितन्नॆंप्पर्यायत्तोटॅ वहिच्चतुम् २५

आदि, द्रौपदी-स्वयवर के समाचार का श्रवण और वहाँ की यात्रा आदि, तापसो और द्विजो के साथ मेल-मिलाप और बातचीत आदि, अगारवर्णोपाख्यान के अन्तर्गत वासिष्ठोपाख्यान, शृगाररस-पूर्ण सवरण का वृत्तान्त, तापसवर धौम्य की उपाध्याय के रूप मे उपलब्धि, ब्राह्मण बनकर पाञ्चालदेश मे प्रवेश, धार्मिक धृष्टद्युम्न की स्वयवरोत्सव की घोषणा, काम्यागी[1] पाञ्चाली को आये हुए भूपतियो का नामनिर्देश, यन्त्रच्छेद[2], पञ्चेन्द्रोपाख्यान, अर्जुन का राजाओ के समूह को जीतना, द्रौपदी का स्वयवर, विदुर जी का आगमन, भूपति की आज्ञा से युधिष्ठिर का अभिषेक, अर्धराज्य और इन्द्रप्रस्थ की प्राप्ति, वहा नारद जी का पधारना, सुन्दोप-सुन्दोपाख्यान, सुन्दरी पाञ्चाली का पर्याय (बारी-बारी) से विवाह, १७-२५

१ कामनावाली २ मछली-भेदन ।

अर्जुनतीर्थयात्रा सुभद्राहरणवु-
मर्जुनसुतनभिमन्युवुण्टायतुम् २६
पञ्च द्रौपदेयन्मारुण्टाय प्रकारवुम्,
सञ्चित द्रव्यं दान चॅय्ततु धर्मात्मजन् २७
खाण्डवदाहादियु गाण्डीवलाभादियुम्
पाण्डवशौर्यवुमाखण्डलविजयवुम् २८
तक्षकसुतराय पक्षिकळ् नालुमाशु-
शुक्षणि दहियातॅ कानन दहिच्चतुम् २९
नन्दपालोपाख्यानमॅन्निव वेदव्यासन्
सुन्दरमायि चॉन्नान् सभवपर्व तन्निल् । ३०
इरुनूटिरुपत्तॅट्टध्यामुण्डु चोल्किल्
सरसमॅण्णायिरत्तिल्पुर तॉळ्ळायिर- ३१
त्तॆण्पत्तिनालु पद्यमुम्पर्कु मनोहरम्
मुन्पिले पर्वमतु सभवमतु नामम् ३२
रण्टामतल्लो सभापर्वमॅन्नरियेण-
मुण्टतिल् कथ पलतॉट्टतु सक्षेपिक्काम् । ३३
खाण्डवप्रस्थत्तिङ्कल् मयना शिल्पिश्रेष्ठन्
पाण्डवन्तनिक्कॉरु सभयॅ निर्मिच्चतुम् ३४

अर्जुन की तीर्थयात्रा, सुभद्राहरण, अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु का जन्म, द्रौपदी के पाँचो पुत्रो का जन्मक्रम, धर्मराज युधिष्ठिर को अपने सचित द्रव्य का दान करना, खाण्डवदाह और गाण्डीव का लाभ, पाण्डवशौर्य, आखण्डल (इन्द्र) की विजय, अग्नि का तक्षकपुत्र चार पक्षियो को बचाकर कानन को जलाना, और मन्दपालोपाख्यान—इस प्रकार (भगवान्) वेदव्यास ने सभव पर्व-मे सुन्दर वर्णन किया । २६-३० उसमे दो सौ अठाईस अध्याय है और आठ हजार नौ सौ चौरासी सरस एवम् मनोहर श्लोक है तथा पहले पर्व का नाम है, सभवपर्व । ३१-३२ (आप यह भी) जान लीजिये कि दूसरे पर्व का नाम है सभापर्व । उसमे अनेक कथाएँ है । उसका भी सक्षेप (वर्णन) करूँगा । खाण्डवप्रस्थ मे शिल्पिश्रेष्ठ मय[1] का पाण्डव के लिए एक

---

1 मयासुर नाम के एक शिल्पकला के विद्वान, ये दैत्यो के शिल्पी थे ।

पाण्डित्यमेऱ्युळ्ळ नारदनॆळुन्नळ्ळि
पाण्डुनन्दननोटु चोदिच्चप्रकारवुम् ३५
माधवन् मागधनॆ मारुतितन्नॆक्कॊण्टु
बाध भूपर्क्कु तीर्प्पान् कॊल्लिच्चप्रकारवुम् ३६
मारुतिप्रमुखन्मार् दिक्कुकळ् जयिच्चतु-
मोरोरो राजाक्कन्मार् करङ्ङळ् कॊटुत्ततुम् ३७
धर्मजन् राजसूय चॆय्ततु भगवानाल्
दुर्मति शिशुपालन् मुक्तियॆ लभिच्चतुम् ३८
पार्थिवेन्द्रावभृतस्नानघोषादिकळुम्
धार्तराष्ट्रौघश्रेष्ठन् काट्टिय गोष्टिकळुन् ३९
स्थलतामतिकॊण्टु जळतकलर्न्नतुम्
बलवान् वृकोदरनुच्चत्तिल् चिरिच्चतुम् ४०
सत्रप सुयोधनन् हस्तिन पुक्कवारुम्
निस्त्रप शकुनितान् चूतिनु कोप्पिट्टतुम् ४१
चूतिङ्कल् चतिचॆय्तु नाटॊक्कॆप्पऱिच्चतुम्
माधवन् पाञ्चालियॆप्पालिच्च प्रकारवुम् ४२

सभा का निर्माण, बडा पाण्डित्य रखनेवाले नारद जी का पधारना और पाण्डुनन्दन से प्रश्न पूछना, भूपतियो की पीडा समाप्त करने के लिए माधव (कृष्ण) का मारुति (भीमसेन) द्वारा मागध (जरासन्ध) का वध कराना। भीमसेन आदि का दिग्विजय करना, विभिन्न राजाओ द्वारा कर देना, युधिष्ठिर का राजसूयानुष्ठान, भगवान् के द्वारा दुर्मति शिशुपाल का मुक्ति प्राप्त करना, पार्थिवेन्द्र (युधिष्ठिर) के अवभृतस्थान[1] की घोषणा, धार्तराष्ट्रसघ के श्रेष्ठ (दुर्योधन) की चेष्टाएँ, जल का स्थल समझने से (दुर्योधन का) अतिशय जड़-ज्ञान, बलवान वृकोदर का उच्चस्वर से हँसना, लज्जा के साथ सुयोधन का हस्तिनापुर को लौटना, लज्जा के विना शकुनि की जुआ खेलने की तैयारियॉ, जुए मे कूट[2] प्रयोग करके (पाण्डवो से) सारे देश को छीन लेना, माधव द्वारा पाञ्चाली[3] की रक्षा, ३३-४२ गान्धार (शकुनी) का दुवारा जुआ (खेलने) के लिए बुलाना, कुन्तीनन्दन (युधिष्ठिर) का हार जाना और वन चले जाना, तथा दु खो का अनुभव करना—इस प्रकार

१ यज्ञ के उपरान्त स्नान को अवभृथ स्नान कहते है २ छल-कौशल ३ द्रौपदी।

गान्धारन् रण्टामतु चूतिनु तुनिञ्ञातुम्
कौन्तेयन् तोटु वन पुक्कतु दुःखङ्ङळुम् ४३
इङ्ङने पुनर्द्यूतपर्यन्तमायिच्चोन्नान्
मगल सभापर्वं कृष्णना वेदव्यासन् ४४
अध्यायमेळुपत्तिरण्टुण्टेन्नरिञ्ञालुम्
पद्यङ्ङळ् नालायिरत्तञ्ञूरु पतिनोन्नुम् । ४५
धार्मिकन् धर्मात्मजन् कानन पुक्कशेष
धौम्योपदेशाल् सूर्यन्तन्ने सेविच्चवारुम् ४६
सौदनमाय पात्र सूर्यन् नल्कियवारुम्
भूदेवयतिजनभोजनमुट्टात्ततुम् ४७
कुम्मीरासुरन्तन्ने मारुति कॉन्नवारुम्
धर्मजादिकळतम्मॅक्काण्मानायविटॅय्क्कु ४८
धर्मराजाङ्गभूतन् विदुरर् वन्नवारुम्
धर्मस्थापनकरन् गोविन्दन् नारायणन् ४९
निर्मलन् जगन्मयन् चिन्मयन् मायामयन्
सन्मयन् कर्मसाक्षि निर्मर्यादिकळवकॉरु ५०
धर्मनायकन् परब्रह्मना विष्णुमूर्त्ति
जन्मनाशादिहीनन् कल्मषविनाशनन् ५१
निर्ममन् निरुपमन् कृष्णनङ्ङॅळुन्नळ्ळि
सम्मोद धर्मात्मजन्माविन्नु वळर्त्ततुम् ५२

कृष्णद्वैपायन वेदव्यास जी ने दुबारा जुआ खेलने (की कथा) तक मंगलमय सभापर्व सुनाया। जान लीजिये कि उसमें बहत्तर अध्याय और चार हजार पाँच सौ ग्यारह श्लोक है। ४३-४५ धार्मिक, धर्मराजपुत्र युधिष्ठिर के वन-प्रवेश के उपरान्त उनका धौम्य के उपदेशानुसार सूर्य की सेवा करना, और सूर्य का एक भात से भरे पात्र का दान करना और ब्राह्मणो तथा सन्यासियो आदि के भोजन का कष्ट न होना, मारुति (भीम) द्वारा कुम्मीरासुर का वध, धर्मज (युधिष्ठिर) आदि के दर्शन के लिए धर्मराज के सदृश धर्मात्मा विदुर जी का पधारना, धर्मसस्थापक, गोविन्द, नारायण, निर्मल जगन्मय, चिन्मय, मायामय, सन्मय, कर्मसाक्षि, मर्यादारहितो के नाशकर्त्ता, परब्रह्म, विष्णुमूर्ति जन्मनाशादिहीन, पापहारी, निर्मम, निरुपम,

पाञ्चालादिकळाय सबन्धिसमागम
पाञ्चालीशोकादियु वेदव्यासागमन ५३
फल्गुनन् तपस्सिन्नाय निर्गमिच्चतुपिन्नॆ
भर्गनां भगवानु पार्वतीदेवितानु ५४
काट्टाळवेषत्तोटु प्रत्यक्षमायवारुम्
वाट्टमॆन्तिये तम्मिल् कलहमुण्टायतु- ५५
मीशनाल् पाशुपतमवनु कॊट्टुत्ततु-
माशु दिक्पालादिकळविटॆ वन्नवारुम् ५६
अर्जुनन् वासवनॆक्कण्टवन् नियोगत्ताल्
निर्जरारिकळतस्मॆ वधिच्चप्रकारवुम् ५७
पार्थनुर्वशियुटॆ शापमुण्टायवारुम्
गोत्रारि तॆळिञ्ञनुग्रहिच्चप्रकारवुम् ५८
पार्थनिङ्ङिनॆ सुरलोक वाळुन्नकाल
पार्थिवन्तन्नॆक्काण्मान् बृहदश्वागमन ५९
धर्मजदु ख तीर्प्पान् तापसनरुळ्चेय्तु
निर्मलनळोपाख्यानादियुमगस्त्यन्टॆ ६०
पवित्रचरित्रमा विचित्रकथादियुं
कलत्रप्राप्तिमुखवातापिदहनवु ६१

श्रीकृष्णजी का पधारना और धर्मराज का सम्मोद वढाना, पाञ्चाल आदि सवन्धियो का आगमन, पाञ्चालीका शोक, वेदव्यास जी का आगमन,४६-५३ अर्जुन का तप करने के लिए चले जाना और शिव जी और पार्वती जी का किरात[1] के रूप मे प्रत्यक्ष हो जाना तथा शिव जी और अर्जुन का परस्पर युद्ध, शिव जी का अर्जुन को पाशुपतास्त्र का दान, तत्क्षण ही दिक्पालों का वहाँ पधारना, अर्जुन को इन्द्र का दर्शन और उनकी आज्ञा से देवताओ के शत्रुओ का सहार, उर्वशी द्वारा पार्थ (अर्जुन) को शाप, और इन्द्र का प्रसन्न होकर पार्थ पर अनुग्रह करना, पार्थ[2] (अर्जुन) का इस प्रकार सुरलोक मे निवास करते समय, (युधिष्ठिर) को देखने के लिए बृहदश्व का आगमन, और उनके दु खो को दूर करने के लिए नलोपाख्यान सुनाना,

१ भील २ पार्थ शब्द वहुधा कुन्ती के तीन पुत्रो के लिए ही प्रयोग किया गया है। कही-कही नकुल, सहदेव, कर्ण के लिए भी इस शब्द का प्रयोग हुआ है।

शक्रनुमग्नियुमाय् शिवितन् धर्मस्थिति
पक्षिवेपत्ताल् परीक्षिच्चुकोण्टरिङ्ङातुं ६२
पण्डितश्रेष्ठनृष्यशृङ्गनायीटुन्न वै-
भण्डकनुटॅ तपोवलतु माहात्म्यवुं ६३
जामदग्न्यनाल् वहुहेहयवधादियु
कोमळमाय सुकन्योपाख्यानवु पिन्नॅ ६४
च्यवनोपाख्यानवुमवनु नासत्यन्मार्
नवकोमलरूप नल्कियप्रकारवु ६५
तातनॅयष्टावक्रन् सोमकमुतेष्टिवि-
वादे वीण्टतु सव्यसाचिवृत्तान्तङ्ङळुम् ६६
अमरेन्द्रानुज्ञया समरे शक्रात्मज-
नमरारातिकळॅयरुतिप्पेटुत्ततुम् ६७
अर्जुनन्तन्नॅक्कण्टु मटुळ्ळोर् सुखिच्चतु-
मर्जुनाग्रजन् जटासुरनॅ वधिच्चतुम् ६८
मारुति सौगन्धिक पुष्पत्तॅ हरिच्चतुम्
मारुतीरूपं कण्टु मारुति पेटिच्चतुम् ६९

फिर अगस्त्य मुनि के पवित्र चरित्र का विचित्र वर्णन, वातापि का भस्म होना, इन्द्र और अग्नि का राजा शिवि की धर्म-स्थिति की, पक्षिवेप[1] रूप धारण करके परीक्षा करना, विभाण्डकपुत्र, पण्डितश्रेष्ठ, ऋष्यशृंग का तपोवल और माहात्म्य ५४-६३ जामदग्न्य परशुराम द्वारा हैहयों[2] का वध, कोमल सुकन्या का उपाख्यान, च्यवनोपाख्यान और च्यवन को अश्विनी-कुमारो के द्वारा एक नया, कोमल रूप प्रदान करना, सोमक के पुत्र द्वारा इष्टियज्ञ के विवाद के अवसर पर अष्टावक्र का पिता जी की रक्षा करना, सव्यसाचि (अर्जुन) के वृत्तान्त, अमरेन्द्र की अनुज्ञा से शक्रात्मज (अर्जुन) का युद्ध मे देवताओ के शत्रुओ का नाश करना, अर्जुन को देखकर औरो का सुखानुभव करना, अर्जुनाग्रज (भीम) द्वारा जटासुर का वध, मारुति का सौगन्धिक[3] पुष्प को ले आना, मारुति (हनुमान) का रूप देखकर मारुति

१ वाजपक्षी २ हैहयराज कार्त्तवीर्यार्जुन के पुत्र-पौत्रों का ३ सौगन्धिक तथा कल्हार ये दोनों गत्र सायकाल में खिलने वाले श्वेतकमल को कहते हैं (अमर० वारिवर्ग ३६)।

अन्धनामन्धात्मजन्तन्नुटॅ घोपयात्र
गन्धर्वाधिपकृतबन्धनमवर्कळॅ ७०
कुन्तीनन्दनन् तन्नॅ वीण्टुकॉण्टतु पिन्नॅ-
स्सिन्धुरगमनया पाञ्चालीहरणार्थ ७१
सिन्धुराजागमन गन्धवाहजकृत-
बन्धन कुन्तीसुतबन्धुबन्धनहर ७२
दण्डिपुत्रनॅक्काण्मान् मार्कण्डेयागमन
पण्डितन् मार्कण्डेयन् मार्ताण्डान्वयत्तिङ्कल् ७३
कुण्डलीश्वरशायि रामनाय पिऱन्नतुम्
पुण्यकळाय नानाकथकळ् मट्टुळ्ळतुम् ७४
पाण्डवशोक तीर्प्पान् अरुळ्चॅय्ततु पिन्नॅ
गाण्डीवधरप्रियन् माधवन् जगन्नाथन् ७५
पाण्डवन्मारॅक्काण्मानॅळुन्नळ्ळियवारुम्
द्रौपदीसत्यसवादङ्ङळुम् भीष्मद्रोण- ७६
पावनकथकळुमिन्द्रद्युम्नन्टॅ कथ
एन्निव केट्टु तॅळिञ्ञिरुन्नीटिनकालं ७७
कर्णकुण्डलकवचादिकळमरेन्द्रन्
विप्रनाय् प्रतिग्रहिच्चीटिनप्रकारवुम् ७८

(भीम) का डर जाना, अन्धे अन्धपुत्र (दुर्योधन) की घोषयात्रा, गन्धर्वाधिप (चित्ररथ) द्वारा कौरवो का वन्धन और कुन्तीनन्दन का उनको छुडवाना, गजगामिनी पाञ्चाली के हरण करने के लिए सिन्धुराज जयद्रथ का आगमन और भीमसेन द्वारा उसका वन्धन और युधिष्ठिर के कथन से उसका मोक्ष, ६४-७२ दण्डिपुत्र (युधिष्ठिर) के दर्शन के लिए मार्कण्डेय का आगमन, पाण्डवो का शोक दूर करने के लिए विद्वान मार्कण्डेय का शेपनाग पर शयन करने वाले भगवान् विष्णु द्वारा सूर्यवश मे श्रीराम का रूप-धारण करने की तथा अन्य कथाएँ सुनाना, उसके वाद गाण्डीवधारी अर्जुन के प्रिय वाधव जगन्नाथ (श्रीकृष्ण) का पाण्डवो के दर्शन के लिए आना, द्रौपदी-सत्यसवाद, भीष्म और द्रोण की पावन कथाएँ, इन्द्रद्युम्न की कथा—ये सब सुनकर जब प्रसन्न थे तब इन्द्र का एक विप्र का रूप धारण

१ घोमियो के ग्राम मे जाना ।

तल्प्रसादार्थमॉरु शक्ति नल्कियवारुम्
हरिणरूपनेकनरणियॅट्टुत्तुको- ७९
ण्टरण्य पुक्कानन्नॉराणन् दु:ख तीर्प्पान्
अटवितन्निल् तेटिनटन्ना पाण्डवन्मा- ८०
क्किकटरायतु दाह मुळ्ळुत्तिट्टुनेर
तण्णीरन्वेपिप्पानाय् पोयनुजन्मारॅल्ला ८१
तण्णीरु कुटिच्चॉक्कॅ मरिच्चप्रकारवुम्
धर्मजन् तानु चेन्नॅ तण्णीर् कोरियशेप ८२
धर्मराजेन कृत धर्मप्रश्नङ्ङळॆल्ला
धर्मजन् परिग्रहिच्चुत्तर परञ्ञतुम् ८३
धर्मराजानुज्ञया जीविच्चॉरनुजन्मार्
धर्मराजात्मजनोटॉन्निच्चु वसिच्चतुम् ८४
मून्नामताय पर्वमरण्यतन्निल् चोन्नान्
आम्नायव्यासन् कृष्णन् तापसन् द्वैपायनन् । ८५
अध्यायमतिलिरिनूटरुपत्तॉम्पतिल्
पद्यङ्ङळुण्टु पतिनायिरत्तरुनूटि- ८६
नुत्तरमरुपत्तुनालुमॅन्नरियेणम् ।
उत्तम पवित्रमितॅल्लयु पार्त्तुकण्टाल् । ८७
पाराशर्याख्यन् मुनि नाला पर्वत्तिल् चोन्नान्
वैराटराज्य तन्निल् धर्मजादिकळॆल्लां- ८८

कर कर्ण के कुण्डल और कवच का दान लेना ७३-७८ और उनकी प्रसन्नता के लिए एक शक्ति प्रदान करना, किसी का हिरन बनकर एक ब्राह्मण की अरणि चुराकर वन मे घुस जाना, ब्राह्मण का दु ख दूर करने के लिए पाण्डवो का सारे वन मे अरणि ढूँढना, थक जाना, प्यास के मारे पानी ढूँढने के लिए सहदेव आदि चार भाइयो को क्रमश भेजना, उनका पानी पाकर व उसे पीकर मर जाना, फिर युधिष्ठिर का स्वय पानी पीने जाना, वहाँ धर्मराज के धर्म-प्रश्नो का उत्तर देना और अन्त मे धर्मराज का चारो भाइयो को जीवित करना, और फिर उनका धर्मराज के पुत्र के साथ सुख से रहना, ७९-८४ ये सब कथाएँ वेदव्यास, तापस, कृष्णद्वैपायन ने तीसरे अरण्य नामक पर्व मे कही हैं, उनमे दो सौ उनहत्तर अध्याय है जिनमे कुल दस हजार छ सौ चौसठ श्लोक

मोरोरो नाम वेष कैक्कॉण्टु छन्नन्माराय्
ओराण्टु वसिच्चनाळुळ्ळॉरु कथयॅल्ला ८९
राजसेवक-वृत्ति धौम्यन् चॉल्लियवारुम्
व्याजनिर्व्याज मत्स्यनगरप्रवेशन ९०
मल्लनिग्रह पिन्नॅ कीचकादिकळ्वध
निर्लज्जन् सुयोधनन्तन्नुटॅ निरूपणं ९१
गोग्रहणादिकळु विजयविजयवुं
फाल्गुनितन्नालन्नाळुत्तराविवाहवुम् ९२
व्यक्तमाय् विराटपर्व्व तन्निल् पाराशर्यन्
भक्तिवर्धनकर सत्यमायरुळ्चॅय्तान् । ९३
अध्यायमरुपत्तेळॅत्रयु मनोहर
चित्रार्थं मूवायिरत्तञ्ञूरु पद्यङ्ङळुम् । ९४
स्वैरमायुपप्लाव्ये पाण्डवरिरुन्नतुम्
शौरियॅ वरिप्पान् दुर्योधनन् वन्नवारुम् ९५
चौर्यनिद्रयॅप्पूण्टु भगवान् किटन्नतुम्
शौर्यमेरीटुं पार्थन् कृष्णनॅ वरिच्चतुम् ९६

है। निकट से देखने मे यह (भारत) उत्तम और अत्यन्त पवित्र है। चौथे पर्व मे मुनि पाराशर्य ने निम्नलिखित कथाएँ कही है। ८५-८८ युधिष्ठिर आदिको के नाम और वेष बदलकर प्रच्छन्नरूप मे एक वर्ष विराट राज्य मे रहते समय किये गये कार्यो का वर्णन, धौम्य का राजसेवक की वृत्ति[1] का उपदेश, व्याजनिर्व्याज[2] मत्स्यनगर प्रवेश, पहलवानो को हराना और कीचकादि का वध, निर्लज्ज सुयोधन के विचार, गायो को अधिकार मे कर लेना और विजय (अर्जुन) की विजय, फाल्गुनि (अभिमन्यु) का उत्तरा के साथ विवाह—पाराशर्य (व्यास) ने विराटपर्व मे यह सब भक्तिवर्द्धन कथाएँ स्पष्ट और यथार्थ रूप मे कही है। इसमे सरसठ अध्याय और अत्यन्त मनोहर, सरसार्थ तीन हजार श्लोक है। ८९-९४ विद्वान् कृष्ण-द्वैपायन वेदव्यास ने उद्योगपर्व मे ये कथाए कही है—पाण्डवों का गुप्तवास-काल मे उपप्लाव्य मे आराम से रहना, श्रीकृष्ण को सहायक के रूप मे वरण

१ राजा-सेवक के कर्त्तव्य का उपदेश देना २ छल की भावना न रखते हुए भी छल-रूप मे।

गान्धारीमुतन् यदुसैन्यत्तॆ वरिच्चतुम्
कान्तना पद्माकान्तन् कोमळलीलकळुम् ९७
इन्दुशेखरवन्द्यनिन्दुबिम्बास्याम्बुज-
निन्द्रादिवृन्दारकवृन्दवन्दितन् परन् ९८
इन्दिरावरन् नन्दनन्दनन् नारायणन्
चन्द्रिकामन्दस्मितसुन्दरन् दामोदरन् ९९
सुन्दरीजनमनोमन्दिरन् वासुदेवन्
वृन्दारण्यानुवासि कन्दर्पकळेबरन् १००
छन्दसापति जगत्कन्दळभूतन् मुचु-
कुन्दनन्दितन् परमानन्दन् श्रीगोविन्दन् १०१
इन्द्रनन्दननुमाय् चॆन्नथ समवर्त्ति-
नन्दननतनिक्कुळ्ळानन्द वळर्त्तनु १०२
सञ्जयन् वन्नु पुनरविकासुतन्चॊल्ला-
लञ्जसा परञ्ञतु केट्टु धर्म्मात्मजनुम् १०३
कञ्जनेत्राज्ञापूर्वं खण्डिच्चु परञ्ञतु
सञ्जयन् चॆन्नु धृतराष्ट्रना कपटौघ- १०४

करने के लिए दुर्योधन का आगमन, कृत्रिम निद्रा में भगवान् का लेट जाना, अतिशौर्य वाले पार्थ (अर्जुन) का श्रीकृष्ण को वरण करना, गान्धारीसुत दुर्योधन का यदुवंशियों की सेना को वरण करना, लोकप्रिय पद्माकान्त (विष्णु) की कोमल लीलाएँ, इन्दुशेखर (शिवजी) के वन्द्य[1] चन्द्रसदृश कमलमुख वाले, इन्द्रादिदेवगणवन्द्य, पर, इन्दिरावर[2], नन्दनन्दन, नारायण, चन्द्रिका-सदृश मन्द मुस्कान से सुन्दर, दामोदर, सुन्दरीजनमनोमन्दिर,[3] वासुदेव, वृन्दावनविहारी, मदनसदृश शरीरवाले, वेदों के पति, जगत्कन्दल[4] मुचुकुन्दनन्दित परमानन्द श्रीगोविन्द का इन्द्रनन्दन (अर्जुन) के साथ जाकर धर्मराजपुत्र युधिष्ठिर का आनन्द बढ़ाना। ९५-१०२ अविकासुत (धृतराष्ट्र) की ओर से सञ्जय का एक सन्देश लाना, उसे सुनकर कमलनेत्र श्रीकृष्ण की अनुमति से धर्मपुत्र द्वारा उसका खण्डन, सञ्जय का युधिष्ठिर की

---

१ वन्दना के योग्य २ लक्ष्मीपति ३ सुन्दरियों के मन-मन्दिर अर्थात् सुन्दरी नारियों का मन जिसमें धरा रहता है। ४ संसार के लिए मीठे कन्दमूल के समान मधुर ५ मुचुकुन्द के द्वारा आनन्दप्राप्त ।

पञ्जरें तन्निल् धर्म्मजोक्तिकळ् पकरातॆं
विज्वरात्मना सर्व्वमरियिच्चतु केट्टु १०५
सज्वरात्मना निजमन्दिरं पुक्कवारुम्
छिद्रात्मावाय धृतराष्ट्रभूपतिश्रेष्ठन् १०६
निद्रयुमिल्लाञ्ञाधिमुळ्ळुत्तु चमञ्ञतुम्
अन्नेर विदुररॆं वरुत्ति रात्रियिङ्कल् १०७
मन्त्रवनवन् चॊन्न नयङ्ङळ् केट्टु केळा-
ञ्ञध्यात्म सनत्क्कुमारन् मुनि परञ्ञतु- १०८
मित्रनन्दनन् मुनि मित्रमाय् परञ्ञतु-
मवुजमित्रात्मजनन्दनन् प्रार्थिक्कया- १०९
लवुजासनसेव्यनवुजनाभन् नाथन्
अंबिकावरप्रियनबुजशरतातन् ११०
बिबोष्ठन् कंबुधरन् अबरचरनाथन्
अविकासुतालय प्रापिच्चु सभयिङ्कल् १११
सन्धिप्पान् परञ्ञप्पोळन्धात्मा सुयोधनन्
बन्धिप्पान् भाविक्कयालन्धकान्वयजातन् ११२
बन्धुरकळेवरन् बन्धूकसमाधरन्
बन्धुलोकात्मानन्दकरना धराधरन् ११३

उक्तियो को वैसे ही विना आवेग के छल तथा पाप की मूर्ति धृतराष्ट्र को बतलाना, धृतराष्ट्र का पीडित होकर अपने घर चले जाना, वहाँ उन दोष-युक्त भूपतिश्रेष्ठ को नीद न आना और वहुत ही चिन्तित हो जाना, तव रात को विदुर जी को बुलाना और उनकी नीतियो को सुनना, तदनन्तर मुनि सनत्कुमार की आध्यात्मिक बातो को सुनना, मित्र-पुत्र मुनि का मित्र बनकर कहना, अवुजमित्रात्मजनन्दन[1] (युधिष्ठिर) की प्रार्थना से अबुजासनसेव्य[2], अवुजनाभ[3], प्रभु, अंबिकावरप्रिय[4], अंबुजशरतात[5], कुन्दरू के से लाल-लाल ओठ वाले, शख लिए हुये, गरुडाधिपति श्रीकृष्ण का धृतराष्ट्र के घर पहुँचना १०३-१११ और वहाँ सभा मे सधि करने के लिए कहना, तब अन्धात्मा

१ सस्कृत मे कमल-मित्र सूर्य को कहा गया है तथा सूर्य के पुत्र यमराज प्रसिद्ध है, अत युधिष्ठिर धर्मराज यमराज के पुत्र हुए। २ ब्रह्मा जी से सेवा किए गए ३ विष्णु ४ शिव के प्यारे ५ कामदेव (प्रद्युम्न) के पिता श्री कृष्ण।

वन्धमोक्षङ्ङळिल्लातुळ्ळॉरु परब्रह्मं
तन्तिरुवटि विश्वरूप काट्टियवारुम् ११४
अश्वत्थामावुतन्नॅ रहसि चॅन्नु कण्टु
विश्वासत्तोटु परञ्ञवनॅक्कॉण्टु सेना- ११५
पत्य चॅय्यरुतॅन्नु सत्य चॅय्यिच्चवारुम्
पथ्यमॅल्लावरोटुसत्यमाय् चॉन्नवारुम् ११६
विश्वनायकन् हरिदश्वनन्दननोटु
निश्शेषमाय् नयमरुळिचॅय्तवारुम् ११७
कुन्तीदेवियॅवकण्टु मन्त्रिच्चु भय तीर्त्तु
कुन्तीनन्दनन्मारॅ प्रापिच्चवारुमॅन्ला ११८
वद्धवैरत्तोटवरुद्धतवुद्धियोटु
युद्धसन्नद्धन्माराय् सैन्य कूट्टियवारुम् ११९
आन्ध्यमोटुलूकन् वन्नरियिच्चतु केट्टु
कौन्तेयन् कॉन्लाक्कॉल चॅय्तयच्चतुमॅल्ला १२०
चॉल्लिनान् महारथगणने गगादत्तन्
चॉल्लियोरवोपाख्यानान्तपर्यन्त कृष्णन् १२१

(अन्धे धृतराष्ट्र की सन्तान) गुयोधन का उनको वाँधने का यत्न करने के कारण अन्धकान्वयजात[1], वन्धुरकलेवर[2], वन्धूकरामाधर[3], वन्धु लोगो की आत्मा का आनन्द करनेवाले, पृथ्वी के भार को धारण करने वाले, वन्धन और मोक्ष के परे परब्रह्म (श्रीकृष्ण) का अपना विश्वरूप दिखलाना ११२-११४ और एकान्त मे अश्वत्थामा से मिलना और उनसे प्रतिज्ञा करवाना कि वे सेनापति पद नही ग्रहण करेंगे, सब को यथार्थ पथ्य (हितकारी वात) वतला देना, विश्वनायक (श्रीकृष्ण) का हरिदश्वतनय (सूर्यपुत्र-कर्ण) से सारी नीति कह देना, कुन्तीदेवी से मिलकर उनसे सलाह कर उनका भय दूर करना, कुन्तीपुत्रो को प्राप्त करने का प्रकार, वैर वाँधे हुए और उग्रवुद्धि के साथ युद्ध के लिये तत्पर हो जाना और सेना एकत्र करना, ११५-११९ अन्धे होकर (विना समझे शकुनि-पुत्र) उलूक का सदेश लाना, उसे सुनकर कौन्तेय (भीम) का उलूक को मार

---

१ एक यदुवशी राजा के कुल मे उत्पन्न २ मनोहर मूर्ति ३ गुलदुपहरी नामक पुष्प के समान लाल ओठ वाले ।

विद्वानां वेदव्यासनुद्योगपर्व्वं तन्निल् ।
अध्यायमनुत्तम नूटिरुपत्ताऽतिल् १२२
पद्यङ्ङळूनद्वय निश्चयमेळायिरम्
हृद्यङ्ङळवेद्यङ्ङळनवद्यङ्ङळल्लो । १२३
पिन्नेतु भीष्मपर्व चॊल्लुवन् चुरुक्कि ञान्
धन्यनां गावल्गणितनिक्कु वेदव्यासन् १२४
सर्व्वभूपालयुद्धमुर्व्वीशनऽियिप्पान्
दिव्यलोचन नल्कियॆळुन्नळ्ळियवारुम् १२५
सप्तद्वीपङ्ङळोटु सप्तवारिधिकळु
सप्तपर्व्वतङ्ङळु सप्तलोकङ्ङळ् रण्टु १२६
सप्ताश्वन् मुतलाय सप्तखेचरगत-
सप्तमामुनिगति सप्तमारुतगति १२७
सत्वरमिवयॆल्लां सत्यमाय् चॊन्नवारु
पुत्रमित्रादिकळु पित्राद्याचार्यन्मारु १२८
शत्रुभावेन कण्टु युद्धार्थं युद्धभुवि
वृत्रारिपुत्रन् तत्र चित्तकारुण्य कैक्कॊं १२९

भगा देना, इन सब बातो का गगादत्त (भीष्म) ने महारथियो की गणना के अवसर पर वर्णन किया और विद्वान् वेदव्यास कृष्ण ने (क़ाशिराज की पुत्री) अम्बा के आख्यान तक की कथाएँ उद्योग पर्व मे कही है। उस पर्व मे एक सौ छब्बीस उत्तमोत्तम अध्याय है जिनमे दो कम सात हजार श्लोक है, जो हृदय को सुख देने वाले, अवेद्य (दुर्लभ) तथा पापरहित है। १२०-१२३ इसके बाद मै सक्षेप मे भीष्मपर्व कहूँगा। श्री वेद-व्यास जी का गावल्गणि[1] अर्थात् सञ्जय को सारे भूपालो का युद्ध देखकर पृथ्वीपति (धृतराष्ट्र) को निवेदन करने के लिए दिव्यनेत्र प्रदान करना, सातों द्वीपो, सातो समुद्रो, सातो पर्वतो, दोनो प्रकार के सातो लोको (पृथ्वी के नीचे तथा आकाश के ऊपर के १४ लोक), सप्ताश्व (सूर्य) आदि सातो ग्रहो की गति, सप्त ऋषियो की गति, सात मारुतो की गति—इन सब वस्तुओ का यथार्थ वर्णन, १२४-१२७ युद्धभूमि मे पुत्र, मित्र, पिता, आचार्य आदि को शत्रु के रूप मे देखकर वृत्रारिपुत्र (अर्जुन) का चित्त

१ ऋषि गवल्गण के पुत्र 'सजय' को गावल्गणि कहते है। (महाभारत आदिपर्व)।

एट्टलयुमशवयमितुत्तमहिसाकर्म्म
कृत्यमोर्त्तवनतिविवस्तहृदयनाय् १३०
वुद्धियुकॅट्टु पार्त्थन् तेरतिलिरुन्नप्पोळ्
भृत्यभाववु वच्चु भक्तवत्सलन् कृष्णन्- १३१
भृत्यनोटरुळ्चॅय्तु सत्यमा वेदान्तार्त्थम् ।
नित्यानित्यादिकळा वास्तव तर्क्कशक्त्या १३२
तत्त्ववोधार्त्थ सत्यज्ञानानन्तानन्दवु १३३
सत्त्वादिगुणयुक्तप्रकृतिविलासवु
सत्त्वङ्ङळुळिळल् जीवात्मावाय् तानिरिप्पतु १३४
क्षेत्रक्षेत्रज्ञभाववास्तवभेदङ्ङळुम्
शास्त्रसिद्धान्तङ्ङळ् वर्णाश्रमाचारभेद १३५
सूत्रतत्त्ववु विभूतिप्रभाववु पिन्ने
क्षेत्रकर्म्मवु साख्ययोगादि भेदङ्ङळु १३६
द्वन्द्वभावङ्ङळ् कळञ्ञाद्वयमुरप्पिच्चा-
नन्दवुमवनरुळ्चॅय्तितानन्दमूर्त्ति । १३७
विश्वविस्मयकरसमरचतुरनु
विश्वरूपवु काट्टि विश्वास वरुत्तिनान् १३८

करुणा से प्रभावित होकर अत्यन्त भय-त्रस्त हृदय हो जाना और हिसाकर्म—युद्ध से मुँह मोड लेना, अपना विवेक खो वैठना और उस समय भक्तवत्सल श्रीकृष्ण जी का अपने भृत्यभाव को भूलकर अपने भृत्य को सत्य वेदान्तार्थ (यथार्थ व्रह्मज्ञान) का उपदेश करना—यह सव उस (ग्रन्थ) मे है। वह उपदेश यो है—१२८-१३२ कुछ तत्व नित्य है और कुछ अनित्य। तर्क-शक्ति के द्वारा तत्त्ववोध की प्राप्ति के लिए यह वतलाया गया कि एक ओर तो सत्य, ज्ञान, अनन्त और आनन्द है और दूसरी ओर सत्त्वादिगुण-युक्त प्रकृति का विलास है। सत्त्वादि के अन्दर भगवान् जीवात्मा के रूप मे विराजमान है। क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ (शरीर और जीवात्मा) का वास्तविक भेद, शास्त्रप्रतिपादित सिद्धान्त वर्णाश्रमाचार-भेद, सूत्रोक्ततत्त्व, विभूतिप्रभाव, क्षत्रिय का कर्त्तव्य, साख्य और योग मे भेद, यह सव वतला कर आनन्दमूर्ति भगवान् ने द्वैत को त्यागकर अद्वैत को स्थिर किया। १३३-१३७ फिर समस्त जगत का विस्मय करने वाले, युद्ध मे चतुर

संगरकोलाहल तुटङ्ङिडप्पिन्नॅश्शेष
गगानन्दनन् देवव्रतनां कृष्णभक्तन् १३९
पतिनॉन्नक्षौहिणीसंख्यया नानासेना-
पतिनायकन् महारथनोरोरोदिन १४०
पतिनायिर कालाळ् पतिनायिरसश्व
पतिनायिर गज पतिनायिर तेराळ् १४१
पतितमाक्कीट्टुवोनतुपोल् त्रिभुवन-
पतिवाञ्छितमिति मतिमानङ्किंयाल् १४२
अङ्ङनॅं पत्तुदिन युद्ध चॅय्तितु भीष्मर्
मङ्ङातॅयतिन्निटॅ रण्टुनाळ् नारायणन् १४३
ऍंट्टुत्तु सुदर्शनं पट्टुत्वमोटप्पोळ्
अट्टुत्तुकण्टिट्टुळ्ळ भगवल्स्तुतिकळुम् १४४
अवन्तन्ननुग्रहाल् शिखण्डितन्नॅ मुम्पिल्
विबुधपतिसुतन् निर्त्तिनान् युद्धत्तिन्नाय् १४५
अतिनाल् भीष्मर् शरशयने वसिच्चतु
वसुधात्मजमुनियरुळिचॅय्तानल्लो । १४६
अध्यायमतुमॉरुनूटॉरुपत्तॅट्टल्लो
पद्यङ्ङळेळायिरत्तॅण्णूटॅणपत्तुनालुम् । १४७

अर्जुन को अपना विश्वरूप दिखलाकर उसमे विश्वास पैदा किया। इसके बाद युद्ध का कोलाहल प्रारम्भ हुआ और गगानन्दन, कृष्णभक्त महारथ[1] ग्यारह अक्षौहिणी वाली सेना के सेनापति देवव्रत (भीष्म) ने प्रतिदिन दस हजार पैदल सिपाहियो, दस हजार घोडों, दस हजार हाथियो और दस हजार रथियो को गिराया, क्योकि उन बुद्धिशाली ने समझ लिया था कि त्रिभुवनपति (भगवान्) की यही इच्छा है। इस प्रकार भीष्म जी ने दस दिन बिना ग्लानि के युद्ध किया। इस समय के बीच दो दिन नारायण ने बडी कुशलता के साथ अपना सुदर्शन उठाया और उस समय (सर्वत्र) भगवान की स्तुति सुनी गई। भीष्म जी के अनुग्रह से विबुधपति (इन्द्र) के पुत्र अर्जुन ने शिखडी को युद्ध के लिये सामने खडा किया। १३८-१४५ परिणाम यह हुआ कि भीष्म जी शरशय्या पर लेट गये। वसुधात्मज मुनि

1 दस हजार सैनिको के साथ अकेला युद्ध करने वाला।

पतिनॉन्नान्नाळ् पिन्नॅ दुरियोधनन् सेना-
पतियायभिषेक द्रोणाचार्यक्कु चॅय्तान् १४८
त्रिगर्तन् सशप्तकगणत्तोटॉरुमिच्च-
ङ्डकट्टिक्कॉण्टुपोयान् विजयन्तन्नॅयतुम् १४९
अप्रतिरथनाय कुप्रभु भगदत्तन्
सुप्रतीकाख्यनाय गजत्तिन् कळुत्तेरि १५०
कॅल्पोटु वृकोदरन्तन्नॉटु पॉरुततुम् ।
चिल्पुमानोटुकूटि फल्गुननप्पोळ् वन्नि- १५१
ट्टप्रमेयास्त्रप्रयोग तुटर्न्नतुनेरम्
मत्तहस्तीन्द्रवरमस्तक भगदत्त- १५२
मस्तकचापमॉरु पत्रिकॉण्टरुत्ततुम् ।
अभोजव्यूह भेदिच्चुम्परकोन्मकन्मकन् १५३
वम्पट मुटिक्कयाल् कुभसभवादिकळ्
कम्पमानसन्माराय् सभ्रमत्तोडुमप्पोळ् १५४
अम्पॉळिञ्ञारु महारथन्मारॉरुमिच्चु
वम्पनामभिमन्युतन्नॅ क्कॉन्नतुमूल १५५

(वेदव्यासजी)ने यह सब मुनाया। उस (भीष्म पर्व) मे एक सौ अठारह अध्याय है और सात हजार आठ सौ चौरासी श्लोक है। १४६-१४७ ग्यारहवे दिन दुर्योधन ने द्रोणाचार्य का सेनापति के पद पर अभिषेक किया। त्रिगर्त[1] ने सशप्तकगण के साथ अर्जुन को दूर हटाया। अप्रतिरथ और कुप्रभु भगदत्त ने मुप्रतीक नाम के हाथी के कन्धे पर बैठकर बडे जोर से वृकोदर (भीम) के साथ युद्ध किया। उस समय अर्जुन, चित्पुमान् (श्रीकृष्ण जी) के साथ आये और उन्होने अप्रमेयास्त्र का प्रयोग आरम्भ किया और मतवाले हाथी के मस्तक, भगदत्त के मस्तक तथा चाप को एक बाण से काट डाला। अर्जुनपुत्र अभिमन्यु ने चक्रव्यूह को भेद कर शत्रुसेना का नाश किया। इसलिए द्रोणाचार्य आदि चकित हो गये और बडे सभ्रम के साथ छै महारथियो ने निरन्तर बाणप्रयोग से शक्तिशाली अभिमन्यु का वध किया। १४८-१५५ इस वध से उत्पन्न युधिष्ठिर जी का दुख दूर करने

१ यह शब्द महाभारत मे राजा तथा नगरनिवासी और एक नगर—इन तीनो अर्थो मे प्रयुक्त हुआ है। यहाँ राजा के अर्थ मे है।

धर्म्मजन्दु ख तीर्प्पान् सृ जयोपाख्यानादि
निर्म्मलन् वेदव्यासनरुळिचॆय्तवारुम् १५६
निर्ज्जरेन्द्रात्मजनामर्ज्जुनशोक तीर्प्पान्
दुर्ज्जनकालनाय कृष्णसान्त्वनङ्डळुम् १५७
कृष्णसोदरियाय सुभद्रा मात्स्यपुत्रि
कृष्णयुमित्यादि नारीजनदु ख तीर्प्पान् १५८
कृष्णसान्त्वनवचनामृतविशेषवु
वृष्णिवशोल्भूतना तृष्णयोटरुळ्चॆय्तु १५९
पुत्रनिग्रहत्तिनु कारणभूतनाय
शत्रु गान्धारीपुत्रमित्रभूपरिल् मुम्पन् १६०
प्रत्यर्त्थि जयद्रथनाय सैन्धवन्तन्नॆ
मित्रना देवन् नाळॆयस्तमिप्पतिन् मुम्पॆ १६१
मित्रपुत्रालयत्तिन्नयच्चीटुवनॆन्नु
वृत्रनाशनपुत्रन् सत्यवु चॆय्तानल्लो । १६२
एत्तीलॆन्नाकिल् पिन्नॆ विल्लुमाय् तीयिल्च्चाटि
मृत्युलोकत्तॆ प्रापिच्चीटुवनॆन्नु चॊन्नान् । १६३
स्वप्नत्तिल् जिष्णुवीरन् कृष्णनॆक्कण्टवारुम्
चिल्पुमानोटु कूटि कैलास प्रापिच्चतु १६४

के लिये वेदव्यास जी ने सृ जयोपाख्यानादि सुनाया। और दुर्जनो के सहर्ता श्रीकृष्ण जी ने देवेन्द्र के पुत्र अर्जुन का दु ख समाप्त करने के लिए सात्वन-वचन सुनाये, तथा अपनी भगिनी सुभद्रा, मात्स्यपुत्री द्रौपदी आदि नारीजन का दु ख दूर करने के लिये वृष्णिवशोद्भूत (श्रीकृष्ण) ने सान्त्वना देने वाले अमृतवचनो को सुनाया। फिर वृत्रनाशक इन्द्र के पुत्र अर्जुन ने प्रतिज्ञा की कि अपने पुत्र (अभिमन्यु) के निग्रह का कारणभूत शत्रु गान्धारीपुत्र (दुर्योधन) के मित्र व भूपालो मे मुख्य, शत्रु जयद्रथ को दूसरे ही दिन सूर्यास्त समय के पहले ही यमलोक भेज दूँगा। उन्होने यह भी कहा कि अगर यह न हो सका तो मै अपने धनुष के साथ अग्नि मे प्रवेश कर यमलोक चला जाऊँगा। १५६-१६३ वीर जिष्णु (अर्जुन) का श्रीकृष्ण को स्वप्न मे देखना, चित्पुमान् (श्रीकृष्ण जी) के साथ कैलास

१ शत्रु को जीतनेवाले।

शङ्करन् प्रसादिच्चु सङ्कट.तीर्त्तवारुम्
पङ्कजनेत्रपादपङ्कजार्च्चितपुष्प १६५
शङ्करजटाभार तङ्कले कण्टवारुम्
तिङ्कळ्तन्कुलजातन् शङ्कयेक्कळञ्ञतु १६६
मट्टुळ्ळनृपन्मारॅद्धर्म्मजरक्षय्क्काविक्-
प्पिटेन्नाळ् युद्धत्तिनु कृष्णनु तानुकूटि १६७
जभारिसुतन्तन्नॅ वस्पॉटु पॉरुततु
अम्पिनाल् कुळकुळिच्चवुनिर्म्माणादियु १६८
शूरनामलवुसन् जलसन्धादिकळु
पोरिलेळक्षौहिणीप्पटयु मुटिञ्ञतु १६९
विष्णुचक्रच्छायकॉण्टुष्णाशु मरञ्ञतु
जिष्णुनन्दननाय जिष्णुतान् जयिच्चतु १७०
वृद्धक्षत्रात्मजन्तन्नुत्तमाङ्गत्तेक्कॉण्टु,
वृद्धक्षत्राख्यन्तण्टॅ हस्तत्तिलाक्कियतु
अस्तमिप्पतिन्नुमुम्पे सत्यत्तॅ रक्षिच्चतु १७१
रात्रियुद्धवु घटोत्कचण्टॅ मरणवु
पार्त्थिवन् धृष्टद्युम्नन् द्रोणरॅ वधिच्चतु- १७२

जाना, श्रीशकर जी का प्रसन्न होकर दुख दूर करना, श्रीकृष्ण के चरण-कमलो मे चढे हुए पुष्पो को शिवजी की जटाओ मे अर्जुन का देखना, सोमवशोद्भव की शकाओ को दूर करना, दूसरे दिन अन्य-भूपालो को युधिष्ठिर जी की रक्षा के लिए नियुक्त कर श्रीकृष्ण जी और अर्जुन का जभारिसुत के साथ युद्ध करना, अर्जुन का बाणो के द्वारा तालाव खोदकर जल निकालना, युद्ध मे शूर अलबुस, जलसन्ध आदि का तथा सात अक्षौहिणियो का नाश, विष्णुचक्र की छाया से सूर्य का ढक जाना, जिष्णु[1] (अर्थात् इन्द्र) के पुत्र जिष्णु (अर्थात् अर्जुन) की विजय, वृद्धक्षत्र के पुत्र (जयद्रथ) के शिर को उसके पिता के हाथ मे पहुँचाना, सूर्यास्त समय के पहले प्रतिज्ञा पालन करना। १६४-१७१ रात्रियुद्ध और घटोत्कच का वध, पार्थिव धृष्टद्युम्न द्वारा द्रोणाचार्य का वध, अश्वत्थामा का क्रुद्ध होकर अस्त्रो का प्रयोग करना, विश्वान्तकारी युद्ध का होजाना, यह सब सातवे द्रोण पर्व मे

1 शत्रु के जीतनेवाले।

मश्वत्थामावु कोपिच्चस्त्रङ्ङळयच्चतु
विश्वान्तकारणमायुण्टाय युद्धङ्ङळु- १७३
मेळामताकु द्रोणपर्व्वंत्तिलरुळ्चेय्तान्
कालीनन्दननाय मामुनि वेदव्यास- १७४
नध्यायमतिलुण्टु नूटॅळुपतु नल्ल
पद्यङ्ङ्ळुण्टु पतिनायिरत्तिलु पुरं १७५
पिन्नॅयु तोळ्ळायिरत्तम्पतॅन्नरिञ्ञालुम् ।
पुण्यवर्द्धन पुरुपोत्तमलीलापूर्ण्ण १७६
कर्ण्णपर्व्ववु चॉन्नानॅट्टामततु चॉल्ला
वर्ण्णिप्पान् पणियतिलुण्टाय विशेषङ्ङळ् । १७७
त्रिपुरदहन, माद्रागेशप्रतीवाद-
मरयन्नत्तोटॉरु वायसं तोटवारुम् १७८
तरणिसुतनोटु मारुति तोटवारुम्
तरणिसुतशर धर्म्मजनेटवारुम् १७९
पार्त्थनाल् सशप्तकरॉटुक्कप्पॅट्टवारुम्
पार्त्थिवन् पार्त्थनोटु परुप चॉन्नवारुम् १८०
पार्त्थिवन् तन्नॅकॉल्वान् पार्त्थनोङ्ङियवारुम्
पार्त्थसारथिचॉल्लाल् पार्त्थिवन्तन्नॅ पार्त्थन् १८१

काली (सत्यवती-) नन्दन महामुनि वेदव्यासजी ने वर्णित किया है। इसमे एक सौ सत्तर अध्याय है और दस हजार नौ सौ पचास श्लोक है। १७२-१७५ (शुकी ने कहा—) वेदव्यासजी ने पुण्यवर्धन और पुरुषोत्तमलीलापूर्ण आठवाँ कर्णपर्व भी कहा। वह भी मै कहूँगी (यद्यपि) उसका विस्तृत वर्णन करना कठिन है। (१७६-१७७) त्रिपुरदहन, माद्र (शल्य) और अगनरेश (कर्ण) का विवाद, एक कौए का हस से हार जाना, तरणिसुत (कर्ण) से मारुति (भीम) का हार जाना, कर्ण-शरो को युधिष्ठिर जी का सहना, पार्थ के द्वारा सशप्तको[1] का समाप्त हो जाना, पार्थिव (युधिष्ठिर) का अर्जुन से कठोर वचन कहना, पार्थिव को मारने के लिए अर्जुन का तलवार उठाना, पार्थसारथि (श्रीकृष्ण) के कहने से तू-तू कहकर

1 सशप्तकसग्राम मे प्रतिज्ञापूर्वक जाने और वहाँ से न लौटने वाला सैनिक वीर पुरुष।

पेर्त्तु नी नी नीयॅन्नु निन्दिच्चु चॉन्नवारु-
मार्त्तनाय् प्राणत्यागत्तिन्नॉरुम्पॅट्टवारुम् १८२
आर्त्तियॅव्भक्तन्मार्क्कु तीर्क्कुन्न कृष्णनचॉल्लाल्
पार्त्थनु वाचा तन्नत्तान् प्रशसिच्चवारुम् १८३
धर्म्मजन् धनञ्जयन्मारॅयु निरत्तीट्टु
धर्म्मस्थापनकरन् पोर्क्कॉरुमिप्पिच्चतु १८४
शूरना वृकोदरन् घोरसगराङ्कणे
घोरना दुश्शासनन्मार्विट पिळर्न्नतुम् १८५
कर्ण्णफल्गुनयुद्धत्तनुटॅ कट्टुप्पवु-
कर्ण्णनागास्त्रप्रयोगादियु धनञ्जयन् १८६
कर्ण्णनॅ वधिच्चतु सट्टुमित्तरमॅल्ला ।
पुण्यात्मा वेदव्यासनरुळिच्चॅय्तीटिनान् । १८७
अध्यायमतिल्ऱुपत्तॉन्पतङ्ङ्ङ्ङालुम्
पद्यङ्ङळ् नालायिरत्तिल्पुर् तॉळ्ळायिरम् १८८
पोरतिल् युधिष्ठिरन् शल्यरॅ वधिच्चतु
मारुनिमुयोधनन्मार् गदायुद्धादियु १८९
वलभद्रागमन तीर्त्थमाहात्म्यङ्ङळु-
मलिवोटरुळ्चॅय्तु शल्यपर्व्वन्निल् कृष्णन् १९०
अध्यायमतिलन्पत्तॉन्पतॅन्नङ्ङ्ङालुम्
पद्यङ्ङळ् मूवायिरत्तिरुनूटिरुपतुम् । १९१

उनकी निन्दा करना, फिर दुःखित होकर प्राणत्याग के लिए तैयार हो जाना, भक्तो की पीडा समाप्त करने वाले श्रीकृष्ण जी के कहने से अर्जुन का आत्मप्रशसा करना, धर्मस्थापक श्रीकृष्णजी का युधिष्ठिर और अर्जुन को एक होकर युद्ध करने की प्रेरणा देना। (१७८-१८४) शूर वृकोदर (भीमसेन) का घोर युद्ध, रणभूमि मे प्रचण्ड दुःशासन का वक्षःस्थल फाड डालना, कर्ण और अर्जुन का घोर युद्ध, कर्ण का नागास्त्र-प्रयोग, धनञ्जय द्वारा कर्ण का वध, इस प्रकार की और कथाएँ पुण्यात्मा वेदव्यासजी ने कही। उसमे उनहत्तर अध्याय है और चार हजार नौ सौ श्लोक है। (१८५-१८८) युद्ध मे युधिष्ठिर का शल्य को मारना, मारुति और सुयोधन का गदायुद्ध, वलभद्र का आगमन, तीर्थो का माहात्म्य, यह सब

सौप्तिकपर्व्वं तन्निल् चॉल्लियतॉट्टु चॉल्ला
व्याप्तियिलुरचॅय्वान् वेलयुण्टरिञ्ञालुम् । १९२
कालॉटिञ्ञवनियिल् वीणॉरु सुयोधनन्
कालपाशानुगतनायतु कण्टनेरम् १९३
अश्वत्थामावादिकळ् निश्वासत्तोटु कूटि
विश्वास सुयोधनन् तन्नोटु चॅय्तवारुम् १९४
धृष्टद्युम्नादिकळॆ नष्टमाक्कीटु मुन्पॆ
कॅट्टिय कवचं ञानळिक्कुन्नीलयॅन्नु १९५
पॅट्टॆन्नु सत्यं चॅय्तु रात्रियिल् चॅन्नवारुम्
सृष्टिपालनहरणादिकळ् चॅय्यु देवन् १९६
पाण्डवन्मारॆ वेरॆ कॉण्टुपोय्क्कॉण्टवारुम्
ताण्डवप्रियनाय शङ्करननुग्रहाल् १९७
पञ्चद्रौपदेयन्मारोटु पाञ्चालनेयुं
पञ्चतचेर्त्तानिल्लो मिञ्चिच्च पटयॉटुम् १९८
अश्वत्थामावादिकळ् दुरियोधनन्तन्नो-
टश्रुक्कळ् तुटच्चुटनिच्छयोटितु चॉन्नार् । १९९
मरिच्चु सुयोधनन् पाण्डवन्मारुमप्पोळ्
मरिच्चु मरियातॆ वार्त्तकळ् केट्टनेर २००

कृष्ण द्वैपायनजी ने शल्यपर्व मे सुन्दरता के साथ वर्णन किया है। उसमे उनसठ अध्याय है और तीन हजार दो सौ बीस श्लोक है। (१८९-१९१) जो सौप्तिक पर्व मे कहा गया है वह भी सक्षेप मे कहा जायगा, क्योकि, जान लीजिये, विस्तार से कहना बडा काम होगा। टॉग टूटकर गिरे सुयोधन को मरणोन्मुख देखकर अश्वत्थामा आदिको का नि श्वास लेकर सुयोधन को विश्वास दिलाना कि धृष्टद्युम्नादिको को विना नाश किये अपना बँधा हुआ कवच मै नही उतार दूँगा। ऐसी प्रतिज्ञा कर रात को चले जाना, सृष्टि, पालन और हरण करनेवाले भगवान् का पाण्डवो को अलग ले जाना। ताण्डवप्रिय शकरजी के अनुग्रह से पाँच द्रौपदी के पुत्रो के साथ पाञ्चाल और बची हुई सेना को मार डालना—यह सब अश्वत्थामादिको ने दुर्योधन के आँसू पोछकर उनको सुनाया। (१९२-१९९) सुयोधन की मृत्यु हुई। जब पाण्डवो ने ये सब वार्त्ताएँ सुनी तब पाचाली (द्रौपदी) ने

अतिनालनशन दीक्षिच्चु मरिप्पति-
न्नतिशोकत्तोटारभिच्चितु पाचालियुम् २०१
भीमनु द्रौणिशिरोमणि कॉळ्ळुवान् पोयान्
भीमनॅत्तेटिप्पिन्पे माधवार्ज्जुनन्मारुम् २०२
चॅन्नतु कण्टुपेटिच्चश्वत्थामावुतानु-
मन्नेर प्रयोगिच्चु ब्रह्मास्त्रमवारितम् २०३
इम्महीतलमपाण्डवमाय् चमकॅन्नु
चिन्मयन् नारायणन् रक्षिच्चानतिल्निन्नुम् २०४
बन्धुक्कळ्क्कुदकक्कर्मादिकळ् चॅय्युन्नेर
कुन्तियु कर्णन् मम नन्दननॅन्नु चॉन्नाळ्। २०५
कुन्तीपुत्ररुमतु केट्टु सन्तापत्तोटे
चिन्तिच्चु चिन्तिच्चुदकक्रियकळु चॅय्तार् २०६
अध्याय पतिनॅट्टुण्टित्यादि सौप्तिकत्तिल्
पद्यङ्ङळॅण्णूटॅळुपतुमुण्टॅन्नु चॉल्लाम्। २०७
पतिनॉन्नामतुपोल् स्त्रीपर्व्वमतिन्कथ
विधववनितमार्परिदेवनङ्ङळुम् २०८
गान्धारी यदुक्कळ्क्कु शाप नल्कियवारुम्
गान्धारीपति सुतन्मारॅप्पुल्कियवारुम् २०९

प्राणत्याग के लिए अनशन प्रारम्भ किया। भीम भी अश्वत्थामा का शिरोमणि लेने के लिए गये और उसकी खोज के लिए माधव और अर्जुन ने गमन किया। यह देखकर अश्वत्थामा डर गये और उन्होंने व्यर्थ न जाने वाला ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया जिससे यह महीतल पाण्डवों से रहित हो जाय। परन्तु चिन्मय नारायण ने उससे भी बचाया। जब बन्धुओं के लिए उदकक्रिया[2] की जा रही थी तब कुन्ती ने कहा कि कर्ण मेरा पुत्र है। कुन्ती के पुत्र यह सुनकर दुखित हुए और उन्होंने ध्यान करते हुए उदकक्रियाएँ की। सौप्तिकपर्व में अठारह अध्याय, और आठ सौ सत्तर श्लोक है। (२००-२०७) ग्यारहवाँ पर्व का नाम है स्त्रीपर्व और उसमें की कथाएँ इस प्रकार है—विधवा वनिताओं (स्त्रियों) का विलाप, गान्धारी द्वारा यदुओं को शाप, गान्धारीपति का पुत्रों को अपनाना, भीम

१ अश्वत्थामा के मस्तक में एक मणि थी २ तर्पण तथा पिण्डदान आदि।

विस्मयमयोमयमाय मारुतिरूप
भस्ममाय् चमञ्ञातु कश्मलनृपनृतन्नाल् २१०
सस्मितनाय कृष्णनरुळिच्चॅय्तवारु-
मश्मसारवच्चित्तमन्धनु चमञ्ञातु २११
धर्म्मजनियोगत्ताल् शवसंस्कारादिकळ्
तन्मनोदु:खत्तोटु बन्धुक्कळ् चॅय्तवारुम् । २१२
अध्यायमिरुपत्तेळुण्टितॅन्नरिञ्ञालु
पद्यङ्ङळ् चॉल्लामॅळुनूटॅळुपत्तञ्चल्लो । २१३
शान्तिद शान्तिपर्व्व पन्त्रण्टामतुं पिन्नॆ
प्शान्तनवोक्तिमय मिवकतुनोक्कुन्नाकिल् २१४
वर्ण्णधर्म्मङ्ङळ् पुनराश्रमधर्म्मङ्ङळुम्
पुण्यतीर्त्थादिफल दानधर्म्मौघफल २१५
जपहोमादिधर्म्मसापद्धर्म्मवु पिन्नॆ-
त्तपरा नियमादिसाख्ययोगादिभेदं २१६
मोक्षधर्म्मवु विशेषिच्चरियिच्चु भीष्मर्
साक्षाल् श्री नारायणन् तन्नुटॆ नियोगत्ताल् २१७
अध्यात्मज्ञान मुहुर्व्विस्तरिच्चरियिच्चि-
तध्याय मुन्नूटिन्मेल् मुप्पत्तॉन्पतुमुण्टु २१८

के स्थान पर उनके निर्मित लौह-शरीर[1] का नृप (धृतराष्ट्र) द्वारा भस्म करना, उस समय श्रीकृष्णजी का मुस्कराते हुए कथन, अन्धे (धृतराष्ट्र) के चित्त का लोहे के समान कठोर हो जाना, युधिष्ठिर की आज्ञा पाकर बन्धुओं का बडे दु:ख के साथ शव-सस्कार करना। उसमे (स्त्रीपर्व मे) जान लीजिये, सत्ताईस अध्याय और सात सौ पचहत्तर श्लोक है। (२०८-२१३) बारहवॉ पर्व शान्ति देने वाला शान्तिपर्व है और अधिकॉश वह भीष्म के कहे हुए उन्ही के कथन के रूप मे है। वर्णधर्म, आश्रमधर्म, पुण्यतीर्थों मे यात्रा करने का फल, दान-धर्मो के समूह का फल, जप-होमादिधर्म, आपद्धर्म, तपो का नियम, साख्य, योग आदि दर्शनभेद और विशेषत मोक्षधर्म साक्षात् नारायण की अनुज्ञा से उपर्युक्त (पर्व) मे भीष्म जी ने कहा है तथा वहा पर अध्यात्मज्ञान का विस्तार

---

१ भीम के स्थान पर 'लौह-भीम' धृतराष्ट्र के सम्मुख लाया गया मोह।

पद्यङ्ङळ् पतिन्नालायिरवु पिन्पञ्ञूरुं
हृद्यङ्ङळतिन्नुमेल् इरुपत्तञ्चुमल्लो । २१९
पतिम्मूतामतनुशासनिकाख्य पर्व्व-
मतिङ्कल् धर्म्मस्थिति पलतु पार्कुन्तोरुम् । २२०
दानङ्ङळुटे भेदमधिकारिकळ्भेदम्
दानधर्म्मनिष्ठादि विधिभेदङ्ङळ् पिन्ने २२१
पात्रभेदवु कालभेदवु देशभेद
शास्त्रसिद्धान्तभेद मन्त्रमूर्तिकळ्भेद २२२
श्रौतस्मार्त्तादिभेद तान्त्रिकभेदङ्ङळुम्
चेतनाजडभावभेदवु मखभेद २२३
सृष्टि पालनहरणङ्ङळु तत्तत्कर्म्मा-
नुष्ठाननिष्ठापूर्व्वमवताराादिकळु २२४
मौनसत्यादिभेदगतिकळिवयॆल्ला
मानसानन्द वरुमारुरुळ्चॆय्तु कृष्णन् । २२५
अध्यायमिरुनूरॆण्पत्तारुण्टतिल्नल्ल
पद्यङ्ङळ् हृद्यङ्ङळायुण्टु पन्तीरायिरम् । २२६
पतिनालामतश्वमेधिकपर्व्वमल्लो
मतिमान्मारायुळ्ळोर्क्कधिक मनोहरम् २२७

से प्रतिपादन हुआ है। उसमे तीन सौ छत्तीस अध्याय है और चौदह हजार पाँच सौ पच्चीस हृदय को सुख देने वाले छन्द है। (२१४-२१९) अनुशासनिक पर्व तेरहवा पर्व है। उसमे ठीक देखने से अनेक धर्म-स्थिति, दानो के भेद, अधिकारियो के भेद, फिर दानधर्मनिष्ठादि, विधि-भेद, पात्र-भेद, काल-भेद, देश-भेद, शास्त्रसिद्धान्त भेद, मन्त्रमूर्त्तियो के भेद, वेद तथा स्मृति सिद्धान्तो के भेद, तान्त्रिक भेद, चेतनभाव और जडभाव के भेद, यज्ञ के भेद, सृष्टि, पालन और हरण, निष्ठापूर्वक विविध प्रकार के कर्मों का अनुष्ठान, भिन्न-भिन्न अवतार, मौन और सत्य के भेद— यह सब श्रीकृष्ण द्वैपायन ने इस प्रकार वतलाया है जिससे मन मे आनन्द प्राप्त हो। उसमे दो सौ छियासी अध्याय है और अच्छे हृयद को सुख देने वाले वारह हजार श्लोक है। २२०-२२६ चौदहवाँ पर्व है अश्वमेधिक जो बुद्धिशालियो के लिए अधिक मनोहर है। उसमे निम्नलिखित

मामुनि संवर्त्तकन् मरुत्तनृपनोटु
सामोदमरुळ्चॅय्त पुण्यसल्कथकळुम् । २२८
ईश्वरनियोगत्ताल् पाण्डवर्निधिकॉळ्वान्
वाच्च सैन्यत्तोटुदीच्या दिशि पोयकाल २२९
द्रोणजब्रह्मास्त्रज्ज्वालाकुलनाय बालन्
प्राणहीननुमायिप्पिरन्नोरनन्तर २३०
प्राणिकळ्क्कॅल्लामुळ्ळिल् प्राणनाकिय कृष्णन्
प्राणनुण्टाक्कियतॅन्तद्भुतमल्लयल्लो । २३१
उत्तर पॅटु परीक्षित्ताय नृपवर-
नुत्तमोत्तमन् पुरुषोत्तमभक्तनुण्टाय् २३२
उत्तरदिशि मरुत्तन् पुरा वच्च निधि
युक्तपूजकळु चॅय्तुद्धरिच्चुळटॉटे २३३
पाण्डवर् वरुम्पोळिङ्ङुण्टायि तनयनुम्
गाण्डीवधरनश्वं नटत्तीटुवान् पोयान् २३४
बभ्रुवाहननाय पुत्रनोटेटु तोट्टि-
ट्टद्भुत पूण्टु चॅन्नू मृगवीक्षण पिन्नॅ । २३५
वैष्णवधर्म्मं हयमेधकर्म्मानन्तरं
वार्ष्णेयविरचित धर्म्मजमदभग २३६

कथाएँ कही गयी है—महामुनि सवर्तक द्वारा राजा मरुत्त के लिए पुण्यसत्कथाओं का वर्णन, ईश्वर की लीला से पाण्डवो का निधि[1] लाने के लिए बड़ी सेना के साथ उत्तर दिशा की यात्रा, अश्वत्थामा के ब्रह्मास्त्र से पीडित बालक का प्राणविहीन होकर जन्म और प्राणियो के प्राण श्रीकृष्ण जी के द्वारा उस (बालक) को प्राण देने का अद्भुत कर्म, उत्तरा ने जिस बालक को जन्म दिया वह ही उत्तमोत्तम नृपवर, पुरुषोत्तमभक्त परीक्षित् है। २२७-२३२ जब पाण्डव उत्तर दिशा मे राजा मरुत्त का छिपा हुआ खजाना उचित पूजा करके खोद-निकालकर लाये तब पुत्र का जन्म। गाण्डीवधर (अर्जुन) अश्व को घुमाने के लिए निकले, बभ्रुवाहन का सामना और पराजय, आश्चर्यचकित हुए और उसके बाद हरिण की खोज मे गये। वैष्णवधर्म, उसके बाद अश्वमेधयाग, वार्ष्णेय कृत धर्मज

१ खजाना।

नकुलोपाख्यानादि पलवु चॉल्लि मुनि
धकलिल्लिनियिप्पोळ् पऱवानवयॅल्ला । २३७
अद्ध्यायमुण्टु नूऱ्ऱिमुप्पत्तुमून्नु चॉल्लां
पद्यङ्ङळ् नालायिर नानूऱ्ऱुमिरुपतुम् । २३८
पतिनञ्चामतु नल्लाश्रमवासं पर्व्व-
मधिकं मनोहरमज्ञानविषहरम् । २३९
गान्धारीकान्तनन्धन् गान्धारियॉटुकूटि-
त्तान्तनाय् पुरत्तिङ्कलिरुन्नवाऱुं पिन्नॅ । २४०
कुन्तियुं गान्धारियुं तानुमाय् पोयवाऱु-
मन्तिके वेदव्यासनॅळुन्नळ्ळियवाऱुम् २४१
मरिच्च सुयोधननादिकळॅतम्मॅक्कण्टु
चिरिच्चु धृतराष्ट्रन् तॅळिञ्ञु चॉन्नवाऱुम् २४२
अविकातनयनु कुन्तियु गान्धारियु
सभ्रम तीर्न्नु परलोक प्रापिच्चवाऱुम् । २४३
माण्डव्यशापतीर्न्नु धर्म्मराजन्टॅ गति
पाण्डवर् केट्टु खेदिच्चिरुन्नवाऱु पिन्नॅ २४४
वृष्णिकळ् विनाशन नारदनरुळ् चॅय्तु
उष्णनिश्वासत्तोटु केट्टतुमवयॅल्ला २४५

(युधिष्ठिर) का मदभग, नकुलोपाख्यान, इस प्रकार की और कथाएँ महा-मुनि ने कही। वह सब कहने के लिए अब पर्याप्त दिन नही रह गया। उसमे एक सौ तेतीस अध्याय और चार हजार चार सौ बीस श्लोक है। २३३-२३८ पन्द्रहवाँ पर्व आश्रमवासनामक है जो अत्यन्त मनोहर और अज्ञानरूपी विष को नाश करनेवाला है। गान्धारीकान्त अन्ध नृप (धृतराष्ट्र) थककर गान्धारी के साथ नगर ही मे रहे। फिर कुन्ती और गान्धारी के साथ स्वय चले गये। उनके पास वेदव्यास जी पधारे। उसके बाद मृत सुयोधन आदि को देखकर प्रसन्न हुए और मुस्काते हुए बोले। (अविकातनय) धृतराष्ट्र, कुन्ती और गान्धारी का सारा भ्रम समाप्त हुआ और वे परलोक चले गये। माण्डव्यशाप का प्रभाव समाप्त हुआ। पाण्डव धर्मराज की गति सुनकर खिन्न हुए। नारद जी ने वृष्णियो के नाश का समाचार सुनाया। उसको पाण्डवो ने उष्ण निश्वास के

अध्यायं नालपततिल् पद्यङ्ङळायिरत्ति-
न्नुत्तर तॉळ्ळायिरत्तारुण्टॅन्नरिञ्ञालुम् । २४६
मौसलपर्व्वं तन्निल् वृष्णिकळ्विनाशवु
कंसारियाकु कृष्णन् ससारविनाशनन् २४७
अग्रजनॉट्टुकूटॅ वैकुण्ठ प्रापिच्चतुं
व्यग्रिच्चु धनञ्जयन् वज्रनॅ वाळिच्चतुं २४८
स्त्रीधनादिकळोटु पोरुम्पोळ् मध्येमार्ग्गं
बाधितनाय पार्थन्तन्नोटु काट्टाळन्मार् २४९
परिच्चुकॉण्टान् धनं नारिमारॅयुमॅल्ला
पॅरुत्त गाण्डीववु कुलय्कायीलयल्लो । २५०
दिव्यास्त्रङ्ङळिलॉन्नु वळियॅत्तोन्नीलप्पोळ्
सव्यसाचियु धनुस्सिळच्चानॅन्नु केळ्प्पू । २५१
सत्यज्ञानानन्तानन्दामृतन् नारायणन्
सत्त्वादिमायागुणरहितन् परमात्मा २५२
तत्त्वमस्यादिमहावाक्यार्थवस्तुमूर्त्ति-
नित्यना सच्चिल्ब्रह्माख्यन् परन् कृष्णन्तण्टॅ २५३
नित्यया मायाविलासङ्ङळुं निरूपिच्चाल्
व्यक्तियोटुरचॅय्वानार्कुमेयरुतल्लो । २५४

साथ सुना। इस (आश्रमवास पर्व) मे चालीस अध्याय और एक हजार नौ सौ छ श्लोक है। २३९-२४६ मौसलपर्व मे, वृष्णियो का विनाश, कस के शत्रु, ससार का नाश करनेवाले श्रीकृष्णजी का अपने ज्येष्ठ भाई (श्रीवलभद्र) के साथ वैकुण्ठ चले जाना, व्याकुल होकर धनञ्जय (अर्जुन) का वज्र को राजा बनाना, धन-धान्य और स्त्रियों के साथ चलते समय रास्ते मे स्त्रियो का पार्थ के अधिकार मे होने पर भी जगली मनुष्यों द्वारा लुट जाना, अद्भुत गाण्डीव का भी काम न देना, अर्जुन को उस समय कोई भी दिव्यास्त्र न सूझना और अपना धनुष खो बैठना, यह सब सुना गया है। २४७-२५१ सत्य-ज्ञान-अनन्त-आनन्द-अमृत-रूप नारायण, सत्त्वादिमायागुणरहित, परमात्मा, तत्वमसि आदि श्रुति के महावाक्यो के द्वारा सिद्ध ईश्वर की यथार्थ मूर्ति, नित्य, सच्चिद्ब्रह्म, पर, श्रीकृष्ण जी की नित्य माया के विलासो का कोई भी व्यक्ति वर्णन नही कर सकता।

वेदव्यासनुमात्मज्ञानङ्ङळरुळ्चॅय्तान्
खेदवुमटक्कि श्वेताश्वनु पुरिपुक्कान् । २५५
दु ख पूण्टजातशत्रुक्षितिपतियोटु
शक्रनन्दनन् कृष्णगतियुमरियिच्चान् । २५६
इक्कथयॅल्लामल्लो मौसलमॅट्टद्ध्याय
दु खनाशनकर पद्यङ्ङळ् मुन्नूरल्लो । २५७
सर्व्ववुमुपेक्षिच्चु दिव्यन्मार् पाण्डवन्मार्
उर्व्वियॅ प्रदक्षिण चॅय्वानाय् पुरप्पॅट्टार् । २५८
ऍन्नतु मून्नद्ध्याय नूटिरुपतु पद्य
पुण्यद महाप्रस्थानिकमाकिय पर्व्वम् । २५९
धर्म्मराजनुमथ धर्म्मनन्दनन् पिन्पे
धर्म्मत्तॅप्परीक्षिप्पान् सारमेयाकारवु २६०
कैक्कॉण्टु दैन्य पूण्टिङ्ङारुमिल्लॉरुगति
निष्कृपमुपेक्षियाय्कॅन्नॉरु भावत्तोटु २६१
निल्कुन्ननेरमितुकूटातॅयिनिविकप्पोळ्
स्वर्गप्राप्तियु वेण्टा केवलमॅन्नु नृपन् । २६२
देवदूतनु पाण्डुसुतनु धर्म्माधर्म्म-
मावोळ वाद चॅय्तु देवदूतनु तोटु । २६३

वेदव्यासजी ने आत्मज्ञान का उपदेश किया और श्वेताश्व (दारुक) अपने खेद को दबाकर नगर चले गये। शक्रनन्दन (अर्जुन) ने दु ख के साथ अज्ञातशत्रु राजा (युधिष्ठिर) को श्रीकृष्णजी की गति सुनाई। ये सब कथाएँ मौसलपर्व मे वर्णित है। इसमे आठ अध्याय और तीन सौ श्लोक है। २५२-२५७ सब त्याग करके दिव्य पाण्डव पृथ्वी की प्रदक्षिणा करने के लिए चले गये। यह पुण्यदायक महाप्रस्थानिक नामक पर्व मे कहा गया, जिसमे तीन अध्याय और एक सौ बीस श्लोक हैं। धर्मराज यमराज, युधिष्ठर जी के धर्म की परीक्षा के लिए कुत्ते का रूप ग्रहण कर उनके पीछे चले और सकेत किया कि मेरा कोई आश्रय नही, मेरी उपेक्षा न की जाय। तब राजा ने कहा कि इसके बिना मुझे स्वर्गप्राप्ति नही चाहिए, मै अकेला स्वर्ग नही जाऊँगा। यमराज का दूत और पाण्डु का पुत्र इन दोनो ने धर्म और अधर्म के सबन्ध मे यथेष्ट बातचीत की और दूत ने हार मानी।

स्वर्ग्गारोहणपर्व्वं पतिनॅट्टामततिल्
स्वर्ग्गति लभिच्चितु धर्म्मजादिकळ्क्कॅल्लाम् । २६४
अद्ध्यायमञ्चुण्टतिल् पद्यङ्ङळिरुनूरुम्
अद्ध्ययनं चॅय्युन्तोर्क्कॅन्नुमे मुक्ति वरुम् । २६५
पर्व्वंवुं मून्वाऽतिल् ग्रन्थवु नूऽायिरम्
दिव्यमितद्ध्यायवुमुण्टॉरु रण्टायिरम् । २६६
शौनकादिकळ् सूतन्तन्नोटु चोद्य चेय्तु
मानमॉरक्षौहिणिक्कॅङ्ङ नॅयॅन्नु चॉल् नी । २६७
हस्तियुन्तेरुमोरोन्नश्व मून्नञ्चु कालाळ्
पत्तियां मून्नु पत्तिकूटियाल् सेनामुख २६८
तत्त्रिगुणित गुल्मं तत्त्रिगुणित गणं
तत्त्रिगुणितयल्लो वाहिनियाकुन्नतु २६९
तत्त्रि गुणितयल्लो पृतनयाकुन्नतु
तत्त्रिगुणित चमूराख्ययॅन्नतुं नून । २७०
तत्त्रिगुणितयल्लो चॉल्लेरुमनीकिनी
तद्दशगुणितयाकुन्नतुमक्षौहिणी । २७१
इरुपत्तोरायिरत्तॅण्णूरुमॅळुपतु
करिकळ् वेणं नल्लरथवुमत्र वेणं । २७२

यही अठारहवाँ पर्व है जिसमे धर्मज (युधिष्ठिर) आदि को स्वर्गप्राप्ति हुई। उसमे पाँच अध्याय है और दो सौ श्लोक है। उनका अध्ययन करने वाले अवश्य मोक्ष प्राप्त करेगे। (समस्त महाभारत मे) अठारह पर्व है और एक लाख श्लोक है और कुल दो हजार दिव्य अध्याय है। २५८-२६६ शौनक आदिकों ने सूतजी से एक प्रश्न पूछा—एक अक्षौहिणी का परिमाण बतलाये। एक हाथी, एक रथ, तीन घोडे और पाँच पैदल—यह एक पत्ति का परिमाण है, तीन पत्तियो का एक सेनामुख, तीन सेनामुख का एक गुल्म बनता है, तीन गुल्म का एक गण तथा तीन गण की एक वाहिनी बनती है और तीन वाहिनियो की एक पृतना कहलाती है। तीन पृतनाओ की एक चमू, तीन चमू की एक अनीकिनी, दस अनीकिनियो की एक अक्षौहिणी बनती है। इक्कीस हजार आठ सौ सत्तर हाथी होना चाहिए और उतने ही रथ, रथ से तिगुने घोडे और

मुम्मटङ्ङितिलश्वं कालाळुमञ्चु मट-
ङ्ङिङम्मतमरियिच्चान् मुनिकळोटु सूतन् । २७३
वैंशम्पायनमुनि जनमेजयनोटु
वैशिष्यमुळ्ळ महाभारतमरियिप्पान् २७४
एँन्तु कारणमतु चॉल्कॅन्तु केट्टु सूतन्
वन्धमुण्टायतरियिच्चीटामॅन्नु चॉन्नान् । २७५

उदङ्कोपाख्यानम्

जनमेजयन्तानु मून्ननुजन्मारुमाय्
मुनिमारॉटु कूटॅ कुरुक्षेत्रत्तिल्च्चॅन्नु । १
कनिवोटॉरु याग तुटङ्ङियतुकाल-
मनुजातन्मार् मखशालयिलिरिक्कुम्पोळ् २
चॅन्नितु सारमेयन् भूपसोदरन्माराल्
अन्नेरमभिहतनायवनोटिप्पोयान् । ३
तन्नुटॅ मातावाय सरमयतु कण्टु
खिन्ननाय् करयुन्न नन्दननोटु चॉन्नाळ् । ४

पँचगुने पैंदल भी होना चाहिए—सूत जी ने अपना यह मत मुनियो को सुनाया। वैंशम्पायन जी ने विशिष्ट ग्रथ महाभारत की कथा जनमेजय को क्यो सुनाई, ऐसा प्रश्न सुनकर सूत जी ने कहा इसका एक कारण है, वह मैं वताऊँगा । २६७-२७५ ।

उदङ्कोपाख्यानम्

जनमेजय अपने तीन भाइयो और मुनियो के साथ कुरुक्षेत्र गये । वहाँ उन्होने प्रेम से एक याग आरम्भ किया । उस समय जवकि राजा के भाई यज्ञशाला मे थे तव एक कुत्ता वहाँ पहुचा तथा राजा के भाइयों द्वारा मारे जाने पर भाग गया । यह देखकर उसकी माँ सरमा[1] खिन्न हुई और रोते हुए बच्चे से वोली—क्यो रोते हो, किसने तुमको मारा ? और क्यो ? यह सुनकर उसने कहा—पृथ्वीपति जनमेजय के श्रुतसेन, उग्रसेन,

1 सस्कृत मे कुतिया को सरमा तथा कुत्ते को सारमेय कहते है ।

ऍन्तिनु करयुन्नू आरुण्णी हनिच्चतुं
बन्धमॅन्तितिनॅन्नू केट्टवनुरचॅय्तान् । ५
पृथिवीपति जनमेजयसोदरन्मार्
श्रुतसेननुमुग्रसेननुं भीमसेनन् ६
इवर्कळ्मूवरालुं ञ्ञानभिहतनायेन्
अवळुमतु केट्टु तनयनोटु चॉन्नाळ् ७
ऍन्तु नीयवरोटु पिळच्चतॅन्नु चॉल् नी
बन्धमिल्लॉरु पिळ ञ्ञान् चॅय्तीलॅन्नानवन् । ८
गन्धिच्चतिल्ल हव्यं तॉट्टीला नोक्कीलल्लो
चिन्तिच्चालितिन्नॉरु बन्धमिल्लेतुमम्मे । ९
सत्यमॅन्नतुकेट्टु चॉल्लिनाळ् सारमेयी
एतुमे पिळयातॅ बालनॅ हनिक्कयाल् १०
हेतुकूटातॉरापत्तुण्टाक निनयातॅ ।
शापत्तॅक्केट्टु परितापत्तोटवनीशन् ११
पापद्ध्वंसनमाय यागत्तॆ समर्प्पिच्चु ।
शापत्तॅयॉळिप्पतिनारिनि नल्लतॅन्नु । १२
शोभिच्चॉरुपाद्ध्यायन्तन्नॅत्तेटिनानवन् । १३
अन्ताळिल् श्रुतश्रवावाकुन्न मुनियुटॆ
पर्णशालयिल् चॅन्नान् मृगयाविश्रान्तनाय् । १४

और भीमसेन नामक तीनो भाइयो ने मुझे मारा। यह सुनकर माता ने अपने पुत्र से कहा—उनसे तुमने क्या अपराध किया, यह कहो। पुत्र ने कहा—कोई कारण नही है, मैने कोई अपराध नही किया था। मैने न तो हव्य को सूँघा, न उसको देखा; विचार किया जाय तो कोइ कारण नही दीखता, सच कहता हूँ। १-९ यह सुनकर कुतिया बोली—विना किसी अपराध के मेरा पुत्र मारा गया, इसलिए तुमको भी बिना कारण कोई विपत्ति प्राप्त हो। इस शाप को सुनकर पृथ्वीपति ने बडे परिताप के साथ एक पाप के नाश करनेवाले याग को समर्पित किया। 'शाप को दूर करने के लिए कौन उपयुक्त होगा' ऐसा विचारकर वे एक तेजस्वी उपाध्याय (आचार्य) को खोजने लगे। एक दिन पृथ्वीपति मृगया (शिकार) से थककर मुनि श्रुतश्रवा की कुटी मे पहुँचे। और श्रुतश्रवा के पुत्र सोमश्रवा को उन्होने

मन्नवन् श्रुतश्रवाविन् मकन् सोमश्रवा-
वॅन्न तापसकुमारनुतन्नॆ वरिच्चितु १५
पौरोहित्यत्तिन्नप्पोळवनीश्वरनोटु
पारमार्थ्यंवु पिता चॉल्लिनान् श्रुतश्रवा १६
वॅन्नुटॅ पुत्रनाकु वालकन् सोमश्रवा
पन्नगनारीमणितन्निलुल्पन्ननायान् । १७
धन्यात्मा तपोवलकॉण्टेट जीविच्चीटुं
वन्हिजशिखासमतेजसा निधि तव १८
पुण्यौघ वळर्त्तुवान् पोरुमॅन्नरिञ्ञालुम् ।
निर्णयमितुकॉण्टु खेदवुमुण्टाकेण्टा । १९
उण्टल्लो वलियॉरु दुर्धरमहाव्रत
इण्टलुण्टतुकॉण्टु शिष्यन्मार्क्कॅन्नुवरुम् । २०
भूदेवयज्ञभग चॅय्तीटुमारिल्लवन्
मेदिनीपते निनक्कतिनॅस्सहिक्कामो । २१
अन्नवनॉत्तवण्णमिरिप्पान् सत्य चॅय्तु
मन्नवन् मुनियोटु वरिच्चुकॉण्टानल्लो । २२
अत्तल्तीर्न्नुर्व्वीपति तापसपुत्रनोटु
हस्तिन प्रापिच्चनुजन्मारोटुरचॅय्तान् । २३

पौरोहित्य के लिए वरण किया । तव पिता श्रुतश्रवा ने पृथ्वीपति राजा से यथार्थ सत्य कह दिया । मेरा पुत्र तरुण सोमश्रवा एक नागवश की श्रेष्ठ नारी से उत्पन्न हुआ है । वह धन्यात्मा अपने तपोवल से चिरजीवी होगा । वह अग्निशिखा के समान तेज का निधि है और आपके पुण्य-पुञ्ज को वढाने के लिए वहुत ही उपयुक्त है । इसलिए आप नि.सन्देह खेद न करे । एक वडा दुर्धर महाव्रत का अनुष्ठान करना है, उसमे शिष्यो को कुछ कष्ट होने की सभावना है । वह भूदेवयज्ञ का भग करनेवाला नही है । हे राजन्, क्या आप उसको सहन कर सकते है ? १०-२१ राजा ने यथोचित रहने और यज्ञ करने की प्रतिज्ञा की, तथा मुनि का वरण किया । दु ख छोड़कर राजा तपस्वी के पुत्र के साथ हस्तिनापुर गये और अपने भाइयो से वोले—हम लोगो को एक तापसवर पुरोहित मिल गये हैं। अव सभी कर्म उनके कहने के अनुसार किये जायँगे । फिर पृथ्वीपति तक्षशिला नामक

नमुक्कु पुरोहितन् तापसवरनिनि-
स्समस्तकर्म्मङ्ङळुमिम्मुनि चॉल्लुवण्ण । २४
पिन्नॅप्पोय् तक्षशिलाख्य पुर तन्निल्च्चॅन्नु
मन्नवन् युद्धं चॅय्तु जयिच्चानविटवुम् । २५
सामसन्ध्यादिनिजोपायनीतिकळ्कॉण्टु
सामन्तादिकळॅयुमॉक्कवे वशत्ताक्कि । २६
तन्नुटॅ नाटाक्कित्तानटक्कियिरिक्कुनाळ्
पुण्यात्मा तपोधननायॉरु धौम्यनुळ्ळल् । २७
कारुण्य पूण्टु शिष्यरुपमन्युवु पुन-
रारुणि पाञ्चालनु वैदनुमुण्टाय्वन्नु । २८
अलिञ्ञ चित्तत्तॉटु वैदनाकिय शिष्यन्
पलनाळॉरुपोलॅ गुरुशुश्रूष चॅय्तान् । २९
वैदन्तन्नुटॅ शिष्यनुदङ्कनॅन्न मुनि
वैदग्द्ध्य गुरुशुश्रूषय्क्कवनेरुमल्लो । ३०
अवनु पलकाल गुरुशुश्रूष चॅय्ता-
नवनॅक्कुरिच्चेटं वैदनु प्रसादिच्चु । ३१
निन्नुटॅ शुश्रूषकळ् पोरुमॅन्नरिञ्ञालु
निन्नोळ गुरुभक्ति मटॉरुवक्कुमिल्ल । ३२
इङ्ङनॅ निन्नॅप्पोलॅ गुरुशुश्रूषचॅय्वा-
नॅङ्ङुमिल्लॉरुत्तरुमॅन्नरुळ्चॅय्तु गुरु । ३३

नगर गये, वहाँ युद्ध करके जीत गये। तदनन्तर समझाने-बुझाने, सन्धि आदि अपने उपायो वाली नीति के द्वारा सभी सामन्तो को उन्होने अपने वश मे कर लिया, उन्होने उनके देश को अपना देश वनाकर अपने वश मे कर लिया। पुण्यात्मा, तपोधन मुनि धौम्य के अपने कारुण्य के कारण, चार शिष्य हुए—उपमन्यु, आरुणि, पाचाल और वैद। वैद नामक शिष्य ने बडे प्रेम के साथ बहुत दिन अपने गुरु की समानरूप से सेवा की। वैद का शिष्य उदक नामक मुनि गुरुशुश्रूषा मे बडा ही निपुण था। २२-३० उसने भी अपने गुरु की बहुत दिन तक शुश्रूषा की। गुरु वैद, उदक से बहुत प्रसन्न हुए और बोले—शुश्रूषा पर्याप्त हो गयी है। तुम्हारी जैसी गुरुभक्ति और किसी मे नही है। तुम जैसे गुरुशुश्रूषा करनेवाले और कोइ कही नही है।

निन्नुटॅयात्मशुद्धि कण्टु ञान् प्रसादिच्चे-
नॅन्नतु निमित्तमाय् वर्द्धिक्क विद्यकळुम् । ३४
पिन्नॅयु पुनरेव चॉल्लिनोराचार्यनो-
टॅन्नतु केट्टुनिन्नु चॉल्लिनानुदङ्कनुम् । ३५
ऍङ्किलु गुरुविनु दक्षिण चॅय्तीटेण-
मॅङ्किले विद्यकळु गुणवु प्रकाशिप्पू । ३६
दक्षनाकिय शिष्यनिङ्ङनॅ परञ्ञप्पोळ्
शिक्षितावाय गुरु पिन्नॅयुमरुळ्चॅय्तु । ३७
दक्षिण शुश्रूषयिन्मीतॅ मटॉन्नुमिल्ल
भक्तियिल्लॅन्नाकिल् मटॉन्निनु फलमिल्ल । ३८
एवमाचार्यन् चॉन्नताशु केट्टुदङ्कनु-
मावोळ विनय पूण्टाचार्यनोटु चॉन्नान् । ३९
समस्तकर्म्मङ्ङळ्क्कु समस्तव्रतङ्ङळ्क्कु
क्रमत्तालनुष्ठिच्चालन्त दक्षिणयल्लो । ४०
अल्लॅङ्किल् समाप्तियाकुन्नतॅन्तरुळ्चॅय्क
वल्लतु वेणमॉरु दक्षिणयॅन्नु नूनम् । ४१
ऍङ्किलॅन् पत्नियोटु चोदिच्चालवळ् चॉल्लु
शङ्ककूटातॅ चॅय्क दक्षिणयवळ्क्कु नी । ४२

गुरु ने इस प्रकार (और भी) कहा—तुम्हारी आत्मशुद्धि देखकर मैं प्रसन्न हूँ। इस लिए तुम्हारी विद्या की वृद्धि हो। जब आचार्य ने फिर यही कहा तब उस बात को सुनकर उदक ने निवेदन किया—यह सब ठीक है, परन्तु गुरु को दक्षिणा देनी चाहिये, तभी तो विद्या और सद्गुण खिलेंगे। जब दक्ष शिष्य ने इस प्रकार कहा तब अतिशिष्ट गुरु ने फिर उत्तर दिया—शुश्रूषा से बढकर कोई दक्षिणा नही है। जहाँ भक्ति नही है वहाँ और सब व्यर्थ है। ३१-३८ आचार्य की यह बात सुनकर उदक ने बडी विनय के साथ गुरुजी से कहा—समस्त कर्मों का और सभी व्रतों का अगर क्रम से अनुष्ठान किया जाय, तो उनका अन्त दक्षिणा ही है। नही तो क्या वह समाप्त होगा, यह बतलाइए ? निःसन्देह कोई दक्षिणा अवश्य चाहिए। (तब गुरु ने कहा) अगर ऐसा है तो मेरी पत्नी से पूछो। जो कुछ भी वह कहेगी वही उनको दक्षिणा दे दो। तुम्हारी जय हो। यह सुनकर शिष्य

नल्लनाय् वरिकॅन्नु चॉन्नतु केट्टु गुरु-
वल्लभतन्नॅ वन्दिच्चवनु चोद्यं चॅय्तान् । ४३
ऍन्तभिमतमॅन्नु केट्टवळुरचॅय्ताळ्
चिन्तित पङ्ङ्ङिटामॅङ्किलो नालान्नाळ् नी ४४
चॉल्लॅळु पौष्यनाय भूपतिप्रवरन्टॅ
वल्लभयणियुन्न कुण्डलं नल्कीटणम् । ४५
अतु केट्टवन् निजगुरुवा वैदमुनि-
पदतार् नमस्करिच्चनुज्ञकॉण्टु पोयान् । ४६
अन्नेरमॉरु काळतन्मुतुकेरिक्कॉण्टु
वन्नीटुन्नवन्तन्नॅक्काणायि मद्ध्येमार्ग्गम् । ४७
भक्षिच्चीटण काळतन्मलमॅन्नानवन्
भक्षिच्चु पण्टु वैदन् वर्द्धिक्कु कायबलम् । ४८
शङ्किच्चीटेण्ट तव सङ्कटमॅल्ला तीरुम्
पङ्कवुमकन्नीटु मंगल वन्नुकूटुम् । ४९
इत्तर मुहुर्म्मुहुरुत्तमवाक्यं केट्टु
भक्तियोटुदङ्कनु भक्षिच्चु वृषमलम् । ५०
पिन्नॅप्पोय् पौष्यनृपन्तन्नॅयु कण्टानवन्
नन्नायि सत्कार चॅय्तिरुत्ति पौष्यन् तानुम् । ५१
ऍन्तु काक्षितमॅन्नु भूपति चोदिच्चप्पोळ्
चिन्तितमुदङ्कनुं चॉल्लिनान् परमार्त्थम् । ५२

ने गुरुजी की पत्नी की वन्दना करके उनसे पूछा—आप का क्या अभिमत है। यह सुनकर गुरुपत्नी ने कहा—विख्यात भूपति पौष्य की पत्नी जो कुण्डल पहन रही है वे मुझे ला दो। यह सुनकर अपने गुरु वैदमुनि का चरण स्पर्श करके उनकी आज्ञा लेकर उदक चला गया। उस समय रास्ते मे एक वृषभ की पीठ पर बैठा कोई सामने आता हुआ दिखाई दिया। उस(सवार) ने कहा—इस वृषभ का गोबर खाओ। पहले वैदमुनि ने भी खाया है। इससे शरीर के बल की वृद्धि होगी। ३८-४८ कोई शंका न करो, तुम्हारी सब चिन्ताएँ समाप्त हो जायँगी। पाप नष्ट हो जायगा और सब मगल हो जायगा। वार-बार इस प्रकार का उत्तम वाक्य सुनकर उदक ने भक्ति के साथ वृषभ का गोबर खा लिया। तदनन्तर

मेदिनीपते तव पत्नितन् कुण्डलङ्ङ-
ळादरवोटु मम नल्कणं मटियातॆ । ५३
भूपति चॊन्नानतु पत्नियोटपेक्षिच्चाल्
तापसवर तव नल्कीटुमवळ्तानुम् । ५४
अतु केट्टुदङ्कनु पौष्यपत्नियॆक्काण्मा-
नतिकौतुकत्तॊटु तिरञ्ञु काणाञ्ञप्पोळ् ५५
भूपति पौष्यन् पुनरुदङ्कनोटु चॊन्नान्
तापसकुलवर काणाय्वान् मूल चॊल्लाम् । ५६
शुद्धान्तक्करणन्मार्क्कॆतुमे दण्डमिल्ल
शुद्धान्तमद्ध्ये काणा मुग्द्धगात्रियॆ नूनम् । ५७
एतानुमशुद्धतयुळ्ळवर्क्कवळुट-
लेतॊरुतरत्तिलु कण्टुकूटुकयिल्ल । ५८
ऎन्नतुकॊण्टेतानुमुण्टशुद्धत भवा-
नॆन्नु तोन्नीटुन्नॆन्नु भूपति चॊन्नशेषं ५९
चिन्तिच्चानुदङ्कनुमशुद्धिक्कवकाश-
मॆन्तिनिक्कॆन्नु पुनरुळ्ळिलेतिरञ्ञप्पोळ् । ६०
आचमन चॆय्याय्क कारणमॆन्नतरि-
ञ्ञाचमनादिकळु चॆय्तवन् चॆन्नशेषं । ६१

पौष्य का दर्शन किया। पौष्य ने उसका अच्छा सत्कार करके उसको आसन पर बैठाया। भूपति ने पूछा—आप क्या चाहते है? तब उदक ने अपनी वास्तविक इच्छा प्रकट की—हे भूपाल! कृपया अपनी पत्नी के कुण्डल आदर के साथ बिना हिचके मुझे दे दीजिए। भूपति ने कहा—हे श्रेष्ठ तपस्वी! आप मेरी पत्नी से मॉगिये। वे आपको अवश्य दे देगी। यह सुनकर उदक ने राजरानी को देखने के लिए बडे कौतुक के साथ उनको ढूँढा, परन्तु वह मिली नही। तब भूपति पौष्य ने उदक से कहा—हे तापसकुलवर, मैं न मिलने का कारण आपको बताऊँगा। ४९-५६ शुद्ध अन्त करणवालो के लिए कोई कठिनाई नही है। उनको वह अवश्य अन्त पुर मे दिखाई देती है। जिसमे कोई भी अशुद्धि हो, वह उनका शरीर किसी भी तरह नही देख सकता है। इसलिए मुझे प्रतीत होता है कि आप मे कोई अशुद्धि अवश्य है। जब भूपति ने इस प्रकार कहा तब

भूपति पत्नितन्नॆक्काणायितन्त:पुरे
तापसेन्द्रनॆ नृपपत्नि सल्क्कारं चॆय्ताळ् । ६२
कुण्डलमपेक्षिच्च नेरत्तु राजपत्नि
दण्डमॆन्नियेयळिच्चाशु दानवुं चॆय्ताळ् । ६३
कुण्डलीश्वरनाय तक्षकन्तन्नालॊरु
दण्डमुण्टाकातॆ पॊय्कॊळ्ळेणमॆन्नु चॊन्नाळ् । ६४
पण्टु तक्षकनपेक्षिच्चितॆन्नोटुतन्नॆ-
युण्टवनकतारिलाग्रहमितिलेटम् । ६५
तक्षकभयमिल्लॆन्नक्षणमुदङ्कनु
दक्षिणचॆय्वान् परिग्रहिच्चु कौतूहलाल् । ६६
भूपतिपत्नियोटु कुण्डलमतु वाङ्ङि-
त्तापसवरन् पौष्यन्तन्नॆक्कण्टतुनेरं । ६७
भोजनं कळिञ्ञॊळिञ्ञाशु पोकरुतिनि-
प्पूजितनाय भवानॆन्नु सल्क्कारपूर्व्वं । ६८
अन्नदानवुं चॆय्तु भूपतितिलकनु-
मन्नमितशुद्धमॆन्नानप्पोळुदङ्कनु । ६९

उदक ने सोचा—मुझ मे क्या अशुद्धि हो सकती है ? जब वह अशुद्धि को अपने मे ही ढूँढने लगा तब मालूम हुआ कि आचमन न करने के ही कारण वह (रानी को) देख न सका। अनन्तर आचमनादि करके जब वह फिर गया तब अन्त पुर मे भूपति की पत्नी दिखायी दी। और नृपपत्नी ने तापसेन्द्र का सत्कार किया। उनसे जब कुण्डलो की याचना की गयी तब राजपत्नी ने विना दु ख के कुण्डल उतार कर उनको दान कर दिये। उन्होने यह भी कहा कि ऐसे ढंग से चले जाओ कि रास्ते मे नागराज तक्षक के द्वारा कोई कष्ट न हो। पहले तक्षक ने इन (कुण्डलो) की याचना की थी, उसके हृदय मे इनके लिए बडी इच्छा है। ५७-६५ "मै तक्षक से नही डरता हूँ" यह कहकर उदंक ने उस समय कुतूहल के साथ दक्षिणा देने के लिए कुण्डलो को ले लिया। रानी के हाथो से कुण्डल लेकर तापसवर जब पौष्य से मिले तब भूपति ने कहा—आप मेरे पूज्य है, भोजन करके और आराम करके जाइए, जल्दी न जाइए। यह कहकर उन्होने अन्नदान किया। तब मुनि उदक ने कहा—यह अन्न अशुद्ध है। इसलिए तुम

अन्धत्वमुण्टाय्वरिकतिनालॅन्नु मुनि
चिन्तिच्चु पौष्यनप्पोळुदङ्कनोट्टु चॉन्नान् । ७०
अन्धस्सिन्नशुद्धत चॉल्लिय भवान्तनि-
क्कन्धत्वमाय्वन्नतु केवलमिनिक्किल्ल । ७१
एतुमॉरशुद्धमिल्लाट्प्पोयतुमूलं
कोपिच्चु शपिच्चतिनङ्डोट्टु शपिप्पॅन् ञान् । ७२
सन्ततियुण्टाकाय्कॅन्नवनीपति चॉन्ना-
नन्धत्वमतुतन्नॅयायतॅन्नतुवरुम् । ७३
पिन्नॅयोर्त्ततुनेर तन्वगि तलमुटि
नन्नायित्तिरुकातॅ विळम्पियतु मूल ७४
रोमवु कोळिञ्ञितु चोटिलन्नतुमॅल्ला
भूपालनरियाय्कयालकप्पॅट्टुपोयि । ७५
चेतसि विचारमिल्लाय्कयाल् कूटॅश्शपि-
च्चातुरनाय मम शाप तीर्त्तरुळॅन्नान् । ७६
मेदिनीवरनितु चॉन्नतु केट्टु मुनि
वेदवादिकळ्वाक्यमसत्यमाकयिल्ल । ७७
अल्पकालकॉण्टतु तीरुमॅन्नते वरू
पिल्पाट्टु नन्नाय् वरु विप्रन्मारुटॅ शापम् । ७८

अन्धे हो जाओ । पौष्य ने सोचकर उदक से कहा—मैं ही केवल अन्धा नही हूँ, अन्न की अशुद्धि बतलाकर आपने अपना ही अन्धत्व प्रकट किया है; उसमे कोई अशुद्धि नही है । कुछ ठंडा हो गया है, इसलिए आपने क्रुद्ध होकर शाप दे दिया, मै भी आपको बदले मे शाप दूँगा । फिर राजा ने कहा—आपके कभी सन्तान न हो और वही आप का अन्धत्व भी होगा । ६६-७३ फिर सोचने पर प्रतीत हुआ कि दुबली-पतली राजपत्नी ने अपने बालो को बिना सँभाले भोजन को परोसा था, इसलिए बाल अलग होकर अन्न मे गिर गया था । यह सब न जानने के कारण मैंने भूल की और अपने मन मे विचार न करने के कारण मैंने बदले मे शाप दे दिया । अत खिन्न होकर बोले—आप कृपया अपने शाप का अन्त बतलाइये । राजा का यह वचन सुनकर मुनि ने कहा—वेदवादियो का वाक्य असत्य नही हो सकता । इतना ही हो सकता कि अल्पकाल मे ही उसका फल समाप्त हो

ऍन्नॅ नी शपिच्चतु तीर्त्तरुळॅन्नु मुनि
मन्नवन् पौष्यनप्पोळुदङ्कनोटु चॉन्नान् । ७९
पीयूषसम वाक्यमात्मावु वज्रोपमं
पीयूषसममात्मा वाक्कुकळ् वज्रोपम ८०
इङ्ङनॅयुळ्ळु राजाक्कन्मार्क्कु द्विजन्मार्क्कु-
मङ्ङनॅयाकयालिन्नॅन्नुटॅ शाप तीरा । ८१
ऍङ्किलो शापमिनिक्केल्कयिल्लॅन्नु मुनि
शङ्कूटातॅ यात्र परञ्ञु नटकॉण्टु । ८२
अबुधिपोलॅ घोषिच्चिळकि दिगबरा
डबराघोष रण्टु कुण्डल वच्चु भुवि ८३
सभ्रमत्तोटु नीरिलिरङ्ङीतुदङ्कनुम्
सभ्रान्तन् कुण्डलवु कॉण्टोटिप्पेटियातॅ । ८४
पिन्नालॅ मुनीन्द्रनु चॅन्नु पाताळं पुक्कान्
पन्नगकुलवरन् तक्षकनॅन्नतरि- ८५
ञ्ञन्नेर नागङ्ङळॅ स्तुतिच्चानुदङ्कनुम् ।
तापङ्ङळ् पोम्मारॉरु पुरुषन् तन्नॅक्कण्टान् । ८६
तुरगरत्नोपरि वत्सरचक्रत्तॉटु
पॅरिकॅ स्तुतिच्चितु भक्तिपूण्टुदङ्कनुम् । ८७

जाय । ब्राह्मणो का शाप बाद मे भला करने वाला है । इसलिए आप अपने शाप का अन्त बतला दीजिए । तब राजा पौष्य ने उदक से कहा—वाणी अमृत के समान है और आत्मा वज्र के समान । आत्मा अमृत के तुल्य है और वाक् वज्र के समान, क्षत्रियो की और ब्राह्मणो की व्यवस्था इस प्रकार है, इसलिए मेरा शाप आज समाप्त नही हो सकता । ७४-८१
'अगर ऐसा है तो आपका शाप मुझे लगेगा ही नही, इतना कहकर मुनि विदा होकर चले गये । फिर उन्होने देखा कि आकाश समुद्र के समान गरज रहा है और क्षुब्ध हो रहा है । इसलिए कुण्डलो को भूमि पर रखकर सभ्रम के साथ उदक जल मे उतरे । तब सभ्रान्त (सर्प) कुण्डल लेकर निर्भय भागा । मुनीन्द्र ने उसका पीछा किया और वे पाताल मे प्रवेश कर गये । यह जानकर कि वह पन्नगो का राजा तक्षक है उस समय उदक ने नागो की स्तुति की । तब एक दु ख दूर करने योग्य पुरुष दिखाई दिया

पुरुपनतुनेर ऋपियोट्टुरचॅय्तु
परितापङ्ङळॅल्ला पोक्कुवनॅङ्किलिप्पोळ् ८८
अश्वत्तिन् पृष्ठत्तिङ्कलूतुकॅन्नतु केट्टु
विश्वास कैक्कॉण्टतु चॅय्तितु मुनीन्द्रनुम् । ८९
अश्वस्यविनिर्गतमायितु धूम पृप-
दश्वनु परत्तिनानॅङ्ङुमे पाताळत्तिल् । ९०
पवनाशनन्मारुमतिनालिटर्पूण्टु
पवनाशनपति तक्षकनतुनेर । ९१
कुण्डलमुदङ्कनु कॉट्टुत्तान् मटियातॅ
कुण्डलीपण्डमॉरु दण्डमॅन्निये तीर्त्तान् । ९२
चिन्तितमिन्नुतन्नॅ दक्षिणचॅय्येणमॅ-
न्नॅन्ततिन्नॉरु कळिवॅन्नरुळ्चॅय्तीटणम् । ९३
तुरगत्तिन्मेलेट्टिक्कॉळ्कॅन्नालॅत्तुमॅन्नान्
पुरुपनतु केट्टु करयेट्टिनान् मुनि । ९४
अरनाळिककॉण्टु गुरुसन्निधिपुक्कु
गुरुपत्निक्कु चॅय्तु दक्षिण मुनीन्द्रनुम् । ९५
पत्नियु प्रसादिच्चु शिष्यनोट्टुरचॅय्तु
रत्नमायतु पुरुपन्मारिल् वच्चु भवान् । ९६

जो एक अश्वरत्न पर बैठा हुआ था और जिसके हाथ मे वत्सरचक्र था। उदक ने भक्ति के साथ उसकी स्तुति की। उस समय पुरुप ने मुनि से कहा—मैं तुम्हारे सब दुःख दूर करूँगा, पर तुम्हे अश्व के पृष्ठ भाग पर फूँक मारना होगा। यह सुनकर उदक ने विश्वास के साथ ऐसा ही किया। ८२-८९ तब घोडे के मुह से धुआँ निकला और वायु के द्वारा उसके सारे पाताल मे फैलते ही सारा नागलोक दुखित हुआ और नागो के राजा तक्षक ने उस समय बिना विलम्ब के उदक को कुण्डल दे दिये। इस प्रकार बिना कष्ट के उदक ने कुण्डली वर्ग (साँपो के झुण्ड) को समाप्त कर दिया। "सोची हुई दक्षिणा आज ही दी जाय। इसके लिए क्या उपाय है, यह बतलाइये"—उदक ने कहा। पुरुप ने उत्तर दिया—घोडे पर बैठ जाओ, तो आज ही पहुँच जाओगे। यह सुनकर मुनि घोडे पर बैठ गये। आधी घडी मे मुनीन्द्र उदक, गुरु के पास पहुँच

नीयितु चॅय्याय्किल् ञान् शपिप्पान् निरूपिच्चु
घोयालुमिनित्तव नल्लतु वन्नुकूट्टुम् । ९७
आचार्यपत्नितन्नोटाशियु परिग्रहि-
च्चाचार्यपादाबुजमादराल् वणङ्ङिनान् । ९८
वृत्तान्तमॅल्ला केट्टु विस्मय पूण्टु वैदन्-
पॉल्त्तळिरटि कूप्पिच्चोदिच्चानुदङ्कनुम् । ९९
वॅळ्ळक्काळयुमेऱिक्काणायितॉरुत्तनॅ
चॉल्लिनानवनॅन्नोटशिप्पान् वृषमलम् । १००
निन्नुटॅ गुरुवितु भक्षिच्चितॅन्नु चॉन्ना-
नॅन्नतु केट्टु ञानुं भक्षिच्चेनतिन्मलम् । १०१
ऍन्ततिन्फलमॅन्नुमारवनॅन्नुमॅल्ला
निन्तिरुवटियरुळ्चॅय्यणमॅन्नोटिप्पोळ् । १०२
नागलोकत्तु चॅन्ननेरत्तु कण्टू पिन्नॅ
वेगत्तिलारु कुमारन्माराल् भ्रमिप्पिक्कुं १०३
चक्रवु तेजोमयमायॉरु कुतिरयु
तत्कण्ठदेशे पुनरॅत्रयु तेजस्सोटु १०४
दिव्यनायिरिप्पोरु पुरुषश्रेष्ठनेयुं ।
सर्व्ववुमिवटिन्टॅ तत्त्वङ्ङळरुळ्चॅय्क । १०५

गये और उन्होंने गुरुपत्नी को दक्षिणा अर्पण की। गुरुपत्नी प्रसन्न होकर शिष्य से बोली—पुरुषो मे तुम सचमुच रत्न हो। तुम यह काम न करते तो मै शाप देनेवाली थी। अव तुम जा सकते हो, अव तुम्हारा भला ही होगा। उदक ने आचार्यपत्नी से आशीर्वाद पाया और आदर के साथ आचार्य-चरणो की वन्दना की। ९०-९८ सव वृत्तान्त सुनकर गुरु वैद विस्मित हुए और उनके चरणो मे प्रणाम कर उदक ने पूछा—मार्ग मे श्वेत वृषभ पर बैठा हुआ एक पुरुष मुझको दिखाई दिया। उसने मुझसे वृषभ का गोवर खाने के लिए कहा। यह भी कहा कि तुम्हारे गुरु ने भी इसे खाया है। यह सुनकर मैने भी गोवर खा लिया। उसका फल क्या है? और वह पुरुष कौन था? यह सब कृपया गुरुचरण अव मुझे वता दे। जव मै नागलोक गया तव वहाँ मैने छ कुमारो द्वारा घुमाया जाने वाला एक चक्र, एक तेजस्वी घोडा और उसकी पीठ पर बैठा हुआ एक

वेदवेदाङ्गज्ञना वैदनुमतुकेट्टु
मादरमुदङ्कना शिष्यनोटरुळ्चॅय्तान् । १०६
धवळमयमाय वृपभमैरावत
विवुधेश्वरन् मलमशिप्पान् चॉल्लियतु १०७
अमृतमतिन्मलमतु सेविप्पोक्कॅन्नु-
ममरत्ववु वरुमिन्द्रनॅन्नुटॅ सखि १०८
पाताळ पुक्कनेर वाधकळ् वराञ्ञतु
वासवदेवननुग्रहत्तालरिञ्ञालुम् । १०९
घळक्कुमारन्मार् तिरिच्चीराऱस्त्रङ्ङळोटु-
मुग्रमाय्काणायतु वत्सरचक्रमॅटो । ११०
अश्वमायतुमग्नि निन्नॅयिङ्ङाक्कियतु
निश्चयमरिकॅक्काणायतु पर्ज्जन्यनुम् १११
अद्भुतमॅंवयु नी साधिच्चतरिञ्ञालु ।
सत्पुरुपन्मारिल् नी मुन्पनाय् वरिकॅन्नान् । ११२
अक्कालमुदङ्कनु तक्षकन्तन्नॅक्कॉल्वान्
उळक्कान्पिल् निरूपिच्चु कल्पिच्चानुपायवुम् । ११३

अत्यन्त तेजस्वी दिव्य पुरुपश्रेष्ठ देखा। इन सवके तत्त्व कृपया बतला दीजिए। ९९-१०५ यह सुनकर वेद और वेदागो के विद्वान् वैद मुनि ने अपने शिष्य उदक से सादर कहा—जो श्वेत वृषभ (वैल) था वह ऐरावत (इन्द्र का हाथी) था, जिसने गोवर खाने को कहा वह स्वय विवुधेश्वर (इन्द्र) थे। और वृपभ का गोवर तो अमृत ही था जिसे सेवन करने वालो को सदा के लिए अमरत्व प्राप्त होता है। इन्द्र मेरे सखा है। पाताल मे जो तुम्हे कोई वाधा नही हुई सो जान लो कि वासव (इन्द्र) के अनुग्रह का परिणाम था। जो छ कुमारो द्वारा छ अस्त्रो के साथ घुमाया जाता हुआ दिखाई दिया वह वत्सर-चक्र था। जो घोडा तुम्हे यहाॅ लाया वह अग्नि था। जो निकट मे दिखाई दिया वह नि सन्देह पर्जन्य (इन्द्र) था। तुम जान लो कि तुमने अद्भुत काम किया है और सत्पुरुषो मे तुम अग्रणी हो जाओ। १०६-११२ उन दिनो उदक ने तक्षक को मारने के लिए अपने मन मे निश्चय किया और उपाय भी ठान लिया। जव राजा जनमेजय कुरुक्षेत्र मे मुनियों के साथ यज्ञ कर रहे थे, तव

जनमेजय नृपन् कुरुक्षेत्रत्तिङ्कन्नु
मुनिमारोट्टुमॉरु याग चॅय्युन्न काल ११४
पुक्कितु कुरुक्षेत्रमुदङ्कन् नृपतियु
सल्करिच्चघ्यादिकळ् नल्कियोरनन्तर । ११५
उत्तममॅत्रयु नी चॅय्युन्न यागमिति-
लुत्तममायिट्टुण्टु ञानॉन्नु चॉल्लीटुन्नु । ११६
वल्लातॅ जनकनॅक्कॉन्न तक्षकन्तन्नॅ
कॉल्लुवानुत्साह चॅय्तीटुकिलितिन्मीतॅ । ११७
नल्लतिल्लेतुमितु चॉल्लुवनरिञ्ञालुम् । ११८
तापसबालकन्टॆ शाप प्रामाण्यमाक्कि
भूपतिप्रवरनॅ कॉल्लुवान् काश्यपनॅ ११९
तट्टुत्तु परीक्षिच्चु पट्टुत्वमोट्टु पेराल्
कटिच्चु दहिप्पिच्चु तळप्पिच्चितु मुनि । १२०
कॉट्टुत्तु रत्नादिकळ् तक्षकन् काश्यपनु
नटिच्चु कटिच्चतिनॅन्तु कारणमोर्त्ताल् । १२१
ऑट्टुक्कीटेणमवन्तन्नॆयॅन्नुदङ्कनु-
मट्टुप्पमोट्टु परञ्ञुरप्पिच्चतुनेरं १२२

उदक कुरुक्षेत्र गये। नृपति ने उनके सत्कार में अर्घ्यादि भेट किया। तदनन्तर (उदक ने कहा—) जो याग कर रहे हो वह उत्तम है। इससे भी वढकर एक प्रयोग है जो मै तुम्हे बताऊँगा। अगर तुम तक्षक का वध करने के लिए, जिसने तुम्हारे पिता को मारा है, उत्साही हो जाओगे तो इससे वढकर कोई अच्छी बात नही होगी। ११३-११७ इतना मै कहता हूँ। तुम जान लो। तापस वालक के शाप को प्रामाण्य मानकर भूपति प्रवर (परीक्षित्) को मारने के [उद्देश्य की पूर्त्ति के] लिए तक्षक ने मुनि काश्यप को रोका[1], और अपनी परीक्षा देने के लिए एक बडे वटवृक्ष को काटकर जला दिया। पर मुनि ने उसको फिर जीवित कर दिया। तव (तक्षक ने) काश्यप को रत्न आदि प्रदान किया। विचार किया जाय तो इस प्रकार बुद्धिपूर्वक उसको (परीक्षित को) का काटने कारण ही क्या है? उसको समाप्त ही करना चाहिए। जब उदक ने इस प्रकार निकट

१ तक्षक के पिता काश्यप, राजा परीक्षित् की रक्षा के लिए जा रहे थे।

मन्त्रिकळोटुकूटॅ मन्त्रिच्चु नृपतियु
चिन्तिच्चु मुनिमारॅ वरुत्तियुरचॅय्तु । १२३
तक्षकन्तन्नॅक्कॉल्वान्तक्कॉरु याग चॅय्वान्
तत्क्षण तुटङ्ङिनार् सर्प्पसत्रवुमवर् । १२४
कारणमितु सर्प्पसत्रत्तिनॅन्नु सूत-
नारणरॉटु परञ्ञीटिनोरनन्तर । १२५
इक्कथाशेष चॉल्वान् पिन्नॅयामॅन्ने वेण्टु ।
मुख्यमा भृगुवश चॉल्लणमितिन्मुन्पे १२६
नम्मुटॅ गुरुभूतन्मारवरवरुटॅ
जन्मादिगुणङ्ङळॅच्चॉल्लण मटियातॅ । १२७

भृगुकुलविस्तारम्

मूतनुमतुनेर चॉल्लिनानवरोटु
वेधाविन्मकन् भृगु भृगुजन् च्यवननु । १
च्यवननुटॅ मकन् प्रमति मुनिवरन-
वनु घृताचियिलुण्टायि रुरुनामा २
मटुमुण्टॉरु पुत्रन् शुनकनॅन्नु नामं
कुटमिल्लात मुनि शौनकनवन्मकन् । ३

से समझाया तब नृपति (जनमेजय) ने अपने मन्त्रियो से सलाह की और सोचकर मुनियो को बुलाया, ११८-१२३ और उनसे तक्षक का नाश करने योग्य याग के अनुष्ठान के लिए कहा। तत्काल ही उन्होने एक सर्पसत्र प्रारम्भ किया। सूतजी (सजय) ने ब्राह्मणो से कहा—"सर्पसत्र कराने का यही कारण है"। इस कथा का शेष बाद मे ही कहा जा सकता है। इससे पहले भृगुवश की उत्पत्ति बतलाना चाहिए। अपने पूर्वज गुरुओ के जन्म आदि धर्मो को बिना सकोच के बतलाना चाहिए। १२४-१२७

भृगुकुल का विस्तार

तब सूतजी ने उनसे कहा—वेधा (ब्रह्मा) का पुत्र है भृगु, भृगु का पुत्र च्यवन, च्यवन का पुत्र है प्रमति जो मुनियो मे श्रेष्ठ है। उसके द्वारा घृताची [के गर्भ] मे रुरु नामक पुत्र हुआ। एक और पुत्र का नाम है

इत्थं चॉन्नतुनेरं तापसनरुळ्चॅय्तु
विस्तराल् चॉल्लीटण च्यवनोल्भवमॅल्लाम् । ४

च्यवनोल्भववुं वह्निशापवुम् ।

ऍङ्किलो पुलोमाख्यभृगुपत्नियु गर्भ
भगियिल् धरिच्चिरिक्कुन्नॉरु कालत्तिङ्कल् १
चॅन्नितु पुलोमाख्यनाय राक्षसनप्पोळ्
नन्नाकॅन्नतिथिपूजकळु चॅय्ताळवळ् । २
भृगुपत्नियॅक्कण्टु राक्षसप्रवरनु
मकरध्वजपरवशनायतुनेर ३
कुण्डत्तिलॅरियुन्न पावकन्तन्नॅक्कण्टु
वन्दिच्चु चोदिच्चितु राक्षसप्रवरनुम् । ४
अखिलसुरवृन्दमुखमाकिय पोट्टि !
निखिलशुभाशुभकर्म्मसाक्षियु नीये । ५
तन्वगियाकुमिवळ् भृगुविन् पत्नियॅङ्कि-
लॅन्नॉटु परमार्त्थमरुळिच्चॅय्तीटणम् । ६

शुनक और उसके निर्दोष सुत का नाम है शौनक । जब इस प्रकार कहा गया तब तापस (उदक) ने कहा—च्यवनोद्भव आदि कथा विस्तार से कह दीजिए । १-४

च्यवन-उत्पत्ति और अग्नि-शाप

अतीत मे जब भृगुपत्नी पुलोमा चारु रूप से गर्भ धारण करती थी तब पुलोम नामक राक्षस वहाँ गया और पुलोमा ने अच्छी तरह से [उसकी] अतिथिपूजा की। भृगुपत्नी को देखकर राक्षसप्रवर मकरध्वज (मदन) के वश मे आ गया और उस समय कुण्ड मे जो अग्नि जल रही थी उसकी वन्दना करके राक्षस ने उससे पूँछा—समस्तदेवगणो का मुखभूत हे नाथ ! तुम ही सभी शुभ और अशुभ कर्मो के साक्षी हो। अगर यह तन्वंगी[1] भृगु की पत्नी है, तो तुम मुझसे कृपया परमार्थ बतला दो । १-६ तब शोभावाले भगवान अग्नि ने निवेदन किया कि भृगु की

[1] दुबले-पतले शरीर वाली ।

तापसि भृगुपत्नियायतुमिवळॅन्तु
शोभतेटीट्टुमग्निभगवानरुळ्चॅय्तु । ७
ञानिवळ्तन्नॅ वेळ्प्पान् भाविच्चुवाळुकालं
आयतिन्मुन्पे भृगु वेट्टुकॉण्टतुमूल । ८
कॉण्टुपोकुन्नेनॅन्नु मूकरवेप कैक्को-
ण्टन्नवनवळॅयुमॅट्टुत्तु नटकॉण्टु । ९
गर्भपात्रस्थनायोरर्भकनतुनेर-
मुल्भविच्चवन्तन्नॅ नोक्किनान् कोपत्तोटॅ । १०
नेत्राग्नितन्निल् दहिच्चीटिनान् निशाचरन् ।
मार्त्तण्डसमनाय पुत्रनॅयॅट्टुत्तवळ् ११
त्रस्तयाय् वीर्त्तुवीर्त्तु करञ्ञुकरञ्ञुळ्ळिल्
चीर्त्तवेदनयोटुमाश्रमत्तिङ्कल् चॅन्नाळ् । १२
अश्रुक्कळ् वीणु वसुधरयॅन्नॉरु नदि
विश्रुतमाय तीर्थमुण्टायितातु कालम् । १३
वन्नॉरु भृगुमुनि वृत्तान्तमॅल्ला केट्टु
तन्नुटॅ पत्नियोटु पिन्नॅयु चोद्य चॅय्तान् । १४
निन्नॅयिन्नवळॅन्नु चॉन्नतारवनोटु
निन्नॅ राक्षसनऱिवानवकाशमिल्ल । १५

पत्नी यही तापसी है। (राक्षस ने कहा)—मैं उससे विवाह करने को सोच ही रहा था पर उससे पहले ही भृगु ने उससे विवाह कर लिया। इसलिए मैं उसे ले जा रहा हूँ।—यह कहकर सूकर का वेष धारण करके वह उसे लेकर चल पडा। उस समय गर्भाशय मे जो बालक था वह पैदा हुआ और क्रोध के साथ उसने राक्षस को देखा। वह बालक के नेत्राग्नि मे जल कर भस्म हो गया। त्रस्त होकर बार-बार उष्ण निश्वास लेती हुई और रोती हुई माता अपने मार्तण्ड(सूर्य) के समान पुत्र को लेकर बडे दु:ख के साथ आश्रम पहुँची। ७-१२ तब उसकी आँसुओ की एक वसुधरा नामक नदी बन गयी जो कालान्तर मे एक विख्यात तीर्थ हो गया। उस समय भृगुमुनि आगये। सब वृत्तान्त सुनकर उन्होने अपनी पत्नी से पूँछा—उससे किसने कहा कि तुम कौन हो? राक्षस को तुम्हे जानने का कोइ अधिकार ही नही है। तुम्हारे तत्त्व को राक्षस से जिसने

निन्नुटँ परमार्त्थ राक्षसनोटु नेरे
चॉन्नवन्तन्नॅश्शपिच्चीटुवन् नेरे चॉल नी १६
तन्नुटँ भर्त्तृवित्थ चॉन्नतु केट्टु चॉन्नाळ्
वह्नि राक्षसनोटु पऱञ्ञु कॉटुत्ततुम् । १७
क्रुद्धनायग्नितन्नॅश्शपिच्चु भृगुमुनि
शुद्धियुमशुद्धियुं भेदमॅन्नियॆ भवान् १८
सर्व्ववु भक्षिच्चुपोकॅन्नतु केट्टनेर
हव्यवाहनन् तानु भृगुविनोटु चॉन्नान् । १९
अन्यायमत्रे भवानिन्नॅन्नॅश्शपिच्चतु
निर्णय नरकमुण्टसत्य चॉल्लीटुकिल् । २०
सत्यत्तॆयुपेक्षचॆय्तसत्य चॉल्लुन्नवन्-
पुत्रसन्ततिकळ्क्कुमिल्लॉरुनाळु गति । २१
तानऱिञ्ञातु पऱयायॅ्किलुं दोपमुण्टु
ञानिवयऱिञ्ञत्रे पऱञ्ञु महामुने ! २२
ऎन्निवयऱियाते कोपेन शपिच्चतु
नन्नल्ल निन्नॅक्कूटिश्शपिक्कामिनिक्कॅटो ! २३
विप्रन्मारोटु विरोध तुटङ्ङरुतॅन्नु
कल्पिच्चु शमिक्कुन्नेनॅन्नु नीयऱियेणम् । २४

सीधे कह दिया उसको मैं शाप दूगा। अत. जल्दी वतलाओ।—पति की यह वात सुनकर उसने कहा—अग्नि ने ही राक्षस को वतला दिया। तव क्रुद्ध होकर भृगुमुनि ने अग्नि को शाप दिया कि शुद्ध और अशुद्ध का भेद न करके तुम सभी वस्तुओं को खाते जाओ। यह सुनकर हव्यवाहन (अग्नि) ने भृगु से कहा—यह अन्याय है कि तुमने आज मुझको शाप दिया है। असत्य वोलने का फल अवश्य नरक ही होगा। सत्य की उपेक्षा करके जो असत्य वोले उसके पुत्र-सन्तान आदिको की कभी अच्छी गति न होगी। अपनी जानी हुई वात को न कहने मे भी दोप है। यह सब सोचकर ही मैने वतला दिया मुनि जी! । १८-२२
यह सव न जानकर तुमने जो शाप दिया सो ठीक नही है। मै भी तुम्हे शाप दे सकता हूँ। परन्तु जान लो कि यह सोचकर कि ब्राह्मणों से विरोध करना उचित नही होगा, मैं शान्त हो रहा हूँ। पितृ और

ज्ञानत्ते पितृदेवादिकळॅ सङ्कल्पिच्चु
मानवन्मार् चॅय्तीटु कर्म्मङ्ङळ्क्काधारवु । २५
ज्ञानत्ते देवन्मार्क्कु मुखमायीटुन्नतु
ज्ञानत्ते वेदोक्तमा कर्म्मङ्ङळ्क्काधारवु । २६
ज्ञानत्ते सर्व्वलोकव्याप्तनायीटुन्नतुं
ज्ञानिकळुळ्ळिलुळ्ळोरज्ञान दहिप्पतु । २७
ज्ञानत्ते सर्वसाक्षिभूतनायीटुन्नतु
ज्ञानत्ते जन्तुक्कळॅ सृष्टिक्कुन्नतु नित्य २८
ज्ञानत्ते जन्तुक्कळॅ वर्द्धिप्पिच्चीटुन्नतु
ज्ञानत्ते जन्तुक्कळॅ रक्षिक्कुन्नतु नित्य २९
ज्ञानत्ते जन्तुक्कळॅ भक्षिक्कुन्नतुमॅटो ।
ज्ञानत्ते सर्वौषधरसमुण्टाक्कुन्नतु- ३०
मक्षरकर्म्मादिकळ्क्काद्ध्यक्ष्यमिनिक्कत्ते
मुख्यदेवतापूजय्कॉक्क मुन्पॅनिक्कत्ते ३१
अज्ञानमुण्टाकरुतॅनिक्कु निन्नॅप्पोलॅ ।
विज्ञानस्वरूपन् ज्ञानॅन्नतोर्त्तङ्ङटङ्ङुन्नेन् । ३२
नल्लतु शममत्ते नल्लवर्क्कॅल्लावर्क्कुम् ।
कल्याणमितिल्परमिल्लॅन्नु वह्निदेवन् ३३

देवो का सकल्प करके मनुष्यो के किए कर्मो का मै ही आधार हूँ । देवो का मुख बननेवाला मै ही हूँ, वेद के प्रतिपादित कर्मो का मैं ही आधार हूँ, सभी लोगो मे व्याप्त होनेवाला मैं ही हूँ, ज्ञानियो के अन्दर का अज्ञान जला देनेवाला भी मैं ही हूँ। सभी का साक्षी बननेवाला मैं ही हूँ, नित्य जन्तुओं की सृष्टि करनेवाला मै ही हूँ, जन्तुओ को बढानेवाला मैं हूँ, जन्तुओं की रक्षा करनेवाला मैं हूँ और जन्तुओ का भक्षण करनेवाला भी मैं ही हूँ। सभी औषधो का रस बनानेवाला मै ही हूँ, अक्षर कर्मो का आध्यक्ष्य[1] भी मैं ही सँभालता हूँ, मुख्य देवता की पूजा के पहले मेरी ही पूजा होती है। [इसलिए] तुम्हारे जैसा मै भी अज्ञान प्रकट करूँ यह उचित नही। मैं विज्ञानस्वरूप हूँ। क्योकि सज्जनो के लिए शम ही अच्छा है, इससे बढकर कल्याण करनेवाला और कुछ नही है ।—इतना कहकर वह्निदेव[2] तिरोहित[3] हो गये। यह देखकर

१ वेद मे विहित नाशरहित कर्मो की अध्यक्षता　२ अग्निदेव　३ अन्तर्द्धान ।

शान्तनाय् मऱ्ऱ्नातु कण्टॉरु मऱ्योरु ।
शान्तचित्तन्माराय मामुनिजनङ्ङळु ३४
आवर्तन्तिनियॅन्नु तन्नुळ्ळिल् निरूपिच्चु
देवकळोटु चॉन्नारुण्टाय विशेषङ्ङळ् । ३५
अग्नितन्नभावत्ताल् मऱ्ऱ्नु कर्म्मङ्ङळु
मग्नमायितु लोकमापदांवुधितन्निल् । ३६
सृष्टिकर्त्तावायीटु व्रह्मनोटिवयॅल्ला-
मॉट्टु वैकातॅ चॅन्नङ्ङुणर्त्तिक्कयु वेण । ३७
कष्टमॅन्तितिनॉरु कारणमऱिञ्ञिल्ल
नष्टमायिटुमिप्पोळल्लाय्किल् प्रपञ्चवु । ३८
पॅट्टॅन्नु देवादिकळतु केट्टनन्तर
क्लिष्टमानसन्माराय् सत्यलोकवु पुक्कार् ।
शिष्टन्माराकु मुनिमारुं निर्ज्जरन्मारु ३९
स्पष्टवर्ण्णोद्यत्स्तुति नमस्कारादि परि-
तुष्टनायीटुं जगत्स्रष्टाविनोटु चॉन्नार् । ४०
उण्टाय विशेष केट्टग्निर्यं विधातावु
कॉण्टाटि विळिच्चरुळिच्चॅय्तानतुनेर । ४१
ऑन्निलु भवज्ज्वाल तट्टियालशुद्धियि-
ल्लॉन्नुकॉण्टुमे भवानशुद्धमुण्टाय्वरा । ४२

व्राह्मण और शान्तात्मा महामुनि सोचने लगे अव क्या होगा ? उसके वाद वे सव देवो के पास गये और उनसे सारा वृत्तान्त वतला दिया। अग्नि के अभाव के कारण सारा कर्मकाण्ड समाप्त हो गया और जगत् विपत्तिसागर मे डूब गया। ३०-३६ सृष्टि के कर्त्ता जो व्रह्मा है उनसे जाकर विना विलम्ब के इन सव वातो को कहना चाहिए। नही तो यह सारा प्रपञ्च नष्ट हो जायगा। पता ही नही चल रहा है कि इसका क्या कारण है। यह वात सुनते ही देव सव दुखीं हो गये और तुरन्त सत्यलोक चले गये। तव शिष्ट मुनिजन और देवगण की स्पप्टवर्णवद्ध स्तुतियो और नमस्कारो से परितुष्ट जगत्स्रष्टा (व्रह्मा) से सभी वृत्तान्त कहे गये। इस वार्ता को सुनकर विधाता ने अग्नि को बुलाकर सत्कार किया और कहा। जिसमे भी आपकी ज्वाला का स्पर्श हो जाय वह

भास्कररश्मिकळ् चॅन्नॅन्तॅल्ला तॉट्टुमॅन्ना-
लोक्कुन्पोळ् तॉट्ट वस्तु शुद्धमाय् वरुमल्ले । ४३
अज्ञानिकळेप्पोलॅ खेदिप्पानॅन्तु भवान्
मुज्ञानिजनङ्ङळोटॉन्नु पटुकयिल्ल । ४४
सर्व्ववु भक्षिच्चालुमिल्लशुद्धतयॅटो
हव्यवाहननाकु निनक्कॅन्नरिकॅटो । ४५
पावकन् दु ख तीर्न्नु देवकळोटु कूटि-
प्पावनन्मारा मुनिमारुमाय् वसिच्चितु । ४६
लोकवु तॅळिञ्ञितु तापसवरन्मारॅ !
शोकनाशनत्तिन्नु चॉल्लीटा कथयिन्नुम् । ४७

रुरुमुनियुटॅ अर्द्धायुर्द्दानवु विवाहवुम् ।

च्यवननॅन्नु गर्भच्यवनत्वेन नाम-
मवनु भविच्चितु तत्सुतन् प्रमतिक्कु १
भुवनमनोहरियाकिय घृताचियिल्
तपसानिधियाय रुरुनामावुण्टायान् । २

अशुद्ध नही हो सकती । फिर आपकी तो किसी भी प्रकार अशुद्धि सम्भव नही । ३७-४२ सूर्य के किरण जिस पदार्थ का भी स्पर्श करे वह पदार्थ, विचार किया जाय, तो शुद्ध ही हो जाता है । इसलिए आप अज्ञानियो की तरह क्यो खेद कर रहे है ? जो ज्ञानवान लोग हैं उनका कुछ नही विगडेगा । जिस वस्तु का भी आप भक्षण करले, आप हव्यवाहन को कोई अशुद्धि नही होगी, यह जान लीजिए । भगवान् पावक (अग्नि) का दु ख समाप्त हुआ और देवो और पावन मुनियो के साथ सुख से रहने लगे । अव शोक के नाश के लिए आज और कथा सुनाऊँगा । ४३-४७

मुनि रुरु का अर्द्धायुर्दान और विवाह

गर्भ का च्यवन (पात) होने के कारण वालक का नाम च्यवन पडा । उसके पुत्र प्रमति द्वारा सारे भुवन की मनोहारिणी घृताची से रुरु नामक तपोनिधि पुत्र का जन्म हुआ । उन दिनो विश्वावसु के वीज के द्वारा सुलोचना मेनका ने तपोधन ऋषि के आश्रम मे एक कन्यारत्न

अक्काल विश्वावसुतन्नुटॅ बीजकॉण्टु
मैक्कण्णि मेनकयु पॅटितु कन्यारत्न- ३
मॅत्रयु तपस्सुळ्ळोरृष्याश्रमत्तिङ्कल्
पृथ्वियिलिट्टुंकळञ्ञवळु पोयाळल्लो । ४
पैतलॅ कृपावशनाय्कण्टु मुनिवरन्
पैदाहादिकळ् तीर्त्तु वळर्त्तुतुटङ्ङिनान् । ५
प्रमदाजनङ्ङळिल् वरयामवळ्क्कन्नु
प्रमदाल् प्रमद्वरयॅन्नॉरु पेरुमिट्टान् । ६
अक्कुमारियॅक्कण्टु मन्मथातुरनायान्
चॉल्कॉण्ट रुरुमुनि तातनतरिञ्ञप्पोळ् ७
अवळॅ वळर्त्तॉरु मुनियॅक्कण्टु परु-
ञ्ञवर्कळिरुवर्क्कुं कल्पिच्चु मुहूर्तवुम् । ८
उत्रमा नक्षत्रमञ्चारान्नाळॅन्नुतन्नॅ
तत्रैव कौतूहलत्तोटॉरुक्किनारॉक्कॅ । ९
कन्यकतानु मरिच्चीटिनाळ् पान्पुकटि-
च्चॅन्नॅ कष्टमेयॅन्नु दुःखिच्चारॅल्लावरुम् । १०
हाहेयमहो ! पापं आॅ हेयं हतयाया-
ळा हन्त हतोहमित्याकुलनायि रुरु । ११

को जन्म दिया। फिर उसे पृथिवी मे छोडकर वह चली गयी। बच्चे को देखकर मुनिवर दया के वश मे आ गये, और उसकी भूख और प्यास शान्त करके उसे पालने लगे। वह प्रमदाओ (महिलाओ) मे श्रेष्ठ थी। इसलिए मुनि ने प्रमोद से उसका नाम प्रमद्वरा रखा। १-६ उस कुमारी को देख कर विख्यात मुनिवर रुरु, मन्मथ (मदन) के वश मे आगये। यह बात जब उनके पिता को ज्ञात हुई तब वे कन्या के पालक मुनिवर से मिले और आपस मे सलाह करके उन्होने दोनो के विवाह का लग्न निश्चित किया। जो पाचवे या छठे दिन उत्तर नक्षत्र मे पडता था और उसी क्षण बड़े कौतूहल के साथ सब तैयार किया गया। पर अन्त मे सॉप के काटने से कन्या मर गयी और सब लोग दुःख मे डूब गये। ७-१० रुरु तो बहुत ही व्याकुल हुआ और चिल्लाने लगा—हा! यह हेय है, अहो पाप, हा हेय! वह मर गयी! मै मर गया! कन्या के शव को देखकर

कन्यकाशव कण्टु शोकमोहादि पूण्टु
वन्न वेदनयोटुमोटिप्पोय् वन पुक्कान् । १२
ञान् चॅय्त तपोवल कोण्टिवळ् जीविक्कॅन्तु
वाञ्छपूण्टरुळ्चॅय्तान् प्रमतितनयनु । १३
वन्नॉरु देवदूतनन्नेरमुरचॅय्ता-
नॉन्नरियेणमायुस्सटवळ् जीविप्पील । १४
निन्नुटॅ शोकं कण्टिट्टॉन्नु चोदिच्चीटुन्नु-
ण्टुन्नियालुपायमिल्लॅन्नतो वरायल्लो । १५
ऍङ्किल् निन्नर्द्धायुस्सु कॉटुत्तालुण्टामिवळ्
सङ्कट भवानतिनिल्लॅङ्किलतु चॅय्क । १६
ऍङ्किलिन्नतु चॅय्यामॅन्नितु रुरुवप्पोळ्
किङ्करन् धर्मराजनोटतुमरियिच्चान् १७
धर्मराजनुमतिननुज नल्कीटिनान्
निर्म्मलाङ्गियुमुणर्न्नॅळुन्नेटतुनेरम् । १८
कल्पिच्च मुहूर्त्तं कॉण्टवनु वेट्टुकॉण्टान्
अद्भुताङ्गियुमायि सुखिच्चु मरुवुन्नाळ् । १९

शोक और मोह के वश मे आकर वह दुःख के साथ चला गया और वन मे प्रविष्ट हो गया। प्रमति के तनय (रुरु) ने तीव्र इच्छा के साथ कहा—मेरे तपोवल से यह फिर जीवित हो जाय! । उस समय यमराज का एक दूत आया और उसने कहा—एक वात जान लो, जिसकी आयु समाप्त है वह फिर जीवित नही हो सकती। तुम्हारा शोक देखकर एक वात मुझे तुमसे पूछना है—कोशिश करने पर उपाय तो निकल आता ही है, यह वात प्रसिद्ध है। इस स्थिति मे अगर तुम अपनी आयु का आधा भाग उसको दे दो तो वह फिर जीवित हो जावेगी। तुम्हे अगर उसमे दुःख न हो तो ऐसा करो। तव रुरु ने कहा—मैं ऐसा करने के लिए तैयार हूँ। धर्मराज के किंकर ने यह वात अपने स्वामी को सुनाई। धर्मराज ने अपनी अनुज्ञा दी और उस समय निर्मलांगी उठ खडी हुई। निश्चित लग्न पर रुरु ने विवाह भी कर लिया। और जव वह अपनी मनोहर रूपवाली (पत्नी) के साथ सुख से रह रहे थे, तव ११-१९

सहस्त्रपादन्टे शापमोक्षम्

पण्टु तन् पत्नि तन्नॆक्कटिच्चुकॊन्नतुळ्ळि-
लुण्टाककॊण्टु वैरमवनु मुळुक्कयाल् १
दण्डुमाय् नटन्नवन् कुण्डलिकळॆयॊक्कॆ
दण्डहस्तन्टॆ पुरत्तिङ्कलाक्कीटुमल्लो । २
पण्डितनाय रुरु दण्डमोङ्ङन्पोळॊरु
डुण्डुभमॊरुदिनमवनोटुरचॆय्तान् ३
ऍन्तु ञान् पिळच्चतु निन्नोटॆन्नुर चॆय्क
जन्तुक्कळॆल्लामॊक्कुमॊन्नु कॊल्लरुतल्लो । ४
चॊल्लिनानतु केट्टु नल्ल मामुनि रुरु
कॊल्लुन्न जन्तुक्कळॆ कॊल्लुकॆन्नतेवरू । ५
ऍन्नुटॆ भार्यतन्नॆक्कटिच्चु कॊन्नानॊरु
डुडुभमतुमूल निङ्ङळॆक्कॊल्लुन्नु ञान् । ६
डुडुभं चॊन्नानप्पोळदण्ड्यन्मारॆ वृथा
दण्डिप्पिच्चीटुन्नोरॆ दण्डहस्तनु पिन्नॆ ७
दण्डिप्पिच्चीटु घोरनरकङ्ङळिलाक्कि-
प्पण्डितनाय भवानॆङ्किलुमितुकेळ्क्क । ८

सहस्त्रपाद का शापमोक्ष

अतीत मे [सर्प द्वारा] अपनी पत्नी के काटे जाने के कारण रुरु के हृदय मे वैर बहुत बढा और वह हाथ मे लाठी लिये घूमते थे और रास्ते मे जितने कुण्डली (साँप) मिलते सबको यमसदन भेजा करते थे। जब रुरु ने जो पण्डित था एक डुडुभ (साप) के मारने के लिए लाठी उठायी तब उसने निवेदन किया—यह बतलाइये, मैने क्या अपराध किया ? सभी जन्तु समान है, किसी को भी मारना नही चाहिए। यह सुनकर श्रेष्ठ महामुनि रुरु ने कहा—जो जन्तु औरो को मार डालते है वे भी मारे ही जायँगे, और क्या हो सकता है। मेरी पत्नी को एक डुडुभ ने मार डाला, इसलिए मै तुम लोगो को मार रहा हूँ। १-६ तब डुडुभ ने निवेदन किया—जो अदण्ड्यो को दण्ड देते है उनको यमराज घोर नरको मे डालकर दण्ड देगे। आप

मटॉरु परिपकळ् कटिच्चुकॉल्लुन्नतु
मुटु ञ्जानवरुटॅ वेपमॅन्नतेयुळ्ळु । ९
अतु केट्टॉरु रुरु दिव्यनॅन्नरिञ्ञप्पोळ्
चतियॅन्नियॆ नम्मोटारॅन्नु चॉल्लीटॅन्नान् । १०
सहस्रपादनह ञ्जानॉरु मुनिशापाल्
वहिच्चीटुन्नॆनिह डुडुभवेपादिकळ् । ११
ऍन्तु नी पिळच्चतु शपिच्चतेतु मुनि ?
वन्धमॅन्तिवटिनॅन्नोटु परयणम् । १२
केळ्क्क नी खगमना मामुनि मम सखि
भोष्ककल्ल होमं चॅय्युन्नेर ञ्जान् क्रीडार्त्थमाय् १३
तृणकॉण्टुण्टाक्किय सर्प्पमङ्डॅटुत्तिट्टे-
ननसु तार्ण्णमॅन्नतवनुमरियातॅ । १४
पेटिच्चु मोहिच्चुटन् मोहं तीर्न्नुरचॅय्तान् ।
मूढना भवानुमीवेपमाय् वरिकेन्ना- १५
नय्यो ञ्जानेतुमोर्त्तल्लॅन्नुटॅ कळियत्रे
नीयिनिश्शापमोक्ष नल्कीटॅन्नपेक्षिच्चान् । १६

पण्डित है, फिर भी मेरी वात सुन लीजिए। औरो को काटकर मार डालने वाले [सर्प] और जाति के है, उनका जैसा मेरा केवल वेप है। यह सुनकर जब रुरु ने समझा कि यह कोई दिव्य पुरुप है तव कहा—विना कपट के मुझे वतला दीजिये कि आप कौन है। "मै सहस्रपाद हू। एक मुनि के शाप के कारण मैं इस सर्पवेष का धारण कर रहा हू।" (तव रुरु ने कहा)—तुमने क्या अपराध किया और किस मुनि ने शाप दिया ? इसका क्या कारण है। यह सव मुझसे वतलाओ। ७-१२ (सहस्रपाद ने कहा—) सुनँ लीजिए, मेरे मित्र मुनि खगम जव हवन कर रहे थे उस समय—यह विनोद नही है—मैंने खेल मे एक घास का साप वनाकर वहाँ डाल दिया। यह न जानकर कि वह घास का है और सजीव नही है, वे डर गये और वेहोश हो गये। जव फिर होश मे आये तव उन्होने कहा—आप मूर्ख है। आप भी इस वेप के हो जायँ!। (तव उन्होने कहा—) "हन्त! मैने कुछ भी नही सोचा था। यह केवल खेल था। आप इस शाप का मोक्ष भी वतला दीजिए।" (तव खगम ने कहा—)

भार्ग्गवसुतनाय रुरुमामुनि कण्टाल्
भाग्यवानाय निनक्कॅन्नुटॅ शापतीरुं । १७
ऍन्नरुळ् चॅय्तु मम सखिया खगमनु-
मिन्निप्पोळक्काणाय्वन्नु निन्तिरुवटियेयु । १८
शापवु तीर्न्नु मम तापवुमकन्नितु
पापवुमुण्टाय्वरु हिसचॅय्यरुतल्लो । १९
तापसन्मार्क्कु विशेषिच्चुमतरुतल्लो
तापसश्रेष्ठा ! भवानोटु ञान् चोल्लेणमो । २०
कोपमाकुन्नतल्लो कॉटिय नरकङ्ङळ्
भूपतिकळ्क्कु दुष्टवधमे चॅय्तीटावू । २१
सल्क्षितिपतिवरनां परीक्षित्तुतन्नॅ
तक्षकन् कटिच्चु कॉन्नीटिनानतुमूल- २२
मक्षिकर्ण्णन्मार्कुलं नष्टमाक्कीटुवानाय्
मुख्यनायीटु जनमेजयनवन्मक- २३
नारंभिच्चितु सर्प्पयागमॅन्नरिञ्ञालु ।
आरुं भाविच्चाल् मुटङ्ङातॉरु सर्प्पयाग- २४
मस्तिकन् परञ्ञातु माटियॅन्नरिञ्ञालु-
मॅत्रयु दोषमुण्टु हिसय्क्कॅन्नतु नूनं । २५

जब भार्गव (प्रमति) का पुत्र महामुनि रुरु तुम्हे देखेंगे, तब तुम्हार भाग्य खुल जायगा और मेरा शाप समाप्त हो जायगा । मेरे मित्र खग ने इस प्रकार कहा और आप का दर्शन हो गया । शाप की समाप्ति ह गयी और मेरा दुख भी दूर हो गया । आप हिसा न करे क्योकि आ को पातक होगा । विशेषत तापसो के लिये यह बिलकुल अनुचित है आप तापसो मे श्रेष्ठ हैं, आप से मैं क्या कहूँ ? । १३-२० कोप घो नरको मे परिणत हो जाता है । भूपतियो के लिए भी केवल दुष्टव ही विहित है । तक्षक ने अच्छे भूपति परीक्षित को काटकर मार डाल इसलिए सर्पो के कुलो को नष्ट करने के लिए उनके मुख्यपुत्र जनमेज ने, जान लीजिए सर्प-सत्र का आरम्भ किया है । यह भी जान लीजि कि जिस सर्पयाग को और कोई रोक न सकता था उसको अस्तिक समझाकर रोक दिया । इसमे कोई सदेह नही है हिसा से बडा दोष पै

सहस्रपादनोटु चोदिच्चु रुरुवप्पोळ्
महत्वमेरु जनमेजयनतुचॅय्वान् २६
ऍन्तु कारणमॅन्नुमस्तिकनॉळिच्चतिन्
वन्धमॅन्तॅन्नुमरुळ्चॅय्यणमॅन्ननेर । २७
अतु केळ्प्पिप्पान् पात्रमल्ल ञानॅन्नु चॉल्लि
मतिमान् दशशतपदनु मरञ्ञितु । २८
रुरु मामुनिवरनतु केळाय्कमूल-
मुरुतापवुं पूण्टु नटन्नु पलेटत्तु । २९
पिन्नप्पोन्नाश्रमत्तिल् वन्नु तन् तातनोटु
चॉन्नतु केट्टु पितावनोटरुळ्चॅय्तान् । ३०
चॉल्लुवनखिलवु केट्टुकॉळ्कॅङ्किलॅन्नु
चॉल्लितु पौलोमत्तिलॅन्नाळ् पैङ्किळिमकळ् । ३१
इङ्ङनॆ चॉल्लि महाभारत नूऱायिरं
मंगलग्रन्थमितिहासराजाख्यमतिल् ३२
मुन्पिनालुळ्ळ पौलोमास्तिक पर्व्वं रण्टिल्
मुन्पिल् पौलोममतु चुरुविकञ्चॉन्नेनल्लो । ३३
आस्तिकपर्व्वमिनियाकुन्नततु केळ्प्पा-
नास्थयुण्टॅङ्किलतु चुरुविकच्चॉल्लामल्लो । ३४

होता है। (यह सुनकर) रुरु ने सहस्रपाद से कहा—वडे महत्व वाले जनमेजय ने क्यो यह काम किया है और क्या कारण है कि अस्तिक ने उसको रोक दिया ? यह मुझे वतलाइए। इस समय मैं यह सुनाने का अधिकारी नही हूँ—इतना कहकर मतिमान् सहस्रपाद तिरोहित हो गये। २१-२८ यह न सुनने के कारण महामुनि रुरु वडे दुख के साथ इधर-उधर घूमने लगे। फिर अपने आश्रम मे लौटकर उन्होने पिता जी से सव कह दिया। पिता ने सुनकर यो कहा।—मैं सव सुना दूँगा। सुन लो। शुककन्या ने वताया—इतना पौलोम [पर्व] मे कहा गया है। इस प्रकार महाभारत सुनाया गया। इस इतिहासराज मे सौ हजार मगल ग्रन्थ है। पौलोम और आस्तिक पहले के दो पर्व है। उनमे से पौलोम सक्षेप मे कहा गया है। इसके वाद आस्तीक पर्व है। उसे भी सुनने के लिए यदि आस्था हो तो सक्षेप मे सुना जा सकता है। आस्तिक्य (श्रद्धा)

आस्तिक्यमुळ्ळजनं बहुमानिक्कु दैव-
नास्तिक्यन्मारायुळ्ळोर् निन्दिच्चालॅन्तु फलं ? ३५
नारायणाय नमो नारायणाय नमो
नारायणाय नमो नारायणाय नम. । ३६

आस्तीकं

पैङ्किळिप्पैतले ! भंगियिल् चॉल्लॅटो
पङ्कजाक्षन्कथ पङ्कङ्डळ् नीङ्ङुवान् । १
ऍङ्किलो केळ्प्पिन् तपोधनन्मारोटु
सक्षेपमाय् सूतनिङ्ङनॅ चॉन्नप्पोळ् २
नैमिशारण्यनिवासिकळाकिय
मामुनिमार् शौनकादिकळ् चोदिच्चु । ३
ऍन्तु जनमेजयनां नरपति
दन्तशूकक्रतु चॅय्वानवकाश ? ४
अस्तीकनॅङ्ङनॅ माटियतॅन्नतु-
मस्तिकनारुटॅ पुत्रनॅन्नु भवान्
विस्तराल् ञङ्ङळोटॉक्कप्परयण ५

वाले लोग उसका आदर करेंगे। दैव मे नास्तिक्यवाले (अश्रद्धावाले) लोग अगर निन्दा करे तो उसका क्या फल है ? नारायणाय नमो, नारायणाय नमो, नारायणाय नमो, नारायणाय नम । २९-३६

आस्तीकपर्व

हे शुककन्ये ! पकजाक्ष (श्रीकृष्ण) की कथा सुन्दर ढग से सुनाओ ताकि सब मल दूर हो जायँ। [शुकी ने कहा—] अच्छा तो सुन लीजिए। जब सूत ने इस प्रकार तापसो को सक्षेप मे सुनाया तव नैमिषारण्य में रहनेवाले शौनक आदि महामुनियो ने पूँछा—नरपति जनमेजय के सर्पसत्व कराने का क्या कारण है ? अस्तीक ने उसे कैसे रोक दिया ? और अस्तीक किसका पुत्र है ? यह सव हम लोगो को विस्तर से सुनाइये। यह आस्तीक तत्त्वबोध का आधार है। हे सत्त्वमते ! श्रीकृष्ण के शिष्यजनो

तत्त्वबोधत्तिनाधारमामास्तिक
सत्वमते ! कृष्णशिष्यजनोत्तम ! ६
उत्तम मुक्तिप्रद चॉन्क वैकातॅ
बद्धमोदेन निरूपिच्चितीदृश । ७
चेतसि कृष्णनॅ ध्यानिच्चुरप्पिच्चु
मूतनतिनॅप्परञ्ञुतुटङ्ङिनान् । ८

अस्तिकोल्भवम्

मुन्न जरत्कारुनाम महामुनि
धन्यन् गृहस्थाश्रमाशयिल्लाय्कयाल् १
नन्नाय् तपस्सुकळ् चॅय्तु वन तोरु-
मॉन्निलुमाशकूटातॅ नटक्कुन्नाळ् । २
पाताळलोकत्तु वीळुवानाय्च्चिल-
राधिपूण्टेटमधोमुखन्मारुमाय् ३
पुल्कॉटितन्नुटॅयग्रमालम्बमाय्
निल्कुन्नतव्ययुमल्लतिन् वेरुकळ् ४
मूपिकन् मॅल्लॅक्करण्टु मुरिप्पतु
दोपमिल्लात जरत्कारु कण्टप्पोळ् ५

मे उत्तम ! प्रमोद के साथ विचार करके ऐसे उत्तम और मुक्तिप्रद (आस्तीक) को विना विलम्ब के सुनाइए। (यह सुनकर) श्रीकृष्ण जी को अपने मनमे ध्यान से स्थिर करके मूतजी ने इस कथा को सुनाना प्रारभ किया। १-८

अस्तिक का उद्भव

अतीत मे जरत्कारु नामक धन्य महामुनि, जिनकी गृहस्थाश्रम मे प्रवेश करने की इच्छा ही न थी, विविध तपस्याएँ करते हुये, किसी भी पदार्थ मे इच्छा न रखते हुये, वन वन मे भ्रमण करते थे। उस समय कुछ लोग बडे दुःख के साथ अधोमुख होकर पाताल मे गिरने को थे; [वे]केवल एक घास के पौधे को पकडे हुये थे जिसकी जडो को एक चूहा काट रहा था। दोपहीन जरत्कारु ने उनको देखकर पूँछा—आप लोग कौन है ? १-५

निङ्ङळारॅन्नानवनुमवरोटु
ञङ्ङळ् चिल मुनिमारॅन्नु चॉल्लिनार् । ६
पुत्रनायुण्टु जरत्कारु ञङ्ङळ्क्कु
पुत्रनवनिल्लयाञ्ञातु कारणं ७
लुप्तपिण्डोदकन्मारायितु ञङ्ङळ्
तप्तमायोरु तपस्सु वृथाफलं । ८
ञङ्ङळ् नरकत्तिल् वीळ्वान् तुटङ्ङुन्नु
मंगलनाय नीयारॅन्नु चॉल्लण । ९
ऍङ्किल् जरत्कारुवायतु ञान् तन्नॆ
निङ्ङळ् मम पिताक्कन्माररिञ्ञालुम् । १०
सङ्कट पोक्कुवानॅन्तु ञान् वेण्टतु
शङ्कियातेयरुळ्चॅय्कॅन्नु चॉन्नप्पोळ् ११
चॉन्नार् पितामहन्मारवन्तन्नोटु
पुण्यतपोव्रतदानधर्म्मादिकळ् १२
सन्ततियिल्लाय्किलॉक्कवे निष्फलं
सन्ततिकॉण्टे गतिवरू निश्चयम् । १३
आकयाल् वेळ्क्क नी मुम्पिनाल् वेण्टतु
पोक वैकाततिनॅन्नवर् चॉल्लिनार् । १४
भिक्षयाय् मोदालॉरु पुमानॅन्नोटु
कैक्कोळ्क भार्य्ययायॅन्नु नल्कीटुकिल् १५

उन्होने उत्तर दिया—हम कुछ मुनि लोग है। हम लोगो का जरत्कारु नामक एक पुत्र है। उसके कोई सन्तान नही है, इसलिए हम लोगो को पिण्ड और जल देनेवाला कोई नही है, हम लोगो का किया हुआ सभी तप व्यर्थ हो गया। अत. हम नरक मे गिरनेवाले है। यह बतलाओ कि हे मंगलमुख! तुम कौन हो। ६-९ यह सुनकर जब जरत्कारु ने कहा—"मैं ही जरत्कारु हूँ और आप लोग मेरे पितृपितामह है। आप का दु ख दूर करने के लिए मुझे क्या करना है? नि शक सुनाइए"। तब पितामहो ने कहा—"जिसके सन्तान नही है उसका किया हुआ पुण्य, तप, व्रत, दान आदि धर्म सब व्यर्थ हो जाता है, सन्तान ही अच्छी गति का साधन है। इसलिए सबसे पहले तुम्हे विवाह करना है, विवाह के हेतु जल्दी चलो"। १०-१४

वेळ्क्कामवळॅ समयमिनिक्कतु
केळ्क्क महाव्रत पिन्नॆयु मटान्नु । १६
पॆण्णिनुमॆन्नुटॅ पेरायिरिक्कण—
मॆन्नु जरत्कारु चॊन्नोरनन्तरम् । १७
चॊल्लियवण्णमे योग वरिकॆन्नु
नल्लोरनुग्रह नल्कि पितृक्कळुम् । १८
नन्नायॊरु वनदेशे वसिक्कुम्पोळ्
पन्नगनाथना वासुकियुं कण्टु । १९
ऎन्नुटॅ सोदरियाकिय कन्यक—
तन्नॆ वरिच्चुकॊळ्कॆन्नितु वासुकि । २०
नाममवळ्क्कॆन्तु चॊल्लुकॆन्नु मुनि
नाम जरत्कारुवॆन्नितु वासुकि । २१
पण्टे भवानु तरुवानायुण्टाक्कि
पुण्डरीकोद्भवनॆन्नुमरिञ्ञालुम् । २२
वह्नियिल् वीळ्कॆन्नु मातृशाप कॊण्टु
पन्नगवशवु सन्नमामॆन्नतु । २३

यह सुनकर जब जरत्कारु ने कहा—"मैं विवाह करूँगा, पर शर्त यह है कि कोई खुशी से अपनी कन्या को पत्नी बनाने हेतु मुझे भिक्षा दे दे। इसमें एक और महाव्रत (शर्त) है। वह यह है कि कन्या का नाम मेरे ही जैसा हो"। तब पितृपितामहों ने अनुग्रह किया कि जैसे तुमने बतलाया वैसे ही हो जाय। १५-१८ तदनन्तर जब जरत्कारु एक वन में सुख से निवास कर रहा था तब पन्नगराज वासुकि ने उसे देखा। वासुकि ने कहा—"मेरी बहिन से कृपया विवाह कर लीजिए"। मुनि (जरत्कारु) ने पूँछा—"उसका नाम क्या है ?" वासुकि ने कहा—"उसका नाम जरत्कारु है। पहले ही पुण्डरीकोद्भव[1] (ब्रह्मा) ने आप ही को देने के लिए, जान लीजिये, इसकी सृष्टि की थी। जब देवों ने ब्रह्मा को सूचित किया कि माता (कद्रू) का अग्नि में गिरकर जल जाने का शाप लगकर सारा

---

१ कमल में उत्पन्न।

चॆंन्नु विधाताविनोटु विबुधन्मार्
चॊन्नतु केट्टरुळ्चॆय्तु विरिञ्चनुम् । २४
मंगलयाय जरत्कारुनारियॆ-
यङ्ङु जरत्कारुविन्नु कॊटुक्कणम् । २५
उण्टामवळ् पॆटवनॊरु नन्दन-
नुण्टाय शापभयमॊऴिच्चीटुवान् । २६
इत्थ विधातृनियोगमॆन्नाल् प्रम-
दोत्तमयामिवळ्तन्नॆ वेट्टीटुक । २७
दीर्घपृष्ठाधिपनिङ्ङनॆ चॊन्नप्पोळ्
दीर्घविलोचनमुळ्ळ जरत्कारु २८
दीर्घविलोचनयां जरत्कारुवॆ
शीघ्र विधिविधियाल् विवाह चॆय्तु । २९
मोक्षपरायणन् वाऴुन्नकालत्तु
सौख्य वरिवस्ययाल् वळर्त्तीवळ् । ३०
चॊल्पॊङ्ङुमस्तिकनुण्टाकयु चॆय्तु
सर्पसत्त्रत्तॆयॊऴिच्चतवनल्लो । ३१

पन्नगवश नष्ट होने को है, तब बात सुनकर विरञ्चि (ब्रह्मा) ने निवेदन किया—१९-२४ 'मगलमयी कन्या जरत्कारु को मुनि जरत्कारु को प्रदान करना चाहिए। वह एक पुत्र को जन्म देगी जो शापभय को दूर करेगा।' 'अगर विधाता (ब्रह्मा) की यही आज्ञा है तो प्रमदाओ मे श्रेष्ठ इस जरत्कारु से विवाह कीजिए'। दीर्घपृष्ठो (सर्पो) के अधिपति ने जब इस प्रकार कहा तब विशालनयन जरत्कारु ने विशालनयना कन्या जरत्कारु से विधि (ब्रह्मा) की आज्ञा से विवाह कर लिया। जब पति मोक्ष मे दत्तचित्त होकर रहते थे उस बीच पत्नी ने अपनी वरिवस्या (सेवा) से उनका सुख बढाया। विख्यात अस्तिक (आस्तीक) का जन्म भी हुआ। उसी ने तो सर्पसत्र (सर्प यज्ञ) को रोक दिया था। २५-३१

सर्प्पगरुडारुणोल्पत्ति

सूतवाक्यं केट्टु मोदेन शौनक-
नादरवोटु नागोल्पत्ति चॉल्लॅन्नान् । १
आश्चर्यमक्कथ केळ्प्पिन् चुरुक्कमाय्
काश्यपनाकु प्रजापति सादर २
भद्रशीलागिमारायुळ्ळ भार्यमार्
कद्रुविनोटु विनतयोटु चॉन्नान् । ३
भर्त्तृ शुस्रूपणशिक्षयु शीलवु
चित्तविशुद्धियु कण्टु तॅळिञ्ञु ञान् । ४
वाञ्छितमायतु चॉल्लुविन् निङ्ङळ्क्कु
चाञ्चल्यमॅन्ये वरं तरुन्नुण्टु ञान् । ५
अन्तमिल्लातॉरु वीर्यवलमुळ्ळ
सन्तति नागसहस्रमुण्टाकणम् । ६
ऍन्नु वरिच्चितु कद्रु विनतयु
पिन्नॆ मरीचीसुतनोटु चॉल्लिनाळ् ७
ऍत्रयु तेजोवलवीर्यवेगङ्ङळ्
कद्रुसुतन्मारिलेटमुण्टायिट्टु ८
रण्टु तनयन्मारुत्तमन्मारायि-
ट्टुण्टाकवेणमिनिक्कु दयानिधे ! ९

सर्प, गरुड़ और अरुण की उत्पत्ति

प्रमोद के साथ सूतवाक्य सुनकर शौनक ने सादर कहा—"नागोत्पत्ति सुनाइए"। "वह अद्भुत कथा है। संक्षेप मे सुन लीजिए।" प्रजापति कश्यप ने अपनी भद्रशील और भद्रागी पत्नी कद्रू और विनता से कहा—"आप दोनो की पतिसेवा और शील और चित्तविशुद्धि देखकर मैं प्रसन्न हू। अपने मन की बात कहिए, आपको बिना चाञ्चल्य के (निस्सन्देह) वर दे रहा हूँ"। कद्रू ने यह वर चुन लिया—"अनन्त बल और वीर्य वाले एक हजार नागरूप मेरी सन्तति हो जायँ।" विनता ने मरीचिपुत्र (कश्यप) से निवेदन किया—"हे दयानिधे! कद्रू के सुतो से अधिक तेज, बल, वीर्य और वेग वाले दो उत्तम पुत्र मेरे पैदा हो जायँ।" १-९ तब महामुनि ने

मुट्टयायुण्टामिनियतु निङ्ङळ्क्कु
पॉट्टिप्पोकातवण्णं भरिच्चीटुविन् । १०
इत्थमनुग्रह चॆय्तु महामुनि
सत्वरं कानन पुक्कु तपस्सिनाय् । ११
अण्डसहस्रं प्रसविच्चाळ् कद्रुवु-
मण्डद्वय प्रसविच्चु विनतयुम् । १२
अण्डङ्ङळॆप्परिचारकन्मारॆल्ला
दण्डमॊळिञ्ञु परिपालनं चॆय्तार् । १३
अञ्ञूरु सवत्सरं चॆन्नकाल-
मीरञ्ञूरु नागप्रवरन्मारुण्टायि । १४
तन्नुटॆ मुट्टकळ् रण्टु विरियाञ्ञु
चन्नॊरु तापाल् विनतयुमक्काल १५
ऑन्निनॆ कॊट्टियुटच्चाळतुनेरम्
नन्नाय् विळङ्ङी चतुर्दशलोकवुम् । १६
अप्पोळनूरुवाय् मेवुमरुणनु-
मभ्रदेश प्रवेशिच्चितु सत्वरम् । १७
अम्वरदेशत्तुयरुमरुणनु-
मम्मयोटीर्ष्यकलर्न्नु चॊल्लीटिनान् । १८
देहं मुळुवनॆ तीरुमतिन्मुम्पे
मोहं वळर्न्नितु चॆय्नतु कारणं १९

इस प्रकार अनुग्रह किया—"तुम्हारा सन्तान अण्डों के रूप में पैदा होगा। उनकी देखभाल करो कि टूट न जायें"। इतना कहकर वे तप करने हेतु वन चले गये। कद्रू ने एक हजार अण्डो को जन्म दिया और विनता ने दो अण्डो को जन्म दिया। परिचारकों ने विना कष्ट के अण्डों का परि-पालन किया। पाँच सौ वर्ष बीत जाने के बाद एक हजार नागप्रवर पैदा हुए। अपने दो अण्डों के न खुलने के कारण दुःखित विनता ने उनमें से एक को तोड़कर खोला। १०-१५ तब चौदहों लोक उज्ज्वल हो गये। और अरुण जो अनूरु था, तुरन्त ही आकाश में प्रविष्ट हुआ। आकाश में प्रवेश करते हुए अरुण ने ईर्ष्या के साथ अपनी माता को [शाप देकर]

१ विना ऊरु (जंघा अथवा जाँघ) ... ।

कद्रुवामम्मय्क्टिमयाय् पोक नी ।
भद्रनायुण्टामिनि मम सोदरन् २०
मुट्टयतु नीयुटच्चुकळयाय्किल् ।
पॅट्टन्नु दास्यवु तीर्क्कुमवनम्मे ! २१
इन्नुमञ्ञूटाण्टु पार्त्तीटुळ्ळातँ—
यॅन्नाल् निनक्कतिनाले गतिवरुम् । २२
ऎन्नु परञ्ञुयर्न्नानिरुणाख्यनु—
मॉन्निच्चिरुन्नु विनतयुं कद्रुवुम् । २३
मार्त्ताण्डदेवनु सारथियायुटन्
तेर्त्तट पुक्कानरुणन् महाप्रभन् २४
आधियु तीर्न्निरिक्कुन्न कालत्तिङ्क-
लादितेयासुरन्मारॉरुमिच्चुकॉ-
ण्टाधिकलर्न्नु पालाळि कटञ्ञनाळ् २५
श्वेतवर्णत्तोटु मानसवेगनाय्
जातमायीटुन्न घोटक कारणं । २६
उच्चैश्रवस्सॅन्नु लोकप्रसिद्धमाय्
स्वच्छमायुण्टायॉरश्वं प्रति तम्मिल् २७

कहा—"मेरे शरीर के पूर्ण होने के पहले ही मोह वढने के कारण तुमने यह काम किया। इसलिए तुम माता कद्रू की दासी हो जाओ। अगर तुम दूसरे अण्डे को नही तोड डालोगी तो मेरा भाई अच्छा पैदा होगा। और वह तुरन्त ही तुम्हारा दास्य[1] भी समाप्त करेगा। विना दुःख के और पाँच सौ वर्ष प्रतीक्षा करो, तव तुम्हारी अच्छी गति हो जायगी"। इतना कहकर अरुण आकाश मे चला गया और विनता और कद्रू साथ रहने लगी। १६-२३ महाकान्तियुक्त अरुण तो सूर्यदेव का सारथि वनकर उनके रथ मे प्रविष्ट हो गया। जव सूतजी ने कहा कि सव लोग सुख से रहते थे और देवो और असुरो ने स्पर्धा के साथ क्षीरसागर का मन्थन किया, उसमे से एक श्वेतवर्ण और मन के तुल्य वेगवाला लोकप्रसिद्ध उच्चैश्रवा नामक घोडा निकल आया जिसके सम्वन्ध में विवाद[2] पैदा हो

१ कद्रू की दासता। २ आगे कथा मे वर्णन है। इसी उच्चैश्रवा के काले दाग को लेकर कद्रू की दासता विनता को स्वीकार करना पडी।

वादमुण्टायवन्नितॅन्नु परञ्ञॉरु
सूतनोटन्नेरं चोदिच्चु शौनकन् । २८
चॉल्लु चॉल्लॅङ्किलमृतमथन नी
चॉल्लामतुमॅङ्किलॅन्नितु सूतनुम् । २९
चॉल्लिनानॅल्लाममृतमथनवु
चॉल्लुवानिप्पोळॅनिक्कॅळुतल्लेतुम् ३०

पालाळिमथनम्

विद्याधरस्त्रीकळ् दिव्यपुष्पकॉण्टु
हृद्यमायुळ्ळॉरु माल्य चमञ्चतु १
शर्व्वांशसभूतनाय मुनीन्द्रनां
दुर्व्वासाविन्नु कॉटुत्तवरु पोयार् । २
सभोगसाधनमायुळ्ळ माल्यत्तॅ
जभवैरिक्कु कॉटुत्तु मुनीन्द्रनु ३
दन्तावळेश्वरस्कन्धोपरि वच्चु
कुन्तळं चिक्कियुलर्त्तुन्ननेरत्तु ४
हस्तीन्द्रमस्तकन्यस्तमाल्यामोद-
मत्तभृंगस्तोमवित्रस्तनेत्रना ५

गया । तब शौनक ने उन [सूत जी] से कहा–"अमृत-मन्थन की कथा तो अवश्य सुना दीजिए" । सूतजी ने कहा–"तो फिर अवश्य सुना दूँगा । फिर उन्होने अमृत-मन्थन की कथा सुना दी । मुझे तो इस समय सुनाना आसान नही है ।" २४-३०

क्षीरसागर का मन्थन

विद्याधरियो ने दिव्य पुष्पो की एक मनोहर माला बनाकर शिवजी के अशभूत मुनि दुर्वासा को दे दी और वे चली गयी । मुनीन्द्र ने माला को सभोग का साधन समझकर जभवैरि (इन्द्र) को दे दिया । उसे हाथी ऐरावत के कन्धे पर रख कर जब वह केशसस्कार कर रहे थे तब गजराज के कधे पर स्थित माला के आमोद से आकृष्ट भ्रमरसमूह के द्वारा आँखो मे बाधा होने के कारण हस्तीन्द्र (ऐरावत)

मक्कळुमायिरिप्पान् निनच्चेनतु-
मोक्कयरुतेन्नो तोन्नीतु दैवमे ! ११०
आपत्तुवन्नालतिल्प्परमीश्वर-
नापत्तुतन्ने वरुत्तुमे मेल्क्कुमेल् । १११
आलिगनत्तिङ्कलाशु मरिक्कुमे-
न्नारानुमुण्टो निरूपिच्चितीश्वरा ! ११२
कीचकनालिगनेन मरिच्चुपोल्
नाशं निनक्कुमतिन्मूलमाकयो ! ११३
चित्तमळिञ्ञु धृतराष्ट्रराकुलाल्
मिथ्याविलापङ्ङळ्चेय्तान् बहुविधं । ११४
भीमसेनन् मरिच्चानेन्नुरच्चिट्टु
भीमना मन्नन् विलापं तुटङ्ङिनान् । ११५
इत्थ प्रलाप कलन्नोरुनेरत्तु
तत्वस्वरूपनखिललोकात्मकन् ११६
सर्व्वभूतान्तःस्थितनाकुमीश्वरन्
दुर्व्विलापंचेय्त मन्नवनन्नोटु । ११७
मन्दस्मितं चेय्तु मन्दमरुळ्चेय्तु
मन्दमतिमतां बोधत्तिनाय् मुदा— ११८
वैचित्र्यवीर्यनायुळ्ळ महीपते !
वैचित्र्यमेन्नयुमित्तोळिल् तावक । ११९
मन्नव ! नीयितु चेय्युमेन्नुळ्ळतु
मुन्नमेयुळ्ळिलरिञ्ञितु ञानटो । १२०

जब विपत्ति आ जाती है तब ईश्वर आगे उत्तरोत्तर और विपत्तियाँ पैदा करता है। हे ईश्वर ! यह कौन सोच सकता है कि आलिगन करने मे कोई मर जाय ! कहते है कि कीचक आलिंगन से मरा था। क्या तुम्हारा भी नाश उसी से हुआ है ! इस प्रकार धृतराष्ट्र ने शान्त चित्त से अनेक प्रकार के विलाप किये। यह समझकर कि भीमसेन मर गया है भयप्रद राजा ने विलाप करना प्रारम्भ किया। जब इस प्रकार का प्रलाप हुआ तब तत्त्वस्वरूप, अखिललोकात्मक, सभी भूतो के अन्तःस्थित ईश्वर ने मुस्कराकर मिथ्याविलाप करनेवाले राजा से मन्द-मतियों के बोध के लिए इस प्रकार कहा— १११-११८ हे विचित्रवीर्य के पुत्र ! हे राजन् यह तुम्हारा काम अत्यन्त विचित्र है ! हे राजन् !

पिन्नॆ वृकोदरन् वन्दिप्पतिन्नायि
निन्नतु कण्टिट्टु देवकीनन्दनन् १००
मॆल्लॆच्चॊरुकि नी निल्लुनिल्लॆन्नङ्ङु
चॊल्लातचॊल्लिलया वल्लवीवल्लभन् १०१
नल्लोरिरुम्पुकॊण्टुळ्ळोरु भीमनॆ
मॆल्लवे मुन्पिलाम्मारु निर्त्तीटिनान् । १०२
उण्णी ! मकने ! वरिक वृकोदर !
कण्णु काणाततु नीयरिञ्ञीलयो ? १०३
ऎन्नु परञ्ञॊरु मन्नवन्तन्नुटॆ ।
मुन्निलटुत्तु निर्त्तीटिनारायस १०४
भीमनतल्लो तिरुमुन्पिलॆन्नव-
रामोदमोटटुप्पिच्चारतुनेर १०५
चिक्कनॆप्पुल्किनान् गाढ नरपति-
यॊक्कप्पॊटिञ्ञितु भीमप्रतिमयुं । १०६
निन्निल् वळर्न्नॊरु सन्तोषमोटु ञान् ।
नन्नाय् मुरुकॆप्पुणर्न्नॆनतुमूल १०७
ऎल्लु नुरुङ्ङि मरिच्चितो पैतले !
मॆल्लवेयॊन्नु ञरङ्ङीतुमिल्ल नी । १०८
दुःखङ्ङळुण्टायतॊक्कक्कळञ्ञुञा-
निक्कालमिङ्ङनॆ सौख्यं कलर्न्निनि । १०९

आशीर्वाद दिये । तदनन्तर जब भीम वन्दना करने के लिए आगे बढ़ा तब उसे देखकर उस देवकीनन्दन गोपीवल्लभ (कृष्ण) ने 'ठहरो ठहरो' का इशारा करते हुए और साफ-साफ न कहते हुए उस लोहमय भीम को धीरे-धीरे आगे खड़ी कर दिया । ९५-१०२ हे ! मेरे लाल ! बेटा भीम ! आओ क्या तुम नही जानते हो कि मै देख न सकता हूँ ? ऐसा कहते हुए राजा के समक्ष निकट ही वह लोहे की मूर्ति खड़ी कर दी गयी । राजा भी उस सामने खड़े भीम के निकट ही खड़े कर दिये गये राजा ने उसका गाढ आलिङ्गन किया और वह भीम की मूर्ति चूर-चूर हो गयी । बेटा ! तुम्हारे प्रति जो मेरा बड़ा प्रेम हो गया था उससे मैंने तुम्हारा गाढ आलिङ्गन कर दिया । क्या हड्डी टूटकर तुम मर गये ! तुमने तो तनिक भी आर्तनाद नही किया । मै तो सभी बीते दुःखो को भूलकर अब आगे सुख से पुत्रो के साथ रहने के लिए सोच रहा था । हे भगवान् ! तुमने क्या उसको भी मना कर दिया है ? १०३-११०

शापं कॊटुक्कॊला पाण्डवन्माक्कुं नी
तापं वरुत्तॊला मेलिलुमेतुमे । १३१
कोपमायुळ्ळतु वित्तॆन्नरियणं
पापमाकुन्न मरामरत्तिन्नॆटो । १३२
निर्म्मलन्माराय धर्म्मजनादिकळ्
सम्मतमुळ्ळवर् निन्नुटॆ मक्कळॆ- १३३
न्नुणमयोटे धरिच्चीटुक मट्टिनि-
क्कर्म्मफलं करञ्ञॆन्तिनिक्कारियं ? १३४
निर्म्मलमानसयाकिय नीयिनि-
क्कलमषं तीर्प्पानुपायवु चिन्तिच्चु १३५
कर्म्मविच्छेदं वरातॆ निरन्तरं
धर्म्मङ्ङळुं चॆय्तु बन्धुजनत्तॊटु १३६
भर्त्तृशुश्रूषयुं चॆय्तु सुतरुमा-
यत्तल्कळञ्ञु वसिक्कॆन्नुमिङ्ङनॆ । १३७
सत्यवतीसुतनाय तपोधनन्
चित्तविषादं कळञ्ञोरनन्तर १३८
वन्नु वणङ्ङिनार् धर्म्मसुतादिकळ्
नन्नायणच्चवळुं तळुकीटिनाळ् । १३९
गान्धारितन्नुटॆ दृष्टि पतिच्चु कृ-
तान्तात्मजनुं कुनखियाय् वन्नितु । १४०

अब आगे किसी को दुःख न पैदा करो। जान लो कि कोप जो है वह पापरूपी वनस्पति का वीज है। १२६-१३२ अपने चित्त मे स्थिर कर लो कि निर्मल और सन्मतिवाले पाण्डव अपने पुत्र है। और जो कुछ होता है वह अपने कर्म का फल है। रोने से क्या होता है तुम तो निर्मलमानस की हो। इसलिए पाप दूर करने के उपाय सोचो और कर्मविच्छेद न करती हुई निरन्तर धर्मकार्य करती रहो और वन्धुजनो और पुत्रों के साथ अपने पति की शुश्रूषा करती हुई दुःख छोड़कर सुख से रहो। सत्यवती के पुत्र तपोधन (व्यास) के द्वारा अपने चित्त का विषाद मिट जाने पर युधिष्ठिर आदि आये और उन्होने (गान्धारी) की वन्दना की। उसने भी उनको छाती लगाकर प्यार किया। गान्धारी की दृष्टि के लगने से युधिष्ठिर कुनखी बन गया। १३३-१४० सभी ने सादर कुन्ती की भी वन्दना की और उसने भी प्रसन्न होकर प्यार किया। तव छाती पीटती हुई दुःखित कमललोचना द्रौपदी आयी।

भीमनल्ल पोँटियायतु भूपते !
भीमप्रतिमयायोरिरुम्पायतुं । १२१
खेदिक्कवेण्टा मरिच्चील मारुति
खेदं वरुत्तुकयिल्ल ञानार्क्कुमे । १२२
इन्नुमोन्नुण्टु पऱयुन्नितु निन-
क्किन्नियुं नल्लतुतोन्नुकिल् नन्नहो ! १२३
इत्तरमोक्कवे वच्चुकळञ्ञिनि-
च्चित्तत्तिल् नल्लतोल्लां करुतीटुक । १२४
रागादिदोषङ्ङळोक्ककक्कळञ्ञिनि-
व्भागवतप्रियनाय् वाळ्क सन्ततं । १२५
स्वैरमाय् वाळुक नन्दनन्मारुमाय्
वैरं कळञ्ञु समनायिरिक्कणं । १२६
सज्जनसेव्यनामच्युतन्वाक्किनाल्
लज्जितनाय् तुलोमन्धनां भूपनुं । १२७
पिन्नेक्रमेण तळुकिनान् मक्कळे
खिन्नभावं कळञ्ञीटिनारेवरुं । १२८
कान्तविलोचनमारुमाय् पाण्डवर्
गान्धारियेत्तोळुवान् नटन्नीटिनार् । १२९
अप्पोळ् पराशरपुत्रनां व्यासनु
मुल्पाटु गान्धारियेक्कण्टु चोल्लिनान्— १३०

मैंने पहले ही समझ लिया था कि तुम इस प्रकार करोगे। जो चूर-चूर हुआ वह भीम नही था वह एक लोहे की भीमप्रतिमा थी, हे भूपाल ! खेद न करना, भीम मरा नही है, मैं किसी को दु.ख न करूँगा। एक बात तो मुझे आज भी कहनी है— अब भी अगर तुमको हित की बात सूझेगी तो अच्छा होगा। इन सब बातो को छोड़कर अपने चित्त में अच्छी वृत्तियाँ पैदा करो। राग आदि दोषो को त्यागकर अब भागवत-प्रिय बनकर सदैव रहो। ११९-१२५ पुत्रो के साथ वैर त्यज. कर शान्ति से रहो। सज्जनो के सेव्य अच्युत की बातो से अन्धा भूपाल अत्यन्त लज्जित हुआ। तत्पश्चात् उसने पुत्रो को क्रम से प्यार किया और सभी ने अपना खिन्नभाव छोड दिया। अब पाण्डव अपनी स्त्रियो के साथ गान्धारी की वन्दना करने चले। तब पराशर के पुत्र व्यास ने गान्धारी से पहले ही मिलकर कहा— "तुम पाण्डवो को शाप न दो",

अम्मे ! सुबलजे ! निर्म्मले ! गान्धारि !
चेम्मे पौरुक्कुन्नतेङ्ङने ञानय्यो ! १५२
अन्तेन्मकळे ! नीयेन्ने निरूपिक्क
चिन्तिच्चालारु शरणमिनिक्किनि । १५३
अन्धनाकुन्नोरु भर्त्तावुतन्नेयु-
मन्त्यकालत्तिङ्कलारु भरिप्पतुं ? १५४
उत्तमयायुळ्ळ कुन्तियुं कृष्णयु-
मुत्तर्योटु सुभद्र गान्धारियु १५५
तङ्ङळेक्कूटे मरन्नोरळल् कोण्टु
तङ्ङळिल्त्तङ्ङळिल् नन्नाय् तळुकियु १५६
कण्णुनीर् वीणु निरञ्ञु निलत्तुरु-
ण्टुण्णी ! मकने ! सहोदर ! वल्लभ ! १५७
ञङ्ङळे वेकाते कोण्टुपोय्क्कोळ्ळुवि-
निङ्ङनेयेन्तिनु ञङ्ङळिरिक्कुन्नु ? १५८
निङ्ङळ् कूटाते निमिष पोरुक्कुमो ?
निङ्ङळे ञङ्ङळिनियेन्नु काणुन्नु ? १५९
इत्तरं चोल्लिक्करयुन्न नेरत्तु
चित्तमुळ्ळन्नोरु गान्धारि चोल्लिनाळ्— १६०
पोक कुरुक्षेत्रमाकिय भूमियिल्
पोरिल् मरिच्चारवर्कळेन्नाकिलुं १६१
काणामवरुटल् मेलिलोरु कुरि
काणणमेन्नु 'तोन्नीटुकिलावतो ? १६२

पहली बनाया है। हे सुबल की पुत्रि ! माँ ! हे निर्मल गान्धारि ! यह सब मै कैसे सह सकती हूँ ? (तब गान्धारी बोली—) मेरी बेटी ! मेरी स्थिति तो देखो ! अब मेरा कोई शरण नही है। और मेरे अन्धे पति की अन्तिम काल मे कौन सेवा करेगा ? उत्तम कुन्ती और द्रौपदी, उत्तरा, सुभद्रा और गान्धारी ने दुःख मे अपने को भूलकर आपस मे गले लगाये और प्यार किया, १४९-१५६ उनके आँसुओ के गिरने से भूमि भर गयी। उस पर लोटती हुई वे चिल्लाई !— हे बेटा ! हे सहोदर ! हे प्रियतम ! जल्दी हमे ले जाओ, इस प्रकार हम यहाँ क्यो रहे ? तुम्हारे विना हम क्षण भर जी सकते है ? अब हम तुम्हे फिर कब देखेगे ? जब वे इस प्रकार कहते हुए रो रही थी तब दुःखित गान्धारी बोली—'हम

कुन्तियेयुं तॊऴुतीटिनारादराल्
चिन्त तॊळिञ्ञवळुं तळुकीटिनाळ् । १४१
अन्नेरमाकुलप्पॆट्टु तॊऴिच्चल-
च्चिन्दीवराक्षिया द्रौपदि वन्नितु । १४२
मट्टु सुभद्रयुमुत्तरयुं कर-
ञ्ञुट्वराकिय नारीजनङ्ङळुं १४३
चुटुं पिटिच्चुमिटिच्चु तॊऴिच्चुम-
ङ्ङटमिल्लातॊरु दुःख मुळुक्कयाल् । १४४
उटवरॆच्चॊलिल वाविट्टलरियु-
मिटिटु कण्णुनीर् वीणङ्ङॊऴुकियु । १४५
वीणुमुरुण्टुं पुरण्टु पलतर
केणुं किळिञ्ञळिञ्ञवर ताङ्ङ्युं १४६
केशमळिञ्ञु पॊटिकॊण्टणिञ्ञुमुळ्-
क्लेश पॊऱाञ्ञु नटुङ्ङ्युमङ्ङनॆ । १४७
कुन्तियॆच्चॆन्नु पुणर्न्नितु पाञ्चालि
सन्ततमोलुन्न कण्णुनीरोटुकू- १४८
टम्मे ! चतिच्चितॊरैवर् कुमाररु
पॊन्मकनाकुमभिमन्युवुमिङ्ङनॆ । १४९
ऒन्नोटुकूटॆप्पिऱन्न धृष्टद्युम्न-
नॆन्नेयीवण्णं करयुमाऱाक्किनान् । १५०
भाग्यमिल्लात पॆण्णुङ्ङळिल् मुन्पिनि-
क्काक्किच्चमच्चितु दैवं विधिवशाल् । १५१

औरो में सुभद्रा, उत्तरा, तथा अन्य बन्धुस्त्रियाँ आपस मे गले लगाती और छाती पीटती हुई आयी क्योकि उनका दुख निस्सीम था। उन्होने बन्धुओ का नाम लेकर जोर से रोया और धाराप्रवाह आँसू गिराये। वे भूमि पर गिरी और लोटी। और विलाप करती हुई उन्होने अपने उतरते वस्त्र को हाथ से रोका। उनके केश भी खुल गये और धूल से ढक गये। दुख न सह सकने से वे पीडित और भयभीत हुईं। गिरते आँसुओ के साथ पाञ्चाली जाकर कुन्ती से मिली। १४१-१४८ माताजी ! पाँचो कुमारो ने धोखा दिया है और मेरा स्वर्णपुत्र अभिमन्यु ने भी ऐसा ही किया। और मेरे सहोदर धृष्टद्युम्न ने मुझे इस प्रकार रोलाया है। और दैव ने विधिवश मुझको भाग्यहीन स्त्रियो मे सबसे

गान्धारी-दु:खं (विलापम्)

पत्तु सहस्रं गजाश्वरथिकळुं
पत्तियुं प्रत्येकमूक्कोटट्टुत्तुटन् १
पत्तु दिवसवुं कौन्त देवव्रत-
नस्त्रप्रवरनामर्ज्जुननूतन्नुटे २
पत्रिकळ्कोण्टुटन् छिद्रमामङ्गवुं
भक्तपरायणनाय नारायणन् ३
रक्तसरोजपदङ्ङळिलेल्लयुं
भक्ति मुळुत्तिट्टु निश्चलमायोरु ४
चित्तवुं बद्धाञ्जलिपूण्ट हस्तवुं
अल्लयुं कूर्त्तमूर्त्तुळ्ळ शरङ्ङळ्को- ५
ण्टुत्तममायोरु मेत्तयिलङ्ङने
मुक्तियां नारि वरुन्नतु पार्त्तुपा- ६
र्त्तत्यन्तशुद्धनाय् मेवुन्न भीष्मरे
चित्तभावत्तोटु काणायितन्तिके । ७
पत्तुमोरेट्टुदिवसवु मुट्टाते
युद्धङ्ङळ् चेय्तु मरिच्चुकिटक्कुन्न ८
पृथ्वीपतिकळ्मुटिकटकादिकळ्
विस्तृतमाय रथङ्ङळ् कोटिकळुं । ९
रक्तत्तिल् वीणिळयुं कोटिक्कूरयुं
छत्रङ्ङळ् चामरं तालवृन्तङ्ङळुं १०

गान्धारी का दुःख और विलाप

जिसने दस हजार हाथी, घोड़े और रथी और पैदल सैनिकों का अलग-अलग सामना करके दस-दस दिन तक लगातार मारा, जिसका शरीर योद्धृवर अर्जुन के शरों से घायल था, जिसका चित्त भक्तवत्सल नारायण के चरणकमलो पर वढ़ी-चढी भक्ति के कारण निश्चल था और हाथ अञ्जलिबद्ध था और जो तीक्ष्ण-तीक्ष्ण शरो के बने गद्दे पर मुक्तिरूपी स्त्री की प्रतीक्षा करते हुए लेटा हुआ था, वह अत्यन्त शुद्ध भीष्म अपने भावो से प्रभावित दिखाई दिये । १-७ अठारह दिन लगातार युद्ध करके मरे पड़े पृथ्वीपतियो के वाल और वलय, वड़े वड़े रथ, झण्डों के स्तम्भ, रुधिर में भीगे झण्डे, छत्रियाँ, चँवर, पखे, शस्त्र और शस्त्र के कटे

पोरुक वैकरुतेतुमिनियुटन्
पोरिल् मरिच्चवरॆक्कण्टुकॊळ्ळुवान् । १६३
ऍन्तिनिवळुळ्ळिलिङ्ङनॆ तोन्निच्च-
तॆन्पॆरुमानॆन्नताक्कॆरिञ्ञीटावू । १६४
कून्तलुं कॆट्टि नटन्नु तुटङ्ङिनाळ्
गान्धारियोटु सुभद्र पाञ्चालियु । १६५
उट्वरायुळ्ळ मट्टुळ्ळ नारिमार्
चुट्टु नटन्नु तुटङ्ङिनाराकुलाल् । १६६
दुर्म्मति पूण्ट धृतराष्ट्रभूपनुं
निर्म्मलन्माराय धर्म्मजन्मादियु १६७
गूढस्मितनाय कूटस्थनीश्वरन्
गूढस्थनव्ययनाय मायामयन् १६८
कूटॆ नटन्नितु पाण्डवन्मारुमाय्
गूढमायॊन्नुण्टतिङ्कलु मानसे । १६९
अष्टादशाक्षौहिणि वलमॊक्कवे
पट्टुकिटक्कुन्न पोर्क्कळं तन्निले १७०
चॆन्नवर् निन्नतुनेरं पराशरन्-
तन्नुटॆ पुत्रननुग्रह चॆय्कयाल् १७१
दूरॆक्किटक्कुं शवङ्ङळॆयोक्कवे
चारत्तु कण्टितु गान्धारियुं तदा । १७२

सब कुरुक्षेत्र नामक युद्धभूमि मे चलें। यद्यपि वे युद्ध मे मर गये है तथापि जो उनके शरीर को देखना चाहती है वे एक बार और देख सकेंगी। इस लिए बिना विलम्ब के युद्ध मे मरो को देखने चले। उनके मन मे यह बात क्यो सूझी ? कौन जानता है कि कौन किसका बड़ा है ? । १५७-१६४ बाल बॉधकर सुभद्रा और द्रौपदी गान्धारी के साथ चलने लगी। अन्य बन्धुस्त्रियाँ भी व्याकुल होकर उनके साथ चलने लगी। दुर्मतिवाला राजा धृतराष्ट्र, निर्मल युधिष्ठिर आदि, गूढरूप मे स्थित कूटस्थ, गूढस्थ, अव्यय, मायामय ईश्वर भी पाण्डवो के साथ चले। उनके मन मे कोई गूढ बात अवश्य है। जब वे अठारह अक्षौहिणी की सेना जहाँ पडी थी उस रणभूमि मे जाकर खड़े हुए तब पराशर के पुत्र (व्यास) के अनुग्रह से गान्धारी ने दूर दूर पर पडे शवो को निकट मे ही देखा। १६५-१७२

नल्लमरतकक्कलिनोटोत्तोरु
कल्याणरूपन् कुमारन् मनोहरन् २२
चोल्लेळुमर्ज्जुनन्तन्टे तिरुमकन्
वल्लवीवल्लभ ! निन्टे मरुमकन् । २३
कोल्लाते कोळ्ळाञ्ञतेन्त्वनन्तन्ने नी
कोल्लिक्कयल्ले निनक्कु रसमेटो । २४
अल्ललाकुन्नुते कण्टतोरुमिनि-
क्कोल्लाय्किलुं पोळियल्लितु दैवमे ! २५
मन्दस्मितं पूण्टु सुन्दरमां मुख-
मिन्दीवरेक्षण ! कण्टाल् पोरुक्कुमो ? २६
अत्रयु बालयाय् मेविनोरुत्तर-
चित्तमुळन्नलरुन्नतु काण्क नी । २७
सुन्दरियाय सुभद्रयु भूमियिल्
क्रन्दनं चेय्तुरुळुन्नतु काण्क नी । २८
अल्लल्पूण्टिङ्डने अङ्ङळ् केळुन्नति-
लिल्लयो खेद चेरुतु निन्मानसे ? २९
कल्लुकोण्टो मनं तावकमाकिल-
क्कल्लिनुमार्द्रतयुण्टितु काणुन्पोळ् । ३०
अल्ले घटोत्कचनाय भीमात्मज-
नल्लो किटक्कुन्नतङ्ङतिनप्पुर । ३१

शिव ! १५-२१ अच्छे मरकतमणि के समान, कल्याणरूप, कुमार, मनोहर, विख्यात अर्जुन का सुपुत्र, हे गोपीवल्लभ ! तुम्हारा ही भान्जा, उसे क्यो तुमने मारे जाने से नहीं वचाया ? तुम्हे क्या मरवाने में ही रस है ? तुमने तो किसी को मारा नही, फिर भी यह सब देख-देखकर दुःख होता है । तुम्हारा मुस्कराता हुआ सुन्दर मुँह देखकर, हे कमल-लोचन ! कैसे सहा जाय ? देखो, इस अत्यन्त बालिका उत्तरा का चित्त कितना पीडित है ! यह भी देखो कि यह सुन्दरी सुभद्रा भूमि पर पड़ी रोती हुई लोट रही है । २२-२८ हम लोग जो इस प्रकार दुःखित होकर विलाप कर रही है इससे तुम्हारे मन मे तनिक भी खेद नही है ? अगर तुम्हारा मन पत्थर का वना हो तो पत्थर को भी यह सव देखकर सहानुभूति हो जानी चाहिये न ? देखो नील पर्वत के समान भीमपुत्र घटोत्कच उस ओर पड़ा है । कर्ण का प्रयुक्त शक्ति के लगने से वह यमपुरी चला गया । यह देखो जयद्रथ का शरीर यहाँ पडा है जिसकी गरदन

शस्त्रङ्ङळु शस्त्रकृत्तगात्रङ्ङळु
मस्तकत्तिङ्कन्नु वेर्पेट्टु वीणोरु ११
चित्रपटवुमुद्यत्तवु तोङ्कलु
तप्तकार्त्तस्वरालकृतस्कन्धवु १२
चत्तुचत्तोक्क मलच्चुकिटक्कुन्न
हस्तिवरन्मारुमश्वगणङ्ङळु- १३
मटमिल्लातोरु शस्त्रङ्ङळ्कोण्टुको-
ण्टट्टुवीणोरवयवजालवुं । १४
अस्तमिप्पानटुत्तोरुनेरत्तु व-
न्नोत्तु मेघङ्ङळ् परन्नपोले गळ- १५
द्रक्तङ्ङळ्कोण्टतिसक्तमायुळ्ळोरु
युद्धभूमौ निरत्तिक्किटक्कुन्नोरु १६
पुत्रसमूहवु मित्रवर्गङ्ङळु
गृद्ध्रङ्ङळ् नाय् नरि काकसमूहवु १७
पक्षिगणङ्ङळु नक्तञ्चरादियुं
कण्टुकण्टिण्टल्मुळुत्त गान्धारि वै- १८
कुण्ठना माधवन्तन्नोटु चोल्लिनाळ्—
कण्टीलयो नी मुकुन्दा ! धरणियि-
लुण्टाय मन्नरिल् मुन्पन् भगदत्तन् १९
तन्करिवीरनरिके धनुस्सुमाय्
संक्रन्दनात्मजनेय्त शरत्तिनाल् २०
वीणितल्लो किटक्कुन्नू धरणियिल्
शोणितवुमणिञ्ञय्यो शिव ! शिव ! २१

अग, सिर से अलग होकर गिरे चित्रपट (रगीन कपडे) मालाएँ, तप्त स्वर्ण से अलकृत कन्धे, मर कर अपने पीठ पर लेटे हाथी और घोड़े, असख्य शस्त्र लग-लगकर निरन्तर गिरे शरीरावयव, ८-१४ सूर्यास्तमय के समय इकट्ठा होकर फैले हुए मेघो के समान टपकते रुधिर से छीपे हुए और युद्धभूमि पर फैलाये पडे पुत्रो के समूह और मित्रवर्ग, गिद्ध, कुत्ते, सियार, काकगण, चिडियो के समूह, और राक्षसो को देख-देखकर दु खित गान्धारी वैकुण्ठ माधव से वोली— हे मुकुन्द ! तुमने देखा कि पृथ्वी मे पैदा हुए राजाओ मे श्रेष्ठ भगदत्त, हाथ मे धनुष लिए, अपने ही हाथी के पास, संक्रन्दन के पुत्र का वाण लगकर पृथिवी पर गिर पडा है, हे ! शिव !

मत्तद्विपेन्द्रनॅट्टुत्तु मर्द्दिक्कयाल्
क्रुद्धना मामुनि शापवु नल्किनान् । ६
वृत्रारिमुख्यत्रिदशकुलत्तॅयु
वृद्धन्माराय् विरूपन्मारायपोकॅन्नु ७
इन्नुतुटङ्ङिङ्ज्जरानरयुण्टाक-
यॅन्नतु केट्टु भयेन महेन्द्रनु ८
वन्दिच्चु शापमोक्षत्तॅयपेक्षिच्चान्
नन्दिच्चु तापसेन्द्रन् वरवु नल्कि । ९
क्षीराण्णॅव मथनचय्तु पीयूप-
सार नुकर्न्नाल् जरानरतीर्न्नुपोम् । १०
इन्द्रादिवृन्दारकन्माररविन्द-
मन्दिरनोटङ्ङियिच्चितु सङ्कटम् । ११
चन्द्रक्कलाधरन्तन्नोटुणर्त्तिक्क
मन्देतर चॅन्नु नामॅन्नु नान्मुखन् । १२
कैलासवासियॅच्चॅन्नु पुकळ्न्नतु
शैलात्मजापतितानुमतुनेरं १३
निर्ज्जरन्मारुटॅ सङ्कट कण्टागु
सज्ज्वरमानसनाय्प्पुरप्पॅट्टुटन् १४

ने माला का मर्दन कर दिया। उसे देखकर क्रुद्ध मुनि दुर्वासा ने वृत्रारि (इन्द्र) से लेकर सभी देवो को इस प्रकार शाप दे दिया—"सब वृद्ध और कुरूप हो जायँ ! आज से लेकर जरा[1] और सफेद वाल दिखाई दे"। शाप सुनकर डर के मारे महेन्द्र ने मुनिजी की वन्दना की और शापमोक्ष की याचना की। प्रसन्न होकर मुनीन्द्र ने यो वर प्रदान किया। क्षीरसागर का मन्थन करके अगर अमृतपान करेगे तो जरा समाप्त होगी। १-१० इन्द्र आदि देवगण ने अरविन्द-मन्दिर (ब्रह्मा) को अपना दुख वताया। चतुर्मुख (ब्रह्मा) ने कहा, "हम सब तुरन्त जाकर चन्द्रशेखर (शिवजी) को दुख सुनावे"। तदनुसार जाकर [सबने] कैलासवासी (शिव) की प्रशसा की। उस समय शैलात्मजा (पार्वती) के पति ने निर्जरो (देवो) का दुख देखकर

१ वुढापा

नीलमलपोलें कण्णन् प्रयोगिच्च
वेलु तङ्च्चवन् कालनूपुरिपुक्कान् । ३२
कण्ठ मुरिञ्ञु जयद्रथन्तन्नुटल्
कण्टालुमर्ज्जुननेय्त शरत्तिनाल् । ३३
ॲन्मकळ् दुश्शळ केळुन्नतोर्त्तुळ्ळिल-
लॅन्मनं वेन्तुरुकुन्नु शिव ! शिव ! ३४
द्रोणरें संस्करिच्चोरु निलमता
काणायतारणनायततल्लयो ? ३५
धृष्टतयुळ्ळ धृष्टद्युम्ननेटवुं
शिष्टनायोरु गुरुविनेक्कोल्लुवान् । ३६
मट्टोरुत्तनु तोन्नीटुमो मानसे
मुटुमिवनोळिञ्ञोक्किल् महामते ! ३७
अय्यो ! पुनरतिनङ्ङेप्पुरुत्तता
मॆय्यळकुळ्ळ दुश्शासननॆन्मकन् । ३८
नीयॆन्तिवण्णमॆन् माधव ! काट्टुवान् ?
तीयतु कत्तुन्नितॆन्नुळ्ळिलीश्वरा ! ३९
मारुति कीऱिप्पिळर्न्नु कुटिच्चोरु
माऱिट कण्टाल् पोरुक्कुमो पैतले ! ४०
मारुमो कण्णुनीरिन्निनिक्कुण्टाय-
तारुमो शोकमॆन्मानसे गोपते ! ४१
ॲन्टे मकन् दुरियोधनन्तन्मकन्-
तन्टे शरीरमतल्लो दयानिधे ! ४२

अर्जुन के शर से काटी गई। मेरी पुत्री दुश्शला का विलाप सुन-सुनकर मेरा मन सन्ताप से पिघल रहा है, हे शिव ! शिव ! देखो ! वहाँ वह स्थान है जहाँ उस ब्राह्मण द्रोण का संस्कार किया गया है। २९-३५ यह वह अत्यन्त धृष्ट धृष्टद्युम्न है जिसे छोडकर और किसी को, हे महामते ! अगर सोचा जाय, इस शिष्ट गुरु को मारने की सूझ ही न सकता था। हा ! उसके उस तरफ मेरा पुत्र शोभनशरीर दुश्शासन पडा है। हे माधव ! तुमने मेरे साथ यह सब क्यो किया है ? हा ! भगवान् ! मेरे भीतर दुःख की आग जल रही है। मारुति (भीम) ने जहाँ से उसकी छाती फाडकर रुधिर पिया था वह स्थान देखकर कैसे सहा जाय ! हे गोपते ! मेरे आँसू कैसे सूख सकते है और मेरा शोक कैसे ठण्डा हो सकता है ? और उधर जो पड़ा है वह, हे दयानिधे ! मेरे पुत्र दुर्योधन

लक्षणमुळ्ळोरु पैतलामेन्नुटे
लक्षणा नीयु चतिच्चितो ञङ्ङळे ? ४३
कण्णुकोण्टिङ्ङने काणेणमेन्नतु-
मुण्णिकळेयेनिक्कोन्तितु तोन्नुवान् ? ४४
कर्ण्णनामगनराधिपनेन्नुटे-
युण्णिकळ्क्कोट्टं प्रधाननायुळ्ळवन् ४५
कुण्डलमटता वेरे किटक्कुन्नु
गण्डस्थलमता पिन्नेयुं मिन्नुन्नु । ४६
विल्लाळिकळ्मुन्पनायवन्तन्नुटे
विल्लिता ! वेरे किटक्कुन्नतीश्वरा ! ४७
कण्टाल् मनोहरनामवन्तन्नुटल्
कण्टालुमन्पोटु नायुं नरिकळु ४८
चेन्नु कटिच्चु वलिक्कुन्नितिङ्ङने-
यिङ्ङने वन्नतिल्कारणमेन्तय्यो ! ४९
पूरिच्च खेदाल् कर मटियिल् चेर्त्तु
भूरिश्रवाविन्प्रणयिनि केळुन्नोळ् । ५०
उन्मूलनाशनकारणनाकिय-
दुर्म्मतिवीरन् शकुनियुटेयुटल् ५१
पक्षिकळ्तङ्ङळ्क्कु भक्षणमाक्किनान्
पक्षमायुळ्ळतु कण्टीलयो हरे ! ५२
उण्णी ! मकने ! दुरियोधना ! तव
पोन्निन्किरीटवु भूषणजालवु ५३

का पुत्र नही है ? ३६-४२ हा ! मेरे लक्षणयुक्त बेटा लक्षण ! क्या तुमने भी हम लोगो को धोखा दिया है ? मुझे यह क्यो सूझा है कि मैं वच्चो को इस हालत मे अपनी आँखो देखूँ ? अगाधिप कर्ण जो मेरे पुत्रो का मुख्य पुरुप था वहाँ पडा है अपने कुण्डलो से हीन । फिर भी उसका कपोलस्थल चमक रहा है ।, उस धानुष्को मे श्रेष्ठ का चाप, हे भगवान् ! यहाँ अलग होकर पडा है। उसका देखने मे सुन्दर शरीर जरा देखो ! कुत्ते और सियार उसको काट-काट कर खीच रहे है । क्या कारण है, यह सब हुआ ? ४३-४९ अत्यन्त खेद के कारण हाथ अपनी गोद मे लिए भूरिश्रवा की प्रणयिनी विलाप कर रही है । उन्मूल-नाशन का कारण वीर शकुनि के शरीर को पक्षियों का भोजन बनाया हे हरे ! यह तुमने

उन्पर्कोनोत्तोरु वन्पुं प्रतापवु
गभीरमायोरु भाववु भंगियु ५४
इट्टु कळञ्ञुटनेन्नेयुमेन्नयु-
मिष्टमायीटु पिताविनेत्तन्नेयु ५५
पेट्टेन्नुपेक्षिच्चु पोय्क्कोण्टतेङ्ङु नी ?
पोट्टुन्नितेन्मन कण्टितेल्लामहो ! ५६
पट्टु किटक्कमेले किटक्कुन्न नी
पट्टुकिटक्कुमारायितो चोरयिल् ! ५७
पुष्टकोपत्तोटु मारुति तच्चुटन्
पोट्टिच्चु कालुमोटिच्चुकोण्टिङ्ङने ५८
कण्टुकूटायिनिक्केन्नु गान्धारियुं
मण्टिनाळ् वीणाळुरुण्टाळ् तेरुतेरे । ५९
पिन्ने मोहिच्चाळुणर्न्नाळ् पोटुक्कने
खिन्नतपूण्टु करञ्ञवळ् चोल्लिनाळ्— ६०
इन्न कुटिलतयुण्टायोरुत्तने-
प्पृत्थिवयिलिङ्ङने कण्टील केशव ! ६१
पाङ्ङायोरुपुरं निन्नु नी पोरतिल्
नीङ्ङातभिमानिकळाय भूपरे ६२
रण्टुपुरत्तुमुळ्ळोर्कळेक्कोल्लिच्चु-
कोण्टतु मटारुमल्ल नीयेन्नियें । ६३

नही देखा ? वेटा ! मेरे लाल ! दुर्योधन ! तुम्हारा सुवर्ण का किरीट, आभूपण का समूह, इन्द्र के समान तुम्हारा महत्त्व और प्रताप, तुम्हारा गभीर भाव और तुम्हारा सुन्दर रूप, यह छोड़कर और मुझे तथा अपने प्रिय पिता को झट से त्याग कर तुम कहाँ चले गये ? यह सब देखकर मेरा मन टूट रहा है। ५०-५६ तुम जो रेशम के गद्दे पर लेटते थे अब क्या तुम को रुधिर मे लेटने की नौवत आयी ! वडे क्रोध के साथ भीम ने मारा और जाँघ तोड डाली। मैं यह नही देख सकती हूँ। ऐसा कहती हुई गान्धारी चली गयी, गिरी और लगातार लोटने लगी। तदनन्तर वेहोश हो गयी। फिर होश मे आकर वडे दु:ख के साथ रोने लगी और वोली— हे केशव ! तुम जैसे इतनी कुटिलतावाले और किसी को मैने इस पृथ्वी पर नही देखा है। युद्ध मे तुम एक तरफ होकर दोनो पक्षो के अनेक अटल अभिमान वाले राजाओ को तुम ही ने मरवाया, और किसी ने नही ! ५७-६३ औरो को मैं क्यो कहूँ ? सोचो तो यह

ऎन्तिन्नु मट्टुळ्ळवरॆप्पऱयुन्नु
चिन्तिक्किल् निन् मऱिमायमितॊक्कयुं । ६४
गान्धारि पिन्नॆयुं चॊन्नाळ् मुकुन्दनो-
टान्तरमित्तयुळ्ळोरु नीयुं तव ६५
वंशवुंकूटॆ मुटिञ्ञुपोमिल्लॊरु-
संशयं मून्नु पन्तीराण्टु चॆल्लुम्पोळ् । ६६
अङ्ङनॆतन्नॆ वरेणमॆन्नुळ्ळतु-
ण्टिङ्ङॆनिक्कु मनक्कान्पिल् सुबलजे ! ६७
नन्नायितु भवतिक्कुमिनिक्कुमि-
न्नॊन्नुपोलॆ मतमायतुमीश्वरन् । ६८
तम्मिलीवण्णं पऱयुन्ननेरत्तु
धर्म्मजनोटु चॊन्नान् धृतराष्ट्ररु— ६९
युद्धत्तिल् वीणु मरिच्च नृपरुट-
लॆन्नयुं वैकातॆ संस्करिप्पिक्क नी । ७०
नल्ल कृपरतु चॆय्यिक्कुमॆन्नतु
तुल्यमतियाय धर्म्मजन् चॊल्लिनान् । ७१
बुद्धिविलोचननाय नरपति
युद्धभुविनिन्नु भार्ययु तानुमाय् ७२
हस्तिनमाय पुरिपुक्करुळिना-
नत्तलुमॊट्टु चुरुक्किमरुविनान् । ७३
शुद्धमनस्सहजादियुमायथ
शुद्धमनस्सा नृपति युधिष्ठिरन् ७४

सब तुम्हारी ही माया है । गान्धारी ने फिर कहा मुकुन्द से— इस प्रकार गूढ आशयवाले तुम और तुम्हारा वश नष्ट हो जायेगे, सशय नही, छत्तीस वरस के अन्दर । (तब कृष्ण बोले—) हे सुबल की पुत्रि ! मै भी यही चाहता हूँ । यह अच्छी वात हुई कि भवती का और मेरा आज एक ही मत है । जब कृष्ण और गान्धारी की इस प्रकार आपस मे बात हो रही थी तब धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर से कहा— युद्ध मे मरे राजाओ के शरीर का तुम जल्दी सस्कार कराओ । ६४-७० समबुद्धि वाले युधिष्ठिर ने उत्तर दिया कि साधुपुरुष कृप करावेगे । राजा, जिनकी बुद्धि ही आँख थी, अपनी पत्नी के साथ युद्धभूमि से हस्तिनपुर चले गये और वहाँ दु ख कम करके रहने लगे । शुद्धि चित्त राजा युधिष्ठिर अपने

शुद्धनखण्डन् जगत्परिपूर्णना
भक्तप्रियन् परमात्मा परापरन् ७५
नित्यनां देवकीपुत्रन् निरुपमन्
सत्यस्वरूपननन्तननाकुलन् ७६
निर्ज्जरसेवितन् निष्कळन् निर्ग्गुणन्
निर्ज्जरनायकपुत्रप्रियसखि ७७
चित्तादिकळ्क्कु चेर्न्नेत्तरुतातोरु-
तत्त्वात्मकन् नानातत्त्वस्थितन् परन् ७८
व्यक्तनव्यक्तनसक्तन् भुवनसं-
वृत्तन् विविक्तवासप्रियन् माधवन् ७९
भुक्तिमुक्तिप्रदन् भक्तियुक्तात्मनां
शक्तियुक्तन् महत्तत्वमाकुन्नवन् ८०
वृष्णिवंशोत्भवनाकिय माधवन्
विष्णुभगवान् विरिञ्चहरार्च्चितन् ८१
जिष्णुतनयकराब्जधरनाय्
कृष्णनुंकूटि मोदालेळुन्नळ्ळिनान् । ८२
तङ्ङळ्तङ्ङळ्क्कुचितन्मार्क्कु शिष्टरु
गगयिल् निन्नुदकक्रिययुं चेय्तार् । ८३
मंगल पूण्टु वसिच्चारिनियुटन् शेषं
निङ्ङळोटिन्नु चोल्वान् वेलयुण्टतिनेन्नु
मंगल वन्नीटुकेन्नाळ् मानिच्चु किळिमकळ् । ८४

॥ स्त्री समाप्तं ॥

शुद्धि चित्त भाइयो के साथ शुद्ध, अखण्ड, जगत्परिपूर्ण, भक्तप्रिय, परमात्मा, परापर, नित्य, देवकीपुत्र, निरुपम, सत्यस्वरूप, अनन्त, अनाकुल, देवो के सेवित, निष्कल, निर्गुण, देवो के नायक के पुत्र के मित्र, ७१-७७ चित्त आदि के अगोचर तत्त्व, अनेक तत्त्वो मे स्थित, पर, व्यक्त, अव्यक्त, असक्त, भुवनसवृत्त एकान्तवासप्रिय, माधव, भुक्ति-मुक्तिप्रद, भक्तियुक्तो के लिए शक्तिस्वरूप, महत्तत्त्वस्वरूप, विष्णुवश मे उत्पन्न माधव, इन्द्रपुत्र के करकमलो का अवलवन कृष्ण के साथ प्रमोद के साथ वहाँ सिधारे। औरो ने अपने परिचितो की क्रिया गगाजल से की। तदनन्तर मगल के साथ रहे। कथा के शेष को आज ही कहने मे श्रम होगा। ऐसा कह कर शुकी ने सादर मगलकामना प्रकट की। ७८-८४

॥ स्त्रीपर्व समाप्त ॥

शान्ति

अय्यय्यो ! नन्नु नन्नु भारतकथयितु
नीयिन्नु मटियातॆ चॊल्लणमल्लो शेष । १
पय्युं दाहवुं तीर्त्तु पर्यायत्तोटे मम
पय्यवे संक्षेपिच्चु चॊल्लु नल्लितिहास । २
चॊल्लुवान् वेलयितिन्मेलेटं कथयॆल्लां
नल्लनल्लदध्यात्मज्ञानादिकळाकयाले ३
मल्लारि मधुवैरि माधवननुग्रहाल्
चॊल्लुवन् चुरुक्कि ञान् केट्टुकॊळ्ळुविनॆङ्किल् । ४

धर्म्मपुत्रन्टॆ दुःखवुं सान्त्वनवु

मार्त्ताण्डात्मजनॊटु धार्त्तराष्ट्रन्मारॆल्ला
मार्त्ताण्डात्मजपुरं प्रापिच्चोरनन्तरं १
मार्त्ताण्डात्मजन्कूटॆ मरिच्चुपोयतोर्त्तु
मार्त्ताण्डात्मजसुतनार्त्तियायितु तुलों । २
मार्त्ताण्डोदयं कण्टु धात्रीनिर्ज्जरन्मारु
मार्त्ताण्डसमन्मारां तापसश्रेष्ठन्मारुं ३

शातिपर्व

अहोभाग्य ! यह महाभारत की कथा अच्छी है । जो अवशिष्ट है उसे आज ही बिना बिलम्ब के सुनाओ । भूँख और प्यास दूर करके ढग से तनिक संक्षेप करके इस अच्छे इतिहास को सुनाओ । इस कथा को आगे कहना कठिन है क्योकि उसमे अच्छे-अच्छे अध्यात्मज्ञान भरे हुए है । मल्लारि और मधुवैरि माधव के अनुग्रह से मै सक्षेप करके सुनाऊँगी, आप लोग सुन लीजिये । १-४

युधिष्ठिर का दुःख और सान्त्वना

मार्त्ताण्डात्मज (कर्ण) के साथ धृतराष्ट्र के पुत्रो का मार्त्ताण्डात्मज (यम) की पुरी पहुँचने के बाद मार्त्ताण्डात्मज (कर्ण) के भी निधन को याद करके मार्त्ताण्डात्मज (यम) के सुत (युधिष्ठिर) को अत्यन्त दु ख हुआ, सूर्योदय देख कर धरित्रीनिर्जर (ब्राह्मण) और मार्त्ताण्डसम (सूर्य के समान) तापस श्रेष्ठ जब अपना सन्ध्यावन्दन करके राजा कुन्तीपुत्र

सन्ध्यावन्दन चेय्तु कुन्तीनन्दनभूपा-
लान्तिके चेन्ननेरमासनपाद्यार्घ्यादि- ४
कोण्टु पूजिच्चु नमस्करिच्चु नराधिपन्
कुण्ठनाय् निन्नीटिनाननुजादिकळोटु- ५
मोन्नोळियाते मम दुर्न्नयमेरुकयाल्
कर्ण्णनु मरिच्चितु राज्यलोभत्तालल्लो । ६
कर्ण्णने निरूपिच्चु कण्णुनीरोटुमेवं
खिन्ननाय् श्रीनारदन्तन्नोटु चोन्ननेर ७
कर्ण्णन्तन्नुदन्तमाकर्ण्यतामेन्नालेन्नु
मन्नवन्तन्ने नोक्कि नारदनरुळ्चेय्तु । ८
ब्रह्मास्त्रमपेक्षिच्चानाचार्यनोटु कर्ण्णन्
ब्रह्मज्ञन् भारद्वाजनन्नेरमरुळ्चेय्तु । ९
वेदज्ञन्माक्केयतिन्नधिकारितयुळ्ळु
सूतनाकिय निनक्कतिनिल्लधिकारं । १०
अेन्नतु केट्टु गुरुतन्नोटु पिणङ्ङिप्पोय्
चेन्नु सेविच्चीटिनान् परशुरामन्तन्ने । ११
ब्राह्मणनेन्नु कल्पिच्चवनुं पठिप्पिच्चान्
कार्मुकवेदमेल्लां भार्ग्गवन् मटियाते । १२
गुरुशुश्रूषयुं चेय्तरिके दिनमनु
मरुवीटिनकालं भार्ग्गवन् कर्णनुटे १३

(युधिष्ठिर) के पास गये तब राजा ने उनको पाद्य और अर्घ्य देकर पूजा की और नमस्कार किये और एक न छोड़कर अपने सभी भाइयो के साथ दु:खित खड़े रहे। "मेरे बड़े दुर्नय के कारण तथा राज्यलोभ से कर्ण का भी निधन हुआ।" १-६ जब कर्ण के सबन्ध मे आँसू गिराते हुए और दु:खित होकर राजा ने नारद से इस प्रमार कहा तब नारद ने राजा को देखकर निवेदन किया— "अच्छा तो कर्ण का वृत्तान्त सुन लीजिये।" कर्ण ने अपने आचार्य से ब्रह्मास्त्र सिखाने के लिए प्रार्थना की। तब ब्रह्मज्ञ भारद्वाज (द्रोण) ने उत्तर दिया। केवल ब्रह्मज्ञो को ही उसे सीखने का अधिकार है। तुम तो सूत हो। तुम्हे वह अधिकार नही है।" यह सुनकर कर्ण अपने गुरु से अलग हुआ और जाकर परशुराम की सेवा करने लगा। भार्गव (परशुराम) ने भी उसे ब्राह्मण समझकर विना हिचक के उसको सारा धनुर्वेद पढाया। ७-१२ जब गुरुशुश्रूषा करते हुए कर्ण गुरु के साथ रह रहा था तो एक दिन

मटियिल् तलयुं वच्चुरङ्ङीटिननेर
तुटमेलोरु कीटं कटिच्चान् कर्ण्णनप्पोळ् । १४
उरक्कमुणर्न्नुपों गुरुविनेन्नु पेटि-
च्चुरप्पिच्चिरुन्नु कालिळक्कं वरुत्ताते । १५
चोरयुमोलिच्चितु पारमायतुनेरं
धीरत कण्टु पुनरुणर्न्ननेर रामन्— १६
अन्तणनल्ल भवानसत्यमेन्नोटु व-
न्नोन्तिनु परञ्ञतु वेरुते मूढात्मावे ! १७
चतिच्चु पठिच्चुळ्ळोरस्त्रङ्ङळ् शत्रुक्कळो-
टेतिर्त्तु मुट्टुन्नेरं तोन्नातेपोकयेन्नान् । १८
भीतिपूण्टविटेनिन्नप्पोळे पोयान् कर्ण्ण-
नाधियायितु पारं पिन्नेयुमतु केळ् नी । १९
भूदेवनुटे पशु कोन्नुपोयितु बला-
लातुरचेतस्सोटु शपिच्चु भूदेवनु— २०
भेदमेन्निये निन्नु पोरतु मुरुकुन्पोळ्
मेदिनितन्निल् ताणुपोक तेरुरुळेन्नान् । २१
इन्द्रनुं कवचकुण्डलङ्ङळ् चेन्नु भूदे-
वेन्द्रनायपेक्षिच्चु वाङ्ङिक्कोळ्कयुं चेय्तान्। २२
नन्दनन्मारे मम कोल्लायकेन्नोरु सत्यं
कुन्तियुं चेय्यिप्पिच्चाळ् कर्ण्णनेक्कोण्टु मुन्नं । २३

भार्गव कर्ण के गोद पर सिर रखकर सो गये। तब एक कीड़े ने कर्ण के जाँघ पर काटा। इस डर से कि गुरु की नीद खुल न जाय कर्ण जाँघ को तनिक भी विना हिलाये स्थिर वैठा रहा। रक्त तो खूब बहने लगा। जग कर परशुराम ने कर्ण का धैर्य देखकर कहा— "तुम ब्राह्मण नही हो। तुम ने क्यो आकर मुझ से झूठ बोला था, हे मूर्ख !" जो अस्त्र तुमने धोखा देकर सीखे वे शत्रुओं का सामना करते समय तुम्हें न भाये" ऐसा भी कहा। डर के मारे कर्ण उसी समय वहाँ से चला गया और उसके चित्त मे बड़ा दुःख हुआ। एक वात और सुनो। १३-१९
एक ब्राह्मण की धेनु मारी गयी थी। दुःखित होकर ब्राह्मण ने कर्ण को शाप दिया। "युद्ध के निरन्तर चलते समय तुम्हारे रथ के चक्र भूमि मे दब जायँ ! इन्द्र भी ब्राह्मण का रूप धारण करके उसके पास गया और उसके कवच और कुण्डल माँग लाये। कुन्ती ने पहले ही उससे शपथ कराया था कि वह युद्ध मे उसके पुत्रो को न मारेगा। कृष्ण ने शूर घटोत्कच

शूरनां घटोल्ककचन्तन्ने निग्रहिप्पिच्चु
सारमायिरुन्नवेल् कळयिप्पिच्चु कृष्णन् । २४
निन्दिच्चान् महारथगणने मन्दाकिनी-
नन्दनन्तन्नेक्कर्ण्णन् पिन्नेयु निरूपिच्चाल् । २५
इत्तरं पलपल वस्तुक्कळ् चेय्तिट्टत्ने
मृत्युवन्नकप्पेट्टु मिलपुलनु नूनं । २६
चोरविद्यय्क्कु फलमेतुमिल्लरियेणं
नेरोटे गुरुविनेच्चतियातिरिक्कण । २७
जनिच्चनेरतन्ने विधिच्च मरणत्ते
निनच्चु दु खिक्कुन्न जनत्ते निरूपिच्चाल् २८
ॲनिक्कत्भुतमुण्टाय्वरुन्नु धर्म्मात्मज !
मनक्कान्पिङ्कलतु मायावैभवमल्लो । २९
समरत्तिङ्कलेतु पिन्तिरियाते मरि-
च्चमरत्ववु वाणु सुखिच्चीटुन्नु कर्ण्णन् । ३०
अवने निरूपिच्चु वेरुते वेण्ट दु:ख-
मवनीपते ! भवानज्ञानियल्लयल्यो । ३१
अवनि वळिपोले रक्षिक्क धर्म्मत्तेयु-
मवनीदेव पशुप्रमुख प्रजावृन्द- ३२
मवन चेय्तीटण धरणीपतियाया-
लवने पिन्नेप्परगतियुमुळ्ळ नून । ३३

का कर्णद्वारा निग्रह कराकर कर्ण की शक्ति का नाश कराया। ऊपर से कर्ण ने महारथो की गणना के अवसर पर मन्दाकिनीनन्दन (भीष्म) की निन्दा की। निस्सन्देह इस प्रकार के अनेक काम करने से ही कर्ण का निधन हुआ। २०-२६ चोरी से प्राप्त विद्या का कोई भी फल नही है। सत्य का पालन करते हुए गुरु को धोखा न देना चाहिये। जब मैं उन लोगो को याद करता हूँ जो जन्म के समय ही निश्चित मरण पर दु ख करते है तव मुझे, हे युधिष्ठिर !, आश्चर्य होता है अपने मन मे। अन्ततोगत्वा वह भी तो माया का वैभव है। युद्ध मे कभी पीठ न दिखाकर मरने के वाद कर्ण अमर हुआ और सुख से रह रहा है। हे भूपाल ! उसको लेकर व्यर्थ का दु ख न कीजिये ! आप तो अज्ञानियो मे नही है। भूमि की और धर्म की यथानियम रक्षा करो। जो राजा होकर भूदेव (ब्राह्मण), गाय आदि प्रजागण की रक्षा करता है वही परमगति को प्राप्त करता है, सन्देह नही ! ऐसा कहकर मुनि नारद रवाना हुए, राजा

अॆन्नरुळ्चॆय्तु मुनि नारदनॆळुन्नळ्ळि
पिन्नॆयुं नृपेन्द्रनु वर्द्धिच्चु दुःखमुळ्ळल् । ३४
अन्नेरं भीमसेनन् चॆन्नभिवाद्य चॆय्तु
मन्नवा ! शोकिक्कस्तॆन्नुरचॆय्तीटिनान् । ३५
व्याकुलचेतस्सोटु भीमनोटरुळ्चय्तान्—
शोकनाशनमाय मोक्षत्तॆस्साधिक्केणं । ३६
भोगार्त्थ स्वजनत्तॆयॊक्कवे वधं चॆय्तु
लोकत्तॆ दण्डिप्पिच्चु नरकं वन्नीटातॆ ३७
भोजवृष्ण्यन्धकन्मारालयं तोरुं चॆन्नु
भोजनत्तिनु भिक्षयेटुकॊळ्ळुवन् मेल्नाळ् । ३८
इत्तरं नृपवाक्यं केट्टुतुनेरं भीम-
नुत्तरमुरचॆय्तानॆन्तितु चापल्यङ्ङळ् ३९
शत्रुसंहारं चॆय्तु भूमियॆ वाणीटुवा-
नॆन्नयुं वेलचॆय्केन्नरुळिच्चॆय्तु मुन्नं । ४०
इन्निप्पोळ् भिक्षाटनं चॆय्युन्नेनॆन्नु केट्टु
नन्नितु तोन्नीटुन्नतॆन्नयुमनाशास्यं । ४१
राज्यपालनं चॆय्तु सल्प्रजकळॆयॆल्लां
पूज्यनाय् तुरगमेधादि यागवु चॆय्तु ४२
कीर्त्तियॆ वर्द्धिप्पिच्चु मोक्षत्तॆ प्रापिक्कणं
पार्त्थिवेन्द्रन्मारायालॆन्नल्लो वेदोक्तिकळ् । ४३

के तो चित्त मे दुःख अधिक हुआ। २७-३४ उस समय भीमसेन उनके पास गया और बोला— राजन्! आप दुःख न करे। तब वे व्याकुल भीम से बोले— अब मुझे शोक का नाशक मोक्ष प्राप्त करना है। भोग के लिए अपने ही जन को नष्ट कराया, लोक को दुःख पहुँचाया। अब नरक न हो जाने के हेतु कल ही से भोज, वृष्णि, अन्धक आदिको के घर जाकर अपने भोजन की भीख माँगूँगा। राजा की इस प्रकार की बाते सुनकर भीम ने उत्तर दिया— यह क्या आप चापल्य दिखा रहे है? पहले तो आपने कहा था कि शत्रुओ का नाश करके पृथ्वी पर राज करने के लिए अत्यन्त प्रयत्न करो, आज आप कहते है कि भीख माँगूँगा। यह बिलकुल अग्राह्य बात आपको अच्छी सूझी! राज्य का परिपालन करके, अपनी अच्छी प्रजा की रक्षा करके, पूज्य होकर अश्वमेध आदि यज्ञो के अनुष्ठान के बाद अपनी कीर्ति को बढाना, तदनन्तर मोक्ष प्राप्त करना, भूपालो के लिए तो वेदों ने यही क्रम बतलाया है। ३५-४३ स्वधर्म के

नारायणनोटुणर्त्तिक्क वैकातॅ
सारसलोचनन् ताप कळञ्ञिटुम् । १५
ऍन्नु कलिपच्चवरॉन्निच्चु चॅन्नुटन्
नन्नाय् स्तुतिच्चाऽ मुकुन्दनॅयन्नेरम् । १६
पळ्ळिक्कुरुप्पुणर्न्नाशु मुकुन्दनु-
मल्लल् पोम्मारु तॅळिञ्ञरुळिच्चॅय्तु १७
देवासुरन्मारॉरुमिक्क वैकातॅ
केवल मत्तिनु मन्दर पर्व्वत १८
पाशमाक्किक्कॉळ्क वासुकितन्नॅयु-
माशु मथन तुटङ्ङुकयॅन्नप्पोळ् । १९
नाथनरुळ्चॅय्तवण्णमॉरुमिच्चु
पाथोनिधिमथन चॅय्तनन्तरं २०
जातङ्ङळायुळ्ळ दिव्यपदार्थङ्ङ-
ळादरवोटु यथोचित कैक्कॉण्टार् । २१
ऍन्नतिल् उच्चैश्रवस्सा कुतिरयॅ
वृन्दारकेन्द्रन् परिग्रहिच्चीटिनान् । २२
क्षीराबुराशियिल्निन्नु जनिच्चॉरु
चारु तुरगमामुच्चैश्रवस्सिनु २३

पीडित होकर इस प्रकार आज्ञा दी—"इस बात को विना विलम्ब के नारायण को वताओ। सारसलोचन (विष्णु) तो अवश्य दु:ख को दूर करेगे"। यह कहकर उनके साथ गये और सभी ने मुकुन्द (विष्णु) की पूरी तरह से स्तुति की। ११-१६ अपनी दिव्य निद्रा से जागृत होकर मुकुन्द ने प्रसन्न होकर दु:ख दूर करने के लिए कहा—"देव और असुर तुरन्त ही एक हो जायँ। मन्थ[1] के रूप मे मन्दर पर्वत चाहिए, सर्प वासुकि को पाश[2] वनाइये और जल्दी क्षीरसागर का मन्थन प्रारंभ कीजिये"। नाथ (विष्णु) के कथनानुसार सबने मिलकर क्षीरसागर का मन्थन किया। तदनन्तर जो दिव्य पदार्थ पैदा हुए उनको उन्होने यथोचित सादर ग्रहण किया। १७-२१ उनमे से उच्चै श्रवा नामक घोडे को देवेन्द्र ने ग्रहण किया। तब कद्रू ने कहा—"जिस मनोहर घोडे

१ मथानी २ मथानी की रस्सी।

विप्रन्मारेयुं पशुक्कळेयुं पालिक्कणं
मल्प्रियमतिल्परं मटिल्लेन्नरिञ्ञालुं । ५४
सल्प्रजकळिल् मुन्पु विप्रन्मारवर्क्कोरु-
विप्रियमुण्टाकाते निर्भरं रक्षिक्केणं । ५५
भगवद्वचनपीयूषपानवुं चेय्तु
भगवद्भक्तन् भानुपुत्रनन्दनन् चोन्नान्— ५६
सकलजनङ्ङळ्क्कुमिङ्ङने मतमेङ्किल्
सुखमायात्मतुल्यं पालिक्कां प्रजकळे । ५७
जनकनामंबिकातनयन्नियोगत्ता-
लनुजन्मार्क्कुवेण्टि राज्यत्ते रक्षिक्कुन्नेन् । ५८

युधिष्ठिराभिषेकं

अन्नेरममात्यन्मार् मन्त्रिकळ् सामन्तन्मार्
मन्नवर् पुरोहितन्मार् पुरवासिकळुं १
धन्यन्माराय धरादेवन्मार् मुनिजन-
मेन्निवरोक्क वन्नु निरञ्ञु सभातल । २
वीरनां धर्म्मात्मजनन्नेरमुरचेय्तान्—
वरिक विदुररुं युयुत्सु सञ्जयनु- ३
मरिकेयिरुन्नरनिमिषं पिरियाते
नरपालकनामेन् तातने रक्षिक्कणं । ४

प्रजा मे ब्राह्मण सब से पहले आते है, बिना उनका विप्रिय किये उनकी रक्षा करो। भगवान् का वचनामृत पीते हुए भगवान् के भक्त युधिष्ठिर ने कहा— अगर सब का यही मत है तो मै प्रजा को अपने ही तुल्य समझ कर सुख से पालन करूँगा, पिताअबिका पुत्र (धृतराष्ट्र) की आज्ञा से अपने छोटे भाइयो के लिए राज्य की रक्षा करता हूँ। ५२-५८

युधिष्ठिर का अभिषेक

उन दिनो अमात्य, मन्त्री, सामन्त भूपाल, पुरोहित, नगरवासी, धन्य ब्राह्मण और मुनिजन, इन सब से सभा भर गयी। वीर युधिष्ठिर ने उस समय कहा— आइये विदुरजी, युयुत्सुजी और सञ्जयजी! और निकट मे बैठकर, एक निमिष के लिए भी अलग न होकर मुझ राजा के पिता की रक्षा कीजिये। श्राद्धदेवात्मज (यम का पुत्र-युधिष्ठिर) ने

स्वधर्म्मं कोण्टु साधिक्कुन्नतीश्वरप्रियं
विधर्म्मं कोण्टु साधिक्कुन्नतु नरकवुं । ४४
परिपालनं युद्धमेन्निव कुलधर्म्मं
नरपालकन्मार्क्कतरियाञ्ञल्लयल्लो । ४५
इत्थं मारुति परञ्ञीटिनोरनन्तरं
वृत्रारितनयनुमप्पोळेतन्ने चोन्नान्— ४६
नम्मोटु पलविरोधङ्ङळु चेय्तारवर्
निर्म्मर्यादङ्ङळायिट्टेन्नतुकोण्टल्लयो ४७
जयमुण्टायि नमुक्कीश्वरकारुण्यंको-
ण्टयशस्सुण्टामिनि राज्यत्तेयुपेक्षिच्चाल् । ४८
अर्ज्जुनन् चोन्नवण्णमश्विनीपुत्रन्मारुं
सज्जनमायिट्टुळ्ळोरेल्लारुमुरचेय्तार् । ४९
धर्म्मसूक्ष्मङ्ङळरिञ्ञीटिन पाञ्चालियां
धर्म्मपत्नियुं राज्य परिपालिक्कयेन्नार् । ५०
वेदव्यासनु कृपर् विदुरादिकळेल्लां
मेदिनि पालिक्केन्नु सादरं चोल्लीटिनार् । ५१
देवदेवेशन् कृष्णन् माधवन् वासुदेव-
नंबुजदळनेत्रन् गोविन्दन् विष्णु वाम- ५२
देवसेवितन् मधुसूदनन् नारायणन्
देवकीसुतन्तानुमावोळमरुळ्चेय्तान् ५३

द्वारा ईश्वर का प्रेम प्राप्त होता है और विधर्म के द्वारा नरक भोगना पड़ता है। राजाओ के लिए प्रजापरिपालन और युद्ध, यही कुलधर्म है, यह आप जानते ही हैं। भीम के इस प्रकार कहने के वाद अर्जुन ने भी ऐसा ही कहा। हम लोगो के साथ उन्होने अनेक अत्याचार किये जो मर्यादा के वाहर थे। यही तो कारण था कि ईश्वर के कारुण्य से हम लोगो की विजय हुई। अव अगर राज्य की उपेक्षा होगी तो अपयश होगा। जैसा अर्जुन ने कहा वैसा ही अश्विनी-पुत्रो (नकुल और सहदेव) और अन्य सज्जनों ने भी कहा। धर्मपत्नी पाञ्चाली ने भी कहा— "राज्यपरिपालन करो।" वेदव्यास, कृप और विदुर आदि ने भी सादर 'पृथिवी का पालन करो' ऐसा उपदेश दिया। ४४-५१ देवदेवेश, कृष्ण, माधव, वासुदेव, कमललोचन, गोविन्द, विष्णु, कामदेव का सेवित मधुसूदन, नारायण, देवकीपुत्र ने भी वहुत कहा— व्राह्मणो का और गौओ का परिपालन करो, इससे वढकर मेरा प्रियकर और कुछ नही है। साध्वी

सत्वरं धर्म्मात्मजन् पाण्डवन् कुन्तीपुत्रन्
सत्त्वमानसन् चेन्नु गोविन्दपादांवुजं १६
भक्त्या वन्दिच्चु नमस्करिच्चञ्जलियोटे
चित्तवुमळिञ्ञलिञ्ञार्द्रमाय् स्तुतिचेय्तान् । १७

धर्म्मपुत्ररुटे भगवत्स्तुति

शरणं मम तव चरणांबुजद्वय
शरणं वनमालातुळसीदामप्रिय ! १
शरणमिन्द्रादिवृन्दारकवृन्दनत !
शरणमरविन्दमन्दिरा ! मनोहर ! २
शरणं मुचुकुन्दपरमानन्दप्रद !
शरणं मुरहर ! नन्दनन्दन ! हरे ! ३
शरणमरविन्दमित्र ! चन्द्राक्ष ! विष्णो !
शरणमरविन्दनयन ! मधुरिपो ! ४
शरणमरविन्दनाभ ! नारदसेव्य !
शरणमरविन्दनन्दकचक्रायुध ! ५
शरणं शखधर ! शरणं गदाधर !
शरणं पीताम्बर ! शरणं दामोदर ! ६

विजय प्राप्त करो ! अपने सचिव, भाई, पुत्र और पत्नी के साथ", इस प्रकार के आशीर्वाद देते हुए सभी ब्राह्मणों ने परम आनन्द प्राप्त किया। तुरन्त ही कुन्तीपुत्र, धर्मपुत्र, पाण्डव और सत्त्वमानस युधिष्ठिर ने जाकर गोविन्द के चरणकमलो की भक्ति के साथ वन्दना की और प्रेमार्द्र चित्त से स्तुति की। १०-१७

युधिष्ठिर की भगवत्स्तुति

हे ! वनमाला और तुलसीमाला के प्रेमि ! तुम्हारा चरणकमलद्वय ही मेरा शरण है ! हे इन्द्र आदि देवगणो के वन्दित ! हे ! अरविन्द-मन्दिर ! हे मनोहर ! तुम ही मेरा शरण हो ! हे मुचुकुन्द का परमानन्द देनेवाले ! हे नन्द के पुत्र ! मुर के नाशक ! तुम ही मेरा शरण हो ! हे अरविन्द के मित्र ! चन्द्ररूप आँखवाले ! हे अरविन्दनयन ! हे मधु के शत्रु ! तुमही शरण हो ! हे अरविन्दनाभ ! नारद के सेव्य ! हे अरविन्द, नन्दक (खड्ग) और चक्र धारण करनेवाले, तुम ही शरण हो ! हे शखधर ! तुम ही शरण हो, हे गदाधर ! हे पीताम्बर ! हे दामोदर !

श्राद्धदेवात्मजादि पार्त्थिवादिकळोटु
श्राद्धकर्म्मवुं चेय्तार् मृतरायवर्क्केल्ला । ५
मूर्द्ध्वलोकप्राप्ति वन्नीटुवान् दानङ्ङळु
प्रीत्या चेय्तितु पार्त्थन् धात्री देवन्मार्क्केल्ला । ६
ग्रामङ्ङळ् नगरङ्ङळ् पुरङ्ङळालयङ्ङळ्
कामङ्ङळायतवर्क्केन्तेन्नालवयेल्लां ७
आन तेर् कुतिरकळ् तेरुकळ् पशुक्कळु -
मानन्दमेटमुण्टां क्षेत्रङ्ङळ् पात्रङ्ङळुं ८
तण्टुकळ् पल्लक्कुकळ् दासिकळ् दासन्मारु
कुण्डलादिकळाय मण्डननिकरवु ९
धनधान्यङ्ङळ् सुवर्णादि लोहङ्ङळ् रत्न-
मणिकळ् चेरिप्पुकळ् कुटकळ् वटिकळुं १०
पट्टुकळ् पुटवकळ् पूणुनूल् कृष्णाजिनं
मृष्टमामन्नं बहुव्यञ्जनसमन्वितं ११
चन्दन कळभङ्ङळ् ताबूल क्रमुकवु
कुन्दमाल्यङ्ङळ् शयनासनादिकळ् मटु १२
सन्तोषिच्चलमलमेन्नवर् चोल्लियालु
सन्ततं वारिक्कोरिक्कोटुत्तु धर्म्मात्मजन् । १३
सुचिरं जीव ! जीव ! सतत जय जय !
सचिव सहोदरतनयदारैस्सम । १४
इत्तरमाशीर्व्वादं सतंत चोल्लिच्चोल्लि-
पृथ्वीदेवन्मारेल्ला परमानन्दं पूण्टार् । १५

अन्य राजाओ के साथ उनके लिए श्राद्धकर्म किया जो मर गये थे। राजा ने परलोक की प्राप्ति के लिए ब्राह्मणो को प्रीति से दान दिये। गॉव, नगर, पुरियॉ, आलय, जो कुछ वे चाहते थे वह सब, जैसे हाथी, रथ, घोड़े, गाय, आनन्दप्रद मन्दिर, पात्र, डालाये, पालकियॉ, दासियॉ, दास, कुण्डल आदि आभूषण समूह, १-९ धन और धान्य, सुवर्ण और लोहा, रत्न और मणि, उपानह्, छत्री, यष्टि, रेशम की धोतियॉ और सारियां, यज्ञोपवीत, कृष्णाजिन, स्वादु ओदन और अनेक प्रकार के व्यञ्जन, चन्दन, अन्य सुगन्धिद्रव्य, पान, सुपारी, कुन्द की मालाये, शमन, आसन और अन्य पदार्थ राजा युधिष्ठिर, उनके तृप्त होकर मना करने पर भी, अधिक से अधिक मात्रा मे देते गये। "चिरकाल तक जियो! सदैव

शरणं भरतलक्ष्मणशत्रुघ्नाग्रज !
शरणं विश्वामित्रप्रिय ! राघवराम ! १७
शरणं ताटकारे ! यज्ञपालक राम !
शरणं सुबाहुनाशन ! राघवराम ! १८
शरणं मारीचसेवित ! राघवराम !
शरणमहल्यादुष्कृतनाशनपाद ! १९
शरणं हरशरासनभञ्जनकर !
शरणं सीतापते ! भार्ग्गवदर्प्पापह ! २०
शरणं सीतासुमित्रात्मजन्मानुचर !
शरणं गुहसेव्य ! भरद्वाजाराधित ! २१
शरणं चित्रकूटशिखरितटवास !
शरणं शरभंगत्रिदिवगतिप्रद ! २२
शरणं सुतीक्ष्णसेव्यांघ्रिपङ्कज ! जय
शरण विराधनिग्रहपण्डित राम ! २३
शरणमगस्त्यपादांबुजसेवारत !
शरणं जटायुषालोकितमार्ग्गचरा ! २४
शरणं दण्डकारण्यावासप्रिय ! राम !
शरणं पञ्चवटीनिलय ! राम ! राम ! २५

राघव ! हे राम ! तुम ही शरण हो ! हे भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न के वड़े भाई ! हे विश्वामित्र के प्रिय ! हे राघवराम ! हे तारका के शत्रु ! यज्ञ का रक्षक ! तुम ही शरण हो ! हे सुबाहु का नाशन ! राघवराम ! तुम ही शरण हो ! हे मारीच का सेवित ! राघवराम! तुम ही शरण हो। हे अहल्या के पाप का नाश करनेवाले पादवाले ! हे शिव के चाप का भग करनेवाले ! हे सीतापते ! हे भार्गव (परशुराम) के दर्प को समाप्त करनेवाले ! हे सीता और सुमित्रापुत्र के सेव्य ! हे गुह के सेव्य ! भरद्वाज महर्षि के पूजित ! १५-२१ हे चित्रकूट पर्वत के शिखर पर निवास करनेवाले ! हे शरभग के स्वर्ग जाने की गति प्रदान करनेवाले ! हे सुतीक्ष्ण का सेव्य पादपद्मवाले ! तुम ही शरण हो, तुम्हारी जय हो ! हे अगस्त्य के चरणांबुज की सेवा मे तत्पर राम ! हे विराध के निग्रह मे कुशल राम ! हे जटायु के देखे रास्ते पर चलनेवाले ! हे दण्डकारण्य मे निवास को पसन्द करनेवाले ! तुम ही शरण हो ! हे पञ्चवटी मे रहनेवाले राम ! रावण की वहिन के स्तन के शत्रु ! तुम ही शरण हो ! हे खर के शत्रु ! मारीच को मोक्ष प्रदान करनेवाले ! हे जटायु को अच्छी

शरणं नारायण ! शरणं कृष्ण ! राम !
शरणं धनञ्जयसारथे ! जगत्पते ! ७
शरणं देवपते ! शरण वेदपते !
शरण लोकपते ! शरणं धर्म्मपते ! ८
शरणं सतापते ! शरणं मखपते !
शरणं क्षमापते ! शरण रमापते ! ९
शरण रघुपते ! शरण यदुपते !
शरण वासुदेव ! करुणाजलनिधे ! १०
शरण हृषीकेशा ! मरणविरहित !
शरणं दैत्याराते ! जननविरहित ! ११
शरणं नरकारे ! गरुडद्ध्वज ! विभो !
शरणं विष्वक्सेन ! मत्स्यविग्रह ! हरे ! १२
शरणं जनार्द्दन ! कूर्म्मविग्रह ! हरे !
शरणं चतुर्भुजकोलविग्रह ! हरे ! १३
शरणं घोरनरसिंहविग्रह ! हरे !
शरणं त्रिविक्रम ! वामनमूर्त्ते ! हरे ! १४
शरणं जामदग्न्य परशुराममूर्त्ते !
शरणं दशरथतनय ! रामाराम ! १५
शरणं दशमुखशमन ! राम राम !
शरणं कौसल्यानन्दन ! राघवराम ! १६

तुम ही शरण हो ! हे नारायण ! हे कृष्ण ! हे राम ! हे अर्जुन के सारथि ! हे जगत्पते ! तुम ही शरण हो ! १-७ हे देवपते ! वेदपते ! हे लोकपते ! धर्म्मपते ! तुम ही शरण हो ! हे सज्जनो के पति ! हे यज्ञपति ! हे पृथिवीपति ! हे रमापते ! तुम ही शरण हो ! हे रघुपते ! यदुपते ! हे वासुदेव ! हे करुणासागर ! तुम ही शरण हो ! हे हृषीकेश ! हे मृत्युहीन ! हे दैत्यो के शत्रु ! हे जन्महीन ! हे नरकासुर के शत्रु ! हे गरुडध्वज ! हे विभो ! हे विष्वक्सेन ! हे मत्स्य का रूप धारण करनेवाले ! तुम ही शरण हो ! हे जनार्दन ! कूर्म का रूप धारण करनेवाले ! हे हरे ! हे चार बॉह का सुन्दर शरीर वाले ! तुम ही शरण हो ! घोर नरसिंह के शरीर धारण करनेवाले हरे ! हे त्रिविक्रम ! हे वामनमूर्त्ते ! तुम ही शरण हो ! ८-१४ हे जमदग्नि के पुत्र परशुराम का रूप धारण करनेवाले ! हे दशरथ-पुत्र ! हे रामाओ का प्रिय ! हे रावण का नाश करनेवाले ! राम ! राम ! हे कौसल्यानन्दन ! हे

शरण कृष्ण ! कृष्ण ! शरण कृष्ण ! कृष्ण !
शरण जिष्णुवन्द्य ! शरण जिष्णुसूत !
शरणं कृष्ण कृष्ण ! शरण वृष्णिपते ! ३६
करणमायतु नी कारणमायतु नी
करुणालय ! नाथ ! कर्त्तावायतु नीये । ३७
कर्म्ममायतु नीये कर्म्मियायतु नीये
कर्म्मसाधन नीये कर्म्मसाक्षियुं नीये । ३८
कर्म्मणा फलङ्ङळेदान चेय्ततु नीये
कर्म्मणा फलङ्ङळेभुजिक्कुन्नतुं नीये । ३९
स्तोतावायतु नीये स्तुत्यनायतु नीये
स्तुतियायतुं नीये मतियायतु नीये । ४०
स्मृतियायतुं नीये रतियायतु नीये
नीतियायतुं नीये नेतावायतु नीये । ४१
ज्ञानमायतु नीये ज्ञेयमायतु नीये
ज्ञातावायतुं नीये धातावायतु नीये । ४२
बोधमायतुं नीये बोध्यमायतु नीये
बुद्धियायतुं नीये शान्तियायतु नीये । ४३
शिवनायतुं नीये शक्तियायतु नीये
वेदमायतुं नीये वेद्यमायतु नीये । ४४
माययायतुं नीये विद्ययायतु नीये
बीजमायतुं नीये मुळयायतु नीये । ४५

हे अर्जुन के सारथि ! हे कृष्ण कृष्ण ! हे वृष्णियो के पति ! तुम ही शरण हो ! तुम ही करण हो और तुम ही कारण हो ! हे करुणालय ! हे नाथ ! तुम ही कर्ता हो ! तुम ही कर्म हो और तुम ही कर्म करनेवाले हो ! कर्म का साधन तुम ही हो ! कर्म का साक्षी भी तुम ही हो ! कर्मों का फल देनेवाला भी तुम हो और कर्म्मो का फल भोगनेवाले भी तुम हो ! स्तोता तुम ही हो और स्तुत्य भी तुम ही हो ! स्तुति भी तुम ही हो और मति भी तुम ही हो ! तुम ही स्मृति हो, तुम ही रति हो ! तुम ही नीति हो, तुम ही नेता हो ! तुम ही ज्ञान हो, तुम ही ज्ञेय भी हो ! ज्ञाता भी तुम ही हो, तुम ही धाता हो ! ३६-४२ तुम ही बोध हो और तुम ही बोध्य भी हो, तुम ही बुद्धि हो और तुम ही शान्ति हो ! तुम ही शिव हो और शक्ति भी तुम ही हो, वेद तुम ही हो और तुम ही

शरणं दशमुखभगिनीकुचाराते !
शरणं खराराते ! मारीचमोक्षप्रद ! २६
शरण जटायुपोगतिदानैकरत !
शरणं कबन्धशापापह राम ! राम ! २७
शरण करुणया शवरिगतिप्रद !
शरणं वातात्मजसेवित ! राम ! राम ! २८
शरण सुग्रीवसन्तापनाशनकर !
शरणमगुष्ठप्रेरितदुन्दुभिदेह ! २९
शरणमेकशरनिकृत्तसप्तसाल !
शरण बालिमदशमन ! राम ! राम ! ३०
शरणमृश्यमूकनिलय ! राम ! राम !
शरणं विसर्ज्जितप्लवगबल ! राम ! ३१
शरण हनूमता श्रुतसीतावृत्तान्त !
शरणं जलनिधिरचितसेतो ! राम ! ३२
शरणं विभीषणप्रिय ! राघवराम !
शरणं दशाननवंशनाशन ! राम ! ३३
शरण प्रतिष्ठितशंकरलिंग ! राम !
शरणमग्निशुद्धवल्लभान्वित ! राम ! ३४
शरणं कृताभिपेकाभिरामांग ! राम !
शरण हलधरा ! शरण नीलावरा ! ३५

गति दिलाने मे तत्पर ! हे कबन्ध के शाप को दूर करनेवाले राम ! तुम ही शरण हो ! हे करुणा से शबरी को अच्छी गति देनेवाले ! हे वातपुत्र (हनूमान्) के सेवित ! राम ! राम ! २२-२८ हे सुग्रीव के दु ख का नाश करनेवाले ! तुम ही शरण हो ! हे पॉव के अगूठे से दुन्दुभि के शरीर को फेकनेवाले ! हे एक ही वाण से सात-सात सालवृक्षो को छेदनेवाले ! तुम्हारी शरण हो ! हे बाली के मद का नाशक राम ! ऋष्यमूक मे रहनेवाले ! तुम ही शरण हो ! हे वानरसेना को भेजनेवाले ! हे हनूमान द्वारा सीतावृत्तान्त को जाननेवाले ! हे समुद्र पर सेतु वनानेवाले राम ! हे विभीषणप्रिय राम ! हे राघव राम ! हे रावण के वश का नाश करनेवाले ! हे शिवजी के लिंग की प्रतिष्ठा करनेवाले ! हे अग्निशुद्ध अपनी वल्लभा मे युक्त राम ! हे अभिपेक के बाद दर्शनीय ! तुम ही शरण हो ! हे हलधर ! हे नीलाम्बर ! तुम ही शरण हो ! २९-३५ हे कृष्ण कृष्ण ! कृष्ण कृष्ण ! तुम ही शरण हो ! हे इन्द्र के वन्द्य !

सत्यज्ञानानन्तानन्दामृतामलमेक
नित्यनव्ययन् निराकारनद्वयनजन् ५६
निश्चलन् निरुपमन् निर्म्मलन् निर्व्विकार-
नच्युतनमेयनव्यक्तनाद्यन्तहीनन् ५७
सच्चित्ब्रह्माख्यन् गूढन् कूटस्थन् परमार्थ-
वस्तुतत्वार्थमाय साक्षि सर्व्वात्मा कृष्णन् । ५८
नित्यवुमुणर्न्निरुन्नरुळीटुकवेण
चित्तपङ्कजत्तिङ्कलतिनु वणङ्ङुन्नेन् । ५९
ई स्तुति केट्टु परमानन्दिच्चॆन्नतुपोले
नित्यात्मा निश्चलञ्जनायिरुन्नरुळिनान् । ६०
जीवनॆप्परङ्कलाम्मारुटनुरप्पिच्चु
भाविच्चीटुन्पोळ् ब्रह्मनाडितन्नूटॆयुण- ६१
र्न्नाविर्भावत्तॆत्तॆट्टु शक्तियां जीवात्माविन्-
पावकज्ज्वालासममाकिय तेज.पुञ्ज ६२
नित्यानन्दात्मा परन् तन्नुटॆ तेजस्सिङ्कल्
सत्वर लयिच्चु सर्व्वात्मना विश्वासेन
समस्तकर्म्मसमर्प्पणवुं चॆय्तॊन्निच्चु ६३
तन्नोटु मुन्ने पिरिञ्ञीटिन शक्तियॆक्क -
ण्टन्योन्यमैक्यं प्रापिच्चानन्दिच्चिरिक्कुन्पोळ् ६४
लौकिकात्मना कनिञ्ञवनोटरुळ्चॆय्तान्
योगेशन् तिरुवटि लोकेशन् पीताबरन् ६५

अद्वय, अज, निश्चल, निरुपम, निर्मल, निर्विकार, अच्युत, अमेय, अव्यक्त, अनादि, अनन्त सच्चिद्ब्रह्म, गूढ, कूटस्थ, परमार्थ-वस्तुतत्वार्थ, साक्षी, सर्वात्मा, कृष्ण, सदैव मेरे चित्तकमल मे सन्निहित हो । इस हेतु वन्दना करता हूँ । इस स्तुति को सुनकर नित्यात्मा प्रसन्न सा होकर निश्चल हुए और बोले । जीव को परमात्मा मे स्थिर करने के अवसर पर ब्रह्मनाड़ी के द्वारा जागनेवाली शक्ति को, अर्थात् जीवात्मा के अग्निज्वाला के समान तेज पुञ्ज को नित्यानन्द परब्रह्म के तेज मे लीन करके सर्वात्मना विश्वास के साथ ५६-६३ समस्त कर्मो का समर्पण करके पहले अलग हुई शक्ति को देखकर जव दोनो एक हुई और आनन्द का अनुभव किया तव लौकिक आत्मा के रूप मे दया से भगवान् पीताम्बर और लोकेश वोले— ब्राह्मण और गायो की रक्षा से जो आनन्द मिलता उसका तुल्य

मूलमायतु नीये फलमायतुं नीये
मातावायतु नीये तातनायतु नीये । ४६
सुकृतमायतुं नी दुष्कृतमायतु नी
सुखमायतु नीये दुःखमायतुं नीये । ४७
स्वर्गवुं नरकवु जननं मरणवु
शीतवुमुष्णवुं नी शुक्लवु कृष्णवुं नी । ४८
प्रकृतियायतुं नी पुरुषनायतुं नी
वन्धमायतुं नीये मोक्षमायतु नीये । ४९
बन्धुवायतु नीये शत्रुवायतु नीये
देहमायतु नीये देहियायतुं नीये । ५०
क्षेत्रमायतुं नीये क्षेत्रियायतुं नीये
शास्त्रज्ञनायतु नी शास्त्रङ्ङळायतुं नी । ५१
निष्कळनाकुन्नतु सकळनाकुन्नतु
निर्ग्गुणनाकुन्नतु सगुणनाकुन्नतु ५२
स्थूलमायतुं नीये सूक्ष्ममायतु नीये
योगमायतु नीये योगियायतु नीये । ५३
योगज्ञनाकुन्नतुं युक्तनायीटुन्नतु
जीवनायतु नीये परनायतुं नीये ५४
परमात्मावु परन्पुरुषन् परब्रह्मं
परमन् परापरन् परमानन्दमूर्त्ति ५५

वेद्य हो ! तुम ही माया हो और तुम ही विधा हो । वीज तुम ही हो और अकुर भी तुम ही हो । जड़ तुम ही हो और फल भी तुम ही हो । तुम ही माता हो और पिता भी तुम ही । सुकृत (पुण्य) भी तुम ही हो और दुष्कृत (पाप) भी । सुख तुम हो और दु.ख भी तुम ही हो । स्वर्ग और नरक, जन्म और मृत्यु, शीत और उष्ण, शुक्ल और कृष्ण तुम ही हो । ४३-४८ तुम ही प्रकृति और तुम ही पुरुप, तुम ही वन्ध और तुम ही मोक्ष, तुम ही वन्धु और तुम ही शत्रु, तुम ही देह और तुम ही देही, तुम ही क्षेत्र और तुम ही क्षेत्री, तुम ही शास्त्रज्ञ और तुम ही शास्त्र भी हो । तुम ही निष्कल और तुम ही सकल, तुम ही निर्गुण और तुम ही सगुण, स्थूल तुम ही और सूक्ष्म तुम ही, तुम ही योग भी और योगी भी हो । तुम ही योगज्ञ हो और युक्त भी, जीव तुम ही हो और पर भी। परमात्मा, पर, पुरुप, परब्रह्म, पर और परापर, परमानन्दमूर्ति, ४९-५५ सत्य, ज्ञान, अनन्त, आनन्द, अमृत, अमल, एक, नित्य, अव्यय, निराकार,

नेरे निऱमॅन्तु चॉल्लुकॅन्नाळ् कद्रु
पारं वॅळुत्तॅन्नु चॉन्नाळ् विनतयुम् । २४
ऍन्नालॉरु मऱुविल्लॅन्नतु वरा
निर्णय वालधिक्कॅन्नितु कद्रुवुम् । २५
इल्ला मऱुवतिनॅन्नु विनतयुम्
चॉल्लिनाळेतुमे सशयं कूटातॆ । २६
ऍङ्किल् ञान् निन्नुटॆ दासियाय् वाळुवन्
शङ्कयॉळिञ्ञॅन्नु चॉल्लिनाळ् कद्रुवुम् । २७
उण्टु कळङ्कमॅन्नाकिल् निन् दासियाय्
कॉण्टालुमॅन्नॅयुमॅन्नु विनतयुम् । २८
कोळॆ विपादमॉळिञ्ञिङ्डटङ्डुक
नाळॆ नोक्कामॅन्नु चॉल्लिनाळ् कद्रुवुम् । २९
पिन्नॅस्सुतरोटु वॅव्वेऱॆ चॉल्लिनाळ्
ऑन्नुण्टु चॅय्येण्टु निङ्डळॅन्मक्कळे । ३०
उच्चैश्रवस्सा कुतिरतन्वालूटॆ
निश्चलमायॉरु रोममायुळ्प्पुक्कु ३१
निङ्डळिलेकनॉरञ्जनवर्णत्तॆ-
त्तिङ्ङिङविळङ्ङि वालिन्मेल् किटक्कणम् । ३२

का क्षीरसागर से जन्म हुआ उसका क्या रग है ?" इसके उत्तर मे विनता ने कहा—"उसका रग एक दम सफेद है"। उस पर कद्रू ने कहा—ठीक है, "उसकी पूँछ मे एक काला दाग है"। तव विनता ने नि.शक कहा—"नही, इसमे कोई काला दाग नही है"। कद्रू ने फिर कहा—"अगर सावित हुआ कि नही है तो मै तुम्हारी दासी वनकर रहूगी"। विनता ने भी शपथ किया—"अगर सावित हुआ कि है, तो मुझे तुम अपनी दासी वना लेना"। उस पर कद्रू ने कहा—"आज विवाद वन्द करके चुप रहो, कल देखा जायेगा।" २२-२९ तदनन्तर अपने पुत्रो से अलग-अलग [वुलाकर] कहा—"मेरे पुत्रो ! तुम्हे एक काम करना है। तुम लोगों मे से एक उच्चैश्रवा की पूँछ मे उसका एक वाल वनकर घुस जाओ और वहा अपने अञ्जन (काला) वर्ण के साथ निश्चल होकर विराजो"। उन

ब्राह्मणपशुपरिपालनानन्दत्तोटु
साम्यमाय् मटॊन्निलुमिल्लॊरानन्दमुळ्ळल् । ६६
ऎन्नतुतन्ने निनक्कायतु कुलधर्म्मं
नन्नतुकॊण्टु सेविच्चीटुवानवकाशं ६७
वन्नतु मुन्न चॆय्त पुण्यत्तिन् परिपाक-
मिन्नतुकॊण्टुतन्ने भक्तिविश्वासपूर्व्वं ६८
ऎन्नॆस्सेविप्पान् पात्रमाकयालितिनोळं
धन्यत्वमुण्टो लभिक्कुन्नितन्यन्माकक्कॆ॑टो । ६९
ब्रह्माण्ड निरञ्ञतिन्पुरमे वळिञ्ञीटु
ब्रह्ममा परमात्मावायतु ञानतानल्लो । ७०
स्वधर्म्मकॊण्टु परगतिवन्नीटुं नून
विधर्म्माधर्म्मादिकळ् नरकफलदङ्ङळ् । ७१
आत्मना तुल्यं परिपालिक्कॆन्नरुळ्चॆय्ता-
नात्मारामन् देवकीनन्दनन् वासुदेवन् । ७२
समस्तकर्म्मार्प्पण चॆय्तभिवाद्य चॆय्तु
नमस्ते नारायण ! चरणांबुजद्वय । ७३
समस्तमपराध क्षमस्व लक्ष्मीपते !
शमिच्चीटणं चित्त त्वलपदांबुजद्वन्द्वे । ७४
कनकविरचितमणिशोभित सिंहा-
सनराजितनाय माधवन् तिरुमुन्पिल् ७५
चरणनखमणिकिरणं कलर्न्नीटुं
शिरसा वीणु नमस्करिच्चीटिननेरं ७६

और कोई आनन्द नही है। यही तुम्हारा कुलधर्म हो गया है। यह अच्छा ही हुआ क्योकि इससे तुम्हे पूर्वजन्म के पुण्य के कारण सेवा करने का अवसर प्राप्त हुआ। यही कारण है कि तुम भक्ति और विश्वास के साथ मेरी सेवा करने के लिए अधिकारी हो। इतना धन्य और कौन हुआ है ? ब्रह्माण्ड को भरने के बाद बाहर बहनेवाला ब्रह्म परमात्मा मैं ही हूँ। ६४-७० स्वधर्म के परिपालन से परा गति प्राप्त होती है। विधर्म और अधर्म के आचरण का फल नरक होता है। आत्माराम देवकीनन्दन वासुदेव ने कहा— "प्रजा का अपना ही तुल्य समझकर पालन करो"। तब युधिष्ठिर ने सभी कर्मो का समर्पण करके इस प्रकार वन्दना की। "हे नारायण ! तुम्हारे चरणकमलो को प्रणाम हो ! हे लक्ष्मीपति ! मेरे

सामन्तपुरोहितामात्यमन्त्रीन्द्र पौर-
भूमीन्द्रकुमारकभूसुरादिकळेल्ला ७७
हस्तिनपुरत्तिङ्कलस्तसन्तापं वन्नार्
भक्तभूपनिलनुरक्तमानसन्माराय् । ७८
अभिषेकवुं चेय्तु धौम्यादिजनङ्ङळ्क्कु,
विभवसमुदायदानङ्ङळ् पलवु चे- ७९
य्ताचार्यपुरोहितवयस्यादिकळोटु-
माचारंचेय्तु पाण्डुतन्नुटे गृहं पुक्कान् । ८०
भीमनुं सुयोधनन् तन्नुटे गृहपुक्कु
श्रीमयमतुपोले मट्टु तोण्णूटोन्पतु ८१
विदुरकृपधौम्यविजयादिकळ्क्कायि
सदनं धनधान्यविभवसमन्वित । ८२
तृप्तिपूण्टितु सकल प्रजकळुमेल्ला
दृप्तियुमोरुवनुण्टायतिल्लोरुनाळुं । ८३
नहुषादिकळ् परिपालनं चेय्तपोले
मिहिरात्मजसुतन् परिपालिच्चु नन्नाय् । ८४
कृष्णभक्तरिल् मुन्पनाकिय युधिष्ठिरन्
कृष्णसारथियाय जिष्णुभीमादियोटु ८५

सभी अपराधों को क्षमा कीजिये ! मेरा चित्त तुम्हारे चरणकमलो पड़ने मे आनन्द ले !" जब युधिष्ठिर ने सोने के और मणियो से शोभित सिंहासन पर विराजमान माधव के सन्निधि मे उनके चरणनखो के मणियो की किरणो से प्रकाशित अपने सिर को झुकाकर नमस्कार किया तब सामन्त, पुरोहित, अमात्य, मन्त्रिवर, नागरिक, राजकुमार, ब्राह्मण, ये सब अपना दुःख छोड़कर हस्तिनपुर पधारे। वे सब भक्त भूपति के अनुरक्त थे। ७१-७८ अभिषेक के होने के बाद राजा ने धौम्य आदि जनो को अनेक प्रकार के धनो का दान किया। तदनन्तर आचार्य, पुरोहित, मित्र आदिको के साथ स्नेह व्यवहार करने के बाद पाण्डु के घर सिधारे। भीम तो सुयोधन के श्रीयुक्त घर गया तथा अवशिष्ट निन्नान्नवे घर भी। विदुर, धौम्य, कृप, विजय आदिको को धन और धान्य के साथ भवन दिये। सारी प्रजा तृप्त हुई। दृप्ति (घमण्ड) किसी की भी न हुई। मिहिर (सूर्य) के पुत्र (यम) का पुत्र (युधिष्ठिर) ने, जिस प्रकार नहुष आदि राजाओ ने प्रजापालन किया था, उसी प्रकार किया। ७९-८४ कृष्णभक्तो मे श्रेष्ठ युधिष्ठिर ने कृष्णसारथि अर्जुन और भीम के साथ

कृष्णयां कान्तयोटुं मित्रवर्गङ्ङ्ळोटु
विष्णुमाययेक्कण्टु विस्मयचेतस्सोटु ८६
मन्नवन्मारेयेल्लां तन्नुटे काल्क्कलाक्कि
मन्निटमेल्लां तन्टे कैत्तलत्तिङ्कलाक्कि ८७
सत्यत्ते नाविन्मेलु कृपयेच्चित्तत्तिलु
वृत्तत्ते राजनीतितङ्कलुमाक्कि नित्य ८८
भक्तियेक्कृष्णङ्कलुं कृष्णने मनस्सिलुं
नित्यकर्म्मादिकळे परमात्माविङ्कलु ८९
भूतिये भूविङ्कलुं फालदेशत्तु चेर्त्तु
भूतलमेकच्छत्रच्छायतन् कीळुमाक्कि । ९०
दानवारियेत्तन्टेयुळ्ळिलु करत्तिलु-
मानन्दं वरुमारु चेर्त्तु रक्षिक्कुंकाल । ९१
परिपाल्यकळाकुं प्रजकळ्क्कोन्नुकोण्टु
परितापङ्ङळिल्ल पार्त्थिवगुणङ्ङळाल् । ९२
अतिवृष्टयनावृष्टि वह्निवायुक्कळालु-
मतिक्रूरङ्ङळाय दुष्टजन्तुक्कळालु ९३
सङ्कटमिल्लयाक्कुं भूमियिलोरेटत्तु ।
मरणं वरुवीला बालकन्माक्कुमेङ्ङुं ९४
चौर्यमेन्नुळ्ळ शब्दंपोलुमिल्लेङ्ङुं केळ्प्पान् ।
शौर्यवुमिल्लातेयिल्लारुमे पुरुषन्मार् । ९५

अपनी कान्ता द्रौपदी के साथ, मित्रवर्ग के साथ विष्णु की माया को देखकर विस्मय करते हुए राजाओ को अपने चरणो मे करके सारी पृथिवी को अपने हाथ मे लाकर, सत्य को अपनी जीभ पर, कृपा को अपने चित्त मे और चरित्र को सदैव अपनी राजनीति मे लाकर, भक्ति को कृष्ण पर, और कृष्ण को अपने मन मे रखकर और नित्यकर्मो को परमात्मा मे समर्पित करके भूति को पृथिवी पर और अपने ललार पर रखकर सारी भूमि को एक ही छत्र की छाया मे लिया । जब वे (युधिष्ठिर) दानवारि (कृष्ण) को अपने मन में और हाथ मे साथ ऐसा रखते थे कि उन्हे आनन्द आता था, तब परिपालनीय प्रजा को राजा के गुणो के कारण किसी भी प्रकार के दुःख न हुए । ८५-९२ अतिवृष्टि, अनावृष्टि, वायु, अग्नि, और अतिक्रूर दुष्ट जन्तुओ से पृथ्वी पर किसी को भी कोई दुःख न हुआ । कही भी बालक न मरते थे और 'चोरी' शब्द भी कही न सुनाई देता था । पुरुषों में कोई भी शौर्यहीन न था । और वृक्ष भी सदैव फूल, फ़ल,

कुसुमफलदलपूर्णङ्ङळाये निल्पू
लतकळोटु कूटि वृक्षङ्ङळॆल्लानाळुं । ९६
स्वधर्म्मङ्ङळॆप्परिपालिक्कुमॆल्लावरु-
मधर्म्म काण्मानिल्ला विधर्म्मङ्ङळुमिल्ल । ९७
परद्रव्यत्तिलॊरु काक्षयिल्लॊरुवनु
दरिद्रन्मारुमिल्ल कृपणन्मारुमिल्ल । ९८
गुरुद्रोहिकळिल्ल सुरद्वेषिकळिल्ल ।
गुरुद्रोहवुमिल्ल मानुषर्क्कॊरुनाळु । ९९
सचिवपुरोहितसामन्तसहोदर-
द्विजबाहुजवैश्यपादजादिकळोटु
सुतमागधवन्दिस्तुतिपाठकन्मारुं १००
नादमोहनन्मारा गायकवरन्मारुं
मृदंगपटहादि प्रचण्डवाद्यङ्ङळु १०१
दिक्कुकळ् मुळङ्ङुमारिङ्ङनॆ धर्म्मात्मजन्
मुख्यसेवकन्मारुमाय् सभातलं पुक्कान् । १०२
आस्थानमणिमयमण्डपमध्ये पर-
मास्थया सिंहासन पुक्किरुन्नरुळिनान् । १०३
मार्त्ताण्डकोटिसमतेजसा वासुदेवन्
पार्त्थादिभृत्यन्मारुं सेविच्चारतुनेर । १०४
करणङ्ङळिल् विषयङ्ङळॆ लयिप्पिच्चु
करणङ्ङळॆप्पुनरात्मनि चेर्त्तु नन्नाय् । १०५

पल्लव और लताओ से लदे थे । सब अपने-अपने धर्म का पालन करते थे, अधर्म कही न दिखाई देता था और न विधर्म । परधन की लालच किसी को न थी और न कोई दरिद्र था और न कोई कृपण । कही गुरुद्वेषी न थे और न सुरद्वेषी । मनुष्यो मे तो गुरुद्रोह था ही नही । ९३-९९
सचिव, पुरोहित, सामन्त, सहोदर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, सूत, मागध, वन्दी, स्तुतिपाठक, और नादो द्वारा मोहित करनेवाले गायको के साथ मृदङ्ग, पटह आदि प्रचण्ड वाद्यो के दिशाओ को गुजवाते समय, युधिष्ठिर अपने मुख्य सेवको के साथ सभातल पहुँचे । आस्थान के मणिमण्डप के बीच मे रखे सिंहासन पर सादर बैठकर धर्मपुत्र ने निवेदन किया । एक कोटि सूर्य के समान तेजवाले वासुदेव की अर्जुन और उनके सेवको ने सेवा की । तब विषयो को इन्द्रियो मे लीन करके और इन्द्रियो को आत्मा से

गोविन्दन् समाधियिलुऱप्पिच्चिळकार्ते
भावनापरनाय् नारायणन् वासुदेवन् १०६
ओषधीपतिमुखदीधितिस्मितद्युति-
मोहितगोपवधूसंहतिरतिपति १०७
श्रीपति यदुपति भूपति सतांपति
गोपति मखपति धर्म्मकर्म्मैकपति १०८
विबुधपति वेदपति लोकानां पति-
यदितिसुतापति दहनपितृपति १०९
निऋति सरिल्पति पति सन्ततगति
क्षणदापति पशुपति पार्व्वतीपति ११०
प्रभृतिविशामधिपति सञ्चयपति
विबुधसेनापति विविधगणपति १११
प्रमथपति, यक्षरक्षसापति, भोगि-
पति, गन्धर्व्वपति, सकलप्रजापति ११२
प्रमुखमुनिजनरचितश्रुतितति
प्रणतिनुतिश्रुति प्रीतिपूण्टीटु देवन् ११३
दानवाराति दयावारिधि, मखपति,
सुकृतिजनपति निर्ल्लयन् निरञ्जनन् ११४
निष्कळन् निराकारन् निर्ग्गुणन् निरुपमन्
निश्चलन् निर्व्विकारन् निर्म्मलन् निराकुलन् ११५

जोडकर अपने ध्यान मे स्थिर कर के निश्चल होकर नारायण, वासुदेव भावना पर हुए। १००-१०६ तदनन्तर युधिष्ठर ने चन्द्र के समान शोभावाले मुख से युक्त, अपनी मुस्कराहट से गोपियो के समूह के रतिपति श्रीपति, यदुदति, भूपति, सतापति, गोपति, यज्ञपति, धर्म और कर्म के एक मात्र पति, विद्वानो के और वेदो के पति, लोको के पति, अदितिसुतापति, दहनपति, पितृपति निऋति, सरित्पतिपति, सततगति, निशापति, पशुपति, पार्वतीपति, आदि विशो के पति, सञ्चयपति, देवो के सेनापति, विविध-गणपति, प्रमथपति, यक्ष और राक्षसो के पति, नागपति, गन्धर्वपति, सकल-प्रजापति, प्रमुखमुनियो के रचे श्रुतिसमूह के प्रणामो, स्तुतियो और श्रवण से प्रीत देव, १०७-११३ दानवो के शत्रु, दयासागर, यज्ञपति, सज्जनो के पति, निर्लय, निरञ्जन, निष्कल, निराकार, निर्गुण, निरुपम, निश्चल, निर्विकार, निर्मल, निराकुल, निर्मम, निरामय, निर्विकल्पक, नित्य, सत्य, ज्ञान और आनन्द-स्वरूप अमृत आत्मा की मूर्ति, सत्, चित्, ब्रह्मस्वरूप,

निर्म्ममन् निरामयन् निर्व्विकल्पकन् नित्यन्
सत्यज्ञानानन्दात्मामृताद्वयमूर्त्ति ११६
सच्चिल्ब्रह्मात्मा सत्तामात्रात्मा परमात्मा
संविदेकात्मा परंज्योतिराद्यन्तहीनन् ११७
संवृतन्मायामयनीश्वरनेन्टेयुळ्ळिल्
सन्ततमिरुन्नरुळीटिन नारायणन् ११८
तन्तिरुवटियोटु चोदिच्चु धर्म्मात्मजन् ।
निन्तिरुवटियुटे भक्तन्मारनुदिनं ११९
निन्तिरुवटितन्नेच्चिन्तिच्चु वाळुंपोले
निन्तिरुवटियिरुन्नरुळीटुवानिप्पो- १२०
ळेन्तुकारणमारेद्ध्यानिच्चेन्नरिकयि ।
लाग्रहमुण्टु पारमरुळिच्चेय्यामङ्किल् १२१
केळ्क्कामेन्नतेवेण्टु कारुण्यवारान्निधे !
चोल्लुवनेङ्किलतु केट्टालुं परमार्त्थ १२२
स्वर्ल्लोकनदीसुतनाकिय वसुश्रेष्ठ-
नष्टरागङ्डळेल्लां नष्टमाय् चमञ्ञुळ्ळि-
लष्टांगब्रह्मचर्यनिष्ठयोटनुदिनं १२३
वेदवेदागवेदान्तादिशास्त्रार्थशस्त्र-
वेदिकळ्मुन्पन् विज्ञानाद्ध्यात्मज्ञानत्तोटु १२४
विजयप्रमुक्तास्त्रनिकरतल्पत्तिन्मेल्
विजितकरणनाय् परमयोगत्तोटुं १२५

सत्तामात्र-स्वरूप, परमात्मा, संविदेकात्मा, परंज्योति, आद्यन्तहीन, सवृत, मायामय, ईश्वर, अपने भीतर सदैव विराजमान भगवान् नारायण से पूँछा— "जिस प्रकार आप भगवान् के भक्त प्रतिदिन आप भगवान् का ध्यान करते हुए बैठते है, ११४-११९ उसी प्रकार आप भगवान् भी अब बैठकर विराज रहे हैं, इसका क्या कारण है ? किसका ध्यान आप कर रहे है ? यह जानने की प्रबल इच्छा है ।" "अच्छा, तो बतलाऊँगा ।" "हे करुणासागर ! मैं सावधान सुनूँगा, और क्या !" "अच्छा ! तो मै कहूँगा, परमार्थ सुनलीजिये । स्वर्गङ्गा के पुत्र वसुश्रेष्ठ (भीष्म) ने जब अपने आठो रागो को नष्ट करके, अष्टाङ्ग ब्रह्मचर्य की निष्ठा से युक्त, वेद, वेदांग, वेदान्त आदि शास्त्रो के और शस्त्रो के विद्वानो मे श्रेष्ठ, विज्ञान और अध्यात्मज्ञान से युक्त, अर्जुन के रचे शरतल्प पर इन्द्रियो के विजेता होकर परमयोग करते हुए मूलाधार से सुषुम्ना नाड़ी द्वारा उठती कुण्डलिनी

सुपुम्नानाडियूटे मूलाधारत्तिङ्कल्नि-
न्नेळुन्न कुण्डलिनीशक्तियेक्करयेट्टि- १२६
च्चक्रङ्ङळ् कटन्नु सौदामिनीलतपोले
मुख्यमां ब्रह्मरन्ध्रत्तिङ्कल् चेन्नाशु तट्टि १२७
चन्द्रमण्डलत्तिङ्कल्निन्नोळुकीटुं सुधा-
विन्दुक्कळ् सुपुम्नयिल्निन्नु कीळ्पेट्टुवन्नु १२८
मूलाधारं प्रापिच्चु परमानन्द पूण्टु
कालदेशावस्थादि विस्मृतमनस्सिङ्कल् १२९
ध्येयनामेन्नेक्कण्टु भक्तिविश्वासत्तोटे
मायकूटाते तेळिञ्ञेकमाय् निरञ्ञोक्क- १३०
प्परन्नु विळङ्ङीटु निष्कळस्वरूपत्ते-
त्तिरञ्ञु सकळमाय् पुरुपरूपत्तोटु १३१
तन्नुटे हृदयत्तिलुरप्पिच्चिळकाते
नन्नाय् चेर्त्तुमूलमिळकातिरुन्नु ञान् । १३२

श्रीकृष्णादिकळ् भीष्मरे काणुन्नतिनु पुरप्पेटुन्नतु

शन्तनुतनयन्तन्नन्तर्भागत्तिङ्कल्च्चे-
न्नन्तरंकूटातकण्टिरिक्कुन्नितुमिप्पोळ् । १
अन्तकात्मजसहजामात्यादिकळोटे
शन्तनुतनयनेक्काण्मान् पोकणमिप्पोळ् । २

शक्ति को १२०-१२६ चक्रो को पार कराकर विजली की लता के समान मुख्य ब्रह्मरन्ध्र तक पहुँचाकर चन्द्रमण्डल से टपकते अमृत विन्दुओ को सुपुम्ना नाड़ी से नीचे होकर मूलाधार तक प्राप्त होने पर परमानन्द का अनुभव कर, काल, देश, अवस्था आदि से रहित अपने मन मे मुझ ध्येय को पारकर भक्ति और श्रद्धा के साथ बिना माया के उसी एक तत्त्व को फैल कर व्याप्त और विराजमान उस निष्कल स्वरूप को सकल बनाकर पुरुष का रूप देकर अपने हृदय मे निश्चल और स्थिर कर दिया तव मैं भी निश्चल वैठ गया ।" १२७-१३२

श्रीकृष्ण आदि का भीष्म को देखने के लिए प्रस्थान

अव शन्तनु के पुत्र अपने अभ्यन्तर मे विना भेद के विराजमान है । अब वैकार्यरहित एकनायक कृष्ण ने कहा— "हे युधिष्ठिर! अपने भाई और अमात्यो के साथ शन्तनु के पुत्र को देखने जाना चाहिये । विना विलम्ब

वैकरुतेतुं तेरुपूट्टुकॊन्नरुळ्चेय्तु
वैकार्यरहितनामेकनायकन् कृष्णन् । ३
सहजपुरोहितसचिवसामन्तौघ-
सहितनाय कुन्तीनन्दननोट्टुकूटॆ । ४
द्विजतापसपरिवृतनाकिय देव-
नजनव्ययन् कुरुक्षेत्रत्तिन्नॆळुन्नळ्ळि । ५
भक्तवत्सलनरुळ्चेय्तितु मद्धयेमार्ग्ग
पृथ्वीन्द्रनाय धर्म्मपुत्रनोटोरो पुरा- ६
वृत्तं भूपते ! तातन्तन्नुटॆ नियोगत्ताल्
क्षत्रनाशनन् कॊलचेय्तितु माताविन्नॆ- ७
त्तल्परिभवत्तिनु भूपतिवीरन्मारॆ
कॊल्लोटे मुटिच्चितु मूवेळुवट्ट रामन् । ८
क्षोणीपालकन्मारॆक्कॊन्नुकॊन्नवरुटॆ
शोणितं कॊण्टुण्टाय तीर्थत्तिल् स्नानंचेय्तु ९
मानमेऱिय रामन् पितृतर्प्पणं चेय्तु
रेणुकादेवितन्नॆत्तातनोटुटन् चेर्त्तान् । १०
अङ्ङनेयुळ्ळ तीर्थमिविटे धरापते !
तिङ्ङिनशौर्यमोटे पिन्नेयुं भूपालन्मार् ११
निरञ्ञू दनुजन्मार् पिऱन्नु भूमितन्निल्
मरञ्ञू धर्म्मङ्ङळु कुरञ्ञू कर्म्मङ्ङळु । १२

के रथ तैयार करो" । भाई, पुरोहित, सचिव, सामन्तगण, आदि सहित कुन्तीपुत्र (युधिष्ठिर) के साथ ब्राह्मण, तापस आदि परिवृत देव, अज, अव्यय कुरुक्षेत्र को पधारे । रास्ते मे भक्तवत्सल ने भूपाल धर्मपुत्र को भिन्न-भिन्न प्राचीन कथाएँ सुनाईं, जैसे— "पिता की आज्ञा से क्षत्रियों के नाशक ने अपनी माता का वध किया । १-७ उस परिभव को मिटाने के लिए भूपतिवीरो को परशुराम ने उत्साह के साथ इक्कीस बार समाप्त कर दिया । क्षत्रियो को मार कर उनके रक्त से जो तीर्थ वना उसमे स्नान करके अत्यन्त मानी परशुराम ने अपने पिता का तर्पण किया और (अपनी माता) रेणुका देवी को अपने पिता से फिर मिला दिया । हे भूपाल ! ऐसा तीर्थस्थान यहाँ पर है । तीव्र शौर्यवाले क्षत्रिय फिर पैदा हुए और पृथ्वी पर दानवो का भी जन्म हुआ, धर्मो का लोप हुआ और कर्म कम हुए । अठारह अक्षौहिणियो की सेना लेकर वे अठारह दिनों में सिंहनाद करते हुए यहाँ आये । यह देखो ! रक्त और हड्डियाँ,

आरुमून्नक्षौहिणिप्पटयोटवरिप्पो-
ळरुतिवन्नारिह मूवारुदिनकोण्टे । १३
रक्तवुमस्थिकळु निणवु पिणवुमों-
रुत्तमागादिकळु कण्टितो शिवशिव ! १४
मत्तहस्तीन्द्रन्मारुमुत्तमहयङ्ङळु
चत्तुचत्तोक्क मलच्चितल्लो किटक्कुन्नु । १५

भीष्मसन्दर्शनं

अटुत्तु भीष्मरुटे शयनस्थलमिनि
नटक्क पारिल्क्कटि तेरिल्निन्निरङ्ङेणं । १
सात्यकिधर्म्मात्मजविदुरवेदव्यास-
पार्थदारुकमुनिभूदेवादिकळोटु २
सात्विकन्मारामात्यादिकळोटुकूटि
चित्तकारुण्यावुधि भीष्मरेच्चेन्नुकण्टु । ३
काल्त्तळिरिण कूप्पित्तोळुतु पार्थादिक-
ळास्थया वीणु नमस्करिच्चु वणङ्ङिनार् । ४
कारणनाय कारुण्यामृतांबुधि कृष्णन्
धारणादिकळोटुकूटिय भीष्मरोटु ५
चन्द्रिकामनोहरमन्दहासवु पूण्टा-
नन्दमुण्टाम्मारुळ्चेय्तितु मुकुन्दनुं— ६

शव और शीर्ष यहाँ पड़े है— हा शिव ! शिव ! मत्त हाथी, और उत्तमोत्तम घोड़े यहाँ मरे पडे है उल्टे, देखलो ! ८-१५

भीष्म का दर्शन

अब भीष्म का शयनस्थान निकट ही है। अब हम लोग रथ से उतर कर पैदल चले। सात्यकि, युधिष्ठिर, विदुर, वेदव्यास, अर्जुन, दारुक, मुनि और ब्राह्मणो और सात्त्विक अमात्य आदिको के साथ कारुण्यसागर ने जाकर भीष्म का दर्शन किया। अर्जुन आदिको ने उनके चरणो पडकर सादर वन्दना की। कारण-भूत और कारुण्यसागर कृष्ण मुकुन्द ने धारणा आदि से युक्त भीष्म से, चाँदनी के समान मन्दहास करते हुए आनन्द दिलाने वाले ढंग से कहा— "जो कुछ भी आप को शारीरिक अथवा मानसिक सन्ताप हुआ हो, मुझे

अन्तु मानसमो शारीरमो भवानोरु-
सन्तापमुण्टायतेन्तेन्नोट्टु पऱयण । ७
सम्प्रति तन्पुराने ! सन्तापमटियनु-
ण्टन्पुकळुटल्तोरुमेल्क्कयाल् मट्टोन्निल्ल । ८
प्रत्यह यमनियमासनप्राणायाम-
प्रत्याहारकधारणाध्यानसमाधिया- ९
मष्टांगयोगत्तोट्टुमेन्नेस्सेविक्कुन्नव-
नोट्टुमे सन्तापमुण्टाकरुतोन्नुकोण्टु । १०
अच्छनां शन्तनु तन्नीटिन वरत्तिनाल्
स्वच्छन्दमृत्युवल्लो केवल भवानेन्नाल् । ११
अद्यादि षळ्पञ्चाशदिवसमायुस्सुमु-
ण्टिद्देहमुपेक्षिच्चिट्टेन्नोट्टु पिन्नेक्कूटां । १२
अत्र नाळेक्कु पय्यु दाहवुमालस्यवु
शस्त्रङ्ङळेट नोवु व्रणवु तीरुकेन्नान् । १३
मत्सरादिकळ्दोषं वेर्पेट्ट भवानु आन्
मत्स्वरूपत्तेयुळ्ळवण्णं काट्टुवनल्लो । १४
स्वजनहिंस चेय्तेनेन्नोरु विषादमु-
ण्टजितात्मावामजातारातिक्ककतारिल् । १५
अतिनु वर्णाश्रमधर्म्मनीतिकळोटु-
मितिहासादिकळुमरियिच्चीटवेण । १६

बता दीजिये" । १-७ "हे भगवन् ! इस समय मुझे और कोई सन्ताप नही है सिवाय इसके कि मेरे सारे शरीर मे शर लगे है । (कृष्ण ने कहा—) प्रतिदिन यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधियुक्त अष्टांग योग के द्वारा मेरी सेवा करनेवाले को किसी भी प्रकार का कोई भी सन्ताप न होगा । पर से आप के पिता शन्तनु के दिये वर के कारण आपको केवल स्वछन्द मृत्यु ही हो सकती है"। "आज से छप्पन दिवस की आयु मेरी अवशिष्ट है। तदनन्तर इस देह को छोड़ दूँगा। फिर मुझ से मिल लेना ।" "उतने दिन भूँख, प्यास, आलस्य, शरों के लगने का दर्द और व्रण समाप्त हों ! मत्सर आदि दोषो से मुक्त आप को मै अपना परमार्थ स्वरूप दिखला दूंगा । ८-१४ अजितात्मा अजातशत्रु (युधिष्ठिर) को इस बात का विपाद है कि मैने स्वजनहिंसा की । इस लिए उसको वर्णाश्रमधर्म इतिहासो सहित बतला देना ।" मधुवैरि ने मधुर ढंग से कहा— "आप युधिष्ठिर मतिमान् है । तब अतसी पुष्प के समान शरीरवाले से

मंगलमल्ल चातिक्कॅत्तारयुम् । ३३
ञङ्ङळ्क्कु वेर्रिल्ल निङ्ङळिरुवरुम् ।
निङ्ङळ् तीयिल् वीणु चाकॅन्नाळम्मयुम् । ३४
शापभयकॉण्टतिलॉरुवन् चॅन्नु
शोभतेटीट्टु कळङ्कमाय् मेविनान् । ३५
पिटेन्नाळ् चॅन्नवर् नोक्कुन्ननेरत्तु
कुट्मुळ्ळोरु कळङ्कमुण्टाकयाल् ३६
हास्यभावेन निन्नीटिनाळ् कद्रुवुम्
दास्यभाव पूण्टु वाणू विनतयुम् । ३७
आसुरमानसयाकियकद्रुवा-
लातुरमानसयायाळ् विनतयुम् । ३८
मातुरागस्सुं तॅळिञ्ञितिल्लेतुमे
मातरिश्वाशनेन्द्रोत्तमन्माक्कुंळ्ळिल् । ३९
माधुर्यशीलयायुळ्ळ विनतयु
चातुर्यमुळ्ळॉरु काद्रवेयन्मारँ ४०
सोदरभावं वळर्त्तारिवर्कळुं
भेदहीन वसिच्चार् पलकालवुम् । ४१

सबने इनकार कर दिया और कहा—"किसी की वञ्चना[1] करना अच्छा नही है। आप दोनो [माताएँ] हम लोगों के लिए समान है"। तब माता (कद्रू) ने शाप दिया—"तुम लोग सब अग्नि मे गिरकर मर जाओ"। शाप के डर से पुत्रो मे से एक पूँछ का शोभावाला कलक बन गया। ३०-३५ दूसरे दिन जब दोनो देखने गयी तब पूछ मे कलक होने के कारण कद्रू प्रसन्न होकर हँसी और बेचारी विनता दासी बन गयी। आसुर (दुष्ट) मानस वाली कद्रू के कारण विनता आतुर (दुखित) मानस वाली हो गयी। (कद्रू के पुत्र) पवनाशन[2] तो अपनी माता के पाप को पचा नही सके [और विनता को बता दिया।] माधुर्यशील विनता ने चतुर कद्रू के पुत्रो को आदर के साथ पाला और वे भी विना भेदभाव के बहुत दिन तक सुख से रहे। ३६-४१

---

१ छल, ठगी २ हवा खानेवाले सर्प।

सन्ध्यावन्दनं कळिच्चन्तणरोटु कूटि-
च्चेन्तारिल्मातुपुल्कुं बन्धुकसमाधरन् । २८
कुन्तीनन्दनन्मारु सामन्तवीरादियु
मन्त्रिकळोटु द्विजतापसादिकळोटु २९
शन्तनुपुत्रन्तन्नेक्काणमानायेळुन्नळ्ळि
सन्तोषंपूण्टु वणङ्ङीटिनान् देवव्रतन् । ३०

भीष्मोपदेशं

धर्म्मपुत्रादिकळु गगानन्दनन्चर-
णांबुजं कण्टु नमस्करिच्चु कूप्पीटिनार् । १
धर्म्मपुत्रक्कु गंगादत्तना विष्णुभक्तन्
धर्म्मोपदेश चेय्तीटुन्नुपोलेन्नु केट्टु । २
सम्मोदमुळ्ळल्वलरुं महत्तुक्कळेल्लां
धर्म्मतत्त्ववुं धर्म्मरहस्यङ्ङळुमेल्लां ३
सम्मोहमकन्नुपोम्मारु केळ्क्कणमेन्नो-
त्तुन्मेषं पूण्टु वन्नुनिरन्नु भीष्मान्तिके । ४
भक्तवत्सलनाय भगवन्नियोगत्ताल्
भक्तनां धर्म्मात्मजन् भीष्मरेत्तोळुतुटन् । ५
उपसत्तिने चेर्त्तु चोदिच्चु नृपधर्म्मं-
मुपदेशिक्केन्नरुळ्चेय्तितु भगवानुं । ६

संध्यावदन करके ब्राह्मणो के साथ लक्ष्मी के चुम्बन के योग्य बन्धुकपुष्पसम अधर वाले चले । तदनन्तर कुन्ती के पुत्र सामन्तवीरो, मन्त्रियो, ब्राह्मणो और तापसो के साथ शन्तनु के पुत्र को देखने के लिए पधारे और बहुत प्रसन्न होकर देवव्रत ने उनका अभिवादन किया । २३-३०

भीष्म का उपदेश

युधिष्ठिर आदि ने गगानन्दन (भीष्म) के चरणकमलो का दर्शन करके हाथ जोड़े । विष्णुभक्त गगादत्त युधिष्ठिर को धर्मोपदेश करनेवाले है ऐसा सुनकर सभी बडे लोग अत्यन्त प्रसन्न हुए और धर्मतत्त्व और धर्मरहस्य को अपने सम्मोह को दूर करने के लिए पूर्णरूप से सुनने के उत्साह से भीष्मजी के पास आकर भर गये । भक्तवत्सल भगवान् की आज्ञा से भक्त युधिष्ठिर ने भीष्म जी की वन्दना की । और बड़े आदर के साथ राजधर्म कहने की प्रार्थना की । और भगवान् ने भी उपदेश

मतिमानाय भवान् धर्म्मनन्दननॆन्नु
मधुवैरियुमरुळ्चॆय्तितु मधुरमाय् । १७
अतसीकुसुमसम्मितविग्रहन्‌तन्नो-
टतु केट्टरुळ्चॆय्तु गगानन्दनप्पोळ् । १८
चरणकरपक्षोरहितनायुळ्ळवन्
तरणिरहितनाय्त्तुळ्ळ्ञ्ञु वारान्निधि- १९
तरणं चॆय्तीटणमरनाळिकक्कॊण्टॆ-
न्तरुळिच्चॆय्तीटुन्नतॆन्तॆन्टॆ तन्पुराने ! २०
सम्मोह कलन्नॆटमज्ञानियायुळ्ळ ञान्
धर्म्माधर्म्मादिकळुं विज्ञानज्ञानादियुं २१
ऎङ्ङनॆयरियुन्नु मूढनामटियनो-
टिङ्ङनॆयरुळ्चॆय्ततॆन्तॆन्टॆ भगवाने ! २२
माधवनतुकेट्टु मन्दहासवुं चॆय्तु
सादरमरुळ्चॆय्तु गागेयन्‌तन्नोटप्पोळ् । २३
मट्टॊन्नुं निनयातॆ मत्स्वरूपत्तॆत्तन्नॆ
मुट्टुमात्मनि चिन्तिच्चिन्नेट कळियुन्पोळ् २४
सर्वज्ञत्ववु निनक्कुण्टाकुं नाळॆ ञङ्ङ-
ळुर्व्वीपालकनुमाय् वरुन्नतुण्टुतानुं । २५
अप्पॊळेक्कॆल्ला तॊन्नुमुळ्प्पूविल् निनक्केतुं
तप्पुकूटातॆयॆङ्किलङ्ङनॆतन्नॆ वेण्टू । २६
ऎन्नरुळ्चॆय्तु वेदव्यासधौम्यादिकळो-
टॊन्निच्चु पाण्डवरुमायॆळुन्नळ्ळि नाथन् । २७

गंगापुत्र ने कहा—मैं हाथ, पैर और पक्षरहित हूँ और मेरे पास नाव भी नही है। हे भगवन् ! मुझसे क्या कहा जा रहा है कि मै आधे घटे मे तैरकर समुद्र पार करूँ? सम्मोह के कारण अत्यन्त अज्ञानी मै धर्म और अधर्म, विज्ञान और ज्ञान को कैसे पहचान सकूँगा ? हे भगवन् ! मुझ मूढ से आप कैसे इस प्रकार की आज्ञा करते है ?" १५-२२ यह सुनकर माधव ने मन्दहास किया और गागेय (भीष्म) से सादर निवेदन किया। "और कुछ न सोचिये, केवल मेरे स्वरूप का अपनी आत्मा में ध्यान कीजिये तो आज का दिन समाप्त होते ही आप को सर्वज्ञत्व हो जायगा और कल भूपाल को लेकर हम सब आ जायेगे। तब तक आप को अपने हृदयपुष्प में सब बिना श्रम के आयेगा, और क्या चाहिये ?" ऐसा कह कर वेदव्यास, धौम्य आदिको और पाण्डवो के साथ, नाथ (कृष्ण) सिधारे। तदनन्तर

राजाविनेल्लायिलु परममाय धर्म्म
व्याजमेन्नियेयुळ्ळ परिपालनमल्लो । १७
अतिनु विरोधिकळायुळ्ळ शत्रुक्कळे
वधवु चेय्तु नन्नाय् परिपालिच्चिटेण । १८
दुष्टराय् नित्यमधर्म्मिष्ठन्मारायुळ्ळोरे
नष्टराय् चमच्चु धर्म्मिष्ठन्माराय् मेवीटुं १९
शिष्टरे वळ्ळिपोले रक्षिच्चु दिनंतोरुं
पुष्टियुं निजविषयत्तिङ्कल् वळर्त्तु स- २०
न्तुष्टनाय् पुत्रमित्रकळत्रादिकळोटु
इष्टन्माराय निजसेवकजनत्तोटुं २१
भृत्यसामन्त पुरोहित तल्भटरोटुं
सुवृत्तन्मारामत्यप्रधानन्मारोटु २२
शुद्धरां गणकलेखकन्मारोटुं सदा
सत्वरचारिकळायुळ्ळ चारन्मारोटु २३
शक्तन्माराय सेनानायकन्मारोटु-
मत्युत्तमन्मारायीटुं प्राड्विवाकन्मारोटु २४
शुद्धचेतसा परिपालिच्चु महीतल
शुद्धान्तत्तिङ्कल् सुखिच्चिरुन्नीटेण नृपन् । २५
समस्तप्राणिकळ्क्कु विषयेन्द्रिय देह-
समत्वमुण्टेङ्किलु नृपशासनयाले २६
भुवनमनाकुलतरमाय् वर्त्तिक्केण-
मवनीश्वरन् जगल्प्रत्यक्षेश्वरनल्लो । २७

लिए विरोधी शत्रुओ का वध करके ठीक परिपालन करना आवश्यक है। राजा को चाहिये कि वह सदैव अधर्मिष्ठो को नष्ट करके, धर्मिष्ठ और शिष्टो की नियम से रक्षा करे प्रतिदिन और अपने देश मे रहनेवाले शिष्टो को बढाकर सन्तुष्ट हो जाय। और अपने पुत्र, मित्र, कलत्र आदि के साथ, अपने इष्ट सेवको के साथ अपने भृत्य, सामन्त, पुरोहित और लेखको के साथ, फुर्ती के साथ काम करनेवाले चारपुरुषो के साथ, शक्तिशाली सेनानायको के साथ, और अत्युत्तम न्यायाधीशो के साथ भूमि को शुद्ध मन से परिपालन करके अपने अन्त पुर मे सुख से रहे। यद्यपि सभी प्राणी विषय, इन्द्रिय, और शरीर के विषय मे तुल्य है तथापि राजशासन के द्वारा भुवन को अनाकुल बनाना है। अन्तत राजा तो जगत् का प्रत्यक्ष ईश्वर ही है।

ॲन्तॆन्टॆ भगवाने ! निन्तिरुवटितन्नॆ
कुन्तीनन्दनन्तनिक्कुपदेशिक्के वेण्टू । ७
निन्तिरुवटियरुळ्चॆय्तिट्टु केळ्क्कुन्नाकिल्
सन्तोषं वरुमल्लो संशयङ्ङळुं तीरुं । ८
ॲन्तिनियरुळिच्चॆय्यरुतायवन्नु कर्म्म-
वन्धवुमकन्नानन्द वरुमॆल्लावर्क्कुं । ९
शन्तनुपुत्रनेव चॊन्नतु केट्टु नाथन्
मन्दहासवु चॆय्तु पिन्नॆयुमरुळ्चॆय्तु— १०
ईश्वरवाक्यमॆन्नाय्पोमत्रे ञान् चॊल्लियाल्
शाश्वतधर्म्म भवादृशन्मार् चॊल्क नल्लू । ११
वेदवाक्यङ्ङळ्पोलॆ निन्नुटॆ वाक्यङ्ङळुं
मेदिनितन्निलव्याहतङ्ङळाय् वन्नीटुं । १२
ॲन्नॆल्लामनुग्रहिच्चाज्ञयॆच्चॆय्तनेरं
नन्नायित्तॆळिञ्ञितात्मावु शान्तनवनु । १३
स्वधर्म्मं मुन्पिलरियेण्टुन्नतॆन्नोर्त्तुटन्
मुतिर्न्नु राजधर्म्मं चोदिच्चु युधिष्ठिरन् । १४
परमो धर्म्मो राजाविति वेदज्ञन्मारु-
मुरचॆय्युन्नोरतुकारण गगादत्तन् १५
उरचॆय्तितु राजधर्म्ममॆप्पेरुमप्पो-
ळुरचॆय्वतिनॆळुतल्लिनिक्किवयॆल्लां । १६

करने की याञ्चा की । (भीष्म ने कहा) "हे ! भगवन् ! यह क्या है ! परमार्थ मे कुन्तीपुत्र को आप ही उपदेश करे तो अच्छा हो ! १-७ आप ही का उपदेश सुनने से उनको सन्तोष होगा और सब सशय मिट जायेगे। क्या हुआ कि आप नही बतलाते है ? सब का कर्मबन्ध दूर हो जाता और सब आनन्द प्राप्त करते !" शन्तनुपुत्र की यह बात सुनकर नाथ (कृष्ण) ने मुस्कराकर फिर निवेदन किया— "अगर मैं कहूँ तो वह ईश्वरवाक्य हो जायगा। अच्छा यही होगा कि आप जैसे लोग शाश्वतधर्म बतलावे। आपके वचन वेदवाक्यो के समान इस पृथिवी पर अव्याहृत (अनुल्लघनीय) हो जायेगे।" भगवान् के अनुग्रह सहित आज्ञा करने के बाद भीष्म की आत्मा अत्यन्त प्रसन्न हुई। यह समझ कर पहले स्वधर्म जानना आवश्यक है युधिष्ठिर ने राजधर्म पूँछा। ८-१४ वेदज्ञ कहते है कि राजा ही परम धर्म है। इस लिए गगादत्त ने राजधर्म को उस समय समझाया। कहा— यह सबसे बड़ा धर्म है प्रजा का कपट छोड़कर परिपालन करना। इसके

आचार्यशुश्रूषयु चेय्यण निराशया
स्वाचारनिरतनायिङ्ङने गुरुभक्त्या ३८
गोत्रवु प्रवरवु शाखयु चरणवु-
मोर्त्तु तत्तल् प्रोक्तानुष्ठानङ्ङळोटु कूटि । ३९
विद्यकळ् पतिनेट्टु पठिच्चु पिन्नेस्समा-
वर्त्तनं चेय्वू गोदान कळिच्चनन्तरं ४०
नालुवेदवुमतिनगङ्ङळारु पिन्ने
नालु वेदङ्ङळुपवेदङ्ङळ् नालु नन्नाय् ४१
अभ्यसिच्चाचार्यनु दक्षिणचेय्ताल् पिन्ने
यप्पोळे मुदा गृहस्थाश्रमं कैक्कोळ्ळण । ४२
मट्टुळ्ळाश्रमङ्ङळ् मून्निनुमाधारमल्लो
मुट्टु गार्हस्थ्याश्रममेन्नरिञ्ञनुदिन ४३
इष्टयायनुरूपयायोरु भार्ययोटु
तुष्टनाय् पञ्चयज्ञादिकळु चेय्तु नित्य ४४
संध्यानुष्ठानादियुं वळिये चेय्तुकोण्टु
सन्ततिकोण्टु पितृक्कळ्क्कुळ्ळ कटं पोक्कि ४५
पुत्रन्माक्केल्लामोक्क षोडशक्रियचेय्तु
पुत्रिकळेयु कोटुत्तात्मजन्मारेक्कोण्टु ४६
पुत्रपुत्रार्थं विवाहादिकळ् चेय्यिप्पिच्चु
नित्यवु पितृपूजचेय्तु देवकळ्क्केल्ला ४७

से सभी व्रतो का पालन करना चाहिये। कोई आशा न रखते हुए गुरु की शुश्रूषा करना चाहिये, अपने आचारो मे निरत होकर और गुरुभक्ति के साथ। अपना गोत्र, प्रवर, शाखा और चरण का स्मरण करते हुए उनके लिए कहे गये अनुष्ठानो को पूरा करते हुए अठारहो विद्याओ को पढने के बाद समावर्तन और गोदान करके चारो वेद और उनके छ अग, तदनन्तर चार वेदो के चार उपवेदो को भी ठीक अभ्यास करके अपने आचार्य को दक्षिणा भी देकर प्रमोद के साथ गृहस्थाश्रम प्रवेश करना चाहिये। ३७-४२ यह समझकर कि अवशिष्ट तीनो आश्रमों का यह ग्रहस्थाश्रम ही आधार है। अपनी इष्टा और अनुरूपा पत्नी से सन्तुष्ट होकर प्रतिदिन पञ्च-महायज्ञ करते हुए और क्रम से सध्यावन्दन का अनुष्ठान करते हुए, अपनी सन्तान द्वारा पितरो के ऋण से उऋण होकर अपने पुत्रो को सभी सोलह सस्कारो का अनुष्ठान करके, अपनी पुत्रियो का कन्यादान करके, पौत्रो के जन्म के लिए अपने पुत्रो से विवाह कराकर

ब्रह्मवक्त्रत्तिङ्कल्निन्नुत्भविच्चितु विप्रन्
कर्म्मङ्ङळारुण्टवनरिक युधिष्ठिर ! २८
अध्ययनवुमध्यापनवुं यजनवुं
भद्रयाजनवुं दानप्रतिग्रहङ्ङळुं । २९
आरुं चौल्लुवनहमरिवान् तक्कवण्णं
वेरे नी केट्टुकौळ्क विप्रषळ्क्कर्म्ममेल्लां । ३०
वेदङ्ङळ् पठिक्कयुं पठिप्पिच्चीटुकयु-
मादरवोटु याग चैय्कयुं चैय्यिक्कयुं
दान चैय्कयु मुदा तान् परिग्रहिक्कयु ३१
मिङ्ङने षळ्क्कर्म्मङ्ङळुळ्ळ भूदेवन्माक्कुं
मगल नल्कीटुवानाश्रमं नालुण्टल्लो । ३२
अन्नतिल् ब्रह्मचर्य मुन्पिलेतेन्नु वेदं
नन्नायिप्पठिक्कणमाचार्यकुल प्रापि- ३३
च्चन्ननन्तु भिक्षयेटु गुरुविन् काल्क्कल् नल्कि
त्तन्नियोगत्ताल् वृत्तिकळिच्चोरोरोतरं ३४
सन्ध्यावन्दन कळिच्चग्न्युपस्थान चैय्तु
सन्ततमाचार्यन्तन्नन्तिके वसिक्कण । ३५
भक्तिपूण्टनुशयनासनादियु वेण
नित्यवुं ब्रह्मचर्यचिह्नवुं धरिक्कण । ३६
सुमुहूर्त्तं कौण्टुपनिच्चनाळ्मुतल् पिन्ने-
क्रममौत्तोरो व्रत वळिये कळिक्कणं । ३७

ब्रह्मा के मुख से ब्राह्मण उत्पन्न हुआ और उसके छः कर्तव्य हैं, जान लो, हे युधिष्ठिर ! वे है 'अध्ययन, अध्यापन, यजन, सज्जनो का याजन, दान और प्रतिग्रह ।' २३-२९ छहो को वतलाऊँगा, ताकि तुम जान लो । विप्रों के छः कर्मो को अलग-अलग सुन लो । वेदो को पढना और पढाना, आदर के साथ याग करना और कराना, दान करना और प्रमोद के साथ प्रतिग्रह करना । इस प्रकार छ कर्म वाले ब्राह्मणो की मगलसिद्धि के लिए चार- आश्रम भी है । उनमे पहला तो ब्रह्मचर्य है । इस लिए आचार्य-कुल पहुँचकर वेदो को ठीक से पढना चाहिये । प्रतिदिन भिक्षा मांग लाकर गुरु के चरणो मे समर्पित करना और उनकी आज्ञा से अपनी वृत्ति करना और भिन्न प्रकार के सध्यावन्दन करके अग्न्युपस्थान करते हुए आचार्य के पास ही रहना चाहिये और भक्ति के साथ उनके बाद ही बैठना-लेटना चाहिये । ३०-३६ सुमूहूर्त्त मे उपनयन होने के दिन से ही क्रम

पादान्ते परिचरिच्चानन्दं प्रापिप्पानाय् ।
पापान्तं वरुत्तुन्न तत्वमस्यादि वाक्य ५७
बोधार्त्थं धरिच्चुटनष्टांगयोगत्तोंटु
भेदार्त्थभ्रमं तीर्न्नु मोक्षवु प्रापिच्चीटा । ५८
क्षत्रियन् पिन्ने ब्रह्मबाहुजनवनु क-
र्म्मत्रयतन्नेयुळ्ळू केळ्क्कोटो युधिष्ठिर ! ५९
वेदमोतुकयुमा यागवुं चेय्यामल्लो
सादरं यथापात्रं दानवु चेय्यामल्लो । ६०
मेदिनीश्वरनायालभिषेकवु चेय्यां
मेदिनीपते ! महीनिर्ज्जरमुनीन्द्रन्मार् ६१
समुद्रदिव्यनदीतीर्त्थपुष्कर रत्न-
मुमुळ्ळतोटिन कलशङ्ङळिल् निरच्चुटन् ६२
मणिमन्त्रौषधङ्ङळ्कोण्टु पूजिच्चु नाना-
मणिशोभित मकुटादिभूषणं पूण्टु ६३
शखदुन्दुभिपटहादि वाद्यङ्ङळोटुं
किङ्करभृत्यामात्य मन्त्रिचारन्मारोटु ६४
अन्तिके पुरोहितनुतन्नोटु कूटेच्चेर्न्नु
वेण्तळ वेञ्चामरं वेण्कोटक्कुटयोटु- ६५
मालवट्टवुं कोटि कोटिक्कूरकळोटु-
मान तेर् कुतिर कालाळाय पटयोटु
सेनानायकन्मारां वीरन्मारोटु चेर्न्नु ६६

लिए पाप का अन्त करनेवाले 'तत्त्वमसि' ५०-५७ आदि वाक्यो को धारण करके अष्टाग योग के द्वारा भेदभ्रम को समाप्त करके मोक्ष प्राप्त कर सकता है। क्षत्रिय के ब्रह्मा के बाहु से उत्पन्न होने के कारण तीन ही कर्तव्य है— सुन लो, हे युधिष्ठिर ! वह वेद पढ़ सकता है और यथापात्र सादर दान भी कर सकता है। अगर भूपति हुआ तो उसका अभिषेक भी हो सकता है। हे भूपाल ! ब्राह्मण और मुनीन्द्र समुद्र, दिव्य नदियो और तीर्थो से रत्न भीगे हुए कलशो मे जल भरकर मणि, मन्त्र और औषधों से पूजा करके विविध मणियो से शोभित मुकट आदि भूषण पहन कर शख, दुन्दुभि, पटह आदि वाद्यो के साथ, किङ्कर, भृत्य, अमात्य, मन्त्रि और चार पुरुषो के साथ, ५८-६४ निकट मे अपने पुरोहित को रखकर सफ़ेद पखे, झण्डे का स्तम्भ और अशुक, हाथी, रथ, घोड़े, पैदल सैनिक आदिको के साथ और वीर सेनापतियों के साथ रत्नसिंहासन पर

तृप्तियुं वरुत्तिक्कोण्टतिथिपूजयोटुं
भक्तिकोण्टन्तःकरणप्रसन्नतयोटुं ४८
गृहस्थाश्रम नन्नाय् रक्षिच्चु वळिपोले
महत्वमेरुं वानप्रस्थनाय् चमयेणं । ४९
पत्नियेप्पुत्रन्मारे भरमेल्पिच्चेङ्किलुं
पत्नियु तानुं कूटिप्पोकिलु कणक्कल्लो । ५०
पत्निक्कु रजस्सटङ्ङीटिनाल् वनत्तिङ्क-
लग्नियें मनस्सिङ्कलावाहिच्चाकिलुमां । ५१
क्षेत्रोपवासादियु भूप्रदक्षिणादियु
तीर्थस्नानादियु चेय्तरण्यतन्निल् वाणु ५२
देहत्तें त्यजिक्किलुमामतेन्निये पिन्ने
मोहत्तेयोटुक्किस्संन्यासं कोळ्ळुकयुमा । ५३
नित्यवु चित्तं विषयत्तिङ्कल् विरक्तमाय्
नित्यानित्यादि विवेकत्तोटुमाचार्यनें ५४
भक्त्या वन्दिच्चु शुश्रूषिच्चु चोदिच्चीटुन्पोळ्
नित्यनाकुन्नतात्मावनित्यं प्रपञ्चमे-
न्नुत्तमनाय गुरुवुपदेशिक्कुमल्लो ५५
वेदान्तश्रवणवुं चेय्तुपनिषत्तुकळ्
वेदान्तं वरुवतिन्नभ्यसिच्चाचार्यन्तन् ५६

प्रतिदिन पितृपूजा करते हुए, देवताओ की तृप्ति भी कराकर, अतिथि-पूजा करते हुए भक्ति के द्वारा अपने अन्त.करण की प्रसन्नता वनाकर गृहस्थाश्रम की रक्षा करके अन्तत क्रम से वानप्रस्थ होना चाहिये । ४३-४९ पत्नी के पालन का दायित्व पुत्रो के कन्धे सौपा जा सकता है अथवा पत्नी के साथ वन जाना भी ठीक होगा । अगर पत्नी की रजोशान्ति हो चुकी है तो वन मे अग्नि को अपने मन मे ही आवाहन किया जा सकता है । यह भी हो सकता है कि तीर्थ-स्थानो में उपवासादि करके, पृथिवी की प्रदक्षिणा और तीर्थो मे स्नान करके वन मे ही रहते हुए देहत्याग किया जा सकता है । अथवा अपना मोह त्याग कर सन्यास लिया जा सकता है । सदैव विपयो से विरक्त होकर नित्य और अनित्य के विवेक के साथ अपने आचार्य को भक्ति से वन्दना करके और उनकी शुश्रूषा करने के वाद पूँछने पर उत्तम गुरु तो अवश्य वतला देगे कि आत्मा ही नित्य है और प्रपञ्च अनित्य । वेदान्त को सुनकर और वेदान्त के वोध के लिए उपनिषदो का अभ्यास करके आचार्य के चरणो की परिचर्या करके आनन्द प्राप्त करने के

निरन्ञ पुरि तन्निल् तॆळिन्ञु वसिक्कणं
निरन्न जनङ्ङळुमरिके वसिक्कण । ७७
नित्यवु सामदान भेद दण्डङ्ङळ्कॊण्टु
शत्रुमित्रोदासीनन्मारॆयु वशत्ताक्कि ७८
वच्चुकॊण्टुपायङ्ङळ् नालिनुमुळ्ळ भेद
निश्चयिच्चरिञ्ञुतन् मन्त्रिकळ् चॊल्लुंवण्ण ७९
चॊल्लिय नयङ्ङळारु पिळयातवण्णं
तुल्यचेतसा पतुक्कॆ प्रवर्त्तिच्चीटण । ८०
सन्धियुं विग्रहवु यानवुमासनवु-
मन्तरान्तरा पुनरन्तरविरहितं ८१
प्रवर्त्तिक्केणं द्वैधीभाववुं तिरियेणं
निवर्त्तिक्केणं पुनराश्रयपूर्व्वमॆटो । ८२
नालुपायङ्ङळ्कॊण्टुमारु नीतिकळ् कॊण्टुं
कालदेशावस्थानुरूपमाय् प्रवर्त्तिच्चाल् ८३
शत्रुभूपालन्मारॆज्जयिच्चु भूमण्डलं
हस्तसंस्थितमाक्किशिक्षिच्चु रक्षिक्कणं । ८४
अश्वमेधादियाय यज्ञङ्ङळॆल्लां चॆय्तु
विश्ववु तन्टॆ कीर्त्तिकॊण्टुटन् परत्तेणं । ८५
धनधान्यादिकळुं ब्राह्मणर्क्कनुदिन
मानसे कनिञ्ञु नल्कीटण विष्णुबुद्धचा । ८६

और दण्ड के द्वारा शत्रु, मित्र और उदासीन को अपने वश मे रखे। ७३-७८ और चारों उपायो का परस्पर भेद ठीक समझ कर, अपने मन्त्रियो के कथन के अनुसार ऐसा समबुद्धि से व्यवहार करना चाहिये कि उक्त छः नयो का उल्लङ्घन न होवे। सन्धि, विग्रह, पान, आसन, इन चारों का बीच-बीच मे सही प्रयोग करना चाहिये, द्वैधीभाव को भी समझना चाहिये और आश्रयसहित कामो से निवटना चाहिये। अगर भूपाल चार उपायो और छ. नीतियो के अनुसार, काल, देश और अवस्था के अनुगुण व्यवहार करे तो शत्रु राजाओ को जीतकर भूमण्डल को अपने वश मे लाकर दण्ड से-रक्षा कर सकेगा। अश्वमेध आदि यज्ञो का अनुष्ठान करके अपनी कीर्ति को सारे विश्व मे फैलाना चाहिये। ७९-८५ और ब्राह्मणो को प्रतिदिन उनको भगवान् विष्णु समझकर धन और धान्य प्रेम से दान करना चाहिये। और रात्रि के अन्तिम याम मे जागकर भक्ति

रत्नसिंहासनत्तिन्मेलाम्मारिरुन्नुटन्
पत्नियें वामभागे चेर्त्तभिषिक्तनायाल् ६७
शत्रुक्कळ् वरायवतिन्नायोरु कोट्टु चम-
च्चुत्तमराजगृह मद्धये तीक्कंयुं वेण । ६८
भित्तिकळ्तोरु दिव्यमूर्त्तिकळुटे रूपं
चित्रमायेंळुति वेंण्माळिककळु वेणं । ६९
पर्व्वत वन जल पूर्ण्णवाहिनि वेणं
पोय्वळिकुळि यन्त्रप्पालङ्ङळ् किटङ्ङुकळ् ७०
अळविल्लात वेंळ्ळु निरञ्ञ किटङ्ङुकळ्
कुळङ्ङळ् नानावर्ण्ण मरुवु गृहङ्ङळु ७१
अरयाल् पेरुम्तेरुवुद्यान नटक्कावुं
करिकळ् कुतिरकळ्क्कुळ्ळ पन्तिकळ् वेणं । ७२
वळञ्ञ मतिल् कल्लामन्पऱकळुं वेणं
विळङ्ङीटिन सभातलवुमास्थानवुं । ७३
मन्त्रशालकळोटु नाटकशालकळुं
चन्तमोटन्तःपुर चन्द्रिकाङ्कणङ्ङळु ७४
सूत मागध वन्दि स्तुतिपाठक चार-
दूत गायक कुशीलवसेवकगृह ७५
नर्त्तकीयुक्तन्मारां नर्त्तकप्रवरन्मार्
चित्तकौतुकत्तोटुं वर्त्तिक्कुं गृहङ्ङळुं ७६

वैठकर पत्नी को अपने वामभाग मे रखकर अगर अभिषिक्त हो जाय तो शत्रुओ को रोकने के लिए एक दुर्ग वनाकर और उसके वीच मे एक राजगृह भी वनवाना चाहिये। हर एक दीवार पर दिव्यमूर्तियाँ भी चित्रकारो से वनवाना चाहिये और सफेद प्रासाद भी चाहिये। पर्वत और वन के जल से भरी नदी भी चाहिये। कृत्रिम मार्ग, यन्त्र के पुल, अपरिमित जल से भरी खाइयाँ, तालाव, मरुभूमि, गृह, वरवृक्ष, राजमार्ग, उद्यान, वृक्षो से शोभित मार्ग, हाथी, घोड़े और उनके निवासस्थान भी चाहिये। ६५-७२ वक्र दीवार और इपुधि भी चाहिये। चमकनेवाले सभास्थान, आस्थानमण्डप, मन्त्रशालाएं और नाटकशालाएं, दर्शनीय अन्तःपुर, चाँदनी भरे आङ्गण, सूत, मागध, वन्दि, स्तुतिपाठक, चारपुरुष, दूत, गायक, कुशीलव और सेवको के गृह, नर्तकियो के साथ नर्तकवरो के रहने के लिए गृह चाहिये। राजा को चाहिये कि वह भरे नगर मे प्रसन्न होकर वास करे। स्निग्ध जन निकट रहे। सदैव साम, दाम, भेद

गरुडोत्पत्ति

अञ्ञूरु वत्सरमिङ्ङने चॆन्नना-
ळञ्जसा भिन्नमायी विनताण्डवुम् । १
कल्पान्तपावकनॆन्नमरौघवु
कल्पिच्चु भीत्या मुनिवरन्मारुमाय् । २
आश्रयमॆन्तु लोकत्तिनॆन्नोर्त्तव-
राश्रयाशस्तुति चॆय्तार् पलतरम् । ३
मत्प्रभयल्ला भयप्पॆटाय्विन् गरु-
डप्रभयॆन्नरुळ्चॆय्तितु वह्नियुम् । ४
अप्पोळ् मुनिकळु देवसमूहवु-
मद्भुतपूण्टु गरुडस्तुतिचॆय्यतार् । ५
वेदत्रयमोटु देवत्रयमतु
पादत्रयवु पदत्रयवु नीये । ६
नामत्रयवु वर्णत्रयवु नीये !
ज्योतिस्त्रयवुमग्नित्रयवु नीये । ७

गरुड़ की उत्पत्ति

इस प्रकार पाच सौ वर्ष व्यतीत होने पर विनता का दूसरा अण्डा फूट पडा। देवगण और मुनीन्द्रो ने भय के कारण कल्पना की कि कल्पान्त का अग्नि ही आ गया है। 'इस लोक का अव क्या आश्रय होगा' ऐसा सोच कर उन्होने आश्रयाश (अग्नि) की तरह-तरह की स्तुति की। तव अग्नि ने कहा—"यह मेरी प्रभा नही है, यह गरुड की प्रभा है"। यह सुनकर मुनि लोग और देवगण आश्चर्यचकित होकर गरुड़ की स्तुति करने लगे। १-५ "वेदत्रयी[1] के साथ देवत्रय[2] और पादत्रय[3] और पदत्रय[4] तुम ही हो। नामत्रय[5] और वर्णत्रय[6] तुम ही हो। ज्योतित्रय[7] और

---

१ ऋक्, यजु, साम २ ब्रह्मा, विष्णु, शिव ३ गायत्री छद के प्रथम, द्वितीय, तृतीय पाद ४ भू, भुव, स्व ५ राम, वलराम, परशुराम ६ अ, उ, म् ७ सूर्य, चन्द्र, अग्नि।

रात्रियिल् चरमयामादिक्कु निद्रयुण-
र्न्नास्थया सन्ध्योपस्थानादिकळेल्ला चेय्तु ८७
मृष्टमाय् पुरोहित मित्र सेवकप्रमु-
खेष्टन्मारोटुकूटिब्भोजन कळिच्चुटन् ८८
वेगेन भूपालनेक्काण्मान् वन्नवर्क्केल्ला
वैकाते काण्मान् तक्कवण्णमास्थान पुक्कु ८९
सभ्यन्मारोटु चेर्न्नु धर्म्माधर्म्मङ्ङळ् चिन्ति-
च्चेप्पोळुं विनीतनायप्रिय परयाते ९०
कृत्याकृत्यङ्ङळरिञ्ञुत्तमचित्तन्मारा
विद्वान्मारोटुं निरूपिच्चोन्नुं पिळयाते ९१
सत्यमाय् प्रियहितमायतिमधुरमाय्
हृद्यमाय् गभीरमायीटिनवाक्कुकळु ९२
अल्पशब्दंकोण्टनल्पार्त्थमायेल्लावर्क्कुं-
मुळ्प्पूवुविरिञ्ञीटुमारु सन्तुष्टया चोल्लि- ९३
स्सकलजनत्तेयु तन्कले रञ्जिप्पिच्चु
निखिलभोगमनुभविच्चु सुखिक्कण । ९४
आश्रितन्मारिल् ञानुमोरुत्तनेन्नु कलिप-
च्चीश्वरार्प्पणबुद्धया कर्म्मङ्ङळेल्ला चेय्तु ९५
वृद्धनाकुन्न नरन् धर्म्मत्ते रक्षिप्पानाय्
पुत्रनेयभिषेकं चेय्यण मटियाते । ९६

के साथ सध्योपासना आदि कर्म करके पुरोहित, मित्र, सेवक-प्रमुख और इष्टजनो के साथ मृष्ट भोजन करना चाहिये। तदनन्तर राजा का दर्शन देने हेतु आस्थानमण्डप में प्रवेश करके सभ्यो के साथ धर्म और अधर्म पर विचार करके और सदैव विनीत होकर और कदापि बिना अप्रिय कहे उत्तम चित्तवाले विद्वानो के साथ विचार करके बिना भूल किये कृत्य और अकृत्य को ठीक समझ कर सत्य, प्रिय, हित, अतिमधुर, हृद्य और गभीर वाते अधिक अर्थवाले स्वल्प शब्दो मे सब के हृदय को विकसित करनेवाले ढग से कहकर सारी जनता को अपने पक्ष मे लाकर सभी भोगो का अनुभव करते हुए सुख से रहना चाहिये। ८६-९४ अपने को भी आश्रितो मे एक समझकर सभी कर्म्मो को ईश्वरार्पण की बुद्धि से करते हुए वृद्ध राजा को चाहिये कि वह धर्म की रक्षा के हेतु अपने पुत्र का अविलम्ब ही राज्याभिषेक करावे। सभी पदार्थो का त्याग करके

समस्तपदार्त्थंवु त्यजिच्चु मनस्सिङ्कल्
समत्वबुद्धया योगं धरिच्चु वसिच्चुटन् । ९७
त्यजिच्चीटण देहं परमात्मनि चेर्न्नु
भजिच्चीटणं परमानन्दमजातारे ! ९८
ब्रह्मन्तन्नूरुविङ्कल्‌निन्नुण्टायतु वैश्यन्
कर्म्मङ्ङळ् मिक्कवारुं मून्नुमुण्टवनॆटो । ९९
पशुपालनं कृषि वाणिभमिवयॆल्ला-
मशुभमणयातॆ चॆय्यणमूरुव्यनुं । १००
द्रव्यवुमुण्टाक्कणं मट्टुळ्ळ वर्णिकळ्क्कुं
सर्व्वकर्म्मङ्ङळ्क्कुमूरव्यनॆन्नरिक नी । १०१
ब्रह्मन्तन्नंघ्रिजातनायतु शूद्रनल्लो
कर्म्मवुमवनेतुमिल्लल्लो निरूपिच्चाल् । १०२
दासनाय् द्विजकुलपादसेवयु चॆय्तु
वासनयाले तेषां वृत्तियुं रक्षिक्कणं । १०३
ब्राह्मणाज्ञया यज्ञपशुहिंसयु चॆय्ताल्
काम्यमायुळ्ळतॆल्ला साधिक्कामनुग्रहाल् । १०४
राजाविनोटु वृत्तिक्कर्त्थंवु वाङ्ङिप्पिन्नॆ-
याजियिल् मरिक्कयु कॊल्कयुं चॆय्यामल्लो । १०५
ऊरुजनियोगत्ताल् वाणिभकृष्यादिकळ्
नेरोटॆ चतियातॆ चॆय्तु वृत्तियु कऴि- १०६

अपने मन मे समत्वबुद्धि रखते हुए योग करके और देहत्याग करके परमात्मा से एक होकर, हे अजातशत्रु ! परमानन्द को अपनाना चाहिये । वैश्य तो ब्रह्मा के जाँघ से उत्पन्न हुआ और प्राय: उसके तीन कर्तव्य होते है। पशुपालन, कृषि और वाणिज्य । इस ऊरुज को चाहिये कि विना अशुभ का अवलम्बन किये ये तीनो कर्तव्य करे । जान लो कि वैश्य को चाहिये कि वह अन्य वर्णो के लिए और सब कर्मो के लिए द्रव्य पैदा करे। ९५-१०१ ब्रह्मा के पाँव से तो शूद्र पैदा हुआ । सोचो तो उसका कोई विहित कर्तव्य नही है । दास वनकर द्विजो की पादसेवा करता हुआ वह स्वभाव से ही उनकी वृत्ति की रक्षा करे । अगर वह ब्राह्मण की आज्ञा से यज्ञपशुहिंसा करे तो उसके अनुग्रह से अपनी इच्छाओ की पूर्ति कर सकता है । अपनी जीविका के लिए राजा से अर्थ लेकर उसका कर्तव्य है कि वह युद्ध में मारे और मरे । वैश्य की अनुमति से वह वाणिज्य और कृषि बिना वेईमानी के करके और अपनी वृत्ति का निर्वाह करके किसी-

च्चारोट्टुमोरुवैरंकूटाते परिचरि-
च्चारणक्कोरु दु.ख काणुन्पोळतु तीर्प्पान् १०७
प्राणत्यागवु चेय्तु सल्गतिलभिक्केणं
प्राणिस्तोमत्तेप्पालिच्चीटण विशेषिच्चु । १०८
मन्त्रमुच्चरियाते श्राद्धवुमूट्टीटणं
तन्त्रवु काट्टिटेणमन्तरात्मनि भक्त्या । १०९
अक्षरानभिज्ञत्वमज्ञत्वं मूढत्ववु-
मक्षरव्यक्तिविहीनालापङ्ङळुमेल्लां ११०
शूद्रधर्म्मङ्ङळेन्नु धरिक्क युधिष्ठिर !
शूद्रनु भागिनेयन् पिण्डकर्त्तावायतु
शूद्रनु गतिवरुत्तीटुवानेळुतल्लो । १११
स्त्रीधर्म्म मिक्कवारुं शूद्रधर्म्मत्तेप्पोले
भेदवु पेरिकेयिल्लरिक युधिष्ठिर ! ११२
श्रेणिधर्म्मङ्ङळ परञ्ञीटुवान् कालपोर
वाणीभगियुमिनिक्किल्लल्लो चोल्लीटुवान् । ११३
धर्म्मपुत्रर्क्कु राजधर्म्ममार्ज्जिच्चु भीष्मर्
निर्म्मलन् वर्णाश्रमधर्म्मवुमरियिच्चु । ११४
पिन्नेस्संकीर्ण्णधर्म्मङ्ङळेयुमरियिच्चु
पुण्यवान् पिन्ने श्रेणीधर्म्मवुमरियिच्चु । ११५

से भी वैर न करके परिचर्या मे लग जाय। अगर वह ब्राह्मणो को दु.ख देखता है तो उसे दूर करने के लिए प्राणत्याग तक करके अपनी सद्गति प्राप्त करे। उसको चाहिये कि वह विशेषत: प्राणिसमूह की रक्षा करे। १०२-१०८ मन्त्रोच्चारण के बिना श्राद्ध भी मनावे और भक्ति के साथ तन्त्र (क्रिया) का अनुष्ठान करे। अक्षर न जानना, अज्ञ होना, मूढ रहना, और अक्षरो की स्पष्टता के बिना बोलना, यह हे युधिष्ठर! जान लो, शूद्र धर्म है। उसका भाञ्जा ही उसका पिण्ड देनेवाला है। इस लिए आसानी से उसकी गति अच्छी होती है। स्त्रियो का धर्म अधिकाश शूद्रधर्म के समान है। अधिक भेद नही है, जानलो, हे युधिष्ठिर! श्रेणियो का धर्म कहने के लिए समय नही है। ऊपर से कहने के लिए मेरी वाणी मे सौन्दर्य भी नही है। भीष्म ने युधिष्ठिर को राजधर्म बतलाया और उस निर्मल पितामह ने वर्णाश्रमधर्म भी सुनाया और तत्पश्चात् श्रेणीधर्म का भी उपदेश किया। १०९-११५ जब कोई शक्तिशाली प्रबल नृपश्रेष्ठ किसी दुर्बल

दुर्ब्बलनाय नृपन्तन्नोटु युद्धत्तिनु
केल्पेरुं प्रबलनायीटिन नृपश्रेष्ठन् ११६
भाविच्चु वरुन्नेरं दुर्ब्बलन्तन्टे धर्म्म-
मेवमेन्नेल्लामरियिच्चितु देवव्रतन् । ११७
ओरोरोपरमेतिहासङ्ङळ्कोण्टु पुन-
रोरोरो नयङ्ङळ् सन्ध्यादिकळरियिच्चु । ११८
रण्टिल्लंतन्निल् वन्नु जनिच्चु मरिच्चीटुं
कुण्ठभाववुं कुण्टिल् वीळुन्नप्रकारवु
इण्टल् पोम्मारु दण्डधारिजनोटु चोन्ना । ११९
निङ्ङने भीष्मर्पोक्कल्निन्नु धर्म्मजनृपन्
मगलराजधर्म्म केट्टु कूटियवारु १२०
पार्त्थिवन् भीष्मर्सकाशत्तिङ्कल्निन्नु पोयि
रात्रियिल् विदुरपञ्चमन्मारायमेवीटु १२१
भ्राताक्कळोटुं कूटिस्सादरं निरूपिच्चु
सोदरन्मार्क्कु मोक्षधर्म्म केळ्प्पतिनिप्पोळ् १२२
चिन्तिच्चालधिकारमुण्टो इल्लयो निङ्ङळ्-
क्कन्तरमन्तःकरणत्तिनेतानुमुण्टो ? १२३
बन्धमोक्षङ्ङळुटे कारण चोदिच्चप्पो-
ळन्धकारङ्ङळकन्नोरु सोदरन्मारुं १२४
उत्तरं परञ्ञतु केट्टप्पोळरियायि
चित्तशुद्धियुं तेषा भक्तियुं विश्वासवुं । १२५

राजा की ओर युद्ध करने के लिए बढ़ता है तो दुर्बल का क्या धर्म है, यह सब देवव्रत ने बता दिया। विविध इतिहास सुनाते हुए सन्धि आदि विविध नीतियो का उपदेश किया। दो परिवारो के बीच वैमनस्य का पैदा होना, फिर नष्ट होना, दोनो का गर्त मे गिरना, यह सब युधिष्ठिर से कहा ताकि उनका दु.ख नष्ट हो जाय। इस प्रकार युधिष्ठिर ने भीष्म से मगल-राजधर्म सुन लिया। तदनन्तर राजा भीष्म के पास से चले गये। और रात मे विदुर के साथ रहनेवाले अपने चार भाइयों के साथ विचार किया कि अपने भाइयो का अब मोक्षधर्म सुनने का अधिकार है कि नही। उनसे पूँछा—क्या अपने अन्त करण मे कुछ अन्तर है कि नहीं ? ११६-१२३ जब बन्ध और मोक्ष का कारण पूँछा तब अन्धकार से युक्त भाइयो ने जो उत्तर दिया उसे सुनकर मालूम हुआ कि उनकी चित्तशुद्धि है, और भक्ति और विश्वास। युधिष्ठिर ने जान लिया

मोक्षधर्म्मङ्ङळ् केळ्प्पानधिकारिकळिवर्
साक्षाल् ज्ञानिकळेन्नङ्ङरिञ्ञु धर्म्मपुत्रर् १२६
पिट्टेन्नाळेतिरवे भीष्मर्सन्निधिपुक्कु
मुट्टीटु भक्त्या मोक्षधर्म्मङ्ङळ् चोद्यचेय्तु । १२७
राजधर्म्मङ्ङळ् केळ्क्कुमुन्पिले मोक्षधर्म्मं
राजाविन्नरिकयिलाशपूण्टिरिक्कुन्नु । १२८
शन्तनुपुत्रनटुत्तिरिक्कुन्नितु मृत्यु
चिन्तिच्चाल् पिन्नेयारु चोल्लुवानिल्लयल्लो । १२९
गांगेयनुळ्ळप्पोळे केट्टुकोळ्ळणमल्लो
सांगमा मोक्षधर्म्मं पिन्नेयिल्लारु चोल्वान् । १३०
केळ्क्केण्टतेल्लायिलु मोक्षधर्म्मङ्ङळ् नून-
मोक्कुन्पोळरिञ्ञुकूटात्ततुं मोक्षधर्म्मं । १३१
जह्नुजात्मजनुटे पिट्टेन्नाळ् मटोरुवन्-
तन्नोटु चोदिच्चरिवानुपायवुमिल्ल । १३२
स्वर्न्नदीसुतनुळ्ळप्पोळे केळ्क्किलेयुळ्ळु-
येन्निट्टु नटेतन्ने केळ्क्केण्टिट्टिरिक्कुन्नु । १३३
तन्नुटे धर्म्ममरियाते मटोन्नु मुन्पे
धन्यन्मारोटु चोदिक्कुन्नतु योग्यमल्ल । १३४
ऒन्नाल् ञान् राजधर्म्ममोक्कवे केट्टाल् नटे
वन्दिच्चु मोक्षधर्म्मं चोदिप्पनेन्नोर्त्तुळ्ळिल् १३५

कि ये मोक्षधर्म सुनने के अधिकारी है क्योंकि ये ज्ञानी है। दूसरे दिन सीधे भीष्म के सन्निधि मे गये और बड़ी भक्ति के साथ मोक्षधर्म पूछा। राजा को राजधर्म सुनने के पहले ही मोक्षधर्म जानने की इच्छा हो गयी है। मृत्यु तो शन्तनु के पुत्र (भीष्म) के पास बैठी है। सोचो तो और कोई बतानेवाला नहीं है। गांगेय के रहते यह सुन लेना चाहिये; उनके बाद सांग मोक्षधर्म बतानेवाला कोई नही है। १२४-१३० अन्य विषयो से सुनने योग्य तो मोक्षधर्म ही है और विचार करने पर जो याद नही होता है, वह भी मोक्षधर्म ही है। भीष्म के बाद के दूसरे ही दिन और कोई न मिलेगा जिससे पूंछ कर मालूम कर ले। उनके रहते ही सुन लेना ही ठीक होगा और बहुत जरूरी है कि अभी-अभी सुन ले। अपने ही धर्म को बिना जाने धन्य महानुभावो से और बातें पूँछना उचित नही है। इस लिए यह सोचकर कि पहले मैं राजधर्म पूँछूगा, तदनन्तर सादर मोक्षधर्म पूछूंगा, पहले राजधर्म सपूर्ण सुनने के बाद युधिष्ठिर ने मोक्षधर्म पूँछा। उस समय भीष्म ने युधिष्ठिर

मुल्पाटु राजधर्म्ममोक्कवे केट्टवारे
पिल्पाटु मोक्षधर्म्म चोदिच्चु युधिष्ठिरन् । १३६
अन्नेरं भीष्मर् मोक्षधर्म्मङ्ङळ् धर्म्मात्मजन्-
तन्नोटु चौल्वान् तुटङ्ङन्नतिन्मुन्पे तन्ने १३७
मोक्षधर्म्मङ्ङळेल्लामनुष्ठिक्कुन्नवन्टे
साक्षालुळ्ळोरु परिकर्म्मङ्ङळरियिच्चु । १३८
चौल्लिनान् द्वन्द्वप्रहिणोपाय पिन्नेशीघ्र
चौल्लिनान् पुनरपरिग्रहनिर्व्वेदवु । १३९
प्रज्ञयुं यथालब्धवृत्तित्वं दैष्टिकत्व
विज्ञानमेन्निवट्टयोक्कवेयरियिच्चु । १४०
चौल्लेळुमुपोल्घातंतन्नेयुमरिवानाय्
चौल्लिनान् भृगुभरद्वाजसंवादं कोण्टे । १४१
पिल्पाटु मोक्षधर्म्मं चौल्लुवानारभिच्चु
शिल्पमाय्च्चौन्नान् जापकोपाख्यानं कोण्टवन् । १४२
वेदाख्यमायिट्टुळ्ळोरक्षरराशियुटे
भेदात्थं नियमवदभ्यासरूपमायु- १४३
ळ्ळानन्दधर्म्मत्तेयुमेप्पेरुमरियिच्चु
सानन्दं युधिष्ठिरन्तन्नोटु देवव्रतन् । १४४
निर्म्मलन् मनुबृहस्पतिसंवाद कोण्टु
कर्म्मणां फलस्वरूपत्तेयुं पुनरपि १४५
करुति ज्ञानस्वरूपं तेळिञ्ञरियिच्चु ।
परमात्मस्वरूपमखिलमरुळ्चेय्तु १४६

को मोक्षधर्म का उपदेश प्रारम्भ करने के पहले मोक्षधर्म का अनुष्ठान करने-वाले की विशेषताओ को बतलाया । १३१-१३८ द्वन्द्वो (सुख-दु ख आदि) को त्यागने के उनके उपाय, तदनन्तर उनका अपरिग्रह और निर्वेद, उनकी प्रज्ञा, जो मिला उससे सन्तोष, विधि पर श्रद्धा, विज्ञान, यह सब बतला दिया । भृगु और भरद्वाज के सवाद द्वारा प्रसिद्ध उपोद्घात को भी समझाया । तत्पश्चात् विख्यात जापकोपाख्यान द्वारा मोक्षधर्म को ढग से सुनाने लगे । उस समय देवव्रत ने युधिष्ठिर को वेद नामक शब्दराशि के भेदार्थ को अभ्यास के लिए और आनन्दधर्म को भी सादर बतला दिया । उस निर्मल ने मनु और बृहस्पति के सवाद द्वारा कर्मो के फलो के स्वरूप को और फिर सोचकर ज्ञान-स्वरूप को भी स्पष्ट बतला दिया । १३९-१४५ वाष्णेयोपाख्यान के द्वारा सपूर्ण परमात्मा का स्वरूप

वार्ष्णेयोपाख्यानत्ताल् मोक्षोपायत्तेच्चोल्लि ।
वार्ष्णेयनाय कृष्णन्तन्तिरुवुळ्ळत्ताले । १४७
ज्ञेयमां शुकानुप्रश्नंकोण्टु पूर्वोक्तङ्ङ-
ळायुळ्ळ मोक्षधर्म्मं विस्तरिच्चरियिच्चु । १४८
गागेयनोरोतरमितिहासङ्ङळ्कोण्टु
सांख्यमा योगत्तेयु संक्षेपिच्चरियिच्चु । १४९
बुद्धिमानाय धर्म्मपुत्ररोटथ भीष्मर्
विस्तरिच्चरियिच्चु साख्ययोगङ्ङळेल्ला । १५०
साधनफलस्वरूपप्रकारङ्ङळोटुं
साधुलोकाढ्यनोटु गागेयनरियिच्चु । १५१
वन्दिच्चु सांख्ययोगतन्निले विशेषवुं
वसिष्ठकराळाख्यजनकसवादत्ताल् । १५२
पिन्नेयु याज्ञवल्क्यजनकसवादत्ताल्
तन्ने बुद्धप्रबुद्धबुद्ध्यमानन्मारुटे १५३
भेदवुं स्वरूपवुं संक्षेपिच्चरियिच्चु ।
बोधिप्पानतुपिन्ने विस्तरिच्चरियिच्चु । १५४
तदनु देवव्रतन् धर्म्मजनोटु शुक-
पतन कोण्टु शुकोत्पत्तियुमरियिच्चु । १५५
श्रीवेदव्यासन्पोक्कल्निन्नु श्रीशुकनुळ्ळ
केवलज्ञानप्राप्तिकोण्टुळ्ळ मोक्षप्राप्ति १५६

बतला दिया। वार्ष्णेय कृष्ण के अन्त करण द्वारा मोक्षोपाय भी बतलाया। जानने योग्य शुकानुप्रश्न के द्वारा पहले ही कहे मोक्षधर्म को विस्तरत बतला दिया। गांगेय ने विविध इतिहासो के द्वारा साख्य और योग को सक्षेप मे बतला दिया। भीष्म ने बुद्धिमान् युधिष्ठिर को साख्य और योग का विस्तृत उपदेश दिया। गागेय ने साधुजनो के वन्द्य युधिष्ठिर को यह सब साधन, फल और स्वरूप-सहित बतला दिया। वसिष्ठ-करालाख्यजनकसवाद के द्वारा साख्य और योग की विशेषताये बतला दी। १४६-१५२ याज्ञवल्क्य-जनकसवाद के द्वारा ही बुद्ध, प्रबुद्ध और बुद्ध्यमान, इन तीनो का भेद और स्वरूप संक्षेप में बतला दिया। उसी को यथार्थ बोध के लिए विस्तर से भी बतला दिया। तदनन्तर देवव्रत ने युधिष्ठिर को शुकपतन द्वारा शुकोत्पत्ति बतला दी। श्रीवेदव्यास के द्वारा श्रीशुक की केवलज्ञान की प्राप्ति और उस से मोक्षप्राप्ति भी। यह सब बतलाने के बाद भीष्म ने फिर युधिष्ठर से कहा। विषाद को दूर

ऒन्निवयग्रियिच्चनेर पिन्नेयुं भीष्मर्
मन्नवनाय धर्म्मनन्दननग्रियिच्चु १५७
कुन्ठत नीक्किप्पिन्ने श्रीमन्नारायणीयं
कौण्टग्रियिच्चु पञ्चरात्नसिद्धान्तमेल्लां । १५८
नानासिद्धान्तमेल्लामेकनिष्ठकळ्तन्ने
तानुमेङ्किलु प्राधान्यं वेदत्तिनेन्नतु । १५९
उञ्छवृत्युपाख्यान कौण्टग्रियिच्चु भीष्मर्
किञ्चिल् सशयं धर्म्मनन्दननुण्टाकाय्वान् । १६०
इङ्ङने चौल्लिप्पतिनेट्टु पर्व्वङ्ङळिल् व-
च्चगियायियुन्नोरु शान्तिपर्व्वत्तेयेल्लां । १६१
तत्र तल्पूर्व्वभागंकौण्टु भूपालधर्म्म-
मुत्तरभागंकौण्टु मोक्षधर्म्मवुमेल्लां । १६२
केवल ब्रह्मप्रतिपाद्यमां शान्तिपर्व्व
केलज्ञानप्रदमायिरिप्पोन्नाकयाल् । १६३
वेदान्तप्रकरणमत्यन्तं रहस्य आ-
नीदृशं चौल्लीटुकिल् निन्दिक्कु महाजन । १६४
चौल्लरुतुपनिषद्वाक्यार्थमेल्लावनु-
मिलल किल्लतिनाल् आनिङ्ङने चौन्नेनेन्नु । १६५
चौल्लिनाळ् किळिमकळ् मेलेटमिनिक्कथ
चौल्लुवन् वेणमेङ्किलेन्नेल्ला पङ्ञ्ञितु । १६६

॥ शान्ति समाप्तं ॥

करके श्रीमन्नारायणीय के द्वारा सभी पञ्चरात्र सिद्धान्तो को भी बतला दिया। यद्यपि भिन्न-भिन्न सिद्धान्त एक ही पर आश्रित है तथापि प्राधान्य वेद ही का है, यह भी बतलाया। १५३-१५९ उञ्छवृत्त्युपाख्यान द्वारा भीष्म ने यह बात कही ताकि युधिष्ठिर के मन मे कोई सन्देह न रह जाय। इस प्रकार अठारहो पर्वो मे अङ्गी शान्तिपर्व को सपूर्ण रूप से सुना दिया। उसके पूर्वभाग के द्वारा राजधर्म और उत्तरभाग के द्वारा मोक्षधर्म बतलाया। केवल ब्रह्म ही शान्तिपर्व का प्रतिपाद्य विषय है, क्योकि वह केवलज्ञान को देनेवाला है। यह वेदान्त प्रकरण है, और अत्यन्त रहस्य है। अगर मैं इस प्रकार कहता जाऊँगा तो जनता निन्दा करेगी, क्योकि उपनिषद्वाक्यो का अर्थ सबको कहने योग्य नही है, इसमे सन्देह नही है। मैने तो योही कुछ कह दिया— शुकी ने ऐसा कहा। अगर सुनना है, तो आगे की कथा भी सुनाऊँगी। १६०-१६६

॥ शान्तिपर्व समाप्त ॥

अनुशासनीकं

इत्थ किळिमकळ् चॊन्नतु केट्टथ
चित्तं तॆळिञ्ञु चोदिच्चितु पिन्नॆयु । १
तत्ते ! वरिकरिकत्तिरि सल्ककथ
सत्वरं चॊल्लुचॊल्लॆन्नतु केट्टवळ् । २
उत्तरमायरुळ्चॆय्ताळ् कनिविनो-
ट्टुत्तममां कथ केळ्प्पिन् चुरुक्कमाय् । ३
मोक्षधर्म्मं केट्टवारॆ युधिष्ठिरन्
मोक्षार्त्थियाकिय भीष्मरॆ वन्दिच्चु ४
मोक्षप्रदन् जगत्साक्षिभूतन् परन्
साक्षाल् मुकुन्दसमक्षमपेक्षिच्चु । ५

दानधर्म्मोपदेशं

दानादिधर्म्मङ्ङळॆक्केट्टुकॊळ्ळुवा-
नानन्दमोटरुळ् चॆय्तितु भीष्मरु । १
कालादिकळुटॆ संवाद कॊण्टथ
कालात्मजनऱियिच्चितु विस्तराल् । २
ऎल्लायिलु प्रधान पूर्व्वकर्म्ममॆ-
न्नॆल्लामऱियिच्चनन्तर पिन्नॆयु ३

अनुशासनिक पर्व

शुकी का इस प्रकार का कहना सुनकर प्रसन्न हुआ और फिर पूछा—हे शुकि ! आओ और निकट में वैठो और तुरन्त ही अच्छी कथा सुनाओ। यह सुनकर उसने प्रेम से उत्तर दिया— उत्तम कथा को संक्षेप मे सुन लो। मोक्षधर्म सुनने के वाद युधिष्ठिर ने मोक्षार्थी भीष्म की वन्दना करके मोक्षप्रद, जगत् के साक्षी, पर साक्षात् मुकुन्द के समक्ष प्रार्थना की। १-५

दानधर्म का उपदेश

भीष्म ने "दानादिधर्म को सुन लो", ऐसा सानन्द कहा। काल आदिकों के सवाद द्वारा कालपुत्र (युधिष्ठिर) को सव विस्तर से कह दिया। सव से प्रधान तो पूर्वकर्म है, ऐसा समझाने के बाद देवव्रत ने

मृत्युजयत्तिन्नुपायपरत्वेन
नित्यमतिथिपूजाफलमाहात्म्यं ४
मुख्यसुदर्शनोपाख्यानंकोण्टुट-
नोक्कयद्रियिच्चनेरं देवव्रतन् ५
साम्यमिल्लात मतंगोपाख्यानत्ताल्
ब्राह्मणमाहात्म्यमेल्लामद्रियिच्चु ६
जन्मंकोण्टे साधिक्कावूतल् ब्राह्मण्य
कर्म्म कोण्टाक्कुमे साधिक्करुतल्लो । ७
मुन्नं गरुडने विष्णु परीक्षिच्चु
नन्नायनुग्रहिच्चोरु प्रकारवु ८
चोल्लि सुपर्ण्णवैकुण्ठसंवादंको-
ण्टेल्लामजातवैरिक्कु गंगासुतन् ९
नल्लोरुपमन्युपाख्यानं कोण्टल्लो
चोल्ली पशुपतिमाहात्म्यमोक्कवे । १०
शैवमायुळ्ळ सहस्रनामत्तेयुं
दैवज्ञनाय देवव्रतन् चोल्लिनान् । ११
दिव्यविशिष्ठवरकन्यकादान
सर्व्वकर्म्मङ्ङळ्क्कु मूलमेन्नु चोल्लि । १२
कन्यकादानभेदप्रकारत्तेयु
कन्यकादानत्तिनुळ्ळोरु कालवु १३

मृत्यु को जीतने के उपाय के रूप मे नित्य-अतिथि-पूजा के फल का माहात्म्य मुख सुदर्शनोपाख्यान के द्वारा जब संपूर्णरूप से बतला दिया तब गोपाख्यान के द्वारा साम्यरहित मत और ब्राह्मणमाहात्म्य भी बतला दिया । जन्म के द्वारा ही ब्राह्मणत्व सिद्ध होता है केवल कर्म से कभी भी साध्य नही है । १-७ पूर्वकाल मे भगवान् विष्णु ने जिस प्रकार गरुड़ की परीक्षा लेकर उसका हृदय से अनुग्रह किया, यह सब गगापुत्र ने सुपर्ण-वैकुण्ठ सवाद के द्वारा अजातशत्रु को बतला दिया । अच्छे उपमन्युपाख्यान के द्वारा पशुपतिमाहात्म्य भी बतला दिया । दैवज्ञ देवव्रत ने शिव के सहस्रनाम भी सुना दिये । उन्होने यह भी कहा कि दिव्य, विशिष्ट वरकन्यकाओ का दान सभी कर्मो मे श्रेष्ठ है । उन्होने कन्यादान के विविध प्रकार, कन्यादान का उचित समय, दायविभाग के प्रकार, दिक्, देश, और न्याय के भेद, आचारभेद, वर्ण और अन्त मे

भुक्तिमुक्तिप्रद युक्तभक्तप्रिय ! ८
लोकत्रयत्तिनु शोकत्रयं तीर्क्क
वेगप्रभानिधे पक्षिकुलोत्तम ! ९
विश्वं दहिच्चुपोकुन्नतिन्मुन्नमे
निश्शेषतेजस्सुमॉट्टटक्कणमे ! १०
दानवनाशनन्मारुं मुनिमारुं
दीनतयोट्टमीवण्णं पुकळ्न्नप्पोळ् ११
पक्षिकुलाधिपन् भक्तपरायणन्
तल्क्षणं तेजस्सुमॉट्टु चुरुक्किनान् । १२
वन्नितु सन्तोषवु भुवनत्तिनु
पिन्नॅ मातावितॅक्काण्मान् गरुडनु १३
पन्नगमाताविरिक्कुं गृहत्तिङ्कल्
चॅन्नु माताविनॅक्कण्टु वणङ्ङिनान् १४
ऑन्निच्चविटॅयिरुन्नु चिलदिन-
मन्नॉरुनाळुरचॅय्तितु कद्रुवुम् । १५
ऍन्नुटॅ गेहत्तिलाम्मारुपोवति-
नॅन्नॅयॅटुत्तुकॉळ्ळेण विनते नी । १६

अग्नित्रय[1] तुम ही हो। शक्तित्रय[2] और गुणत्रय[3] तुम ही हो। भुक्ति और मुक्ति देनेवाले ! युक्तो और भक्तो[4] के प्रिय ! लोकत्रय[5] के शोकत्रय[6] को समाप्त करो ! हे वेग और प्रभा के निधि ! पक्षिकुलोत्तम ! 'सारा विश्व जल जाने से पहले ही तुम अपने निःशेष तेज को दबा दो ! ६-१० जब दानवनाशनो (देवो) और मुनियो ने इस प्रकार दीनता के साथ स्तुति की तब पक्षिकुलाधिप भक्तपरायण गरुड ने उसी क्षण अपने तेज को कम किया। सारे जगत् को हर्ष हुआ। तदनन्तर गरुड अपनी माता के दर्शन के लिए, वहाँ गये जहाँ सर्पो की माता थी, और माता को देखकर उनको प्रणाम किया, और उनके साथ कुछ दिन रहे। एक

१ आहवनीय, गार्हपत्य, दक्षिणाग्नि २ महाकाली महालक्ष्मी, महासरस्वती ३ सत्व, रज, तम ४ धर्म-परायण ५ स्वर्ग, पृथिवी, पाताल ६ आध्यात्मिक आधिदैविक, आधिभौतिक।

भीष्मस्वर्गति

अव्यक्तनव्ययन् दिव्यननाकुलन्
सव्यसाचिप्रियनाय नारायणन् १
तन्तिरुमेनियेक्कण्टुकण्टङ्ङने
सन्ततं चिन्तिच्चु चिन्तिच्चु तद्रून २
व्यासधौम्यादि मुनीन्द्रप्रवररुं
भूसुरवृन्दवुं पाण्डवरादियां ३
बन्धुवर्गङ्ङळुं कण्टङ्ङिरिक्कवे
शन्तनुनन्दनन् भागीरथीसुतन् ४
नारायणन् नळिनायतलोचनन्
कारुण्यवारिधि कंसनिषूदनन् ५
साक्षाल् समीपे वसिक्कुन्नतु मुदा
वीक्ष्य सन्तुष्टया स्तुतिच्चु नामामृतं । ६
पानवुंचेय्तु परमानन्दं पूण्टु
भानुकोटिप्रभन् भक्तपरायणन् ७
देवदेवन् वासुदेवन् जगत्पति
देवकीनन्दनन्तन्नेयुं तन्नेयु ८
एकीभविप्पिच्चु तातवरत्तिना-
लेकस्वरूपं मनसि चिन्तिच्चथ ९
स्वच्छन्दमृत्युवायुळ्ळ देवव्रतन्
स्वच्छमामच्युतांघ्रिद्वयपङ्कजं १०

भीष्म का स्वर्ग जाना

जब व्यास, धौम्य आदि मुनीन्द्रवर, ब्राह्मणवृन्द, पाण्डव आदि और उनके बन्धुवर्ग अव्यक्त, अव्यय, दिव्य, अनाकुल, अर्जुन के प्रिय नारायण भगवान् का दर्शन कर रहे थे तब शन्तनु के पुत्र, भागीरथी के सूनु का साक्षात् नारायण, कमल के समान दीर्घलोचनवाले, कारुण्यसागर, कस का नाश करनेवाले के निकट ही मे रहना देखकर प्रमोद और सन्तुष्टि से उनके नामामृत की स्तुति की। १-६ उस स्तुति का पान करते हुए परम आनन्द प्राप्त कर एक कोटि सूर्य के समान प्रभावाले, भक्तपरायण, वासुदेव, जगत्पति देवकीनन्दन को और अपने को एक बनाकर, पिताजी के वर के कारण एक स्वरूप को अपने मन मे ध्यान करते हुए स्वच्छन्द-मृत्यु

दायविभागप्रकारवुं दिग्देश-
न्यायभेदङ्ङळुमाचारभेदवु १४
वर्ण्णसमुदायोल्पत्तिप्रकारवुं
वर्ण्णिच्चु तत्र गोमाहात्मयवुं चोन्नान् १५
शन्तनुसूनु गोदानप्रकारवुं
हन्त गोदानफलवुमरियिच्चु । १६
स्वर्ण्णमाहात्म्यमखिलमरियिच्चु
स्वर्ण्णदानत्तिन् फलप्रकारादियु । १७
रुद्रसनत्कुमारप्रवादकोण्टु-
मुक्तिधर्म्मङ्ङळ् सक्षेपिच्चरियिच्चु । १८
तीर्त्थमाहात्म्यवुं गंगामाहात्म्यवु
तीर्त्तरियिच्चितु पार्त्थनु भीष्मरु । १९
पार्व्वतीशर्व्वसंवादेन पिन्नेयु
पूर्व्वसमुक्तङ्ङळायुळ्ळ धर्म्मङ्ङळ् २०
सर्व्ववुमाशु संक्षेपिच्चरियिच्चु
दिव्यनायीटिन शन्तनुनन्दनन् २१
वैष्णवधर्म्ममशेपमरियिच्चु
वैष्णवमाय सहस्रनामत्तेयु- २२
मिङ्ङने धर्म्मात्मजनरियिच्चितु
गंगातनयनु दानधर्म्मादिकळ् । २३

गोमाहात्म्य का भी वर्णन किया। ८-१५ शन्तनु के पुत्र (भीष्म) ने ने गोदान के प्रचार और गोदान का फल भी वतला दिया। उन्होने स्वर्ण का माहात्म्य वतलाकर उसके दान का फल और प्रकार भी वतलाये। रुद्र और सनत्कुमार के सवाद के द्वारा मुक्तिधर्म को सक्षेप मे वतला दिया। भीष्म ने पार्थ (युधिष्ठिर) को तीर्थमाहात्म्य और गगामाहात्म्य पूरा वतला दिया। तदनन्तर पार्वती और शिव के सवाद के द्वारा पहले ही कहे गये सभी धर्म्मो को दिव्य शन्तनुपुत्र ने फिर सक्षेप मे वतला दिया– सारे वैष्णवधर्मो को भी बतला दिया और विष्णु के सहस्रनाम को भी। इस प्रकार गगापुत्र ने युधिष्ठिर को दानधर्मो का उपदेश दिया। १६-२३

अश्वमेधिकं

आनन्दमानन्दमय्या जगत्पर-
मानन्दमानन्दमूर्त्तिकथामृत । १
पान दिनेदिने चेय्युन्नवर्क्कु सो-
पानं दयालयस्यालयप्राप्तये । २
मोहन मायाविमोहविध्वंसन
मोहितोऽह तदाकर्ण्णने सन्तत ३
मोहनगानशीले ! किळिप्पैतले !
दाहं विहाय कथय कथय नी ! ४
ॲङ्किलो केळ्प्पिन् चुरुक्कि ञान् चॊल्लुवन्
पङ्कजनेत्रन्विलासङ्ङ्ळोरोन्ने । ५
देवव्रतन् मरिच्चोरुनेरं परि-
देवनं चेय्तु युधिष्ठिरनादिकळ् । ६
देवि गान्धारितन्नोटुं तदा नर-
देवन् धृतराष्ट्ररुं करञ्ञीटिनान् । ७
देवनदियाय गंगयिल् निन्नवर्
देवव्रतनुदकक्रिययुं चेय्तार् । ८
धर्म्मसुतादिकळ् मोहिच्चुवीणप्पोळ्
निर्म्मलनाय भगवानरुळ्चेय्तु— ९

अश्वमेधपर्व

भो ! आनन्दमूर्ति के कथामृत से कितना आनन्द जगत् का परमानन्द आता है। प्रतिदिन उसका पान करनेवालो को वह करुणालय के निवासधाम प्राप्त करने का सोपान बन जाता है। वह कथा मोहन भी है और मायाविमोह का नाश करनेवाली भी है। निरन्तर उसको सुनने के लिए मै मोहित हूँ। हे मोहन गान करनेवाली शुक-बालिके ! प्यास बुझाकर कहती जाओ, कहती जाओ। अच्छा ! तो सुन लीजिये ! मै संक्षेप मे कहूँगी सभी पङ्कजनेत्र (कृष्ण) के विलास। जब देवव्रत की मृत्यु हुई तब युधिष्ठिर आदिको ने विलाप किया। १-६ उस समय राजा धृतराष्ट्र भी देवी गान्धारी के साथ रो पड़े। देवनदी गगा मे खड़े होकर उन्होने देवव्रत की उदकक्रियाएँ की। जब युधिष्ठिर आदि बेहोश होकर गिरे तब निर्मल भगवान् ने निवेदन किया। हे युधिष्ठिर ! हे चन्द्रवश के

निश्चलं सच्चिन्मयममृतं परं
सत्यमनन्तमनाद्यमनाकुलं
सत्वं परब्रह्मसच्चिन्मय पर- ११
मात्मानमात्मना कण्टुकोण्टात्मनि
स्वात्मानमाशु योगेन लयिप्पिच्चु १२
कारणत्तिङ्कल् निलीननां भीष्मरें-
धीरनाय् धर्म्मसुतन् वणङ्ङीटिनान् । १३
नारायण ! हरे ! नारायण ! हरे !
नारायणेति जपिच्चितेल्लावरुं । १४
पिन्ने मुहूर्त्तमात्रं पुनरेवरु-
मन्नेरं निश्चलरायिरुन्नीटिनार् । १५
ऎन्नितेल्लामनुशासनीक पर्व्वं-
तन्निलुळ्ळोरु कथकळाकुन्नितु । १६
विस्तरिच्चोक्कें आन भाषयाय् चोल्लियाल्
सिद्धमल्लाय्कयेन्नाकयल्लीयेन्नु १७
सशयिच्चिङ्ङने चोल्लियेन् आनेन्नु
सशयं कूटाते पैङ्किळि चोल्लिनाळ् । १८

।। अनुशासनीक समाप्त ।।

देवव्रत (भीष्म) ने स्वच्छ अच्युत के चरणकमल को, और निश्चल, सच्चिन्मय, अमृत, पर, सत्य, अनन्त, अनादि, अनाकुल, सत्त्व, परब्रह्म, सच्चिन्मय, परमात्मा को स्वय अपने ही मे देखते हुए अपने को उसमे योग से लीन कर दिया। ७-१२ और धीर युधिष्ठिर ने कारण मे विलीन भीष्म की वन्दना की। हे नारायण ! हे हरे ! हे नारायण ! हे हरे ! हे नारयण ! ऐसा सभी ने जप किया। तदनन्तर एक मुहूर्तमात्र के लिए सब निश्चल होकर मौन रहे। अनुशासनीक पर्व की ये ही कथाएँ है। ये सब अगर मै भाषा मे कहने लगूँ तो क्या मेरी कार्यसिद्धि हो सकती है ? इस प्रकार सन्देह मे आकर मैने किसी तरह कह डाला। अन्त मे शुकी ने निस्सन्देह होकर ऐसा कहा। १३-१८

।। अनुशासनीक पर्व समाप्त ।।

गांगेयनुं परमार्त्थं पऱञ्ञितु
नीङ्ङील मोहङ्ङळेन्नालुमेङ्किलो । २१
चेय्यणमश्वमेधं विरवोटुळ्ळिल्
मय्यल् तीर्त्तीटुवान् धर्म्मराजात्मज ! २२
वैवस्वतात्मजन् द्वैपायनपद
कैवणङ्ङिप्पऱञ्ञीटिनानन्नेरं— २३
नेरे पितामहनल्लो भवान् मम
कारुण्यवारिधे ! नाथ ! तपोनिधे ! २४
ऎन्तोन्नरुळ्चेय्ततु निन्तिरुवटि
सन्ततं ञानतु चेय्वतिन्नाळन्ने । २५
युद्धत्तिलोक्क मरिच्चितु बन्धुक्क-
ळर्त्थवुमिल्लेन्नरिक मुनीश्वर ! २६
श्रीबादरायणन् चोन्नानतुनेरं
श्रीवासुदेवभक्तयाढ्यनल्लो भवान् । २७
विष्णुभक्तन्मार्क्कुं मुट्टुकयिल्लेतु
कृष्णन् तिरुवटि साक्षाल् जगन्मयन्
वन्धुवायुण्टल्लो सन्ततमन्तिके । २८

क्यो अपनाया है ? मुनिजन ने तुमको अभिमान दूर करने के लिए कितने वार ज्ञानोपदेश किया है ? भीष्म ने भी तुमको परमार्थ बतलाया है । फिर भी तुम्हारे मोह अब नही दूर हुए है । १४-२१ हे धर्मपुत्र ! भीतरी सुस्ती दूर करने के लिए अश्वमेध यज्ञ करना चाहिये । तब वैवस्वतपुत्र (यधिष्ठिर) ने द्वैपायन के चरणो की वन्दना करके कहा— "हे कारुण्यसागर ! हे नाथ ! हे तपोनिधे ! आप मेरे साक्षात् पितामह हे । आप (भगवान्) ने जो आज्ञा दी है उसे मै करनेवाला हूँ । हे मुनीश्वर ! याद रखिये कि, सभी वन्धु युद्ध मे मरे है और मेरे पास अर्थ नही है" । उस समय श्री वादरायण बोले— "आप तो वासुदेव के प्रति अगाध भक्ति रखते है । विष्णुभक्तो के लिए किसी भी बात की कमी न होगी । साक्षात् जगन्मय भगवान् कृष्ण सदैव आप के निकट रहनेवाले वन्धु है । २२-२८

धर्म्मराजात्मज ! सोमकुलाधिप !
निर्म्मलात्मावे ! नी दुःखिक्करुतल्लो । १०
निन्मनोदुःखत्तिनिल्लोरु शान्तिय-
तेन्महामायाबलमेन्नरिञ्ञालु । ११
अेन्महामाययिल् मोहिक्करुतेन्नाय्
निन्नोटनेकदिव्यन्मारुरच्चेय्तार् । १२
इन्नवयोक्कवे निष्फलमायितो
मन्नवा ! वन्दिक्क नी वेदव्यासने । १३
अेन्नतु केट्टु तोळुतितु धर्म्मजन्
मन्नवनोटु मुनियुमरुळ्चेय्तु— १४
मायामयनाय माधवन्तन्नुटे
मायाविलासमिक्काणायतोक्कवे । १५
शन्तनूजन्तन्तिरुवटिकेळ्क्कवे
तन्तिरुमुन्पिल् निन्नल्लयो निन्नोटु १६
कुन्तीतनय पऱञ्ञितिप्पोळतु
चिन्तिच्चुकाण्क नी मूढनायीटोला १७
ज्ञानविज्ञानविहीनमतिकळा
मानवन्मारिलोन्नाय् चमञ्ञीटोला । १८
प्राकृतन्माराय मानुपर् कैक्कोळ्ळु-
माकृतियेन्तु नी पूण्टतु भूपते ! १९
ज्ञानोपदेशं निनक्कु मुनिजन
मानमकलुवानेन्नतरं चेय्तु । २०

अधिपति ! हे निर्मल आत्मावाले ! तुम्हे तो दुःख न करना चाहिये ! तुम्हारे मन के दु.ख की कोई शान्ति नही है, जान लो कि वह मेरी महामाया का बल है । अनेक दिव्य पुरुपो ने तुमको उपदेश दिया है कि मेरी महामाया के सम्बन्ध मे मोह न करना । क्या यह सब व्यर्थ हो गया है ? हे राजन् ! वेदव्यास की वन्दना करो । ७-१३ यह सुनकर युधिष्ठिर ने वन्दना की और मुनि ने राजा से कहा— "यह जो कुछ दिखाई दे रहा है यह सब मायामय माधव का मायाविलास है । हे कुन्तीपुत्र ! शन्तनुपुत्र के समक्ष ही भगवान् के सामने तुम से कहा गया है । उस पर तुम विचार करो, मूढ न वनो । ज्ञान और विज्ञान से रहित मानवो मे एक न वनो । हे राजन् ! प्राकृत जन जो रूप अपनाते है उसे तुमने

ऒन्नतु केट्टु तॊळिञ्ञु मरुत्तनु-
मन्नु तुटङ्ङियनेक मखं चॆय्तान् । १०
अर्थमतीव शेषिच्चितु पिन्नॆयुं ।
पृथिवीपति निधिवच्चानतॊक्कवे ११
उण्टिरिक्कुन्नु पनिमलमेलतु
कॊण्टुपोन्नालुमङ्ङेतुं मटियातॆ । १२
पृत्थ्वीपतिकळ् निधियॆटुत्तिन्नयु-
मुत्तममाय धर्म्मं चॆय्तुकॊळ्ळण । १३
ऒन्नालतु वॆच्चवनु गतिवरुं
मन्नवन्माक्कुं गतिवरु निर्ण्णयं । १४
ऒन्तरुळ्चॆय्तॆळुन्नळ्ळि पराशर-
नन्दननाकिय कृष्णन्मुनीश्वरन् । १५
देवदेवन् वासुदेवन् जगत्पति
देवकीनन्दनन् नन्दजन् माधवन् १६
भक्तनां धर्म्मात्मजनोटु पिन्नॆयु
चित्तं तॆळिवतिनायरुळिच्चॆय्तु— १७
धर्म्मेण राज्यं निनक्काय् चमञ्ञितु
धर्म्मज ! वञ्चनं किञ्चनकूटातॆ । १८
दैवाज्ञया परिपालिक्क नी तॊळि-
ञ्ञुर्व्वीतलमधर्म्मं वन्नणयातॆ । १९

वे बोले— हे राजन् ! जो भी कर्म आप करना चाहे मैं निस्सन्देह उनको करा दूँगा । यह सुनकर राजा मरुत्त प्रसन्न हुए और उस दिन से उन्होंने अनेक यज्ञ किये । उसके बाद भी उनके पास बहुत धन बचा । राजा ने उसको निधि रखा जो अब भी हिमालय पर्वत पर विद्यमान है । बिना विलम्ब के उसे जाकर ले आओ । राजाओं का काम है कि वे निधि लेकर उसे उत्तम कामों में लगावें । इससे निधि रखनेवाले की गति अच्छी होगी । राजाओं की भी अच्छी गति निस्सन्देह होगी । ८-१४
ऐसा कहकर पराशर का पुत्र मुनीश्वर कृष्ण (द्वैपायन) सिधारे । देवदेव, वासुदेव, जगत्पति देवकीपुत्र, नन्दपुत्र, माधव-भक्त युधिष्ठिर से मन की प्रसन्नता के लिए फिर बोले । "अब धर्म से, बिना किसी प्रकार की वञ्चना से, राज्य तुम्हारा हो गया । दैव की आज्ञा से उसका परिपालन करो और किसी भी प्रकार अधर्म न लगे । गऊ, ब्राह्मण आदि प्रजाओं का परिपालन प्रेम से करो, हे राजन् ! जब मै सोचता हूँ तो गाय और ब्राह्मण

पाण्डवन्मार् निधियॆटुत्तु कॊण्टुवरुन्न कथ

चिन्तितच्चतॊक्कवे साधिच्चुकॊळ्ळुवान्
ऒन्नालुमॊन्नुण्टु ञानिन्नु चॊल्लुन्नु । १
मुन्न मरुत्तनाकुन्न नरपति
नीहारक्कुन्निल् वटक्केप्पुरत्तु प-
ण्टेऱियोरर्थं निधिवच्चिरिक्कुन्नु । २
नीयतुकॊण्टुपोन्नश्वमेधं चॆय्क ।
मायाभ्रमङ्ङळुं नीङ्ङुं निनक्कॆन्नाल् । ३
ऒन्नतु केट्टु युधिष्ठिरन् चोदिच्चु—
मन्नवनाय मरुत्तन्कथयॆल्लां ४
ऒन्नोटरुळ्चॆय्कवेण तपोनिधे !
मन्नवा केळ्क्कॆन्नरुळ्चॆय्तु कृष्णनु— ५
मॆङ्किलो पण्टु मरुत्तनाकु नृपन्
शङ्काविहीनं पुरोहितकांक्षया ६
चॆन्नपेक्षिच्चतु केट्टु धिषणनु-
मिन्द्रेष्टमॆङ्किलुमिप्पोळरुतॆन्नान् । ७
आचार्यसोदरनाय संवर्त्तनॆ-
याचारवुचॆय्तु याचिच्चु भूपनु । ८
उर्व्वीपते ! निनक्किष्टकर्म्मङ्ङळॆ
निर्व्वहिप्पिक्कुन्नतुण्टु ञान् निर्णयं । ९

पाण्डवों की निधि लेकर आने की कथा

"सोचे गये कार्यो की सिद्धि के लिए मैं आज एक बात बतलाता हूँ। पूर्वकाल मे राजा मरुत्त ने हिमालय पर्वत के उत्तरभाग मे चढकर वहाँ धन का निधि रखा है। तुम जाकर उसे ले आओ और अश्वमेध करो। इससे तुम्हारे मायाकृत भ्रम भी दूर हो जायेगे।" यह सुनकर युधिष्ठिर ने प्रार्थना की— राजा मरुत्त की पूरी कथा, हे तपोनिधे ! मुझको बतला दीजिये। 'हे राजन् ! अच्छा तो सुनलीजिये' ऐसा व्यास ने कहा— पूर्वकाल मे राजा मरुत्त निश्शङ्क होकर अपना पुरोहित नियुक्त करने के लिए जाकर बृहस्पति से प्रार्थना की। उन्होने कहा— इन्द्र को इष्ट होने पर भी मैं नही कर सकता हूँ। १-७ तब राजा ने उनके सहोदर संवर्त के पास जाकर उनका यथावत् उपचार करके उनसे प्रार्थना की।

भक्तप्रियनाय् विनीतनाय् शान्तनाय्
सत्वरजस्तमोवृत्तिविमुक्तनाय् ३१
तत्वज्ञनायोरु सत्गुरुतन्पद
नित्यमाराधिच्चु तत्प्रसादत्तिनाल्
सिद्धिक्कवेणमात्मज्ञानमेवनु । ३२
साक्षाल्सकलजगत्गुरुवायोरु
मोक्षप्रदन् निन्तिरुवटितान्तन्ने- ३३
योर्क्किलिनिक्कु गुरुवायताकयाल्
नीक्कणमाशु मायामोहमोक्कवे ३४
ॲन्नुरच्चेय्तभिवाद्यवुच्चेय्तितु
पिन्नेयु पिन्नेयु विण्णवर्कोन्मकन् । ३५
कृष्णन्तिरुवटि तन्नुटे भक्तना
जिष्णुजनोटु चिरिच्चरुळ्च्चेय्तितु । ३६
ज्ञानं पलविधमुण्टव केळात्म-
ज्ञानत्तिनोटु सममल्ल निर्ण्णय । ३७
केवलज्ञानमुपदेशिच्चीटुवा-
नेवनुळ्ळू जगत्तिङ्कल् निरूपिच्चाल् ? ३८
ॲङ्ङानुमुण्टोरुत्तन् पुनरेङ्कि-
लतेङ्ङिनने चेन्नु कण्टेत्तियद्रियुन्नु ? ३९
चित्ते विषयविरक्तनायुळ्ळोरु
भक्तन् परमात्मज्ञानार्त्थियामवन् । ४०
स्वस्थनाय् सत्वरं सञ्चरिक्कुविधौ
मुक्तनायुळ्ळ गुरुविनेयेङ्ङानु- ४१

में परिपक्व करुणा से युक्त, भक्तप्रिय, विनीत, शान्त, सत्त्व, रज और तम की वृत्तियों से रहित तत्त्वज्ञ सद्गुरु के चरणो पर प्रतिदिन सेवा करके उनके प्रसाद से आत्मज्ञान की सिद्धि होनी चाहिये। मेरा तो साक्षात् जगद्गुरु, मोक्षप्रद, आप भगवान् ही गुरु होने के कारण मेरा सारा माया मोह दूर कीजिये", ऐसा कहकर अर्जुन ने वार-वार वन्दना की। २९-३५ तव भगवान् कृष्ण ने भक्त अर्जुन से हँसकर कहा। "ज्ञान अनेक प्रकार के है पर वे आत्मज्ञान के तुल्य नही है। सोचो तो इस जगत् मे केवल (शुद्ध) ज्ञान का उपदेश देनेवाला कौन है? अगर कही कोई है तो उनके पास कैसे पहुँचे ? जो अपने चित्त मे विषयो से विरक्त है वही भक्त है और

गोब्राह्मणादि प्रजापरिपालनं
तात्पर्यमोटु चेय्येणं धरापते ! २०
ज्ञानायतोक्किल् पशुक्कळु विप्ररु
ज्ञानमाकुन्नततिनेयरिकयु । २१
मत्प्रसादकोण्टुतन्ने वरुं गति
मत्प्रसादं गोद्विजप्रसादं तन्ने । २२
चिन्मयनाय जगन्मयन् गोविन्दन्
धर्म्मैकसाक्षि मुकुन्दन् तिरुवटि २३
धर्म्मजन् तन्नोटरुळ्चेय्तितोरोन्ने ।
निर्म्मलन् पिन्ने नरनोटुकूटवे २४
वासवप्रस्थत्तिनाम्मारेळुन्नळ्ळि
वासुदेवन्तन्नोटन्नु धनञ्जय- २५
नत्यन्तमिष्टनायोरु वयस्यनाय्
भृत्यनाय् श्रीपादभक्तनाय् दासनाय् २६
सेवकनाय् तव शिष्यनायोरु ञान्
चावतिन्नाय् नरनाय् पिरन्नेन् वृथा । २७
मर्त्यजन्मत्ते लभिच्चाल् वरेण्टतु
तत्वार्थमायुळ्ळोरात्मज्ञान परं । २८
सिद्धिक्कवेण परमगुरुविनो-
टेत्ता पलर्क्कुमतिनोराचार्यने- २९
येत्तुकिलुमरिवान् पणियुण्टल्लो
चित्तं मुळुत्त करुणपूण्टेलयु ३०

ही ज्ञान का स्रोत है। १५-२१ मेरे प्रसाद से ही तुम्हारी गति हो जायगी और गाय और ब्राह्मण का प्रसाद ही मेरा प्रसाद है।" चिन्मय, जगन्मय, गोविन्द, धर्म का एक मात्र साक्षी, भगवान् मुकुन्द ने युधिष्ठिर से तरह-तरह की बाते की। तदनन्तर निर्मल कृष्ण अर्जुन के साथ इन्द्रप्रस्थ को सिधारे। तब धनञ्जय ने कृष्ण से कहा— "मैं ने तुम्हारा अत्यन्त प्रिय वयस्य (मित्र) बनकर, भृत्य बनकर, तुम्हारे चरणो का सेवक बनकर, दास बनकर और तुम्हारा शिष्य बनकर मरने के लिए मनुष्य का जन्म लिया था, पर व्यर्थ मे! मनुष्य का जन्म लेने से परम तत्त्वार्थ आत्मज्ञान होना चाहिये। २२-२८ बहुतो को तो एक परम गुरु ही नही मिलता है। अगर मिल भी गया, तब भी ज्ञान-प्राप्ति तो कठिन है। चित्त

ऍन्नतु चॅय्ताळ् विनतयु नन्दनन्-
तन्नोटु चॉन्नाळ् मकनॅ मटियातॅ १७
पन्नगन्मारॅयॅटुत्तुकॉळ्ळेणं नी
ऍन्तम्म चॉन्नतिळय्क्करुतॅन्नोर्त्तु १८
पन्नगन्मारॅयॅटुत्तु पऋन्नितु
वेगेनसूर्यन्नभिमुखमावण्णम् । १९
व्यग्रङ्ङळ् चॉल्लुवान् वेगेन पोरुन्नि-
तग्रजनोटॅन्नु तोन्नुमतुकण्टाल् । २०
आदित्यरश्मिकळेटु भुजगङ्ङ-
ळाधिपूण्टेट तळर्न्नुचमञ्ञप्पोळ् २१
आदितेयोत्तमनाय देवेन्द्रनॅ-
यादरवोटु पुकळ्न्नितु कद्रुवुम् । २२
आधारमिल्ल मटॅन्नवळ् केळुप्पो-
ळासारवु तुटङ्ङीटिनान् वासवन् । २३
तापवु तीर्त्तवराशु रमणक-
द्वीपवु पुक्कु सुखिच्चु वसिच्चितु । २४
अक्षिकर्ण्णन्मारॉरुनाळतुकाल
पक्षिकुलाधिपनोटु चॉल्लीटिनार् २५

दिन कद्रू ने कहा– ११-१५ "हे विनते ! आराम से घूमने के लिए तुम मुझे उठा ले जाओ"। विनता ने ऐसा ही किया और अपने पुत्र से कहा–"वेटा ! विना सकोच के तुम पन्नगो (कद्रू के पुत्र सर्पो) को ले चलो"।§ माता की इस आज्ञा को टालना नही चाहिए, ऐसा सोच कर गरुड़ सर्पो को लेकर उडे, सूरज के अभिमुख, मानो अपने वड़े भाई से अपने दु ख वतलाने के लिए वेग से जा रहे हो। १६-२० जव सूर्य के किरण ताप से सर्प सव वडे परेशान हुए तव कद्रू ने अदिति के पुत्रो मे श्रेष्ठ इन्द्र की स्तुति की। जव यह कहती हुई रोने लगी कि मेरा और कोई आश्रय नही है, तव वासव (इन्द्र) ने वर्षा प्रारम्भ की। उनका दु ख समाप्त हुआ और वे रमणीक द्वीप जाकर वहां सुख से रहे। २१-२४

§ कारण कि विनता कद्रू की दासी हो चुकी थी और उसके लिए कद्रू की आज्ञा का पालन अनिवार्य था।

मेत्तुमोरुत्तनोरुनाळोरुदिशि
निश्चयमीश्वरनायतवन्तन्ने । ४२
कोच्चुकळ्क्कुळ्ळिलवनुटे माहात्म्य-
मेतुमर्रियरुतेङ्ङळालोन्नेन्नु
बोधमोळ्ळिञ्ञवक्कुण्टाकयिल्ललो । ४३
विळ्ळुन्न तामरप्पूविन् मधुरसं
वेळ्ळत्तिलुळ्ळ जन्तुक्कळ्क्कर्रियामो ? ४४
ज्ञानिक्कोळ्ळिञ्ञर्रियावल्ल केवल
ज्ञानियायुळ्ळवन्तन्नेयोरिक्कलुं । ४५
अङ्ङनेयुळ्ळ गुरुनाथनेक्कण्टु
मगलवाचा वणङ्ङिच्चिरकाल ४६
शुश्रूपया वसिच्चालोरुकालत्तु
विश्वासभक्तिकळ् कण्टु गुरुनाथन्
पार प्रसादिच्चुपदेशवु नल्कु । ४७

अनुगीत

तीरु जननमरणवुमन्नेरं
चेरु परमात्मनि चेन्नु जीवनुं ।
पोरु परञ्ञतु निन्नोटु ञान् पुरा १

परमातमज्ञान का इच्छुक भी । स्वस्थ होकर सोत्साह सञ्चार करते समय कोई-कोई कही कभी एक मुक्त गुरु को प्राप्त करता है । निश्चय ही वह ईश्वर ही है । ३६-४२ वच्चे तो उनका माहात्म्य कुछ भी नही जानते है । जिनका वोध नहीं है वे इस वात को कैसे जान सकते है । विकसित होनेवाले कमल के मधुरस का स्वाद क्या पानी के अन्दर रहनेवाले जन्तु जान सकते है ? ज्ञानी को छोडकर और कोई ज्ञानी को कभी नही पहचान सकता है । इस प्रकार के गुरु को पाकर उनका मगल शव्दो से प्रणाम करके शुश्रूपा के साथ अगर कोई उनकी सेवा करे तो गुरुजी किसी दिन उसके विश्वास और भक्ति को देख कर प्रसन्न हो जायेगे और उपदेश देगे ।" ४३-४७

अनुगीता

"उस समय जन्म और मृत्यु समाप्त हो जायेगे और जीव जाकर परमात्मा से जुड जायेगा । अव और कहने की क्या आवश्यकता है ?

युद्धत्तिनाय् तुटङ्ङुंविधौ मोहसं-
बद्धनायुळ्ळ निन्नोटु चौल्लीलयो ? २
तेरिलिरुन्नु ञान् निन्नोटत्तोक्कवे
नीरिल् वरच्च वरयाय् चमञ्ञितो ? ३
केळिनियुं परमार्त्थस्वरूपं नी-
याळु ञानुण्टल्लो चौल्लुवानिन्नियुं । ४
वाक्किन् विषयमल्लातोरात्मज्ञान-
मार्क्कुमे केट्टाल् मतियाकयिल्लल्लो । ५
ञानेन्नुमन्पोटिनिक्कैन्नुमुळ्ळोरु-
मानं कळक नटेयोन्नु वेण्टतु । ६
युष्मदस्मल्पदभ्रान्तिकौण्टेत्रयु
कश्मल मानुषक्कुंळ्ळिलुण्टाकुन्नु । ७
पिन्नैस्सुखदु:खशीतोष्णमादियां
द्वन्द्वभावङ्ङळकलेक्कळयणं । ८
भू वारि वह्नि वाताकाशवुं पिन्ने
गन्धरसरूपस्पर्शशब्दङ्ङळु ९
घ्राणजिह्वाचक्षुत्वक्श्रवणङ्ङळुं
वाक्पाणिपादपायूपस्थवुं वच- १०
नादानयानविसर्गानन्दङ्ङळुं
मानसबुद्धयहङ्कारचित्तङ्ङळु ११

मै तो तुमको पहले ही, जब युद्ध का प्रारम्भ होने को था, और तुम मोह के वश में आये थे, रथ पर बैठे ही उपदेश दे चुका हूँ। वह सब क्या पानी मे खीची लकीर के समान हो गया है ? अच्छा तो फिर परमार्थ का स्वरूप सुनो। मै तो बतलाने के लिए मौजूद ही हूँ। शब्दो के परे आत्मज्ञान को सुनकर किसी की भी तृप्ति नही होती है। पहले इस बात की आवश्यकता है कि 'मै' और 'मेरा' इस अभिमान को तुरन्त ही छोड़ना। १-६ 'तुम' और 'मैं' इन दो पदो से जो भ्रम पैदा होता है उससे मनुष्यो के भीतर दोष पैदा हो जाता है। तदनन्तर सुख-दु.ख, गरम-ठण्डा आदि द्वन्दो से दूर रहना चाहिये। पृथिवी, जल, अग्नि, वायु आकाश, गन्ध, रस, रूप, स्पर्श, शब्द, घ्राण, जिह्वा, चक्षु, त्वक्, श्रोत्र, वाक्, पाणि, पाद, पायु, उपस्थ, वचन, आदान, विसर्ग, आनन्द, मन, बुद्धि, अहङ्कार, चित्त, उनके विषय, प्राण आदि ये सब आत्मा नही है; जीव भी आत्मा नही है। ७-१२ वह तो स्वयं जागता हुआ, सब के ऊपर

तद्विपयङ्ङळ् प्राणादिकळुमल्ल
जीवनुमल्ल केळात्मावाकुन्नतु । १२
तन्निलेतानुणर्न्नेल्लाटिनु मीतें
मिन्नल्पोले सकलत्तिनुं साक्षियाय् १३
ऑन्नुमे तन्नोटु चेर्न्नङ्ङु पटाते
चेन्नु तानेल्लाटिनोटुमे चेर्न्तुकों- १४
ण्टेल्लाट्टिनुमोक्कं चैतन्यमुण्टाक्कि
नल्ल तेजोमयनाय् निऱञ्ञेप्पोळु १५
वेळ्ळत्तिल् मुङ्ङिक्किटक्कुं कलशत्ति-
नुळ्ळिलुं पिन्नेप्पुऱत्तु निऱञ्ञोरु- १६
वेळ्ळंकणक्केज्जगत्तिङ्कलोक्कवे
व्यापिच्चिरिप्पतात्मावु परब्रह्मं ।
रूपादिहीनमेक परमव्ययं १७
तत्स्वरूपमऱिवान् गुरुवा पर-
मेश्वरनंघ्रिकळ् चूटुकिलामत्रे । १८
पुत्रमित्रार्थकळत्रभृत्यादिकळ्
नित्यमल्लेत्रयु व्यर्थमेन्नोर्त्तुटन् १९
नित्यविरक्तनाय् नित्यमाय् सत्यमाय्
सत्वार्थमाकुमात्मावुमाचार्यनुं २०
तानुमोन्नाय् तेळिञ्ञाशु काणाय्वरु
तानोळिञ्ञिल्ल केळेतुमोन्नन्नेरं । २१
इत्थं भगवानरुळ्चेय्ततोक्कवे
विस्तरिच्चिप्पोळिनिक्कऱियिक्कामो ? २२

विजली के समान साक्षी वनकर किसी चीज को अपने से मिलने न देते हुए, स्वयं सब से मिलते हुए, सब को चैतन्य बनाते हुए, अत्यन्त तेजोमय होकर फैलते हुए, जल के अन्दर डूबे घडे के भीतर और बाहर विद्यमान जल के समान सारे जगत् में व्याप्त आत्मा या परब्रह्म है। वह रूप आदि से रहित है, पर और अव्यय है। उसका स्वरूप जानने के लिए गुरु परमेश्वर के चरणो की सेवा अपेक्षित है। पुत्र, मित्र, अर्थ, कलत्र, भृत्य आदि नित्य नही है, अतएव सब व्यर्थ है। १३-१९ यह समझ कर नित्यविरक्त, नित्य और सत्य वनकर सत्त्वार्थ आत्मा, आचार्य और स्वय एक होकर प्रसन्न दिखाई देगा। उस समय अपने को छोड़कर और कुछ

केट्टिवण्णं भगवद्वचनं पार्त्थ-
नाढ्यन्मारोटु नटन्नु तॊळिवॊटे । २३
हस्तिनमाय पुरिपुक्कु वन्दिच्चु
पृथ्वीपतियाय धर्म्मजन् तन्पदं । २४
पाण्डवन्मारुं भगवानुमाय् चॆन्नु
पाण्डुनृपालयं पुक्कोरनन्तर । २५
पुत्रमित्रादिकळॊक्क मरिक्कया-
लॆत्रयुं खेद कलर्न्न जनत्तॆयु २६
ऒक्कप्परञ्ञुटनाश्वसिप्पिच्चिट-
रॊक्कक्कळञ्ञितु सत्वरं माधवन् । २७
श्राद्धदेवात्मजन्मादिकळॊक्कवे
श्राद्धवुंचॆय्तारभिमन्युविन्नायि । २८
प्रीत्या पराशरपुत्रनॆयु तॊळु-
तास्थया पूजिच्चभिवाद्यवु चॆय्तार् २९
पिन्नॆप्पराशरनन्दनन् चॊल्लिय
पुण्यनिधियॆटुप्पानाय् पुरप्पॆट्टार् । ३०
आर्त्तु नालंगप्पटयोटुकूटवे
पार्त्थिवन्मारुं द्विजन्मारुमायोरो- ३१
मामुनिमारुमाय् नेरे वटक्कोट्टु
सामोदमाशु नटन्नु वेगत्तॊटे । ३२

न होगा, जान लो । इस प्रकार भगवान् ने जो कुछ कहा वह सब विस्तार से मैं कैसे सुनाऊँ ? भगवान् की बात सुनकर अर्जुन गुरुजनो के साथ प्रसन्नता से चले । हस्तिनपुर पहुँचकर वहाँ राजा युधिष्ठिर के चरणो की वन्दना की । तननन्तर पाण्डव और कृष्ण पाण्डुनृपालय गये । अनेक पुत्र और मित्रो की मृत्यु होने के कारण दुःखित जनो का दुख समझा-बुझाकर दूर करके माधव ने सबको आश्वासन दिया । २०-२७ श्राद्ध-देवात्मज (युधिष्ठिर) आदि सभी ने अभिमन्यु के लिए श्राद्ध किया । और बडी प्रीति के साथ पराशर के पुत्र (व्यास) की सादर वन्दना और पूजा की । तदनन्तर पराशरपुत्र के निर्दिष्ट पुण्यनिधि को लाने के लिए जाने की तैयारी की । चतुरंगसेना के साथ, सिंहनाद करते हुए क्षत्रिय और ब्राह्मण, मुनियो के साथ सीधे उत्तर की ओर बडे प्रमोद के साथ जल्दी-जल्दी चले । अनेक वन और नदियाँ, अनेक देश, विविध राजाओ के

काननजालनदिकळु देशङ्ङळ्
नानानरेन्द्रन्मार् वाळुन्न राज्यङ्ङळ् ३३
ऍन्निव पिन्निट्टु कैलासमाकिय-
कुन्निनु चॆन्नु महेश्वरपादङ्ङळ् ३४
नन्नाय् वणङ्ङिनार् भक्तियोटेयवर् ।
पिन्ने महेश्वरपूजयु चॆय्तवर् ३५
कुन्निन्मकळेयु मक्कळेयुं कण्टु
वन्दिच्चु नन्दिकेशादि भूतङ्ङळ्क्कुं ३६
तृप्ति वरुमारु पूजिच्चु सेविच्चार् ।
नन्नायनुग्रहिच्चू महादेवनु । ३७
पिन्नेप्पनिमलतङ्कलाम्मारङ्ङु
चॆन्नु कण्टीटिनारत्भुतमायेट- ३८
मुन्नतमाय शिखरङ्ङळु कण्टु-
निन्न शिवशिवयॆन्नु कैकूप्पिनार् । ३९
घोरतपोवलमुळ्ळ पुरोहित-
रोरोतरत्तिले होमपूजादिकळ् ४०
चारुनिधि कात्तिरिक्कुन्न देवत-
मारयु पूजिच्चु तृप्तिवरुत्तिनार् । ४१
पिन्नेक्कुळिच्चु निधि कण्ट नेरत्तु
वन्नोरु विस्मयं चॊल्लावतल्लेतुं । ४२

राज्य पार करके वे कैलास नामक पर्वत पहुँचे और वहाँ उन्होने महेश्वर के चरणो २८-३४ की भक्ति के साथ वन्दना की । तदनन्तर महेश्वर की पूजा करके पर्वत की पुत्री को और उनके बच्चो को देखकर उनकी वन्दना की और नन्दिकेश आदि भूतो की पूजा और सेवा की ताकि वे भी तृप्त हो जायँ । महादेवजी ने उन पर खूब अनुग्रह किया । तदनन्तर हिमालय के अच्छे परिचय के लिए उसके अद्भुत और अत्यन्त ऊँचे शिखरों को देखा और शिव ! शिव ! कहते हुए उनको हाथ जोड़े । तदनन्तर घोर तपोबलवाले पुरोहितो ने विविध होम और पूजाओ के द्वारा उस चारुनिधि का पहरा देनेवाले देवताओ की पूजा करके उनकी तृप्ति की । ३५-४१ तत्पश्चात् खोदने के वाद जो निधि दिखाई दिया उसका वर्णन करना विलकुल असंभव है । स्वर्ण के विविध प्रकार के पात्र, स्वर्ण के ऊँचे-ऊँचे हाथी, घोड़े, गाय, बैल अपरिमित सख्या में मूल और फलो

पौन्नुकौण्टुळ्ळ पात्रङ्ङळ् पलतर-
मुन्नतवारण वाजि पशु वृप-
मेन्निव पौन्नुकौण्टुळ्ळतनवधि ४३
मूलफलङ्ङळ्पोले चमच्चुळ्ळतु
मालकळादियामाभरणङ्ङळु ४४
अंगुलीयङ्ङळ् कण्टालुमोरोन्निव-
यंगङ्ङळूटे किळिक्का नमुक्कॆल्लां । ४५
पण्टुळ्ळ देहङ्ङळॆन्न वलुतिव
कण्टालुं नां कृमिकळ्क्कु सममल्लो । ४६
ऎन्निवयोरोन्नु विस्मय पूण्टव-
रन्योन्यमालापवुचॆय्तु कौतुकाल् । ४७
अटमिल्लातोळमुळ्ळ रत्नङ्ङळु
मटुमव्वण्णमपूर्व्वमां वस्तुक्कळ् । ४८
ऒक्कयॆटुत्तोरु पौन्निन्मलपोलॆ
पौक्कत्तिलङ्ङु कूट्टीटिनारतुन्नेरं । ४९
पण्टु पण्टुळ्ळ राजाक्कळितॆङ्ङने-
युण्टाक्कियवारितॆन्नयुमत्भुत ! ५०
क्षोणीपतिकळ्समृद्धि पण्टीवण्ण
नाणमाकुन्नु नमुक्किव काणुन्पोळ् । ५१
इत्थं परञ्ञु परञ्ञिवरोरोरो-
हस्तिकळ् वाजिकळॊट्टकक्कूट्टङ्ङु- ५२
ळस्तभारश्रमं पूण्ट कळुतकळ्
नन्नाय् चुमन्नोरुलक्षत्तिलु परं । ५३

के समान वस्तुएँ, माला आदि आभूषण, और अगुलीयक जो देखने मे ऐसे लगते थे कि हम उनके अन्दर से निकल सकते हो। पुराने लोगो के शरीर इतने वडे थे कि उनके सामने हम लोग कीड़ो के समान है। इस प्रकार एक-एक पदार्थ को देखकर वे विस्मित होते हुए आपस मे वार्तालाप करने लगे। अपरिमित रत्न और अन्य नये-नये पदार्थ थे। ४२-४८ तव उन्होने उनका स्वर्ण का सा एक पर्वत इकट्ठा किया। पूर्वकाल के राजाओ ने यह सब कैसे सग्रह किया है ? कैसा आश्चर्य है ! पूर्वकाल मे राजाओ की ऐसी समृद्धि थी। यह देखकर हम लोगो को लज्जा होती है। इस प्रकार कहते हुए उन्होने हाथी, घोड़े, ऊँटो के समूह, वड़े वोझ उठानेवाले

पिन्नेयुमोरोरो किङ्करन्मार् चुम-
न्नेण्णायिरंकोटियुण्टल्लो कालाळु । ५४
तेरुकळुळ्ळवयोक्क निरञ्ञारे
पोराञ्ञु कालाळ् चुमन्नु विशेषिच्चुं ५५
सेनापतिकळु मन्त्रिवरन्मारुं
मानं वेटिञ्ञु चुमन्नारतुनेर । ५६
भीमसेनन्तानेटुत्तु नटन्नितु
भूमियुमोन्नु चाञ्चाटियतुनेरं । ५७
ञङ्ङळोटुक्कं वन्नोरुमूलं निङ्ङळ्
तङ्ङळ्तङ्ङळ्क्कु वेण्टुन्न पदार्थङ्ङळ् ५८
तङ्ङळ्तङ्ङळ् चुमन्नीटुविन् निङ्ङळ्क्कु
ञङ्ङळ् कल्पिच्चुळ्ळतङ्ङु चेन्नाल् तरां । ५९
ऎन्नङ्ङयच्चु कोटुत्तितु धर्म्मजन् ।
तन्नोटुकूटवे पोयवर्क्कोक्कवे ६०
आनन्दमोटे निधियुमेटुप्पिच्चु ।
मानं कलर्न्न महीपतिवीरन्मार् ६१
आनयु तेरुं कुतिरयु कालाळु—
मानकदुन्दुभिशंखादि वाद्यवुं ६२
आनन्दमुळ्ळिल् निरञ्ञु वळिञ्ञोळु-
माननपद्मङ्ङळोटुमतुनेरं ६३

गदहे आदि एक लाख जानवरो पर यह सब लाद दिया। इसके अतिरिक्त अनेक भृत्यो ने भी बोझ उठाया; आठ हज़ार कोटि की सेना तो थी ही। जब सभी उपलब्ध रथ भर गये तब पैदल सैनिको ने विशेषत बोझ उठाया। सेनापति, मन्त्रिवर, सभी ने अभिमान छोड़कर भार उठाया। भीमसेन भी भार उठाकर चले और उस समय भूमि कॉपने लगी। ४९-५७ युधिष्ठिर ने कहा— "आप जो हम लोगो के साथ आये, इसलिए अपनी-अपनी इष्ट वस्तुओ को स्वय उठा ले चलिये, वहाँ पहुँचने पर मैं आप ही को दिला दूँगा"। इस प्रकार उन्होने आज्ञा दी। अपने साथ जो गये थे उनसे सानन्द निधि उठवाया। अभिमान रखनेवाले राजगण और उनके हाथी, रथ, घोड़े और पैदल सैनिक आनक, दुन्दुभि, शख आदि वाद्य बजाते हुए, भीतर आनन्द का अनुभव करते हुए, अपने मुखकमलों के साथ उस समय दक्षिण की ओर चले। आकाश तो विमानो से अलकृत हुआ। वासुदेव, देवदेव, जगत्पति, इन्द्र का सेवित, नन्दपुत्र, माधव, ५८-६५

घोषिच्चु तॆक्कुतिरिच्चु नटकॊण्टार् ।
भूपिच्चिताकाशवुं विमानङ्ङळाल् । ६४
वासुदेवन् देवदेवन् जगत्पति
वासवसेवितन् नन्दजन् माधवन् ६५
वासवपुत्रप्रियन् वयस्यन् परन्
वासुकिपूर्व्वजभोगिशयननॆ- ६६
न्मानसतारिलिरुन्नरुळु कृष्णन्
मानमिल्लात विभूतियुटयवन् ६७
मानवनाय्पिरन्नोरु मायामयन्
मानिनिमार्मनोधैर्यचोराधिप- ६८
नुद्धवर्सात्यकि सारणसांबादि-
भृत्यपुत्रन्मारुमग्रजन्तानुमाय् ६९
मत्तगजरथवाजि पदातिया-
मुत्तमसैन्यसमेतमॆळुन्नळ्ळि ७०
हस्तिनमाय पुरि पुक्करुळिनान्
चित्तमोदेन विदुरादिकळाकु- ७१
मुत्तमन्मारॆतिरेट्टु पूजिच्चितु
भक्तिकण्टेटं तॆळिञ्ञु भगवानुं । ७२

परीक्षित्तिन्टॆ जनन

उत्तरयुं पुनरन्नु पॆट्टीटिना-
ळस्त्रशक्त्या बत निर्ज्जीवनायॊरु- १

इन्द्रपुत्र के प्रिय, वयस्य, पर, वासुकि के पूर्वज नागरूपी शय्या पर लेटनेवाले, मेरे मन में विराजमान कृष्ण, निस्सीम विभूति से युक्त, मानव के रूप मे पैदा हुए मायामय, मानिनियो का मनोधैर्य चुरानेवालो के अधिपति, उद्धव, सात्यकि, सारण, साव आदि भृत्यपुत्रो के साथ और अपने बडे भाई के साथ और मत्त हाथी, रथ, घोडे और पैदल सैनिको से युक्त उत्तम सेना के साथ हस्तिनपुर पधारे और वहाँ पुरी के अन्दर जाकर विराजे। विदुर आदि उत्तम व्यक्तियो ने बड़े प्रमोद के साथ उनका स्वागत किया और उनकी भक्ति को देखकर भगवान् भी प्रसन्न हुए। ६६-७२

परीक्षित् का जन्म

उस दिन उत्तरा ने एक पुत्र को जन्म दिया। अस्त्र की शक्ति से

पुत्रनेक्कण्टु दुःख कलन्नेत्त्रियु-
मत्तलूपूण्टेट करञ्ञु करञ्ञुट- २
नुत्तर वीणुरुण्टीटिनाळन्नेरं ।
भक्तप्रिय ! परमानन्द ! गोविन्द ! ३
पाहि मा पाहि मा देवकीनन्दन !
पाहि मा पाहि मा कृष्ण ! कृपांबुधे ! ४
सन्तानसन्दानसन्तानसन्निभ !
सन्तापनाशन ! सन्तोपकारण ! ५
चिन्तितचिन्तामणे ! जगन्मगल !
हन्त हाहा शरणं चरणांबुजं । ६
कृष्ण ! शरणं शरणं मुररिपो !
वृष्णिप्रवर ! शरण मधुरिपो ! ७
विष्णो ! शरणं शरणं हरे ! विभो !
जिष्णुवयस्य ! शरणं जगत्प्रभो ! ८
वारणतापनिवारणकारण !
कारणपूरुष ! नाथ नरकारे ! ९
दारुणवारणमारणकारण !
चारणसेवित ! कारुण्यवारिधे ! १०
नारायण ! शरणं शरणं हरे !
नारदवन्दित ! नारकनाशन ! ११

निर्जीव उस पुत्र को देखकर वह दु खित हुई और रोती गयी और अन्त मे ज़मीन पर गिरकर लोटने लगी। हे भक्तप्रिय! परमानन्द! हे देवकीनन्दन! मेरी रक्षा करो! मेरी रक्षा करो! हे कृपासागर कृष्ण! मेरी रक्षा करो! हे! सन्तानरूपी बन्धन की परम्परा के समान! हे दु ख का नाश करनेवाले, हे सन्तोष करनेवाले! हे इष्ट की प्राप्ति करनेवाले! हे जगन्मगल! हा हन्त! तुम्हारा चरणाबुज ही मेरा शरण है! हे कृष्ण! तुम ही मेरा शरण हो, हे मुरारि! तुम ही शरण हो। हे वृष्णिप्रवर! हे मधुरिपु! तुम ही शरण हो! १-७ हे विष्णो! हे विभो! तुम ही शरण हो! हे अर्जुन के मित्र! हे जगत् के प्रभो! तुम ही शरण हो! हे हाथी के दु ख के निवारण का कारण! हे कारणपुरुष! हे नाथ! हे नरकारि! हे घोर हाथी के मारण का करण! हे चारणो के सेवित! कारुण्यसागर! हे हरे! हे नारायण! तुम ही शरण हो, तुम ही शरण! हे नारदजी के

नारीजनमनोमोहन ! कोमळ !
नारायण ! शरण कमलापते ! १२
इत्थं परञ्ञीटुमुत्तरतन्नुटे
चित्ततापं कण्टु कुन्तियुमन्नेर १३
भक्तिकलर्न्नु मुकुन्दपादांबुजं
नत्वा कुलं मम रक्षिच्चरुळेन्नाळ् । १४
सत्यपरायण ! सच्चिन्मय ! हरे !
सत्यस्वरूप ! सकलजगत्पते ! १५
भक्तप्रिय ! परमानन्द ! गोविन्द !
मुक्तिप्रद ! मुराराते ! रमापते ! १६
श्रीकृष्ण ! राम ! यदुपते ! गोपते !
श्रीकान्त ! केशव ! माधव ! श्रीनिधे ! १७
शोकजरामरणादिकळिल्लात
योगेश ! योगीश्वरप्रिय ! कसारे ! १८
दामोदरा ! हरे ! कारुण्यवारिधे !
कोमळविग्रह ! दैत्यकुलान्तक ! १९
पुण्डरीकेक्षण ! पीतांबर ! विभो !
पुण्डरीक ! गदाशंखचक्रायुध ! २०
विश्वंभर ! परमेश्वर ! शाश्वत !
विश्वंभरापते ! विश्वरूप ! प्रभो ! २१

वन्दित ! हे नारक के नाशक ! हे नारीजन के मन का मोह करनेवाले ! हे कोमल ! हे नारायण ! हे कमलापते ! तुम ही शरण हो ! इस प्रकार विलाप करनेवाली उत्तरा का मनस्ताप देखकर कुन्ती ने उस समय भक्ति के साथ मुकुन्द के चरणकमलो को प्रणाम करके कहा—"मेरे कुल की रक्षा करो।" ८-१४ हे सत्यपरायण ! हे सच्चिन्मय, हे हरे ! हे सत्यस्वरूप ! हे सकलजगत्पते ! हे भक्तिप्रिय ! हे परमानन्द ! हे गोविन्द ! हे मुक्तिप्रद ! हे मुरारि ! हे रमापते ! हे श्रीकृष्ण ! हे राम ! हे यदुपते! हे गोपते ! हे श्रीकान्त ! केशव ! माधव ! हे श्रीनिधे ! हे शोक, जरा, मरण आदि से रहित योगेश, हे योगीश्वरो के प्रिय, हे कस के शत्रु ! हे दामोदर ! हरे ! कारुण्यसागर ! हे कोमल शरीरवाले ! हे दैत्यों की कला का नाशक ! से कमललोचन ! पीतांबर ! हे विभो ! हे पुण्डरीक ! हे गदा, शंख और चक्र धारण करनेवाले ! हे विश्वंभर ! परमेश्वर ! शाश्वत ! हे पृथ्वीपते ! विश्वरूप ! प्रभो ! तुम से रहित कोई वस्तु कभी

लॉक्क नटन्नु कुळिप्पतिन्नॅङ्ङळॅ २६
ऑक्कयॅट्टु परक्कणं नीयॅन्नु
चक्रिवरन्मार् परञ्ञतु केट्टॉरु २७
दुःख कलर्न्नु मातावोटु चोदिच्चान् ।
पक्षिवरन् परमार्थमरिवानाय् । २८
कारणमॅन्तिवर् चॉल्लुन्नतु चॅय्वान्
नेरे परयणमॅन्नोटु मातावे ! २९
आत्मजनिङ्ङनॅ चोदिच्चनेरत्तु
आत्मखेदत्तोटु चॉन्नाळ् विनतयुम् । ३०
कद्रु चतिच्चु तन् दासियाक्किक्कॉण्टाळ्
ऍत्रयुं पीडयाय् वन्नूततिन्मूलम् । ३१
अक्कथयॉक्कप्परञ्ञु केळ्प्पिच्चप्पोळ्
दुःखमुळ्क्कॉण्टु विनतातनयनुम् । ३२
दन्तशूकोत्तमन्मारोटु चोदिच्चा-
नॅन्तुञ्ञान् वेण्टतटिमयोळिप्पति- ३३
न्नन्तरमिल्ल साधिप्पनतिन्निनि-
च्चिन्तित चॉल्लुविनॅन्नतु केट्टप्पोळ् ३४
नीयिनि वैकातॅ चॅन्नु वरुत्तुक
पीयूषमॅन्नालटिमयॉळिञ्ञुपोम् । ३५

उस समय एक दिन अक्षिकर्णो[1] (सर्पो) ने पक्षिकुलाधिप (गरुड) से कहा—"स्वर्ग के समान और द्वीपान्तरो मे घूमकर स्नान करने के लिए हम लोगो को लेकर तुम उड चलो"। चक्रिवरो (सर्पो) का कहना सुनकर गरुड ने परमार्थ[2] जानने के लिए दुःख के साथ अपनी माता से पूँछा—"क्या कारण है कि हम इनके कहने के अनुसार करे? माता जी मुझ से परमार्थ बतलाइए"। जब पुत्र ने इस प्रकार पूछा तब विनता ने खेद के साथ कहा— २५-३० "कद्रू ने वञ्चना करके मुझे अपनी दासी बनाया, इसलिए हमको यह अत्यन्त पीडा सहनी पड रही है"। जब वह सारी कथा सुनायी गयी तब विनता का पुत्र अत्यन्त दुःखित हुआ। उसने दन्तशूको (सर्पो) से पूछा—"दासत्व से मुक्ति पाने के लिए मुझे क्या करना है? कोई भेद न होगा, मैं वही करूँगा, अपनी अभिलाषा बतलाइए"।

१ नेत्रो से सुनने वाले २ रहस्य।

घोरमायुळ्ळॊरु चक्रतेजस्सिनाल्
दूरनीङ्ङी विरिञ्चास्त्रतेजोबल । ३
बालकन् जीविच्चु मातावुतन् मुल-
प्पालु कुटिच्चु तॆळिञ्ञु विळङ्ङिनान् । ४
पालिच्चितिङ्ङनॆ पाण्डवर् सन्तति
कालस्वरूपना कृष्णन्तिरुवटि । ५

अश्वमेधयागं

पार्त्थादिकळु निधियुमाय् वन्नितु
पार्त्तॆतिरेट्टितु वासुदेवादिकळ् । १
मित्रपुत्रार्त्थलाभंकॊण्टु सन्तुष्ट-
चित्तन्मारायिरुन्नीटिनार् पाण्डवर् । २
अश्वमेधत्तिनारभिक्कयॆन्नतु
विश्वनाथन्तानरुळ्चॆय्तितन्नेर । ३
अग्रजन्मारॆयुमच्युतन्तन्नॆयु-
मग्रे वणङ्ङि नटन्नितु फल्गुनन् । ४
अश्वं नटत्तुवान् मट्टुळ्ळवर्कळुं
निश्शेषस्तुक्कळ् सभरिच्चीटिनार् । ५
दिक्कुकळॊक्कजयिच्चु तिरु वाङ्ङि
मुख्यनृपन्मारॆयु जयिच्चङ्ङनॆ ६

उनके घोर चक्र के तेज के बल से ब्रह्मास्त्र के तेज का बल दूर हो गया। बालक जीवित हुआ और माता का दूध पीता हुआ विराजमान रहा। कालस्वरूप भगवान् कृष्ण ने इस प्रकार पाण्डवो की सन्तान का पालन लिया। १-५

अश्वमेधयज्ञ

अर्जुन आदि निधि लेकर आये और वासुदेव आदिको ने उनका स्वागत किया। मित्रो और पुत्रो के अर्थ के लाभ से पाण्डव सन्तुष्ट हो गये। इस समय विश्वनाथ (कृष्ण) ने स्वय कहा कि अश्वमेध की तैयारी करो। अर्जुन तो अपने वडे भाइयो को और अच्युत को प्रणाम करता हुआ आगे बढा। और लोगो ने घोड़े को घुमाने के लिए सारी सामग्री इकट्ठा की। सभी दिशाओ को जीतकर, कर भी लेकर, और मुख्य राजाओ

नीयोंळ्ळिञ्ञेतुमोरुनाळुमिल्ल नि-
न्मायाविलासङ्ङळाक्करिञ्ञीटावू । २
नीयोंळ्ळिञ्ञारु रक्षिप्पतु ञङ्ङळे
नीयल्लयो कात्तुकोण्टतुमिन्नियु २३
निन्नेयोंळ्ळिञ्ञरियुन्नीलोरुनाळु
पुण्यपुरुष ! पुरुषोत्तम ! विभो । २४
स्थावरजगमजातिकळ्क्कोक्कवे
जीवनाकुन्न निनक्कु निरूपिच्चाल् २५
जीवनिल्लाते पिरन्न किटाविनु
जीवनुण्टाक्कुवानेन्तोरु सङ्कट । २६
सन्तापमोटु तोळ्ळुतळ्ळुतीटिनाळ्
कुन्तियुमव्वण्णतन्ने सुभद्रयु । २७
अन्तिके वीणु कुरुवरस्त्रीजनं
वेन्तळल्पूण्टु करयुन्नतुनेरं । २८

परीक्षित्तिने भगवान् जीविप्पिक्कुन्न चरित

अच्युतन्तानुमतुकण्टु मानसे
निश्चित्य कार्यं निरूपिच्चु सत्वरं । १
उत्तरयोटु वाङ्ङीटिनान् तन्नुटे
हस्तपद्मं कोण्टु वालशरीरवुं । २

नही हुई। तुम्हारी माया के विलासों को कौन जानता है ? १५-२२ तुम्हे छोडकर हमारी कौन रक्षा करेगा ? तुम्ही ने तो आज तक रक्षा की है। हे पुण्यपुरुष ! हे पुरुषोत्तम ! हे विभो ! कोई दिन नही है जो तुम से रहित हो ! स्थावर और जगम जातियो का तुम ही जीवन हो। अतएव, अगर विचार किया जाय, तो जो बच्चा निर्जीव पैदा हुआ, उसको जीवन देने मे तुम्हें कोई कठिनाई नही है। इस प्रकार दुखित होकर कुन्ती रोती रही और सुभद्रा भी, कुरुवरों की स्त्रियाँ भी निकट ही मे गिरकर दुःख से रोने लगी। २३-२८

भगवान् द्वारा परीक्षित् को जिलाने की कथा

यह सब देखकर अच्युत ने, जो करना है, अपने मन मे निश्चय किया और अपने करकमलो मे उत्तरा से बच्चे का शरीर ले लिया।

दक्षिणयु चेय्तु याग समर्प्पिच्चु
दिक्कुकळोक्कप्पुटपुळङ्ङुवण्ण १७
वाद्यनिनादकोलाहलत्तोटुक्-
टाद्यनां कृष्णन्तिरुवटितन्नोटुं १८
मन्त्रवर्मन्ननवभृतस्नानवुं
विण्णोर्नदियिलाम्मारु चय्तीटिनान् । १९
भोजनवु कळिच्चात्मवन्धुक्कळ्क्कु
पूजयु चेय्तु पुक्कीटिनारास्थानं । २०
सामन्तसोदरभृत्यपुरोहित
भूमीन्द्रभूदेवतापसन्मारोटुं २१
दिव्यसिंहासनं पुक्कितु भूपति
सव्यसाचिप्रियनव्ययनीश्वरन् । २२
कृष्णन्तिरुवटि वृष्णिकुलाधिपन्
जिष्णुमुखामरवन्द्यन् जनार्द्दनन् २३
इन्दिरावल्लभनिन्दीवरेक्षण-
निन्दुबिंबाननिन्द्रारिनाशनन् २४
अंवुजलोचनन् विंवफलाधर-
नंवुजनाभननन्तननाकुलन् । २५
तुंवुरुनारदगन्धर्व्वचारणा-
द्यंवरचारिनिपेवितन् माधवन् २६
अंविकावल्लभसेवितन् केशव-
नंवुजसंभववन्दितन् केवलन् २७

साथ सर्वप्रथम भगवान् कृष्ण को आगे-आगे रखते हुए राजाओं के राजा ने दिव्य नदी में अवभृत स्नान किया। तदनन्तर भोजन के बाद अपने बन्धुओं की पूजा करके सब ने आस्थानमण्डप में प्रवेश किया। सामन्त, सोदर, भृत्य, पुरोहित, ब्राह्मण और तापसों के साथ, १५-२१ राजा दिव्य-सिंहासन पर विराजे। सव्यसाचि (अर्जुन) के प्रिय, अव्यय, ईश्वर, भगवान् कृष्ण, वृष्णिकुल का अधिपति, इन्द्र आदि देवों के वन्द्य, जनार्दन, इन्दिरावल्लभ, इन्दीवरलोचन, इन्दुबिंब के समान मुखवाले, इन्द्र के शत्रुओं के नाशक, कमललोचन, बिंबफल के समान ओठवाले, नाभि में कमल का धारण करनेवाले, अनन्त, अनाकुल, तुंबुरु, नारद, गन्धर्व, चारण आदि आकाश-चारियों से सेवित, केशव, ब्रह्मा के वन्दित, केवल, जगत् की

पार्थनुमश्ववुं कोण्टुवन्नानोरो
पार्त्थिवन्मारु मुतिर्न्नु वन्नीटिनार् । ७
आन तेर् कालाळ् कुतिरप्पटकळु
मानं कलर्न्नोरु वृष्णिप्रवररु ८
वैश्यरुं शूद्ररुं वन्नीटिनार् नाना-
देश्यन्मारायुळ्ळ विद्वज्जनङ्ङळुं । ९
नल्ल मुहूर्त्तवुमोर्त्तु यथागमं
कल्याणमोटु दीक्षिच्चितु भूपनु । १०
पण्टनेकं जनं चेय्त यागङ्ङळु
कण्टीलिवण्णमेन्नु विवुधादिकळ् । ११
अन्तु चेतं नल्ल वन्धुवाकुन्नतो
चेन्तामरक्कण्णनां कृष्णनल्लयो । १२
भृत्यप्रवृत्ति चेय्युन्नितु माधवन्
पृथ्वीपतिकळ् मटार्क्किवण्णं वरू । १३
भाग्यवान्मारिल् वच्चग्रेसरनाय्-
तोर्क्किल् युधिष्ठिरनाय नराधिपन् । १४
इत्थं महालोकरोक्कप्परकयु-
मर्त्थं मतिमतियेन्नु मोदिक्कयुं १५
पृत्थ्वीशनाशीर्व्वचनङ्ङळ्चेय्कयुं
चित्तं कुळिर्त्तु पुकळ्त्तियुं सज्जनं । १६

को जीतकर, अर्जुन घोड़े को वापस लाया और भिन्न-भिन्न राजा भी सोत्साह पधारे । १-७ हाथी, रथ, पैदल, सैनिक और घुड़सेना और अभिमान रखनेवाले वृष्णिप्रवर वैश्य, शूद्र और भिन्न-भिन्न देशो के विद्वज्जन भी पधारे । राजा ने भी शास्त्रो के अनुसार शुभ मुहूर्त मे मगलदीक्षा ली । विद्वानों ने कहा कि पूर्वकाल मे औरो ने जो अनेक यज्ञ किये थे वे इस स्तर के न थे । उनका क्या विगडता है ? क्या कमलोचन कृष्ण उनका वन्धु नही है ? माधव भृत्यो का भी काम करते है, अन्य किन राजाओ के लिए यह वात हो सकती है ? भाग्यशालियो में, अगर विचार किया जाय, तो राजा युधिष्ठिर ही सवसे प्रथम निकले । ८-१४ जनता ने इस प्रकार की वाते की, और इतना अर्थ दिया गया कि सवने प्रमोद से कहा— "बस ! बस !" और राजा को आशीर्वाद दिया । सज्जनो ने प्रसन्न होकर राजा की प्रशंसा की । दक्षिणा देकर याग समाप्त किया गया । सभी दिशाओ मे फैलनेवाले वाद्यो के निनाद और कोलाहल के

उण्टॊरु वापिपोले किटक्कुन्नतु
कुण्टुमुण्टेट्टं परप्पुमुण्टाकयाल् । २
वन्नॊरु कीरियतिल् मुळुकिक्करे-
रुन्नितु पिन्नॆयुं पिन्नॆयु पिन्नॆयुं । ३
पॊन्नुपोलेयॊरुभागं निऱमति-
नन्त्यभागं निऱं मुन्नमेपोलॆयु । ४
भूमिदेवन्मारतुकण्टु चोदिच्चार्—
नी मुतिर्न्नॆङ्ङळोटाशु चॊल्लीटणं । ५
निन्नुटल् पातियुमिङ्ङनॆयॆङ्ङनॆ
पॊन्निऱमायवारॆन्नितु साहसाल् ६
इन्नितिलॆन्तिनु नी मुळुकुन्नितु
पिन्नॆयु पिन्नॆयुं वीणनेकतर ? ७
ॲन्नतु केट्टु पऱञ्ञितु कीरियु-
मिन्नतु निङ्ङळ्क्कु ञान् पऱयेणमो ? ८
ञानतु नेरे पऱयुन्ननेरत्तु
मानसे निङ्ङळ्क्कु खेदमुण्टाय् वरुं । ९
चॊल्लेणमॆङ्किलो चॊल्लुवन् निङ्ङळु-
मॆल्लावरुं चॆवि तन्नु केट्टीटुविन्— १०
ॲङ्किलो पण्टु सक्तुप्रस्थना द्विजन्
पङ्कङ्ङळॆल्लामकन्न तपोनिधि ११

वहुत गहरा भी था और बहुत चौडा भी। अतएव एक नकुल आकर उसमे मज्जन करता और निकल कर फिर मज्जन करता। इस प्रकार वार-वार करता रहा। उसका वर्ण एक भाग मे सुवर्ण के समान था, पर दूसरे भाग मे उसका वर्ण प्राकृतिक ही था। यह देखकर ब्राह्मणो ने पूँछा— तुम एक बात तो सच्चाई के साथ हम लोगो से वतलाओ— तुम्हारा शरीर आधा स्वर्ण का सा कैसे हुआ? १-६ और क्या कारण है कि आज तुम इसमे वार-वार मज्जन करते हो? यह सुनकर नेउले ने कहा, क्या मै आज इसका उत्तर दूं? जान लीजिये कि अगर मैं कहूँगा तो आप लोगों को अपने मानस मे खेद हो जायगा। अगर मुझे कहना ही है तो मैं कहूँगा। आप लोग मुझे कान देकर सुन लीजिये।— पूर्वकाल मे एक सक्तुप्रस्थ ब्राह्मण था जो अत्यन्त निर्मल था और एक तपोनिधि था। वह अपनी पत्नी, अपने पुत्र और अपनी पतोहू के साथ रहता था। वे

विश्वसृष्टिस्थितिसंहारकारणन्
विश्वरूपन् परन् विश्वंभरावरन् २८
भक्तप्रियन् वासुदेवन् परमात्मा
भुक्तिमुक्तिप्रदन् शक्तियुक्तन् देवन् २९
आस्थानमण्डपे रत्नसिंहासन-
मास्थया संप्राप्तनायोरुनेरत्तु ३०
नक्षत्रमण्डलमद्ध्ये विळङ्ङुन्न
नक्षत्रनाथनेप्पोले विळङ्ङिनान् । ३१
ऍन्नुळ्ळिलाम्मारिरुन्नरुळुन्नवन्
तन्नेयु कण्टुकण्टानन्दमुळ्क्कोण्टु ३२
कण्णुकळेल्लां कुळिर्त्तु कुळिर्त्तव-
रॆण्णमिल्लातोळं सन्तोषचेतसा । ३३
विण्णवर्नायकन् चेन्नु सुधर्म्मयिल्
विण्णवरोटुमिरुन्नपोले तदा ३४
मन्नवर्मन्नवनाय युधिष्ठिर-
नुन्नतरत्नसिंहासने मेविनान् । ३५

नकुलोपाख्यानं

अप्पोळोरत्भुतं कण्टितेल्लावरु
विप्रप्रवररेक्काल्कळुकिच्च नीर् । १

सृष्टि, स्थिति और संहार के कारण, विश्वरूप, पर, विश्वंभरा के वर, २२-२८ भक्तप्रिय, वासुदेव, परमात्मा, भुक्ति और मुक्ति प्रदान करनेवाले, शक्तिशाली, देव, जब आस्थानमण्डप मे अपने रत्नसिंहासन सादर पहुँचने पर तब नक्षत्रो के बीच मे विराजमान चन्द्र की भाँति विराजते है ऐसा लोगो के मन मे भानेवाले को देखकर आनन्द से आँखो की तृप्ति हुई। तब निस्सीम सन्तोष के साथ राजाओ के राजा युधिष्ठिर अपने ऊँचे रत्न-सिंहासन पर चमके, जिस प्रकार देवों के नायक देवो के साथ सुधर्म्मा (देवसभा) मे विराजते है। २९-३५

नकुलोपाख्यान

उस समय सब को एक अद्भुत (दृश्य) दिखाई दिया। जिस पानी से ब्राह्मणो के पैर धोये गये थे उसका एक तालाब सा बन गया था। वह

भर्त्तृशुश्रूषणं धर्म्ममिनिक्कॆन्नु
पत्नियुमेट्टमुरच्चु चॊल्लीटिनाळ् । २२
पुत्रनतुकेट्टवरोटु चॊल्लीटिनान्—
वृद्धतपूण्ट पितावु जननियुं २३
क्षुत्तिनु पात्रमल्लॆन्नुटॆयोहरि
पृत्थ्वीसुरनु नल्कीटुक वैकातॆ । २४
पुत्रनुटॆ पत्नि चॊल्लिनाळन्नेरं
भर्त्तावुपजीवियातॆयिरिक्कवे २५
आनुपजीविक्कयॆन्नुळ्ळतिल्लल्लो
दानं चॆय्कॆन्नुटॆ भागमतिथिक्कु । २६
तम्मिलीवण्णमन्योन्यं परञ्ञोरु-
धर्म्माधर्म्मङ्ङळुं युक्तिवादङ्ङळु २७
विस्तरिच्चिच्पोळॆनिक्कु चॊल्वान् पणि
चित्तमलिञ्ञु कालुं कळुकिच्चुटन् २८
तातन् तनिक्कुळ्ळ भागं विळम्पिना-
नेतुमे वन्नीलतिथिक्कलंभाव । २९
अन्नेरमाशु जननियुं संभ्रमाल्
तन्नुटॆ भागवुं कूटॆ नल्कीटिनाळ् । ३०
ऒन्निट्टु वन्निल्लतिथिक्कलंभावं
ऒन्नवारॆ मकनुं कॊटुत्तीटिनान् ३१

होगा । तुम लोगो का पालना तो मेरा कर्त्तव्य है", (पिता ने फिर कहा)। तव पत्नी ने निश्चितरूप से कहा 'पति की शुश्रूपा ही मेरा धर्म है ।" यह सव सुनकर पुत्र ने कहा— मेरे वृद्धि पिता और माता भूँख के पात्र विलकुल नही है । इसलिए मेरा हिस्सा जल्दी ब्राह्मण को दिया जाय । तव पुत्र की पत्नी ने कहा— जव मेरे पति नही खा रहे है तव मै खाऊँ, यह तो विलकुल असंभव है । इसलिए मेरे हिस्से को जल्दी अतिथि को दे दीजिये । २१-२६ इस प्रकार जो उन्होने आपस में धर्म और अधर्म की वाते की और युक्तिवाद वतलाये उनका विस्तर से वर्णन करना कठिन है । पिता ने दयार्द्र होकर अतिथि के पाँव धुलवाकर उनको अपना हिस्सा परोस दिया । पर अतिथि को तृप्ति विलकुल ही न हुई । उस समय माता ने घवड़ा कर अपना हिस्सा भी परोस दिया । तव भी अतिथि को तृप्ति न हुई । उस पर पुत्र ने अपना हिस्सा भी दे दिया और पुत्र की पत्नी ने भी उस समय प्रसन्न होकर अपना भाग भी दे दिया । तृप्त

पत्नियोटुमॊरु पुत्रनोटु पुत्र-
पत्नियोटुकूटे वाळुन्न कालत्तु । १२
नित्यमुतिर्मणियुं पॆरुक्किक्कॊण्टु
वृत्ति कळिच्चु वसिक्कुमाराकुन्नु । १३
अन्नॊरु नाळॊरु कोलायिलाम्मारु
चॆन्नु पॆरुक्किय नॆन्मणि कॊण्टुपो- १४
न्नॊक्के वरुत्तुमियोटॆ पॊटिच्चतु-
नळियुण्टुळ्ळतवक्कुं नालवर्क्कुमाय् । १५
भीपणमाय तपोवलनिष्ठया
स्वाद्ध्याय पैतृदेवादिकळुं कळि-
च्चास्थया चॆन्नु भुजिप्पानिरुन्नितु १६
नालोहरियाय्पकुत्तु विळम्पिय्-
नेरत्तु वन्नानॊरु वळिपोक्कनुं । १७
आलस्यमोटु विशन्नु दाहिच्चवन्
कालत्तु नल्कुविन् तण्णीरिनिक्कॆन्नान् । १८
ऎङ्किलतिथिक्कॆनिक्कु विळम्पिय-
तंघ्रि कळ्कुकॆन्नानथ तातनुं । १९
अङ्ङु विळम्पियतल्लिनिक्कुळ्ळतु-
ण्टङ्ङवनॆन्नु पऱञ्ञितु मातावु । २०
अङ्ङनॆयल्लतु धर्म्मवुमल्लल्लो
निङ्ङळॆ ञान् भरिक्कॆणमॆन्नुण्टल्लो । २१

प्रति-दिन खेत में गिरे धान्य के दानों को बीन-बीन कर अपनी वृत्ति करते थे । ७-१३ उस समय एक दिन किसी बरान्दे में बिने गये धान के दाने घर ले जाकर जब तुप के साथ ही भुनाकर पीसा तो चारों को मिलाकर पाव भर निकला । जब भीपण तपोबल की निष्ठा के साथ अपना स्वाध्याय और पितरों और देवों की पूजा समाप्त करके बड़ी आस्था के साथ भोजन करने बैठे और जो कुछ था वह चार हिस्सों में परोसा गया तब एक पथिक आ पहुँचा । वह बहुत थका था, भूँखा और प्यासा । वह बोला 'जल्दी ज़रा पानी पिलाओ' । तब पिता ने कहा— "जो मेरे लिए परोसा गया वह अतिथि खायेंगे । पैर धो लीजिये" । "आप के लिए परोसा हुआ नहीं", माता ने कहा, "जो मेरे लिए परोसा गया है, वही अतिथि का है" । १४-२० "यह नहीं हो सकता है । ऊपर से यह धर्म भी नहीं

नारायणस्वामितानरुळिच्चेय्तु
पोरुविन् वैकुण्ठलोकत्तु वैकातॆ ४२
निङ्ङळ्क्कोरुनाळुमिल्लोरधोगति ।
ञङ्ङळिलोन्नाय् जगत्स्वामि तन्नेयु ४३
नन्नाय् परिचरिच्चानन्दमुळ्क्कोण्टु
नन्दोपनन्दादिकळालु मान्यराय् ४४
वाळ्केन्नु देवदूतन्माररुळ्चेय्तु
पोकेन्नु मेल्प्पोट्टु कोण्टुपोयीटिनार् । ४५
अप्पोळतिथियेक्काल्कळुकिच्च नी-
रल्पमत्रे बलाल् आनविटेच्चेन्नेन् । ४६
अप्पुऱमोक्क ननञ्ञोरनन्तर-
मप्पोळे पोन्निऱमाय्वन्नितप्पुऱ । ४७
अऱ्‌मिल्लातोळं भूसुरेन्द्रन्मारे-
क्कुऱ्‌मोळिञ्ञुटन् काल्कळुकिच्चनीर् ४८
अब्धिपोले किटक्कुन्नतुकण्टु म-
टॆप्पुऱं पोन्निऱमाय् वरुमेन्नोर्त्तु ४९
वन्नितिल् चाटि मुळुकिनेनावोळ-
मेन्निट्टुमेतुमोरुफलं वन्नील । ५०
नन्नु सक्तुप्रस्थनाल् कृतमायोरु-
पुण्यफलमिनि मट्टोन्निनुण्टाका । ५१

विमान पर बैठाया। भगवान् नारायण की आज्ञा है— "वैकुण्ठलोक बिना विलम्ब के आइये। आप लोगो को कभी अधोगति न होगी। हम लोगो से एक होकर जगत्स्वामी की सेवा करते हुए और आनन्द अनुभव करते हुए नन्द और उपमन्द के भी मान्य बनकर विराजिये।" ऐसा कहते हुए देवदूत उनको लेकर ऊपर चढे। उस समय जिस पानी से अतिथि के पाँव धोये गये थे वह स्वल्प ही था, पर मै तो किसी तरह वहाँ पहुँच गया। ४१-४६ मेरे शरीर का जो भाग गीला हुआ वह तत्क्षण ही स्वर्णरंग का हो गया। (यहाँ) जिस पानी से असख्य ब्राह्मणो के पाँव धोये गये वह समुद्र के समान है। उसे देखकर शरीर के दूसरे भाग को भी स्वर्णरंग का बनाने-हेतु उसमे मैंने यथेष्ट गोता मारा, पर उसका कोई फल न निकला। सच यह है कि सक्तुप्रस्थ के किये पुण्य का जो फल हुआ वह और किसी का नही होगा"। ऐसा कहकर नेउला चला गया। "बहुत अच्छा",

नन्दनन्टस्नुटे पत्नियुमन्नेरं
तन्नुटे भागं तेंळिञ्ञु नल्कीटिनाळ् । ३२
तृप्तनायाचमनादिकळु कळि-
च्चुत्तमनां वळिपोक्कनिरुन्नितु । ३३
योग्यनायुळ्ळोरतिथिपूजय्क्किकन्नु
भाग्यमत्रे योगं वन्नतोक्कुं विधौ । ३४
जन्मसाफल्यवुमिन्नु वन्नू महा-
कर्म्मसाफल्यवु वन्नितु निर्णयं । ३५
तृप्तरायार् पितृदेवादिकळ् नमु-
क्केत्तुमिनिप्परलोकैकसौख्यवु । ३६
अेन्नवरोत्तु परञ्ञिरिक्कुविधौ
वन्नु ताणू भुवि स्वर्ण्णविमानवुं । ३७
श्रीवत्सकौस्तुभपीतांबरमणि-
हारकिरीट कटक कटिसूत्र- ३८
नूपुर रत्न मकराढ्यकुण्डल-
चारुचतुर्भुज शंखचक्रादिया- ३९
मायुधंपूण्टोरु विष्णुदूतन्मारुं
माधुर्यगांभीर्यवाचा परञ्ञितु
सादरं वन्नु विमानमेरीटुविन् । ४०
नालु तृक्कैकळालन्पोटोरिक्कले
नाल्वरेयुमेटुत्ताशु करेटिनार् । ४१

होकर पथिक अतिथि मुँह-हाथ धोकर और आचमन करके आराम से बैठे। २७-३३ "यह हम लोगो का बड़ा सौभाग्य है कि आज हमको एक योग्य अतिथि की पूजा करने का अवसर प्राप्त हुआ। आज हमारा जीवन निस्सन्देह सफल हुआ और निस्सन्देह हमारे कर्म की भी बड़ी सफलता हुई है। और हमारे पितृगण और देवगण तृप्त हुए। अब हमको परलोक का सुख अवश्य प्राप्त होगा।" इस प्रकार आपस मे कहते हुए जब वे सुखी थे तब आकाश से एक सुवर्ण विमान पृथ्वी पर उतरा। श्रीवत्स, कौस्तुभ, पीतांबर, मणि, हार, किरीट, कटक, कटिसूत्र, नूपुर, रत्न, मकर-युक्त कुण्डल, चारु चतुर्भुज, शख, चक्र आदि आयुध-सहित विष्णु के दूत माधुर्य और गाभीर्य-युक्त स्वर से सादर बोले— "आइये और विमान पर चढ़िये"। ३४-४० उन्होने चार शुभ हाथो से चारो को एक साथ उठाकर

ऍन्नवर् चॉन्नतुकेट्टु गरुडनुं
चॅन्नु माताविनोटाशु चॉल्लीटिनान् । ३६
पैदाहवु तीर्त्तमरलोकत्तिनु
चैतन्यमुळ्क्कॉण्टमृतिनु पोकणम् । ३७
आहार वेणमॅनिक्कॅन्नु मातरि-
श्वाहारनाशनन् चॉन्नोरनन्तर ३८
मातावु मन्दस्मित पूण्टु चॉल्लिनाळ्
माधवन् वाळुन्न पालाळितन्करॅ ३९
वाळु निषादन्मारॅ तिन्नुकॉळ्क नी
दोषमतिनिल्ल पिन्नॅयुमॉन्नु केळ् । ४०
ब्राह्मणरॅत्तिन्नु पोकातिरिक्कणम्
धार्म्मिकन्मारॅद्दहिक्करुतग्निक्कुम् । ४१
सृष्टिस्थितिलयङ्ङळ्क्कु कर्त्ताक्कळां
स्रष्टावुमम्बुजनेत्रनु रुद्रनु ४२
देवेन्द्रनादिया देवसमूहवुम्
भूवाततोयाग्नियादि भूतङ्ङळु ४३
वेदङ्ङळोट्टु समङ्ङळल्लाय्कयाल्
वेदज्ञन्माराय भूदेवन्मारल्ले ४४
आधारमीरेळुलोकत्तिनुमव-
र्क्काधारमायारुमिल्लॅन्नरिॅयणम् । ४५

(यह सुनकर उन्होने कहा–)"विना विलम्ब के तुम चलो और अमृत लाओ, तव दासत्व समाप्त हो जायगा"। यह सुनते ही गरुड अपनी माता के पास गया और उनसे बोला– ३१-३६ "प्यास और भूख शान्त करके वीर्य (पराक्रम) के साथ अमृत लाने हेतु देवलोक जाना है। मुझे आहार चाहिए"। मातरिश्वाहारो[1] के नाशक (गरुड) के कहने के अनन्तर माता ने मन्दहास्य के साथ कहा–"विष्णु के निवासस्थान क्षीरसागर के तट पर रहनेवाले निषादो को खा लो। इसमे कोई दोष नही है। पर एक वात सुन लो। ऐसा न हो कि तुम ब्राह्मणो को भी खा वैठो। अग्नि भी धार्मिको का दाह नही कर सकता है। सृष्टि, स्थिति और लय के कर्ता ब्रह्मा, अवुजनेत्र[2] और शिव, इन्द्र आदि देवगण, पृथिवी, जल, वायु, अग्नि आदि महाभूत वेदो के समान नही है, इसलिए वेदज्ञ ब्राह्मण

१ हवा खाने वाले सर्पो २ कमलनयन विष्णु ।

ऍन्नु परञ्ञु मऱञ्ञितु कीरियु
नन्नुनन्नॆन्नु तॆळिञ्ञितॆल्लावरु । ५२
धर्म्मजन् तानुमधिक विनीतनाय्
निर्म्मलमानसनत्यन्तशान्तनाय् ५३
कल्मषनाशनन् चिन्मयनीश्वरन्
कर्म्मणामाधारभूतन् जगन्मयन् ५४
धर्म्मस्थितिकरन् निर्म्मलन् निर्म्ममन्
तन्महामायाविलासङ्ङळ् चिन्तिच्चु ५५
तत्स्वरूपं मनतारिलुऱप्पिच्चु
सत्सेव्यनाय युधिष्ठिरभूपति ५६
धर्म्मेण राज्यपरिपालन चॆय्तु
धर्म्मदारङ्ङळोटु कलर्न्नादराल् ५७
सोदरामात्यपुरोहितसामन्त-
भूदेवपौरजनङ्ङळोटुं मुदा ५८
हस्तिनमाय पुरियिङ्कलाम्माऱु
नित्यसुखत्तोटिरुन्नितक्कालमे । ५९

॥ अश्वमेधिकं समाप्तं ॥

"बहुत अच्छा" कहते हुए सब प्रसन्न हुए। ४७-५२ निर्मलमानस, अत्यन्त विनीत और शान्त युधिष्ठिर ने, पापनाशन, चिन्मय, ईश्वर, कर्मों का आधार, जगन्मय, धर्म की स्थिति करनेवाले, निर्मल, निर्मम की माया के विलासों का ध्यान करके उसके स्वरूप को अपने मन मे स्थिर करके सज्जनो के सेव्य होकर धर्म से राज्य परिपालन किया और अपनी धर्मपत्नी के साथ और भाई, आमात्य, पुरोहित, सामन्त, ब्राह्मण और नागरिकों के साथ प्रमोद के साथ हस्तिनपुर मे नित्य सुख से रहे। ५३-५९

॥ अश्वमेधिक पर्व समाप्त ॥

आश्रमवासं

कथय मम कथय मम कनिविनोटु शारिके !
कारुण्यमूर्त्तिकथामृतमोमले ! १
मधुरतररसकदळि मधुसितगुळादियु
मानसानन्दं वरुमारु सेविच्चु २
मधुमथनचरितमळकोटुरचेय्क नी
मायाविलासङ्ङळ् केट्टाल् मतिवरा । ३
तदनु किळिमकळुमतुपोळुतु कुतुकाशया
तालपरियत्तोटु चोल्लित्तुटङ्ङिनाळ् । ४
नृपतिकुलतिलकनिति सुमति जनमेजयन्
निर्म्मलनाय वैशम्पायननोटु ५
कथकळिव पलवुमतिकुतुकमोटु केळ्क्कयाल्
कौतुकमोटु चोदिच्चितु पिन्नेयु । ६
शमनसुतपवनसुतहरिहयसुतादिकळ्
तातनोटेङ्ङने वर्त्तिच्चितु शेषं ? ७
मुनिवरनुमतुपोळुतु चोल्लिनानुत्तरं
मोदेन केट्टुकोळ्केङ्किल् नराधिप ! ८
तदनु पितृपतितनयनादिकळोक्कवे
तातनोटोत्तवण्णमिरुन्नीटिनार् । ९
अमितबलमुटय कुरुनृपतिधृतराष्ट्ररु-
मात्मजन्मारोटभेदमाय् मेविनान् । १०

आश्रमवास पर्व

हे शुकि ! सुनाओ ! प्रेम से सुनाओ ! कारुण्यमूर्ति का कथामृत, हे प्यारी ! मीठे-मीठे केले, शहद और गुड खाओ ताकि आनन्द हो जाय। तदनन्तर मधु के नाशक की कथा ढग से सुनाओ क्योकि उनके माया-विलासो को सुनकर तृप्ति न होती। तब शुकी कौतुक की आशा से प्रेमपूर्वक कथा सुनाने लगी। नृपतिकुलो के तिलक, सुमति जनमेजय ने, इतनी कथाओ को कुतूहल के साथ सुनने के कारण, वैशम्पायन से फिर सकौतुक पूँछा। १-६ युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन आदिको ने अपने ताऊजी के प्रति क्या व्यवहार किया ? तब मुनिवर ने उत्तर दिया— अगर सुनना है तो प्रमोद से सुन लीजिये। तदनन्तर युधिष्ठिर आदिको ने ताऊजी

निजतनयनाय सुयोधननन्तन्नोटु
नीतियिल् मुन्नमिरुन्नवण्णतन्ने ११
निजसहजतनयनोटिरुन्नितु भूपनुं
निर्म्मलन्मार् पितृशुश्रूषयुं चेय्तार् । १२
अधिकतरसुखमोटु कऴिञ्ञितु वत्सर-
मङ्ङनेतन्ने पतिनञ्चोरुपोले । १३

धृतराष्ट्रविरक्तियु आश्रमयात्रयु

तदनुपुनरोरुदिवसमनिलसुतनेत्रयुं
तापमाम्मारु परुपङ्ङळ् चोल्लिनान् । १
पवनसुतकटुवचननिशमनदशान्तरे
पार्त्थिवेन्द्रनु वैराग्यमुण्टाय्वन्नु । २
तुहिनकरकुलमतिलोरवनिपतियायह
शोभयोटे पिऱन्नोरिनिविकन्निप्पोळ् । ३
विधिविहितमिह शिरसि लिखितमतिविस्मय
वित्त पितृक्रियय्क्कल्लेन्नतुं वन्नु । ४
मऱयवरिलोरुवनटिमलर् कऴुकियूट्टुवान्
मानिच्चोरुपण दक्षिणय्क्कल्लपोल् । ५

से उचित व्यवहार किया । अमितवलवाले कुरुनृपति धृतराष्ट्र ने भी उनसे पुत्रो का सा व्यवहार किया । जिस प्रकार पहले अपने पुत्र सुयोधन के साथ नीति का वर्ताव किया था, राजा ने अपने सहोदर के पुत्र के साथ वैसा ही किया । उन निर्मलो ने पिता (ताऊ) की शुश्रूषा भी की । पूरा साल बड़े सुख से कटा और उसी प्रकार पन्द्रह वरस और बीते । ७-१३

धृतराष्ट्र का वैराग्य और आश्रमयात्रा

तदनन्तर एक दिन भीमसेन ने दुःख देनेवाली खरी वाते सुनाई । भीमसेन का कटु वचन सुनने के अवसर पर पार्थिवेन्द्र का वैराग्य हुआ । "चन्द्रवश के एक राजा के रूप मे मेरा जन्म शोभा के साथ हुआ था । यह अत्यन्त विस्मयावह बात भी विधिविहित और सिर पर लिखी हुई प्रतीत होती है कि मेरे पास पितरो की क्रिया कराने के लिए भी धन नही है । ब्राह्मणो मे किसी के पॉव धुलाकर भोजन खिलाने के लिए और दक्षिणा देने के लिए धन नही है । अन्धे राजा उस समय विरक्त होकर

विगतनयननुमतिविरक्तनायप्पोंळ्
वेगाल् वनत्तिनु पोवान्पुरप्पेट्टु । ६
शमनसुतनतुपोंळुतु जनकनोंटुकूटवे
तापेन काननत्तिन्नु पुरप्पेट्टु । ७
उपरिचरवसुनृपतिदुहितृसुतनन्नेर-
मोटियविटेक्कुटनेंळुन्नळ्ळिनान् । ८
कुरुनृपतितनयनोंटुमटियिण वणङ्ङिनान्
कोंण्टाटि मामुनितानुमरुळ्चेय्तु । ९
निखिलनृपकुलतिलक ! नीतिज्ञ ! धर्म्मज !
निर्म्मलबुद्धे ! युधिष्ठिर ! केळ्क्क नी । १०
क्षितिपतिकळथ चरमवयसि तनयोदये
कीर्त्तिकलर्न्नु वनत्तिल् वसिक्कण । ११
अतिनु नरपतियुमितुपोंळुतु करुतीटिना-
नन्यायमिप्पोळ् निनक्कु वनवास । १२
अतिनुमोंरु समयमिनिवरुमतन्नामेटो
अच्छनेंप्पोवानयय्क्केणमिक्कालं । १३
मुनिवरनुमिव पलवुमळ्कोंटरुळ्चेय्कयाल्
मोदेन तातनेंप्पोवतिन्नेंकिनान् । १४
प्रणयतरहृदयमोंटु तनयनु पितावुटन्
प्रीत्या नयसारवुमुपदेशिच्चु । १५

तुरन्त वन जाने की तैयारी करने लगे। युधिष्ठिर भी तव ताऊजी के साथ वन जाने के लिए तैयार हो गये। १-७ राजा उपरिचर वसु की पुत्री के पुत्र (नारद) उस समय दौड़कर वहाँ पधारे। कुरुनृपति ने पुत्र (युधिष्ठिर) के साथ चरणों की वन्दना की और महामुनि ने सादर निवेदन किया। हे समस्त नृपकुलो के तिलक! हे नीतिज्ञ! धर्मपुत्र! हे निर्मलवुद्धे! युधिष्ठिर! सुनो! राजाओं को चाहिये कि वे वार्द्धक्य मे पुत्रो के वड़े होने पर कीर्ति के साथ वन मे निवास करे। (वृद्ध) राजा तो अव यही सोच रहे है। पर तुम्हारे लिए इस समय वनवास उचित नही है। उसका भी एक दिन समय आवेगा। उस समय अवश्य चलो। इस समय तो केवल पिताजी को जाने दो। मुनिवर के इस प्रकार वहुत कहने के कारण युधिष्ठिर ने पिता को हर्ष से जाने दिया। ८-१४ तव पिता ने प्रेमपूर्ण हृदय से पुत्र को सानन्द नयसार का उपदेश दिया। युधिष्ठिर के पिता की प्रीति और पूजा के लिए

धनवुमनवधि जनकमनसि हितमांवण्णं
धर्म्मजन्मा पितृपूजय्क्कु नल्किनान् । १६
कनकमणिवसनबहुविधविभवजालवु
कालात्मजनसख्य कॊटुत्तीटिनान् । १७
विमलसमुदयसमयमोटु पुऱप्पॆट्टुटन्
विप्रोत्तमन्मार्क्कु दानङ्ङळु चॆय्तु । १८
विशदमति विदुररॊटु गान्धारि कुन्तियु
वीरुळ्ळ सञ्जयनुतानु पुऱप्पॆट्टु । १९
विपिनभुवि विरविनॊटु चॆन्निरुन्नेवरु
विस्मयमाय तपस्सु तुटङ्ङिनार् । २०
फलजलदलानिलाहारभेदेन पोय्
तत्र कऴिञ्ञु पलव सवत्सर । २१
अथ शमनसुतपवनतनयविजयादिक-
ळच्छनॆक्काण्मानटवि पुक्कीटिनार् । २२
मुनिवररुमवनिसुरवररुमॆळुनळ्ळिनार्
मुख्यनां व्यासनुमप्पोळळुन्नळ्ळि । २३
पितृचरणनळिनयुगळं प्रणेमुस्सदा
पिन्नॆप्पराशरनन्दनन्पादवु । २४
तॊळुतुतॊळुतधिकपरितापमोरोन्नोरो-
न्नोतिप्परिदेवनं चॆय्तनन्तरं २५
विधितनयसुततनयनन्दनन्तन्नुटॆ
व्यक्तमायुळ्ळॊरु योगवलत्तिनाल् २६

निस्सीम धन का दान भी किया। काल के पुत्र (युधिष्ठिर) ने असख्य स्वर्ण, मणि, वस्त्र, और वहुविध विभय दिये। शुद्ध सूर्योदय के समय उठकर ब्राह्मणवरो को दान दिये गये। निर्मल वुद्धिवाले विदुर के साथ गान्धारी, कुन्ती और मान्य सञ्जय भी चले। वन जाकर सवने यथानियम अद्भुत तप प्रारम्भ किया। फल, जल, पत्र, वायु, आहार मे इतने ही भेद के साथ अनेक संवत्सर वीते। १५-२१ तव युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन आदि पिता को देखने के लिए वन गये। मुनिवर और विप्रवर वहाँ सिधारे और मुख्य व्यासमुनि भी वहाँ पहुँचे। सवने पिता के चरणयुगल की वन्दना की, तदनन्तर पराशरपुत्र (व्यास) के चरणो की भी। वार-वार वन्दना करने के वाद उन्होने तरह-तरह की वाते की

कुरुसमरशिरसि मृतराय जनङ्डळे-
क्कूट्टमे काट्टिक्कोंटुत्तितु वैकार्ते । २७
निजतनयशतसहितबन्धुवर्गत्तेयु
नित्य मरिच्च पटयुमोक्ककक्कण्टु । २८
सुतसुहृदरिभ्रममुळ्ळ नृपनप्पोळ्
स्वप्नवुं जाग्रत्तुमोक्कुमेन्नु वन्नु । २९
जनकनोटु कनिविनोटनुज्ञयु कैदकोण्टु
चेम्मे गजाह्वयं पुक्कितु पाण्डवर् । ३०
तदनु कुरुपतियुमथ जननिकळुमायुटन्
तत्र वनत्तिङ्कल् निन्नु नाकं पुक्कार् । ३१
अमरपुरिमरुवुमवरवर्क्केल्लावर्क्कु-
माशु युयुत्सुविनेक्कोण्टु धर्म्मजन् ३२
परिचिनोटु गतिवरुवतिन्नुदकादियुं
पार्त्थिवन् चेय्यिच्चु पिण्डवुं नल्किनान् । ३३
जनकजननिकळ् विपयमळकोटु सपिण्डियु
चेय्तु संवत्सरश्राद्धवुमूट्टिनान् । ३४
धनवुमतिहितमोटु कोटुत्तितु विप्रर्क्कु
दानमानन्दमोटाशीर्व्वचनवु ३५
नृपतिकुलवरनु तेळिवोटु नल्कीटिनान्
निर्म्मलनाय विदुररतुकाल । ३६

और विलाप किया। तदनन्तर विधितनयसुततनयनन्दन (व्यास) ने अपने विशिष्ट योगवल से कुरुक्षेत्र के युद्ध मे नरे जनो को एक साथ दिखला दिया। उन्होने अपने सौ पुत्रो सहित वन्धु वर्ग को और मरी सेना को भी देखा। २२-२८ तव सुत, सुहृद, शत्रु आदि भेदों का भ्रम रखनेवाले राजा को स्वप्न और जाग्रत् एक प्रतीत हुआ। उसके वाद पिता से प्रेम से आज्ञा लेकर पाण्डव आराम से हस्तिनापुर वापस आये। तदनन्तर धृतराष्ट्र, माताओ के साथ वन से स्वर्ग चले गये। राजा युधिष्ठिर ने उन स्वर्ग मे रहनेवालो को विना विलम्व के युयुत्सु द्वारा उनकी अच्छी गति होने के हेतु यथानियम अन्त्येष्टि कराया और पिण्ड दिया। जनको और जननियों के लिए सपिण्डीकरण श्राद्ध कराके आब्दिक श्राद्ध भी कराया। ब्राह्मणों को अत्यधिक धन सानन्द दान दिया गया और निर्मल विदुर ने राजवशो के श्रेष्ठ को आशीर्वचन दिया। २९-३६ भगवान् के

भगवदनुचरवदनतो निशम्य द्रुत
भक्त्या भगवल्गतियुमुदन्तवु ३७
महति भगवति भुवनपति हृदयमात्मना
मायाविहीने लयिप्पिच्चितव्यये । ३८
विबुधसरिदुपतटममर्न्नु मित्रात्मज-
विज्ञानसयुतज्ञानादिकळल्ला । ३९
भगवदुपदेशमार्ग्गेण केळ्प्पिच्चितु
भास्करपुत्रांशभूतन् विदुररु । ४०
मुनिकळ्वरनाय माण्डव्यशाप तीर्न्नु
मुख्यनां धर्म्मनोटङ्ङु चेर्न्नीटिनान् । ४१
इति मुनिवरन् नृपन्तन्नोटु चॊन्नव-
यॆल्ला मुनिकळ्क्कु सूतनु चॊल्लिनान् । ४२
सरसवचनेन चॊन्नाळ् किळिप्पैतलु
सल्कथयाकयालॆङ्ङळोटिक्कालं । ४३

॥ आश्रमवासं समाप्त ॥

अनुचर के मुँह से भक्ति के साथ भगवान् की गति और वार्ता सुनकर राजा ने अपने हृदय को महान् मायाविहीन अव्यय भगवान् मे लीन कर दिया। गगा के तटपर जाकर भास्करपुत्र के अंशभूत विदुर ने मित्रात्मजविज्ञानसहित अन्य विज्ञानो को भगवद्विपयक उपदेश द्वारा सुना दिया। मुनिवर माण्डव्य का शाप समाप्त हुआ और विदुर मुख्यधर्म (युधिष्ठिर) से एक हो गये। इस प्रकार मुनिवर ने (वैशम्पायन ने) जो कुछ राजा से कहा, वह सह सूत ने मुनियो को सुना दिया। शुकी ने भी कथा अच्छी होने के कारण हम लोगो को उसे अपने सरस वचनो मे सुना दी। ३७-४३

॥ आश्रमवासिक पर्व समाप्त ॥

मौसलं

वरिकरिकिरि किळिमकळे ! नी
वरिनॆल्लिन्नविलरिवरुत्तॊळ्ळुं १
नवनारिकेळसलिलवुं पालुं
नवनीतमोटु गुळकदळिकळ् २
मधुसितादियुं तरुवन् वैकातॆ
मधुरमांवण्णं परक शेषवुं । ३
हरि मुरवैरि नरकारि शौरि
करिपरिवृढपरितापहारि ४
दुरितनाशननमरारि वैरि-
चरितरीतिकळुरचॆय्तीटु नी । ५
विरवॊटु कालं कळयातॆ वृथा
नरजननं नी सफलमाक्केण । ६
शुकतरुणिकळ्मणि कळमायि-
स्सुखंवरुमारु परञ्ञाळन्नेरं । ७
मनसा विष्णुरातजनु वैशम्पा-
यनमुनिवरनॊटु चोदिच्चितु । ८
नयनहीननां नरपति वानो-
रयनं प्रापिच्चोरनन्तर नृपन् ९
पितृपतिसुतन् प्रवर्त्तिच्चतॆन्तु
मधुरिपुनाथननुष्ठिच्चवारुं ? १०

मौसलपर्व

हे शुकि ! आओ ! और निकट बैठो । उत्तम धान के चावल का वना चूडा, तला हुआ तिल, नये नरियल का रस, दूध, घृतसहित गुड़ और केले, शहद और शक्कर यह सव विना विलम्ब के दूँगा । अवशिष्ट कथा तो मधुर ढग से सुनाओ । हरि, मुरवैरि, नरकारि, शौरि, गजेन्द्र का दु ख दूर करनेवाले, पापनाशन और देवो के शत्रुओ के शत्रु के चरितो के प्रकारो का वर्णन करो । विना समय को व्यर्थ नाश किए मनुष्यजन्म को सफल वनाओ । यह सुनकर शुकियो के मणि ने उस समय मधुर ढग से अपनी मीठी ध्वनि से सुनाया । १-७ तव विष्णुरात पुत्र (जनमेजय) ने वैशम्पायन मुनिवर से पूँछा— अन्धे राजा के स्वर्ग जाने के वाद पितृपति

तदनु वैशम्पायनमुनिवरन्
मुदितनायुटनरुळ्चेय्तीटिनान्— ११
शृणु नृपवर ! कथाशेषं चोल्वन्
गुणवानाकिय नृपति धर्म्मजन् १२
धरणिमण्डल परिपालिच्चवा-
रुरचेय्तीटुवान् पणियत्ते पार । १३
भरत हेहय नहुष राघव-
कुरु पूरु पुरूरवो भगीरथ- १४
सगर मान्धातृ पृथु नळ शिबि-
नृग निमि बलि रघु सुहोत्रादि १५
पल पल दिव्यनरपतिवीर-
रलसभाव कैवेटिञ्ञु भूतल १६
परिपालिच्च नाळिवण्ण वन्नति-
ल्लोरु सौख्य प्रजासगितिक्कु नून । १७
पृथिवीपालकन् गुणवानेन्नाकिल्
कृतयुगत्तिलु कलियुग नल्लू । १८
अधर्म्मवित्तेङ्ङु विळयाते भुवि
स्वधर्म्मनिष्ठया वसिच्चितु लोकं । १९
अथ मुप्पत्तारा वरिषवु वन्नु
प्रतिभयङ्ङळायुटनुटन् । २०
पेरिके दुर्न्निमित्तवु काणाय्वन्नु
परितापं पूण्टु युधिष्ठिरनप्पोळ् । २१

(यम, धर्म) के पुत्र राजा युधिष्ठिर ने क्या किया और मधु के शत्रु नाथ ने क्या किया ? यह सुनकर मुनिवर वैशम्पायन ने मुदित होकर निवेदन किया— हे नृपवर ! सुनो ! अवशिष्ट कथा सुनाऊँगा । गुणवान् राजा युधिष्ठिर ने इस धरणीमण्डल का कैसे परिपालन किया यह कहना कठिन काम है । जब भरत, हेहय, नहुष, राघव, कुरु, पूरु, पुरूरवा, भगीरथ, ८-१४ सगर, मान्धातृ, पृथु, नल, शिबि, नृग, निमि, बलि, रघु, सुहोतृ आदि अनेक नरपतिवीर आलस्य छोड़कर पृथिवी का परिपालन करते थे, तब निस्सन्देह प्रजाओं का इतना सुख न होता था । अगर राजा गुणवान् है तो कृतयुग से भी कलयुग अच्छा हो सकता है । अधर्म का बीज कहीं न जमा और लोग सब स्वधर्मनिष्ठ थे । जब छत्तीसवाँ बरस आया तब

अतु सहदेवनोटु परञ्ञप्पोळ्
कुतुकं पूण्टुटनवनुरचेय्तु । २२

कलिकालवर्णनं

इनियुळ्ळ कालं कलियुगमत्रे
मुनिजनङ्ङळुं मरञ्ञुपोमल्लो । १
मळयुं पेय्कयिल्लिनि वेण्टुं नेर
वळिये भूमियुं विळकयिल्ललल्लो । २
कोटिय काट्टुण्टाय्मरङ्ङळु वीळु
पट्टतियुं पिटिपेट्टु गृहतोरु । ३
चतिच्चु कोल्कयुं पोळिपरकयुं
विधिच्च कर्म्मङ्ङळवर् चेय्यायकयुं । ४
पितृक्रियकळुं वळिये चेय्कयि-
ल्लतिक्रमिच्चीटुं गुरुजनत्तेयु ५
निजकुलविद्य पठिक्कयिल्लारुं
प्रजकळुं नन्नाय् वरिकयिल्ललल्लो । ६
द्विजन्मार् पूणुनूल् कळकयिल्लारुं
भजन मटिल्ल कृपयुमिल्लादर्कु । ७

विविध भय लगातार पैदा हुए। अनेक दुर्निमित्त दिखाई दिये। तब युधिष्ठिर दुखित हुए। जब उन्होंने सहदेव से कहा तब उसने कौतुक से इस प्रकार जवाब दिया। १५-२२

कलिकाल का वर्णन

अब आगे कलियुग का समय है। मुनिजन अदृश्य हो जायेंगे। अब पानी जितना चाहिए उतना न बरसेगा और भूमि भी हरी-भरी न होगी। झंझावात उठेंगे और पेड गिरेंगे और घर पर आग लग जायगी। लोग धोखा देकर मारेंगे, झूठ बोलेंगे, विहित कर्म का अनुष्ठान न करेंगे। पितरों की क्रियायें न करेंगे और गुरुजनों की बात न मानेंगे। अपनी कुलविद्या को कोई न पढ़ेगा और प्रजाओं की स्थिति अच्छी न होगी। १-६
द्विजलोग अपने यज्ञोपवीत न बदलेंगे। लोग किसी का भजन न करेंगे और दया किसी में न होगी। राजालोग प्रजाओं से चोरी करके और लूटकर धन व्यर्थ के लिए कमायेंगे। बेईमानी से मुक्त धन किसी के

वन्द्यन्माराकुन्नतुं द्विजन्मारत्ते ।
निन्दिच्चु पोकाय्कवरॅयॉरिक्कलुं
नन्दिच्चु सन्ततं वन्दिच्चुकॉळ्ळणम् । ४७
देवादिकळ्क्कुं प्रपञ्चत्तिनु परं
दैवतमाकुन्नतु द्विजन्मारत्ते । ४८
शाश्वतमाकिय धर्म्ममाकुन्नतु-
मीश्वरनाकुन्नतुं द्विजन्मारत्ते । ४९
ऍन्तटयाळं द्विजन्माक्कुं मातावे ?
सन्ततं यज्ञोपवीतादि लक्षणम् । ५०
सन्तुष्टरा द्विजन्मारॅ विळुङ्ङुकिल्
कन्धरं वॅन्तुपोमन्तरमिल्लेतुम् । ५१
भ्रष्टनॅन्नाकिलु दुष्टनॅन्नाकिलु
पुष्टभक्त्या वणङ्ङेणं द्विजन्मारॅ । ५२
इत्थमुपदेशवुं चॅय्तनुग्रहि-
च्चत्यादरेण पुणर्न्नु मुकर्न्नव- ५३
नुत्तमांगत्तिल् बाष्पाभिषेकं चॅय्तु
चित्तप्रमोदं कलर्न्नवळ् चॉल्लिनाळ् । ५४

ही चौदहो लोको के आधार है; और उनका कोई आधार नही है, इतना जान लो ! ३७-४५ महत्त्व मे ब्राह्मणो के तुल्य और कोई नही है। और कोई उनकी समता नही कर सकता। वे ही सबके वन्द्य होते है उनकी कभी निन्दा न कर बैठना, प्रसन्न मन से सदा उनकी वन्दना किया करो। देवों के लिए और सारे प्रपच के लिए ब्राह्मण ही परदैवत[1] होते है। शाश्वत धर्म बनने वाले और साक्षात् ईश्वर होने वाले भी ब्राह्मण ही है"। "माता जी! ब्राह्मणो का चिह्न क्या है?" (गरुड़ ने पूछा)। "सदा यज्ञोपवीत आदि धारण किये रहते हैं। सन्तुष्ट ब्राह्मणो को अगर निगलोगे तो गला जल जायगा, इसमे कोई सन्देह नही है। [वे] भ्रष्ट भी हो और दुष्ट भी हो, फिर भी ब्राह्मणो की भक्ति के साथ वन्दना करनी चाहिए।" इस प्रकार उपदेश देकर और अनुग्रह करके विनता ने आदर के साथ उसका प्यार किया और उसके सिर पर

---

१ परमदेव।

विळयाट्टुं मायामहिमयु नन्नाय्
विळङ्ङिट्टुं निजनिलयप्राप्तियुं । ३
धरणीवल्लभन् करुणावारिधि
सरसिजनेत्रन्तिरुवटि मुदा ४
विळङ्ङु द्वारकापुरियिलाम्मारुं
तॆळिञ्ञुवाळुनाळकमे चिन्तिच्चान् ५
ऒरुवण्णं भूमिभरं कळञ्ञु ञान्
पॆरिय भारतसमरव्याजत्ताल् । ६
ऒरुकूट्ट दुष्टरोटुङ्ङि केवल-
मॊरुकूट्टं दुष्टरुळवायुवन्नु । ७
मम सुतन्मारामवक्कॊरुनाळु
शमनमारालु वरिकयुमिल्ल । ८
अवरॆयु कूटॆयॊटुक्कुवानिङ्ङ-
न्तॊरु कळिवेन्नोत्तिरुन्नरुळुन्पोळ् । ९
भृगु भरद्वाज वसिष्ठ काश्यपा-
द्यखिलतापसरॊरुमिच्चॊक्कवे १०
भगवानेक्काणमानॆळुन्नळ्ळु नेरं
भगवल्पुत्रन्मार् पलरुमॊन्निच्चु ११
मुनिकळक्कण्टु मनसि चिन्तिच्चा-
रिनियिवरॆ नां वलयक्कणमिप्पोळ् । १२
झटिति साम्बनॆच्चमयिच्चीटिना-
रुटलुं गर्भिणियुटॆ वटिवाक्कि । १३

की प्राप्ति को। धरणीवल्लभ, करुणासागर, कमललोचन भगवान् ने प्रमोद के साथ चमकनेवाली द्वारकापुरी मे विराजते समय मन ही मन सोचा— "मैने महाभारत के युद्ध के द्वारा पृथ्वी के भार को कुछ कम कर दिया है। दुष्टो मे कई तो समाप्त हुए, हाँ, कुछ दुष्ट पैदा भी हुए। १-७ मेरे जो पुत्र है उनकी औरों के द्वारा कभी मृत्यु न होगी। उनकी भी समाप्ति कैसे हो ? जब इस प्रकार सोच रहे थे तब भृगु, वसिष्ठ, काश्यप, आदि तापसवर सब मिलकर भगवान् का दर्शन करने पधारे। भगवान् के पुत्रो ने एक साथ उनको देखकर अपने मन मे सोचा— "आज हम इनको परेशान करे"। तुरन्त ही उन्होने साम्ब को गर्भिणी का वेष पहनाकर, मुनिवरो के समक्ष रखकर, विनयभाव से हाथ

नृपन्मार् नाट्टिलुळ्ळवरोटु कट्टु-
कवर्न्नुमार्ज्जिक्कु वेरुतें वित्तवु । ८
उरुट्टोळिञ्ञिट्टिल्लोरुवनुमर्त्थं
पठिक्कुं कच्चोटत्तिनुं कळवन्ने । ९
कलियुगत्तिलुळ्ळवस्थकळिव
पलवुमेङ्ङने पऱयुन्नु पार्त्ताल् ! १०
पोरुतियिल्लेतुमवनियिलिनि
पुऱप्पेटुक वेण्टतु वैकाते ना । ११
इतु सहदेवन् पऱञ्ञिरिक्कुन्पोळ्
यदुकुलनाश झटिति केळ्क्कायि । १२
इवण्णं तापसनरुळ्चेय्तनेर-
मवनिनायकन् तोळुतु चोदिच्चु
किमपि विस्तरिच्चरुळिच्चेय्यण । १३

यदुवशनाश

कमलनेत्रन्तन्नुटे लोकप्राप्ति
यदुकुलमेल्लामोटुङ्ङियवारु
कुतुकमावण्णमरुळ्चेय्तीटण । १
तेळिञ्ञु वैशम्पायननरुळ्चेय्तु ।
कळिकळ् केळ्क्केङ्किल् कमलाक्षन्तण्टे २

पास न होगा और व्यापार मे भी झूठ घुस जायगा। कलियुग मे होने-वाली इस स्थिति को तो सोचो, उसे कैसे वताया जाय? अब पृथिवी मे कही शान्ति नही है। अव विना विलम्ब के हम चले। जब सहदेव यह सव सुनाता था तव यदुकुल का नाश सुनाई दिया। जव तापस (वैशम्पा-यन) ने इतना कहा, तव राजा ने हाथ जोड़कर निवेदन किया— 'इस को ज़रा विस्तर से वतला दीजिये"। ७-१३

यदुवंश का नाश

यदुकुल का नाश होने के अनन्तर कमललोचन (कृष्ण) की लोक-प्राप्ति को भी ऐसे सुना दीजिये कि कुतूहल शान्त हो जाय। इस पर प्रसन्न होकर वैशम्पायन ने सुनाया। "अच्छा तो सुनिगे कमलाक्ष की लीला को, उनकी माया की महिमा को और उनकी शोभा देनेवाली निजधाम

अवरुं भूपालनोट्टु परञ्ञप्पो-
ळवनीशन्तानु पुनरुरच्चेय्तान् । २४
इरिम्पुलक्कयितखिलं निङ्ङळु-
मरंकोण्टु राकिप्पोटिच्चु वैकाते २५
कलक्कुकाळियिल् पुनरेन्नालुमि-
क्कुलत्तिनु नाशमोळिक्करुतल्ले । २६
अतु पोटिच्चवरुदधियिलिट्टा-
रतुपोळुतोरुकषणं शेषिच्चु । २७
अतु समुद्रत्तिलेरिञ्ञतुमोरु-
पृथुरोमं चेन्नु विळुङ्ङीतप्पोळे । २८
वलयिल् किट्टि मत्स्यवुं कैवर्त्तनु
कोलचेय्तु कीरियतुनेरं कण्टु २९
अंटुत्तान् कट्टियामिरुम्पुतन् खण्डं
कोटुत्तान् काट्टाळन् तनिक्कवन्तानुं । ३०
ओरु शरं तीर्त्तानतुकोण्टक्काल-
मिरुम्पुलक्कतन् पोटियायुळ्ळतुं । ३१
तिरवायूटे वन्नटिञ्ञु तीरत्तु
विरवोटेरकत्तृणमायुण्टायि । ३२
धनञ्जयन्तानु भगवानेक्काण्मान्
तनिये श्रीमल्द्वारकयकंपुक्कान् । ३३
अरविन्दोत्भवपुरहरादिक-

आरी से रगड़कर चूर-चूर कर दो और विना विलम्ब के सागर में फेंक दो। तब भी इस कुल का नाश न टल सकेगा। तदनुसार उन्होंने उसे चूर-चूर करके सागर में डाल दिया, पर एक टुकड़ा रह गया था। वह समुद्र में फेंक दिया गया। उसे एक पृथुरोम (एक प्रकार के मत्स्य) ने निगल लिया। २२-२८ वह एक केवट को अपनी जाली में मिला। जब उसने उसे मारकर चीरा तब भीतर लोहे का टुकड़ा पाया जिसे उसने एक जंगली आदमी को दे दिया। उसने उससे एक शर बना लिया। लोहे के मुसल के जो चूर हो गये थे, वे लहरों द्वारा तट पर पहुँचकर वहाँ एरका नामक घास बन गये। उस समय अर्जुन तो भगवान् का दर्शन करने के लिए अकेले श्रीमद्द्वारका पुरी में प्रविष्ट हुए। ब्रह्मा, शिव आदिकों ने अरविन्दाक्ष (कृष्ण) की स्तुति की। उस समय द्वारका में

विनय भाविच्चु तोंळुतु चोदिच्चार् । १४
इवळ् पेरुन्नतु पुरुषनो पेण्णो ?
दिवसमेतेन्नुमरुळिच्चेय्यणं । १५
अतु केट्टन्योन्यमवरुं नोक्किक्क-
ण्टतिनोरुत्तरमरुळ्चेय्तीटिनार्— १६
अटुत्तिरिक्कुन्नितिवळ्क्कु पेरिप्पोळ्
कटुप्पमेरुन्नोरिरुन्पुलक्कय- १७
ततिनाले कुल मुटियु निङ्ङळ्क्कु-
मितिनु किल्लिल्लेन्नवर्कळु चोन्नार् । १८
मुररिपुमतरिञ्ञु मामुनि-
वरन्मारु मुतिर्न्नेंळुन्नळ्ळीटिनार् । १९
सकललोकनायकनेयुं कण्टु
भगवल्भक्तन्मार् मरञ्ञितक्कालं । २०
चिरिच्चु भाषिच्चु नटन्नु वालन्मार्
विरच्चु साम्बनुं प्रसविच्चीटिनान् । २१
इरिन्पुलक्क कण्टतिभयं पूण्टु
परन्पुरुपनोटुणर्त्तिच्चीटिनार् । २२
यदुराजन्तन्नोटरियिक्केन्नतु
मधुरिपुतानुमतुकेट्टन्नेरं २३

जोडकर पूँछा । ८-१४ "इसका वच्चा पुरुष होगा कि स्त्री और यह भी वतलाइये कि प्रसव किस दिन होगा ?" यह सुनकर उन्होने एक दूसरे का मुँह देखने के वाद उस प्रश्न का इस प्रकार उत्तर दिया— "इसका प्रसव अव निकट है और एक अत्यन्त कठिन लोहे के मुसल का जन्म होगा जिससे तुम लोगो का कुल ही समाप्त होगा, इसमे कोई सदेह नही ।" ऐसा उन्होने कहा । मुररिपु की इच्छा को जाननेवाले महामुनि तदनन्तर उठकर चले गये । सकल लोकनायक का दर्शन करके वे भगवान् के भक्त अन्तर्हित हो गये । वालक तो हँसते-हँसते वातचीत करते हुए चले गये । काँपते हुए साम्व ने तो प्रसव किया । १५-२१ लोहे का मुसल देखकर डर गये और परपुरुष को जाकर समाचार सुनाया । मधुरिपु ने कहा— राजा यदु को जाकर सब सुनाओ । तब उन्होने राजा से सब कहा और राजा ने इस प्रकार निवेदन किया । इस लोहे के मुसल को तुम लोग

पिरिञ्ञरिक्कयिल्लोरिक्कलुं ञानो
निरञ्ञिरिप्पोरु परमात्मावु ञान् । ४५
इवण्णमात्मानमुपदेशिच्चुट-
नवनेयुमयच्चितु भगवानुं । ४६
विदुररोटु चोल्लुक कौषारवि
हृदये ञान् पुनरिरिक्कुमेन्नतुं । ४७
अरुळ्चेय्तनेरं तोळुतवन्तानु
नरनारायणाश्रमं प्रति पोयान् । ४८
पुनरथ यदुवरन्मारुमायि-
क्कनिविनोटुकूटेळुन्नळ्ळि नाथन् । ४९
समुद्रतीर्थस्नानवु कळिच्चव—
रमर्त्यपूजयुं कनिवोटु चेय्तार् । ५०
पितृक्कळक्कु तृप्ति वरुत्ति वैकाते
यदुक्कळ् दानवुं द्विजन्माक्कुं चेय्तार् । ५१
कळभमाल्यभूषणवस्त्रङ्ङळा-
ललङ्करिच्चवरहङ्करिच्चेटं ५२
भुजिच्चु मद्यवुं झटिति सेविच्चु
भजिच्चितु भगवतियेयुं नन्नाय् । ५३
मदिच्चु तन्नत्तान् मरन्नु यादव-
रुदिच्चोरु रजोगुणवलत्तिनाल् । ५४
शमप्रधानमानसन्मारन्नेर
भ्रमिच्चु नाणवुमकलेक्कैविट्टार् । ५५

तुरन्त उनको रवाना कर दिया। हे कौपारवि! विदुर से कहो कि मै हृदय मे सदैव रहूँगा। भगवान् के इस प्रकार कहने के बाद वे (उद्धव) प्रणाम करके नरनारायण के आश्रम को चले गये। तदनन्तर नाथ (कृष्ण) यदुवरो के साथ प्रेम के साथ निकले। समुद्रतीर्थ मे स्नान करके उन्होने भक्ति से देवो की पूजा की। ४३-५० पितरो की तृप्ति कराकर यदुओ ने विना विलम्ब के ब्राह्मणो को दान दिये। सुगन्ध द्रव्य, माला, आभूपण, वस्त्र आदिको से अलङ्कृत होकर वे अत्यन्त अहङ्कारयुक्त हुए और भोजन करके तुरन्त उन्होने मद्यपान भी किया और ढग से भगवती की सेवा की। अपने मद मे और रजोगुण के बल से वे अपने को भूल गये। शमप्रधान मन के होते हुए भी वे उस समय अपने भ्रम मे लज्जा तक खो बैठे।

ळरविन्दाक्षनॆ स्तुतिचॆय्तीटिनार् । ३४
तॆरुतॆरॆ द्वारावतियिलक्कालं
पॆरिय दुर्न्निमित्तवु काणाय्वन्नु । ३५
पुरवासिकळोटरुळ्चॆय्तीटिनान्
मुरहरनाय परमपूरुषन्— ३६
अटुत्तितापत्तु नमुक्कतिनत्ते
कटुप्पमेरुं दुर्न्निमित्तं काणुन्नु । ३७
इविट कैविट्टु पुऱप्पॆटुक नां
पवित्रमां तीर्त्थप्रवरमाटुवान् । ३८
भगवदुद्योग परिचॊटु कण्टु
भगवद्भक्तनुद्धवरुं चॊल्लिनान्— ३९
तिरुमनस्सॆन्तॆन्तऱियाञ्ञुण्टुळ्ळिल्
परितापं पार मम भगवाने ! ४०
अटिमलरिणयॊटु चेर्त्तीटण-
मटियनॆप्पुनरिनि मटियातॆ । ४१
वॆटियातॆ पोटि ! धृतियुमिल्लेतु-
मटियनु पिरिञ्ञिरिप्पतिनेतुं । ४२
अतु केट्टु देवनरुळ्चॆय्तीटिनान्
मतिमानाकुमुद्धवरोटन्नेरं । ४३
पऱञ्ञिटां तव परमार्त्थमॆङ्कि-
लऱिञ्ञुकॊण्टालु विकल्पं कूटातॆ । ४४

जल्दी-जल्दी अनेक दुर्निमित्त दिखाई दिये। २९-३५ मुरारि परम-पुरुष ने नगरवासियो से कहा। अब हमारी विपद् आ रही है। यही कारण है कि भयङ्कर दुर्निमित्त दिखाई दे रहे हैं। यह स्थान छोडकर हम लोग पवित्र तीर्थस्थान की यात्रा करने चले। भगवान् का यह उद्यम देखकर भक्त उद्धव ने निवेदन किया। से भगवन् ! यह न जानने से कि पूज्य क्या चाहते है मेरे मन मे बहुत दुख है। इस दास को अपने चरणो से अब विना हिचके एक कर लीजिये। हे रक्षक ! अब इस दास को अलग रहने के लिए धैर्य विलकुल नही है। ३६-४२ यह सुनकर भगवान् ने मतिमान् उद्धव से निवेदन किया। तुमको परमार्थ वतला दूँगा उसे स्पष्ट रूप से समझ लो, मै कभी अलग न रहूँगा, क्योकि मै हर जगह व्याप्त परमात्मा हूँ। इस प्रकार आत्मा का उपदेश देकर

हर ! हर ! हर ! हर ! हर ! हर !
पुरहर ! स्मरहर ! मृतिहर ! ६६
पेरिकें नन्नु माधवनुटे माय-
य्क्कोरुवस्तु पुनररुतातेयुण्टो ? ६७
शरचापादिकळोटुङ्ङिड्य शेष
परिचोटेरक्तृणकणिशत्ताल् ६८
तेरुतेरेत्तम्मिल् प्रहरिक्कुनेरं
मरणत्तिनेटमेळुतायी तुलों । ६९
मदपरवशमनसा सत्वरं
यदुकुलवररखिलमेरक- ७०
त्तृणमेटु तेरुतेरे मरिच्चुटन्
कुणमायवन्नु शिव ! शिव ! चित्रं । ७१
ओटुङ्ङिक्कूटियोरळवतु कण्टु
दृढनायुळ्ळोरु वलभद्ररामन् ७२
समुद्रत्तिल् चाटि मुळुकि वैकाते
समत्वमोटनन्तनेयु प्रापिच्चु । ७३

श्रीकृष्णवैकुण्ठप्राप्ति

भगवानग्रजनुटे गति कण्टु
सुखमे योगं पूण्टिरुन्नरुळिनान् । १

हे स्मरहर ! हे मृत्युहर ! ५९-६६ माधव की माया बहुत अच्छी है। उसके लिए कोई असाध्य बात नही है। जब धनुष-बाण समाप्त हुए और एरका-तृण के टुकडो से लगातार आपस मे लडने लगे तब मृत्यु प्राप्त करना बहुत आसान हो गया। मद के वश मे आकर जल्दी ही यदुकुल के सारे वीर ऐरका तृण के लगने से लगातार मरने गये और शव बने। हे शिव ! शिव ! शिव ! कैसा आश्चर्य है। मृतो की सख्या देखकर दृढ वलभद्र समुद्र मे कूदे और तुरन्त ही डूबकर अनन्त मे एक हो गये। ६७-७३

श्रीकृष्ण की वैकुण्ठप्राप्ति

अपने ज्येष्ठ की गति देखकर भगवान् सुख से योग प्राप्त करके विराजे। पृथ्वी का भार समाप्त हुआ और अपने अवतार के प्रयोजन

पदकं भारतसमरमूलमाय्
कृतवर्म्मावु सात्यकियुमुण्टाय् । ५६
परस्परमुण्टायविटे स्पर्द्धयुं
पेरुत्तितुच्चत्तिल् परञ्ञारन्नेर । ५७
वचसा वन्नील जयमतुमूल
निशितमायुधमेटुत्तारन्योन्यं । ५८
पकुत्तु तङ्ङळिल् कलहिच्चारेट्
पकुत्तिरुत्तिनारिरुकूराय् तम्मिल् । ५९
पटुत्वमोटुटनटुत्तु वेट्टियुं
तटुत्तितायुधं मुरिच्चुमन्पुकळ् । ६०
मळ्पेय्युवण्णं चोरिञ्ञारन्योन्य ।
पुळपोले चोरयोलिक्कयुं कैकाल् ६१
मुरिञ्ञु वीळ्कयुमुटने चाकयुं
परञ्ञुनिल्क्कवे कळुत्तरुक्कयु । ६२
जनकनेप्पुत्रन् मकनेत्तातनुं
कनिष्ठने ज्येष्ठन् कनिष्ठन् ज्येष्ठने । ६३
मरुमकने मातुलनु कोल्लुन्नु
मरुमकनम्मासनेयु कोल्लुन्नु । ६४
शिव ! शिव ! शिव ! शिव ! शिव ! भव
भवभयहर ! मूढ ! शिव ! हर ! ६५

भारतयुद्ध के सवन्ध मे कृतवर्मा और सात्यकि में वाग्युद्ध प्रारम्भ हुआ। उनकी आपस मे स्वर्धा हुई और वढी; दोनो जोर से वोलने लगे। वातो से किसी की विजय न हुई। अतएव दोनो ने तीक्ष्ण आयुधो का ग्रहण किया। ५१-५८ आपस में वॉट कर उन्होने कलह किया। सव लोग दो पक्षों मे वट गये। कोई निकट जाकर दूसरे को मारता है और दूसरा हथियार को रोकता है और तोडता है। एक दूसरे पर वरसात के पानी के समान शरवर्षा करता है। रक्त नदी के समान वहने लगा। हाथ पैर टूटकर गिरे। कोई तत्क्षण ही मरता है। वोलते-वोलते किसी का सिर कट जाता है। पिता को पुत्र और पुत्र को पिता, छोटे भाई को वडा भाई और वडे भाई को छोटा भाई मारता है। भांजे को मामा मार डालता है और भांजा मामा को मार डालता है। हे शिव ! शिव ! शिव ! शिव ! शिव ! हे भव ! हे ससार का भव-नाश करनेवाले ! शिव ! हे हर ! हे हर ! हर ! हर ! हर ! हर ! हर ! हे पुरहर !

विरवौंटु चेर्त्तु निरुकयिल्निन्नु
परिचौंटु धूम पुरप्पॆटुंनेर १३
निरन्नोराल्त्तरमुकळिलाम्मारु
इरुन्नरुळुन्न भगवल्पादत्ते । १४
तुटुक्कनेक्काणायितु काट्टाळनु-
मट्टुत्तितु मॆल्ले मरञ्ञु वृक्षत्ते १५
विटपिकळुटे किमपि मूक्षिच्चान्
अटविवासिना कुलजीवान्तकन् १६
मुसलशेपनिर्म्मित शरधरन्
मुसलिसोदरपदसरसिजे १७
शिततरमाय शरं प्रयोगिच्चान्
विधिविहितत्तालतुमतुनेर- १८
मिरिम्पुलक्कतन् कपण कॊण्टुळ्ळ
शरमाय् वन्नितु पुनरतु चॆन्नु १९
भगवल्पादाभोरुहत्तिनु कॊण्टु
भगवान्तन्नुटे मतमताकयाल् । २०
वळियॆ काट्टाळनटुत्तु चॆन्नप्पो-
ळळिनिल पूण्टु तॊळुतु वीणव- २१
नटियनेतुमोन्नरिञ्ञील पोट्टि !
उटमयोटेन्नॆप्परिपालिक्केण । २२

मे बैठकर विराजे। तब सारे त्रिभुवन मे व्याप्त तेज से प्राण को जीतकर अमृतप्लावन विधिवत् करने के बाद, सिर से धुआँ ढग से निकलने लगा। तदनन्तर जब एक वटवृक्ष के चबूतरे पर बैठकर विराजे, ९-१४ तब भगवान् का पाँव स्पष्ट दिखाई दिया। उसे देखकर जगल मे रहनेवालो के जीव का अन्त करनेवाला एक शिकारी धीरे-धीरे निकट आया और वृक्षो की आड़ मे छिपकर उस मुसल के टुकडे का बना शर धारण करनेवाले ने मुसली (बलराम) के भाई के पादपद्म पर तीक्ष्ण शर का प्रयोग किया। विधि का विहित होने के कारण वह वही शर था जो लोहे के मुसल के टुकडे का बना हुआ था। वह जाकर भगवान् के पादपद्म पर लगा, क्योकि भगवान् का भी वही मत था। मर्यादानुसार जब शिकारी निकट आया तब अपने को नष्ट समझकर उसने हाथ जोडा और कहा— हे रक्षक ! मुझे कुछ भी न मालूम था ! अपना समझकर मेरा परिपालन

अवनिभारवुमखिलं तीर्न्नुता-
यवतारकार्यं कृतमाय् मिक्कतुं । २
इनि वैकुण्ठमां पद प्रापिच्चिटा-
मिनिक्कु कालं वैकरुतल्लो वृथा । ३
निनच्चेवं देवन् तलत्तें श्रीपाद-
मणच्चिटत्तेत्तुटमेले वच्चु ४
निविन्नृ्जूदेहमिरुन्नरुळिनान् ।
पवनन् तन्नेयुमटक्कि निश्चल- ५
मटच्चु मूलाधारवुमुरप्पिच्चु
पटुत्वमोटु कुण्डलिनिशक्तियें- ६
ज्ज्वलिप्पिच्चु मेन्मेल् सुपुम्नया चक्र-
कुलत्तेयुमोक्कद्दहिप्पिच्चोरोन्ने ७
दहननवर्कमण्डलत्तोटु तट्टि-
दृहनमण्डलत्तिनेयुं पिन्निट्टु । ८
सहसा मुन्नग्निकळुमाय्पीयूप-
किरणमण्डलत्तोटु चेर्न्नु तट्टि- ९
वियर्त्तोळुकिटुममृतधारया
लयिच्चु मूलाधारवुं कुळुर्प्पिच्चु । १०
सपदि ब्रह्मरन्ध्रवुममर्त्तुळ्ळिल्-
त्तपसा योगमोटिरुन्नरुळुन्पोळ् । ११
त्रिभुवनमोक्क निरञ्ज तेजसा
पवननेज्जयिच्चमृतप्लावनं १२

भी अधिकांश सिद्ध हुए । अब मेरा वैकुण्ठ प्राप्त करने का समय आ गया । व्यर्थ विलम्ब न होना चाहिये । ऐसा सोचकर भगवान् ने अपने दाये पाँव को मोड़कर बाई जाँघ पर रखा और शरीर को सीधा करके बैठे । और प्राण को दबाकर निश्चल हुए और मूलाधार को स्थिर कर दिया । फिर बड़ी कुशलता के साथ कुण्डलिनी शक्ति को सुपुम्ना के द्वारा ऊपर को जगाकर, सभी चक्रो को जलाकर अग्नि के अर्कमण्डल को स्पर्श करने के बाद अग्निमण्डल को भी पीछे कर दिया । १-८ फिर एक दम पहले के अग्नियो के साथ अमृतकिरणमण्डल से मिलकर पसीने के रूप मे बहनेवाली अमृतधारा मे लीन होकर मूलाधार को ठण्डा किया । फिर तुरन्त ब्रह्मरन्ध्र को भीतर ही दबाकर तप के द्वारा योग

नी निरूपिच्चतु साधिच्चिविटेक्कु
मानमियन्नु वरिक विरयँ नी । ५५
मातुरनुज्ञ शिरसि वहिच्चुकाँ-
ण्टादरवोटु परन्नु गरुडनुम् । ५६

अमृतापहरणम्

उर्व्वीतलङ्ङळ् कुलुक्किप्पॉटियार्प्पि-
च्चुर्व्वियुमाकाशवुमॉरुमिप्पिच्चु । १
गर्व्वं कलर्न्नु निपादन्मार् वाळुन्न
निर्व्विकारालयमॅल्लामिळक्किनान् । २
वित्रस्तराय निषादकुलमॅल्ला
विस्तृतमायॉरु वक्त्रत्तिलाक्किनान् । ३
एत्रयु चुट्टुतुटङ्ङि गळतलं
चित्ते निरूपिच्चु मातृवचनवुम् । ४
विप्रनु कूटॅयकप्पॅट्टितॅन्नतु
कल्पिच्चु चॉन्नान् गरुडनुमन्नेरम् । ५
वुद्धिपूर्व्वं नित्रॅ काँत्तुकयल्ल ञा-
नत्तल् कूटातॅ पुरत्तु पोन्नीटुक । ६
सत्यधर्म्मादिकळ्क्काधारभूतन्मा-
रुत्तमन्माराय भूदेवन्मारत्रे । ७

आँसू वहाये और प्रसन्नता के साथ निवेदन किया—"सोची हुई वात सिद्ध होने पर सम्मान के साथ तुम जल्दी लौट आओ"। माता की आज्ञा को शिरोधार्य करके गरुड सादर उड गये । ४६-५६

अमृतापहरण

पृथिवीतल को हिलाकर चूर-चूर करके पृथिवी और आकाश को एक वना दिया। जहा निपादलोग सगर्व रहते थे उस निर्विकार (विष्णु) के लोक को हिला डाला। भयभीत सारे निपादकुल को अपने विस्तृत मुँह मे प्रविष्ट कर लिया। जव गला वहुत जलने लगा तव माता का वचन स्मरण मे आया। यह समझकर कि एक व्राह्मण भी मुँह मे प्रविष्ट हो गया होगा गरुड ने कहा—"मैने तुमको जानवूझकर मुँह में नही डाला है। इस लिए आराम से वाहर निकल आओ। उत्तम व्राह्मण ही सत्य, धर्म आदि का एक मात्र आधार है।" १-७ गरुड का यह वचन

मुनिवरन्मार् मानसत्तिलु गोप-
वनितमार् मुलत्तटत्तिलु पत्मा- २३
करतळिरिलु वलिशिरस्सिलु
पुररिपुदेवहृदयत्तिङ्कलु २४
विधिकरतलङ्डळिलु गौतम-
हृदयनायिकादृपद्वपुस्सिलु २५
विळङ्ङिङ्टु तव पदसरोरुह-
तलत्तिङ्कल् मम शरमेल्पिप्पति- २६
नोरु तिरुवुळ्ळ कलर्न्नतेन्तय्यो !
मुरहर ! नारायण ! नरकारे ! २७
शरण देवेश ! चरणतारिण
करुणावारिधे ! शरण दैवमे ! २८
तिरुमेय् कण्टुळ्ळलिवनानन्दवु
शरमेल्पिच्चतु निनच्चु भीतियु २९
कनिवु कण्टोरत्भुतवु कैक्कोण्टु
वणङ्ङिङ्नान् तेरुतेरेक्किरातनु । ३०
भयप्पेटेण्ट ञानरिञ्ञत्ते निन-
क्कयुक्तमल्लितु विधिवशाल् वन्नु । ३१
चतिचेय्तेन् निन्नेक्कळिञ्ञजन्मं नी
प्रतिक्रिय पुनरतिनितुमेटो । ३२

करो । १५-२२ मुनिवरो के मानस मे, गोपियो के स्तनतटो पर, कमल-सरोवर के नवपल्लवो मे, वलि के सिर पर, पुररिपु महादेव के हृदय मे, ब्रह्मा के करतल पर, और गौतम के हृदय की नायिका (अहल्या) के पत्थर के शरीर पर विराजमान तुम्हारे पादपद्म पर मेरे शर को लगने के लिए क्यो तुम्हारे मङ्गलमय मन ने प्रबन्ध किया । हे मुरहर ! नारायण ! नरकासुर के शत्रु ! हे देवेश ! तुम्हारा चरणयुगल ही मेरा शरण है । हे करुणासागर ! हे देव ! तुम ही शरण हो । भगवान् का शुभशरीर देखकर आनन्द, शर छोड़ने के कारण भय, और भगवान् की दया देखकर आश्चर्य का अनुभव करते हुए, किरात (शिकारी) ने जल्दी वारम्वार प्रणाम किया । २३-३० डरो मत ! मुझे यह पहले ही मालूम था । तुमने अनुचित काम नही किया है । यह विधिवश हुआ है । मैंने पूर्वजन्म मे तुमको धोखा दिया था । यह तुम्हारी उसकी प्रतिक्रिया है । अब से

निनक्किनिच्चिरममरलोकत्तु
मन.खेदं तीर्न्नु वसिक्कामेन्नुटे- ३३
मन:प्रियत्तिनु फलमतायतु ।
कनक्कनिन्निलुण्टेनिक्कु वात्सल्यं । ३४
अद्रियातेयोरु शर कोण्टच्युत-
चरणमर्च्चिच्चनिमित्त काट्टाळन् ३५
ओरुनाळुमोरुलयं वरातोरु-
परगतिवन्नु शिव ! शिव ! चित्र । ३६
खगमुखबुद्ध्या विशिखमर्प्पिच्चु
खगप्रवरनाय् चमञ्ञु काट्टाळन् । ३७
धरणिदेवन्मारतिशयभक्त्या
सरसिजसुमतुळसिपत्रङ्ङळ् ३८
चरणतारिलन्वहमाराधिच्चाल्
वरुन्नोरु फलमिनिक्कु चोल्लामो ? ३९
हरि करुणावारिधि किरातनु
सुरलोकप्राप्ति कोटुत्तनन्तरं ४०
तिरञ्ञु दारुकन् भगवानेक्काणा-
ञ्ञुरुखेदं पूण्टु नटन्नङ्ङोटिङ्ङो- ४१
टुळन्नु तेरुमायवनुं वन्नुक-
ण्टुळन्नु वीणुटन् नमस्कारं चेय्तान् । ४२

तुम अमरलोक मे सब दुःख छोडकर बहुत दिनो तक रहोगे। जान लो कि यह मेरी मन.प्रीति का फल है। तुम्हारे प्रति मेरा गहरा वात्सल्य है। अज्ञान में एक शर के द्वारा अच्युत के चरणो की अर्चा करने के कारण इस व्याध की वह परा गति हुई जो कभी नष्ट नही होती है। हे शिव ! हे शिव ! कैसा अद्भुत है ! खग (पक्षी) का मुख समझकर तो व्याध ने शर छोडा था पर वह एक खगप्रवर (आकाश मे जानेवालो मे श्रेष्ठ) बना। ३१-३७ अगर ब्राह्मणलोग बडी भक्ति के साथ कमल, अन्य पुष्प और तुलसी के पत्र प्रतिदिन चरणो पर चढावेगे तो उसका जो फल होगा उसका मैं कैसे वर्णन करूँ। करुणानिधि हरि के किरात को स्वर्गप्राप्ति दिलाने के बाद दारुक भगवान् को खोजता रहा और न देखने से दु.खित हुआ। इधर उधर बहुत घूमकर थकने के बाद वह रथ लेकर आया और भगवान् को देखकर नमस्कार किया। (दारुक ने विलाप किया—) भवगन्! मुझे क्यो धोखा दिया? मेरा मतिभ्रम तो बढा-चढा हुआ है। ३८-४३

चतिच्चतॆन्तॆन्टॆ भगवाने ! मम
मतिभ्रमं पारं मुळुत्तिरिक्कुन्नु । ४३
मृदुमृदुलमायरुणमायॊरु-
पदतळिरिलॆन्तॊरु शरमेल्पान् ४४
अवकाशं वन्नतिह भगवाने !
भवदनुमतमरियाञ्ञॆन्नुळ्ळिल् ४५
परितापं पार वळरुन्नू पोटि !
शरणं मट्टिल्ल करुणावारिधे ! ४६
पिरिञ्ञरियुन्नीलॊरुनाळुमिनि-
प्पिरिञ्ञिरिप्पानुमरुतु दैवमे ! ४७
चतिप्पानल्लल्ली तुटङ्ङुन्नु नाथ !
यदुप्रवर ! माधव ! जगत्पते ! ४८
तिरुमनसि चिन्तितमॆन्तॆन्नतुं
तिरियाञ्ञु खेदं पॆरुताकुन्नु मे । ४९
निरञ्ञ दुःखत्तालटित्तारिल् वीणु
परञ्ञु दारुकन् करयुन्ननेरं ५०
तॆरुन्ननॆत्तेरुमुयर्न्नु मेल्पट्टु
विळङ्ङुमायुधङ्ङळुमायन्नेर । ५१
नटुङ्ङि दारुकनतुकण्टन्नेरं
पॊटुन्ननॆक्कृष्णनरुळ्चॆय्तीटिनान्— ५२
तॆरुन्ननॆ द्वारावतिक्कु चॆन्नु नी
परञ्ञिटेणमीयवस्थकळॆल्लां । ५३

इस मृदुल, लाललाल पादपल्लव मे शर लगने का अवसर कैसे हुआ है, हे भगवन् ! आप का मत न जानने से मेरे मन मे दु ख वढ़ रहा हे, हे रक्षक! हे करुणासगर! तुम्हे छोड़कर मेरा और कोई शरण नही है । एक दिन भी आप से अलग नही रहा हूँ, ऐसा न हो कि आगे अलग रहना पडे। हे दैव! हे नाथ ! हे यदुप्रवर ! हे माधव ! हे जगत्पते ! मुझे धोखा तो नही देनेवाले हो ? आप की इच्छा क्या है, यह न जानने से मेरा दु ख वढ रहा है। ४४-४९ जव भरे दु.ख से चरणो पड़कर दारुक इस प्रकार कहते हुए रोता था तव झट से रथ, अपने चमकनेवाले आयुधों के साथ ऊपर उठा। यह देखकर दारुक काँपने लगा और अचानक कृष्ण वोले । तुम तुरन्त ही द्वारवती चलो और यह सव स्थिति वतला दो। इस क्रियाशील काल

पटुत्वमेऱ्ऱिटुन्नोरु कालत्तिन्टे
तटुत्तुकूटात बलत्तालिक्काल ५४
ओटुङ्ङि पण्टुळ्ळ जनङ्ङळुमेल्लां
वेटिञ्ञितग्रजन् धरणितन्नेयुं । ५५
अवनितन्मीते वसिच्चतिन्निनि-
यवसितमायिब्भविक्कुमाऱायि । ५६
अधिकं स्वस्थनायिरुन्न ञान् तानु-
मधुना दुस्थनाय् चमञ्ञितिन्नियुं । ५७
विरविल् स्वस्थनाय् चमयुमाऱत्ते
वरुन्नितेन्नतुमऱियिच्चीटणं । ५८
ओरुत्तरं द्वारावतियिलाम्माऱ-
ङ्ङिरिक्कोल्ला पार पिळय्क्कुमेङ्किलो ५९
समुद्रराजन् वन्नतिक्रमिच्चिटु
गमिच्चुकोळ्ळणमतिनुमुन्नमे ६०
धनधान्याद्युपकरणङ्ङळोटु
तनयदारङ्ङळेयु कटत्तिक्को- ६१
ण्टुटने पोकणं किमपि वैकाते ।
झटिति वारिधि तकर्क्कु वन्निप्पोळ् ६२
सुमतियाय वज्रने वाळिक्केन्नु
मम नियोगमर्ज्जुननोटुं चोल्क । ६३

(कलियुग) के अप्रतिहत बल के कारण पुराने लोग सब समाप्त हो गये है । मेरे वड़े भाई तो पृथिवी पर से ही हट गये । अव इस पृथ्वी पर निवास करना समाप्त होनेवाला है। ५०-५६ मैं जो विलकुल स्वस्थ या अव मैं भी दुस्थ हो गया हूं । यह भी वतला दो कि जल्दी फिर स्वस्थ हो जाऊँगा । कोई भी द्वारवती ही मे न रह जाय । नही तो वड़ी गलती हो जायगी । सागरराज अव आक्रमण करनेवाला है । इससे पहले ही चले जाना चाहिये । धन, धान्य आदि उपकरणो को लेकर पुत्र, कलत्र आदिको के साथ अव विना विलम्ब के जल्दी चले जाना चाहिये । समुद्र तो जल्दी ही आकर सव समाप्त करेगा । मेरी ओर से अर्जुन से कहना कि वुद्धि-शाली वज्र से राज कराना । ५७-६३ यह भी कहो कि सभी लोगो को ले जाकर परिपालन करना । यह भी कहो कि यह सव विधि का विहित

तदनु सर्व्वलोकरेयुं कोण्टुपोय्
सदयं पालिक्कॅन्नतुमेल्लां चोल्क । ६४
विधिविहितमितोळिक्करुतार्क्कु-
मतिनारु खेदिक्करुतेन्नु चोल्क । ६५
सकललोकेशवचनमेव के-
ट्टकमे वन्नोरु परितापत्तोटुं ६६
कळल्तळिरिण पलवुरु कूप्पि
मुळुत्त चिन्तया नटन्नु दारुकन् । ६७
सनकनारदप्रमुखन्माराय
मुनिकळोटु देवकळोटु कूटि ६८
कमलजनोटु गिरिसुतयोटु
विमलनीश्वरन् त्रिपुरनाशनन् ६९
त्रिभुवनपति सुरपति हरि
विभु मखपति कमलजापति ७०
धरणिभारवुमखिल तीर्न्नोरो-
तरुणिमारुमाय् रमिच्चनारत ७१
यदुकुलकीर्त्ति जगति चेर्त्तुळिल्
सुदृढब्रह्मचर्यवु दीक्षिच्चुको- ७२
ण्टळविल्लातोरो कळिकळालक-
तळिरखिलजन्मिकळ्क्कु मोदिप्पि- ७३
च्चिनिमेलिल् कलियुगत्तिङ्कलुळ्ळ
मनुष्यर्क्कु गति वरुत्तिक्कोळ्ळुवान् ७४

है, इससे कोई भी वच नही सकता है। इसके लिए कोई दु ख न करे। सभी लोकों के ईश्वर की यह वात सुनकर भीतर ही भीतर के दु ख के साथ चरणयुगल को वार-वार प्रणाम करके वढी-चढी चिन्ता के साथ दारुक चला गया। सनक, नारद आदि प्रमुख मुनियो, देवो और ब्रह्मा तथा पार्वती के साथ विमल, त्रिपुरनाशक ईश्वर, त्रिभुवनपति, सुरपति, हरि, विभु, यज्ञपति, लक्ष्मीपति ने पृथ्वी के भार को समाप्त करके, भिन्न-भिन्न तरुणियो के साथ रमकर, ६४-७१ इस जगत् मे यदुकुल की कीर्ति पैदा करके, भीतर से ब्रह्मचर्य की दीक्षा लेकर, अपनी निस्सीम लीलाओ से सभी प्राणियो के अन्त:करण का प्रमोद पैदा करके, आगे कलियुग मे जीनेवाले मनुष्यो के लिए गति का प्रवन्ध करने-हेतु अपनी उत्तरोत्तर

पवित्रकीर्त्तियु वळर्त्तिमेल्क्कुमेल्
त्रिवर्ग्गवुं भक्तजनत्तिनु नल्कि ७५
परममायुळ्ळ पदत्तॆ प्रापिप्पा-
नॊरुमिच्चन्नेरं तॊळुतु सेविच्चार् । ७६
पुरहरन्तानुं कमलजन्तानुं
पुरन्दरादियुं मुनिवरन्मारु ७७
मुदितराय् वेदङ्ङळॆक्कॊण्टु नन्नाय्
स्तुतिच्चु सेविच्चु तॊळुतु कुन्पिट्टार् । ७८
ऋजुशरीरनायिरुन्नुटन् प्राण-
विजयमोटग्निसुषुम्नतन्नूटॆ । ७९
विरवॊटु मेल्पोट्टुटन् ज्वलिप्पिच्चु
करयेटि चक्रङ्ङळुं दहिप्पिच्चु । ८०
स्थिरयायॊरु धारणया मूर्द्धनि
हिरण्यतेजस्सुं झटिति दीपिच्चु । ८१
पुरप्पॆट्टॊरग्नि दहिप्पिच्चु देहं
कुरच्चिल् कूटातॆ निरन्नॊराभयु ८२
जगत्तिङ्कलॊक्कॆ विळङ्ङिक्काणायि
सुखिच्चु देवन्मारतु कण्टन्नेरं । ८३
पुरुहूतनीलमणिरुचिपोलॆ
तिरुनिरपूण्ट पुरुषरूपवु ८४
भसितमाय्क्काणायितु सुरन्मार्क्कुं ।
मतिमरन्नॊरु परमानन्दत्ताल् ८५

कीर्ति को भी बनाकर भक्तजन को त्रिवर्ग प्रदान करके उनके परमपद प्राप्त करने हेतु सबने मिलकर प्रार्थना और सेवा की। पुरहर (शिव) और कमलज (ब्रह्मा), इन्द्र आदि देव, और मुनिवरो ने प्रमुदित होकर वेदमन्त्रो के द्वारा (कृष्ण की) स्तुति की, सेवा की, और हाथ जोडकर प्रणाम किया। ७२-७८ शरीर को सीधा रखते हुए बैठकर प्राणो की विजय द्वारा सुपुन्ना नाड़ी से अग्नि को ऊपर उठाया और चक्रो को जला दिया। तनन्तर स्थिर धारणा द्वारा अपने मूर्द्धा मे हिरण्यतेज को जलाया। उस तेज ने शरीर को उद्भासित किया। तब सारे जगत् मे एक पूर्ण आभा देदीप्यमान दिखाई दी। उसे देखकर देवगण प्रसन्न हुए। इन्द्र के नीलमणि की प्रभा के समान प्रभावाला, चमकनेवाला एक पुरुषरूप देवों को दिखाई

वळरेक्कल्पकप्पुतुमलर् कोरि-
त्तळिरोटे चोरिञ्ञितु मळपोले । ८६
तुटङ्ङ्ङ वाद्यङ्ङळवसानिच्चु पुन-
रोटुङ्ङाते पाट्टु पलतर कूत्तु । ८७
नटिक्कुन्नू नल्ल नटन्मार कोर्त्तु-
पिटिक्कयु कूटस्तुतिक्कयुमेल्लां । ८८
कमलसंभवपुरहरादिक-
ळमरन्मारुमाय् नटन्नु मेल्लवे । ८९
परमात्मावाय परब्रह्ममूर्त्ति
परमानन्दरूपनेव्भजिप्पानाय् ९०
निजनिजलोक गमिच्चारक्काल
भजनीयनन्तन्ने भजिक्कयुं चेय्तार् । ९१
पुनरुटन् द्वारावतियिल् मेविटु
जननितन्नुटे पतियायुळ्ळोरु ९२
वसुदेवर्तन्नोटुरचेय्तीटिनाळ्—
कुसुमितलतातरुनिरकळु ९३
पेरिकें माळ्कुवानोरु मूलमेन्तु ?
तरणिबिंबवु करुत्तिरिक्कुन्नु ९४
तेळिविल्लेतु दिक्कुकळ्क्कु दीपवु
विळङ्ङुन्निल्लेतु मनस्सु माळ्कुन्नु । ९५

दिया। सबको भुलानेवाले परमानद के कारण कल्पवृक्षों के नये-नये पुष्प तरुण पल्लवों के साथ वर्षा के समान गिरे। ७९-८६ वाद्यो का उच्च घोष भी प्रारम्भ हुआ और न समाप्त होनेवाले गाने और विविध नृत्य। अच्छे-अच्छे नट हाथ मे हाथ मिलाये नाच रहे है और साथ स्तुति कर रहे है। ब्रह्मा और शिव अन्य देवो के साथ धीरे-धीरे चले। परमात्मा, परब्रह्ममूर्त्ति, परमानन्दरूप का भजन करने के लिए उस समय सब अपने-अपने लोक गये। और भजनीय का भजन उन्होने किया भी। तत्काल ही द्वारवती मे रहनेवाली माता ने अपने पति वसुदेवजी से पूँछा—कुसुमित लताओ और वृक्षो के इस प्रकार सूखने का क्या कारण है ? सूर्यबिंब भी कुछ काला हो गया है। ८७-९४ दिशाएँ भी साफ नही हैं, दीप भी नही चमक रहे है, मन भी खिन्न सा है। वायु का मान्द्य भी कम हो गया है, भवनो मे भी कुछ चमक नही है। समुद्र मे स्नान करने जो यदुकुल गया था उसका कोई समाचार नही है। क्या कारण है कि वे

पवननु मान्द्यं कुरञ्ञु काणुन्नु
भवनङ्ङळक्कुमिल्लोरु निऱमेतु । ९६
उदधितीर्थत्तिल् कुळिप्पान् पोयोरु
यदुकुलवृत्तान्तवु केट्टिल्लेतु । ९७
वरुवानित्र वैकियतुमेन्तव-
रुरुकुन्नु चित्तमतु निरूपिच्चु । ९८
हिमकिरणमण्डल पणियुन्न
मम तनयन्तन् मुखसरोरुहं ९९
विळङ्ङिडक्काणाञ्ञिट्टिनिवकोरुन्मेषं
कळञ्ञतेन्तेन्नकणक्के तोन्नुन्नु । १००
तळरुन्नु कालुं करङ्ङळुमेल्लां
वळरुन्नु तापमिनिक्कु मेल्क्कुमेल् । १०१
वलत्तुकण्णाटुन्नितु तेरुतेरे
चलिक्कुन्नु तोळु तुटयुमप्पुरं । १०२
पलवुं देवकि पतितन्नोट्टट-
नलसभावं चोन्नळवुकाणायि । १०३
पिरिञ्ञ तेरुं धीरतयुमायेट्
करिञ्ञ भाववु कलन्नंतुनेर १०४
अतिमन्दं मन्दं वरुन्नु दारुक-
नतुकोण्टुण्टोन्नु मनसि तोन्नुन्नु १०५
पुऱकेयुण्टेन्टे मकनतुकोण्टु
पेरिके मन्दिच्चुवरुन्नतुमवन् । १०६

आने मे इतनी देर लगा रहे है ? यह सोचकर मन पिघल रहा है। चन्द्रमण्डल को बनानेवाले मेरे पुत्र के मुखपद्म को विराजते न देखकर मुझे लगता है कि मेरा उन्मेप नष्ट हो गया है। मेरे हाथ-पैर शिथिल हो गये है और मेरा दु ख वढता जा रहा है। ९५-१०१ दायी आँख स्फुरण कर रही है और मेरे अस और जाघ काँप रहे है। देवकी ने अपने पति से अपने दु ख के सन्बन्ध मे जो कहा है उसकी थाह नही है। अपने रथ और धैर्य को खोकर, और वडे विपण्ण भाव के साथ वहुत धीरे-धीरे दारुक आ रहा है। इस लिए एक वात मुझे सूझ रही है— मेरे पुत्र पीछे-पीछे आ रहे है यही कारण है कि यह धीरे-धीरे आ रहा है। यह सुनकर वैदर्भी प्रसन्न हुई और घर जाकर उसने विस्तरा विछाया। और

अतुकेट्टु वैदर्भियु तेळिवोटे
सदनं प्रापिच्चु विरिच्चु शय्ययु १०७
उदकवुं भृङ्गारकङ्ङळिल् निऱ-
च्चुदितानन्दं पार्त्तिरुन्नरुळुन्पोळ् । १०८
पुरवासीजनमेळ्ळुन्नवळत्तु के-
ट्टिरुन्नारिवयुं परमानन्द पू- १०९
ण्टतिल् चिलरोटिप्पेरुवळिक्कु चे-
न्नतिप्रमोदेन वळिक्कु नोक्कियुं ११०
स्तनितं केट्ट चातकङ्ङळेप्पोले
मनसि सम्मोदं कलर्न्नु मेविनार् । १११
अतुनेरमोट्टङ्ङटुत्तु दारुकन्
मृतदेहं नटन्नटुक्कुन्नपोले । ११२
भगवद्वृत्तान्तं पलरु चोदिच्चा-
रकमे वेन्तुवेन्तवनुमन्नेरं । ११३
चेरुतु मण्टिनानविटे वीणान-
ङ्ङुरुण्टुतन्नत्तान् पेरिकेत्ताडिच्चान् । ११४
मळपेय्युंपोले नयनवारियु-
मोळुकुन्नु करञ्ञुरुळुन्नु पारिल् । ११५
शिवशिव ! पुनरवनप्पोळ् वन्न-
विवशतयेन्तु पऱयावल्लेतुं । ११६
चिलरोटुन्नितु चिलर् वीळुन्नितु
चिलर् मोहिक्कुन्नु चिलर् करयुन्नु । ११७

पात्रो मे पानी भरकर आनन्द के साथ प्रतीक्षा करती रही । १०२-१०८ नागरिकजन उनका आगमन सुनकर अत्यन्त आनन्दित हुए और प्रतीक्षा करने लगे । उनमे से कुछ लोग राजमार्ग पहुँचे और वड़े प्रमोद के साथ रास्ता देखने लगे । आसमान मे स्तनित को सुननेवाले चातक के समान सवके मन में सम्मोद हुआ । उस समय चलते मृतशरीर के समान दारुक तनिक निकट आया । वहुतो ने भगवान् का समाचार पूँछा । वह तो भीतर ही भीतर तप रहा था । जव वह तनिक आगे वडा तव गिरा और भूमि पर लोटता हुआ अपने ही ऊपर चोट पहुँचाने लगा । वर्षा के समान उसने आँसू गिराये और भूमि पर लोटता हुआ वह रोया । १०९-११५ हा शिव ! शिव ! उसकी जो उस समय लाचारी

चिलरिरिक्कुन्नु चिलर् किटक्कुन्नु
चिलर् विऱय्क्कुन्नु चिलर् तॊऴिक्कुन्नु । ११८
चिलर् चिलरॆयु पिटिच्चु कॆऴुन्नु
चिलर् चिलरॆच्चॆन्नुटनॆ पुल्कुन्नु । ११९
कटल्वर्ण्ण ! कण्ण ! करिमुकिल्वर्ण्ण !
कटल्मकळ् पुल्कु मणिवर्ण्ण ! नाथ ! १२०
चतिक्कयो चॆय्ततिनियारुळ्ळतॆन्-
मतिक्कॊरानन्दं नल्कुवानीश्वरा ! १२१
पॊऱुक्कुन्नु अङ्ङिनियतॆङ्ङनॆ ?
मरिक्कुन्नु वल्ल कणक्किलुमय्यो ! १२२
परिणतशशमृगधरबिंबं
परिचॊट्टु कूप्पुं तिरुवदनवु १२३
तॊऴिञ्ञ वॆण्णिलावळ्ळॆळुंवण्ण
विळङ्ङु पुञ्चिरिप्पुतुमयुमय्यो १२४
मधुरमायुळ्ळोरमृतत्तॆक्काळु-
मतिमनोज्ञमामरुळ्प्पाट्टुकळ् १२५
चॆविकळिल् केळातिरिक्कुन्नाकिलो
शिवशिव ! पोट्टी पॊऱुतियॆङ्ङनॆ ? १२६
निऱन्नुमञ्ञप्पट्टुटयुं काञ्चियुं
मऱन्नुकूट्टुमो तुटयिणक्कान्पुं ? १२७

हुई उसका वर्णन करना असम्भव है। कुछ लोग दौड़ रहे है, कुछ लोग गिर रहे है। कुछ लोग बेहोश हो रहे है, कुछ लोग रो रहे है। कुछ लोग बैठे है, कुछ लोग लेटे हैं, कुछ लोग काँप रहे है, कुछ लोग छाती पीट रहे है, कुछ लोग औरों को पकडते हुए रो रहे है, कुछ लोग कुछ औरो को छाती लगा रहे हैं। हे सागर के वर्णवाले! हे कान्हा! हे कान्हा! हे घनश्याम! हे नाथ! हे इन्द्रनील मणि के वर्णवाले जिसको समुद्रपुत्री (लक्ष्मी) आलिङ्गन करती है! अन्त मे तुम ने धोखा दिया है। अब कौन है जो हमको आनन्द देगा? हे ईश्वर! अब हम इसको कैसे सह सकते है? अब किसी प्रकार मरना ही शेष है। ११६-१२२ वह शुभ वदन जिसके सामने पूर्णिमा का चन्द्रबिंब भी झुकता है, मुस्कराहट की वह शोभा जो चमकनेवाली चाँदनी को भी परास्त करे, वह वाणीविलास जो मधुर अमृत से भी अधिक मन और बुद्धि को आनन्द देनेवाला है, अगर कान में सुनाई न देगा तो शिवशिव! हे रक्षक! शान्ति कैसे होगी? वह

इत्थं गरुडन् परञ्ञतु केट्टॉरु
पृथ्वीसुरोत्तमनुत्तर चॉल्लिनान् । ८
निर्म्मल! पक्षीन्द्र! धर्म्मपरायण!
मन्मनोवाञ्छित चॉल्लुवन् केळ्क्क नी । ९
उण्टॉरु भार्य निषादियवळॅयु
कॉण्टुपोकेणमॆनिक्कॅन्नरिक नी । १०
कॉण्टुपोन्नालुमॆन्नाननत्तूटॅ नी-
युण्टाकयिल्ल विषममतिनेतुम् । ११
आशु पुऱत्तवळोटु पुऱप्पॅट्टा-
नाशीर्व्वादङ्ङळु चॅय्तु गरुडनुम् । १२
पोयान् द्विजवरन् पिन्नॆ गरुडनु
पोयान् पिताविनॆक्कण्टु वणङ्ङुवान् । १३
पैदाहमेतुमटङ्ङील निन्नुटॆ
पैतलायीटुमिनिक्कु तपोनिधे । १४
काश्यपनोटवनिङ्ङनॆ चॉन्नप्पो-
ळाश्चर्यमुळ्क्कॉण्टवनुमुरचॅय्तान् १५
मुन्नं विभावसुवाय मुनियोटु
तन्नुटॆ सोदरन् मत्सरिच्चानल्लो । १६
ज्येष्ठॉंशमे भवानुळळु पकुत्तु क-
निष्ठांशमिङ्ङु तरेणमॆन्नानवन् । १७

सुनकर ब्राह्मणोत्तम ने उत्तर दिया—"हे निर्मल धर्मपरायण पक्षीन्द्र ! मै अपने मन की अभिलाषा बतला दूँगा, तुम सुनो—मेरी एक पत्नी है जो निषादी है । उसे भी साथ ले जाना चाहता हूँ, यह जान लो ।" (गरुड ने कहा—) "मेरे मुँह से उसे भी निकाल ले जाओ, इसमे कोई कठिनाई न होगी" । तुरन्त ब्राह्मण उसे लेकर बाहर निकला और गरुड ने आशीर्वाद दिया । ८-१२ ब्राह्मण चला गया । तदनन्तर गरुड अपने पिता के दर्शन और वन्दना के लिए गया । (और बोला—) हे तपोनिधे! आपके इस बेटे की भूँख और प्यास अभी शान्त नही हुई । जब पिता काश्यप से इस प्रकार कहा गया तब उन्होने आश्चर्य मे आकर बतलाया—"पहले की बात है, मुनि विभावसु से उनके अनुज ने झगडा किया । उसने कहा—तुम्हारा अपने ज्येष्ठांश पर ही अधिकार है । इस लिए विभाजन करके कनिष्ठांश मुझे दे दो । विभावसु ने कहा—यह ठीक नही कि तुम

मधुरिपुतिरुवुटलोटु चेन्नु
चितयिलाम्मारु मटियार्त चाटि १३८
मधुमोळिकळा प्रणयिनिमारुं
मधुमयनन् तन्नुटलोटु चेन्नार् । १३९
लभिच्चु सायुज्यमवर्क्कतुकाल
तपस्सु पण्टेट् चरिच्चतुमूल । १४०
तनयनाय् वन्नु पिरन्न कृष्णने
मनसि चिन्तिच्चु मरणं प्रापिच्चु १४१
वसुदेवाख्यनामेळां प्रजापति
वसुमतिपतियोटु चेन्नोटिनान् । १४२
चितमेलाम्मारु पतिच्चु देवकि
पतियु तानुमाय् सुतनोटु चेन्नाळ् । १४३
पतिनाऱायिर प्रणयिनिमारु
पतियोटु चेन्नार् पुनरतुकाल । १४४
मुळुकि मेल्लवे करयेरि नामे-
न्नळकोटे तोन्नि मुहुरवर्क्केल्ला । १४५
यदुक्कळ्क्केल्लावर्क्कुमुदकपिण्डङ्ङळ्
विधिच्चवण्णमे कळिच्चु पार्थनुं । १४६
समुद्रं द्वारकापुरत्तेयु मुक्कि
समस्त माधवगृहमोळिन्नेल्ला । १४७

जाने के लिए बिना हिचक कर उनकी मीठी आवाजवाली प्रणयिनियाँ उस पर कूद पड़ी और मधुमथन के शरीर के साथ हो गयी। उनको उस समय सायुज्य मिला क्योंकि उन्होने पहले ही वहुत तपस्या की थी। कृष्ण को जिन्होने अपने पुत्र के रूप मे जन्म दिया था, अपने मन मे ध्यान करते हुए सातवे प्रजापति वसुदेव ने मृत्यु को प्राप्त किया और भूमि के पति के साथ एक हो गये। देवकी भी चिता पर कूद पडी और अपने पति के साथ पुत्र से एक हो गयी। उस समय (कृष्ण की) सोलह हजार प्रणयिनियाँ भी अपने पति के साथ एक हो गयी। १३८-१४४ उनको ऐसा लगा कि हम सव डूब कर फिर तट पर चढ गयी है। अर्जुन ने सभी यदुओ के लिए यथाविधि उदक्रिया की। समुद्र ने कृष्ण के भवन को छोड़कर सारी द्वारकापुरी डुवो दी। अर्जुन तो अवशिष्ट नारीजन को लेकर विपण्ण भाव से निकल पड़े। जव वे एक वड़े जङ्गल से

पलरुमोरोरोविधमिवण्णमे
पलतर चौल्लिक्करयुन्ननेर १२८
असुरवैरिये मनसि चिन्तिच्चु
वसुदेवक्कुं देवकिक्कुमन्नेरं १२९
जनिच्च सन्तापं पऱञ्ञुकूटुवान्
जनिच्चवर्कळिलौरुत्तरिल्लल्लो । १३०
विदर्भजादि वल्लभमावर्क्कुमप्पो-
ळुदिच्चु सन्तापमतिल्परमत्रे । १३१
पुरन्दरात्मजनिवयेल्लां कण्टु
परन्पुरुषने मनसि चिन्तिच्चु । १३२
इरुन्नु तन्नत्तान् मऱन्नौरित्तिरि-
पऱञ्ञु दारुकनरुळप्पाटेल्ला । १३३
यदुवरनामाहुकन्तन्नोटति-
द्रुत चौल्लेणमेन्नतुमुरचेय्तान् । १३४
उटने पारिजातवुमतिद्रुतं
नटकौण्टु मेल्पोट्टुयर्न्नु वेरोटे । १३५
नटन्नौराहुकन् वळिये पोय् चेन्नु
किटन्न यादवरुटलेल्लां कण्टु । १३६
चितयुमर्ज्जुनन् चमच्चानन्नेर-
मतिसुगन्धचन्दनतरुक्कळाल् । १३७

पीताम्वर, वह काञ्ची और वह ऊरुस्तम्मद्वय कैसे भूले जा सकते हैं ? जव भिन्न-भिन्न लोग इस प्रकार भिन्न-भिन्न प्रकार से विलाप कर रहे थे तव असुरो के शत्रु को याद करते हुए वसुदेव और देवकी के भीतर जो सन्ताप पैदा हुआ उसका वर्णन कर सकनेवाला प्राणियो मे कोई नही है । १२३-१३० वैदर्भी आदि कान्ताओ को तो उससे भी अधिक सन्ताप पैदा हुआ । अर्जुन ने तो यह सव देखकर परमपुरुष का अपने मन मे ध्यान किया । अपने को भूलकर थोडी देर वैठे । तव दारुक ने अपनी पूरी वाते कही । यह भी कहा कि यदुवर आहुक को सभी वाते वतला देना । तुरन्त ही पारिजात जल्दी निकला और जडों के साथ ऊपर को उठा । आहुक तो सीधे चला और उसको मरे यादवो के शव दिखाई दिये । तव अर्जुन ने अतिसुगन्धवाले चन्दन की लकड़ियो से चिता वनायी । १३१-१३७ मधुरिपु (कृष्ण) के शरीर के साथ चिता पर हो

इनि ञान् भूमियिलिरुन्नतु मति
वनचरन्माराल् परिभूतनायेन् । १५९
करञ्ञुमोरोन्नु परञ्ञुमिङ्ङने
पिरिञ्ञ नाथने निनच्चु खेदिच्चु १६०
नटक्कुन्ननेरं विधिवशाल् पुन-
रटुत्तु वेदव्यासनेयुं काणायि । १६१
करुणापीयूषनिधियेक्कण्टवन्
चरणतारिण वणङ्ङि वीळ्कयुं १६२
पॊट्टुपॊट्टिप्पॊट्टिक्करकयुं कण्णी-
रुटनुटन् वीणङ्ङोलिक्कयु मटि- १६३
ल्लुटयवरेन्नु परकयुमुळ्ळ
किटुकिटुक्कयुं मुनि कण्टन्नेर- १६४
मरुळिच्चेय्तितु करुणया नर-
वरनामर्ज्जुननोटु कनिवोटे— १६५
निनक्कितुकॊण्टोरिळप्पमिल्लेतु
निनच्चु दुःखियाय्कमरेशात्मज । १६६
त्रिभुवनत्तिङ्कलोरुवनुण्टो चो-
ल्लिह मानक्षयमनुभवियाते ? १६७
ऒरुकाल मानं वरुमभिमान
वरुमॊरुकालमिटकलर्न्नुळ्ळु । १६८

रक्षा करने मे अशक्त बना जो पहले बिलकुल शत्रुरहित रहा। मेरा इस भूमि पर रहना अब समाप्त होना चाहिये, मै जगली लोगो से पराजित हो गया हूँ। १५३-१५९ रोते हुए और इस प्रकार विलाप करते हुए, दिवंगत नाथ के स्मरण से दु खित होकर जब वे चल रहे थे तब विधिवश वेदव्यासजी फिर दिखाई दिये। उस करुणामृतनिधि को देखकर अर्जुन ने चरणयुगल की वन्दना की और फूटफूटकर रोया और उसके आँसू जल्दी-जल्दी गिरे, और उसने कहा "अब मेरा और कोई नही है", और उसका अन्त करण कॉपने लगा। यह देखकर मुनि ने बड़ी दया से नरवर अर्जुन से कहा— "इससे तुम्हारी कोई हानि नही हुई है। हे इन्द्रपुत्र ! यह सब सोचकर दु खित न हो जाओ। १६६ कहो ! इस संसार मे कोई है जिसने मानक्षय का अनुभव न किया हो ? । कभी मान होता है और कभी अभिमान होता है। दोनो का मेल होता रहता ही है। जनन और मरण, स्वर्ग और नरक, सुख और दु ख आदि सभी द्वन्द्व, सम्पत् और

ऒंळिञ्ञुळ्ळ नारीजनत्तेयुकोण्टु
विषण्णनाय् पार्त्थन् नटन्नु वैकाते । १४८
पॆरुत्त काट्टूटॆ नटक्कुन्न नेर-
मुरत्त काट्टाळरटुत्तारन्नेरं १४९
करुत्तेरुं सिहत्तोटु कलहिप्पान्
कुरच्चु नाय्क्कळ् चेन्नटुक्कुन्नपोले । १५०
झटिति क्रुद्धनाय् पुरुहूतात्मज-
नटुत्तु युद्धत्तिनोरुमिच्चनेर १५१
कुलय्क्कायील विल्लेटुक्कायीलोट्टुं
वलिक्कायीलस्त्रङ्ङळुं तोन्नीलेतुं । १५२
विषभिषङ्मन्त्रनिरुद्धनायोरु
विषधरनेन्नकणक्के फल्गुनन् । १५३
निरुद्योगपूण्टु किमपि निन्नप्पोळ्
करुत्तेरुं काट्टाळरुमटुत्तेटं १५४
पटिच्चुकोण्टार् नारिकळेयुमप-
हरिच्चारर्त्थमुळ्ळतु बलालप्पोळ् । १५५
इतु वरुवतिनवकाशमेन्तु
मधुरिपो ! मुरमथन ! दैवमे ! १५६
निखिलं निन्तिरुवटियुटॆ माया-
विकृतियत्रे निश्चयं जगत्त्रयं । १५७
अशक्तनाय् वन्नेनिवरे रक्षिप्पा-
नशक्तवाय् मुन्नमिरुन्नेनल्लो ञान् । १५८

निकल रहे थे तब जङ्गली लोग उनके पास पहुँचे, जैसे शक्तिशाली सिंह से लड़ने के लिए कुत्ते भोंकते हुए उसके पास जाते है। तुरन्त ही क्रुद्ध होकर जब अर्जुन युद्ध करने के लिए निकट पहुँचा तब धनुष की डोरी न लगा सका, बाण न उठा सका, कोई अस्त्र न खीच सका, उसको कुछ सूझा ही नही। १४५-१५२ उस समय फल्गुन तो विषवैद्य के द्वारा निरुद्ध सर्प के समान हो गया। जब इस प्रकार लाचार होकर खड़ा हो गया तब शक्तिशाली जगलीजन बहुत निकट पहुँचे और नारीजन को छीन लिया और जो कुछ धन था उसे बलात्कार से लूट लिया। हे मधुरिपो ! हे मुरारे ! हे भगवन् ! क्या कारण है कि यह घटना हुई ? निस्सन्देह यह सारा जगत् आप भगवान् की माया विकृति है। मै इनकी

तव शौर्यत्तिनु कुऱवुण्टाकय-
ल्लवनिदेवेशनुटे शापत्तिनाल् १८०
अबलमार्क्किन्नितकप्पेट्टु भवा-
नबलनाकयल्लतु धरिच्चालुं । १८१
प्रियस्वभावनायुऱच्च बन्धुवाय्
वयस्यनायिरुन्नजन् जनार्द्दनन् १८२
मरिच्चुपोयितेन्नतु निनच्चो निन्
करच्चिलाकुन्नु शिवशिव ! चित्रम् ! १८३
निनक्कु मूढत्वं पेरुतत्रे पार-
मेनिक्कतोर्त्तोळं चिरियाकुन्नु केळ् । १८४
मरिक्कयुमिल्ल जनिक्कयुमिल्ल
मुरद्वेषि जगत्पति नारायणन् । १८५
धरिच्चिरिक्कुन्नु मनसि नीयुम-
तिरिक्केशशोकिप्पानवकाशमिल्ल । १८६
जगदखिलवुं निऱञ्ञिरिक्कुन्न
भगवानुण्टो जन्मवुं मरणवुं ? १८७
धरणिभारवु कळञ्ञु तन्नुटे
परिकरङ्ङळां यदुकुलत्तेयु १८८
ओट्टुक्कत्तेक्कवे मुनिशापव्याजा-
लोट्टुक्किक्कूटि तङ्ङळिल् पिणङ्ङिच्चु १८९
परनुटे मायामहिमयोर्त्तोळ-
मोरुवनुमुळ्ळिलऱिञ्ञुकूटुमो ? १९०

कमी नही आई है। ब्राह्मण के शाप के कारण स्त्रियो की यह घटना हुई है, यह नही कि तुम दुर्बल हो गये हो, जान लो। १७४-१८१ प्रिय-स्वभाव, स्थिर वन्धु, मित्र, अज, जनार्दन का जो देहान्त हो गया उसका स्मरण करते हुए क्या तुम रो रहे हो ? हाँ ! शिवशिव, कैसा विचित्र है ! तुम तो वड़े मूढ हो, यह देखकर मुझे हँसी आती है। जरा सुन लो ! मुर का शत्रु जगत्पति नारायण न मरता है और न जन्मता है। तुमने यह सब समझ रखा है फिर भी तुम दु.खित हो गये हो, क्यों ? सारे जगत् मे व्याप्त भगवान् का जन्म कहाँ, मरण कहाँ ? । १८२-१८७ पृथिवी के भार को नष्ट करके, अपनी विरादरी यदुकुल को समाप्त करने-हेतु मुनिशाप को कराया और उनको आपस मे लडवाया। पर की

जनिमृतिस्वर्गनरकयामिनि-
स्सुखदुःखाद्यङ्ङळखिलद्वन्द्वङ्ङळ् । १६९
जगति सन्पत्तुं विरवोटापत्तु
भगवानुपोलुं भविक्कुन्नु नूनं । १७०
ऑरु वरिषत्तिन्नुटनें वेनलु
वरुमतिनिल्ल विकल्पमेतुमे । १७१
दशदिशि कीर्त्ति परत्तिटुन्नोरु-
दशरथनृपप्रवरनन्दनन् १७२
दशमुखकालनमितविक्रमन्
दशशतच्छदसुहृत्कुलजातन् १७३
अभिमानिकुलशमनीश्वर-
नभिमानमुळ्ळ पुरुपरिल् वन्पन् १७४
स्वधर्म्मदारापहरणवुमव-
न्नधिगतमायिततु धरिक्क नी । १७५
अवनियिलोरुनरनुमव्वण्ण-
मवमानमनुभविच्चीलोक्कण । १७६
वनितमारिवर् वळञ्ञदेहनां
मुनिवरन्तन्नेप्परिहसिक्कयाल् १७७
चतिच्चु काट्टाळरटवियिलाट्टि-
यपहरिच्चुपोकोरुनाळेन्नल्लो १७८
द्विजशापं तट्टुक्करुतोरुवक्कु
विजय ! कण्टतिल्लयो नीतानिप्पोळ् । १७९

विपत् इस जगत् मे भगवान् के भी अवश्य होते हे। एक वर्ष मे ग्रीष्म भी होगा इसमे कोई सन्देह नही है। दसहो दिशाओ मे अपनी कीर्ति फैलानेवाले राजा दशरथ के सुपुत्र, दशमुख के नाशक, अमितविक्रम, सूर्यवंश मे पैदा हुए, १६७-१७३ अभिमानियो के कुल का नाश करनेवाले ईश्वर, अभिमानवाले पुरुपो मे श्रेप्ठ की भी स्वधर्मपत्नी का अपहरण हुआ, इस वात का स्मरण करो। पृथिवी मे किसी भी मनुष्य ने इस प्रकार का अपमान अनुभव नही किया है। वक्र देह वाले मुनिवर का परिहास करने के कारण 'जङ्गली जाति ने इन स्त्रियो को जङ्गल मे भागकर छीन लिया' ऐसा ही तो ब्राह्मण ने शाप भी दिया था। द्विज-शाप को कोई टाल नही सकता। हे अर्जुन ! तुम देख रहे हो। तुम्हारे शौर्य मे कोई

उणर्न्नु चित्तमोट्टमरेशात्मजन्
वणङ्ङिनान् मरञ्ञितु मुनीन्द्रनुं । २०१
अतुकालं धर्म्मात्मजनुं भीमनो-
टतिखेदंपूण्टु पर्ञ्ञानीवण्ण— २०२
अनुजन् द्वारकपुरिक्कु पोयव-
निनियुं वन्नीलेन्ततिनु कारणं ? २०३
कलिञ्ञितु मासं मुळुवन् नालिप्पोळ्
वळङ्ङीलिङ्ङु पोरुवानेन्नो नाथन् ? २०४
पिळच्चु काणुन्नु निमित्तङ्ङळेल्लां
कुळप्पमेतानुं वरिककोण्टल्ले । २०५
पेरिके मङ्ङिप्पोयितु धरातल
निरन्न दीपवुं पोलिञ्ञेटं मङ्ङि । २०६
मरुवुं मन्दिर कणक्केयाय्वन्नु
परिषमाय् वीयुन्नितु पवननुं । २०७
कृतिकळुळ्ळलुं कुरञ्ञितुन्मेषं
हृदि मुनिजनत्तिनुमिल्लानन्दं । २०८
पशुक्कळु चेविकळुं कूर्प्पिच्चेटं
विशप्पुमोराते मुळुत्त चिन्तया २०९
करञ्ञङ्डोटिङ्डोटुळन्नु निल्क्कुन्नु
पिरिञ्ञोरु पैतङ्ङळेयुं वेण्टील । २१०
पशुक्किटाङ्ङळुं कुटिक्कुन्नील पाल्
पशुक्कळ् तङ्ङळुं कुटिप्पिक्कुन्नील । २११

गये। १९५-२०१ उन दिनो युधिष्ठिर ने दु.खित होकर भीम से इस प्रकार कहा—हमारा छोटा भाई जो द्वारका गया था अभी लौटा नही, क्या कारण है ? अब चार महीने पूरे हो गये। क्या नाथ का यहाँ आना स्वीकार नही हुआ ?। अब दुर्निमित्त दिखाई दे रहे है। कोई विपत्ति के आने के कारण होगा। सारा धरातल मन्दप्रभ हो गया और भरा दीप भी ठीक से नही जल रहा है। भवन अब मरु के समान हो गया है। और तेज हवा चल रही है। प्रजाओ के भीतर उन्मेप कम हो गया और मुनिजन के हृदय में भी आनन्द नही है। २०२-२०८ गाये भी अपने कान को खड़ा करके, भूँखी होकर और बड़ी चिन्ता के साथ इधर-उधर भटककर खड़ी हो गयी है। अपने अलग हुए बछड़े की परवाह नही

अमरकळ्कुलप्पेरुमाळ्तान् मुन्न
समरत्तिन्नु पण्टट्टुवक्कुन्नेरत्तु १९१
रथत्तिन्मेल्निन्नु परञ्ञुतन्नीले
मधुद्वेपि निन्नोटुटनिन्द्रात्मज ! १९२
निनक्कु विश्वास वरुवानल्लयो
तनिच्चु विश्वरूपवुं काट्टित्तन्नु १९३
जलरेखयोटु सममाय् वन्नितो
वलरिपुसुत ! निनक्कतोक्कवे ? १९४
परमात्मज्ञानमुपदेशिच्चतु
परमात्मावाय भगवानल्लयो ? १९५
कुरुवीर ! निन्नोट्टिनि मट़ारानुं
सुरवरात्मज ! परञ्ञिटेणमो ? १९६
जगदशेपवु निरञ्ञिरिप्पोरु
भगवान् तन्मायाविलसितमेल्ला । १९७
इनि निङ्ङळ् भूमि प्रदक्षिण चेय्तु
मनसा सन्यसिच्चखिलकर्म्मवुं १९८
नियतिकोण्टुळ्ळ पृथक्भावं तीर्न्नु
लयिक्क कारणमतिङ्कल् निङ्ङळुं । १९९
मुनिवरन् द्वैपायनन् वेदव्यासन्
कनिवोटीवण्णमरुळ्चेय्तनेर २००

माया की महिमा को कौन समझ सकता है ? देवकुलो के नाथ ने पहले ही, जब महायुद्ध प्रारम्भ होनेवाला था, तब रथ पर खड़े होकर, हे इन्द्रपुत्र! तुमको स्वय उपदेश दिया था। तुमको विश्वास दिलाने ही के लिए तो उन्होने तुमही को अपना विश्वरूप दिखलाया था। वह सब उपदेश अब तुम्हारे लिये जलरेखा के समान हो गया है, क्या ? । १८८-१९४ परमात्मा भगवान् ही ने तो तुमको परमात्मा का ज्ञान दिया था ! हे कुरुवीर ! हे इन्द्रपुत्र ! तुमसे यह सब और किसी के कहने की क्या आवश्यकता है ? सारे जगत् को व्याप्त किए हुए भगवान् की माया का ही यह सब विलसित है। अब तुम लोग पृथिवी का प्रदक्षिण करो, और सभी कर्मो का मन से संन्यास करो, नियति के कारण जो भेदभाव है उसे त्यागो और कारण मे लीन हो जाओ। मुनिवर द्वैपायन वेदव्यास के इस प्रकार कहने पर अर्जुन ने अपने चित्त मे जागकर, वन्दना की और मुनिवर अन्तर्धान हो

चरणतारिल् वीणवस्थयॆल्लामे
पऱञ्ञु भावं कॊण्टतुनेरमुळ्ळिल्
अऱिञ्ञु धर्म्मजनवस्थ मिक्कतुं । २२२
करञ्ञु कण्णुनीर् तुटच्चु फल्गुनन्
पिरिञ्ञ नाथनॆ मनसि चिन्तिच्चुं २२३
पऱञ्ञु भूमिक्कॊरलङ्कारमायि-
प्पिऱन्नु देवकितिरुमकन् कृष्णन् । २२४
वॆटिञ्ञुं भूमिदेवियॆयुमॆन्नॆयुं
पॊटुन्नतनवे पोय्मऱञ्ञरुळिनान् । २२५
इवण्णमॆन्नॆयु करयुमाऱाक्कि
सुवर्ण्णवैकुण्ठं त्वरितं प्रापिच्चान् । २२६
यदुकुलमॆल्लां मुटिञ्ञु तङ्ङळिल्
मधुपानं चॆय्तु मतिमऱन्नेटं । २२७
कलहिच्चु मुनिवरर्शापवाक्य-
बलं कॊण्टुण्टाय मुसलत्तालुटन् । २२८
अतु केट्टु धर्म्मतनयन्तन्नुळ्ळिल्
अधिकं वाच्चॊरु परिताप चॊल्वान् २२९
अरुतॊरुवनुमतुमकतारि-
लुरुविचारंकॊण्टटक्कि मॆल्लवे । २३०
भगवल्पादङ्ङळ् मुळ्ळुत्त भक्तिकॊ-
ण्टकतारिल् नन्नायुऱप्पिच्चन्नेरं । २३१

पड़े और सारी स्थिति को उन्होने भाव के साथ कह सुनाया। तब युधिष्ठिर ने सारी स्थिति को समझ लिया। २१६-२२२ अर्जुन ने रोकर आँसू पोंछा और अलग हुए नाथ का स्मरण करते हुए बोले कि देवकी के सुपुत्र कृष्ण ने भूमि के एक अलकार के रूप मे जन्म लिया था। भूमिदेवी को और मुझे छोड़कर यकायक चले गये, विराजते हुए। इस प्रकार मुझे भी रुलाते हुए तुरन्त ही अपने वैकुण्ठ सिधारे। सारा यदुकुल-जन मद्यपान करके अपने को भूलकर आपस मे लडे और मुनिवरो के शाप के कारण जो मुसल पैदा हुआ उससे लडकर समाप्त हुए। २२३-२२८ यह सुनकर युधिष्ठिर के दिल में जो दु:ख पैदा हुआ उसका वर्णन करना किसी के वश मे नही है। इसलिए उसे भीतर ही भीतर बहुत सोचकर दबा दिया। भक्ति से भगवान् के चरणयुगल को अपने दिल मे स्थिर कर दिया।

शठन्माराननं तॆळिञ्ञु काणुन्नु
स्फुटङ्ङळाकुन्निल्लरविन्दङ्ङळुं । २१२
दलङ्ङळुं माळ्कि मरङ्ङळुमॆल्लां
फलङ्ङळुं कॊळिञ्ञितल्लो काणुन्नु । २१३
तॆळिञ्ञ तीर्त्थङ्ङळ् कलङ्ङिक्काणुन्नु
विळङ्ङिट्टुं ज्योतिर्ग्गणङ्ङळु मङ्ङि । २१४
ज्वलिक्कुन्नीलाज्याहुतिकॊण्टग्नियुं
ज्वलिक्किलो पॊट्टिप्पॊरिञ्ञिटत्तूट्टु
वलत्तुभागत्तॆ वॆटिञ्ञु काणुन्नु । २१५
पलतुमेवं दुर्न्निमित्तङ्ङळ् कण्टु
वलरिपुसुतन् वरवु काणाञ्ञुं २१६
धरणिमंगलमणिमयदीपं
धरणियॆ वॆटिञ्ञुटन् मऱञ्ञतॆ- २१७
न्नकतारिल् तोन्निवरुन्नितु मम
सकल लोकनायक ! सनातन ! २१८
भगवाने ! परपुरुष ! माधव !
शरणमॆन्नु धर्म्मजन्मनतारिल् २१९
करुति मारुतियॊटु पऱञ्ञप्पोळ्
वरुन्नतु कण्टु धनञ्जयन्तन्ने । २२०
करिञ्ञभाववुं कलर्न्नतुनेरं
करञ्ञवन् चॆन्नु युधिष्ठिरन्तन्टॆ २२१

करती है। बछड़े स्वय दूध नही पीते है और गाये पिला भी न रही है। शठो के मुँह प्रसन्न दीख रहे है और अरविन्द खिल नही रहे है। वृक्षों के पत्ते सब गिर गये है और फल भी गिरे पड़े है। शुद्ध जल के तीर्थ अब गँदले हो गये है और चमकनेवाले ज्योतिर्गण अब हतप्रभ है। आज्याहुति से भी अग्नि नही जल रहा है; अगर जले भी तो बायी ओर आवाज करता हुआ जलता है, दायी ओर बिलकुल खाली पड़ा है।२०९-२१५ इस प्रकार अनेक दुर्निमित्त देखकर, और इन्द्रपुत्र के न आने के कारण भूमिमण्डल के मणिमय दीप ने भूमि को छोड़ दिया और अदृश्य हो गये—ऐसा मुझे भीतर सूझ रहा है। हे सकललोकनायक! सनातन! भगवान्! हे परमपुरुष! हे माधव! तुम ही शरण हो। ऐसा भीतर सोचकर युधिष्ठर ने भीम से कहा; तब धनञ्जय आते हुए दिखाई दिये। शोक का अनुभव करते हुए उस समय वह रोते हुए जाकर युधिष्ठिर के चरणो

नन्नल्ल नी गृहच्छिद्रं तुटङ्ङुन्न-
तॅन्नाल् नशिच्चुपोमिन्नटङ्ङीटु नी । १८
ऍन्नु विभावसु चॉन्नतु केळातॅ
पिन्नॅयुमेऱॅ निर्व्वन्ध तुटङ्ङिनान् । १९
अन्नु शपिच्चितु नी गजमाय् पोक-
यॅन्नु विभावसु सोदरन् तन्नॅयु २०
ज्येष्ठनॅक्कूटॅश्शपिच्चाननुजनु
दुष्टभावालॉरु कूर्म्ममाय् पोक नी । २१
सुप्रतीकन् गजमाय् चमञ्ञीटिना-
नप्पोळ् विभावसु कूर्ममायीटिनान् । २२
अन्योन्यशापवुमेटिट्टिरुवरु-
मिन्नु सरस्सिङ्कलुण्टु किटक्कुन्नु । २३
चॅन्नु कॉत्तिक्कॉण्टु पोन्निनि वैकातॅ
तिन्नालुमङ्ङॉरु देशत्तु कॉण्टुपोय् । २४
वानोर्पुरिपुक्कु पीयुषवु कॉण्टु
मानमोटे वरिकॅन्नान् जनकनुम् । २५
वन्दिच्चतिनु नटन्नान् गरुडनु
मन्देतर चॅन्ननेरत्तु काणायि २६
आमतन्वट्टमॉरु दशयोजन-
याणतिन् पॉक्कमो मून्नल्लो योजन । २७

गृहच्छिद्र[1] प्रारभ कर रहे हो। इससे सत्यानाश हो जायगा। तुम दव जाओ। विभावसु का कहना न मानकर अनुज ने और निर्वन्ध[2] करना शुरू किया। १३-१९ तव विभावसु ने अपने भाई को यो शाप दिया—'तुम हाथी हो जाओ।' अनुज ने भी ज्येष्ठ को शाप दिया—'तुम अपने दुष्टभाव के कारण कूर्म हो जाओ।' अनुज सुप्रतीक हाथी वन गया और विभावसु कूर्म हो गया। अव दोनो एक दूसरे का शाप लगने से सरोवर मे पडे है। चलो उन दोनो को अपनी चोच से जल्दी उठा लाओ और कही एकान्त मे लेजाकर खा लो। (उस के वाद) देवो की पुरी मे जाकर अमृत लेकर सम्मान के साथ चले आओ।" पिता ने ऐसा कहा। गरुड पिता की वन्दना करके चला गया। वेग से जाने पर एक कूर्म दिखाई दिया जो दस योजन चौड़ा था, और तीन योजन

१ घर मे कलह। २ हठ।

विरहं कॊण्टु गल्गदवर्णङ्ङळाल्
पॆरिकॆब्बाष्पवु तुरुतुरॆ वार्त्तु
नयनवुं तुटच्चमितरोमाञ्च । २३२
जयजय कृष्ण ! जयजय कृष्ण !
जयजय राम ! जगदभिराम ! २३३
जयजय देव ! करुणावारिधे !
जयजय देव ! वसुदेवात्मज ! २३४
जय मुकुन्द ! देवकीसूनो ! कृष्ण !
जयजय ! नन्दतनय ! गोविन्द ! २३५
जय यशोदानन्दन ! जनार्द्दन !
जय जगल्सृष्टिस्थितिलयकर ! २३६
जय विरिञ्चमाधव ! शिवमय !
जय धृतगुणत्रयमूर्त्ते ! जय ! २३७
जयजय जगल्पवित्र ! सत्कीर्त्ते !
जयजय चित्रचरित्र ! केशव ! २३८
जयजय वृष्णिप्रवर ! कंसारे !
जयजय बाणकरमदहर ! २३९
जयजय जनिमृतिभवहर !
जय विदर्भजापते ! जयजय ! २४०
जयजय धराधर ! मुरहर !
जयजय ! धरापरा ! परापरा ! २४१

विरह के कारण गद्गद स्वर से बहुत आँसू लगातार गिराये और अमित रोमाञ्च के साथ आखे पोंछी । हे कृष्ण ! तुम्हारी जय हो ! हे कृष्ण तुम्हारी जय हो ! हे राम ! तुम्हारी जय हो ! हे जगदभिराम ! हे देव ! हे करुणासागर ! तुम्हारी जय हो ! हे देव ! हे वसुदेवपुत्र ! तुम्हारी जय हो ! हे मुकुन्द ! देवकीपुत्र ! कृष्ण ! तुम्हारी जय हो ! हे नन्दतनय ! हे गोविन्द ! तुम्हारी जय हो ! २२९-२३५ हे यशोदा-नन्दन ! जनार्दन ! तुम्हारी जय हो ! हे जगत् की सृष्टि, स्थिति और लय करनेवाले ! जय हो ! हे विरिञ्चि माधव ! शिवमय ! तुम्हारी जय हो ! हे गुणत्रय धारण करनेवाली मूर्ति से युक्त ! तुम्हारी जय हो ! हे जगत् के पवित्र ! हे सत्कीर्ति ! तुम्हारी जय हो ! हे चित्रचरित्रवाले ! केशव ! तुम्हारी जय हो ! हे वृष्णिप्रवर ! हे कसारि ! जय हो ! हे

जयजय धराधर ! जयजय
जय धराधर ! कळेबर ! जय २४२
जयजय धरारे ! हर ! जय !
जय सुरासुरनमस्कृत ! जय ! २४३
जय चराचरगुरो ! जयजय
जय पराशरसुतनमस्कृत ! २४४
जयजय परापर ! सदाधार !
जयजय पर परम ! पाहि मां । २४५
जय परमात्मन् ! परब्रह्मात्मक !
जय नारायण ! नरकारे ! जय २४६
जयजय भक्तजनपरायण !
जयजय नाथ ! शरणं दैवमे ! २४७
शमदमयमनियमचेतसा
शमननन्दनन् कुरुकुलवरन् २४८
नृपतियाय्पुनरथ परीक्षित्ति-
न्नभिषेकंचेय्तु सचिवन्मारोटु । २४९
पटहशंखादि विविधवाद्यङ्ङळ्
पुटपुळङ्ङवे सहजन्मारुमाय् २५०
धरणिदेवतापसवरर्क्कॊटं
पॊरुळु दानंचेय्तभिमतवस्तु २५१

वाण के कर का मद का नाश करनेवाले ! जय हो ! हे जन्म, मरण और भव का नाशक ! हे वैदर्भी के पति ! तुम्हारी जय हो ! हे धराधर ! मुरहर ! हे धरापर ! हे परापर ! हे धराधर ! तुम्हारी जय हो ! हे धराधर ! कलेवर ! तुम्हारी जय हो ! २३६-२४२ हे धरारे हर ! तुम्हारी जय हो ! हे सुर और असुरो के नमस्कृत ! तुम्हारी जय हो ! हे चरों और अचरो के गुरु ! तुम्हारी जय हो ! हे पराशर पुत्र को नमस्कृत ! तुम्हारी जय हो ! हे परापर, सदाधार ! हे पर ! परम ! मेरी रक्षा करो ! हे परमात्मन् ! हे परब्रह्मात्मक ! हे नारायण ! नरकारे ! तुम्हारी जय हो ! हे भक्तजन के एकमात्र आश्रय ! हे नाथ ! हे ईश्वर ! तुम्हारी जय हो ! कुरुकुलवर युधिष्ठिर, शम, दम, यम और नियम का ध्यान करते हुए परीक्षित् को राजा के रूप में सचिवो के साथ अभिषेक करके, २४३-२४९ पटह, शख आदि विविध वाद्यो के घोप के

सचिवभृत्यादि जनत्तिनु नल्कि
स्वजनतृप्तियुं वरुत्ति मेल्क्कुमेल् २५२
निवृत्तनायाशु पुरप्पेट्टुवानाय्
सुवृत्तवान् कल्पिच्चितु मुहूर्त्तवुं । २५३
विचित्रं पाण्डवचरित्रं मेलेटं
वचिप्पतिन्नेटं पणियुण्टोर्त्तोळं । २५४
पवित्रमेत्रयुमतु केळ्क्केण्टुकिल्
सुविस्तरं चोल्वानरुतु निङ्ङळ्क्कु २५५
चुरुक्किच्चोल्लां वेण्टुकिल् आनेन्नेल्ला-
मुरत्ताळ् पैङ्किळिमकळुमक्कालं । २५६

॥ मौसल समाप्तम् ॥

उठते, अपने भाइयो के साथ ब्राह्मणो और तापसो को धन का दान करके, सचिव, भृत्य आदि जन को, उनके इष्ट वस्तुओ का दान करके अपने स्वजन की उत्तरोत्तर तृप्ति करके सपूर्णतया निवृत्त होकर निकल जाने के लिए उस सदाचारवाले ने मुहूर्त निश्चित किया। पाण्डवो का चरित्र विचित्र है। आगे की कथा जितनी जानती हूँ उतनी कहने मे श्रम वहुत होगा। वह तो अत्यन्त पवित्र कथा है। अगर सुनना है तो विस्तर से सुनाना तो असभव है। आप लोगो को सक्षेप मे वतला दूंगी, अगर सुनना है। इस प्रकार शुकी ने उस समय निवेदन किया। २५०-२५६

॥ मौसलपर्व समाप्त ॥

महाप्रस्थानं

बाले ! किळिमकळे ! कथाशेषवु
काले पऽक नी सानन्दमोमले ! १
पालाब्धिवर्ण्णन् परमन् परापरन्
पालाब्धिमानिनीवल्लभनीश्वरन् २
कालस्वरूपन् करुणाकरन् परन्
नीलांबुदनिरमुळ्ळ निरञ्जनन् ३
नीलांबुजायतलोचनन् माधवन्
भूलोकवुं परिपालनं चेय्तुतन्- ४
कालं कळिच्चु वैकुण्ठमकंपुक्क-
कालं युधिष्ठिरनादिकळुं कृष्ण- ५
लीलकळ् चिन्तिच्चु सर्व्वमुपेक्षिच्चु
वालनु राज्याभिषेकवु चेय्तोरु- ६
शेषमनुष्ठिच्चतेन्तेन्नु चोल्क नी
दोषमशेषमकलुवान् मामकं। ७
शेषं कथ पऽञ्ञीटुवनेन्क्किल् ञान्।
एपणापाशङ्ङळ् छेदिच्चु धर्म्मजन् ८
विष्णुकुलाधिपन् जिष्णुजसारथि
जिष्णुमुखामरसेवितन् केशवन् ९
कृष्णन् तिरुवटियु वलभद्ररुं
वृष्णिकळु कलिकालमटुत्तप्पोळ् १०

महाप्रस्थान पर्व

हे वाले ! हे शुकि ! कथा का शेष यथासमय सानन्द सुनाओ ! क्षीरसागर के समान वर्णवाले परम, परापर, क्षीरसागर की पुत्री के पति, ईश्वर, कालस्वरूप, करुणाकर, पर, नीलमेघ के वर्णवाले, निरञ्जन् नील-कमल के समान आयत लोचनवाले माधव के भूलोक का परिपालन करके, अपना समय समाप्त होने पर वैकुण्ठ प्राप्त करने के वाद, युधिष्ठिर आदिको ने कृष्ण की लीलाओ का स्मरण करते हुए, सर्वत्याग करके एक वाल का राज्याभिपेक करने के वाद क्या क्या किया, यह वतलाओ ताकि मेरे सब दोप दूर हो जावे। १-७ (तव शुकी ने कहा—) अच्छा तो कथा का शेष कहूँगी। विष्णुकुलाधिप, अर्जुन के सारथि, इन्द्र आदि देवो के सेवित

विष्णुलोकं गमिच्चारेन्नु केळ्क्कयाल्
विष्णुभक्तन्मारिलग्रेसरन् नृपन् ११
उष्णेतरांशुकुलसन्ततियाय
विष्णुरातन्नभिषेकवुं चेय्तेट् १२
उष्णनिश्वासं कलर्न्नु निजहृदि
कृष्णनेद्धयानिच्चुरप्पिच्चु भीमनुं १३
जिष्णुवुं सोदरन्मार् मट्टिरुवरुं
कृष्णयुं कूटि निरूपिच्चु कल्पिच्चु १४
नन्नल्ल भूतलवास नमुक्किनि
वन्नु कलियुगमेन्नतु निर्णयं । १५
राजावु धर्म्मजनेव परञ्ञुटन्
प्राजापत्याख्ययामिष्टियुं चेय्तुटन् १६
क्षिप्रमात्मारोपिताग्नियायेकदा
सप्रकाश पुरप्पेट्टितु शान्तराय् । १७
निश्चलात्मा महाप्रस्थानमाश्रित्य
सच्चिल्परब्रह्ममूर्त्ति सनातन- १८
नच्युतनव्ययनव्यक्तनद्वयन्
निश्चयिच्चाक्कुमरिञ्ञुकूटातवन् १९
नारायणन् नरमूर्त्तिमानीश्वरन्
नारदसेवितन् नानाजगन्मयन् २०

केशव, भगवान् कृष्ण और वलभद्र और सभी वृष्णिगण कलिकाल के आने पर विष्णुलोक चले गये—ऐसा सुनकर इच्छा के पाशो को तोडकर, विष्णुभक्तों मे अग्रसर राजा युधिष्ठिर ने, चन्द्रवंश की सन्तान विष्णुरात को अभिषिक्त करके दीर्घ और गरम निश्वास छोडते हुए अपने दिल मे कृष्ण को ध्यान से स्थिर करके भीम, अर्जुन और अन्य दो भाइयों और द्रौपदी के साथ विचार करके निश्चय किया कि अव भूतल पर निवास करना ठीक नही है, इसमें सन्देह नहीं है कि कलियुग आगया है। ८-१५ राजा युधिष्ठिर ने इस प्रकार कहा। तदनन्तर उन्होने प्राजापत्य इष्टि की और कदाचित् अपने ही ऊपर आरोपित अग्नि के साथ, शान्त होकर सप्रकाश निकल पड़े। उन्होने महाप्रस्थान के उपलक्ष मे सत्-चित् परब्रह्ममूर्ति, सनातन, अच्युत, अव्यक्त, अद्वय, किसी को भी निश्चित रूप से अज्ञात, नारायण, नरमूर्तिवाले, ईश्वर, नारद के सेवित, नानाजग[illegible] नीरजविग्रह, नीरजलोचन, नीरजसभव का क

नीरजविग्रहन् नीरजलोचनन्
नीरजसंभवकारणन् कोमळन् २१
नित्यन् निरञ्जनन् निर्म्मलन् निर्म्ममन्
नित्यविरक्तन् प्रकृतिपरात्मकन् २२
सत्वादिहीनन् सनकादिसेवितन्
तत्वस्वरूपन् सकललोकेश्वरन् २३
निष्कळन् निश्चलन् निस्पृहन् निष्क्रियन्
निर्ग्गुणनेकननेकजीवात्मकन् २४
भुक्तिमुक्तिप्रदन् भक्तप्रियन् परन्
शक्तियुक्तन् परमात्मा शिवात्मकन् २५
वेदार्थभिन्नमूर्त्यात्मकन् शाश्वतन्
वेदस्वरूपन् विरिञ्चादिवन्दितन् २६
वेदान्तवेद्यननन्तननामयन्
वेदज्ञनुत्तमनाद्यननाद्यन- २७
त्यानन्दरूपनमृतात्मकन् विभु
चेतनरूपन् जनार्द्दनन् वैकुण्ठ- २८
निन्दीवरेक्षणनिन्दिरावल्लभन्
इन्दुबिंबाननिन्दुकुलोत्भव- २९
निन्दुकलाचूडवन्द्यन् मुकुन्दना-
नन्दप्रदन् कैटभान्तकन् गोविन्दन् ३०
नन्दजन् देवकीनन्दनन् यादवन्
वासुदेवन् देवदेवन् मुरान्तकन् ३१

निर्मल, निर्मम, नित्यविरक्त, प्राकृतिपरात्मक, सत्त्वादिगुणरहित, सनक आदि के सेवित, तत्त्वस्वरूप, सकललोकेश, ईश्वर, १६-२३ निष्कल, निश्चल, निस्पृह, निक्रिय, निर्गुण, एक, एकजीवात्मक, भुक्ति और मुक्ति देनेवाले, भक्तप्रिय, पर, शक्तियुक्त, परमात्मा, शिवात्मक, वेदार्थभिन्न मूर्तिस्वरूप, शाश्वत, वेदस्वरूप, विरिञ्च आदि के वन्दित, वेदान्तवेद्य, अनन्त, अनामय, वेदज्ञ, अनुत्तम, आद्य, अनाद्य, अत्यानन्दरूप, अमृतात्मक, विभु, चेतनरूप, जनार्दन, वैकुण्ठ, इन्दीवरलोचन, इन्दिरावल्लभ, चन्द्रमुख, चन्द्रवंश के [illegible]त्पन्न, इन्दुकलाचूड (शिव) के वन्द्य, मुकुन्द, आनन्दप्रद, कैटभनाशक, [illegible]न्द, नन्दपुत्र, देवकीपुत्र, यादव, वासुदेव, देवदेव, मुरारि, २४-३१ [illegible] अच्छी तरह से ध्यान किया और धीर युधिष्ठिर निकल पड़े।

नारायणनृतन्ने नन्नाय् निरूपिच्चु
धीरनां धर्म्मजन् निर्ग्गमिच्चीटिनान् । ३२
सोदरन्मारुं द्रुपदतनूजयुं
सादरं कूटॆप्पिऱके नटकॊण्टार् । ३३
उत्तमन्माराय धर्म्मपुत्रादिक-
ळुत्तरयां दिक्कु नोक्कि नटक्कुन्पोळ् ३४
कृष्णवर्त्मावुटन् प्रत्यक्षरूपेण
जिष्णुतन्नोटरुळ्चॆय्तु कनिवोटे— ३५
पाण्डुतनूज ! महावीर ! फल्गुन !
गाण्डीवमाय धनूरत्नमिप्पोळे ३६
यादसांनायकन् कैयिल् कॊटुक्क नी
सादरं पोय्क्कोळ्विनाकुलं कूटाते । ३७
ऎन्नरुळ् चॆय्तोरु वह्निदेवन्पदं
नन्नाय् वणङ्ङि वळङ्ङिच्चु यात्रयु- ३८
मत्भुतमाकिय गाण्डीवचापवु-
मप्पतिकैयिल् कॊटुत्तु नटकॊण्टार् । ३९

यमधर्म्मराजावु श्वावायि अनुगमिच्चु धर्म्मपुत्रनॆ परीक्षिक्कुन्नतु

धर्म्मराजात्मजन् तन्नॆप्परीक्षिप्पान्
धर्म्मराजन्तानुमाशु पुऱप्पॆट्टु । १

उनके भाई और द्रौपदी सादर उनके पीछे-पीछे चले। उत्तम युधिष्ठिर आदि जब उत्तर दिशा की ओर जा रहे थे तब अग्नि भगवान् प्रत्यक्ष होकर अर्जुन से प्रेम से बोले। हे पाण्डुपुत्र ! महावीर ! फल्गुन ! अपने गाण्डीव धनुप को यादसापति (वरुण) के हाथ सौंप दो, तदनन्तर आराम से आगे बढ़ो। इस प्रकार कहनेवाले वह्निदेव के चरणों की वन्दना करके यात्रा में आगे बढ़े और अद्भुत गाण्डीव धनुप को (वरुण) के हाथ सौंपकर चले। ३२-३९

धर्मराज यम का कुत्ते के रूप में अनुसरण करते हुए युधिष्ठिर की परीक्षा

धर्मराज (युधिष्ठिर) की परीक्षा करने के लिए धर्मराज [illegible] रूप तत्काल ही तैयार हुए। एक कुत्ता बनकर और बड़े क्षीण [illegible]

श्वावायनुगमनचेय्तितुकूटे
भाववुमेटं क्षयिच्चतिदीननाय् २
सेवयुं भाविच्चगतिमानाय् श्राद्ध-
देवनु पिन्पे नटकोण्टितक्कालं । ३
अङ्ङने पोकुन्न नेरत्तु कृष्णयु-
मेङ्ङनेयेन्नरिञ्ञील वीणीटिनाळ् । ४
अप्पोळ् वृकोदरन् धर्म्मजन्तन्नोटो-
रत्भुतं पूण्टु चोदिच्चरुळीटिनान्— ५
द्रौपदि वीणतिनेन्तोरु कारणं
भूपते ! चोल्केन्नतुकेट्टु धर्म्मजन् ६
पिन्निल् नोक्काते परञ्ञानुटनिवळ्-
तन्नुळ्ळिलुळ्ळोरु दोषमतु केळ्क्क । ७
वल्लभन्मारैवरुळ्ळवरेवरुं
तुल्यमल्लेतानुमुण्टु भेदं तदा । ८
पक्षपात तनिक्कर्ज्जुनन्तङ्कलु-
ण्टुळ्क्कान्पिलेन्नतिनालिङ्ङवळ् वीणु । ९
पिन्नेस्सहदेवनुं पतिच्चीटिनान् ।
चोन्नानतिन्मूलवु धर्म्मनन्दनन् । १०
वातात्मजन् परञ्ञाशु सहदेव-
पातमरिञ्ञतुनेरत्तु धर्म्मजन् । ११
शास्त्रङ्ङळ्कोण्टेन्नेत्ताळ्त्ति निन्नीटुवान्
धान्नियिलारुमिल्लेन्नोरहंभावं १२

अतिदीन होकर उनका अनुगमन किया। श्राद्धदेव (यम) सेवाभाव दिखाते हुए और गतिहीन के रूप मे पीछे-पीछे चला। इस प्रकार चलते समय न मालूम कैसे, द्रौपदी तो गिर पड़ी। तव भीम ने आश्चर्यचकित होकर, युधिष्ठिर से पूँछा। द्रौपदी के गिर पड़ने का क्या कारण है? हे राजन्! वतलाइए। यह सुनकर युधिष्ठिर ने विना पीछे देखे कहा—इसके भीतर जो दोप है उसे सुनलो। १-७ उसके पाँच पति हैं पर वे उसके लिए तुल्य नही है, उनमें भेद है। उसके दिल मे अर्जुन के प्रति पक्षपात है। यही कारण है कि वह गिर पड़ी। तदनन्तर सहदेव [illegible] पड़ा। उसका कारण भी युधिष्ठिर ने कहा, जव भीमसेन के कहने [illegible]युधिष्ठिर ने उसका पात जान लिया। "शास्त्रो के द्वारा मुझे जीतने

उळ्ळलुण्टाकयाल् वीणु सहदेव-
नुळ्ळवण्णं नी धरिक्क वातात्मज ! १३
पिन्नेयुं मेल्ले नटन्नारतुनेरं
पिन्नाले पोकुं नकुलन् पतिच्चितु । १४
चोन्नानतुं नृपन्तन्नोटु भीमनु
मन्नवनुमतिन् कारणं चोल्लिनान् । १५
आरुमे रूपलावण्यमोक्कुं विधौ
पारिलेन्नोटु नेरायवरिल्लेन्नु १६
मान नकुलन्नु पारमुण्टेप्पोळु
मानसतारिलतुकोण्टवन् वीणु । १७
वृत्रारिपुत्रनुं वीणानतुमथ
पृथ्वीपतियोटु चोन्नान् वृकोदरन् । १८
कालात्मजन् जिष्णु वीणतु केट्टोरु-
कालं मटिञ्ञु नोक्कीलेन्तोरत्भुतम् ! १९
सोदरन् वीणतिन् कारणमेन्तेन्नु
चोदिच्चितग्रजन्तन्नोटु भीमनुं । २०
उत्तमनाकिय धर्म्मतनूजनु-
मुत्तरं भीमनोटाशु चोल्लीटिनान्— २१
अस्त्रङ्ङळ् कोण्टेन्नोटोत्तवरिल्लेन्नु
वृत्रारिपुत्रनुमुण्टोरहंभावं । २२

वाला इस पृथिवी मे कोई नही है ।" ऐसा अहभाव उसके दिल मे होने के कारण सहदेव गिरा, जान लो हे भीमसेन ! फिर वे धीरे-धीरे आगे चले । पीछे चलनेवाला नकुल गिरा । भीम ने इसे राजा को वतला दिया और राजा ने उसका भी कारण वतलाया । ८-१५ "रूप और लावण्य की दृष्टि से इस पृथ्वी मे मेरे समान कोई नही है" ऐसा अभिमान नकुल को अपने मन मे रहा है । इसलिए वह गिरा । फिर वृत्रारिपुत्र (अर्जुन) गिरा और भीम ने उसे भी राजा को वतला दिया । अर्जुन का गिरना सुनकर भी पीछे घूमकर न देखा, कैसी अद्भुत वात है ! अपने भाई के गिरने का कारण भीम ने वड़े भाई से पूँछा । उत्तम युधिष्ठिर ने भीम को इस प्रकार उत्तर दिया । "अस्त्रप्रयोग मे मेरे तुल्य कोई नही है" ऐसा अहभाव अर्जुन के दिल मे रहा । १६-२२ यही कारण है कि वह गिरकर मरा । तुम्हारा पात भी अवश्य होनेवाला है । "मै ही [illegible] रूप शाली हूँ" ऐसा विचार तुम्हारे दिल मे घुसा पडा है । इसलिए [illegible]

अन्नतु कॉण्टवन् वीणु मरिच्चितु
निन्नुटे पातवुमुण्टिनि निर्ण्णयं । २३
शक्तनाकुन्नितु आनेन्नोरु निन-
वुळ्ळत्तारिलुण्टु निनक्कुं किटक्कुन्नु । २४
नीयुमतुकॉण्टु वीणुमरिच्चुपों
वायुसुत ! परितापमुण्टाकोला । २५
उण्टु जनिच्चाल् मरणमेल्लावनु-
मुण्टाकवेण्ट विषादमतिन्नेतुं । २६
इत्थं परञ्ञु पिऽकिल् नोक्कीटाते
पृथ्वीपति नटन्नीटिनान् पिन्नेयु । २७
उत्तरयांदिक्कु नोक्कि नटक्कुन्पो-
ळुत्तमनां धर्म्मपुत्ररुटे पिन्पे २८
पोकुन्न भीमनुं वीणुमरिच्चितु
पोकुन्नितु वटक्कोट्टवन् पिन्नेयु । २९
सारमेयं पिरियाते वळियें कू-
टारूढतापं नटन्नानतुनेरं । ३०
आरुमोरु गतियिल्लेन्नोरु भावं
नेरे मुखत्तु नोक्किक्कॉण्टु भाविच्चु । ३१
कूटे नटक्कुन्नतु कण्टु धर्म्मज-
नूटे वळर्न्नितु कारुण्यमेटवुं । ३२
अंबरंतन्निल् निन्नन्नेरमन्तिके
पॉन्मयमाय विमानवुं ताणितु ३३

गिरकर मरोगे । हे वायुपुत्र ! इसलिए दु:ख मत करो । सभी जन्म लेनेवालो को मरना है, इसलिए कुछ विपाद मत करो । इस प्रकार कहते हुए और विना पीछे देखे, राजा फिर आगे चले । उत्तर दिशा की ओर चलनेवाले युधिष्ठिर के पीछे जानेवाला भीम गिरकर मरा । पर वह तो उत्तर ही को चलता रहा । कुत्ता तो साथ न छोडता हुआ दु:खित होकर पीछे चलता रहा । २३-३० 'मेरा कोई शरण नही है', ऐसा भाव औरो का मुँह देखता हुआ, वह प्रगट करता था । इस प्रकार साथ चलनेवाले को देखकर युधिष्ठिर के भीतर करुणा वढी । उस समय आकाश से एक [illegible]व्य विमान उतरा । और एक निर्मल देवदूत भी उतरा, इस उद्देश्य [illegible]युधिष्ठिर को वहाँ ले जावे । आगे के वृत्तान्त सुनाने मे पन्नगनायक

द्वादश योजन नीळमुण्टानयु
मेदुरमायिट पातियुमुण्टल्लो । २८
रण्टुमॅट्टुत्तु पऱन्नॉरुदिक्किनु
कुण्ठतयॅन्निये चॅन्नॉरुनेरत्तु २९
कण्टानमरमरङ्ङळ् निल्कुन्नतु-
मुण्टतिल् नल्लॊरु वटमरमुन्नतम् । ३०
विस्तारमुण्टु शतयोजनवळि
पत्रप्रवाळशाखाढ्यं मनोहरम् । ३१
वृक्षप्रवरशाखान्तरे वॅच्चितु
भक्षिक्कामॅन्नु निनच्चु तॅळिवॉटे ३२
पक्षपुटङ्ङळ् कुलुक्किक्कुत कॉण्टु
पक्षीश्वरन् चॅन्निरुन्नॉरु नेरत्तु ३३
कोटरपाटनमुण्टायतुमूल-
माटल्तेटीटिनानुण्टतिन्मेल् चिल ३४
तापसेन्द्रन्मारङ्ङपतिनायिरं
तापमवर्क्कु वरुमतुवीळुकिल् ३५
कोपवुं मा प्रति वर्द्धिक्कुमन्नेरं
शापवुमेटीटुमॅन्नु भयप्पॅट्टान् । ३६
पत्रिप्रवरनुपाय निरूपिच्चु
कॉत्तियॅटुत्तानटर्न्नॅरु कॉम्पतु- ३७

ऊँचा था। हाथी तो बारह योजन लम्बा था और छ योजन मोटा था। २०-२८ गरुड दोनो को लेकर उडा। जब आराम से एक स्थान पर पहुचा तव वहा दिव्य वृक्ष दिखाई दिये और उनमे एक अत्युन्नत वटवृक्ष भी था। वह सौ योजन चौडा था, पत्र, प्रवाल और शाखाओ से भरा मनोहर था। 'वाद मे खालूँगा' यह सोचकर दोनो को (हाथी और कूर्म को) गरुड ने शाखाओं के वीच नि शक रख दिया। फिर अपने पक्षो को हिलाकर आराम से वैठ गया। इसके कारण कोटर सहित एक शाखा टूट गयी। वह दु खित हुआ, क्योकि उसमे साठ हजार तापसेन्द्र रहते थे। 'अगर शाखा गिरती तो उन सवको कष्ट होता और मेरे प्रति उनका कोप वढता और मै उनके शाप का पात्र वन जाता' ऐसा सोच-कर डर गया। २९-३६ यह सोचकर कि इससे बचने का क्या उपाय हो, उसने शाखा को अपनी चोच मे दवा लिया। तदनन्तर उसे लेकर

देवराजाज्ञयाले वन्नितु आनुमिप्पोळ्
देवलोकत्तिङ्कलेक्काशु पोरिकवेण । ५
वन्नुटन् विमानमेऽरीटुक वैकीटातें-
येन्नु देवेन्द्रदूतन् चोन्नतु केट्टनेरं ६
ऍन्नोटुकूटॅप्पोन्न सोदरन्मारु वीणार्
तन्वङ्गियाय मम भार्ययुं वीणाळल्लो । ७
पिन्नेयुं पिरियातॅ पोन्नितॅन्नोटुकूटॅ-
त्तन्नेयी श्वावुमिवन्तन्नेयुमुपेक्षिच्चु ८
विण्णवर्पुरिक्किनिक्कॅन्नुमे पोन्नुकूटा
पिन्नेयी श्वाविनॅन्तॊराश्रयमॅन्नु चोल् नी । ९
सर्वतोरक्षेच्छुनश्वपचानपि मुहु-
रुर्व्वीपालकनायालाश्रितनॅन्नुण्टल्लो । १०
निश्चयमरक्षिता ब्रह्महा भवेदिह
रक्षिता हयमेधकर्त्तावॅन्नुण्टल्लो केळ् । ११
आश्रितपरित्यागमॅन्नु आन् चेय्कयिल्ल
शाश्वतमाय धर्म्ममॅङ्ङनॅ वेटियुन्नु ? १२
ऍन्नेयुं कोण्टु विण्णिल् पोकणमॅन्नाकिलो
मुन्नमी श्वावुतन्नेयङ्ङुटन् करेटणं । १३
ऍन्नतु केट्टु चेवि पोत्तिनान् देवदूत-
नेन्ने कष्टमे ! भवानॅन्तितु तोन्नीटुवान् ? १४

भक्तवात्सल्य को सुनो। भक्तो मे उत्तम युधिष्ठिर के मुखकमल को देखकर देवदूत ने कहा—मै देवराजा की आज्ञा से आया हूँ। आपको देवलोक जाना है। जल्दी आकर अविलम्ब विमान पर बैठिये। देवेन्द्र के दूत की यह बात सुनकर (युधिष्ठिर ने कहा—) मेरे साथ जो मेरे भाई चले थे वे गिरे और मेरी तन्वङ्गी पत्नी भी गिरी। १-७ इस पर भी अलग न होकर मेरे साथ ही यह कुत्ता चला आया। इसकी उपेक्षा करके मै देवलोक कभी न जाऊँगा। अगर जाऊँ तो फिर इस कुत्ते की आश्रय क्या होगा। राजा होकर सबकी रक्षा करना चाहिए, कुत्ते की भी, उसे खानेवाले की भी। फिर यह तो मेरा आश्रित है। जो रक्षा न करे [illegible] अवश्य ही ब्रह्महत्या के समान होगा और जो रक्षा करता है वह [illegible] समान, यही प्रसिद्ध है। आश्रित का परित्याग मै कभी [illegible]वत धर्म कैसे टाला जा सकता है? अगर मुझको लेकर [illegible] है तो पहले इस कुत्ते को विमान पर बैठाइए। यह

निर्म्मलनाकिय देवदूतनुतानुं
धर्म्मतनयनेक्कॊण्टङ्ङुपोवानाय् । ३४
पिन्नेयुण्टाय विशेषङ्ङळ् चॊल्लुवान्
पन्नगनायकनुं पणियुण्टेन्नु ३५
नन्नाय् परञ्ञटङ्ङीटिनान् धर्म्मजन्
तन्नुटॆ माहात्म्यमोर्त्तोर्त्तु पिन्नेयुं ३६
नल्ल कथयिनि मेलेटं निङ्ङळ्क्कु
चॊल्लुवनेन्नु किळिमकळुं चॊन्नाळ् । ३७

॥ महाप्रस्थानं समाप्तं ॥

(शेष) को भी श्रम होगा। ऐसा कहकर वह (वैशम्पायन) चुप हुआ। "पर युधिष्ठिर के माहात्म्य का स्मरण करते हुए आगे की अच्छी कथा भी सुनाऊँगी", ऐसा शुकी ने कहा। ३१-३७

॥ महाप्रस्थानपर्व समाप्त ॥

स्वर्गारोहणं

चॊल्लुचॊल्लिनियु नी नल्ल सल्क्कथयेल्लां
कल्याण वरुवानायेन्नोटु किळिप्पॆण्णे ! १
नल्ल पैन्तेनु पालु पळवुं शर्क्करयुं
वॆल्लवुं वेऱॆ पञ्चसारयु तरुवन् ञान् । २
चॊल्लिनाळतु केट्टु बालप्पैङ्किळिमकळ्
मल्लारियुटॆ भक्तवात्सल्यं केळ्प्पिन् निङ्ङळ् । ३
भक्तरायुळ्ळवरिलुत्तमन् धर्म्मपुत्रन्-
वक्त्रपङ्कजं पार्त्तु चॊल्लिनान् देवदूतन्— ४

स्वर्गारोहण पर्व

हे शुकि! और अच्छी-अच्छी कथा सुनाओ ताकि हमारा कल्याण हो! अच्छा शहद दूध, केला और शक्कर गुड और चीनी अलग मैं [illegible] दूँगा। यह सुनकर शुककन्या ने कहा—अच्छा तो तुम लोग [illegible]

बन्धमट्टीलेन्नते केवलमेनिक्कुळ्ळु
सन्धिक्कुमिनियोरुकालत्तेन्नते वेण्टु । २५
स्वधर्म्ममुपेक्षिच्चिट्टुळ्ळोरु भोगमोन्नु
सुधर्म्मावासंपोलुमिनिक्कु वेण्टयल्लो । २६
देवदूतनु चोन्नानन्नेरमिनि श्राद्ध-
देवनन्दन ! पुनरोन्नरियेणं भवान् । २७
ममत्व कोण्टु बन्धं वेर्पिट्टुकूटायिन्नु
समत्वं कोण्टु तन्ने मोक्षवु वन्नीटुन्नु । २८
गांगेयन् वेदव्यासन् मार्क्कण्डेयनु पिन्ने
शार्ङ्गपाणियुं बृहदश्वनुं मैत्रेयनुं २९
नारदन् सनत्कुमाराख्यनुं धौम्यन्तानु-
मोरोरोतरं मट्टुमित्यादि दिव्यजनं ३०
निनक्कु दिव्यज्ञानमुपेदशिच्चारतु ।
निनच्चालिनिक्केट्टमत्भुतमुण्टाकुन्नु ३१
इनिक्कुमवरुपदेशिच्चतोर्त्तु तन्ने ।
मनक्कान्पिनु चेरुतिळक्कमिल्लायिन्नु ३२
पोयालु ज्ञानिश्वावुकूटाते पोरिकयि-
ल्लायतविलोचननाकुमेन् कृष्णनाणे ३३
धर्म्मनन्दननुटे निश्चलवाक्कु केट्टु
धर्म्मराजनुमप्पोळ् प्रत्यक्षनायनल्लो । ३४

करूँगा, इसमे कोई रियायत न होगी। आपको स्वीकार न हो तो आप जाये। मेरा बन्धन तो अभी समाप्त नही हुआ, इतना ही तो है ? किसी दिन वह भी होजायगा, वस, ठीक है। अपने धर्म की उपेक्षा करके होनेवाला कोई भी भोग सुधर्मानिवास तक मुझे नही चाहिये। तव देवदूत ने कहा—हे श्राद्धदेव (यम) के पुत्र ! एक वात और जो तुमको मालूम होना चाहिए। ममत्व के कारण ही तो वन्धन अलग नही होता। समत्व के कारण ही मोक्ष प्राप्त होता है। २२-२८ गागेय (भीष्म), वेदव्यास, ...ण्डेय शार्ङ्गपाणि, बृहदश्व, मैत्रेय, नारद, सनत्कुमार, धौम्य, और ...के अन्य दिव्यजन ने तुमको दिव्यज्ञान का उपदेश दिया है। ... ...गे बहुत आश्चर्य होता है। (यह सुनकर युधिष्ठिर बोले—) ...रण करके ही मेरे मन मे भी तनिक भी विचलन नही ...ले जाइये। मै इस कुत्ते के विना न आऊँगा। यह ...कृष्ण ही है। धर्मपुत्र की यह अटल बात सुनकर

धर्म्माधर्म्मङ्ङळरियुन्नवरारुळ्ळतु
धर्म्मनन्दन ! निन्नोटोत्तिह विश्वत्तिङ्कल् ? १५
कुत्सित जन्तुक्कळिल्वच्चतिनिकृष्टमाय्
सत्समवायनिन्द्यमायती श्वावल्लयो ? १६
कण्टाल् कण् कळुकेण तोट्टतुं कळयेण
दृष्टमायतु पिन्नेरशुद्धमल्लेन्नु नून । १७
दुष्टजन्तुक्कळिल्वच्चेवयुं निकृष्टमाय्
कष्टमायुळ्ळती श्वावेन्नतुमरियेण । १८
स्वर्लोकवासमोरुकालवुमोन्निनालु-
मिल्लल्लो खाविन्नतु नीयरिक्किरिक्कुन्नु । १९
पिन्नेयी सहोदरर् दारसगादिकळुं
सन्नमाय् सर्वविपयङ्ङळुमुपेक्षिच्चु । २०
मुक्तनाय् विशुद्धात्मावाय नीयेन्तीवण्णं
युक्तियुक्तङ्ङळल्लातुळ्ळव चोल्लुन्नतुं । २१
श्वाविङ्कल् निवद्धमां ममत्वमुपेक्षिच्चु
देवयानत्तिन्मेलेरीटुक वैकीटाते । २२
कुन्तीनन्दननतानु चिन्तिच्चु चोल्लीटिना-
नेन्तिनित्तरमेन्नोटिङ्ङने परयुन्नु ? २३
सन्त्यजिच्चीटुकयिल्लाश्रितन्मारेयति-
नन्तरमेतुमिल्ल पोयालुं भवानेङ्किल् । २४

सुनकर देवदूत ने कान वन्द कर लिए (और कहा)—हा ! यह कष्ट की वात आप को क्यो सूझी ? ८-१४ हे धर्मपुत्र ! तुम्हारे समान धर्म और अधर्म को जाननेवाला इस विश्व मे कौन है ? निन्दित जन्तुओ मे अतिनिकृष्ट और सज्जनो का घृणित क्या कुत्ता नही है ? उसे देखकर अपनी ऑख धोना है, उसके छूए को फेक देना चाहिये, उसका देखा तो अशुद्ध हो जाता है। दुष्ट जन्तुओ मे सवसे निकृष्ट और सवसे कष्टवाला तो यह कुत्ता है। कुत्ते के लिए स्वर्गवास किसी भी कारण कभी नही हो सकता है। यह आप जानते ही है। फिर आपके इन भाइयो और पत्नी का नाश हो गया है और सभी विपयो को त्यागकर आप मुक्त और विशुद्धात्मा हो गये है। तो फिर क्यो आप ऐसी वात कर रहे है जो युक्तियुक्त न हो ? १५-२१ इस कुत्ते में लगे ममता [illegible] इस देवयान पर चढिये अविलम्व ही। कुन्तीपु[illegible] दिया—मुझसे क्यो आप इस प्रकार कहते है ? मै[illegible]

माश्वासमुण्टायवन्नु सोदरन्माक्कुमेट-
माश्चर्यं पूण्टु चोन्नारवरुमतुनेर । ४४
निल्क्केणमिविटेयोट्टावोळ ञङ्ङळ्क्कुळ्ळ-
दुःखमोट्टकन्नितु निन्तिरुवटियुटे । ४५
तिरुमेय् तटवि वन्नीटिन काट्टु तट्टि-
प्पोरिकेयुण्टाश्वासमखिलगुणनिधे ! ४६
अन्नतु केट्टु तत्र निन्नितु धर्म्मात्मज-
निन्द्रादिदेवगणमन्नेरमेळुन्नळ्ळि । ४७
धर्म्मजन्तन्ने स्वर्गत्तिन्नाशु कोण्टुपोयार्
चिन्मयनाय कृष्णन्तन्नुटे भक्तनप्पोळ् । ४८
धर्म्मदेवन्टे नियोगत्तालञ्जसा मोदा-
लंबरगंगतन्निल् स्नानवुं चेय्तु नन्नाय् । ४९
दिव्यविग्रहनायि स्वर्गत्ते प्रापिच्चप्पोळ्
सव्यसाच्यादिभ्रातृजनत्तेक्काणायवन्नु । ५०
द्रौपदेयन्मारेयुं द्रौपदियेयुं कण्टु
भूपति कर्ण्णनेयुं कण्टु सन्तोष पूण्टान् । ५१
बन्धुक्कळाय विराटद्रुपदादिकळु
कुन्तीनन्दनन्तन्नेक्कण्टु सन्तोषं पूण्टार् । ५२
धर्म्मजादिकळ् तङ्ङळ्तङ्ङळ्क्कुळ्ळोरु नाना-
कर्म्मङ्ङळुटे फलमोट्टुङ्ङिक्कूटुवोळ । ५३
स्वर्ग्गभोगङ्ङळनुभविच्चु वसिच्चितु
सल्गुणवान्माराय पाण्डवदिकळ् पिन्ने । ५४

स्पर्श करके चलनेवाले वायु से दूर हो गया और हे सभी गुणो के निधि ! हमारा वडा आश्वास हुआ । यह सुनकर युधिष्ठिर वही खडे रहे । तब वहाँ इन्द्र आदि देवगण पधारे और वे युधिष्ठिर को तुरन्त स्वर्ग ले गये । तब चिन्मय कृष्ण के भक्त (युधिष्ठिर) ने, धर्मदेव की आज्ञा से बड़े प्रमोद से जल्दी आकाशगगा मे स्नान किया और दिव्यशरीर के साथ स्वर्ग पहुँचे । वहाँ सव्यसाचि (अर्जुन) आदि भाई दिखाई दिये । ४४-५०
...उसके पुत्रो को और कर्ण को देखकर राजा प्रसन्न हुए । वन्धु आदि, कुन्तीपुत्र (युधिष्ठिर) को देखकर अत्यन्त प्रसन्न ...आदि, अपने-अपने भिन्न कर्मो के फल के समाप्त ...गो का अनुभव करते हुए वही रहे । तदनन्तर

धर्म्मदेवनुमनुग्रहिच्चु तनयने-
द्धर्म्मजन् विमानवुमेरिप्पोय् स्वर्गं पुक्कान् । ३५
प्रीत्या पूर्णैश्वर्यभोगादिकळोटु कूटि-
द्धार्त्तराष्ट्रज्येष्ठनेक्कण्टितु धर्म्मात्मजन् । ३६
ऎत्रयु दुष्टनायोरधर्म्मिष्ठनु पुन-
रित्र सौख्यङ्ङळुण्टायवन्नतु चित्रमत्रे । ३७
मनसि कुतुकमिल्लिविटेवाळ्वानिनि-
यनुजन्मारुळ्ळेटत्तुटने पोकवेण । ३८
इत्तरं धर्म्मपुत्रन् चोन्नतु केट्टवारे
वृत्रारिनियोगत्ताल् दूतनुं वन्नु चोन्नान् । ३९
पोरिकोङ्किलो तव सोदरन्मारुळ्ळेट-
तारूदानन्दमत्रु केट्टवनोटु कूटि । ४०
भ्राताक्कळुळ्ळेटत्तु चेन्नतु नेरमेटं
वेदन पूण्टीटिनान् नरकं कण्ट नेरं । ४१
यातनादुःखं कण्टु धर्म्मजनतिवेगाल्
यातनायीटुवतिनारभिच्चोरुनेरं । ४२
धर्म्मजशरीरत्तेत्तटवि मन्दं मन्दं
कल्मषमकन्नोरु तेन्नल्चेन्नेटनेरं- ४३

धर्मराज वहाँ प्रत्यक्ष हुए। धर्मदेव ने अपने पुत्र का अनुग्रह किया। तब धर्मपुत्र (युधिष्ठिर) विमान पर चढ़कर स्वर्ग गये। २९-३५ वहाँ युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र के पुत्रों के ज्येष्ठ को पूर्णैश्वर्य और भोगों से युक्त सुखी देखा। (उन्होंने कहा—) "इतने दुष्ट और अधर्मिष्ट को इतना सौख्य जो प्राप्त हुआ है, यह विचित्र है। अब यहाँ रहने की मन मे इच्छा है ही नही। जहाँ मेरे छोटे भाई है वहाँ तुरन्त ही जाना चाहता हूँ।" धर्मपुत्र की इस प्रकार की बात सुनने के समय इन्द्र की आज्ञा से एक दूत आया और बोला— अगर आओगे तो चलो जहाँ तुम्हारे भाई है और जहाँ बड़ा आनन्द होता है। यह सुनकर दूत के साथ वहाँ गये जहाँ उनके भाई है। वहाँ जाने पर नरक देखकर अत्यन्त दुःखित [illegible] और उनकी यातनाओ का दुःख देखकर युधिष्ठिर वहाँ चले जाने को [illegible] मुक्त और हुए तब युधिष्ठिर के शरीर को धीरे धीरे स्पर्श करता [illegible] कर रहे है [illegible] मन्दमारुत चलने लगा। ३६-४२ इससे उनके भाइयों [illegible] हुआ और आश्चर्यचकित होकर वे बोले— जितना [illegible] [illegible] खड़े रहिये। हम लोगो का दु:ख आप [illegible]

जनमेजयनिह सत्रवुं समर्प्पिच्चु
मुनिकळ्क्कॊल्लां वेण्ट दक्षिणचॆय्तु नन्नाय् । ९
आशीर्वादवुं परिग्रहिच्चु पुरप्पॆट्टा-
नाशुतन् पुरोहितामात्यादिजनत्तोटुं । १०
तक्षकशिलतङ्कल्निन्नु पोय् वेगत्तोटे
पुक्कितु शोभतेटु हस्तिनपुरत्तिङ्कल् । ११
जनमेजयनुटॆ सर्पसत्रत्तिङ्कल्नि-
न्ननुमोदेन वेदव्यासन्तन् नियोगत्ताल् । १२
वैशम्पायनमुखांभोरुहत्तिङ्कल्निन्नु
वैशिष्टचमेरुं महाभारतमितिहास । १३
विश्रुतमायतॆल्ला शौनकादिकळोटु
निश्शेषमुग्रश्रवस्साय सूतनु चॊन्नान् । १४
कल्याणं नल्कुं फलश्रुतियुमरियिच्चा-
नॆल्लामतुमुरचॆय्वान् वेलयुण्टिनिक्किप्पोळ् । १५
नल्लतुवरुमितु केट्टालॆन्नॊळिञ्ञॆनि-
क्किल्ल मटॊन्नु परयावतु निरूपिच्चाल् । १६
चॊल्लुकिलतिल्प्परमुण्टल्लो फलमति-
नॆल्लारुं पात्रमल्लॆन्नाकिलो केट्टुकॊळ्विन् । १७
श्रीमहाभारतत्तिङ्कल् प्रतिपाद्यनाय
तामरसाक्षन् वासुदेवनां कृष्णन्तन्नॆ । १८

कोई सन्ताप न होगा। जनमेजय ने अपना सत्र समाप्त किया और मुनियो को यथेष्ट अच्छी दक्षिणा भी दी। तदनन्तर आशीर्वाद स्वीकार करके अपने पुरोहितों के साथ जाने को तैयार हुए। तक्षकशिला से निकलकर जल्दी चलते हुए शोभावाली हस्तिनपुरी मे प्रविष्ट हुए। जनमेजय के सर्पसत्र के अवसर पर प्रमोद से किये व्यास के नियोग से वैशम्पायन के मुखकमल से सुने गये वडे वैशिण्ट्यवाले महाभारत इतिहास ...दिको को सपूर्णरूप मे सूत उग्रश्रवा ने सुनाया। कल्याण ...ति को भी सुनाया। वह सब सुनाने मे काम वहुत है। ...ई ही होगा। सोचो तो मुझे और कुछ सुनाने को ...ऊँगा तो उसका परम फल होगा ही। पर सब ...है। फिर भी सुन लीजिये। महाभारत का ...ष, वासुदेव, कृष्ण ही है। १३-१८ वाक्, मन

अॅल्लारुं तन्टे तन्टे कारणत्तिङ्कल्त्तन्ने
निल्लीनन्मारायवन्नितीश्वरनियोगत्ताल् । ५५

फलश्रुति-भारतमाहात्म्यं

श्रीवैशन्पायननु जनमेजयन् तन्नो-
टेवमादरपूर्व्वमरुळिच्चेय्तानल्लो । १
श्रीमहाभारतमायीटिनोरञ्चा वेदं
श्रीवेदव्यासमुनितानरुळ्चेय्ततेल्लां । २
सुतनुमतु शौनकादिकळ्क्करियिच्चान्
वेदान्तप्रकरणमायुळ्ळोरितिहासं । ३
जनमेजयनाय नृपनुमस्तिकना-
म्मुनिवर्यनु वर कोटुत्तु सर्प्पसत्रं । ४
समर्प्पिच्चितु पुनरतिनालस्तिकनुं
प्रमदं निज मातृमातुलन्मारक्कु नल्कि । ५
कुण्डलिकुलत्तेयु रक्षिच्चानेतुमोरु-
दण्डमेन्निये पुनरस्तीकमुनीन्द्रनु । ६
अस्तिकनहिकुलं नल्किनाननुग्रह-
मस्तिकमन्त्रचरित्रादिकळ् सन्ध्याकाले ! ७
चिन्तिक्कु जनङ्ङळ्क्कु सर्पवंशत्तालोरु-
सन्तापमोरुनाळुमुण्टाकयिल्लयेन्नु । ८

सद्गुणवाले पाण्डव सब अपने-अपने कारण मे ईश्वर के नियोग से लीन हो गये । ५१-५५

फलश्रुति-भारत का माहात्म्य

श्रीवैशम्पायन ने जनमेजय से इस प्रकार सादर कहा । इस पाँचवे वेद महाभारत को जैसा वेदव्यास ने सुनाया वैसा ही सूत ने शौनक आदिको को सुनाया । यह इतिहास वेदान्त का ही एक प्रकरण है । राजा जनमेजय ने मुनिवर अस्तिक को वरप्रदान किया और सर्पसत्र को समाप्त किया । उसी कारण अस्तिक ने अपने मामाओ और अपनी माता को [illegible] और किया । उस समय मुनीन्द्र अस्तिक ने विना दुःख के सर्वकु[illegible] मुक्त और की । १-६ अस्तिक ने सर्पकुल को यह अनुग्रह दिया [illegible] रहे है [illegible] समय अस्तिक के मन्त्र और चरित्रो का ध्यान करे [illegible]

वाङ्मन.कायङ्ङ्ळाल् भक्त्यैव नमस्करि-
च्चात्मनि सकळरूप ध्यानिच्चनन्तरं । १९
निष्कळत्तिङ्कल्त्तन्ने नितरां लयिच्चथ
मुक्तनाय् तॆळिञ्ञुपसहरिच्चितु सूतन् । २०
तल्प्रकारत्तॆयरियिक्कुन्ने (न् आ) नॆन्नु नन्नाय्
शिल्पमायुरचॆय्ताळ् पॆङ्किळिमकळ्तानु । २१
विद्यावेद्याय नमो विद्येभ्यो नमो नमो
धर्म्मेभ्यो नमो धर्म्मधारिणे नमो नमः । २२
देवेभ्यो नमो वासुदेवाय नमो नमः
कृष्णायावर्ण्यायास्मै नारायणाय नमः । २३
नारायणाय नमो नारायणाय नमो
नारायणाय नमो नारायणाय नमः । २४

॥ स्वर्गारोहणं समाप्त ॥

और शरीर से वडी भक्ति के साथ सकल रूप को अपनी आत्मा मे ध्यान करके, फिर निष्कल मे अत्यन्त लीन होकर सूत ने मुक्ति प्राप्त की और कथा को समाप्त किया। जिस प्रकार कहा, उसको मैं बतला रही हूं— ऐसा शुकी ने कला से कहा। जो विद्या से वेद्य है उसको प्रणाम हो। विद्याओ को प्रणाम हो, धर्मो को प्रणाम हो, जो धर्म धारण करता है, उसको प्रणाम हो। देवो को प्रणाम, और वासुदेव को वारम्वार प्रणाम। अवर्ण्य कृष्ण को नमोनमः। नारायणाय नमो नारायणाय नमो नारायणाय नमो नारायणाय नमो। १९-२४

॥ स्वर्गारोहण पर्व समाप्त ॥

कॉन्टु जनकनिरिक्कुमिटं पुक्कान् ।
कण्टितु नन्दनन्सङ्कट काश्यपन् ३८
दण्डमॅन्तुण्णी! परिभ्रम तीरुक्कॅन्नु
पण्डितन् तापसन्मारॅयिऱक्किनान् । ३९
जन्तुक्कळिल्लात्त देशमरुळ् चॅय्क
चिन्तिच्चितिन्टॅ पतन वरुत्तुवान् । ४०
नूऱायिरं योजन वळि चॅल्लुम्पो-
ळारुमिल्लात गिरियुण्टविटॅयाम् । ४१
तत्र कॉण्टक्कळञ्ञानयुमामयु
क्षुत्तटक्कीटुवान् भक्षिच्चनन्तर ४२
देवलोक पुक्कमृतॅटुत्तीटुवान् ।
भाविच्चितु पवनाशननाशनन् । ४३
अप्पोळमरलोकत्तु काणायवन्नु
मुल्पाटु दुर्न्निमित्तङ्ङळ् पलतरम् । ४४
जभारि संभ्रमिच्चुम्परुमाय् गुरु-
तन् पदाम्भोरुह कुम्पिट्टु चोदिच्चान् । ४५
दारुणदुर्न्निमित्तङ्ङळ् काणायतिन्
कारणमॅन्तॅन्नरुळ्चॅय्क गीष्पते! ४६
केळ्क्क महेन्द्र! तवापराधत्तिना-
लोक्कॅ मरीचिपतापसन्मारुटॅ ४७

वहाँ गया जहाँ उसके पिता थे। काश्यप ने अपने पुत्र की विषम स्थिति देखी (और कहा—) "क्यो परेशानी है, बेटा? घबडाओ मत।" फिर विद्वान् पिता ने तपस्वियो को उतारा। (गरुड ने कहा—) "सोचकर ऐसा स्थान बतलाइए जहाँ कोई जन्तु न हो, ताकि मैं इसे वहाँ फेंक सकूँ।" (पिता ने कहा) सौ हजार योजन का रास्ता पार करने पर एक पहाड मिलेगा जहाँ कोई भी नहीं है। वहाँ इस (शाखा) को फेंक कर हाथी और कूर्म को अपनी भूँख शान्त करने के लिए खालो। तदनन्तर देवलोक मे अमृत लाने के लिए प्रवेश करो। पवनाशनो (सर्पो) के नाशक (गरुड) ने यही करना प्रारभ किया। ३७-४३ उस समय देवलोक मे पहले से ही तरह-तरह के दुर्निमित्त (अशकुन) दीखने लगे। देवो के साथ स्वय इन्द्र घबडा गये और अपने गुरु के चरणो की वन्दना करके बोले—हे बृहस्पते! घोर दुर्निमित्त (अशकुन) दिखायी दे रहे है। इसका क्या कारण है बतलाइए। [बृहस्पति बोले—] "सुनो महेन्द्रजी!

☆ **उर्दू - शरीफ़जाद: (आर्यपुत्र)**— 'उमरावजान अदा' के प्रख्यात लेखक मिर्जा रुस्वा द्वारा रचित अति रोचक उपन्यास। देवनागरी लिपि मे लखनऊ की सुमधुर उर्दू भाषा का आनन्द उठाइये। मूल्य ५'००। डाक व्यय पृथक्।

☆ **गुरुमुखी - श्री जपुजी सुखमनी साहिब**— गुरु नानकदेव और गुरु अर्जुनदेव की अमर वाणी देवनागरी लिपि मे। साथ मे गीता के सफल पद्यानुवादक खानबहादुर ख्वाज' दिलमुहम्मद का अति प्रसिद्ध प्रवाहमय पद्यानुवाद। अनुवाद को पढते समय पाठक झूम उठता है। मूल्य ५'००। डाक व्यय पृथक्।

☆ **अरबी - ज़ादे सफ़र (रियाजुस्सालिहीन)**— प्रसिद्ध प्रामाणिक हदीस (पैगम्बर के कलाम) के उर्दू अनुवाद ज़ादे सफर का देवनागरी लिपि मे सारा पाठ देते हुए कठिन उर्दू शब्दो का हिन्दी अर्थ फुटनोट मे दिया गया है। इस्लामी धर्म के सदाचार की स्पष्ट झाँकी है। पृष्ठ सख्या ३३६ मूल्य १२'००। डाक व्यय पृथक्।

☆ **फ़ारसी - सिर्रे अक्बर**— (शाहजाद: दाराशिकोह कृत–५० उपनिषदो की फारसी व्याख्या मे से ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तरीय और श्वेताश्वतर— इन ९ उपनिषदो का अनुवाद। ग्रन्थ में उपनिषदो का मूल संस्कृत पाठ, उनका भारतीय अनुवाद, साथ मे शाहजाद. दारा की स्पष्ट व्याख्या, पाद-टिप्पणी सहित। एक अभारतीय मुस्लिम शाहजादे की तत्वज्ञान मे पैठ देखते ही बनती है। हिन्दी रूपान्तरकार है काशी विश्वविद्यालय के डॉ० हर्षनारायण। पृष्ठ ३००। इस परिश्रमसाध्य ग्रन्थ का मूल्य २० ०० मात्र है। डाक खर्च पृथक्।

☆ **बाइबिल - सार**— इस पुस्तिका मे बाइबिल मे दिये गये सालोमन के नीति-वाक्यो को देते हुए उनके समानान्तर भारतीय नीति-वचनो को उद्धृत किया गया है। मूल्य १'०० मात्र।

वाणी सरोवर

(अपने ढग का निराला त्रैमासिक पत्र

इस पत्र मे हिन्दी, उर्दू, अरबी, फारसी, सस्कृत, पारसी, [illegible] गुरुमुखी, तमिळ, मलयाळम, असमी, गुजराती, तेलुगु, [illegible] किया। राजस्थानी और नेपाली के अनुपम ग्रथो का हिन्दी अनुवा[illegible] और उनका मूल पाठ धारावाहिक प्रकाशित हो रहा है। व[illegible] मुक्त और

नवीन ग्राहक बननेवाले सज्जनो को सन् १९[illegible] कर रहे है [illegible] प्रतिवर्ष के हिसाब से शुल्क भेजना उनके हित मे [illegible] मँगाने पर धारावाहिक चलनेवाले पहले से शुरू अने[illegible] जायँगे। वैसे ट्रस्ट को आपत्ति नही है, आप जिस[illegible] त्य, नि[illegible]

वाणी-सरोवर में चल रहे सानुवाद देवनागरी-लिप्यन्तरण ग्रन्थ :—

१—(तमिळ्) तिरुक्कुरळ् २—(तमिळ्) कम्ब रामायण
३—(तेलुगु) रगनाथ रामायण ४—(कन्नड) पम्प रामायण—जैनसाहित्य
५—(असमिया) माधवकदली रामायण ६—(कश्मीरी) रामावतार चरित
७—(नेपाली) रामायण भानुभक्त कृत ८—(गुजराती) गिरधर रामायण
९—(मलयाळम) तुञ्चत्त् एळुत्तच्छन् कृत महाभारत
१०— „ तथा „ „ „ अध्यात्म रामायण
११—(ओड़िआ) वैदेहीश-विळास—उपेन्द्र भञ्ज १२—(सिंधी) स्वामी के सलोक
१३—(मराठी) श्रीराम-विजय—श्रीधर स्वामी कृत मूलपाठ अनुवाद सहित
१४—(गुरमुखी) श्रीगुरुग्रथ साहव १५—(उर्दू) गुजश्त. लखनऊ—मौ० शरर
१६—(फारसी) दाराशिकोह कृत ५० उपनिपदो की फारसी-व्याख्या का धारावाहिक हिन्दी अनुवाद
१७—(राजस्थानी) रुक्मिणीमगल—पदम भगत कृत
१८—(अरबी) रियाजुस्सालिहीन (हदीस)—(जादे सफ़र)
१९—रामचरितमानस (तुलसी)—सस्कृत पद्यानुवाद सहित, तथा
२०— „ ओड़िया लिपि मे लिप्यन्तरण एवं ओड़िया गद्य-पद्यानुवाद

प्रा० स्थान—भुवन वाणी ट्रस्ट ४०५/१२८ चौपटियाँ रोड, लखनऊ—३

अन्यत्र प्रकाशित लिप्यन्तरण-ग्रन्थ :—

क़ुर्आन शरीफ़ [हिन्दी]

वीस साल की मुसलसल अिल्मी मिहनत के वाद देवनागरी रस्मुल्खत मे, कुर्आन शरीफ मय मतन (मूल आयतें) व हिन्दी तर्जुमा व तफ्सीरी नोट्स छप कर अवाम की पेश-नज़र है। इसमे मिलते-जुलते हुरूफ मसलन जाल ज़े जा‿ जो वगैर को अलाहद. मुमताज़ करते हुए रुमूज़ औकाफ (विरामाविराम चिह्न) व दीगर अलामतें, गरज़ कि शास्त्रीय अरवी पद्धति पर इमकानी सूरत मे सह (पाठ) का पूरा इहतियात मुहय्या किया गया है। हर सफे पर कुर्आ मूली खत याने अरवी खत मे इन्तहाई सही व्लाक भी देकर नक्स ख़त्म कर दी गई है। अलावा, मौलाना सय्यद अवुल हसन अली नदनी जनाव अली मियाँ साहव ने इस हिन्दी कुर्आन शरीफ पर क़द्र मिहनत को जीनत वख्शी है। हद्य महज़ ४०००। आर्डर के साथ १० ०० पेशगी ज़रूर भेजिए।

[illegible] वाणी ४०५/१२८ चौपटियाँ रोड, लखनऊ—३

ओड़िया-संस्करण

रामचरितमानस-मूल ओड़िया लिपि में
गद्य-पद्य अनुवाद ओड़िया भाषा में

ଗୋସ୍ୱାମୀ ତୁଳସୀଦାସକୃତ

ଶ୍ରୀରାମଚରିତ ମାନସ

(ଓଡ଼ିଆ ଲିପିରେ ମୂଳପାଠ ଏବଂ ଓଡ଼ିଆ ଭାଷାରେ ପଦ୍ୟଗଦ୍ୟାନୁବାଦ)

ପ୍ରଥମ ସୋପାନ

ବାଳକାଣ୍ଡ

ବର୍ଣ୍ଣାନାମର୍ଥସଂଘାନାଂ ରସାନାଂ ଛନ୍ଦସାମପି ।
ମଙ୍ଗଳାନାଂ ଚ କର୍ତ୍ତାରୌ ବନ୍ଦେ ବାଣୀବିନାୟକୌ ॥୧॥
ଭବାନୀଶଙ୍କରୌ ବନ୍ଦେ ଶ୍ରଦ୍ଧାବିଶ୍ୱାସରୂପିଣୌ ।
ଯାଭ୍ୟାଂ ବିନା ନ ପଶ୍ୟନ୍ତି ସିଦ୍ଧାଃ ସ୍ୱାନ୍ତଃସ୍ଥମୀଶ୍ୱରମ୍ ॥୨॥
ବନ୍ଦେ ବୋଧମୟଂ ନିତ୍ୟଂ ଗୁରୁଂ ଶଙ୍କରରୂପିଣମ୍ ।
ଯମାଶ୍ରିତୋ ହି ବକ୍ରୋଽପି ଚନ୍ଦ୍ରଃ ସର୍ବତ୍ର ବନ୍ଦ୍ୟତେ ॥୩॥

ବିବିଧ ପ୍ରକାର　ବର୍ଣ୍ଣ ଅର୍ଥ ରସ　ଛନ୍ଦ ଆଦର ।
ମଙ୍ଗଳଙ୍କ କର୍ତ୍ତା　ବାଣୀ ବିନାୟକେ　ବନ୍ଦେ ସାଦର ॥ ୧ ॥
ବନ୍ଦେ ପୁଣି ଶ୍ରଦ୍ଧା　ବିଶ୍ୱାସ ମୂରତି　ଉମା ମହେଶେ ।
ଯା ବିହୁନେ ସିଦ୍ଧେ　ଦେଖି ନ ପାରନ୍ତି　ସ୍ୱ ହୃଦଈଶେ ॥ ୨ ॥
ବନ୍ଦେ ଜ୍ଞାନମୟ　ନିତ୍ୟ ଶିବ ପ୍ରାୟ　ଶ୍ରୀଗୁରୁ ପଦ ।
ଯାହାଙ୍କ ଆଶ୍ରିତ　ବକ୍ର ଚନ୍ଦ୍ର ମଧ୍ୟ　ସର୍ବତ୍ର ବନ୍ଦ୍ୟ...

ବର୍ଣ୍ଣ, ଅର୍ଥ, ରସ, ଛନ୍ଦ ଓ ମଙ୍ଗଳସମୂହର ସୃଷ୍ଟି... ...ा किया ।
ସୃଷ୍ଟିକାରୀ ଶ୍ରୀ ଗଣେଶଙ୍କୁ ମୁଁ ବନ୍ଦନା କରୁଅଛି ॥ ୧ ॥ ଯାହାଙ୍କ... ...और
ସିଦ୍ଧ ପୁରୁଷଗଣ ମଧ୍ୟ ନିଜ ହୃଦୟସ୍ଥିତ ଈଶ୍ୱରଙ୍କୁ ଦେଖି... सर्वकु... मुक्त और
ବିଶ୍ୱାସର ମୂର୍ତ୍ତି ସେହି ଦେବୀ ଶ୍ରୀ ପାର୍ବତୀ ଓ ମହାପ୍ରଭୁ... कर रहे हैं रूप
କରୁଅଛି ॥ ୨ ॥ ଯାହାଙ୍କ ଆଶ୍ରୟ ବଳରେ ଚନ୍ଦ୍ର ବକ୍ର ହେଲେ... ...त्य, नि
ବନ୍ଦିତ, ସେହି ଜ୍ଞାନମୟ, ନିତ୍ୟ, ଶଙ୍କରରୂପୀ ଗୁରୁଙ୍କୁ...

संस्कृत मानस-भारती

रामचरितमानस-मूलपाठ-सहित पंक्ति-अनुपंक्ति संस्कृत पद्यानुवाद

तासु प्रभाउ जान नहिं सोई । तथा हृदयँ मम ससय होई ॥
सो तुम्ह जानहु अतरजामी । पुरवहु मोर मनोरथ स्वामी ॥
सकुच बिहाइ मागु नृप ! मोही । मोरे नहिं अदेय कछु तोही ॥

दो०—दानि-सिरोमनि ! कृपानिधि, नाथ ! कहउँ सतिभाउ ।
चाहउँ तुम्हहि समान सुत, प्रभु सन कवन दुराउ ॥ १४९ ॥

देखि प्रीति सुनि बचन अमोले । एवमस्तु करुनानिधि बोले ॥
आपु-सरिस खोजौ कहँ जाई । नृप ! तव तनय होब मै आई ॥
सतरूपहि बिलोकि कर जोरे । देवि ! मागु बरु जो रुचि तोरे ॥
जो बरु नाथ ! चतुर नृप मागा । सोइ कृपाल मोहि अति प्रिय लागा ॥
प्रभु परतु सुठि होति ढिठाई । जदपि भगत-हित तुम्हहि सोहाई ॥
तुम्ह ब्रह्मादि-जनक जग-स्वामी । ब्रह्म, सकल-उर-अतरजामी ॥
अस समुझत मन ससय होई । कहा जो प्रभु, प्रवान पुनि सोई ॥
जे निज भगत, नाथ ! तव अहही । जो सुख पावहिं, जो गति लहही ॥

दो०—सोइ सुख, सोइ गति, सोइ भगति, सोइ निज-चरन-सनेहु ।
सोइ बिबेक, सोइ रहनि प्रभु, हमहि कृपा करि देहु ॥ १५० ॥

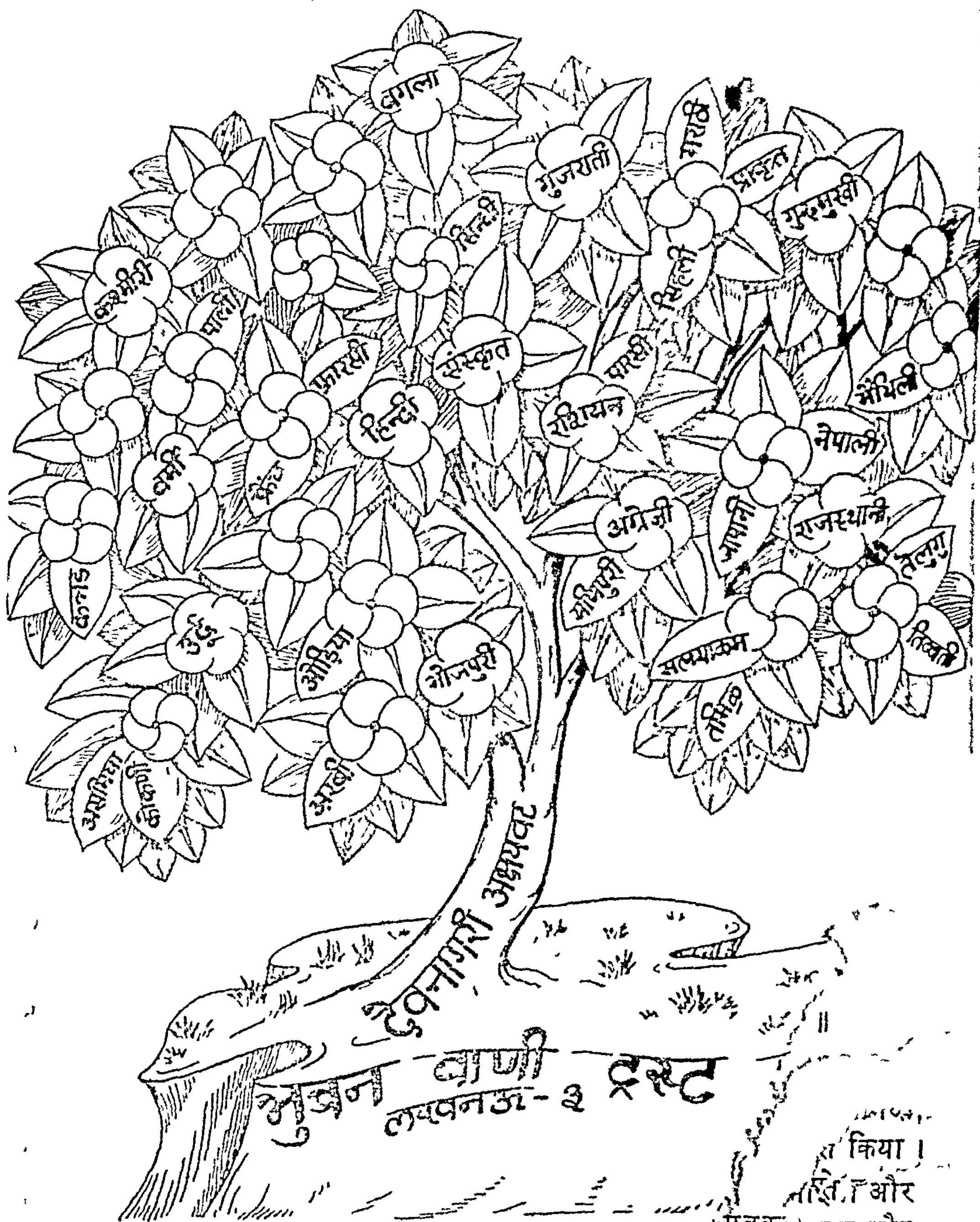
पादपस्य यतस्तस्य स प्रभाव न बुध्यति । तथा ममापि हृदये सशय सम्प्रजायते ॥
विजानात्येव सर्व तमन्तर्यामी यतो भवान् । हे स्वामिन् ! ममत काममतो नयतु पूर्णताम् ॥
ईशोऽवदद् याच राजन् ! सङ्कोच परिहाय माम् । न तत् किमपि मे पार्श्वे तुभ्य देय न यद्भवेत् ॥

- निधे ! दानशिरोमणे ! च सत्येन भावेन वदामि नाथ ! ।
पुत्र भवता समानं गुह्य प्रभोः किं नृप इत्यवोचत् ॥ १४९ ॥

त्वा विलोक्य प्रेम चेदृशम् । दयानिधिस्तमवदद् भवतादेवमेव तत् ॥
ह मृगयिष्ये स्वसन्निभम् । स्वयमेव भविष्यामि तस्मात् तव सुतो नृप ॥
अथ शतरूपा हरिस्तत । ऊचे यद् याच त देवि ! वरो यस्ते प्ररोचते ॥
ना राज्ञा यो याचितो वर । कृपालो ! रुचिरोऽतीव प्रतिभात स एव मे ॥
थ ! महतीय प्रजायते । रोचते सापि भवते भक्तशङ्कर ! यद्यपि ॥
समग्रजगत प्रभु । समेषा चेतसामन्तर्यामि ब्रह्म च वर्तते ॥
सशयो हृदि जायते । तथापि नाथ ! भवता प्रोक्त सर्वं प्रमात्मकम् ॥
क्ता ये भवत प्रभो ! । त आप्नुवन्ति यत् सौख्य या गतिञ्चाप्नुवन्ति ते ॥

ती त एव स्वपादगं प्रेम तदेव सर्वम् ।
वासः सर्वं ददात्वित्थमिदं भवान् मे ॥ १५० ॥

' प्रत्येक क्षेत्र, प्रत्येक संत की वानी ।
सम्पूर्ण विश्व मे घर-घर है पहुँचानी ॥ '



किया ।
और
सबकुछ मुक्त और
प्रतिष्ठा कर रहे हे रूप

नल्ल मासवु चोरु नल्केणमेनिक्कॆन्नु
चॊल्लिनान् नृपतियु रण्टुनाऴिक पार्प्पान् । १०
भूपालनन्तःपुरपुक्किरुन्नोरुशेप
तापसन् परञ्ञतु मरन्नु पोयी वलाल् । ११
रात्रियिलोर्त्तनेर पाचकनोटु चॊन्नान्
पार्त्तिरिक्कुन्नितॊरु तापसन् भुजिप्पानाय् । १२
व्यञ्जनमासादियाल् मृष्टमायूट्टेण नी-
यञ्जसा बहुमानिच्चादरवोटुमॆन्नान् । १३
करियु चोरुमॆल्लामुण्टाक्कीट्टवन् चॆन्नु
नरपालकनोटु मासमिल्लॆन्नु चॊन्नान् । १४
मनुष्यमासंतन्ने कॊटुक्कॆन्नुरचॆय्तु
मनुष्येन्द्रनुमप्पोळ् सूदनुमतुचॆय्तान् । १५
अन्नेरमभोज्यमायुळ्ळॊरु नरमासं
नन्नायि विळम्पियतॆन्नुरचॆय्तु मुनि । १६
मानवन्मारॆप्पिटिच्चन्पोटु भक्षिच्चु नी
कानने चरिक्कॊरु राक्षसनायिट्टॆन्नु । १७
मुन्नमे शक्तिमुनितन्नुटॆ शापतन्ने
नन्नायिप्पूरिप्पिच्चानॆन्नते परयेण्टु । १८
शक्तिमुख्यन्माराय नूरुपेर् वसिष्ठन्तन्-
पुत्रन्मारवर्कळॆयॊक्कवे तिन्नानवन् । १९

प्यास से बहुत पीडित थे, राजा से कहा—'मुझे अच्छा मास और भात खिलाइए'। तव राजा ने दो घड़ी ठहरने के लिए कहा और अपने अन्त पुर चला गया तथा मुनि की याचना विलकुल भूल गया। जव रात को स्मरण आया, तव राजा ने रसोइये से कहा—"एक तापस भोजन की प्रतीक्षा मे वैठा हुआ है, सव्जी और मास-सहित पर्याप्त भोजन जल्दी तैयार करके वहुत आदर-मान के साथ उसको खिलाओ।" भात और भाजी तैयार करके रसोइया राजा के पास गया और वोला कि मास नही है। तव राजा ने कहा—'नरमास दे दो'। और रसोइये ने वैसा ही किया। चूंकि खाने के अयोग्य नरमास परोसा गया, इसलिए मुनि ने राजा को शाप दिया—"तुम मनुष्यो को पकडकर प्रीति से खानेवाले और वन मे विचरनेवाले राक्षस हो जाओ।" ९-१७ इस प्रकार शक्ति मुनि ने जो पहले ही शाप दिया था, उसी को अव फिर इस ब्राह्मण ने दृढ़ कर

पुत्रशोकत्ताल् महामेरुविन्मुकळेरि
मुक्ति वन्नीटुवतिनुरुण्टु वसिष्ठनु । २०
अग्नियिल् चाटिप्पिन्नेस्समुद्रंतन्निल्च्चाटि
विघ्नं वन्नील देहदेहिकळ्क्कोन्निनालु । २१
पाशत्ताल् कैकाल्केट्टिप्पुळयिल् चाटीतप्पोळ्
पाशत्तेच्छेदिक्कयालायितु विपाशयुं । २२
पिन्नेयु हैमवतियाकिय नदितन्निल्
चेन्नु चाटिनानवळ् नूरु कैवळियायाळ् । २३
अतिनाल् शतद्रुवेन्नवळ्क्कु पेरुण्टायि
मृति वन्नील जलं नीङ्ङिप्पोयतुमूल । २४
ओरुजातियुं वरा मरणमेन्नु कण्टु
सरसीरुहभवनन्दनन् वसिष्ठनु । २५
आश्रमत्तिङ्कल् चेन्नुपुक्कप्पोळदृश्यन्ति-
याश्वसिप्पिच्चु गर्भपात्रस्थनाय बालन् । २६
तन्नुटे वेदनादं केट्टाशु वसिष्ठनु-
मेन्नुटे शक्तितन्टे नादमेन्नतुपोले । २७
केट्टतेन्तोरु वेदद्ध्वनियेन्नतुनेर
वाट्टमिल्लाते शक्तिपत्नियुमुरचेय्ताळ् । २८

दिया। राक्षस बने राजा ने वसिष्ठ के शक्ति आदि सौ पुत्रों को पहले ही खा लिया। पुत्र-शोक के कारण महामेरु पर्वत पर चढकर वसिष्ठ मुक्ति प्राप्त करने के लिए वहाँ से गिरे। तदनन्तर अग्नि मे कूद पडे, और समुद्र में डूबे, पर इन उपायो से न उनके शरीर की, न उनकी आत्मा की हानि हुई। तत्पश्चात् वे हाथ-पैर बाँधकर नदी मे कूद पडे, पर रस्सी टूट गयी और वे मुक्त हो गये। फिर हैमवती नदी मे कूद पडे, वह नदी सौ दिशाओ मे बिखर गयी। इसलिए उसका नाम हुआ शतद्रु (सतलज)। वसिष्ठ तो नही मरे, क्योकि जल हट गया था। १८-२४ किसी भी प्रकार मृत्यु नही होती, यह देखकर ब्रह्मा के पुत्र वसिष्ठ अपने आश्रम गये, जहाँ अदृश्यन्ती[1] ने उनको आश्वासन दिया। उसके गर्भ मे स्थित बालक का वेदपाठ सुनकर वसिष्ठ ने कहा—"मेरे पुत्र शक्ति की वेदध्वनि के समान यह वेदध्वनि कहाँ से निकल रही है?" तब बिना हिचक के शक्ति की पत्नी ने उत्तर दिया—"जब मेरे पति का स्वर्गवास हुआ तो मेरे गर्भ हो

1 अदृश्यन्ती वसिष्ठपुत्र शक्ति की पत्नी थी।

गर्भमुण्टिनिक्कॊन्टॆ भर्त्तावु मरिक्कुन्पो-
ळर्भकनवनुटॆ नादमॆन्नतेवरू । २९
अॆन्नुकेट्टवळुमाय् पिन्नॆयु पुऱप्पॆट्टु
चॆन्नप्पोळ् वनभुवि कल्मापपादन् कण्टु । ३०
भक्षिप्पानटुत्तॊरु रक्षस्सिन् वेगं कण्टु
दक्षना विधिपुत्रन् तळिच्चुजल कॊण्टे । ३१
शापमोक्षवु वन्नु राजावु तॆळिञ्ञितु
तापवुमकन्नितु पुरवासिकळ्क्कॆल्लां । ३२
कल्मापपादन्तन्नॆक्कॊण्टुपोययोद्ध्चयिल्
कल्मपमकन्नु वाळिच्चितु वसिष्ठनु । ३३
भूपतिपत्नियायि वाळुन्न सुदेष्णयिल्
भूपरित्राणार्त्थमाय् गर्भवुमुल्पादिच्चान् । ३४
द्वादशसवत्सर चॆन्निट्टु पॆट्टाय्कयाल्
मातावु सुदेष्णयुमुदरमश्मत्तिनाल् ३५
भेदिच्चनेरमॊरु वालकनुण्टाय्वन्नु ।
मेदिनीपतियवनश्मकनायतॆटो । ३६
शक्तितन् पत्नियायोरदृश्यन्तियु पॆट्टा-
ळुत्तमनाय पराशरनां मुनितन्नॆ । ३७
तातन्टॆ मरणत्तिन् हेतुक्कळ् केट्टिट्टवन्
क्रोधत्ताल् सर्व्वलोक दहिप्पानॊरुन्पॆट्टान् । ३८

गया था। यह उसी बालक की वेदध्वनि है, और कुछ नही हो सकता है।" यह सुनकर उसके साथ फिर बाहर निकले। वन पहुँचने पर वहाँ उनको कल्मापपाद ने देखा। पकड़कर खाने के लिए आनेवाले राक्षस की तेजी देखकर कुशल वसिष्ठ ने उस पर जल छिडक दिया। तब शाप से मुक्ति हुई, राजा भी प्रसन्न हुए और नगर के निवासियों का दु.ख समाप्त हुआ। २५-३२ तदनन्तर वसिष्ठ कल्मापपाद को अयोध्या ले गये और पाप दूर करके उनसे राज कराया। राजा की पत्नी सुदेष्णा मे भूमि की रक्षा के लिए गर्भाधान भी कराया। बारह बरस बीतने पर (भी) प्रसव न होने के कारण माता सुदेष्णा ने अपने पेट को पत्थर (अश्म) से पीटा, जिससे एक बालक पैदा हुआ, वही राजा अश्मक के नाम से प्रसिद्ध हुआ। शक्ति की पत्नी अदृश्यन्ती ने श्रेष्ठ पराशर ऋषि को जन्म दिया। अपने पिता की मृत्यु का कारण सुनकर वह क्रोध मे आकर सारे जगत् को

अतु कण्टोरु पितामहनां वसिष्ठनुं
मतिमानाय निज पौत्रनोटरुळ्चेय्तु । ३९

औव्वोंलभववु शान्तिमहत्ववु

केळ्क्क नी कृतवीर्यनाकिय महीपति
साक्षालिन्द्रनेप्पोले चेय्तितु पलयाग । १
अन्नवनुपाध्यायन् भार्ग्गवनवन्तनि-
क्कन्यूनधनराशि दक्षिणचेय्तु नृपन् । २
पिन्नेप्पोय् सुरलोक प्रापिच्चनेरमवन्-
तन्नुटे कुलत्तिङ्कलुण्टाय भूपालन्मार् ३
अर्त्थलोलुपन्मारायच्चमञ्ञारतुमूलं
चित्तशान्तियुवेच्चु भार्ग्गवन्मारोटेल्ला । ४
तुटङ्ङि विरोधमेन्नरिञ्ञु मङ्यव-
रोटुङ्ङातोरु धन कुळिच्चुवच्चारल्लो । ५
अवरु द्विजालयं कुळिच्चु निधियेटु-
त्तवनीदेवन्मारे वधिच्चार् मटियाते । ६
स्त्रीबालवृद्धावधि वधिच्चारतुकालं
भूपालभयकोण्टु भूदेवस्त्रीकळेल्लां । ७
पर्व्वतगुहकळिलोळिच्चारतिलोरु-
दिव्यस्त्री तनिक्कुण्टु गर्भमेन्नरिकयाल् । ८

जला देने को तैयार हो गये। यह देखकर पितामह वसिष्ठ ने अपने बुद्धिशाली पौत्र से कहा— ३३-३९

और्व का उद्भव और शान्ति का महत्त्व

"सुनो राजा कृतवीर्य ने साक्षात् इन्द्र के समान अनेक यज्ञ किये। उस अवसर पर उनके उपाध्याय भार्गव थे, जिनको राजा ने विपुल धन-राशि दक्षिणा के रूप मे दी। तत्पश्चात् राजा को स्वर्ग प्राप्त हुआ। उनके वश मे जो भूपाल हुए, वे अर्थलोलुप निकले। अतएव उन्होने भार्गवो के प्रति अपनी चित्तशान्ति को त्याग दिया। यह जानकर कि अब विरोध प्रारम्भ हो गया है, ब्राह्मणो ने बहुत धन गाड दिया। राजाओं ने ब्राह्मणो के घर भी खोदकर धन निकाला और बिना हिचक के उनका वध किया। स्त्री, बाल, और वृद्धो तक की हत्या की। तब राजाओ के डर

वाञ्च तपोबलं कॉण्टुळवायॉरु
काश्यपपुत्रन् विनतात्मजनिप्पोळ् ४८
वन्निविटॅक्कलहिच्चु नम्मॅज्जयि-
च्चॅन्तुममृतवन् कॉण्टुपों निश्चयम् । ४९
ऍन्नालवनोटु युद्धत्तिनायिट्टु
निन्नीटुविन् निङ्ङळॅल्लारुमॉन्निच्चु । ५०
दण्डमॅन्नालुं जयिप्पतिनॅन्नतु
पण्डितनाय गुरवरुळ्चॅय्तप्पोळ् ५१
इन्द्रनमृतुं कलशवुं काक्कुन्न
वृन्दारकाधिपन्मारोटु चॉल्लिनान् ५२
पण्टु केट्टिट्टिल्लयात विशेषङ्ङ-
ळुण्टु केळ्क्कुन्नतरिविनॅल्लावरुम् । ५३
लोकत्रयत्तिन्नु नायकनाकियो-
राखण्डलनाकुमॅन्नोटु पोरिनाय् ५४
इन्नॉरु पक्षि वरुमॅन्नु केळ्क्कुन्नू ।
निन्नुकॉळ्वान् पणियॅन्नु पऱयुन्नू । ५५
वह्नियु कालनु वीरन् निऋतियु
धन्यन् वरुणन् जगत्प्राणदेवनुं ५६
ईशसखितानुमीशनु चन्द्रनु
ईशात्मजनाय सेनापतियुमाय् ५७

तुम अपने अपराध के कारण, जान लो, मरीचिप-तापसों[1] के तपोबल से काश्यप प्रजापति का पुत्र विनता [के गर्भ] से पैदा हो गया और वह अब यहाँ आकर हमलोगों से झगड़ा करके हमे हराकर अमृत को अवश्य छीन ले जायगा। इस लिए उससे युद्ध करने के लिए आप सब एक होकर खड़े हो जाइए। जिससे कष्ट होते हुए भी हमारी जीत हो जाय। जब विद्वान् गुरु ने इस प्रकार कहा तब इन्द्र ने अमृत और कलश की रक्षा करनेवाले देवो से कहा—४४-५२ "आप सब जान लीजिए कि अनसुनी बाते अब सुनने मे आ रही है। सुना जाता है कि लोकत्रय के नेता—मुझ आखण्डल (इन्द्र) से लड़ने के लिए आज एक पक्षी आने वाला है। यह भी कहा जाता है कि उसका सामना करना कठिन है। अग्नि, यमराज, वीर निऋति, धन्य वरुण, जगत् का प्राण—वायु, शिवजी

---

१ किरणो का पान करने ।

वरिक कॊल्लुवान् मटिक्करुतेतुं
पुरुषनाकिल् नी वधिक्कणमिप्पोळ् । ६२
पुरुषनल्लॆन्नु पऱञ्ञुतॆन्नॆ नी-
यिनि नीयिन्नॆन्नॆक्कॊलचॆय्तीटाय्कि-
लनुजन्तन्नाणे पिणक्कमुण्टाकुं । ६३
अऱियप्पोकात जळन्मारप्पोलॆ
पऱयाय्विन् कोप कळञ्ञटङ्ङेणं । ६४
अरचर्कळ्कुलप्पॆरुमाळेयॆन्न-
ङ्ङरुळिञ्चॆय्तितु मुकुन्दनन्नेरं । ६५
इरुवक्कुंमिरुवरुंकूटातॆक-
ण्टॊरु बलमिल्लॆन्नऱिञ्ञिरिक्कण । ६६
इनतनयनॆ वधिच्चुकॊळ्ळुवा-
निनियनुग्रहिच्चयय्क्कनुजनॆ । ६७
पॆरिकॆ वैकरुतिनियॆन्नु कृष्णन्-
तिरुवटि तॆळिञ्ञरुळिच्चॆय्तप्पोळ् ६८
तॆरुतॆरे नृपन् मुरुकॆप्पुलिकनान्
त्रिदशनायकतनयनॆयप्पोळ् । ६९
वरिक नल्लतु निनक्कु मेल्क्कुमेल्
वरिक कर्ण्णनॆ वधिच्चु वैकातॆ । ७०

माया मे छिपा दिया। ५४-६० उस समय क्रुद्ध युधिष्ठिर (बोले) "मै अब समझ गया कि तुम बडे वीर हो। अब मारने आओ, तनिक भी हिचकना मत। अगर तुम पुरुष हो तो अभी मारो। तूने कहा था कि मै पुरुष नही हूँ। अगर तू मुझे आज नही मारेगा तो तुझ छोटे भाई से मेरा झगड़ा हो जायगा।" उस समय मुकुन्द ने कहा—"अज्ञ जडो की तरह तुम दोनो बाते न करो। अपना कोप छोड़ो और शान्त हो जाओ। हे राजकुलो के नेता! जान लो कि तुम दोनो को एक दूसरे के बिना कोई बल नही है। राजा के पुत्र को (कर्ण को) मारने के लिए अब अनुज को आशीर्वाद देकर भेजो। ६१-६७ अब अधिक विलम्ब न करो। जब पूज्य कृष्ण ने इस प्रकार कहा तब तुरन्त ही राजा (युधिष्ठिर) ने अर्जुन का गाढ आलिङ्गन किया। और कहा—"तुम्हारा उत्तरोत्तर भला हो! कर्ण को मारकर जल्दी लौट आओ। पृथ्वी का एक मात्र धनुर्धर बनकर विराजो, चिरकाल तक इस पृथिवी मे हे सहोदर!" युधिष्ठिर ने प्रेम से

कुतंकॊण्टु चाटु कुतिरकळुटॆ
कुतिरच्चेवकरयुमॊटुक्कि ञान् । ५१
मुटक्कि वासवन् चॊरिञ्ञु वन्मळ-
यटक्कं खाण्डव दहिप्पिच्चेनल्लो । ५२
वटक्कुदिक्कॊक्कज्जयिक्कयु चॆय्ते-
नटुत्त गन्धर्व्ववररॆयु वॆन्नेन् । ५३
नटिच्चु वन्नॊरु यदुक्कळॆ वॆन्नु
मटुत्तूकुमॊळि सुभद्रयॆ वेट्टेन् । ५४
अटुत्त भूपरॆज्जयिक्कयुचॆय्तेन्
पटय्क्कु भाविच्च रिपुक्कळॆ वॆन्नु ५५
पशुक्कळॆ विराटनु नल्कीटिनेन् ।
परमीशन् पशुपति जगल्पति- ५६
यॊरु किरातनाय्च्चमञ्ञु वन्नॆन्टॆ ।
करबल कण्टु तॆळिञ्ञिट्टल्लयो ५७
वरङ्ङळु पाशुपतवु वाङ्ङि ञान् ।
ऒरुवरारुळ्ळतिनिक्कु तुल्यराय् ५८
पुरुषन्मारॆन्नु परञ्ञु फल्गुनन् ।
पुरुषनल्लॆन्नु परञ्ञु नीयॆन्ने- ५९
प्परमपूरुषन् परममाययिल् ।
परिच्चोटु मूटीतवरॆ विस्मय । ६०
अतुनेर कोप कलर्न्नु धर्म्मज-
नतिवीरन् नीयॆन्नरिञ्ञु आनिप्पोळ् ६१

को मैंने समाप्त कर दिया। जब इन्द्र ने बडी वर्षा करके प्रतिबन्ध लगाया तब मैने सारे खाण्डव को जला दिया। उत्तर दिशा को मैने जीत लिया और जो कोई गन्धर्व निकट आये उनको समाप्त कर दिया। ४७-५३ अकडकर जो यदु लडने आये थे उनको मारकर मीठी आवाजवाली सुभद्रा से मैंने विवाह किया। जो भूपाल लड़ने आये उनको हरा दिया शत्रुओ को समाप्त करके गौओ को विराट को लौटा दिया। परमेश्वर पशुपति जगत्पति एक किरात के रूप मे आकर और मेरे बाहुबल को देखकर प्रसन्न हुए और मुझे वर और पाशुपतास्त्र दे गये। फल्गुन ने कहा—"मेरे तुल्य यहाँ कौन पुरुष है ?" तूने कहा कि मै पुरुष नही हूँ। यह बड़े आश्चर्य की बात है कि परमपुरुप ने उनको अपनी

इवनल्लो धर्म्मात्मजनेयेय्ततु-
मिवनल्लो कृष्णातुकिलळिक्कोन्नु ८२
परञ्ञु चेय्यिच्चतपनयत्ताले
पशुसमन्मार् पाण्डवन्मारेन्नतु ८३
पल नृपर् केळ्क्कप्परिहसिच्चतुं ।
इवन् तुणयायिट्टरक्किल्लत्तिलि-
ट्टटच्चु तीवच्चुकळञ्ञु नूट्टुपेर् । ८४
इवनेक्कोल्लुवानुळ्ळुकवेणं
पवनपुत्रनु तुणयुमिल्लारुं । ८५
मरुवलर्मुन्पिल् पलनेरमुण्टु
पेरुमारुन्नतङ्ङवनरिञ्ञालु । ८६
इति मधुरिपुवरुळिच्चेय्तप्पो-
ळितमोट्टु बाणं पोळिच्चु फल्गुनन् । ८७
कुरञ्ञु पाञ्चालादिकळ्क्कु सङ्कटं
निरञ्ञु कर्ण्णन्तन्नरिके कौरवर् । ८८
अतिनुनेरे कूट्टिनान् महारथ-
मतिवेगत्तोटु मुकुन्दनन्नेरं । ८९
विजयनेत्तेरिल् विळङ्ङिक्काणायि
विबुधकळधिपतियोटुंकूटि । ९०
तरुणभास्करनरुणनोट्टुकू-
टोरुमिच्चु तेळिञ्ञुदिच्चतुपोले । ९१

सेना के बीच बुरी बाते कहकर भीम का अपमान किया । ७६-८१ इसी ने तो युधिष्ठिर पर बाण चलाया । इसी ने अपनी दुष्टता के कारण कृष्णा के कपड़े उतरवाये । इसी ने तो अनेक राजाओ के सामने पाण्डवो को पशु कहकर उनकी हँसी उड़ाई । इसी की सहायता से सौओ ने तुम लोगों को जतुगृह मे बन्द करके आग लगा दी थी । इसको मारने मे बड़ा कष्ट उठाना पड़ेगा । भीम अब अकेला हो गया । बड़ी देर से वह शत्रुओ के बीच काम कर रहा है, जान लीजिये । जब कृष्ण इस प्रकार कह रहे थे तब अर्जुन ने सोल्लास शरवर्षा की । ८२-८७ पाञ्चाल आदियो का दुःख कम हुआ और कौरव कर्ण के पास जमा हो गये । तब मुकुन्द ने तुरन्त उसी ओर महारथ को चलाया । देवो के अधिपति के साथ अर्जुन रथ पर विराजमान दिखाई दिया । मानो तरुण सूर्य का

भुवनैकधनुर्द्धरनाय् वाळुक
भुवि पलकालं मम सहोदर ! ७१
कनिञ्ञु धर्म्मजननुजन्तन्नुटे
शिरसि चुम्बिच्चङ्ङयच्चानन्नेरं । ७२
हरि चराचरगुरु मुररिपु-
चरितमायकळरियरुताक्कुं । ७३
हर विधि शतमख सुरासुर-
पति रमापति गुरु दयानिधि ७४
विविध भूपतिवरर् चुळन्नोरु
विबुधनाथजरथं करेरिनान् । ७५
नटन्नु वन्पट तुटर्न्नुटनुटन्
तुटङ्ङि वाद्यघोषवुं बहुविध । ७६
निरञ्ञु वानवरुपरि सर्व्वरु
मरञ्ञु भानुबिंबवुं पोटियालें । ७७
परञ्ञु लोकेशन् विजयनें नोक्कि-
यरिञ्ञितो सुयोधननोराश्रय- ७८
मिवनोळिञ्ञारुमिनियिल्लोर्क्क नी-
यिवनल्लो मुन्नमधिक्षेपिच्चतुं । ७९
मरञ्ञोळियन्पेय्तभिमन्युचाप
मुरिच्चवनेयु कोलचेय्यिच्चतु ८०
इवनल्लो दुर्भापणङ्ङळ् चोन्नतुं
पवनजन्तन्नेप्पटयुटे मद्धये ८१

अपने छोटे भाई के सिर पर चूमकर उसको युद्ध मे भेज दिया। हरि, चराकरगुरु, मुरारि के चरित्रों की माया कोई भी न जानता है। हर, विधि, इन्द्र, सुरो और असुरो के पति, रमापति, गुरु, दयानिधि और विविध अन्य राजाओ से घेरे अर्जुन के रथ पर चढे। ६८-७५ वडी सेना निकली और आगे वढती गयी। अनेक प्रकार के वाद्यो का वजना प्रारम्भ हुआ। आकाश पर देखनेवाले देव भर गये और सूर्यबिम्व धूल से ढक गया। लोकेश ने अर्जुन की ओर देखकर कहा— 'तुम जानते हो कि सुयोधन को छोडकर इसका (कर्ण का) और कोई आश्रय नहीं है। इसी ने तो पहले अधिक्षेप भी किया था। इसी ने तो छिपकर एक छिपे वाण से अभिमन्यु का धनुप तोड़कर उसको मरवाया। इसी ने तो

ञ्ञुलकु सृष्टिच्चु भरिच्चु संहरि-
च्चिळकुन्न चिल्लीयुगळभगियु ८
अटियारेक्कुरिच्चोरु करुणयु
कठिनदुष्टरोटेळुन्न कोपवु ९
मट्टुमोळिमारिल् वळर्न्न रागवुं
कलह कण्टोरत्भुतरसङ्ङळु १०
चपलन्मारोटु कलर्न्न हासवु-
मेतिरिट्टुन्तोर्क्कु भयङ्करत्ववु ११
पलवुमिङ्ङने नवनवरस-
मिटयिटक्कूटिक्कलर्न्न नेत्रवु १२
मकरकुण्डलं प्रतिबिंबिक्कुन्न-
कविळ्त्तटङ्ङळुं मुखसरोजवुं १३
वियर्प्पुतुळ्ळिकळ् पोटिञ्ञ नासिक
सुमन्दहासवुमधरशोभयु १४
तुळसियु नल्ल सरसिजङ्ङळु-
मिळतायीटुन्न तळिरुकळुमाय् १५
इटकलर्न्नुटनिळकुं मालकळ्
तटयु मुत्तुमालकळुं कौस्तुभ- १६
मणियु चेरुन्न गळवुं चम्मट्टि
पिटिच्चोरु करतलवुं कुङ्कुमं १७
मुळुक्कप्पूशिन तिरुमारुं नल्ल-
निरन्न मञ्ञप्पूत्तुकिलु काञ्चियुं १८

सौन्दर्य, आश्रितो के प्रति करुणा, निष्ठुर दुष्टो के प्रति कोप, मीठी आवाज़वालियो के प्रति प्रेम, युद्ध को देखने के कारण विकसित अद्भुत रस, चापल्यसहितो के प्रति हास, सामना करनेवालो के दिल मे भय, इस प्रकार के नये नये रसों से चमकनेवाली आँखे, मकरकुण्डल का प्रतिबिंब दिखलानेवाले कपोलतट, मुखकमल, ७-१३ पसीने की बूंदो से शोभित नासिका, हल्की मुस्कराहट, अधरो की शोभा, तुलसी, अच्छे-अच्छे कमल और नये-नये पल्लवो से बीच-बीच मे मिश्रित मालाएं, मोती का हार, और कौस्तुभ मणि से विभूपित गरदन, कशा (चाबुक) लिया हुआ हाथ, कुङ्कुम से लिप्त वक्ष.स्थल, पीले पुष्पो का आभूषण, काञ्ची, पादपद्म, इनसे विभूपित उस मणिवर्ण को मैंने रथ के अन्दर बैठे देखा, मानो मेरे

हरियुतहरिहयतनयनें
हरिणवाजिराजितरथोपरि ९२
हरिदश्वात्मजनोटु पोरुवानाय्
वरुन्नतु कण्टु परञ्ञु शल्यरुं। ९३

पार्त्थसारथिवर्ण्णनं

पलरोटुं काणाञ्ञिह चोदिच्चोरु-
वलरिपुसूनुवता सखे ! कर्ण्ण ! १
मुनिकळ्मानसतळिरिलु गोप-
वनितमारुटे मुलत्तटत्तिलु २
इरुन्नरुळुं माधवनु तानुमाय्
परन्न वन्पटनटुविलाम्मारु ३
वरुन्नतु नन्नाय् तेळिञ्ञु काण्क नी।
निरन्नपीलिकळ् निरक्कवे कुत्ति- ४
नेरुकयिल्क्कूट्टित्तिरमोटु कोट्टि
करिमुकिलोत्त चिकुरभारवुं ५
मणिकळ् मिन्नुन्न मणिक्किरीटवु
कुनुकुनच्चिन्तुं कुरुळनिरतन्मेल् ६
ननुननप्पोटिञ्ञोरु पोटि पट्टि-
त्तिलकवुमोट्टु वियर्प्पिनाल् नन- ७

अरुण के साथ स्पष्ट उदय हुआ हो। हरिण वाजियो (सफेद घोड़ो) से युक्त रथ पर बैठे। हरि (कृष्ण) सहित हरिहय (इन्द्र) के पुत्र (अर्जुन) को हरिदश्व (सूर्य) के पुत्र के साथ लड़ने आते देखकर शल्य बोले। ८८-९३

पार्थसारथि का वर्णन

हे सखे कर्ण ! जिसे न देखकर तुम वहुतो से पूँछ रहे थे वह वलरिपु (इन्द्र) का पुत्र यह आ रहा है। मुनियो के चित्तपल्लवो मे और गोपियो के स्तनतटो पर विराजमान माधव के साथ फैली हुई वड़ी सेना के वीच में से निकल रहा है, ठीक से देख लो। घनश्याम केशभार जिसमे शोभायमान मोरपंख चारो ओर सजाये गये है, चमकनेवाले मणियो का वना किरीट, महीन पिसे हुए चूर्ण का तिलक जो पसीने से कुछ भीग गया है, लोकों की सृष्टि, स्थिति १-६ और संहार करनेवाली भौहो का

तळर्च्चं भीमनु पेरुततिन्नेरे
तेंळिक्क तेरेतु मटिक्करुतिप्पोळ् । ३०
अतुकेट्टु तेरुमतिन्नेरेकूट्टि
मथुरेशन्तानु विजयनुं चोन्नान्— ३१
युधिष्ठिरक्केतु वशक्केटुमिल्ल
वधिक्कणं भानुतनयनेयिप्पो- ३२
ळनुग्रहिक्कणमतिनु भीम ये-
न्नटित्तार् कूप्पिनानटुत्तु फल्गुनन् । ३३
अनुक्षणमवननुज्ञयु चोन्नान्
कनक्के वेगत्तिल् तिरिच्चु पार्त्थनुं । ३४
त्रिभुवनंकूटे नटुङ्ङिटुं शंख-
ध्वनियुं तेरुरुळोलियुं वाद्यवु ३५
अनिलनन्दननलरुं नादवु-
मनुपममाय गुणनिनादवुं । ३६
त्वरितमिन्द्रनन्दननटुत्तप्पोळ्
कुरुवरसैन्यं तिरिच्चु मण्टिनार् । ३७
अतु कण्टप्पोळे कृपर् भोजादिक-
ळेतित्तारोटायिकनोरुवरुमिप्पोळ् । ३८
ओरु तेराळिये विजयनुळ्ळुते-
न्नरिवरर् चुळन्नणञ्ञु पोर्चेय्तार् । ३९

थका हुआ है, अव रथ को उनकी ओर बढाओ, विलम्व न करो। यह सुनकर मयुरेश (कृष्ण) ने रथ को उसी ओर चलाया। तव अर्जुन ने कहा— 'युधिष्ठिर को कोई दिक्कत नही है। अव कर्ण का वध होना चाहिये हे भीम! उसके लिए मुझे अनुग्रह दो' ऐसा कहता हुआ अर्जुन निकट जाकर चरणो पडा। २७-३३ उसी क्षण भीम ने आज्ञा दी और अर्जुन तुरन्त ही लौटा। त्रिभुवन को भी कँपानेवाली शखध्वनि, रथचक्रो के घूमने का नाद, वाद्यघोप, अनिलनन्दन (भीम) के गरजने का नाद और अनुपम ज्याघोष सुनाई दिये। जव अर्जुन लड़ने के लिए निकट आया तव कौरवो की सेना लौटकर भागी। यह देखकर कृप, भोज आदियो ने 'अव कोई न भागो' ऐसा कहते हुए सामना किया। 'अव अर्जुन ही एक रथी रह गया' ऐसा समझकर शत्रुप्रमुखो ने उसे घेरकर युद्ध किया। शरो, शक्तियो और जलते हुए चक्रो से रथपीठ भर गया और ढक गया। ३४-४० कृष्ण और अर्जुन दोनो घायल हुए और

पदसरोरुहयुगवुमेन्नुटे
हृदयंतन्निलङ्ङिरिक्कुपोलेय- १९
म्मणिरथंतन्निलक कुळुक्कवे
मणिवर्ण्णन्तन्नेत्तेळिञ्ञु कण्टु ञान् । २०
विळयाटीटेण विजयनुमायि-
ट्टिळकार्ते निन्नु कुरञ्ञोरुनेर । २१
तेळिक्क तेरेन्नु परञ्ञु कर्ण्णनु
कळिच्चु विल्लोळि वळर्त्तिनानप्पोळ् । २२
कुरुवरन्तानुमिळयवर्कळु
गुरुतनयनुं कृपरुं भोजनुं २३
अणञ्ञु बाणङ्ङळ् पोळिञ्ञु माधवन्-
तिरुमेयतन्मेलु विजयन्तन्मेलु । २४
अरिकळेशरनिकरमेय्तुट-
नरिञ्ञरिञ्ञिट्टु नटन्नानर्ज्जुनन् । २५
अकमे भीतिपूण्टकन्नु कौरव-
रकलेक्कण्टु भीमने विजयनुं । २६
नरकरिरथतुरगपंक्तिकळ्
नटुविल्प्पुक्कुकोण्टनिलनन्दनन् २७
पेरुमारुन्नतुमरिकुलान्तकन्
पलरोटुं पोरुतिटर्पेटुन्नतुं २८
परिचोटु कण्टु पुरन्दरात्मजन्
परन्पुरुषनोटिवण्णं चोल्लिनान्— २९

ही हृदय के अन्दर उसे ठडा करते हुए वैठे हो ! १४-२० कम से कम थोड़ी देर के लिए विजय (अर्जुन) के साथ डटकर खेलना चाहिये। 'अच्छा तो रथ चलाओ' कर्ण ने कहा और खेल मे अपने धनुष की डोरी की ऊँची ध्वनि निकाली। दुर्योधन और उसके छोटे भाई अश्वत्थामा, कृप और भोज ने माधव के शरीर पर और अर्जुन के शरीर पर शरवर्पा की। अर्जुन तो शत्रुओ को शरवर्पा से नाश करता हुआ आगे वढा। भय के कारण कौरव कुछ अलग हुए और अर्जुन ने भीम को दूर से देखा। २१-२६ पैदल सैनिको, हाथियो, घोडो और रथो की पक्तियो के वीच मे घुसकर भीम का घूमना और उस शत्रुनाशक का वहुतों से युद्ध करना देखकर अर्जुन ने पर पुरुष से इस प्रकार कहा— भीम वहुत

अतुलविक्रममुटय सात्यकि
नकुलनुं पिन्नेस्सहदेवन्तानु ५१
द्रुपदपुत्रितन् तनयवीररुं
विजयन्तानुमायणञ्ञु पोर्च्चेय्तार् । ५२
अतिनवरोटु पोरुतु कर्णनु-
मतुकण्टेल्लारु तेळिञ्ञु वाळ्त्तिनार् । ५३
पवननुं तीयुमोरुमिच्चपोले
पवनपुत्रनु विजयनुंकूटि
पोरुतोटुक्किनाररिकळेयोक्क ५४
हर ! हर ! हर ! शिव ! शिवयेन्नु
परञ्ञु नारदन् तेळिञ्ञितेटवुं । ५५

दुश्शासनवधं

पटय्क्कु सङ्कट पेरुत्ततु कण्टु
कटुक्केन्नु दुश्शासननुमेत्तिनान् । १
मदिच्चोरानयोटेतिर्त्त सिहत्ते-
क्कणक्के मारुति कुतिच्चुपाञ्ञुटन् २
कौतिच्चिरुन्नितोन्नटुत्तु काण्मान् आन्
चतिक्कोल्लायिनिप्पोटुक्कनवे नी । ३
करुत्तु काट्टुवान् मनस्सुण्टिन्नेन्टे
करत्तिन्टे फल वरुत्तणमेटो । ४

लड़े। कर्ण ने उनका सामना किया। यह देखकर सबने प्रसन्न होकर प्रशसा की। वायु और अग्नि के सहयोग के समान भीम और अर्जुन ने, सहयोग करते हुए, लड़े और सभी शत्रुओ को समाप्त कर दिया। हर ! हर ! शिव ! शिव ! ऐसा कहता हुआ नारद प्रसन्न हुआ। ४८-५५

दुश्शासन का वध

अपनी सेना को संकट मे पाकर झट से दुश्शासन वहाँ पहुँचा। मत्त हाथी का सामना करनेवाले सिंह के समान भीम कूदकर आगे बढ़ा और बोला—तुम्हे निकट से देखने के लिए मैं तरस रहा था अब मुझे तुम धोखा न दो। आज मेरा जी चाहता है कि मै अपनी शक्ति दिखलाऊँ और अपने इस हाथ का फल पैदा करूँ। पर्वत के ऊपर जिस प्रकार वर्षा होती

शरङ्ङळ् शक्तिकळेरिञ्ञ चक्रङ्ङळ्
चोरिञ्ञु तेर्त्तटं निउञ्ञु मूटीते । ४०
मुउिञ्ञितबुजाक्षनु किरीटिक्कु
करिञ्ञु पाञ्चालादिकळ्क्कु कान्तियुं । ४१
जनकनेक्काळुमधिकं वेगत्ति-
लनिलनन्दननटुत्तानन्नेरं । ४२
वळर्न्न नीलमामलपोले भीमन्
वळञ्ञ वन्पटनटुवे पाञ्ञवन् ४३
करिकळेयुं वन्कुतिरकळेयुं
नरवररथङ्ङळेयुमोक्कवे ४४
गदकोण्टु तच्चुपोटिच्चु कोन्नुको-
न्नुदधियिलोळमोळुकि शोणित । ४५
पुरन्दरवायुतनयन्मारुटे
शरगदकळ्कोण्टुटल् मुउियाते ४६
ओरुवरुमिल्ल कुरुवरन्मारिल्
शरणमारेन्नु परवशन्मारायि- ४७
त्तरणिनन्दननरिकिलायिते ।
शरङ्ङळ् तूकिनानवनुमन्नेरं । ४८
करङ्ङळु कालु मुउिञ्ञु पाण्डवर्
परन्नुचेन्नतु मुटङ्ङीतन्नेर । ४९
नटिच्चु पाञ्चालनरवरन्मारु-
मट्टु केकयनृपतिवीररु । ५०

पाञ्चाल आदियो की कान्ति काली पड़ गयी। अपने जनक (वायु) से भी अधिक वेग से भीम आगे बढा। एक ऊँचे नीले पहाड के समान भीम हाथियो, बड़े बडे घोडो, नरवरो और रथो को अपनी गदा से फैली हुई सेना के वीच मे घुसकर मार कर चूर कर दिया और खून सागर तक वही। कौरवो मे कोई भी न था जो अर्जुन और भीम के शरो या गदा से घायल न हुआ हो। सब परेशान हुए कि कहाँ शरण ले। ४१-४७ सब कर्ण के पास पहुँचे। उसने भी उस समय शरवर्षा की। पाण्डवो के हाथ पैर टूटने से वे कुछ असफल हुए। पाञ्चाल के और केकय के नृपतिवीर साभिमान युद्ध के लिए निकट पहुँचे। अनुपम विक्रमवाला सात्यकि नकुल और सहदेव द्रौपदी के पुत्रवीर और स्वय अर्जुन डटकर

एल्कणमाशु पुरमतिल्कप्पुऱम्
भास्करन्मारोटु रुद्रसमूहवु ५८
पोर् क्कॉरुमिच्चुऱप्पिच्चु निन्नीटुविन्
पार्क्कणमोटरुतारुमॉरुत्तरुम् । ५९
अष्टवसुक्कळ् मरुत्तुकळ्तम्मोटु
तट्टुकेटुण्टामिटत्तटुत्तीटणम् । ६०
अश्विनीदेवन्मार् विश्वदेवन्मारु
पश्चाल् भय तीर्न्नुऱप्पिच्चुनिर्त्तणम् । ६१
व्यूहमिळकुन्नतागु मूक्षिक्कणं ।
हूहूसमन्वित हाहा निरन्तरं ६२
पत्तुनूऱायिर कोटि गन्धर्व्वन्मार्
चित्तरथनोटु मुम्पिलॅतिर्क्कणम् । ६३
यक्षवीरन्मारॉरुमिच्चु निल्कण
पक्षभागङ्ङळॅ रक्षिच्चिळकातॅ । ६४
माणिभद्रन् धृतराष्ट्रन् सुवीरनुं
त्राणनिपुणनाकु पूर्ण्णभद्रनु ६५
चाञ्चल्यमेतुमिल्लात विरूपाक्षन्
वाञ्चिकनाय पटयाळिवीरनु ६६
चण्डपराक्रमनाय विभण्डकन्
भिण्डिपालायुधन् दण्डवरायुधन् ६७

का सुहृत्—महेश, चन्द्र, महेश का पुत्र सेनापति कार्तिकेय—ये सब नगर के उस तरफ शत्रु का सामना करे। हे आदित्यगण और रुद्रगण ! एक होकर युद्ध के लिए स्थिर खडे हो जाओ। सब डट जायँ, भागने का कोई नाम न ले। आठ वसु, मरुतो के साथ, वहा पहुंच जायॅ, जहॉ पराजय की सभावना हो। दोनो अश्विनी देव और विश्वेदेव भय छोड़कर पीछे स्थिर होकर रोके। यह देखते रहे कि अपना व्यूह कही हिल न जाय। हूहू सहित हाहा आदि। ५३-६२ सौ-दस हजार[1] कोटि गन्धर्व चित्तरथ के नेतृत्व मे आगे सामना करे। यक्षो के वीर एक होकर खड़े हो जायँ, और दोनो बगलो की रक्षा करे, उनको हिलने न दे। मणिभद्र, धृतराष्ट्र, सुवीर, रक्षा करने मे कुशल पूर्णभद्र, बिलकुल चाञ्चल्यरहित विरूपाक्ष, सैनिको मे वीर वाञ्चिक, चण्ड पराक्रम सहित

1 दस लाख।

गिरिवरोपरि वरिपिक्कुपोलें
शरवरिपंचेय्तिरुवरुमोप्पम् ५
पोरुतपोरुनन् कोटुम चोल्लुवा-
नरुतरुतेतुमनिलनन्दनन् ६
विरविनोटुकूटट्टु चोल्लिनान्—
वरिक वन्मद पेरिय दुर्म्मते ! ७
वरिमिळियाळा द्रुपदपुत्रितन्-
पुरिकुळल् चुटिप्पिटिच्चिवळिच्चतु ८
तरुतेरत्तुकिलळिच्चतुमोरो-
परिभव अङ्ङळ्ककप्पेटीच्चतुं ९
मऱन्नतिल्ल आनतिनु निन्नुटल्
नरसुरासुरर् पलरु काणवे १०
अटलिटक्कुत्तिप्पोटिप्पनिप्पोळें-
न्निटिवेट्टुवण्णं पोटुपोटेयात्तान् । ११
कुतिरकळक्कोन्नोटुक्किरसूतनें-
क्कोलचेय्तु तेरुमळिच्चान् मारुति । १२
दृढप्रज्ञन् दुश्शासननु कोपमो-
टट्टु शक्तिकळ् शरङ्ङळ् चक्रङ्ङळ् १३
पोळिञ्ञु भीमन्मेय् मुऱिच्चु तेरतु-
मळिच्चु चाटियोन्निटिपोलेयात्तान् । १४

है । उसी प्रकार दोनो ने वरावर शरवर्षा की । उस प्रकार के इस युद्ध की तीव्रता का वर्णन करना असभव है । १-६ भीम उसके पास पहुँचकर वोला— "आओ ! हे वढे चढे मदवाले दुर्मति ! सुलोचना द्रौपदी के केश-पाश को पकडकर जो खीचा और जल्दी-जल्दी उसका वस्त्र जो उतारा और जो अन्य अपमान हमलोगो को सहना पडा वह सव में भूला नही हूँ । उसके वदले मे अव नर, सुर और असुरो के देखते ही मैं तुम्हारे शरीर को मार-मारकर चूर कर दूँगा" ऐसा भीम ने स्तनित के समान गरजा । सभी घोड़ो को समाप्त करके और सारथि का भी वध करके भीम ने रथ को खोल दिया । ७-१२ दृढप्रज्ञ दुश्शासन ने भी क्रुद्ध होकर और निकट आकर और शक्तियो, शरो और चक्रो का प्रयोग करके भीम के शरीर को घायल किया और रथ को खोलकर और उसपर से कूद उतरकर स्तनित के समान गरजा । दोनो ने अपनी गदा उठायी । गरजा । उन दोनो का जो आपस मे साभिमान युद्ध हुआ उसके समान कोई युद्ध इधर कही न

अँटुत्तितु गद पुनरिरुवरुं
नटिच्चु तङ्ङळिल् पॊरुततुपोलॆ १५
अटुत्तॊरु युद्धं नटिच्चुण्टायति-
ल्लटर्क्कळमॊक्कप्पॊटिच्चिरुवरु १६
अटिच्चारन्योन्य तटुत्तार् पिन्नॆयु ।
कॊटुत्तुकॊळ्ळुवान् पळुतु नोक्कियु १७
कॊटुत्तु कॊळ्ळातॆ कळिवान् नोक्कियुं ।
तटुत्तु वाङ्ङियुमटुत्तु तूङ्ङियु १८
नटिच्चिरुवरु पॊरुततुनेर ।
पॊटिच्चितु दुश्शासननुटॆ गद १९
पिटिच्चानन्तरमणञ्ञु भीमनॆ-
क्कटिच्चु मुष्टिकळ् चुरुट्टिक्कुत्तियु २०
पॊटिच्चॊळुकिन रुधिरं कैकॊण्टु
वटिच्चुवीळ्त्तियुं मिळिकळिल्च्चोर २१
तुटच्चु मुष्टिकॊण्टिटिच्चु पल्लुकळ्
कटिच्चुमूळियिल् पतिच्चुमप्पॊळॆ २२
तिरिच्चु कन्प कॆट्टियु चरणङ्ङळ्
ञॆरिच्चु कैत्तल तिरिच्चुमाकुलाल् २३
पऱिच्चुमूक्कॊटु तलमुटि चोर
तॆऱिच्चु नालुदिक्किलु चितऱियुं २४
उरत्तॊटु पाञ्ञुमुरस्सुतङ्ङळिल् ।
करत्तॊटुकरमुरच्चुमूळियिल् २५

हुआ था। दोनो ने सारी युद्धभूमि को नष्ट कर दिया। दोनो ने आपस मे मारा और मार को रोका भी। दोनो मारने के लिये एक-दूसरे का छिद्र देख रहे थे और दोनो देकर न लेने का उपाय देखते थे। रोकना और पीछे हटना, निकट से भिडजाना इस प्रकार दोनो ने उस समय युद्ध किया। जब भीम ने दुश्शसन की गदा चूर कर दी तब उसने भीम को पकड लिया और दाँतो से काटा, मुट्ठी से घूसे मारे। १३-२० जो रक्त बह रहा था उसे हाथ से गिरा दिया और आँखो की बहती खून को पोँछा। मुट्ठियो से मारा, दाँत पीसा, दोनो जमीन पर गिरे, तुरन्त ही उठकर बडे उल्लास के साथ एक-दूसरे के पैरो को जोर से दबाया, हाथ को घुमाया, और केशो को जोर से पकड़ा। रक्त निकलकर चारो ओर

उरूच्चु निल्क्कयु चविट्टुकोण्टुपो-
य्तरिच्चुवीणुटनुरुण्टुमप्पोळे २६
विरण्टेळुन्नेट्टु तिरण्टकोपत्ताल् ।
उरुण्टु कण्णिण पोटियाल् मूटियु २७
कळुत्तिल् कूर्त्तुमूर्त्तिरिक्कुन्न नख
पतिच्चु वाय्पोटु परिच्चुमेन्नयुं २८
भयं वरुमारु कलह्विक्कुनेरं
जयवरु दुश्शासननेन्नु चिलर् २९
जयं वरुं वृकोदरनेन्नु चिलर्
भयकळञ्ञु काण्केटोयेन्नु चिलर् ३०
भयवरुं कण्टालिनिक्केन्नु चिलर्
भयङ्करमितु समरमेन्नेल्ला ३१
परञ्ञु तङ्ङळिल् विवदिक्कुनेर
कुरञ्ञोन्नु वाङ्ङिक्कळञ्ञु मारुति । ३२
चुवट्टिल् मारिनिन्नटि रण्टु वारि
च्चुवट्टिलाक्कि मेल्क्करयेरिक्कर- ३३
ममर्त्तु नन्नायिच्चवुट्टिनिन्नुको-
ण्टमर्त्त्यमर्त्त्यन्मार् पलरु काणवे ३४
चळिप्पु कैविट्टङ्ङेटुत्तु कैवाळाल्
पोळिच्चु मारिट नखङ्ङळेक्कोण्टु ३५

जाकर विखरा। दोनो वेग से दौडे और उनके वक्षःस्थल भिड गये। दोनो ने एक-दूसरे के हाथ रगड लिया। फिर दोनो जमीन पर डटकर खड़े हो गये। लात खाकर गिरे और लुडके। फिर उठकर वढे-चढ़े कोप से आँखे घुमाने लगे जो धूल से ढक गयी। २१-२७ लम्बी और नुकीली नखो को एक-दूसरे के गरदन पर चुभा दी। जब दोनो इस प्रकार लड़ रहे थे तब कुछ लोगो ने कहा 'दुश्शासन जीतेगा' औरो ने कहा 'भीम जीतेगा'। कोई-कोई कहता था "डर छोड़कर देखो यार!" और कोई कहता था "देखने मे डर जाता हूँ"। यह युद्ध वस्तुत. भयङ्कर है। जब लोग इस प्रकार वाद कर रहे थे तब भीम कुछ पीछे हटा। भीम दुश्शासन के दोनो पैरो को मिलाकर उन पर चढा। उसके हाथो को अपने पैर से दबाकर, मनुष्यो और देवो के देखते ही, सकोच छोडकर, अपने खड्ग से उसके छाती को फाडा। २८-३५ और

पोट्टुपोट्टेप्पोटिच्चुटनुटनुटन्
चुटुचुटत्तिळच्चरुवियार्पोले ३६
तुटुतुटे वरु रुधिरपूरत्ते-
क्कुटुकुटेक्कुटिच्चलरिच्चाटियु । ३७
पेरुवेळ्ळंपोले वरुन्न शोणित-
मोरुतुळ्ळिपोलु पुरत्तुपोकाते । ३८
कविणुनन्नायिक्किटन्नुकोण्टुटन्
कविळ्त्तटं नन्नाय निरच्चिरक्कियुं । ३९
मदिच्चु मारुति चिरिच्चु चोल्लिनान्
मतिर्त्तितु नावुमुदरवुमेल्लां । ४०
कुटल्मालमेल्लेन्नेटुत्तुकोण्टुटन्
तुटल्मालपोले कळुत्तिलिट्टुको- ४१
ण्टटल्निलमेल्लां पोटिपेटुवण्ण-
मुटनुटन् चाटित्तुटमेले तच्चुं । ४२
पशुसमन्मार् पाण्डवन्मारेन्नल्लो
पऱञ्ञितु मुन्नं पलरुं केळ्क्कवे ४३
परिहासत्तोटु मदिच्चु कैकोट्टि-
च्चिरिच्चु कूत्ताटि नटन्नु निङ्ङळुं । ४४
पशुसमन्मार् कौरवरेन्निक्काल
पऱञ्ञु ञानुतानुमिता कूत्ताटुन्नेन् । ४५
इनियिक्कळ्ळन्मार्कुलत्तिल् मूत्तव-
निनिक्कोरु नाळेक्कळिक्कुण्टायवरुं । ४६

अपने नखों से चीरा। उस समय जो गरम-गरम रक्त धाराप्रवाह निकला उसे भीम ने सोल्लास पिया। तदनन्तर गरजा और कूदा। बाढ़ की तरह निकलते रक्त की एक बूँद को भी बाहर न गिरने दिया। झुककर और लेटकर और मुँह भर-भर कर उसे पी लिया। और अपने मद मे हँसता हुआ बोला— "अब मेरी जीभ और पेट दोनो तृप्त है" आन्त्रमाला को धीरे-धीरे निकालकर पुष्पमाला के समान गले मे पहनकर ऐसा नाचा कि सारी युद्धभूमि चूर-चूर हो जाय। फिर उसके जाँघो पर मारा। ३६-४२ और कहा— पहले तुम लोगों ने बहुतो के सामने "पाण्डव पशु के समान है" ऐसा कहकर उपहास किया और अपने मद मे ताली बजाते हुए हँसा और नाचा। अब मै "कौरव पशु के समान

पोरुतवनेयुमोट्टुक्कि राज्यवु
पोरुळु नल्कुवनरचनुतन्ने । ४७
पोट्टुक्कनवेयेन्नुरत्तु मारुति
नटिच्च नर्त्तकियोटुकलर्न्नो-रु- ४८
नटप्रवरनेक्कणक्के मत्तनाय्
नरहरि हिरण्यनेप्पिळर्न्नो-रु- ४९
कुरुतियुमणिञ्ञरिप्पतुपोले
नटक्कुन्ननेरमटल्क्कळमेल्ला
पोटिच्चु माटारेयोट्टुक्किवेगत्तिल् । ५०
कुरुवरसहोदरन्मारुं वन्नु-
पोरुतार् मारुतियवरेयु कोन्नु ५१
पेरुत्त दु:खवु भयवु कैक्कोण्टु
कुरुक्कळोक्कवे तिरिच्चुमण्टिनार् । ५२
अटुत्तितु सेनापतितनयना-
पटुत्वमेरिटु वृषसेनन् वीरन् । ५३
अवनोटु युद्धं कोटुतायचेय्तुटन्
पवननन्दनन् तळर्न्नितु चेम्मे । ५४
अकलुंमुन्ने वन्नटुत्तानन्नेर
नकुलनु वाळुपरिचयुमायि- ५५
प्पकलवनुटे मकनुमन्पिनाल्
शकलिच्चान् वाळुंपरिचयुमेल्ला । ५६

है" ऐसा कहता हुआ नाच रहा हूँ। आगे इन चोरो के कुल के ज्येष्ठ से एक दिन मुझे खेलना होगा। उसे भी युद्ध मे मारकर राज्य और सम्पत्ति को राजा (युधिष्ठिर) को तुरन्त ही दे दूँगा, ऐसा भीम ने कहा। नाचनेवाली नर्तकी का साथ देने वाले नटप्रवर के समान और हिरण्यकशिपु की छाती फाड़कर उसके रक्त से विराजमान नरसिंह के समान भीम चलने लगा और उसने रणभूमि को नष्ट करके जल्दी शत्रुओ को विध्वस्त कर दिया। ४३-५० तदनन्तर कौरव भाई आये और भीम ने उनको भी समाप्त कर दिया। अत्यन्त दु:खित और भयभीत होकर सभी कौरव लौटकर भागे। तब सेनापति का पुत्र और अत्यन्त निपुण वीर वृषसेन निकट आया। उससे तीव्र युद्ध करता हुआ पवन-नन्दन (भीम) थक गया। उसके हटने से पहले ही अपनी तलवार और चर्म लिये नकुल निकट पहुँचा। सूर्यपुत्र (कर्ण) ने अपने बाण से

नकुलनुवन्न परिभवंकण्टों-
रतुलविक्रममुटय पाञ्चालन् ५७
अरिकत्तुतन्ने मरुमक्कळैव-
रौरुमिच्चुण्टेन्नौरुरप्पुतन्नाले ५८
विरविनोटु पाञ्अटुत्तानन्नेर-
मरिकळ्कूट्टत्तिलकप्पेट्टानवन् । ५९
अरिञ्ञुपोमुटल् शरङ्ङळालेन्न-
परवशतयोटटुत्तु सात्यकि । ६०
इटियोटुनेराय् मुळङ्ङु नादत्तो-
टिटकलर्न्नितु पटयतुनेर । ६१
वृषसेनन् कर्णन् कृपरुं भोजनु
विषधरद्ध्वजन् गुरुतनयनु ६२
मरिक्कणं पक्षे जयिक्कणमेन्न-
ङ्ङुरुच्चु नन्नायि श्रमिच्चु पोर्चेय्तार् । ६३
नकुलन् पाञ्चालियुटे तनयन्मार्
पकलवन्नुनेरियन्न पाञ्चालन् ६४
अनिलनन्दननरिय सात्यकि-
यनुपमनाय विजयनुमायि ६५
कलहिक्कुंनेरं वृषसेनन् वीरन्
पल हयङ्ङळेक्कोलचेय्तु पिन्ने । ६६

तलवार् और चर्म को टुकड़ा-टुकड़ा कर दिया। ५१-५६ नकुल का हार देखकर अतुलविक्रम पाञ्चाल, पाँचो भाञ्जो के निकट होने के भरोसे उस समय दौडकर निकट पहुँचा, पर शत्रुओ के बीच मे फँस गया। तब यह समझकर कि वह शरो से कट जायगा सात्यकि विश्वास के साथ निकट पहुँचा। उस समय स्तनित के समान सिहनाद करती हुई दोनो सेनाएँ मिल गयी। वृषसेन, कर्ण, कृप, भोज, नागध्वज (दुर्योधन) गुरुपुत्र (अश्वत्थामा) इन सबने 'जान देकर भी जीतना चाहिये' इस दृढसकल्प से अच्छी तरह से युद्ध किया। ५७-६३ नकुल, पाञ्चाली के पुत्र, सूर्य के समान पाञ्चाल, भीम की तरह श्रेष्ठ सात्यकि और अनुपम अर्जुन के साथ युद्ध करते समय वीर वृषसेन ने अनेक घोडो को समाप्त कर दिया। तत्पश्चात् अनेक विजयी योद्धाओं के शरीर को टुकडे करके, भीम के रथ को शरो से चूर करके सिहनाद किया। तब अर्जुन ने कहा— 'तुमने पर्याप्त कुकर्म किये है, बहुत अच्छा।' एक अच्छा शर

सकललोकेशविजयन्मारुटल्
शकलनंचेय्तु पवनजन्तन्टे
रथवुमेय्तोक्कप्पोटिच्चलरुन्पोळ् ६७
पेरुतु नी चेय्त करुमनयेल्लां
पेरिके नन्नेन्नु परञ्ञु पार्त्थनुं । ६८
ओरु शरं तेरञ्ञेटुत्ततुकोण्टु
विरवोटु तलयरुत्तानन्नेर ६९
अटुत्तु कर्ण्णनु विजयनोटप्पो-
ळेटुत्तु वाणङ्ङळ् तोटुत्तुटनुटन् ७०
कोटुत्तानर्ज्जुननिनतनयनु
पटुत्वमोटुटन् मुरिच्चतिल्प्पर ७१
चोरिञ्ञानन्पुकळ् मळपेय्युंपोले ।
निरञ्ञु पोर्क्कळमिटकलर्न्नप्पोळ् ७२
मरञ्ञु दिक्कुकळ् तरणिबिंबवु
परञ्ञु कण्टुनिन्नवरुं तङ्ङळिल् ७३
विजय कर्ण्णनु वरुमेन्नु चिलर्
विजयं पार्त्थनु वरुमेन्नु चिलर् । ७४
शिवनोटु परञ्ञितु विरिञ्चनु-
मिविटे पार्त्थनु वरुमत्रे जयं । ७५
पलरुमिङ्ङने परयुनेरत्तु
कलहवुमतिभयङ्करमायि । ७६
मलकळुमलकटलुमाशर-
कुलवुमञ्चिटुपटि हनुमानु ७७

चुनके उससे ढग से सिर काट डाला । ६४-६९ तव कर्ण अर्जुन के पास आया, अर्जुन ने शरो को लगातार चढाकर चलाया । कर्ण ने तो कुशलता के साथ सवको नष्ट कर दिया और अपनी ओर से शरवर्षा की । जव दोनो मिल गये तो रणभूमि भर गयी । दिशाएँ छिप गयी और सूर्यविंव अदृश्य हो गया । देखनेवालो मे से आपस मे कुछ लोगो ने इस प्रकार कहा— 'विजय कर्ण की होगी' औरो ने कहा— 'विजय अर्जुन की होगी' । ब्रह्मा ने शिवजी से कहा— 'विजय अर्जुन की ही होगी' । जव लोग इस प्रकार कह रहे थे तव युद्ध अति भयङ्कर हुआ । ७०-७६ उस समय हनुमान् ने भी ऐसा चिल्लाया कि पर्वत, क्षुब्धसागर और

अलरिट्टुन्नितु तेरुतेरेयप्पोळ्
चलितचित्तमोटरच्चु कौरवर् ७८
कुरञ्ञतिल्ल पोर्क्किरुवरुमेतुं ।
परञ्ञु शल्यरोटिनतनयनुं— ७९
पटयोटुकूटेप्पोरुतु फल्गुन-
नटलिलेन्नेक्कोन्नोटुक्किटुन्नाकिल् ८०
प्रवृत्ति शेषमेन्ततु चोल्केन्नप्पोळ्
प्रवृद्धतापेन परञ्ञु शल्यरुं । ८१
अतु वरुन्नाकिलनन्तरं यदु-
पतिययु धनञ्जयनयु कोन्नु ८२
जयं कुरुकुलवरनु नल्कुवन्
भय कळक भास्करतनय ! नी । ८३
अरुणनन्दननतु केट्टनेर-
मरुणनेत्रमोटणञ्ञानन्नेर । ८४
रघुकुलवरनिशिचरवर-
रणनिशमनमनुभविप्पिप्पान् ८५
विबुधनायकतनयनन्नेर
विबुधकळधिपतियोटु चोन्नान् । ८६
जय जगत्पते ! जय जनार्द्दन !
जय नारायण ! जय मधुरिपो ! ८७
तरणिनन्दनन् वधिक्किलेन्न निन्-
तिरुवटियेन्तु निनच्चतु पिन्ने ? ८८

राक्षसगण काँपने लगे। कौरव चलितचित्त होकर देखने लगे और कोई भी पक्ष युद्ध मे कम न हुआ। कर्ण ने शल्य से पूँछा— 'सेना के साथ लडकर अगर अर्जुन युद्ध मे मेरा वध करेगा तो उसके बाद क्या होगा, मुझे बतला दो।' शल्य ने इस प्रकार उत्तर दिया। अगर ऐसा होगा तो यदुपति (कृष्ण) को और धनञ्जय को मारकर मै कुरुकुलवर (दुर्योधन) की विजय करा दूँगा। हे भास्करतनय ! डरो मत। ७७-८३ यह सुनकर कर्ण आँखे लालकरके लड़ने लगा। रघुकुलवर और रावण के युद्ध के दर्शन का अनुभव कराने के लिए विबुधनायक (इन्द्र) का पुत्र (अर्जुन) उस समय देवो के पति से बोला— हे जगत्पते ! हे जनार्दन ! तुम्हारी जय हो ! हे नारायण ! हे मधुरिपो ! तुम्हारी जय हो !

अरुळिच्चेय्यणमटियनोटत्ते-
न्नुटने जिष्णुवुं पड़ञ्ञतुनेरं ८९
रिपुकुलत्ते आनटयेस्सहरि-
च्चवनि धर्म्मजनुतनिक्कु नल्कुवन् । ९०
अवनुमन्नेरं चरणतारिल् वी-
णवनतनायिट्टुणर्त्तिच्चीटिनान् । ९१
अतुकूटाते आनवनेक्कोल्लुवा-
ननुज्ञ निन्तिरुवटियरुळणं । ९२
मुरुकेक्कूट्टिनान् मुररिपु तेरु
कुड़वु कूटातेयटुत्तु कर्ण्णनुं । ९३
मुड़िञ्ञितन्पुकोण्टुटलिरुवर्क्कु
मुड़मुड़यायिच्चमञ्ञु नारिमार् । ९४
शरशकलितकरितुरगङ्ङळ्
करचरणमट्टुटनुटन् वीणुं । ९५
मळपेय्युंपोले पोळिञ्ञु बाणवु
पुळकळेप्पोलेयोळुकि चोरयु । ९६
हरि हरि हरि हरि हरियेन्नु
शिव शिव शिव शिव शिवयेन्नु । ९७
अरुमयोटुकूटट्टु चोल्लियु-
मरुवयर् मेल्निन्निड़ङ्ङिप्पुल्कियु । ९८

अगर कर्ण मेरा वध करेगा तो आगे के लिए पूज्यचरण ने क्या सोचा है ? कृपया वन्दे से बतला दीजिये। जब अर्जुन ने इस प्रकार कहा (तब कृष्ण ने उत्तर दिया) "मारे शत्रुकुल को समाप्त करके मैं भूमि को युधिष्ठिर को दे दूँगा"। ८४-९० तब अर्जुन ने कृष्ण के चरणो पड़कर इस प्रकार निवेदन किया। इसके अतिरिक्त उसको मारने के लिए पूज्यचरण मुझे आज्ञा दे दे। तब मुररिपु (कृष्ण) ने रथ को सजाया और कर्ण भी बिना हिचक के निकट पहुँचा। बाणो से दोनो के शरीर घायल हुए और स्त्रियाँ विलाप करने लगी। शरों से कटे हाथी और घोडे हाथ-पैर टूटने से गिरे। वर्षा की तरह बाण गिरे और नदी के समान रक्त बहा। निकट आकर कुछ लोगो ने अगर हरि हरि हरि हरि हरि कहा तो औरो ने शिव शिव शिव शिव शिव कहा। अपसराओ ने आकाश से उतरकर स्वागत किया। ९१-९८ जल्दी-जल्दी मरनेवाले वीरो का पूज्य

तॆरुतॆरॆ वीरर् मरिक्कुन्नोरुटॆ
पॆरुवऴियायिच्चमञ्ञु भास्करन्-
तिरुवटियुटलन्टुवतुनेर । ९९
तॆरिञ्ञु वाणङ्ङळॆटुत्तु कर्ण्णनु-
मॆरिञ्ञकोपमोटटुत्तानन्नेर । १००
प्रळयकालत्तु दिनकरबिव-
मळविल्लातोळमुदिच्चतुपोलॆ १०१
त्रिभुवनमॊक्क दहिप्पान् कल्पान्त-
दहननुज्ज्वलिच्चणयुन्नपोलॆ । १०२
अटुत्ततुनेरमतिनुटॆ नेरे
प्रळयकालानुगुणमरुदनु- १०३
गतघनाघननिभकळेबर-
प्रियसखियाय धनञ्जयनोटु १०४
शरमयासार तुटङ्ङि प्लावन-
करन्मारायितु शिव ! शिव ! चित्र ! १०५
दिनकरसुतशरनिकरङ्ङळ्
शमन चॆय्युन्न सुरपतिसुत- १०६
शरवरिषवु दहिच्चीटुवण्ण-
मॆरियुमस्त्रवु पॊऴिञ्ञु कर्ण्णनुं । १०७
अरिञ्ञरिञ्ञव कळञ्ञु फल्गुनन्
चॊरिञ्ञितन्पुकळ् पलतरत्तिलु । १०८
रघुवर निशिचरवररण-
समविलोकनकुतुकमोटुटन् १०९

सूर्य का शरीर मध्य आम रास्ता बन गया। कर्ण ने उस समय जलते हुए कोप से चुने हुए बाण ले लिये। प्रलयकाल के सूर्यबिंब के समान जो निरन्तर और निस्सीम उदय करता है, अथवा सारे त्रिभुवन को जलाने के लिए देदीप्यमान कल्पान्त अग्नि के समान वह निकट आया। तब उसके मुकाबले मे प्रलयकाल के अनुगुण वायु से मिश्रित मेघसमूह के समान शरीरवाले के मित्र अर्जुन के विरुद्ध शरवर्षा प्रारम्भ हुई। हे शिव! शिव! कैसा विचित्र है! ९९-१०५ कर्ण की शरवर्षा को शान्त करनेवाली अर्जुन की शरवर्षा को जलाने के लिए कर्ण ने जलते हुए अस्त्रो का प्रयोग किया। अर्जुन ने उन सबको नष्ट कर

सिद्धविद्याधरगन्धर्वकिन्नर
मृत्युरक्षोगणयक्षभूतादियुं ६८
गुह्यकवीरपिशाचप्रवररुं
युद्धत्तिनेतुमॉरु कुरवॅन्तिये
वद्धरोषेण निल्केणं जयिप्पोळम् । ६९
इत्थं पॅरुम्पट कूट्टि महेन्द्रनु
पक्षिप्रवरन् वरुन्नतिन्मुन्नमे । ७०
ऍल्लामॉरु पक्षि ताने वरुन्नति-
नॅल्लावरुं भयप्पॅट्टु सुरजनम् । ७१
ऍन्नु सूतन् परञ्ञोटिननेरत्तु
मन्दस्मितंचॅय्तु चोदिच्चु शौनकन् ७२
ऍन्तु मरीचिपतापसेन्द्रन्मारो-
टिन्द्रन् पिळ चॅय्ततॅन्तु परयणम् । ७३
इन्द्रापराधं परञ्ञुतरामॅन्नु
वन्दिच्चु सूतनुं चॉल्लित्तुटङ्ङिनान् । ७४

इन्द्रापराधम्

अंभोजसंभवपुत्रन् मरीचिक्कु
संभूतनायॉरु काश्यपतापसन् १

विभण्डक—जिसका आयुध भिण्डिपाल और दण्डवर है, सिद्ध, विद्याधर, गन्धर्व, किन्नर, यमराज, रक्षोगण, यक्ष, भूत आदि, गुह्यकों के वीर, पिशाचों के प्रवर—ये सब बिना किसी न्यूनता के तीव्र कोप के साथ विजय तक युद्ध के लिए खडे हो जायँ।" ६३-६९ इस प्रकार महेन्द्र ने पक्षिप्रवर (गरुड) के आने के पहले ही एक बड़ी सेना इकट्ठा की। एक पक्षी अकेला ही आनेवाला है, यह समझकर सब देवगण डर गये। जब सूतजी ने इस प्रकार कहा तब शौनक ने मन्द मुस्कान के साथ पूछा—"यह बतलाइए, इन्द्र ने मरीचिप तापसो के साथ क्या अपराध किया?" 'इन्द्र का अपराध मैं बतला दूंगा' यह कहकर सूतजी ने बतलाना प्रारंभ किया। ७०-७४

अपराध

अंभोजसंभव[1] (ब्रह्मा ...)रीचि का एक पुत्र हु

1 कमल से उत्पन्न।

मौलिञ्ञतेन्तोन्नु मुकुन्दनेन्नाल-
तोलिञ्ञु केळ्क्कयिल्लवररिञ्ञालुं । १२०
तुण नारायणनवर्क्कळ्क्केप्पोळु
पणियुण्टो पिन्नेज्जयिच्चुकोळ्ळुवान् ? १२१
पटत्तलवन्मारिरुवरेयु ञा-
नटक्कंळमतिन् नटुविल्प्पुक्कुटन् । १२२
अकटुवन् पक्षे परञ्ञालुमेन्नान्
पकच्चुपोकातेयिनियुळ्ळ काल १२३
पिळच्चु मार्ग्गमेन्तिरिक्किलुप्पिन्नेयुं
पिळयरियुन्नोर् वळियेचौल्लुकिल्
उळन्नु पिन्नेयुं वळियेच्चेल्लुन्नोर् १२४
अकक्कुरुन्नेरेत्तेळिञ्ञु धर्म्मजन्
पकुत्तु राज्यवुं निनक्कु तन्निटुं १२५
उटप्पमेरिटुन्नवरुमाय् नन्ना-
यटुत्तवण्णं मेदिनियुं वाणु नी १२६
सुखिच्चिचरिप्पतिनुरय्क्क मानस ।
नशिक्कुमल्लायिकलटलिल् नी तानुं १२७
रवितनयने विजयन् कोल्लुमो-
रपजयमतिनकप्पेटा तानुं । १२८
गुरुसुतनितु परञ्ञतुनेरं
कुरुपतितानुमवनोटु चौन्नान्— १२९

लो कि जो कुछ मुकुन्द कहेगा उसे टालकर वे और कुछ न करेंगे । ११४-१२० नारायण उनके सदैव सहायक है। फिर उनके लिए जीतने में क्या कठिनाई है ? मै युद्धभूमि के बीच मे घुसकर दोनों सेनानायको को अलग करूंगा, अगर तुम कहोगे। यद्यपि गलत रास्ता अपनाया गया तथापि गलती समझनेवालो के कहने से शेष समय अगर सही रास्ता अपनाकर ठीक व्यवहार किया जाय तो युधिष्ठिर प्रसन्न होकर राज्य बाँटकर तुमको तुम्हारा हिस्सा देगा और तुम अपने ही लोगो के साथ पृथिवी का अच्छी तरह से राज करते हुए सुख से रहने का निश्चय कर लो। नही तो युद्ध मे तुम्हारा नाश होगा और अर्जुन कर्ण का वध करेगा, उसमे कोई प्रतिबन्ध न होगा" । १२१-१२८ जब गुरुपुत्र ने इस प्रकार कहा तब उसे सुनकर दुर्योधन ने कहा— अपने निकटतम

इरुवरोटुं नेरीरुवरिल्लेन्नु
सुरमुनिजन पुकळ्त्तिटुंनेर । ११०
कलशसंभवतनयनादराल्
कलिपुरुपनाकिय कुरुकुल- १११
प्पॆरुमाळ्तन्नोटु परञ्ञितॆन्नयु
पॆरिकॆ लाळिच्चु वरिकरचा ! नी । ११२
पलगुणङ्ङळोटवनियु वाणु
पलकाल वाळ्क नृपशिखामणे ! ११३
मति मति रणमतिभयं वरु-
मति चतुरत कळञ्ञ शूरन्मार् । ११४
सुरवरदिनकर सुतन्मारो-
टॊरुवरिल्ल नेर् धनुस्सॆटुत्ततिल् । ११५
विळच्चीलेतुमॊरटवुकळाक्कुं-
मॊळिच्चुपोकयिल्लिवरिरुवरुं । ११६
निरक्कणं पाण्डुसुतन्मारोटि-
न्नॊरिक्कलु वैर निनय्क्करुतिनि । ११७
पिणक्क नल्लवरोटु नन्नल्लेतु-
मिणक्कं वेण्टतङ्ङवरोटु नूनं । ११८
पलक्कुं नेरॆन्नु मनसि तोन्निक्कुं
फल वन्नीलेतुमतिन्नोरुवक्कुं । ११९

दिया और अनेक प्रकार की शरवर्षा की। रघुवर और रावण के युद्ध के समान युद्ध को देखने के कुतूहल से सुरजन और मुनिजन ने "इन दोनो के तुल्य और कोई नही है" ऐसी प्रशसा की। तव कलशसभव (द्रोण) के पुत्र ने कलिपुरुप कुरुकुल के नाथ से इस प्रकार कहा— "हे राजन्! खूव लालन करते जाओ! हे नृपशिखामणे! अनेक गुणो के साथ पृथिवी पर चिरकाल तक राज करो। १०६-११३ वस! वस! युद्ध वहुत हो गया। वड़ा भय होनेवाला है, ये शूर चतुरता मे कम है। इन दो सुरवर (इन्द्र) और दिनकर (सूर्य) के पुत्रो के तुल्य उनमे धनुष के काम मे कोई नही है इन दोनो मे किसी ने भी युद्ध मे भूल न की है। इनमे कोई भी न हटनेवाला है। पाण्डुपुत्रो से समझौता होना चाहिये अव उनसे वैर की वात सोचना ही न चाहिये। अच्छो से झगडना ठीक नही है अव उनसे मिलकर ही रहना चाहिये। लोगो को ठीक प्रतीत होनेवाला कोई भी फल अव किसी को न मिला है। जान

झटिति पार्व्वतमयच्चितर्ज्जुनन्
तट्टुत्तु वज्रास्त्रमतुकोंण्टंगेशन् । ५
पल दिव्यास्त्रङ्ङळिरुवरुमोप्पं
तुलितन्मारायि प्रयोगिक्कुनेरं । ६
दलितदेहनाय् चमञ्ञितु पार्त्थन्
चलितचित्तनायितु मुकुन्दनुं । ७
कलितमोदमोटणञ्ञु कौरवर्
निलविळिच्चितु निविरेयन्नेरं । ८
अट्टुत्तु पार्त्थनोटुरचेय्तु भीम-
नोंटुक्कीटेणं कर्ण्णनें निमिष नी । ९
पटयिक्कळक्कमुण्टरिञ्ञितो भवान् ?
नट्टक्कमुळ्क्कोंण्टु तिरिञ्ञु मण्टुकिल् १०
ओंरुत्तरुमिल्ल पोंरुप्पिच्चीट्टुवान्
करुत्तरायुळ्ळोर् किळच्चिरिक्कुन्नु । ११
उरत्तिरक्कुन्न शरत्तिनालोक्क-
त्तरक्केटुण्टेन्नु धरिच्चिरिक्कणं । १२
इनिक्कुमुण्टोंट्टु तळर्च्चयिन्निप्पोळ्
मनक्कुरुन्नेतुमिळक्कमेन्नियें १३
वधिक्क कर्ण्णनेयवनितुकाल
चतिक्कु नम्मेयेन्नुरच्चिरिक्कणं । १४
मुकुन्दनिन्दिरारमणन् गोविन्द-
नखण्डनंबुजनयनन् माधवन् १५

अर्जुन ने तुरन्त पार्वतास्त्र भेजा जिसे कर्ण ने वज्रास्त्र से रोका। इस प्रकार दोनो ने बराबर अनेक दिव्यास्त्रो का प्रयोग किया। पार्थ का शरीर बहुत थका और मुकुन्द का चित्त कुछ व्याकुल हुआ। १-७ कौरव प्रमुदित हुए और उन्होने उच्च स्वर से चिल्लाया। तब अर्जुन के निकट जाकर भीम ने कहा— "अब क्षण भर मे कर्ण को समाप्त करो" जानते हो कि सेना कुछ हिल रही है ? अगर वह घबडाकर पीछे हटेगी तो उसको समझाकर रोकनेवाला कोई नही है। जिनमे शक्ति है वे थके हुए है। जान लो कि जोर से लगे बाणो से सब घायल हो गये है। मैं भी आज अब कुछ थका हूँ। इसलिए बिना हिचके कर्ण को मारो। नही तो वह हम लोगो को धोखा देगा, जान लो। ८-१४ मुकुन्द,

अट्टुत्त तन्पितन्नुटॆ रुधिरत्तॆ
कुटिच्चतॆङ्ङनॆ मऱन्निटुन्नु ञान् ? १३०
अवरुमाय् सुखिच्चवनियिल् वाळ्वा-
नवकाशं वन्नालतु पोरुतियो ? १३१
इनिक्कवरॆयुमवर्कळ्क्कॆन्नॆयु-
मकक्कुरुन्निल् तेऱरुतोरिक्कलु । १३२
इनियॆन्नोटिव पऱयाय्कवेण-
मिनतनयनॆ वधिक्कुमो पार्थन् ? १३३
ऒळुतल्ल गळपतियॆक्कोल्लुवा-
निळमतियणिञ्ञवन् वरिकिलुं । १३४

कण्णार्ज्जुनयुद्ध-कर्ण्णवधं

पलतुमित्तरं पऱयुन्ननेर
वलरिपुतनयनुमंगेशनुं १
पलविधमस्त्रङ्ङळ प्रयोगिच्चान्
फलं वन्नीलेटमतिन्नोरुवक्कुं । २
विजयन् पावकशरमयच्चतु-
वरुणास्त्र कोण्टु तटुत्तु कर्ण्णनु । ३
ऒटुत्तु पार्ज्जन्यमयच्चितर्ज्जुनन्
तटुत्तु वायव्यमतुकोण्टगेशन् । ४

भाई का रक्त जो पीया गया उसे मैं कैसे भूल सकता हूँ ? उनके साथ पृथिवी पर राज करने का अवसर मिलने से क्या सन्तोष हो जायगा ? न वे मेरे मन में और न हम उनके मन मे कभी स्थान प्राप्त कर सकते है। आगे इस प्रकार की वाते मुझसे न कहना। क्या अर्जुन कर्ण का वध कर सकता है ? कर्ण को मारना आसान नहीं है अर्जुन के अर्धचन्द्र (एक प्रकार का शर) धारण करके आने पर भी। १२९-१३४

कर्णार्जुनयुद्ध और कर्णवध

जव इस प्रकार की वाते हो रही थी तव अर्जुन और कर्ण ने अनेक प्रकार के अस्त्रो का प्रयोग किया पर दोनों असफल हुए। अर्जुन ने जहाँ आग्नेयास्त्र भेजा वहाँ कर्ण ने उसको वरुणास्त्र से रोका। जव अर्जुन ने पार्जन्यास्त्र छोड़ा तव कर्ण ने वायव्य से उसका जवाव दिया।

औरु शास्त्रास्त्रङ्ङळ् वळियें तोन्तील
गुरुशापत्तिनालतुमकप्पेट्टु । ४७
जगति दानशीलरिल् मुन्पुळ्ळवन्
जनमनोहरन् विमलनगेशन् ४८
निरूपिच्चु विधिबलमितेन्नतुं
वरुमिप्पोळ् मम मरणमेन्नतुं । ४९
वळरेद्धर्म्मं चेय्तवर्क्कपजयं
वरिकयिल्लेन्नतोरु पोळियत्ते । ५०
परञ्ञितु पुनरनुजनोटव-
नरिञ्ञतारेंरयरिवु निन्नोळं । ५१
अधर्म्मं चेय्कयिल्लोरुनाळुं भवा-
नतु मनसि ञानरिञ्ञिरिक्कुन्नु । ५२
विरवोटु तेरिङ्ङुयर्त्तिक्कोळ्वोळ-
मोरु शरमेय्यातिरिक्कणमिप्पोळ् । ५३
परञ्ञु तेरुरुळेट्टुप्पान् भाविच्चि-
ट्टोरुतरत्तिलुमिळकाञ्ञु चक्र । ५४
अरुळिच्चेय्तितु मुकुन्दनन्नेर
पेरिके नन्नु नी परञ्ञतु कर्ण्ण ! ५५
तिरिञ्ञीलेतु नी परञ्ञतोन्नुमे
परञ्ञिटेणं ञानरिञ्ञिटुवण्णं । ५६
जयति धर्म्ममेन्नोरु मोळि चोन्न-
तरिञ्ञु निन्नोटु परञ्ञतारिप्पोळ् ? ५७

हुई । इस जगत् मे दानशीलो मे श्रेष्ठ जनमनोहर, विमल अङ्गेश (कर्ण) ने सोचा— "यह अवश्य विधि का वल है । अब मेरा निधन होनेवाला है" । ४३-४९ 'बहुत धर्म करनेवालो का पराजय न होगा' यह कथन बिलकुल झूठ है । तब उसने अर्जुन से कहा— "तुमसे बढकर ज्ञानी कौन है ? तुम कभी अधर्म न करोगे, यह मै अपने मन मे जानता हूँ । इस रथ को उठवाने तक मुझ पर कोई शर न चलाओ ।" रथ के चक्र को उठाने का प्रयत्न किया, पर वह किसी तरह हिलता ही नही । तब मुकुन्द ने कहा— हे कर्ण ! तुमने खूब कहा ! तुम्हारा कहना कुछ भी समझ मे न आ रहा है । ऐसा कहो कि मै कुछ समझ सकूँ । ५०-५६ 'धर्म की विजय होती है' इस कथन का अर्थ समझकर किसने तुमको बतलाया ? यह धर्म पहले कहाँ चला गया था और अब यहाँ कहाँ से

तेळिञ्ञितश्वसेननुमतुनेर
विळङ्ङ तक्षकमुखङ्ङळुमेल्लां । ३६
पल निलत्तिलु पल प्रकारवुं
पलनाळु कात्त परन्पुरुषनु ३७
निनच्चु कण्टु पाण्डवनुटे रथं
निलत्तीरैविरलमर्त्तु ताळ्त्तिनान् । ३८
मुटियोटुकूटेयरिञ्ञु पाण्डवन्-
मकुटवुं कोण्टु नटन्नु वाणवु । ३९
पुनरिरुवरु पेरुमळपोले
पुनरपि वेगालटुत्तु वैकाते । ४०
पोळिञ्ञतिनाले निरञ्ञतूळियु
पोळिञ्ञोळुकुन्नु रुधिरवारियुं । ४१
मरञ्ञितु खरकिरणविंबवु
निरञ्ञिरुट्टायिच्चमञ्ञु लोकवु । ४२
अकन्नु कण्टुनिन्नवर्कळुमेल्ला
पकर्न्नु भाववुं पकलवनप्पोळ् । ४३
विरवोटर्ज्जुननोरु शरं कोण्टु
विळङ्ङुं कुण्डलं कळञ्ञानन्नेर । ४४
विजयनेयु केशवनेयुमेय्तु
विगतभीतियोटटुत्तु कर्ण्णनुं । ४५
झटिति तेरुरुळवनियिल्त्ताणु
तटञ्ञिळकाते चमञ्ञितन्नेरं । ४६

अनेक प्रकार से चिरकाल से रक्षा करनेवाले पर पुरुष ने सोचकर अर्जुन के रथ को पाँच अंगुल भूमि के अन्दर दबा दिया। तब (कर्ण का) बाण शिखा के साथ अर्जुन के मुकुट को भी लेकर निकल गया। फिर दोनों मुसलाधार वर्षा के समान वेग से एक दूसरे के निकट पहुँचे। शरवर्षा के कारण भूमि शरो से भर गयी और रक्त भी धाराप्रवाह बह रहा है। सूर्यबिंब भी ढक गया और सारा जगत् अन्धकार में डूब गया। ३६-४२ देखनेवाले सब हटे और कर्ण का भी भाव बदला। अर्जुन ने एक बाण से कर्ण के चमकनेवाले कुण्डल को ढग से उड़ा दिया। कर्ण तो निडर होकर अर्जुन और केशव को निशाना बनाकर निकट पहुँचा। उस समय रथ के चक्रो के भूमि मे दब जाने के कारण रथ हिल न सका। कोई अस्त्र या शस्त्र उसको सूझा नहीं। गुरु के शाप के कारण ही यह बात

इवनोराणियेन्नाङ्कि नूट्टव-
न्किवनाङ्ङ्अवे चातिकठ्ठेरं । ६९
प्रगत्सतयुळ्ळ धनञ्जयनेव
जगत्पतियुटे वचनं केट्टप्पोळ् ७०
निशितमायोरु मयिल्वाळम्पेटु-
त्तुचितमेन्नु काण्मवर्क्कु तोन्नुमा- ७१
रुणनन्दनन् तलयरुत्तुटन्
धरणियिलिट्टान् झटिति फल्गुनन् । ७२
जयजयशब्दं जगति पूरिच्चु
जयं विजयनु लभिच्चतु मूलं । ७३
तपनमण्डलं झटिति भूमियिल्
पतनं चेय्ततुकणक्के कर्ण्णन्तन्
वदनपङ्कजं पतिच्चु भूमियिल् ७४
उयर्न्नु देहियुमौळियोट्टुकूटे
नटन्नु कौरवरति शोकत्तोटुं । ७५
विविधमंगलस्तुतिकळ् वाद्यङ्ङळ्
विबुधभूसुरजय निनादवुं । ७६
पवनजनलरिन निनादवुं
भुवनवासिकळ् पुकळ्त्तुं नादवुं ७७
पुटपुळङ्ङुमाङ्विवट्टेक्कोण्टुटन्
कटल्पोलेयुळ्ळ पटयुमाय् पार्त्थन् ७८

को मारो। यह ही सौओ का अवलम्बन है उनके किये सभी कुकार्य इसको मालूम थे। ६३-६९ जगत्पति का वचन सुनकर गम्भीर धनञ्जय ने एक तीक्ष्ण मयूरासि का बाण लेकर, देखनेवालों को उचित प्रतीत होनेवाले ढग से कर्ण का सिर काटकर तुरन्त पृथिवी पर गिराया। अर्जुन की विजय होने के कारण सारा जगत् जयघोष से भर गया। सूर्यमण्डल के भूमिपर गिरने के समान कर्ण का मुखकमल पृथ्वी पर गिरा। और उसकी आत्मा गूँजती हुई ऊपर उठी। और कौरव सब शोकाकुल होकर चले। ७०-७५ विविध मंगल स्तुतियां, वाद्यघोष, देवों और ब्राह्मणो के जयघोप, भीम का सिंहनाद, भुवन के निवासियो की प्रशंसा ध्वनि, इन प्रतिध्वनि करनेव [illegible] के साथ और सागर के समान सेना के साथ रक्त और स्वेदजल [illegible] । अर्जुन युद्धभूमि मे विराजमान था। अपने सिर पर पुष्पवृष्टि [illegible] हुआ। वह मधुरिपु (कृष्ण) के

ऎविटॆप्पोयिरुन्नितु मुन्न धर्म्म-
मॆविटॆनिन्निप्पोळिविटेक्कु वन्नु ? ५८
पलवुरु निङ्ङळ् पल्रुमॊन्निच्चु
पॊरुतु कळ्ळच्चूतकप्पॆटीच्चन्नु । ५९
नृपतितन्नुटॆ सभयिङ्कलुनिन्नु
द्रुपदपुत्रियॆ पिटिच्चिवळिच्चन्नु । ६०
पतिव्रतयाकुमवळुटॆ तुकि-
लधिक वेगत्तिल् पिटिच्चळिच्चन्नं । ६१
अरक्किल्लत्तिलिट्टच्चु तीयुव-
च्चॊरुक्कि संस्कारादिकळ् कळिच्चन्नु । ६२
पवनपुत्रनु विषकॊटुत्तन्नु-
मवनॆप्पान्पिनाल् कटिप्पॆटुत्तन्नु । ६३
अतिकुमारनामभिमन्युतन्नॆ
वधिच्चु कूटाञ्ञु विषण्णन्मारायि- ६४
ट्टरुवरॊन्निच्चिट्टरु कॊलयायो-
रटवुकूटातॆ चतिच्चुकॊन्नन्नु । ६५
पलनाळुं निङ्ङळ् पलरुमॊन्निच्चु
पलविधं चॆय्तोरधर्म्मकर्म्मङ्ङळ् ६६
फलिच्चितिन्नॆङ्ङु जयिक्कुन्नु धर्म्मं ।
फलिक्कयिल्लल्लो स्वकर्म्ममॆन्नियॆ ? ६७
इनियॆन्तु पार्त्था ! पतुक्कॆ निल्कुन्न-
तिनतनयनॆ वधिक्क वैकातॆ । ६८

आया ? वह दिन जब कि अनेक बार तुम लोगो ने मिलकर झूठे जूए मे इनको फँसाया था । वह दिन जब नृपति की सभा मे द्रौपदी को पकडकर खीचा । वह दिन जब उस पतिव्रता के वस्त्र को पकड़कर वेग से उतारा । वह दिन जब पाण्डवो को जतुगृह मे बन्द करके उसको आग लगा दी और उनकी अन्त्येष्टि भी कराई । ५७-६२ वह दिन जब भीम को विष खिलाया और उसको साँप से डँसवाया । वह दिन जब अत्यन्त जवान अभिमन्यु का वध न कर सकने से विषण्ण होकर छ: छ: योद्धाओ ने मिलकर युद्धधर्म का उल्लङ्घन करके धोखा देकर उसको मारा । तुम लोगो द्वारा मिलकर बहुत दिन तक इस प्रकार किये गये अनेक अधर्म आज फल रहे है । धर्म की विजय कहाँ से होगी ? अपना ही कर्म तो फलता है न ? हे अर्जुन ! अब क्या देख रहे हो ? विना विलम्ब के सूर्यपुत्र

मुळ्ळुकि मोहिच्चु मरुवुन्न लोकं
मुळ्ळुवन् निन्तिरुवटियल्लो नूनं । ९०
अटियारां ञङ्ङळ्क्कुटय निन्तिरु-
वटि तुणयायालरुतातेयुण्टो ९१
जगति संप्रति चॆरुतु कार्य-
मॆन्नणिमिळिकळिलॊळुकुं नीरोटु ९२
युधिष्ठिरन् परञ्ञळवु लोकङ्ङळ्-
क्कधिष्ठानमाय मुररिपु चॊन्नान्— ९३
शमदमयम नियम सत्यङ्ङ-
ळमितसल्गुणमुटय निन्नुटॆ ९४
फलविमुखमां विमलकार्यत्तिन्
फलमितु जय वरुन्नुतिन्नियु ।
पलप्रकारवुं जयवरुमॆन्नु । ९५
मधुरमायुटनरुळिच्चॆय्तोरु
मधुमथननुं विजयनुं मटु- ९६
मनिलनन्दनद्रुपदन्मारोटु-
मनुपमनाय यमतनयनु ९७
तॆळिञ्ञु कैनिलयकत्तु मेविनार् ।
विळङ्ङि मटुळ्ळ सुहृज्जनङ्ङळु । ९८
पलनेर परञ्ञरुतेतुमॆन्नु
परञ्ञटङ्ङिनाळ् किळिमकळुमे । ९९

॥ कर्णं समाप्तं ॥

है । ८३-९० जब आप पूज्यपाद सहायक है तब हम दासो के लिए इस ससार मे कोई भी छोटा कार्य असाध्य हो सकता है ? युधिष्ठिर के ऑसू गिराते हुए इस प्रकार कहने पर लोको के अधिष्ठान मुररिपु बोले— "शम, दम, यम, नियम, सत्य और अनेक अन्य सद्गुणवाले तुम्हारे फलनिरपेक्ष विमल कार्य का फल है, यह विजय । आगे भी अनेक प्रकार की विजय होनेवाली है ।" इस तरह मधुर-मधुर बाते करनेवाले मधुरिपु, अर्जुन, और भीम, द्रुपद जैसे अन्यो के साथ अनुपम युधिष्ठिर प्रसन्न होकर तबू के अन्दर चले गये । और लोग भी प्रसन्न हुए । बहुत देर तक कथा सुनाने के बाद 'अब और न हो सकता है' ऐसा कहकर शुकी मौन हो गयी । ९१-९९

॥ कर्णपर्व समाप्त ॥

उटलिल् स्वेदशोणितङ्ङळुमणि-
ञ्ञटर् निलतन्निल्विळङ्ङिट्टुनेर । ७९
कुसुमवृष्टियु तलयिलेटेट्टु
मधुरिपुवुमाय् नटन्नु मेल्लवे । ८०
अनुपमनाय पवनजनुमाय्
शमननन्दनन्चरणतारिण ८१
तोऴुतुनिन्नुटन् नमस्करिच्चितु ।
तोऴुतेऴुन्नेट्टु सपदि धर्म्मजन् । ८२
अखिललोकेशन् मुखवु नोक्किना-
मनुजन्मारेयुमणच्चु पुल्किनान् । ८३
तलयिलश्रुक्कळ् तेरुतेरे वीऴ्त्ति-
प्पलवुरु मुकर्न्नितु नरपति । ८४
पेरिके नन्नल्लो विजयन् कर्ण्णने-
प्पोरुतु कोन्नतेन्नरुळ्चेय्तु कृष्णन् । ८५
चेरुतु पुञ्चिरि कलर्न्नु धर्म्मजन्
मुरहरनोटु पऱञ्ञतन्नेर— ८६
अतु पुनरेन्तु विचित्रमायतु
मधुरिपो ! मलर्मकळ्मणवाळा ! ८७
निखिललोकवुमकत्तटक्कियुं
पुऱत्तु काट्टियुमतिने रक्षिच्चु ८८
पल कालङ्ङळु पलप्रकारवुं
चिलकळिकळिळेळुन्न माययिल् । ८९

धीरे-धीरे चला । अनुपम भीम के साथ युधिष्ठिर के चरणयुगल की वन्दना करके नमस्कार किया । युधिष्ठिर भी वन्दना करता हुआ तुरन्त उठा । ७९-८२ अखिल लोकेश का मुख देखा और अपने छोटे भाइयो को छाती से लगाया । राजा ने उनके सिर पर आँसू गिराये और उनको बार-बार चूम लिया । कृष्ण ने कहा— "बहुत अच्छा हुआ कि अर्जुन ने कर्ण का वध किया ।" युधिष्ठिर ने मुस्कराते हुए मुरहर (कृष्ण) से कहा— हे मधुरिपु ! लक्ष्मीपति ! इसमे क्या आश्चर्य है ? सारे लोको को अपने ही अन्दर रखकर, फिर उनको बाहर दिखलाकर रक्षा करने-वाले और यह सारा जगत् भी जो बार-बार भिन्न-भिन्न प्रकारो से लीलाएँ दिखलानेवाली माया मे डूबकर मोह मे विराजता है, आप ही

मुन्पॉरु याग तुटङ्ङियतिन्नायि-
ट्टुन्परॅल्लारु तुणच्चार् वळिपोलॅ । २
जभारितन्नॅस्समिदाहरणार्त्थं
मुन्पिल् नटन्नु वळियॆ निलिन्परुम् । ३
उन्परिल् मुन्पनां वन्पन् शतमखन्
मुन्पिल् चमतयुं कॉण्टु वरुन्नेर ४
अङ्गुष्ठमात्रशरीरिकळाकिय
मगलन्मारा मरीचिपतापसर् ५
ऍल्लारुमाय् चॅर्ऱियोरु चमतक्को-
लल्लल् मुळुत्तु पूणॅल्लु नुरुङ्ङुमा- ६
ऱॅत्रयुं वीर्त्तुचीर्त्तार्त्यां वरुन्नेर-
मुत्तमन्मार्क्कॉरु सङ्कटमुण्टायि । ७
पद्धतितन्नुटॆ मध्ये भविच्चितॉ-
रब्धियतायतॅन्तॅन्नु चॉल्लेणमो । ८
कटुकुळम्पिलॅ वॅळ्ळमतिल् वीणु
पटिप्पिटिच्चुळन्नाळुन्नतुनेर ९
चॅटु परिहसिच्चोटिक्कटन्नुपोय्
कुटमुण्टॅन्नितोरातॅ महेन्द्रनुम् । १०
पार परिहसिच्चीटुन्नवर्कळ्क्कु
घोरनरकमॅन्नुण्टु वेदोक्तिकळ् । ११

काश्यप । उसने एक यज्ञ प्रारभ किया जिसमे सभी देवो ने यथाशक्ति सहायता की । समित[1] लाने के लिए जभारि (इन्द्र) स्वय आगे-आगे चले और उनके पीछे देवगण । जब देवो मे श्रेष्ठ शक्तिशाली शतमख[2] (इन्द्र), एक पूरा पलाश[3] का पेड़ लेकर आगे-आगे आ रहे थे तब केवल अगूठे के बराबर प्रमाण वाले, मगल करनेवाले मरीचिप तापस सब मिलकर एक छोटा सा समित[4] का टुकडा कन्धे की हड्डी तोडने लायक बड़े कष्ट के साथ पसीने से क्लिन्न[5] हुए ला रहे थे, और उनको देखकर उत्तम लोगो को बड़ा दुख हुआ । १-७ उनके मार्ग मे एक समुद्र पडा । वह क्या था, यह भी कह दूँ ! गोष्पद[6] का पानी ! उसमे गिरकर वे दुख के साथ जब डूब रहे थे तब महेन्द्र उसका दोष न समझकर उनकी

१ लकड़ियाँ । २ सौ यज्ञ करने वाले । ३ ढाक ४ लकडी । ५ भीगे ६ गौ के खुर बराबर गड्ढे ।

शल्यं

शिव ! शिव ! मनोहरशीलवती सादरं
जन्मसाफल्यदं चॊल्लु कैवल्यद । १
परमपुरुपन्महामायतन् वैभव
पड्कयुमनारतं केळ्क्कयु चेय्किलो । २
परमसुखमॆन्ततिल्प्परममलचेतसा
कथितपरिशेषमाकु कथासारवु ३
कथय कथयाशु नी कौतुकार्द्रेणमे
भवति यदि कुतुकमिह झटिति कथयाम्यहं । ४

शल्यन्टॆ सेनाधिपत्यं

भानुपुत्रन् मरिच्चोरवस्थान्तरे
शमनजनजातशत्रुक्षमावल्लभन् । १
चारुवेषं मुकुन्द जगन्मगल
सव्यसाचिप्रिय दिव्यमव्याकुल २
सर्व्वलोकाधिप शर्व्ववन्द्यं परं
मथितमदवारणं जगदुदयकारणं ३

शल्यपर्व

शिव ! शिव ! हे मनोहर शीलवाली ! परमपुरुष की माया के जन्म को सफल वनानेवाले और कैवल्य प्रदान करनेवाले वैभव का वर्णन करना और सुनना परम सुख होता है। विमल चित्तवालो को इससे वढ़कर क्या हो सकता है। इस लिए शेप कथा अव तुम खुशी से सुनाओ। अच्छा, अगर कुतूहल है तो जल्दी सुनाऊँगी। १-४

शल्य का सेनाधिपत्य

भानुपुत्र (कर्ण) के निधन के वाद राजा अजातशत्रु युधिष्ठिर ने चारुवेप, मुकुन्द, जगत् का मङ्गल, अर्जुन के मित्र, दिव्य, अव्याकुल, सभी लोको के-नाथ, शिवजी का वन्द्य, पर, मत्तहाथियो का दमन करनेवाले, जगत् की उत्पत्ति का कारण, चारणो के पूजितचरण, अपने चरितमधु से भरनेवाले, दानवो के नाशक, देवो के सुख का आस्पद, शत्रुसमूह के भयप्रद, विभीपण द्वारा वन्दितचरण, मधुर भापण करनेवाले, यदुकुल के पोषक,

चरणनतचारणं चरितमधुपूरणं
दनुजकुलमारणं सुरसुखपरायणं ४
परनिवहभीषणं पदगतविभीषणं
मधुरतरभाषण यदुजननपोषण ५
जगदमलभूषणं जनहृदयमोषणं
नतकलुषशोषणं शमितकलिदूषण ६
विजयरथभूषणं विनतजनतोषणं
विहगपतिवाहन मुनिनिवहमोहनं ७
सुखविभवदोहनं गुणजननसाधनं
नरकभयमोचनं नळिनदळलोचनं ८
नरकमुरशासन धृतदरशरासनं
नमितपुरशासनं नमितनळिनासनं ९
शशधरनिभाननं गुणनिकरभाजनं
शकलितदशानन सुररिपुविनाशनं १०
मुषित घृतभोजनं भुवनतनुजीवन
नयनकलिताञ्जनं नरनयनरञ्जन ११
भवमरणभञ्जनं पशुपवरनन्दनं
युवतिमतिमन्दिर विमलमति सुन्दरं १२
मदनमदमन्थरं मणिलळितकन्धरं
विटयुवतिबन्धुरं विगतभयसिन्धुरं १३

जगत् के विमल विभूषण, जनता के हृदय को चुरानेवाले, भक्तो के पाप दूर करनेवाले, कलि के दोपो के नाशक, अर्जुन के रथ का भूपण, विनतजनो की तुष्टि करनेवाले, गरुडवाहन, मुनिजन का मोह करनेवाले, १-७ सुख और विभव पैदा करनेवाले, गुणो के उदय का साधन, नरकभय से छुड़ाने वाले, कमललोचन, नरक और सुर के नाशक, दृढचाप धारण करनेवाले, शिवजी के वन्द्य, ब्रह्माजी के पूज्य, चन्द्रमुख, गुणसमूह धारण करनेवाले, दशानन (रावण) के ध्वसक, देवो के शत्रुओ के नाशक, घी चुरानेवाले, भुवन के शरीर का जीवन, नयनो मे अञ्जन लगाये हुए, जनो की आँखो के प्रिय, जन्म और मरण का अन्त करनेवाले गोपवर (नन्द) के पुत्र, युवति के मन मे विराजमान, अपनी विमलमति से सुन्दर, मदनमद को कुचल देनेवाले, मणिविभूपित गर्दनवाले, विट और युवतियो के प्रिय, विगतभय हाथीवाले, गोपकुल के वालक, भुवन के पालक, हिलते कर-कङ्कणवाले, युद्धभूमि को प्रमुदित करनेवाले कृष्ण को देखकर प्रसन्न और

पशुपकुलबालक भुवनतलपालकं
चलितकरकङ्कणं मुदितसमराङ्कण १४
कण्टु कौतूहलं पूण्टोरानन्दमुळ्-
क्कोण्टुटन् कोळ्मयिर्क्कोण्टु वन्दिच्चुनि- १५
न्निण्टलु तीर्त्तु तन् कुण्ठभावङ्ङळु
दूरे नीक्कि प्रमोदेन वाळुं विधौ
पारमुण्टायिते वाद्यघोषङ्ङळुं १६
तदनु कुरुवीरनामविकापुत्रनो-
टुदितभयमोटु चॊल्लीटिनान् सञ्जयन्— १७
नयनयनरहितनरपतितिलक ! केळ्क्क नी
नाश भविच्चु नमुक्केन्नरिञ्ञालु । १८
तव तनयरेतिर्पोरुतु विबुधपुरि मेविनार्
तापं कळञ्ञितु पाण्डुसुतन्मारुं । १९
द्रुपदनृपपुत्रनु द्रौपदीपुत्ररुं
द्रोणजन्वाळ्क्किरयायितु निद्रयिल् । २०
कुरुवृषभनतुपोळुतु मोहिच्चु वीणितु
कूटेत्तटञ्ञङ्ङेटुत्तु विदुररुं । २१
शीतळमायुळ्ळ वेळ्ळ तळिच्चुटन्
शीतोपचारङ्ङळ् मटु पलतर । २२
चेय्तितु गान्धारियुमायतुनेरं
पेय्त कण्णीरोटु चॊल्लिनानिङ्ङने— २३

रोमाञ्चित होकर आनन्द अनुभव किया और वन्दना की । ८-१५ जब इस प्रकार दु ख समाप्त करके और परेशानियाँ दूर करके रह रहे थे तब वाद्यघोष सुनाई दिये । तदनन्तर सञ्जय ने डरते हुए अविकापुत्र (धृतराष्ट्र) से कहा— हे ! नयरूपी नयन से रहित राजवर ! सुनो ! जान लो कि हमारा नाश हो गया है । तुम्हारे पुत्र युद्ध करके स्वर्ग चले गये और पाण्डवो का दुःख दूर हो गया । द्रुपद राजा का पुत्र और द्रौपदी के पुत्र अपनी निद्रा मे द्रोणपुत्र की तलवार के शिकार बन गये । यह सुनकर कुरुवृषभ (धृतराष्ट्र) बेहोश हो कर गिर गये । औरो के साथ विदुर ने उनको उठाया । १६-२१ और उन पर ठडा पानी छिडका और अनेक प्रकार के शीतोपचार किये, गान्धारी के साथ । तब आँसू गिराते हुए उन्होने इस प्रकार कहा— अर्जुन के कर्ण को मारने के बाद

पार्त्थनगेशनेक्कोन्नोरनन्तर-
मार्त्ति तीर्त्तीटुवानेन्तुटे पुत्रनु २४
पेर्त्तु तुणयायतारेन्नु चोल्क नी
पार्त्थिवन्मारुटे युद्धप्रकारवुं । २५
चोल्लुवन् ञान् विशेषङ्ङळ् केळ्क्कॆङ्किलो
चोल्लेळुं मानि सुयोधनभूपति २६
दुःखिच्चु कैनिलपुक्कोरनन्तर-
मर्क्कनुमंबुधितन्निल् मङ्ङिनतु । २७
मक्कळे स्नेहमेल्लाक्कुंमुण्टोक्कॆटो
निल्क्कतॆल्ला परञ्ञेन्तिनिक्कारियं । २८
पुक्कितु शेषिच्च वन्पट कानन
मुख्यनाकुं दुरियोधननु चॊन्नान्— २९
पेटियोटोटिनां काटकपूकुकिल्
पेटमान्कण्णिकळ् कूटि निन्दिक्कुमे । ३०
पिन्ने नरकवुमुण्टाय्वरुमितु
मन्नवन्मारुटे धर्म्मंमल्लेतुमे । ३१
इत्तर नल्ल गभीरवाक्यङ्ङळ्कॊ-
ण्टत्तल् तीर्त्तानितुनेरं कृपर् चॊन्नान्— ३२
वत्स ! वरिकरिके कुरुमन्नव !
मत्सरं कैवॆटिञ्ञेन्नुटे वाक्कुकळ् । ३३

मेरे पुत्र का दुःख दूर करने के लिए कौन सहायक बना ? यह भी बतलाओ और भूपालो ने कैसे युद्ध किया ? (सञ्जय बोला) अच्छा तो मै समाचार सुनाऊँगा, सुनो। मानी सुयोधन के दुखित होकर अपने तबू मे प्रवेश करने के बाद सूर्य सागर के अन्दर छिप गया। याद रहे कि सबको अपनी सन्तान के प्रति स्नेह होता है। जाने दो, यह सब कहने से क्या होगा। जो सेना बची थी वह वन मे चली गयी। २२-२८ तब नायक दुर्योधन ने कहा— अगर डरके हमलोग वन चले जायेंगे तो स्त्रियाँ भी हमारी निन्दा करेगी। फिर नरक भी हमारा हो जायगा क्योकि यह राजधर्म बिलकुल नही है। इस प्रकार की गंभीर बातो से अपना दुःख कुछ दूर किया। तब कृप बोले— बेटा ! कुरुराज ! मेरे पास आओ और मत्सर छोडकर मेरी बात सुनो। या तो युद्ध मे प्रवेश करके प्राणत्याग करना अथवा शत्रुओ को मारकर समाप्त कर देना, इन दोनो पक्षो को छोड़कर भूपालो का और कोई धर्म नही है। फिर भी

युद्धत्तिलेँत्ति मरिच्चीटुकेन्नुतान्
शत्रुक्कळेक्कोन्नीटुक्कीटुकेन्नुतान् ३४
पक्षमीरण्टुमोळिञ्ञोरु धर्म्ममि-
ल्लिक्षितिपालक्कु निश्चयमेङ्किलु । ३५
उण्टोरु नल्लतु चोल्लुन्नतिन्नु ञान्
कण्टुतल्लो पतिनेळुनाळे रण । ३६
गंगातनयनु द्रोणरु कर्ण्णनु-
मगेशतुल्यरा तन्पिमार् पुत्ररु ३७
चार्न्नुचेर्न्नुळ्ळ भूपालर्तन्पुत्ररुं
तीर्न्नितल्लो मुतिर्न्नेटवरोक्कवे । ३८
इल्ला जयमिनियेन्नु नमुक्कतु
चोल्लुवन् तीर्त्ततिनिल्लोरु किल्लेटो । ३९
जीविच्चुकोळ्ळुवानेन्तोन्नु नल्लते-
न्नाविर्भविक्क मनसि भवानिनि । ४०
धर्म्मजनोटु समराय मन्नव-
रिम्महितन्निलिल्लन्नतु निर्ण्णय । ४१
चेन्नु नमस्करिच्चञ्जलियु चेय्तु
निन्नालवनुटे कोप तळर्न्नुपो । ४२
पाति राज्य तव नल्कुमवनुटे
चेतसि वाच्च करुणावलत्तिनाल् । ४३
कृष्णन् मुकुन्दनन्तननादिया
जिष्णु सखिक्कु तिरुवुळ्ळमायुवरु । ४४

एक अच्छी बात है जो मै आज कहता हूँ। तुमने सतरह दिन का युद्ध देख लिया है। २९-३६ भीष्म, द्रोण, कर्ण, अङ्गेश के समान अनुज और उनके पुत्र अपने पक्ष के भूपाल और उनके पुत्र और अन्य जो उठे थे वे सब समाप्त हो गये। 'अब हमारी विजय असम्भव है यह मैं निस्सन्देह कहता हूँ। अब जीवित रहने के लिए क्या उपाय है यह आप के मन मे भाये। युधिष्ठिर के समान कोई राजा इस पृथिवी पर नही है, यह निश्चित है। अगर तुम जाकर उनको नमस्कार करके हाथ जोड़ोगे तो उनका कोप शिथिल हो जायगा। उनके दिल की करुणा के कारण वे तुम को आधा राज्य अवश्य देंगे। ३७-४३ अर्जुन के मित्र मुकुन्द, अनन्त, और अनादिकृष्ण का दिल भी प्रसन्न हो जायगा। युधिष्ठिर

केशवन् चॊन्नते चॆय्वितु धर्म्मजन्
देशिकनाय ञान् चॊन्नतु केळ्क्क नी । ४५
कृपरधिककृपयॊटितु चॊन्ननेरत्तुटन्
नृपवरनुमुत्तरं चॊल्लिनानाकुलाल् । ४६
अवरॊटु निरन्नु वाणीटुवानेतुमे-
यरुतरुततिन्नु काल कळिञ्ञू पुरा । ४७
पल पिळकळवर्कळॊटु चॆय्तु पोयेनह
परयरुततिन्नु नी भगियल्लॊट्टुमे । ४८
पॊरुतरिकुलत्तॆ ञान् कॊन्नॊटुक्कीटुवन्
पुरुवंशत्तिलल्लो पिरन्नू वयं । ४९
वाहिनीनायकन् द्रोणजन्तान् महा-
व्यूहवुं कूट्टि निर्त्तीटुक सत्वरं । ५०
अॆन्नतु केट्टुरचॆय्तु गुरुसुतन्
निन्नुटॆ मातुलनाय माद्राधिपन् ५१
नन्नॊटो सैन्य भरिच्चुनिर्त्तीटुवान्
वन्नुकूटुं जयमॆन्नतु निर्णयं । ५२
तदनु कुरुनृपति पतिनॆट्टा दिवसवुं
धर्म्मात्मजादिकळोटु युद्धत्तिनाय् । ५३
नानागुणङ्ङळुमुळ्ळॊरु शल्यरे-
स्सेनापतियायभिषेकवुं चॆय्तान् । ५४
केट्टितु घोषङ्ङळुं विशेषङ्ङळु
केट्टाल् सहिक्करुतात वाद्यङ्ङळुं । ५५

केशव के कथन के अनुसार ही करेगे। मै तुम्हारा गुरु हूँ मेरी बात सुनो। जब कृप ने बडी कृपा से इस प्रकार कहा तब नृपवर ने उत्तर दिया। उनके साथ शान्ति से रहना बिलकुल असभव है, उसका समय तभी बीत गया है। उनके साथ मैंने कई गलतियाँ की। उनके सबन्ध में तुम्हे कुछ कहना न चाहिये, अच्छा न लगता है। युद्ध करके मैं शत्रुकुल को समाप्त कर दूँगा। आखिर हम भी तो पुरुवश के है। सेनानायक द्रोणपुत्र तुरन्त एक महाव्यूह रचाकर खड़ी कर दे। ४४-५० यह सुनकर गुरुपुत्र ने कहा— तुम्हारे मामा माद्राधिप ही सेना के नेतृत्व के लिए उपयुक्त है। जय होगी, इस मे सन्देह नही। तत्पश्चात् दुर्योधन ने अठारहवे दिन युधिष्ठिर आदिको के साथ युद्ध करने के लिए नानागुणवाले

केवलन् केशवन् केशिनिसूदनन्
केळियेऴीटुन्न धर्म्मजन् तन्नोटु । ५६
केट्टुतीर्त्तेवमरुळ्च्चेय्तितप्पोळ्
खेदं कळञ्ञु ञान् चोन्नतु केळ्क्कणं । ५७
सकलसुरदितिजवररोत्तेतिर्त्तीटिलुं
शल्यक्कु तुल्यरायिल्ल मट्टारुमे । ५८
युधि तव तपोबलं कोण्टु कोल्लाय्वरु
युक्तमेन्नान् निजभक्तचित्तालयन् । ५९
जय जय मुकुन्द ! नी चोल्लियालोन्निनु
चेट्टु वैमुख्यमिल्लिन्निनिक्कोन्निनुं । ६०
पट्युमिरुभागवुं वन्नुकूटी तदा
पटहपणवादि वाद्यङ्ङळ्तन् घोषवुं ६१
करितुरगरथनरनिनादघोषङ्ङळुं
कमलभवतनयकृतसङ्कीर्त्तनङ्ङळुं । ६२
पाण्डवन्मारुं कुरुकुलसेनयुं
पाञ्ञङ्ङट्टुत्तुटङ्ङि रणोत्सव । ६३
कुरुपति सुयोधनन्तानु शकुनियुं
गुरुतनयनु कृपाचार्यनुं भोजनुं ६४
माद्रेशनाकिय सेनाधिपन्तानु
मट्टु चतुरङ्गिकळाय भूपरुं । ६५

शल्य को सेनापति के पद मे अभिषेक किया । अनेक प्रकार के विशेष घोष और सुनने मे असह्य वाद्य सुनाई दिये । उस समय केशि के नाशक केवल केशव ने सोल्लास युधिष्ठिर से इस प्रकार स्पष्ट कहा— "खेद छोड़कर मेरी बात सुनो ।" ५१-५७ अगर सुरो और दैत्यो के प्रमुख मिलकर सामना करे तव भी वे शल्य के तुल्य न होगे । "तुम्हारे तपोवल के कारण तुम मारे न जाओगे और यह ठीक भी है" अपने भक्तो के चित्त के आलय (कृष्ण) ने ऐसा कहा । हे मुकुन्द ! तुम्हारी जय हो ! जो कुछ भी तुम कहोगे मुझे उसमें कोई भी आपत्ति नही है । तव दोनो ओर की सेना इकट्ठा हुई । पटह, पणव आदि वाद्यो के घोप, हाथी, घोड़े, रथ और पैदल सैनिको के नाद, कमलभव (ब्रह्मा) के पुत्र (नारद) के सङ्कीर्तन पाण्डव और कुरुसेना एक दूसरे के निकट पहुँचे और रणोत्सव प्रारभ हुआ । कुरुपति सुयोधन, शकुनि, गुरुपुत्र (अश्वत्थामा), कृपाचार्य, भोज, सेनापति माद्रेश, और अन्य चतुरङ्ग सेनावाले भूपाल, ५८-६५

ऒक्कयॊरुमिच्चु वन्नु निरञ्ञितु
मुख्यमा पाण्डवसैन्यवुमङ्ङने । ६६
कृष्णन्तिरुवटितन्नोटु चेन्नॊरु
जिष्णु युधिष्ठिरन् भीमन् नकुलनु । ६७
तन्पियु मक्कळॊरैवर् कुमाररु
कन्पमिल्लातॊरु पाञ्चालवीररु ६८
सात्यकि केकयन्मारुमॊरुमिच्चु
कूर्त्त शरनिर तूकित्तुटङ्ङिनार् । ६९
रण्टुपुरत्तु मरिच्चु पॆरुन्पट
कण्टुकूटातोळमॆन्ने पऱयावू । ७०
कुण्ठत कैविट्टटुत्तानतुनेर
कण्टॊरु कर्ण्णात्मजन्मारे कॊन्नितु
कुण्ठतयॊट्टुमिल्लाते नकुलनु । ७१
आर्त्तटुत्तानतुकण्टु माद्राधिपन् ।
कूर्त्तुमूर्त्तुळ्ळ शरङ्ङळ् तूकीटिनान् ७२

शल्ययुद्ध-शल्यवध

पार्त्थिवनाकिय धर्म्मतनयनु-
मार्त्तिवरुमाऱटुत्तानतुनेरं १

सब इकट्ठा हुए और बडी भीड हुई। पाण्डवो की सेना ने भी ऐसा ही किया। पूज्य कृष्ण सहित अर्जुन, यधिष्ठिर, भीम, नकुल, उसका छोटा भाई (सहदेव), पाँचो कुमार पुत्र, बिलकुल न हिलनेवाले पाञ्चालवीर, सात्यकि और केकय के वीर, सब मिलकर तीक्ष्ण शरो की वर्षा करने लगे। जहाँ तक कोई देख सकता था, दोनो ओर सैनिक मरे, इतना ही कहा जा सकता है। तब सकोच छोड़कर नकुल निकट आया और जो कोई कर्णपुत्र दिखाई देता था उसको उसने मारा। यह देखकर माद्राधिप (सेनापति) गरजता हुआ निकट पहुँचा। और उसने तीक्ष्ण-तीक्ष्ण बाण छोड़े। ६६-७२

शल्ययुद्ध-शल्यवध

उस समय राजा युधिष्ठिर भी अपने को खतरे मे डालता हुआ निकल आया और दोनो ने अस्त्रप्रयोग किया। दोनो बड़ी शक्ति के साथ एक

अस्त्रप्रयोगङ्ङळ् चेय्तारिरुवरुं ।
शक्तियोटेट्टमट्टुत्तु पुनरुटन् । २
मातुलनाकिय शल्यर्शल्यङ्ङळा-
लाकुलप्पेट्टितु धर्म्मतनयनुं । ३
अप्पोळ्तुकण्टु भीमन् पटयुमाय्
कॆल्लोटटिच्चु पॊटिच्चितु तेर्त्तटं । ४
निल्लॆटा निल्लॆटा नीयॆन्नुरचॆय्तु
शल्यर् गदयुमाय् पाञ्ञितु भूमियिल् । ५
तङ्ङळिल्चय्त गदायुद्धकौशल
मिङ्ङनॆयॆन्नु पऱयरुताक्कुमे । ६
तल्लुकॊण्टूळियिल् वीणितु शल्यरुं
मॆल्लवे तेरिलेटी कृपाचार्यनु । ७
पिन्नॆयुं धर्म्मतनयनु शल्यरु
तन्नायणञ्ञु पॊरुतु तुटङ्ङिनार् । ८
मन्नवन् मातुलन्तन्नुटलॊक्कवे
भिन्नमाक्कीटिनान् नल्ल शरङ्ङळाल् । ९
कॊन्नु रथपालकन्मारॆयुमुट-
नुन्नतमाय कॊटियुं मुऱिच्चितु । १०
तन्ने मऱन्नितु कोपिच्चु शल्यरुं
सन्नाहमुळ्क्कॊण्टटुत्तानतुनेर । ११
शल्यर्शरङ्ङळालाकाशमूळियु-
मॆल्लां मऱञ्ञु निऱञ्ञतु काण्कयाल् १२

दूसरे के पास पहुँचे । मामा शल्य के शस्त्रो से युधिष्ठिर पीडित हुआ । यह देखकर भीम ने अपनी सेना के साथ जोर से मारा और रथ को चूर कर दिया और बोला—'तू ठहर ! तू ठहर!' अपनी गदा लेकर शल्य ज़मीन पर उतरा । उन दोनो ने गदायुद्ध मे जो कौशल दिखलाया उसे कोई भी नही वर्णन कर सकता है । मार खा-खाकर शल्य गिर गया और कृपाचार्य ने उसे फिर रथ पर बैठाया । १-७ युधिष्ठिर और शल्य फिर भिड़कर लडने लगे । राजा ने अपने मामा के शरीर को शरो से छिन्नभिन्न कर दिया । रथ के रक्षको को मार डाला और ऊँचे झण्डे को भी काट डाला । कोप मे शल्य अपने को भूल गया और वडी तैयारी करके निकट पहुँचा । शल्य के शरो से आकाश और पृथिवी भर गयी और यह देखकर धानुष्को मे

विल्लाळिवीरनायुळ्ळ धर्म्मात्मजन्
तुल्यमायेय्ताननेकनूऱायिर । १३
सात्यकि नासत्यपुत्रभीमादिकळ्
पेर्त्तुं शरङ्ङळ् पॊऴिच्चारतुनेरं । १४
ऎल्लावरोटु मरुत्तु पोर्चेय्तितु
शल्यरुमेतुमोरु कुऱवेन्नियॆ । १५
कण्टानतु कलशोत्भवनन्दनन्
मण्टियणञ्ञु बाणङ्ङळ् तूकीटिनान् । १६
कॊण्टल्नेर्वर्ण्णनुं तानुमायर्ज्जुनन्
कॊण्टल्पोले चेरुआर्णोलियिट्टुटन् १७
इण्टल् कळञ्ञट्टुत्तेय्तु तुटङ्ङिनान्
कण्टवरोक्कवे वाऴ्त्तिनारन्नेर । १८
कलशभवशिष्यनुं कलशभवपुत्रनुं
कलितकरवेगमोटु शरनिरकळ् तूकिनार् । १९
रण्टुपुऱत्तुं मुळ्ळत्त पेरुम्पट
रण्टुविनाऴिक कॊण्टोटुङ्ङी तुलो । २०
वृत्रारिपुत्रनुमस्त्रशस्त्रङ्ङळाल्
क्रुद्धनाय् द्रोणजन्तन्नेयय्तीटिनान् । २१
प्रत्यस्त्रमय्तु तटुत्तुतटुत्तुट-
नन्नयु घोरमाय् वन्नितु युद्धवु । २२
माद्रेयरु धर्म्मपुत्रादिवीररु
मानिच्चटुत्तु पॊरुतारतुनेर । २३

वीर युधिष्ठिर ने भी उसके बराबर अनेक लाखो बाण चलाए। सात्यकि नासत्य के पुत्र (नकुल और सहदेव) और भीम आदिको ने भी शरवर्षा की। ८-१४ बिना कही भी कमी दिखाये, शल्य ने सबसे युद्ध किया। यह देखकर द्रोणपुत्र दौड़ा और बाणो को बरसाया। घनश्याम सहित अर्जुन ने बादल के समान ज्याघोप करके सकोच छोड़कर शर बरसाये। देखनेवालो ने प्रशसा की। द्रोणशिष्य और द्रोणपुत्र, दोनों ने बडे वेग से शर बरसाये। दोनो ओर की बडी सेनाएँ दो विनाडिकाओ (एक घण्टे) के अन्दर समाप्त हो गयी। वृत्रारिपुत्र (अर्जुन) के क्रुद्ध होकर द्रोणपुत्र (अश्वत्थामा) के खिलाफ बाण चलाया। १५-२१ उसके जवाब मे अस्त्र भेजकर उसने रोका और बड़ा घोर युद्ध हुआ। माद्रेय और

क्कुन्नतिनॅत्र नरकं भुजिक्कणम् । १२
आकयालिन्द्रनिवनल्लिनियॅन्नु
भागवतन्मार् तपस्सु तुटङ्ङिनार् । १३
भीतिपूण्टिन्द्रनु काश्यपन् तन्नोटु
खेद कलर्न्नु पर्ञ्ञतु केळ्क्कयाल् १४
तापसन्मारॅ विळिच्चरुळि चॅय्तु
तापं महेन्द्रनु पोक्कुवान् काश्यपन् १५
नीक्क वरुत्तरुतिन्द्रनॅ निर्णयं
नीक्कं वरा निङ्ङळ् चिन्तिच्चतुमोर्त्ताल् । १६
पक्षीन्द्रनायिट्टॉरुवनुण्टामवन्
शक्रप्रतापं कॅटुक्कुमरिञ्ञालुम् । १७
पारं प्रभुत्वमुण्टॅन्नतङ्ङरिक्किलु-
मारुं कृशन्मारॅ निन्दियाय्कॅन्नतुं १८
काश्यपन् वासवनोटु चॉल्लीटिनान्
काश्यप पुत्र चरित्रमिनिच्चॉल्लाम् । १९

गरुडन्टॅ देवलोकप्राप्तियु अमृतापहरणवुम्

कोटि दिवाकरसंवर्त्तकाग्निक-
ळाटल् तेटीटुन्न दीप्तिकलर्न्नवन् १

हँसी उडाकर आगे बढ गया। वेदो मे कहा है कि जो औरो की हँसी उडाते है वे घोर नरक मे गिरेगे। उसमे भी ब्राह्मणो की हँसी उडाने मे कितने नरक सहना पडता है। यही कारण है कि भागवतो[1] (मरीचिप तापसो) ने तप प्रारभ किया ताकि आगे यह इन्द्र ही न रहे। ८-१३ इन्द्र भयभीत हो गया और उसने सारा वृत्तान्त खेद के साथ काश्यप को सुना दिया। सब सुनकर काश्यप ने तापसो को बुलाया और महेन्द्र का दुख दूर करने के लिए उनसे कहा। इन्द्र को अपने स्थान से न हटाना चाहिए, विचार कीजिए, आपके प्रयत्न से वह हटाया भी नही जा सकता। पक्षियो का एक इन्द्र (नाथ) पैदा होगा जो शक्र के प्रताप को हरा देगा, यह जान लीजिए। काश्यप ने इन्द्र से कहा—'जितना भी प्रभावशाली कोई हो, उसे दुर्बलो की निन्दा न करनी चाहिए'। अब काश्यप-पुत्र (गरुड) की आगे की कथा सुनादूँगा। १४-१९

1 भगवद्-भक्तो।

तेरिलेटिक्कोण्टुपोयी गुरुसुतन्
मारुति सात्यकि पाञ्चालवीररु
माद्रीतनयरु चुटुं वळञ्ञुते । ३४
शरनिकर शकलितशरीरनाय् शल्यरु
शमनसुतनोटु कोपिच्चटुत्तीटिनान् । ३५
विल्लु कवचवु तेरु कळञ्ञितु
शल्यरतुकण्टु निल्क्कुन्न मारुति ३६
शल्यर्तन् विल्लुं कवचवु तेरुम-
ङ्ङेल्लां मुरिच्चितु नल्ल शरङ्ङळाल् । ३७
वाळुं परिचयुं कैक्कोण्टितु शल्यर्
बाणङ्ङळेय्तु नुरुक्किनान् भीमनु । ३८
अप्पोळीरु वेलेटुत्तु युधिष्ठिरन्
कोप्पोटु कोपिच्चु नोक्कुकयु चेय्तान् । ३९
धर्म्मजन्माविन् तपोबलकोण्टतु
मुन्नमे कोपाग्नितन्निल् माद्राधिपन् ४०
मुन्ने दहिच्चानतेङ्किलु माधवन्
पिन्नेयु वेलयय्क्कन्नरुळ्चेय्कयाल् । ४१
भोगीन्द्रतुल्यमाय् चाले ज्वलिच्चुटन्
वेगेन चेन्नोरु वेल्कोण्टु शल्यरु ४२
पुक्कितु वानुलोकत्तु चेन्नन्नेर
चिक्कनें वन्नितु शल्यसहोदरन् । ४३

पाञ्चाल के वीरो और माद्री के पुत्रो ने उसको घेर लिया। शल्य तो शरसमूहो से घायल होकर अपने कोप मे युधिष्ठिर के पास पहुँचा। २९-३५ शल्य ने उसका धनुष, कवच और रथ नष्ट कर दिया। यह देखकर भीम ने शल्य के धनुष, कवच और रथ को भी अच्छे-अच्छे वाणो से काट डाला। जव शल्य ने अपने तलवार और चर्म लिये, तब उनको भी भीम ने शरो से काट डाला। तब युधिष्ठिर ने एक भल्ला उठाया और क्रुद्ध होकर देखा। युधिष्ठिर के तपोवल से माद्राधिप (शल्य) पहले ही कोपाग्नि मे जल गया, पर माधव के भल्ला भेजने के लिए कहने से सर्पवर के समान जलते हुए और वडे वेग से जानेवाले भल्ले के लगने से शल्य परलोक चला गया। तुरन्त शल्य का भाई पहुँचा। ३६-४३ महारथ युधिष्ठिर ने उसको जल्दी-जल्दी पीछे जाने के लिए कहा।

शल्यरुटे शरमेलातेयारुमे-
यिल्लेन्नु मिक्कतुं चॊल्लामतुनेर । २४
तेरॆय्तु नेरे नुऱुक्किनान् धर्म्मजन्
पूरिच्चितु शल्यदेहवुमन्पिनाल् । २५
पार मुऱिञ्ञिटरेऱिन मातुलन्
पोऱिल् कुऱञ्ञॊन्नॊळिच्चुनिन्नीटिनान् । २६
अन्नेरमाशु पऱञ्ञु युधिष्ठिरन्
निन्नोरु तेराळिवीररोटोक्कवे २७
पार्थन् मुकुन्दनुमायुटनेन्निटर्
तीर्त्तु वळियॆ पिरियातिरिक्कण । २८
पार्श्वस्थलङ्ङळिलाश्विनेयन्मारु
पाञ्चालसात्यकिमुन्पाय वीररु । २९
मुन्पिल् नटक्क वृकोदरन् पोरिनाय्
वन्पोटु शल्यरॆक्कॊल्लुन्नतुण्टु ञान् । ३०
वन्नितु शल्यर् सुयोधननोटुकू-
टॊन्निच्चरिकळॆक्कॊन्नीटुवकीटुवान् । ३१
मारुतितन्टे कॊटिमरमॆय्तुटन्
नेरे मुऱिच्चुकळञ्ञु सुयोधनन् । ३२
पाञ्ञटुत्तॊन्नटिच्चीटिनान् मारुति
चाञ्ञु निलत्तुपोय् वीणु कुरुपति । ३३

युधिष्ठिर आदि वीर बडे अभिमान के साथ आपस मे लडे । यह कहा जा सकता है कि वहाँ ऐसा कोई न था जिस पर शल्य का वाण न लगा हो। युधिष्ठिर ने सीधे रथ पर वाण चलाकर उसको नप्ट किया और शल्य का शरीर वाणो से भर गया । अत्यन्त घायल होकर मामा (शल्य) युद्ध मे कुछ शिथिल पड़कर अलग हो गये । उस समय युधिष्ठिर ने उपस्थित वीर रथियो से इस प्रकार कहा— अर्जुन और मुकुन्द मेरी दिक्कत दूर करे और मुझसे दूर न हो जायँ । २२-२८ नकुल और सहदेव मेरे पार्श्व मे रहे और पाञ्चाल, सात्यकि आदि वीर भी । भीम युद्ध के लिए आगे-आगे चले । आज मै शल्य को मार डालूंगा । तव शल्य सुयोधन के साथ शत्रुओ को समाप्त करने के लिए आया । सुयोधन ने भीम के झण्डे के खभे को वाण चलाकर काट डाला । दौड कर जाकर जब भीम ने एक मारा तव कुरुपति (सुयोधन) जमीन पर गिरा । अश्वत्थामा उसको रथ पर वैठाकर ले गया । तव भीम, सात्यकि और

मार्त्तुनिलविळिच्चाट्टियकट्टन्न
पार्त्थादि वीरन्मारोट्टु सुयोधनन् ५५
पोरिनाय् वेगेन तेरिलेऱिक्कोण्टु
घोरतयोट्टुमटुत्तानतुनेरं। ५६
धीरतयोट्टु पोरुतितु पाण्डवर्
मारिपोले शरं तूकि सुयोधनन्। ५७
अन्पुकोण्टुन्परनाटन्पोट्टु पुक्किकतु
वन्पट संभ्रमिच्चोटीलोरुत्तरु। ५८
कुरुवृषभगुरुजकृपभोजादिवीररुं
कोपं मुळुत्तोरु पाण्डवन्मारुमाय्। ५९
पोरुतळविलिरुपुऱवुमवरवरट्टुत्तुटन्
तेरुत्तेरे मरिच्चिचते शूररायुळ्ळवर्। ६०
भारतसेन मरिच्चितु मिक्कतु
भारवु तीर्न्नितु भूमिक्कतुनेरं। ६१
पारमार्त्थ्यमोरुनाळुमिल्लात्तवन्
पारमट्टुत्तु शकुनि पटयुमाय्। ६२
सकलकुलनृपनिधनकारणं काण्क नी
शकुनियें वरुन्नतु पोरिनु धीरनाय्। ६३
कट्टुमयोट्टु कोल्लु नीयेन्नु धर्म्मात्मजन्
झटिति सहदेवनोटोर्त्तु चोल्लीटिनान्। ६४

भोज को रथ पर वैठाकर ले गया। कोई भी उस समय पीछे न हटा। तव सुयोधन, गरजते हुए सवको भगानेवाले पार्थ आदि वीरो से लड़ने के लिए रथ पर वैठकर वेग से घोर बनकर निकट आया। ५१-५६ पाण्डव धैर्य से लड़े। सुयोधन ने शरवर्षा की। शर लगकर वडी सेना सोल्लास स्वर्ग चली। कोई भी घवड़ाकर न भागा। कुरुवृषभ, अश्वत्थामा, कृप, भोज आदि वीर अत्यन्त क्रुद्ध पाण्डवो के साथ लडे। दोनो ओर सैनिको ने शत्रु का सामना किया और शूरो का निधन हुआ। भारतसेना अधिकाश नष्ट हुई और पृथ्वी का भार भी नष्ट हुआ। शकुनि, जो कभी भी सत्य न जानता था, अपनी सेना के साथ निकट पहुँचा। "देखो! सभी कुलनृपो के निधन के कारण अव यह शकुनि धीर वनकर लडने आ रहा है"। ५७-६३ हे सहदेव! "तुम इसको निर्दय वनकर मारो" ऐसा युधिष्ठिर ने गरजकर कहा। वीर सहदेव शकुनि

पारातॆ पिन्नालॆ चॆल्कॊन्नयच्चितु
पोरिल् युधिष्ठिरनाय महारथन् । ४४
ऒक्क मरिक्कण नामिनियॆन्नुटन्
तिक्कियट्टुत्तितु माद्राधिपन्पट । ४५
ऒन्नुमे शेपियातॆ मरिच्चीटिना-
रॊन्निनॊन्नॊप्प मरिच्चितु कालाळु । ४६
पिन्नॆ मट्टुळ्ळवरोट्टुन्न नेरत्तु
पिन्नालॆ चॆन्नितु भीमादि वीररु । ४७
निन्नु पॊरुतु मरिच्चु परगति
नन्नाय् वरुत्तुविनॆन्नु सुयोधनन् । ४८
ऎन्नतु केट्टु तिरिञ्ञु चावाऩायि
निन्नोरिरुपत्तॊरायिर कालाळॆ ४९
ऒन्नोळियातॆयॊट्टुक्किनान् मारुति
निन्नॊरु साल्वनॊरानक्कळुत्तेऱि । ५०
वन्नानतु कण्टट्टुत्ततु पाञ्चालन्
कॊन्नान् गदकॊण्टटिच्चु करीन्द्रनॆ- ५१
यॊन्निच्चु सात्यकि साल्वनेयुमप्पो-
ळार्त्तटुत्तान् कृतवर्म्मावु कोपिच्चु ५२
सात्यकितानुमणञ्ञानतुनेर ।
तापेन वेगालटुत्तु कृपरुटन् ५३
तेरिलेटिक्कॊण्टुपोयितु भोजनॆ
आरुमॊरुत्तर् तिरिञ्ञीलतुनेर । ५४

'अव हम सवको मरना चाहिये' ऐसा कहती हुई माद्राधिप की सेना भिड़कर आगे वढी। एक न छोडकर सव मरे और पैदल सैनिक सव वरावर मरे। जव अवशिष्ट योद्धा भागने लगे तव भीम आदि वीर उनके पीछे दौडे। दुर्योधन ने कहा— "डट कर लड़ो, मरो और अपनी अच्छी गति वनाओ" यह सुनकर भागनेवाले लौटकर मरने के लिए डट गये, उनके वीस हज़ार पैदल सैनिको को एक न छोड़कर भीम ने समाप्त कर दिया। तव साल्व हाथी पर वैठा चला आया। ४४-५० यह देखकर पाञ्चाल निकट पहुँचा और अपनी गदा से मारकर उसने हाथी को समाप्त कर दिया, उसी समय सात्यकि ने साल्व का सामना किया, कृतवर्मा क्रुद्ध हुआ और सात्यकि उससे भिड़ गया। तव कृप घवड़ाकर निकट आया और

पेटियोटोटियोळिच्चानतुनेर-
माटल्पूण्टार् मट्ु शेषिच्चवर्कळुं । ७५
कण्टीलरचनेयेङ्ङुमन्नार् चिलर्
मिण्टाय्विनाशु पोरुविनेन्नार् चिलर् । ७६
पोयितु भोजादिकळ् नृपनेत्तिर-
ञ्ञायोधनत्तिनु कोप्पिट्टु भीमनुं । ७७
वलिय करिकुलवररे वन्पोट्टुत्तुटन्
तच्चुपोटिच्चु कोन्नोक्कयोटुक्किनान् । ७८
पिन्नेयुमोट्टु तिरिञ्ञुनिन्नार् चिलर्
निन्नवरे कोन्नोटुक्किनान् मारुति । ७९
पिन्नेयु मोटिनारोट्टु शेषिच्चवर्
पिन्नाले भीमनुं पाञ्ञटुत्तोटिनान् । ८०
कुमति कुरुकुलपति सुयोधनन्तानुमि-
क्कूट्टत्तिलुण्टेन्नरुळ्चेय्तु माधवन् ! ८१
अधिकसिततुरगयुतरथमखिलनायकन्
आशुगवेगत्तिलाशु नटत्तिनान् । ८२
अप्पोळ् विशेषमरिवानटल्क्कळं
कॆल्पोट्टु पुक्कोरु गावल्गणियेयु ८३
अॆत्तिप्पिटिच्चितु सात्यकनन्नेर ।
कुत्तियमप्पान् तुनिञ्ञु वृकोदरन् ८४

छिप गया और अन्य योद्धा घवडाये । कुछ लोगो ने कहा— "राजा कही दिखाई न दे रहे है । औरो ने कहा— 'वस ! चुप रहो और लड़ते जाओ' । ७१-७६ भोज आदि राजा को ढूँढने चले । भीम ने तो युद्ध की तैयारी की । वडे-वडे हाथियो का सामना करके उनको मार-मार कर समाप्त किया । कुछ लोग राजा को ढूँढते हुए वही उपस्थित थे । भीम ने उनको भी मारकर समाप्त किया । जो वचे थे वे भागने लगे और भीम ने उनका पीछा किया । माधव ने कहा कि कुमति कुरुपति (सुयोधन) इस भीड़ मे है । अखिलनायक ने अत्यन्त सफेद घोडो से युक्त रथ को शरो के वेग सा चलाया । ७७-८२ समाचार जानने के लिए युद्धभूमि मे चुपके प्रविष्ट गावलगणि को (सञ्जय को) उस समय सात्यक ने पहचान लिया । भीम तो उसे मारकर समाप्त करने को था पर जान न लेकर उसे छोड़ दिया । धानुष्क वीर अर्जुन, विख्यात माद्रीपुत्र, भीम,

शकुनियोॅटु पोॅरुतु सहदेवनां वीरनुं
शकलितशरीरनाय् पाञ्ञटुत्तीटिनान् । ६५
मधुमथननोॅटु विजयनतुपोॅळ्ळुतु चोॅल्लिनान्—
माधवा ! कूट्टुकोॅन्तेरट्टुत्तेट्वु । ६६
मरुतलयिल् निकटभुवि कूट्टिनानच्युतन्
मारिपोॅले शरं तूकिनानर्ज्जुनन् । ६७
रणमरणमतिसुकृतमेॅन्नु कल्पिच्चुट-
नवरवर्कळेॅतिर्पोॅरुतु तेॅरुतेॅरे मरिक्कयुं । ६८
विबुधयुवतिकळवरे विरवोॅटु वरिक्कयुं
वीणाधरन्मुनि नन्नाय् स्तुतिक्कयुं । ६९
विद्याधरादिकळोॅक्क स्तुतिक्कयु
दाहमुळ्क्कोॅण्टु पानीय कुटिक्कयुं
तापमुळ्क्कोॅण्टु भक्ष्यङ्ङळ् भक्षिक्कयुं ७०
पिन्नेॅयुं पोरिनाय् चेॅन्नडुङ्टुक्कयुं
वीभत्सबाणङ्ङळ् मेॅय्यिल् तरय्क्कयुं । ७१
द्रुपदसुतनोॅटु कुरुकुलाधिपन् तेरुमाय्
द्रुततरमट्टुत्तु वाणङ्ङळ् तूकीटिनान् । ७२
तेॅरेय्तु नेरे नुरुक्किनान् पाञ्चालन्
देहवुमेॅरे नुरुक्किनानन्नेर । ७३
वेगमेॅरीटु कुतिरयुमेरिनान् ।
वीरनाकुं दुरियोधनभूपनु ७४

से लडा और घायल होकर दौड़ आया। मधुमथन (कृष्ण) से अर्जुन ने उस समय कहा— हे माधव ! मेरे रथ को निकट ले जाओ। अच्युत ने शत्रुओ के पास रथ खड़ा किया और अर्जुन ने शरवर्षा की। युद्ध में मरना, सुकृत मानकर सैनिक शत्रुओ का सामना करके मरते गये। अप्सराओ ने उनका स्वागत किया और वीणाधर मुनि (नारद) ने उनकी स्तुति की। सभी विद्याधरो ने भी उनकी स्तुति की। योद्धाओ ने प्यास के कारण पानी पिया भूख लगने से भक्ष्य भी खाये। ६४-७० तदनन्तर युद्ध करने के लिए फिर शत्रुओं के निकट पहुँचे। और भयङ्कर वाण उनके शरीर मे लगे। तब दुर्योधन रथ पर वैठकर वेग से द्रुपदपुत्र के पास गया और उस पर शरवर्षा की। पाञ्चाल ने रथ को शरो से तोडा और उसके शरीर को भी वाणो से घायल किया। और वेग से चलनेवाले एक घोडे पर चढा। वीर राजा दुर्योधन डर के मारे कहीं

नारुमोरुत्तर् सहायवुं कूटाते
पोरुमिनि मम पोरुमेन्नोर्त्तवन् ५
काल्नटये तन्गदयुमेट्टुत्तुकों-
ण्टाननं कुन्पिट्टु वीर्त्तु वशकेट्टु ६
पेटिच्चु पेटिच्चु नोक्कि नोक्कित्तुलों
दुःखिच्चु दुःखिच्चु नाणिच्चु नाणिच्चु ७
दुष्कर्म्मशक्तिकळ् चिन्तिच्चु चिन्तिच्चु
केणुकेणाहन्त ! वीणुवीणूळियिल् ८
प्राणभयत्तोटु पाञ्ञु पाञ्ञेत्रयुं
दीननाय् मानियायोरु सुयोधनन् । ९
पोकुन्ननेरत्तु कण्टोरु सञ्जयन्
भोगिद्ध्वजनोटु केणु चोल्लीटिनान् । १०
ओक्केयोटुङ्ङी पटयुमरचरुं
मक्कळुं तन्पिमारुं मरुमक्कळु । ११
गुरुतनयनु कृपाचार्यनु भोजनुं
कूरुळ्ळतिल् नमुक्कुण्टु शेषिच्चिनि । १२
पाण्डवन्मार् तेळिञ्ञार्त्तु कळिक्कयु
ताण्डव चेय्कयुमट्टहसिक्कयु । १३
द्वैपायनमुनितन्नियोगत्तिनाल्
दिव्यविलोचनमेङ्कलुण्टाकयाल् १४

को याद कर-करके दुःखित हुआ। अत्यन्त घायल होकर, शत्रुओ से हारकर रक्त को हाथ से गिराता हुआ, बिलकुल निस्सहाय होकर, 'बस ! अब मुझे युद्ध न करना चाहिये' ऐसा सोचता हुआ, अपनी गदा लिए फूला हुआ मुंह नीचा करके बेबस होकर डर-डरके, चारो ओर देखता हुआ, अत्यन्त दुःखित और लज्जित होकर, १-७ अपने कुकर्मो की शक्ति पर विचार करता हुआ, रोता हुआ और बार-बार गिरता हुआ, प्राणभय से भागता हुआ यह मानी सुयोधन अत्यन्त दीन हुआ और पैदल चला। उसे चलते देखकर सञ्जय रोता हुआ भोगिध्वज (सुयोधन) से इस प्रकार बोला। सब समाप्त हो गये, सेनाएं, मित्र भूपाल, पुत्र, भाई, भाञ्जे सब ! गुरुपुत्र, कृपाचार्य, भोज, हमारे पक्ष के येही बचे। पाण्डव प्रसन्न होकर खेल रहे है, ताण्डव नाच रहे हे, अट्टहास कर रहे हैं। ८-१३ द्वैपायन मुनि की आज्ञा से मेरे पास दिव्यदृष्टि है। इस लिए मेरा जीवनाश न हुआ। दैव के विलासो का कैसे वर्णन किया जाय ! निरायुध होकर डर के मारे इधर-उधर भागते

कॊल्लाक्कॊलचॆय्तयच्चानवनॆयुं
विल्लाळियाकिय वीरन् विजयनु ८५
चॊल्लॆळु माद्रजपुत्रनुं भीमनुं
वल्लभमुळ्ळ धृष्टद्युम्नवीरनु ८६
नल्ल हयङ्ङळॆच्चेकवरोटुकू-
टल्लल्प्पॆटुत्तु कॊन्नॊक्कयोटुक्किनान् । ८७
त्रैगर्त्तसैन्यमोटे सुशर्म्माविनॆ
वैकर्त्तनालयत्तिन्नयच्चीटिनान् । ८८
माद्रतनयनु मारुतिवीरनु-
मार्त्तु शकुनियॆ कण्टटुत्तीटिनार् । ८९
मुन्पिल् वरुन्नवुलूकनॆयु कॊन्नु
वन्पटयु पटयुं कॊन्नाटुक्किनान् । ९०

दुर्योधनन्टॆ द्वैपायनह्रदप्रवेश

ओटि शकुनि सहदेवनन्नेर
कूटॆयटुत्तॆय्तरुत्तानवन्तल । १
वन्नितु पिन्नॆ मटुळ्ळवर् चावति-
न्नॊन्नॊळियातॆयॊटुक्किनार् पाण्डवर् । २
दुःखिच्चु मुन्नं विदुरर् परञ्ञतु-
मॊक्क निनच्चु निनच्चु सुयोधनन् । ३
पारं मुरिञ्ञिटरोटु वशकॆट्टु
चोरयुमॊट्टु वटिच्चुकळञ्ञव- ४

और प्रिय वीर धृष्टद्युम्न अच्छे-अच्छे घोड़ो पर बैठकर उनके साथ लड़े और उनको समाप्त कर दिया। त्रैगर्तसेना के साथ सुशर्मा को यमालय भेज दिया। माद्रपुत्र और वीर मारुति गरजते हुए शकुनि के पास पहुँचे। आगे-आगे आनेवाले उलूक को मारकर बडी सेना को समाप्त कर दिया। ८३-९०

दुर्योधन का द्वैपायनह्लदप्रवेश

शकुनि भागा। तब सहदेव ने उसके पीछे-पीछे जाकर उसका सिर शर से काट डाला। तब और योद्धा मरने आये। पाण्डवो ने एक न छोड़कर सबको समाप्त कर दिया। सुयोधन पहले विदुर की कही बातो

निन्नु परवानरुतिनिक्केतुमे-
योन्नुण्टु आनिन्नु चोल्लुन्नतु केळ्क्क । २६
वेळ्ळत्तिलोट्टुनेर किटन्नाल् मुरि-
ञ्ञुळ्ळोरु तापवुमोट्टुपोम्पिन्ने ना २७
चेन्नु युद्धं चेय्तु वैरिकुलत्तेयु
कोन्नोटुक्कामतिनिल्लोरु संशय । २८
खेदवुमोक्ककळञ्ञिनि निङ्ङळ् पोय्
दाहवुं सादवुं तीर्त्तु वन्नीटुविन् । २९
एवं परञ्ञवर्तम्मेययच्चु पोय्
द्वैपायनह्लदं तन्निल् मुळुकिनान् । ३०
भीमसेनन्नु मांसं कोटुत्तीटुन्न
भीमपराक्रममुळ्ळोरु काट्टाळन् ३१
अन्नन्नु नायाटिनिल्क्कुमतिन्करे-
यन्नुमविटेयकप्पेट्टितन्नेरं । ३२
कण्टानोळिच्चु नृपन् मुळुकुन्नतु
मण्टिवन्निङ्ङरियिच्चानवस्थकळ् । ३३
काट्टाळनाल् धृतराष्ट्रजोदन्तवुं
केट्टु सम्मानिच्चवनेययच्चथ । ३४
मारुति चोन्नान् महीपतितन्नोटु
वीरन्माराकुमवरजन्मारोटु । ३५

सदेह नही, जान लो । (तव दुर्योधन ने उत्तर दिया) मै आराम से वात न कर सकता हूँ । एक वात कहना है, सुन लो । अगर मैं थोड़ी देर के लिए पानी के अन्दर डूवा रहूँगा तो मेरे घावो का दर्द दूर हो जायगा । तदनन्तर हम सव जाकर युद्ध करेगे और शत्रुकुल का नाश करेगे, इसमे सन्देह नही है । २१-२८ खेद छोडकर तुम लोग जाओ और भूँख और प्यास दूर करके वापस आओ । उनको इस प्रकार रवाना करके वह द्वैपायन के तालाव जाकर पानी मे प्रविष्ट हुआ । भीमसेन को मांस देनेवाला एक पराक्रमी जङ्गल का रहनेवाला और उस तालाव के तटों पर शिकार करनेवाला उस दिन भी वहाँ पहुँचा । उसने राजा (दुर्योधन) को नहाते देखा और जल्दी दौड़कर भीम को सव समाचार वतला दिया । वनपुरुष से दुर्योधन का समाचार सुनकर भीम ने उसको पुरस्कार देकर रवाना कर दिया । तदनन्तर भीम ने युधिष्ठिर को और अपने छोटे भाइयो को सुना दिया । २९-३५ युधिष्ठिर ने केशव को

जीवविनाशमिनिक्कु वराञ्ञितु
दैवविलासङ्ङळेन्तु चौल्लावतु । १५
पेटियोटोटि निरायुधनाय ञान्
पेट्टुपाटेन्तु परयावतीश्वरा ! १६
कर्म्मदोपङ्ङळितेन्नु परञ्ञुटन्
कण्णुनीर् तूकुन्न सञ्जयनोटवन् १७
चौन्नान् सगलगदं वेगालोळुकुन्न
कण्णुनीर् ताने तुटच्चुतुटच्चहो । १८
मक्कळिल् ञान् मरिच्चीलेन्नु चौल्लुक
दुःखिच्चिरिक्कुं पिताविनोटाशु नी । १९
पोयालुमेन्नवन्तन्नेयय च्चवन्
पोयितु कृष्णह्रदे मुळुकीटुवान् । २०
भोजरुं द्रोणसुतनुं कृपरुमाय्
पोकु नृपनेत्तिरञ्ञु कण्टीटिनार् । २१
पोरिक पोरिनु ञङ्ङळुमायिनि
पोरिलरिकळेक्कोन्नोटुक्कीटुवान् । २२
पोरुं विषादं कलर्न्नतु भूपते !
पोरिल् मरिप्पान् मटियुटनुण्टाकिल् २३
नेरे परगतियिल्लेन्नु निर्णयं ।
पोराय्कयिल्लतिनोक्किल् नामारुमे २४
अल्लाय्किल् ञङ्ङळ् पौरुतु मरिक्कुमि-
ङ्ङिङ्ङल्लोरु संशयमेन्नरिञ्ञीटु नी । २५

हुए मुझ पर क्या-क्या बीती, यह मैं कैसे कहूँ, हे परमेश्वर ! यह सब मेरे ही कर्म का फल है ! इस प्रकार आँसू गिरानेवाले सञ्जय से दुर्योधन ने गद्गद के साथ अपने आँसुओ को स्वय पोछते हुए कहा। तुम जल्दी जाकर मेरे दु खित पिताजी से कहो कि उनके पुत्रो मे मैं एक अब नही मरा हूँ। जरा जल्दी चले जाओ। इस प्रकार उसको रवाना करके स्वय नहाने के लिए द्वैपायनह्रद (व्यासजी का तालाव) गया। १४-२० ढूँढ़ते हुए भोज, द्रोणपुत्र और कृप ने उसको चलते देखा। (और कहा) आओ, आओ, हमारे साथ लड़ने चलो ताकि सव शत्रु नष्ट हो जाये। हे राजन् ! अब दु ख छोडो ! अगर युद्ध मे मरने के लिए तैयार न हो तो तुम्हारी अच्छी गति न होगी, इसमे सन्देह नही है। हममे कोई भी इसके लिए पर्याप्त नही है, नही तो हम लडकर मरेंगे, इसमे कोई

चण्डतुण्डोज्ज्वलविग्रहमोटुमा-
खण्डलन्तन् पुरपुक्कतिवेगत्ताल् । २
चॅय्त पराक्रम चॉल्वान् पणि पणि
कैतवमल्ल पऱयुन्नतेतुमे । ३
एकन् निरायुधनाय गरुडनु-
मेकीभविच्चॉरु देवसमूहवुम् ४
तम्मिलुण्टायॉरु युद्धकोलाहलं
ब्रह्मादिकळ्क्कुं भयप्रदं निर्ण्णयम् ५
वज्रवु शक्तियु दण्डवु खड्गवु
पाशवुमङ्कुशवु गद शूलवु ६
ब्रह्मास्त्रमादियामस्त्रसमूहवु
चॅम्मे वृथाफलमॅन्नाय् चमञ्ञुते । ७
साक्षाल् जगन्मयनाय नारायणन्
ताक्ष्र्यनाकुन्नततिनिल्ल संशयम् । ८
तुण्डपतत्रन खादिकळेटॉरा-
खण्डलनादिकळ् मोहिच्चु वीणुते । ९
पीयूषकुंभपार्श्व प्रवेशिच्चप्पोळ्
तीयॅरियुन्नतु काणायितेटवुम् । १०

गरुड की देवलोकप्राप्ति और अमृतापहरणम्

एक कोटि सूर्य और प्रलयाग्नि को हरानेवाली दीप्तियुक्त, अपने चण्ड तुण्ड (भयंकर चोच) से उज्ज्वल शरीर सहित गरुड ने तुरन्त आखण्डल (इन्द्र) की पुरी मे प्रवेश किया। उसने जो पराक्रम किया उसका वर्णन करना कठिन है। जो कुछ मैं कहता हूँ उसमे झूठ कुछ भी नही है। एक ओर नि शस्त्र गरुड था और दूसरी ओर सारा देवगण जो एक हो गया था। उनका जो युद्ध-कोलाहल हुआ वह नि सन्देह ब्रह्म आदियो को भी भयप्रद था। वज्र, शक्ति, दण्ड, खड्ग, पाश, अकुश, गदा, शूल, ब्रह्मास्त्र आदि अस्त्रो का समूह सब विलकुल व्यर्थ सिद्ध हुआ। १-७ साक्षात् जगन्मय नारायण ही ताक्ष्र्य (गरुड) वन गया, इसमे सन्देह नही। उसके तुण्ड (चोच), पक्ष, नख आदि लगने से आखण्डल (इन्द्र) आदि देव वेहोश हो गये। वह जव अमृतकलश के पास पहुँचा, तव जलती हुई तीव्र अग्नि दिखाई दी। एक हजार कोटि मुखो की सृष्टि करके एक-एफ मुँह से वहती हुई नदियो को लेकर

केशवनोटरियिच्चितु धर्म्मजन्
केशिमथननुमप्पोळरुळ्चेय्तु— ३६
पोक नामेङ्किलविटेक्कु वैकाते
चाकिलु कोल्किलु नन्निनि निर्ण्णयं । ३७
वेगेन पाण्डवन्मारुं मुकुन्दनुं
वीरपुरुषनाकुन्न पाञ्चालनुं । ३८
दैवानुकूल्यमियन्न पटयुमाय्
द्वैपायनह्लद पुक्कारवर्कळु । ३९
तीरदेशे चेन्नु निन्नोरनन्तरं
धीरनां नारायणाज्ञया सत्वरं । ४०
बुद्धिमानाकिय धर्म्मतनयनुं
युद्धत्तिनायि विळिच्चरुळीटिनान् । ४१
मज्जनंचेय्त कुरुकुलमन्नवन्
दुर्ज्जनाग्रेसरन् दुर्ज्जयविक्रमन् ४२
सज्जलन्तालयन् सज्ज्वरात्मा खलन्
निश्चलभावमोटे किटन्नीटिनान् । ४३
निर्ज्जरेन्द्रात्मजपूर्व्वजन् धर्म्मजन्
सज्जनाग्रेसरन् विज्ज्वरात्मा नृपन् । ४४
अच्युतांघ्रिस्थितान्तः करणोत्तम-
नच्युतनोटुणर्त्तिच्चितु साकुलं । ४५
पोरिल् मरिक्कुन्नतिन्नु भयप्पेट्टु
नीरिलोळिच्चु किटक्कुन्न मन्नवन् ४६

बतलाया और केशिमथन (कृष्ण) ने इस प्रकार कहा। अब हम लोग बिना विलम्बके वहाँ चले, मरें या मारे, दोनो ठीक है, इसमे सन्देह नही। पाण्डव, मुकुन्द, और वीरपुरुष पाञ्चाल दैवानुग्रहवाली सेना के साथ जल्दी द्वैपायन के तालाब गये। उसके तट पर पहुँचने पर धीर नारायण की आज्ञा से बुद्धिमान् युधिष्ठिर ने दुर्योधन को युद्ध के लिए पुकारा। ३६-४१ पानी मे मग्न कुरुकुलपति, दुर्जनो का नेता, दुर्जयपराक्रमवाला, सज्जलरूप आलयवाला, भीतर जलनेवाला, खल, वही पर निश्चल बैठा रहा। तब अर्जुन के बडे भाई, सज्जनो के नेता, शान्त अच्युत के चरणो का ध्यान करनेवाले राजा युधिष्ठिर ने कृष्ण से कहा— युद्ध मे मरने के डर से पानी मे छिपा हुआ राजा अगर पानी से निकलेगा तभी तो हम उससे

ऍन्नु जरामरणादिकळ्कूटातॆ
वन्नीटवेण सुधापानचॆय्यातॆ । २२
ऍल्ला निनक्कॊत्तवण्ण वरिकॆन्नु
कल्याणमूर्त्तियनुग्रहिच्चीटिनान् । २३
ऍन्तटियनॊन्नु वेण्टतरुळ्चॆय्ति-
लन्तरमॆन्निये चॆय्वनॆन्नानवन् । २४
ऍङ्किलिनिक्कु नी वाहनमाकण-
मेन्कॊटिक्कङ्कवु नीयायिरिक्कणम् । २५
तम्पुराने ! निन्तिरुवटि कल्पिच्चा-
लॆन्पॆरुमाने ! इळक्कमिल्लॊन्निनुम् । २६
शभुविरिञ्चाद्यखिलप्रपञ्चवु
कम्पितभ्रूविलासोद्भवते प्रभो ! २७
नारायणनु गरुडनु तङ्ङळि-
लोरोन्निवण्ण पऱञ्ञुनिल्कुन्नेर २८
ईर्ष्यविशालमरेन्द्रन् गरुडनॆ
द्वेष्य कलर्न्नु तन् वज्र प्रयोगिच्चान् । २९
तार्क्ष्यनुमप्पोळवनोटु चॊल्लिनान्
दाक्ष्य पॆरिकयुण्टॆन्नयु नन्नु नी ३०
निन्नॆक्कणक्के महतामतिक्रम-
मिन्नॆनिक्किल्लॆन्नरिक महेश्वर ! ३१

गर्वविनाशन ! लक्ष्मीपते ! हरे ! ऐसा हो कि विना अमृतपान किये मुझे कभी जरा और मरण न हो।" कल्याणमूर्त्ति (मुकुन्द) ने अनुग्रह किया– "सब ऐसा ही हो जैसा तुम चाहते हो।" तव गरुड ने निवेदन किया– "मुझे आज्ञा दीजिए, और क्या करना है? वैसा ही करूँगा, कोई भेद नही हो पायेगा।" (भगवान् ने कहा—) "तो फिर तुम मेरे वाहन वन जाओ और तुम ही मेरे ध्वज का चिह्न भी वन जाओ।" "प्रभो ! मेरे स्वामी ! अगर यही आज्ञा है तो मेरे लिए शिरोधार्य है, इससे मैं नही हटूँगा। हे प्रभो ! तुम्हारी कम्पित भ्रू के विलास से शभु, विरञ्चि आदि सारा प्रपञ्च उत्पन्न है।" २१-२७ जव नारायण और गरुड आपस मे इस प्रकार सलाप कर रहे थे तव ईर्ष्या के कारण इन्द्र ने गरुड के विरुद्ध द्वेष के साथ अपने वज्र का प्रयोग किया। तव तार्क्ष्य (गरुड) ने इन्द्र से कहा–"जय तुम्हारी निपुणता की ! तुम वड़े होशियार हो ! पर जान लो कि मै वडो का, तुम्हारे समान अतिक्रम करनेवाला नही हूँ।

तीयुं पॉलिच्चङ्ङणञ्ञॉरुनेरमॉ-
रायिरमायिरमश्रङ्ङळुळ्ळॉरु १२
चक्रं भयङ्करमाय्क्कण्टनेरत्तु
पुक्कानतिकृशनायवटिन्मध्ये । १३
पिन्नॅयुमङ्ङणञ्ञीटुन्ननेरत्तु
पन्नगेन्द्रन्मारिरुवरॅक्काणायि । १४
आशीविषवरन्मारवर् नोक्कुकि-
लाशु दहिच्चुपोमेवरुं निश्चयम् । १५
धूळिजाल वरिषच्चु गरुडनु
काळसर्प्पङ्ङळ्क्कु नेत्रङ्ङळ् मूटिनान् । १६
यन्त्रवु भेदिच्चु पीयूषवु कॉण्टॉ-
रन्तरमॅन्नियॆ पोकुन्नतु नेरम् १७
कण्टु वळियिल् निन्नप्पोळ् मुकुन्दन् वै-
कुण्ठनसुरारि नारायणन् परन् १८
कॉण्टाटिक्कॉण्टरुळचेय्तु वरङ्ङळ् नी
कॉण्टुकॉळ्ळॅन्नोटु वेण्टतु नल्कुवन् । १९
ऍन्नरुळ्चॅय्तॉरु नाथनॅ वन्दिच्चु
नन्नाय् स्तुतिच्चु परञ्ञु गरुडनुम् । २०
सर्व्वलोकेश्वरा ! कारुण्यवारिधे !
गर्व्वविनाशन ! लक्ष्मीपते ! हरे ! २१

गया। जब आग बुझकर नष्ट हुई तब हजारो अस्र (नोक) वाला एक भयकर चक्र दिखाई दिया। [गरुड] बहुत दुवला बनकर उनके अन्दर घुस गया। ८-१३ जब सब फिर बुझने लगा तब दो पन्नगेन्द्र (वड़े सर्प) दिखाई दिये। वे जिनको भी देख ले वह अवश्य तत्क्षण ही जल जाय। तब गरुड ने धूलिवर्षा करके कृष्ण सर्पो की आँखे बन्द कर दी। फिर यन्त्र का भेद करके बिना विलम्ब के जब (गरुड) अमृत लेकर जा रहा था तब मार्ग मे वैकुण्ठ, असुरारि, नारायण, पर, मुकुन्द मिले। जिन्होने अभिवादन करके कहा—'मुझ से वर ले लो। तुम्हे जो चाहिए सो दूँगा।' जव नाथ ने इस प्रकार कहा तब गरुड उनकी वन्दना करके वोले। १४-२० "सर्वलोकेश्वर! कारुण्यवारिधे!

पक्षपुटकॉण्टॅटुत्तु पऱ्प्पॉरु-
पक्षिप्रवरनॅन्नॅन्नॅयऱिक नी । ४२
अप्पोळनुनयमोटु शतक्रतु
सत्पक्षियॅ प्रतिमानिच्चु चॉल्लिनान् । ४३
इत्तयॅल्ला महत्त्वं वळरु भवा-
नब्धिजमाममृत कॉण्टु कि फलम् ? ४४
मातावितुळ्ळॉरु दास्यमॉळिक्कॅन्नि-
येतुमिनिक्किल्लितिलॉरु काक्षितम् । ४५
मातृदास्यमितुकॉण्टु वीण्टाल् पुन-
रादरवोटुमिनिक्कु तरेण नी । ४६
वेण्टु वर तरुन्नुण्टु ञानॅन्नोटु-
वेण्टा विरोधवुमिन्नुतॉट्टिन्निमेल् । ४७
इत्तर वाक्कुकळ् केट्टु गरुडनु
चित्तमोदाल् मरुत्वानोटु चॉल्लिनान् । ४८
शक्र ! शतक्रतो ! विक्रमवारिधे !
चक्रायुधपदभक्तजनोत्तम ! ४९
चक्रिकळाकिय दुष्कृतजन्तुक्कळ्
वक्रशीलाकृतियुळ्ळवर् मिक्कतुं ५०
दुःख जगद्वासिकळ्क्कु वरुत्तुवो-
रक्षमन्माराय चक्षुःश्रवणन्मार् ५१

पर्वतो, सातो समुद्रो और सातो द्वीपो सहित सातो लोको को अपने पक्ष-पुट मे लेकर उडने की शक्तिवाला मैं एक मात्र पक्षिप्रवर हूँ, यह समझ लो" । ३७-४२ यह सुनकर शतक्रतु (इन्द्र) ने अनुनय के साथ पक्षि-प्रवर का सम्मान करके कहा—"इतने महत्ववाले तुमको सागर से निकले अमृत से क्या प्रयोजन है ?" (गरुड ने उत्तर दिया—) "अपनी माता को दास्य से मुक्त कराने के अलावा मेरा इसमे कोई प्रयोजन नही है" । (तब इन्द्र ने कहा—) "तो फिर जब माता का दास्य हट जायगा तब इसे मुझे सादर वापस कर देना । तुम्हे यथेष्ट वर दे दूंगा, आज से मुझ से विरोध करने की आवश्यकता नही है" । ४३-४७ इस प्रकार की बाते सुनकर गरुड ने प्रमोद (प्रसन्नता) के साथ मरुत्वान् (इन्द्र) से कहा—"हे शक्र !, हे शतक्रतु ! हे विक्रमसागर ! हे चक्रायुध (विष्णु) के चरण-भक्तो मे श्रेष्ठ ! ये जो चक्री (सर्प), पाप करने वाले जन्तु, वक्र शील

अन्तमिल्लात दधीचन् तपस्सिनॉ-
रन्तरं आन् वरुत्तीट्टुकयिल्लॅटो । ३२
शान्तबुद्ध्या पुनरित्थं परञ्ञुटन्
चॅन्तामराक्षप्रियनां महावलन् ३३
तूवलिलॉन्नु परिच्चॅरिञ्ञीटिनान्
देवेन्द्रनाय्क्कॉण्टु पक्षिकुलेश्वरन् ३४
इन्द्रन् पवनाशनाशननृतन्नोटु
मन्दस्मितं चॅय्तु चॉल्लिनानन्नेरम् ३५
सख्यमिनि नम्मिलुण्टायिरिक्कणम्
विक्रमं तावकं केळ्प्पिक्कयु वेणम् । ३६
अप्पोळमराधिपनोटु चॉल्लिना-
नल्पसारज्ञ ! जळप्रभो! केळ्क्क नी । ३७
आत्मप्रशंस मरणाल्परमॅन्न-
तात्माविलुण्टॅन्निरिक्किलुं चॉल्लुवन् । ३८
सख्यमुण्टाकयालल्लाय्किल् निन्नुटॅ
धिक्कारवुं पोकयिल्लॅन्नु निर्णयम् । ३९
दुर्ब्बोधमुळ्ळवरोटु चॉल्लाय्किलो
सल्ब्बोधमुण्टाकयिल्लवर्क्कॅन्नुमे । ४०
सप्ताचलङ्ङळु सप्तांबुधिकळु
सप्तद्वीपान्वितसप्तलोकङ्ङळु ४१

दधीचि जैसो के अनन्त तप मे मै कभी विघ्न नही पैदा करूँगा" । शान्त-बुद्धि के साथ इस प्रकार कहने के बाद पद्मलोचन (विष्णु) के प्रिय महावल गरुड़ ने अपने पख की एक तूलिका (रोयाँ) निकाल कर देवेन्द्र के ऊपर फेक दिया । तव इन्द्र मन्द मुस्कान के साथ पवनाशनाशन[1] (गरुड) से वोले—"अव भविष्य मे हम दोनो की दोस्ती होनी चाहिए और [अव तुम अन्य] अपने विक्रमो को भी सुनाओ ।" २८-३६ तव गरुण ने अमराधिप (इन्द्र) से कहा—"हे अल्पसारज्ञ ! जडप्रभो ! सुन लो ! यद्यपि जानता हूँ कि आत्म-प्रशसा करना मरण से भी निकृष्ट है, फिर भी दोस्ती हो जाने के कारण मै कह दूँगा, नही तो अवश्य तुम्हारा धिक्कार समाप्त नही होगा । जिन्होने गलत समझ रखा हो उनको अगर न वतला दिया जाय तो उनका सद्वोध कभी नही होगा । सातो

१ हवा पान करनेवाले सर्पो के नाशक ।

आचमनाद्यनुष्ठानङ्ङळु कऴि-
च्चाशीविषन्मार् वरुन्नतिन्मुन्नमे ६१
आशु पीयूषकलशमॅटुत्तुकॉ-
ण्टाशुगवेगाल् मऱञ्ञु महेन्द्रनुम् । ६२
वञ्चितन्माराय नागङ्ङळुममृ-
ताञ्चितमाय धरातल नोक्किनार् ६३
कुञ्चितग्रीवन्मारायवरॉक्कवे
सञ्चितदर्भान्वितस्थल नक्किनार् ६४
दर्भासिधारया रण्टाय् चमञ्ञतु
सर्प्पकुलत्तिनु जिह्वयुमक्कालम् । ६५
इक्कथ चॉल्कयु केळ्क्कयु चॅय्वोर्क्कु
दु खमकन्नु गतिवरिकॅन्नतु ६६
पक्षिकुलोत्तमन्तानरुळिच्चॅय्तु
पक्षभेदमितिनिल्लॉरुवर्क्कुमे । ६७

सर्प्पङ्ङळुटॆ पेरु प्रकृतवुम्

सूतनीवण्ण पऱञ्ञतु केट्टति-
मोद कलर्न्नॉरु शौनकन् चोदिच्चु । १
कद्रुविनादियिलुण्टाय पुत्रन्मा-
रॅत्रयुण्टॅन्नुमवरुटॆ नामवु २

आशीविषो (सर्पो) के आचमन आदि अनुष्ठान करके लौटने के पहले ही महेन्द्र अमृतकलश को झट से लेकर वायुवेग से तिरोहित[1] हो गये। ५४-६२ वञ्चित[2] सर्पो ने अमृताञ्चित[3] धरातल को देखा। सभी कुञ्चितग्रीवो (सर्पो) ने कुशो से बिछे हुए स्थान को चाट लिया। तभी से दर्भो की असि[4] के समान धार से सर्प कुल की जिह्वाग्र के दो भाग हो गये। तब पक्षिकुलोत्तम (गरुड) ने कहा—"जो यह कथा सुने या सुनावेंगे उनका दुख नष्ट हो जायगा और उनकी अच्छी गति होगी, इसमे कोई मतभेद नही" । ६३-६७

सर्पो के नाम और स्वभाव

सूतजी की यह बात सुनकर बडे प्रमोद के साथ शौनक ने पूछा—"पहले कद्रू के कितने पुत्र हुए और उनके क्या-क्या नाम है ? हे भद्रमते

१ अदृष्ट। २ ठगे गये ३ अमृत मे भीगे। ४ कुशो की तलवार जैसी धार।

पक्षीशनां मम भक्षणमाकणं
रक्ष भूवासिकळक्कुण्टाकुवान् विभो । ५२
ऍल्लां निनक्कॉत्तवण्णं वरिकॅन्तु
नल्ल वरङ्ङळ् कॉटुत्तु महेन्द्रनुम् । ५३
जभारियु कूटॅप्पिन्पे नटकॉण्टान्
वन्पना तार्क्ष्यनु नागालय पुक्कान् । ५४
कण्टुकॉण्टालुममृतु कलशवु
कॉण्टुवन्नेनमरन्मारॆ वॅन्नु ञान् ५५
शास्यमायुळ्ळतिनियुमुण्टो वहु-
लास्योत्तमन्मारॆ! साद्ध्यमिनिक्कॅल्लाम् । ५६
दास्यमॉळिप्पतिनॅन्तिनि वेण्टतु
हास्यमल्ल पऱयुन्नतरिञ्ञालुम् । ५७
एतुमितिल्परमॅन्तिनि वेण्टतु
साधिच्चितु ञङ्ङळ् चिन्तिच्चतॅल्लामे । ५८
इप्पोळ्त्तुटङ्ङीट्टॉळिञ्ञितु दास्यवु-
मद्भुतविक्रम पक्षिकुलोत्तम । ५९
दर्भं विरिच्चु सुधाकलश वच्चु
सर्प्पेन्द्रवृन्द कुळिप्पान् पुऱप्पॅट्टु । ६०

और वक्र आकृति वाले, अधिकाश जगत्-निवासियो को दु.ख देनेवाले, क्षमा-रहित चक्षुश्रवण (आँख के द्वारा सुनने वाले सर्प) है, वे मुझ पक्षीश के आहार हो जायँ, ताकि पृथिवी-निवासियो की रक्षा हो जाय"। सब ऐसा ही हो जैसा तुम चाहते हो"—यह कहकर महेन्द्र ने अच्छे वर दिये। ४८-५३ जभारि (इन्द्र) वापस चले गये और शक्तिशाली तार्क्ष्य (गरुड) नागालय को रवाना हुआ। (वहाँ पहुँचकर) वोला—"अमृत और कलश देख लो! देवो को मारकर मै छीन लाया हूँ। हे वहुलास्योत्तम (अनेक-मुँहवाले सर्पो!) और कोई आज्ञा है? मेरे लिए सब साध्य है। दास्य हटाने के लिए अव और क्या चाहिए? जान लो कि मैं हँसी नही कर रहा हूँ।" (सर्पो ने कहा–) "अव इसके अलावा और क्या चाहिए? हम लोगो की सव इच्छा पूरी हो गयी, आज से लेकर दास्य भी हट गया हे अद्भुतविक्रम! पक्षिकुलोत्तम!" फिर दर्भ[1] विछाकर उस पर अमृतकलश रख दिया गया; और सारा सर्पेन्द्र-वृन्द[2] स्नान करने चला।

---

१ कुश। २ सापो का झुण्ड।

कुञ्जरन् पीठरकन् गजभद्रनु
कुण्डोदरन् कोणनासन् महोदरन् १३
वीरन् प्रभाकरन् चारु विपायुधन्
घोरमुखरनॅन्नित्यादि नागङ्ङ- १४
ळटमिल्लातोळमुण्टवर् सन्तति ।
कुटमिल्लातवरु चिलरुण्टतिल् । १५
आयिरमॅण्णूरुमञ्ञूरु मुन्नूरु-
मेळञ्चु मून्नॉन्नुमाय तलयुळ्ळोर् । १६
आयुस्सिनु भेदमुण्टि वर्क्कॅल्लाक्कु-
मायतनङ्ङळु वेरुण्टु निर्णयम् १७
अन्तरिक्षस्वर्गभूमिपाताळङ्ङळ्
सिन्धुवनगिरिवृक्षादिकळिलु १८
नित्यसुखत्तोटिरिक्कुन्नवर्कळिल्
तत्त्वबोधादियुमुण्टु चिलर्क्कॅल्लाम् । १९
ऍन्नितु सूतन् परञ्ञोरनन्तर
पिन्नॅयु शौनकमामुनि चोदिच्चु । २०
अग्नियिल् वीणु चाकॅन्नु नागङ्ङळॅ-
क्कद्रु शपिच्चोरनन्तरमॅन्तवर् २१
चॅय्ततॅन्नम्मुनि चोदिच्चतु केट्टु
कैतॉळुतादरवोटु चॉल्लीटिनान् । २२

पीठरक, गजभद्र, कुण्डोदर, कोणनास, महोदर, वीर, प्रभाकर, चारु, विषायुध, घोरमुखर इत्यादि नाग है और उनकी सन्तति अनन्त है। उनमे कई एक निर्दोप भी है । ९-१५ उनमे एक हजार, आठ सौ, पाँच सौ, तीन सौ, सात, पाँच, तीन, और एक सिर वाले भी है । उनकी आयु मे भी भेद होता है तथा उनके आयतन (निवास-स्थान) भी अलग-अलग होते है"। अन्तरिक्ष, स्वर्ग, भूमि, पाताल, नदी, वन, पर्वत, वृक्ष आदि स्थानो मे आराम से रहनेवाले सर्पो मे कुछ ऐसे भी है जिनको तत्त्वज्ञान हो गया है"। सूतजी के इस प्रकार कहने के बाद महामुनि शौनक ने फिर पूछा—"आग मे गिरकर मर जाओ", इस प्रकार कद्रू के शाप देने के बाद उन्होने (सर्पो ने) क्या किया ?" महामुनि के इस प्रश्न को सुनकर सूतजी ने हाथ जोडकर निवेदन किया । १६-२२

भद्रमते सूत ! केळ्क्कयिलाग्रह-
मॅत्रयुमुण्टतु चॉल्लुकिल् नन्नॅटो । ३
चॉल्लुवानावतल्लेतुमे संख्ययु-
मिल्लवक्काकियालॉन्नु केट्टीटुविन् । ४
नूरुनूरायिरत्तिल् पुरु पिन्नॅयु-
मेरॅयुण्टुळ्ळततिल् प्रधानन्मारिल् ५
आरेळुपेरुटॅ नामङ्ङळ् चॉल्लुवन्
कूरीटुवान् पणियुण्टु मटॉक्कवे । ६
मुन्पिलनन्ततु वासुकि तक्षकन्
वन्पनां कार्क्कोटकन् महापद्मनु ७
पद्मनु शखपालाख्यन् नहुषनु
काळियनैरावतन् मणिनागनु
पिगलन् हेमगुहन् शिखि मुल्गरन् ८
नल्ल दधिमुखन्तानु मनोमुखन्
निर्म्मलन् पिण्डुकनु कुमुदाक्षनुं ९
सवृत्तनु वृत्तनु गजपादनु
शखनखनजनेश्वरन् पाण्डरन् १०
पुष्करन्, भीषणन्, कौरवन् शम्यकन्
श्रीवरन् पुष्कलनु धृतराष्ट्रनु ११
मूषिकभक्षन् सुबाहु हरिद्रकन्
शंखशिरस्सु महापुष्पदष्ट्रनु १२

सूतजी ! यह सुनने की इच्छा है, बतलाओगे तो अच्छा होगा"। (सूतजी ने उत्तर दिया–) "सब कहना बिलकुल असभव है। वे असख्य है। एक बात तो सुन लीजिए। (सर्प) सौ लाख से अधिक है, और उससे भी अधिक है। उनमे से छ सात प्रधानो के नाम बतलाऊँगा, औरो के नाम गिनाना बडा काम है। सबसे पहले तो अनन्त है, फिर वासुकि, तक्षक, शक्तिशाली कार्कोटक, महापद्म, पद्म, शखपाल, नहुष, कालिय, ऐरावत, म[illegible] [illegible]ल, हेमगुह, शिबि, मुद्गर, १-८ सुन्दर दधिमुख, मनोमुख, नि[illegible] कुमुदाक्ष, सवृत्त, वृत्त, गजपाद, अजनेश्वर, पाण्डर, ५[illegible], कौरव, शम्यक, श्रीवर, धृतराष्ट्र, मूषिकभक्ष, [illegible]द्रक, शखशिरा, [illegible]

निर्म्मलनाकुमनन्तनतुनेर
ब्रह्माविनॅत्तॉळुताशु चॉल्लीटिनान् । १०
वैर विनतयॉटु गरुत्मानॉटु
पारमुण्टम्मय्क्कु भ्रातृजनङ्ङळ्क्कुम् । ११
अम्मय्क्कुमॅन्ननुजन्मार्क्कुमुळ्ळॉरु-
दुर्म्मति कण्टु सहियाञ्ञवरॊटु- १२
मॉन्निच्चिरिप्पानरुतॅन्नु कल्पिच्चु
निन्नु तपस्सॉटु देहत्यागं चेय्वन् । १३
ऍल्लामरिञ्ञिरिक्कुन्नितु ञानॅटो।
चॅल्ला निनक्कधर्म्मत्तिङ्कल् मानसम् । १४
भूतलमॉक्कवे नी धरिच्चीटुक
भूधरनु प्रियनाय् वरिकाशु नी । १५
पक्षीन्द्रनु नीयुमॉन्निच्चिरिक्कण
लक्ष्मीपतिकलाशोद्भवन्मार् निङ्ङळ् १६
शेपियातॅ ममाण्ड दहिक्कुम्पोळु
शेषिक्क नीयॅन्ननुग्रहिच्चीटिनान् । १७
शेषनु पाताळलोकमकंपुक्क-
शेप तॅळिञ्ञितु लोकङ्ङळुमॅल्लाम् । १८

निर्मल अनन्त ने ब्रह्मा को प्रणाम करके कहा—"मेरी माता और भाइयो का विनता और गरुड से वडा वैर है। माता की और छोटे भाइयो की दुर्भावना देख उसे न सहकर, उनके साथ रहना असभव समझकर, मैं खडा तपस्या करता हुआ देहत्याग करूँगा"। ७-१३ (ब्रह्मा ने कहा—) "मैं सव जानता हूँ। तुम्हारा मन अधर्म मे न लगेगा। तुम सारे भूतल को धारण करो और भूधर[1] होकर तुम सर्वप्रिय हो जाओ। पक्षीन्द्र (गरुड) और तुम मिलजुल कर रहो क्योकि तुम दोनो लक्ष्मीपति के कलांश से उत्पन्न हो। जव मेरा अण्ड (ब्रह्माण्ड) निशेप[2] विलीन हो जायगा तव भी तुम शेप रहोगे"। इस प्रकार [ब्रह्मा ने] अनुग्रह किया। (तव) शेप पाताललोक चला गया और अशेप (समस्त) लोक प्रसन्न हो गये। १४-१८

१ पृथ्वी को धारण करनेवाले शेपनाग २ पूर्ण रूप से।

अनन्तन्टॅ तपस्सु

शान्तनायुळ्ळोरनन्तननन्तर
शान्ततयॉट्टुमिल्लातॅ धाताविनॅ १
चिन्तिच्चु पोयित्तपस्सु तुटङ्ङिनान्
बन्धमोक्षप्रभेदावलोकात्मना । २
पुण्यदेशं गन्धमादन प्रापिच्चु
निन्नु तपस्सोटनेकायिरत्ताण्टु ३
पिन्नॅयव्वण्ण बदर्याश्रमत्तिङ्कल्
चॅन्नु सुखेन तपस्सुचॅय्तान् चिरम् । ४
पुक्कितु गोकर्ण्णमॉट्टुनाळ् पिन्नॅयु
पुष्करारण्यं प्रवेशिच्चितु पिन्नॅ । ५
दु:खमकन्नु हिमाचलत्तिङ्कलु-
मुळ्क्काम्पुरुच्चु तपस्सुचॅय्तान् तुलोम् । ६
नन्दिच्चॅळुन्नरुळी चतुरास्यनुम्
वन्दिच्चु कूप्पिस्तुतिच्चाननन्तनुम् । ७
व्यग्रिक्कवेण्टा वरतरुन्नुण्टु आ-
नुग्रमायुळ्ळ तपस्सिनि निर्त्तुक । ८
लोकत्रयत्तिनु चूटुपिटिच्चितु
भोगिप्रवर ! तपोवल कॉण्टु ते । ९

अनन्त की तपस्या

शाप के अनन्तर शान्त अनन्त अपनी शान्तता को बिलकुल खोकर, ब्रह्मा का ध्यान करके चला गया और वन्ध और मोक्ष का भेद देखने के लिए उसने तपस्या प्रारभ की। [वह] पुण्यदेश गन्धमादन पर्वत पर पहुँचा और वहाँ उसने सहस्रो वर्ष तक तपस्या की। तदनन्तर बदर्याश्रम पहुँचकर उसी प्रकार चिर काल तक तपस्या की। उसके बाद कुछ समय के लिए गोकर्ण मे प्रवेश किया, और तदनन्तर पुष्करारण्य मे पहुँचा। उसके वाद दु ख छोडकर हिमालय मे भी मन स्थिर करके तपस्या की। १-६ प्रसन्न होकर चतुरास्य (चारमुखवाले ब्रह्मा) प्रत्यक्ष हुए। तव अनन्त ने अभिवादन करके हाथ जोडकर स्तुति की। (ब्रह्मा ने कहा—) "दु ख मत करो, मै वर दूंगा। इस उग्र तपस्या को अव वन्द करो। हे नागोत्तम! तुम्हारे तपोवल के कारण तीनो लोक गरम हो गये है"। तव

ब्राह्मणरिक्रिय चॅय्युन्नताकयाल्
ब्राह्मणराय् चॅन्नु शालयिल् पुक्कु ना १०
धार्म्मिकन्माराय् क्रियय्क्कु कूटॅवकूटि-
ब्राह्मणरॅक्कटिच्चाशु कॉन्नीटुक ११ .
मन्नवन्तन्नॅयु पिन्नॅक्कटिच्चुकॉ-
न्नॉन्ने सुखमे वसिक्क नामॅल्लारुम् । १२
भूदेवन्मारॅ वधिक्करुतॅन्नुमे
खेदमॅन्नालॉरुनाळुमॉटुङ्ङुमो १३
शापभयपरिहारं वरुत्तुवान्
पापकरङ्ङळायुळ्ळव नन्नल्ल । १४
अग्निशमनत्तिनग्नि नन्नल्लल्लो
मग्नमाक्केणं जलत्तिलते नल्लू । १५
ऍङ्किल् जनमेजयना नरपति
शङ्काविहीन जलक्रीडचॅय्युम्पोळ् १६
कॉण्टुपोकेण ना पाताळलोकत्तु
कण्टुकॉळ्ळा पिन्नॅ यागवुमन्नेरम् । १७
वेर्पिरिञ्ञाल् मर काय्कयिल्लॅन्नति-
कोपिकळा चिल भोगिकळ् चॉल्लिनार् । १८
कल्पान्तजीमूतकल्पवपुस्सॉटु-
मध्धिकळेळुमलरुन्नतुपोलॅ
दिग्भ्रममावण्णमभ्र निरञ्ञु ना- १९

सोचो ही मत"। (पर कइओ ने कहा—) "यह क्रिया (यज्ञ) ब्राह्मण ही करा रहे है, इसलिए हम ब्राह्मण बनकर यज्ञशाला मे घुसे और धार्मिक होने के कारण क्रिया मे शामिल होकर ब्राह्मणो को काटकर मार डाले, और फिर राजा ही को काटकर खतम कर दे, और सब मिलकर सुख से रहे"। (कुछ लोगो ने कहा—) "भूदेवो (ब्राह्मणो) का कभी वध न करना चाहिए, नही तो दु ख कभी भी दूर नही होगा। शापभय से बचने के लिए पापमय उपाय उचित नही है। क्या अग्नि से अग्नि का शमन हो सकता है? उसे पानी मे डुबो देना ही ठीक होगा"। ८-१५ कुछ क्रुद्ध सर्पो ने निवेदन किया—"राजा जनमेजय के नि शक जलक्रीडा करते समय उनको पाताल लोक मे उठा ले जाना चाहिए और उनका याग फिर देखा जायगा। जब जड ही नष्ट हो जायगी तब पेड फलेगा ही कैसे?"

शापभयमॉळिक्कुवान् सर्प्पङ्ङळुटॅ अभिप्रायम् ।

अग्रजन् पोयतरिञ्ञॉरु वासुकि
व्यग्रिच्चवरजन्मारोटु चॉल्लिनान् । १
मातृशाप तट्टुक्कावल्लॉरुत्तनु
भ्राताक्कळॅयतल्लो नमुक्कायतुम् । २
ऎन्नालुमापत्तु वन्नाल् निरूपण-
मॅन्नियॆ मटॉन्नुमावतुमिल्लल्लो । ३
आक्कुंमसाद्ध्यमायिल्लॉरु कार्यवु-
मोर्क्क विवेकमुण्टॅन्नु वरुन्नाकिल् ४
नल्लतिनियॅन्तितिनॅन्नु सन्तत,
मॅल्लावरुमॉरुमिच्चु चिन्तिक्कणम् । ५
शापबल कॉण्टु वश मुटिच्चिटु
भूपन् जनमेजयन्तन् महाक्रतु । ६
नामतु चॅन्नु मुटक्केणमॅङ्किले
काम वरू नमुक्कॅन्नतु निर्ण्णयम् । ७
अन्तणराय् चॅन्नपेक्षिच्चु यागत्ति-
नन्तर ना वरुत्तीटुकॅन्नु चिलर् । ८
मन्त्रिकळाय् चॅन्नु सेविच्चु पुक्कु ना
चिन्तिक्करुतॅन्नु चॉल्लुकॅन्नु चिलर् । ९

शापभय से मुक्त होने के लिए सर्पो के उपाय

वडे भाई के चले जाने का वृत्तान्त जानकर दुखित वासुकि ने छोटे भाइयो से कहा—"भाइयो ! माता के शाप से कोई नही वच सकता और वही हमको लगा है। फिर भी जव विपत्ति आ पडती है तव उपाय सोचने के अलावा और कोई मार्ग नही है। यह स्मरण रहे कि अगर विवेक हो तो किसी का कोई भी काम असाध्य नही है। अव सव से अच्छा उपाय क्या है, इस विपय पर हम सव मिलकर निरन्तर विचार करे। शाप-वल के कारण भूपति [राजा] जनमेजय का महायज्ञ [हमारे] सारे वश का नाश करेगा। हम जाकर उसे रोके। तभी तो हमारी अभिलाषा की पूर्त्ति होगी"। १-७ कइयो ने कहा—"हम ब्राह्मण वनकर चलें और कुछ माँगकर यज्ञ मे विघ्न पैदा करे"। औरो ने कहा—"हम मन्त्री वनकर चले, सेवा करे और भीतर से सलाह दे कि यज्ञ के लिए

व्याधियरिञ्ञु वेण चिकित्सिप्पति-
नेतॉरु वैद्यनुमॅन्नु धरिक्कणम् । ३०
अम्म कोपपूण्टु नम्मॅ शपिच्चनाळ्
निर्म्मलन्माराय देवकळॅल्लारु ३१
अभोजसभवन् तन्नोटु चोदिच्चार् ।
तम्पुराने ! तिरुवुळ्ळत्तिलेरीले ३२
कद्रुशाप कॉण्टु नागकुलमॅल्ला-
मग्नियिल् वीणॉटुङ्ङीटु दयानिधे ! ३३
सृष्टिच्च जन्तुक्कळिल् चिलतिङ्ङनॅ
नष्टमाय्पोवतॉळिच्चरुळेणमे ! । ३४
ऍन्नतु केट्टरुळ्चॅय्तु कमलज-
निन्नरियाञ्ञटङ्ङीटुकयल्ल आन् । ३५
दुष्टर् कटिच्चु कॉन्नीटु पलरॅयु-
मॉट्टॉटुङ्ङेणमॅन्निट्टुतन्नेयतुम् । ३६
शिष्टरायुळ्ळोर् मरिक्कयुमिल्लतिल् ।
दिष्टमॅन्तॅन्नु चॉल्ला विबुधन्मारे । ३७
आर्यकुलवरजातन् जरत्कारु
भार्ययवनु जरत्कारुवाय्वरुम् । ३८
अट़मिल्लात गुणङ्ङळोटुमवळ्
पॅट्टुटनुण्टाकुमस्तिकना मुनि ३९

मेरी बात को पसन्द नही करेगे। फिर भी सुन लीजिए। समझ लीजिए कि वैद्य कोई भी हो, पहले व्याधि क्या है यह जानकर ही इलाज कर सकता है। जब क्रुद्ध होकर माता ने हमलोगो को शाप दिया तब सभी निर्मल देवगणो ने अभोजसभव (ब्रह्मा) से पूँछा—'स्वामी ! अपने श्रीयुक्त मन मे सोचिए ! कद्रू के शाप के कारण सारे नागलोग आग मे गिरकर समाप्त हो जायँगे। हे दयानिधे ! ऐसा उपाय बतलाइये कि आपके सृष्ट जन्तुओ मे से कुछ यो समाप्त न हो जायँ।' २८-३४ यह सुनकर (कमलसे उत्पन्न) ब्रह्मा ने कहा—'मै इसलिए उदासीन नही हूँ कि मै यह नही जानता हूँ। दुष्ट सर्प बहुतो को काटकर मार डालेगे, कुछ नष्ट ही हो जायँ, इस बुद्धि से मै उदासीन हूँ। उनमे जो अच्छे है उनका नाश नही होगा। हे देवगण ! क्या विधि है, यह मै बतलाऊँगा। आर्यकुल मे उत्पन्न जरत्कारु की जरत्कारु नामक भार्या होगी। वह अनन्त गुणवाली होगी और मुनि

मभ्रनादभ्रममुद्धविप्पिच्चुकॉ-
ण्टद्भुताकार वरिषिच्चु पावकन्-२०
दीप्ति कॅट्टुत्तुटन् तल्प्रदेश विष-
व्याप्तमाक्केणमॅन्नाल् मुटङ्ङु मखम् । २१
सर्प्पप्रवरन्मार् नानाविध मत-
मिप्रकारङ्ङळ् पऱञ्ञोरनन्तर २२
वासुकियाकिय नागाधिपन् चॉन्ना-
नासुरमाय मतमिवयॉक्कवे । २३
ऍल्लावरुमॉत्तिनियु निरूपिक्क
नल्लतु तोन्नीटुवोळमॅन्ने वेण्टू । २४
चेर्न्नीलिनिक्किवयॉन्नुमापत्तिङ्कल्
तोन्नुकयिल्लल्लो नल्लतॉरुवनुम् । २५
कालानुरूपमायुळ्ळ विवेकवु
कालारियोटु पॉळि पऱञ्ञान् विधि २६
वेलयत्ते विवेक विनाशत्तिङ्कल्
मालॉळिप्पान् निरूपिप्पिनिन्नु निङ्ङळ् । २७
इङ्ङनॅ वासुकि चॉन्नॉरु वाक्कुकळ्
मंगलमाम्मारु केट्टोरनन्तरम् २८
एलापत्रन् तॉळुतॉन्नु चॉल्लीटिना-
नेला पलर्क्कुमितॅङ्किलु केळ्क्कणम् । २९

[औरों ने कहा—] "हमको चाहिए कि हम कल्पान्त के मेघ के समान रूप धारण करके सारे आकाश को ऐसा भर दे कि सभी दिशाएँ काँप उठे और सातों समुद्रो के गर्जन के समान मेघनाद पैदा करे और भयकर वर्षा करके यागाग्नि की दीप्ति को नष्ट कर दे और यज्ञभूमि को अपने विष से व्याप्त कर दे। इससे यज्ञ बन्द हो जायगा"। १९-२१ सर्पप्रवरो के इस प्रकार के भिन्न-भिन्न मत प्रकट करने के बाद नागाधिप वासुकि ने कहा—"ये सब आसुर मत है। सब मिलकर फिर विचार करो, जब तक एक अच्छा उपाय किसी को न सूझे। जो कुछ कहा गया है [वह] मुझे ठीक नही प्रतीत होता है। यह प्रसिद्ध है कि विपत्ति मे अच्छा उपाय नही सूझता और [समय के अनुसार] विवेक भी नही होता। विधि ने कालारि से झूठ कहा। विनाश के समय विवेक दिखलाना कठिन है, इसलिए दुःख दूर करने के लिए आप सब विचार कीजिए"। २२-२७ वासुकि की यह बात सादर सुनकर एलापत्र ने हाथ जोड़कर निवेदन किया—"कुछ लोग

श्रीपरीक्षिच्चरितम्

चॉल्लु शेषं कथयॅन्नितु शौनकन्
चॉल्लिनानानन्दमुळ्क्कॉण्टु सूतनुम् । १
भार्यापरिग्रहणाग्रह कूटातॅ
पारिल् जरत्कारु सचरिक्कुं काल २
इन्द्रात्मजात्मजनन्दनन् भूपति
चन्द्रान्वयोद्भवन् नायाट्टिनु पोयान् । ३
दुष्टमृगङ्ङळॅ नष्टमाक्कित्तनि-
क्किष्टमोटु विळयाटुन्नतुनेरं ४
अन्पुकॉण्टोटु मृगत्तॅ तिरञ्ञतिन्
पिन्पे नटन्नितु सत्वरं भूपति । ५
काणाञ्ञु नीळत्तिरञ्ञुळन्नॅत्रयु
क्षीणनाय् वन्नितु पैदाहपीडया । ६
काणायितप्पोळविटॅयॉरु मुनि
तानेयिरिक्कुन्नतेतुमिळकातॅ । ७
गोवत्सवक्त्रफेनाशनशीलना-
न्तापसनाय शमीकन् मौनव्रतन् । ८
चोदिच्चानम्मुनियोटु ञानॅय्तम्पु
वेधिच्चु पोय मृगत्तॅयुण्टो कण्टु ? ९

श्री परीक्षित् का चरित्र

शौनक ने कहा—"शेष कथा सुनाइए"। सूतजी ने सानन्द सुनाया भी। जब पत्नी-परिग्रह की इच्छा के बिना जरत्कारु पृथिवी पर सचार कर रहे थे, तब इन्द्रात्मजात्मजनन्दन (अर्जुन का पौत्र) चन्द्रवंश मे उत्पन्न राजा परीक्षित् शिकार खेलने गये। दुष्ट जन्तुओ को नष्ट करते हुए, और अपनी इच्छा के अनुसार खेलते हुए, वे जा रहे थे। एक दौडते हुए हरिन के पीछे भूपति अपना धनुप-बाण लेकर दौडे। जब वह न मिला तो उसको ढूंढने बहुत दूर चले गये और थककर भूंख और प्यास से पीडित हुए। १-६ उस समय एक मुनि दिखाई दिये जो अकेले निश्चल बैठे थे। वे तापस शमीक थे जो मौनव्रत का पालन करते थे और केवल बछडे के मुँह का फेना खाते थे। राजा ने उन मुनि से पूंछा—"क्या तुमने मेरे बाण से घायल एक हरिन को देखा है ?" तापस ने कोई उत्तर नही

अक्षिकर्णान्वयरक्षवरुत्तुवान्
दक्षनवनॅन्नरिकमरन्मारे । ४०
वानवरोटजनिङ्ङनॅ चॉन्नतु
आनरिञ्ञेनिनि वेण्टतु वैकातॅ ४१
सोदरियाय जरत्कारुनारियॅ-
स्सादर नल्कू जरत्कारुविन्नॅटो । ४२
ऍन्नितेलापत्रवाक्यङ्ङळ् केळ्क्कयाल्
नन्दितन्माराय् चमञ्ञितु नागङ्ङळ् ४३
वासुकि पण्टु पालाळि कटञ्ञनाळ्
पाशमायानॅन्न बन्धुत्वमोर्त्तिट्टु ४४
नाशमवनु वरायवानमरन्मा-
राशु विधिमत चॉन्नारवनोटु । ४५
शौनकन् सूतनोटप्पोळरुळ् चॅय्त-
तानन्दमुण्टु निन् वाक्कु केळ्क्कुन्तोरुम् । ४६
ऍन्तु जरत्कारुनामत्तिनर्त्थमॅ-
न्नन्तर्म्मुदा परञ्ञीटुक सूत नी । ४७
भीषणमाय शरीर दिन प्रति
शोषण चॅय्यु तपसा पुनरवन् ४८
कारण पेरतिनॅन्नु वरुमॅन्नु
सारना सूतन् परञ्ञोरनन्तरम् । ४९

अस्तीक को जन्म देगी। जान लीजिए, हे देवगण! कि वह अक्षिकर्णो[1] (सर्पो) के कुल की रक्षा मे कुशल होगा'। अज (ब्रह्मा) द्वारा देवगण से कही यह वात मुझे मालूम हुई। अव विना विलम्ब के वहिन जरत्कारु को मुनि जरत्कारु को सादर दान कीजिए।" ३५-४२ एलापत्र की यह वात सुनकर सभी सर्प वडे प्रसन्न हुए। प्राचीन काल मे क्षीरसागर के मन्थन के अवसर पर वासुकि पाश (रस्सी) वन गया था। उस सेवा को स्मरण करके देवगण ने ब्रह्मा के वचन को उसे सुनाया ताकि उसका नाश न हो जाय। उस समय शौनक ने सूतजी से कहा—"आपका वचन सुनते-सुनते आनन्द आता है। 'जरत्कारु' इस नाम का क्या अर्थ है? सूतजी! प्रमोद के साथ यह वतलाइए"। "भीषण शरीर को वह प्रतिदिन अपने तप के द्वारा शोषण करता रहता है। उस नाम का यही कारण है"—सारवान् सूत के इस प्रकार कहने के अनन्तर—४३-४९

१ आँखो से सुनने वाले।

अप्पोळरिञ्ञु शमीकनिवयॆल्ला-
मुळ्प्पूविलोर्त्तु मकनोटरुळ्चॆय्तु २०
उण्णी चॆरुप्प निनक्करिविल्लाट्टु
पुण्यवानाय गुणवान् महीपति । २१
सप्त व्यसनङ्ङळुण्टा नृपन्मार्क्क-
तॆप्पेरुमोर्त्ताल् प्रजकळ् पॊरुक्कणम् २२
आपत्तिनायुळ्ळ सप्तव्यसनङ्ङळ्
शोभिक्कयिल्ल नृपोत्तमन्मार्क्कुम् । २३
स्त्रीसेव चूतु नायाट्टु सुरापान
वाक्यपारुष्यवु दण्डपारुष्यवु
एळामतामर्थदूषणमायतु २४
ऎन्नतिल् नायाट्टुकॊण्टवन्बुद्धिक्कु
वन्न विकल्पत्तिनिङ्ङनॆ चॆय्यामो ? २५
नल्ल राजाक्कळ्क्कॊरु पिळयुण्टाकिल्
नल्लवरोर्त्तु पॊरुक्कुन्नतल्लयो ? २६
मन्नवनिङ्ङनॆ कर्म्ममाकुन्नतु-
मॆन्नुटॆ दोषमल्लॆन्नितु शृंगियुम् २७
ऎन्नालुमित्थ शपिक्करुतारॆयुं
वन्नुपोमॆन्नाल् तपस्सिनु नाशवुम् । २८

पुत्र से कहा—"बेटा ! तुम जवान हो। तुम बिलकुल नही जानते हो। राजा तो पुण्यवान् और गुणवान् है। राजाओं के सात व्यसन (दोष) होते है। उन सबको स्मरण करके प्रजाओ को क्षमा करना चाहिए। जब यह व्यसन विपत्तिजनक है तब वे नृपोत्तमो को भी शोभा नही देते है। स्त्रीसेवा, जुआ, मृगया (शिकार), मद्यपान, वाक्पारुष्य (गाली देना), दण्डपारुष्य (अतितीव्र दण्ड देना) और सातवॉ है अर्थदूषण (लालच से धन लेना)। उनमे से मृगया के कारण राजा को जो बुद्धिभ्रम हुआ क्या इसलिए यह किया जा सकता है ? (अर्थात् शाप दिया जा सकता है?) जब अच्छे राजाओ से भूल हो जाती है तब क्या सज्जनो को क्षमा नही करना चाहिए ?" २०-२६ शृंगी ने कहा—"यह मेरा दोष नही है कि राजा का यह कर्मफल होने वाला है"। शमीक ने कहा—"फिर भी किसी को इस प्रकार शाप नही देना चाहिये। नही तो अपना तप ही नष्ट हो जायगा। गुरु का काम है कि वह अपने शिष्य और पुत्र की, चाहे वे बडे

तापसनॉन्तुमुरियाटीलन्नेरम्
भूपतिवीरनभिमन्युनन्दनन् १०
कोपेन सर्प्पशवत्तॅ विल्कॉण्टॅटु-
त्तापत्तिनाल् वरुमॅन्नतोरातॅ ११
तापसश्रेष्ठन् कळुत्तिलिट्टीटिनान्
तापवु पिन्नॅ नरपतिक्कुण्टायि । १२
पापमितिनाल् वरुमॅन्नरिञ्ञवन्
शोभतेटुं पुरि पुक्किरुन्नीटिनान् । १३
अन्नु विधाताविनॅक्कण्टनुग्रह
नन्नाय् लभिच्चु सुरालयं पुक्कॉरु १४
शृंगियाकुन्न शमीकसुतनोटु
मंगलात्मा कृशनाय मुनिमुतन् १५
चॉन्नान् परिहासमोटथ शृंगियुं
तन्नुटॅ तातवृत्तान्तमरिञ्ञप्पोळ् १६
तापमोटाचमनादिकळु चॅय्तु
शापमिट्टीटिनान् भूपतितन्नॅयुम् । १७
इच्चॅय्त कश्मलनाय नराधिपन्
निश्चयमेळा दिवस मरिक्कणं १८
तक्षकन् वन्नु कटिच्चॅन्नरुळ्चॅय्तु
तत्क्षण तातनॅक्कण्टिव चॉल्लिनान् १९

देया। अभिमन्यु के पुत्र भूपतिवीर (परीक्षित) ने क्रुद्ध होकर एक मृत सर्प को अपने वाण से उठाकर, इसका बुरा परिणाम क्या होगा यह न सोचकर, तापस के गले मे डाल दिया। तदनन्तर राजा पछताने लगे। ७-१२ यह समझकर कि इसका परिणाम पाप ही होगा राजा अपने सुन्दर नगर को चले गये। उन दिनो शमीक का पुत्र शृंगी ऋषि ब्रह्मा की स्तुति करके उनका अनुग्रह लेने के लिए देवलोक गये। जव लं ब उनके मित्र कृश नामक मुनिपुत्र ने उन से दिल्लगी मे पिता का वृत्तान्त सुना दिया। पिता का वृत्तान्त सुनने के वाद शृंगी ऋषि ने दु खित होकर आचमन आदि करके राजा (परीक्षित) को इस प्रकार शाप दे दिया। "जिस पापी नराधिप ने यह काम किया है वह आज के सातवे दिन तक्षक के काटने से अवश्य मर जाय," और तत्काल ही पिताजी से यह वात कह दी। १३-१९ तव शमीक ने यह सव वात जानकर अपने मन मे सोचकर

आकुन्न रक्षकळ् चॆय्तुकॊण्टीटुक
भागधेयानुरूपं फल पिन्नेटम् । ४०
ऍन्निव चॊन्नॊरु गौरमुखनोटु
मन्नवना परीक्षित्तु चॊल्लीटिनान् । ४१
क्षुत्पिपासादिकळ्कॊण्टु चित्तभ्रम-
मल्पज्ञनामिनिक्कुण्टाककारणं ४२
दुर्गति वरातिरिप्पाननुग्रह-
मक्करुणानिधिक्कुण्टायिरिक्कणम् । ४३
निर्म्मलना भरद्वाजसुतात्मज-
ब्रह्मास्त्रशक्त्या मरिच्चितु मुन्नमे । ४४
मातावुतन्नुटॆ गर्भपात्र तन्निल्
माधवन् तृच्चक्रमोटुमकपुक्कु ४५
पैतामहास्त्र तटुत्तु रक्षिच्चुटन्
पैतलामॆन्नॆज्जनिप्पिक्कयु चॆय्तान् । ४६
द्रोणपुत्रन् ब्रह्मास्त्रत्तिङ्कल्निन्नु मल्-
प्राणनॆ रक्षिच्च नारायणन् जगल्- ४७
क्कारणन् कारुण्यपीयूपवारिधि
चारुचरणावुजं शरणं मम । ४८
नारायण हरे ! भक्तपरायण !
मृत्युनिवारण ! भुक्तिमुक्तिप्रद ! शक्तियुक्त प्रभो ! ४९

दाह के समय पाण्डवो के प्रति उसका जो वैर उत्पन्न हुआ वह आज भी उसके भीतर ताण्डव कर रहा है। जितनी रक्षा की जा सकती है उतनी कर लो। उसके वाद अपने भाग्य के अनुसार फल होगा"। ३३-४० इस प्रकार कहते हुए गौरमुख से राजा परीक्षित् ने निवेदन किया—"भूँख और प्यास के कारण उस समय मुझ अल्पज्ञ को चित्तभ्रम हो गया था। उन करुणानिधि का मेरे ऊपर अनुग्रह हो ताकि मेरी दुर्गति न हो जाय। निर्मल भरद्वाजसुतात्मज (द्रोणपुत्र अश्वत्थामा) के ब्रह्मास्त्र के वल से मैं पहले ही मर चुका था पर माधव ने अपने श्रीचक्र के साथ मेरी माता के गर्भाशय मे प्रवेश करके ब्रह्मास्त्र को रोक कर मेरी रक्षा की और मुझ वालक को जन्म दिया। जिन्होंने द्रोणपुत्र के ब्रह्मास्त्र से मेरे प्राणो की रक्षा की उन नारायण, जगत्कारण, कारुण्यामृत के सागर का चारु चरणाम्वुज ही मेरा शरण है। ४१-४८ हे नारायण! हरे! भक्तपरायण!

शिष्यनेयु निजपुत्रनेयु गुरु
रक्षिक्कवेण वळन्नलुमोर्क्क नी । २९
ऍन्नरुळ्चॅय्तु शमीकननन्तरं
तन्नुटॅ शिष्यनां गौरमुखनोटु- ३०
तन्नॅ रहस्यमाय् वेऱॅयरुळ्चॅय्तु ।
अन्यरायुळ्ळवरारुमऱियातॅ ३१
मन्नवनोटिव चॅन्नु नी चॉल्लण-
मॅन्नयच्चानवन् वेगेन हस्तिनम् । ३२
योगीशनाय शमीकभृत्यन् तथा
वेगेन हस्तिनमाय पुरि तन्निल् ३३
चॅन्नुपुक्कन्नृपन्तन्नोटु चॉल्लिनान्
ऍन्नोटु मल्गुरु चॉन्नतु केट्टालुम् । ३४
ज्ञानमिल्लातॉरु बालन् मम सुतन्
ञानऱियातॅ शपिच्चरुळीटिनान् । ३५
मारणमायॉरु शापमतॅत्रयु
दारुणमायॉन्नु दैवमतमल्लो । ३६
तक्षकनाकिय चक्षुःश्रवणनु-
मक्षमनॅत्रयुं सल्क्षितिपालक ! । ३७
खाण्डवकाननदाहकाले पुरा
पाण्डवन्मारॅक्कुऱिच्चुळ्ळ वैरवु ३८
गाण्डीवचापधरात्मज नन्दन !
ताण्डव चॅय्युन्नितुळ्ळिलवनिन्नुम् । ३९

गये हो, रक्षा करे, यह जान लो" । इतना कहने के वाद अपने शिष्य रमुख से एकान्त मे अलग से कहा—"तुम जाकर भूपति (परीक्षित) से न सव वातो को कह दो, और किसी को पता न लगे" । इतना कहकर सको रवाना कर दिया । २७-३२ योगीश शमीक-भृत्य (शमीक का ष्य गौरमुख) तुरन्त हस्तिनापुर पहुचा । राजगृह मे प्रवेश करके उसने पति से निवेदन किया—"मेरे गुरु ने जो सदेश भेजा है वह सुन लीजिए । मेरे ज्ञानरहित पुत्र ने मुझ से कहे विना, आपको शाप दे दिया है । वह हुत ही घातक शाप है, यह प्रसिद्ध है कि दैव वडा दारुण है । अच्छे भूपति ! तक्षक नामक चक्षुश्रवा (सर्प) वडा कोपशील है । गाण्डीवचापधरात्मजनन्दन ! (अर्जुन के पौत्र !) खाण्डव वन के

विप्रशापत्तिनु पिल्पाटु नल्लतॅ-
न्नल्पेतरज्ञन्मार् चॉल्लियु केळ्-पुण्टु । ५९
दु खवु सौख्यवुं मृत्युवु जन्मवुं
स्वर्ग्ग नरक जरानरशीतोष्ण ६०
इत्याद्यनेकविधं द्वन्द्वजालङ्ङळ्
मित्थ्ययत्रे महामायागुणवशाल् । ६१
अद्वयनव्ययन् पूर्ण्णनेकन् परन्
नित्यन् निरुपमन् निर्ग्गुणन् निष्कळन् ६२
निश्चलन् निर्म्मलन् निस्पृहन् निर्म्मम-
नच्युतनाद्यनन्तनानन्दात्मा ६३
निर्व्विकारन् निराकारन् निराधारन्
निर्व्विकल्पन् निराख्यानन् निरामयन् ६४
सत्यज्ञानानन्तानन्दामृतन् माया-
कृत्यकर्त्ता भर्त्ता हर्त्ता जगत्पिता ६५
वेदस्वरूपन् वेदार्त्थसारात्मकन्
वेदवेदागवेदान्तवेद्यन् परन् ६६
गूढन् परमन् परापरनीश्वरन्
कूटस्थनव्यक्तनादिनाथन् शिवन् ६७
शान्तनात्मारामनात्मप्रियन् जगल्-
कान्तनात्मप्रदन् विश्वपति हरि ६८
कृष्णन् यदुपति सत्पति मत्पति
वृष्णिकुलपति पत्मालयापति ६९

ब्राह्मण के शाप को सहने के बाद अच्छी स्थिति हो जाती है। दु ख और सुख, मृत्यु और जन्म, स्वर्ग और नरक, जरा और पलित (सफेद बाल), गरम और ठंडा, इस प्रकार के अनेक द्वन्द्व जो महामाया के गुणो से होते है वे सब मिथ्या हैं। ५७-६१ अद्वय, अव्यय, पूर्ण, एक, पर, नित्य, निरुपम, निर्गुण, निष्कल, निश्चल, निर्मल, निस्पृह, निर्मम, अच्युत, आद्य, अनन्त, आनन्दात्मा, निर्विकार, निराकार, निराधार, निर्विकल्प, निराख्यान, निरामय, सत्यज्ञानानन्त, आनन्द, अमृत, माया के कृत्यो का कर्ता, भर्ता, हर्ता, जगत्पिता, वेदस्वरूप, वेदार्थसारात्मक, वेद, वेदाङ्ग और वेदान्त का वेद्य, पर, गूढ, परम, परापर, ईश्वर, कूटस्थ, अव्यक्त, आदिनाथ, शिव, शान्त, आत्माराम, आत्मप्रिय, जगत्कान्त, आत्मप्रद, विश्वपति,

सच्चिल्परब्रह्ममूर्त्ते ! परमात्म-
नच्युतानन्द ! गोविन्द ! मुकुन्द म- ५०
च्चित्तालयानन्द कृष्ण ! विष्णो ! हरे !
विप्रशाप तट्टुक्कावल्ल निर्णयम् । ५१
चिल्पुमाना तन् तिरुवटिक्कुमतो
मुल्पाटु वृष्णिकुलविनाशकॉ-
ण्टॅन्नुळ्प्पूविलुण्टतु वैभव तावकम् । ५२
पण्टे मरिच्चोरिनिक्कु मरणत्ति-
नुण्टो भयमिन्नु नन्नायितॅन्नयुम् । ५३
मुम्पे मरणमऱियिच्चतुमिनि-
क्कॉम्पॅरुमान्‌तन्ननुग्रह निश्चयम् । ५४
आनन्दबाष्पमोटु गद्गदाक्षर-
वाणिकळोटु रोमाञ्चवु पूण्टवन् ५५
सच्चिल्परब्रह्मणि लयिच्चानन्द-
निश्चलनाय् मुहूर्त्त निन्नरुळिनान् । ५६
बुद्धियु ब्रह्मपूर्णाब्धियिल्‌निन्नुट-
नुद्धरिप्पिच्चु लोकात्मना चॉल्लिनान् । ५७
सर्प्प कटिच्चु मरिच्चाल् गतियिल्लॅ-
न्निभूतलत्तिङ्कलुण्टु जनश्रुति । ५८

हे मृत्युनिवारण ! भुक्ति-मुक्तिप्रद ! शक्तियुक्त ! प्रभो ! हे सच्चित्पर-ब्रह्ममूर्त्ते ! परमात्मन् ! हे अच्युत ! आनन्द ! गोविन्द ! मुकुन्द ! हे मेरे चित्तालय के आनन्द ! कृष्ण ! विष्णो ! हरे ! नि सन्देह ब्राह्मण का शाप टाला नही जा सकता । आप चित्-पुरुष स्वामी के लिए भी ऐसा ही है । पहले वृष्णिकुल के नाश के कारण आपके वैभव को मेरा मन जानता है । मैं पहले ही मर चुका हूँ, मुझे मृत्यु से क्या डर है ? यह स्थिति अच्छी ही है । मेरा मरण मुझे पहले ही से विदित हो गया, नि सन्देह यह भी मेरे स्वामी ही का अनुग्रह है। [इस प्रकार राजा परीक्षित] आनन्द के आँसुओ और गद्गदाक्षर वाणी के साथ रोमाच अनुभव करते हुए सच्चित्परब्रह्म मे एक क्षण के लिए लीन होकर निश्चल हो गये । ४९-५६ ब्रह्ममय सागर से अपनी बुद्धि को उद्धार करके लोक मे आकर बोले । "लोक मे यह कहावत है कि जो साँप का काटा मर जाता है उसकी गति नही है । बहुजो के मुँह से यह भी सुना है कि

चुट्टुमिरुत्तियतिन्मेलिरुन्नितु
पट्लर्कालना विष्णुरातन् नृपन् । ८०

काश्यपतक्षकसंवादम्

तक्षकन् मूलमे मृत्युवरु प्रजा-
रक्षाकरनाय राजाविनॅन्नतु १
तल्क्षण केट्टु नृपवरजीवन
रक्षिप्पनॅन्नु पुरप्पॅट्टु काश्यपन् । २
वृद्धतपोधनवेषवु कैक्कॉण्टु
पद्धतिमध्ये भुजगप्रवरनु ३
तातनॅक्कण्टु चॉन्नानॅविटेक्किकन्नु
यातनायीटुन्नतॅन्नरुळ् चॅय्यणम् । ४
शृगिशापकोण्टु तक्षकदष्टना
मगलभूपनॅ रक्षिप्पतिन्नु ञान् ५
पोकुन्नितॅन्नतु केट्टॉरु तक्षक-
नाकुन्नतल्लतटङ्डीटुक नल्लु । ६
सर्व्वविषहरणत्तिन्नु दक्षन् ञान्
दर्व्वीकरविषमॅन्त्रसारं तुलोम् । ७

सर्पो के नाशक मन्त्र और यन्त्र इकट्ठा किये और मृत्युजय कर्म करने मे कुशल ब्राह्मणो को और मुनियो को चारो तरफ बैठाया और स्वय प्रासाद पर रहने लगे । ७५-८०

काश्यप और तक्षक का संवाद

उस समय यह सुनकर कि तक्षक द्वारा ही प्रजाओ के रक्षक राजा की मृत्यु होगी, मुनि काश्यप इस अभिप्राय से घर से निकले कि मै राजा के जीवन की रक्षा करूँगा । मार्ग मे वृद्ध तापस का वेष धारण किये हुए भुजगप्रवर (तक्षक) ने पिता (काश्यप) को देखकर पूछा—कृपया बतला दीजिए कि आप आज कहाँ जा रहे है ? काश्यप ने उत्तर दिया—शृगी के शाप के कारण तक्षक द्वारा डँसे गये मगलमय राजा परीक्षित की रक्षा करने के लिए मैं जा रहा हूँ । यह सुनकर तक्षक ने कहा—यह बिलकुल असभव है । अच्छा यही होगा कि आप कुछ न करे । जब काश्यप ने कहा—"सभी प्रकार के विषो के हरण मे मै कुशल हूँ ।

विष्णु धरापति वृन्दारकपति
जिष्णुपति शौरि धर्म्मपति विभु ७०
यज्ञपति पाण्डुपुत्रगतिपति
सुज्ञानिनां पति देवन् पशुपति ७१
गोपति गोपीजनपति गोपति
गोपकुलपति पद्मविलोचनन् ७२
देवकीनन्दनन्नॅन्नुळ्ळिल् वाळुन्न
देवदेवन् तनिक्कॉत्ततॅल्लां वरुम् । ७३
पापियायोरपराधियामॅन्नोटु
कोपमुण्टाकातनुग्रहिक्केणमे । ७४
इत्थ क्षमानमस्कारङ्ङळ् पिन्नॅयुं
पृथ्वीपति चॅय्तयच्चानवनॅयुम् । ७५
तक्षकन् वाराय्वतिन्नु नृपतियुं
तक्षप्रवररॅयॉक्क वरुत्तिनान् । ७६
कल्पिच्चितेकस्तंभाग्रे दुरारोह-
शिल्पप्रासादवु तल्प्रदेशङ्ङळिल् ७७
काकोदरासह सिद्धौषधङ्ङळुं
काकोळनाशनमन्त्रयन्त्रङ्ङळु ७८
मृत्युजयक्रियादक्षन्मारायुळ्ळ-
पृत्थ्वीसुरन्मारॅयुं मुनिमारॅयुं ७९

हरि, कृष्ण, यदुपति, सत्पति, मत्पति, वृष्णिकुलपति, लक्ष्मीपति, वि[illegible] धरापति, देवो के पति, जिष्णुपति, शौरि, धर्मपति, विभु, यज्ञपति, पा[illegible]-पुत्रो की गति के स्वामी, सुज्ञानियो के पति, देव, पशुपति, गोपति, गोपीजनपति, इन्द्रियो के पति, गोपकुलपति, पद्मविलोचन, देवकीनन्दन और मेरे भीतर विराजमान देवदेव जो चाहेंगे वही होगा। क्रुद्ध न होकर इस पापी और अपराधी पर भगवान् अनुग्रह करे। ६२-७४ इस प्रकार क्षमा माँगकर और नमस्कार करके पृथ्वीपति (राजा परीक्षित) ने गौर-मुख को बिदा कर दिया। नृपति (राजा परीक्षित) ने तक्षक के प्रवेश को रोकने के लिए देश के श्रेष्ठ तक्षको (बढइयों) को बुलवाया और उनके द्वारा एक स्तभ के ऊपर एक शिल्प-प्रासाद बनवाया जो दुरारोह (चढने मे क[illegible]) था। शत्रुनाशक राजा विष्णुरात (परीक्षित्) ने वहाँ [illegible] सर्पो) के लिए असह्य सिद्धौषध

निग्रहानुग्रहविग्रहवृष्टिक-
ळग्रकुलाग्रेसराश्रयभूतङ्ङळ् । १८
पिन्नॅ विशेषिच्चु तक्षकन् तन्विप-
मॉन्नुकॉण्टु तटुक्कावल्ल निर्णयम् । १९
आकाक्षयायतॅन्तुळ्ळिलवनॅन्नॉ-
राकाक्ष मारीचनुण्टायतुनेरम् । २०
क्रुद्धना तक्षकन् काश्यपन् तन्नोटु
वृद्धतपोधनवेपमुवेक्षिच्चु २१
तक्षकनायतु आनॅन्नरिञ्ञालुम् ।
पक्षे परीक्षिच्चुकॉण्टालुमिप्पोळ् २२
ऍन्नुपरञ्ञु कटिच्चितु तक्षकन्
निन्न महावटवृक्षत्तॅयन्नेरम् । २३
तक्षकक्ष्वेळाग्निहेति पिटिपॅट्टु
वृक्षप्रवरनु भस्ममाय् धूळिच्चु । २४
निन्न निल तॉट्टुतन्नॅ जपिच्चितु
पन्नगाधीश्वरन् मुन्पिले मामुनि । २५
नन्नाय् मुळच्चु तळिर्त्तितु पेरालु
मुन्नेतिलेटवु नन्नायितन्नेरम् । २६
इप्परीक्षिच्चतु नन्नेटमॅङ्किलु-
मिप्परीक्षित्तु जीविक्कुन्नतिल्लल्लो । २७

(दण्ड), अनुग्रह (कृपा) विग्रह (युद्ध) और वर्षा, प्रथम वर्ग के श्रेष्ठो के आश्रित है। ऊपर से विशेषत यह भी है कि तक्षक का विप नि सन्देह किसी भी प्रकार रोका नही जा सकता। ९-१९ तव मरीचिपुत्र (काश्यप) सोचने लगे—इसके मन मे क्या इच्छा है ? उस समय तक्षक अपने वृद्ध तापस का वेप त्याग कर क्रोधपूर्वक काश्यप से वोला—जान लीजिए कि मैं ही तक्षक हूँ। और आप ही अभी-अभी इसकी परीक्षा कर सकते है। इतना कहकर तक्षक ने एक खडे विशाल वटवृक्ष को काट लिया। तक्षक की विपाग्नि लगने से वह वृक्षप्रवर भस्म हो गया ! तव महामुनि ने जहाँ खडे थे वही की भूमि को स्पर्श करके पन्नगाधीश (तक्षक) के सामने जप किया। आश्चर्य ! वटवृक्ष फिर उग निकला और पहले से भी अच्छा और सुन्दर हुआ। तव तक्षक ने कहा—यह परीक्षा अच्छी हुई। परतु राजा परीक्षित् तो नही जियेगे।

ऍन्नरुळ्चॅय्ताँरु काश्यपन् तन्नोटु
पिन्नॅयुमॉन्नु चॉल्लीटिनान् तक्षकन् । ८
ऍन्तु फल धरणीन्द्रनॆ रक्षिच्चाल्
चिन्तितमॅन्नोटरुळ्चॅय्कयु वेणम् । ९
जीवनरक्षणत्तिन्नु सुकृतमु-
ण्टावोळंमर्त्थंवु किट्टुं नमुक्कॅन्नान् । १०
सर्व्वजनत्तॅयुं रक्षिच्चुपोरुन्नो-
रुर्व्वीश्वरन्तन्नॆ रक्षिच्चुकॉळ्ळुम्पोळ् ११
सर्व्वरक्षाकरमाय् वरुमॅन्नयु
दिव्यनल्लो सव्यसाचिसुतात्मजन् । १२
देहिकळॆप्परिपालिच्चु कॉळ्ळुकि-
लैहिकपारत्रिकङ्ङळु साधिक्काम् । १३
तक्षकन् तातनॉटप्पोळुरचॅय्तु
रक्षिप्पतिन्नु पणियुण्टु निर्ण्णयम् । १४
ब्राह्मणशाप तटुक्करुताक्कुमे
धार्म्मिकन्मारॅन्निरिक्किलु केवलं १५
ब्रह्मनु विष्णुविनुं महादेवनु
सम्मत भूदेवशापवरादिकळ् । १६
सर्व्वलोकङ्ङळ्क्कुमीश्वरनायतु-
मुर्व्वीसुररॅन्नरियुक मुनिवर ! १७

साँप का विष विलकुल नि सार है", तव तक्षक ने फिर निवेदन किया—१-८ भूपति की रक्षा करने से क्या फल मिलेगा ? आप अपना अभिप्राय मुझे वतला दीजिए। काश्यप ने कहा—जीवन की रक्षा करने से वडा पुण्य होता है। ऊपर से मुझे यथेष्ट धन भी मिलेगा। सारी प्रजा की रक्षा करने वाले उर्वीश्वर (राजा) की रक्षा करने से सबकी रक्षा हो जाती है। क्योकि सव्यसाचिसुतात्मज (अर्जुन के पुत्र का पुत्र) दिव्यपुरुष तो है ही ! देहियो के परिपालन करने से ऐहिक (इस लोक के) और पारत्रिक (परलोक के) सुख प्राप्त होते है। तब तक्षक ने पिता से कहा—रक्षा करने मे वडी कठिनाई होगी। ब्राह्मण-शाप का असर कोई भी नही रोक सकता; चाहे वह धार्मिक ब्राह्मण ही क्यों न हो। उनके शाप और वर ब्रह्मा, विष्णु और महेश के लिए भी ग्राह्य है। हे मुनिवर! जान लीजिए कि उर्वीसुर (ब्राह्मण) ही सभी लोको के ईश्वर है। निग्रह

भार्ग्गवशौनककण्वविश्वामित्र
गार्ग्यवसिष्ठभरद्वाजगौतम ३८
याज्ञवल्क्यात्रिपुलस्त्यशखागस्त्य
प्राज्ञपराशरद्वैपायनादियां
तापसश्रेष्ठन्मारु द्विजाढ्यन्मारु ३९
दिव्यन्माराय् मट्टुमुळ्ळ जनङ्ङळु
सव्यसाचिप्रियपादभक्तन्मारु- ४०
मॉक्क वरिकॅन्नचञ्चु वरुत्तिनान् ।
मुख्यनां भूपतिवीर नुमक्कोलं ४१
षोडशदानङ्ङ्ळु क्रमत्ताल् चॅय्तु
बान्धवप्रीतियु चॅय्तु महादान-
मटमिल्लातोळ चॅय्तु विशुद्धनाय् ४२
पुत्रनेयु पुणर्न्नेरॅ मूर्धाविङ्कल्
बद्धमोदं बाष्पतीर्थाभिषेकवुं ४३
चॅय्तमात्याचार्यभृत्यवर्गत्तिनु
कैतवहीन कॉटुत्तानभिमतं । ४४
भूसुरन्मारुं मुनीन्द्ररुं शिष्यरु
दासवरन्मारुमायुटन् प्रासाद ४५
भागीरथीजलमध्यस्थमेऱिनान् ।
भागधेयाबुधि भागवतोत्तमन् ४६
श्वेतद्वीपोपरि श्वेतपद्मासने
श्वेतपतिरिव रेजे मध्ये गंगाम् । ४७

परीक्षित्) ने भार्गव, शौनक, कण्व, विश्वामित्र, गार्ग्य, वसिष्ठ, भरद्वाज, गौतम, याज्ञवल्क्य, अत्रि, पुलस्त्य, शख, अगस्त्य, प्राज्ञ, पराशर, द्वैपायन आदि तापस श्रेष्ठो को, ब्राह्मणोत्तमो को, और दिव्य जनो को, और सव्यसाचि (अर्जुन) के मित्र (श्रीकृष्ण) के चरणो के भक्तो को निमन्त्रण देकर बुलाया। तदनन्तर क्रम से सोलह दान करके बान्धवो को खुश करके नि सीम महादानो से विशुद्ध होकर अपने पुत्र को खूब आलिङ्गन करके उसके शीर्ष (सिर) पर प्रमोद के साथ आसुओ का अभिषेक करके अपने अमात्य, आचार्य और भृत्यवर्ग को बिना कैतव (छल) के यथेष्ट दान किया। ३७-४४ तदनन्तर भूपति ब्राह्मणो, मुनीन्द्रों, शिष्यो, और दासवरो के साथ गगा के जल के बीच मे स्थित प्रासाद पर चढे।

ब्रह्मवचोविप मद्विषसंयुत
ब्रह्मप्रळयसम तव विद्ययुम् । २८
ऍन्ने विचित्रमे नन्नु नन्नॅत्रयु-
मॅन्नु परञ्ञु कॉट्टुत्तितु तक्षकन् २९
रत्नधनादिकळटमिल्लातोळ
यत्नमिळच्चु मुनियुमतुनेरम् । ३०
कद्रु पुरा शपिच्चोरुमूल निज-
पत्निवाक्य चॅट्टु सत्यमाक्कीट्टुवा- ३१
नाश्रमं पुक्कु मुनीश्वरन् तक्षकन्
काश्यपन् पोयोरनन्तरं चिन्तिच्चान् । ३२
ऍन्तॉरुपाय नृपनॅक्कटिप्पति-
न्नन्तणर्क्केपोलट्टुत्तु चॅल्लावितुम् । ३३
ऍन्नतरिञ्ञु स्वजातिकळाकिय
पन्नगन्मारोट्टु चॉल्लिनान् तक्षकन् । ३४
निङ्ङळ् तपोधनवेषं धरिच्चुटन्
मङ्ङीट्टातोरु फल कॉट्टुत्तीटणम् ३५
सम्मानमाय् ञानतिल्पुक्किरुन्नुकॉ-
ण्टम्महीपालनॅयु कटिच्चीट्टुवन् ३६
तक्षकन् चॉन्नतु चॅय्तारवर्कळुम् ।
मुख्यनां भूपतिवीरनतुकालं ३७

ब्राह्मण-वाक्य रूपी विष मेरे विष से मिल गया है। आप की विद्या ब्रह्म और प्रलय के समान है। यह विचित्र बात है और आश्चर्य की बात है। इतना कहकर तक्षक ने काश्यप को निसीम रत्न और धन दिये और काश्यप भी अपने यत्न मे कुछ ढीले पड गये। २०-३० कद्रू ने पहले ही शाप दे रखा था। अपनी पत्नी का वाक्य सत्य वनाने के लिये काश्यप अपने आश्रम चले गये। काश्यप के जाने के बाद तक्षक सोचने लगा— "राजा को काटने का क्या उपाय हो सकता है। सुनते है कि केवल ब्राह्मण ही उनके पास जा सकते है"। यह जानकर तक्षक ने अपनी जाति के सर्पो से कहा—"आप सब लोग तुरन्त तपोधन का वेष धारण करके सम्मान हेतु राजा को एक उज्वल फल प्रदान कीजिए। मै उसके अन्दर घुस जाऊँगा और राजा को काटलूँगा"। उन्होने तक्षक के कहने के अनुसार किया। ३१-३६ उस समय नाथभूपति वीर (राजा

कृष्णावर्त्मभया काणायितन्तिके
कृष्णतनूजनां श्रीशुकन्तन्नॅयुम् । ५८
ऑन्नाशु मिन्निस्सभातलमन्नेर-
मिन्द्रसभान्ते बृहस्पति सत्गुरु ५९
वन्नतुपोलॅ विळङ्ङी सभातलम् ।
सुन्दररूपन् दिगंबरन् निर्म्मलन् ६०
गर्भपात्रत्तिल् किटन्ननाळे पुरा
मुक्तनायुद्धविच्चोरु तपोधनन् ६१
मन्दमन्दमॅळुन्नळ्ळियनेरत्तु
मन्देतर मान्यस्थानवु नल्किनान् । ६२
पाद्यवुमाचमनीयवुमर्घ्यवु-
माद्यमासनवु मधुपर्क्कवु ६३
वेद्यमावण्ण विधाय तॅळिञ्ञभि-
वाद्यवु चॅय्तु निन्नू नृपेन्द्राद्यरुम् । ६४
ञङ्ङळोटिन्नु चोदिच्च चोद्यत्तॅ नी
मगलात्मावे तॅळिञ्ञु चोदिच्चालु ६५
श्रीशुकनाय तपोधनश्रेष्ठनो-
टाशुतीरु वहुसंशयमेवर्क्कुम् । ६६
मेलिल् कलियुगत्तिङ्कलुळ्ळोर्कळ्क्कु
नाला पुरुषार्त्थसाधनमाय्वरम् । ६७

एक दूसरे का मुख देखने लगे और वेद और वेदान्तशास्त्रो मे क्या क्या अच्छी वात है यह ढूँढने लगे । ५१-५७ उस समय कृष्णवर्त्मा (अग्नि) की शोभावाले श्रीकृष्णद्वैपायन के पुत्र शुकजी दिखाई दिये । तत्क्षण ही सारी सभा चमक उठी । जैसे सद्गुरु वृहस्पति के पधारने पर इन्द की सभा शोभायमान होती है उसी प्रकार वह सभा उज्वल हुई । जव सुन्दररूप, दिगम्वर, निर्मल, गर्भाशय मे रहते समय ही मुक्त, तपोधन शुकजी धीरे-धीरे पधारे तव राजा ने उनको वहुत ही मान्य स्थान दिया । तदनन्तर पाद्य, आचमनीय, अर्घ्य, अग्रासन और मधुपर्क स्पष्ट रूप से भेंट करके, प्रसन्नता के साथ अभिवादन भी करके राजा आज्ञा की प्रतीक्षा मे खडे हो गये । ५८-६४ (मुनियो ने कहा—) "हे मगलात्मन् । जो प्रश्न आज आप ने हम लोगो से पूँछा उसी को तपोधन श्रीशुकजी से प्रसन्न हो कर पूँछिए । तुरन्त सव के सभी सदेह दूर हो जायेगे,

चुट्टुमिरुत्ति नानासनाग्रङ्ङळिल्
मट्टुळ्ळवरॅ यथायोग्यमुर्व्वीशन् । ४८
दर्भं विरिच्चु वटक्कु तिरिञ्ञिरु-
न्नप्पोळनशन दीक्षिच्चु शुद्धनाय् ४९
धृत्वा पवित्र पुनरुपसत्ति-
नॅ कृत्वा प्रदक्षिण कृत्वा मुहुस्त्रयं ५०
मामुनीन्द्रन्मारॅ वन्दिच्चु चोदिच्चान् ।
भूमिदेवोत्तमन्मार्क्कु नमस्कारम् ! ५१
जन्मङ्ङळेटमिनियुमुण्टाकिलु
निर्म्मलन्माराय भूमिदेवन्मारि- ५२
लुण्टाकरुतणुमात्रमवमान-
मुण्टाकवेणमिळकात भक्तियुम् । ५३
ऍन्नतनुग्रहिक्केण विशेषिच्चु-
मॉन्नुण्टु ञानपेक्षिक्कुन्नु पिन्नॆयुम् । ५४ .
मर्त्यनायाल् मरिप्पान् तुटङ्ङुन्नेरं
कर्त्तव्यमॅन्तु मोक्षत्तिनु चॉल्लणम् । ५५
ऍन्नु राजावु चोदिच्चतु केट्टप्पोळ-
न्योन्यमालोकनं चॅय्तवर्कळु ५६
वेदवेदान्तशास्त्रादिकळिल् तिर-
ञ्ञेतेतु नल्लतॅन्नोर्त्तिरिक्कुन्नेर ५७

भाग्य का सागर, भागवतोत्तम, भूपति श्वेतद्वीप के ऊपर, सफेद पद्मो के आसन पर, गगा के बीच मे श्वेतपति के समान विराजे। फिर राजा ने अपने चारो तरफ और लोगो को भी उनके पद के अनुसार अच्छे-अच्छे आसनों पर बैठाया। फिर दर्भ (कुश) बिछाकर उत्तर की ओर मुख कर के बैठे और उपवास-दीक्षा मे शुद्ध होकर पवित्र धारण करके उपसत् की तीन बार प्रदक्षिणा करके महामुनियो की वन्दना करके उनसे पूछा— ४५-५० "भूदेवो (ब्राह्मणो) को नमस्कार! यद्यपि अनेक और जन्म आनेवाले हो तथापि मुझे ऐसा अनुग्रह दीजिए कि मेरा निर्मल ब्राह्मणों के प्रति अणुमात्र भी अपमान कभी न हो और उनके प्रति निश्चल भक्ति ही हो। और एक विशेष बात है जिसकी मैं आप करता हूँ। जब आ[illegible] है तो उसमे मोक्ष प्राप्त उपाय बतलाना [illegible] इस प्रार्थना को सुनकर

एकीकरिच्चुळ्ळॉरात्मविनोट्टुकू-
टेकान्तसौख्य कलर्न्नु मरुवुम्पोळ् ७७
एषणपाशङ्ङळॉक्कवे खण्डिच्चा-
नेळां दिवसवुमस्तमिच्चू मुदा । ७८
भूपति चॉन्नारमात्य रोटन्नेरं
शापभयमिनिक्किल्लॅन्नतु वन्नु । ७९
तापसन् तन्न फलमुपजीविच्चु
ताप कॅट्टुक्क नामॅन्नतु केट्टवर् ८०
पारातॅ पारणय्कॅन्नवर् चॉन्नप्पोळ्
पारिनु नाथन् परीक्षित्तुमादराल् ८१
ऐवरुमॉन्निच्चतिनु तुटङ्ङिनान् ।
सेवकन्मार्क्कु कॉट्टुत्तु नृपतियु ८२
तानुमॅट्टुत्तानॉरु फल भक्षिप्पान् ।
काणायितु चुवन्नोरु कृमियतिल् । ८३
ब्राह्मणभक्तना भूपति चॉल्लिनान् ।
धार्म्मिकन्माराममात्यरोटन्नेरम् । ८४
तक्षकनॅन्नु पेरिट्टुकॉण्टिप्पोळ् ना-
मिक्कृमियॅक्कॉण्टुतन्नॆ कटिप्पिच्चाल् ८५
भूदेवशापमसत्यमायु वरा
खेद नमुक्कु वरिकयुमिल्ललो । ८६

उस समय उनके सभी कामपाश खण्डित हो गये। और सातवे दिन का सूर्यास्तमय भी सुखपूर्वक व्यतीत हो गया। (तव राजा ने कहा)—"अव मुझे शाप से कोई भय नही है। इसलिए तापस का दिया हुआ फल खाकर हम लोग भूँख दूर करे।" यह सुन कर तुरन्त ही जव उन्होने कहा कि यह पारण (उपवास के अन्त मे किया जानेवाला भोजन) मे खाया जाय तव पृथिवी के पति (राजा परीक्षित) ने औरो के साथ वही करना प्रारभ किया। राजा ने पहले सेवको को दे कर स्वय खाने के लिए एक फल लेलिया। तव उसमे एक लाल कीडा दिखाई दिया और ब्राह्मणभक्त राजा ने अपने धार्मिक मन्त्रियो से कहा—७४-८४ "अगर हम इसको तक्षक नाम दे दे और इसी से अपने को कटवावे तो ब्राह्मण का शाप असत्य नही सिद्ध होगा और मुझको दुख भी नही होगा।" उन्होने (मन्त्रियो) ने उत्तर दिया—"यह ठीक है क्योकि अन्ततोगत्वा कोई भी

अन्त्यकालत्तिङ्कलॅन्तु मनुष्यनाल्
चिन्त्यमॅन्तॅन्तोन्नु कर्त्तव्यमायतुं ६८
श्रोतव्यमाकुन्नतॅन्तोन्नुमादराल्
मोदालरुळ्चॅय्कवेण दयानिधे ! ६९
आसन्नमृत्युवायोरटियन् तव
दासपादाबुजभक्तजनोत्तमन् । ७०
मोक्षैकसाधनमायुळ्ळतिप्पॉळ्
साक्षालटियनुपदेशिच्चीटणम् । ७१
शिष्योहमॅन्नभिवाद्यवु चॅय्तु स-
न्तुष्टच्चा पवित्र धरिच्चिरुन्नीटिनान् । ७२
मन्दस्मितान्वितन् ब्रह्मरातन् गुरु-
वन्दनवुं चॅय्तरुळ्चॅय्तितन्नेरम् । ७३
ध्येयनाकुन्नतु विष्णु नारायणन्
श्रोतव्यमाकुन्नतु तल्ककथामृतम् ७४
कर्त्तव्यमाकुन्नतुमभिवन्दनम्
चित्त तॅळिञ्ञु केळ्क्कॅन्नरुळिच्चॅय्तु । ७५
श्रीशुकन् चॉल्लुन्न भागवत केट्टॉ-
राशयु कूटातॅ नारायणन्तङ्कल् ७६

और आगे जो कलियुग मे रहते है उनके लिए चतुर्थ पुरुषार्थ (मोक्ष) का साधन होजायगा"। (राजा ने पूँछा—) "अन्तकाल मे मनुष्य के लिए चिन्त्य क्या है ? कर्तव्य क्या है ? और श्रोतव्य क्या है ? यह सब आदर के साथ और प्रमोद के साथ, हे दयानिधे ! बतला दीजिए। यह दास आसन्नमृत्यु (मरनेवाला) है और आप के दासो के चरणो के भक्तो मे श्रेष्ठ है। मोक्ष का जो एक मात्र साधन है उसका अभी-अभी इस दास को उपदेश कर दीजिए। मैं आप का शिष्य हूँ।" यह कह कर अभिवादन करके सतोष के साथ पवित्र धारण करके बैठ गये। उस समय ब्रह्मरात (श्रीशुकजी) ने मन्दस्मित (मन्द मुसकान) के साथ गुरु की वन्दना करके निवेदन किया—६५-७३ "विष्णु नारायण ही एकमात्र ध्येय हैं, उनका कथामृत ही एकमात्र श्रोतव्य है और उनका अभिवन्दन करना ही कर्तव्य है, प्रसन्नता के साथ सुन लीजिए"। तदनन्तर राजा परीक्षित् श्रीशुकजी की कही भागवत कथा सुनते हुए नि.स्पृह होकर, भगवान् नारायण मे लीन अपनी आत्मा के साथ एकान्त सुख मे रहे और

भर्त्तृ शुश्रूपारतयामवळोटु
नित्यसुखत्तोटिरुन्नु मुनीन्द्रनुम् । ९७
इत्थ चिलनाळ् कळिञ्ञोरनन्तर
सत्यपरायणनाय महामुनि ९८
मुग्धाक्षितन् मटियिल् तलयु वच्चु
निद्रयु पूण्टु किटक्कुन्नतुनेर ९९
मित्रनुमस्तमिप्पानटुत्तु तुलोम्
भर्त्ताविुणर्न्नतुमिल्लॅन्नुकण्टवळ् १००
चिन्तिच्चु कण्टालुणर्त्तरुतॅन्नतु
सध्याविलोप वरुत्तरुतॅन्नतु १०१
सन्देहमुण्टायनेरत्तु तन्नुळ्ळिल्
सुन्दरिताने निरूपिच्चु कल्पिच्चु । १०२
सध्यालोपत्तिनु दोषमेरु निद्र-
य्कन्तर चॅय्कयत्ते पॉरुक्कावतु १०३
ऍन्नु कल्पिच्चुणर्त्तीटिनाळ् तापस-
नन्नेर माशु कोपिच्चु चॉल्लीटिनान् । १०४
ऍन्नॅयुणर्त्तुवानॅन्तु नी वल्लभे
निन्नुटॅ भर्त्तृ शुश्रूपाभंग वन्नु । १०५
अन्धनॅन्नॅन्नॆ नी कल्पिक्क चॅय्ततुं
सध्यवरुम्पोळुणरुवन् ञानॅटो । १०६

वहुत ही सावधानी से अपने पति की सेवा मे तत्पर थी और मुनीन्द्र उसके साथ सुख से रहने लगे। ८५-९७ इस प्रकार कुछ दिन के बीतने के वाद एक दिन सत्यपरायण महामुनि अपनी प्रियतमा की गोद मे सिर रखकर सो रहे थे कि सूर्यास्तमय का समय निकट आ गया। जब अपने पति जाग नही रहे थे तव पत्नी सोचने लगी—"एक तरफ तो उनको जगाना नही चाहिए और दूसरी तरफ उनकी सध्या का लोप नही होना चाहिए। क्या करूँ?" इस सन्देह मे सुन्दरी ने स्वय निर्णय किया—"सध्या लोप मे दोष अधिक होता है इसलिए नीद मे वाधा डालना सहा जा सकता है"—यह सोचकर उसने पति को जगाया। उस समय तापस ने क्रुद्ध होकर कहा—"प्रिये! तुमने क्यो मुझे जगाया? तुम्हारी भर्तृ शुश्रूषा मे भग हो गया। तुमने मुझे अन्धा समझ लिया, क्या मैं सध्या के समय स्वय नही जग जाता? ९७-१०६

नल्लतितॅन्नारवरुमॉळिक्करु-
तल्लो विधिविहितमॉरुजातियुम् । ८७
मन्दमॅटुत्तु कळुत्तिलणच्चप्पोळ्
दन्दशूकाधिपनाकिय तक्षकन् ८८
चुटिनान् भूपतितन्नुटलॉक्कवे ।
मटुळ्ळवर् भयत्तोटुमोटीटिनार् ८९
हालाहलानलज्ज्वालया भूपति
कोलाहलत्तोटु नाकलोक पुक्कान् । ९०
दु:खितन्मारामत्यरुमाशु शे-
पक्रिय पुत्रनॅक्कॉण्टु चॅय्यिप्पिच्चार् । ९१
राज्याभिषेकवुं चॅय्तु नानाजन-
पूज्यनाय् वाणान् जनमेजयनृपन् । ९२
काशीशपुत्रि-वपुष्टमयोटु भू-
मीशन् सुखिच्चु वसिक्कुन्नतुं कालम् । ९३
नित्यविरक्तन् जरत्कारु मामुनि
भक्त्या वनान्तरे सचरिक्कु विधौ ९४
कण्टितु वासुकि वन्दिच्चु तान् कूट्टि-
क्कॉण्टुपोय् सोदरि तन्नॆ नल्कीटिनान् - ९५
अप्रिय चॅय्कतान् चॉल्कतान् चॅय्तिल् आ-
नप्पोळुपेक्षिक्कुमॅन्नतु चॉल्लिनान् । ९६

विधि का विहित नही टाल सकता"। जब राजा ने उसे धीरे-धीरे लेकर अपने गले मे रखा तो सर्पो के नाथ तक्षक ने राजा के सारे शरीर को घेर लिया। और सब लोग डर के कारण भाग गये। हालाहल विप की आग की ज्वाला से राजा बडे कोलाहल के साथ स्वर्ग चले गये। तब दु खित मन्त्रियो ने तुरन्त ही शेप क्रिया को राजा के पुत्र से करवाया। राज्याभिपेक के होने के बाद राजा जनमेजय ने विविधि प्रजाओ से पूजित होकर राज किया। तदनन्तर जब काशिराज की पुत्री वपुष्टमा के साथ राजा सुख से रहते थे, और सदा ही विरक्त महामुनि जरत्कारु भक्ति के साथ वनो मे सचार करते थे, तब वासुकि ने उनको देखा। उनकी वन्दना करके उनको अपने साथ ले गया और उन्हे अपनी बहन को शादी मे देदिया। (जरत्कारु ने पहले ही कह दिया—) "अगर मेरा अप्रिय करोगी या कहोगी तो तुरन्त ही मैं छोड़कर चला जाऊँगा।" वह

अन्वयनाशमॉळिप्पतिन्नायॉरु
नन्दननुण्टामिनिक्कॅन्नु कल्पिच्चु । ११८
पन्नगेन्द्रन् मम सोदरन् वासुकि-
यॅन्नॅ भवानु नल्कीटिनान् निर्णयम् । ११९
मुन्ने विरिञ्चनियोगवुमुण्टुपोल्
ऍन्नुटॅ गर्भ मुतिर्न्नतुमिल्लल्लो । १२०
इत्यादिकळ् परञ्ञेट करयुन्न
मुग्धांगियिल् कृपयोटु चॉल्लीटिनान् । १२१
भर्तृपरायणे भद्रे करयाय्क
भक्तिविश्वासङ्ङळ् कण्टु तॅळिञ्ञु ञान् । १२२
अद्भुतनाकियोरर्भकन् निन्नुटॅ
गर्भगनायुण्टवन् नल्लनेरंकॉ-१२३
ण्टुद्भविच्चीटु गुणवानवन् तन्नॅ
सर्प्पान्वियमॉक्क रक्षिक्कयु चॅय्युम् । १२४
दुर्भगनल्लवनॉट्टुमवनोळ
सद्भावमिल्ल मटार्क्कुमरिक नी । १२५
त्वल्भ्रातृमुख्यनां सद्भोगिनायकन्
निर्भाग्यनल्लॅटो वासुकिवीरनुम् । १२६
नित्य तपस्सिने कांक्षयुळ्ळू मम
पुत्रनुण्टायाल् मति गृहस्थाश्रमम् । १२७

बात सुन कर साध्वी पत्नी ने चित्त के ताप के साथ फिर कहा—"बहुत दिन पहले माता ने सर्पो को शाप दिया था कि वे आग मे गिरकर मर-जायँ। इसके फलस्वरूप होने वाले वशनाश से बचाने वाला एक पुत्र मुझमे पैदा हो जाय, इस बुद्धि से मेरे भाई वासुकि ने निःसन्देह मुझे आपको विवाह मे देदिया। अभी मेरा गर्भ पक्का भी नही हुआ"। १०७-१२० इस प्रकार विलाप करती और रोती हुई अपनी मुग्धांगी (प्रियतमा) के प्रति कृपा के साथ मुनि ने कहा—"हे पतिव्रते ! हे भद्रे ! रोओ मत ! तुम्हारी भक्ति और विश्वास देखकर मै प्रसन्न हूँ। एक अद्भुत पुत्र तुम्हारे गर्भ मे वर्तमान है और वह यथा समय उत्पन्न होगा। वह गुणवान् होगा और वह सर्पवंश की रक्षा भी करेगा। वह लेशमात्र भी दुर्भग नही होगा और उसकी जैसी सद्भावना और किसी की न होगी, जान लो। तुम्हारा मुख्य भाई, सद्भोगियो (अच्छे सर्पो) का नायक

ञानुणर्न्नीलॆङ्किलादित्यनुमॆन्नॆ
मानिच्चु पार्क्कुमतिनिल्ल सशयम् । १०७
अत्र महत्त्वमिनिक्कुळ्ळतेतुमे
सिद्धमल्लाञ्ञिन्नुणर्त्तियकारणं १०८
निन्नॆयुपेक्षिक्कयॆन्नतु वन्निति-
नॆन्नुटॆ सत्यलोपं वरुमायतिल् । १०९
ऎन्नतु केट्टु करञ्ञुतुटङ्ङिनाळ्
तन्वगि दु.खिच्चु पिन्नॆयु चॊल्लिनाळ् ११०
ऎन्नोटिवण्णमरुळ्चॆय्यरुतय्यो
निन्नुटॆ धर्म्मलोप वरुमॆन्नतो- १११
र्त्तॊन्नरिञ्ञियातॆ ञान् चॆय्तोरपराध-
मॆन्नॆक्कुरिच्चु पॊरुत्तुकॊळ्ळेणमे । ११२
निर्म्मलतापसन्मार् निनवॆन्तॆन्नु
चॆम्मे तिरिच्चरिञ्ञिवान् पणियुण्टल्लो । ११३
दु:खिच्चिवण्ण परञ्ञु करयुन्न
मैक्कण्णियोटरुळ्चॆय्तु मुनीन्द्रनुम् । ११४
सत्यविरोधं वरुत्तुकयिल्ल ञा-
नुत्तमयाय नी खेदिक्कयु वेण्टा । ११५
भर्त्तृवाक्य केट्टु भद्रया पत्नियु
चित्ततापत्तोटु चॊल्लिनाळ् पिन्नॆयुम् । ११६
वह्नियिल् वीऴॆन्नु मातावुतान् पण्टु
पन्नगन्मारॆश्शपिच्चॊरु कारणं ११७

मैं अगर न जग जाता तो सूर्य मेरे लिये अवश्य प्रतीक्षा करता ! मेरा इतना महत्त्व है यह वात तुम्हारे लिए विलकुल सिद्ध नही थी, इसलिए तुमने जगाया। अव तुम्हे त्याग करने की स्थिति आ गयी । इसमे मेरा सत्य लोप हो जाने का डर है।" यह सुनकर तन्वङ्गी रोने लगी और दु खित हो कर फिर वोली—"मुझ से आप को इस [illegible] लना नही चाहिए। यह सोचकर कि आप का धर्मलोप [illegible] मेने विना कुछ समझे यह अपराध किया है। आपको [illegible] हिए निर्मल तापसो विचार है यह ठीक समझना [illegible] तो है ही" । दु [illegible] प्रकार रोती हुई प्रिया से [illegible] -"मैं अपने सत्य कुछ नही करूँगा। तुम [illegible] खेद न करो"

नानारत्नङ्ङळ् धनधान्यराशिकळ्
भोगीश्वराज्ञया नल्किनानावोळम् । १३८
दिव्यनायीट्टु च्यवनन् प्रसादिच्चु
सर्व्वज्ञनाय् वरिकॅन्नु चॉल्लीटिनान् १३९
सूतनीवण्ण पऱञ्ञोरनन्तर
सादर चोदिच्चु पिन्नॅयु शौनकन् । १४०
हालाहलज्ज्वालया मुनिशापत्ताल्
कालवशगतनाय तातन्कथा- १४१
मूलमऱिञ्ञवाऱॆङ्ङनॅ चॉल्लु नी
बालकनाय जनमेजयनृपन् १४२
चॉन्नानतु सूतनॅङ्किलतु केळ्प्पिन्
मुन्नमुदङ्कन् पऱञ्ञॉट्टऱिञ्ञितु १४३
पिन्नॅयु मन्नवन् तन्नमात्यन्मारॅ
मुन्निल् वरुत्ति मुळ्ळुवन् विचारिच्चान् । १४४
ऍन्नुटॅ तातनुण्टाय वृत्तान्तङ्ङ
ळॅन्नोटु निङ्ङळ् मुळ्ळुवन् पऱयणम् । १४५
ऍन्नतु केट्टु ताॅळुतवर् चॉल्लिनार् ।
निन्नुटॅ तातनुटॅ गुण चॉल्लुवान् १४६

साथ बढता गया। वह मनोहर बालक वेद, वेदाङ्ग, वेदान्त आदि विद्याएँ पढता रहा। अपने आचार्य मुनीन्द्र च्यवन के आशीर्वाद पाकर उनको दक्षिणा दी। भोगीश्वर (वासुकि) की आज्ञा से उनको अनेक प्रकार के रत्न, धन और धान्य की पूजी दी गयी। दिव्य च्यवनजी प्रसन्न हुए और उन्होने आशीर्वाद दिया कि तुम सर्वज्ञ हो जाओ। सूतजी के इस प्रकार कहने के अनन्तर शौनक ने फिर सादर पूँछा—१३२-१४० "मुनि-शाप के कारण हालाहल विष की ज्वाला से काल (मृत्यु) के वश मे आये अपने पिता की कथा का मूल, बालक राजा जनमेजय को कैसे मालूम हुआ, यह सुनाइए"। तब सूत ने वह भी सुनाया। इसलिए सुन लीजिए। पहले उदङ्क के कहने से कुछ ज्ञात हो गया था। फिर भी राजा ने अपने अमात्यो को अपने सामने बुलाकर सारा वृत्तान्त पूँछा। (उन्होने कहा—) मेरे पिता के जो जो वृत्तान्त हुए वे सभी मुझको बतला दीजिए। यह सुनकर उन्होने प्रणाम करके कहा—१४१-१४६

निन्नॅक्कुरिच्चु विरक्तनायिट्टल्ल
धन्ये समस्तविषयविरक्तन् ञान् । १२८
सत्यविरोध वरुत्तुकयु वेण्टा
सत्यमत्रे ञान् परञ्ञतरिञ्ञालुम् । १२९
निङ्ङळुटॆ कुलत्तिन्नु सौख्य वरु
मगलनाय ममात्मजनालिनि । १३०
ऍन्निवचॅन्तु नी वासुकियोटु चॉल्-
कॅन्नरुळ्चॅय्तॆळुन्नळ्ळी मुनीन्द्रनुम् । १३१
वासुकियॅक्कण्टवळिवयु चॉल्लि
वासवु चॅय्तितु नागपुर तन्निल् १३२
नल्ल मुहूर्त्ते पिऱन्नु कुमारनु-
मॅल्लावरु तॅळिञ्ञारहिवीररुम् । १३३
अस्ति गर्भे सुतनॅन्नु तपोधनन्
सत्यमाय् चॉन्नतु कारणमाकयाल् १३४
अस्तिकनॅन्नु पेरिट्टितु वासुकि ।
नित्यमोदेन वळर्न्नितु बालनु १३५
वेदवेदागवेदान्तादिविद्यकळ्
चेतोहरन् बालनध्ययनं चॅय्तान् । १३६
आचार्यनाकु च्यवनमुनीन्द्रनो-
टाशीर्व्वाद वाङ्ङि दक्षिणयु चॅय्तान् १३७

वीर वासुकि भाग्यहीन नही है। मेरी तो केवल सदा तप करने की इच्छा है, अतएव पुत्रजन्म के वाद मुझे गृहस्थाश्रम नही चाहिए। यह न समझो कि मै तुमसे विरक्त हो गया हूँ। सच तो यह है कि मै सभी विपयो से विरक्त हूँ। मेरे सत्य-वचन का विरोध पैदा करने की आवश्यकता नही है। जान लो कि जो कुछ मैने कहा वह सत्य सिद्ध होगा। मेरे मगलमय पुत्र के द्वारा तुम लोगो के कुल का सौख्य ही होगा। तुम जाकर ये सव वाते वासुकि से कहो"। इतना कहकर मुनीन्द्र चले गये। १२१-१३१ तदनन्तर पत्नी ने सभी वाते वासुकि से कह दी और वह नागो के नगर मे निवास करने लगी। एक शुभ मुहूर्त में कुमार का जन्म हुआ और सभी सर्पो के वीर प्रसन्न हुए। तपोधन ने कहा था—"गर्भ मे पुत्र है (अस्ति)" और वह सत्य भी निकला। इस लिए वासुकि ने उसका नाम 'अस्तिक' रखा। वह सदा ही प्रमोद के

चॅन्नु वयस्सुमरुपतुमक्काल
मन्नवन् पळ्ळिवेट्टय्क्कॅळुन्नळ्ळिनान् १५६
अन्नु पैदाहङ्ङळ्कॉण्टु विकल्पवु
वन्नितु बुद्धिक्कतुनिमित्त तदा १५७
शृंगिशापकॉण्टु तक्षकन्तन्नुटॅ
सगति नीक्करुतातॅ चमञ्ञितु । १५८
पिन्नॅयुण्टायवृत्तङ्ङळो भवा-
नॉन्नॉळियातॅयरिञ्ञल्लो मेवुन्नु । १५९
ऍन्नितमात्यन्मार् चॉन्नतु केट्टॉरु
मन्नवन् पन्नगसत्रमारभिच्चान् । १६०
चॉन्नानुदङ्कनतिन्नुपायङ्ङळु
वन्नु मुनिकळुमामॅन्नु चॉल्लिनार् १६१
शिल्पियॅक्कॉण्टन्नु शाल निर्म्मिप्पति-
न्नप्पोळवनॉरु लक्षण चॉल्लिनान् । १६२
अग्निसमानना ब्राह्मणनालॉरु
विघ्नमितिन्नु वरुमॅन्नु निर्णयम् । १६३
वास्तुसस्कारक्रियान्तरे तोन्निच्चु
वास्तवलक्षणमॅन्नवन् चॉल्कयाल् १६४
द्वास्थन्मार् गोपुरत्तिङ्कल् निन्नीटुक
पार्त्तारुमिङ्ङु वराय्वतिनॅन्नतुं १६५

की आयु साठ वरस की हो गयी और वे शिकार खेलने निकले। उस दिन भूँख और प्यास के कारण उनकी बुद्धि मे विकल्प पैदा हुआ। अतएव शृंगी का शाप लगा और तक्षक की अनिवार्य घटना पैदा हो गयी। उसके वाद जो कुछ हुआ वह सव जानते हुए ही आप विराज रहे है। अमात्यो का यह कहना सुनकर राजा ने सर्पसत्र प्रारम्भ किया। उदङ्क ने उसके अनुष्ठान के उपाय वतला दिये। मुनिजन पधारे और उन्होने भी स्वीकार किया। शिल्पियो के द्वारा यज्ञशाला का निर्माण कराना था। उस समय (उदङ्क ने) एक लक्षण वतला दिया—"एक अग्नि-तुल्य ब्राह्मण के द्वारा इस यज्ञ का विघ्न होने वाला है, इसमे सदेह नही।" यज्ञशाला के निर्माण की क्रिया के अवसर पर उन्होने सुझाव दिया था कि यही लक्षण है। इसलिए राजा जनमेजय ने आज्ञा दी कि द्वारपाल गोपुर पर खडे हो जायँ ताकि कोई इधर न आ जाय। तदनन्तर

पन्नगनाथननन्तनुमावत-
ल्लन्यरायुळ्ळवरॅङ्डनॅ चॉल्लुन्नु । १४७
इन्द्रादिदिक्पालकन्मारुटॅ गुण-
मॉन्नॉंळियातॅ नृपनुण्टुनिर्णयम् । १४८
श्रीरामनु समनॅन्ने परयावू
पारितु पालन चॅय्ततोर्क्कु विधौ । १४९
विष्णुराताख्यनां विश्वभरावरन्
विष्णुभक्ताग्रगण्योत्तमन् सत्तमन् १५०
जिष्णुजनन्दनपुत्रन् परीक्षित्तु
कृष्णलीलानन्दसिन्धुमग्नात्मकन् १५१
विश्वंभरापति विश्वंभरप्रियन्
विश्वरक्षाकरन् विश्वनाथोपमन् १५२
वर्णाश्रमश्रेणिधर्म्मस्थितिचॅय्तु
नन्नाय् परिपालनं चॅय्तु भूतलम् । १५३
वन्न कलियॅयुमाट्टिक्कळञ्ञितु
पिन्नॅयारुळ्ळतु मटॉरु वैरिकळ् । १५४
एकातपत्रयाय् वन्नु धरणियु-
मेकान्तसौख्येन निन्नितु लक्ष्मियुम् १५५

पन्नगो (सर्पो) का नाथ अनन्त भी आपके पिता के गुणो का वर्णन नही कर सकता औरो की तो वात ही क्या है ? इन्द्र आदि दिक्पालो के सभी गुण आपके पिता भूपति (राजा परीक्षित्) मे है, इसमे सन्देह नही । उनके भूमि की परिपालनविधि (पालन करने के प्रकार) को देखकर अवश्य कहना पडता है कि वे श्रीराम के समान थे । उनका नाम था विष्णु-रात; वे पृथिवी मे सव से उत्तम थे, और विष्णुभक्तो के श्रेष्ठो मे श्रेष्ठ, सत्तम, अर्जुन के पुत्र के पुत्र थे । उनकी आत्मा कृष्णलीलानन्द-सागर मे मग्न थी, वे विश्वभरा (पृथिवी) के पति, विश्वभर (भगवान्) के प्रिय थे, वे सभी की रक्षा करनेवाले थे, विश्वनाथ के तुल्य थे । ऐसे राजा परीक्षित् ने वर्णाश्रम धर्म का स्थापन करके पृथिवी का अच्छी तरह से परिपालन किया । अभ्यागत कलि को भगा दिया । इससे वढ कर और कौन शत्रु हो सकता है । समस्त धरणी (पृथिवी) एक छत्रच्छाया मे आ गयी और राज्यलक्ष्मी वडे सुख के साथ रही । १४७-१५५ राजा

अञ्चुमेळ्ळु मून्नुं मस्तकमुळ्ळव-
रञ्चुमारु तम्मिळॉन्निच्चु वीळ्कयु १७७
वाताशनकुलहाहानिनादवु
वातसखिहेतिहूहूनिनादवुं १७८
भूदेवसत्तमवेदनिनादवु-
मोदनतेमनास्वादनिनादवु १७९
दिव्यगव्यद्रव्यहव्यदाहक्रिया
सव्यचाराग्निकीलाग्रधूमाभयु १८०
सर्व्वलोक परन्नोरु सौरभ्यवु
गर्व्वदर्व्वीकरन्मार्विलापङ्ङळुं १८१
पार्त्थिवेन्द्रन्मार् चतुरगसेनयो-
टार्त्तु वरुम्पोळ् नटत्तुन्न घोपवु १८२
भोक्तुकामन्मार् भुजिच्चु नृपेन्द्रनॅ
वाळ्त्ति स्तुतिच्चु पाटीटुन्न घोषवु १८३
वाद्यघोषङ्ङळु नानाजनस्तोम-
चोद्योत्तरकॉण्टु वाय्कु निनादवु १८४
घोरघोर केट्टु वारान्निधिकळु
पारमिळकि मरिञ्ञु कलङ्ङुन्नु। १८५
धाराधरङ्ङळुमॅन्तॉन्नरियाञ्ञु
धीरतरमिटिवॅट्टि मुळ्ळुङ्ङुन्नु। १८६

कर, परेशान होकर, एक दूसरे से जुडकर कुण्डली वनकर फिर अलग होकर अग्नि मे गिरकर भुनने लगे। और अग्नि भी अत्यन्त तीव्र जलने लगा। १७२-१७६ पांच, सात या तीन सिर वाले सर्प पाच पाच छ छ· एक साथ आग मे गिरे। सर्पकुलो का हाहानिनाद, वातसखि (अग्नि) की ज्वालाओ का हूहूनिनाद, ब्राह्मणोत्तमो की वेदध्वनि, अन्न और व्यजन के आस्वादन का निनाद, दिव्य गव्यद्रव्य से वने हव्य की दाहक्रिया, वामचार आग्नि के ज्वालाग्र से निकले धूम की शोभा, समस्त लोक मे फैला हुआ सुगन्ध, गर्ववाले सर्पो के विलाप, अपनी चतुरग सेना के साथ आनेवाले भूपालो का घोप, भोजनेच्छुको के भोजन के वाद राजा की स्तुति के लिए किये गानो का घोप, वाद्यो का घोप, नानाजनसमूह के प्रश्न और उत्तरो के कारण मुखो का निनाद, ये सव घोर-घोर नाद सुन कर समुद्र उलट गये। और मेघ भी कुछ न समझकर अपने गभीर

धात्रीशनां जनमेजयन् कल्पिच्चॉ-
रास्थकलर्न्नु याग तुटङ्ङीटिनान् । १६६
सभारमॉक्कवे संभरिच्चीटिनार्
सम्भ्रमत्तोटुममात्यजनङ्ङळु १६७
धात्रीसुरन्मारुपकरणङ्ङळु
तीर्त्तु घोषिच्चु तुटङ्ङि महाक्रतु । १६८
नीलांशुकधरन्मारा द्विजेन्द्रन्मार्
कोलाहलेन वेदङ्ङळुमोतिनार् । १६९
नालां श्रुतिक्रिय चॅय्तुतुटङ्ङिनार् ।
भूलोकवु निऱञ्ञु पुकतन्निले । १७०
होता मुनितिलकन् चण्डभार्ग्गवन्
चेतसि चिन्तिच्चु चॉन्नतॉरुक्कुवान् १७१
पुक्कार् पराशरहोत्रादिकळॅल्ला-
मॉक्कॅप्परिकर्म्मवु नटत्तीटिनार् । १७२
हस्तिहस्तोपमन्माराय सर्प्पङ्ङ-
ळत्र मन्त्रप्रयोगाज्याहुतिकॉण्टु १७३
कत्तियॅळुन्नॉरु पावकज्ज्वालया
दग्धगात्रात्मना गर्त्तान्तरङ्ङळि- १७४
लॅङ्ङुमिरिक्करुताञ्ञु तळर्न्नवर्
तङ्ङुळिल् चुटिञॅळिञ्ञु पिरिञ्ञु व- १७५
न्नग्नियिल् वीणु पॉरिञ्ञु तुटङ्ङिना-
रग्नियुमेटं तॅळिञ्ञु विळङ्ङिनान् । १७६

उन्होने श्रद्धा के साथ याग प्रारभ किया । अमात्यो ने सारी यज्ञसामग्री बडे सभ्रम (आतुरता) के साथ इकट्ठा की । और ब्राह्मणो ने समस्त उपकरण तैयार करके महायज्ञ की घोषणा की । और ब्राह्मण लोग नीलाशुक (नीला वस्त्र) धारण करके गभीर ध्वनि से वेदपाठ करने लगे, और चौथे वेद (अथर्ववेद) की क्रिया भी करने लगे । सारा भूलोक धुएँ से भर गया । होता मुनिश्रेष्ठ चण्ड भार्गव कही गई वस्तुओ को तैयार करने के लिए सोचने लगे । १५६-१७१ पराशर, होता आदि प्रवेश करके अलकरण आदि तैयारियाँ करने लगे । इतने मन्त्रो के प्रयोग से और आज्याहुति से जल उठी आग की ज्वाला से दग्ध होकर हाथी के हाथ के समान मोटे-मोटे सर्प अपने विलो मे रहना असभव हो जाने के कारण वहाँ से निकल-निकल

नीचसर्प्पङ्ङळॉट्टुङ्ङुमॉट्टावोळं
नीचरल्लात निङ्ङळ्क्किटरिल्लेतुम् । १९७
तक्षकनु सहस्राक्षनॅक्कण्टाशु-
शुक्षिणिभीति कूटातॅ मरुविनान् । १९८
नासिकान्ते पुक्कु धूमाकुलनाय
वासुकि सोदरियोटु चॉल्लीटिनान् । १९९
मृत्युवटुत्त जनत्तिन्रॅ लक्षणं
भद्रे भगिनी ! भविच्चितॅनिक्किप्पोळ् । २००
भागधेय पूण्ट भागिनेयन् मम
शोकमॉळिक्कुमवनॅययक्क नी । २०१
सोदरनेव परञ्ञतु केट्टथ
सादरमाशु जरत्कारु चॉल्लिनाळ् । २०२
मातुलन्मारॅल्लामातुरन्माराय-
तेतुमरिञ्ञतिल्ले नी ममात्मज ! २०३
चॅन्नुनी सर्प्पसत्र मुटक्कीटाय्कि-
लिन्नुतन्ने मुटिञ्ञीटु कुलमॅल्लाम् । २०४
मातावित्रण्ण परञ्ञतु केट्टप्पोळ्
मातुलनोटु परञ्ञु नट कॉण्टान् । २०५
यागविभूतिकण्टद्भुत पूण्टवन्
वेगेन गोपुरद्वारमकपुक्कान् । २०६

तुम निडर हो कर यही रहो। गर्मी तो यहाँ आ ही नही सकती। नीच सर्पो का तो निस्सीम नाश होगा आप जैसे अनीचो (सज्जनो) को कोई दुख न होगा। सहस्राक्ष (इन्द्र) को देखने के कारण तक्षक अग्नि-भय के विना रह सका। धुएँ के नाक मे घुस जाने से व्याकुल होकर वासुकि ने अपनी वहिन से कहा—"हे वहिन ! अव मेरे आसन्नमरणो (मरनेवालो) के से लक्षण उत्पन्न होने लगे है। मेरा भाग्यशाली वहनोई मेरा शोक दूर करेगा। उसको मेरे पास भेजो"। भाई की यह वात सुनकर जरत्कारु ने सादर कहा—"हे पुत्र ! तुम्हारे सभी मातुल (मामा) वहुत दुखित हो गये है। क्या तुम्हे नही मालूम है ? अगर तुम जाकर सर्पसत्र को नही रोकोगे तो आज ही सारा सर्पवश नष्ट हो जायगा"। १९६-२०४ माता का यह वचन सुनकर अपने मामा से विदा हो कर (अस्तीक) चले गये। वे याग की विभूति देखकर विस्मित

सारतचेरुं गिरिकळ् कुलुङ्ङुन्नु ।
घोरना सिंहिकासूनु मरुकुन्नु । १८७
स्वर्ग्गनिवासिकळ् कण्णु कलङ्ङुन्नु
दिग्गजेन्द्रन्मार् भयेन नटुङ्ङुन्नु । १८८
सन्तापमुळ्क्कॊण्टनन्तनु चिन्तिच्चु
सन्ततं माधवन्तन्नॆ वणङ्ङुन्नु । १८९
शङ्करन् भूषणनाशं वरुमॆन्नु
शङ्किच्चुळ्ळन्नु भवानियॆ नोक्कुन्नु । १९०
पारेळुरण्टुममन्द मुळङ्ङुन्नु
वारिजसभवनुं चॆवि पार्क्कुन्नु । १९१
नारायणनुमुरक्कमुणरुन्नु
नारायण हरे विस्मयमॆत्रयुम् । १९२
सर्प्पसत्रप्रयोगप्रभावं कण्टॊ-
रद्भुत पूण्टु जगद्वासिकळॆल्लाम् । १९३
अन्तमिल्लातॊरु भोगिकळ् तीयिल् वी-
णन्तमाय्वन्नु तॆन्ने परयावितुम् । १९४
वॆन्तुपॊरान्ञुटन् तल्क्षण तक्षकन्
बन्धुवामिन्द्रनॆच्चॆन्नु कण्टीटिनान् १९५
पेटियाय्केतुमिविटॆप्पॊरुक्क नी
चूटिविटेक्कु वरिकयुमिल्लेतुम् । १९६

नाद निकाल रहे है। वड़े-वडे पर्वत हिल रहे है। घोर सिंहिका-पुत्र (राहु) परिभ्रम (धोखे) मे आ गया है। १७७-१८७ स्वर्ग के निवासियो की आँखे दुःख रही है और सव दिग्गज भय से काँप रहे है। दुःखित होकर अनन्त (शेष) सदैव माधव का ध्यान कर रहा है और वन्दना कर रहा है। शङ्कर चिन्तित हुए कि अपने भूषण का नाश होगा और भवानी की ओर देखने लगे। चौदहो लोक अत्यन्त कोलाहल-पूर्ण हो रहे है। और वारिजसभव (ब्रह्मा) ध्यान से सुन रहे है। और नारायण जी जाग रहे है। हे नारायण! हे हरे! कितना आश्चर्य है! सर्पसत्र के अनुष्ठान का प्रभाव देखकर जगत् के सभी निवासी आश्चर्यचकित हुए। असख्य सर्प आग मे गिरकर समाप्त हुए, इतना ही कहना है। उस समय ताप को असह्य पाकर तक्षक अपने मित्र इन्द्र को देखने गया। १८८-१९५ (इन्द्र ने कहा—)

चॅन्नु कूट्टिक्कॉण्टु पोन्नु मुनीन्द्रनॅ ।
मन्नवन् पाद्यासनार्घ्यादि नल्किनान् । २१७
ऍन्तोन्नभिमतमॅन्नु नरपति
सन्तोषमोटु चोदिच्चोरनन्तर २१८
अस्तीकनुत्तरं चॉल्लुन्नतिन्मुन्पे
सत्वर चॉल्लीटिनान् चण्डभार्ग्गवन् । २१९
तक्षकनिग्रहमसाद्ध्यमनपरा-
धाक्षिकर्ण्णन्मारॅक्कॉन्नॅन्तॉरु फलम् २२०
ऍन्तॉरु कारण तक्षकन् वाराय्वान्
चिन्तिक्क नामॅन्नतु केट्टनन्तर २२१
चॉन्नार् सदस्यादिकळवनिन्द्रनॅ-
च्चॅन्नाश्रयिच्चानतिनिल्ल सशयम् । २२२
तक्षकन्तन्नॅयुमिन्द्रनॅयुं कूटॅ
तल्क्षणमावाहिच्चु चण्डभार्ग्गवन् । २२३
आदित्यरुद्रवसुप्रमुखन्मारा-
मादितेयन्मारुमाय् वन्नु वासवन् २२४
विष्णुपदत्तिङ्कलाम्मारुरुच्चितु
जिष्णुतन्नुत्तरीय पुक्कु तक्षकन् । २२५
विस्मयं कैक्कॉण्टु चॉन्नान् नृपतियु
भस्ममाक्कीटुक सेन्द्रमित्तक्षकम् । २२६

आने दीजिए'। द्वारपाल मुनीन्द्र को बुला लाया। राजा ने पाद्य, आसन, अर्घ्य आदि दिया और हर्ष के साथ पूँछा—'आप क्या चाहते है ?' तदनन्तर अस्तीक के उत्तर देने के पहले ही चण्डभार्गव ने जल्दी से कहा—"तक्षक का निग्रह असाध्य है। निरपराध सर्पो का वध करने से क्या-लाभ है ? तक्षक के न आने का क्या कारण है ? हम लोग जरा सोचे"। यह सुनकर सदस्यो ने कहा—"इस मे सदेह नही कि वह आश्रय के लिए इन्द्र के पास गया है"। तत्क्षण ही चण्डभार्गव ने तक्षक और इन्द्र का एक साथ आवाहन किया। २१४-२२३ तब आदित्य, रुद्र, वसु आदि देवो के साथ वासव (इन्द्र) पधारे। और विष्णुपद (आकाश) मे जैसे स्थिर हो गये। तक्षक जिष्णु (इन्द्र) के उत्तरीय (दुपट्टे) मे घुस गया। तब विस्मित होकर राजा ने कहा—'इन्द्र के साथ ही इस तक्षक को भस्म कर दो'। यह सुनकर मुनियों ने कहा—

आक्कु कटक्करुतिङ्ङ तिन्नॅङ्ङळॅ-
याक्किक्किटक्कुन्नितु नृपतीश्वरन् । २०७
पार्क्क कुरङ्ञोरुनेर तपोनिधे
कालक्षण कॉण्टुणर्त्तिच्चु वरा ञङ्ङळ् । २०८
ऐॅन्निवण्ण द्वारपालन्मार् चॉल्कयाल्
तन्नुळ्ळिलोर्त्तु कलिपच्चितस्तीकनुम् २०९
वन्पुकॉण्टन्यगृहमकपूवति-
नुम्पर्कोनु पणि नल्लतनुनयम् । २१०
इत्थ विनिश्चित्य सत्वरमस्तिकन्
पृथ्वीशनॅ स्तुतिचॅय्तुतुटङ्ङिनान् । २११
यज्ञत्तॅयु मुनीन्द्रन्मारॅयु पुन-
रग्नियेयु नृपभृत्यजनत्तॅयु २१२
ऑक्क वॅव्वेरॅ कनक्कॅ स्तुतिच्चप्पो-
ळुळ्क्कमल तॅळिञ्ञारवरेवरुम् । २१३
भूपन् सदस्यादिकळोटु चोदिच्चु
तापसबालकन् तेजोनिधि तुलोम् २१४
इन्नु वरुत्तेणमो पुनरॅन्नतु
निङ्ङळ् चॉल्लीटणमॅन्नतु केट्टवर् २१५
नल्लनत्रे कटत्तिक्कॉण्टु पोरिकॅ-
न्नॅल्लावरुमॉरुपोलॅयरियिच्चार् । २१६

हुए और तुरन्त गोपुरद्वार (फाटक) के अन्दर जाने लगे। द्वारपालो ने कहा—"राजा ने हम लोगो का यहाँ इसलिए बैठाया है ताकि कोई यहाँ न आ सके। हे तपोनिधे! थोडी देर ठहरो। एक क्षण मे हम सूचना दे कर आ रहे है"। उनके इस प्रकार कहने पर अस्तीक मन ही मन सोचने लगे—'वडाई दिखलाकर पराये घर मे प्रवेश करना देवराज के लिए भी कठिन है। समझाना ही ठीक होगा'। ऐसा निश्चय करके तुरन्त ही अस्तीक राजा की स्तुति करने लगे। जव उन्होने यज्ञकी, मुनीन्द्रो की, अग्नि की, राजा के भृत्यो की, सव की अलग-अलग स्तुति की तव भीतर से सव प्रसन्न हुए। २०५-२१३ राजा ने सदस्यादिको से पूँछा—'यह तापसवालक अवश्य तेजोनिधि है। आज उसको यहाँ बुलाना चाहिए या नही यह आप लोग तय करके वतलाइए'। यह सुन कर सव ने एक ही कण्ठ से कहा—'तापस अच्छा प्रतीत होता है। उसको

कल्पितभगमपेक्षिच्चतु केट्टि-
ट्टप्पोळनुतापमोटु नृपन् चॉन्नान् । २३७
ग्रामधनधान्यरत्नङ्ङळ् नल्कुवन्
काममवटिलॅन्तॅन्नतरुळ्चॅय्क । २३८
काममवटिङ्कलेतुमिनिक्किल्ल
भूमीपते ञान् पऱ्युन्नतु केळ्क्क । २३९
माताविनु मम मातुलन्माक्कुमु-
ळ्ळाधियु तीर्त्तवर्जीवनं रक्षिक्क । २४०
पन्नगसत्रत्तॅयिन्नु माटीटुक
नल्लतल्लाय्किल् प्रपञ्च मुटिञ्ञुपोम् । २४१
अस्तिकवाञ्छित नल्कुकॅन्नु गुरु
सत्यपरायणन्मारा मुनिकळुं २४२
मौनानुवादमोटे जनमेजयन्
तानु मखवरदक्षिणयु चॅय्तान् । २४३
वह्नियिल् वीळाय्क तक्षकनॅन्नतु-
मन्नेर मून्नुरु चॉल्लिनानस्तिकन् । २४४
सत्यपरनायॉरस्तिकवाक्किना-
लत्तल् तीन्नॉन्नु वीर्त्तीटिनान् तक्षकन् २४५
मटुळ्ळ दुष्टनागङ्ङळ् दहिच्चतु-
मटमिल्लातोळमुण्टॅन्नते वेण्टू । २४६

भग की याचना सुनकर राजा ने दुःख के साथ कहा—'मैं ग्राम, धन, धान्य, रत्न सब दूँगा। कहो, इनमें से क्या चाहते हो?' तब अस्तीक बोले—'इनमें से मैं कुछ भी नहीं चाहता हूँ। हे भूपाल! सुनो जो मैं कहता हूँ। मेरी माता और मेरे मातुलों का दुःख दूर करो और उनके जीवन की रक्षा करो। अच्छा यही होगा कि यह सर्पसत्र आज ही बन्द किया जाय। नहीं तो सारा प्रपंच समाप्त हो जायगा'। २३३-२४१ तब गुरुजी (यज्ञ के आचार्य) ने और सत्यपरायण मुनियों ने अस्तीक का वाञ्छित पूरा करने के लिये अनुरोध किया। जनमेजय ने मौन हो कर उसे स्वीकार कर लिया और यज्ञ में अच्छी-अच्छी दक्षिणाएँ दीं। अस्तीक ने तीन बार कहा कि तक्षक अग्नि में न गिरे। सत्यसन्ध अस्तीक के वचन से दुःख से मुक्त हो कर तक्षक खुशी से फूल गया। अब इतना ही कहना है कि दुष्ट नागों में से असंख्य जल गये। भूपाल

ऍन्नतु केट्टरुळ्चॅय्तु मुनिकळुम्
मन्नवा नल्कीटुकस्तिकवाञ्छितम् । २२७
सोमश्रवास्साकुमाचार्यनु द्विज-
कामप्रदान चॅय्कॅन्नुळ्ळरीटिनान् । २२८
चॉल्कभिवाञ्छितमॅन्नान् नृपतियु
नल्कुवन् वेण्टुन्नतॅन्नु परञ्ञप्पोळ् । २२९
आतुरमानसन्मारा मुनिजन
मेदिनीपालकनोटु चॉल्लीटिनार् । २३०
भीतिपूण्टिन्द्रनयच्चानरिञ्ञालुं
खेदमियन्नॉरु तक्षकन्तन्नॅयु २३१
दुष्टाश्रितपरिपालन नन्नल्ल
शिष्टजनत्तिनॅन्नु वरुं निर्णयम् । २३२
तक्षकनग्नियिल् वीणु दहिच्चीटु-
मिक्कर्म्मसाद्ध्यवुं वन्नितॅन्नारवर् । २३३
अस्तिकनन्नेरमाशु चॉल्लीटिनान्
पृथ्वीपते वरं नल्कीटुक मम । २३४
चॉल्लीटुकॅन्नुरचॅय्तु नृपतियुम्
चॉल्लिनानस्तिकनुमभिवाञ्छितम् । २३५
ऍङ्किलिप्पन्नगसत्रं मुटक्कण सङ्कट-
मुण्टु जगद्वासिकळ्क्कॅल्लाम् । २३६

'हे भूपाल ! अस्तीक की इच्छा पूरी करो' । आचार्य सोमश्रवा ने भी कहा—'द्विज के काम की पूर्ति करो' । जब औरो ने कहा कि उसका मांगा दे दो तो राजा ने कहा—'तो फिर कहो क्या चाहते हो' । तब दु खित मुनिजनो ने मेदिनीपाल (राजा) से कहा—'जान लीजिए कि इन्द्र ने भयभीत हो कर दु खित तक्षक को भेजा है । इसमे सदेह नही कि शिष्टजनो के लिए दुष्टो को आश्रय देना उचित नही है । २२४-२३२ तक्षक अग्नि मे गिरकर जल जायगा और इस कर्म का लक्ष्य भी सिद्ध हो जायगा' । उस समय आस्तीक ने तुरन्त कहा—'हे भूपाल ! मुझे वर दे दीजिए', राजा ने कहा—'हाँ, कहो क्या है' । तब अस्तीक ने अपनी इच्छा कही । अगर वर देगे तो इस सर्पसत्र को बन्द करना चाहिए, क्योकि इससे जगत् के निवासियो को दु ख होता है' । अपने सकल्प के

एॅङ्किल् प्रपितामहन्मारुटॅ गुणं
मगलमाम्मारॅनिक्करियक्कणम् । २५७
केळ्क्कणमॅङ्किल् वेदव्यासनॅन्निम-
टाक्कु परयावतल्लॅन्नु निर्णयम् । २५८
सत्यवतीसुतनोटु चोदिक्कते
स्वस्त्यस्तु साप्रतमॅन्नॅळुन्नळिनान् । २५९
मातुलगेहमकपुक्कितस्तिकन्
वासुकि मुम्पाय नागप्रवरन्मार्
अस्तिकनॅक्कनिञ्ञाश्लेषवुं चॅय्तु
मस्तकत्तिङ्कल् मुकर्न्नु चॉल्लीटिनार् । २६१
सर्प्पकुलत्तॅ रक्षिच्चतु पार्क्कुम्पो-
ळॅत्रयुमद्भुतमॅन्ने परयावू । २६२
एॅन्तु भवानॉन्नु अङ्ङळ् चॅय्येण्टुन्न-
तन्तर्ग्गतमरुळ्चॅय्तालतु तराम् । २६३
चिन्तितमॉन्नुण्टतु परयामॅङ्कि-
लन्तर पिन्नॅ वरातॅयिरिक्कणम् । २६४
सध्याकालत्तिङ्कलॅन्टॅ चरितङ्ङळ्
चिन्तिक्कयु चॉल्कयु केळ्क्कयु चॅय्किलो २६५
पन्नगजातिकळालवक्कर्क्कुमे
पिन्नॅयॉरु भय कूटातिरिक्कणम् । २६६

के गुण मुझे सुनाइए ताकि मेरा कल्याण हो जाय"। (अस्तीक ने उत्तर दिया—) 'अगर आपको सुनना है तो नि सन्देह वेदव्यास के अतिरिक्त और कोई कह नही सकता, इसलिए आप सत्यवती-पुत्र (वेद-व्यास) से पूँछिए। आपका कल्याण हो।' यह कह कर अस्तीक विदा हो गये। २५१-२५९ तदनन्तर अस्तीक ने अपने मातुल (मामा) के घर मे प्रवेश किया। वासुकि आदि नागप्रमुखो ने प्रेम से अस्तीक का आश्लेप (आलिङ्गन) किया और उनका सिर चूम कर कहा— "आपने सर्पवश की रक्षा करके वहुत अद्भुत काम किया है। हम और क्या कहे। हम लोग आपकी क्या सेवा करे आप अपने मन की वात कहिए। हम [आपका मनचाहा] देगे"। (तव आस्तीक ने कहा—) "एक वात मेरे मन मे है। वह कहूँगा। पर उसमे कोई अन्तर नही पड़ना चाहिए। सध्या के समय जो मेरे चरित्रो पर ध्यान करे या

भूपनवभृथस्नानवु चॆय्तितु
तापवुं तीर्न्नु जगद्वासिकळ्क्कॆल्लाम् २४७
अस्तिकनॆप्पिन्नॆस्सत्कारवुं चॆय्तु
पृथ्वीपति कनिवुटु चॊल्लीटिनान् २४८
अच्युतप्रीतिवरुत्तुवानायिनि-
यश्वमेध वेणमन्नॆळुन्नळ्ळणम् २४९
ऎन्नु परञ्ञु सुवर्ण्णरत्नादिकळ्
मन्नवन् वेण्टुवोळं कॊटुत्तीटिनान् । २५०
कौन्तेयन्माराय पाण्डवन्मारुटॆ
शान्तगुणमॆल्लां चॊल्लावतल्लत्ते । २५१
तत्पुत्रपौत्रनायुण्टायतिन्नुटॆ
सत्बोधमेतुमॊरद्भुतमल्लल्लो । २५२
तत्कुलत्तिङ्कलुण्टाकुन्न मन्नवर्
सत्गुणन्मारन्नियॆ वरुमारिल्ल । २५३
भक्तिविश्वासङ्ङळ् कण्टु नारायणन्
मुक्तिप्रदनां मुकुन्दन् तिरुवटि २५४
दौत्यसारथ्यादि भृत्यकर्म्म चॆय्त-
तोर्त्ताल् विचित्रमताक्कु मटुण्टावू । २५५
अस्तिकनित्थं परञ्ञतु केट्टप्पो-
ळुत्तमना जनमेजयन् चॊल्लिनान् । २५६

ने अवभृथ स्नान किया और जगत् के निवासियो का दुःख समाप्त हुआ। तदनन्तर राजा ने आस्तीक का सत्कार किया और वडी कृपा के साथ कहा—"अच्युत की प्रसन्नता के लिए अश्वमेध भी करना है। उसमे आप अवश्य पधारिए"। इतना कह कर राजा ने उनको यथेष्ट सुवर्ण रत्न आदि दे दिया। २४२-२५० कुन्तीपुत्र पाण्डवो के शान्त गुणो का वर्णन करना कठिन है। उसके पुत्र के पौत्र के रूप मे जिसका जन्म हुआ है उसके सद्‌वोध मे क्या आश्चर्य करना है? उनके कुल मे पैदा हुए भूपाल सद्‌गुणवाले नही तो और क्या हो सकते है? उनकी भक्ति और श्रद्धा देखकर मुक्तिप्रद, मुकुन्द, प्रभु नारायण ने उनका दौत्य (दूत वनना) और सारथ्य (सारथी वनना) जैसे भृत्यकर्म किये। यह कितना अद्भुत है। ऐसे कर्म किसके हो सकते है? अस्तीक की यह वात सुनकर उत्तम जनमेजय ने कहा—"अगर ऐसा है तो मेरे प्रपितामहो

टुत्तमकीर्त्या वसिच्चु चिरकालं
मुक्तियु वन्नु पुनरेन्नरिञ्ञालुम् । २७६
आस्तिकमाकिय पुण्यकथ नित्य-
मास्तिक्यमोटु चोन्नालु गतिवरुम् । २७७
उग्रश्रवस्साय सूतवाक्य केट्टु
भृग्वपत्यादिकळ् पिन्नेयु चोदिच्चु । २७८
पन्नगसत्रे जनमेजयनाय
मन्नवनोटु महामुनि चोल्लिय- २७९
भारत कृष्णकथामृतपूरित
पाराते ञड्ङळोटोक्कप्परञ्ञेन्नु २८०
पार प्रशंसिच्चु सूतने वर्णिच्चु
पारमार्थ्यात्मना चोदिच्चतुनेर २८१
सूतनुमादरवोटु चोल्लीटिनान् ।
मेदिनीकान्तन् जनमेजयनृपन् २८२
वेदव्यासन्मुनितन्नोटु चोल्लिनान्
पादपद्म नमस्ते नमस्ते सदा । २८३
मुन्न पितामहन्मार् मम पाण्डवर्
पुण्यपुरुषन्मार् पूर्णगुणवान्मार् २८४
विश्वैकनाथना विष्णुभगवाने
विश्वासभक्त्या समाराधन चेय्तु २८५

साथ अपने पुत्र, मित्र, अर्थ (धन), कलत्र (स्त्री) के सग उत्तम कीर्ति पाकर चिरकाल तक रहे। जान जीजिए कि उन्होने मुक्ति भी प्राप्त की। जो आस्तीक की इस पुण्यकथा को आस्तिक्य (श्रद्धा) के साथ सुनावेगे उनको अच्छी गति प्राप्त होगी। २७१-२७७ सूत उग्रश्रवा का वचन सुनकर भृगु के अपत्यो (पुत्रो) ने फिर पूँछा—कि सर्पसत्र के अवसर पर महामुनि (वैशम्पायन) ने राजा जनमेजय से कृष्णकथा से भरा हुआ जो महाभारत कहा था उसे विना विलम्ब के हमे सुना दीजिए। जव उन्होने सच्चे हृदय से सूत जी की प्रशसा करके पूँछा तव उन्होंने सादर निवेदन किया। पृथ्वी के स्वामी राजा जनमेजय ने महामुनि वेदव्यास जी से निवेदन किया, "आप के चरणकमलो को सदैव प्रणाम हो। २७८-२८३ अतीत मे मेरे पितामह पाण्डवो ने, जो पुण्यपुरुष और पूर्णगुणवाले थे, श्रद्धा और भक्ति के साथ भगवान् विश्वैकनाथ विष्णु

ऒन्नस्तिकन् परञ्ञुळ्ळतु केट्टोरु
दन्तशूकोत्तमन्मारुमुरचेय्तु । २६७
इक्कथ चोल्कयुं केळ्क्कयु चेय्वोर्क्कु
दु खं वरा विषमोन्नुमकप्पेटा । २६८
अन्धनाय् तङ्ङळिलेकन् कटिक्किलु-
मन्त भविक्कयिल्लेन्तु विपमेटो । २६९
ऎन्नुरगन्मार् कोटुत्तु वरङ्ङळु
नन्नाय् सुखिच्चु वसिच्चाररिञ्ञालुम् २७०
धर्म्मस्थितिपिळयाते जरत्कारु-
तन्मकन् नागेन्द्रसोदरियाकिय- २७१
निर्म्मलगात्रि जरत्कारु पेट्टट-
नुण्टाय तापसनस्तिकनेङ्ङळे- २७२
क्कुण्ठततीर्त्तु पालिक्कॆन्नु चोल्लिया-
लुण्टाकयिल्लोरु सर्प्पभयमव-
क्किण्टल् मट्टुळ्ळवयु वरा निर्ण्णयम् । २७३
आशीविषभयमुण्टाकयिल्लेन्नु-
माशीर्व्वचनवु चोन्नारुरगन्मार् । २७४
अस्तिकनिङ्ङने नित्यमुखत्तोटु
पुत्रमित्रार्त्थकळत्रमित्रादियो- २७५

उनका वर्णन करे या उनको सुने, उनमे किसी को भी सर्प जाति के द्वारा कोई भय नही होना चाहिए।" आस्तीक का यह वचन सुनकर नागो ने निवेदन किया—"जो इस कथा को सुनावे या सुने, उनको दु ख न होगा, उन [के शरीर में] मे [सर्पो का] विप न प्रवेश करेगा। यदि हम लोगो मे से कोई अन्धा होकर काट भी ले तो भी विष के द्वारा [काटे जानेवाले मनुष्य का] अन्त नही होगा। २६०-२६९ जव सर्पो ने इस प्रकार वर प्रदान किया, तो वे आस्तीक अत्यन्त सुखी (प्रसन्न) हो गये। अगर कोई यह प्रार्थना करे कि—'जरत्कारु का पुत्र आस्तीक, जिसे नागेन्द्र की वहिन निर्मल शरीर वाली जरत्कारु ने जन्म दिया, वह धर्म-स्थिति का उल्लघन न करके और दु ख को दूर करते हुए हमारी रक्षा करे'—तो उसको सर्पो से कोई भय न होगा और नि सन्देह अन्य दु ख भी न होंगे, तथा आशीविपो (सर्पो) से कोई भय पैदा न होगा। सर्पो ने इस प्रकार आशीप दी। इस प्रकार आस्तीक स्थायी सुख के

सभवम्

श्रीराम ! राम ! राम ! गोविन्द ! शिवराम !
श्रीमहादेव ! कृष्ण ! मुकुन्द ! नारायण । १
नारायणाय नमो नारायणाय नमो
नारायणाय नमो नारायणाय नम. । २
पारतिलोरोतरमुळ्ळ जन्तुक्कळायि-
प्पारमुळ्ळळ्ळलूण्टु जनिच्चु मरिप्पतु ३
पारातॆ माटिक्कोळ्वानॆन्तॊरु कळिवय्यो !
पारीरेळिनु मूलमाकिय देवदेव ! ४
भारतमाय कथ केळ्क्कयु चॊल्लुकयु
पार नन्नॆन्नु गुरुवरुळिच्चॆय्तु केळ्प्पू । ५
पारातॆ परयणमतु नी किळिप्पॆण्णे
भारमिल्लेतु निनक्कॊप्पेरु पाठमल्लो । ६
भारतीदेवियॆन्टॆ नाविन्मेल् विळङ्ङकिल्
पाराशर्यानुग्रह कॊण्टुञान् चॊल्लीटुवन् । ७
भारतमोटुङ्ङातॊन्नाकिय कथयल्लो ।
पारमाग्रहमॆङ्किल् चुरुक्किप्परञ्ञीटां ८
केळ्क्कणमल्लो महाभारतमितिहासम्
पोक्कणं दुरितङ्ङळॆप्पेरुमितिनाले । ९

सम्भवपर्वम्

हे श्रीराम ! राम ! राम ! गोविन्द ! शिवराम ! हे महादेव ! कृष्ण ! मुकुन्द ! नारायण ! नारायणाय नमो, नारायणाय नमो, नारायणाय नमो, नारायणाय नम । चौदहो लोको का मूलकारण हे देवदेव ! इस जगत् मे जो तरह-तरह के जन्तु आभ्यन्तर (भीतरी) दु खो के साथ जन्म लेते है और मरते है, हे हन्त ! उसको तुरन्त रोकने के लिए क्या उपाय है ? मैने गुरु के मुँह से यह सुना है कि महाभारत की कथा सुनाना और सुनना अच्छा उपाय है । इसलिए हे शुककन्ये ! तुम उसे जल्दी सुनाओ । तुम्हारे लिए यह बोझ नही होगा । तुम्हे तो सदैव कण्ठस्थ है । अगर देवी भारती मेरी जीभ पर विराजेगी तो पाराशर्य (वेदव्यास) के अनुग्रह से मै कहूँगा । १-७ महाभारत तो एक अनन्त कथा है । अगर प्रबल इच्छा हो तो सक्षेप मे कहूँगा, क्योकि महाभारत इतिहास सुनने योग्य है ।

विश्वपवित्रयां कीर्त्ति परत्तिनार् ।
विश्वमेल्जाटवुमेन्नालवरुटे २८६
सल्कथयेल्लामरुळ्चेय्तु केळ्क्कणम् ।
दु.खमकलुवानेन्नतु केट्टोरु २८७
विष्णुकलाभूतन् कृष्णद्वैपायनन्
कृष्णकथामृतमिश्रमा भारत २८८
तात्पर्यवाना जनमेजयने नी
केळ्प्पिक्कयेन्नु वैशम्पायननोटु २८९
कारुण्यपूर्व्व नियोगिच्चिरुन्नोरु
नेरं तोंळुतु वैशम्पायनमुनि २९०
आचार्यनाकिय वेदव्यासन्पद-
माशये चेर्त्तु समाधियुरप्पिच्चु । २९१
नारायणनेयु पिन्ने नरनेयु
भारतिया वर्ण्णगात्रियेत्तन्नेयु २९२
सादरमुळ्ळिल् सचराचरं जग-
द्वेदवेदागवेदान्तादिविद्ययु २९३
चेतसि चेर्त्तुणर्न्नैक्यभावत्तोटु-
मादिये चोल्लिलनानेन्नितु सूतनु
मोदेन चोन्नाळिति किळिप्पैतलुम् । २९४

॥ आस्तिक समाप्तम् ॥

का आराधन किया और अपनी पवित्र कीर्ति को फैलाया । अतएव दु:ख दूर करने के लिए इस बात की आवश्यकता है कि पृथिवी के सभी स्थानो पर उनकी सत्कथा सुनाई जाय । यह सुनकर विष्णु की कला का स्वरूप कृष्णद्वैपायन ने वडे कारुण्य (कृपा) के साथ वैशम्पायन को आज्ञा दी कि तुम प्रेममूर्ति जनमेजय को कृष्णकथा-मिश्रित महाभारत सुनाओ । उस समय वैशम्पायन प्रणाम करके और आचार्य वेदव्यास के चरणो को घ्यान करके योगसमाधि मे प्रविष्ट हुए । और नारायण को, और नर को, वर्णगात्री (अक्षरो से निर्मित शरीर वाली) भारती (सरस्वती देवी) को, सचराचर जगत् को, और वेद, वेदाग और वेदान्त आदि विद्याओ को अपने मन मे सग्रह करके, चैतन्य होकर, अद्वैत की भावना के साथ, प्रारभ से उन्होने सव कहा । सूतजी ने ऐसा निवेदन किया । और शुककन्या ने प्रमोद के साथ यही सुनाया । २८४-२९४

॥ आस्तीकपर्व समाप्त ॥

अक्कथयोक्कच्चोल्वानुळ्ळक्काम्पिल् निरूपिक्कल्
मुख्यना वेदव्यासन्तानोळ्ळिञ्ञारुमिल्ल । २०
अञ्चितमाय महाभारतमितिहास-
मञ्चामतोरुवेदमेन्नत्रे चोल्ली मुनि । २१
अङ्ङनेयिरिप्पोरु भारतकथयिप्पो-
ळिङ्ङने चोल्वानुळ्ळिल् नाणमाकुन्नितय्यो । २२
एन्नालुमवरवर्क्करिवान्तक्कवण्ण
नन्नायिप्परकेन्नुवन्नीटुमरिञ्ञवर् । २३
अङ्किलो केट्टुकोळ्विन् दोपङ्ङळोक्क मर-
च्चेङ्कुलुळ्ळोरु गुणं ग्रहिच्चुकोळ्विन् निङ्ङळ् । २४

रोमवशराजोत्पत्ति

जनमेजयनृपन् तन्नुटे यागत्तिङ्कल्
मुनिनायकन् वेदव्यासनुमेळुन्नळ्ळि । १
अन्नेर पैतामहन्मार् गुण केट्टमूल
मन्नवनपेक्षिच्चु भारतकथ केळ्प्पान् । २
वैशद्यमोटुमिवन्तन्नो नी केळ्प्पिक्केन्नु
वैशम्पायननोटु वेदव्यासनु चोन्नान् । ३

करो तो वहुत ही कम ऐसी कथाएँ मिलेगी जो महाभारत मे न कही गयी हो । और विचार किया जाय तो महामुनि वेदव्यास के अतिरिक्त वहाँ की सारी कथाएँ सुनानेवाला और कोई नही है । मुनिजी (वेदव्यास) ने कहा है कि यह शोभन इतिहास महाभारत पाँचवाँ वेद ही है । ऐसी महाभारत की कथा को इस प्रकार (सक्षेप मे) कहने मे मुझे अपने मन के भीतर लज्जा प्रतीत होती है । फिर भी जाननेवाले इतना ही कर सकते है कि कथा ऐसे सुनाना कि सव अपने-अपने ढग से समझे । इसलिए सुन लीजिए और दोपो को त्याग करके मुझ मे जो गुण हो उनको ग्रहण कर लीजिए । २४

चन्द्रवंश के राजाओ की उत्पत्ति

राजा जनमेजय के याग मे मुनियो मे श्रेष्ठ वेदव्यासजी पधारे । तव अपने पितामहो (परवावाओ) के गुण सुनने के लिए राजा ने उनसे भारतकथा सुनाने की प्रार्थना की । वेदव्यासजी ने वैशम्पायन से कहा "तुम ही इनको विशदरूप से सुनाओ" । तव विशिष्ट योग्यता वाले मुनि

मोक्षसाधनङ्ङळिल् मुन्पितिन्नेन्नुतन्ने
साक्षाल् श्रीकृष्णन् परमाचार्यनरुळ्चेय्तु । १०
वेदव्यासोक्तमाय वेदान्तसारार्थं नी—
यादिये केळ्प्पिक्कणमानन्द वरुवानाय् । ११
आदिये केळ्प्पिनेङ्किल् भारतमाय कथ
मोदेन परञ्ञीटामादिनायकलील । १२
गुरुवु गणेशनु वाणियु मुकुन्दनु
गुरुकारुण्यत्ताले तुणय्क वन्दिक्कुन्नेन् । १३
करुणाचित्तन्मारां धरणीसुरवृन्द-
चरणांबुरुहत्तेश्शरणं प्रापिक्कुन्नेन् । १४
वसिष्ठात्मजसुतपुत्रनन्दनन्तानु
वसिच्चीटणमुळ्ळिल् वाल्मीकिमुनीन्द्रनुं १५
रसिच्चीटणमितु केट्टु भक्तन्मार् परि-
हसिच्चीटुकिलतु दुरितविनाशनम् । १६
भगवद्भक्तम्यारेक्कोण्टुळ्ळ चरितवु
भगवच्चरितवु तल्गुणनामङ्ङळुं १७
परञ्ञु केट्टु मुळ्ळिल् ध्यानिच्चुमुळ्ळ काल
परमानन्दं पूण्टु कळिच्चु कौळ्क नल्लू ।१८
भारतमतिल् चोल्लातुळ्ळोरु कथकळो
पारातें निरूपिक्किलेत्वयं कुरञ्ञीटुम् । १९

इसके द्वारा पापो को दूर करना है। साक्षात् श्रीकृष्ण ने कहा है कि मोक्ष-साधनो मे सबसे पहला यही है। वेदव्यासजी का कहा वेदान्त का सार तुम प्रारम्भ से ही सुनाओ ताकि हमे आनन्द प्राप्त हो जाय। भारत की कथा प्रारम्भ से ही सुन लीजिए। मै प्रमोद (प्रसन्नता) के साथ आदिनायक की लीला सुनाऊँगा। ८-१२ गुरु, गणेश, वाणी और मुकुन्द वडे कारुण्य (कृपा) के साथ मेरी सहायता करे, हाथ जोडता हूँ। करुणामय ब्राह्मणवृन्द के चरणसरोज ही मेरे लिए शरणदाता है। वसिष्ठजी के प्रपौत्र के पुत्र और मुनीन्द्र वाल्मीकि मेरे भीतर निवास करे। और सभी भक्त इसे सुनकर इसका अनुभव करे। अगर कोई हँसी उडावे तो भी पापनाशक होगी। भगवान् के भक्तो के चरित, भगवान् के चरित, उनके गुण और नाम सुनाते, सुनते और ध्यान करते हुए परमानन्द अनुभव करते हुए समय विताना सवसे अच्छा है। १३-१८ विचार

पारिट परिपालिच्चिरिक्कु कालत्तिङ्कल्
नारिमारिरुवरे वेट्टितु ययातियुम् । १४
दितिजाचार्यनाय शुक्रमामुनियुटे
सुतयायिट्टु देवयानिये वेट्टु मुम्पिल् १५
दितिजाधिपनाय वृपपर्व्वाविन्मक-
ळतिसुन्दररियाय शर्म्मिष्ठ रण्टामवळ् १६
अतुरण्टिलुमायिट्टञ्चु पुत्रन्मारुण्टाय्
यदुवु तुर्व्वशुवु देवयानिक्कु मक्कळ् १७
शर्म्मिष्ठात्मजन् द्रुह्यु रण्टामतनुद्रुह्यु
धर्म्मिष्ठनाय पूरुवायतु मून्नामवन् । १८
यदुविन् परम्पर यादवन्माराय् वन्नु
पितृशापत्तालिल्लातायितु नृपचिह्नम् । १९
पूरुविन् परम्पराजातन्मार् पौरवन्मार्
पूरुविन् भार्य्यक्कन्नु कौसल्ययेन्नु नामम् । २०
अवळ् पेट्टुळ्ळ जनमेजयनेन्न नृप—
नवन्टे पत्निक्कु पेरनन्तयेन्नाकुन्नु । २१
प्राचिन्वानेन्न नृपनवळ् पेट्टुण्टायतु
प्राचिया दिक्कु जयिच्चतिनालेन्नु नामम् । २२
अवन् तन्नुटे पत्नियश्मकियल्लो केळ्प्पि-
नवळ् पेट्टुण्टायितु शय्यातियेन्न नृपन् । २३

तक पृथिवी का पालन किया। १२ उसका पुत्र था राजा नहुप और नहुष का पुत्र हुआ ययाति। जब ययाति पृथिवी का राज कर रहा था तब उसने दो स्त्रियो से विवाह किया। पहले दैत्यो के आचार्य महामुनि शुक्र की पुत्री देवयानी से विवाह किया। और उसकी दूसरी स्त्री हुई दैत्यो के राजा वृपपर्वा की पुत्री अतिसुन्दरी शर्मिष्ठा। इन दोनो स्त्रियो से पाँच पुत्र पैदा हुए। यदु और तुर्वशु देवयानी के पुत्र हुए और शर्मिष्ठा का पहला पुत्र था द्रुह्यु, दूसरा अनुद्रुह्यु और तीसरा पुत्र हुआ धर्मिष्ठ पुरु। यदु के वशज यादव कहलाते है और पिता के शाप के कारण उसके नृपचिह्न नष्ट हुए। १९ पुरु के वशज पौरव कहलाते है। पुरु की पत्नी का नाम कौसल्या। उसके पुत्र राजा जनमेजय की पत्नी का नाम था अनन्ता। प्राची दिक् को जीतने के कारण उसके पुत्र का नाम प्राचिन्वान् हुआ।

वैशिष्ट्ययुळ्ळ मुनि वन्दिच्चु नृपनोटु-
संशयं तीरुं वण्ण सक्षेपिच्चरियिच्चु । ४
विस्तरिच्चरुळिच्चेय्तीटणमेन्नु नृपन्
चित्तकौतुकत्तोटु पिन्नेयु चोदिच्चप्पोळ् ५
सत्यज्ञानानन्तानन्दात्मकपरब्रह्म-
तत्त्वज्ञानाय वैशम्पायननरुळ्चेय्तु । ६
धाताविन् मकनाय दक्षनु मकळराय्
चेतोहारिणिकळायरुपतुण्टायतिल्
अदिति पेट्टुण्टायि सूर्यनेन्नरिञ्ञालुम् । ७
अवनु मकन् मनुववन्टे मकनिळन्
अवनुमोरु पेण्णाय् चमञ्ञु विधिवशाल् ८
मुन्पिनाल् विरिञ्चन् तन् पुत्रनामत्रिकण्णिल्
सभविच्चितु चन्द्रनवन्टे मकन् बुधन् । ९
इळयाय् चमञ्ञुळ्ळोरिळनेक्कण्टमूल-
मिळकी बुधनुटे मानसमतुकालम् । १०
इळ पट्टुण्टाय्वन्नु चोल्लेळु पुरूरवा-
विळये वळिपोले रक्षिच्चानवन् मुन्नम् । ११
अवनुमकनायुस्साकिय नृपवर-
नवनीभरणं चेय्तिरुन्नान् चिरकालम् । १२
नहुषनाय नृपतीश्वरनवन्मकन्
नहुषन्तन्टे मकनायतु ययातियुम् । १३

(वैशम्पायन) ने हाथ जोड़कर राजा का सदेह दूर करने के लिए सक्षेप में सुनाया। जब राजा ने फिर विस्तार से सुनाने के लिये कुतूहल से प्रार्थना की तब सत्यज्ञानानन्दात्मक (सत्य ज्ञान तथा अनन्त आनन्द स्वरूप) परब्रह्म को जाननेवाले वैशम्पायन ने कहा। ६ जान लीजिए कि धाता के पुत्र दक्ष की साठ मनोहारिणी पुत्रियाँ हुई। उनमे से अदिति ने सूर्य को जन्म दिया। उसका पुत्र मनु और उसका पुत्र इल जो विधिवश एक कन्या बन गया। पहले ही ब्रह्मा के पुत्र अत्रिकण (अत्रि ऋषि) का पुत्र चन्द्र पैदा हुआ और उसका पुत्र बुध। जब बुध ने इल को देखा जो इला हो गया था तब उसके मन मे विकार होने लगा। इला ने (चन्द्रवश मे) विख्यात (राजा) पुरूरवा को जन्म दिया जिसने इला का यथोचित पालन किया। उसके पुत्र नृपवर आयु ने चिरकाल

तल्पत्नी विदेहन्तन् पुत्रिया मर्यादयु
तल्पुत्रन् नृपनगभूपतिपुत्रनल्लो । ३४
तल्पत्नी वामदेवी तल्पुत्रनृक्षनृपन्
तल्पत्नी वललयां तक्षकपुत्रियल्लो । ३५
तल्पुत्रनन्तिनारन् तल्पत्नी सरस्वति
तल्पुत्रन् त्रस्नुनृपन् तल्पत्नी काळिन्दियुम् । ३६
तल्पुत्रन् निलीलनु तल्पत्नी रथन्तरी
तल्पुत्रन्मारञ्चुपेर् दुष्यन्तादिकळल्लो । ३७
विश्वामित्रन्टे मकळाकिय शकुन्तळ
दुष्पन्तमहीपतितन्नुटे कान्तयायाळ् । ३८
अवळ्पेटुण्टायतु भरतनेन्न नृपन्
अवन्टे पारम्पर्य भारतमाकुन्नतुं । ३९
काशेयियाय सर्व्वसेनिया सुनन्दये-
याशया विवाह चेय्तीटिनान् भरतनुं । ४०
अवनु भूमन्युवेन्नुण्टायानोरु सुत-
नवनु दाशार्हन्टे मकळा सुवर्ण्णये ४१
वेट्टितु सुहोत्रनेन्नुण्टायि तनयनुम् ।
वेट्टितु जयन्तियामैक्ष्वाकितन्नेयवर् ४२

उसकी पत्नी थी कलिगराज की पुत्री करण्टु और उसका पुत्र था इन्द्र के तुल्य देवातिथि । उसकी पत्नी थी विदेहराज की पुत्री मर्यादा जिसका पुत्र राजा था और (वह था) अगराजा का पुत्र । ३४ उसकी पत्नी वामदेवी जिसका पुत्र राजा ऋक्ष । उसकी पत्नी तक्षक की पुत्री वलला थी । उसका पुत्र था अन्तिनार जिसकी पत्नी थी सरस्वती । उसका पुत्र था नृप त्रस्नु जिसकी पत्नी थी कालिन्दी । उसका पुत्र था निलील जिसकी पत्नी थी रथन्तरी । उसके दुष्पन्त आदि पाँच पुत्र थे । विश्वामित्र की पुत्री शकुन्तला राजा दुष्पन्त की कान्ता (पत्नी) हुई । उसने भरत नामक भूपति को जन्म दिया जिसके वश ही को भारत कहते है । भरत ने काशिराज सर्वसेन की पुत्री सुनन्दा के साथ प्रेम से विवाह किया । उसका सुमन्यु नामक पुत्र पैदा हुआ जिसने दाशार्ह की कन्या सुवर्णा से विवाह किया । उसका पुत्र हुआ सुहोत्र । उसने इक्ष्वाकु की पुत्री जयन्ती से विवाह किया जिसका एक पुत्र विख्यात और उत्तमकीर्ति

शय्याति रुशन्तुविन् नन्दन वरागियां
मय्यल्क्कण्णाळे विवाह चेय्तु वाळुकालं २४
अवळ् पेटहंपतियेन्नोरु नृपनुण्टा-
यवनु कृतवीर्यतनयतन्ने वेट्टान् । २५
अवळ्क्कु नामं भानुमतियेन्नाकुन्नितु-
मवळ् पेट्टुळ्ळ सार्व्वभौमनां नरपति । २६
अवन्टे पत्नी वसुन्धर केकयपुत्रि-
यवळ् पेटुण्टायितु चोल्लेळु जयसेनन् । २७
तत्पत्नि सुपुप्तया विदर्भात्मजयल्लो
तत्पुत्रनरचिनन् तत्पत्नि मर्यादयुम् । २८
अवळ्पेट्टुळ्ळू महाभौमना नरपति-
यवनेप्पोले परिपालनं चेय्तीलारुम् । २९
चोल्लेळु प्रसेनजिल्प्पुत्रियां सुमन्त्रये
नल्लनां महाभौमन् वेट्टितु विधियाले । ३०
नयशौर्योपायादि सकलगुणङ्ङळो-
टयुतनाय नृपनवळ् पेटुण्टाय्वन्नान् । ३१
तत्पत्नी पृथुश्रवाविन्मकळ् भासयल्लो
तत्पुत्रनक्रोधननाकिय महीपति । ३२
तत्पत्नी करण्टुवा कलिंगात्मजयल्लो
तत्पुत्रन् देवातिथि देवनायकसमन् । ३३

सुन लीजिए कि उसकी पत्नी का नाम था अश्मकी जिसने शय्याति नामक पुत्र को जन्म दिया। शय्याति ने रुशन्तु की वरागी सुन्दरी कन्या के साथ विवाह किया। उसने राजा अहपति को जन्म दिया जिसने कृतवीर्य की लड़की से विवाह किया। उसका नाम था भानुमती और उसने नरपति सार्वभौम को जन्म दिया। २६ उसकी पत्नी केकयपुत्री वसुन्धरा थी जिसका पुत्र था विख्यात जयसेन। उसकी पत्नी विदर्भ की कन्या सुपुप्ता और उसका पुत्र अरचिन जिसकी पत्नी थी मर्यादा। उसने भूपाल महाभौम को जन्म दिया जिसके समान किसी ने भी प्रजा का परिपालन नहीं किया। अच्छे राजा महाभौम ने प्रसिद्ध प्रसेनजित् की पुत्री सुमन्त्रा से विधिवत् विवाह किया। उसने राजा अयुत को जन्म दिया जो नय, शौर्य, उपाय आदि सभी गुणों से अलंकृत था। उसकी पत्नी थी पृथुश्रवा की पुत्री भासा जिसका पुत्र था महीपति अक्रोधन।

गौरवगुण तेट्टु तल्क्कुलजातन्मारे-
क्कौरवन्मारेन्नवन्मूलमाय् चॊल्लीटुन्न । ५३
दाशार्हन्तन्टे मकळाकिय शुभागियॆ-
याशया वेट्टु कुरु तल्सुतन् विदूरथन् ५४
तल्पत्नी मागधन्तन् पुत्रियाममृताख्य
तल्पुत्रन् परीक्षित्तु तल्पत्नी सुरूपयु ५५
तल्पुत्रन् भीमसेननाकिय नृपश्रेष्ठन्
तल्पत्नी सुकुमारियाय कैकेयियल्लो । ५६
अवळ्क्कु सत्यश्रवावेन्नॊरु मकनुण्टा-
यवने प्रतीपनेन्नॆल्लारु चॊल्लीटुन्नु । ५७
तल्पत्नी सुनन्दया शिविनन्दनयल्लो
तल्पुत्रन्माराय् मूवरुण्टायितग्निपोले ५८
देवापि पुनरथ शन्तनु वाह्लीकनुम् ।
देवापि वनवासं तुटङ्ङि चॆरियन्ने । ५९
सोमवशवु मेलिलवनालुण्टाय्वरुम् ।
भूमियॆ रक्षिच्चतु शन्तनु महीपति ६०
अवन्टे पत्नियायि वन्नितु भागीरथि-
यवळ् पॆट्टुळ्ळू देवव्रतनेन्नरिञ्ञालुम् ६१
कामिच्चु वलञ्ञितु शन्तनु काळियॆन्न
कामिनियाय दाशनारियॆक्कण्टमूलम् । ६२

कहते है । कुरु ने दाशार्ह की लडकी शुभागी को प्रेम से व्याहा । उसका पुत्र था विदूरथ । उसकी पत्नी हुई मागध की लड़की अमृता उसका पुत्र हुआ परीक्षित् जिसकी पत्नी थी सुरूपा । उसका पुत्र हुआ नृपवर भीमसेन जिसकी पत्नी थी सुकुमारी कैकयी । उसका सत्यश्रवा नाम पुत्र पैदा हुआ जिसे सब लोग प्रतीप कहते है । ५७ शिवि की पुत्री सुनन्दा उसकी पत्नी थी । उसके तीन पुत्र हुए अग्निसमान—देवापि, शन्तनु और वाल्हीक । देवापि ने बाल्यावस्था मे ही वनवास प्रारंभ किया । आगे चलकर उसी से चन्द्रवश भी प्रारभ होगा । राजा शन्तनु ने पृथ्वी का परिपालन किया । भागीरथी उसकी पत्नी हुई जिसने देवव्रत को जन्म दिया । शन्तनु काली नामक कामिनी दास-कन्या (मल्लाह की पुत्री) को देखकर काम से परेशान हुआ । यही कारण है कि देवव्रत ने राज्य को त्याग दिया । फिर उस बुद्धिशाली ने ब्रह्मचर्य को

हस्तियां नरपति पुत्रनायुण्टायवन्नि-
तन्त्रयुं प्रसिद्धनायुत्तमकीर्तियोटे । ४३
हस्तितान् निर्म्मिच्चोरु पुरमायतुमूलं
हस्तिनपुरमेन्नु चोल्लुन्नितङ्ङ्ञालुम् । ४४
हस्तिनमेन्नु चोल्वान् तोन्नियतेन्नाकिलुं
शास्त्रिकळ् चोल्लीटुन्नु हास्तिनमेन्नुतन्ने । ४५
हस्तियुं त्रिगर्त्तन्टे मकळे वेट्टुकोण्टा-
ना स्त्रीरत्नत्तिनु पेरायतु यशोधर । ४६
अवळुं विकञ्जननेत्तोरुवनेप्पेटा-
ळवनु दाशार्हन्टे मकळां सुनन्दये । ४७
वेट्टितन्नवळ् पेटिट्टुण्टायानजमीढन् ।
वेट्टितु नारिमारेक्कनिवोटञ्चुपेरे ४८
कैकेयी नाग पिन्ने गान्धारी विमलयुं
माळ्कात्ते रागतेटुमृक्षयु क्रमत्ताले । ४९
चतुर्व्विशतिसुतशतमुण्टायितव-
नतिनाल् पल वशमुण्टायि नृपन्मारुम् । ५०
अविटे वशकर्त्तावायतु सवरण-
नवनुमादित्यन्टे मकळां तपतिये ५१
वसिष्ठनियोगत्ताल् वेट्टितु सुखत्तोटे
वसिक्कुं नाळिल् कुरुवाकिय सुतनुण्टाय् । ५२

वाला हस्तिन् हुआ । हस्तिन् द्वारा निर्मित होने के कारण जान लीजिए, उसकी राजधानी का हस्तिनपुर नाम हुआ । यद्यपि उसे हस्तिन कहना चाहिए तथापि शास्त्री लोग उसे हास्तिन कहते हैं । हस्ती ने त्रिगर्त की पुत्री को ब्याहा । उस स्त्रीरत्न का नाम था यशोधरा । उसने विकञ्जन को जन्म दिया । उसने दाशार्ह की पुत्री सुनन्दा को ब्याहा जिसने अजमीढ को जन्म दिया । उसने प्रेम से पाँच कन्याओ के साथ विवाह किया जिनके क्रम से ये नाम है—कैकेयी, नागा, गान्धारी, विमला और अक्षीण शोभावाली ऋक्षा । उनके चौवीस सौ पुत्र हुए । अतएव अनेक राजवश भी हुए । ५० एक वश का कर्ता था सवरण । उसने आदित्य (सूर्य) की लडकी तपती के साथ वसिष्ठ जी की आज्ञा से विवाह किया । जब वे सुख से रह रहे थे तब उनके कुरु नामक पुत्र पैदा हुआ । उस कुरु के ही कारण उसके वश मे उत्पन्न गौरव गुणवाले राजाओ को कौरव

माताविन्मतमरिञ्ञीटिन मुनिवरन्
भ्राताविन् कळत्रत्तिल् सन्ततियुण्टाक्किनान् । ७३
चॊल्लॆळु धृतराष्ट्रनम्बिक पॆट्टुण्टायि
नल्लयामवालिकय्क्कुण्टायि पाण्डुतानुम् । ७४
ज्ञानिया विदुररुमुण्टायि शूद्रितन्निल्
सानन्द धार्त्तराष्ट्रन्माराय् नूटॊन्नुण्टायि ७५
पाण्डुविनञ्चु मक्कळ् धर्म्मजादिकळल्लो
पाण्डवन्मारैवर्क्कु पत्नि पाचालितानु । ७६
अवळ् पॆटञ्चु मक्कळैवर्क्कु कूटियुण्टा-
यवर्कळुटॆ नाम वॆव्वेरॆ चॊल्लामल्लो । ७७
प्रतिविन्ध्यनु सुतसोमनु श्रुतसेनन्
मतिमान् शतानीकन् श्रुतकर्म्मावुतानु । ७८
पिन्नॆयु वेरॆयॊन्नु वेट्टितु युधिष्ठिरन्
कन्यक शैब्यपुत्रि देवकियॆन्नवळॆ । ७९
यौधेयनॆन्न मकनुण्टायानवळ् पॆट्टु ।
वातजन् वाराणसि पुक्कु काशीशन्तन्टॆ ८०
मकळा बलधरतन्नॆयु वेट्टु पिन्नॆ
मकनाय् शर्म्मत्रातनुण्टायानवळ् पॆट्टु । ८१
फल्गुनन् द्वारवतिपुक्कुटन् सुभद्रयॆ-
क्कैक्कॊण्टु पोन्नानवळ्पॆटभिमन्युवुण्टाय् । ८२

किया। मुनिवर ने माता का उद्देश्य समझकर अपने भाई के कलत्र (स्त्रियो) मे सन्तति पैदा की। अंबिका ने विख्यात धृतराष्ट्र को जन्म दिया। साध्वी अबालिका का पाण्डु नामक पुत्र हुआ। ज्ञानी विदुर भी शूद्री मे पैदा हुआ। धृतराष्ट्र के एक सौ एक पुत्र सुख से हुए और पान्डु के धर्मपुत्र आदि पाँच पुत्र हुए। उन पाँचो पाण्डवो की पत्नी पाचाली थी। उसने पाँच पुत्रो को जन्म दिया जो पाँचो (पतियो के) थे। उनके नाम सुना रहा हूँ। ७७ प्रतिविन्ध्य, सुतसोम, श्रुतसेन, बुद्धिशाली शतनीक और पाँचवाँ श्रुतकर्मा। युधिष्ठर (धर्मपुत्र) ने शैव्य की पुत्री देविका के साथ एक और विवाह किया। उसने यौधेय नामक पुत्र को जन्म दिया। वातज (भीमसेन) वाराणसी गया और उसने काशिराज की पुत्री वलधरा से शादी की। उसने शर्मत्रात नामक पुत्र को जन्म दिया। फल्गुन (अर्जुन) ने द्वारवती जाकर सुभद्रा से

अतिनाल् देवव्रतन् राज्यवुमुपेक्षिच्चु
मतिमान् ब्रह्मचर्यं प्रापिच्चु कैवर्त्तनो- ६३
टवळे वाङ्ङित्तन्टे तातनु नल्कीटिनान् ।
अवने भीष्मरेन्नु चोल्लुन्नु महाजनम् । ६४
अवळे वेळ्क्कुं मुम्पे पुल्किनान् पराशर-
नवळिल् वेदव्यासनुण्टायितन्नु तन्ने । ६५
पिन्ने शन्तनुजन्मारायिवळ् पेट्टुण्टायार्
मन्नवन् चित्रागदन् विचित्रवीर्यन्तानुम् । ६६
शन्तनुविन्टे काल कळिञ्ञोरनन्तर
शन्तनुपुत्रन् चित्रांगदनाय्वन्नु राज्यम् । ६७
उग्रना चित्रागदनाकिय गन्धर्व्वेन्द्रन्
निग्रहिच्चितु चित्रांगदना नृपेन्द्रने । ६८
सत्वर वालकना विचित्रवीर्यन्तन्ने
पृथ्वीवल्लभनाक्कि वाळिच्चु गंगादत्तन्, ६९
कम्बुकण्ठिकळाय काशिराजात्मजमा-
रंविकतानुमबालिकयुमवन्तन्टे ७०
वल्लभमाराय्वन्नु मरिच्चु नृपतियुम् ।
अल्लल् पूण्टितु राज्यवासिकळतु मूलं ७१
सन्ततियिल्लोञ्ञाशु दु:खिच्चु सत्यवति
चिन्तिच्चु वेदव्यासनाकिय मुनीन्द्रने । ७२

अपना कर कैवर्त (मल्लाह) को समझाकर उसकी पुत्री लेकर अपने पिता को दे दिया। इसीलिए महाजन उसको भीष्म कहते है। ६४ काली के विवाह के पहले पराशर ने उससे प्रेम किया था। और उससे वेदव्यासजी पैदा हुए। विवाह के वाद उसके शन्ततु से दो पुत्र पैदा हुए राजा चित्रागद और राजा विचित्रवीर्य। शन्तनु का काल समाप्त होने पर राज्य उसके पुत्र चित्रागद के हाथ मे आया। उग्र प्रकृति के चित्रागद नामक गन्धर्वेन्द्र ने राजा चित्रागद का निग्रह किया। तुरन्त ही गगादत्त (भीष्म) ने बालक विचित्रवीर्य को पृथ्वीपति वनाकर उससे राज कराया। काशिराज की सुन्दरी पुत्रियाँ अम्विका और अम्वालिका उनकी पत्नियाँ हुई। तदनन्तर राजा की मृत्यु हुई। जिसके फलस्वरूप राज्य के निवासी वहुत दु खित हुए। ७१ (विचित्रवीर्य के सन्तान न होने के कारण) सत्यवती दु खित हुई और उन्होने मुनीन्द्र वेदव्यास का ध्यान

अवळिलुण्टायितु निन् पिता परीक्षित्तु-
मवनीपति विष्णुरातना विष्णुभक्तन् । ९३
अश्वत्थामाविन् वाणदग्धना कुमारनै-
यच्युतन् चक्रकोण्टु जीविप्पिच्चतुमेंटो । ९४
तन्महिमानमेल्ला परञ्ञालोटुङ्ङुमो
निर्म्मलनाय भवानवन्टे मकनल्लो । ९५
निनक्कु शतानीकन् शङ्कुवेन्नतु पेराय्
निनक्कु समन्माराय् रण्टु पुत्रन्मारुण्टाम् । ९६
निन्नुटे शतानीकन् तन्नुटे पुत्रनायि
पिन्नेयुमश्वमेधदत्तनेन्नुण्टाय्वरुम् । ९७
पूरुविन् वशमुटनविटेयोटुङ्ङीटुं
पूर्व्वन्मारुटे कथ परञ्ञालोटुङ्ङुमो । ९८
पाण्डित्यमिल्ल परञ्ञीटुवान् केट्टुकोळ्क
पाण्डवन्माक्कुं कालं कळिञ्ञप्रकारवुम् । ९९
अत्तल् पूण्टच्छन् मरिच्चटवितन्निल्निन्नु
हस्तिनपुरत्तिङ्कल् चेन्नवर् पुक्ककालम् । १००
पतिनारब्द धर्म्मपुत्रक्कुं भीमनन्नु
पतिनञ्चायि पतिन्नालायि फल्गुननं १०१

तुम्हारे पिता राजा विष्णुरात (विष्णु का दिया हुआ विष्णुभक्त) परीक्षित पैदा हुए। जिस बालक को अश्वत्थामा ने अपने बाण से जला दिया था उसे अच्युत (विष्णु) ने अपने चक्र से फिर जिलाया। कहते-कहते इस महिमा का अन्त न होगा। अब निर्मल (चरित्रवाले) तुम उनके पुत्र हो। ९५ तुम्हारे शतानीक और शङ्क नामक तुम्हारे ही तुल्य दो पुत्र होगे। और तुम्हारे पुत्र शतानीक का अश्वमेधदत्त नामक पुत्र होगा। वही तक पूरु का वश भी समाप्त हो जायगा। पूर्वजो की कथा का वर्णन कब समाप्त हो सकता है ?। मुझमे सुनाने के लिए पाण्डित्य नही है। फिर भी पाण्डवो का काल कैसे समाप्त हुआ—यह सुन लीजिए। जहाँ पिता (पाण्डु) की दुख के साथ मृत्यु हुई उस वन से जब सब लोग हस्तिनपुर लौटे तब धर्मपुत्र (युधिष्ठिर) की आयु सोलह वर्ष की थी, भीमसेन की पन्द्रह वर्ष की, फल्गुन की चौदह वर्ष की और माद्री के पुत्रो की तेरह वर्ष की थी।

नकुलन् वेट्टु पिन्ने रेणुकयेन्नु पेरां
मकरनेत्रयाय चेदीशपुत्रितन्ने । ८३
पुत्रनाय् निरमित्रनेन्नवळ्क्कुण्टायवन्नु ।
मद्रेशसुतात्मजनाकिय सहदेवन् ८४
मद्रेशन्तन्टे मकळ् विजयतन्ने वेट्टान् ।
पुत्रनाय् सुहोत्रनेन्नुण्टायानवळ्पेट्टु । ८५
भीमसेननु मुन्न हिडिम्बीतनयनाय्
भीमनां घटोत्ककचनुण्टायानवळ् पेट्टु । ८६
अर्ज्जुनन् गंगास्नान चेय्तनेरत्तु तत्र
विज्वरमुलूपियिलुण्टायानिरावानुम् । ८७
पिन्नेयु मणलूरपतिनन्दनयाय
कन्यक चित्रांगदा फल्गुनभार्ययायाळ् । ८८
सुभ्रुवामवळुमाय् विभ्रम कलर्न्नेळु-
मभ्रवाहनसुतनविटेयिरुन्ननाळ् ८९
अद्भुतगात्रि पेट्टिट्टर्भकनुण्टाय्वन्नु ।
बभ्रुवाहननेन्नु सत्पुमानवनेटम् । ९०
इङ्डने पतिम्मून्नु नन्दनन्मारुण्टायि
मंगलन्मारायुळ्ळ पाण्डवन्माक्कुं मुन्नम् । ९१
ॲन्नतिलभिमन्यु वेट्टितु विराटन्टे
कन्यकयाय् मेत्रीटुमुत्तरयेन्नवळे । ९२

विवाह किया जिससे अभिमन्यु पैदा हुआ। नकुल ने चेदीश की पुत्री मकर (मछली) के समान आँखवाली रेणुका से विवाह किया। उसका निरमित्र नामक पुत्र पैदा हुआ। माद्री के पुत्र सहदेव ने मद्रेश की कन्या विजया से विवाह किया। उसने सुहोत्र नामक पुत्र को जन्म दिया। भीमसेन को पहले ही हिडिम्बी से घटोत्कच नामक भीम (भयानक) पुत्र पैदा हो गया था। ८६ जव अर्जुन गगा-स्नान कर रहा था उन दिनो उसके उलूपी द्वारा इरावान् नामक पुत्र हुआ। फिर मणलूर के राजा की पुत्री चित्रागदा फल्गुन की पत्नी हुई। जव उस सुन्दरी के साथ अभ्रवाहनसुत (अर्जुन) सुख से रह रहे थे तव उस अद्भुतगात्री ने एक वालक पैदा किया जो वभ्रुवाहन नामक साधु पुरुप था। इस प्रकार पुरा (प्राचीन काल मे) मगलशाली पाण्डवो के तेरह पुत्र पैदा हुए। उनमे से अभिमन्यु ने विराट की पुत्री उत्तरा से विवाह किया। उसी से

मन्नवरारु मास कौण्टभिमन्युजने
मन्नवनाक्कि वाळिच्चमरपुरिपुक्कार् । ११२
नूटेट्टु वरिपवुमारुमासवु चेन्नु
माटलर्कुलकालनाय धर्म्मजनेटो । ११३
जिष्णुविल् मून्नु मास मूत्ततु कृष्णन् पिन्ने
कृष्णनिल् मून्नु मास मूत्ततु वलभद्रन् । ११४
कृष्णनायवतरिच्चन्नुळ्ळ लीलकळु
कृष्णभक्तन्माराय पाण्डवर्कथकळु ११५
विष्णुतान्तन्ने वन्नु पिरन्न वेदव्यासन्
कृष्णना द्वैपायनन् चोल्लिय कथयल्लो । ११६
अद्वैतोपाख्यानमा भारत नूरायिर
पद्यवु पतिनेट्टु पर्व्वमाय् तीर्त्तुकूट्टि । ११७
संभवपर्व्व सभापर्व्ववुमारण्यवु
पिन्पु वैराटपर्व्वमुद्योगमञ्चामतु ११८
पिन्नेतु भीष्मपर्व्वमपरं द्रोणपर्व्व
कर्ण्णपर्व्ववु शल्यपर्व्ववु सौप्तीकवुं ११९
स्त्रीपर्व्व शान्तिपर्व्वमनुशासनीकवु
शोभतेटीटुमश्वमेधिकपर्व्व पिन्ने १२०
पुतिनञ्चामतु नल्लाश्रमवासपर्व्व
पतिनाराममतल्लो मौसलमाय पर्व्व १२१

गये। इस प्रकार शत्रुवर्ग के नाशक धर्मज (युधिष्ठिर) एक सौ आठ वरस और छ महीने जीवित रहे। श्रीकृष्ण तो जिष्णु (अर्जुन) से तीन महीने वडे थे और वलभद्र कृष्ण से तीन महीने वड़े थे। भगवान् ने कृष्ण के रूप मे अवतार लेकर जो लीलाएँ की, उनको और कृष्णभक्त पाण्डवो की कथाओ को श्रीकृष्ण द्वैयापन वेदव्यासजी ने, जो साक्षात् विष्णु ही थे, अपनी महाभारत कथा मे सुनाया है। यह भारत अद्वैतोपाख्यान है और यह एक लाख श्लोको और अठारह पर्वो मे समाप्त है। ११७
१ सभवपर्व, २ सभापर्व, ३ आरण्यपर्व, तदनन्तर ४ विराटपर्व, ५ पाँचवाँ उद्योगपर्व, तत्पश्चात् ६ भीष्मपर्व, फिर ७ द्रोणपर्व, ८ कर्णपर्व, ९ शल्य-पर्व, १० सौप्तीक, ११ स्त्रीपर्व, १२ शान्तिपर्व १३ अनुशासनिक, और १४ शोभावाला अश्वमेधिक पर्व, पन्द्रहवाँ अच्छा आश्रमवासपर्व और १६ मौसलपर्व था, सतरहवाँ महाप्रस्थानपर्व और अन्त मे

पतिम्मून्नायि माद्रितनुटे पुत्रन्मावर्कु
पतिम्मूवाण्टु पिन्ने विद्ययुमभ्यसिच्चु । १०२
धृतराष्ट्ररु दुरियोधनादिकळुमाय्
मतिमान्मारायुळ्ळ धर्म्मजादिकळ् वाणु । १०३
पिन्नेयन्त्ररक्किकल्ल वेन्तिट्टु पुरप्पेट्टु
वन्नवरारुमास कानन तन्निल् वाणु । १०४
अन्नल्लो घटोत्कचनुण्टायितविटुन्नु
पिन्नेयोराऱुमासमेकचक्रयिल् वाणु । १०५
पाञ्चालितन्ने वेट्टानन्नाळिलवळुमाय्
पाञ्चालपुरत्तिङ्कलोराण्टु वसिच्चार्पोल् । १०६
हस्तिनपुरत्तिङ्कल् पिन्नेयुमोरुमिच्चि-
ट्टेत्रयुं सुखत्तोटुमय्याण्टु काल वाणु १०७
पिन्नेयन्निन्द्रप्रस्थमाकिय पुरि पुक्कु
मन्नवरिरुपत्तुमूवाण्टुकाल वाणु । १०८
चूतु तोट्टविटुन्नु पन्तीराण्टटवियिल्
मेदिनीपालकन्मार् तापसराये वाणु । १०९
ओराण्टु विराटन्टे राजधानियिल् वाणो-
रारुमेयऱियाते वेषच्छन्नन्मारायि । ११०
कोल्पोट्टु शत्रुक्कळेयोक्कवेयोट्टुक्कीट्टु
मुप्पत्ताऱाण्टु भूमियटक्किवाणु पिन्ने । १११

तदनन्तर सबने तेरह वर्ष विद्याभ्यास किया। बुद्धिशाली युधिष्ठिर आदि धृतराष्ट्र और दुर्योधन आदियो के साथ सुख से रहे। १०३ तत्पश्चात् जतु (लाक्षा) गृह के जलजाने से वहाँ से निकल कर छ महीने वन मे रहे। उसी अवसर पर घटोत्कच का जन्म हुआ। तदनन्तर छ महीने एकचक्र नगरी मे निवास किया। तदनन्तर पाचाली के साथ विवाह हुआ और उसके साथ सब लोग एक वर्ष तक पाञ्चालपुरी मे रहे। उसके बाद पॉच वर्ष सब लोग बडे मेल के साथ सुख से हस्तिनापुर मे रहे। तदनन्तर इन्द्रप्रस्थ नामक नगर मे प्रवेश कर सभी भूपाल तेईस वर्ष वहाँ रहे। फिर जुआ में हार कर वे बारह वर्ष वन मे तापस के रूप मे रहे। एक बरस विराट की राजधानी मे वेश बदलकर उन्होने अज्ञातवास किया। ११० तदनन्तर अपने सभी शत्रुओ को जीतकर छत्तीस बरस पृथिवी पर राज किया। तत्पश्चात छ. महीने के अन्दर अभिमन्यु के पुत्र को राजगद्दी पर बैठाकर स्वर्ग चले

अक्कथयॆल्लां निनक्कुळ्क्काम्पिल् पाठमॆन्ना-
लॊक्क ञङ्ङळ्क्कु केळ्प्पानरियिच्चीटण नी । १३३
शङ्करन् नारायणनादिनायकन् परन्
शङ्करप्रियन् देवन् मंगलप्रदन् कृष्णन् १३४
पङ्कजविलोचनन् पङ्कजनाभन् हरि
पङ्कजमातिन् कुळिर्कॊङ्कयिलिळ्कीट्टु १३५
कुङ्कुमपङ्कतन्नालङ्कितमायिट्टति-
भगितेटीट्टु तिरुमारुळ्ळ नारायणन्
तन्कळल् वळिपोलॆ संग्रहिच्चुळ्ळिल् नन्नाय् १३६
पङ्कङ्ङळॊक्क नीक्किप्पावनन्मारायवन्नु
तिङ्कळ्तन् कुलत्तिङ्कलुण्टाय भूपालन्मार् १३७
निर्म्मलन्मारायुळ्ळ पाण्डवन्मारुटॆ कथ
कल्मषमकलुवानॊक्क नी पऱयेणम् । १३८
ऎन्नतु केट्टु सूतन् मोदमोटुरचॆय्तु
नन्नल्लो पठिक्कयु केळ्क्कयु पुराणङ्ङ १३९
ळॆन्नतिल् विशेषिच्चु भारतमॆऱॆ नल्लू ।
निर्म्मलमितिहास वेदसम्मितमल्लो । १४०
इत्थ पैङ्किळिमकळ्तन्नुटॆ वाक्कु केट्टु
चित्तकौतुकत्तोटॆ पिन्नॆयु चोद्य चॆय्तु । १४१
वादरायणन् चॊन्न भारत सोपाख्यान-
मादरपूर्व्व जनमेजयनृपनोटु १४२

से सव स्पष्ट सुना दिया। सूत का यह कहना मुनकर मुनि शौनक ने वडे प्रमोद के साथ फिर याचना की। अगर वह सारी कथा तुम्हे कण्ठस्थ है तो हम लोगो को कृपया सुनाओ। १३३ शङ्कर, नारायण, आदिनायक, पर, शङ्करप्रिय, देव, मगलप्रद, कृष्ण, पङ्कजविलोचन, पङ्कजनाथ, हरि, लक्ष्मी के शीतल स्तनो के कुङ्कुमपङ्क से अङ्कित शोभाशाली वक्षस्थलयुक्त नारायण की पद्धति को स्वीकार करके आभ्यन्तर (भीतरी) अशुद्धि दूर करके जो पवित्र हुए, उन चन्द्रवश के भूपालो, निर्मल पाण्डवो की कथा पाप दूर करने के लिए तुम अवश्य सुनाओ। यह सुनकर सूतजी ने हर्ष से कहा। पुराणो को पढना और मुनाना अच्छा है। उससे भी अच्छा है महाभारत, क्योकि वह निर्मल इतिहास वेद के तुल्य है। १४० शुककन्या की यह वात सुनकर चित्त मे वड़े कौतुक के साथ फिर याचना

पतिनेळाकु महाप्रस्थान कळियुम्पोळ्
पतिनेट्टामतिङ्कल् स्वर्गारोहणमल्लो । १२२
अध्यायक्रम चोलवानेत्रयु पेरुप्पमु-
ण्टत्रयेन्तिनु वेण्टियेन्नतुमऱिञ्ञिल्ल । १२३
भारत सक्षेप ञानेप्पेरुमऱियिच्चेन्
पारिटत्तिङ्कलुळ्ळ भक्तन्माक्कऱिवानाय् । १२४
नल्लतु चेय्युन्नोक्कुं नल्लतु वरुमेन्नुं
नल्लतिल्लाकात्ततु चेय्तीटुन्नवर्क्केन्नु । १२५
देवदेवेशनाय कृष्णने वळिपोले
सेविच्चालुळ्ळ फलमायतुमऱिञ्ञीटाम् । १२६
इन्नि मटेन्तु कथ केळ्क्केण्टतेन्नु चोन्ना-
लेन्नालायतु चोल्लामेन्नेल्लां क्रमत्ताले १२७
वैशम्पायनमुनि जनमेजयनोटु
वैशिष्टचमुळ्ळ महाभारतकथासार १२८
ओक्कवे चुरुक्कमायीवण्ण पऱञ्ञप्पोळ्
मुख्यना नरपति जनमेजयन् चोन्नान् । १२९
ऍत्रयु कौतूहलमुण्टितु केळ्क्कुन्तोरुम्
विस्तरिच्चरुळिच्चेय्तीटण मटियाते । १३०
ऍन्नतु नरपति चोन्नतु केट्टु मुनि
नन्नायित्तेळिञ्ञुटनादियेयऱियिच्चु । १३१
इङ्ङने सूतवाक्य केट्टु शौनकमुनि
तिङ्ङिन मोदत्तोटु पिन्नेयु चोद्य चेय्तु । १३२

---

१८ स्वर्गारोहणपर्व है । अध्यायक्रम बतलाने मे बहुत श्रम है और उसका क्या प्रयोजन होगा, यह भी स्पष्ट नही है । भारत का सक्षेप मै पहले ही पृथिवी के भक्तो के लिए सुना चुका हूँ । जो भला करते है उनका भला होगा और जो बुरा करते है, उनको देवदेवेश कृष्ण की यथाविधि उपासना करने से क्या फल होगा, यह भी उससे मालूम हो जाता है । अब और क्या कथा सुनाना है ? कहो तो वह भी क्रम से सुनाऊँगा । १२७ जब मुनि वैशम्पायन ने वैशिष्टचवाली महाभारत की सारी कथा सक्षेप मे जनमेजय को इस प्रकार सुनायी, तब नरपति ने कहा— इसको सुनते-सुनते बडा (मन मे) कुतूहल होता है, इसलिए नि सकोच इसे विस्तार से सुनाइए । नरपति की यह बात सुनकर मुनि ने प्रारम्भ

आक्कुंमे तॊळिकयिल्लॆङ्किलुमिनिक्कितु
केळ्क्केण पॆरिकॊयुण्टाग्रह मनक्काम्पिल् । १५२
वैकरुतिनिक्काल पळुते कळयातॆ
पैकळञ्ञुरचॆय्क भारतकथयॆल्लाम् । १५३
भारत चमच्चोरु कृष्णद्वैपायनना
पाराशर्यन्टॆ जन्म चॊल्लेणमल्लो मुन्पिल् । १५४

वेदव्यासोल्पत्ति

ऒङ्किलो मुन्न चेदिराज्यत्तिलॊरु नृपन्
मगलनाय वसुवुण्टायानवन् नन्नाय् १
इन्द्रनॆस्सेविक्कयाल् कॊटुत्तु वरङ्ङळु-
मिन्द्रन् मालयुमॊरु वैष्णवमाय दण्डुं २
आकाशे नटप्पतिनायॊरु विमानवु
लोकवृत्तान्त मॆल्लामरिवान् विज्ञानवुं ३
ऒक्कवे कॊटुक्कयालॆन्नयुं प्रसिद्धनाय्
विख्यातकीर्त्तियोटु रक्षिक्कु कालत्तिङ्कल् ४
उपरिचरनॆन्न नामवुमुण्टाय्वन्नि-
तुपरिभागत्तिङ्कल् चरिक्काय्वन्नमूलम् । ५
वासवभक्तनायोरुपरिचरन् वसु
वासवसमाननाय् वाळुन्नकालत्तिङ्कल् ६

व्यर्थ समय न खोकर भूख शान्त करके [तृप्त होकर] सारी भारतकथा सुनाओ। महाभारत के रचयिता पराशर के पुत्र कृष्णद्वैपायन का जन्म पहले सुनाना चाहिए। १४५

वेदव्यास की उत्पत्ति

अतीत (भूतकाल) मे चेदि राज्य मे वसु नामक एक मगलमय राजा था। उसने इन्द्र की सेवा की। इन्द्र ने उसको वर दिया और वर के अतिरिक्त एक माला, एक वैष्णव दण्ड, आकाश मे सचार करने के लिए एक विमान और लोक-वृत्तान्त जानने के लिए विज्ञान भी दिया। इन्द्र के यह सब प्रदान करने के कारण वह राजा प्रसिद्ध और विख्यात-कीर्ति हुआ। राज करते समय उसका नाम उपरिचर हुआ, क्योंकि वह ऊपर सचार करता था। वासव (इन्द्र)-भक्त उपरिचर वसु वासव-

वैशम्पायननरियिच्चितु सूतन्तानु-
माशपूण्टोरु शौनकादिकळ्क्करियिच्चान् । १४३
अतिनेच्चुरुक्कि नी चोल्लेण किळिप्पेण्णे
कौतुकं पारमतिन्नेन्नतु केट्टनेर १४४
मोळिमातिनेयु व्यासनेयुं कृष्णनेयु
ताळुतु किळिमकळ् परञ्ञुतुटङ्ङिनाळ् । १४५
पलर्क्कुमितिलोरु रसमुण्टाकयिल्ल
चिलर्क्कु कुरञ्ञोरु रसमुण्टायालेतु १४६
फलिक्कयिल्लयल्लो नन्नायिप्परकिलु
पलर्क्कुमोरुपोले कौतुकमुण्टेङ्किले १४७
फलिप्पानेळुतावू केवलमतिन्मूलम् ।
पलर्क्कुमात्मज्ञानमिल्लाय्कतन्ने तानु । १४८
ज्ञानमुण्टेन्नाकिले रमिप्पू नूनमितिल्
ज्ञानमो नूरुपेरिलोरुत्तनुण्टाकिला १४९
अन्नालु चुरुक्कि नी पाण्डवरुटे कथ
निन्नालाकुन्नवण्णं चोल्लेणमेन्नोटिप्पोळ् । १५०
पलर्क्कु तेळियेणमेन्नु नी निनय्केण्टा
चिलर्क्कुं तेळिकिलुं मतियेन्नते वरू । १५१

की । जो बादरायण की कही भारतकथा वैशम्पायन ने उपाख्यानसहित जनमेजय को सादर सुनायी थी, उसी को सूतजी ने प्रवल इच्छावाले शौनक आदियो को सुनाया । हे शुककन्ये उसी को सक्षेप मे सुनाओ, उसके सुनने के लिए हमे बडा कुतूहल है । यह सुनकर, व्यास और कृष्ण को हाथ जोडकर वाग्देवी शुककन्या ने कहना प्रारम्भ किया । वहुतो को तो इसमे कोई रस ही नही प्रतीत होगा । कुछ लोग शायद इसमे थोडा-सा रस ले, परन्तु अच्छी तरह से कहे जाने पर भी इसका फल न होगा । जब वहुत लोग समान रूप मे आस्वादन करेगे, तभी तो उसकी सफलता होगी । १४७ वहुत लोगो को तो आत्मज्ञान है ही नही । जव ज्ञान है, तभी तो उसमे मन लगता है, और ज्ञान तो सौ मे एक ही को होता है; फिर भी तुम पाण्डवो की कथा, सक्षेप मे, जितना अच्छा तुमसे हो सकता है उतना अच्छा सुनाओ । यह शर्त न लगाओ कि वहुत लोग समझे । यह पर्याप्त है कि कुछ लोग समझे । अगर कोई भी न समझे, तव भी मुझे यह सुनने की बडी इच्छा है । अब विलम्ब न करो ।

ओन्नोरु पुमानतिल् मटेतु कन्यकयु
मन्नवन् तनिक्कु नल्कीटिनाळ् नदितानु । १७
पुरुषन्तन्नेस्सेनापतियाय् वच्चानवन्
तरुणीमणितन्नेप्पत्नियुमाक्किवच्चान् । १८
गिरिकयेन्नुतन्ने पेरवळ्क्काकुन्नतु
पेरिके मनोहरियेन्नते पर्यावू । १९
अवळुमोरुदिनमृतुधर्म्मत्ते प्रापि-
च्चधिकशुद्धयायिच्चतुर्त्थस्नान चेय्ताळ् । २०
अन्नल्लो मृगङ्ङळेक्कोन्नु कोण्टरिकेन्नु
मन्नवन्तन्नोटपेक्षिच्चितु पितृक्कळुम् । २१
पोयितु नायाट्टिन्नु भूपतियतुनेर
पोयील मनस्सवळ्तन्नोटु पिरिञ्ञेतुम् । २२
सुन्दरागियेत्तन्ने चिन्तिच्चु नृपवरन्
मन्दमन्द पोयोरु कानन पुक्कनेर २३
मन्दार कुन्दमाकन्दासनसून मक-
रन्दसंयुक्तमन्दगन्धवाहादिकळु २४
कोकिलशुकक्रौच सारसचक्रवाक,
केकिषळ्प्पदमुख्य पक्षिकळ्नादङ्ङ्ळु २५
सूकरकरिहरि हरिणमहिपादि
भोगलीलादिकळु कण्टु मानसमळि- २६

ने दोनो वच्चे राजा को दे दिये। राजा ने लडके को अपना सेनापति वनाया और लडकी को अपनी पत्नी वनाया। उस लडकी का नाम था गिरिका, वह वहुत ही सुन्दरी थी। एक वार वह अपने मासिक ऋतु धर्म के हो जाने के वाद चौथे दिन शुद्ध हुई और स्नान किया। उन दिनो पितृलोगो ने राजा से शिकार खेलकर मृगो को मार लाने के लिए याचना की। राजा शिकार खेलने तो चले गये, पर अपनी पत्नी से मन नहीं हटा सके। उसी का ध्यान करते हुए नृपवर ने धीरे-धीरे वन मे प्रवेश किया। २३ उस समय वहाँ मन्दार, कुन्द, माकन्द, असन आदि पुष्पो के मकरन्द (रस) से मिला हुआ मन्दवायु का, कोकिल, शुक, क्रौच, सारस, चक्रवाक, केकि आदि पक्षियो के निनाद का और सूकर, हाथी, सिंह, हरिन, महिष आदि की भोगलीलाओ का अनुभव कर राजा का मन शिथिल हुआ और वलात् उनका इन्द्रिय (वीर्य) स्खलन हुआ।

उण्टायि बृहद्रथन् प्रत्यग्रन् कुशांबनुं
विण्टलर् कालनाय मच्चिलन् यदुतानु ७
तनयन्मारायञ्चु बालन्मारुण्टायतिल्
मणिवाहननेन्नु चोल्लुवोर् कुशांबने । ८
अवरेयोरो नाट्टिल् वाळिच्चानैवरेयु-
मविटे बृहद्रथन् मागधराजावायान् । ९
अक्काल चेदिराज्यंतन्नुटेयरिकत्तु
चोल्कोण्ट शुक्तिमतियाकिय नदितन्ने १०
कामिच्चु कोलाहलनाकिय गिरिवरन्
प्रेमत्तोटवळेच्चेन्नाश्लेष चेय्तानवन् ११
वेगत्तिलोळुकुन्न वाहिनिक्कतुनेर
पोकरुतातेवन्नु पर्व्वत तटुक्कयाल् । १२
वेळ्ळवु मेलपोट्टय्क्कु पोङ्ङियन्नाट्टिलेल्ला-
मुळ्ळवरल्लल् कैक्कोण्टन्याय चोल्कयाले । १३
मन्नवन् वसुतानुमन्नेरमतु कण्टु
चेन्नोन्नु चवुट्टिनान् पर्व्वतवरन्तन्ने । १४
पोटिञ्ञु गिरिवरन् नटन्नु नदितानु-
मटङ्ङि तन्निलाशु तेळिञ्ञु जनङ्ङळुम् । १५
पृथिवीधरन् नदितन्निलन्नुल्पादिच्चि-
ट्टधिकगुणत्तोटु रण्टु पैतङ्ङळुण्टाय् । १६

समान हुआ । राज करते समय उनके बृहद्रथ, प्रत्यग्र, कुशाव, मच्चिल्ल और शत्रुओ का नाशक यदु, इस प्रकार पाँच पुत्र हुए । उनमे कुशाब को मणिवाहन भी कहते है । वसु ने पाँचो को भिन्न-भिन्न देशो का राजा वनाया । वृहद्रथ मगध का राजा हुआ । ९ उन दिनो चेदिराज्य के समीप जो विख्यात नदी शुक्तिमती थी, उससे गिरि कोलाहल का प्रेम हुआ । उसने जाकर नदी का आश्लेप किया । पर्वत के रोकने से वेग से वहती हुई नदी आगे नही जा सकी । वाढ़ का जल बहुत ऊपर उठ आया, तव उस देश के निवासी दुखित होकर इसे अन्याय कहने लगे । राजा वसु ने यह स्थिति देखकर पर्वत को एक लात मारी, जिससे पर्वत चूर-चूर हो गया और नदी फिर वहने लगी और बाढ भी समाप्त हुई । जनता भी प्रसन्न हुई । पर्वत ने उस अवसर पर नदी मे दो गुणवान् वच्चे पैदा किये । १६ उनमे एक लड़का था और एक लडकी । नदी

अब्जसभवशापालद्रिकयेन्नु पेरा-
मप्सरस्त्रीयुण्टतिल् मत्स्यमाय् किटक्कुन्नु । ३७
वीण वासवबीजमप्पोळे विळ्ङ्ङनाळ्
ताणुपोमुन्पे मत्स्यवेशमामद्रिकयुम् । ३८
अवळ्क्कु गर्भमुण्टाय् तिकञ्ञु मरुवुन्ना-
ळवळुमोरु दाशन् वलयिलकप्पेट्टाळ् । ३९
कीरिनान् वयरवनण्डङ्ङ ळेटुप्पानाय्
वीरोटु रण्टु मर्त्यपोतङ्ङळ् कण्टानप्पोळ् । ४०
मत्स्यत्तिन्नुदरत्तिल् मर्त्यपोतङ्ङळ् कण्टु
विस्मय पूण्टु पलरोटुमतरियिच्चान् । ४१
अद्भुतमितु पण्टु कण्टिट्टिल्लेन्नु चिन्ति-
च्चप्पोळे राजाविनु कोटुत्तु कैवर्त्तनुम् । ४२
धीवरनाय राजावुपरिचरन् वसु
धीवरन् कोण्टुवन्न पैतङ्ङळ् रण्टु कण्टान् । ४३
मत्स्यगन्धिनियाय काळिये नृपवरन्
मत्स्यघातकनाग दाशनु कोटुत्तितु । ४४
मत्स्यगन्धिनितन्ने वळर्त्तु कैवर्त्तनु-
मुत्सव पूण्टु काळियेन्नोरु पेरुमिट्टु । ४५
मत्स्यना नरपतियायितु पुरुषनु
मत्स्यरूपवुं कळञ्ञद्रिकतानुं पोयाळ् । ४६

कारण अद्रिका नामक अप्सरा जो मछली हो गयी थी वह उस नदी मे थी। बीज के डूव जाने के पहले ही मत्स्यरूपी अद्रिका ने उसे निगल लिया। उसके गर्भ रह गया। जव वह गर्भ वढ ही रहा था तव वह मछली एक धीवर के जाल मे फँस गयी। उससे अण्डे निकालने के लिए मछली का पेट चीर डाला और उसमे दो मानुप वच्चे देखे। ३४-४० मत्स्य के पेट मे मानुप वच्चे देखकर विस्मित होकर उसने लोगो से कहा। 'यह वडी अद्भुत वात है, ऐसी वात पहले कभी देखी ही न गयी', यह सोचकर कैवर्त (धीवर) ने उन वच्चो को राजा को दे दिया। वुद्धिशाली राजा उपरिचर वसु ने धीवर के दिये दोनो वच्चो को देखा। नृपवर ने उनमे से मत्स्य-गन्धिनी (मछली के समान गधवाली) काले रङ्ग की लडकी को मत्स्यघातक दास (धीवर) को ही दे दिया। उस कैवर्त ने उसे वड़ी खुशी से पाला-पोसा और उसका काली नाम रखा।

ञ्जिन्द्रियस्खलनवुं वन्नितु बलालप्पोळ् ।
कन्दर्प्पशरपरवशनायतिनाले- २७
यिन्द्रसम्मितन् धरावल्लभनिन्द्रभक्तन्
स्कन्दिच्च बीजं निजं निष्फलमाक्कीटाय्वान् २८
वृक्षपत्रत्तिलाक्किक्कोण्टथ नृपवरन्
पक्षियां परुन्तिनोटीवण्णमुरचेय्तान् । २९
केळ्क्क नी बीजमयोनियिलुमतुपोले
भोष्कल्ल वियोनियिलेङ्किलुमतिल्पर ३०
पक्षीन्द्र पशुयोनितन्निलुमरियाते
निक्षेपिप्पिक्कु जनं नारकगामिकळ्पोल् । ३१
अन्नेल्लां श्रुतिस्मृतिकळिलुण्टाकमूलं
इन्नतिभय पूण्टिट्टोन्नपेक्षिक्कुन्नु ञान् । ३२
अन्नुटे बीजमितु पळुते कळयाते
कन्नल्नेर्मिळियाळां पत्निक्कु कोटुक्क नी । ३३
अन्नयच्चतुनेरं परुन्तु कोत्तिक्कोण्टु
मन्नवनियोगत्तालाकाशे पोकुंनेरं ३४
मटोरु परुन्ततु कण्टोरु मासबुद्ध्या
तेटेन्न चेन्नु कलहिच्चप्पोळ् वीणुपोयि ३५
कालसोदरि मार्त्ताण्डात्मजा महानदी
काळिन्दितन्निलायि वीणितु विधिवशाल् । ३६

इसलिए इन्द्र के समान, भूवल्लभ, इन्द्रभक्त राजा ने मदन से परेशान होकर अपने स्कन्न (स्खलित = गिरे हुए) वीज को निष्फल होने से बचाने के लिए एक वृक्षपत्र पर रखकर एक श्येन पक्षी से इस प्रकार कहा—हे पक्षीन्द्र ! सुनो ! कहा जाता है कि जो अनजान मे भी अपने बीज को अयोनि मे अथवा वियोनि मे या पशुयोनि मे निक्षिप्त करते है वे नरकगामी होते है। यह सव श्रुति और स्मृति मे (लिखा) मिलता है। इसलिए वहुत डरकर मैं तुमसे एक प्रार्थना करता हूँ। इस बीज को विना कही खोये मेरी सुन्दरी पत्नी को दे दो। २७-३३ जब राजा ने इस प्रकार भेजा तव उसे अपनी चोच मे लेकर श्येन आकाश मार्ग से जा रहा था। एक दूसरा श्येन यह देखकर वीज को मांस समझकर उससे लड वैठा। उस समय वीज गिर गया और विधिवश काल की वहिन, मार्ताण्ड की पुत्री महानदी कालिन्दी (यमुना) मे जाकर गिरा। ब्रह्मा के शाप के

कारौत्तकुळलाळे मारत्तीयारुमारे-
न्मारत्तु चेन्नींटुवान् योगमुण्टिप्पोळ्त्तन्ने । ५७
नेरत्ते परञ्ञतुमीश्वरनुटे मत
मारध्वसनं ब्रह्मादिकळक्कु नीक्कावल्ले । ५८
चारुत्वमुळ्ळ काळि चौल्लिनाळय्यो रण्टु-
तीरत्तुमुण्टु मुनिमारु मामरयोरु । ५९
चारित्रदोषवुमुण्टाय्वरुं कन्यक ञान्
भारिच्च तपस्सुळ्ळ मामुनिश्रेष्ठन् भवान् । ६०
दूरत्तुनिल्केण्टुन्न कैवर्त्तनारि ञानो
पारत्रिकार्त्थियाय पारमार्त्थिकन् भवान् । ६१
विधियु निषेधवुमरियातनुदिनं
पृथुरोमाशिकळा नीचजातिकळ् ञङ्ङळ् । ६२
श्रुतिभेदार्त्थज्ञानचतुरमतिकळाय्
स्मृतिकर्त्ताक्कन्मारा तापसरल्लो निङ्ङळ् । ६३
ऎन्तिन्तु परवानु तोन्नीटुवानुमिप्पोळ्
चिन्तिच्चालवकाशं दैवकल्पितमेन्नो । ६४
आरुमेयरियाते दोषवुमिरुवर्क्कु
वारातेयिरिक्किलो चौन्नतुकेळ्क्कामल्लो । ६५

जाने के कारण तुममे मेरी प्रवल इच्छा हो गयी है, प्रेम पूरा हो गया। तुम्हारे लाल लाल अधर, वडे वडे स्तन, हे मञ्जुभाषिणि! मैने देख लिये। हे सुकेशिनि! काम की आग वुझाने के लिए मेरी छाती से लग जाने का यही सुअवसर है। ठीक कहा गया है कि ईश्वर के मत मे मार (कामदेव)के आघात से ब्रह्मा आदि भी नही वच सकते है।" ५३-५८ तव सुन्दरी काली ने कहा—"हा अन्याय! दोनो तटो पर मुनि और ब्राह्मण लोग है, मै कन्या हूँ, मेरा चरित्र दूपित हो जायगा और आप वडे भारी तापस है। मैं दूर खडे होनेवाली कैवर्त की नारी हूँ और आप परलोकसुख और परमार्थ के भक्त है। विधि और निषेध न जाननेवाली और मत्स्य खानेवाली नीच जाति के हमलोग हे। और आप तो विविध श्रुतियो के अर्थज्ञान से विकसित वुद्धिवाले स्मृतियो के रचयिता तापस है। आपको इस प्रकार की वाते सोचने और कहने का अधिकार ही क्या है? यह क्या दैव की करतूत है? अगर किसी को पता ही न लगे और हम दोनो को कोई दोप भी न लगे तो मै आपका कहना मानूँगी। आप

तरुणीमणि काळि काळिन्दीनदितन्निल्
तरणि वळिपोले कटत्तित्तुटङ्ङिडनाळ् ४७
काळिन्दी कटक्कुन्न पान्थन्मार्क्कॆल्लावर्क्कुं
काळियिलळिञ्ञितु मानसमतुकालम् । ४८
तरणिसुतयाय यमुनानदितङ्कल्
तरणि कटप्पानाय् चॆन्नितु पराशरन् । ४९
तरणि देवनुदिच्चुयरुन्नतिन्मुन्पे
तरुणीमणियॆक्कण्टवनु मोहं पूण्टान् । ५०
धरणितन्निलवळ्क्कॊत्त नारिकळिल्ल
धरणीपतियुटॆ बीजमायतिनाले । ५१
तीरत्तु चॆन्नु पुलर्काले मामुनिवरन्
दूरत्तु तुळ्युमाय् निन्नितु काळितानुम् । ५२
धरित्वमकन्नोरु मामुनिवरन् चॊन्नान्
चारत्तु वरिक नी मटारुमिल्लयिप्पोळ् । ५३
नेरत्तु कटक्कणं नीक्कणं तोणि मरु-
तीरत्तु चॆन्नु पुनरुक्कणमिनिक्कॊटो । ५४
मारच्चूटकतारिल् पूरिच्चमूलं निन्निल्
भारिच्चोराशवन्नु कूरॊत्तु चमञ्ञितु । ५५
चोरिच्चोर्व्वायु निन्टॆ चीरॊत्त मुलकळुं
वेरिच्चॊल्लाळॆ ञान् विचारिच्चु कण्टनेर ५६

उनमे जो लड़का था वही मत्स्य नामक राजा हुआ। और अद्रिका अपना मत्स्यरूप त्याग कर चली गयी। ४१-४६ तरुणीमणि काली क़ालिन्दी (यमुना) नदी मे नाव चलाने लगी। यमुना पार करनेवाले सभी यात्री काली को देखकर मुग्ध हो गये। उन दिनों नाव मे सूर्यपुत्री यमुना को पार करने के लिए मुनि पराशर वहाँ पहुँचे। सूर्योदय के पहले ही तरुणीमणि (काली) को देखकर वे मोहित हो गये। धरणीपति (राजा वसु) के बीज के पैदा होने के कारण उस (काली) के समान धरणीतल मे कोई (स्त्री) न थी। मुनि सवेरे ही यमुनातट पर पहुँच गये और नाव लिये काली भी दूर पर दिखायी दी। ४७-५२ महामुनि का धैर्य शिथिल हो चुका था। उन्होने कहा—"तुम निकट चली आओ, अब यहाँ कोई नही है, मुझे जल्दी पार करना है और नाव के पार करने के बाद मुझे अपने नित्यकर्म करना है। भीतर कामवेदना अधिक हो

दिव्यतीर्थत्तिङ्क्लेन्नु दिव्यार्कनुदिक्कुन्पोळ्
दिव्यनाकिय मुनि कैवर्त्तकन्यकतन् ७६
कोङ्ककळ् पुणर्न्नितु वालिकतानुमेतु
शङ्किच्चीलतुनेरमीश्वरमतमल्लो । ७७
गर्भवुमुल्पादिच्चोरर्भकनुण्टाय्वन्नि-
तप्पोळे भविच्चितु यौवन कुमारनुम् । ७८
यमुनाद्वीपमवनयनमाकमूल
मुनियु द्वैपायननेन्नोरु पेरुमिट्टान् । ७९
वदरपण्डं पुनरयनमाककोण्टु
मतिमानाकुमवन् वादरायणनायान् । ८०
चिन्तिक्क वलियोरु सङ्कट वरुन्नेर-
मन्तिके वरुवन् ञानन्तरमिल्लयेतुम् । ८१
ऒन्नु यात्रयु चोन्नानम्मयोट्टुटनवन्
पिन्नेप्पोय् तपस्सिनु कोप्पिट्टान् वळिपोले । ८२
चोल्लेळु पराशरन् पोयितु यथाकामम् ।
नल्ल कन्यकयायाळ् कस्तूरिगन्धितानु- ८३
मन्नेरमुण्टाय्वन्न योनितन् क्षत पोयि
पिन्नेक्कस्तूरिगन्ध पोयतिल्लोरुनाळु ८४

आलिङ्गन किया । ६७-७५ जव दिव्य तीर्थ से सूर्य का उदय हो रहा था तव दिव्य मुनि ने कैवर्तकन्या के स्तनो का आलिङ्गन किया । वालिका को कोई शङ्का हुई ही नही । उसने इसे ईश्वर की इच्छा समझा । उसके गर्भ रह गया और उसी समय उसके एक लड़का पैदा हुआ जो उसी समय जवान भी हो गया । यमुना-द्वीप उसका अयन (जन्म स्थान) होने के कारण मुनि ने उसका नाम द्वैपायान रखा । एक वदरपण्ढ भी उसका अयन होने के कारण उस मेधावी (वुद्धिमान्) का नाम वादरायण भी हुआ । "जव कोई वडा सकट होगा तव मुझे ध्यान करना, मैं अवश्य उपस्थित हूँगा, इसमे कोई सन्देह नही करना ।" अपनी माता से इतना कहकर वे (द्वैपायन = व्यास) विदा हुए । फिर जाकर उन्होने अपनी तपस्या की तैयारी की । और कीर्तिमान् पराशर भी यथाकाम (इच्छानुसार) चले गये । कस्तूरीगन्धि तो एक अच्छी कन्या वनी । ७६-८३ उस समय जो योनि की क्षति हुई थी वह ठीक हो गयी । कस्तूरी गन्ध तो कभी नष्ट नही हुआ । साधुजनो के सपर्क से यद्यपि अच्छा और

इङ्ङनेयुळ्ळ निङ्ङळ् चौन्नतु केळाञ्ञालु-
मेङ्ङने वन्नु ञायमेन्नऱियिरुतल्लो । ६६
अेन्नतु केट्टु तेळिञ्ञन्नेरं मुनिवर-
नेन्नुटेयपेक्ष नीयोक्कवे वरुत्तियाल् । ६७
पिन्नेयु कन्यकयाय्तन्ने वन्नीटुमल्लो ।
निर्ण्णयमत्रयल्ला नल्लते वन्नुकूटु । ६८
आस्वदिप्पतिनिन्नु योगमुण्टिप्पोळ् निन्ने
वात्सल्य निनक्केन्निलुण्टाकवेण बाले । ६९
आरुमे काणाय्वतिनन्नेरं मुनिवरन्
घोरमायोरु मञ्ञु निर्म्मिच्चानत्रयल्ल ७०
मत्स्यगन्धवु पोक्किक्कस्तूरिगन्धमाक्कि
सत्सग कोण्टल्लयो नल्लतु वन्नु कूटु । ७१
नदि तन् मध्ये वरद्वीपवुमुण्टाय्वन्नु
मतिनेर्मुखियाळ्क्कु विस्मयमुण्टायल्लो । ७२
अेन्तिनु पऱयुन्नु वेऱुते बहुविध
बन्धमोक्षङ्ङळुटे भेदं कण्टोरु मुनि ७३
नल्लोरु तीर्त्थभूतयायोरु यमुनयि-
लेल्लारु कुळिच्चूत्तु संध्ययो वन्दिक्कुम्पोळ् ७४
मत्स्यगन्धिनियाय कैवर्त्तकन्यकये
मत्स्यकेतनशरमेटु पुल्किनान् मुनि । ७५

जैसे का कहना न मानकर न्याय कैसे होगा, यह भी मै जानती हूँ न।" ५९-६६
मुनिवर यह सुनकर प्रसन्न हुए और बोले—"अगर तुम मेरी प्रार्थना पूरी करोगी तो तुम फिर से कन्या ही हो जाओगी, सदेह नही। इतना ही नही, इससे भला ही होगा। तुमसे रमण करने का यही अवसर है इसलिए तुम मुझसे प्रेम करो। ऐसा कहकर मुनिवर ने उस समय घोर नीहार पैदा कर दिया ताकि कोई देख न पावे। इतना ही नही, उसके शरीर से मत्स्यगन्ध को दूर कर कस्तूरी की गन्ध पैदा कर दी। आखिर सत्संग से ही तो भला होता है। नदी के वीच मे एक द्वीप भी वन गया और चन्द्रमुखी काली विस्मित हो गयी। और वहुत कुछ कहना व्यर्थ है। इतना ही है कि वन्ध और मोक्ष का भेद जाननेवाले मुनि ने पवित्र तीर्थ यमुना नदी मे जब सब लोग स्नान करके संध्या कर रहे थे तव मदन के वाणो से व्याकुल होकर मत्स्यगन्धिनी कैवर्तकन्या को

इतिहासङ्ङळ् पुराणङ्ङळेन्निव मट्टु
मतिमानायुळ्ळोरु सूतनेप्पठिप्पिच्चु । ९५
विष्णुतन्नुटेयंशमायतु वेदव्यासन्
कृष्णवर्णत्व कोण्टु कृष्णनेन्नायी नामम् । ९६
धीरनां पराशर पुत्रनायतु मूल
पारतिल् पाराशर्यनेन्नु चोल्लीटुन्नतुम् । ९७
कृष्णनुं द्वैपायनन् व्यासनु पाराशर्यन्
कृष्णद्वैपायननु वेदव्यासनुमेव- ९८
कूटियु चोल्लु नाम बादरायणनति-
गूढवेदान्तार्थज्ञन् कूटस्थन् परन्पुमान् । ९९
अम्महा मुनियुटे माहात्म्यमार्क्कु चोल्ला
निर्म्मलनल्लो महाभारतकर्त्तावोर्त्ताल् । १००
मन्मनोमोहध्वान्तमुन्मूलनाशंचेय्त-
तम्महात्मावुतन्टे कारुण्यमेन्नु नूनम् । १०१
मुनिनायकनाय वैशम्पायननोटु
जनमेजयनृपन् तोळुतु चोद्यं चेय्तान् । १०२
ऍन्तिनु पिरन्नितु देवकळवनियिल्
वन्धमेन्ततिनुळ्ळ मूलवु परयणम् । १०३

भगवान् विष्णु के अश थे, काले रग के होने के कारण उनका नाम कृष्ण हुआ। ९१-९६ बुद्धिमान् पराशर के पुत्र होने के कारण पृथ्वी मे उनका नाम पाराशर्य हुआ। कृष्ण, द्वैपायन, व्यास, पाराशर्य, कृष्णद्वैपायन, वेदव्यास ये सव उनके नाम है। वे ही बादरायण हैं जो गूढवेदान्त के अर्थज्ञ, कूटस्थ, पर, पुमान् थे। उन महामुनि का माहात्म्य कौन कह सकता है ? वे ही तो निर्मल महाभारत के रचयिता थे। निःसन्देह उन महामुनि के कारुण्य (कृपा) ही के कारण मेरे मन के अन्धकार का उन्मूलन हुआ। राजा जनमेजय ने हाथ जोडकर मुनियो के नायक वैशम्पायन से प्रार्थना की—देवो ने क्यो पृथ्वी मे जन्म लिया ? इसका मूल कारण कृपया वतला दीजिए। ९७-१०३

नल्लवरोट्टुकूटिस्ससर्ग्गमुण्टाय्वन्नाल्
नल्लतुमाकात्ततुमुण्टामॆन्निरिक्किलु ८५
नल्लतु पोकयिल्ल पोकुमाकात्ततॆल्लाम् ।
नल्लतिल्लेतुं मट्टु सत्संगत्तिनुसमं । ८६
ओरोरो युगत्तिङ्कल् धर्म्मत्तिनिल्लातॆ पो-
मोरोरो पदंपिन्नॆ मानुषर्क्कतुपोलॆ ८७
आयुस्सुमुत्साहवुं बुद्धिशक्तियुमॆल्लां
पोयिट्टु दशाशमे शेषिप्पू युगं प्रति । ८८
आकयाल् वेदमॊक्कप्पठिच्चुकूटाय्कया-
लेकैकमाक्किप्पकुत्तीटिनान् द्वैपायनन् । ८९
व्यासनॆन्नॊरु नाममतिनालुण्टाय्वन्नु
वासवीतनयनु पिन्नॆयुमतुकालम् । ९०
वेदार्थ प्रकाशिप्पान् चमच्चु पुराणङ्डळ्
भूदेवोत्तमन्मारुं शिष्यराय् चमञ्ञितु । ९१
नालु शिष्यर्कळतिल् केवलं प्रधानन्मार्
नालर्क्कुमोरोवेदं वॆव्वेरॆ पठिप्पिच्चु । ९२
सुमन्तुतानु पिन्नॆ जैमिनि पैलन् शुकन्
सुमन्त्रसूत्रब्राह्मणादि वेदज्ञन्मार् पोल् । ९३
भारतमाकुमञ्चा वेदत्तॆप्पठिप्पिच्चु
सारनायुळ्ळ वैशम्पायनमुनितन्नॆ । ९४

बुरा पैदा हो सकता है, अच्छा तो नष्ट नही होगा, बुरा सब नष्ट हो जायगा। सत्सग के समान और कोई अच्छी बात नही है। हर एक युग मे धर्म का एक एक पाद घटता जाता है। इसी प्रकार मनुष्यो के भी आयु, उत्साह और बुद्धिशक्ति नष्ट हो जाते है और उनके दसवॉ अश ही प्रतियुग रह जाता है। इसलिए सारे वेदो को पढना असभव समझ कर द्वैपायन ने उनका विभाग किया। इसीलिए वसुपुत्री के पुत्र का दूसरा नाम व्यास हुआ। ८४-९० उन्होने वेदार्थ को प्रकाशित करने के लिए पुराणो की रचना की और अनेक ब्राह्मणोत्तम उनके शिष्य हुए। उनमे चार ही प्रमुख है। व्यास जी ने उनमे से एक एक को एक एक वेद पढ़ाया, सुमन्तु, जैमिनि, पैल, शुक ये ही मन्त्र, सूत्र ब्राह्मण आदि वेदो के ज्ञाता। सारवान् वैशम्पायन मुनि को उन्होने पॉचवॉ वेद महाभारत पढ़ाया। मतिमान् सूत को तो इतिहास, पुराण आदि पढ़ाया। वेदव्यासजी

कामानुभूति चिन्तिच्चल्लतु कुलंतन्ने
कामिच्चु चेय्कयत्रे धर्म्मार्त्थमवरेल्लाम् । ९
क्षत्रियवीरन्मारु वर्द्धिच्चारतुकालं
पृथ्वियु परिपालिच्चीटिनार् वळिपोले । १०
चेन्नीटु वयस्सु नूरायिर सवत्सर
चेन्नीटा मनस्सधर्म्मङ्ङळिलोरुवनुम् । ११
कामक्रोधादिकळा दोपङ्ङळोन्नुमिल्ल
कामिच्चवण्णतन्ने वन्नीटुमेल्लावनुं १२
पिळय्किलतिनु तक्कोरु शिक्षयुमुण्टु
पिळय्कयिल्ला तम्मिलन्योन्यमोरुवनु । १३
मळयु वेणमेन्नु तोन्नुम्पोळुण्टाय्वरुं
वळियेन्निये नटन्नीटुमाऱारुमिल्ल । १४
परनारिकळिलु परद्रव्यङ्ङळिलु-
मोरुनेरवुमभिरुचियिल्लोरुवनुम् । १५
वेदवुं वळिपोले पठिक्कु द्विजेन्द्रन्मा-
रादरवोटु कर्म्म चेय्तीटु नृपन्मारुम् । १६
पशुपालन कृपि वाणिभमिवयेल्ला-
मशुभमणयाते चेय्तीटु वैश्यन्मारुम् । १७
शूद्ररुं द्विजन्मारे शुशूपिच्चीटुं भक्तया
शूद्रजातिकळ् केळक्के स्वाध्यायादियुमिल्ल । १८

कामभोग के उद्देश्य से नही । क्षत्रियवीर सव अच्छी तरह से वढे और उन्होने ढग से (न्याय पूर्वक) पृथिवी का परिपालन किया । उस समय मनुष्यो की एक एक लाख वरस की आयु होती थी । किसी का भी मन अधर्म मे नही लगता था । काम, क्रोध आदि दोप कही नही थे । जो कुछ लोग चाहते थे वही होता था । अपराध के अनुरूप दण्ड प्राप्त होता था और लोग आपस मे कभी न झगडते थे । जब वरसात की आवश्यकता प्रतीत होती थी तभी वह होती थी । अपना कर्तव्य-मार्ग छोडकर चलने वाला कोई भी न था । परनारी और परद्रव्य मे किसी की भी अभिरुचि न थी । ब्राह्मण यथाविधि वेद पढते थे और राजा लोग सादर (प्रजापालन) कर्म करते थे । और वैश्य लोग पशुपालन, कृपि और वाणिज्य विना कूट (छल) के करते थे । शूद्र भक्ति के साथ द्विजो की शुश्रूपा करते थे और शूद्रो के सुनते स्वाध्याय नही होता

परशुरामन् नशिप्पिच्च क्षत्रियवंशं वीण्टु अभिवृद्धियें प्रपिच्चतु ।

अन्नेरं मुनिवरनाय वैशम्पायनन्
वन्दिच्चु नारायणन्तन्नुटे पादांबुजं १
चॊल्लुवनेङ्किल् केट्टुकॊळ्ळुक नराधिप
चॊल्लेरु जमदग्निनन्दननाय रामन् २
मूवेळुवट्टं मुटिमन्नरेयॊट्टुक्किप्पोय्
पर्व्वतोत्तमनाय् मेवीटुन्न महेन्द्रत्तिन्- ३
मुकळिल् तपस्सुचेय्तिरिक्कु कालत्तिङ्कल्
अकतारुळन्नॊरु राजनारिकळेल्ला ४
सन्ततियिल्लाञ्ञुळ्ळ सन्तापमकलुवान्
सन्तुष्टन्माराय् मेवुमन्तणरोटु चॊन्नार् । ५
वॆन्तु वॆन्तुरुकुन्नु चिन्तिच्चु कुलनाश
सन्तानमुण्टाक्कण ञङ्ङळिल् निङ्ङळिनि- ६
यन्तिके वन्नु चॊन्न सुन्दरागिकळुटे
पन्तॊक्कु कुळुर्मुल पुल्किनारवर्कळुम् । ७
ऋतुकाल पार्त्तु गर्भाधानं चेय्तकाल-
मतुलगुणमुळ्ळ पुत्रन्मारुण्टाय्वन्नु । ८

परशुराम-द्वारा नष्ट किये गये क्षत्रियवश का फिर अभिवृद्धि प्राप्त करना

उस समय मुनिवर वैशम्पायन ने नारायण के पादाबुजो (चरण-कमलो) की वन्दना करके कहा—'मै बतला दूँगा । हे नराधिप ! आप सुन लीजिए । विख्यात जमदग्नि के पुत्र परशुराम इक्कीस बार राज करनेवाले राजाओ को समाप्त करके पर्वतोत्तम महेन्द्र पर जाकर जब तपस्या कर रहे थे तब दु खित राजपत्नियों ने सन्तान न होने का सन्ताप दूर करने के लिए सुख से रहनेवाले ब्राह्मणो से कहा । कुलनाश को सोचते सोचते हम लोगो का हृदय सताप से पिघल रहा है । इसलिए आप लोग हममे सन्तान पैदा कीजिए । ब्राह्मणो ने इस प्रकार समीप मे आयी हुई सुन्दरियो के कन्दुक समान शीतल स्तनो का आलिगन किया । जब ऋतुकाल को देखकर गर्भाधान किया गया तब अतुल गुणवाले पुत्रो का जन्म हुआ । ८ उन ब्राह्मणो ने यह काम धर्म के लिए किया,

इङ्ङने कृतयुगमायुळ्ळ कालत्तिङ्कल्
तङ्ङळिल् सुरासुरर् वैरमाय् चमञ्ञतु । २८
देवकळोटु पोरिल् मरिच्चारमुरकळ्
देवत्व काँतिच्चवर् पिरन्नारवनियिल् । २९
नानायोनिकळिल् वन्नुद्भविच्चसुरन्मार्
मानसखेद पूण्टु मेदिनि भार कोण्टु । ३०
निष्ठुरन्मारायुळ्ळ दैत्यभूपतिवीरर्
दुष्टतयोळिञ्ञु चेय्तीटुकयिल्लयोन्नुम् ३१
नष्टमाय् च्चमञ्ञतु धर्म्मवुमतुकालं
पेट्टपाटोरोजनमेन्तय्यो पर्वतुम् । ३२
प्रकृतिगुणवशालुळ्ळ वासनकळे-
स्सुकृतमुळ्ळवर्क्कु नीक्कुवान् वेलयत्रे । ३३
लोकपालरुं मुनिमारुमायवनियु
लोककर्त्तावायुळ्ळ धातावुतन्नेक्कण्टाळ् । ३४
वेदनयेल्ला पशुरूपमाय् चेन्नु चोन्नाळ्
वेदनायकनाय धातावुमतुकाल ३५
देवकळोटु मुनिश्रेष्ठन्मारोटु कूटि-
द्देवदेवेशनीशनीश्वरन् शभु वाम-
देवनविकापति शङ्करन् महेश्वरन् ३६
श्रीकण्ठन् शितिकण्ठन् त्रीक्षणन् त्रिपुरारि
वैकुण्ठनमस्कृतनीशानन् पशुपति ३७

किसी को नही डाँटता था और मत्सर कही न था। इस कृतयुग के समान समय मे देव और असुरो मे वैर पैदा हो गया। युद्ध मे देवो के हाथ असुर मारे गये और देवत्व प्राप्त करने की लालसा से उन्होने पृथिवी पर जन्म लिया। असुर लोग भिन्न भिन्न योनियो मे पैदा हुए और उनके भार से मेदिनी (पृथ्वी) दु खित हुई। क्रूर दैत्य भूपतिवीर दुष्टता से मुक्त (रहित) कोई भी काम नही करते थे। धर्म तो उस समय बिलकुल ही नष्ट हो गया और लोगो ने जो कष्ट सहा वह कहाँ तक कहा जाय ? ३२ प्रकृति के गुणो के कारण जो प्रवृत्तियाँ पैदा होती है उनको दूर करना पुण्यजनो के लिए भी कठिन है। लोकपाल, महामुनि और स्वय पृथिवी देवी ने लोक के कर्ता ब्रह्मा का दर्शन किया। गाय के रूप मे जाकर पृथ्वी ने अपना सारा दु.ख सुनाया। उस समय

रौद्रकर्म्मङ्ङळ् चेय्कयिल्लतिदीनन्मारि-
लार्द्रभाववुमुण्टु सत्यवुमुण्टेल्लावर्क्कुम् । १९
कळ्ळक्कोल् कळ्ळप्पॆरुनाळियु कळ्ळनाळि
कळ्ळच्चोतनयिवयिल्ल चन्तकळिलुम् । २०
कळ्ळमॆन्नुळ्ळतुळ्ळिलॆळ्ळोळमिल्ल चॊल्वान्
कळ्ळवाक्किल्ला कळ्ळन्मारिल्ल काट्टिल्प्पोलुम् । २१
स्वधर्म्मानुष्ठानत्तिल् निष्ठयुमुण्टेल्लावर्क्कु-
मधर्म्मङ्ङळुमिल्ल विधर्म्मङ्ङळुमिल्ल । २२
मट्टुळ्ळ वर्ण्णकर्म्म मट्टुळ्ळ जातिक्किल्ल
मुट्टु तङ्ङळ्क्कुतङ्ङल्क्कुळ्ळ कर्म्ममेयुळ्ळु । २३
गोक्कळु नारिकळु कालत्तु पॆरुमल्लो
पूक्कयु काय्कयु चॆय्तीटुमे मरङ्ङळुम् । २४
उल्पत्ति वेण्टुवोळं विळयु वळिपोलॆ
कल्पनय्किळक्कमिल्लीश्वरभक्तियुण्टु । २५
सल्पुरुषन्मारॆन्नियिल्लॊरु वंशत्तिलु-
मुल्पलाक्षिकळुमिल्लाकातॆयॊरुवरुम् । २६
कुत्सितङ्ङळुमिल्ल कुत्सनवाक्कुमिल्ल
भर्त्सनमॊट्टुमिल्ल मत्सरादियुमिल्ल । २७

था । १८ रौद्रकर्म कोई नही करता था और अतिदीन के प्रति आर्द्रभाव होता था, सभी सत्यवादी थे। जाली डडा (एक प्रकार का नाप) जाली वडी नाडी, जाली नाडी, जाली सेर, यह सब बाजार मे नही चलता था। लोगो के भीतर कहने के लिए झूठ तिलभर भी नही था, झूठी बाते न होती थी और चोर जङ्गलो मे भी न थे। स्वधर्म के अनुष्ठान में सभी की निष्ठा थी, न कही अधर्म था और न विधर्म। एक वर्ण का कर्म दूसरा वर्ण न करता था, सब अपने-अपने ही कर्म किया करते थे। गाये और स्त्रियाँ ठीक समय पर सन्तान उत्पन्न करती थी। और पेड भी इसी प्रकार फूल और फल देते थे। यथेष्ट उत्पादन यथासमय होता था, शासन टाला नही जाता था और ईश्वर के प्रति सबकी भक्ति थी। २५ किसी भी वश मे सत्पुरुषो के अतिरिक्त कोई नही था और उत्पलाक्षियो (कमल के समान नेत्र वाली स्त्रियो) मे भी बिगडी हुई कोई न थी। कोई कुत्सित (निन्दित) नही था और किसी के भी मुख से निन्दा की वाक् (वाणी) नही सुनी जाती थी। कोई

मटियिल् मरुवीटु मलमातिन् पोर्मुल-
त्तटवु तटवि ना पोकेंटो दुग्धावुधौ । ४८
इवर्कळोटुमिप्पोळ् ना कूटेप्पोकाय्किलो
विवशभावं तीरा लोकङ्ङळ्क्कात्मनाथे ! ४९
अेन्नरुळ्चेय्तु भुवनेश्वरियोटुकूटि-
प्पन्नगविभूषणन् भूतसचयत्तोटु ५०
अभोजसभवनुमुन्परं मुनिमारुं
तुबुरुनारदनुमबरचारिकळु ५१
चेन्नु पालाळिकण्टु पुकळ्न्नुतुटङ्ङिनार्
पन्नगशयननां परमात्मान परम् । ५२
पुरुपोत्तम ! हरे ! पुण्डरीकाक्ष ! पर-
पुरुष ! पुरातन ! पूर्व्वदेवारे ! जय ! ५३
चरणसरसिजयुगळनतजन-
दुरितविनाशन ! करुणानिधे ! जय ! ५४
वेदज्ञप्रिय ! जय वेदार्थात्मक ! जय !
वेदान्तवेद्य ! जय ! वेदविग्रह ! जय ! ५५

विध्वस करने वाले शिव जी) ने कहा असुरभूपालो के वध के लिए पहले ही मधुद्वेषी (विष्णु) से कहा गया है। दुष्टो का निग्रह करके शिष्टो की इस लोक मे यथाविधि रक्षा करने मे मै सहायक हूँगा। ४६ अब क्षीरसागर पहुँचकर सारा दु ख विष्णु को वतलाने के लिए आप (ब्रह्मा आदि) रवाना हो जाइए। तदनन्तर पन्नगविभूपण (सर्पो के भूपण वाले शिव जी) ने गोद मे बैठी हुई पार्वती जी के स्तनतटो को आलिङ्गन कर कहा—"अब हम क्षीरसागर चले। हे आत्मनाभे ! अगर हम इन के साथ न चलेंगे तो लोको की विवशता न दूर होगी"। इतना कहकर भुवनेश्वरी के साथ, भूतगणो के साथ, तथा ब्रह्मा, देवगण और मुनिगण, तुबुरु, नारद और गगनचारियो के साथ क्षीरसागर गये और अनन्तशयन परमात्मा की इस प्रकार स्तुति करने लगे—५२ हे पुरुपोत्तम, हे हरि ! पुण्डरीकाक्ष ! परपुरुप ! पुरातन ! असुरो के शत्रु ! तुम्हारी जय हो ! हे अपने पादपद्मो पर नत लोगो के पाप को नष्ट करने वाले ! हे करुणा-निधि ! जय हो ! हे वेदज्ञो के प्रिय ! वेदार्थात्मक ! जय हो ! हे वेदान्तवेद्य ! हे वेदविग्रह ! जय हो ! हे प्रकृति और पुरुष से भिन्नात्मक ! जय हो ! हे पुण्यजनो के मन मे रहने वाले ! जयजय ! हे सृष्टि, पालन और सहार-कर्त्ता !

त्र्यंबकन् चन्द्रचूडन् शवरारातिवैरि
गगावल्लभन् गौरीवल्लभन् कालाराति ३८
मत्तहस्तीन्द्रासुरमर्द्दनन् भूताधिप-
नस्थिभूषणन् कृत्तिवसनन् मृत्युञ्जयन् ३९
अद्रिमन्दिरन् अद्रिचापनद्रिजाकान्तन्
रुद्रन् वाणरुळीटुं कैलासाचल पुक्कान् । ४०
दानवप्रवरन्मार् मानवप्रवरराय्
क्षोणियिल् वन्नु पिरन्नीटिनारितुकालम् । ४१
सम्मत मरञ्ञितु दुर्म्मतं निरञ्ञितु
धर्म्मवु कुरञ्ञितु निर्म्मर्यादयु वाच्चु । ४२
भूमियु भारंकोण्टु तळन्नु चमञ्ञितु
सोमशेखर पोटी ! कात्तुकोळ्केन्नेवेण्टु । ४३
स्तुतिच्चु वन्दिच्चोरु पद्मजादिकळोटाय्
ऋतुध्वंसियु तेळिञ्ञरुळिच्चेय्तीटिनान् । ४४
वधत्तिन्नसुरभूपालरेयेल्लामिन्नु
मधुद्वेषियेक्कल्पिच्चिरिक्कुन्नितु मुन्ने । ४५
दुष्टरे वध चेय्तु शिष्टरे विधिपोले
विष्टपत्तिङ्कल् वच्चु रक्षिप्पान् वेलचेय्याम् । ४६
सङ्कटं दुग्धांबुधि पुक्कुटनुणर्त्तिप्पान्
पङ्कजभवादिकळ् नटप्पिन् मुन्पिलिप्पोळ् । ४७

वेदो के नायक ब्रह्मा देवो और मुनिवरो के साथ देवदेवेश, ईश, ईश्वर, शभु-वामदेव, अंविकापति, शङ्कर, महेश्वर श्रीकण्ठ, शितिकण्ठ, त्रीक्षण, (तीन नेत्र वाले) त्रिपुरारि, वैकुण्ठनमस्कृत, ईशान, पशुपति, त्र्यबक, चन्द्रचूड, शवरशत्रु के वैरि गगावल्लभ, गौरीवल्लभ, काल के शत्रु मत्त हाथी के रूपवाले असुर का मर्दन करने वाले, भूताधिप, अस्थिभूषण, कृत्तिवास, मृत्युजय, अद्रिमन्दिर, अद्रिचाप, पार्वतीकान्त, रुद्र के निवास स्थान कैलास पर्वत पर गये और कहने लगे—४० दानवो के प्रमुखो ने मानवप्रमुख के रूप मे पृथिवी मे आकर जन्म लिया है। सद्भावना नष्ट हो गयी, दुर्भावना फैल गयी, धर्म कम हो गया और निर्मर्यादा बढ़ गयी। पृथिवी भी भार से दुखी हो गयी है। हे सोमेश्वर, हे दीन-दयालु ! रक्षा करो, इतना ही कहना है। जिन ब्रह्मादिको ने इस प्रकार स्तुति और वन्दना की उन पर प्रसन्न होकर ऋतुध्वसी (दक्ष के यज्ञ का

इरुपत्तोन्नुवट्टं वधिच्चु तापं तीर्त्त
परशुराममूर्त्ते परिपालय जय । ६६
पंक्तिकण्ठनेक्कोन्नु मुन्नमापत्तु तीर्प्पान्
पंक्तिस्यन्दनसुतनाय राघव जय ! ६७
अन्नन्नीवण्णमुण्टामापत्तु तीर्त्तु रक्षि-
क्कुन्नतु मटारखिलेश्वर जय जय । ६८
इप्पोळुमतिलपरमापत्तु मुळुत्तितु
चिल्पुमानाय जगतीपते ! रमापते ! । ६९
निष्ठुरन्मारामसुरेन्द्रन्मारवनियिल्
दुष्टभूपालन्माराय् पिरन्नु मुळुक्कयाल् ७०
नष्टमायितु धर्म्मकर्म्मङ्ङळेल्लामळल्-
प्पेट्टुटन् भारकोण्टु ताणुपोमवनियुम् । ७१
निन् तिरुवुळ्ळमिल्लेन्नाकिलिन्ञङ्ङळ्क्कॆल्ला-
मेन्तोरु गति परमानन्दमूर्त्ते विष्णो ! । ७२
सन्ततं तव पादपङ्कजमकतारिल्
चिन्तिक्कायवरेणमे भगवन् जय जय ! ७३
पुरनाशनन् तानु पुरुहूतादिकळुं
पुरुभक्तियु पूण्टु पुकळ्न्नार् पलतरं । ७४

तुम्हारी जय हो जिसने जमदग्नि का पुत्र वनकर ब्राह्मणद्वेषी भूपालो को इक्कीस वार नष्ट कर दिया और जनता का दु.ख समाप्त कर दिया। जिसने पुरा (प्राचीन काल मे) दशरथ का पुत्र वनकर दशकण्ठ का वध किया और विपत्ति को हटाया उस राघव की जय हो ! ६७ हे अखिलेश्वर ! पैदा होने वाली विपत्तियो को तत्काल ही दूर करनेवाला तुम्हे छोडकर और कौन है ? तुम्हारी जय हो ! हे जगतीपते ! रमापते ! अव फिर उससे वढकर विपत्ति पैदा हो गयी है। पृथिवी मे दुष्ट भूपाल के रूप मे क्रूर असुरो के जन्म लेने के कारण, अव धर्म कर्म सव नष्ट हो गया और दु खित भूमि अव भार से नीची हो जायगी। हे परमानन्द-मूर्त्ते ! हे विष्णो ! अगर तुम्हारा प्रसाद (कृपा) न होगा तो अव हम लोगो की क्या गति होगी ? हे भगवन् ! ऐसा हो कि हम लोग सतत (निरन्तर) तुम्हारे पादपङ्कज का ध्यान करते रहे। जय जय ! शिवजी और इन्द्र आदि देवगणो ने वडी भक्ति के साथ विभिन्न प्रकार से स्तुति की। ब्रह्मा ने पुरुषसूक्त के द्वारा पुरुषोत्तम का अच्छी तरह से ध्यान किया। ७५

प्रकृतिपुरुषभिन्नात्मक ! जय जय !
सुकृतिजनमनोमन्दिर ! जय जय ! ५६
सृष्टिपालनलयकारणमूर्त्ते जय !
दुष्टनाशन जय शिष्टपालन जय ! ५७
हयग्रीवनेक्कोन्नु वेदङ्ङळ् वीण्टु मुन्न
भयत्तेत्तीर्प्पान् मत्स्यवेष माधव जय ! ५८
क्षीरसागरमथनान्तरे मुन्नमति-
भारमाय्काणीटुन्न मन्दरमुयर्त्तुवान् ५९
घोरमायोरु कूर्म्मविग्रहं धरिच्चीटु
कारणमूर्त्ते जय कमलापते जय ! ६०
धात्रियेत्तिरिच्चु तन् कातिलिट्टधोलोक-
प्राप्तिक्कु भाविच्चोरु हिरण्याक्षने मुन्न ६१
पोत्रियायवतारं चेय्तु निग्रहिच्चु तन्
धात्रियें स्थानत्ताक्कु यज्ञागमूर्त्ते जय ! ६२
हिरण्यकशिपुवामसुरेन्द्रनेक्कोल्वान्
नरसिहाकारमाय्च्चमञ्ञ नाथ ! जय । ६३
दितिजाधिपनाय बलियें जयिप्पति-
नदितीसुतनाय वामनमूर्त्ते ! जय । ६४
धरणीसुरजनद्वेषिकळायुण्टाय
धरित्रीपालन्मारें जमदग्निजनाये ६५

जय हो ! हे दुष्टनाशन ! हे शिष्टपालन ! तुम्हारी जय हो ! हयग्रीव का वध करके पूर्वकाल मे तुमने वेदो का उद्धार किया। भय दूर करने के लिए जिसने मत्स्य का रूप धारण किया उस माधव की जय ! पूर्वकाल मे समुद्रमन्थन के अवसर पर भारी मन्दरपर्वत को उठाने के लिए हे कारणमूर्ते ! कमलापते ! तुमने एक घोर कूर्म का रूप धारण किया था। तुम्हारी जय हो। ६० पृथिवी को लपेटकर अपने कान मे दबाकर पाताल ले जानेवाले हिरण्याक्ष का पूर्वकाल मे वराह रूप मे अवतार लेकर निग्रह करने वाले और भूमि को अपने स्थान मे स्थापित करने वाले यज्ञागमूर्ति तुम्हारी जय हो ! हे नाथ ! असुर हिरण्यकशिपु के वध के लिए तुमने नरसिह का आकार ग्रहण किया था। तुम्हारी जय हो ! तुम्हारी जय हो जिसने असुरो के नाथ बलि को जीतने के लिए अदितिसुत वामन की मूर्ति ग्रहण कर ली। हे परशुराममूर्त्ते ! रक्षा करो,

कृष्णनाय् पिऱन्नतुमिङ्ङने जगन्नाथन्
विष्णुभक्तन्मारॊक्क सेविच्चारानन्दिच्चार् । ८५
दुष्टरॆ शिक्षिक्कयु शिष्टरॆ रक्षिक्कयुं
तुष्टनायॆल्लावर्क्कु सत्गति कॊटुक्कयुं ८६
दोप चॆय्तवर्कळ्क्कु नल्लतु चॆय्तवर्क्कु
द्वेपमुळ्ळवर्कळ्क्कु स्नेहमुळ्ळवर्कळ्क्कु ८७
कामिच्च जनङ्ङळ्क्कु मोहिच्च जनङ्ङळ्क्कुं
नामत्तॆ चॊल्लुवोर्क्कु रूपत्तॆ ध्यानिप्पोर्क्कु ८८
भक्तरायुळ्ळवर्क्कु सक्तरायुळ्ळवर्क्कु
मुक्तियॆ वरुत्तुवानोरोरोतरत्तिले ८९
पारिल् वन्नवतरिच्चीटिनान् नारायणन्
तारिल् मातादियाकुं परिवारङ्ङळोटुम् । ९०
शत्रुमित्रोदासीनभेदमिल्लॊरुनाळु
नित्यनामीशनुतनिक्कॆल्लारुमॊक्कुमत्रे । ९१
केवल देवकळॆ स्नेहमॊट्टेऱयिल्ल
देववैरिकळेयु द्वेपमिल्लॊरुनाळुम् । ९२
सर्व्वजन्तुक्कळुटॆ जीवनायिरिप्पतु
दिव्यना नारायणन्तानॆन्नु धरिच्चालुम् । ९३
अप्पोळॆ भेदमिल्लॆन्नुळ्ळ्पूविलुऱच्चीटा-
मुल्पलनेत्रनन्तन्टॆ मायावैभवमॆल्लाम् । ९४

जगन्नाथ ने कृष्ण के रूप मे अवतार किया। सभी विष्णुभक्तो ने उनकी सेवा की और आनन्द का अनुभव किया। उन्होने दुष्टो को दण्ड दिया, शिष्टो की रक्षा की तथा सन्तुष्ट होकर सबको सद्गति प्रदान की। पाप करने वालो को, भला करने वालो को, दिल मे द्वेष रखने वालों को और स्नेह रखनेवालो को, कामी जनो को, मोहग्रस्त जनो को, नाम का जप करने वालो को, रूप का ध्यान करने वालो को, भक्तो को और सक्तो को भिन्न भिन्न प्रकार से मुक्ति दिलाने के लिए भगवान् नारायण ने लक्ष्मी आदि अपने परिवार के साथ पृथिवी पर अवतार किया। ९० शत्रु, मित्र, उदासीन, यह भेद वे कभी नही मानते थे क्योकि उन नित्य ईश के लिए सब एक थे। केवल देवो के प्रति उनका अधिक स्नेह नही था, और देवों के शत्रुओ के प्रति उनका कभी द्वेष भी न था। समझ लीजिए कि सभी जन्तुओ के प्राण दिव्य नारायण ही थे। इसी से अपने

पुरुषसूक्तंकोंण्टु पुष्करोद्भवन् नन्नाय्
पुरुपोत्तमन्तन्ने ध्यानिच्चान् वळिपोले । ७५
स्तुतिच्चीवण्णं नमस्करिच्चनेर देवन्
मधुद्वेषियुमुणर्न्नरुळिच्चेय्तीटिनान् । ७६
मधुरवाक्यङ्डळाल् विशदस्मितपूर्व्वं
मथुरापुरितन्निल् वसुदेवात्मजनाय् ७७
देवकीतनयनाय् वन्तु ञान् जनिच्चीटुम् ।
देवकळेल्लावरुं भूमियिल्प्पिरक्कणम् । ७८
अरुळप्पाटीवण्ण पद्मजन् देवकळो-
टरुळिच्चेय्तु सत्यलोकवुं पुक्कीटिनान् । ७९
भूमियुं देवकळुं तापसवरन्मारु-
मामोदं पूण्टु कृतार्थात्मना नटकोंण्टार् । ८०
आदितेयन्मारेल्लां पिरन्नारवनियिल्
आदिनाथनेस्सेविच्चानन्द वरुत्तुवान् । ८१
भूसुरन्मारायिट्टु भूवरन्मारायिट्टु
भूतले पिरन्नितु भूतियुं वाच्चु तुलोम् । ८२
यक्षकिन्नरगन्धर्व्वोरगचारणौघ-
रक्षोगुह्यकसिद्धविद्याधरादिकळु ८३
अप्सरस्त्रीकळ्तानुमद्भुतं वरुंवण्णं
चिल्पुरुषनेप्परिचरिप्पानुळरायार् । ८४

जब उन्होने इस प्रकार स्तुति करके नमस्कार किया तब देव मधुद्वेषी (विष्णु) ने मुस्कराते हुए मधुर वाक्यो के द्वारा निवेदन किया । "मथुरा नगरी मे वसुदेव और देवकी के पुत्र के रूप मे मै जन्म लूँगा । सभी देव भी पृथिवी मे जन्म ले ले । भगवान् ब्रह्मा आदि देवो से इस प्रकार कहकर सत्यलोक चले गये । भूमिदेवी, देवगण और तापसवर प्रमुदित हुए और कृतार्थ होकर चले गये । आदिनाथ की सेवा करके आनन्द का अनुभव करने के लिए सभी आदितेयो (देवगण) ने पृथ्वी पर जन्म लिया । ब्राह्मणो और भूपालो के रूप मे भूतल मे जन्म लिया और समृद्धि बढी । यक्ष, किन्नर, गन्धर्व, उरग (सर्प), चारणगण, रक्षस्, गुह्यक, सिद्ध, विद्याधर, अप्सरा आदि अद्भुत प्रकार से चित्पुरुष (चैतन्यरूपी विष्णु) की सेवा करने के लिये सन्नद्ध हुए । ८४

ञानतु केळ्प्पान्तक्क पात्रमेन्नि रिक्किलो
सानन्दमरुळिच्चय्तीटणमेन्ननेरम् । १०४
नमस्ते नारायण ! नमस्ते जगन्नाथ !
नमस्ते समस्तेश ! तुणय्केन्नरुळ्चेय्तु । १०५
केट्टुकोण्टालुमेङ्किलादिये देवादिकळ्
वाट्टमेन्नियें मुन्नमुण्टायप्रकारङ्ङळ् । १०६
अळविल्लात वेळ्ळमेन्नियें लोकमोन्नुं
प्रळयकालत्तिङ्कलिल्लेन्नु धरिच्चालुम् । १०७
अप्पोळुमोरु लयमिल्लात नारायणन्
चिल्पुमान् नाभितन्निलुण्टायितोरु पद्म । १०८
अप्पूविलुद्भविच्चू चोल्लोङ्ङु विरिञ्चनु-
मप्पोळुतवनेक्कोण्टोक्कवे सृष्टिप्पिच्चान् । १०९
अन्नतिल् नटेनटेयुण्टायी चतुर्म्मुखन्
तन्नुटे मनस्सिल् निन्नारु तापसन्मारुम् । ११०
पेरुकळ् मरीचियुमत्रियुमंगिरस्सु
धीरनां पुलस्त्यनुं पुलहन् क्रतुतानु । १११
अवरिल् मरीचिक्कु काश्यपनुण्टाय्वन्ना-
नवङ्कल्निन्नु नानाजन्तुक्कळुण्टायतुम् । ११२
दक्षनां प्रजापतितन्नुटे मकळरां
मय्क्कण्णिमारिल् पतिम्मून्निनें वेट्टानवन् । ११३

यह सब सुनने योग्य पात्र हूँ तो मुझे सानन्द सुनाइए । इस पर उन्होने कहा—१०४ हे नारायण ! नमस्ते ! हे जगन्नाथ ! नमस्ते ! हे समस्तेश ! नमस्ते ! मेरी सहायता करो ! अगर इच्छा है तो विना सकोच के सुन लीजिए कि प्रारभ से ही देवादिको की कैसे उत्पत्ति हुई । जान लीजिए कि प्रलयकाल मे निस्सीम पानी के अतिरिक्त और कुछ न था । उस समय भी नारायण तो लयहीन थे और उनके नाभि मे एक पद्म पैदा हुआ । उस पुष्प मे विख्यात विरिच (ब्रह्मा) का उद्भव हुआ और नारायण ने उससे इस जगत् की सृष्टि करायी । सबसे पहले चतुर्मुख (ब्रह्मा) के मन से छ तापसो का जन्म हुआ । ११० उनके नाम इस प्रकार है—मरीचि, अत्रि, अगिरस्, पुलस्त्य, पुलह, और क्रतु । उनमें मरीचि का काश्यप नामक पुत्र हुआ जिससे तरह-तरह के प्राणियो का जन्म हुआ । उसने प्रजापति दक्ष की कन्याओ मे से तेरह के साथ विवाह

ज्ञानमिल्लातवर्क्कु भेदमुण्टॆन्नु तोन्नु
ज्ञानिकळ्क्कुळ्ळलतु तोन्नुकयिल्लातानुम् । ९५
समचित्तन्मार्क्कोक्कस्समनॆन्नुळ्ळल्तोन्नुम्
मम सिद्धान्तं तन्नेयल्लितु धरापते । ९६
विषमचित्तन्मार्क्कु विपमनॆन्नु तोन्नुं
वृषपालकनात्मावॆन्नतिनाले नूनम् । ९७
ऎन्नु वैशम्पायनमामुनि चॊन्ननेर
मन्नवनाय जनमेजयनुरचॆय्तु । ९८
ऒन्नुण्टु मनक्काम्पिल् तोन्नुन्नितिनिक्किप्पो-
ळिन्नितु शङ्किच्चिट्टु चोदिप्पान् पणितानुम् । ९९
दुश्चोद्यमॆन्नु तिरुवुळ्ळक्केटुण्टाकायिक-
लिच्छयुण्टिनिक्किन्नु मॊन्नु केळ्प्पतिनिप्पोळ् । १००
निन्तिरुवटियरियातॆयिल्लेतुमॆन्नाल्
सन्तत केळ्प्पानुण्टो भाग्यमॆन्नरिञ्ञील । १०१
दानव दैत्य देव गन्धर्व्वाप्सरस्सुकळ्
मानव यक्ष रक्षोजातियु मट्टुमुळ्ळ १०२
जन्तुक्कळुण्टाय्वन्नतॊक्कवेयरिवति-
नॆन्तॊरु कळिवॆन्नु चिन्तिच्चेन् मनसि ञान् । १०३

मन मे निर्णय कर लीजिए कि यह सब उत्पलनेत्र (विष्णु) की माया का वैभव है इसमे कोई पारस्परिक भेद नही है। जो अज्ञानी है उनके लिए भेद प्रतीत होता है, पर जो ज्ञानी है उनके लिए वह भेद प्रतीत नहीं होता। जो समचित्त है उनके लिए सम प्रतीत होता है। हे भूपाल ! यह केवल मेरा सिद्धान्त नही है। जो विपमचित्त है उनके लिए विपम प्रतीत होता है। इसलिए नि सन्देह वृपपालक (धर्मरक्षक विष्णु) ही सबकी आत्मा है। ९७ जब महामुनि वैशम्पायन ने इस प्रकार कहा तब राजा जनमेजय ने निवेदन किया। एक बात मुझे अब सूझ रही है। आज इस शङ्का के बारे मे पूँछना कठिन लग रहा है। अगर आप इसे कुप्रश्न समझ कर नाराज न हो तो मेरी पूँछने की इच्छा हो रही है। ऐसी कोई बात नही है जो आप भगवान् न जानते हो पर मुझे सुनने का निरन्तर भाग्य है या नही, यह मै नही जानता। मेरे मन में यह प्रश्न उठा कि दानव, दैत्य, गन्धर्व, अप्सरा, मानव, यक्ष, रक्षस् आदि प्राणियो का उत्पत्तिप्रकार जानने का क्या उपाय है ? अगर मै

दुर्ज्जयनश्वशिरावेमलनयश्शिरा-
वयश्शङ्कुवु शङ्कु गगनमूर्धावेन्नु १२४
वेगवान् केतुमानु स्वर्भानु चित्रभानु-
वश्वनुमश्वपति वृषपर्व्वावुतानु १२५
जगनुमश्वग्रीवन् सूक्ष्मनु तुहुण्डनु
खसृवुतानुमेकचित्तनु विरूपाक्षन् १२६
हरनुमहरनु निचन्द्रन् निकुभनु
कपथन् कापथनुं शरदन् शरभनु १२७
चन्द्रमावेन्नुमिवर् नाल्पतु दानवन्मार् ।
सिंहिक पेट्टिट्टुळ्ळु राहुवाकिय वीरन् । १२८
सुचन्द्रन् चन्द्रहर्त्ता चन्द्रमर्द्दननुतानु
क्रूरस्वभावनेन्नुं क्रूर पेटुण्टाय्वन्नु । १२९
अप्पारम्पर्य पर्ञ्ञीटुवान् पणि तुलोम् ।
दैत्यपक्षत्तिल् क्रोधवशन्मारेन्न कूट्ट १३०
पत्तुपेरुण्टु पिन्नेच्चोल्लीटामवरेयुम् ।
एकाक्षनमृतपन् प्रलवन् नरकनुं १३१
वातापितानु शत्रुतपनन् सदन्तनु
गर्भिष्ठन् चन्द्रनायुर्द्दीर्घजिह्वनुमेव- १३२
मसख्यमवरुटे पुत्रपौत्रन्मारेल्लाम् ।
चोल्लुवननायुषतन्नुटे सुतन्मारे १३३

अश्वशिरा, अमल, अय शिरा, अय शङ्कु, शङ्कु, गगनमूर्धा, वेगवान्, केतुमान्, स्वर्भानु, चित्रभानु, अश्व, अश्वपति, वृषपर्वा, जग, अश्वग्रीव, सूक्ष्म, तुहण्ड, खसृ, एकचित्त, विरूपाक्ष, हर, अहर, निचन्द्र, निकंभ, कपथ, कापथ, शरद, शरभ, चन्द्रमा—इस प्रकार चालीस दानव हुए। राहु नामक वीर को सिंहिका ने जन्म दिया। १२८ क्रूरा ने सुचन्द्र, चन्द्रहर्ता, चन्द्रमर्दन और क्रूरस्वभाव को पैदा किया। उस परम्परा का वर्णन करना कठिन काम है। दैत्यपक्ष मे एक क्रोधी वर्ग है, दस दैत्यो का। उनके नाम भी बतला दूँगा। एकाक्ष, अमृतप, प्रलव, नरक वातापि, शत्रुतपन, सदन्त, गर्भिष्ठ, चन्द्र, आयु, दीर्घजिह्व, इस प्रकार है और इनके पुत्र-पौत्र असख्य है। मै अब अनायुषा के पुत्रो को बतला रहा हूँ। विष्कर, बल, वीर, वृत्र इस प्रकार चार अत्यन्त बलवान् पुत्र हुए। जान लीजिए कि काला के पुत्र कालकेय कहलाते है। उनके नाम

अदिति, दिति, दनु, कालयुमनायुष
पतिशुश्रूषारतयाकिय सिंहिकयु ११४
मुनियुं क्रोधतानु ध्रुवयुं वरिष्ठयुं
विनत कपिलयुं कद्रुवुमिवरेल्लाम्। १
इवरिलदितियिलादित्यन्मारुण्टाय्।
धातावुं मित्रन्तानुमर्यमा शक्रनेन्तु १
वरुणनंशस्भगन् विवस्वान् पूषावेन्नुं
सविता पिन्ने त्वष्टा विष्णुवुमिवरेल्ला
दितितन् मकनल्लो हिरण्यकशिपुतान्
सुतन्मारायिट्टवनचुपेरुण्टायवन्नु। ११
प्रह्लादन् सह्लादनुमनुह्लादनु पिन्ने
शिबियुं वाष्कळनुमवर्क्कु नाममेंटो। १
अवरिल् प्रह्लादनु मून्नु पुत्रन्मारुण्टा-
यवर्पोल् विरोचनन् सुंभनु निसुभनु
अवरिल् विरोचनन्तन्मकन् महाबलि
यवनु नूरुमक्कळवरिल् ज्येष्ठन् बाणन्
दनुवामवळ् पेट्टु नाल्पतुपेरुण्टायि
दनुजन्मारामवर् नाल्पतिन् पेरु चोल्ल
विप्रचित्तियु पिन्नेश्शंबरन् नमुचियु
चोल्पेरुं पुलोमावुमसिलोमावुं केशि १

किया। उन सबके नाम ये है—१ अदिति, २
५ अनायुषा, ६ पतिशुश्रूषा मे रत सिंहिका, ७
१० वरिष्टा, ११ विनता, १२ कपिला और १३
आदित्यो का जन्म हुआ। जिनके नाम ये
३ अर्यमा, ४ शक्र, ५ वरुण, ६ अशस्, ७ भग,
१० सविता, ११ त्वष्टा, १२ विष्णु। दिति
हुआ जिनके पाँच पुत्र हुए—११८ उनके नाम
३ अनुह्लाद, ४ शिबि, ५ बाष्कल। उनमे प्रह्
१ विरोचन, २ शुभ और निशुभ। उनमे विरोच

९
श।
के
जात
था।
पैदा
और
इस

भीमसेननुमुग्रसेननु सुवर्णनु
वरुणन् गोपतियु धृतराष्ट्रनु पिन्ने १४५
सूर्यवर्चसन्तानु पत्रवानर्क्कवर्ण्णन्
प्रयुगन् चित्ररथन् सर्व्ववद्धशितानु १४६
वीरना शालिशिरा धृष्टद्युम्ननुं कलि
पतिनाऱामतल्लो नारदनेन्नु नामम् । १४७
देवगन्धर्व्वन्मारेन्निवरेच्चोल्लीटुन्नु
देवकळोटुतन्ने तुल्यन्मारिवरेल्लां । १४८
प्रापयामवळुटे मक्कळु मकळरु
प्राभवमेऱ्रयुळ्ळोर् नामङ्ङळ् चोल्लामल्लो । १४९
अनवद्ययुमनुवशयुं मदिरयु
मार्ग्गणप्रियतानुं मन्नव ! सुभगयु १५०
भंगियुमित्थमेळु नारिकळुण्टाय्वन्नु ।
सिद्धनु पूर्ण्णन् तानु बर्हियु पूर्णाशनु १५१
ब्रह्मचारियुं रतिगुणनु सुवर्ण्णनुं
चोल्लेळु विश्वावसु भानुवु सुभद्रनु १५२
पुत्रन्मारिवर्पत्तु प्रापेयन्मारेन्नऱि-
कद्भुतमप्सरस्सां वंशमेन्नरिञ्ञालुम् । १५३
वरिष्ठतनिक्कुळ्ळोरपत्यमतु केळ्प्पिन्
चुरुक्किच्चोल्वनलंबुसयु मिश्रकेशि १५४
चोल्लेळुं विद्युद्वर्ण्णा ललनाख्ययु पुन-
ररुण रक्षतयु रभयु मनोरम १५५

गोपति, धृतराष्ट्र, सूर्यवर्चस्, पत्रवान्, अर्कवर्ण, प्रयुग, चित्ररथ, सर्ववद्धशी, वीर शालिशिरा, धृष्टद्युम्न, कलि, और सोलहवे पुत्र का नाम है नारद। इनको देवगन्धर्व कहते है और जान लीजिए कि ये सब देवो के समान है। प्रापा के पुत्र और पुत्रियाँ प्रभावशाली थे। उनके नाम भी सुनाऊँगा। १४९ हे भूपाल!, अनवद्या, अनुवशा, मदिरा, मार्गणप्रिया, सुभगा, भगि, इस प्रकार सात पुत्रियाँ हुई। सिद्ध, पूर्ण, वर्हि, पूर्णाश, ब्रह्मचारी, रतिगुण, सुवर्ण, विख्यात विश्वावसु, भानु, सुभद्र इस प्रकार दस पुत्र हुए जो प्रापेय कहलाते है। फिर जान लीजिए कि अप्सराओ का वश भी अद्भुत है। वरिष्ठा के सन्तानो का नाम भी सुन लीजिए सक्षेप मे कहूँगा।

विष्करन् बलन् वीरन् वृत्रनुमेन्नु नाल्वर्
मक्कळुण्टवर्कळुमेत्रयुं बलवान्मार् । १३४
कालयामवळुटे मक्कळेन्नरिञ्ञालु
कालकेयन्मारवर्तम्मुटे पेरु चॊल्लाम् । १३५
दुष्टनां विनाशनन् क्रोधनन् क्रोधहन्ता
पिन्नेतु विवर्धननक्रोधनिवरेल्लां १३६
कालकेयन्मार् देववैरिकळरिञ्ञालुम् ।
इच्चॊन्न दैत्यपक्षत्तिङ्कलुळ्ळवर्क्कॆल्ला- १३७
मच्छनाकिय शुक्रन् भार्गवनुपाध्यायन् ।
निश्शेषं देवासुरन्मारुटे पारम्पर्य १३८
निश्चय परवतिनाक्कुमेयरुतल्लो ।
विनततन्टे मक्कळ् वैनतेयन्मारेल्लां १३९
विरवोटवरुटे पेरुकळ् तार्क्ष्यनेन्नुं
अरिष्टनेमितानुं गरुडनरुणनु- १४०
मारुणि वारुणियुं विनतातनयन्मार् ।
कद्रुविन् मक्कळल्लो काद्रवेयन्मारेल्ला- १४१
मनन्तन् वासुकियुं तक्षकन् कार्क्कोटकन्
पद्मनु महापद्मन् गुळिकन् शखपालन् १४२
अप्परिषकळुटे सन्तति चॊल्लिक्कूटा
मुल्पाटु चुरुक्कि आर्नोट्टरियिच्चेनल्लो । १४३
मुनियामवळुटे पुत्रन्मार् मौनेयन्मा-
रवर्कळुटे नाममादिये केळ्प्पिनेङ्किल् । १४४

बतलाऊँगा । १३५ दुष्ट विनाशन, क्रोधन, क्रोधहन्ता, उसके बाद विवर्धन, अक्रोधन, ये ही कालकेय है और सब देवो के वैरी है । दैत्यपक्ष मे जितने कहे गये है उन सबके पिता (रक्षक) है उपाध्याय भार्गव शुक्र । देवों और असुरो की सारी परम्परा निश्चित रूप से कोई भी नही बतला सकता । विनता के पुत्र वैनतेय कहलाते है । उनके अलग अलग नाम है—तार्क्ष्य, अरिष्टनेमि, गरुड, अरुण, आरुणि, और वारुणि । कद्रू के पुत्र काद्रवेय कहलाते है । वे हैं—अनन्त, वासुकि, तक्षक, कार्क्कोटक, पद्म, महापद्म, गुडिक, शखपाल । उनकी सन्तति बतलाना कठिन है । पहले तो सक्षेप मे मैं कह भी चुका हूँ । १४३ मुनि के पुत्र मौनेय है । उनके नाम शुरू से सुन लीजिए । भीमसेन, उग्रसेन, सुवर्ण, वरुण,

भवनन् कपालियु स्थाणुवु भवन्तानुम् ।
पिन्नेयुं केळ्क्क नटे चोन्नवराऱुपेरिल् १६६
अंगिरस्सिनु मून्नु पुत्रन्मारुण्टाय्वन्नु ।
उचथ्यन् वृहस्पति सवर्त्तनेन्नु पेरा- १६७
यत्रिक्कु पुत्रन्मारुण्टसख्य तापसन्मार् ।
पुत्रनायक्षियिल्निन्नुण्टायि चन्द्रन्तानुम् । १६८
पुलस्त्यन्तन्टे पुत्रन् विश्रवस्सवनुटे
कुलत्तिल् पिऱक्कयाल् पौलस्त्यन्मारायवन्नु । १६९
वानरप्परिपयु किन्नरजातिकळु
किंपुरुषन्मार् नानामृगङ्ङळ् सिंहङ्ङळु
व्याघ्रङ्ङळिवरेल्ला पुलहन्तन्टे मक्कळ् १७०
पतगसहचरन्मारायि विळङ्ङुन्न-
तसंख्यं क्रतुविन्टे पुत्ररेन्नतरिञ्ञालुम् १७१
पिन्नेयुं विरिञ्चन्टे वलत्तेप्पेरुविरल्-
तन्मेल्निन्नुण्टायवन्नु दक्षना प्रजापति । १७२
इटत्तेप्पेरुविरल्तन्मेल्निन्नुटनोरु-
मटुत्तूकिनमोळियुण्टायाळवळल्लो १७३
दक्षन्टे पत्नियायतवळ् पेटुण्टायितु
पुष्कराक्षिकळन्पतवरिल् पत्तुपेरे १७४
धर्म्मराजनुतन्ने कोटुत्तानन्नु दक्षन् ।
निर्म्मलाङ्गिकळवर्तम्मुटे नाम केळ्प्पिन् । १७५

पहले जो छः तापस कहे गये थे उनमे अगिरा के तीन पुत्र हुए—उचथ्य, वृहस्पति और सवर्त । १६७ अत्रि के असख्य तापस पुत्र हुए। पुत्र अक्षि से चन्द्र पैदा हुआ। पुलस्त्य का पुत्र हुआ विश्रवस्। उनके कुल मे जिनका जन्म हुआ वे पौलस्त्य कहलाते है। वानरजाति, किन्नर, किंपुरुष, तरह तरह के जानवर, सिंह, व्याघ्र, यह सब पुलह की सन्तति है। यह जो असख्य पतगसहचर विराजमान है वह सब क्रतु की सन्तान है, जान लीजिये। फिर विरिंच(ब्रह्मा)के दक्षिण अगूठे से दक्ष प्रजापति का जन्म हुआ। १७२ उनके वाम अंगूठे से एक मीठी-मीठी बात करने वाली का जन्म हुआ और वही दक्ष की पत्नी हुई जिसने पचास पुष्कराक्षिणियो (कमल के समान नेत्रवालियो) को जन्म दिया। उनमे से दक्ष ने दस धर्मराज को ही दे दी। उन निर्मलाङ्गियो के नाम सुन लीजिए। कीर्ति, लक्ष्मी, धृति,

असित सुबाहुवुं सुव्रत सुभुजयुं
सुप्रिय जाति बहु चोल्लेरुं हाहातानु १५६
हूहूवेन्नवन्तानु तुबुरुवेन्नवनु-
मिङ्ङने पतिम्मून्नु मकळर् नालु मक्कळ् १५७
मंगलगात्रियाय वरिष्ठ पेट्टिट्टुळ्ळू ।
गन्धर्व्वपरिषयुं गोक्कळु ब्राह्मणरु- १५८
ममृतं कपिल पेट्टुण्टायतेन्नु केळ्प्पू ।
अप्सरस्सुकळ् भुजगन्मारु सुपर्ण्णन्मार् १५९
चोल्लेरुंगन्धर्व्वन्मार् रुद्रन्मार् मरुत्तुकळ्
गोक्कळुं ब्राह्मणरुं देवकळसुररु- १६०
मेन्निवरुण्टाय्वन्नतोट्टोट्टु परञ्ञु ञान् ।
इनियु परञ्ञीटा केळ्क्कणमेन्नाकिलो १६१
निर्म्मलन्मारायारु तापसन्मारुण्टायि
ब्रह्माविन्मनस्सिल्निन्नेन्नल्लो परञ्ञु ञा- १६२
नेन्नतुपोले विधितन्नुटे तेजस्सिङ्कल्-
निन्नुटन् पतिनोन्नु रुद्रन्मारुण्टाय्वन्नु । १६३
जातन्मारायप्पोळ् रोदनं चेय्त मूलम्
धातावु रुद्रन्मारेन्नभिधानवु चेय्तान् । १६४
मृगव्याधनु शर्व्वन् निऋृति पुनरज-
नेकपादनुमहिर्बुध्निनयु पिनाकियुं १६५

अलंबुसा, मिश्रकेशी, विख्यात विद्युद्वर्णा, ललना, अरुणा, रक्षता, रभा, मनोरमा, असिता, सुबाहु, सुव्रता, सुभुजा, सुप्रिया, इस प्रकार तेरह पुत्रियाँ, विख्यात हाहा, हूहू और तुबुरु ये चार पुत्र भी मगलगात्री वरिष्ठा ने पैदा किये। सुना जाता है कि कपिला ने गन्धर्वजाति, गो-ब्राह्मणो और अमृत को जन्म दिया। १५८ इस प्रकार मैंने अप्सराओ, सर्पो, पक्षियो विख्यात गन्धर्वो, रुद्रो, मरुतो, गायो, ब्राह्मणों, देवो और असुरो का उत्पत्ति-प्रकार थोडे मे कह दिया है। अगर सुनना है तो और कह दूँगा। मैंने पहले ही कहा था कि ब्रह्मा के मन से छः निर्मल तापस पैदा हुए, उसी प्रकार विधि (ब्रह्मा) के तेज से ग्यारह रुद्रो का भी जन्म हुआ। जन्म लेते ही रोने के कारण धाता ने उनका रुद्र नाम रखा। वे इस प्रकार है—मृगव्याध, शर्व, निऋृति, अज, एकपाद, अहिर्बुध्नि, पिनाकी, भवन, कपाली, स्थाणु और भव। और सुनिये।

चॊल्लॆळु शरवणालयना कुमारनु-
मनलन् तन्टॆ मकनॆन्नतु धरिच्चालु- १८७
मनिलपत्नी शिवतन्मकन् पुरोवहन्
पिन्नेवनभिज्ञातगतियॆन्नरिञ्ञालुम् । १८८
प्रत्यूषस्सिनु सुतन् देवलनाय मुनि
देवलन्तनिक्कु रण्टात्मजन्मारुण्टायि ।
देवभक्तन्मारवरॆन्नयुमॆन्नु केळ्प्पू । १८९
ऎट्टामन् प्रभासनुं गीष्पतिभगिनियॆ-
प्पुष्टकौतुकत्तोटु वेट्टानॆन्नरिञ्ञालुम् । १९०
विश्वकर्म्मावुतानुमिवळ् पॆटुण्टाय्वन्नु
विस्मयमवनुटॆ कौशलं निरूपिक्किल् । १९१
ब्रह्माविन् वलमुलतन्कलुनिन्नुळ्ळू धर्म्मन्
धर्म्मजातन्मार् शमन् कामनुं हर्पन्तानुम् । १९२
ऎन्नतिल् कामन्तण्टॆ वल्लभ रतियल्लो
चॊल्लॆळु प्राप्तियल्लो शमन्टॆ पत्नि केळ् नी । १९३
नन्दियामवळल्लो हर्पन्तन्नुटॆ पत्नी
मुन्नेवन् मरीचिक्कु काश्यपन् मकनल्लो । १९४
काश्यपसुतरॆयो मुन्ने ञान् चॊन्नेनल्लो ।
द्वादशादित्यन्मारिल् सविताविन्टॆ भार्य १९५

वर्चस्वी का जन्म हुआ। फिर उस मनोहरी ने शिशिर, प्राण और मरण, इन सव को जन्म दिया। सभी ज्योति अहस् के पुत्र है। १८१-१८६ विख्यात शरवणालय (सरकडे के वन मे रहने वाले) कुमार (स्वामि-कार्तिक) अनल का पुत्र है। अनिल की पत्नी थी शिवा जिसका पुत्र था पुरोवह। जान लीजिए कि वह अभिज्ञातगति (अविज्ञातगति) थे। प्रत्यूष का पुत्र था मुनि देवल और देवल के दो पुत्र हुए। सुना जाता है कि दोनो वडे देवभक्त थे। आठवे प्रभास ने गीष्पति (बृहस्पति) की वहिन के साथ वडे आनन्द से विवाह किया। उसने विश्वकर्मा को जन्म दिया जिसका कौशल यदि विचार किया जाय, तो वहुत ही अद्भुत है। ब्रह्मा के दक्षिण स्तन से धर्म का जन्म हुआ। धर्म से शम, काम और हर्ष की उत्पत्ति हुई। उनमे काम की प्यारी स्त्री विख्यात रति हुई और जान लो कि प्राप्ति ही शम की पत्नी हुई। हर्ष की पत्नी थी नन्दी। ज्येष्ठ मरीचि का पुत्र था काश्यप। १८७-१९४ काश्यप के पुत्र मैं पहले ही

कीर्त्तियुं लक्ष्मी धृति मेधयुं पुष्टि शुद्ध
क्रिययु वुद्धि लज्ज मतियुमिवक्कुं पेर् । १७६
इरुपत्तेळिनेयु चन्द्रनु कोंटुत्तितु
निरुपिच्चवरेक्कोंण्टरिया कालभेदम् । १७७
दक्षनां प्रजापतितन्नपत्योल्पन्नराय्
चोल्कोंण्ट वसुक्कळुमुण्टायारेट्टुपेरुम् । १७८
धरनुं ध्रुवन् सोमनापनुमनिलनु-
मनलन् प्रत्यूषनुमष्टमन् प्रभासनुम् । १७९
धूम्र पेट्टुण्टाय्वन्नु धरनु ध्रुवन्तानुं
सोमनुं मनस्विनियामवळ् पेट्टुण्टायि । १८०
रसयामवळ् पेट्टिट्टापनुण्टायानल्लो
शाण्डिलि पेट्टुण्टायितनलननिलनुम् । १८१
प्रभ पेट्टुण्टाय्वन्नान् प्रत्यूषन् प्रभासनु-
मिवरिल् धरन्तन्टे तनयन् द्रविणन्पोल् । १८२
रण्टामन् हुतवहन् मून्नामन् हव्यवहन्
आपनुं वैदण्डचनुं श्रमनु श्राद्धन्तानु १८३
मुनियुं ध्रुवनुटे तनयन् कालनुमल्लो ।
सोमन्टे मकनु पेर् वर्च्चस्सेन्नरिञ्ञालुं १८४
वर्च्चस्वियवङ्कल्निन्नुण्टायितेन्नु केळ्प्पू ।
पिन्नेयुं मनोहरियामवळ् पेटुण्टायि १८५
शिशिरन् प्राणन् पिन्ने मरणनिवरेल्ला
अहस्सिन् तनयर्पोल् ज्योतिरादिकळेल्ला । १८६

मेधा, पुष्टि, शुद्धा, क्रिया, बुद्धि, लज्जा, मति, ये ही उनके नाम है । उनमें से सत्ताईस चन्द्र को दी गयी जिनके द्वारा सोचकर कालभेद जाना जा सकता है । दक्ष प्रजापति के अपत्यो (पुत्रियो) से विख्यात आठ वसुओं की उत्पत्ति हुई । धर, ध्रुव, सोम, आप, अनिल, अनल, प्रत्यूष और आठवाँ हुआ प्रभास । धूम्रा ने धर और ध्रुव को जन्म दिया । मनस्विनी ने सोम को पैदा किया । १७३-१८० रसा से आप का जन्म हुआ । शाण्डिली ने अनल और अनिल को जन्म दिया । प्रभा ने प्रत्यूष और प्रभास को जन्म दिया । इनमे धर का पुत्र है द्रविण । उसी का दूसरा पुत्र है हुतवह और तीसरा हव्यवह । आप, वैदण्डच, श्रम, श्राद्ध, मुनि और काल, ये सव ध्रुव के पुत्र हैं । सोम के पुत्र का नाम वर्चस्, उससे

केळ्क्कणमेंङ्किलिन्नु चोंल्लुवन् चुरुक्कि आ-
नाक्कुं केळ्क्केण्टी वैराग्यवरु कथयेल्लाम् । २०५
धाताविन्पोक्कल्निन्नु पिन्नेयुमुण्टाय्वन्नु
धातावु विधातावु मनुक्कळ्क्काधारमाय् । २०६
अवर्कळ्क्किरुवक्कुं भगिनि लक्ष्मी देवि-
यवळ्तन्मनस्सिल्निन्नुण्टायी तनयन्मार् । २०७
व्योमचारिकळाकुमश्वङ्ङळवरेल्लां
कामयानार्थं मनोवेगमुळ्ळवरल्लो । २०८
वरुणनुटे पत्नियायतु ज्येष्ठयल्लो
तरुणीमणियवळारु मक्कळेप्पेटाळ् । २०९
सुरयुं पिन्नेस्सुरनन्दिनियेन्नु रन्टु
वरनारिकळुमुण्टायितु मकळराय् । २१०
धाताविन् वामस्तनत्तिङ्कल्निन्नधर्म्मनु
जातनायितु वरुणात्मजन्मारुमन्नाळ् । २११
अन्योन्य तच्चु कोन्नु भक्षिच्चु नूरुपेरु-
मन्नु यौवनयुक्तनाकियोरधर्म्मनु २१२
निॠतियेन्नवळे कैक्कोण्टानवळ्पेटु
नैॠतन्मारायुळ्ळ राक्षसरुण्टाय्वन्नु । २१३
पिन्नेयुं भयन्महाभयनु मृत्युतानु-
मेन्नु मून्नधर्म्मपुत्रन्मारुण्टायारल्लो । २१४

सुनना है ? इन कथाओ को सुनने से वैराग्य हो जाता है । २०३-२०५
ब्रह्मा से मनुओ के आधार के रूप मे फिर धाता और विधाता पैदा हुए । उन दोनो की वहिन थी लक्ष्मी देवी जिसके मन से पुत्रो का जन्म हुआ । वे सव आकाशगामी घोडे थे । उनका वेग मन का जैसा था, ताकि अपनी इच्छा के अनुसार प्रयाण कर सके । वरुण की पत्नी हुई ज्येष्ठा जिस तरुणीमणि (श्रेष्ठ स्त्री) ने छ पुत्रो को जन्म दिया । तत्पश्चात् अपनी पुत्री के रूप मे दो वरनारियो सुरा और सुरनन्दिनी को जन्म दिया । धाता के बाम स्तन से अधर्म का और वरुण के पुत्रो का भी जन्म हुआ ।२०६-२११
उन सौओ ने आपस मे लडकर एक दूसरे को खा लिया । उन दिनो यौवनयुक्त अधर्म ने निॠति के साथ विवाह किया, जिससे नैॠत, अर्थात् राक्षसगण पैदा हुए । उस समय अधर्म के तीन पुत्र हुए—भय, महाभय और मृत्यु । ब्रह्मा की पुत्री ताम्रा की पुत्रियाँ हुई—क्रौंची, भासी, श्येनी, धृतराष्ट्री और शुकी ।

बाडवरूपिणियां त्वष्टियेन्नरिञ्ञालुम् ।
अवळ्पेट्टुण्टायवन्नारश्विनिदेवकळु- १९६
मवरिल्निन्नुण्टायि गुह्यकप्परिषयुम् ।
ओषधिकळुं पशुवृन्दवुमेन्नु केळ्प्पू १९७
पिन्नेयुं ब्रह्माविन्टे हृदयत्तिङ्कल्निन्नु
धन्यना भृगुमुनियुण्टायितत्तु केळ् नी । १९८
भृगुविन् मकन् कवि, कवितन्मकन् काव्यन्-
पिन्नेयुं भृगुविनु नल्लोरु मकनुण्टाय् १९९
अवनु नामधेय च्यवननेन्नाकुन्नु ।
अवन्टे पत्नि मनुतन्मकळार्षियल्लो २००
अवळ्पेट्टौर्व्वनेन्न मामुनियुण्टायवन्नु-
अम्मुनिसुतनल्लो निर्म्मलनृचीकनुं २०१
चोल्लुवन् जमदग्नियायतुमवन्मकन् ।
नालु पुत्रन्मार् जमदग्निक्कु जनिच्चतिल्
कालनाशनशिष्यन् रामन्पोलवरजन् । २०२
निन्तिरुवटितानुं भार्ग्गवगोत्रत्तिङ्कल्
सन्ततियायुण्टाय शौनकमुनियल्लो । २०३
भार्ग्गवगोत्रत्तिन्टे परप्पु चोल्लिक्कूटा
मार्ग्गवेदिकळवरेवरुमेल्लानाळुम् । २०४

कह चुका हूँ। बारह, आदित्यो मे सविता की पत्नी हुई बाडवरूपिणी त्वष्टी (त्वाष्ट्री-त्वष्टा की पुत्री संज्ञा)। उसने अश्विनीकुमारो को जन्म दिया और सारी गुह्यकजाति की तथा ओषधियो की और पशुवृन्द की उनसे उत्पत्ति हुई। फिर ब्रह्मा के हृदय से धन्य (यशस्वी) भृगु मुनि का जन्म हुआ, यह भी जान लो। भृगु का पुत्र कवि हुआ, और कवि का पुत्र काव्य। भृगु का एक और श्रेष्ठ पुत्र हुआ जिसका नाम था च्यवन। उसकी पत्नी मनु की पुत्री आर्षी थी। उसने महामुनि और्व को जन्म दिया। उस मुनि का पुत्र था निर्मल ऋचीक और मैं कहता हूँ कि उसी का पुत्र जमदग्नि हुआ। जमदग्नि के चार पुत्रो मे सबसे छोटा था कालनाशन का शिष्य परशुराम। १९५-२०२ भगवन् आप मुनि शौनक ने भार्गव गोत्र ही मे सन्तति के रूप मे जन्म लिया। भार्गव गोत्र की व्याप्ति का वर्णन करना कठिन है। वे सदा ही पथप्रदर्शक रहे है। अगर सुनना है तो सक्षेप मे कहूँगा। किसको

सुरभि पॆट्टिट्टुन्टायि रोहिणि गन्धर्व्वियुम्
सुरस पॆट्टुण्टायि नागङ्ङळ् पलतर २२५
रोहिणि पॆट्टाळतिल् गोक्कळॆ वहुविध
गन्धर्व्वियुटॆ मक्कळश्वङ्ङळऱियणम् । २२६
शुकितन् मकळाकुमनल पॆट्टुण्टायि
सकल स्वादुफलमुळ्ळ वृक्षङ्ङळॆल्लाम् २२७
कद्रुविन् मकळाय सुरसासुतयल्लो
श्येनियाकुन्नतवळरुणपत्नियायाळ् । २२८
अवळ् पॆट्टुण्टायितु संपाति जटायुवु-
मवर्कळिरुवरु रामभक्तन्मारल्लो । २२९

अंशावतारम्

तापसवरन् वैशम्पायनन्तन्नॆ नोक्कि-
ब्भूपतिवरन् जनमेजयन् चोद्य चॆय्तान् । १
देवदानव यक्षरक्षसांपरिपकळ्
केवलमवनियिल् पिऱन्नितॆन्नाकिलो २
इन्नवनिन्नवनाय् वन्नतुं पिन्नॆयॆन्त-
तॆन्नोट्टु वळिपोलॆयरुळ्चॆय्कयुं वेणम् । ३
केट्टुकॊळ्केण्ङिलॆन्नु मामुनियरुळ्चॆय्तु
केळ्क्कण निङ्ङळ्क्केङ्किल् ञानुमॊट्टॊट्टु चॊल्लाम् । ४

अनेक प्रकार के हाथियो का सुरसा से जन्म हुआ। रोहिणी ने अनेक प्रकार की गायो को जन्म दिया और जान लीजिए कि घोडे ही गन्धर्वी के पुत्र है। २१९-२२६ शुकी की पुत्री जो अनला थी उसने सभी स्वादु फलवाले वृक्षो को जन्म दिया। श्येनी तो कद्रू की पुत्री सुरसा की पुत्री है और वही जाकर अरुण की पत्नी हुई। उसने सपाति और जटायु को जन्म दिया जो दोनो वड़े रामभक्त थे। २२७-२२९

अशावतार

तापसवर वैशम्पायन को देखकर भूपतिवर जनमेजय ने प्रार्थना की, "जव देव, दानव, यक्ष और रक्षस् की जातियाँ पृथिवी मे पैदा हुई तव कौन क्या हुआ यह भी मुझको कृपया वतला दीजिए"। महामुनि ने कहा, 'इच्छा हो तो सुन लीजिए'। अगर आप सुनना चाहते है तो मैं थोड़ा-थोड़ा कह दूंगा।

ताम्रयां ब्रह्मात्मजापुत्रिकळायुण्टायि
क्रौंचियुं भासि श्येनी धृतराष्ट्रियु शुकी । २१५
क्रौंचि पॆट्टुलूकन्मार् भासिक्कु भासन्मारु
श्येनिक्कु पुत्रन्माराय् श्येनन्मार् गृध्रन्मारुं २१६
धृतराष्ट्रिक्कु मक्कळ् हंसवुं कळहंसं
चक्रवाकवुं शुकि पॆट्टिट्टु शुकन्मारुम् २१७
पद्मसंभवङ्कल्निन्नुण्टायाळॊरु नारि
कॆल्पेरु क्रोधवशयॆन्नवळुटॆ नामम् । २१८
ऒन्पतु नारिमारॆस्संभविप्पिच्चाळवळ्
ऒन्पतुपेरु पॆटारोरोजातिकळॆ । २१९
मृगियु मृगमन्द हरियु भद्रमना
मातांगि शार्दूलियु श्वेतयुं सुरभियुं
सुरसतानुमवरॊन्पतुपेक्कु नामम् । २२०
मृगि पॆट्टुण्टाय्वन्नु मृगजातिकळॆल्लां
मृगमन्दय्क्कु पुनर्ृक्षन्मारुण्टाय् वन्नु २२१
हरियामवळुटॆ मक्कळॆन्नरिञ्ञालुम्
हरिकळ् वानरन्मार्गोलांगुलन्मारॆल्लाम् । २२२
चॊल्कॊळ्ळु भद्रमन्दय्क्कुण्टायितैरावतं
मातगि पॆट्टुण्टायि मातगप्परिषकळ् २२३
शार्दूली सिंहव्याघ्रन्मारॆयु पॆटाळल्लो ।
श्वेतपॆट्टुण्टायितु श्वेताश्वगजमॆल्लां २२४

क्रौची ने उलूको को जन्म दिया, भासी ने भासो को, श्येनी के पुत्र हुए श्येन और गृध्र और धृतराष्ट्री के पुत्र हुए हस, कलहस और चक्रवाक और शुकी ने शुको को जन्म दिया। ब्रह्मा से क्रोधवशा नामक विख्यात स्त्री की उत्पत्ति हुई। २१२-२१८ उसने नौ स्त्रियो को जन्म दिया—नवो ने एक-एक जाति को पैदा किया। मृगी, मृगमन्दा, हरि, भद्रमना, मातगी, शार्दूली, श्वेता, सुरभि, सुरसा—उन नवो के ये ही नाम है। मृगी से सभी मृगजातियाँ उत्पन्न हुई। मृगमन्दा से रीछ उत्पन्न हुए। सिह, वानर और गोलांगूल हरि की सन्तान है। विख्यात भद्रमन्दा से ऐरावत उत्पन्न हुआ, मातङ्गी ने मातग जाति की उत्पत्ति की और शार्दूली ने सिह और व्याघ्रो को जन्म दिया। श्वेता से सफेद घोड़ो और हाथियो का जन्म हुआ। सुरभि से रोहिणी और गन्धर्वी पैदा हुई और

तुहुण्डनाय दैत्यन्तानल्नो सेनाबिन्दु
खमृवामसुरेणन् पापजित्ताय नृपन् १५
एकचक्राख्यासुरनायनु प्रतिविन्ध्यन् ।
वीरनां विरूपाक्षन् चित्रवर्म्मावां नृपन् १६
हरनां हरिहरनायुळ्ळोरसुरेणन् ।
पिरन्नान् सुबाहुवा भूपतिनिलकनाय् । १७
अहरनाय दैत्यन् वाल्हिकनाय नृपन्
निचन्द्रनाय दैत्यन् मुग्धकेशाख्य नृपन् १८
निसुंभमहासुरनायनु देवाधिपन्
शरभमहासुरन् पौरवनाय नृपन् । १९
कापथनाय दैत्यन् भूमनि सुपार्श्वन्पोल्
कथनामसुरेणन् पर्व्वतेयाख्यनृपन् । २०
पिन्नेयु शरभनेन्नुण्टोरु महासुरन्
मन्नवनायानवन् वाह्निकराज्यनिङ्कल् । २१
प्रह्लादनेन्नुतन्ने पेरवनाकुन्नतुं
चन्द्रनामसुरेणनायनुमृर्चीकन्नतान् । २२
मृतवानेन्नुपेरामसुराधिपनल्नो
पश्चिमननूपनेन्नोच्चपूण्टोरु नृपन् । २३
गविष्ठनाय दैत्यन् द्रुमसेनाख्यनृपन्
दैत्येशनाय मयूरन् वन्नु पिरन्नितु । २४
धात्रियिल् विश्वनेन्न पार्त्थिवश्रेष्ठनाये ।
दैतेयन् दीर्घजिह्वनायनु काशीनृपन् २५

बना और असुर एकचक्र प्रतिविन्ध्य हुआ। वीर विरूपाक्ष ने राजा चित्रवर्मा का रूप धारण किया और असुरेश हरिहर ही राजा हर हुआ। सुबाहु तो राजा तिलक के रूप में पैदा हुआ। दैत्य अहर राजा बाह्लिक बना और दैत्य निचन्द्र राजा मुग्धकेश हुआ। १३-१८ महासुर निसुंभ देवाधिप बना और महासुर शरभ राजा पौरव हुआ। दैत्य कापथ भूमनि सुपार्श्व हुआ, सुना जाता है, और असुरेश कथ राजा पर्वतेय बना। शरभ नामक एक महासुर है जो वाह्लिक देश का राजा हुआ। उसका नाम हुआ प्रह्लाद। असुरेश चन्द्र ही ऋचीक बना। सुनते हैं कि असुराधिप मृतवान् ही पश्चिम अनूप नामक राजा बना। १९-२३ दैत्य गविष्ठ ही राजा द्रुमसेन हुआ और दैत्येश मयूर ही पृथ्वी में विश्व नामक

दानवन् विप्रचित्तियायतु जरासन्धन्
हिरण्यकशिपुवा दैतेयन् शिशुपालन् । ५
प्रह्लादन्तन्टे तन्पि सह्लादनल्लो शल्यर्
वीरनामनुह्लादन् दैतेयन् धृतकेतु । ६
शिवियामसुरेशन् द्रुमना नरपति
वाष्कळनाय दैत्यनायतु भगदत्तन् । ७
दानवनयशिशरा वेगवानयश्शङ्कु
वीरनामश्वशिरा गगनमूर्द्धावन्नु ८
अञ्चुपेरौरुमिच्चु केकयराज्यत्तिङ्कल्
भूपतिवीरन्माराय् पिरन्नारेन्नु केळ्प्पू । ९
केतुमानेन्न दैत्यनमितौजस्सा नृपन्
स्वर्भानुवेन्न दैत्यनायतुमुग्रसेनन् १०
अश्वनाकिय दैत्यन् पिरन्नानशोकना-
यश्वसोदरनश्वपतियामसुरेशन् । ११
हार्द्दिक्यनायिवन्नु पिरन्नानरिञ्ञालु
वृषपर्व्वावु दीर्घप्रज्ञना नरपति । १२
वृषपर्व्वाविन् तन्पियायवन् मल्लनायान्
अश्वग्रीवाख्यन् रोचमाननां नरपति । १३
सूक्ष्मनाकियदैत्यन् सुमतियाय भूपन्
कीर्त्तिमानाय दैत्यन् वृहन्तनेन्न नृपन् १४

दानव विप्रचित्ति ही जरासन्ध हुआ और दैत्य हिरण्यकशिपु हुआ शिशुपाल। प्रह्लाद का छोटा भाई सह्लाद ही शल्य हुआ और वीर दैत्य अनुह्लाद धृतकेतु बना। असुरेश शिवि ही राजा द्रुम हुआ और दैत्य बाष्कल ही भगदत्त बना। ७ दानव अय शिरा वेगवाला अय-शंकु हुआ, वीर अश्वशिरा गगनमूर्धा बना। ये पाँचो, सुना जाता है, केकयराज्य मे भूपतिवीर के रूप मे साथ-साथ पैदा हुए। दैत्य केतुमान् राजा अमितौजा हुआ तथा दैत्या स्वर्भानु उग्रसेन बना। दैत्य अश्व अशोक हुआ और अश्व का भाई असुरेश अश्वपति हुआ। जान लीजिए कि दीर्घप्रज्ञ (बुद्धिमान्) राजा वृषपर्वा ने हार्दिक्य के रूप मे जन्म लिया। ८-१२ वृषपर्वा का छोटा भाई मल्ल हुआ और अश्वग्रीव राजा रोचमान बना। दैत्य सूक्ष्म राजा सुमति हुआ, दैत्य कीर्तिमान् राजा बृहन्त हुआ और दैत्य तुहुण्ड सेनाविन्दु बना। असुरेश खसृ ही राजा पापजित्

वीरना सुवीरनु शूरना सुबाहुवु
धीरना महावीरन् वाह्लिकन् क्रोधन्तानु ३७
विचित्रन् सुरथनु नीलनु वीरधामा
भूमिपालेन्द्रन् दन्तवक्रनु दुर्ज्जयनुं ३८
रुग्मियां नृपन् जनमेजयनापाढनु
वायुवेगनु भूरितेजस्सुमेकलव्यन् ३९
सुमित्रन् वाजिधानन् गोमुखनिवरेल्ला
कारूशाधिपन्मारा भूपतिवीरन्मार्पोल् । ४०
क्षेमधूर्त्तियु भुवि चोंल्लेरुं श्रुतायुवु-
मुद्धवन् बृहत्सेनन् क्षेमनुमग्रतीर्थन् ४१
कुहकन्मतिमानु कलिगराजाक्कन्मार् ।
इवरु क्रोधवशन्माराय सुरादिकळ् ४२
देवकनायतोरु गन्धर्व्वश्रेष्ठनल्लो ।
गुरुवां बृहस्पतितन्नुटेयंशमल्लो ४३
गुरुवा द्रोणर् भरद्वाजनन्दननेटो ।
ईशन्टे कामवुमक्कालन्टे कोपवु कू- ४४
टेशियोन्नायिच्चमञ्जुण्टायानश्वत्थामा ।
वसुक्कळ् गंगतङ्कल् शन्तनुपुत्ररायार् ४५
वसिष्ठशाप कोण्टु वासवनियोगत्ताल् ।
अवरिल्लेल्लारिलुमनुजनल्लो भीष्मर् । ४६

और क्रोध के वशीभूत असुर दुष्ट भूपतियो के रूप मे पैदा हुए। नन्दिक, कर्णवेष्ट, सिद्धाश्व, क्रीडक, वीर सुवीर, शूर सुबाहु, धीर महावीर, वाह्लिक, क्रोध, विचित्र, सुरथ, नील, वीरधामा, भूमिपालेन्द्र दन्तवक्र, दुर्जय, राजारुग्मि, जनमेजय, आपाढ, वायुवेग, भूरितेजा, एकलव्य, सुमित्र, वाजिधान, गोमुख, ये सब वीर भूपति है और कारूपाधिपति भी है। ३१-४० क्षेमधूर्ति, पृथ्वी मे विख्यात श्रुतायु, उद्धव, बृहत्सेन, क्षेम, अग्रतीर्थ, कुहक, मतिमान्, ये सब कलिगदेश के राजा है। ये सब क्रोध के वशीभूत देव आदि है। एक गन्धर्वश्रेष्ठ ही तो देवक बना। गुरु द्रोणाचार्य जो भरद्वाज के पुत्र थे देवगुरु बृहस्पति के ही अश थे। ईश (शिव) का काम और काल (यमराज) का कोप मिलकर जब एक हुआ तब अश्वत्थामा का जन्म हुआ। वसिष्ठ के शाप और वासव (इन्द्र) की आज्ञा के कारण ये आठ वसु गगा मे शन्तनु के पुत्र के रूप मे पैदा हुए।

राहुवामसुरेशन् क्रथनां नरपति ।
सुवर्ण्णनाय दैत्यन् क्रोधकीर्तियुमायान् २६
दैत्यना चन्द्रहन्ता शुकनाय नृपन्
दैतेयविनाशनन् जनकनाय नृपन् २७
विष्करनाय दैत्यन् सुमित्रनाय नृपन्
विष्करसहोदरन् पांसुराष्ट्राधिनाथन् २८
वीरनॆन्नतुतन्नॆ पेरायोरसुरेशन्
पौड्रमत्स्यकनॆन्न राजावाय् पिऱन्नतुम् । २९
वृत्रनामसुरेशन् मणिमानाय नृपन्
क्रोधहन्तावा दैत्यन् दण्डनाकिय नृपन् । ३०
क्रोधवर्द्धनदैत्यन् दण्डधारनुमायान् ।
कालकेयन्माराकुमॆट्टुपेरसुररुं ३१
चाले वन्नवनियिल् पिऱन्नार् नृपन्माराय् ।
अन्नरपतिकळ्तन् नामङ्ङळतुं चॊल्लां ३२
जयसेननुमपराजितन् तानुं पिन्नॆ
निषधाधिपन्तानु श्रेणिमानॆन्नवनु ३३
चॊल्लॆळु महीजनुमभिरूपनु पिन्नॆ
सुभद्रसेनन्तानुं बृहन्नामावुमेवं ३४
अॆट्टु भूपालन्मारुं कालकेयन्मारल्लो ।
दुष्टरां क्रोधवशगणमामसुरन्मार् ३५
दुष्टभूपतिकळायुद्भविच्चतुमॆल्लाम् ।
नन्दिकन् कर्ण्णवेष्टन् सिद्धाश्वन् क्रीडकनु ३६

पार्थिवश्रेष्ठ बना । दैत्य दीर्घजिह्व काशिराजा हुआ और असुरेश राहु ने क्रथ राजा का रूप धारण किया । दैत्य सुवर्ण क्रोधकीर्ति हुआ, दैत्य चन्द्रहन्ता राजा शुक हुआ । और दैत्य विनाशन राजा जनक बना, दैत्य विष्कर राजा सुमित्र तथा विष्कर का भाई पासु राष्ट्र का अधिपति हुआ । वीर नामक असुरेश का पौड्रमत्स्यक नामक राजा के रूप मे जन्म हुआ । असुरेश वृत्र ही राजा मणिमान् और दैत्य क्रोधहन्ता राजा दण्ड के रूप मे पैदा हुए ।२४-३० दैत्य क्रोधवर्धन राजा दण्डधार बना । ये जो आठ कालकेय असुर है वे सब पृथिवी मे राजा के रूप मे पैदा हुए । उन आठ राजाओ के नाम बतला रहा हूँ—जयसेन, अपराजित, निषधाधिप, श्रेणिमान्, विख्यात महीज, अभिरूप सुभद्रसेन और बृहन्नामा कालकेय. ये आठ राजा हुए । दुष्ट

त्रिदिवलक्ष्मियुटेयंशपोल् पाचालियुम्
धृतियुं सिद्धियुपोल् कुन्तियु माद्रितानुम् । ५७
प्रद्युम्नन् सनत्कुमाराशमेन्नतुं चोल्लु-
मनन्तमूर्त्तियुटेयंश पोल् वलभद्रन् । ५८
विष्णुतन्नुटेयंश कृष्णनेन्नरिञ्ञालु
माधवमतमरिञ्ञवुजोद्भवन्चोल्लाल् । ५९
वासवनियोगंकोण्टप्सरस्त्रीकळेल्ला
माधवपत्निकळ्पोल् पतिनारायिरवुम् । ६०
इत्तरमवरवर् पृथ्वियिल् पिरन्नतु
विस्तरिच्चुरचेय्यानेत्रयु पणियत्रे । ६१
इरुनूरध्यायमां सभवपर्व्वतन्निल्
सुर दानव गन्धर्व्वादिकळुटे जन्मम् । ६२
अंशावतरणमितोन्पतध्यायमुण्टु
वैशम्पायनमुनि चोन्नतेन्नरिञ्ञालुम् । ६३
जनमेजयनृपन्तन्नुटे चोद्यमिनि
विरवोटुरचेय्यां केळ्क्केणमेन्नाकिलो । ६४
पूरुवा नरपतिवीरना ययातितन्
पुत्रनेन्नल्लो केळ्प्पितेलयुं प्रसिद्धनाय् । ६५

पुमान (पुरुष) का मेल जो गुह्यक है वही शिखण्डी वना । कहा जाता है कि पाञ्चाली (द्रौपदी) लक्ष्मी का अश थी और धृति और सिद्धि ही जाकर कुन्ती और माद्री वनी । ५४-५७ कहते है कि प्रद्युम्न सनत्कुमार का अंश था और वलभद्र को अनन्तमूर्ति (विष्णु) का ही अश वतलाते है । श्रीकृष्ण भी विष्णु के ही अश है, यह अवुजोद्भव (ब्रह्मा) के वचन से स्पष्ट है जो माधव (विष्णु) का मत जानते थे । इन्द्र की आज्ञा से अप्सराएँ माधव (कृष्ण) की सोलह हजार पत्नियाँ हुई । इस प्रकार उनका जो पृथिवी मे भिन्न-भिन्न रूप मे जन्म हुआ उसका वर्णन करना वहुत कठिन है । देव, दानव और गन्धर्वो का पृथ्वी पर जन्म सभवपर्व मे दो सौ अध्यायो मे वर्णित है । उनमे नौ अध्यायो मे अशावतरण का वर्णन है । जान लीजिए कि वैशम्पायन मुनि ने इसी प्रकार कहा है । ५६-६३ अगर सुनना है तो राजा जनमेजय के प्रश्न का उत्तर ढग से वतलाऊँगी । यह तो प्रसिद्ध है कि नरपतिवीर पूरु ययाति का पुत्र था । उसी परम्परा

रुद्रन्मारुटेयशमायतु कृपाचार्यन्
त्रिशंकुवेन्न भूपन् पावरनायानल्लो । ४७
चोल्लेळुं मरुत्तुक्कळाय देवकळुटे-
यंशत्तालुण्टायितु सात्यकियेन्न वीरन् । ४८
गणदेवकळुटेयंशसभूतन्माराय्
द्रुपदन् विराटनु कृतवर्म्मावुमुळ्ळु । ४९
अरिष्टसुतनाय हसनां गन्धर्व्वेशन्
वरिष्ठनाय धृतराष्ट्रनेन्नरिञ्ञालुम् । ५०
कलितन्नुटेयशं दुरियोधननृपन्
पौलस्त्यन्मार्पोल् मटे नूट्पेरल्लावरुम् । ५१
धर्म्मराजनु वन्नु पिरन्नु विदुरराय्
धर्म्मन्तन्नुटेयंशमायतु युधिष्ठिरन् । ५२
वायुविनुटेयंश भीमनेन्नरिञ्ञालुम्
देवेन्द्रनुटेयशं फल्गुनन् महारथन् । ५३
अश्विनी देवकळ्तन्नंश माद्रेयन्मारु-
मग्नितन्नुटेयंशमायतु धृष्टद्युम्नन् । ५४
आदित्यनुटेयंशं कर्ण्णनेन्नरिञ्ञालु
सोमनन्दननाय सुवर्च्चस्सभिमन्यु । ५५
विश्वदेवकळुटेयंश द्रौपदेयन्मार्
स्त्रीपुंसमायिट्टुळ्ळ गुह्यकन् शिखण्डियुम् । ५६

उनमें सबसे कनिष्ठ भीष्म ही थे। ४१-४६ कृपाचार्य तो रुद्रो का अंश था, भूप त्रिशकु ही जाकर पावर बना, विख्यात देव मरुतो के अंश से ही वीर सात्यकि का जन्म हुआ। द्रुपद, विराट और कृतवर्मा ये ही गणदेवताओं के अश से पैदा हुए। अरिष्ट का पुत्र, गन्धर्वेश हस ने ही वरिष्ठ धृतराष्ट्र का रूप धारण किया। राजा दुर्योधन कलि का ही अंश था, शेष सौ पुत्र (धृतराष्ट्र के) सब पौलस्त्य (पुलस्त्यवशी राक्षस) थे। धर्मराज (यम) विदुर के रूप मे पैदा हुए और युधिष्ठिर तो धर्म ही का अश था। जान लीजिए कि भीम वायु का ही अश था, और महारथ फल्गुन (अर्जुन) इन्द्र का। ४७-५३ अश्विनीकुमारो के अश से माद्री के दो पुत्र पैदा हुए और धृष्टद्युम्न तो अग्नि का अश था। जान लीजिए कि कर्ण सूर्य का अश था और सुवर्चा (शोभायमान) अभिमन्यु सोम (चन्द्र) का पुत्र था। द्रुपद के पुत्र सब विश्वेदेवो से उत्पन्न हुए और स्त्री और

गन्धर्व्वी यवीयना भूपतितन्टे पत्नी
सन्ततियवळ् पेट्टमेट्टुपेरुण्टायवन्नु । ७
शूरनां दृढधन्वा वपुष्मान् रुद्राश्वनुं
पृषदश्वनु बृहदश्वनु गयन् मनु- ८
वेन्निवर्कळिल्वेच्चु रुद्राश्वनाय नृप-
नुन्नतस्तनियायोरप्सरस्त्रीये वेट्टान् ९
अवळ् पेट्टुण्टायवन्नु नल्लनामृचेपुवु
कक्षेपु कृपणेपु पिन्नेयस्थण्डिलेपु १०
अञ्चामन् वनेपुवुं पिन्नेयस्थलेपुवु
तेजोपु रथेपुवु धर्म्मेपु सन्ततेपु ११
ऒन्निवर् पत्तु पृथ्वीनायकन्मारुण्टायि-
तेन्नतिलृचेपुविन् नन्दननन्तिनारन् १२
त्रस्नुवुं मेघन् प्रतिरथनु द्रुमन्तानु-
मन्तिनारन्टे पुत्रनिङ्ङने नालुपेरु १३
त्रस्नुविन्निलिलनेन्नुण्टायानोरु सुतन् ।
पत्नियुमुण्टायवन्नु चोल्लेळु रथन्तरि १४
अवळ्पेटञ्चु मक्कळ् दुष्षन्तादिकळल्लो ।
दुष्पन्तन्तन्टे पत्नी लक्षणयेन्न नारि १५
लक्षणपेट्टु जनमेजयनेन्न नृपन्
चोल्कोण्ट विश्वामित्रपुत्रियां शकुन्तळ १६

रुद्राश्व, पृषदश्व, वृहदश्व, गय और मनु । उनमे से राजा रुद्राश्व ने एक सुन्दरी अप्सरा से विवाह किया । उसने निम्नलिखितो को जन्म दिया—ऋचेपु, कक्षेपु, कृपणेपु, स्थण्डिलेपु, वनेपु, स्थलेपु, तेजोपु, रथेपु, धर्मेपु, और सन्ततेपु । इस प्रकार दस राजाओ की उत्पत्ति हुई । उनमें से ऋचेपु का पुत्र था अन्तिनार, त्रस्नु, मेघ, प्रतिरथ और द्रुम, इस प्रकार अन्तिनार के चार पुत्र थे । ७-१३ त्रस्नु का इलिल नामक एक पुत्र हुआ । विख्यात रथन्तरी उसकी पत्नी हुई जिसने दुष्पन्त आदि पांच पुत्रो को जन्म दिया । लक्षणा नाम स्त्री दुष्पन्त की पत्नी हुई जिसने राजा जनमेजय को जन्म दिया । विख्यात विश्वामित्र की पुत्री शकुन्तला दुष्पन्त की ज्येष्ठ कान्ता हुई और उसने श्रेष्ठ राजा भरत को पैदा किया । १४-१७ उसी के द्वारा इस देश का नाम भारत हुआ । इस पृथ्वी में जो प्राज्ञ बुधजन हुए उनको भी खुशी से बतलाऊँगा, सुन लीजिए ।

अप्परम्परतन्निलुण्टायि दुष्षन्तनु-
मवन्टे मक्कळ् जनमेजयन् भरतनुम् । ६६
अविटेत्तन्नेयोट्टु परप्पिल् पऴयेण-
मवनीश्वरनाय भरतन् कथयेल्लाम् । ६७

पुरुवंशोल्पत्ति

ॲङ्किलो केट्टुकोॅळ्क पूरुवां नरेन्द्रनु
पङ्कजसममुखियाकिय शतरुचि १
पत्नियाय् वन्नाळवळ्मून्नु मक्कळेॅप्पेॅटा-
ळॅन्नतिल् मुन्पनल्लो शूरना प्रवीराख्य- २
नवन्टे पत्नियल्लो शैब्ययेॅन्नरिञ्ञालुम् ।
अवळ्पेॅट्टुळ्ळू नल्ल नमस्युवेॅन्न नृपन् ३
राजीवविलोचनन् सुभ्रुवुमभयदन् ।
इङ्ङने मून्नु मक्कळ् नमस्यु नृपनुण्टा- ४
यवरिलभयदन्तन्नुटे सुतरल्लो
सुन्वानु वसुनाभन् गर्गनु रम्यन्तानु- ५
मवरिल् सुन्वानुटे वल्लभ रथन्तरी-
यवळ् पेॅट्टुण्टायवन्नु वीरना यवीयनुम् । ६

में दुष्षन्त का जन्म हुआ । जनमेजय और भरत उसी की सन्तान थी । यहाँ तो राजा भरत की कथा को कुछ विस्तर से कहना अपेक्षित है । ६४-६७

पुरुवशोत्पत्ति

अगर सुनने की इच्छा हो तो सुन लीजिए । राजा पूरु की पङ्कज के समान मुखवाली शतरुचि पत्नी हुई । उसने तीन पुत्रों को जन्म दिया । उनमें शूर प्रवीर ज्येष्ठ था और उसकी पत्नी, जान लीजिए, शैब्या थी । उसने अच्छे राजा नमस्यु को जन्म दिया । राजीवलोचन, सुभ्रू और अभयद, इस प्रकार राजा नमस्यु के तीन पुत्र हुए, उनमे अभयद के पुत्र थे सुन्वान् वसुनाभ, गर्ग और रम्य । उनमें सुन्वान् की पत्नी रथन्तरी ने वीर यवीय को जन्म दिया । १-६ भूपति यवीय की पत्नी गन्धर्वी थी जिसने आठ पुत्रों को पैदा किया । वे थे शूर दृढधन्वा, वपुष्मान्,

अवळ्पेंट्टात्मजन्मारायिरमुण्टाय्वन्ना-
रवर्क्कु साख्यज्ञान नारदनुऱ्प्पिच्चान् । ४
अतिनालवर्कळु मैथुनमुपेक्षिच्चार्
मतिमान्मारायोक्क ब्रह्मचारिकळायि । ५
सन्ततियवरिल्निन्नुण्टाकाञ्ञतुमूल-
मेन्तोरुवऴि सृष्टिवक्केन्नु चिन्तिच्चु दक्षन् ६
अन्पतु पेण्णुङ्ङळेप्पिन्नेयुं जनिप्पिच्चु
वन्पोटु काश्यपनु कोटुत्तु पतिमून्नुम् । ७
पत्तु धर्म्मनु चन्द्रनिरुपत्तेऴु नल्कि-
यवरिलदितिया काश्यपपत्नि पेटि- ८
ट्टादित्यन्मारुण्टाय् लोकत्ते प्रकाशिप्पान् ।
अन्नतिल् विवस्वान्टे पुत्रनायतु यमन् ९
पेण्णुमोन्नुण्टाय्वन्नु यमियेन्नवळ्क्कु पेर्
पिन्नेयुमुण्टायितु मनुवेन्नोरु मकन् । १०
मानवन्मारेल्लारु मवङ्कल्निन्नुण्टायि ।
विप्रन्मारायारतिल् चिलरेन्नते वेण्टु ११
पृथ्वीनायकन्मारायवन्नितु चिलरेटो
वेननुं त्रस्नुतानु नरिष्यन् नाभागनु- १२
मिक्ष्वाकु करूशन् शर्य्याति पुनरिळन्
पृषध्रन् दिष्टनिवर् पत्तुपेर् नृपेन्द्रन्मार् । १३
पिन्नेयु पत्तोन्पतु नन्दनन्मारुण्टाया-
रन्योन्य युद्धं चेय्तु मरिच्चारवर्कळुम् । १४

किया। अतएव मैथुन की उपेक्षा करके मतिमान् बनकर वे सब ब्रह्मचारी हुए। १-५ उनकी सन्तति न होने के कारण दक्ष सृष्टि का उपाय सोचने लगा। दक्ष ने पचास नारियो की सृष्टि की जिनमे से तेरह को काश्यप को प्रदान किया। दस धर्म को दी गयी और सत्ताईस चन्द्र को। काश्यप की पत्नियो मे अदिति ने लोक के प्रकाशन के लिए आदित्यो को जन्म दिया। उनमे से विवस्वान् का पुत्र हुआ यम। एक लडकी भी हुई जिसका नाम था यमी। तत्पश्चात् मनु नामक पुत्र का जन्म हुआ जिससे सभी मानव पैदा हुए। भेद इतना ही है कि उनमे से कुछ ब्राह्मण हुए और कुछ पृथ्वी के नायक (क्षत्रिय) हुए। ६-११ वेन, त्रस्नु, नरिष्य, नाभाग, इक्ष्वाकु, करूश, शर्याति, इळ, पृषध्र, दिष्ट, ये

मुख्यना दुष्षन्तन्टे कान्तयाय्वन्नाळ् पिन्नॆ-
यवळ्पॆट्टुळ्ळ नल्ल भरतनॆन्न नृपन् १७
भारतमॆन्नतवन्मूलमाय् चॊल्लीटुन्नु ।
पारितिल् प्राज्ञन्मारायीटिन बुधजनं १८
केळ्क्क नी नराधिप ! चॊल्लुवन् मटियातॆ ।
दक्षनु वैवस्वतन्मनुवु भरतनु १९
पूरुवु कुरुतानुमजमीढनुमिव-
राऱुपेर्पोक्कल्निन्नुमुण्टाय नृपन्मारो २०
नूऱुनूऱायिरमल्लॆण्णुकिलङ्ङु नूनम्
पारतिल् क्षत्रियरु वर्द्धिच्चारतुमूल २१
पुण्यकळाय कथाभेदङ्ङळ् कालभेद-
मिनियुमॊरुवऴि चॊल्लुवेनतु केळ्क्क । २२

पूर्व्वराजोल्पत्ति

पत्तुपेरुण्टाय् मुन्न प्राचीनबर्हिस्सुकळ्
क्रुद्धना प्रचेतस्सिन् मक्कळॆन्नऱिञ्ञालुम् । १
मेघङ्ङळ् तम्मिलुरुम्मीटुम्पोळुण्टायवन्न-
शीकराग्नियिल् वीणु वॆन्तुपोयार्पोलवर् । २
अवरिल्निन्नुण्टायि दक्षनॆन्नतु चॊल्लु-
मवनु विरणियां नारियॆ सम्प्रापिच्चान् । ३

दक्ष, वैवस्वतमनु, भरत, पूरु, कुरु, अजमीढ, इन छः व्यक्तियों से जो राजा पैदा हुए वे अगर गिने जायँ, तो निःसन्देह सौ लाख से भी अधिक होंगे। पृथिवी मे क्षत्रियो की सख्या बढी। उसके कारण पुण्यकथाएँ भी। काल मे जो परिवर्तन हुआ, वह भी बतलाउँगा, सुन लीजिए। १८-२२

पूर्व राजओ की उत्पत्ति

पूर्वकाल मे दस प्राचीनवर्हिस क्रुद्ध, प्राचेतस के पुत्र के रूप में पैदा हुए। कहते है कि मेघो के परस्पर सघर्ष से जो अग्नि पैदा हुआ उसमे वे जल गये। कहा जाता है कि उन्ही मे से दक्ष की उत्पत्ति हुई। उसने विरणी नामक स्त्री को प्राप्त किया। उस स्त्री ने एक हजार पुत्रो को जन्म दिया जिनके हृदय मे साख्यज्ञान को नारद ने स्थिर

नष्टसज्जनुमायिग्गन्धर्व्वलोकत्तिङ्कल्
मट्टोलुमोळियाळुमायवन् नटकोण्टान् । २४
मधुराधरियुमायधरपानचेय्तु
मतियुं मरुन्नवनरुपत्तय्यायिर- २५
त्ताण्टिरुन्निट्टुमेतुमरुतिवन्नतिल्ल ।
वर्द्धिच्चु मदनमाल् रमिच्चुवसिच्चोळ । २६
विरक्तिवरुमेन्नतोरुत्तन् निनय्क्केण्ट
त्यजिच्चीटाञ्ञाल् राग वर्द्धिक्कु दिन प्रति । २७
वह्नियिलाज्यसमिदादिकळ् वोण्टुवोळ
पिन्नेयु होमिच्चोळ ज्वलिच्चुवरुमत्रे । २८
सेविच्चोळवुं नन्नाय् वर्द्धिच्चुवरुं काम
सेविच्चाल् मतियामेन्नज्ञन्मार् पऱञ्ञीटुम् २९
आवोळमकलत्तु वेटिकयोळिञ्ञेतु-
मावतिल्लनुराग वेव्विटवेणमेङ्किल् । ३०
दिव्यमानिनियायोरुर्व्वशि रमिप्पिच्चि-
ट्टुर्व्वीनायकनेतु वन्नतिल्ललभावम् । ३१
आरवार्मुलयाळामुर्व्वशि पेटिट्टव-
नारु पुत्रन्मारुण्टायवन्नितेन्नरिञ्ञालुम् । ३२

वह मृदुभापिणी उर्वशी के साथ गन्धर्वलोक चला गया। १९-२४ विवेक को त्याग कर मधुराधरी (मधुर अधरो वाली उर्वशी) का अधर पान करते हुए पैसठ हज़ार वर्प व्यतीत किये, पर तव भी विरक्ति नही हुई। वह जितना रस का आस्वादन करता रहा उतनी ही मदन की भी वृद्धि हुई। कोई यह न सोचे कि भोग करने से विरक्ति हो जायगी। जव तक राग का त्याग न किया जाय तव तक वह प्रतिदिन वढेगा। वह्नि (अग्नि) मे आज्य (घी) समिदादि (लडकी आदि) जितना कोई प्रक्षेप करता (डालता) जावे उतना ही जोर से वह जलता जायेगा। काम का जितना कोई सेवन करे उतना ही वह वढेगा। केवल अज्ञ (मूर्ख) ही कहते है कि सेवन से काम की तृप्ति हो जाती है। जहाँ तक हो सके दूर छोडने के अतिरिक्त अनुराग को अलग करने का और कोई उपाय नही है। दिव्य उर्वशी के रमाने के वाद भी राजा का अलंभाव (तृप्ति) नही हुआ। २५-३१ जान लीजिए कि मनोहर स्तनवाली उर्वशी ने उनके छ: पुत्रो को जन्म दिया। आयु, धीमान्, वसु, ग्रहायु, पाँचवाँ

पत्तुपेरुण्टायतिलेट्टामनाकुमिळन्
मुत्तणिमुलयाळाय् वन्नानेन्नरिञ्ञालुम् । १५
अक्कथ पऱयुम्पोळेत्रयुं पेरुप्पमु-
ण्टक्कयल्क्कणिणतन्नेक्कैक्कोण्टानन्नु बुधन् । १६
बुधनु पुरूरवावेन्नोरु मकनुण्टा-
यतिमानुषमाय कर्म्मङ्ङळ् चेय्तानवन् । १७
सोमवंशत्तिङ्कलेक्कादिराजावुमवन्
भूमियुं समुद्र द्वीपङ्ङळुमोक्क वाणान् । १८
दिव्यरत्नङ्ङळ् धनधान्यङ्ङळेन्नतेल्ला-
मुर्व्वीशनाकुमिळनार्ज्जिच्चानसंख्यमाय् । १९
अन्निट्टुं मतियायिल्लेन्नवनल्लो केळ्प्पू
नन्नितु लोभत्तिन्टे महिम निरूपिक्किल् । २०
ब्रह्मस्वमायुळ्ळतुमटक्कित्तुटङ्ङिनान्
कर्म्मदोषङ्ङळेन्नु कलिपच्चार् मऱयोरुम् । २१
अक्कालं सनल्क्कुमारन् मुनि शपिक्कया-
लुळ्क्कान्पिल् मदनमाल् मूच्छिच्च्चु नरपति । २२
मैक्कण्णिमणियायोरुर्व्वशितन्नेक्कण्टु
तल्क्कोङ्क पुणराञ्ञु दु खिच्चु विवशनाय् । २३

दस क्षत्रिय राजा हुए। फिर उन्नीस पुत्र और हुए जो आपस मे युद्ध करके नष्ट हुए। दस पुत्रो मे आठवॉ इल था जो सुन्दर स्तन वाली स्त्री वना। वह कथा सुनाने मे सकोच होता है। उस सुन्दरी से बुध ने विवाह किया। बुध का पुरूरवा नामक पुत्र हुआ जिसने अनेक अमानुष कार्य किये। चन्द्रवश का वही पहला राजा था और उसने पृथिवी, समुद्र, द्वीप आदि सब पर राज किया। १२-१८ पृथ्वीपति इल ने असख्य दिव्य रत्न और नि सीम धन और धान्य अर्जित किया। फिर भी कहा जाता है उसकी तृप्ति नही हुई। सोचा जाय तो लोभ की महिमा अद्भुत प्रतीत होती है। ब्रह्मस्व को भी अपने वश मे लाने लगा और ब्राह्मणो ने निश्चय किया कि कर्मदोप ही इसका कारण है। उन दिनो मुनि सनत्कुमार के शाप के कारण राजा के मन मे मदन का वेग वहुत अधिक हुआ। वह सुन्दर आँखवाली उर्वशी को देखकर उसके स्तनो का आलिङ्गन न कर सकने से दुखित हुआ। विलकुल विवेकहीन होकर

देवयानिक्कु मक्कळ् यदुवु तुर्व्वशुवु
द्रुह्युवुमनुद्रुह्यु पूरुवु शर्मिष्ठय्क्कु । ४३
अक्काल ययातिक्कु शुक्रन्टे शापं कोण्टु
दुष्कर्म्मवशाल् वन्नुनिरुन्नु जरानर । ४४
कैक्कोण्टानतु पूरु मट्टारु कैक्कोळ्ळान्जु
मक्कळिलनुजनां पूरुविनायि राज्यम् । ४५
मुख्यनायोरु तातन् चोन्नतु केट्टमूल-
मक्कथयोक्केच्चोल्किल् मटोन्निनिल्ल कालम् । ४६
सल्गुणनिधे जनमेजय नृपोत्तम !
वैशम्पायनन् पुनरिङ्डने परुन्नप्पोळ्
संशयं कनक्कान्पिलुण्टायि पारिक्षितन् । ४७
तापसकुलवररत्नमे ! जय जय
तापङ्डळिव केट्टालुण्टामो मनक्कान्पिल् । ४८
शुक्रमामुनियुटे पुत्रिया देवयानि
मुख्यनां ययातिक्कु पत्नियाय् वन्नतोर्त्ताल् ४९
ओक्कुन्निल्लेतुं प्रातिलोम्यमल्लयो मुने !
मैक्कण्णि शर्म्मिष्ठयुमसुरनारियल्लो । ५०

के तीन—द्रुह्यु, अनुद्रुह्यु और पूरु। उस समय शुक्र के शाप के कारण अपने दुष्कर्मो के द्वारा ययाति जराग्रस्त हुआ[1]। और पुत्रों के इनकार करने के वाद पूरु ने इस जरा को स्वीकार कर लिया। अतएव सवसे छोटा होने पर भी राज्य पुरु ही को प्राप्त हुआ। ३८-४५ क्योकि उसी ने पिता की प्रार्थना स्वीकार कर ली थी। वह सव कथा अगर कहने लगे तो और कुछ कहने को समय न होगा, हे सद्गुणनिधि ! नृपोत्तम जनमेजय ! जव वैशम्पायन ने इस प्रकार कहा तव पारिक्षित (जनमेजय) को यह सशय हुआ। उसने पूँछा, हे तापसकुलरत्न ! तुम्हारी जय हो ! इन कथाओ को मुनने के वाद मन मे ताप कैसे होगा ? महामुनि शुक्र की पुत्री देवयानी के साथ राजा ययाति का विवाह हो यह विचार करने से कुछ ठीक नही वैठता है ! वह विवाह क्या प्रतिलोम्य नही था ? और सुन्दरी शर्मिण्ठा तो एक असुरनारी थी ! राजा ययाति

१ देवयानी के पिता शुक्राचार्य को जव मालूम हुआ कि ययाति ने दासी शर्मिण्ठा से भी विवाह कर लिया, तव उन्होने ययाति को भी शाप दिया कि वह अपना यौवन खोकर जरावार्द्धक्यग्रस्त हो जाये।

आयुस्सुं धीमाननु वसुवुं ग्रहायुस्सु-
मञ्चामन् वनायुस्सुमाऽामन् श्रुतायुस्सुम् । ३३
इवरिलायुस्सिनु नालु पुत्रन्मारुण्टाय्
नहुषन् मुन्पिल् वृद्धशर्म्मावु रण्टामवन् ३४
आजिरायुस्सुमनेनस्सुमेन्नवक्कु पे-
रवरिलवनीशनाय्वन्नु नहुषनुम् । ३५
अवन्टे पराक्रम परवान् पणि तुलों
भूमियुं वानोर्नाटुमटक्कि वाणानवन् । ३६
भूमीन्द्रनवनैन्द्रपदवुमटक्किनान्
पौलोमीकुळुर्मुल पुल्कुवान् भाविच्चल्लो ३७
मामुनिमारेक्कोण्टु तण्टेटुप्पिच्चितव-
नगस्त्यन्तन्टे शाप कोण्टोरु पेरुंपाम्पाय् ३८
धन्यनां धर्म्मजनेक्काण्मोळं किटन्नुपोल् ।
अवनुमारुमक्कळ् यतियु ययातियु ३९
संयातियेन्नु पुनरायाति यातियेन्नु
उद्धवनेन्नुमवर्तङ्ङटे नाममेल्ला- ४०
मविटे ययातिक्कु वन्नितु राज्य पिन्ने-
यवनुं रण्टु वेट्टानेन्नु केट्टिरिक्कुन्नु । ४१
ऋषिकन्यकयाय देवयानियु पिन्ने
वृषपर्व्वाविन् मकळाकिय शर्म्मिष्ठयुम् । ४२

वनायु और षष्ठ था श्रुतायु । इनमे आयु के चार पुत्र हुए—नहुष पहला था, वृद्धशर्मा द्वितीय, आजिरायु तृतीय और अननस् चतुर्थ था । इनमे से नहुप ही राजा हुआ । उसके पराक्रम का वर्णन करना कठिन है । उसने भूमि और देवो के देश को जीतकर उन पर शासन किया । उस भूपाल ने इन्द्र के पद को भी जीत लिया और पौलोमी (शची) के शीतल स्तनो का आलिगन करना चाहा । ३२-३७ और महामुनियो से उसने बोझ उठवाया । अगस्त्य के शाप के कारण एक बड़ा सर्प बनकर युधिष्ठिर का दर्शन होने तक पडा रहा । उसके छ पुत्र थे—यति ययाति, सयाति, आयाति, याति और उद्धव—ये ही उनके नाम है । उनमे राज्य ययाति के हाथ मे आया । सुना है कि उसने दो विवाह किये । पहले ऋषि कन्या देव· और फिर वृषपर्वा की शर्मिष्ठा से । देवयानी के दो यदु और तुर्वशु अ

अन्नु देवकळ् गुरुतन्नुटे सुतन्मारिल्
मुन्नवनाय कचनुतन्नोटु चोन्नारल्लो । ६
चेन्नु नी पठिक्केण शुक्रन्टे विदय्येन्ना-
लन्नोळिञ्ञिल्ल जय नमुक्केन्नरिञ्ञालुम् । ७
अम्मुनियुटे मकळ् देवयानियेे नन्नाय्
सम्मानिच्चरिके पुक्किकीटुक मटियाते । ८
तन्मकळ् चोन्नतोळिञ्ञम्मुनि केळ्क्कयिल्ल
निर्म्मलयाय विदय पठिक्कामेन्नालेटो । ९
कचनुमतु केट्टु वृषपर्व्वावाकुन्नो-
रसुराधिपनुतन्टे नगरमकपुक्कान् । १०
शुक्रनेच्चेन्नु कण्टु वन्दिच्चु मुनीन्द्रनु
कैक्कोण्टु विद्यकळु नन्नाय् पठिप्पिच्चु । ११
शुक्रनुं देवयानियाकिय कुमारिक्कु-
मुळ्क्कान्पु तेळियुमारिरुन्नानवनुतानुम् । १२
देवयानियाल् वेण्टुमोरोरो परिकर्म्म-
मेतुमे मटियाते चेय्तीटु कचनुतानुम् । १३
अवळ्क्कुमतुमूल कचनिलोरुनाळु-
मिळक्कं वरातोरु रागवुमुण्टाय्वन्नु । १४

देवाचार्य ने उस विद्या के उपदेश को ग्रहण नही किया था। उस समय देवों ने अपने गुरु के ज्येष्ठ पुत्र कच से कहा। तुम अगर जाकर शुक्र की विद्या सीख लोगे तो हमारी भी जय होगी, यह जान लो। १-७ उस मुनि की पुत्री देवयानी का खूब सम्मान करके उसके निकटतम वन जाओ। वह मुनि अपनी पुत्री के कहने के अनुसार ही चलता है। इस प्रकार तुम उस निर्मल विद्या को सीख सकोगे। यह सुनकर कच ने असुरेश वृषपर्वा के नगर मे प्रवेश किया। तत्पश्चात् शुक्रमुनि का दर्शन किया और उनकी वन्दना की। मुनीन्द्र ने सतुष्ट होकर उसको विद्या सिखा दी। कच ने ऐसा व्यवहार किया कि शुक्र और कुमारी देवयानी दोनों प्रसन्न हो जावे। देवयानी जो-जो सेवा चाहती थी वह सब कच तुरन्त ही किया करता था। ८-१३ इसलिए देवयानी का कच के प्रति अटल प्रेम हो गया। कन्या और ब्रह्मचारी कच दोनो निरन्तर सुख से रमण करते रहे। वन-वन मे पशुवृन्द को चराकर विविध पुष्प, घास, समित आदि लेकर विना किसी के कुछ कहे ही वह लौटा करता था।

कैक्कोळ्वानवकाशमेन्ततु नराधिप-
नोक्कवे चुरुक्कमायरुळिच्चेय्तीटणम् ५१
अक्कथ नमुक्कितिल् कौतुकमुण्टु पार
सल्कथ केट्टाल् मतियाकयिल्लोरिक्कलुम् । ५२
अप्रकारङ्ङळेल्लां केळ्क्क नीयेङ्किलप्पो-
ळद्भुतमुण्टु पार दुश्चोद्यमल्लयेतुम् । ५३

देवयानीचरितम्

अङ्किलो देवासुरयुद्धमुण्टायि मुन्नं
सङ्कट तीर्त्तु जयमुण्टावानवर्क्कन्नाळ् । १
देवकळ् बृहस्पतितन्नेयाचार्यनाक्की
देववैरिकळ् शुक्रन्तन्नेयु कैक्कोण्टार्पोल् । २
देवकळोटु पोरिल् मरिक्कुमसुररे
जीविप्पिच्चीटुमल्लो शुक्रना मुनिवरन् । ३
जीवनुं देवकळ्क्कु जीवनुण्टाक्कप्पोका
देवकळतुमूल तोटारेन्नरिञ्ञालुम् । ४
मृतसंजीविनिया विद्ययुण्टल्लो शुक्र-
नतिनुळ्ळुपदेशमिल्ल देवाचार्यनो । ५

का इनके साथ विवाह करने का क्या अधिकार था ? यह सब कथा सक्षेप मे बतला दीजिए। उसमे मेरा बड़ा कुतूहल है। अच्छी कथाएँ सुनकर कभी तृप्ति नही होती। तब वैशम्पायन बोले अगर ऐसा है तो सब सुन लीजिए, कथा तो अद्भुत है और आपका प्रश्न भी बुरा नही है। ४६-५३

देवायानीचरित

पूर्वकाल मे देवो और असुरो मे युद्ध चला ताकि दुख समाप्त हो जाय और विजय हो। देवो ने बृहस्पति को अपना आचार्य बनाया और उनके शत्रुओ ने शुक्र को अपना आचार्य स्वीकार किया। युद्ध मे जो-जो असुर मरते थे उनको शुक्र मुनि जिलाते जाते थे। जीव (बृहस्पति) तो मृत देवो का पुनरुज्जीवन न कर सका। अतएव, जान लीजिए, देव हार गये। मृतसजीविनी (मृन को जिलानेवाली) विद्या शुक्र के पास थी पर

कण्टभूषणमेल्लामणियुन्नवनिलु
कण्टाल् नल्लवनिलुं कोळियुळ्ळवनिलु २५
मुण्टाकुमल्लो मधुवाणिकळ्क्कनुराग-
मुण्टल्लो कचनेवमादिया गुणमेल्लाम् । २६
अञ्ञूरु सवत्सरं कळिञ्ञु कचनेवं
मञ्जुळगात्रियुमाय् कळिच्चकालमन्नाळ् । २७
अरिञ्ञारसुरकळ् कचन्टे परमार्थम्
निरञ्ञ वैरत्तोटुमतिनालतुकालम् । २८
कानन तन्निल् पशुवृन्दवु मेच्चु कचन्
ताने निल्कुन्ननेरं कोन्नवनुटलेल्लां २९
ओरोरो तिलत्तोळं नुरुक्किकच्चेन्नाय्क्कळ्क्कु
पाराते कोटुत्तितु दुष्टरामसुरकळ् । ३०
पशुवृन्दवुमप्पोळ् तङ्ङळेप्पोन्नु वन्नार्
कचनेक्काणाय्कयाल् देवयानियुं चेन्नु ३१
करञ्ञु परिताप निरञ्ञु मनतारिल्
परञ्ञु तातनोटु वन्नीला गुरुसुतन् ३२
गोक्कळुं गोशालय्कल् तङ्ङळे वन्नारोक्क
पावर्कोण्टु नेरमल्ल सूर्यनुमस्तमिच्चु । ३३
अग्निहोत्रवु वेण्टीलेन्नोरुमूलं कचन्
वैकियतवनोरु सङ्कटं वन्नीलल्ली । ३४

मजुलगात्रि (सुदर शरीर वाली देवयानी) के साथ खेलते हुए पाँच सौ वरस वीत गये। असुरो ने प्रवृद्ध क्रोध के साथ कच के इस रहस्य को जान लिया। जव पशुओ को चराकर कच वन मे अकेला खड़ा था तव दुष्ट असुरो ने उसे जान से मार कर उसके शरीर के तिल के समान छोटे-छोटे टुकडे काटकर भेडियो को खिला दिया। पशुवृन्द आप ही घर वापस आये। कच को न देखकर देवयानी वहुत दुखित हुई और रोने लगी। तदनन्तर अपने पिता से वोली—"गुरुपुत्र (कच) अभी वापस नही आया और गाये सव आप ही वापस आ गयी। अव और प्रतीक्षा करने के लिए समय नही है, सूर्यास्त हो गया। कच को क्या अग्निहोत्र नही करना है? क्या कारण है कि विलम्व कर रहा है। उसको कोई विपत्ति तो नही हुई? अगर कच को कुछ हुआ तो मैं मर जाऊँगी इसमे कोई सदेह नही"। जव पुत्री ने इस प्रकार कहा (तव पिता ने कहा),

कन्यकतानु ब्रह्मचारिया कचनुमाय्
नन्नायि रमिच्चु वाणीटिनार् निरन्तरम् । १५
काननंतोरु पशुवृन्दत्तो मेच्चु पिन्नॆ
नानापुष्पङ्ङळ् पुल्लु समिदादिकळॆल्ला १६
कॊण्टुवन्नीटुमवन् मिण्टातॆयिरिक्कुम्पोळ् ।
कण्टिक्कार्कुळलिया देवयानियुमायि १७
कण्ट काननतोरुं नटन्नु कळिच्चीटुम् ।
कुण्ठतकूटातॆ तन् विद्ययु पठिच्चीटुम् । १८
यौवनमिरुवर्क्कुमारभिच्चिरिक्कुन्नु
दिव्यत्वमुण्टाकयाल् वृत्तियु रक्षिच्चीटुम् । १९
वेणुनादङ्ङळोटु ताळङ्ङळ् मेळङ्ङळु
वीणवायन नल्ल वक्रोक्तिविशेषवु २०
व्यग्यङ्ङळ् पलतरं ध्वनिकळिवयॆल्ला
मगलमाकुवण्ण नन्नायिप्परकयु २१
अन्योन्य कळिच्चवरिरुन्नार् पलकालम्
कन्यकतानु ब्रह्मचारियु पिरियातॆ । २२
आटीटुन्नवनिलु पाटीटुन्नवनिलु
गूढमा नारीवृत्त मरटक्कुन्नवनिलु २३
इष्टमायुळ्ळ वस्तु कॊटुक्कुन्नवनिलु-
मिष्टमायतुतन्नॆ परयुन्नवनिलुं २४

वह सुकेशिनी देवयानी के साथ विविध काननो मे घूमकर खेला करता था। साथ-साथ अपनी विद्या को भी विना आलस्य के पढता था। दोनों का यौवन प्रारम्भ हो गया था। दिव्य होने के कारण कच अपने चरित्र की भी रक्षा करता था। वेणुनादो के साथ विविध ताल और वाद्य बजाते हुए वीणावादन करते हुए, अच्छी वक्रोक्तियाँ, विविध व्यग्य और ध्वन्युक्ति मागलिक रूप मे अच्छी तरह से कहते हुए कन्य का और ब्रह्मचारी दोनो कभी अलग न होकर चिरकाल तक आपस मे खेलते रहे। १४-२२ यह प्रसिद्ध ही है कि मधुवाणियो (महिलाओ) का नाचनेवाले मे, गानेवाले मे, गूढ नारीवृत्त को छिपानेवाले मे, इष्ट वस्तु देनेवाले मे, मीठी वात कहनेवाले मे, और तरह-तरह के आभूषण पहनने वाले मे, देखने मे अच्छा लगनेवाले मे, और खेलनेवाले मे प्रेम पैदा हो जाता है, और कच मे इस प्रकार के गुण तो थे ही। कच के इस प्रकार

देवयानियु कचन् वराञ्ञनेरं परि-
देवन तुटङ्ङिनाळ् तातन्टे मुन्पिल् निन्नु । ४५
देवकळुटे गुरुपुत्रनेन्नरिञ्ञिट्टु
देववैरिकळुटे दुष्टत तन्नेयितु । ४६
जीविप्पिच्चीटुकिन्नुमेन्नतु केट्टु मृत-
जीविनिविद्यकोण्टु विळिच्चु भार्गवनुम् । ४७
वन्नील कचनेन्तु मकळे कर्म्मफलं
वन्नीटुन्नतिनेतुमावतल्लटङ्ङु नी । ४८
अन्नेल्ला पलतरं भार्ग्गवन् पऱञ्ञप्पोळ्
कन्यक देवयानि कण्णुनीर् वार्त्तु चोन्नाळ् । ४९
आदितेयाचार्यनां गीष्पतिसुतनाय-
भूदेवन्तन्नेक्कोन्न पापिकळसुरकळ् । ५०
सन्ततिनाशकूटे वरुत्तीटुवान् शपि-
च्चन्तरमतिनिल्ल केवल पिन्ने ञानु ५१
इन्नेन्टे कचनोटुकूटि ञान् मरिक्कुन्ने-
नेन्नेल्ला देवयानि चोन्नतु केट्टु शुक्रन् ५२
पिन्नेयु विळिच्चितु नन्नायि ध्यानिच्चप्पोळ्
तन्नुटे जठरत्तिल्निन्नवन् विळिकेट्टान् ५३
एतोरु वळिये नीयेन्नुटेयुळ्ळिल् पुक्के-
न्नादरवोटु शुक्रन् चोदिच्चनेरं कचन् ५४

घोलकर पीने को दिया । ३७-४४ जब कच वापस नही आया तब देवयानी अपने पिता के सामने रोने लगी । (उसने कहा,) "यह जानकर कि कच देवगुरु का पुत्र है असुरो ने ही अवश्य यह दुष्टता की है । अतएव उसको फिर जिलाइए" । यह सुनकर भार्गव (शुक्राचार्य) ने मृतसजीवनी विद्या के द्वारा कच को बुलाया । "बेटी, कच तो आता नही है । यह कर्म का फल है जिसे कोई भी रोक नही सकता । इसलिए तुम शान्त हो जाओ ।" जब पिता ने इस प्रकार बहुत कुछ कहा तब कन्या देवयानी रोती हुई बोली, "इसमे सदेह नही कि पापी असुरो ने ही देवो के आचार्य बृहस्पति के पुत्र को मार डाला है । ४५-५० मै शाप देकर उनका सततिनाश कर दूँगी, इसमे सदेह नही । फिर यह भी है कि मै आज अपने कच के साथ मर जाऊँगी" । देवयानी की इस प्रकार की बात सुनकर शुक्राचार्य ने अच्छी तरह से ध्यान करके फिर

अन्तर कचनु वन्नीट्टुकिल् मरिप्पन् आ-
नन्तरमेतुमिल्लेन्नात्मज परञ्ञप्पोळ् ३५
ऎन्तिनु खेदिक्कुन्नु मरिच्चानेन्नाकिलु-
मिन्नु आन् जीविप्पिच्चुकोळ्वन् नीयटङ्ङुक । ३६
विळिच्चु शुक्रमुनि कचनु चेन्नाय्क्कळे-
प्पोळिच्चु पुरप्पेट्टु वन्नानेन्तोरु चित्रम् ३७
ऎन्तेटो नटे वराञ्ञीटुवान मूलमेन्नु
सुन्दरगात्रि देवयानि चोदिच्चनेर ३८
पुञ्चिरिपूण्टु कचन् चोल्लिनान् परमार्थ
वञ्चिच्चु दनुजन्मार् चेय्त दुष्टतयेल्लाम् । ३९
पिन्नेयुमोरु दिन पूविनु वन पुक्का-
नन्नवनुटल् पोटिच्चाळियिलिट्टारवर् । ४०
कन्यक देवयानि तातनोटरियिच्चाळ्
अन्नु मामुनिवरन् विळिच्चुवरुत्तिनान् । ४१
पिन्नेयु मून्नामतु दुष्टरामसुरकळ्
मुन्न वन्नतुपोले वन्नुपोकरुतेन्नार् । ४२
वधिच्चु वरुत्तोक्केप्पोटिच्चु तरि पोक्कि
मृदुत्वं कलन्नरि चूर्णमाय् वशमाक्कि ४३
हृद्यमाय् गुरुविनु सेविप्पानुण्टाक्किय-
मद्यत्तिल् कलक्कि नल्कीटिनारसुरकळ् । ४४

"क्यो दुखित हो रही हो ? अगर मर भी गया है तो मै जिला दूँगा। तुम शान्त हो जाओ"। तब शुक्र मुनि ने पुकारा और कच भेडियो (के पेट) को फाडकर निकल आया। कितना आश्चर्य है! जब सुन्दरगात्री देवयानी ने पूँछा 'तुम पहले ही क्यो नही आये', तब मुस्कराते हुए कच ने परमार्थ बतला दिया—'असुरो ने वञ्चना करके दुष्टता की'। फिर एक दिन वह (कच) फूल (लाने) के लिए वन गया। तब असुरो ने उसके शरीर को चूर-चूर कर समुद्र मे फेक दिया। कन्या देवयानी ने पिता को बतला दिया और उस अवसर पर भी उसको जिलाकर बुला लिया। तीसरी बार असुरो ने फिर सोचा कि अब की वह बात न होना चाहिए जो पहले हुई थी। इसलिए उसका (कच का) वध करके, शरीर को तलकर उसे पीसकर छान कर महीन चूर्ण बना लिया और उस चूर्ण को गुरु (शुक्राचार्य) के लिए तैयार किये हुए मद्य मे

तान्मरिच्चौरुत्तनॆ रक्षिक्कुमसारनु
तान्मरियातॆकण्टु मटॊरु पुरुषनॆ ६४
जीविप्पिच्चीटुन्नतु सामर्थ्यमाकुन्नतु
जीवरक्षणत्तिनुनॆङ्किले फलमुळ्ळु । ६५
ऍन्नतिल् विशेषिच्चुमाश्रितनल्लो कचन्
निन्नुटॆयॊरु शिष्यनाकयुमुन्टु पिन्नॆ । ६६
धन्यना वृहस्पति पुत्रनाकयुमुण्टु
ऍन्नतु निरूपिच्चिट्टॊत्ततु चॆय्कयॆन्नाळ् । ६७
निन्तिरुवटितन्नॆक्कॊन्नु जीविच्चालति-
नॆन्तॊरु फलमतु चॆय्कयिल्लॆन्नु कचन् । ६८
अच्छनु कचनुमॊरन्तरं वरातॆक-
ण्टिच्छवन्नीटुन्नाकिलिज्जन्ममॊटुङ्ङील ६९
निश्चयमल्लायिकिल् ञान् मरिप्पनॆन्नुतन्नॆ
कच्चेलु मुलयाळा देवयानियु चॊन्नाळ् । ७०
आर्ज्जववचनमूर्ज्जस्वतीपुत्रि चॊन्न-
ताश्चर्यमॆन्नु कण्टु भार्ग्गव मुनितानु ७१
अप्पॊळ्ळॆयुपदेशिच्चान् मृतसजीविनि
सल्पुमानाय कचन्‌तनिक्कु मटियातॆ । ७२

बोली, "पिता जी ! आप क्यो मुझसे इस प्रकार कह रहे है ? भिक्षा देने का काम सव कोई कर सकता है, स्वय मरकर किसी की रक्षा करने वाला सारहीन है। स्वय न मरकर किसी को जिला देने मे ही सामर्थ्य है और जिलाने का फल भी तभी होता है। ५९-६५ और फिर विशेष वात यह है कि कच आपका आश्रित है और आपके शिष्यो में से एक है। ऊपर से वह धन्य वृहस्पति का पुत्र भी है। यह सव ध्यान मे रखकर आप जो उचित हो सो करे"। कच ने तव निवेदन किया—"आप महानुभाव को मारकर जीवित रहने मे क्या प्रयोजन है ? यह मैं न करूँगा"। तव मुन्दरस्तन वाली देवयानी ने कहा—"अगर पिता जी को और कच को वही इच्छा हो जायगी तो नि सन्देह यह जन्म समाप्त नही होगा। और मैं तो अवश्य मर जाउँगी"। अपनी ऊर्जस्वती पुत्री की इस वात को अद्भुत समझकर भार्गव मुनि (शुक्राचार्य) ने उसी समय सत्पुरुष कच को सकोच के बिना मृतसजीविनी विद्या का उपदेश दिया। ६६-७२ तत्काल ही दक्ष कच शुक्राचार्य के दक्षिणपार्श्व को

अेन्नेक्कोन्नसुरकळ् वरुत्तपोटिच्चुटन्
तन्नितु मद्य तन्निल् कलक्किस्सेविप्पानाय् । ५५
अेन्नु केट्टोरु शुक्रन् कोपिच्चु चोन्नानेङ्कि-
लिन्नु ञानसुररेशपिच्चु नशिप्पिच्चु ५६
पुण्यमुळ्ळमररोटोन्निच्चु वाणीटुव-
नेन्नतु केट्टु कचन् चोल्लिनानरुतेन्नाल् ५७
वन्नुपो तपस्सिन्नु नाशमेन्नरियेणम्
नन्नल्ल शपिक्कुन्नतारेयुमोरुवक्कुं ५८
दोषमिल्लात नमुक्कोक्कयुं क्षमिप्पतु
भूषणमाकुन्नतु कोपमुण्टायालाका । ५९
कोपकामादिकळे क्षमया जयिप्पवन्
तापसश्रेष्ठनेन्नु चोल्लुन्नु विद्वज्जनम् । ६०
अेन्नतु केट्टु भृगुनन्दनन् मकळोटु
चोन्नानेङ्डने वेण्डू तिरिच्चुचोल्लेण नी । ६१
ञान् मरिच्चीटुन्नाकिल् कचनेयुण्टाक्कुवन्
ञान् मरियाते कचनुण्टाकयिल्लतानुम् ६२
अच्छनेन्तेन्नोटिप्पोळिङ्डने परयुन्नु
पिच्चयेन्ततु पुनरेल्लार्क्कुं चेय्यामल्लो । ६३

कच को बुलाया । और कच ने भी पेट मे रहते हुए उनकी पुकार सुन ली । जब शुक्राचार्य ने सादर पूँछा कि तुम किस मार्ग से मेरे भीतर घुस आये तव कच ने कहा—"मुझे मार कर मेरे शरीर को तलकर और पीसकर मद्य मे मिलाकर आपको पीने को दिया गया"। यह सुनकर शुक्र क्रुद्ध हुए और वोले—"अगर ऐसा है तो आज मैं असुरों को शाप देकर नष्ट कर दूँगा और पुण्यशाली देवो के साथ रहने लगूँगा"। यह सुनकर कच ने कहा—"ऐसा मत कीजिए क्योकि आपके तप का नाश हो जायगा । किसी को भी औरो को शाप देना उचित नही है । ५१-५८ हम निर्दोषों के लिए सव क्षमा कर देना ही भूषण होगा । क्रुद्ध होने से वह वात न रहेगी । विद्वान् लोग कहते है कि जो क्रोध और काम आदि को क्षमा के साथ जीत लेता है वही तापस श्रेष्ठ है"। यह सुनकर भृगुनन्दन (शुक्र) ने अपनी वेटी से कहा अव क्या करना है यह सोचकर वतलाओ। अगर मै मरजाऊँगा तो कच को जिला दूँगा। मेरी मौत के विना कच नही जिलाया जा सकता है। (तव देवयानी

विप्रन्मार् पञ्चमहापातक प्रापिक्कुन्नु ।
शुक्रशापत्तिन्वल पोकयिल्लोरुनाळु- ८३
मायिरत्ताण्टु कचनिङ्ङने वास चेय्ति-
ट्टाचार्यनियोगत्ताल् पोवानाय् पुरप्पेट्टान् । ८४
आयतमिळियाळा देवयानियुमप्पोळ्
आतुरयायाळ् कचन्तन्नुटे वियोगत्ताल् । ८५
अन्तेटो ! तुटङ्ङुन्नतेन्ने नी वेटियात्क
सन्ततमायिरत्ताण्डोरुमिच्चिरुन्निट्टु ८६
कण्टिट्टिल्लेन्न भाव कण्टितु निनक्किप्पो-
ळिण्टलुण्टतुकोण्टु पारमेन्नुटेयुळ्ळिल् । ८७
इन्निन्नु कळिञ्ञीट्टु निन्नुटे व्रतमेन्न-
तेन्नुळ्ळिल् निरूपिच्चु पार्त्तु आनिन्न नाळुम् । ८८
इन्निप्पोळ् नीयो पोवानायल्लो पुरप्पेट्टु
अन्नोटु यात्रपोलु चोल्लुवान् भाविच्चील । ८९
निन्नोट्टु पिरिञ्ञु आनेङ्ङने पोरुक्कुन्नु
अन्ने नी परिग्रहिच्चीटण मटियाते । ९०
आभिजात्यवु वयोरूपलावण्यविद्या-
शोभयु निरूपिक्क नम्मिले रागङ्ङळुम् । ९१

भी उत्कृष्ट, तप, विद्या आदि गुणवाले ब्राह्मण भी मद्यपान करके पाँच महापातको से लिप्त हो जाते है। शुक्रशाप का वल कभी नष्ट नही होगा। एक हजार वर्ष इस प्रकार रहने के वाद गुरु की अनुमति लेकर कच जाने की तैयारी करने लगा। यह देखकर कि अव कच से वियोग होगा आयतलोचना (विशाल नेत्र वाली) देवयानी दु खित हुई और वोली—८०-८५ "अव यह तुम क्या करने लगे हो ? मुझे मत छोडना। निरन्तर एक हजार वर्ष साथ रहने के वाद भी तुम्हारी ऐसी भावना है कि मानो तुमने मुझे कभी देखा ही नहीं। इसलिए अव मेरे मन मे वडा दु ख हो रहा है। तुम्हारा व्रत[1] अव समाप्त होने वाला है यह समझकर मैने इतने दिन प्रतीक्षा की। तुम तो आज चले जाने की तैयारी मे हो, मुझ से विदा लेने तक की वात भी नहीं सोच रहे हो। तुम्हारा विरह मै कैसे सह सकती हूँ ? अव विना सकोच के मुझे परिग्रह[2] करो।

१ सजीविनी विद्या सीखने का व्रत. २. मुझ से विवाह करो।

दक्षिणपार्श्वं भेदिच्चर्प्पोळे पुरप्पेट्टान्
दक्षनां कचन् जीविप्पिच्चितु शुक्रनेयुम् ७३
दक्षिण गुरुविनु जीवनु नल्की कच-
मोक्कुमेन्नतुं परीक्षिच्चितन्नतिनाले । ७४
दुष्टरामसुरकळ् चेय्ततु फलिच्चील
निष्ठुरकर्म्मिकळ्क्कु तङ्ङळ्क्के फलङ्ङळुं । ७५
गुणमुळ्ळवरुटे गुणत्तेक्केटुप्पानाय्
गुणमिल्लात जनं चेय्ततिन् फलङ्ङळु ७६
गुणङ्ङळाये वरू मेल्क्कुमेल् गुणिकळ्क्कुं
गुणक्केटतु चेय्युन्नवर्क्कयक्प्पेटू ७७
विद्ययु पठिप्पिच्चु कीर्त्तिमानाक नीयें-
न्नोत्रयु तेळिञ्ञरुळ्चेय्तितु शुक्रन्तानुम् । ७८
इङ्ङनेयेन्टे शिष्यन्तन्नोटु चेय्तमूल
निङ्ङळुमज्ञानिकळाय् पोविनसुररे । ७९
इन्निनिक्कितु वन्न कारणं मरयव-
रिन्नुतोट्टिनिमेलिल् चेय्याय्क सुरापानम् । ८०
चेय्तीटुन्नवन् ब्रह्महत्ययुळ्ळतुपोले
जातिभ्रष्टनुमायिप्पापियाय् वरिकेन्नान् । ८१
शुक्रशापत्तालिन्नु मद्यपानत्तेच्चेय्कि-
ल्लुल्क्रुष्टन्माराय् तपोविद्यावृत्तन्माराकु ८२

फाडकर बाहर निकाला। तदनन्तर शुक्र को जिला दिया। इस प्रकार कच ने गुरु को उनके जीवन ही को दक्षिणा के रूप मे दिया। विचार करने पर यह उचित भी प्रतीत हुआ। इसलिए दुष्ट असुरो का किया सब व्यर्थ निकला। जो निष्ठुर (क्रूर) काम करते है वे ही उसका फल भोगते है। गुणियो के गुण विगाडने के लिए गुणहीन जो कुछ करते है वह गुणियो के लिए ही उत्तरोत्तर लाभ बन जाता है। हानि उन्ही की होती जो उसे करते है। शुक्र ने सजीवनी विद्या सिखलायी और बडी प्रसन्नता के साथ कच से कहा—"कीर्तिमान् हो जाओ। हे असुर! तुम लोगो ने जो मेरे शिष्य के साथ यह बर्ताव किया इसलिए अज्ञानी ही बने रहो। ७३-७९ मेरी आज यह दशा होने के कारण आज से लेकर ब्राह्मण सुरापान न करे। जो करेगा वह ब्रह्महत्या करनेवाले के समान जातिभ्रष्ट और पापी हो जावेगा"। शुक्र के शाप के कारण आज

दुष्टतयल्ला चॊल्वनॊट्टुमे केट्टालु नी
मट्टोलुमॊळियाळे धर्म्मत्तॆ निरूपिक्क ! । १०१
ऎन्नॆ नीयुण्टाक्कुवान् कारणमॆङ्किलिप्पो-
ळॆन्नुटॆ मातावॆन्नु वन्नीटुमतुकॊण्टुम् । १०२
पिन्नॆ ञान् निन्टॆ तातन् तन्नुटॆ जठरत्तिल्
निन्नल्लो पिरन्नतुमॆन्नतु निरूपिच्चाल् १०३
ऎन्नुटॆ भगिनियाय् वन्नीटु मनोरम्ये ! ।
ऒन्नुकॊण्टुमेयरुतिन्नु नी परञ्ञतु १०४
नन्नायिट्टनुग्रहिच्चीटुकॆन्नते वेण्टु ।
निन्नॆक्काण्मतिन्नु ञान् वैकात वन्नीटुवन् १०५
नामिरुवरुं कूटि कीडिच्चु वसिच्चतो
नामिरुवरुमुळ्ळकालत्तु मरक्कुमो । १०६
खेदवुमटक्कि नी यात्रयुमयय्कणं
मोदेन पिताविनॆ शुश्रूषिच्चिरिक्कॆटो । १०७
ऎन्नितु बृहस्पति नन्दनन् परञ्ञप्पोळ्
कण्णुनीर्तूकिनिन्नु देवयानियुं चॊन्नाळ् । १०८
एट्टियोरनुरागत्तोटु वन्नपेक्षिच्च-
नारितन्नभिमत नल्कातपुरुषन्मार् १०९

अगर तुम मेरा निर्मूल त्याग करोगे तो मै कैसे सह सकूँगी ? इसलिए दुष्टता मत दिखलाओ" । कच ने कहा "यह दुष्टता नही है । मेरा कहना जरा सुनलो ! हे मीठी वात कहनेवाली ! धर्म का भी ध्यान करो । अगर तुम मेरे जीने का कारण हो तो जान लो कि तुम मेरी माता हो गयी । अगर तुम इस पर विचार करोगी कि तुम्हारे पिता के पेट से मेरा जन्म हुआ तो, मनोरमे ! तुम मेरी वहन हो जाती हो । इसलिए जो विवाह की वात तुमने कही वह किसी भी प्रकार सभव नही हो सकती है । मुझ पर अनुग्रह करो, यही अव रह गया है । तुम्हे देखने मैं जल्दी आजाऊँगा, हम दोनो जो खेलते हुए इतने दिनो तक सुख से रहे वह, जव तक हम दोनो जीवित रहेगे, नही भुलाया जा सकता । १००-१०६ इसलिए खेद न करके मुझे विदा दो और प्रमोद (प्रसन्नता) के साथ पिता की परिचर्या (सेवा) करती रहो" । जव बृहस्पति के पुत्र ने इस प्रकार कहा तव आँसू गिराती हुई देवयानी ने कहा, "सुना जाता है कि जो पुरुष स्त्री की वड़े अनुराग के साथ की गयी प्रार्थना को ठुकरा देते है वे घोर

इत्तरं केट्टु कचनुत्तरमुरचेय्ता-
नुत्तमकुलस्त्रीयां देवयानियोटप्पोळ् ९२
निर्म्मलगुणाकरे ! नीतिसम्मतवरे !
सन्मृदुकळेवरे ! सारस्यपारावारे ! ९३
कन्यकाजनवरे ! कामुकमनोहरे !
धन्ये ! सौजन्याधारे ! कोरकस्तनभरे ! ९४
बन्धुरतपोधरे ! बन्धूकसमाधरे
मन्धरविलोचने ! शीतांशुबिबानने ! ९५
हन्त नी चिन्तिच्चतिनन्तरं पेरिकेयु-
ण्टेन्ततेन्नुरचेय्या पन्तोक्कुमलयाळे । ९६
निन्ने ञान् परिग्रहिच्चीटुकयेन्नुळ्ळतु
नन्नल्ल गुरुपुत्रियल्लो नी मनोहरे ! ९७
एतुमे दोषमिल्ल चेय्तालुमेन्नाळव-
ळेतुमे परयेण्टा चेय्कयिल्लेन्नु कचन् । ९८
निन्नेप्पण्टसुरकळ् रण्टुमून्नूटे कोन्ना-
रन्नु ञानल्लो निन्ने जीविप्पिच्चतुमेटो । ९९
अङ्ङनेयुळ्ळोरेन्ने निर्म्मूलं वेटिकिल् ञा-
नेङ्ङने पोरुक्कुन्नु दुष्टत काट्टीटोल्ला । १००

मेरे आभिजात्य (उच्च कुल), यौवन, रूप, लावण्य, विद्या, शोभा और हमारे पारस्परिक प्रेम का ध्यान करो"। इस प्रकार की बात सुनकर कच ने उस समय उत्तम कुल की कन्या देवयानी से कहा—८६-९२ "हे निर्मल गुणो की खान ! नैतिक स्त्रियो मे श्रेष्ठ ! शुद्ध और कोमल शरीरवाली ! सरसता का समुद्र ! कन्यकाओ मे श्रेष्ठ ! कामुकों का मन हरनेवाली ! धन्य ! सज्जनता का आधार ! सुमन-कटोरी के समान स्तन वाली ! सुन्दर तप करने वाली ! वन्धूक पुष्प के समान अधरवाली ! मन्थर लोचनवाली ! चन्द्र के समान मुखवाली ! हे कन्दुक समान स्तनवाली ! तुमने जो सोचा है वह वस्तुस्थिति से बहुत भिन्न है। सो मैं वतलादूँगा। तुम से विवाह करना, ठीक न होगा, तुम तो मेरे लिए गुरुपुत्री हो, न ?" (तव देवयानी ने कहा कि) विवाह करने मे कोई दोष नही। तव कच ने कहा, "इसकी वात तक न करो, मै नही करूँगा" तव देवयानी ने कहा, "जव पहले असुरो ने तुम्हे दो तीन वार मार डाला था तव तो मैने ही तुम्हे जीवित करा दिया था। ९३-९९ ऐसी स्थिति मे

आलस्यमुण्टाकेण्ट वैदुष्यं कलर्न्न नी
कालुष्यं कळयेणं काव्यनन्दने वाले ! । ११९
कामिच्चीटरुतेऽ नारिमार् पुरुषरे
प्रेमत्तालल्लो नाशमेल्लाक्कुं वन्नुकूटि । १२०
धर्म्मार्थकाममोक्ष नालिनु विरोधङ्ङळ्
तम्मिल् वारातकण्टु साधिच्चुकोळ्‌केयावू । १२१
धर्म्मत्तेयुपेक्षिच्चोरर्थकामङ्ङळ् वेण्टा,
धर्म्मत्तेक्कोतिच्चर्त्थकामवु कळयेण्टा । १२२
धर्म्मकामङ्ङळ् वेटिञ्ञर्त्थवुमुण्टाक्केण्टा,
धर्म्मार्त्थङ्ङळे वेटिञ्ञुळ्ळ कामवु वेण्टा । १२३
तङ्ङळिल् विरुद्धमायिरिक्कुमिव मून्नुं
मगलशीले निन्नोटेन्तिनु पऱयुन्नु । १२४
धर्म्मत्ते साधिक्कुम्पोळर्त्थकामङ्ङळुं पोम्,
धर्म्मकामङ्ङळु पोमर्त्थत्ते साधिक्कुम्पोळ् । १२५
कामत्ते साधिक्कुम्पोळर्त्थ धर्म्मङ्ङळुं पोम्,
कामिनियाय नीयुमितिनु पुऱप्पेट्टाल् । १२६
ईश्वरनेयुं गुरुवाकुं निन्नच्छनेयु
शाश्वतमाय धर्म्मतन्नेयुं पेटिक्कणम् । १२७
ञानितु चेय्कयिल्ल पोयालुमकत्तिप्पोळ्
ज्ञानमो निन्नोळमिन्नार्क्कुमेयिल्लयल्लो । १२८

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों मे जैसे विरोध न हो वैसे ही काम करना ठीक होगा। ११५-१२१ धर्म की उपेक्षा करके अर्थ और काम का सेवन न हो, और धर्म की लालसा मे अर्थ और काम न खो जायँ। धर्म और काम को त्याग कर अर्थ न पैदा करना चाहिए। तथा धर्म और अर्थ से अलग होकर काम का सेवन न करो। ये तीनो आपस मे विरुद्ध है, हे मगलशीले! तुमसे यह सव कहने की क्या जरूरत है? धर्म को साधने मे अर्थ और काम नष्ट हो जाते है, धर्म और काम अर्थ के साधन मे नष्ट हो जाते हैं। अगर कामिनी होकर तुम काम के पीछे दौड़ोगी तो उसको साधने मे अर्थ और धर्म नष्ट हो जायेगे। ईश्वर से, अपने पिता से जो तुम्हारे गुरु है, और शाश्वत धर्म से डरना चाहिए। आज ज्ञान मे तुम्हारे तुल्य कोई नही है, इसलिए मैं कुछ नही कहूँगा। अव तुम अन्दर चली जाओ" ।१२२-१२८ जब विद्वान् कच ने इस प्रकार उसकी वात का खण्डन करके कहा, तब देवयानी,

घोरमा नरकत्तिल् वीळुवोरेन्नु केळ्प्पू ।
सारनाकिय निन्नोटेन्तिनु पऽयुन्नु ११०
पाराते वेटिञ्ञु नी दूरवे पोयीटुकिल्
पारितिलिरुन्नतु पोरुमेन्नते वेण्टु । १११
पारमायुळ्ळोरनुरागवात्सल्यादिकळ्
पारमार्थ्यवुमऽिञ्ञल्लो नीयिरिक्कुन्नु । ११२
आरवारमुल पुणर्न्नीटुवान् निनक्कक-
तारिलिल्लभिरुचियेन्नु वन्नीटुन्नाकिल् ११३
आरूढतापमेल्लामारोटु पऽवू ञान्
चेरुवन् परलोकत्तिलल्ल संशयमेतुम् । ११४
चारुतकलर्न्न नी धीरत कळञ्ञालु
चारे वन्नालुमतिदूरे निल्लायक सखे ! ११५
चेरातोरवस्थ ञान् चोल्लुकयिल्लयल्लो
चेराय्वानवकाशमेन्ततु निनक्किप्पोळ् । ११६
सारसं विरियुन्न नेरत्ते पार्त्तु
पाराते मधुपानं चेय्तीटु मधुपन्मार् । ११७
वैरस्यं कलर्न्नेवं पारुष्य वाक्कु केट्टु
सारस्यं पारमुळ्ळ गीष्पतिसुतन् चोन्नान् । ११८

नरक मे गिर जाते है । तुम सारवान् हो, तुम से और क्या कहूँ ? तुम अगर जल्दी दूर चले जाओगे तो मुझे इस पृथिवी मे और नही रहना है, वस इतना ही है । मेरा असीम अनुराग, वात्सल्य आदि का परमार्थ, तुम जानते ही हो । अगर मेरे सुन्दर स्तनो का आलिगन करने की तुम्हारी कोई इच्छा ही न होगी तो मै अपना चढा हुआ दु ख किस से जाकर कहूँगी ? मै परलोक मे फिर तुम से मिलूँगी, इसमे कोई सन्देह नही । १०७-११४ अपने इस चारुतावाले धैर्य को त्याग दो, और मेरे पास आजाओ, हे सखे ! इतना दूर तो न खडे रहो । मै कोई अनुचित स्थिति न प्रस्तुत करूँगी । मुझसे न मिलने का तुम्हारा क्या अधिकार है ? भ्रमर सरोज के खिलने का समय देखते रहते है और खिलने पर झट से मधुपान कर लेते है" । विरस (अरुचिपूर्ण) इन खरी-खरी वातो को सुनकर अत्यन्त सहृदय बृहस्पति के पुत्र ने कहा, "हे शुक्राचार्य की पुत्रि ! वाले ! आलस्य पैदा न होने दो । तुम वैदुष्यवाली हो, अपने मन का कालुष्य त्याग करो । स्त्रियो को यह न चाहिए कि वे पुरुषो की अधिक कामिनी (कामना करने वाली) हो जायँ । प्रेम ही के द्वारा सव का नाश हुआ है ।

शर्म्मिष्ठयुटे दास्यम्

विण्णवरतुकाल पोरिनु कोप्पिट्टोक्के-
च्चेन्नितु वृषपर्व्वातन्नुटे राज्यत्तिङ्कल् । १
कोट्टतन्नुटे पुरत्तटुत्तु वलियोरु
काट्टिलुच्चेन्निरुन्नप्पोळ्क्काणगयितेल्लावर्क्कुं २
कण्टालेत्रयु नल्ल कन्यकाजनमोक्क-
त्तण्टलर्पोय्कतन्निल्क्कळिच्चीटुन्नतेल्लां । ३
कण्डिवार्कुळलिकळप्सरस्त्रीकळेक्काळ्
कण्टाल् नल्लवरिङ्ङुमुण्टो मटेन्नु तोन्नी । ४
वस्त्रङ्ङळळिच्चतिन् तीरत्तु वच्चुकळ-
ञ्ञत्यन्तं मतिमरन्नङ्ङनें कुळिक्कुन्पोळ् ५
चूतसायकमेटु वासवनतु कण्टु
चूतुवार्मुलमारिल् कौतुकमुण्टाय्वन्नु । ६
काणणमिवरुटे मन्मथगृहमेल्ला
नाणिच्चु पोकुमल्लो नामङ्ङु चेल्लुन्नेर ७
वायुवाय् चमञ्ञवन् पोय्कतन् करेच्चेन्नु
मायया पुटवकळ् वारियङ्ङोट्टिङ्ङोट्टु ८

शर्मिष्ठा का दास्य

उन दिनो देवगण युद्ध के लिए तैय्यारी करके वृपपर्वा[1] के राज्य मे पहुँचा। वहाँ दुर्ग के निकट के एक वडे वन मे जव पहुँचा तव सब को, एक वडे कमलसरोवर मे खेलता हुआ, तथा देखने मे वहुत अच्छा एक कन्याओ का समूह दिखला दिया। ऐसा प्रतीत हुआ कि अप्सराओ से भी देखने मे अच्छी महिलाएँ यहाँ इनके अतिरिक्त क्या हो सकती है ? जब वे कपडे उतारकर, तट पर रखकर, तथा दुनिया को भूलकर स्नान करने लगी तव कन्याओ को देखकर कामदेव के वाण से पीड़ित इन्द्र को वडा कौतूहल हुआ। १-६ (इन्द्र ने सोचा मैं) इनके मन्मथगृह देखना चाहता हूँ, यदि निकट जाऊँ तो सव लज्जित हो जायेगी, इसलिये वायु वनकर सरोवर के पास जाकर अपनी माया से वस्त्रो को इधर उधर विखराकर धूलिधूसर कर दिया। यह देखकर

१ दानवो का एक राजा और शर्मिष्ठा का पिता।

पण्डितनाय कचन् खण्डिच्चु पऱञ्ञप्पोळ्
कुण्डत्तिलाज्य वीण कणक्के देवयानि १२९
कुण्डलमण्डितमा गण्डमण्डललस-
त्तुण्डवु प्रचण्डमामुन्नतस्तनङ्ङळु १३०
कण्णुनीर्कॊण्टु ननच्चङ्ङवु वियर्त्तवळ्
कण्णुकळ् चुवप्पिच्चु देहवु विऱप्पिच्चु १३१
चण्डदीधियुटे मण्डल पॊङ्ङुं पोले
चण्डिक महिषनेक्कण्टतुनेरपोले १३२
तन्नुटे मनोरथ वाराञ्ञु कोप पूण्टु
निन्नुटे विद्ययेल्ला निष्फलमाकयेन्नाळ् । १३३
मन्मथातुरयाय निन्नुटे शापमुण्टो
धर्म्मतत्परनायोरिनिविकङ्ङेटीटुन्नु ? । १३४
अॆन्नॆ नी शपिच्चतु केट्टु आन् पोकयिल्ल
निन्नॆयुमिन्नु शपिच्चीटुवनेन्नु कचन् । १३५
निन्नुटे मनोरथमिन्नुतॊट्टोरुनाळु
वन्नुकूटाय्कयतुमॆङ्ङनेयेन्नु केळ् नी । १३६
आरणरायुळ्ळोरुं मामुनिमारुं निन्नॆ-
यारुमे कैक्कॊळ्ळाय्कयेन्नुर चेय्तु कचन् । १३७
विण्णवर्पुरं पुक्कु विद्ययु पठिप्पिच्चान्
वन्नितानन्दं तन्टे तातनु देवकळ्क्कुम् । १३८

कुण्डलो से भूषित अपने कपोलो के पास विराजमान नासिका को और प्रचण्ड तथा उन्नत स्तनो को आंसुओ से भिगोती हुई, पसीने से तर होकर, आंखे लाल करती हुई, उदीयमान सूर्यमण्डल के समान कॉपती हुई, महिषासुर को देखती हुई चण्डिका के समान, अपने मनोरथ की पूर्ति न होने के कारण जिसमे घी डाला गया हो ऐसे अग्निकुण्ड के समान क्रुद्ध होकर बोली, "तुम्हारी सारी विद्या व्यर्थ हो जाय" । १२९-१३३ तब कच ने कहा, 'कामदेव के वश मे आकर दिया हुआ तुम्हारा यह शाप मुझ धर्मतत्पर पर थोड़े ही लगेगा ? तुम्हारा शाप सुनकर मै न चला जाऊँगा, तुमको भी मै आज प्रतिशाप दूँगा। तुम्हारा मनोरथ कभी न पूरा होगा। क्यों ? यह भी सुन लो। न ब्राह्मणो मे और न मुनियो मे कोई तुम से विवाह करे"। यह कह कर कच देवो की पुरी चला गया और उसने अपनी विद्या औरो को पढा दी। उसके पिता और देवगण बड़े प्रसन्न हुए।१३४-१३८

अॆन्नतु केट्टीलॆन्नु भाविच्चु शर्म्मिष्ठयु
तन्नुटॆ सखिकळुमाय् नटन्नीटुन्नेरं १९
पिन्नालॆ देवयानि चॆन्नाळितरुतल्लो
तन्नीटुकॆन्टॆ वस्त्रं मटतु तरामल्लो । २०
अङ्ङळ्क्कु निङ्ङळुटॆ पुटवयुटुक्करु-
तिङ्ङु तन्नीटवेणमॆन्नतु केट्टनेर २१
शर्म्मिष्ठ कोपत्तोटे चॊल्लनाळटङ्ङु नी
निन्महिमकळॆल्ला आनरिञ्ञिरिक्कुन्नु । २२
अॆन्नुटॆ तातन्तन्टॆ कारुण्यमुण्टाकया-
लिन्नेट अॆळियुन्नु नीयॆन्नतरिञ्ञालुम् । २३
नेरिय पुटवयुं कुरियु कॊप्पुमॆल्ला-
मॆरॆ नी तिळय्क्किलो पोकेणं मरयत्तु । २४
वेणमॆन्नाकिलतुमुटुत्तु पोन्नीटु नी
ञानिप्पोळितु विटुत्तीटुकयिल्लयॆन्नु । २५
इत्तरमधिक्षेपिच्चॆल्लयु भर्त्सिक्कया-
लुळ्ळत्तळिरिरुवर्क्कुं चॊरियोरनन्तर २६
दुष्टतपॆरिय शर्म्मिष्ठयु सखिमारु
पॆट्टन्नङ्ङॊरु पॊट्टक्किणट्टिल् तळ्ळियिट्टार् । २७
पुत्रियॆक्काणाञ्ञतिदु.खपूण्टॊरु शुक्र-
नत्तल्पूण्टुरचॆय्तु धात्रियोटतुनेरम् । २८

अपनी सखियो के साथ चलने लगी, मानो उसने कुछ सुना ही न हो, तब देवयानी उसके पीछे-पीछे गयी और बोली—"यह ठीक नही, मेरा वस्त्र दे दो, दूसरा मै वापस करूँगी। हम लोगो को तुम लोगो का वस्त्र पहनना नही चाहिए। इसलिए वापस करो"। यह सुनकर १४-२१ शर्मिष्ठा क्रुद्ध होकर बोली—"तुम दब जाओ। मै तुम्हारा सब बडप्पन जानती हूँ। मेरे पिता के कारुण्य (दया) के कारण ही तो तुम आज इतना घमंड दिखला रही हो, यह जान लो। अगर तुम अधिक जलोगी तो तुम्हारी एक महीन साडी, तिलक और सब सजावट नष्ट कर दूँगी। अगर भला चाहती हो तो उसी को पहन कर चली आओ। मै तो अब इस वस्त्र को नही उतारूँगी"। जब इस प्रकार की अपमानजनक फटकार के कारण दोनो के हृदय कलुषित हो गये तब अतिदुष्टा शर्मिष्ठा और उसकी सखियो ने उसे झट से एक अन्धे कुएँ मे ढकेल दिया। २२-२७

धूळिप्पिच्चतु कण्टु वेगत्तिल् कन्यकमा-
रोळत्तोरोरुमिच्चु वेगत्तिल् करेरिनार् । ९
आरुमिल्लटुत्तेन्नु कलिपच्चुतन्नेयवर्
दूरप्पोयोरु वस्त्रमोटिच्चेन्नेटुत्तप्पोळ् १०
कण्टिवारकुळ्ळारेक्कण्टु कौतुकपूण्टो-
रण्टर्नायकन्तानुमिण्टल्पूण्टितु तुलोम् । ११
पुण्डरीकेषु परवशमानसनाया-
खण्डलन्तानु परिखण्डितधैर्यत्तोटु- १२
मिन्नल्ला युद्धत्तिनु पोक नामेन्नु पर-
ञ्ञिन्द्रादिदेवगणमात्ममन्दिरं पुक्कार् । १३
धूळियेप्पिन्नेयेङ्ङु काणाञ्ञनेरमवर्
कूळिकळ् काळियुमाय्पोकयेन्नोर्त्तु भीत्या १४
तङ्ङळतङ्ङळ्क्कुळ्ळोरु वस्त्रङ्ङळेटुत्तुको-
ण्टङ्ङोट्टिङ्ङोट्टु नोक्कियुटुत्तीटुन्ननेरं । १५
सुन्दरि देवयानितन्नुटे पुटवयु-
मन्नेरमरियाते सभ्रम कोण्टु बलाल् १६
चेन्नेट्टुत्तुटुत्तितु शर्म्मिष्ठयतुकण्टु
निन्नोरु देवयानि चोल्लिनाळतुनेरम् । १७
ऐन्नुटे वस्त्रमल्लो नीयुटुत्ततुमेटो
निन्नुटे वस्त्रमिता मट्टेतु तन्नीटण । १८

कन्याएँ घबडाकर झट से सब एक साथ तट पर निकल आयी । यह समझकर कि निकट मे कोई नही है जब वे दूर उडे हुए वस्त्रो को बटोरने लगी तब कन्याओ को देखकर कौतुक से भरा देवो का नायक इन्द्र बहुत पीडित हुआ । पुण्डरीको को देख मोहित होकर आखण्डल (इन्द्र) अपना धैर्य खो बैठा और बोला—"हम लोग आज युद्ध के लिए न जायँ" । यह कहकर इन्द्र आदि अपने घर चले गये । ७-१३ जब धूल उडना बन्द हो गयी थी तब उन कन्याओ ने अपने साथी और परिचारको के साथ चले जाना निश्चित करके अपने-अपने वस्त्रो को लेकर डर के मारे इधर-उधर देखती हुई पहनना प्रारम्भ किया । शर्मिष्ठा ने घबराहट के कारण विना जाने सुन्दरी देवयानी के वस्त्र लेकर झट से पहन लिये । उसे देखती हुई देवयानी ने उस समय कहा—"जो वस्त्र तुम ने पहन लिये वे मेरे है । तुम्हारा यह है, इन्हे लेलो और दूसरे वापस करो" । जब शर्मिष्ठा

कूपत्तिल् वीणुपोवानेन्तवकाशमेन्नु ।
भूपति चोदिच्चप्पोळ् कन्यक तानु चोन्नाळ् । ३९
असुराचार्यनाय शुक्रन्टे मकळ् ञानो
मधुराकृते देवयानियेन्नल्लो नामम् । ४०
कूपत्तिल्वीळ्वानुळ्ळ कारणमतु चोन्नाळ् ।
तापसकुलवरबालिकयतुनेरम् । ४१
पुञ्चिरिकलर्न्नवळ् कुन्पिट्टुनिन्नुचोन्नाळ्
अेन्चेविकळुमिप्पोळोन्निनुण्टुळरुन्नु । ४२
कूपत्तिल् पतितयाय् तापत्तिल् मुळ्कुमे-
न्नापत्तु केटुत्तोरु मानुषनाय भवान् ४३
आरेन्नतरिकयिलाग्रहमुण्टु पारं ।
नेरे चोल्लुकवेणमेन्नतु केट्टु नृपन् ४४
मन्दहासवुं चेय्तु कन्यकारत्नमाय
सुन्दरीतन्नोटनुनन्दिच्चु चोल्लीटिनान् । ४५
अहितकुलकालनाकिय नरवीरन्
नहुपन्तन्टे मकनाकिय ययाति ञान् । ४६
अतुकेट्टोरु दीर्घश्वासवुंपूण्टु चोन्नाळ्
मतिनेर्मुखियाय देवयानियुमप्पोळ् । ४७

कारण है, तुम्हारा गोत्र और नाम क्या है, परमार्थ मे तुम्हारे पिता कौन है, और तुम्हारी माता कौन है, तथा कुएँ मे गिर जाने का क्या कारण है?" राजा के पूँछने पर कन्या ने उत्तर दिया—"असुरो के आचार्य शुक्र की मै पुत्री हूँ। हे सुन्दर आकृतिवाले ! मेरा नाम देवयानी है"। तापस-कुल की उस बालिका ने कुएँ मे गिरने का कारण भी कहा। ३६-४१ वह हाथ जोडकर मुस्कराती हुई बोली—"मेरे कान अब एक बात के लिए तरस रहे है। मेरी यह जानने की बडी इच्छा है कि आप कौन मानव है, जिन्होने कुएँ मे गिरी हुई और दु खो मे डूबी हुई मेरे दु.ख को दूर किया ? जल्दी बतलाइए"। यह सुनकर भूपति मन्द हास करके उस सुन्दरी कन्यारत्न के प्रति सहानुभूति दिखाते हुए बोले—"मै शत्रुओ के अन्तक, नरवीर नहुप का पुत्र ययाति हूँ"। यह सुनकर दीर्घ निश्वास लेती हुई चन्द्रमुखी देवयानी ने कहा—"आपने जो मेरा हाथ पकड़ा था[1] उसमे कोई

---

1 कुएँ से उद्धारने के समय।

कण्टील कुळिप्पानाय् पोयोरु मकळेआन्
कण्ट कावुकळ्तोरु नी चेन्नु तिरयणम् । २९
अन्नेरमवळ् नीळेत्तिरञ्ञुतुटङ्ङिनाळ् ।
अन्नल्लो ययातियुं चेन्नितु नायाट्टिनाय् ३०
भूपति दाहकोण्टु पानीयं तिरयुम्पोळ्
कूपं निर्ज्जलं चारत्ताम्मारु कण्टानतिल् ३१
काणायि मिन्नल्पोले कन्यकारत्नतन्ने ।
क्षोणीपालकन्तानुमेट्टुत्तु करेट्टिनान् । ३२
कोपवुमसूययुं प्रीतियु विनयवु
भूपतितन्निलनुरागवुं विरयलुं ३३
प्रेमवुं मन्दाक्षवु वाष्पवु प्रलापवु
कामतापवुं कमनीयवेषवुमुळ्ळिळल् ३४
पेटियुमभिमानहानियु दु.खङ्ङळु
कूटिनिन्नीटुन्नोरु कन्यकतन्नेक्कण्टु ३५
कूटलर्कुलकालनाय मन्नवन् चोन्नान् ।
पाटलाधरिकुलमौलिमालिके बाले । ३६
निर्म्मले ! निरुपमशीले ! चोल्लेन्नोटिप्पोळ् ।
निन्मनोदु.खत्तिन्टे मूलवुं पिन्ने निन्टे ३७
गोत्रवुं पेरुं निन्टे तातनारेन्नुं पर-
मार्त्थं चोल्लम्मयाराकुन्नतेन्नतुमेल्ला ३८

पुत्री को न देखकर दु:खित शुक्र ने उसकी धात्री (धाय) से कहा—"मेरी पुत्री नहाने गयी थी पर अभी तक दिखाई नही दे रही है। तुम जाकर उसे झाडी-झाडी मे ढूँढो"। तदनुसार धाय उसे सब जगह ढूँढने लगी। उन दिनो राजा ययाति शिकार खेलने निकला था। जब प्यास के कारण जल ढूढ रहा था तब एक निर्जल कुआँ दिखाई दिया, और उसमे बिजली के समान एक कन्यारत्न दिखाई पडा। राजा ने उसको पकडकर कुएँ से बाहर निकाला। कोप, असूया, प्रीति, विनय, भूपति के प्रति अनुराग, कम्पन, प्रेम, लज्जा, आँसू, प्रलाप, काम का ताप, कमनीयवेष, आन्तरिक भय, अभिमान की हानि तथा दु:ख आदि भावो से युक्त उस कन्या को देखकर, २८-३५ शत्रुओ के नाशक राजा ययाति ने कहा—"हे लाल अधरवालियो की मौलिमालिके (शिरोमणि)! बाले! निर्मले! निरुपमशीलवाली! अब मुझे यह बतलाओ कि तुम्हारे दु:ख का क्या

मुन्नमे नीळे नटन्नन्वेपिच्चवळु पो-
न्नन्नेर देवयानितन्नेयु कण्टाळल्लो । ५८
ऎन्तुण्णी मकळे नीयिङ्ङने निल्कुन्नतु ?
अन्तियुमायि तातन् काणाञ्ञु खेदिक्कुन्नु । ५९
पोरे नीयेन्नु केट्टु देवयानियु चोन्नाळ् ।
पोरिकयिल्ल दनुजाधिपन् पुरत्तिङ्कल् ञान् । ६०
शर्म्मिष्ठ चेय्तोरु दुष्कर्म्मवुमरियिच्चाळ्
धर्म्मिष्ठयायोरूर्ज्जस्वतीतन्नुटे मकळ् । ६१
अक्कथयोक्कच्चेन्नु शुक्रनोटवळ् चोन्नाळ्
दु.खिच्चु शुक्रन्तानुमप्पोळे पोन्नुवन्नान् । ६२
ऎन्तय्यो निनक्कु निर्व्वन्धमुण्टायतोरु-
वन्धमेन्तिवटिनु वन्धुरकळेबरे ! ६३
वन्धुक्कळोटु वैर चिन्तिच्चीटरुतल्लो
सन्तत वणक्कं नल्लन्धत्व कळञ्ञालुम् । ६४
पैन्तेनिन्मोळियाळे पोरिक वैकिक्केण्टा ।
पन्तेलुंमुलयाळुमुत्तरमुरचेय्ताळ् । ६५
ऎन्तिनु तातनेन्नोटित्तर पऱयुन्नु
वन्धुशत्रूदासीनभेदमोट्टरिवन् ञान् ६६

यह सब कहकर राजा चले गये और वह कन्या एक वृक्ष के नीचे खड़ी रही। (धाय) जो पहले ही उसे ढूँढती चलती थी उसने अब देवयानी को देखा। (और कहा—)"बेटी ! तुम इस तरह यहाँ क्यो खडी हो ? सांझ हो गयी है, तुम्हे न देखकर तुम्हारे पिता दु खित है, चली आओ"। यह सुनकर देवयानी ने कहा—"मै दानवो के राजा के नगर मे नहीं आऊँगी, तत्पश्चात् शर्मिष्ठा ने जो दुष्कर्म किया था उसको धर्मिष्ठा ऊर्जस्वती[1] की पुत्री देवयानी ने बतलाया। उसने (धाय ने) जाकर सारा किस्सा शुक्र को सुनाया। तब दुखित होकर शुक्र तत्काल ही वहाँ पर चले आये। और कहा—"यह तुम क्या आग्रह कर रही हो ? हे कोमल शरीरवाली ! इसका कारण तो बतलाओ। ५७-६३ बन्धुओ के साथ वैर तो सोचना ही न चाहिए, हर अवस्था मे विनय ही ठीक है, अपना अन्धत्व त्याग करो। मधुमय बात करनेवाली ! साथ चलो, अब विलम्ब मत करो"। तब कन्दुकसमानस्तनवाली देवयानी ने उत्तर दिया—"पिता जी ! आप

[1] प्रियव्रत और बर्हिष्मती की पुत्री और शुक्र की पत्नी।

कुट्मल्लेतुमेन्टे कै पिटिच्चतिनिनि
मट्टोरु पुरुषने कोळ्ळरुतेन्नेयुळ्ळु । ४८
विधिच्चवण्णंतन्ने वेट्टुकोळ्ळुकवेण्टु
विधिच्चतोऴिञ्ञुण्टो वरुन्नु निरूपिच्चाल् । ४९
ॲन्नतु केट्टु नृपन् कन्यकयोटु चोन्नान्
मन्नवर्क्कुचितमल्लिन्नु नी चोन्नतेंटो । ५०
मानवाद्यष्टादशस्मृतिकळेल्लाटिलु-
मानुलोम्यमे विधियुळ्ळतु वेदत्तिलु । ५१
प्रातिलोम्यत्तिनेऱ्ऱ्पापमुण्टेन्नु नून
पातिव्रत्यत्तिल् निष्ठ पारमुण्टेन्नाकिलुम् । ५२
अन्योन्यमनुरागंकोण्टतु चेय्तीटिलु
निन्नुटे जनकनेप्पेटिक्कवेणमल्लो । ५३
पावकायुधकाकोळादिकळेल्लाटिलु-
मावोळं पेटिक्केणं विप्ररे मरोहरे । ५४
इच्चोन्न वस्तुक्कळालोरुत्तन् मुटिञ्ञीटु
निश्चयं मऱ्ऱयवर् वंशमे मुटिच्चीटुम् । ५५
नीयिनियकत्तूट्टु पोयालुं मुनिकुल-
नायकनाय शुक्रन्तानिप्पोळ् वरुमुन्पे । ५६
ॲन्नेल्लामुरचेय्तु मन्नवन्तानुं पोयान्
कन्यक दुखिच्चोरु वृक्षत्तिन्कीऴु निन्नाळ् ।५७

दोष नही है। इतना ही है कि अब मैं और किसी पुरुष को स्वीकार नही कर सकती। विधि के अनुसार अब विवाह कर लेना, यही शेष रह गया है। विचार किया जाय तो विधि ने जो चाहा वही अन्त मे होगा"। ४२-४९ यह सुनकर राजा ने उस कन्या से कहा—"जो बात तुमने कही वह क्षत्रियो के लिए अनुचित है। मनुस्मृति आदि अठारह स्मृतियो मे अनुलोम विवाह का ही विधान है। वेदो मे भी यही स्थिति है। पातिव्रत्य मे निष्ठा होने पर भी प्रतिलोम विवाह में नि सन्देह बडा पाप है। माना कि यह विवाह परस्पर अनुराग के कारण होगा, फिर भी तुम्हारे पिता से तो हमको डरना चाहिए। हे मनोहरे! पावकायुध, काकोळ विष आदियो से भी अधिक ब्राह्मणो से डरना चाहिए। क्योंकि ऊपर कही वस्तुएँ एक ही व्यक्ति का नाश करती है, पर ब्राह्मण तो नि सन्देह सारे वश का नाश कर देते है। मुनिकुल के नायक शुक्र के आने से पहले तुम कृपया अन्दर चली जाओ"। ५०-५६

ळीश्वरमतमेल्लामार्क्कुपोलऱियावि-
ताश्चर्य तोन्नीटुवानेन्तितिलितुकालम् । १३
केळ्क्कणमल्लो भवानारेन्नेतिनिक्किप्पोळ्
भोष्कलल राजश्रेष्ठनेन्नु तोन्नीटु कण्टाल् । १४
ॲङ्किलङ्ङनेतन्ने भूपति ययाति, ञान्
पङ्कजविलोचने नहुषात्मजनल्लो । १५
ॲङ्किल् नीयेन्ने वेट्टुकोळ्ळुक मटियाते
सङ्कटमेल्ला तीरु सशयमुण्टाकेण्टा । १६
मन्नवनतु केट्टु पिन्नेयुमुरचेय्तु ।
कन्यकातिलकमे ! धन्ये ! केळ् मनोरमे ! १७
सिद्धमल्लयो निनक्केतुमे शुक्रन्तन्टे-
पुत्रियेन्नेनिक्केतुं तोन्नीतिल्लिप्पोळेटो । १८
पतिता परभार्या भगिनी सगोत्रयु
विधवाकुलंतन्निलेऱिय नारितानु १९
सर्व्वसङ्गङ्ङळिलु निवृत्तिवन्नवळु
सर्व्वलोकङ्ङळालु निन्द्ययायुळ्ळवळु २०
तन्नुटे मकन् वेट्ट तन्वियु स्वतन्त्रयु
ऑन्नु कॊण्टीटुमाऱिल्लेन्नल्लो विधियिप्पोळ् । २१

हुई, यह मुझे बतलाओ ।" यह सुनकर देवयानी हँसती हुई बोली—७-१२ "ईश्वर का अभिप्राय कौन जान सकता है ? आप को यह आश्चर्य क्यो लगता है ? मुझे तो यह जानने की इच्छा है कि आप कौन हैं ? दिल्लगी नही, आप देखने में एक राजवर लगते है ।" राजा ने कहा "यह ठीक है, हे कमलनयने ! मैं राजा ययाति हूँ, नहुष का पुत्र ।" अगर ऐसा है है तो बिना सकोच के मुझसे विवाह करो । मेरा सब दुख दूर हो जायगा । इसमे सन्देह नही ।" राजा ने यह सुनकर फिर कहा—हे कन्यकातिलक ! धन्ये ! मनोरमे ! सुनो । १३-१७ "तुम तो शुक्र की पुत्री हो, इसलिए तुम्हारे लिए सब सिद्ध ही है । मुझे तो अब कुछ भी नहीं सूझता । पतिता, परस्त्री, बहिन, अपने गोत्र की स्त्री, जो नारी विधवा हो गयी हो, जो सभी सङ्गो से विरक्त हो गयी हो, जो सारे संसार की निन्द्य हो, अपनी पुत्रवधू तथा स्वतन्त्र स्त्री, इनमें कोई भी, विधि के अनुसार, स्वीकार योग्य नही है । १८-२१

महिमयिल्ला, कुलमाका, वृत्तियुं पोरा
सहिया शीलवुमेन्नुळ्ळुळ्ळवरुटे ६७
गृहत्तिलिरिक्कयिल् मरिक्कतन्ने नल्लू ।
सहिच्चीटुमो निन्दावचनादिकळेल्ला । ६८
पापिकळोटुचेर्न्नु वसिक्कुन्नवर्क्कळ्क्कु
पापमेयुण्टाय्वरू केवलमरिञ्ञालुम् ६९
शुक्रनुं देवयानियाकिय पुत्रितानु
सूक्तिकळ् परञ्ञतु विस्तरिच्चुरचेय्किल् ७०
अन्नयु पेरुप्पमुण्टक्कथयिरिक्कट्टे
युक्तिकळ् मुट्टि शुक्रन्तनिक्कु नीतिकोण्टुम् । ७१
अन्मकळोटुकूटे ञानेन्नु कल्पिच्चुटन्
अम्मुनि वृषपर्व्वातन्नोटु यात्रचोल्वान् ७२
चेन्नप्पोळवस्थकळसुराधिपनरि-
ञ्ञेन्नाल् वेण्टुन्नतेन्तेन्नप्पोळे काल्कल्वीणु । ७३
अन्नुटे मकळ्कूटातिविटेयिरिक्कयि-
ल्लिन्नवळ् वरुन्नाकिल् मट्टोन्नु वेण्टतिल्ल । ७४
अन्नेरमसुरेन्द्रन् तान्तन्ने देवयानि
तन्नुटे काल्कल्वीणान् कात्तुकोळ्केन्नुतन्ने ७५

मुझसे इस प्रकार क्यो कह रहे है ? वन्धु, शत्रु, उदासीन, इन तीनो मे भेद मै जानती हूँ। जिसकी कोई महिमा न हो, जिसका कुल ठीक न हो, जिसका वर्ताव अच्छा न हो, तथा जिसका शील सहा न जा सकता हो, ऐसे के घर मे रहने से मर जाना ही ठीक है। निन्दा के वचन कैसे सहे जा सकते है ? जो पापियो के साथ रहते है जान लीजिए उनको भी पाप ही प्राप्त होता है" । ६४-६९ इस प्रकार शुक्र और उसकी पुत्री देवयानी ने आपस मे जो वाते की वे अगर विस्तार से कही जायँ, तो किस्सा वहुत वड़ा हो जायगा। अस्तु। शुक्र को और कोई नैतिक युक्ति न सूझी। "मै अपनी पुत्री का साथ न छोड़ूँगा" ऐसा निश्चयकरके मुनि जी वृषपर्वा से विदा लेने गये। तव असुराधिप सारी स्थिति समझकर गुरु के पैरो पडे और वोले, "अव क्या करना चाहिए ?" शुक्र ने उत्तर दिया कि अपनी पुत्री के विना मै यहाँ नही रहूँगा। वह मेरे साथ आजाय, मुझे और कुछ नही चाहिए। तव असुरेन्द्र स्वय देवयानी के पैरो पड़े और वोले, "मेरी रक्षा कीजिए" । ७०-७५ तव उसने कहा—

तन्नुटॆ मकळ्तन्निल् वात्सल्यमुण्टाकयाल्
अन्नॊरु विधियवनन्नेरमुण्टाक्कियान् । ३२
गीष्पतिसुतनुटॆ शापवु नृप्निलॆ-
त्तात्पर्यवुमवळ्क्कुण्टायनेर मुनि ३३
पुत्रियॆ ययातिक्कु कॊटुत्तु विशेपिच्चु
पृत्थ्वीनायकनोटु पिन्नॆयुमॊन्नु चॊन्नान् । ३४
आपद्धर्म्मङ्ङळ्क्केतु दोपवुमुण्टाकयिल्ल
शापत्तॆत्तटुक्कयुमरुतु मटॊन्निनाल् । ३५
शर्म्मिष्ठयाकुमसुराधिपपुत्रियोटु
नर्म्मङ्ङळ्पोलु परञ्ञीटरुतॊरुनाळुम् । ३६
ऎन्नुटॆ मकळ् चॊल्लुवण्णं नीयवळॆयु
नन्नायि रक्षिच्चीटुकॆन्नते परयेण्टु । ३७
आयतमिळियाळा देवयानियु पुन-
रायिर दासिकळु शर्म्मिष्ठतानुकूटि ३८
पोयितु ययातियां भूपतिराज्य तन्निल्
पोयितु परिताप देवयानिक्कुमप्पोळ् । ३९
उम्मरप्पूङ्काविलॊरालयमतु तीर्त्तु
शर्म्मिष्ठतन्नॆयतिल् नन्नायि वच्चु नृपन् । ४०

सुनाया। राजा के सव चरित सुनकर भार्गव मुनि (शुक्र) ने कहा—"अगर कन्या आप से प्रेम करती है तो व्रह्म और क्षत्र का आपस मे सम्वन्ध हो सकता है।" अपनी पुत्री के प्रति वात्सल्य होने के कारण शुक्र ने उस अवसर पर एक नया विधान वना लिया। वृहस्पति के पुत्र (कच) के शाप और कन्या के राजा के प्रति प्रेम के कारण उस समय मुनि ने अपनी पुत्री को ययाति को दान किया। तदनन्तर भूपति से यह विशेप वात भी कही—२७-३४ "आपद्धर्म का अनुसरण करने से कोई दोप न होगा। और किसी वात से शाप की वाधा भी न होना चाहिए। असुराधिप की पुत्री शर्मिष्ठा के साथ कभी परिहास तक न करना। मेरी पुत्री जैसा कहे वैसे ही उसकी रक्षा करते रहे। मुझे इतना ही कहना है।" दीर्घलोचना देवयानी अपनी एक हजार दासियो और शर्मिष्ठा के साथ राजा ययाति के राज्य मे चली गयी। उस समय देवयानी के सभी दुख दूर होगये। ३५-३९ राजा ने आगे के उद्यान मे एक भवन वनाया और उसमे शर्मिष्ठा को अच्छे ढग से वसाया।

निन्नें ञान् कैक्कोळ्ळुवानेङ्ङनें परन्जु नी–
युन्नतान्वयत्तिङ्कलुळ्ळ कन्यकयल्लो । २२
शर्मिष्ठतन्नेक्कण्टु मन्मथशरमेट्टु
तन्मनमळिञ्ञोरु मन्नवन्चोन्ननेर २३
मन्नवन्तन्नेक्कण्टु मन्मथविवशयां
कन्यक देवयानि पिन्नेयुमुरचेय्ताळ् । २४
ब्रह्मक्षत्रङ्ङळ् तम्मिलेतुमे भेदमिल्ल
सम्मतमेनिक्कुमोट्टूरियप्पोकुमेटो । २५
कल्याणमोटुमेन्नेक्कैक्कोळ्किल् निनक्किप्पोळ्
नल्लतु वन्नुकूटुमिल्ल सशयमेतुम् । २६
ऍङ्किल् निन्नच्छन्तन्ने तन्नालामेन्नु नृपन्
पङ्कजमुखियोटु चोन्नप्पोळवळ् चोन्नाळ् । २७
सङ्कटं वेण्टा भवानामल्लो पुनरतु
शङ्कयुमुण्टा सूक्ष्मधर्म्मत्तेयरियाञ्ञाल् । २८
काव्यनां पिताविनेयप्पोळे वरुत्तियाळ्
सेव्यनां मुनितन्नेक्कुम्पिट्टु नृपतियुम् । २९
नि.शेषविशेषङ्ङळच्छनोटरियिच्चाळ्
तच्चरितङ्ङळ् केट्टु भार्ग्गवन्तानुं चोन्नान् । ३०
कन्यकाजनमुळ्ळिल् तङ्ङळेक्कामिच्चीटिल्
अन्योन्य ब्रह्मक्षत्र तङ्ङळिल्क्कोळ्ळामल्लो । ३१

तुम ने कैसे कह दिया कि मै तुम से विवाह करूँ ? तुम तो एक उच्चवश (ब्राह्मणवश) की कन्या हो ?" जव शर्मिष्ठा को देखने से मदन के वश मे आकर ढीले मन से राजा ने इस प्रकार कहा तव राजा को देखने से मदन के वश मे आकर कन्या देवयानी ने फिर कहा—"ब्रह्म और क्षत्र मे कोई भी भेद नही है। मै भी कुछ अच्छा मत रखने वाली हूँ। मुझसे विवाह करके अगर मुझे स्वीकार करोगे तो तुम्हारा भला होगा, इसमे कोई सन्देह नही।" १८-२६ जव राजा ने उस कमलमुखी से कहा—"अगर तुम्हारे पिता ही दान करेगे तो मैं 'हाँ' कहता हूँ" तव उसने उत्तर दिया—"आप चिन्ता मत करे, आप का वन्धन स्वीकार है। सूक्ष्म धर्म को न जानने से शङ्का हो जाती है।" फिर अपने पिता को तत्काल ही बुलाया। राजा ने सेवा करने योग्य मुनि को हाथ जोड़ा। देवयानी ने सारा समाचार अपने पिता को

दन्तशोधनचेय्तु बन्धूकसमाधरि
पन्तोक्कुं कोङ्कत्तटत्तिङ्कल् कुङ्कुमंचार्त्ति ६
भगियिल् कुऴियिट्टु कुङ्कुमतिलकंतो-
ट्टगजन्तळपोले पूङ्कुळलऴिच्चिट्टु ७
निर्म्मलमायुळ्ळोरु वस्त्रवुमुटुत्तुंकों-
ण्टबुजमिऴिकळिलञ्जनमतुं चेर्त्तु ८
कुण्डलषण्ड मिन्नु गण्डमण्डलत्तिङ्कल्
कुण्डलिफणपोले पत्तिक्कीटतु चेर्त्तु ९
स्वर्ण्णभूषणङ्ङळुमोक्कवेयणिञ्ञोरु
कण्णाटितन्निल् मुखपद्मवु नोक्कि नोक्कि १०
नल्लोरु पुरुषने चिन्तिच्चु चिन्तिच्चुळ्ळि-
लुल्लास चेन्नोरशोकत्तेयु चारिनिन्तु ११
दु.खिक्कुन्नतुनेर मन्नवन्तानेतन्ने
मय्कण्णियुटे मुन्पिल्च्चेन्नितु बलालप्पोळ् । १२
अन्नुटे भर्त्तावाकेन्नवळुमपेक्षिच्चाळ्
निन्नितु विषण्णनाय् मन्नवन्तानुमप्पोळ् । १३
निन्नोटुकूटि रमिक्कुन्नतिल्लेन्नुतन्ने
मुन्नमे देवयानितन्नोटु चोन्नेनल्लो । १४
सत्यत्ते लघिक्करुतेन्नतुकोण्टुं पिन्ने-
युत्तमनाय शुक्रन्तन्निलेप्पेटिकोण्टु- १५

कुकुम लगाकर सुन्दर ढग से कुकुम का तिलक लगाकर अगज (कामदेव) के पल्लव के समान अपने केशो को खुले डालकर, एक निर्मल वस्त्र पहनती हुई, अपने कमलसदृश नयनो पर काजल लगाकर चमकते हुए कपोलो पर सर्पो के फणो के सदृश कुण्डलो को पहनती हुई, सुवर्ण के आभूषण लगाती हुई, एक आदर्श (दर्पण) मे अपना मुख बार-बार देखती हुई, एक आदर्श पुरुष का ध्यान करती हुई, बड़े उल्लास के साथ एक अशोकवृक्ष के सहारे दु.खित खड़ी थी, तब राजा स्वय कज्जलनयना के समक्ष झट से खडे हो गये । ५-१२ कन्या ने प्रार्थना की—"मेरे पति हो जाइए" । राजा तो विपण्ण होकर खड़े थे । और बोले—"मैने पहले ही से देवयानी से प्रतिज्ञा की है कि मै तुमसे नही रमूँगा । एक तो इस लिए कि प्रतिज्ञा का उल्लघन न करना चाहिए और दूसरे उत्तम शुक्राचार्य के डर से मै आज संकोच करता हूँ । हे मनोहरे ! यही सत्य है । तुम्हारे प्रति तो मेरा देखने के दिन से ही

मुन्नमे कण्टनाळिलुण्टायोरनुरागं
मन्नवनकतारिल् वाच्चितु दिन प्रति । ४१
अन्नालुं देवयानितन्नोटु कूटिच्चेर्न्नु
नन्नायि रमिच्चितु भूपतिवीरन्तानुम् । ४२
अक्कालं यदुवेन्नु तुर्व्वशुवेन्नु रण्टु
मक्कळुमुण्टायवन्नु मुख्यन्मारवर्कळुम् । ४३

ययातियुटे शर्म्मिष्ठा प्राप्ति

इङ्ङने चेन्नुकालमायिर सवत्सर-
मगजतापवुपूण्टिरुन्नु शर्म्मिष्ठयुम् । १
ऒन्निच्चु वळर्न्नोरु तन्नुटे सखि नन्नाय्
मन्नवनोटु कूटि क्रीडिक्कुन्नतु कण्टु । २
तानोरु पुरुषनेक्काणाते गुहतन्निल्
मानसताप पूण्टु मारमाल् पिटिपेट्टु । ३
नाळ्तोरुमिरिक्कुन्नोळक्कालमवळुटल्
चेतोमोहनमेन्ने चोल्लावू काणुन्तोरुम् । ४
अन्नवळृतुधर्म्म प्रापिच्चु कुळिच्चुव-
न्नुन्नतस्तनङ्ङळु मेल्लवे नोक्कि नोक्कि ५

उसके प्रति जो अनुराग देखने के पहले ही दिन ययाति के मन मे उत्पन्न हो गया था वह प्रतिदिन बढता गया। फिर भी भूपति ने देवयानी के साथ मिलकर यथेष्ट आनन्द भोगा। उन दिनो देवयानी के यदु और तुर्वशु नामक दो पुत्रो का जन्म हुआ। वे ही मुख्य थे। ४०-४३

ययाति की शर्मिष्ठा-प्राप्ति

इस प्रकार एक हजार वर्ष बीत गये। शर्मिष्ठा तो मदन का ताप अनुभव करती रही। उसने अपने बचपन की सखी को राजा के साथ खेलते देखा। वह किसी पुरुष को न देखती हुई, मानो एक गुहा मे बैठकर दु ख का अनुभव करती हुई, मार (मदन) के वश मे फँसी हुई दिन काटती थी। फिर भी उसका शरीर देखने मे मोह उत्पन्न करने वाला था। १-४ एक दिन जब वह अपने मासिक धर्म के बाद स्नान करके, अपने उन्नत स्तनो को आनन्द से देखती हुई, अपने दन्तो का मार्जन करके, बन्धूक पुष्प के समान अधरवाली, कन्दुक सदृश स्तनो पर

पेटवार्न्तुपद्रयावतुमेटो पुन-
रेत्रयु दिव्यनायोरादित्यनेन्नपोले २६
वन्नोरु नरनेन्ने मेल्लवे तळुकिना-
नेन्नतेयरिञ्ञु आनेन्नवळ् पद्रञ्ञप्पोळ् २७
नन्नायितेङ्किलेन्नु पोयितु देवयानी ।
पिन्नेयुं नृपनवळ् काणाते पुणर्न्नीट्टु २८
नन्दनन्मारु पाटे मून्नुपेरुण्टाय्वन्नु ।
चन्द्रार्क्कानलतेजस्त्रितयमेन्नपोले २९
द्रुह्युवुमनद्रुह्यु पूरुवेन्नतुमल्लो
मुख्यन्माराकुमवर् मूवर्क्कु नामङ्ङळु । ३०
अङ्ङने चेल्लुकालं क्षोणीन्द्रनोरुदिन-
मगनारत्नमाय देवयानियु तानु ३१
ओन्निच्चु मधुपानं चेय्तितु वळिपोले
तन्नेत्तान् मद्रन्नितु देवयानियुमप्पोळ् । ३२
मदिरापान चेय्तुमधरपान चेय्तु
मदनन् तेरुतेरे वलिच्चु कूरम्पेय्तु ३३
मनसि मद कलर्न्नोरनुरागं चेय्तु
कनिविनोट्टु गाढ वार्कोङ्क तळुकियु ३४

एक अद्भुत वात है ! तुमने कैसे वच्चे को जन्म दिया ?" तव शर्मिष्ठा ने उत्तर दिया—"मैं क्या वताऊँ ! एक अत्यन्त दिव्य और आदित्य के सदृश पुरुप मेरे पास आया और उसने मेरा आलिगन किया। मैं इतना ही जानती हूँ।" तव देवयानी ने कहा—"यह वात अच्छी रही !" और चली गयी। उसके वाद भी राजा ने पत्नी से छिपकर कई वार शर्मिष्ठा का स्पर्श किया। २१-२८ शर्मिष्ठा के तीन पुत्रो का जन्म हुआ, मानो चन्द्र, सूर्य और अग्नि के तीन तेज हो। द्रुह्यु, अनुद्रुह्यु, पूरु—ये ही उन तीन श्रेष्ठ पुत्रो के नाम थे। जव समय इस प्रकार वीत रहा था तव एक दिन महिलाओ मे रत्न देवयानी के साथ राजा ने प्रचलित प्रथा के अनुसार मधुपान किया। देवयानी अपने को विलकुल भूल गयी। दोनो ने मदिरापान किया, अधरपान किया, जिससे उन दोनो की मदनव्याधि अतिशीघ्र वढने लगी। २९-३३ मन मे मदमिश्रित अनुराग चढ गया, प्रेम से स्तनो का आलिगन हुआ, दोनो ने आनन्दामृत के सागर मे गोता खाया, मुख से काम का पसीना वहुत वहा, पीन स्तनो

मिन्नितु मटिच्चुन्नान् निर्णयं मनोहरे ।
निन्निलुळ्ळनुराग कण्टन्नेयुळ्ळतल्लो- १६
येन्नतु केट्टु चोन्नाळ् शर्म्मिष्ठायतुनेरम् ।
ओन्नुण्टु परयुन्नु ञानिप्पोळितु केळ्क्क- १७
योरोरो धर्मङ्ङळु परञ्ञु वाळुम्पोळु
नारिमारोटु वेळि परयुम्पोळु पिन्ने १८
तन्नुटे जीवनिप्पोळ् पोमेन्नु तोन्नुम्पळु-
अन्नतु पोले धनमोक्केप्पोयीटुम्पोळु १९
मेन्तिव नालिङ्ङ्कलुमसत्यं परञ्ञालु
ओन्नुमे दोषमिल्लयेन्नु केळियुमिल्ले ? । २०
विस्तरिच्चवळ् चोन्नतेन्तिनु परयुन्नु
सिद्धिच्चाळ् भूपालनेयन्नवळ्क्कोन्ने वेण्टु । २१
शर्म्मिष्ठय्कन्नुतन्ने गर्भवुमुण्टाय्वन्नु
निर्म्मलनायिट्टोरु पुत्रनुमुण्टाय्वन्नु । २२
अन्नुतोट्टुटन् पिन्नेशर्म्मिष्ठतन्निल् चित्त
नन्नायि रमिच्चितु भूपनु दिनं प्रति । २३
अन्नोरु दिनं वन्नु शर्म्मिष्ठतन्नेक्काणमान्
मन्नवनुटे पत्नियाकिय देवयानी । २४
अप्पोळे कुमारनेक्काणायि तेजस्सोटु-
मद्भुतं तोळि ! चोल् नी पेटवारेङ्ङने नी ? २५

अनुराग है ही।" यह सुनकर शर्मिष्ठा ने कहा—"एक बात तो मुझे कहना है, सो सुन लीजिए। तरह-तरह के परिहास के वचनो के अवसर पर, स्त्रियो के साथ विवाह की बात करने के समय, अपने प्राण ही के चले जाने की सभावना होने पर, तथा सारी सम्पत्ति का नाश होने की स्थिति आने पर—इन चार अवसरो पर अगर असत्य बोला जाय तो कोई भी दोष नही है। यह तो आपने सुना ही होगा ?।" १३-२० उसके कथन को विस्तर से बतलाने मे क्या प्रयोजन है ? इतना कहना पर्याप्त होगा कि उसको राजा प्राप्त हुए। शर्मिष्ठा को उसी दिन गर्भ हो गया। तदनन्तर एक निर्मल पुत्र का भी जन्म हुआ। उस दिन से लेकर राजा का चित्त शर्मिष्ठा ही मे प्रतिदिन अधिक लग गया। एक दिन राजा ययाति की पत्नी देवयानी शर्मिष्ठा को देखने आयी। तब उसे एक तेजस्वी कुमार दिखाई पड़ा। उसने कहा—"हे सखी ! यह

इत्तरं देवयानि चोन्नतुकेट्टु नृपन्
भर्त्सिच्चु लिंगहीनन्मारे कावलु वच्चान् । ४५
शर्मिष्ठयोटु कूटे नर्म्मवु चेय्तु नन्नाय्
मन्मथपरवशनाय् मरुवीटु कालं ४६
मद्यपानवु चेय्तु मत्तमा चित्तत्तोटु-
मुद्यानभुवि पोवानुद्योगं कैक्कोण्टप्पोळ् ४७
पोकण वनक्रीडय्क्केन्नितु देवयानि ।
भोगार्त्थं भूपालनु कूटवे पुऱप्पेट्टान् । ४८
चेन्नितु शर्मिष्ठतन्नाश्रमत्तिङ्कलप्पोळ्
नन्नायि कीडिक्कुन्न पैतङ्ङळतम्मेक्कण्टु । ४९
अच्छनेक्कण्टु चिरिच्चक्कुमारन्मारेल्ला-
मच्चंनादिकळ्चेय्तु चारत्तु वरुनेर ५०
अच्चिरिपूण्टुनिन्नु भूपतितिलकनु-
मच्चरितङ्ङळ् कण्टु चोदिच्चु देवयानी । ५१
अच्छनेङ्ङोट्टु पोयि चोल्लुविन् पैतङ्ङळे
पिच्चकळुण्टाक्कुवान् पोयितो वनङ्ङळिल् ? । ५२
मेल्लवे चूण्टिक्काट्टिक्कोटुत्तु पैतङ्ङळु-
मल्लल्पूण्टोरु देवयानियु कोपत्तोटे ५३
दृष्टियु चुवप्पिच्चु देहवु विऱप्पिच्चु
पोट्टिच्चङ्ङेरिञ्ञितु भूषणङ्ङळुमेल्लाम् । ५४

देवयानी की इस प्रकार की बाते सुनकर राजा ने उसे डाँटा और उस पर नपुसकों का पहरा लगाया। तदनन्तर शर्मिष्ठा के साथ परिहास करते हुए, कामदेव के वश मे आकर, मद्यपान से मत्त होकर जब उद्यान मे जाने की तैयारी कर रहे थे तब, देवयानी ने कहा कि मैं वनक्रीडा के लिए जाना चाहती हूँ। राजा भी भोग करने के लिए उसके साथ गये। ४१-४८ तब देवयानी शर्मिष्ठा के आश्रम पहुँची और वहाँ उसने सुख से खेलते हुए बालको को देखा। अपने पिता को देखकर जब बालक हँसते हुए और वन्दना करते हुए निकट आये तब राजा भी लज्जासहित हँसने लगे। उनका यह व्यवहार देखकर देवयानी ने पूछा—"तुम्हारे पिता कहाँ गये ?" बालको बतलादो! क्या वन मे भिक्षा का सग्रह करने गये ?" तब बालको ने उगली से अपने पिता का निर्देश किया।

आनन्दामृतवारिराशियिल् मुळ्ळुकियु-
माननादनगस्वेदामृतमोळ्ळुकियु ३५
पीनवक्षोजङ्ङळिल् कळभमिळ्ळुकियु
मानसत्तिङ्कलेटमानन्द पेरुकियु ३६
चेतस्सु कनिञ्ञुटळ् पुल्कियु पलतर
वेधस्सिन् विनोदङ्ङळेलयु चित्रं चित्रम् ३७
आटियुं पाटियु कोण्टाटियुं नयनङ्ङळ्
वाटियु कौतूहल तेटियुं मारप्पट- ३८
कूटियुं मदनन्टे चापमां चिल्लीवल्लि-
कोटियुमिरुवरुं कूटि वाणीटुन्नेर ३९
भूपतिवीरनोटु देवयानियुं चोन्नाळ्
तापसबुद्ध्या मद्यव्याकुलचेतस्सोटुम् । ४०
अन्तणनाय भवानेन्तिनु वन्नतिप्पोळ्
वन्धमेन्तटवियिल् वरुवान् परञ्ञालुम् । ४१
चेन्तार्वाणार्त्ति भवानेङ्कल् वर्द्धिच्चालति-
नन्तर पेरिकेयुण्टन्धात्मावायुळ्ळोवे । ४२
नेरत्तु पोय्क्कोळ्क नी दूरत्तु मटियाते
चारत्तिङ्ङणयाते चारित्रभगं वन्नाल् ४३
पेटिक्कवेणमल्लो भूपति ययातिये
माटोत्त कुळुर्मुल पुल्कुवान् वशमल्ला । ४४

में सुगन्धि द्रव्य लगाया गया, मन मे असीम आनन्द का अनुभव हुआ, मन पिघल गया और तरह-तरह की लीलाएँ हुई। वेधा (ब्रह्मा) के विनोद अत्यन्त विचित्र होते है। जब दोनो नाचते हुए और गाते हुए विचरने लगे तो उनकी आँखे मन्द हो गयी, उनका कौतूहल वढा, मार (मदन) की सारी सेना एकत्रित हुई और उसने उनकी भौहरूपी धनुष का प्रयोग किया। उस समय देवयानी ने मद्यपान से व्याकुल होकर राजा को कोई तापस समझकर कहा। ३४-४० "आप ब्राह्मण होकर यहाँ कैसे आये ? यहाँ इस वन मे आने का क्या कारण है, वतलाइए। अगर आप अन्धात्मा होकर मेरी काम-व्यथा को वढाएँगे तो स्थिति वहुत विगडेगी। आप जल्दी दूर चले जाइए ताकि आप मेरे निकट न आ जायँ। अगर चरित्रभंग हो जायगा तो भूपति ययाति से वहुत डरना होगा, अव मेरे उन्नत स्तनो का आलिगन करना असभव है।"

सत्यपुरुषनल्ल मर्त्यकुत्सितनत्रे
सत्त्ववुद्धियु निनक्कोट्टुमिल्लेन्नुवन्नू । ६४
धर्म्मत्तेयुपेक्षिच्चु दासियेयपेक्षिच्च
दुर्म्मतियाय भवानिप्पोळ् जरानरऽ ६५
वन्नुपोकसुरस्त्रीतन्नोटुकूटेच्चेर्न्नु
नन्नायि रमिक्कण नरच्चु कुरच्चु नी । ६६
अेन्न शापत्तेक्केट्टु मन्नवनुरच्चेय्ता-
निन्नु ञानधर्म्मत्तेच्चेय्ततिल्लङ्ङ्ञालुम् । ६७
रम्ययायिरिप्पोरु नारि वन्नपेक्षिच्चाल्
सम्मतिक्केन्नवरुं धर्म्मिष्ठन्माक्कु नूनम् । ६८
भ्रूणहत्ययुमिवनुण्टाकुमल्लेन्नाकिल्
ज्ञानमिन्निवयेल्लां ञान् परञ्ञीटेणमो । ६९
देवयानियिलुमेन् कौतुकं पोयीलेतु-
मावोळमनुग्रहिच्चीटुक मटियाते । ७०
अेङ्किलो पुत्रन्मारिलाक्कानुं पकर्न्नु नी
भगियिल् परिपूर्ण्णयौवनं कैक्कोण्टालुम् । ७१
अेन्नु मामुनिवरन् चोन्नतु केट्टु नृप-
निन्नतु नल्कुन्नवनेन्नुटे राज्यमेल्लां ७२

तुम एक सच्चे पुरुष नही हो, एक कुत्सित पुरुष हो, यह सिद्ध हुआ कि तुममे सत्त्ववुद्धि विलकुल नही है। दासी की लालसा से धर्म की उपेक्षा करने वाले तुम जैसे दुर्मति को अभी-अभी जरा और पलित (सफेद वाल) हो जाय ? आप असुर-स्त्री के साथ रहिए और वुड्ढे होकर खाँसते-खाँसते उसके साथ रमिए।" यह शाप सुनकर राजा ने कहा—"जान लीजिए कि मैने कोई अधर्म नही किया। अगर कोई सुन्दर स्त्री आकर प्रार्थना करे तो अवश्य धर्मिष्ठ लोगो को भी कभी स्वीकार करना पडता है, नही तो भ्रूणहत्या का पाप लग जाता है। इन वातो का ज्ञान आपको है ही, मुझे तो नही वताना है। ६२-६९ देवयानी के प्रति मेरा प्रेम तनिक भी कम नही है। अत विना संकोच के मुझ को अनुग्रह दीजिए।" तव (मुनि ने कहा) "इस स्थिति मे आप अपने पुत्रो मे से किसी को यह जरा देकर वदले मे उसका सपूर्ण यौवन ले लीजिए।" महामुनि का यह वचन सुनकर ययाति ने कहा—"जो मुझे (अपना यौवन) देगा मेरा सारा राज्य उसका है। पर वह मेरे प्रति दूसरी वात (यौवन खो जाने)

कलिपच्चवण्णंवरुमिनिक्कुमिनि निङ्ङळ्
कलिपच्चवण्णतन्ने वाणालुमिरुवरुम् । ५५
पॊट्टक्कूपत्तिल्तळ्ळिविट्टन्नेयुळ्ळवैर-
मॊट्टुमे पोयील शर्म्मिष्ठय्क्कन्नोटु ञानो ५६
पेट्टेन्नु मऱन्नितु पॊट्टियायतुमूल
पुष्टभोगत्तोटेटं तुष्टया वाळुविन् निङ्ङळ् । ५७
भूमियिल् वीणु केणुमुरुण्टुं नटकॊण्टाळ्
मामुनि शुक्रन्तन्नेक्काण्मानाय् वेगत्तोटे । ५८
भूमिपालनुमतिव्याकुलचेतस्सोटु
भामिनिकोप कण्टु भाववैवर्ण्य पूण्टु ५९
पेटिच्चु सरसभं पिन्नाले नटकॊण्टु
माटॊत्त मुलयाळॆयॆत्तील ययातिक्कुम् । ६०
वेगत्तिलवळ्चॆन्नु तातनोटारियिच्चा-
ळाकवे केट्टनेरं कोपिच्चु शुक्रन्तानुम् । ६१
अन्नेर नृपतियु चॆन्नटिवणङ्ङिनान्
मन्युकैक्कॊण्टु शुक्रमामुनियरुळ्चॆय्तु । ६२
ऎन्नुटॆ मकळॆयु पॆट्टॆन्नङ्ङुपेक्षिच्चु
मन्नव ! दासितन्नॆप्पुल्कियनिमित्त नी ६३

दु:खित और क्रुद्ध होकर, आँखे लाल करती हुई तथा काँपती हुई देवयानी ने अपने आभूषणो को तोडकर फेक दिया । ४९-५४ (और कहा) मुझे तो वही होगा जो विधि चाहता है । आप दोनो अपनी ही कल्पना के अनुसार रहे । जिस दिन मैं एक अंधे कुएँ मे ढकेल दी गयी थी उस दिन का शर्मिष्ठा का कोप अभी नही गया । मैं तो तभी भूल गयी थी, क्योकि मै भोली हूँ ! आप दोनो पुष्ट भोगो सहित सुख से रहे ।" भूमि पर गिरती हुई और लोटती हुई वह जल्दी महामुनि शुक्र के पास चली गयी । भूपाल बड़े व्याकुल हुए और अपनी प्रिया का कोप देखकर विवर्ण हुए । डर के मारे उसके पीछे-पीछे जल्दी चले, परन्तु उस उन्नत स्तनवाली देवयानी के पास ययाति पहुँच न सके । वह आगे चली गयी और पिताजी को उसने सब सुनाया । सब सुनकर शुक्राचार्य क्रुद्ध हुए । ५५-६१ उस समय भूपति वहाँ पहुँचे और पैरो गिरे । तब शुक्रमुनि ने मन्यु (क्रोध) के वश मे आकर कहा—"हे भूपाल ! मेरी पुत्री को विना वजह त्यागकर तुमने उसकी दासी का आलिगन किया । इसलिए

चूतसायकमेट्टु चूतुवार्मुलपुल्कि-
च्चूतोटु चतुरगमेन्निवकोण्टु क्रीडि-
च्चादरवोटु वाणानायिरत्ताण्टु पिन्ने ७
पूरुवा तनयनु यौवनमतुं नल्कि-
प्पाराते राज्यत्तिङ्कलभिषेकवु चेय्तु । ८
राजचिह्नङ्ङळ् निङ्ङळ्विकल्लाते पोकेन्नतु
राजावु मटे मक्कळ्क्कोक्कवे शाप नल्कि । ९
यदुविन् परम्पर यादवन्मारेन्नायि
मधुरानाम पूण्टु राज्यवुमुण्टाय्वन्नु १०
तुर्व्वशुविन्टे पारम्पर्यमायुण्टायितु-
मुर्व्वियिलन्नु यवनन्मारेन्नरिञ्ञालुम् ११
द्रुह्युविन् परम्पर भोजन्मारल्लो अनु-
द्रुह्युविन् मक्कळेल्ला म्लेच्छजातिकळल्लो । १२
पूरुविन् परम्पर पौरवन्मारायितु
वीरनां ययातियु पोय् वनवास चेय्तान् । १३
वानुलोकवुं पुक्कान् पिन्नेयेन्नरिञ्ञालु
मानववीरन् पूरु भूमियुं वाणानल्लो । १४
उत्तरयायातत्तिलुळ्ळोरु कथयेल्ला
विस्तारं पारमुण्टु परवान् पणियत्रे । १५
इन्द्रनुं ययातियु तङ्ङळिल् परञ्ञतु
मन्नवनष्टकनां मुनियेक्कण्टवारुम् १६

से विद्ध होकर, आलिगन आदि करते हुए और शतरंज आदि खेल खेलते हुए सुख से एक हजार वर्ष व्यतीत किये । १-७ तत्पश्चात् अपने पुत्र पूरु को यौवन लौटा दिया और शीघ्र ही उसका राजा के पद पर अभिषेक किया । तथा अपने अन्य पुत्रो को शाप दिया कि उन्हे राजा के लक्षण कभी न प्राप्त हो । यदु की परम्परा मे यादव हुए, (उनका) मथुरा नामक एक देश भी प्रसिद्ध है । तुर्वशु के वश मे, यवन पैदा हुए । द्रुह्यु के वशज है भोज और अनुद्रुह्यु की सन्तान है सभी म्लेच्छ जातियाँ । पूरु के वशजो को पौरव कहते है । तदनन्तर वीर ययाति वनवास के लिए चले गये, और अन्त मे, सभी स्वर्गलोक पहुँच गये । मानव वीर पूरु ने भूमि पर राज्य किया । ८-१४ ययाति-चरित के उत्तर-भाग मे विस्तृत कथाएँ है, उनको कहना कठिन काम है । इन्द्र और

पिन्नें मटतिनायि कोपिक्कातिरिक्कणम्
मन्नवा! कोपिक्कयिल्लङ्ङनेंतन्नेंयेन्नान् ७३
भार्ग्गवमुनिवरन् भूपतिवरन्तानु
भार्ग्गवपुत्रियोटु कूटवे राज्यपुक्कान् । ७४

जरानराविनिमयम्

सीमन्तात्मजनाय यदुविनोटु नृप-
नामन्त्रिच्चितु जरायौवनविनिमयम् । १
सूक्ष्मधर्म्मर्त्तेप्पार्त्तु धात्रीशनोटु यदु
दाक्ष्यमोटरुतितेन्नाख्यानं चेय्तशेष । २
मक्कळे क्रमत्ताले वेव्वेरे वरुत्तीट्टु
कैक्कोळ्क जरानरयेन्नवनपेक्षिच्चु । ३
आरुमे कैक्कोळ्ळाञ्ञिट्टञ्चामनाय सुतन्
पूरुवेन्नवनोटु मन्नवन् परञ्ञप्पोळ् ४
अच्छन् चोन्नतु केट्टिट्टुच्चिरिवरुन्नाकिल्
निश्चयं पोरुक्कुन्नु तन्नालुमेन्नानवन् । ५
तातनु तनिक्कुळ्ळ यौवनमतुं नल्कि-
च्चेतसि तेळिञ्ञवन् भार्यमारोटु कूटि ६

के लिए नाराज न हो।" शुक्र मुनि ने उत्तर दिया—"नही क्रुद्ध न होगा।" तदनन्तर भूपाल शुक्र की पुत्री के साथ अपने राज्य को चले गये। ७०-७४

वार्द्धक्य और पलित (सफेद बाल) का विनिमय

राजा ने अपने सीमन्तपुत्र (प्रथम पुत्र) यदु से वार्द्धक्य और यौवन के विनिमय के लिए अभ्यर्थना की। सूक्ष्म धर्म पर विचार करके जब यदु ने दक्षता के साथ कह दिया कि यह हो ही नही सकता, तब राजा ने अपने पुत्रो को अलग-अलग बुलाया और प्रार्थना की कि मेरा वार्द्धक्य और पलित स्वीकार करो। जब वे एक-एक करके अस्वीकार करते गये तब राजा ने पूरु नामक पाँचवे पुत्र से प्रार्थना की। पिताजी का कहना सुनकर उसको हँसी आयी, पर उसने उसे दबा लिया और कहा—"अपना वार्द्धक्य दे दीजिए।" तदनन्तर पूरु ने पिता को अपना यौवन दे दिया। पिता प्रसन्न हुए और उन्होने अपनी पत्नियो के साथ, कामदेव के बाण

आग्रहिच्चटविकळाक्रमिच्चीटु नेर-
मार्क्कुमेत्तात्त वेगमेरुन्न रथत्तोटु ६
भास्कररश्मिपोलु चेल्लात्त वनंपुक्कान् ।
नोक्कियु मृगङ्ङळेक्कण्टु कौतुकपूण्टुं ७
वेगमेरीटु मृगजालङ्ङळ्वळिये पो-
येकाकियाय वसुधेन्द्रना दुष्पन्तनु ८
क्षुत्पिपासादिपूण्टु चमञ्ञोरनन्तर-
मद्भुत वळर्न्नीटुमाश्रमदेश कण्टान् । ९
पुष्पङ्ङळ् तळिरुकळ् फलङ्ङळ् निऱञ्ञोरो-
पळ्पद शुक पिक केकिकळ्नादत्तोटुं १०
वृक्षङ्ङळ्तोरु चुटिप्पटीटु वल्लिकळु
यक्ष किन्नर सिद्ध गन्धर्वादिकळालु ११
पक्षिकळ् मृगङ्ङळेन्नुळ्ळ जन्तुक्कळालु-
मिक्षु जवीर केर कदळीवृन्दत्तालु १२
शीतत्व सुगन्धमान्द्यादिया गुण तेटुं
वातपोतङ्ङळालु सेव्यमाश्रमदेशम् । १३
चित्तप्रह्लादोद्भवमेन्नयुमेन्नु निन-
च्चुत्तमनाय नृपन् विस्मयंपूण्टानेटम् । १४
मालिनियाय नदि तन्नुटे तीरत्तिङ्कल्
कालदोषादिकूटाताश्रम मनोहरं १५

वनों मे प्रविष्ट हुए तव औरो के लिए अप्राप्य वेग वाले रथ के साथ ऐसे वन मे पहुँचे जहाँ सूर्य की किरणो की भी पहुँच न थी। चारो ओर मृगो को देखते हुए कौतुक भरे राजा दुष्यन्त वेग से दौडते हुए मृगो के ही रास्ते पर चढते चले गये और अकेले होकर जब भूखे और प्यासे हुए एक अद्भुत आश्रम देखने मे आया। ५-९ पुष्प, पल्लव और फलो से लदे हुए, भ्रमर, शुक पिक, मोर आदि पक्षियो के नादो सें गूँजते हुए वृक्षो पर चढी लताओं के कारण, यक्ष, किन्नर, सिद्ध, गन्धर्व आदियो के, पक्षी, मृग और अन्य जन्तुओ के, ईख, नारङ्गी, नारिकेल, कदली आदि वृन्दो के तथा शीतलतरु-सुगन्ध, मन्दता आदि गुणयुक्त वायु के कारण वह आश्रम सेवन के योग्य था। 'यह मन मे आनन्द उत्पन्न करने वाला है' ऐसा समझकर वह उत्तम राजा अत्यन्त विस्मित हुए। १०-१४ मालिनी नदी के तट पर स्थित, कालदोप से रहित और गगा के तट पर

तङ्ङळिल् धर्म्माधर्म्ममोक्कवे परञ्ञतु-
मेङ्ङने परयुन्नु कालमो पोरयल्लो । १७
पूरुविङ्ङेन्नुतोट्टु भरतन्तन्कलोळं
नेरे मुन्नमेतन्ने परञ्ञानल्लोतानुम् १८
अन्नु वैशम्पायननरुळ्चेय्ततु केट्टु
मन्नवनाय जनमेजयन् चोद्य चेय्तु । १९

शाकुन्तळ-भरतोल्पत्ति

भरतन्तन्टे जन्ममरिवान्तक्कवण्ण-
मरुळिच्चेय्तीटेणमावोळं चुरुक्काते । १
केट्टुकोण्टालुमतुमोट्टोट्टु चोल्लामेङ्किल्
वाट्टमिल्लाते केळियुळ्ळ दुष्पन्तनृपन् २
उळ्ळतिल् चतुर्भागं वाङ्ङिनान् राजभोगम् ।
चोल्लुवान् पणियवन् रक्षिच्च प्रकारङ्ङळ् । ३
कीर्त्तिपूण्टिरिक्कुनाळ् नायाट्टिन्नोरुदिन-
मार्त्तुनालगत्तोटुकूटवे वनपुक्कान् । ४
व्याघ्रसिहादि मृगमावोळ कोन्नुकोन्नु
शीघ्रमुर्व्वीन्द्रन् विळयाटुन्ननेरमेट ५

ययाति के सवाद, ययाति की मुनि अष्टक से भेट और उनकी आपस मे धर्माधर्म की वार्त्ता, यह सव कैसे कहा जाय, समय वहुत कम है। पूरु से लेकर भरत तक तो मैं पहले ही कह चुका हूँ। वैशम्पायन का यह कहना सुनकर राजा जनमेजय ने पूँछा। १५-१९

शकुन्तलोपाख्यान और भरत की उत्पत्ति।

जहाँ तक हो सके बिना सक्षेप किये कथा सुनाइए ताकि भरत की उत्पत्ति समझ मे आजाए। तव वैशम्पायन वोले कि मै सक्षेप मे कह रहा हूँ सुन लीजिए। राजा दुष्यन्त जिनकी कीर्ति मे कोई कमी न थी, वे प्रजा से पैदावार का चतुर्थ भाग राजकर रूप मे लेते थे। जिस प्रकार उन्होने रक्षा की उसका वर्णन करना कठिन है। अपनी सपूर्ण कीर्ति से युक्त वे राजा दुष्यन्त एक वार चतुरग सेना सहित शिकार खेलने के लिए वन गये। १-४ व्याघ्र, सिंह आदि जन्तुओ को यथेष्ट मारते हुए राजा शीघ्रता पूर्वक शिकार खेलने लगे और जब अपनी प्रबल इच्छा के कारण विविध

सामवेदिकळोटु भारुण्डसामगन्मार्
सोमपानादिकोण्टु पूतमानसन्मारुं २६
तैत्तिरीयादिशाखाभेदङ्ङळ् वहुविधं
मूर्त्तिभेदङ्ङळ् चोल्लुं सूक्तङ्ङळ् पलतर २७
सूत्रङ्ङळ् चोल्लुन्नोरु ब्राह्मणवेदिकळु
शास्त्रसिद्धान्तव्याख्यानार्त्थतल्परन्मारुं २८
अथर्वृग्यजुस्सामभेदसंहितागानं
पदसक्रमस्वरमात्रादिशिक्षयोटु २९
शव्दसस्कारत्तोटु वाक्यभेदार्त्थत्तोटुं
सुप्तिडन्तादि वाद्ध्यसूत्रवृत्तिकळोटु ३०
शिक्षाव्याकरणवु छन्दस्सु निरुक्तवुं
सूक्ष्मज्योतिपं कल्पमिवट्रिन्मतभेद ३१
मोक्षधर्म्मोक्तिमीमासादिकळुपनिप-
द्वाक्यार्त्थविशेपादि व्याख्यानमतङ्ङळुं ३२
द्रव्यभेदवु कर्म्मभेदवुं कालभेदं
दिव्यमानुषभेद सव्यापसव्यभेदं ३३
कर्तृत्भेदवु क्रियाभेदवुं गुणभेदं
कृत्याकृत्याचारप्रायश्चित्तग्रन्थङ्ङळु ३४

और भारुण्ड साम गानेवाले, सोमपान से पुनीत मानस (पवित्र मनवाले) तैत्तिरीय[1] आदि विविध शाखाभेदो का तथा मूर्तिभेद का प्रतिपादन करनेवाले सूक्तो का और सूत्रो का पाठ करनेवाले, ब्राह्मणो के विशेषज्ञ, शास्त्रो के सिद्धान्तो की व्याख्या करने मे तत्पर, अथर्व, ऋक्, यजुस्, और सामवेदो का सहितागान पद, क्रम, स्वर, मात्रा आदि के ज्ञान-सहित, शव्द-संस्कार[2] और वाक्यभेदो के अर्थ के साथ, सुवन्त,[3] तिडन्त,[4] वाध्यसूत्र और वृत्ति[5] के साथ २४-३० शिक्षा, व्याकरण, छन्द.शास्त्र, निरुक्त, सूक्ष्म ज्योतिष, कल्प[6] और उनके भेद मोक्षधर्म मे कही गयी मीमांसा, उपनिपद् के वाक्यो के विशेष अर्थ, व्याख्यान और विविध मत, द्रव्यभेद, कर्मभेद, कालभेद, दिव्यमानुषभेद, सव्य और अपसव्य का भेद, कर्तृभेद, क्रियाभेद, गुणभेद, कृत्य और अकृत्य आचारो का और प्रायश्चित्तो का प्रतिपादन करने वाले ग्रन्थ, कार्य, कारण और करण के भेद, आचार्यभेद,

१ कृष्णयजुर्वेद की एक शाखा २ शव्दो का व्याकरण की दृष्टि से साधुत्व ३ नामपद ४ क्रियापद ५ लघु व्याख्या ६ कर्मकाण्ड के ग्रन्थ ।

सततं नरनारायणन्मार् मरुवीटु
वदर्याश्रमं गंगतन्नालेन्नतुपोले १६
मालिनिनदितन्नाल् शोभितं देशं कण्टु-
मालकन्नोरु नृपन् मट्ुळ्ळ पटयेल्लाम् १७
काननद्वारत्तिङ्कल् निल्कॆन्नु नियोगिच्चु
तानुं तन् पुरोहितनुतानुमायकं पुक्कान् । १८
ब्रह्मलोकत्तं प्रवेशिच्चितु ञानेन्नप्पोळ्
निर्म्मलनाय नृपन्तन्नुळ्ळिलुण्टायवन्नु । १९
मायकोण्टुण्टां महामोहङ्ङळ्नीक्कि नित्यं
न्यायतत्त्वार्थविज्ञानादि सन्पन्नन्माराय् २०
वोधमेऱिय मुनिप्रवरशिष्यन्माराय्
वेदपारगन्मारां वह्वृचमुख्यन्माराल् २१
प्रेर्यमाणङ्ङळाकुं सहितापदङ्ङळे-
द्धार्यमाणार्थत्तोटु सुस्वरव्यक्तियोटु २२
केट्टुकेट्टानन्दिच्चु चेन्नप्पोळ् काणायवन्नु
वाट्टमेन्नियेे यागशालकळ् पलतरम् । २३
यज्ञविद्यांगक्रियातलपरन्माराय् नाना-
विज्ञानज्ञानादिकोण्टज्ञानमकन्नीटु २४
यजुर्वेदिकळुमृग्वेदिकळायुळ्ळोरु-
मृजुमार्ग्गत्तोटतिमधुरगानत्तोटुं २५

स्थित यह मनोहर आश्रम नर और नारायण के निवास-स्थान बदर्याश्रम के समान है। मालिनी नदी से शोभित उस देश को देखकर भूपाल ने अपनी सेना को आज्ञा दी कि वन के द्वार ही पर ठहर जाओ। तत्पश्चात् अपने पुरोहित के साथ वे अन्दर गये। उस समय राजा को प्रतीत हुआ कि 'मैने ब्रह्मलोक मे प्रवेश किया है"। वहाँ पर माया के महामोहो को हटाकर सदैव मीमासा की युक्तियो के अर्थज्ञान से सम्पन्न प्रौढ़ ज्ञान-वाले मुनियो के वेदो के पारगत तथा ऋग्वेद के विशेपज्ञ शिष्यो की प्रेरणा से किये जानेवाले अर्थज्ञान-सहित सस्वर सहिता और पद का पाठ सुनकर जब राजा अत्यन्त आनन्दित हुए तब उन्हे विविध अत्युत्तम यज्ञशालाएँ दिखाई दी। १५-२३ यज्ञविद्या और अगक्रिया मे तत्पर और तरह-तरह के विज्ञान और ज्ञान से अज्ञान दूर करनेवाले यजुर्वेदी और ऋग्वेदी, सीधे मार्ग से और अति मधुर गानशैली से गानेवाले सामवेदी

काश्यपतपोगुप्तमाश्रममक पुक्का-
नाश्चर्य मनक्कान्पिल् मेल्क्कमेलुण्टाय्वन्नु । ४५
पर्ण्णशालयिल् चेन्नु मन्नवन् निन्ननेर
धन्यना तपोधनन्तन्नेक्कण्टीलयल्लो । ४६
आरुळ्ळतिविटेयेन्नेवयु गांभीर्यत्तो-
टारयु काणाञ्ञवनुच्चत्तिलुरचेय्तान् । ४७
लक्षणयुक्तमाय नादत्तेक्केट्टनेरं
लक्ष्मितान्तन्नेयोरु कन्यकारूपं पूण्टु ४८
निष्क्रमिच्चतुपोले तल्क्षणं काणाय्वन्नु ।
चोल्क्कोण्ट कोण्टल्मद्धवे मिन्नुन्न मिन्नलपोले ४९
रूपयौवनशुभशीलाचारादिकोण्टु
शोभितयाय दिव्यकन्यकतानुमप्पोळ् ५०
सर्व्वलक्षणयुक्तरूपादि गुण तेटु-
मुर्व्वीशनन्तन्नेक्कण्टु दुर्व्वारमोदत्तोटुं ५१
गाढकौतुकत्तोटु गूढसुस्मेरत्तोटुं
प्रौढसद्भावत्तोटु कूटवे चोन्नाळवळ् । ५२
स्वागतमिति पुनरादरवोटुकूटे
वेगत्तिलतिथिपूजकळु चेय्तीटिनाळ् ५३
आसनपाद्यार्घ्यादि स्वाचमनीयङ्ङळाल्
चेतसि तेळिञ्ञवळ् पिन्नेयुमुरचेय्ताळ् । ५४

वढते हुए आश्चर्य का अनुभव किया। ३९-४५ जब राजा पर्णशाला पहुँचे तब प्रशसनीय तपोधन काश्यप मुनि वहाँ न दिखाई दिये। तब वहाँ किसी को न देखकर राजा ने 'यहाँ कोई है ?' ऐसा पुकारा। तब ऐसा देखने मे आया मानो इस लक्षणयुत नाद को सुनकर लक्ष्मीदेवी स्वय कन्या-रूप धारण करके निकल आयी हो। तब सुप्रसिद्ध मेघ के बीच चमकनेवाली विजली के समान रूप, यौवन, शुभ शील, शुभ आचार आदि से शोभित कन्या ने सभी लक्षणो से सम्पन्न और रूप आदि गुणो से युक्त राजा को देखकर अनिवार्य प्रमोद, गाढ कौतुक, गूढ मुस्कान, और प्रौढ सद्भावना के साथ इस प्रकार कहा। ४६-५२ "आपका स्वागत है"। तदनन्तर शीघ्रतापूर्वक वडे आदर के साथ अतिथिसत्कार भी किया। आसन, पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय आदि देकर प्रसन्नतापूर्वक वोली। "आप कुशल है और स्वस्थ है ? हे विशद बुद्धिवाले ! वताइए

कार्यकारणकरणादिभेदङ्ङळुमा-
चार्यभेदवु व्यासग्रन्थादिपुराणवु ३५
श्रुतिगूढार्त्थभेदप्रतिबोधकमाय
स्मृतिभेदङ्ङळितिहासङ्ङळ् पलतरं ३६
वेदाङ्गस्कन्धभेदोपागशाखादिकळुं
वेदान्तादिकळ् नानाशास्त्रङ्ङळ् बहुविध ३७
अभ्यसिच्चीटुं मुनिवर्ग्गवु शिष्यर्कळु-
मद्भुतात्मकजपहोमादिकर्म्मङ्ङळुं ३८
यन्त्रतन्त्रादियुतमन्त्रजापकन्मारु-
मन्तेवासिकळ् परिकर्म्मिकळ् भृत्यन्मारुं ३९
पवित्रालयङ्ङळु विचित्रासनङ्ङळुं
धवित्रच्छत्रदण्डपादुकापटङ्ङळुं ४०
अष्टाङ्ग ब्रह्मचर्यनिष्ठ पूण्टीटुन्नोरु-
मष्टागयोगत्तोटुकूटिन यतिकळु ४१
जात्यादिवैरं वेटिञ्ञीटिन जन्तुक्कळुं
जात्यादि कुसुमितलतिकावलिकळु ४२
प्रीत्या कण्टुण्टायोरु परमानन्दत्तोटु
भीत्या सात्विकमत्या मञ्जुळतरगत्या ४३
नीत्या सज्जनरीत्या मनसि पूर्ण्णभक्त्या
स्वाध्यायश्रवणसन्तुष्टनाय् मन्द मन्द ४४

व्यासग्रन्थ, पुराण, श्रुति के गूढ अर्थभेदो के बोधक स्मृतिग्रन्थ, विविध इतिहासग्रन्थ, वेदाङ्गो के स्कन्धभेद, उपागो की विविध शाखाएँ तथा वेदान्त आदि बहुविध शास्त्रो का अभ्यास करनेवाला मुनिवर्ग और उनके शिष्य, अद्भुत जप, होम आदि विविध कर्म, ३१-३८ यन्त्र और तन्त्र से युक्त मन्त्रो का जप करनेवाले, अन्तेवासी (शिष्य), परिचारक और भृत्य पवित्र आलय, विचित्र आसन, पखे, छत्री, दण्ड, खड़ाऊँ, वस्त्र अष्टाङ्ग ब्रह्मचर्य का पालन करनेवाले, अष्टाङ्ग योग का अभ्यास करनेवाले यति, जातिवैर से मुक्त जानवर, जाति आदि पुष्पो से लदी हुई लताएँ, इन सबको प्रीति के साथ देखकर, परम आनन्दयुत होकर राजा दुष्यन्त ने भय और सात्त्विक भावना के साथ मन्दगति से, नैतिक सज्जनो की शैली से, सम्पूर्ण भक्ति से, स्वाध्याय-श्रवण से सन्तुष्ट होकर धीरे-धीरे काश्यप मुनि के तप से रक्षित उस आश्रम मे प्रवेश किया और उत्तरोत्तर

अन्तेंटो वनत्तिल् वाणीटुवान् मूलमेन्नु
वन्धुरकळेवरे! चौल्लण परमार्त्थम् । ६५
निन्नुटे रूपगुणं कण्टतुकोण्टु पार-
मेन्नुटे मनस्सिनें नीयपहरिप्पानु ६६
पूरुवा राजर्पिवशत्तिङ्कल् पिऱन्नु जान्
नारिमार्कुलमौलिरत्नमे धरिच्चालुम् । ६७
उत्तमे निन्नोटिन्नुमोन्नुण्टु पऱयुन्नु
चित्तमेन्नुमे मम चेल्कयिल्लधर्म्मत्तिल् । ६८
क्षत्रियस्त्रीयिलेन्नि मटुळ्ळ नारिमारिल्
चित्तजतापमिनिक्कुण्टावान् मूलमिल्ल । ६९
राजनन्दनयत्रे नीयेन्नु वन्नुकूटु
व्याजमेन्नियेपऱञ्ञीटणमेन्नोटिप्पोळ् । ७०
मन्दहासवु चेय्तु सुन्दरागियुमप्पोळ्
कन्दर्प्पसमानना भूपतियोटु चौन्नाळ् । ७१
पुण्यपापङ्ङळ् निरूपिच्चु नी पऱयणम्
कण्वनां मम तातनुतन्नेयु पेटिक्कणम् ७२
आनिप्पोळ् स्वतन्त्रयल्लेन्नतुमऱियणम्
मानिच्चीटणं वेदविधियां धर्म्मत्तेयु । ७३
जनकनाय कण्वनुतन्ने प्रार्त्थिच्चालव-
ननुवादत्तालेङ्किलरुतेन्निल्लतानु । ७४

यथार्थ (ठीक प्रकार से) मुझ से कहो। हे सुन्दर शरीरवाली तुम्हारे वन मे रहने का क्या कारण है? मुझसे परमार्थ वतलादो। तुम्हारे रूप और गुणो ने मेरे मन का अपहरण कर लिया है। हे महिलावर्ग की चूडामणि ! मेरा जन्म राजर्षि पूरु के वश मे हुआ है। ६१-६७ हे साध्वि ! एक वात मै आज तुमसे कहना चाहता हूँ—'कि मेरा चित्त कभी अधर्म की ओर न जायगा'। क्षत्रिय स्त्रियो को छोड़कर अन्य स्त्रियो के प्रति मेरे मन मे मदनताप होजाना विलकुल असंभव है। हो सकता है कि तुम क्षत्रिय की पुत्री हो। इस लिए विना व्याज (छल) के मुझसे सव वतादो। तव मुस्कराती हुई सुन्दरी ने कामदेव के समान भूपति से कहा। आप पुण्य और पाप का ध्यान रखकर कोई वात कहे, मेरे पिता कण्वमुनि से डरना भी चाहिए, जान लीजिए कि मैं अव स्वतन्त्र नहीं हूँ और वेदविहित धर्म का आदर भी करना चाहिए। ६८-७३

कुशलमल्ली भवानिन्ननामयमल्ली
विशदमते भवानारॆन्नु पऱ्यणम् । ५५
कानने वरुवतिनॆन्तु कारणमॆन्नु
मानिनि चोदिच्चप्पोळ् मन्नवन् तानु चॊन्नान् ५६
दुष्पन्तनाय नृपनिलिलतनयन् आन्
पुष्करविलोचने ! सत्यमॆन्नऱिञ्ञालुम् । ५७
राजावॆन्नतु केट्टु फलमूलादिकळु
राजीवविलोचन नल्किनाळ् भुजिप्पानाय् । ५८
ऒन्नालॆन्तिनियॊन्नु वेण्टुन्नतॆन्नु चॊन्न-
कन्यकतन्नॆ नोक्कि मन्नवन् तानु चॊन्नान् ५९
कण्वमामुनितन्नॆक्काण्मान् वन्नतुमिप्पो-
ळण्णोजविलोचने ! मामुनियॆङ्ङु चॊल् नी । ६०
कायोटु पळङ्ङळॆक्कॊण्टुवन्नीटुवानाय्
पोयितु पितावॊरु रण्टुनाळिक पार्त्ताल् ६१
नायकनाय निनक्कन्पोटु काणामॆन्ना-
ळायतविलोचनयाकिय कन्यकयुम् । ६२
कन्यकावयोरूपशीलादिगुण कण्टु
मन्नवन् मारवशनायुटनुरचॆय्तान् । ६३
निन्नुटॆ मातापिताक्कन्मारारॆन्नु पिन्नॆ
निन्नॆयुमुळ्ळवण्णमॆन्नोटु चॊल्लीटणम् । ६४

आप कौन है ? यह भी बतलाइए यहाँ वन में आने का क्या कारण है ?" उस मानिनी के द्वारा इस प्रकार पूछने पर राजा ने कहा—"मै इलिल का पुत्र राजा दुष्यन्त हूँ । हे कमललोचने ! मै सच कहता हूँ ।" यह सुनकर कि वह राजा है उस राजीवलोचना ने उनको फल, मूल आदि खाने के लिए दिये । 'अब आप को किस बात की आवश्यकता है ?' यह कहती हुई कन्या को देखकर राजा ने कहा । "मैं महामुनि कण्व का दर्शन करने आया हूँ । हे कमललोचने ! महामुनि कहाँ गये है ? बतला दीजिए ।" ५३-६० तब आयत (दीर्घ)-लोचना कन्या ने उत्तर दिया—"पिताजी कच्चे और पक्के फल लाने गये है । अगर आप दो नाडिका (घडी) ठहरेंगे तो आप उनका आनन्द से दर्शन कर सकेंगे" । कन्या के वय, रूप और शील आदि देखकर राजा मदन के वश मे होकर बोले । तुम्हारे माता-पिता कौन है और तुम स्वय कौन हो, यह सब

विश्वामित्रन्टे तपोविघ्नत्तो वरुत्तुवान्
विश्वमोहिनियाय मेनकतन्नेय्शक्रन् ५
मन्मथमन्दमरुन्माधवमासादिये
निर्म्मलचन्द्रनोटुकूटवे नियोगिच्चान् । ६
कौशिकनवळेक्कण्टाशया विवशना-
याशया धैर्यतपोवलङ्ङळागु कळ-
ञ्ञायिर सवत्सर क्रीडिच्चुवनन्तोरु-
मायतविलोचनयाय मेनकयोटुं । ८
अक्कालं तपोवलमोवकवे नशिक्कया-
लुळ्क्कान्पिल् तत्ववोधमुदिच्चिट्टवनप्पोळ् ९
पुष्करविलोचनतन्नेयुमुपेक्षच्चे-
य्तुग्रमा तपस्सिनु कोप्पिट्टान् पण्टेप्पोले । १०
विश्वामित्रन्टे वीज धरिच्च मेनकयुं
निश्शेपदेवकार्य साधिच्चु पोकुन्नेरं ११
हिमवत्प्रस्थदेशे मालिनीतीरस्थले
कमलविलोचन पेटाळेन्नरिञ्ञालुम् । १२
तापसवीजत्तिनु नाशमिल्लेन्नुकण्टु
तापवुमकन्नवळ् वानुलोकवु पुक्काळ् । १३
लाळिच्चु शकुन्तङ्ङळिवळेप्पलकालं
पालिप्पानेन्टे कैयिल् नल्किनार् शकुन्तङ्ङळ् । १४

को पूरी कथा सुनाऊँगी । विश्वामित्र के तप को वाधा पहुँचाने के लिए इन्द्र ने विश्वमोहिनी मेनका, कामदेव, मन्दमारुत, माधव मास और निर्मल चन्द्रमा को आज्ञा दी । १-६ कौशिक (विश्वामित्र) उसको (मेनका को) देखकर आशा के कारण वेवस हो गये । अपना धैर्य और तपोवल खो वैठे और दीर्घलोचना मेनका के साथ एक हजार वर्ष तक वन-वन मे क्रीडा करते रहे । जव उनका सारा तपोवल नष्ट हो गया तव उनके मन मे तत्त्ववोध का उदय हुआ और कमललोचना की उपेक्षा करके उन्होने फिर पहले की ही तरह उग्र तप की तैयारी की । कमलाक्षी मेनका, जो विश्वामित्र का वीज धारण किये हुए थी, जव समस्त देवकार्य समाप्त करके लौट रही थी तव, हिमालय के एक ऊँचे भाग में, मालिनी नदी के तट पर, उसने एक सन्तान को जन्म दिया । ७-१२ यह समझकर कि तापस के वीज का नाश न होगा वह निश्चिन्त होकर

मधुरस्वरविस्पष्टाक्षरालाप केट्टु
मधुराधरियोटु मन्नवनुरचेय्तान् । ७५
भोष्कुरचेय्केन्नुळ्ळताक्कंटुत्ततु बाले
मूर्खन्मारोटु वेणं चोल्लुवानतुमेङ्किल् ७६
ऊद्ध्वंरेतस्सा मुनितन्नुटे पुत्रि ञानें-
न्नोर्त्तु नी पऱयणमेन्नोटु मनोहरे ! ७७
अेन्नतु केट्टु मुनिकन्यकतानु चोन्नाळ्
नन्नल्ल तन्नेक्कक्केन्नुळ्ळतेन्नतु नूनम् । ७८

शकुन्तळोल्पत्ति

अेङ्किलो यथातत्व केट्टालु मम जन्मं
पङ्कजशरसमनाकिय नराधिप ! १
पण्टोरु तपोधननिविटेक्कोळुन्नळ्ळि-
क्कण्टितु मम पितावाकिय मुनीन्द्रनें । २
कोण्टाटिच्चोद्य चेय्तानूद्ध्वंरेतस्सा भवा-
नुण्टाय मकळुटे जन्मत्तेप्पऱयणम् । ३
अप्पोळुतच्छनेल्लामवनोटऱियिच्चा-
नप्रकारङ्ङळ् ञानुमेप्पेरुमऱियिक्का । ४

आप पिता कण्व से प्रार्थना कीजिए। यदि उनकी अनुमति होगी तो मेरी ओर से अस्वीकार न होगा। मधुर स्वर और विस्पष्ट अक्षरवाली उसकी बाते सुनकर राजा ने उस मधुर अधरवाली से कहा। हे बाले ! असत्य बोलना किसके लिए ठीक है ? अगर बोलना ही हो तो मूर्खो से कहना चाहिए। "मै ऊर्ध्वरेता (ब्रह्मचारी) मुनि की पुत्री हूँ" इस प्रकार, हे मनोहरे, तुमको मुझसे सोचकर कहना था। यह सुनकर मुनिकन्या ने कहा—'निस्सन्देह यह ठीक नही कि मै झूठी निकलूँ। ७४-७८

शकुन्तला की उत्पत्ति

इसलिए मेरे जन्म की कथा यथातत्त्व (ठीक प्रकार से) सुनिए। हे कमलवाण के समान भूपाल ! बहुत दिन पहले एक तपोधन ने यहाँ पधारकर पिताजी का दर्शन किया। शिष्टाचार होने के बाद उन्होने पूछा—"आप ऊद्ध्वंरेता है, तो बतलाइए लडकी का जन्म कैसे हुआ"। तब पिताजी ने सारी बात उनको बतला दी। मै भी उसी प्रकार आप

अन्नेर शकुन्तळ चोल्लिनाळ् नृपनोटु
मन्नव ! होमद्रव्यमिविटेयुण्टायवरुं । ६
वह्नियुमुपाध्यायनुतानुमुण्टल्लो पिन्ने-
येन्निवयोन्नुकोण्टुमिल्ल वैषम्यमेतुं । ७
ओन्नालुमोरु दण्ड पारमुण्टरिञ्ञालु
मन्नव ! पुनरतुमेन्नोटु परयण । ८
दण्डमाकुन्नतेन्तु नेरे नी चोल्लीटेटो
पुण्डरीकाक्षि ! अतु पोक्कावोन्नल्लेन्नुण्टो ? ९
पोक्कावोन्नल्लेन्नत्ते तोन्नुन्नु पिन्ने नृप-
न्माक्कुण्टो निरूपिच्चालुसाद्ध्यमल्लातेयोन्नु । १०
दु.खसाद्ध्यमो वाले केवलमसाद्ध्यमो
मय्क्कण्णि ! चोल्लीटेन्तेन्नेन्नोटु परमार्त्थ । ११

है[1] । उनमे क्षत्रियो के लिए गान्धर्व और राक्षस विवाह ठीक है। दैवज्ञ मनु के इस प्रकार के कथन के अनुसार तुम केवल गान्धर्व विधि से मुझसे विवाह करो। १-५ तव शकुन्तला ने राजा से कहा—हे राजन् ! हवन की सामग्री यहाँ उपलब्ध है। यहाँ वह्नि (अग्नि) भी है और उपाध्याय भी। इनके कारण कोई कठिनाई नही है। फिर भी एक बडी कठिनाई अवश्य है जिसके सम्वन्ध मे भी आप कह दीजिए। (राजा ने कहा) क्या कठिनाई है, सीधे कह दो। हे कमललोचने ! ऐसा कुछ है जो हटाया नही जा सकता है ? मुझे लगता है कि ऐसा कुछ नही जो हटाया नही जा सकता है और फिर राजाओ के लिए असाध्य क्या है ? । वह क्या केवल दु खसाध्य है या बिलकुल असाध्य है ? हे काजलयुक्त आँखवाली ! मुझ से परमार्थ वतलादो। तव वह वोली, वह क्या है यह न जानने से आपको दु:ख न हो! विचार किया जाय तो दु खसाध्य भी मुझे स्वीकार होगा। ६-१२

१ कन्या को अच्छे वस्त्र पहनाकर और आभूषणो से अलकृत कर विद्वान् वर को प्रदान करना, यही ब्राह्म विवाह है। यज्ञ के अवसर पर कन्या को वस्त्रादि से सजाकर ऋत्विक् (पुरोहित) को प्रदान करना, यह दैव विवाह है। वर से एक या दो गोमिथुन लेकर उसको कन्याप्रदान करना, यही आर्षविवाह है। 'दोनो साथ धर्म करो" ऐसा नियम वतलाकर कन्यादान करना, यह प्राजापत्य विवाह है। कन्या के नातेदारो को या स्वय कन्या को धन देकर उसका ग्रहण करना यह आसुर विवाह है। वर और कन्या का स्वेच्छा से सयोग, यह गान्धर्व विवाह है। मार-तोडकर रोती चिल्लाती हुई कन्या को उसके घर से छीन ले जाना, यह राक्षस विवाह है। सोती हुई, मत्त या पागल स्त्री का एकान्त मे उपगमन, यह पैशाच विवाह है और यही विवाहो मे पापिष्ठ भी है। देखो-मनुस्मृति ३, २७-३४।

पेरिट्टु शकुन्तळयॆन्निवळॆक्कतिनाल् ञान्
भारिच्च मोदत्तोटु मकळाय् वळर्त्तुन्नेन् । १५
नेरत्ते पऱञ्ञतन्नम्मुनियोटु तातन्
पारमार्त्थिकन् चॊन्नतॊक्क ञान् केट्ट मूल १६
ऎन्नुटॆ जन्ममॆल्लामऱिञ्ञेनप्पोळ् ञानु
निन्नोटु परमार्त्थ पऱञ्ञेनऱिञ्ञालुम् । १७

गान्धर्व्वविवाहम्

अक्कथ केट्टु तॆळिञ्ञक्काल दुष्षन्तनु
पुष्करशरमेटु कन्यकयोटु चॊन्नान् । १
सुव्यक्त राजपुत्रि नीयॆन्नुवन्नितिनि
निर्व्व्याज परिग्रहिच्चीटणमॆन्नॆयिप्पोळ् । २
ब्राह्मवुमार्ष दैव प्राजापत्यवु पुन-
रासुरं गान्धर्व्ववु राक्षस पैशाचवु ३
वैवाहकर्म्ममॆट्टुविधमीवण्णमतिल्
क्ष्मावरन्माक्कु कॊळ्ळां गान्धर्व्व राक्षसवु । ४
दैवज्ञनाय मनुवीवण्ण चॊन्नमूल
केवल गान्धर्व्वकॊण्टॆन्नॆ नी वरिक्कणं । ५

स्वर्गलोक चली गयी। शकुन्तो (पक्षियो) ने कुछ दिन तक उस सन्तान का लालन किया, फिर पालने के लिए मुझे समर्पण किया। इसलिए मैने उसको शकुन्तला नाम दिया और वडे प्रमोद के साथ उसको पुत्री की तरह पालता हूँ। पिताजी ने उस मुनि से जो कहा था वह सच था। सच्चे पिताजी की कही सभी वात मैने सुनली थी, इसलिए मैने अपने जन्म के सम्बन्ध मे सब जान लिया। इसलिए मैने आपसे सच ही कहा है। १३-१७

गान्धर्वविवाह

यह कथा सुनकर प्रसन्न होकर कमलबाण से व्यथित दुष्यन्त ने उस कन्यका से कहा। 'स्पष्ट है कि तुम राजकुमारी हो। इसलिए तुम अब बिना व्याज के मुझे स्वीकार करो। ब्राह्म, आर्ष, दैव, प्राजा-पत्य, आसुर, गान्धर्व, राक्षस, पैशाच—इस प्रकार आठ तरह के विवाह

एतुमे दोपमिल्ल खेदिक्कवेण्ट वाले !
साधिच्चु मनसि ञान् चिन्तिच्चतॆन्नु वन्नु । २१
मून्नु लोकवु पुकळ्कॊण्टॊरु कुमारनॆ
मून्नु वत्सर कॊण्टु पॆटितु शकुन्तळ । २२
पुष्पवृष्टियुं चॆय्तारभॆकन् पिऱन्नप्पो-
ळप्सरस्त्रीकळॆल्लां तुटङ्ङी पाट्टुं कूत्तु । २३
देवदुन्दुभिकळुं घोपिच्चङ्ङुण्टाय्वन्नु
देवकळिवन् चक्रवर्त्तियाय् वरुमॆन्नार् । २४
जातकर्म्मादिकळु चॆय्तितु मुनिवरन्
जातनायवनॆल्ला विद्ययुं पठिप्पिच्चू । २५
तापसि शकुन्तळ नन्दननोटु कूटि-
ब्भूपतितन्नॆच्चिन्तिच्चातुरयाय्वाळुन्नाळ् २६
निष्ठुरमृगङ्ङळॆ निग्रहिक्कयुमोरो
दुष्टराक्षसकुल नष्टमाय् चमकयु २७
पुष्टविक्रमत्तोटॆ तुटङ्ङी दुष्पन्तजन्
तुष्टिपूण्टितु मुनिवर्ग्गवु द्विजन्मारु । २८
द्वादशसवत्सरं चॆन्नितु कुमारनुं
वेदशास्त्रादिकळु पाठं चॆय्तुऱच्चितु । २९

सिद्धि हुई, इतना ही हुआ है" । शकुन्तला ने तीनो लोको मे कीर्ति प्राप्त करनेवाले एक कुमार को तीन वर्षो मे जन्म दिया । जव वच्चे का जन्म हुआ तव अप्सराओ ने पुष्पवृष्टि की और गाना-नाचना प्रारम्भ किया । देवो की दुन्दुभियो का घोष सुनाई दिया और देवो ने घोपित किया कि यह चक्रवर्ती होगा । मुनिवर ने उसके जातकर्म आदि सस्कारो का अनुष्ठान किया और उसको सभी विद्याओ को पढाया । २०-२५ जव तापसी शकुन्तला अपने पुत्र के साथ राजा का ध्यान करती हुई दु खित रहती थी तव दुष्यन्त के पुत्र ने क्रूर जन्तुओ का निग्रह करना और वडे पराक्रम के साथ दुष्ट राक्षस कुलो को एक-एक करके नाश करना प्रारम्भ किया । मुनिवर्ग और ब्राह्मण वडे प्रसन्न हुए । कुमार का वारहवाँ वर्ष पूरा हुआ । उसने अभ्यास करके सभी वेदो और शास्त्रो को कण्ठस्थ कर लिया । २६-२९

अन्ततेन्नरियान्नु सन्तापमुण्टाकेण्ट
चिन्तिच्चाल् कृच्छ्रसाद्ध्यमेङ्किलु कोळ्ळामल्लो । १२
निन्नुटे पुत्रनायिट्टेन्निलुण्टाकुन्नवन्
तन्ने नी राजावाक्किकप्पिन्ने वाळिक्कामेन्नु
अन्नोटु सत्य चेय्किलरुतेन्निल्लतानु । १३
दुर्ग्गतियुण्टां वृथामैथुनत्तिन्नेन्नेन्नो
सल्गुणनिधे ! तवञान् परञ्ञीटेणमो । १४
धात्रीशनवळ्चोन्न सत्यवु चेय्तुकोटु-
त्तास्थया कृतयुगकालधर्म्मवु चेय्तु । १५
कान्तया शकुन्तळतन्नेयु पुणर्न्नितु
गान्धर्व्वविधियालेन्नरिक नृपोत्तम ! १६
चतुरगिणियाय सेनयुमाय् वन्नु आन्
कुतुकमोटु निन्नेक्कोण्टुपोय्क्कोळ्वेनेन्नु १७
समयंचेय्तु नृपन्तन्नुटे राज्य पुक्कान् ।
कमलाक्षियु गर्भ धरिच्चाळन्नुतन्ने । १८
कण्वमामुनितानुमन्नेरं पोन्नुवन्नान्
कन्यक पेटियोटे नाणिच्चु निन्नाळल्लो । १९
दिव्यलोचनकोण्टु सर्व्ववुं कण्टु मुनि
दिव्यमानिनियाय पुत्रियोटरुळ्चेय्तान् । २०

अगर आप शपथ करेगे कि जो आप का पुत्र मुझसे पैदा होगा उसी को आप राजा वनायेगे तो आप का प्रस्ताव मुझे अस्वीकार नही है। हे सद्‌गुणो की निधि ! वृथा मैथुन से दुर्गति होती है, यह मुझको आप से कहने की क्या आवश्यकता है ? राजा ने उसका वचन शपथपूर्वक स्वीकार करके सादर कृतयुग धर्म को स्वीकार कर लिया। हे राजवर ! इस प्रकार उन्होने गान्धर्व विधि के अनुसार अपनी कान्ता शकुन्तला को अपनाया। "मै चतुरगिणी सेना के साथ आकर तुम्हे वड़े कौतुक के साथ ले जाऊँगा," यह कहकर राजा ने अपने राज्य मे प्रवेश किया। उस कमललोचना शकुन्तला ने उसी दिन गर्भ धारण कर लिया और महामुनि कण्व भी उसी समय वापस आगये। कन्यका तो भयभीत और लज्जित हुई १३-१९ मुनि ने अपनी दिव्यदृष्टि से सव देख लिया और अपनी दिव्य और मानिनी पुत्री से कहा, "तुम्हारा कोई दोप नही है, खेद मत करो, मैंने अपने मन मे जो सोचा था उसकी

तातनेप्पिरियुन्न दुःख कोण्टवळप्पोळ्
चूतेलुंमुलतन्मेलिटिटु वीणीटुन्न- १०
नेत्रावु तुटच्चभिवाद्यवु चेय्तु तोळु-
तास्थया प्रदक्षिण चेय्तु तन् पुत्रनोटु ११
गद्गदाक्षरत्तोटु यात्रयुचोल्लि मेल्ले
निर्ग्गमिप्पतिन्नाशु तुनिञ्ञु शकुन्तळ । १२
मुनियुं तनयने मटियिलेटुत्तुव-
च्चनुमोदत्तोटणच्चाश्लेषचेय्तु नन्नाय् १३
तलयिल् पलवुरु चुम्बिच्चु चोल्लीटिनान्
पलनाळ् वाळ्क भुवि गुणवानाय् नीयेन्नु । १४
पलवुमाशीर्व्वचनादिकळ्चेय्तु पिन्ने
कलशङ्ङळु जपिच्चीटिनान् पिन्नेत्तन्टे १५
मकळेक्करकोण्टु तटवि मन्दं मन्द
सुखमाय् वरिकेन्नु परञ्ञोरनन्तर १६
अश्रुक्कळ् पोळिक्कयुमुळ्क्कन विटुकयु
निश्वासं वरिकयुं निस्सहं चिन्तिक्कयु १७
मानुषभावकोण्टु मामुनिक्कतुनेर
मानसखेद चेरुतुण्टायितेन्नेवेण्टु । १८
शीर्ण्णपर्ण्णाम्बुवायुफलमूलाशिकळाय्
तार्ण्णपल्यङ्क स्थलस्थण्डिलशायिकळाय् १९

पुत्र के साथ प्रस्थान करो, वृद्धतापस और मेरे शिष्य तुम्हारे साथ जायेंगे। तब शकुन्तला अपने पिता से वियोग होने के कारण स्तनों पर गिरते हुए आँसुओं को पोछकर, अभिवादन, नमस्कार और सादर प्रदक्षिणा करके अपने पुत्र के साथ रुँधे हुए कण्ठ से विदा लेकर धीरे-धीरे घर से निकलने के लिए तैयार हुई। ७-१२ मुनि ने भी अपने पुत्र (नाती) को गोद मे लेकर बड़े आनन्द के साथ छाती लगाया और बार-बार सिर पर चुम्बन करके उससे कहा—"अनेक वर्षो तक गुणवान् होकर पृथ्वी पर राज करो"। तदनन्तर अनेक आशीर्वाद देकर मङ्गलकलशो का जप किया। तत्पश्चात् अपनी पुत्री को हाथ से धीरे-धीरे स्पर्श करते हुए कहा—"सुख से रहो"। फिर क्या था, महामुनि के आँसू गिरे, धैर्य शिथिल हुआ, नि.श्वास निकले, असह्य चिन्ता हुई, और अपनी मानवता के कारण उनके मन मे खेद हुआ। १३-१८ तदनन्तर मुनिवर कण्व ने सूखे पत्र, जल,

शकुन्तळयुटे भर्तृसमीपत्तेक्कुळ्ळ यात्र

तातनां मुनिवरन् पुत्रियोटरुळ्चेय्तान् :
नी तव भर्त्तावित्तेच्चेन्नु काणणमिनि १
स्वातन्त्र्यं नारिमार्क्किल्लेन्नल्लो चोल्लीटुन्नु ।
तातन्तान् रक्षिक्कणं कौमारवयस्सिङ्कल् २
भर्त्तावु रक्षिक्कणं यौवनवयस्सिङ्कल्
पुत्रन् तान् रक्षिक्कणं वार्द्धक्यवयस्सिङ्कल् । ३
देवकळ्क्केल्लां विष्णु देवतयल्लो भूमि-
देवन्मार्क्केल्लामग्नितानु ब्रह्मावु दैव । ४
लोकङ्ङळ्क्केल्लां दैव ब्राह्मणरेन्नु नूनं
मूर्खनाकिलु भर्त्ता नारिमार्क्केल्लां दैव ! ५
चेतसा वाचा वृत्या कर्म्मणा भर्त्ताविने-
स्सादरं शुश्रूषिक्क नल्लतु निङ्ङळ्क्केल्ला ६
अतिलु पतिव्रतमाराकु कुलस्त्रीकळ्-
क्कतिनुमीतेयोरु धर्म्ममिल्लरिक नी । ७
गतियुं वरुमिहलोकसौख्यवु वरुं
पतिशुश्रूषणंकोण्टेन्नु चोल्लुन्नु वेदं । ८
पुत्रनुं नीयु कूटिप्पोकण मटियाते
वृद्धतापसन्मारुं शिष्यरुं तुणपोरुं । ९

शकुन्तला का अपने पति के पास जाना

शकुन्तला के पिता मुनिवर कण्व ने पुत्री से कहा—"अब तुम जाओ और अपने पति का दर्शन करो। कहा तो यही गया है कि नारियो के लिए स्वातन्त्र्य नही है", कौमारावस्था मे स्त्री की पिता रक्षा करे, यौवनावस्था मे पति रक्षा करे और वार्धक्य मे पुत्र रक्षा करे। देवो के लिए विष्णु ही देव है और भूदेवो (ब्राह्मणो) के लिए के लिए अग्नि और ब्रह्मा ही देव हैं। नि.सन्देह जनता के लिए ब्राह्मण ही देव है और मूर्ख ही क्यो न हो किन्तु पति ही नारियो के लिए देव है। मनसा, वाचा, वृत्या और कर्मणा पति की सेवा करना, यही तुमलोगो के लिए ठीक है। १-६ विशेषत पतिव्रता कुलस्त्रियो के लिए इससे बढकर कोई धर्म नही है। वेद कहता है कि पति की सेवा से [illegible] सुख प्राप्त होता है और
भी अच्छी गति प्राप्त [illegible] ।ए अब तुम बिना ७८

शतघ्नि चक्रयन्त्रशतङ्ङळ् पलतरं
रथघ्नतरयन्त्रप्पालङ्ङळ् पलतरं ३०
हर्म्म्यप्रासादङ्ङळु मण्डपवरङ्ङळु
निर्म्मलपुण्यवीथि प्रपकळ् सभातल ३१
कैलासशिखरौघाकारगोपुरङ्ङळुं
शैलसन्निभकरिप्रवरालयङ्ङळु ३२
मन्दुरकळुं पत्तिमन्दिरङ्ङळु वर-
सुन्दरीजन वाळु मन्दिरनिकरवु ३३
चन्द्रिकाकरलसन्माळिकागणङ्ङळुं
चन्द्रिकाङ्कणङ्ङळु नाटकशालकळु ३४
द्वारतोरणपरिशोभितमाय पुर
पारिटत्तिनु तॊट्टुकुरियॆन्नतुपोलॆ । ३५
पुष्करणिकळ् पलवुद्यानवनङ्ङळुं
पुष्कराक्षिकळ् वाळुमवरोधनङ्ङळुं ३६
स्वधर्म्मस्थन्माराय नानावर्ण्णाश्रमिकळ्
सुतदारङ्ङळोटु वाणीटु गृहङ्ङळु ३७
नित्यमुत्सवकॊण्टु शोभिच्च मन्दिरङ्ङळ्
सत्यतत्परन्मारा वैश्यन्मार्गृहङ्ङळुं ३८
रत्नकाञ्चनधनधान्यौघसमृद्धियु-
मग्निहोत्रङ्ङळ् नल्ल पण्डितन्मारायुळ्ळोर् ३९

थी । २५-२८ अनेक प्रकार की खाइयाँ, प्रासाद, छज्जे, हाथीखाना और विविध भित्तिचित्र,शतघ्नियाँ, चक्र, विविध यन्त्र रथघ्न[1], यन्त्ररूप पुल, हर्म्य, महल, विविध श्रेष्ठ मण्डप, निर्मल और पावन वीथियाँ, प्रपाये, (पौसराएँ), सभागृह, कैलास के सिखरो के समान गोपुर, पर्वत के समान हाथियों की शालाएँ, घुडासाल, सैनिको के निवास स्थान, सुन्दरियो के रहने योग्य गृह, चान्दनी से चमकनेवाले प्रासाद, चान्दनी के आङ्गन, नाटकशालाएँ, इनसे और द्वार-तोरणो से परिशोभित पुर था, मानो पृथिवी के माथे पर लगा तिलक हो । २९-३५ अनेक तालावो, विविध उद्यानो, कमलाक्षियो के रहने योग्य अन्त पुरो, अपने-अपने धर्म का पालन करनेवाले विविध वर्ण और आश्रम के अनुयायियो, पुत्र, पत्नी आदियो से विराजमान अनेक गृहो, प्रतिदिन उत्सवो से शोभित मन्दिरो, सत्य का पालन करनेवाले

१ एक प्रकार का प्रचीन शस्त्र ।

शान्तमानसन्माराय् निर्ज्जितेन्द्रियन्माराय्
दान्तन्माराय् सन्तत परमहसन्माराय् २०
धमनीसमुदायसततगात्नमाराय्
समवीक्षणन्माराय् तपसा कृशन्माराय् २१
वल्ककलाजिनधरन्माराय् सुव्रतिकळा-
युळ्ळ्कनेमोट्टु शक्तियुक्तधारिकळायि २२
निटिलत्तिङ्कलूद्ध्र्वं पुण्ड्रमुळ्ळवर् चिलर्
जटिलन्माराय् चिलर् मुण्डन्मारायुमुळ्ळ २३
मुनिमारेयु निजशिष्यरामवरेयु
तुणयाययच्चितु कण्वना मुनिवरन् । २४
शैलप्रस्रवणङ्ङळ् वनङ्ङळ् नदिकळु
शैलङ्ङळ् नितम्बङ्ङळ् कन्दरङ्ङळु पिन्ने २५
राष्ट्रङ्ङळ् नगरङ्ङळाश्रमप्रवरङ्ङळ्
गोष्ठङ्ङळ् मुख्यदिव्यक्षेत्रङ्ङळुद्यानङ्ङ- २६
ळेन्निव कटन्नुपोय् मध्याह्नकालत्तिङ्कल् ।
चेन्नितु महाराजगोपुरद्वारत्तोळ २७
ऐळार्त्थं शतक्रतुनिर्म्मितमाय पुर-
मैळिविळ्यर्त्थं मुन्नमळकापुर पोले । २८
परिखापुराट्टोपतल्पङ्ङळ् पलतर
पारणशाल भित्तिचित्रङ्ङळ् पलतर २९

वायु, फल, मूल आदि खानेवाले तृण के विस्तर पर या नगी भूमि पर सोनेवाले शान्तचित्त, इन्द्रियो को वश मे रखनेवाले, दान्त, सदैव परमहस की दशा मे रहनेवाले धमनीसमुदाय (नाड़ियो) से व्याप्त शरीरवाले, सभी पर समदृष्टि रखनेवाले, तप के कारण दुवले, वल्कल और कृष्णाजिन धारण करनेवाले, व्रत रखनेवाले, धैर्य और आभ्यन्तर शक्ति से युक्त, माथे पर ऊर्ध्वपुण्ड्र धारण करनेवाले, अनेक जटाधारी, और अनेक मुण्ड-मुनियो को और अपने शिष्यो को रक्षा के लिए साथ भेज दिया । १९-२४
पर्वतो से निकलती हुई निर्झरिणियाँ, वन, नदियाँ, अनेक गिरि, पहाडी मैदान, गुफाएँ, अनेक राष्ट्र, नगरियाँ, अच्छे-अच्छे आश्रम, गोशालाएँ, महत्त्वपूर्ण देवालय, उद्यान, यह सब पार करके मध्याह्न मे राजा के गोपुरद्वार तक पहुँचे, जहाँ वह नगर था जिसे इन्द्र ने ऐल (पुरूरवा) के लिए बनाया था, जैसे पहले ऐलविल (कुबेर) के लिए अलका बनायी गयी

सुन्दरी शकुन्तळ नन्दननोट्टु कूटि
मन्दाक्षभावत्तोट्टु मन्दं पोय् चॅल्लुन्नेर ५०
नन्दिच्चु कुमारनॆक्कण्टवरॆल्लावरु-
मिन्दुवो पुनरिवनिन्द्रनो कन्दर्प्पनो ५१
स्कन्दनो मुकुन्दनो चन्द्रचूडनो चॊल्लि-
नॆन्नॆल्लामोरोजन कण्टानन्दिक्कुनेरं ५२
दुर्ज्जनबहुलमा नगरप्रवेशन-
मिज्जनत्तिनु योग्यमल्लॆन्नु निरूपिच्चु ५३
निवर्त्तिच्चितु मुनिवर्ग्गवुं शिष्यर्कळु ।
सुवृत्त शकुन्तळ सुपुत्रनोट्टुकूटे- ५४
द्धरित्रीपति वाळुमास्थाने चॆन्नुनिन्नाळ् ।
चरित्र कण्टु लोकर् बहुमानिच्चु पारं ५५
देवेन्द्रसदृशनां भर्त्तावुतन्नॆक्कण्टु
भावनयाले वन्दिच्चीटिनाळ् शकुन्तळ । ५६
अच्छन्टॆ पादङ्ङळिल् वीणुटन् नमस्कार-
मिच्छया चॆय्तीटुण्णी नीयॆन्न् जननितान् ५७
चॊन्नतु केट्टु नमस्करिच्चु दौष्पन्तियु ।
निन्नितु पितावुतन्नापादचूटं नोक्कि ५८

थे। अगर कोई उस नगरी मे जाये तो उसे अपार आनन्द प्राप्त हो। ४३-४९ सुन्दरी शकुन्तला जब अपने पुत्र के साथ शर्माती हुई धीरे-धीरे जा रही थी तब सब लोग कुमार को देखकर प्रसन्न हुए और कहने लगे—"यह क्या चन्द्रमा है या इन्द्र है या कन्दर्प (कामदेव) है, या स्कन्द है, या मुकुन्द है या चन्द्रचूड (शिवजी) है ? ऐसा कहकर सभी आनन्द अनुभव करने लगे। उस समय यह समझकर कि दुर्जनो से भरे इस नगर मे प्रवेश करना हम लोगो के लिए ठीक नही है मुनिजन और शिष्यवर्ग लौट गये। पर सदाचारी शकुन्तला अपने पुत्र के साथ उस सभामडप मे पहुँच गयी जहाँ राजा दुष्यन्त विराजमान थे। उसका चरित्र देखकर लोगो ने बड़ा आदर किया। शकुन्तला ने तो देवेन्द्र के समान अपने पति को देखकर हृदय से वन्दना की। ५०-५६ "बेटा ! पिताजी के चरणों मे पडकर सादर नमस्कार करो", माता की यह आज्ञा सुनकर दौष्णन्ति (दुष्यन्त के पुत्र) ने नमस्कार किया। और पिता को पैर से सिर तक देखने लगा। यह देखकर सब अत्यन्त चकित हुए।

दानशीलन्माराय करुणार्द्रात्माक्कळु
मानशीलन्माराय भटन्मारायुळ्ळोरु ४०
सततमकार्यङ्ङळकलॆ वॆटिञ्ञुळ्ळो-
रधर्म्मभीरुक्कळाल् सपूर्ण्णमाय राज्य । ४१
स्वर्गवुमतिनोटु तुल्यमल्लॆन्नु तोन्नु
सल्गुणपरिपूर्ण्णमॆत्रयु चित्रं पार्त्ताल् । ४२
पत्तनमद्ध्ये राजमन्दिर मनोहर
वित्तसञ्चयपूर्ण्णमुत्तमसभायुत । ४३
ब्राह्मणप्रवररु भूपतिवीरन्मारु
धार्म्मिकन्मारा धनपतिकळ् वैश्यन्मारु ४४
सद्विजभक्तन्मारामुत्तमशूद्रन्मारुं
सद्वृत्तन्मारायमटुमुळ्ळ वर्ण्णिकळ्तामु ४५
सूतन्मार् मागधन्मार् वन्दिकळ् गायकन्मार्
पादसेवकन्मारुं स्तुतिपाठकन्मारु ४६
नर्त्तकन्मारु नल्ल नर्त्तकीजनङ्ङळु
उत्तमवाद्यङ्ङळॆ वदिक्कुन्नवर्कळु ४७
आन, तेर्, कुतिर, कालाळाय, सैन्यङ्ङळु-
मानकपटहादि शंखनादङ्ङळोटुं ४८
आनन्दं वरुमारु सेविच्चु सदाकाल-
मानन्द पारमुण्टामप्पुरि तन्निल् चॆन्नाल् । ४९

वैश्यो के घरो, रत्न, सुवर्ण, धन-धान्य आदियो की समृद्धि, अग्निहोत्र का अनुष्ठान अच्छे-अच्छे विद्वानो, दानशीलो, करुणा से परिपूर्ण हृदयवालो, मानशील सैनिको, और अधर्म से डरनेवालो से वह राज्य परिपूर्ण था। स्वर्ग भी उसके तुल्य नही प्रतीत होता था। वह सद्गुणो से परिपूर्ण था और देखने मे वहुत सुन्दर था। ३६-४२ नगर के वीच मे राजा का मनोहर प्रासाद था। जो धन के सञ्चय से परिपूर्ण था और जिसमे एक उत्तम सभागृह था। वहाँ श्रेष्ठ ब्राह्मण, वीर क्षत्रिय, धार्मिक धन के स्वामी वैश्य, अच्छे द्विजो की सेवा करनेवाले उत्तम शूद्र, और अनेक सदाचार रखनेवाले ब्रह्मचारी सूत (भाट), मागध (चारण), बन्दी, गायक, पादसेवक, स्तुतिपाठक, नर्तक और अच्छी-अच्छी नर्त्तकियाँ, उत्तम वाद्यो को वजानेवाले, तथा हाथी, घोडे, रथ और पैदल सैनिक आदि भी थे जो अपने आनक (भेरी) और दुदुभियो के साथ आनन्दप्रद सेवा करते

दुष्पन्तनृपवरनीवण्णमवळोटु
दुस्सहमायवाक्कु चौन्नतु केट्टनेरं ६९
व्रीळयु पूण्टुपार दुःखवु मुळुक्कयाल्
सालभञ्जिकपोलें निन्नितु स्वल्पनेरं । ७०
संरभरोपंकोण्टु ताम्रमा नयनवु
सौररश्मिकळ्पोलें तीक्ष्णमा तेजस्सोटु ७१
प्रस्फुरमाणमायोरोष्ठसपुटत्तोटुं
प्रस्फुलिङ्गङ्ङळोटु कूटि नोक्कीटुनेरं ७२
भूपति दहिच्चुपोमेन्नु तोन्नीटुवण्ण
तापसि निन्नु रण्टु नाळिकनेर पिन्नें । ७३
स्वाकार मऱच्चितु तेजसा शकुन्तळ
शोकमोटवनीशन्तन्नोटु चौल्लीटिनाळ् । ७४
ऎन्तिनित्तरमिप्पोळेन्नोटु पऱयुन्नु
चिन्तिक्क नृपवर ! मऱन्नीलेन्नु नून । ७५
आत्मावे वञ्चिच्चीटु चोरनुळ्ळोरु पाप-
मात्मना निरूपिक्किल् मटोरुवनुमुण्टो । ७६
आदित्यचन्द्रन्मारुमनलानिलन्मारु-
माकाशं भूमि जल हृदय यमन्तानु
अहस्सु रात्रितानुं रण्टु सन्ध्यकळ् धर्म्म- ७७

प्रकार इस उत्तम सभा मे आकर असत्य न वोलो। ६४-६८ नृपवर दुष्यन्त की यह असह्य वाणी सुनकर शकुन्तला अत्यन्त लज्जित और दुःखित होने के कारण थोडी देर के लिए एक प्रतिमा की भाँति खडी रही। आवेग और क्रोध के कारण ताँवे की तरह लाल आँखो, सूर्य की किरणो की भाँति तीक्ष्ण तेज, स्फुरण करने वाले ओठो और निकलते हुए अग्निकणो के साथ दो नाड़िका (घडी) तक देखती रही, मानो राजा जल ही जायगा। ६९-७३ तदनन्तर शकुन्तला ने अपने तेज से आकार वदल दिया और वड़े शोक के साथ राजा से कहा। "आप मुझसे क्यो इस प्रकार कहते है ? जरा सोचिए, हे नृपवर ! यह नही हो सकता कि आप भूल गये ! अगर सोचा जाय तो जो चोर अपनी ही आत्मा की वञ्चना करता है उससे वढकर कोई पापी नही है ? हे भूपाल ! सूर्य, चन्द्र, अग्नि, वायु, आकाश, पृथिवी, जल, अपना हृदय, यमराज, दिन, रात, दोनो सन्ध्याएँ, धर्म इस प्रकार चौदह व्यक्ति, प्राणियो का किया जानते है, यह

निन्नवरतुकण्टु विस्मय पूण्टारेट ।
नन्निवनेन्नु तन्ने चॊल्लिनारेल्लावरुं । ५९
मन्नवनुरचॆय्तानन्नेरमवळोटु
नन्दननोटुंकूटॆ वन्न तापसि केळ् नी ६०
चॊन्नतु तरुवन् आनिल्ल सशयमेतु
निन्नुटॆ मनोरथ चॊल्लुक मटियातॆ- ६१
येन्नतु केट्टु चॊन्नाळन्नेरं शकुन्तळ ।
मन्नवा ! तव सुतनेन्निलुलपन्ननिवन् ६२
वन्नितु कुमारनु यौवनारभकाल-
मिन्निनिच्चॆय्तीटण यौवराज्याभिषेकं । ६३
कण्वमामुनियुटॆ पर्ण्णशालयिल्निन्नु
मन्नवा ! समागम नम्मिलुण्टायनेरं ६४
ऐन्नोटु चॆय्तुतन्न सत्यवु मऱन्नितो
धन्यनाकिय भवानेन्नेयिन्नेन्नपोलॆ ? ६५
अन्नतु केट्टु नृपनन्नेरमुरचॆय्तान्
निन्नोटुकूटियुळ्ळ सगम तोन्नीलेतु ६६
इक्कथ नन्नुनन्नितॆत्र वैचित्र्यमोर्त्ताल् ।
निल्क्किलुं कणक्किनिप्पोकिलु कणक्किनि । ६७
ओत्ततु चॆय्तालु नीयित्तरं पऱयात-
युत्तमसभातलत्तिङ्कल्निन्नसत्यङ्डळ् । ६८

सभी ने कहा—'यह कुमार अच्छा है' । तब राजा ने उससे (शकुन्तला से) कहा—"हे तापसि ! जो अपने पुत्र के साथ आयी हो सुनो ! जो माँगोगी सो दूँगा, इसमे सदेह नही, इस लिए विना सकोच के अपनी इच्छा बता दो ।" यह सुनकर शकुन्तला ने कहा—"हे भूपाल ! यह आपका पुत्र है जो मुझसे उत्पन्न हुआ है । इसका यौवन अव प्रारम्भ हो गया है । इस लिए इसका युवराज के पद पर अभिषेक कीजिए । ५७-६३ हे राजन् ! जब महामुनि कण्व की पर्णशाला मे आपका और मेरा समागम हुआ था तब आपने जो शपथ किया था उसे आप भूल तो नही गये । जिस प्रकार आज आप मुझको ही भूल गये ?" यह सुनकर राजा ने उस समय कहा—"तुम्हारे साथ कोई सगम मुझे स्मरण ही नही है । यह अच्छा किस्सा रहा ! यह वहुत ही विचित्र वात है । चाहे तुम खडी रहो चाहे चली जाओ, तुम्हारी ख़ुशी है ! जो उचित है वही करो, पर इस

पातियु मनुष्यनु भार्ययेन्नरिञ्ञालुं ।
मेदिनीपते भार्य वलिय सखियल्लो । ८८
धर्म्मार्त्थकामङ्ङळ्क्कु कारण भार्ययत्रे ।
कर्म्मिकळाकुन्नतु भार्यावत्तुकळत्रे । ८९
वन्धुमानाकुन्नतु भार्ययुळ्ळवनत्रे ।
सन्तत गृहस्थन्मार् भार्यावत्तुक्कळत्रे । ९०
भार्यावत्तुक्कळत्रे सन्तोपिच्चीटुन्नतु
भार्यावत्तुक्कळत्रे निश्चलश्रीमत्तुकळ् । ९१
विविक्तवासत्तिङ्कल् तुणयु भार्ययत्रे
प्रवृत्तिक्कनुकरिक्कुन्नतु भार्ययत्रे । ९२
अश्रान्त प्रिय पऱयुन्नतु भार्ययत्रे
विश्वास्यनाकुन्नतु भार्ययुळ्ळवनत्रे । ९३
साक्षियायीटुन्नतुं भार्ययुळ्ळवनत्रे
मोक्षत्तेस्साधिप्पतु भार्ययुळ्ळवनत्रे । ९४
परवीजत्तें ग्रहिच्चीटुन्न कुलस्त्रीकळ्
नरक प्रापिक्कुन्नु कुलवु नशिप्पिक्कुं । ९५
परनाल् जनितन्मारायुळ्ळ पुत्रन्मारें-
प्परन्मारेन्नुतन्ने चोल्लुकेवेण्टू नूनं । ९६
पुत्रन्मारायीटुन्न शत्रुक्कळवरल्लो
वृद्धनेन्नवमानिच्चेत्रयु द्वेपिक्कयु ९७

मे लगता है। जान लीजिए कि पत्नी पुरुप का अर्धांश है। हे भूपाल ! पत्नी पुरुप की वडी सखी होती है। धर्म, अर्थ और काम का कारण वही है। जिनके पत्नी है वे ही कर्मयोगी होते हैं। जिसकी भार्या है वही वन्धुमान् है। गृहस्थो के सदैव पत्नियाँ हुआ करती है। जिसकी पत्नी है वही हर्प अनुभव करता है, जिसकी पत्नी है उसी की सम्पत्ति निश्चल रहती है। एकान्त वास मे पत्नी ही साथी होती है, भार्या ही मनुष्य की प्रवृत्तियो का प्रोत्साहन करती है, ८६-९२ निरन्तर मीठी वात कहनेवाली भी पत्नी ही है। जिसके पत्नी है वही विश्वास का पात्र होता है, जिसके पत्नी है वही साक्षी वनता है। मोक्ष प्राप्त करने-वाला भी वही है जिसके पत्नी है। जो कुलस्त्रियाँ पराए वीज का ग्रहण करती है वे नरक जाती है, अपने कुल का भी नाश करती है। पर पुरुप के द्वारा पैदा किये गये पुत्र पराये ही है, इसमे कोई सन्देह नही। पुत्र के

मेन्निवर् पतिन्नालुपेरुमुण्टरिञ्ञिट्टु
मन्नव ! जन्तुवृत्तमेन्नतु धरिच्चालु । ७८
प्राकृतपुरुषनेप्पोले नी सभयिङ्कल्
स्वाकृति मरच्चेन्नेस्सन्त्यजिच्चीटुन्नाकिल् ७९
उत्तमाङ्गवु नूरुनुरुङ्ङिङ्ङ वीळु निन-
क्कुत्तमपुरुषन्मार् सत्यत्ते लघिक्कुमो ? ८०
तत्त्वचित्तन्माराय तत्त्वज्ञन्मारायुळ्ळोर्-
वृत्तत्ते निरूपिक्क चित्तत्तिल् नृपोत्तम ! ८१
पुन्नाममायिट्टुळ्ळ नरकत्तिङ्कल्निन्नु
तन्नुटे पिताविने त्राण चेय्तीटुन्नवन्- ८२
तन्नुटे नाममल्लो पुत्रनेन्नुळ्ळ शब्द
मुन्नमे विधातावु चोन्नतेन्नरिञ्ञालुं । ८३
पुत्रनाल् मोदं प्रापिच्चीटुन्नु पितृक्कळुं
पुत्रपुत्रनाल् पितामहन्मार् मोदिक्कुन्नु ८४
पौत्रपुत्रनाल् मोद प्रपितामहन्मार्क्कु
पार्त्थिवशिखामणे वन्नुकूटुन्नु नून । ८५
भार्य्ययाकुन्नतवळेवळ् मन्दिरदक्ष,
भार्य्ययाकुन्नतवळेवळ् सत्प्रजापति । ८६
भार्य्ययाकुन्नतवळेवळ् वल्लभप्राण,
भार्य्ययाकुन्नतवळतिथिप्रियल्लो । ८७

जान लीजिए। अगर आप एक प्राकृत (नीच) पुरुष की भाँति इस सभा मे अपने स्वरूप को छिपाकर मुझे त्याग करेगे तो आपका उत्तमाग (शीर्ष) सौ टुकड़े होकर गिरेगा। उत्तम पुरुष कभी सत्य का उल्लघन नही करते हैं। हे राजवर ! जो तत्त्व का ध्यान करते है, जो तत्त्व को जानते है उनके वृत्त (व्यवहार) पर विचार कीजिए। ७४-८१ 'पुत्' नामक नरक से अपने पिता की रक्षा करनेवाले का नाम है यह 'पुत्र' शब्द। ब्रह्मा ने तो यह पहले ही कहा है। पुत्र से पितृजन प्रसन्न होते है, पुत्र के पुत्र द्वारा पितामह लोग प्रमोद प्राप्त करते है, पौत्र के पुत्र से प्रपितामहो की प्रसन्नता होती है, हे राजाओ के शिरोमणि ! इसमे कोई सन्देह नही है। ८२-८५ पत्नी कौन है ? वही जो घर मे निपुण है। पत्नी कौन है ? जो अच्छी प्रजा को जन्म देती है। पत्नी कौन है ? जिसका अपना पति ही प्राण है। पत्नी कौन है ? जिसका मन अतिथि-सत्कार

पुत्रदेहालिंगनमेत्रयु सुखमेरु ।
पुत्रस्पर्शत्तिल्पर स्पर्शनसुखमिल्ल १०८
कालु रण्टायुळ्ळोरिल् श्रेष्ठन् ब्राह्मणनल्लो
नालु कालुळ्ळवटिल् श्रेष्ठत्व पशुविनुं १०९
गौरवमुळ्ळवरिल् श्रेष्ठत्व गुरुविनुं
कारुण्यमुळ्ळवरिल् श्रेष्ठत्वं मुकुन्दनु ११०
स्पर्शनवस्तुक्कळिल् श्रेष्ठत्व तनयनु
स्पर्शनसुखमनुभविक्क भवानिप्पोळ् १११
सुतन्टे मूर्द्धाविङ्कल् प्राणिच्चु मनुजन्मार्
प्रतिनन्दिच्चीटुन्नु नृपतिशिखामणे ! ११२
जातकर्म्मत्तिङ्कले वेदमन्त्रवु तव
चेतसि पाठमल्लो मूढनल्ललल्लो भवान् ? ११३
मृगयाविवशनायाश्रमत्तिङ्कल् वन्नु
सुखमे परिग्रहिच्चीलयो मुन्नं भवान् ११४
उर्व्वशी पूर्व्वचित्ति सहजन्ययुं पिन्ने
दिव्यया मेनकयु विश्वाचि घृताचियु ११५
अप्सरस्त्रीकळिल्वच्चवर्कळरुवरु-
मद्भुताङ्गिकळतिल् ब्रह्मज मेनक तान् । ११६

के लेप से भी अधिक शीतल होती है । १००-१०६ प्रेम करनेवाली वेश्याओ का शरीर, कोमल वस्त्र, रत्न, जल, इन सभी वस्तुओ से पुत्रशरीर का आलिगन ही सुखप्रद है । पुत्रस्पर्श से अधिक सुख देनेवाला कोई स्पर्श नही है । दो पाँववालो मे श्रेष्ठ ब्राह्मण है, चार पाँववालो मे श्रेष्ठ गाय है, गौरवयुक्तो मे श्रेष्ठ गुरु है और कारुण्य जिनमे है उनमे मुकुन्द ही श्रेष्ठ है । जो स्पर्श करने योग्य वस्तुएँ है उनमे पुत्र ही श्रेष्ठ है, इस लिए आप अब स्पर्श-सुख का अनुभव कीजिए । हे नृपवर ! मनुष्य अपने पुत्र के शीर्ष को सूँघकर आनन्द अनुभव करते है । जातकर्म के वेदमन्त्र सब आपको कण्ठस्थ है, आप मूर्ख तो नही है । शिकार से थककर आप आश्रम मे नही पधारे थे और मुझसे गान्धर्व विवाह नही किया था ? १०७-११४ अप्सराओ मे उर्वशी, पूर्वचित्ति, सहजन्या, दिव्य मेनका, विश्वाची तथा घृताची, यह छह अप्सराएँ अत्यन्त सुन्दरी है । इनमे मेनका ही ब्रह्मजा है और वही मेरी माता है, यह जान लीजिए । ब्रह्मा का पुत्र है कुश, उसका पुत्र है कुशनाभ, उसका पुत्र है गाधि और उसका पुत्र

धिक्करिक्कयुं चौन्नालौन्नुमे केळाय्कयु
दु खं वर्द्धिक्कुवण्ण शुश्रूपिक्कयु पक्षे ९८
मक्कळेयुण्टाक्कुवान् अङ्ङळ् प्रण्टुण्टो चौल्लि
शिक्षिप्पानेंतुमूल अङ्ङळेयिवनेन्नु ९९
मन्मथविवशनायम्मयेक्कण्टु मोहि-
च्चुन्मदमोटु चेय्त सम्मतक्केटिन्निप्पोळ् १००
कल्मषमाकुन्नतु धर्म्मत्ते मरक्कयाल्
मर्म्मङ्ङळ् अङ्ङळोटु परञ्ञालेन्तु फल ? । १०१
इत्तर भर्त्सिच्चीटुं परजातन्माराय
पुत्रन्मारवरेयु पालिक्कु पितावेट । १०२
कण्टालु पिपीलिकाजातिकळ्पोलु पुन-
रण्डङ्ङळ् कळयाते सभरिक्कुन्नुवल्लो । १०३
कोकिलाण्डवु भरिच्चीटुन्नु वात्सल्यत्ताल्
काकन्मारात्मीयमेन्नोर्त्ततुमत्र चित्र । १०४
सर्व्वज्ञनाय भवानिङ्ङनेयिरिक्कुन्न
दिव्यना पुत्रन्तन्नेब्भरिच्चीटाय्वानेन्ते ? १०५
मलयोद्भवमाय चन्दनत्तिलुमेट-
मलियु त्वगिन्द्रिय सुतनेप्पुल्कुन्नेर । १०६
स्निग्धन्माराय वेश्यमारुटे शरीरवु
स्निग्धमां वासोरत्नजलमेन्निवटिलु १०७

रूप मे वे शत्रु ही है। वे अपने वृद्ध पिता का अपमान और द्वेष करते है, उसका तिरस्कार करते है, उसका कहना मानते ही नही, उसकी ऐसी सेवा करते है कि उसको दु ख प्राप्त हो। हमने तो पहले पुत्र पैदा करने के लिए नही कहा, हमको दण्ड देने का इसका क्या अधिकार है ? ९३-९९ कामदेव के वश मे आकर माँ पर मोहित होगया, और उन्माद मे अकार्य किया जो अव, धर्म को भूलने के कारण, पाप वन गया। हमसे मार्मिक वाते कहने से क्या लाभ है ? जो परबीज से उत्पन्न पुत्र पिता को इस प्रकार डाँटते है उनका भी पिता पालन करते है। आप देखे, च्यूटियाँ भी अपने अण्डो को विना खोये ले जाती है। कौए कोयल के अण्डो को प्रेम से पालते है, कितने आश्चर्य की वात है ! आप सर्वज्ञ होकर भी अपने ऐसे दिव्य पुत्र को क्यो नही स्वीकार करते है ? पुत्र के आलिङ्गन से मनुष्य की त्वचा मलयपर्वत मे उत्पन्न चन्दन

वाममारेन्नल्लयो भानिनिमारेच्चोल्लू
कामतल्परमारायुण्टायी नारीजन । १२६
मिक्कतु परवशमारेन्नुमङ्गियण-
मुळ्ळकान्पु क्रोधकोण्टु चञ्चलमायिट्टुळ्ळु । १२७
सत्यवु परयुमारिल्लवरोरुनाळु
मिथ्यापवाद कण्वनुण्टाक्किच्चमय्क्केण्टा । १२८
वन्धकियल्लो तव जननी मेनकयु
सन्तति निर्म्माल्यत्तेक्कणक्केयुपेक्षिच्चाळ् । १२९
कोकिलनरिपोले नी परभृतयल्लो
पोक वैकाते निन्नेक्काणकयिलिच्छयिल्ल । १३०
भोगलोलुपयाय पुंश्चलि नीयेन्नेल्ला
रागहीनतयोटे राजावु परञ्ञप्पोळ् १३१
सुन्दरि शकुन्तळ पिन्नेयुमुरचेय्ताळ्
निन्दावाणिकळ् केट्टु मन्दाक्षभावत्तोटुं । १३२
कटुकिन्मणिमात्रमुळ्ळोरु परदोप-
मुटने काणुन्नु नी निन्नुटे दोप पिन्ने १३३
कण्टालु गजमात्र काणुन्नीलेतुमत्तु
पण्डितन्मार्क्कुपोलुमुळ्ळोरु शीलमत्रे । १३४
निन्नुटे जन्मत्तेक्काळ् श्रेष्ठमेन्नुटे जन्म
मन्निटत्तिङ्कलेन्नि निनक्कु चरिक्कामो । १३५
मन्नव ! भूविङ्कलुमन्तरीक्षत्तिङ्कलुं
भेदमेन्नियेचरिच्चीटामिन्निनिक्कोटो । १३६

से चञ्चल रहता है। सच तो वे कभी वोलती ही नही। कण्वमुनि मेरे ऊपर झूठा अपवाद न लगाये। तुम्हारी माँ तो एक वेश्या है जिसने अपने सतान को निर्माल्य की भाँति त्याग कर दिया। कोयल की स्त्री की भाँति तुम पराए की पाली हो, जल्दी चली- जाओ, अव मुझे और देखने की इच्छा नही है। तुम केवल एक भोग की लालसावाली कुलटा हो।" जव राजा ने इस प्रकार की भावहीन वाते की तव सुन्दरी शकुन्तला ने अपनी निन्दा सुनकर लज्जा के साथ कहा—१२७-१३२ "सरसो के कण के तुल्य परदोप को तुम जल्दी देख लेते हो। अपना दोप जो हाथी के वरावर है, उसे तो देखते ही नही, यह प्रवृत्ति पण्डितो तक मे दिखाई देती है। तुम्हारे जन्म से मेरा जन्म कही श्रेष्ठ है।

अम्मयायतुमिनिक्कॅन्नतु धरिक्कणं
ब्रह्मनन्दनन् कुशन् तत्सुतन् कुशनाभन् ११७
तत्सुतनल्लो गाथि तत्सुतन् विश्वामित्रन्
तत्सुतयल्लो ञानु पृथ्वीशतिलकमे । ११८
इङ्डनॅ शकुन्तळ चॊन्न वाक्कुकळॆल्ला-
मॆङ्ङनॆ पऱयुन्नु कालमो पोरायल्लो । ११९
अङ्डनॆ पोकतॆल्लां दुष्यन्तन्तानु पिन्नॆ
निर्म्मलगात्रितन्नोटीवण्णमुरचॆय्तु । १२०
धार्ष्टचमॆत्रयुं पारमुण्टु नारिकळ्क्कॆन्नु
केट्टुकेळियेयुळ्ळू कण्टिट्टिल्लेव मुन्न । १२१
कुलटयाय नी वन्नॆन्नोटु कुलीनयॆ-
न्नलसालाप चॆय्ततखिलमलमलं १२२
सुवर्ण्णमणि मुक्ताभरणवस्त्रादिक-
ळवन्नु तरुवन् ञान् निनक्कु वेण्टुवोळ । १२३
पिन्नॆ नी निनक्कॊत्तदिक्किनु पॊय्क्कॊळ्ळेण
निन्निनिक्कालं कळिञ्ञीटाय्क वॆरुते नी । १२४
पार्त्थिवसभयिङ्कल् नाण कूटातॆ निन्नी-
वार्त्तकळिव चॊन्नतोर्त्तु ञान् पॊरुत्तीटां । १२५

है विश्वामित्र। हे भूपतिश्रेष्ठ, मै उसी विश्वामित्र की पुत्री हूँ।" इस प्रकार शकुन्तला ने जो बाते की वे सब कैसे कही जायँ, समय तो कम है। अच्छा, जाने दीजिए। तब दुष्यन्त ने निर्मल शरीरवाली शकुन्तला से इस प्रकार कहा। ११५-१२० "महिलाओ मे असीम धृष्टता होती है ऐसा तो मैंने सुना अवश्य था, पर इससे पहले देखा न था। कुलटा होकर तुमने मुझसे कुलीन स्त्री की बाते व्यर्थ कही। बस, अब समाप्त करो। जितना भी तुम चाहती हो उतना सोना, मणि, मोती, आभूषण, कपड़े आदि मै तुमको दूँगा। उसके बाद तुम इच्छा के अनुसार जहाँ भी चाहे चली जाओ। यहाँ रहकर व्यर्थ अपना समय न खराब करो। राजसभा मे निर्लज्ज होकर जो बाते तुमने कही उनको मै सह लूँगा। महिलाओ को तो 'वामा'[1] कहते ही है। नारीजन तो जन्म से ही काम-प्रधान होती है। १२१-१२६ वे अधिकांश अपने वश मे नही है। उनका मन क्रोध

[1] जो सीधी नही है।

मट्टुळ्ळजनङ्ङळ्क्कु कुट्टङ्ङळ् पऱञ्ञीट्टुं
मुट्टुतन्नुटे कुट्टमोन्नऱिकयुमिल्ल । १४६
कुट्टमिल्लातजनं कुट्टमुळ्ळवरेयुं
चेट्टु निन्दिक्कयिल्ल तम्मुटे गुणङ्ङळाल् । १४७
मत्तेभन् पांसुस्नानंकोण्टल्लो सन्तोषिप्पु
नित्यवुं स्वच्छजलंतन्निले कुळिच्चालुं । १४८
सज्जननिन्दकोण्टे दुर्ज्जनं सन्तोषिप्पू
सज्जनत्तिनु निन्दयिल्ल दुर्ज्जनत्तेयुं । १४९
क्षीरमांसादि भुजिच्चीटिलुममेध्यत्त
प्पाराते भुजिक्केणं सारमेयङ्ङळ्क्कॆल्लां । १५०
सत्यधर्म्मादिवेटिञ्ञीटिन पुरुषने
क्रुद्धनां सर्प्पत्तेक्काळेट्टवुं पेटिक्कणं । १५१
नास्तिकन्मारायुळ्ळोर् तङ्ङळुमेल्लां पुन-
रास्तिकन्मारो पऱयेणमेन्निल्लयल्लो । १५२
नास्तिकन्मारायुळ्ळोरसत्यवादिकळि-
लास्थया वसिक्कुन्नु कलियेन्नऱिञ्ञालुं । १५३
निर्म्मलमनस्सोटुं धर्म्मचारिकळायोर्
तम्मोटङ्ङेङ्ङुमट्टुत्तीटुकयिल्ल कलि । १५४
मूर्खनामवनोटु पण्डितन् शुभाशुभ-
माख्यानं चेय्ताल् मूर्खनशुभं ग्रहिच्चीटुं । १५५

मुख को सुन्दर समझते है। औरों के दोष बतलाया करते हैं और अपने दोष तो जानते ही नही। दोषों से रहित लोग दुष्टों की भी निन्दा नही करते है, उनके गुण ही इसका कारण है। प्रतिदिन स्वच्छ जल से नहानेवाला भी मदयुक्त हाथी मिट्टी में स्नान करके ही सन्तुष्ट होता है। दुर्जन तो सज्जनो की निन्दा करके ही सन्तुष्ट होता है और सज्जन तो दुर्जनो की निन्दा नहीं करता है। १४५-१४९ दूध, मांस आदि खाकर भी कुत्ते छिपकर विष्ठा खा लेते है। सत्य, धर्म आदि-रहित पुरुष से क्रुद्ध साँप की भाँति डरना चाहिए। जो नास्तिक है वे अपने को आस्तिक कहे, यह तो होता नही, जो नास्तिक और असत्य बोलनेवाले हैं उनके प्रति कलि बड़ा आदर प्रदर्शित करता है। जो शुद्ध मन के हैं और धर्म का आचरण करते है उनके निकट तो कलि कभी जाता ही नही। अगर विद्वान् किसी मूर्ख से शुभ और अशुभ की चर्चा करे तो मूर्ख अशुभ को

भेदवु नम्मिलेत्र पारमुण्टोक्कुंतोरु
चेतसि विचारिक्क भूपतितिलकमे ! । १३७
मेरुवु कटुकुमुळ्ळन्तरमुण्टु नम्मिल्
सारज्ञनल्लोट्टुमोर्त्तोळ धात्रीश भवान् । १३८
एतानु विचारमुण्टेन्नाकिलेन्नोटितु
भूदेवेन्द्रन्मार् केळ्क्केच्चोल्वानिल्लवकाशं १३९
निन्नुटे पूर्व्वपितामहनामायुन्नामा-
तन्नोळ महत्वमुण्टायिट्टिल्लारुमवन् १४०
तन्नुटे जन्म केट्टीट्टिल्ले नी नृपोत्तम ! ।
मुन्नमादिये शशाङ्कान्वयजातनाया- १४१
नुर्व्वीशन् पुरूरवा तल्सुतनायिट्टव-
नुर्व्वशि पेट्टुण्टायिट्टेन्नतोर्त्तुरच्चेय्क । १४२
अद्भुतपराक्रममुळ्ळ राजाक्कन्मारु-
ण्टप्सरस्त्रीकळ् पेटिट्टुत्तममुनिमारु १४३
मातृदोषकोण्टिल्ल दिव्यन्माक्कोरु दोषं
मेदिनीपते तव चेतसि निरूपिक्क । १४४
कण्णाटि काण्मोळवु तन्नुटे मुखमेटं
नन्नेन्नु निरूपिक्कुमेत्रयु विरूपन्मार् १४५

पृथिवी को छोडकर क्या आप और कही सञ्चार कर सकते हैं ? हे भूपाल ! मै तो भूमि तथा अन्तरिक्ष दोनो मे बराबर सचार कर सकती हूँ। आप और मुझ मे वहुत भेद है। हे राजवर, इस पर आप विचार करे। मेरु और सरसो का भेद आप और मुझ मे है। हे भूपाल, विचार करने पर आप विलकुल नासमझ मालूम होते है। १३३-१३८ अगर आप थोडा भी विचारशील होते तो ब्राह्मणो के सामने मुझसे इस प्रकार न वोलते। आपके परदादा आयु के समान कीर्ति किसी ने प्राप्त नही की है। हे राजवर ! क्या आपने उनके जन्म के सम्वन्ध मे नही सुना है ?। पहले तो चन्द्रवश मे राजा पुरूरवा हुए और उनके पुत्र के रूप मे उर्वशी ने आयु को जन्म दिया। यह सोचकर आप वोलिए। अद्भुत पराक्रम वाले अनेक राजा और उत्तम मुनिवर है जिनको अप्सराओ ने जन्म दिया है। माता के दोप से दिव्य पुरुपो का दोष नही होता है ? हे भूपाल, आप इस वात पर विचार कीजिए। १३९-१४४ ऐसे कुरूप भी है जो दर्पण (आइना) देखने के पहले अपने

सत्यत्तिन् फल सहस्राशमिल्लरिञ्ञालु
सत्यत्तिल् परमोरु धर्म्ममिल्लोर्क्कण नी । १६६
अेन्नतुपोलेतन्ने कण्टुकोळ्क सत्यवु
मन्नव ! निन्नोटेरे ञान् परञ्ञीटेणमो ? । १६७
अेन्नेल्ला शकुन्तळ परञ्ञोरनन्तर
विण्णिलुनिन्नशरीरि तन्नुटे वावय केट्टु । १६८
भरिच्चु कोळ्क तव पुत्रने वैकात नी
सुरस्त्री समयाय कौशिकपुत्रियोटु । १६९
भरतनेन्न नाममतिनालन्नु वानोर्
धरणीपतियोटु चोन्नतु केट्टमूल । १७०
कल्याणघोषत्तोटु कैक्कोण्टु शकुन्तळ
वल्लभनोटु कूटि सन्तोप प्रापिच्चप्पोळ् । १७१
भरतन्तन्ने नाट्टिन्नभिषेकवु चेय्तु
परिपालिच्चु राज्य पलनाळ् दुष्षन्तनुं । १७२
पिन्नेप्पोय् विण्णिल् पुक्कु मेनकयोळिच्चुळ्ळ-
विण्णवर्नारिमारोटोन्निच्चु मरुविनान् । १७३

हिस्सा भी नही प्राप्त होता है। सत्य से वढकर कोई धर्म नही है। सत्य को इस दृष्टि से देखिए हे राजन् ! मुझे आपसे अधिक कहने की क्या आवश्यकता है ?" शकुन्तला के इस प्रकार कहने के वाद आकाश से एक अशरीरी (विना शरीर की) वाणी सुनाई दी। "अप्सरा के समान विश्वामित्र की पुत्री के साथ अपने पुत्र का भरण (पालन) करो" १६३-१६९ देवो के इस प्रकार राजा से कहने के कारण उसका नाम 'भरत' हुआ। राजा ने वड़े शुभ समारोह के साथ शकुन्तला को स्वीकार किया। वह भी अपने पति के साथ मुख से रहने लगी। दुष्यन्त ने भरत को युवराज के पद पर अभिपेक करके अपने राज्य का अनेक वर्षो तक परिपालन किया। तत्पश्चात् जव स्वर्ग गये तव मेनका को छोड़कर अन्य अप्सराओ के साथ सुख से रहे। १७०-१७३

अन्नवु पुरीषवु कूटवे नल्कीटुकिल्
तिन्नीटु पुरीषत्तेप्पन्नियेन्तरिञ्ञालु । १५६
नल्लनायिरिप्पवन् नल्लतु ग्रहिच्चीटुं
वेळ्ळत्ते वेटिञ्ञु पालन्नमेन्नतु पोले । १५७
दुर्ज्जन चोल्लीटुन्नु सज्जनत्तेयुमेल्लां
दुर्ज्जनमेन्नतिनिक्केत्रयु चित्रमोर्त्ताल् । १५८
सज्जनमाकुन्नतु तङ्ङळेन्नाक्कीटुन्नु
दुर्ज्जनमाकात्तवरेन्नरिञ्ञतुमूलं । १५९
इत्तरमेन्तिन्नु ञान् वळरेप्परयुन्नु
तत्वमायतु परञ्ञीटुवन् केळ्क्कुन्नाकिल् । १६०
शतकूपत्तिल् पर वापियेन्नरिञ्ञालु
शतवापियिल् पर यागमेन्नोन्नु केळ्प्पू । १६१
शतयागत्तिल् पर पुत्रनोन्नल्लो नून
शतपुत्ररिल् परं सत्यमोन्नेन्नु केळ्प्पू । १६२
सहस्रमश्वमेधत्तोटोरु सत्य तन्ने
सहस्रपत्रोळ्भवन् तूक्कि पण्टेन्नु केळ्प्पू । १६३
अन्नेरत्तूङ्ङियतु सत्यमेन्नरिञ्ञालुं
मन्नव ! सत्यत्तेक्काळ् वलुतल्लोन्नुमोर्त्ताल् । १६४
सर्व्ववेदवुमोक्क नित्यवुं जपिक्किलु
सर्व्वतीर्थङ्ङळिलुं नित्यवु कुळिक्किलु । १६५

ही ग्रहण करेगा। अगर सुअर को अन्न और विष्ठा दोनो ही दिये जायँ तो वह विष्ठा ही को खायेगा, । १५०-१५६ जो स्वय अच्छा है वह अच्छे को ग्रहण करेगा जैसे हस पानी को छोडकर दूध को ग्रहण कर लेता है। दुर्जन तो सज्जन को भी दुर्जन बतलाते है, यह विचित्र बात है। और अपने ही को सज्जन बता देते है और जो अपने से भिन्न है उनको दुर्जन। अब अधिक कहने से क्या लाभ है ? अगर आप सुनेगे तो तथ्य बतला दूँगी। सौ कुओ से एक तालाब अधिक है। सौ तालाबो से एक यज्ञ अधिक है। कहा जाता है कि सौ यज्ञो से एक पुत्र अधिक है और सौ पुत्रो से सत्य अधिक है। १५७-१६२ सुना जाता है कि पूर्वकाल मे ब्रह्मा ने एक हजार अश्वमेधों को सत्य के साथ तोला। उस समय सत्य ही अधिक भारी निकला। हे राजन् ! सत्य से बढकर कुछ भी नही है। सभी वेदो का प्रतिदिन पाठ करके और सभी तीर्थो मे प्रति दिन स्नान करके सत्य बोलने के फल का हजारवाँ

मन्दाक्षभावत्तोटुं सुन्दरि मन्दाकिनि
मन्दमाय् वरुन्नेर मन्दमारुतनप्पोळ् ६
अंवरं कळञ्ञतुकण्टवाङ्मुखन्मारा-
यवरचारिजनमिरुन्नारतुनेर । ७
अंवररहितयामंवरनदितन्नें-
शशवररिपुवशनाय् महाभिषक्भूपन् ८
कुतुकंपूण्टु शङ्ककूटाते नोक्किक्कण्टान् ।
चतुराननन्तानुमन्नेरमरुळ्चेय्तु ९
मर्त्त्यनाय्पिरन्नु निन् मोहवुमोक्केत्तीर्न्नाल्
सत्यलोकादिकळिल् सञ्चरिच्चीटामेन्नु । १०
धाताविन् शाप परिग्रहिच्चु नरपति
भूतलंतन्निल् पिरन्नीटुवानारभिच्चु । ११

वसुक्कळुटे अपेक्ष

अक्कालं धरादिकळाकिय वसुक्कळे-
दु:खितन्मारायकण्टु चोदिच्चु गगादेवि । १
अन्नयु महत्वमेरीटिन निङ्डळेल्लां
निस्तेजन्मारायवन्नतेन्तिप्पोळ् वसुक्कळे ! २

देवनदी (गगा) भी उस समय वहाँ उपस्थित हुई । जव सुन्दरी गगा लज्जा के साथ धीरे-धीरे आ रही थी तव मन्द मारुत के कारण उसका वस्त्र गिर गया और उसे देखकर सभी देवगण अधोमुख हो गये । १-७ राजा महाभिपक् तो वस्त्ररहित आकाशगगा को कामदेव के वश मे आकर विना सकोच के कौतुक के साथ देखता रहा । उस समय ब्रह्मा ने कहा—"तुम मर्त्य का जन्म लो और अपना मोह समाप्त होने पर सत्यलोक आदि मे सञ्चार करो" । राजा ने ब्रह्मा का शाप स्वीकार किया । और भूतल पर जन्म लेने की तैयारी की । ८-११

वसुओं की प्रार्थना

उन दिनो गगादेवी ने धर आदि वसुओ[1] को दु खित देखा और उन से पूछा—"हे वसुओ ! आप तो वड़े महत्ववाले है, फिर भी निस्तेज दीखते है ? क्या कारण है ? परमार्थ वतलाइए" । यह सुनकर उन्होने वसिष्ठ

---

१ धर, अनल, अनिल, अप्, ध्रुव, प्रत्यूप, प्रभास, सोम, ये आठ वसुओ के नाम है।

सोमवशवु मेलिलवनालुण्टाय्वन्नु
भूमिपालकनायि शन्तनु वाणानल्लो । ३०
भरतमहीपतितन्नुटे गुणङ्ङळाल्
परञ्ञीटुन्नु लोकर् भारतमेन्नुतन्ने । ३१
भरतान्वयत्तिङ्कलुण्टाय राजाक्कन्मार्
पेरिकप्रसिद्धन्मार् देवतुल्यन्मारल्लो । ३२
संभवपर्व्वतन्निल् नाल्पतद्ध्यायमिप्पो-
ळिन्पमोटुरचेय्तेन् कळिञ्ञु शाकुन्तळ । ३३

शन्तनुविन्टे उत्भव

सन्तोपत्तोटु चेवितन्नु केट्टीटुन्नाकिल्
शन्तनुविन्टे जन्म सक्षेपिच्चरियिक्का । १
विख्यातगुणतेटुमिक्ष्वाकुवंशत्तिङ्कल्
मुख्यनाय् महाभिपक्कोन्नोरु नृपनुण्टाय् । २
सहस्रशतसख्यमश्वमेधादिकोण्टु
सहस्राक्षनेप्रसादिप्पिच्चानवन् नन्नाय् । ३
अतिनाल् स्वर्गत्तिङ्कल् सुखिच्चु वसिक्कुन्नाळ्
त्रिदशन्मारु मुनिमारुमायोरुदिनं ४
चतुराननन्तन्नेस्सेविप्पान् चेन्ननेर
त्रिदशनदितानुमविटेक्कोळुन्नळिळ । ५

गुणो के कारण लोग इस देश को भारत कहते है । जो राजा भरत के वश मे हुए वे वडे विख्यात और देवो के समान थे । अव मै (वैशम्पायन) सभवपर्व के चालीस अध्याय वता चुका हूँ और शकुन्तलोपाख्यान समाप्त हो गया । ३०-३३

शन्तनु का उद्भव

अगर आप सन्तोप के साथ सुनेगे तो मै सक्षेप मे शन्तनु का जन्म वताऊँगा । प्रसिद्ध गुणवाले इक्ष्वाकु-वश मे महाभिषक् नाम का एक प्रमुख राजा हुआ । उसने एक लाख अश्वमेध यज्ञो के द्वारा इन्द्र की अच्छी तरह से प्रीति प्राप्ति की । इस लिए जव वह स्वर्ग मे सुख से रहता था तव एक दिन देव और मुनि व्रह्मा की सेवा मे उपस्थित हुए ।

चौल्लुविन् परमार्थमॆन्नतु केट्टनेरं
चौल्लिनार्वसिष्ठशापत्तिन् कारणमॆल्लां । ३
मानुषस्त्रीकळुटॆ गर्भपात्रत्तिल्प्पूवान्
मानसत्तिङ्कल् मटियुण्टु ञङ्ङळ्क्कु पार । ४
मानुषियायिट्टु नी ञङ्ङळ्क्कु शापं तीर्प्पान्
मानसत्तिङ्कल् कृपयुण्टाकवेण नाथे । ५
मातावाय् चमयण ञङ्ङळ्क्कॆन्नपेक्षिच्चो-
रादितेयोत्तमन्मारोटु गंगयु चौन्नाळ् । ६
मानुषन्मारिल् निङ्ङळेवनु सुतन्माराय्
दीनमॆन्नियॆ पिरन्नीटुवान् निरूपिच्चु ? ७
शन्तनुवाकुं प्रतीपात्मजक्षितिपति-
सन्ततियावान् ञङ्ङळोर्त्तिरिक्कुन्नितिप्पोळ् । ८
निन्तिरुवटितन्नॆक्कामिच्च महाभिषक्
चन्द्रवशाधिपति शन्तनुवायतिप्पोळ् । ९
ऍङ्किलङ्ङनॆयाकॆन्नरुळिच्चॆय्तु गग
शङ्किच्चु वसुक्कळ् चौल्लीटिनारतुनेरं । १०
जातमात्रन्माराकु ञङ्ङळॆयॆल्ला तव
स्रोतसि प्रक्षेपण चॆय्यणं मटियातॆ । ११
मानुषभावपूण्टु चिरनाळवनियिल्
मानुषतापंपूण्टु वाळुवानरुतय्यो । १२

के शाप का कारण वतलाया । परन्तु मानवी स्त्रियो के गर्भाशय मे प्रविष्ट होना हम लोग चाहते ही नही । इसलिए तुम मानुषी होने की कृपा करो जिससे हम लोगो का शाप समाप्त हो जाय । हम लोगो की माता हो जाओ ।' इस प्रकार प्रार्थना करते हुए वसुओं से गगा ने कहा । १-६ "मनुष्यो मे किसके पुत्र होकर जन्म लेने के लिए आपने निश्चय किया ?" (उन्होने उत्तर दिया) हम लोग प्रतीप के पुत्र शन्तनु के पुत्र होने के लिए विचार कर रहे है । आपका कामुक महाभिषक् अव चन्द्रवश का राजा शन्तनु के रूप मे उत्पन्न हुआ है । तव गगा ने उनके प्रस्ताव को स्वीकार किया । वसुओ ने फिर सोचकर कहा—पैदा होते ही हमको अपने प्रवाह मे विना सकोच के फेक दिया करना । क्योकि मनुष्य होकर और मनुष्य के दुःखो को सहते हुए हम वहुत दिन पृथिवी मे नही रह सकते । यह सुन कर गगा ने कहा—"मै ऐसा ही करूँगी । परन्तु आप भी एक वात

मन्दाक्षभावत्तोटु सुन्दरि मन्दाकिनि
मन्दमाय् वरुन्नेरं मन्दमारुतनप्पोळ् ६
अंवरं कळञ्ञतुकण्टवाङ्मुखन्मारा-
यंवरचारिजनमिरुन्नारतुनेर । ७
अंवररहितयामंवरनदितन्ने-
ग्शवररिपुवशनाय् महाभिषक्भूपन् ८
कुतुकंपूण्टु शङ्ककूटाते नोक्किक्कण्टान् ।
चतुराननन्तानुमन्नेरमरुळ्चेय्तु: ९
मर्त्यनाय्पिऱन्नु निन् मोहवुमोक्केत्तीर्न्नाल्
सत्यलोकादिकळिल् सञ्चरिच्चीटामेन्नु । १०
धाताविन् शापं परिग्रहिच्चु नरपति
भूतलंतन्निल् पिऱन्नीटुवानारंभिच्चु । ११

वसुक्कळुटे अपेक्ष

अक्कालं धरादिकळाकिय वसुक्कळे-
द्दु:खितन्मारायकण्टु चोदिच्चु गंगादेवि । १
अन्नयुं महत्वमेऱीटिन निङ्ङळेल्लां
निस्तेजन्मारायवन्नतेन्तिप्पोळ् वसुक्कळे । २

देवनदी (गगा) भी उस समय वहाँ उपस्थित हुई। जब सुन्दरी गगा लज्जा के साथ धीरे-धीरे आ रही थी तब मन्द मारुत के कारण उसका वस्त्र गिर गया और उसे देखकर सभी देवगण अधोमुख हो गये। १-७ राजा महाभिपक् तो वस्त्ररहित आकाशगगा को कामदेव के वश मे आकर बिना सकोच के कौतुक के साथ देखता रहा। उस समय ब्रह्मा ने कहा—"तुम मर्त्य का जन्म लो और अपना मोह समाप्त होने पर सत्यलोक आदि मे सञ्चार करो"। राजा ने ब्रह्मा का शाप स्वीकार किया। और भूतल पर जन्म लेने की तैयारी की। ८-११

वसुओं की प्रार्थना

उन दिनो गगादेवी ने धर आदि वसुओ[1] को दु खित देखा और उन से पूछा—"हे वसुओ! आप तो बडे महत्ववाले है, फिर भी निस्तेज दीखते है? क्या कारण है? परमार्थ बतलाइए"। यह सुनकर उन्होने वसिष्ठ

१ धर, अनल, अनिल, अप्, ध्रुव, प्रत्यूप, प्रभास, सोम, ये आठ वसुओ के नाम है।

कामिच्च नारितन्ने त्याग चेय्तीटुन्नवर्
कामिच्चतोन्नु वरा नरक वरुंतानु । २३
अन्नेरं प्रतीपनु गगयोटुरचेय्तु
पुण्यपापङ्ङळुटे सूक्ष्मालोकनत्तोटु । २४
कामार्त्थं मिथुनकर्म्मङ्ङळ् चेय्कयुमिल्ल
कामिनि पुनरसवर्ण्णयुमरुतल्लो । २५
वलत्तेत्तुटतन्मेलिरिक्कनिमित्तमाय्
फलिक्कयिल्ल मनोरथमेन्नरिक ते । २६
अपत्यस्नुपादिकळ्क्केन्नियें भार्यतनि-
क्कवद्धमधिवस्तु दक्षिणोत्सगमेन्नाल् २७
अेन्नुटे तनयनु भार्य्ययाय् वरुवति-
निन्निह योग्यतानुमेन्नतु केट्टु गग २८
चोल्लिनाळित्र शान्तनाकिय निन्मकनु
वल्लभयावां ञानेन्नुटने मरञ्ञप्पोळ् २९
सन्तुष्टन् प्रतीपनु सन्तत कर्म्म चेय्तु
सन्तति लभिच्चितु शन्तनु नामत्तोटु । ३०
पुत्रमित्रार्त्थकळत्रादि सन्पत्तियोटु-
मेत्रयु कीर्त्तियोटे वसिच्चान् प्रतीपनु । ३१
इङ्ङने कृतत्रेतद्वापरयुगङ्ङळिल्
मंगल वळर्त्तीटुं धार्म्मिकन्मारायमेवु ३२

पूरी न होगी । उल्टा वे नरक मे जायेगे । १५-२३ तब प्रतीप ने पुण्य और पाप पर सूक्ष्म विचार करके गगा से कहा, "एक तो काम की तृप्ति के लिए मै मैथुन न करूँगा और दूसरा कामिनी भी तो अपने ही वर्ण की होनी चाहिए । चूँकि तुम मेरी दायी जाघ पर वैठी हो इस लिए तुम्हारा मनोरथ सफल न होगा । अपने वच्चे स्नुपा आदि को छोड़ कर पत्नी का दायी जाघ पर वैठना उचित, नहीं है । तुम तो मेरे पुत्र की पत्नी होने योग्य हो ।" यह सुनकर गगा ने कहा "मैं आपके जैसे शान्त पुत्र की पत्नी हो जाऊँगी", और अदृश्य हो गयी । प्रतीप प्रसन्न हुए और निरन्तर कर्म करते रहे और उनके शन्तनु नाम का एक पुत्र उत्पन्न हुआ । प्रतीप अपने पुत्र, मित्र, धन, पत्नी आदि सपत्ति के साथ वडी कीर्ति प्राप्त करके सुख से रहे । २४-३१ इस प्रकार कृत, त्रेता और द्वापर युगो मे मंगल को वढानेवाले, धार्मिक चन्द्रवश के राजाओ ने पूर्वकाल मे पृथिवी का

गगयुमतुकेट्टु चोल्लिनाळ् वसुक्कळो-
टङ्डनें चेय्वन् आनो निङ्ङळुण्टोन्नु वेण्टु । १३
पुत्रात्र्थमाय कर्म्म व्यर्त्थमाय्वराय्वति-
न्नुत्तमनृपनोरु पुत्रनें विधिक्केणं । १४
अतिनु ञङ्डळुटे वीर्यत्तिल् तुरीयार्द्ध
सुतसभवत्तिनु वेव्वेरे नल्कामल्लो । १५
शन्तनु नृपनोरु सन्ततियुण्टामेन्नाल्
सन्तति शन्तनुजनुण्टाकयिल्लतानु । १६
इङ्ङनें समय चेय्तीटिनार् वसुक्कळु
गगयु यथाकाम गमिच्चाळतुकाल । १७
चोल्लेळु प्रतीपनायीटिन राजर्षिया
कल्याणरूपशीलमुळ्ळवन् गगातीरे १८
चेन्निरुन्नितु पुनरध्ययनार्थमप्पोळ् ।
स्वर्न्नदि नृपनुटे वलत्तेतुटतन्मेल् १९
संगमोटिरुन्नितु सुन्दररूपत्तोटे ।
श्रृंगारयोनि परदेवतयेन्नपोले । २०
अन्नेर प्रतीपनु चोल्लिनानेन्तु निन-
क्केन्नाल् वेणुन्नतेन्नु केट्टु गगयु चोन्नाळ् । २१
निन्नेक्कामिच्चु वन्नोरेन्नें नी भजिक्केण-
मेन्नल्लो वेदत्तिलु विधियेन्नरियेणं । २२

स्वीकार कीजिए । उन उत्तम राजा के पास एक पुत्र रहने दीजिए ताकि जो उन्होने पुत्र के लिए कर्म किया है वह व्यर्थ न जाय ।" ७-१४ तव उन्होने कहा, "उसके लिए हम अपने वीर्य का आठवाँ भाग अलग-अलग देगे ताकि पुत्र जन्म हो जाय" । इस प्रकार राजा शन्तनु के एक सन्तान होगी पर उस सन्तान की सन्तान न होगी" । जव वसुओ ने इस प्रकार सविदा (प्रतिज्ञा) की, तव गगा अपनी इच्छा के अनुसार चली गयी । उस समय विख्यात राजर्षि शोभन रूप और शीलवाले प्रतीप अध्ययन के लिए गगातट पर जा कर वैठे । तग गगा सुन्दर रूप लिए उनकी दायी जाघ पर प्रेम से जाकर वैठी, मानो श्रृगार का स्रोत परदेवता ही है । तव प्रतीप ने पूछा—"तुम्हे क्या चाहिए ?" यह सुनकर गगा ने कहा—कामिनी होकर मे आयी हूँ, इसलिए मुझे ग्रहण करो । जान लो कि वेद मे भी यही लिखा है । जो कामिनी नारी का तिरस्कार करते है उनकी इच्छाएँ

उण्टाय पैतल्तन्नेक्कण्टुकूटुन्ननेर
कण्टवर्क्किण्टलुण्टाम्मारु मातावुतन्ने ४४
कण्ठत्तेप्पिरिच्चु कोन्नीटिनाळेन्नेवेण्टू
कण्टु भूपालन्तानुं मिण्टीतिल्लेतुमोन्नु ४५
कण्टिवार् कुळलियिलुळ्ळोरु राग कोण्टु।
पण्टु तान् परञ्ञतिनन्तरं वरायवानु । ४६
इङ्ङने कोन्नाळवळ् वालन्मारेळुपेरे-
त्तिङ्ङिन कान्तियोटुमुण्टायितेट्टामतुं । ४७
अक्कुमारनेयवळ् कोल्लुवानोङ्ङुनेर-
मर्क्कनुसममाय तेजस्सु काण्कयाले ४८
सुभ्रुवायुळ्ळ वाले ! विप्रियमेन्नाकिलु-
मर्भकन्तन्ने वधिच्चीटरुतेन्नु नृपन् । ४९
अन्नने गगादेवि तन्नुटे परमार्थ-
मोन्नोळियाते नृपन्तन्नोटु चोल्लीटिनाळ् । ५०

वसुक्कळुटे पूर्व्वचरितं

जह्नुज मन्दाकिनि ञानेटो हैमवति
वन्नतुमल्ल देवकार्यात्थेसिद्ध्यर्त्थमाय् । १

जब वे कामदेव के वश मे आकर आनन्द के साथ विविध क्रीड़ाएँ कर रहे थे, तब उस नगर मे रहनेवालो को आश्चर्य करता हुआ गर्भ हुआ और अन्त मे एक पुत्र का जन्म हुआ। जब नये पैदा हुए बच्चे को सब देख रहे थे तब उसकी माँ ने स्वय उसकी गर्दन दबाकर उसे ऐसा मार डाला कि देखनेवाले सब दु खित हुए। राजा ने भी उस सुन्दरी के प्रति प्रेम के कारण देखकर भी कुछ नही कहा और इसलिए भी कि अपनी पूर्व प्रतिज्ञा में कोई भेद न हो जाय। इस प्रकार गगा ने सात बच्चो को मार डाला, इसके बाद बडे तेजवाले आठवे पुत्र का जन्म हुआ। जब उसने उस बच्चे को मारने के लिए हाथ उठाया तब बच्चे के सूर्य के समान तेज को देखकर राजा ने कहा—"हे सुन्दर भौहँवाली वाले! मै जानता हूँ कि यह तुम्हारे लिए अप्रिय होगा, परन्तु बच्चे को न मारो"। तब देवी ने अपने सम्बन्ध मे सारा परमार्थ राजा को सुनाया। ४१-५०

वसुओ का पूर्वचरित

"मै जह्नुकन्या हैमवती मन्दाकिनी हूँ और देवो के कार्य की सिद्धि

सोमवशोत्भवन्माराकिय राजाक्कन्मार्
भूमियॆ वळिपोलॆ परिपालिच्चु मुन्न । ३३
चॊल्लॆळु पूरुरवावादियायुळ्ळ मन्नो-
रॆल्लारु कळिञ्ञथ शन्तनुवॆन्न वीरन् । ३४
आळिकळ् चूळुमूळिक्कॊक्क नायकनायि
वाळुन्नकालत्तिङ्कलविटॆयॊरुदिन । ३५
भंगि तेटीटुन्नॊरु मंगलरूपत्तोटे
गंगयुमॊरु वरसुन्दरियायि वन्नाळ् । ३६
मन्नवन् मोह कैक्कॊण्टन्नेरमवळ्तन्नो-
टॆन्नुटॆ वल्लभयायिविटॆयिरिक्कॆन्नान् । ३७
बालिकाकुलशिरोमालितानुमनु-
कूलतयोटुं भूमिपालनोटुरचॆय्तु । ३८
अप्रियं परयुन्नाळप्पोळॆ पोवन्ञानॆ-
न्नप्पुरिकुळलाळुमप्पॊळॆ चॊन्ननेर । ३९
अप्रियं परयुन्नीलॆप्पॊळुं मटियातॆ
मल्प्रियं वरुत्तुकॆन्नप्पृथिवीशन् चॊन्नान् । ४०
अप्पॊळुतनुवदिच्चप्पुरिकुळलाळु-
मप्पुरुषाधिपनोटप्पुरितन्निल् वाणाळ् । ४१
उळ्प्पूविल् वळन्नॊळुं विभ्रमत्तोटु कूटि
पुष्पबाणार्त्तिपूण्टु पुळच्चुकळिक्कु नाळ् । ४२
अप्पुरं तन्निलुळ्ळोक्कॆल्भुत वरुमारु
गर्भवुमुलपादिच्चॊररभकनुण्टाय्वन्नु । ४३

विधिवत् परिपालन किया। विख्यात पुरुरवा आदि राजाओ का समय बीतने के वाद जब वीर शन्तनु समुद्रो से लेकर पृथ्वी के कोने-कोने तक के नायक वनकर राज्य करते थे, उस समय एक दिन शोभा-युक्त और मांगलिक रूप धारण करके गगा एक अत्यन्त सुन्दरी स्त्री बनकर पधारी। राजा मोहित हुए और उनसे बोले—"मेरी पत्नी होकर यही रहो"। तब युवतियो की शिरोमणि उन गगा ने अनुकूलता के साथ राजा से कहा, "जिस दिन आप मुझसे कोई अप्रिय बात कहेगे, मै उसी दिन चली जाऊँगी।" जब सुन्दरी ने इस प्रकार कहा तब राजा ने उत्तर दिया—"मै अप्रिय न कहूँगा। और तुम सदैव मेरा प्रिय करती रहो"। ३२-४० उस सुन्दर केशवाली ने स्वीकार कर लिया और भूपाल के साथ उस नगरी मे रहने लगी।

भर्त्तावे कण्टीलयो मुग्धयां पशुविनें
मर्त्यभोगत्तिन्निवळ् युक्तयल्लेन्नुतोन्नु । १२
गोविनेक्कण्टनेरं द्योविनोटाशकैक्कों-
ण्टीवण्णं परञ्ञवळोट्टुटन् द्योवुं चोन्नाळ् । १३
कामिनीकुलमौलिमालिके केट्टालु नी
यामुनमुनियुटे होमगोवितु नूनं । १४
तत्तपोवनमिद सत्यलोकत्तिन्नोक्कु
चित्तमोहनङ्ङळां चित्रङ्ङळ् कण्टीले नी । १५
इप्पशुक्षीरपानचेय्तीटु जनङ्ङळ्क्कु
पिल्पाटीरापत्तुकळुण्टाकयिल्ल नाथे । १६
क्षुल्पिपासादि व्याधि मरण जरानरा-
द्युत्पत्ति नृणा पतिनायिरत्ताण्टेक्किल्ल । १७
देवियुं द्योविन् वाक्यमीवण्णं केट्टनेर
भावसम्मोदत्तोटु भर्त्ताविनोटु चोन्नाळ् । १८
मानुषलोकत्तिङ्कलुण्टिनिक्कोरु सखि
मानियामुशीनरभूपतितन्टे मकळ् १९
मानुषिकळिल्वच्चु मत्सखित्वं कोण्टोरु
मानिनी जरारोगहीनयाय् वर्त्तिक्कणं । २०
महत्संगमंकोण्टु किंफलमल्लयाय्किल्
महत्वं भवान्मार्क्कुं भविक्कुमतुमूलं । २१

है कि यह मनुष्यो के भोग के लिए नही है। गाय को देखकर अपने पति द्यौ से इस प्रकार कहनेवाली से द्यौ ने कहा—हे कामिनियो की शिरोमालिके सुन लो ! यह नि सन्देह वसिष्ठ जी की हवनवाली गाय है। यह उनका तपोवन है जो सत्यलोक के समान है। मन को लुभानेवाले दृश्य देखो। हे नाथे, जो इस गाय का दूध पिये उसको किसी प्रकार की विपत्ति नही प्राप्त होगी। भूँख, प्यास, बीमारी, मरण, वार्धक्य आदि की उत्पत्ति मनुष्यो मे दस हजार वरस तक नही होगी। ९-१७ द्यौ की यह वात सुनकर देवी ने अपने पति से कहा—"मनुष्यलोक मे मेरी एक सखी है जो मानी राजा उशीनर की पुत्री है। मैं चाहती हूँ कि मानुपियो मे, मेरी सखी होने के कारण, वह वार्धक्य और बीमारी से मुक्त रहे। नही तो वडो के परिचय से क्या फल है ? इससे आप लोगो का भी भला होगा। इसलिए इस गाय को विना सकोच के ले जाना चाहिए, इसमे कोई सन्देह नही है।

आपवमुनिवरन् शापत्ताल् वसुक्कळ्
भूपते तव सुतन्मारायुत्भविच्चितु । २
यमुनापुत्रन् वरुणात्मजन् वसिष्ठना-
ममित तपोबलमेळुमापवन् मुन्न ३
कनकाचलपार्श्वे विपिने मनोहरे
मुनि निर्ज्जरयक्षगन्धर्व्वनिषेविते ४
शोभनमायुळ्ळोरु पर्ण्णशालयुं तीर्त्तु
तापसननुदिनं तपसा वाळु कालं ५
दक्षनन्दिनियाय सुरभितन्नेयन्नु
मुख्यनामापवनु कोटुत्तु काश्यपनुं ६
यामुननाय मुनिश्रेष्ठनाश्रमभुवि
होमधेनुविनोटु वाळुन्नकालत्तिङ्कल् ७
हेमशैलेन्द्रप्रस्थे वसुक्कळोरुदिन
कामिनीजनत्तोटुं क्रीडिच्चुनटक्कुन्पोळ् ८
कानने वीतभय सञ्चरिच्चीटुन्नतु
काणायि मुनिश्रेष्ठन्तन्नुटे पशुविनें ९
तल्क्षणे धरप्रमुखन्मारां वसुक्कळु
लक्षणयुक्तयाय धेनुतन् गुणङ्ङळाल् १०
विस्मितचित्तन्मारायु तत्र निन्नीटुन्नेरं
सस्मितं चोल्लीटिनाळ् तन् कनिष्ठात्मेश्वरी । ११

के लिए यहाँ आयी हूँ। हे राजन्! मुनि आपव (वसिष्ठ) के शाप के कारण आठो वसु आपके पुत्र के रूप में पैदा हुए। पूर्वकाल मे यमुना का पुत्र, वरुणात्मज असीम तेजवाले वसिष्ठ जव कनकाचल (मेरु) के पास, एक मनोहर वन मे जहाँ मुनि, देव, यक्ष, गन्धर्व आदि रहते थे, एक सुन्दर पर्णकुटी वनाकर उसमे प्रतिदिन तपस्या करते थे, तव काश्यप ने सुरभि (कामधेनु) को मुनियो मे प्रमुख आपव (वसिष्ठ) को दे दिया। जब यमुना-पुत्र मुनिश्रेष्ठ (वसिष्ठ) अपने आश्रम मे होमधेनु (कामधेनु) के साथ रह रहे थे, तव एक दिन आठो वसु मेरु पर्वत की चोटी पर कामिनियो के साथ खेलते हुए आये। १-८ वहाँ वन मे मुनिश्रेष्ठ की गाय निडर चरती हुई दिखाई दी। तव धर आदि वसु उस लक्षणयुक्त गाय के गुणो से विस्मित हो कर उसे देखने लगे। उस समय एक वसुपत्नी ने मुस्कराकर कहा—पतिदेव! इस प्यारी गाय को देखिए! मालूम होता

कळत्रवाक्यमनुसरिक्कुं जनत्तिनु
कळत्रमुण्टाकातेयिरिक्कतन्ने नल्लू । ३२
वसिष्ठ शापमनुभविप्पानेन्ने वन्नु
वसुक्कळ् सेविच्चतुकारणं ञानुमिह ३३
वसिच्चु सार्द्धं त्वया नन्दननिवन् त्विभा-
वसुज्योतिष्मान् ब्रह्मचारिणामग्रेसरन् । ३४
वालकन्मारेक्कोल्वान् कारणमितु भूमि-
पालक ! चिरकालं कुशल भविक्क ते । ३५
ऍङ्किल् ञान् कॊण्टुपोयि विद्ययुं पठिप्पिच्चु
सङ्कटंतोर्त्तु वळर्त्ताशु नल्कुवेनेन्नाळ् । ३६
उन्परिल् मुन्पुतेटुं वसुक्कळ् शाप तीर्प्पा-
नन्पोटु वन्नतिन्टे परमार्थवुं चॊल्लि ३७
मऱञ्ञु गंगा देवि नरवीरनुमुळ्ळिल्
निऱञ्ञु परिताप विरहव्याधिकॊण्टे । ३८
पऱञ्ञवण्णंतन्ने गंगयु कुमारने-
प्पऱञ्ञु कूटातोळं विद्ययुं पठिप्पिच्चु ३९
निऱञ्ञङ्ङॊळ्ळुकीटु जाह्नवीतीरत्तिङ्कल्
चॊरिञ्ञ कण्णीरोटु कॊण्टुवन्नाक्कीटिनाळ् । ४०
पिरिञ्ञुकळञ्ञेन्नेप्पोकरुतेन्नपोले
तिरिञ्ञु तूणितन्निल्निन्नुटनेटुत्तोरो- ४१

उसकी स्त्री ही न होना अधिक अच्छा है। वसिष्ठ के शाप का अनुभव करने के लिए वसुओ ने मेरी सेवा की और मै भी आपके साथ रही। यह पुत्र सूर्य के समान तेजवाला है और ब्रह्मचारियो मे श्रेष्ठ है। बालको को मारने का कारण यही है। हे भूपाल ! आपकी चिरकाल तक कुशल हो। ।२७-३५ मैं इसे ले जाऊँगी, इसको विद्या पढ़वाऊँगी और कष्ट सहकर इसका पालन करूँगी और अन्त मे आपको वापस कर दूँगी। देवो मे श्रेष्ठ वसुओं का शाप समाप्त करने के लिए प्रेम से अपने आने का परमार्थ कहकर गगादेवी अदृश्य हो गयी और राजवर शन्तनु विरह के कारण बहुत दु:खित हुए। अपने कहने के अनुसार गंगा ने कुमार को इतनी विद्याएँ सिखायी कि वर्णन करना कठिन है। तदनन्तर बहती गगा के तट पर आँसू गिराती हुई उसे लेकर आयी। मानो इस हेतु कि गगा छोड़कर चली न जाय, कुमार ने अपने तूण से शर निकाल-निकाल कर गगा

कौण्टुपोकेणमतुकारणं पशुविनें-
क्कुण्ठतकूटातेकण्टिल्ल सशयमेतु २२
मत्प्रियमितिल्परं मट़ोन्निल्लरिञ्ञालु
मल् प्राणेश्वर ! वेंटियाय्क मामितु मूलं । २३
इत्तरं कळवत्तिन् वाक्कु केट्टुनेरं
सत्वरं धराद्यन्मारकुं भ्राताक्कळोटुं २४
गोविनेक्कयरिट्टु पिटिच्चुनटन्निट्टु
द्योविन मुन्निट्टु पोयीटिनार् वसुक्कळुं । २५
वारुणी फलङ्ङळु कौण्टुवन्नीटिनान-
न्नेरमाश्रमभुवि कण्टील पशुविनें । २६
कण्टितु दिव्यदृशा पशुवृत्तान्तमप्पोळ्
पण्डितन् वसिष्ठनु शपिच्चु वसुक्कळे । २७
मानुषयोनौ जनिच्चीटुविन् निङ्ङळेन्नु
मानसकोपत्तोटे शपिच्चतरिञ्ञप्पोळ् २८
आश्रमत्तिङ्कल् वीण्टुं वन्नुटन् वसुक्कळु-
माश्रयमिल्लमटेन्नेण्वरु काक्कल् वीणार् २९
ओरो वत्सरं कौण्टु शापमितेळुपेर्क्कु
तीरुक निङ्ङळक्किनि द्योविनु मनुष्यराय् । ३०
वासमुण्टल्लो चिरकालमितरिकेन्नु
वासन नारिमारिलुण्टाकयिल्लतानु । ३१

जान लो कि इससे प्रिय मेरे लिए और कुछ नही है। हे प्राणेश्वर ! इस बात को टालो मत। अपनी पत्नी की यह बात सुनकर तत्क्षण ही धर शादि भाइयो के साथ गाय को रस्सी से बाँध कर द्यौ को आगे रखकर आठों वसु चले गये। जब वसिष्ठ फल लेकर आये तो उन्हे गाय आश्रम की भूमि पर नही दिखाई दी। १८-२६ वसिष्ठ ने अपनी दिव्य दृष्टि से गाय का हाल समझ कर वसुओ को शाप दिया कि वे सब मनुष्य के रूप मे जन्म ले। यह जानकर कि वसिष्ठ ने बडे कोप के साथ शाप दिया है आठों वसु शीघ्र ही फिर वसिष्ठ के आश्रम मे आये और यह कह कर कि हमारा और कोई आश्रय नही है आठो उनके पैरो पडे (तब वसिष्ठ ने कहा) आपमें से सात का शाप एक-एक वर्ष मे समाप्त हो जायगा पर जान लीजिए कि द्यौ दीर्घकाल तक मनुष्य बना रहेगा और उसकी स्त्रियों के प्रति प्रवृत्ति ही न होगी। जो अपनी स्त्री की बात सुनता रहता है

कुरञ्ञु परितापं तन्नुटे तनयनु
परञ्ञुकूटातोळ गुणङ्ङळ् काण्कयाले । ५२

सत्यवती परिणयं

चोल्लेळु गंगादत्तनाकिय सुतनोटु-
मल्ललुमकन्नुटनरचनिरिक्कुन्नाळ् १
अमितपराक्रम मुटय पटयोटुं
यमुनातीरत्तिङ्कल् वनत्तिल् नायाट्टिनाय् । २
मत्तवारणहयपत्तिकळोटु चेन्नु
चित्तकौतुकत्तोटुं विळयाटुन्ननेर । ३
अेत्रयुं मनोज्ञमाय् चित्रमायिरिप्पोरु
कस्तूरिगन्धत्तिन्टे कारणमन्वेषिच्चु । ४
नटक्कु नेरत्तिङ्कलटुत्तु कण्टानोरु-
मट्टूकिनमौळिमार्कुलरत्नतन्ने । ५
देहत्तिन् गुण कण्टु लावण्यपूर कण्टु
मोहिच्चु नरपति कन्यकयोटु चोन्नान् । ६
ओरुयोजनवळि परन्नीटुन्नु निन्टे-
तिरुमेय्परिमळं कस्तूरिगन्धपोले । ७

वियोग न हो । अब आपके सब शत्रु नष्ट हो जायेगे" । यह कह कर गगादेवी अदृश्य हो गयी और अपने पुत्र मे अवर्णनीय गुण पाकर राजा का भी दु.ख कम हुआ । ४९-५२

सत्यवती से विवाह

राजा अपने विख्यात पुत्र गगा दत्त के साथ विना किसी प्रकार के दु ख के सुख से रहने लगे । एक दिन अपनी पराक्रमशाली सेना और अनेक हाथी, घोड़े और पैदल सैनिको के साथ यमुना के तट पर शिकार खेलने गये और बडे कौतुक (आनन्द) के साथ शिकार खेलने लगे । तब उन्हे एक अत्यन्त मनोहर और अद्भुत कस्तूरी का गन्ध अनुभव हुआ । राजा ने उसका कारण ढूँढा । जब वह ढूँढ रहे थे तब उन्होने पास ही मे एक कन्यारत्न देखा । उसके शारीरिक गुण और उसका लावण्य देखकर राजा मोहित हो गये और उस कन्या से बोले । "तुम्हारी सुगन्ध एक योजन (चार मील) तक फैलती है, जैसे कस्तूरी की गन्ध । साफ साफ

शरङ्ङळ्कोण्टु पुळनटुवे चिरकोट्टि
निरञ्ञ यौवनवुं कलन्नु निल्कुन्नेरं ४२
तिरञ्ञु मृगङ्ङळ्तन् वळियेे शन्तनुवुं
वरुन्ननेरं भागीरथियेक्काणाय्वन्नु । ४३
कुरञ्ञ जलत्तोटु मन्दस्यन्दतयोटु ।
तिरञ्ञानतिन्मूलमन्नेरं कण्टु नृपन् ४४
पुरङ्ङळेरिच्चवन् निन्नरुळुन्नपोले
पिरन्ननेरंकण्ट नन्दनन्तन्नेयेन्नु ४५
शरङ्ङळोटुं विल्लु पूर्ण्णयौवनवु क-
ण्टरिञ्ञतिल्लयल्लो शन्तनु नन्दननें । ४६
मरञ्ञुकळञ्ञितु तातनें मोहिप्पिप्पान्
कुरञ्ञोन्नुळिल्ल् शङ्क शन्तनुविन्नुमुण्टाय् । ४७
विरञ्ञ वेळिच्चत्तु काट्टेणं गगे देवि
चिरं ञानपेक्षिक्कु पुत्रनें भक्तप्रिये ! ४८
निरञ्ञु रूपत्तोटुं प्रत्यक्षीकरिच्चुटन्
परञ्ञु गंगादेवि निन्नुटे पुत्रनिवन् । ४९
कुरञ्ञोन्नल्लयल्लो गुणङ्ङळिवनुळ्ळु
पिरिञ्ञीटाते नित्यमरिके वच्चुकोळ्क । ५०
मरञ्ञुपोकु तव शत्रुक्कळेल्लामेन्नु
परञ्ञु गंगादेवि मरञ्ञु नृपेन्द्रनुं । ५१

प्रवाह के वीच मे एक वॉध बना दिया और वह अपने सपूर्ण यौवन से विराजमान था । ३६-४२ उस समय मृगो को ढूँढते हुए उस रास्ते से शन्तनु आ रहे थे और उनको भागीरथी (गगा) दिखाई दी, जिसका पानी कम था और जो धीरे-धीरे वहती थी । राजा ने इसका कारण ढूँढा और त्रिपुरदाह करनेवाले (शिव जी) के समान किसी को देखा । धनुष्वाण और पूर्णयौवन-सहित वह पहले जन्म के समय देखा हुआ अपना पुत्र ही है, ऐसा शन्तनु पहचान न सके । फिर वह अपने पिता को मोहित करने के लिए अदृश्य हो गया । शन्तनु के मन मे कुछ शंका होने लगी । (उन्होने कहा) "हे गगादेवि ! हे भक्तप्रिये ! जिस अपने पुत्र को मै बहुत दिन से चाहता हूँ, उसे प्रकाश मे स्पष्ट दिखलाओ । ४३-४८ तव गगा-देवी अपने सम्पूर्ण रूप में प्रत्यक्ष हुई और वोली—यही आपका पुत्र है । इसके गुण निस्सीम है । इसलिए इसको अपने पास रखिए, ताकि कभी

अन्नतु कण्टु गंगादत्तनायुळ्ळ पुत्रन्
मन्नवन्तन्नेत्तोळुतीवण्णमुर्णत्तिच्चान् । १८
अच्छनेन्तोरु तापमुळ्ळलेन्नद्रियेणं
निश्चयं पण्टेप्पोलेयल्ला काणुन्नतिप्पोळ् । १९
अन्नेरमरचनं मकनोटुरचेय्ता-
नेन्नुटे तापत्तिन्टे कारण चोल्लामेङ्किल् । २०
उण्णी नीयोरु मकन्तन्नेयिन्नि निक्कुळ्ळु
निन्नुटे वळिये मटोन्निन्ने काणाय्कयाल् । २१
ऐन्नुळ्ळल् परितापमेरुन्नु नाळिल् नाळिल्
मुन्नमे शास्त्रङ्ङळिल् केट्टु ञानिरिक्कुन्नु २२
एकपुत्रत्वमपुत्रत्वमोटोक्कुमल्लो ।
भागधेयवुमद्रियावतल्लोरुवर्क्कु । २३
ऐन्नुळ्ळी पिताविन्टे वाक्कुकळ् केट्टशेपं
तन्नुळ्ळल् निरूपिच्चु कल्पिच्चू गगादत्तन् । २४
तातन्टे सूतनोटु चोदिच्चु धरिच्चितु
तातनुण्टाय विषमङ्ङळु विशेषवु । २५
सन्यास चेय्तु दाशन्तन्नेयुं बोधिप्पिच्चु
कन्यकतन्नेक्कोण्टुवन्नु तातनु नल्कि । २६
पुष्पङ्ङळ् वरिषिच्चारप्पोळुतमररु-
मत्भुतं कण्टु भीष्मरेन्नोरु पेरुमिट्टार् । २७

यह सब देखकर राजा को प्रणाम किया और कहा—"मैं यह जानना चाहता हूँ कि पिता जी को क्या चिन्ता है। देखने मे आप पहले की तरह नही है।" तब राजा ने पुत्र से कहा, "मै अपने दु.ख का कारण बतलाऊँगा। बेटा! तुम मेरे इकलौते पुत्र हो, तुम्हारे बाद और कोई पुत्र न होने के कारण मेरे मन मे दिन प्रतिदिन दु ख बढ रहा है। मैने पहले ही सुन रखा है कि शास्त्रो के अनुसार एक ही पुत्र होना, पुत्र न होने के बराबर है। और कोई भी अपना भागधेय नही जानता है।" पिता की यह बात सुनकर गगादत्त ने अपने मन मे सोचकर निश्चय कर लिया। पिता के सूत से पूछ कर उनकी कठिनाइयाँ और विशेष बाते समझ ली। १८-२५ तदनन्तर स्वय सन्यास लेकर केवट को विश्वास दिलाया और कन्या को ले आकर पिता को दे दिया। तब देवो ने उस पर पुष्पवृष्टि की और इस अद्भुत घटना को देखकर उसका 'भीष्म'

नेरे नी पऱयणमारेन्नु केट्टनेरं
चारुतकलन्नोरु नारियुमुरचेय्तु । ८
इत्तोणि कटत्तुन्न कैवर्त्तवीरन्तन्टे
पुत्रि ञान् तोणि कटत्तीटुवानवन्चोल्लाल् । ९
ऍप्पोळुमिरिप्पिनिक्किप्पुळक्करयेन्नु
चेप्पेलु मुलयाळुमप्पोळेयुरचेय्ताळ् । १०
मन्नवनतु केट्टु दाशनेच्चेन्नु कण्टु
कन्यकतन्ने मम नल्केणमेन्नु चोन्नान् । ११
ऍन्नुटेमकळ् पेटुण्टाकुन्न तनयने
मन्नवनाक्कि वाळिच्चीटामेन्नोरु सत्यं । १२
ऍन्नोटु चेय्किल् नल्कामिन्ने कन्यकतन्ने-
येन्तुटे गगादत्तनिङ्ङनेयिरिक्कुन्ना- १३
ळन्यनु राज्यमेल्लामेङ्ङने कोटुप्पू ञान्
ऍन्नुळळ चिन्तयोटे मन्नवन् पुरिपुक्कु । १४
अन्नुतोट्टरचनु मारमाल् मुळुक्कया-
लन्नवु नरुंपालुमोन्नुमे वेण्टीतिल्ल । १५
गगयिल् मुळुकिय मगलचित्त चेन्नु
संगिच्चु मुळुकीतु धीवरनारितन्निल् । १६
रोगमेलयु पारं भूमीन्द्रनेन्नु नाना-
नागरजनङ्ङळु पऱञ्ञुतुटङ्ङिनार् । १७

बतलाओ कि तुम कौन हो" यह सुनकर उस सुन्दरी कन्या ने कहा । १-८ "मै इस नाव खेनेवाले वीर केवट की पुत्री हूँ, उसकी आज्ञा से मै भी नाव खेती हूँ, मेरा निवास सदैव इस नदी के तट पर है"। जब उस सुन्दर स्तन-वाली ने इस प्रकार उत्तर दिया, तब राजा दाश (केवट) के पास गये और बोले "इस कन्या को मुझे दान करो।" केवट ने कहा "मेरी पुत्री से उत्पन्न पुत्र को ही राजा बनाकर राज्य देने की शपथ अगर आप मुझ से करेगे तो आज ही कन्या को दूंगा।" राजा यह सोचकर कि जब तक मेरा (पुत्र) गगादत्त इस प्रकार विराजमान है तब तक राज्य मै और किसी को कैसे दूं, अपनी नगरी चले गये। उस दिन से राजा का काम-विकार बढा, वे अन्न, शुद्ध दूध या और कुछ भी न खा सके। उनका मन जो पहले गगा मे तन्मय था, वह अब जाकर केवट की कन्या मे लीन हो गया। अनेक नागरिक कहने लगे कि राजा बहुत ही बीमार है। ९-१७ उनके पुत्र गगादत्त ने

नल्लनां भीष्मरमरासुरयुद्धत्तिन्नाय्
स्वर्ल्लोकत्तिङ्कल् वाळुनाळवसरं कण्टु ३८
चॊल्लॆळुं चित्राङ्गदनाय गन्धर्व्वन् वन्नु
चॊल्लिनान् चित्राङ्गदनाकिय नृपनोटु । ३९
पेरु नी माट्टियिट्टु कॊळ्ळेणमल्लयाय्किल्
पोरिनु पुऱप्पॆटुकेलुमे मटियाते । ४०
अप्पॊळे पुऱप्पॆट्टु कॆल्पॊटु युद्धं चॆय्ता–
नद्भुतं वरुमाऱु मूवाण्टेय्क्कॊरुपोलॆ । ४१
हिरण्यतीरस्थन्माराय वीरन्मारुटॆ
शरङ्ङळ्कॊण्टुतन्नॆ मरञ्ञुदिक्कुकळु । ४२
परन्न हिरण्वतियाकिय नदीतीरे
निरन्न कुरुक्षेत्रत्तिङ्कल्निन्नुण्टायॊरु ४३
युद्धवैचित्र्यं कण्टुनिन्नोरु जनमॆल्ला
चित्रमॆत्रयु युद्धमॆन्नु कॊण्टाटीटिनार् । ४४
वीर्यस्वर्गत्तॆ प्रापिच्चीटिनान् नरपति
वीर्यत्ताल् स्वर्ग प्रापिच्चीटिनान् गन्धर्व्वनु । ४५

अंबोपाख्यानम्

अक्कालमसुररॆज्जयिच्चु सुरन्मार्क्कु
दु:खवुं तीर्त्तु राज्यं पुक्कितु गंगादत्तन् १

रह रहे थे तब अवसर पाकर विख्यात गन्धर्व चित्राङ्गद ने राजा चित्राङ्गद से इस प्रकार कहा—"तुम अपना नाम वदल दो नही तो युद्ध के लिए तैयार हो जाओ।" उसी समय (वे) युद्ध के लिए निकले और तीन वर्ष तक अद्भुत युद्ध करते रहे। हिरण्या के तट के उन वीरो के वाणो से ही सभी दिशाएँ छिप गयीं। विशाल हिरण्वती के तट पर स्थित कुरुक्षेत्र मे होनेवाले युद्ध का वैचित्र्य देखनेवालो ने कहा "यह युद्ध कितना अद्भुत है!" राजा को वीर्यस्वर्ग प्राप्त हुआ और गन्धर्व भी अपने वीर्य के कारण स्वर्ग चले गये। ४१-४५

अम्बोपाख्यान

उन दिनों असुरो को हराकर और देवो का दु:ख समाप्त करके गगादत्त अपने राज्य वापस आये। उन्होने विना विलम्व के वाल विचित्रवीर्य,

ब्रह्मज्ञनाय भीष्मरतुकारणं नित्य-
ब्रह्मचारिकळिल्वच्चुत्तमनायानल्लो । २८
शन्तनु सत्यवतितन्नोटुकूटेच्चेर्न्नु
सन्तापमकन्नुळ्ळिल् सन्तोषत्तोटे वाणान् । २९
सन्ततं राज्य परिपालनं चेय्तु तात-
नन्तरानन्दं वळर्त्तीटिनान् गगादत्तन् । ३०
कण्टककुलान्तकनाय शन्तनुवीरन्
कण्टकावुकळ् तोरुं हर्म्म्यगेहङ्ङळ्तोरु । ३१
कण्टिवार्कुळलिया काळितन्नोटुं चेर्न्नु
तण्टलर्बाणोत्सवं कोण्टानन्दिक्कुंकाल- ३२
मुण्टायि चित्राङ्गदनाकिय तनयनु ।
रण्टामतुण्टाय्वन्नु विचित्रवीर्यन्तानु- ३३
मुण्टायि सन्तोषवु भूपालादिकळ्क्केल्लां ।
इण्टलुं तीर्न्नु सौख्य प्रापिच्चारेल्लावरु ३४
बालन्मार् वळरुन्नकालं वन्नीटुमुन्पे
कालधर्म्मत्ते प्रापिच्चीटिनानरचनु ३५
कैय्यूक्कु पेरुकिय भीष्मरुमतुकाल
चेय्यिच्चु शेषक्रिय बालकन्मारेक्कोण्टे ३६
वय्यवनोटुनेरा मामुनिमारेक्कोण्टु
चेय्यिच्चानवर्कळिलग्रजन्नभिषेकं । ३७

नाम रखा। यही कारण है कि ब्रह्मज्ञ भीष्म नित्य-ब्रह्मचारियो मे श्रेष्ठ हुए। शन्तनु सत्यवती के साथ सभी दुख छोडकर बड़े आनन्द से जीवन बिताने लगे। गगादत्त ने सदैव राज्य का ठीक परिपालन करके अपने पिता का आनन्द बढाया। शत्रु-कुलो के नाशक वीर शन्तनु हर एक उपवन मे और हर एक प्रासाद मे घूमते हुए सुन्दरी काली के साथ जब कामदेव का उत्सव मनाते थे तब चित्राङ्गद नाम का पुत्र का जन्म हुआ। तदनन्तर दूसरा पुत्र विचित्रवीर्य भी हुआ और सभी भूपालो को बड़ा आनन्द प्रतीत हुआ। सब दुख समाप्त हुआ और सबने सुख प्राप्त किया। २८-३४ बालको के बड़े होने के पहले ही राजा का स्वर्गवास हो गया। बडे बाहुबल वाले भीष्म ने बालको से ही अन्येष्टि क्रिया करायी। तदनन्तर महामुनियो के द्वारा उन बालको मे जो सूर्य-सदृश ज्येष्ठ था उसका अभिषेक कराया। जब अच्छे भीष्म देवासुरयुद्ध के प्रसङ्ग में स्वर्गलोक मे

अविकतन्नेयुमवालिकतन्नेयु कू-
टवुधिपत्नीपुत्रन्तन्नुटे नियोगत्ताल् १२
विचित्रवीर्यन् वेट्टु सुखिच्चु मरुविनान् ।
विचित्रमत्रे पोयोरवतन् वार्त्त केट्टाल् । १३
चेन्नु साल्वनेक्कण्टाळवनुमुपेक्षिच्चान्
वन्नु भीष्मरेक्कण्टु पेपरुञ्ञितु पिन्ने । १४
आरोटुसममोळ्कीटुन्न कण्णीरोटु-
मारुवत्सरं वाणाळारुतन् मकन्पिन्पे । १५
आरातोरुळ्च्चूटोटे नटन्नाळ् पिन्नेप्पो-
यीराण्टु तपस्सुचेय्तीटिनाळ् वळिपोले । १६
नीहाराचलपार्श्वे निर्म्मलदेशे तेळि-
ञ्ञाहारादिकळेयु वेटिञ्ञु दिनप्रति । १७
वाहुदानदीतीरे मरुवीटिनकाल
वाहुलेयनुमोरु मालये नल्कीटिनान् । १८
वाहुजन्मारिलेवन् मालये धरिक्कुन्न-
ताकवे कोल्लाय्वरु भीष्मरेयवन्नेटो । १९
ईवण्णं वर नल्कि मालयु कोटुत्तुटन्
पार्व्वतीसुतन् मरञ्ञीटिनोरनन्तरं २०
ओरोरो राज्यन्तोरुं नटन्नाळ् मालयुमा-
यारुमे कैक्कोळ्ळाञ्ञार् भीष्मरेप्पेटिच्चेव । २१

दोष होगा।" यह सुनकर भीष्म ने उसे छोड़ दिया और उनकी आज्ञा से विचित्रवीर्य ने अंविका और अंवालिका के साथ विवाह किया और आनन्द से रहे। अंवा जो चली गयी उसकी कथा भी विचित्र है। वह साल्व के पास गयी, पर उसने स्वीकार नहीं किया। तव भीष्म के पास वापस आयी और शिकायत की। नदी के समान वहते आँसुओं के साथ छः वर्ष गंगा के पुत्र के पीछे लगी रही। तदनन्तर अपने अशान्त दुःख को लिये वह चली गयी और दो वर्ष तक उसने नियम से तपस्या की। ८-१६ हिमालय पर्वत के पास एक शुद्ध स्थान में वैठी और अपने आहार को प्रतिदिन कम करती गयी। जव वह वहुदा नदी के तट पर रहती थी, तव वाहुलेय (कार्त्तिकेय) ने उसको एक माला दी। क्षत्रियों में जो इस माला को पहनेगा वह अन्त में भीष्म को मारेगा। इस प्रकार वर देकर और माला को भी देकर पार्वती-पुत्र (कार्त्तिकेय) अदृश्य हो गये। तदनन्तर अंवा माला लिये देश-देश में घूमी पर भीष्म के डर से किसी ने

वालनायीटुन्नोरु विचित्रवीर्यनूतन्ने
कालं वैकार्ते वाळिच्चीटिनान् भीष्मर् पिन्ने । २
विचित्रवीर्याग्रजन् मरिच्चोरनन्तरं
विचित्रवीर्यनूदिक्कु जयिच्चु वाळुं कालं । ३
वालिकयाकुमवतानुमंविकयुमं-
वालिकतानुमेन्नु मून्नु पुत्रिकळुण्टु ४
काशिराजाविन्नवर्कान्तियेक्काणुन्नाकि-
लाशयामेल्लावर्क्कुमेन्नु केट्टिरिक्कुन्नाळ् ५
कल्याणमुण्टेन्नोरु वार्त्त केट्टन्नु भीष्म-
रुल्लासत्तोटु तेरिलेरिनान् विल्लुमायि । ६
कूटलर् कुलकालनाकिय गंगादत्तन्
कूटियनृपन्मारेयोक्कवे जयिच्चिट्टु ७
मुग्धमारोटु कूटि हस्तिनापुरि पुक्कान् ।
क्रुद्धनायणञ्ञोरु सात्वनुं नाण केट्टान् ८
वत्सनेक्कोण्टु वेळ्पिप्पानागु तुनिञ्ञप्पोळ्
मत्सर मुळ्ळिलुळ्ळोरवयुमुरचेय्ताळ् । ९
सात्वनु कोटुप्पानायेन्नेक्कल्पिच्चु तातन्
सात्वनुमेन्नेत्तन्ने करुतियिरिक्कुन्नु । १०
मटोरुवनेयिन्निक्कैक्कोण्टालिनिक्कुळ्ळल्
कुटमुण्टेन्नु चोन्नोरवळेयय्च्चुटन् ११

को राजगद्दी पर बैठाकर राज्य कराया। विचित्रवीर्य के बड़े भाई के मरने के बाद जब विचित्रवीर्य चारो ओर जीतकर राज्य करते थे तब काशिराज की तीन पुत्रियाँ थी, अबा, अंबिका और अंबालिका। वे इतनी सुन्दर थी कि उनकी शोभा को देखकर सब मोहित हो जाते थे। उनकी यही प्रसिद्धि थी। यह सुनकर कि उनका विवाह होनेवाला है, भीष्म बडे उल्लास के साथ धनुष-बाण लेकर रथ पर बैठे। शत्रुकुलो के नाशक गंगादत्त अनेक राजाओ को युद्ध मे हराकर तीनो मुग्ध रमणियो को लेकर हस्तिनापुर चले आये। १-७ तब साल्व क्रुद्ध हुआ और उसको हार जाने की लज्जा भी हुई। जब भीष्म ने कोशिश की कि विचित्रवीर्य का तीनो से विवाह हो जाय तब भीतर विरोध रखनेवाली अबा ने कहा। "मेरे पिता ने मुझे साल्व को देने का निश्चय किया था और साल्व भी मुझ को ही चाहते है। अगर मै और किसी को स्वीकार करूँगी तो मेरा

चोल्लिनान् गंगाद्वारे चेन्नु नी सेविक्कण
चोल्लेळु गन्धर्व्वेशनाय तुबुरुविने। ३२
नल्लतु वरुत्तीटु निनक्किन्नवन्तन्ने
कल्याणशीले ञानु तुणच्चीटुवनल्लो। ३३
भूदेवन् परञ्ञतु केट्टवळ् गगाद्वारे
सादर चेन्ननेरमविटेक्काणाय्वन्नु ३४
गन्धर्व्व प्रवरन्मारिरुवर् किटक्कुन्नु-
तन्तिके कण्टनेरमोरुत्तन् चोन्नानतिल्। ३५
अन्नुटे पुल्लिङ्ग ञान् निनक्कु तन्नीटुवन्
निन्निटे स्त्रीलिङ्ग नीयिनिक्कु तन्नीटेण। ३६
अन्योन्य लिङ्गविनिमयं चेय्तिरुवरु-
मन्नुतोट्टवळोरु पुरुपनायुवन्नु। ३७
याज्ञसेनियुमथ शिखण्डियायानल्लो
प्राज्ञनामवन् दिव्यास्त्रङ्ङळु पाठ चेय्तान्। ३८
तन्नुटे राज्यपुक्कु जनकन्तन्नेक्कूप्पि-
निन्नितु शिखण्डियु वृत्तान्तमरियिच्चान्। ३९
पेटिक्कवेण्ट भीष्मर्तन्ने नामिनियेन्नु
गाढकौतुक पूण्टु वसिच्चारवर्कळु। ४०
अन्तरा पन्तीराण्टुकोण्टवळ् मनोरथं
सन्धिक्कुमेन्नु चिन्तिच्चात्मना यत्नत्तोटु ४१

उस ब्राह्मण ने कहा—'तुम गगाद्वार जाकर विख्यात गन्धर्वो के राजा तुबुरु की सेवा करो। वह तुम्हारा भला करेगा। हे कल्याणशीले ! मै भी सहायता करूँगा। ब्राह्मण की बात सुनकर वह सादर गगाद्वार गयी। तब वहाँ दो प्रमुख गन्धर्व दिखाई दिये। उनमे एक ने कहा—"मै अपना पुरुपत्व तुम्हे दूँगा और तुम अपना स्त्रीत्व मुझे दे दो।" दोनो ने लिगविनिमय किया और उस दिन से वह (शिखडिनी) पुरुप हो गयी। यज्ञसेनी (शिखडिनी) शिखडी हो गया और उसने दिव्य अस्त्रो का प्रयोग सीखा। तदनन्तर अपने देश लौटकर पिता जी को प्रणाम करके सारा वृत्तान्त सुनाया। ३२-३९ तदनन्तर यह समझकर कि अब भीष्म से डरने की आवश्यकता नही है, सब बडे आनन्द से रहे। यह सोचकर कि 'बारह वर्ष मे इच्छा की पूर्त्ति होगी, उसने बडे प्रयत्न के साथ परशुराम की सेवा की।' परशुराम ने भीष्म के साथ अठाईस दिन युद्ध

अञ्चु वत्सर कळिञ्ञीटिनोरनन्तर-
मञ्चातें पाञ्चालमां नगरमकपुक्काळ् । २२
सोमकन्तन्नोटवळ् वृत्तान्तमोक्कॅच्चॊन्नाळ्
भूमिपालकन्तानुमादरिच्चीलयेतु । २३
द्रुपदपुरद्वारि मालयु निक्षेपिच्चु
सपदि नटकॊण्टाळंवयुमतुनेर । २४
विज्ञानज्ञानबलवीर्यादिगुण तेटु
यज्ञसेननुमवळूपिन्नालॆ चॆन्नु चॊन्नान् । २५
माल नी कूटॆक्कॊण्टुपॊय्क्कॊळ्कवेणमॊरु-
मूलमॆन्तिविटॆ वच्चीटुवानितुकाल । २६
बाले निन्मनोरथमितिनाल् वन्नुकूटा
कालनु पेटिक्केणं भीष्मरॆ मनोहरे ! २७
सोमकवाक्यमनादृत्य मालयुं तत्र
कामिनि निक्षेपिच्चु वेगत्तिल् नटकॊण्टाळ् । २८
मालयॆप्पालिच्चितु भूपति चिरकाल
बालिक शिखण्डिनियाकिय राजपुत्रि २९
मौलौ चेर्त्तितु तातन्तानऱियातॆयप्पोळ् ।
भूलोकपतियुपेक्षिच्चितु भीष्मर्भयाल् । ३०
जनकत्यक्तयायोरवळु मृचीकनॆ-
क्कनिविनोटु कण्टु सेविच्चाळ् भूदेवनु । ३१

भी माला को न स्वीकार किया। पाँच वर्ष बीतने के बाद उसने पाञ्चाल नगर मे प्रवेश किया और सोमक (पाञ्चाल राजा) को सारा वृत्तान्त सुनाया, पर राजा ने उसकी चिन्ता न की। १७-२३ तब अबा माला को नगर के द्वार पर रख कर चली गयी। विज्ञान, ज्ञान, बल, वीर्य आदि गुणवाले यज्ञसेन (सोमक) उसके पीछे पीछे गये। उन्होने कहा "तुम माला अपने साथ ले जाओ। यहाँ क्यो रखे जा रही हो? इससे तुम्हारी इच्छा की पूर्ति न होगी, हे सुन्दरि! यमराज भी भीष्म से डरता है।" सोमक की बात न सुनकर माला को वही छोड़कर कामिनी (अबा) शीघ्र चली गयी। राजा ने माला की रक्षा की। पर राजपुत्री शिखडिनी ने राजा से छिपाकर उसे अपने शीर्ष मे पहन लिया। तब राजा ने भीष्म के डर से उसे त्याग कर दिया। पिता की त्यागी वह ऋचीक के पास गयी और उनकी सेवा करने लगी। २४-३१

मगल वरुत्तुवानेन्तोरु कळिवेन्नु
गगानन्दनन्तन्नै रहसि विळिच्चुट- ५
निङ्ङनेवन्नितल्लो नम्मुटे कालमेन्नु
तङ्ङळिल् परञ्कयु कण्णुनीरोलिक्कयु । ६
नारिमारिरुवर्क्कुं वैधव्यमकप्पेट्टु
पारितु परिपालिच्चीटुवानारुमिल्ल । ७
सोमवंशवुमित्तु मुटिञ्ञुतेन्नुवन्नु
नामिरुवरु तन्नेयिविटेयकप्पेट्टु । ८
इत्तरं सत्यवति सत्वर चोन्ननेर-
मुत्तरमुरचेय्तीलोन्नुमे गंगादत्तन् । ९
अन्तुण्णी ! मिण्टाञ्ञु निन् चिन्तितमेन्तु चोल्क
सन्ततियुण्टाक्कुवानेन्तोरु कळिविप्पोळ् । १०
मातावु परञ्ञप्पोळ् चोल्लिनान् देवव्रतन्
भूदेवन्मारालुळ्ळू नम्मुटे कुलं पण्टु- ११
मारणरत्रे मुन्न कारणं नमुक्केन्नाल्
नारिमारिरुवरुमारणरे प्रापिच्चु १२
पाराते कुलत्तिङ्कल् सन्ततियुण्टाक्कुक ।
कारणमितिन्नुण्टु चोल्लीटामतुमेङ्किल् । १३

सत्यवती दु खित हुई, जिसके (दोनो) पुत्र मर चुके थे । वह अपने मन मे ईश्वर की लीलाओ पर ध्यान करने लगी । 'क्या करे जिससे घर मे फिर मगल होजाय', यह सोचकर गगादत्त को एकान्त मे बुलाया और दोनो ने उस समय की स्थिति पर दु ख प्रकट करते हुए आँसू गिराये । सत्यवती ने कहा "दोनो स्त्रियाँ (अबिका और अबालिका) विधवा हो गयी है, पृथिवी का परिपालन करनेवाला कोई नही है । चन्द्रवश अब समाप्त हो गया है और हम दोनो यहाँ फँस गये है ।" १-८ जब सत्यवती ने आवेग के साथ इस प्रकार कहा तब गगादत्त ने कोई उत्तर नही दिया । सत्यवती ने कहा "बेटा ! तुम चुप क्यो हो ? अपना विचार बतलाओ । सन्तान कैसे हो यह बतलाओ ।" माता की बात सुनकर देवव्रत (भीष्म) ने कहा । "पूर्वकाल मे ब्राह्मणो ने हमारे कुल का उद्धार किया । ब्राह्मण ही हमारे कुल का कारण है । इस लिए दोनो स्त्रियाँ ब्राह्मणो को प्राप्त करके शीघ्र कुल बढ़ानेवाली सन्तान पैदा करे । इसका भी एक कारण है जो मै बतलाऊँगा । ९-१३

परशुरामनुतन्नेस्सेविच्चु भीष्मर्तन्नो-
टिरुपत्तेट्टु दिन युद्ध चेय्तितु रामन् ४२
अरुतु जयिप्पतिनिवनेयोन्नुकोण्टु
वरिक्कयिल्ल निन्नेयवनेन्नतु केट्टु । ४३
परिचिल् निनच्चवयोन्नुमे साधिक्कान्ञु
वरवु वाङ्ङिक्कोण्टाळ् परशुरामनोटु ४४
मरण प्रापिच्चाळ् पोल् तपसा योगाग्निना ।
पुरुषत्ववुं किञ्चिल् गुह्यकनोटु वाङ्ङि ४५
तन्नुटेमूलं वेण मरण भीष्मक्केन्नु
तन्नुळ्ळिल् निनच्चतिनेन्तेल्लां वेल चेय्ताळ् । ४६

सत्यवतियुटे दुःखं

अक्कथयिरिक्कट्टे विचित्रवीर्यनुपिन्ने
मैक्कण्णिमारिलळिञ्ञुळक्कान्पु मरन्नवन् । १
पारमाय् रमिच्चितु बालनायिरुन्नन्ने
मारसगरवेगाल् मरिच्चानेन्नेवेण्टू । २
राजयक्ष्मावेन्नारु व्याधियुण्टायमूल
राजाविनोटु वेऱाय् वन्नितु कुरुराज्य ३
दुःखिच्चु सत्यवति मक्कळु मरिच्चुत-
न्नुळ्क्कान्पिल् निरूपिच्चाळीश्वरविलासङ्ङळ् । ४

किया । 'इसको हराना विलकुल असभव है, वे तुम से विवाह न करेगे ।' यह सुनकर और अपनी कोई भी इच्छा पूर्ण न होने के कारण परशुराम से वर लेकर, कहा जाता है, उसने तप और योगाग्नि के द्वारा मरण प्राप्त किया । इस प्रकार गन्धर्व से पुरुपत्व लेकर और इस विचार से कि अपने ही द्वारा भीष्म का मरण हो, उसने क्या क्या काम नही किया ? ४०-४६

सत्यवती का दुःख

अब वह कथा रहने दीजिए । विचित्रवीर्य तो स्त्रियो मे लीन होकर अपने को भूल गये और उसने इतना भोग-विलास किया कि यौवन मे ही उसका स्वर्गवास हो गया, क्योकि उसको राजयक्ष्मा नाम का रोग हो गया । कुरु राज्य का अब कोई राजा न रहा ।

निर्म्मलनाय मुनि मन्मथविवशनाय्
धर्म्मादि धैर्यङ्ङळे वेटिञ्ञङ्ङणञ्ञप्पोळ् । १०
गर्भगनायिट्टुळ्ळोरर्भकनुरचेय्तान् ।
निर्व्वन्ध मति मति केळ्क्केणमिवयेल्ला ११
मुन्नमे गर्भपात्रतन्निल् ञानकप्पेट्टु-
निन्निततिन्निवकाश पोरायेन्नरियेण । १२
गर्भपात्रत्तिल् मेवुमर्भकन्वाक्कु केट्टि-
ट्टद्भुतपूण्टु गुरु निर्भर्त्सिच्चुरचेय्तान् । १३
सद्भावमत्र पारमिप्पोळे मुळुत्त नी-
युद्भविच्चीटुनाळिलेन्तेल्ला वरुमेटो १४
दीर्घवीक्षण निनक्केर्य्युण्टतिनाले
दीर्घमातमस्सिने प्रापिक्केन्नतुनेर १५
शपिच्चु देवाचार्यन् जनिच्चु कुमारनु ।
तपिच्चु कण्णिल्लाञ्ञिट्टेन्नतु निमित्तमाय् १६
अवनु दीर्घतमावेन्नु पेरुण्टायितु ।
अवनु प्रद्वेपिया ब्राह्मणितन्नै वेट्टा- १७
नवळ् पेटुण्टाय्वन्नु गौतमादिकळेल्ला-
मवरु प्रसिद्धन्माराय तापसरल्लो । १८
पुत्रलोभार्त्तयाकु प्रद्वेषियतुकाल
भर्त्तृशुश्रूप वेटिञ्ञोटिनाळेन्नेवेण्टू । १९

"यह सब ठीक है, परतु संभोग करके ही मेरा जी शान्त होगा।" निर्मल-मुनि जब काम के विवश होकर सभोग कर ही रहा था तब गर्भाशय में स्थित बच्चे ने कहा। "अपना हठ समाप्त करो और सुनो। मैं पहले ही गर्भाशय मे प्रविष्ट हुआ हूँ, इसलिए इस संभोग का कोई कारण नही है, जान लो।" गर्भ मे स्थित बालक की बात सुनकर गुरु (बृहस्पति) चकित हुए और डॉट कर इस प्रकार कहा, "अभी से तुम्हारा सद्भाव इतना बढा-चढा है, जब तुम पैदा होगे तो क्या-क्या होगा? —तुम तो दूर देखनेवाले हो, इस लिए तुम दीर्घतम (लम्बा अन्धकार) प्राप्त करो", इस प्रकार देवाचार्य ने शाप दिया। लडका पैदा हुआ, किन्तु आँख न होने के कारण बडा दुःखित हुआ। इस लिए उसका नाम हुआ दीर्घतमा। उसने प्रद्वेपी नाम की ब्राह्मणी से विवाह किया जिसने गौतमादियो को जन्म दिया। ९-१७ वे भी विख्यात तापस हुए।

दीर्घतमस्सिन्टे चरित

प्रशस्ततपोधननगिरस्सिन्टे पुत्र-
नुचथ्यनेन्नु नाममुटय महामुनि । १
अवन्टे पत्नियल्लो ममत मनोहरि-
यवन्तन्नवरजन् गीष्पति देवाचार्यन् । २
अवनु ममतया पूर्व्वजपत्नितन्निल्
विवशनायानल्लो मन्मथविकारत्ताल् । ३
ममतादिकळ् दोषमकन्ना मुनिपत्नि
ममत परञ्ञितु निर्ब्बन्ध कण्ट मूलं । ४
देवरा ! जारवृत्ति नरकत्तिनायुळ्ळु
देवराजाचार्य ! ञान् परयुन्नतु केळ् नी । ५
देवमायकळेल्लामोर्क्कण मनक्कान्पिल्
देवदेवन्टेयाज्ञ लंधिच्चीटरुतल्लो । ६
वेदवेदांगज्ञना पूर्व्वजन्तन्टे बीज
मोदेन धरिच्चिरिक्कुन्नितु ञानुमिप्पोळ् । ७
निन्नुटे बीजमतु निष्फलमाकयिल्ल
पिन्ने ञानतुकूटे धरिप्पानाळुल्लेटो । ८
ऍन्नतु केट्टु बृहस्पतियुमुरचेय्ता-
नेन्नालुमिनिक्कोन्नु पुणर्न्ने मतियावू । ९

दीर्घतमस् का चरित

प्रशस्त तपोधन अगिरस् का एक पुत्र था, जो महामुनि था; उसका नाम था उचथ्य । मनोहारिणी ममता उसकी पत्नी थी और देवो का आचार्य गीष्पति (बृहस्पति) उसका भाई था । वह अपने बडे भाई की पत्नी ममता के प्रति कामदेव के विकार के कारण विवश हुआ । गीष्पति (बृहस्पति) का हठ देखकर अहकार आदि दोषरहित ममता ने कहा— हे मेरे देवर ! जार का कार्य नरक पहुँचानेवाला है । हे इन्द्र के आचार्य, मेरा कहना सुनो ! देवो का मायामय काम स्मरण रहे और इन्द्र की आज्ञा का उल्लघन भी न होना चाहिए । वेद और वेदाग के विद्वान्, आप के वडे भाई मेरे पति का वीज मै अव धारण कर रही हूँ । 'यह आप का बीज व्यर्थ न जायगा । इसलिए दुबारा उसे मै ग्रहण करनेवाली नही हूँ । १-८ यह सुनकर बृहस्पति ने उत्तर दिया—

औचित्यमोर्त्तु पुनरन्नेरमवळ्तन्नो-
टौचत्थ्यनाय मुनि कोपत्तोटरुळ्चेय्तु । २९
भर्त्तावें वेटियुन्नोक्कर्त्थवु व्यर्त्थमाय्पो-
केत्रयु दुष्कीर्त्तियुमेत्तुकेन्नतुनेर ३०
प्रद्वेषि कोप पूण्टु पुत्रन्मारोटु चोन्नाळ्
वृद्धनेंगगतन्निल् प्रक्षेपिक्केण निङ्ङळ् । ३१
लोभमोहादिपूण्ट गौतमादिकळप्पोळ्
तापसवरनाय तातनें मटियाते ३२
गंगयिलोरु तोणितन्मेल् वच्चोळुक्किना-
ळगनाजनङ्ङळ्क्कु तोन्नुमित्तर पण्टे । ३३
एट्रियवळि कीळ्पोट्टोळुकिच्चेल्लुनेरं
तीरत्तु कुळिप्पानाय् निल्क्कुन्न वलि नृपन् ३४
कण्टवन्तन्निलेट कारुण्यमुण्टाकयाल्
कोण्टुपोयन्त.पुरे वहुमानिच्चु भक्त्या । ३५
वच्चुकोण्टनुदिन पूजिच्चु लाळिक्कयाल्
विश्रान्तनाय मुनितन्नोटु नृपन् चोन्नान् । ३६
सन्ततियुण्टाक्केण निन्तिरुवटि मम
पन्तोक्कु मुलयाळामेन्नुटे पत्नितन्निल् । ३७
अन्तितिनोरु कुरुवन्तरमिल्लयेन्नु
चिन्तिच्चु दीर्घतमा दीर्घदर्शियु चोन्नान् । ३८

औचथ्य (दीर्घतमा) ने औचित्य का ध्यान रखकर कोप के साथ कहा—"जो अपने पति को छोड देती है उन (नारियो) का अर्थ व्यर्थ हो और उनकी घोर वदनामी हो।" यह सुनकर प्रद्वेपी ने क्रुद्ध होकर अपने पुत्रो से कहा—"बुड्ढे को गगा मे फेक दो।" तव लोभ, मोह आदि से युक्त गौतम आदि पुत्रो ने अपने तपस्वी पिता को एक नाव पर वैठाकर गगा मे वहा दिया। पूर्वकाल मे कुछ स्त्रियो को इस प्रकार का काम सूझता था। २५-३३ जव नाव नीचे की ओर वह रही थी तव राजा वलि नदी के तट पर स्नान करने आये। दीर्घतमा को देखकर उनको वडी दया उत्पन्न हुई और वे दीर्घमता को अपने अन्त पुर ले गये और भक्ति के साथ उनका वहुत सम्मान किया। जव मुनि की थकन मिट गई, तव राजा ने उनसे कहा, "कृपया आप मेरी सुन्दरी पत्नी मे सन्तान पैदा कीजिए।" यह सोचकर कि इसमे कोई हानि नही है, दीर्घदर्शी दीर्घतमा

अेन्नै नीयुपेक्षिच्चालेन्तोरु गतियेनि-
क्केन्नितु परयेणमेन्नुकेट्टवळ् चोन्नाळ् । २०
भर्त्तावु भार्ययेन्नुं चोल्लुन्न शब्दङ्ङळ्त-
न्नर्थंत्ते निरूपिच्चुवेणमेन्नोटु चोल्वान् । २१
निन्नेयु कुमारन्मार्तम्मेयु पालिक्कया-
लेन्नुटे परिश्रम नीयरिञ्ञीलयल्लो । २२
जात्यन्धनुटे पिन्पे वार्द्धक्य पारमुण्टो-
रास्तिक्यमोरुनेरमोन्निन्नुमिल्लतानु । २३
वृद्धनाकिय भवान् क्रुद्धिच्चालेन्तु फल
निर्द्धनन्माराय् वन्नाल् तङ्ङळोट्टुटङ्ङेण । २४
प्रद्वेषि पलतरमीवण्ण परञ्ञप्पोळ्
विद्वानां दीर्घतमावुद्यल्कोपेन चोन्नान् । २५
क्षत्रियकुल प्रापिच्चर्त्थमर्त्थिक्क नीयें-
न्नुत्तमतपोधनन् परञ्ञोरनन्तर । २६
श्रद्धयिल्लेतुं निन्नाल् दत्तमामर्त्थ निन-
क्कोत्ततु चेय्ताल् नीयेन्नोटु परयेण्ट । २७
आनिनिप्पण्टेप्पोले शुश्रूषिक्कयुमिल्ल
दीनयाय् चमञ्ञुजान् कालवुमिल्लयेन्नाळ् । २८

पुत्रलोभ से दु.खित हुई प्रद्वेपी ने अपने पति की सेवा बन्द कर दी । (पति ने कहा) “अगर तुम मेरी उपेक्षा करोगी तो मेरी क्या गति होगी, यह वतलाओ ।” यह सुनकर उसने कहा, “भर्ता और भार्या, इन दो शब्दो का अर्थ ठीक से समझकर आप मुझसे वोलिए । आपका और लडको का पालन करने मे मेरा कितना परिश्रम होता है, यह आप नही जानते है । जन्म से अन्धे आप के पीछे मै वुड्ढी हो गयी हूँ, मुझे किसी पुण्यकार्य के लिये समय नही मिलता । आप वृद्ध के क्रुद्ध होने से क्या फल है ? जो निर्धन होते है उनको अपनी सीमा के अन्दर रहना चाहिए । १८-२४ जब प्रद्वेपी ने इस प्रकार कहा तव विद्वान् दीर्घतमा ने वढते कोप के साथ कहा, “किसी क्षत्रियकुल मे जाकर धन माँगो ।” उत्तम तपोधन की यह वात सुनकर प्रद्वेपी ने उत्तर दिया, “अव मेरी श्रद्धा विलकुल नही है । आप जो चाहे करे, मुझ से कहने की आवश्यकता नही है । अव मै पहले की तरह आपकी सेवा न करूँगी, मै दीन होगयी हूँ और समय भी नही है ।” तव

अन्नेरं वलिनृपन् खेदिच्चु रण्टामतु
तन्नुटे सुदेष्णया पत्नियें नियोगिच्चान् । ४९
चेन्नुटनरिकवे निन्नोरु सुदेष्णयें-
त्तन्नुटे करकोण्टु तप्पिक्कण्टुरचेय्तान् । ५०
अगनाजनङ्ङळिल् भगियुण्टिनिक्कोन्नु
शृगारियल्ल वृद्धन् कुरुटनिवनेन्नु ५१
उळ्ळिलुण्टेट निनक्कोन्नतुमरिञ्ञु ञा-
नुळ्ळतुतन्नेयल्लो निन्नुटे कुटमल्ल । ५२
अगजरस निन्निलेतुमे नमुक्किल्लि-
ङ्ङगनासम्मेळनलाळनादिकळोन्नु ५३
वेणमेन्निनिक्किल्ल भूमिपालनेच्चिन्ति-
च्चेणलोचने ! तव सन्ततियुन्टाक्कुन्नेन् । ५४
अगस्पर्शनकोण्टे पोरुमेन्नतु चोन्ना-
नगनेन्नोरु नृपनुण्टायानतुनाळिल् । ५५
इङ्ङने पलपल मन्नवरुण्टु मुन्न
तिङ्ङिन तेजस्सोटु ब्राह्मण पुत्रन्माराय् । ५६
अङ्ङनेतन्ने नमुक्किविटेप्पुनरिप्पोळ्
मङ्ङाते पुत्रन्मारेयुण्टाक्कामरिञ्ञालुं । ५७
परशुरामन् मुन्नमोटुक्किक्कळञ्ञनाळ्
परिचोटुण्टाय्वन्नु भूमुरन्मारालत्रे ५८

वलि दुखित हुए और उन्होने दुवारा अपनी पत्नी सुदेष्णा को भेजा । सुदेष्णा जल्दी मुनि के पास पहुँची । मुनि ने टटोलकर उसे पहचाना और कहा, "महिलाओ मे मैं सुन्दरी हूँ, यह श्रृङ्गारी नही है, वृद्ध और अन्धा है", यही तुम सोचती हो, मै जानता हूँ । यह सच भी है, इसमे तुम्हारा कोई दोप नही है, स्त्रियो का स्पर्श करना, उनके साथ खेलना, यह सब मुझे नही चाहिए । हे मृगनयने ! केवल राजा के अनुरोध से मै तुममे सन्तान पैदा करूँगा । इसके लिए तुम्हारा शरीर स्पर्श ही पर्याप्त होगा । उसमे (दीर्घतमा द्वारा रानी सुदेष्णा से) अगन नाम के राजा का जन्म हुआ । ४९-५५ इस प्रकार पूर्वकाल मे अनेक वडे तेजस्वी राजा ब्राह्मणो के पुत्र थे । जान लो कि हम भी उसी प्रकार अपने लिए पुत्र पैदा करा सकते है । पूर्वकाल में जब परशुराम क्षत्रियो को समाप्त कर चुके थे तब भूसुरो (ब्राह्मणो) द्वारा ही फिर सन्ताने

मन्नवन् सुदेष्णया तन्नुटे पत्नि तन्ने-
द्धन्यना मुनिवरन्तन्ने शुश्रूषिप्पानाय् ३९
सान्त्वनतर परञ्ञयच्चोरनन्तरं
चान्तेलुमुलयाळु दासियोटुरचेय्ताळ् । ४०
वृद्धनामन्धनन्तन्ने श्रद्धयिल्लिनिक्केतु
वद्धकौतुकत्तोटु नी चेन्नु पुणरेण । ४१
ओर्त्तु धात्रेयिकया शूद्रयुमतुनेर
चीर्त्तकौतुकत्तोटु पुणर्न्नाळ् मुनितन्ने । ४२
कक्षपनादियायिट्टक्काल पतिनोन्नु
मक्कळेज्जनिप्पिच्चु शिक्षिच्चु विद्यकळु ४३
ओक्कवे पठिप्पिच्चु विख्यातगुणत्तोटु
मुख्यन्माराय कुमारन्मारु तेजोवल- ४४
विद्यायौवनरूपशीलविज्ञानङ्ङळाल्
रुद्रन्मारेन्नपोले भद्रन्मारायुण्टायार् । ४५
सागोपागाम्नायादिविद्ययु पठिच्चुळ्ळो-
रागिरस्सुकळेक्कण्टन्नेर बलिनृपन् । ४६
अन्नुटे पुत्रन्मारेन्नुरचेय्ततु केट्टु
निन्नुटे पुत्रन्मारल्लेन्नु मामुनि चोन्नान् । ४७
निन्नुटे पत्नि पुनरेन्नेप्पुल्कुवानऱ-
च्चेन्नुटेयरिकत्तु दासिये नियोगिच्चाळ् । ४८

ने अपनी स्वीकृति दे दी। राजा ने अपनी पत्नी सुदेष्णा को बहुत समझाकर मुनि की सेवा करने के लिए भेज दिया। तब उस सुन्दरी ने अपनी दासी से कहा, ३४-४० "बुड्ढे और अन्धे मुनि के प्रति मेरी तनिक भी श्रद्धा नही है। तुम जाकर आनन्द से उनके साथ रमो।" तब उस शूद्रा धाई ने बडे कौतुक के साथ मुनि का आलिङ्गन किया। इसके फलस्वरूप कक्षप आदि ग्यारह पुत्र हुए जिनको सभी विद्याएँ सिखा दी और वे बडे गुणवान् निकले। वे बालक अपने तेज, बल, विद्या, यौवन, रूप, शील, विज्ञान आदि के कारण रुद्रो की भाँति श्रेष्ठ हुए। अगो और उपागो के साथ वेद पढे हुए इन श्रोत्रियो को देखकर राजा बलि ने "ये मेरे पुत्र है" कहा। यह सुनकर महामुनि ने कहा, "नही, ये आपके पुत्र नही है। आप की पत्नी को मेरे साथ रमने से घृणा हुई, इसलिए उसने अपनी दासी को मेरे पास भेजा। ४१-४८ यह सुनकर राजा

धृतराष्ट्रादिकळुटॆ उल्पत्ति ।

अक्काल जननियु व्यासनॆ निरूपिच्चाळ्
भक्तियोटवन्वन्नु तॊळुतु माताविनॆ १
तन्मतमऱियिच्चाळम्मयुमतुनेर
कलुपमकन्नॊरु मामुनितानु चॊन्नान् । २
सम्मतमल्लॆङ्किलुमम्म चॊन्नतु केट्टाल्
नन्म वन्नीटुमत्रे निर्म्मलन्मार्क्कु नूनं । ३
धर्म्मत्तिन् गतियेतुमऱिवान् वशमल्ल
कर्म्ममुळ्ळवयॆल्ला वरुमॆन्नते वेण्टु । ४
मन्मथलीलकळिलॆन्मनमळिञ्ञीटा
वॆण्मतिमुखिमार्क्कुमॆन्मेनि तॊट्टुकूटा । ५
ऎङ्किलु कनिवोटु सन्ततियुण्टाक्कि ञान्
सङ्कट तीर्प्पनॆन्नु मातावोटुरचॆय्तान् । ६
कृष्णद्वैपायननां मामुनि वेदव्यासन्
विष्णुतान्तन्नॆवन्नु पिऱन्न दिव्यमूर्त्ति ७
सोदरन् मुन्पिल्वेट्टॊरंविकागृहतन्नि-
लादरवोटु चॆन्नानाकातवेपत्तोटु ८

धृतराष्ट्र आदियो की उत्पत्ति

उस समय माता सत्यवती ने व्यास का ध्यान किया। तब व्यास ने भक्ति के साथ आकर माता की वन्दना की। तब माता ने उनसे अपना विचार प्रकट किया और मुनि ने विना व्याज के कहा— "कहते है कि सहमत न होने पर भी अगर कोई अपनी माता का कहना माने तो उस निर्मल व्यक्ति का भला होगा।" धर्म की गति जानना वहुत कठिन है; इतना तो अवश्य है कि अपने कर्मो का फल (अवश्य प्राप्त) होगा। कामदेव की लीलाओ मे न तो मेरा मन लग सकता है और न चन्द्र-मुखियाँ (महिलाएँ) ही मुझे स्पर्श कर सकती है। और (आपका) दु:ख समाप्त करूँगा।" फिर भी मैं सन्तान पैदा करूँगा अपनी माता से इस प्रकार कह कर महामुनि कृष्णद्वैपायन वेदव्यास जो दिव्यमूर्त्ति भगवान् विष्णु ही का अवतार थे अपने भाई की पूर्वपत्नी अंबिका के घर विचित्र वेष धारण करके सादर पहुँचे। १-८ तब महिलाओ मे रत्न अंबिका ने उनका वह विकृत वेष और दुर्गन्ध न सह सकने के कारण आँख

पृथिव्यप्तेजोवाताकाशङ्ङळ् निजनिज-
गन्धादि विपयङ्ङळ् तङ्ङळे वेंटिकिलुं ५९
चन्द्रादित्यन्मार् शीतोष्णङ्ङळे वेंटिकिलुं
वृत्रनाशनन् निजविक्रम वेंटिकिलु ६०
धर्म्मराजनु निज धर्म्मत्ते वेंटिकिलुं
सत्यत्ते वेंटिकयिल्लेंन्नु ञानोरुनाळु । ६१
तङ्ङळिल् पलपल कथकळ् परञ्ञुट-
निङ्ङनेतन्नेयेंन्नु कल्पिच्च वऴि केळ्प्पिन् । ६२
ऎङ्किल्ञान् वेदव्यासन्तन्नेक्कोण्टुण्टाक्कुवन्
तिङ्कळ्तन्कुलमेंन्नु चोल्लिनाळ् सत्यवति । ६३
दोषमिल्लतिनेंन्नु पलरुं चोन्नशेष
योषमारोटु चेंन्नु परञ्ञु सत्यवति । ६४
पण्टु ञान् तोणि कटत्तीटुन्न कालत्तिङ्क-
लुण्टायि पराशर पुत्रनायोरु मुनि । ६५
दिव्यनेत्रयुमवनवने निरूपिच्चाल्
सर्व्वसङ्कट तीरुं सशयमिल्लयेतुं । ६६
ऎङ्किलङ्ङनेयाकेंन्नवरुमुरचेय्तार्
सङ्कटंतीर्न्नु कुलसन्ततियुण्टावानाय् । ६७

पैदा हुई । पृथिवी, जल, तेज, वायु और आकाश भले ही अपने-अपने गन्ध आदि विपय छोड दे, चन्द्र और सूर्य भले ही अपना शैत्य (ठडक) और ऊष्मा (गर्मी) छोड दे, वृत्र के नाशक (इन्द्र) भले ही अपना विक्रम छोड दे, धर्मराज भले ही अपना धर्म छोड दे, पर सत्य को मै कभी न छोडूँगा । ५६-६१ (इस प्रकार) आपस मे तरह-तरह कीवाते करने के वाद जो मार्ग निश्चित किया वह सुन लिजिए । सत्यवती ने कहा—अगर ऐसा है तो मै वेदव्यास के द्वारा चन्द्रवश की सन्ताने पैदा कराऊँगी । जव वहुतो ने कहा कि इसमे कोई दोप नही है तो सत्यवती ने अविका और अवालिका से जाकर कहा । "पूर्वकाल मे जव मैं नाव चलाती थी तव मुझसे पराशर के पुत्र के रूप मे एक मुनि (व्यास) का जन्म हुआ । वह एक दिव्य पुरुप है । उनका ध्यान करो तो हमारा सारा दु ख समाप्त हो जायगा ।" तव दोनो ने कुल को (वढानेवाली) सन्तान हो, इस वुद्धि से कहा "ऐसा ही हो ।" ६१-६७

माण्डव्यनाय मुनि तिलकन्कोपेन मा-
र्त्तण्डपुत्रनेंशपिच्चीटुवानेंन्तु मूल ? १९
अेंन्नतु केट्टु वैशन्पायननरुळ्चेय्तान्
मन्नवनाय जनमेजयन्तन्नोटेल्ला । २०
ऑन्नोंळ्रियाते सूतन् शौनकादिकळोटु
नन्नायिप्परञ्ञुकेळ्प्पिच्चितु वळ्रिपोले । २१
चॊल्लुवनेङ्किलतु निङङ्ळु केट्टुकोळ्विन्
नल्ल सत्कथ केट्टाल् नरकमुण्टाय्वरा । २२

माण्डव्य शापं

पाण्डित्यं कलर्न्नोरु भूदेवन् पण्टुण्टायि
माण्डव्यनेंन्नु भुवि विश्रुतनामत्तोटु । १
वानप्रस्थाश्रमवु पालिच्चु नानातीर्थ-
स्नानशुद्धात्मावायोराश्रममुपग्राम २
काननदेशे तपोनिष्ठया चिरकाल
मौनवुपूण्टु वाळुंकालमीश्वराज्ञया ३
तत्र सप्राप्तन्मारायार् चिल दस्युक्कळुं
वित्तरक्षिकळुमन्वेपिच्चु पिन्पे चेन्नार् । ४

होकर-मार्तण्ड पुत्र (सूर्य के पुत्र यमराज) को क्यो शाप दिया। यह सुनकर वैशम्पायन ने राजा जनमेजय से सव कह दिया। सूत ने भी कुछ न छोडते हुए शौनक आदियो को सव सुना दिया। मैं भी उसको वता दूंगा, आप लोग सुन लीजिए। अच्छी कथा सुनने से नरक न जाना होगा। १७-२२

माण्डव्य का शाप

पूर्वकाल मे एक विद्वान् ब्राह्मण थे जिनका पृथिवी मे विख्यात नाम था माण्डव्य। वे वानप्रस्थ आश्रम का पालन करते हुए भिन्न-भिन्न तीर्थो मे स्नान करने से शुद्ध होकर गॉव के पास एक वन मे निष्ठा के साथ मौन का अवलंवन करते हुए वहुत दिन से रहते थे। ईश्वर की आज्ञा से वहॉ कुछ दस्यु (चोर) पहुँचे और धन की रक्षा करनेवाले आरक्षक भी उनके पीछे पीछे पहुँचे। भयभीत दस्युओं ने धन को वही कही छिपा दिया और वे भाग गये। तव एक कुटी के सामने जटा,

वेषवैरूप्यमोरु गन्धवुं सहियाञ्ञु
योषमार्मणियाकुमविकयत्तुनेर । ९
कण्णुकळ् चिम्मिप्पूण्टाळतुकारणमायि-
क्कण्णुकुटातें पिऱन्नीटिनान् कुमारनु । १०
पिन्नेयङ्ङंबालिकतन्नुटें गृह तन्निल्
चेन्नानन्नोरुदिनमवळुमतुनेऱ । ११
पाण्डुवर्णत्तेप्पूण्टु पुणन्नाळितुकोण्टु
पाण्डुवाय्तन्नेयोरु सुतनुमुण्टाय्वन्नु । १२
नन्नायिट्टोरु सुतनबिक पेटुन्टावा-
निन्नोरु कळिवाक्कॆन्नम्मतन् नियोगत्ताल् १३
पिन्नेयुमोरु निशि चेन्नितु वेदव्यास-
नन्नवळ् दासितन्नें नन्नायिच्चमयिच्चु १४
चेन्नालुमॆन्नयच्चाळवळुं मुनितन्नें
वन्दिच्चुनिन्नु भावमऱिञ्ञु भक्तियोटे १५
चोव्वोटें परिलाळिच्चीटिनाळतुमूलं
दिव्यनायोरु सुतनवळ्क्कुमुन्टाय्वन्नु । १६
शूद्रयोनियिलाणीमाण्डव्यमुनिशापाल्
श्राद्धदेवनु वन्नु पिऱन्नु विदुरराय् । १७
इत्थमाकर्ण्य जनमेजयन् चोद्य चेय्तान्
उत्तमनाय वैशन्पायनमुनियोटु । १८

वन्द करके उनका आलिगन किया, जिसके फलस्वरूप उसने एक अन्धे पुत्र को जन्म दिया। तदनन्तर वे एक दिन अबालिका के घर गये। उन्हे देखकर वह पाण्डुरङ्ग की हो गयी और उसी स्थिति मे सयोग होने के कारण पाण्डु रङ्ग के पुत्र का जन्म हुआ। जव माता (सत्यवती) ने आज्ञा दी कि ऐसा करो कि अविका का एक अच्छा पुत्र हो जाय तव एक रात वेदव्यास फिर उसके घर गये। उस दिन उसने अपनी दासी को अच्छी तरह सजाकर कहा कि तुम जाओ। वह गयी और मुनि का आशय समझकर भक्ति के साथ उनके सामने खड़ी हो गयी और अच्छी तरह से उनके साथ रमी, जिसके फलस्वरूप उसने एक दिव्य पुत्र को जन्म दिया। ९-१६ मुनि माण्डव्य के शाप के कारण श्राद्धदेव (यमराज) का शूद्रयोनि मे यह विदुर के रूप मे जन्म हुआ। यह सुनकर जनमेजय ने श्रेष्ठ मुनि वैशम्पायन से पूँछा— मुनितिलक माण्डव्य ने क्रुद्ध

चेन्निट्टु मरिच्चतिल्लेन्नतु काण्ककोण्टु
चन्नितु मुनिकळु रात्रियिल् पक्षिकळाय् । १६
अन्तोरु मूल भवानिङ्ङने वरुवाने-
न्नन्तर कूटातेकण्टरुळिच्चेय्तीटण १७
मल् कर्म्मफलमत्रे भूपतिप्रवरनु
दुष्कृतमेतुमिल्लेन्नतु केट्टवर्कळु १८,
पोयिनि वृत्तान्तङ्ङळरिञ्ञु रक्षिकळु
नायकनाय नरपालकनोट्टु चोन्नार् । १९
मन्त्रिकळोटु कूटिच्चेन्नु भूपालेन्द्रनु-
मन्धत्व क्षमिच्चुकोळ्केन्नभिवाद्यचेय्तान् । २०
शूलवुमिळकाञ्ञिट्टटत्तु मुरिच्चितु
भूलोकपतियेयुमयच्चु मुनीन्द्रनु । २१
आणिमाण्डव्यनेन्नु नामवुमुण्टाय्वन्नु
ज्ञानिया मुनि पिन्ने प्रापिच्चु कालधर्म्म । २२
अन्तकन्तन्नोटोन्नु चोदिच्चु माण्डव्यनु-
मेन्तु कारणमेन्नेश्शूलत्तिन्मेलाक्कुवान् ? २३
ईर्क्किल् कूर्प्पिच्चु मुन्नमीच्चयेक्कळुवेटि
तीक्ष्णमतिन्फलमेन्नतिन्नत्रे चेय्तु । २४

जीवित शूली पर चढे हुए (सजा पाये हुए) तापस को आहार तो मिलता ही नही था, इस पर भी अनेक दिन वीतने के वाद भी नही मरा। यह देखकर मुनिगण पक्षि के रूप मे रात को वहाँ गये और वोले—"आप को यह सव कैसे हुआ ? इसका तथ्य हम लोगो को वतला दीजिए।" "यह मेरे ही कर्म का फल है। राजवर का इसमे कोई अपराध नही है।" यह सुनकर वे चले गये। आरक्षको को यह समाचार मालूम हुआ और उन्होने अपने नायक राजा को सव वतला दिया। भूपाल अपने मन्त्रियो के साथ गये और वदना करके कहा "मेरा (अपराध) क्षमा करो। शूल के न हिलने के कारण वह काटा गया और मुनीन्द्र ने राजा को विदा किया। १५-२१ तव से तापस का नाम आणिमाण्डव्य हुआ। तत्पश्चात् उसने काल-धर्म (मृत्यु) प्राप्त किया। माण्डव्य ने यमराज से पूछा—"मै क्यो शूल पर चढाया गया ?" (यम ने उत्तर दिया) "पूर्वकाल मे इपीका (सीक) की नोक तेज करके उससे तुमने मक्खी को वेधा था। उसी का यह फल है।" ठीक है, पर एक वात

वित्रस्तन्मारायोरु दस्युक्कळर्त्थमेल्ला
तत्र सन्निधान चेय्तविट्टे मरुन्नप्पोळ् ५
जटयुं वल्कलयु भस्मवु धरिच्चोरु
विटपिमूले नल्लोरुटजाङ्कणे कूप्पि- ६
त्तोळुतुनिल्वकुन्नोरु तापसश्रेष्ठन्तन्ने-
त्तोळुतु चोदिच्चितु नृपतिभटन्मारुं । ७
कळ्ळन्मारेतुवळि पोयितेन्नतुनङ्ङळ्-
क्कुळ्ळवण्णमेयरुळ्चेय्येणमेन्नु चोन्नार् । ८
तापसन् समाधियिलुरुच्चु निल्कयाले
भूपतिभटन्मार् चोदिच्चतु केट्टीलेतु । ९
ओन्नुमे मिण्टाय्कयाल् पिन्नेयुमन्वेषिच्चु
चेन्नु कळ्ळन्मारेयु पिटिच्चु केट्टीटिनार् । १०
अर्त्थवुमेल्लामेट्टुत्तवनीश्वरन्मुन्पिल्
भृत्यन्मार् कोण्टुवच्चु वृत्तान्तमोक्कच्चान्नार् ११
किंकरन्माक्कु मुनीन्द्र प्रति मनक्कान्पिल्
शङ्कयुळ्ळतु केट्टु भूपति नियोगिच्चान् । १२
चोरन्मारायवर्योक्कवे शूलत्तिन्मे-
लारोपिच्चीटुकेन्नु केट्टुटन् भटन्मारु १३
चोरन्मारोटुकूटेश्शूलाग्रत्तिन्मेलिट्टार्
धीरनां तपोधनन्तन्नेयुमेत्र कष्ट । १४
कोल्लाते शूलत्तिन्मेलिट्ट तापसन् तनि-
क्किल्लेतुमाहारमेन्नाकिलुमनेकं नाळ् १५

वल्कल और भस्म धारण किये हुए एक तापस हाथ जोडे दिखाई दिया। आरक्षको ने उससे हाथ जोडकर पूछा। १-७ "चोर लोग किस रास्ते से भागे ?"— यह हमको ठीक से वतला दो। तापस तो अपनी समाधि मे स्थिर था, इस लिए उसको आरक्षको की बात न मुनाई दी। जव उसने कुछ भी न कहा, तव उन्होने फिर पूछा। तदनन्तर आरक्षको ने चोरो को पकडकर वॉध लिया। प्राप्त हुआ सारा धन राजा के सामने रखकर आरक्षको ने सारा हाल कह सुनाया। यह जानकर कि आरक्षको का मुनीन्द्र के प्रति भी संदेह है राजा ने इस प्रकार आज्ञा दी— "सभी चोरो को शूली पर चढा दो।" यह सुनकर आरक्षको ने चोरो के साथ धीर तापस को भी शूली पर चढा दिया। कितना अन्याय है ! ८-१४

कन्यकयॅन्नाकिलुमादित्यन् पुणन्नॅप्पोळ्
कर्ण्णनॅन्नॊरु मकन् तन्नॆयु पॆटाळवळ् । ३६
चण्डभानुविन्मकन् पिऱक्कुनेरतन्नॆ
कुण्डलङ्ङळु नल्ल कवचमतुमुण्टु । ३७
कळ्ळक्काटॆन्नतवळुळ्ळिले निरूपिच्चु
वॆळ्ळत्तिल् कळञ्ञॊरु पैतलॆक्कण्टनेर ३८
राधावल्लभनाय सूतनुमॆटुत्तुकॊ-
ण्टादरवोटु तन्टॆ मकनाय् वळर्त्तिनान् । ३९
कुण्डलकवचङ्ङ ळुण्टॆङ्किलवनॆभू-
मण्डलत्तिङ्कलार्क्कु जयिच्चुकूटायल्लो । ४०
वासवन् मऱयवनाय् चॆन्नु मायत्ताले
वासराधीशसुतनोटव वाङ्ङिक्कॊण्टान् ४१
मार्त्ताण्डसुतन् दानशीलरिल् मुन्पनल्लो
कूर्त्तमूर्त्तॊरु वेलु कॊटुत्तानुम्पर्नाथन् ४२
अङ्ङनॆयुळ्ळवन्तन्नम्मया कुन्तितानु
मंगलापाङ्गियाय माद्रियुमायिप्पाण्डु ४३
मन्मथलीलपूण्टु वसिक्कु कालत्तिङ्कल्
नन्मयॆन्नियॆ मट्टु काण्मानिल्लॊरॆटत्तु ४४

ब्राह्मण दुर्वासा ने पाँच मन्त्र सिखाये थे। उनमे से एक की परीक्षा करने के लिए उसने सूर्य का ध्यान किया। तब सूर्य ने आकर उस कन्या का आलिगन किया। फलस्वरूप उसने कर्ण नामक पुत्र को जन्म दिया। जन्म लेते समय ही सूर्यपुत्र कुण्डल और कवच पहने हुए था। ३१-३७ उसका जन्म अवैध समझकर माँ ने उसे नदी मे फेंक दिया। उस बालक को बहते देखकर राधा के पति, सूत ने उसे ले लिया और आदर के साथ उसका पुत्र की तरह पालन किया। जब तक वह कुण्डल और कवच पहने रहता तब तक पृथिवी मे कोई भी उस को हरा न सकता, (यह जान कर) इन्द्र ने अपनी माया से ब्राह्मण बनकर सूर्यपुत्र से (कुण्डल और कवच) दोनो ले लिये क्योकि सूर्यपुत्र दानशीलो मे श्रेष्ठ थे। बदले मे देवराज ने कर्ण को एक शक्ति दी। इस प्रकार के पुरुष की माता कुन्ती और सुन्दर आँखवाली माद्री के साथ जब (पाण्डु) कामदेव की लीलाएँ करते हुए रहते थे, तब आनन्द के सिवाय और कुछ न दीखता था। ३८-४४ विख्यात भीष्म का कहना कभी न टालते हुए चारो दिशाओ को जीतकर

ऎङ्किलॊन्नरियॆणं द्वादशवयस्सोळ
संक्रीडारतन्मारा वालन्मार् चॆय्यु कर्म्म २५
ऒन्निनुं फल पिन्नॆयिल्लल्लो बुद्धिपूर्व्व-
मॊन्नरिञ्ञल्लाय्कयाल् सूक्ष्मधर्म्मज्ञनल्ल । २६
केवलं भवानतुकारण शूद्रयोनौ
सेवार्त्थं पिरन्नु नूटाण्टु वाळुकयॆन्नान् । २७
धर्म्मराजावुतन्नॆ पिरन्नोरवन्तन्टॆ
धर्म्मनिष्ठकळॆल्लामॆन्तिनु परयुन्नु । २८
धृतराष्टरु नल्ल पाण्डुवामनुजनु
धृतियेरीटुन्नोरु विदुरन् तानुमायि । २९
वळर्न्नुतुटङ्ङिनार् मूवरुमॊरुमिच्चु ।
वळर्न्नु सन्तोषवु पुरवासिकळ्क्कॆल्ला ३०
गान्धारराजन्तन्टॆ मकळाय् मरुविन
गान्धारितन्नॆ वेट्टू धृतराष्ट्रनुमन्नाळ् । ३१
वारॊळु वसुदेवन्तन्नुटॆ भगिनिया
वारिजमिळियाळॆप्पाण्डुराजनु वेट्टान् । ३२
माद्रियां मद्रराजन्तन्नुटॆ मकळ्तन्नॆ-
प्पार्थिववीरन् पाण्डु वेट्टितु रण्टामतु । ३३
कुन्तिभोजन्टॆ मकळाकिय कुन्तिक्कु प-
ण्टन्तणनाय दुर्व्वासावुतान् पठिप्पिच्चान् ३४
अञ्चु मन्त्रङ्ङळतिलॊन्निवळ् परीक्षिप्पान्
नॆञ्चकं तन्निल् सूर्यदेवनॆद्धयान चॆय्ताळ् । ३५

है। वारह वरस तक के बच्चे जो खेलते समय करते है उसका कोई फल नही है, क्योकि वह जान वूझकर नही किया जाता। आप सूक्ष्मधर्म नही जानते है। इसलिए आप शूद्रयोनि मे सेवा करने के लिए जन्म ले और सौ वरस जीवित रहे। जव धर्मराज स्वय जन्म लेते है तो उनकी धर्मनिष्ठा क्या वर्णन करे ? इस प्रकार धृतराष्ट्र, छोटा भाई पाण्डु, वडे धैर्यवाले विदुर, तीनो साथ-साथ वढने लगे। नगरवासियो का आनन्द भी वढा। २२-३० गान्धार के राजा की पुत्री गान्धारी से धृतराष्ट्र का विवाह हुआ। विख्यात वसुदेव की सुन्दरी वहन (कुन्ती) से राजा पाण्डु का विवाह हुआ। मद्रराजा की पुत्री माद्री से वीर राजा पाण्डु का दूसरा विवाह हुआ। कुन्तिभोज की पुत्री कुन्ती को पूर्वकाल मे

ळरिकें दरीमुखगतङ्ङळाय् काणुम्पोळ्
शरङ्ङळ्कॊण्टु वीणु मरणभयकॊण्टु ५६
मरङ्ङळ् मऱञ्ञु पोय्निन्नु नोक्कीटुन्नतु
निष्कुटत्तिङ्कल् मुन्नमिरुन्नीटनपोलें ५७
मर्क्कटक्रीडकळ् कण्टुळ्क्कौतूहल पून्टु
कुक्कुटरतिक्रीडादिकळ् कण्टानन्दिच्चु ५८
पॊल्क्कुटङ्ङळ्क्कुनेरा तैक्कॊङ्क नोविकक्कण्टु
कोकिल कोक केकी चातक शूकादि स- ५९
भोगभेदङ्ङळ् कण्टु रसिच्चुमतिन्मद्ध्ये
वेगमोटम्पुकाण्टु माळ्कि वीणीटुन्नतु ६०
शोकमोटिणकूटिक्केणुवीणोटुन्नतु
करटिक्कुल तम्मिल् कटिच्चुकळिप्पतु
करिणिकळॊप्पूण्टु करिकळ् पुळप्पतु ६१
किटिकळ् पिटकळॆप्पिटिच्चु पुल्कुन्नतु
पिटकळोटु चेर्न्नु पक्षिकळ् कळिप्पतु ६२
कण्टु कौतुक पूण्टु कण्टिवार्कुळलिकळ्
कण्ठाश्लेषवु चेय्तु कान्तनु तङ्ङळुमाय् । ६३
कण्ट कानन तोऱु रमिच्चु वसिक्कयु
तण्टार्बाणनुमितु कण्टेट् हसिक्कयु ६४

वे हिरण, सिह, हाथी, जङ्गली सुअर, वाघ आदि को निकट ही गुहाओ के द्वार पर देखती थी। किसी-किसी को वाणो के लगने से गिरते, औरो को प्राणभय से पेडो की आड मे छिप जाते देखती थी। दोनो कुतूहल के साथ-साथ वन्दरो के खेल देखती थी, जैसे पहले अपने ही उपवन मे देखती थी। वे कुक्कुटो की कामलीलाएँ देखकर भी आनन्दित हुई। सोने के कलश के समान अपने तरुण स्तनो को कोयल, चकवा, मोर, पपीहा, तोता आदियो के सभोग करने के प्रकारो को देखकर आनन्दित हुईं। उन्होने वीच मे जानवरो को तेज वाणो से घायल होकर गिरते भी देखा। ५५-६० जानवरो का अपने दु ख मे साथ हो जाना और भागना, भालुओ का आपस मे काटते हुए खेलना, हाथियो का हथिनियो के साथ रमना, सूअरो का अपनी स्त्रियो को पकडकर उनके साथ खेलना, अपनी मादाओ के साथ चिडियो का खेलना, यह सब देखकर दोनो को वडा कौतुक हुआ और उन्होने अपने प्रियतम का आलिगन किया। कामदेव के समान

चौल्कोण्ट भीष्मर्तन्टॆ चौल्कल्निन्निळकाते
दिक्कुकळॊक्कॆज्जयिच्चग्रजन्तानुमायि ४५
मुख्यभोगेन मुखिच्चिरिक्कु कालत्तिङ्क-
लुळ्ळक्कान्पिलॊन्नु तोन्नि पाण्डुविन्नापत्तिन्नाय् । ४६
कान्तियेऱीटुन्नोरु कान्तमारोटु कूटि
कान्तारंतन्निल्प्पुक्कु नन्नायि रमिक्कॆणं । ४७
वाट्टमॆन्नियॆ मम नायाट्टिन्वैदग्ध्यवु
काट्टणमिवर्क्कॆन्न कौतुकत्तोटुकूटि ४८
द्युमणितन्टॆ रश्मिपोलुमङ्ङणयात
हिमवान्तन्टॆ तॆक्कॆप्पुऱत्तॆप्पॆरु काट्टिल् ४९
पॆरिकॆ रसपूण्टु कळिच्चु मरुविनान् ।
गिरिशृङ्गङ्ङळ्तोरुमतिकौतुकत्तोटॆ ५०
करिणीयुगमद्ध्यगतनाय् मदिच्चोरु
करिवीरनॆप्पोलॆ मदनविवशनाय् ५१
करिणीगमनमाराकिय भार्यमारां
तरुणीमणिकळां कुन्तियु माद्रितानु ५२
सरसीरुहशरसमना कान्तन्तन्नॆ-
ष्शरतूणीरकराळोज्ज्वलल् करवाळ- ५३
धरनाय् शरासनकरनाय् काणुन्तोरु
सरसीरुहशरनिकरपरवश- ५४
तरमानसमाराय् मरुवीटिननेरं
हरिण-हरि-करि-किरि-शार्दूलादिक- ५५

अपने बडे भाई के साथ जब सुख से रहते थे तब पाण्डु को दुर्भाग्य लानेवाली एक बात सूझी। वह यह थी कि बडी कान्तिवाली अपनी पत्नियो के साथ वन मे कामलीला करे। इस इच्छा से भी कि मैं शिकार खेलने मे अपना कौशल इनको दिखलाऊँ, पाण्डु हिमालय के दक्षिण की ओर एक गहन वन मे, जहाँ सूर्य की किरणे तक न प्रवेश कर सकती थी, बड़े आनन्द से खेलते रहे। दो हथिनियो के साथ हर एक पर्वत-शिखर पर आनन्द के साथ खेलनेवाले हाथी के समान मदन से विवश हुए तथा कमलबाण (कामदेव) के तुल्य चमकती हुई भयानक तलवार को धारण करनेवाले अपने पति पाण्डु को देखकर हथिनी के समान गतिवाली तरुणियाँ कुन्ती और माद्री मदनबाणो की वर्षा से विवश हो गई। ४५-५४

अत्तलपूण्टवन् चेन्नु हस्तिनपुर पुक्कु
वृत्तान्त सत्यवतितन्नोटु भीष्मरोटु ७५
वन्धुक्कळ् मट्टुळ्ळवर्तम्मोटुमरियिच्चु ।
वेन्तुवेन्तळुन्नोरु चिन्तयुमुळ्ळिल्क्कोण्टु ७६
दानवु मरयवक्कावोळ चेय्तु तन्टे-
यानन पत्म ताळ्त्तिव्भार्यमारोटु कूटि ७७
उन्नतमाय शतशृगमा मलतन्मेल्
सन्यासवृत्तियोटे मन्नवन् चेन्नु पुक्कान् । ७८

धार्त्तराष्ट्रोत्पत्ति ।

अन्नु गान्धारीतनिक्कुण्टायि गर्भमेन्नु
मन्नवन् पाण्डु केट्टु चिन्तिच्चु वाळुकालं १
कुन्तियोटुरचेय्तु सन्ततियुण्टावकुवा—
नेन्तोरु कळिवेन्नु मन्त्रिच्चनेरमवळ् २
मन्त्रत्तिन् वलकोण्टु धर्म्मराजने प्रापि-
च्चन्तर कूटातोरु नन्दनन्तन्नेप्पेटाळ् । ३
कुन्तिक्कु नन्नायोरु सन्ततियुण्टायतु
चिन्तिच्चु गान्धारियुमुदर कलक्किनाळ् । ४

स्त्री का स्पर्श करोगे तो तुम्हारी भी वही गति होगी जो इस समय मेरी हुई है।" यह शाप देकर मुनि मर गये और राजा पाण्डु भी (उस शाप को सुनकर मानो) वेमौत ही मर गये। वे दुःखित होकर हस्तिनापुर लौटे और सारा वृत्तान्त सत्यवती, भीष्म और अन्य वन्धुओ को सुनाया। चिन्ता से भीतर जलते हुए उन्होने ब्राह्मणो को अपरिमित दान दिया और अपने मुखकमल को नीचा करके अपनी पत्नियो के साथ, सन्यास ग्रहण करके एक ऊँचे पर्वत शिखर पर जाकर रहने लगे। ७४-७९

धार्तराष्ट्रो की उत्पत्ति ।

उन्ही दिनो राजा पाण्डु ने सुना कि गान्धारी को वच्चा होने वाला है। उन्होने चिन्तित होकर कुन्ती से कहा और उससे पूछा कि मेरे सन्तान होने का क्या उपाय है। कुन्ती ने अपने मन्त्र के वल से धर्मराज को प्राप्त किया और फलस्वरूप विना विघ्न के एक पुत्र को जन्म दिया। यह सुनकर कि कुन्ती के एक अच्छी सन्तान हुई है, गान्धारी को वडी जलन हुई। १-४

माकन्दमकरन्दविन्दु पानवु चेय्तु
कूकन्नपिककुलपञ्चम केट्टु केट्टु ६५
वण्टुकळ् मधुपान चेय्तु मत्ततपूण्टु
कोन्टाटि मुरण्टुटन् कण्टु पुष्पङ्ङळ्तोरु ६६
कुण्ठभाववु नीक्किस्सभ्रमिच्चीटुन्नतु
कण्टोरानन्द पूण्टुमधरपानं चेय्तु ६७
मन्मथलीलकोन्टु कण्मुन चान्पि चान्पि
सम्मोद वळर्न्नुळ्ळिल् सम्मोह पेरुकियु ६८
वन्मलमुकळेरि निर्म्मलशिलातले
नन्मलर्मेत्ततन्मेलुन्मेष पूण्टु वाणु ६९
भामिनिमारुमायिस्सानन्दमिरिक्कुन्पोळ्
कामनु समनाय पान्डुवा नृपवीरन् ७०
कलयु मानु कूटिक्कमलशरमेट्टु
कळिक्कुन्नतुकण्टु कोट्त्तु शरकोण्टु । ७१
शरमेटतुनेर मृगवु मुनियायि
नरपालकन्तन्नेश्शपिच्चु मरिक्कुन्पोळ् । ७२
कनत्तमुलमारेक्कळिच्चु तोटुन्नाकिल्
निनक्कुमेन्नेप्पोले वरिकयिनिमेलिल् । ७३
शपिच्चु मुनितानु मरिच्चानतुकोण्टु
मरिच्चुमरियाते पाण्डुवा नृपन्तानु । ७४

नृपवीर पाण्डु अपनी भामिनियो (पत्नियो) के साथ वन-वन मे रमने लगे, जिसे देखकर कमलबाण (कामदेव) को वडा आनन्द आया । ६१-६६ माकन्द वृक्ष का रस पी-पी कर गानेवाली कोयलो का पञ्चम स्वर सुनते हुए चले, भँवरो का मधुपान से मत्त होकर फूलो मे आनन्द के साथ सचार करना देखकर आनन्दित हुए और आपस मे चुवन और अन्य कामलीलाएँ की, जिससे उनको वडा आनन्द प्राप्त हुआ, पर समोह भी वढा । एक पर्वत शिखर पर चढकर एक निर्मल शिलातल पर फूलो का विस्तर वनाकर वे उस पर आनन्द से लेटे । उस समय कामदेव के समान पाण्डु ने हिरण के एक मिथुन (जोडे) को कामदेव के वाणो से व्याकुल होकर रमण करते देखा और तत्क्षण ही उस पर अपना तीर चलाया । वाण के लगते ही हिरण एक मुनि वन गया और उसने मरते समय राजा को शाप दिया । ६७-७३ "अगर तुम कामलीला में

जळसन्धनुं सुलोचननु चित्राख्यनु
विचित्रन् चित्राक्षनु पिन्नेवनायीटुन्नु । १५
चारुचित्रशरासनन्तानु दुर्द्धर्पणन्
दुष्प्रधर्षाख्यन्तानु विवित्सु विकटनु १६
शमनुमूर्ण्णनाभन् पिन्नेवन् सुनाभनु
नन्दनामावुमुपनन्दनु सेनापति । १७
केट्टालु सुषेणनु पिन्नेवकुण्डोदरनुं
चॊल्लुवन् महोदरन् पिन्नेवन् चित्रद्ध्वजन् १८
चित्ररथाख्यन् चित्रबाहुवुममित्रजिल्
छत्रवाहुवु चित्रवर्म्मावु सुवर्म्मावुं १९
दर्व्विमोचनन् चित्रसेननु सुचित्रनु
चित्रवर्म्मधृल् पराजितनु पण्डितकन् २०
पिन्नेवन् विशालाक्षनपरन् दुरावरन्
अजितन् जयन्तनु जयत्सेननु पिन्नें- २१
दुर्ज्जयन् दृढहस्तन् सुहस्तन् वातवेगन्
सुवर्च्चस्सादित्यकेतुवुं बह्वाशितानु २२
नागदन्तनुमग्रयायियु कवचियुं
निषगि पाशी, दण्डधारनु धनुर्ग्रहन् २३
चॊल्लीटामुग्रन् भीमरथनु भीमाख्यनु
वीरबाहुवुमलोलुपनु भीमकर्म्मा । २४
पिन्नेवन् सुबाहुवु भीमविक्रमन्तानु
अभयन् द्रुतकर्म्मावॆन्नपरनु नाम २५

विचित्र, चित्राक्ष, चारुचित्र, शरासन, दुर्धर्पण, दुष्प्रधर्थ, विवित्सु, विकट, शम, ऊर्णनाभ, तदनन्तर सुनाभ, नन्द, उपनन्द, सेनापति, और सुनिए, सुषेण, फिर कुण्डोदर, महोदर, तदनन्तर चित्रध्वज, चित्ररथ, चित्रबाहु, अमित्रजित्, छत्रवाहु, चित्रवर्मा, सुवर्मा, दविमोचन, चित्रसेन, सुचित्र, चित्रवर्मधृत्, पराजित, पण्डितक, १०-२० विशालाक्ष, दुरावर, अजित, जयन्त, जयत्सेन, दुर्जय, दृढहस्त, सुहस्त, वातवेग, सुवर्चस्, आदित्यकेतु, बह्वाशि, नागदन्त, अग्रयायी, कवचि, निषगी, पाशी, दण्डधार, धनुर्ग्रह, उग्र, भीमरथ, भीम, वीरबाहु, अलोलुप, भीमकर्मा, सुबाहु, भीमविक्रम, अभय, द्रुतकर्मा एक का नाम है, तीन पुत्रों का नाम है दृढरथ तदनन्तर अनाधृष्य, दूसरा कुण्डभेदी, विख्यात विरोधी, दीर्घलोचन, तदनन्तर दीर्घध्वज, फिर दीर्घभुज, फिर

गर्भवुमोरु मासपिण्डमाय् पिरन्नितु
अप्पोळे वेदव्यासनविटेक्कोळुन्नळ्ळि । ५
पिण्डत्ते मुनि नूरु खण्डमाय् खण्डिच्चोक्क-
क्कुण्डिकळतन्निलाक्किशेषिच्च लेशत्तेयु ६
कुन्तियु मन्त्र कोण्टु मारुतदेवन्तन्ने-
च्चिन्तिच्चु पुणर्न्नप्पोळ् गर्भवुमुण्टाय्वन्नु ७
अक्कालमोरुनिशि मांसखण्डत्तिलोन्नु
पोल्क्कलशवुपोट्टिप्पुरत्तु पुरप्पेट्टु । ८
दुरियोधननायतवन्पोलतुनेरं
पेरिके दुर्न्निमित्तमुण्टायितेन्नु केळ्प्पू । ९
पिटेन्नाळुच्चयान्पोळ् कुन्तियु भीमन्तन्ने-
प्पेटितु शुभमायि मरुवु लग्नंकोण्टे । १०
ओरोरोदिनन्तोरुमोरोरो कुंभ भेदि-
च्चोरोरो तनयन्मार् गान्धारि क्कुण्टाय् वन्नु । ११
दुरियोधनन् ज्येष्ठननुजन् दुश्शासनन्
दुर्द्धर्षन् दुर्म्मुखनु जलसन्धनुं सहन् १२
सांबनु विन्दननुविन्दनु दुष्प्रसहन्
चोल्लेळु सुबाहुवु दुप्प्रधर्षणन्तानु १३
दुर्म्मदन् चित्रयोधि दुष्कर्ण्णन् कर्ण्णन् पिन्ने-
क्केट्टुकोण्टालु विविंशतियुं विकर्ण्णनु १४

गान्धारी का गर्भ एक मासपिण्ड के रूप मे निकला। उसी समय वेदव्यासजी वहाँ पधारे। उन्होने मासपिण्ड के सौ टुकडे कर दिये और उनको और बचे अश को कलशो मे रख दिया। कुन्ती ने अपने मन्त्र के द्वारा वायुदेव का ध्यान किया और फलस्वरूप उसको गर्भ हुआ। उसी समय एक रात उन मासपिण्ड के टुकडो मे से एक अपने कलश को तोडकर बाहर निकला। वही दुर्योधन था। सुना जाता है कि उस समय अनेक दुर्निमित्त (अशकुन) दिखायी दिये। १-९ दूसरे दिन मध्याह्न मे कुन्ती ने एक शुभ लग्न मे भीम को जन्म दिया। गान्धारी का तो प्रतिदिन एक-एक कलश फूटकर उनमे से एक-एक पुत्र पैदा हुआ। उनमे से ज्येष्ठ था दुर्योधन, उसका अनुज दुश्शासन, दुर्धर्प, दुर्मुख, जलसन्ध, सह, साव, विन्द, अनुविन्द, दुप्प्रसह, विख्यात सुवाहु, दुष्प्रधर्षण, दुर्म्मद, चित्रयोधि, दुष्कर्ण, कर्ण, और (नाम भी) सुन लीजिए, विविशति, विकर्ण, जलसन्ध, सुलोचन, चित्र,

विस्तरिच्चरुळिच्चेय्तीटेणमल्लो पाण्डु-
पुत्रन्मारुटे परमोल्पत्ति वळिपोले । ३७
अन्नतु केट्टु वैशम्पायननरुळ्चेय्तु
मन्नवा केट्टुकोळ्क पाण्डवोल्पत्तियेल्ला । ३८

पाण्डुपुत्रोल्पत्ति

तापसशापमेटु पाण्डुवाकिय नृपन्
तापमुळ्क्कोण्टु चेन्नु हस्तिनपुक्क शेप । १
आभरणादिकळुमोक्कवे दानं चेय्तु
शोभतेटीटु निज भार्यमारोटु कूटि २
तापसवेपं पूण्टु पोयथ शतश्रृगं
प्रापिच्चु फलमूलाशननाय् वाळुकाल ३
सिद्धचारण मुनिश्रेष्ठन्मार्क्केल्लावर्क्कु
स्निग्द्धनाय् पाण्डु चिरकाल वाणोरुशेप ४
मामुनीन्द्रन्मारमावासिनाळोक्कत्तक्क-
त्तामरसोद्भवनेक्काण्मानाय् पुरप्पेट्टार् । ५
चोदिच्चु पाण्डु मुनिश्रेष्ठन्मारोटु निङ्ङ-
ळेतोरु दिक्किन्नेळुन्नळ्ळुवान् तुटङ्ङुन्नु ? ६
तापसेन्द्रन्मारतु केट्टरुळ्चेय्तीटिनार्
भूपतिप्रवर ! नी केट्टुकोण्टालुमेङ्किल् ७

उत्पत्ति को कृपया विस्तर से वतला दीजिए ।" यह सुनकर वैशम्पायन ने कहा, "हे भूपाल ! पाण्डवोत्पत्ति की पूरी कथा सुन लीजिए ।" ३१-३८

पाण्डुपुत्रों की उत्पत्ति

तापस का शाप लगने के वाद राजा पाण्डु वडे दुःख के साथ हस्तिनापुर लौटे और अपने सभी आभूपणो को दान देकर अपनी सुन्दरी पत्नियो के साथ तापस का वेश पहनकर शतश्रृग नामक पर्वत पर गये और वहाँ फल और मूल मात्र खाते हुए रहे । सिद्ध, चारण, मुनिश्रेष्ठ आदियो के प्यारे वनकर पाण्डु वहुत दिन वहाँ रहे । तदनन्तर महामुनि लोग अमावास्या के दिन कमलोद्भव (ब्रह्मा) का दर्शन करने के लिए जाने लगे । तव पाण्डु ने मुनिवरो से पूछा—"आप लोग कहाँ जाने के लिए तैयारी कर रहे है ?" १-६ यह सुनकर तापसवरो ने कहा—"भूपतिवर !

मूवरॆच्चॊल्लु दृढरथन्मारॆन्नुतन्नॆ
पिन्नॆवननाधृष्यनपरन् कुण्डभेदि २६
चॊल्लॆळु विरोधियु दीर्घलोचनन्तानु
पिन्नॆवन् दीर्घद्ध्वजन् पिन्नॆवन् दीर्घभुजन् २७
पिन्नॆवनदीर्घनु दीर्घनु दीर्घबाहु
पिन्नॆवन् महाबाहु व्यूढोरस्कनु पिन्नॆ २८
कनकद्ध्वजन् महाकुण्डनु कुण्डन्तानु
कुण्डजन् चित्रमनुमनस्वान् चित्रकनु २९
नूटॊन्नामतु पिन्नॆद्दुश्शळयॆन्नु पेरा-
याटलोटॊरु मकळ्तानुमुण्टायिवन्नु । ३०
धृतराष्ट्रनु पिन्नॆ वैश्यस्त्री पॆटिट्टॊरु-
सुतनुमुण्टाय्वन्नु युयुत्सुवॆन्नु पेराय् । ३१
कुन्तीदेविक्कु पिन्नॆ मून्नामतॊरु सुत-
निन्द्रनन्दननायिट्टर्ज्जुननुण्टाय्वन्नु । ३२
अर्भकन्मारिल्लाञ्ञु दु खिच्च माद्रितनि-
क्कपॊळॆयॊरु मन्त्रं कुन्तियु पठिप्पिच्चाळ् । ३३
अश्विनीदेवकळॆ ध्यानिच्चिट्टवळ्तानु
विश्वासत्तोटु सेविच्चीटिनाळतुकालं ३४
नकुलसहदेवन्माराय कुमारन्मार्
निखिलगुणत्तोटु माद्रिक्कुमुण्टाय्वन्नु । ३५
वैशन्पायननेव मरुळिच्चॆय्तनेर
वैशिष्यमेरु जनमेजयन् चोद्य चॆय्तान् ।३६

अदीर्घ, दीर्घ, दीर्घबाहु, तदनन्तर महाबाहु, फिर व्यूढोरस्क, कनकध्वज, महाकुण्ड, कुण्ड, कुण्डज, चित्रम, अनस्वान्, चित्रक, और एक सौएकवी सन्तान के रूप मे दु शला नामक एक शान्त स्वभाव की पुत्री पैदा हुई । २१-३० धृतराष्ट्र का एक वैश्यस्त्री से एक पुत्र हुआ जिसका नाम था युयुत्सु । कुन्तीदेवी का एक तीसरा पुत्र हुआ जो इन्द्र का ही पुत्र था जिसका नाम था अर्जुन । पुत्र न होने के कारण दु खित माद्री को कुन्ती ने उसी समय एक मन्त्र सिखाया । तब माद्री ने अश्विनीदेवो का ध्यान किया और बड़े विश्वास के साथ उनकी सेवा की । फलस्वरूप नकुल और सहदेव नामक समस्त गुणो से युक्त दो पुत्रो का जन्म हुआ । जब वैशम्पायन ने इस प्रकार कहा तब बडे वैशिष्यवाले जनमेजय ने पूछा । "पाण्डुपुत्रो की

अङ्ङ्ळोटोक्कत्तन्नॆ पोय्कॊळ्ळामिन्नु पक्षे
मगलात्मावेयितु केट्टिङ्ङु वसिच्चालु । १८
ऎन्नतु केट्टु पाण्डु पिन्नॆयुमुरचॆय्तान्
खिन्नमानसनायि तापसवरन्मारे ! १९
सन्ततियिल्लातवर्क्किल्लपोल् परगति
सन्ततमतुतन्नॆ चिन्तिच्चु दु.खिक्कुन्नेन् । २०
इङ्ङ्नॆ पाण्डुनृपवाक्कुकळ् केट्टनेर-
मिगितज्ञन्माराय तापसररुळ्चॆय्तु । २१
उण्टल्लो भवान्नॆङ्किल् सन्तति देवोपम । !
कण्टितु अङ्ङ्ळ् दिव्यचक्षुपा नृपोत्तम ! २२
विख्यातन्माराय् नल्ल पुत्रन्मारुण्टाक निन्
दु:खवु तीर्न्नु पिन्नॆस्सल् गति लभिच्चालुं । २३
ऎन्नयच्चॊळ्ळुन्नळिळ तापसवरन्मारु-
मन्नेरमकतारिल् चिन्तिच्चु पाण्डुनृपन् । २४
सन्ततियुण्टाक्कॆण्टु कर्म्ममॆङ्ङनॆ मम
चिन्तिच्चालुपायवुमेतुमे कण्टीलल्लो । २५
क्षुल्पिपासादि श्रान्तनाय वेदव्यासनॆ
शिल्पमाय् पूजिच्चितु गान्धारियॊरुदिन । २६

और दुष्प्रवेश वन भी है। मुनिजनों के लिए वहाँ चलना फिरना ही कठिन है। फिर शतश्रृग पहुँचना तो इससे भी कठिन है। यो तो आप हम लोगो के साथ जा सकते है पर, हे मगलात्मन् ! यह सुनकर आप यही रह जाइए। यह सुनकर पाण्डु ने दु खित होकर फिर कहा, "हे तापसवर ! कहा जाता है कि जिनके सन्तान नही है उनकी गति नही है। मैं सदैव इस वात की चिन्ता से दु खित हूँ। १४-२० पाण्डु राजा की यह वात सुनकर सकेत समझनेवाले तापसो ने कहा, "हे देवतुल्य ! आप को सतान होगा। हे नृपोत्तम ! यह हमने अपनी दिव्य दृष्टि से जान लिया है। आप के अच्छे और विख्यात पुत्र हो ! आप दु.ख पार करके सद्गति प्राप्त करे !" इस प्रकार पाण्डु को समझाकर तापसवर चले गये। राजा पाण्डु उस समय सोचने लगे। "सन्तान होने के लिए क्या कर्म करे ? सोचने पर भी कोई उपाय तो सूझता नही। भूख और प्यास से थके वेदव्यासजी की गान्धारी ने विधिपूर्वक पूजा की। २१-२६ सुना जाता है कि उनके प्रसाद से गान्धारी को वर मिला ओर फलस्वरूप

ब्रह्मलोकत्तिङ्कलुण्टिन्नोरु महायाग
ब्रह्मज्ञोत्तम! अङ्ङळ् तत्र पोकुन्नु सखे ! ८
देवकळ् पितृक्कळुमृषिकळ् सिद्धन्मारु
सेविप्पान् वरुं कमलासनपादाभोज । ९
अङ्ङळु ब्रह्माविनेक्काण्मानाय्प्पोकुन्नितु
मंगलात्मावे महीपालवृन्दोत्तंसमे ! १०
पाण्डुवु गन्तुकामनाय् समुत्थानंचेय्तान्
पाण्डित्यमेरु मुनिमारप्पोळरुळ्चेय्तार् । ११
अत्रयु दुर्ग्गमार्ग्ग दुग्रावाग्रोग्रग्राह्यं
पृत्थ्वीशोत्तम ! महल् पृत्थ्वीद्ध्रश्रृगोद्देश १२
उत्तुगमुत्तमागमुत्तरोत्तरहित-
मुत्तुगस्तनिकळा पत्निमारेन्तु चेय्वू । १३
यक्षराक्षसगन्धर्व्वोरगनिषेवितं
पक्षिसञ्चारहीन रहितमृगगण १४
अप्सरस्त्रीकळोटु देवकळ् कळिप्पेट
पुष्पसौगन्ध्यंपूण्ट मन्दमारुतसेव्य १५
नदिकळ् नितंबङ्ङळ् गह्वरङ्ङळु पुन-
रतिशीतळहिम दुष्प्रवेशारण्यवुं । १६
नटन्नुकूटायल्लो मामुनिजनङ्ङळक्कु
कटन्नुकूटान् पणियतिलु शतश्रृंग । १७

आप सुन लीजिए। आज ब्रह्मलोक मे एक महायज्ञ होनेवाला है ! हे ब्रह्मज्ञोत्तम ! हे मित्र ! हम लोग वहाँ जा रहे है। देव, पितृगण, ऋषिजन और सिद्ध ब्रह्मा के पादपद्म की सेवा करने आवेगे। हे महीपालो के अलंकार ! हम लोग भी ब्रह्मा का दर्शन करने जा रहे है। पाण्डु की भी जाने की इच्छा हुई और वे उठे। तव विद्वान् मुनियो ने कहा—"रास्ता वहुत खराव है, बुरे तीक्ष्ण नोकवाले पत्थरो से भरा हुआ ! हे नृपोत्तम ! वहाँ वडे-वडे पर्वतशिखर है जो वहुत ऊँचे है जहाँ अधिक से अधिक हिम भी है। उन्नत स्तनवाली आप की पत्नियाँ (वहाँ) कैसे जा सकेगी ? ७-१३ यक्ष, राक्षस, गन्धर्व और नाग वहाँ आते है, न वहाँ पक्षियों का सञ्चार होता है, न वहाँ हिरण होते है। वह देवो का अप्सराओ के साथ खेलने का स्थान है। वहाँ फूलो की सुगन्धि वाला वायु चलता है। वहाँ नदियाँ, पहाड के नितम्ब, गुफाएँ अत्यन्त शीतल हिम

वरिच्चु दुर्ज्जयादि मून्नु मक्कळॆप्पॆटाळ्
धरिक्क नीयु गर्भ व्राह्मणवीजत्तिनाल् । ३६
पुत्रन्मारारुविधमुण्टल्लो मनुष्यर्क्कु-
मॆत्रयु मुख्यनतिल् क्षेत्रजनॆन्ञालु । ३७
इङ्ङनॆ पाण्डुवाक्य केट्टु कुन्तियु चॊन्नाळ्
मगलमते ! मम भर्त्तावे ! नृपोत्तम ! ३८
ऎन्नोटित्तरमुरियाटरुतॊरुनाळु-
मन्यसगममॊरुनाळु ञान् चॆय्कयिल्ल । ३९
पुरुवशत्तिल् मुन्न चॊल्लॆळु व्यूपिताश्वन्
पारितु परिपालिच्चिरिक्कुंकालत्तिङ्कल् ४०
कैक्कॊण्टान् काक्षीवतियाकिय कन्यकयॆ-
स्सक्तियु परस्परं वर्द्धिच्चितिरुवर्क्कुं ४१
पुष्करशरक्रीडातल्परत्वेन राज-
यक्ष्मणा मरिच्चितु भूपति प्रवरनुं । ४२
पुत्रन्मारुण्टायतुमिल्लिनिक्कय्यो ! पापं !
भर्त्तावे ! चतिक्कयो चॆय्ततॆन्नॆयुमिप्पोळ् । ४३
इत्तर दु खंपूण्टु करञ्ञु शवशरी-
रत्तॆयुमाश्लेपिच्चु किटक्कुं पत्नियोटुं ४४

तुम भी व्राह्मण के वीज के द्वारा गर्भ धारण करो। मनुष्य के छ. प्रकार के पुत्र होते है और जान लो कि उनमे क्षेत्रज[1] पुत्र एक मुख्य प्रकार से होता है। पाण्डु की यह वात सुनकर कुन्ती ने कहा—हे मगलमते ! हे मेरे पतिदेव ! हे नृपोत्तम ! आप इस प्रकार मुझसे कभी वात न कीजिए। मै परपुरुप से कभी सगम न करूँगी। ३४-३९ पूर्वकाल मे पुरुवश के राजा विख्यात व्युपिताश्व जव इस पृथ्वी का परिपालन करते थे, तव उन्होने काक्षीवती नामक कन्या से विवाह किया। दोनो मे परस्पर प्रेम वढा। काम-क्रीडाओ मे तत्पर हो जाने के कारण भूपतिवर की राजयक्ष्मा (क्षयरोग) से मृत्यु हो गयी। "हे पतिदेव ! आपने मुझे धोखा दिया, मेरे कोई पुत्र ही नही हुआ, हाय ! कैसी कष्ट की वात है !" इस प्रकार दु खित होकर शव का आश्लेषण करती हुई लेटी पत्नी से (पति ने कहा) "दु ख मत करो, हे भद्रे ! उठो, उठो ! तुम्हारे महत्वपूर्ण पुत्र पैदा होगे।

१ वह पुत्र जो किमी मृत या असमर्थ पुरुप की स्त्री ने दूसरे पुरुप के सयोग से उत्पन्न किया हो।

तल् प्रसादत्ताल् वरं किट्टिय गान्धारिक्कु
गर्भवुमुण्टायिपोलॆन्नल्लो केट्टतिप्पोळ् । २७
इनिक्को गर्भाधान चॆय्वानो मुनिशाप
निनच्चालरुतातॆवन्नितु विधिवशाल् । २८
नाल्कणत्तोटुकूटि मानवन् जनिक्कुन्नु
नालु वीट्टिये गतिवन्नीटू भुवि नृणा । २९
आस्तिक्यमोटु यज्ञकॊण्टु देवकळ्कटं
स्वाध्यायतपस्सुकॊण्टृषिकळ्क्कुळ्ळकटं ३०
श्राद्धादि पुत्रोत्पत्या पितृक्कळ्क्कुळ्ळ कटं
मानुषर्क्कुळ्ळ कटमानृशस्येन वीट्टि
वेण मानुषन्मार्क्कु सल्गति वन्नीटुवान् । ३१
ऎन्नतिल् पितृक्कळ्क्कु वीट्टीलॆन्नतु मूल-
मॆन्नुळ्ळिल् परिताप मेल्क्कुमेल् वद्धिक्कुन्नु । ३२
इत्तरमोरोन्नोर्त्तु रहसि कुन्तियोटु
चित्तत्तिलुळ्ळ तापमॆप्पेरुमरियिच्चान् । ३३
अनपत्यनु गतियिल्ल मटॊन्नुकॊण्टु-
मनघशीले ! कुन्ति ! चिन्तिच्चीटुकवेण । ३४
शारदण्डायनिया केकयनृपनुटॆ
भार्ययां श्रुतसेन नल्लॊरु मुनीन्द्रनॆ ३५

उसके गर्भ भी हुआ । मुझे तो विधिवश मुनि के शाप के कारण गर्भाधान करना भी असभव हो गया । चार ऋण लेकर मानव पैदा होता है । चारो को चुकाने के वाद ही मनुष्यो की पृथ्वी पर अच्छी गति होती है । आस्तिक्य बुद्धि के साथ यज्ञ का अनुष्ठान करके देवो का ऋण, स्वाध्याय, रूप तप करके ऋषियो का ऋण, श्राद्ध आदि करके और पुत्र पैदा करके पितृगणो का ऋण, और सबके प्रति सद्भावना से मनुष्यो का ऋण चुकाने के वाद ही मानव की सद्गति हो सकती है । उनमे से मैने अपना पितृगण का ऋण नही चुकाया, इसलिए मेरे भीतर परिताप (दु ख) वढ़ता जा रहा है । इस प्रकार की वाते सोचते हुए पाण्डु ने एकान्त मे कुन्ती से अपने मन का सारा दु ख कह दिया । २७-३३ जिसके सन्तान नही है उसकी किसी भी प्रकार से गति नही है । हे पुण्यशील कुन्ति ! यह सोचने की वात है । केकय के राजा शारदण्डायनि की पत्नी श्रुतसेना ने एक अच्छे मुनीन्द्र को चुनकर उनसे दुर्जय आदि तीन पुत्र प्राप्त किये ।

नारिकळ् मुन्नमनावृतमारत्ते काम-
चारचारिणिकळाय् स्वतन्त्रमारायुळ्ळु । ५५
इक्कालमतु तिर्यग्योनिजङ्ङळक्केयावू
दुष्कृतमत्ते मनुष्यर्क्केल्ला धर्म्मवुम- ५६
ल्लुत्तरकुरुराज्यत्तिङ्कलिप्पोळुमतु
नित्यमा धर्म्ममत्ते निकृष्टमल्लयेतु । ५७
इन्धनङ्ङळिल् तृप्तिवरुमारिल्लग्निक्कु
सिन्धुविनिल्ल तृप्ति वाहिनिकळिलेतु । ५८
अन्तकनिल्ल सर्व्वजन्तुक्कळिलु तृप्ति
बन्धुरागिकळाय नारिमार्क्कतुपोले ५९
पुरुषन्मारिल् तृप्ति वरुमारिल्लयल्लो ।
पुरुषप्रति पुरुषप्रति नारिमार्क्कु ६०
करुतीटुकिल् तृष्ण वर्द्धिच्चुवरुमत्रे ।
वरुमारिल्ल सुरतत्तिलोरलभाव । ६१
अगम्य गमनमेन्नुळ्ळतिल्लगनमा-
वर्क्कतारिङ्कलोरुनाळुमेन्नरिञ्ञालु । ६२
तातनाकिलु निज पुत्रनेन्निरिक्किलु
भ्रातावाकिलु मट्टु पौत्रादियेन्नाकिलु ६३
स्वेदिक्कुमल्लो योनि रहसि काणुन्नेरं ।
हेतुवेतुम वेण्टा केवलं स्वाभाविक । ६४

जानवरो मे यह बात होती है । मनुष्यो मे यह पाप समझा जाता है, धर्म नही । उत्तरकुरु देश मे तो यह आज भी सनातन धर्म है, यह आचार निकृष्ट नही है । जिस प्रकार चाहे जितनी समिधाये दी जाये, अग्नि कभी तृप्त नही होता और समुद्र नदियो से तृप्त नही होता । चाहे जितने जन्तु मरे, किन्तु अन्तक (यमराज) की तृप्ति नही होती । इसी प्रकार सुन्दरी स्त्रियो की पुरुषों से कभी तृप्ति नही होती । विचार किया जाय तो पुरुषो के प्रति स्त्रियो की तृष्णा बढती ही जाती है । उनकी सुरत से कभी तृप्ति नही होती । ५५-६१ जान लीजिए कि स्त्रियो के मन मे यह विचार ही नही उठता कि कोई पुरुष अगम्य है । पिता हो या अपना ही पुत्र हो, या अपना भाई हो अथवा पौत्र आदि हो, उनको देखकर स्त्रियो की योनि गुप्त रूप मे क्लिन्न हो जाती है । यह बिना हेतु होता है, यह उनके लिए स्वाभाविक है । इस युग मे एक दिव्य पुरुष ने एक मर्यादा स्थापित

दु.खिक्कवेण्ट मुहुरुत्तिष्ठोत्तिष्ठ भद्रे !
मुख्यन्मारायित्तव पुत्रन्मारुण्टाय्वरुं । ४५
निन्निलुलपादिप्पिक्कुन्नुण्टु ञान् मरिच्चालु
निर्ण्णयमतु मम तपसां वलकोण्टे । ४६
इष्टमा तल्पत्तिन्मेल्तुस्नान चेय्तुट-
नष्टमां चतुर्द्दशीयेन्नुळ्ळ तिथिकळिल् ४७
ऒन्नेयु चिन्तिच्चुपोय् शयनं चेय्तीटेन्ना-
लेन्नुटे वीजंकोण्टु निनक्कु गर्भमुण्टां । ४८
ईवण्ण मरञ्ञुनिन्नीटिन जीवगिरं
लावण्यांगियुं केट्टिट्टव्वण्णमनुष्ठिच्चाळ् । ४९
मून्नु सालवन्मारेयु नालु माद्रन्मारेयु
मान्यन्मारायिप्पेटाळ् भद्रयां काक्षीवति । ५०
त्वमपि तथा मयि मनसा जनयितु
मम वल्लभ! शक्तस्तपसां बलवशाल् । ५१
इत्तरं कुन्तीदेवि चोन्नतुनेरमति-
नुत्तरमायिट्टवळ्तन्नोटु पाण्डु चोन्नान् । ५२
नी परञ्ञतु परमात्थमेन्नरिञ्ञालु
भूपतीश्वरनवन् देवसन्निभनल्लो ५३
धर्म्मज्ञन्मारां मुनिश्रेष्ठन्मारुटे मतं
धर्म्मिष्ठे! पुराणं नी केट्टुकोळ् पुनरितु । ५४

यद्यपि मै मरा हूँ तथापि मै तुममे सन्तान उत्पन्न करूँगा। अपने तप के वल से मैने यही निर्णय किया है। ४०-४६ तुम ऋतुस्नान करके अष्टमी और चतुर्दशी, इन तिथियो मे अपने इष्ट तल्प (विस्तरे) पर मेरा ध्यान करती हुई लेटो, तव मेरे वीज से तुम्हारे गर्भ हो जायगा।" छिपे हुए जीव की इस प्रकार वात सुनकर उस लावण्याङ्गी (सुन्दरी) ने वैसा ही किया। साध्वी काक्षीवती ने तीन मान्य साल्वो और चार मान्य माद्रो को जन्म दिया। हे वल्लभ! आप भी अपने तप के वल से मुझमे मन के द्वारा सन्तान उत्पन्न कर सकते है। जव कुन्तीदेवी ने इस प्रकार कहा, तव उसके उत्तर मे पाण्डु ने कहा—"तुमने जो कहा वह ठीक है, जान लो भूपतिवर तो देवतुल्य है ही। हे धर्मिष्ठे! मुनिश्रेष्ठो का पुराना मत भी तो तुम सुन लो। ४७-५४ कहते है कि पूर्वकाल मे स्त्रियाँ अरक्षित थी, स्वेच्छाचारिणी और स्वतन्त्र थी। आजकल तो केवल

क्षुत्पिपासादितीर्न्नु विश्रान्तनायि विप्र-
नुत्पन्नप्रमोदमुद्दालकनोटु चोन्नान् । ८
अर्क्कसन्निभतेजोविग्रहत्तोटु तेळि-
ञ्ञिरिक्काणाकिय बालनारेन्नु पऱयण । ९
मुख्यात्मावाय भवान्तन्नुटे तनयने-
न्नुळ्ळकान्पिल् कल्पिक्कुन्नेन् सत्य चोल्लुकवेणं । १०
अन्नेरमुद्दालकनवनोटुरचेय्ता-
नेन्नुटे पत्नियाय कुशिकात्मज मम ११
छायेवानुगा पातिव्रत्य कोण्टरुन्धति
मायकूटाते शुश्रूपिच्चु वर्त्तिक्कुकाल १२
उद्भविच्चितु मम पुत्रनाय् श्वेतकेतु
सत्पुमान् तपोविद्याशीलादिगुणत्तोटु १३
अन्नेरमुद्दालकनोटु चोल्लिनान् द्विज-
नेन्नेयुमृणविनिर्म्मुक्तनाक्केण भवान् १४
मुन्न ञान् विवाहवु चेय्तुकोण्टीला पुन-
रिन्निप्पोळ् जरानरयुपूण्टु वृद्धनायेन् । १५
कन्यादानवुमारुं चेय्कयिल्लनिक्किनि-
द्धन्यनाकिय भवान् करुणाशालियल्लो । १६
पित्र्यमामृणत्तिङ्कल्निन्नु वेर्पेट्टुत्तिनि-
क्कुत्तमलोकप्राप्तियुण्टाक्कीटुकवेणं । १७

आसन, पाद्य, अर्घ्य, शाक, मूल आदि आहार, यह सब देकर उनकी सेवा की। तब उनकी भूख और प्यास शान्त हुई और वे विश्रान्त हुए। अति प्रसन्न होकर उद्दालक से कहा—'सूर्य के समान तेज धारण करनेवाला यह बालक कौन है, कृपया बतलाइए। मैं समझता हूँ कि वह आप महानुभाव का सुपुत्र है। मुझे तथ्य बतला दीजिए।' यह सुनकर उद्दालक ने उत्तर दिया—'मेरी पत्नी कुशिकात्मजा छाया के समान मेरा अनुसरण करती है, वह पातिव्रत्य मे अरुन्धती है। जब वह निष्कपट मेरी सेवा करती थी, तब इस मेरे पुत्र श्वेतकेतु का जन्म हुआ, जो एक सत्पुरुष है और तप, विद्या, शील आदि गुणो से युक्त है।' ७-१३ यह सुनकर ब्राह्मण ने उद्दालक से कहा—'आप मुझे भी उऋण कर दीजिए। मैंने पहले विवाह नही किया, अब तो मेरे बाल सफेद हो गये है और मै वृद्ध हूँ। अब तो मुझको कोई कन्यादान भी नही करेगा। आप धन्य है और

इक्कालमिविटे लोकत्तिङ्कल् मनुष्यर्क्कु
दुष्कर्म्मं मुण्टाकाय्कानायोरु मर्यादयु ६५
वरुत्तीटिनानोरु दिव्यनित्नतिन्मूल
चुरुक्किच्चोल्लीटुवन् केट्टुकोळ्ळुक भद्रे ! ६६

पातिव्रत्यनिष्ठापनं

पण्टोरु तपोधनश्रेष्ठनामुद्दालक-
नुण्टायि तनयनाय् श्वेतकेतुवु पुरा । १
तन्नुटे पत्नियोटुकूटियन्नुद्दालकन्
पुण्यवर्द्धनमाय तपस्सुचेय्तान् चिरं । २
पञ्चाग्निमध्यस्थनाय् ग्रीष्मकालत्तु पुन-
रञ्चाते मळपेय्युकालत्तु ननञ्ञिट्टु । ३
शिशिरकालत्तिङ्कल् सलिलमद्धचे निन्नु
वशगेन्द्रियनायित्तपसा वाळु काल ४
पुत्रनु मातापिताक्कन्मारेप्परिचरि-
च्चेवयुं विनीतनाय् मरुवीटिननाळिल् ५
वन्नितु वयोधिकनायोरु विप्रश्रेष्ठन्
नन्नायिप्पूजिच्चितु तापसप्रवरनु । ६
स्वागतमृदुवचनासनपाद्यार्घ्यादि
शाकमूलाहारङ्डळ्कोण्टु पूजिच्चनेरं ७

की ताकि मनुष्यो को पाप न लग जाय । उसको मै सक्षेप से वताऊँगा, सुन लो"। ६२-६६

पातिव्रत्य का स्थापन

"पूर्वकाल मे एक उद्दालक नामक तपोधन थे और उनका पुत्र था श्वेतकेतु । उद्दालक ने अपनी पत्नी के साथ पुण्य को वढानेवाला लम्बा तप किया । वे गर्मी के समय पॉच अग्नियो के वीच मे स्थित रहते थे और धारावाहिक पानी वरसने के समय उसमे भीगते थे । सर्दी के समय पानी मे खडे होते थे । इस प्रकार इन्द्रियो को अपने वश मे करके रहते थे । उनके पुत्र ने अपने माता-पिता की सेवा करते हुए बडे विनीत भाव से समय व्यतीत किया । एक समय एक वृद्ध ब्राह्मण वहॉ पधारे, जिनका उन तापसवर ने अच्छा सत्कार किया । १-६ उनके स्वागत में मीठे वचन,

चेतसि विचारमिल्लाय्कयुमल्ल मम ।
तातनो निन्नाल्टणनिर्म्मुक्तनायानल्लो । २७
वेदज्ञोत्तमवृद्धन् विगतस्पृहनह ।
बोधमो भवानेटमुण्टल्लो विशेपिच्चु २८
पुत्रनुण्टायाल् पिन्ने निन्नुटे मातावितॆ-
यॆन्नयु वैकात आनयच्चीटुवन्तानु । २९
इत्तर वृद्धद्विजवाक्कुकळ् केळ्क्कुन्तोरु
क्रुद्धनाय् चमञ्ञोरु पुत्रनॆक्कण्टु तातन् ३०
कोपिक्कवेण्टा पुरातनमा धर्म्ममिद
तापसद्विजदेवादिकळ्क्कुमनुमत ३१
जनकवचन केट्टळविल् श्वेतकेतु
मनसि वाच्च कोपमटङ्डाञ्ञुरचॆय्तान् ३२
ऒन्निल् आनिन्नेमुतल् मानुपर्क्कॆल्लावर्क्कु
सङ्कट तीरुवतिन्नायॊरु मर्यादयु ३३
स्थापिच्चीटुन्नेन् कर्म्मक्षेत्रत्तिल् विशेपिच्चु ।
तापसद्विजदेवसम्मतमाक मेलिल् । ३४
पातिव्रत्यवु वेण नारिमार्क्कॆल्लावर्क्कु
पातकमुण्टाय्वरिकल्लाय्किलिनिमेलिल् । ३५
वेदवेदाङ्गज्ञनायीटिन् तपोधनन्
श्वेतकेतुवुमेवं सेतुवन्धिच्चान् तदा । ३६

तुम्हारे पिता तो उऋण हो गये । मैं एक वेदज्ञो मे श्रेष्ठ वृद्ध हूँ और इच्छाओ से मुक्त हूँ । तुम तो विशेप रूप से वहुत समझदार हो । पुत्र पैदा होते ही मै तुम्हारी माता को विना विलम्व के वापस भेज दूँगा ।' इस प्रकार वूढे व्राह्मण की वाते सुनकर क्रुद्ध हुए अपने पुत्र को देखकर पिता ने कहा—'क्रुद्ध न हो । यह एक पुराना धर्म है और तापस, व्राह्मण, और देवगण इसे मानते है । २५-३१ पिता का वचन सुनकर श्वेतकेतु अपना तीव्र कोप भीतर न पचा सके और वोले—'आज से मैं दु ख समाप्त करने के लिए मनुष्यो मे एक मर्यादा स्थापित करता हूँ, विशेपतः इस कर्मक्षेत्र मे । भविष्य मे तापस, द्विज और देवगण इसे स्वीकार करे । सभी स्त्रियो को पातिव्रत्य धर्म अत्यावश्यक है । नही तो आज से उनको पाप लगेगा ।' वेद और वेदङ्गो के ज्ञाता और तपोधन श्वेतकेतु ने इस समय इस प्रकार सेतुवन्ध (मर्यादा) किया । 'उत्तर कुरु देश मे आज भी-

ञान् तव पत्नितन्नॆ वहिच्चीटुन्नेनॆन्नाल्
शान्तनाकिय भवान् क्षमिच्चीटुकवेण । १८
इत्युक्त्वा कृष्णाजिनावरयामवळ्तन्नॆ-
स्सत्वरं तदा त्रस्तगात्रनां द्विजोत्तमन् १९
मत्तनाय् भर्त्तृपुत्रसमक्षमृषिपत्नी-
हस्तवु पिटिपॆट्टाननुवाद कूटातॆ । २०
क्रुद्धनाय् श्वेतकेतु मातावुतन्टॆ णटॆ-
हस्तवु पिटिच्चुटनीवण्णमुरच्चॆय्तान् । २१
वृद्धनां द्विजाधम ! किमिदं मनोभव-
मत्तनाय् चमञ्ञनिन् बुद्धि राक्षसियत्रे । २२
मातावु मम पतिव्रतयन्नरियेण
तातनु क्षमापरन् ब्रह्मवित्तमनल्लो । २३
शापानुग्रहशक्तन् तूष्णी भावत्तॆप्पूण्टु
तापसकुलश्रेष्ठनॆन्नतुमूल भवान् २४
मातर विमुञ्च मे मातर विमुञ्च मे
भूसुराधम ! धर्म्ममल्लितॆन्नुरच्चॆय्यु २५
श्वेतकेतुविनोटु भूसुरवरन् चॊन्नान् ।
श्वेतकेतो ञानपत्यार्त्थियॆन्नरिक नी २६

दयाशील भी है। आप पितृऋण से मुझे मुक्त कराकर मेरे लिए उत्तम लोक प्राप्त करना सभव कर दीजिए। मै आप की पत्नी को लिये जा रहा हूँ, आप शान्त पुरुष है, मुझे क्षमा करे।' १४-१८ यह कहकर उस कॉपते हुए ब्राह्मण ने मत्त होकर कृष्णाजिन का वस्त्र पहने हुई उस ऋषि-पत्नी का हाथ पति और पुत्र के सामने ही विना अनुमति के पकड लिया। तब क्रुद्ध होकर श्वेतकेतु ने अपनी माता का दूसरा हाथ पकड़कर इस प्रकार कहा—'हे वूढे द्विजाधम ! यह क्या है ? काम से अन्धे तुम्हारी वुद्धि राक्षसी है। जान लो कि मेरी माता पतिव्रता है और मेरे पिता क्षमाशील और ब्रह्मज्ञो मे श्रेष्ठ है। वे शाप और अनुग्रह दोनो कर सकते है। उन तापसश्रेष्ठ ने मौन का अवलम्बन किया। इसीलिए तुम यह कर रहे हो। १९-२४ मेरी माता को छोड़ दो, मेरी माता को छोड दो। हे ब्राह्मणाधम ! यह धर्म नही है।' इस प्रकार कहनेवाले श्वेतकेतु से ब्राह्मण ने कहा—'हे श्वेतकेतु ! जानलो कि मै सन्तान चाहता हूँ। यह न समझो कि मै विचार करनेवाला नही हूँ। तुम्हारे द्वारा

नालु मन्त्रवुमुपदेशिच्चानेनिक्कप्पोळ्
वाले नीयावाहिच्चाल् वेण्टु देवन्मार् वरुं । ४६
निनक्कु वशन्मारामेन्नतुमरुळ्चेय्तु
मुनिश्रेष्ठनुमेळुन्नळ्ळिनान् यथाकामं । ४७
अङ्ङनेयुळ्ळ मन्त्रकोण्टु ञानावाहिच्चा-
लिङ्ङु वन्नेन्ने प्रापिच्चीटुमद्देवन् नूनं । ४८
इङ्ङन्ने नल्लगुणसन्पन्ननायुळ्ळोरु-
मंगलद्विजनेक्कोण्टुल्पादिप्पिक्केन्नतो । ४९
अेङ्ङने वेण्टू मम भर्त्तावे! विधिच्चालु-
मिङ्ङिनिक्कोन्निनुमे वैमुख्यमिल्लयल्लो । ५०
दैवतं नारिमार्क्कु भर्त्तावुतन्नेयेन्नाल्
तावकं नियोग ञान् केवलमनुष्ठिक्का । ५१
देव वा द्विजेन्द्र वा भवता यथोद्दिष्टं
देवसन्निभ तथा कर्त्तास्मि क्षमापते । ५२
देवाल् सन्ततिफल सद्यस्ससभवेन्मही-
देवाल् सभविक्कुं कालान्तरे विधिवशाल् । ५३
आकयाल् देवकळिलारेयावाहिक्केण्टु
शोक तीर्न्नोरु सुतनुण्टावानेन्नु चोल्क । ५४
भर्त्ताविन् मतमरिञ्ञेन्नियेयरुतेन्नि-
ट्टिन्न पार्त्तितु ञानुमक्कर्म्मत्तिनु नाथ । ५५

करोगी वह आवेगा ।' 'और तुम्हारे वश मे रहेगा', यह भी कहा । फिर मुनिश्रेष्ठ यथाकाम चले गये । अगर मै उस मन्त्र के द्वारा किसी देव का आवाहन करूँ तो वह अवश्य मेरे पास पहुँच जायगा । क्या एक अच्छे गुणवाले ब्राह्मण के द्वारा सन्तान पैदा कराऊँ ? मेरे पतिदेव ! बताइए क्या होना चाहिए । मैं किसी भी बात से विमुख नही हूँ । ४५-५० स्त्रियो के लिए पति ही देवता है । मै आप की आज्ञा का पालन करूँगी । देव हो या द्विजेन्द्र हो, हे देवतुल्य ! हे भूपाल ! जैसा आप कहेगे, वैसा मैं करूँगी । देव के द्वारा तो सन्तान तत्क्षण ही हो जायगा, पर महीदेव (ब्राह्मण) के द्वारा कराने मे तो समय लगेगा । इसलिए यह बतलाइए कि देवो मे किसका आवाहन करूँ ताकि एक अच्छापुत्र पैदा हो जाय । पति का मत विना जाने (कोई काम) न करना चाहिए, यह समझकर ही,

हेतुवतिप्पोऴुमिल्लुत्तरकुरुक्कळिल्
तिर्य्यग्योनिकळ्पोलेयाचारमविटेयाय् । ३७
मर्याद वेण्ट दोषमद्दिक्किलतिनिल्ल
कर्त्तव्य नारिमार्क्कु भर्त्तृशासन नून
पुत्रार्त्थ मम हित भद्रे ! नी चेय्तीटणं ३८
सौदासन् मदयन्तियाकिय भार्यतन्ने
वेधाविन् मकनाय वसिष्ठन्कैयिल् नल्कि । ३९
वेदज्ञनाय मुनि तन्नुटे बीजकोण्टु-
मेदिनीपति निज सन्तति लभिच्चितु । ४०
कश्मलमकन्नोरु नन्दननुण्टाय्वन्नि-
तश्मकनाय गोत्राधीश्वरनरिञ्ञालुं । ४१
अस्माक जननवु वेदव्यासङ्कल्निन्नु
विस्मयमल्ल पण्टुमिप्पोऴुमतु धर्म्म ४२
इत्तरं पल पल कथकळ् पाण्डु चोन्न-
तुत्तमयाय कुन्ति केट्टळवुरचेय्ताळ् ४३
पान्थन्मार्क्केल्ला वेच्चुविळम्पीटुवान् मुन्न
शान्तनाकिय तातनेन्नेयु नियोगिच्चान् । ४४
अक्कालमोरुदिन दुर्व्वासावाय मुनि-
क्कुळ्क्कान्पु तेळिञ्ञितु मृष्टभोजनंकोण्टे । ४५

यह धर्म नही है, वहाँ के आचार पशुओ के जैसे है । ३२-३७ यह मर्यादा उनके लिए नहीं है, उस देश मे यह दोप नही है । स्त्रियो को चाहिए कि पति का कहना माने । इसलिए मेरा हित करो जिससे मेरे पुत्र हो जाय। सौदास ने अपनी पत्नी मदयन्ती को ब्रह्मा के पुत्र वसिष्ठ के हाथ समर्पित किया । उस वेदज्ञ मुनि के बीज से राजा सौदास ने अपनी सन्तति प्राप्त की । उसके एक निर्दोष पुत्र का जन्म हुआ, जो अश्मक कहलाता है और जो उसके वश का प्रवर्तक है । हमारा जन्म भी वेदव्यास के द्वारा हुआ । इसमे आश्चर्य की कोई वात नही है । यह पहले की तरह आज भी धर्म है ।' इस प्रकार पाण्डु की कही भिन्न-भिन्न कथाएँ सुनकर कुन्ती ने कहा—'वहुत पहले पिताजी ने यात्रियो को भोजन वनाकर परोसने के लिए मुझे भी नियुक्त किया था । ३८-४४ एक दिन मुनि दुर्वासा स्वच्छ भोजन पाकर बड़े प्रसन्न हुए । उन्होने मुझे चार मन्त्र सिखाये और कहा—'वाले ! (इनको जपकर) जिस देव का भी आवाहन

निर्म्मलमनोवेपालङ्कारादिकळोटुं
धर्म्मदेवने नन्नायावाहिच्चितु कुन्ति । ६५
शिल्पमायिरिप्पोरु पुष्पतल्पत्तिन्मेलूच्चे-
न्नुल्पलाक्षियुमप्पोळुल्पादिप्पतिन्नाये ६६
योगमूर्त्तिमानाय धर्म्मराजनेप्पुल्कि
रागवुमिरुवक्कुं पूर्ण्णमायुण्टाय्वन्नु । ६७
गर्भाधानवुं चेय्तु मरञ्ञु धर्म्मदेव-
नप्पोळे गर्भं धरिच्चीटिनाळ् कुन्तितानु । ६८
पेटितु पौरन्दरतारगे ताराधीशे
कुटमटीटुं कुमारन्तन्नेत्तेजोवलाल् । ६९
भास्करे दिवसमध्यस्थिते स्वतेजसा
भास्करतुल्यनायोरर्भकन् पिरन्नप्पोळ् । ७०
केळ्क्कायितशरीरवाक्यवुमेल्लावर्क्कु
भाग्यवानिवन् धर्म्मज्ञन्मारिल् श्रेष्ठनल्लो । ७१
आख्यया युधिष्ठिरन् पाण्डुसीमन्तपुत्रन्
साक्षाल् श्रीनारायणपादभक्तरिल् मुन्पन् । ७२
ईवण्णमुण्टाय्वन्नु कुन्तिक्कु सुतनेन्नु
देवि गान्धारि केट्टु खेदिच्चु वाळु कालं ७३
रण्टा वत्सरमायितिनिक्कु गर्भमिन्नु-
मुण्टायीलोरु सुतनेन्ततेन्नन्तस्तापाल् ७४

से सजे हुए एक पुष्प-तल्प पर जाकर कमललोचना कुन्ती ने सन्तानोत्पत्ति के हेतु योगमूर्ति धर्मराज का आलिंगन किया। दोनो का परस्पर प्रेम संपूर्ण हुआ। गर्भाधान करके धर्मदेव अन्तर्धान हुए और कुन्ती ने तत्क्षण ही गर्भ धारण किया। ६३-६८ जब चन्द्र ज्येष्ठा नक्षत्र मे था, तब कुन्ती ने एक तेजस्वी और निर्दोष पुत्र को जन्म दिया। जब सूर्य दिन के मध्य मे था, तब उस सूर्यतुल्य तेजवाले कुमार का जन्म हुआ। उसी समय एक अशरीरिणी वाक् (आकाशवाणी) सबको सुनायी दी—"यह पुत्र अत्यन्त भाग्यशाली और धर्मज्ञो मे श्रेष्ठ होगा।" पाण्डु के इस प्रथम पुत्र का नाम है युधिष्ठिर, भगवान् नारायण के भक्तो मे यह श्रेष्ठ है। जब गान्धारी ने सुना कि कुन्ती के इस प्रकार एक पुत्र पैदा हुआ तो उसको खेद हुआ। (उसने सोचा) "यह मेरे गर्भ का दूसरा वर्ष है, अब तक कोई बच्चा नही पैदा हुआ, क्या बात है ?" इस चिन्ता से उसने बिना

माधुर्य कलर्न्नोरु कुन्तितन् वाक्कु केट्टु
चेतसि परमानन्दत्तोटु पाण्डु चोन्नान् । ५६
धन्यनाय् चमञ्ञु आनेन्नयुमनुग्रह-
मिन्नितु तोन्नियतु निनक्कु मनोहरे ! ५७
नम्मुटे वशमिप्पोळुद्धरिच्चीटुन्नतु
निर्म्मले कुन्तीदेवी ! नीयेन्नु धरिच्चालु । ५८
श्रीदुर्वाससे महामुनये तस्मै नमो
भूतनाथांशोत्भवायोग्राय नमो नमः । ५९
येन ते दत्तो वरो धर्म्मविच्छेदं विना
मानसतापंतीर्न्नु सन्तति लभिक्कयाल् । ६०
धर्म्मतल्परनायुण्टाकणमेन्नाकिलो
धर्म्मज्ञ ! निय्युमतिन्नोन्नु चेय्तीटवेणं । ६१
धर्म्मराजने वरिच्चीटुक राजावायाल्
धर्म्मिष्ठनल्लेन्नाकिलवनालेन्तु फल । ६२
कुन्तियुं भर्त्तावुतन्नाज्ञये वाङ्ङिक्कोण्टु
सन्तोषत्तोटुमृतुकाले पोय् स्नानंचेय्तु । ६३
शुभ्रवस्त्रवु पूण्टु सुभ्रुवां कुन्तीदेवि
विभ्रमं कलर्न्नुटन् दर्प्पकवशयायाळ् । ६४

हे नाथ ! मैने इसमें इतनी देर की ।' इस प्रकार कुन्ती की मीठी बाते सुनकर पाण्डु के मन मे वडा आनन्द हुआ और वे बोले—५१-५६ "मै धन्य हूँ और यह मेरा सौभाग्य है कि आज तुम्हे यह वात सूझी । हे सुन्दरि ! हे निर्मल कुन्तीदेवि । अब हमारे वश का उद्धार करने वाली तुम्ही हो । भूतनाथ शकर के अश से उत्पन्न उन उग्र महामुनि दुर्वासा को मै बारवार नमस्कार करता हूँ, जिन्होने धर्म का विच्छेद न करके तुम्हे वर दिया, ताकि मन का दु.ख दूर करनेवाला सन्तान हो जाय । अगर सन्तान धर्म मे निष्ठावाली हो तो, हे धर्मज्ञे ! तुम्हे इसी प्रकार करना चाहिए । तुम धर्मराज का वरण (आवाहन) करो । यदि कोई राजा हो और धर्मनिष्ठ न हो तो उसका राजा होना व्यर्थ है ।" ५७-६२ कुन्ती ने अपने पति की आज्ञा शिरोधार्य की और वडे प्रमोद के साथ ऋतु के समय स्नान किया । तदनन्तर सुभ्रू (सुन्दर भौहोवाली) कुन्ती ने स्वच्छ वस्त्र पहन लिये और हाव-भाव के साथ कामवश हो गयी । निर्मल मन और वेश-भूषा के साथ कुन्ती ने धर्मदेव का ठीक प्रकार से आवाहन किया । तब कलापूर्ण ढग

क्षत्रियवंशत्तिङ्कल् जनिच्चीटुन्नताकिल्
शक्तनायिरिक्केणमेङ्किले फलमुळ्ळु । ८४
वाजिमेधत्तिनल्लो श्रेष्ठत्वं क्रतुक्कळिल्
तेजसां कुलश्रेष्ठनायतु दिनकरन् ८५
द्विपदा कुलश्रेष्ठन् ब्राह्मणनेन्नपोले ।
विबुधश्रेष्ठनल्लो मारुत देवनेटो ८६
अेन्नाल् नी जगल्प्राणदेवनेयावाहिच्चु
नन्दनमुण्टाक्कुक बलवानायिट्टिन्नु । ८७
भर्त्ताविन् नियोगत्ताल् कुन्तियु तेळिञ्ञुळ्ळिल्
भक्ति पूण्टावाहिच्चाळ् मारुतदेवन्तन्ने । ८८
मन्त्रत्तिन् बलंकोण्टु वायुवुमप्पोळे व-
न्नन्तिके निन्ननेरं कुन्तियु नाण पूण्टाळ् । ८९
पुत्रने वरिच्चप्पोळ् गन्धवाहनु तेळि-
ञ्ञुत्तमयायवळेप्पुणर्न्नु गाढं गाढं । ९०
अप्पोळुतुल्पादिच्चु गर्भवुं तिकञ्ञप्पो-
ळर्भकन् पिऱन्नितु तेळिञ्ञु लोकङ्ङळुं । ९१
अन्नेरमशरीरितन्नुटे वाक्कुकेट्टु
नन्दननिवन् बलिश्रेष्ठनेन्नेल्लाटवुं । ९२
भीमविक्रमनाय भीमसेननुमेवं
भूमिपालककुलश्रेष्ठनायुण्टायवन्नु । ९३
पटलराय् मेवीटु मट्टुळ्ळ भूपालन्मा-
र्क्किकटिट्टुवीणीटुन्नु मूत्रवुमश्रुक्कळु । ९४

अश्वमेध ही श्रेष्ठ है, ज्योतियो मे सूर्य ही श्रेष्ठ है, द्विपदो मे ब्राह्मण श्रेष्ठ है, उसी प्रकार देवो मे श्रेष्ठ वायु है। इसलिए तुम जगत् के प्राण वायुदेव का आवाहन करो और एक शक्तिशाली पुत्र को जन्म दो।" अपने पति की वात सुनकर कुन्ती प्रसन्न हुई और उसने वडी भक्ति के साथ वायुदेव का आवाहन किया। ८३-८८ मन्त्र के वल से तत्क्षण ही वायुदेव पधारकर समीप मे खडे हो गये, जिससे कुन्ती को लज्जा हुई। जव कुन्ती ने उनसे पुत्र की याचना की तव वायुदेव प्रसन्न हुए और उत्तम कुन्ती को प्रगाढ आलिङ्गन किया। तव कुन्ती के गर्भ हुआ और यथासमय एक पुत्र का जन्म हुआ, जिससे सभी लोग प्रसन्न हुए। उस समय सभी स्थानो मे एक आकाशवाणी सुनायी दी कि यह पुत्र वलशालियों मे श्रेष्ठ होगा।

कुण्ठितं कैविट्टवळुदरं कलक्किना-
ळुण्टायि साण्ठीलया मांसपेशियुमप्पोळ् । ७५
वन्नितु यदृच्छया मामुनि वेदव्यास-
नन्नेरमन्तर्गत चोल्लिन्नाळ् गान्धारियुं । ७६
कलशशतमाज्यपूर्ण्णमाय् वरुत्तुक
सलिलंकोण्टु मासपेशियु कळुकुक । ७७
नूरु पुत्रन्मारयुण्टाक्कुवानेन्नु मुनि
नूरु खण्डिच्चु घृतकलशङ्ङळिलिट्टान् । ७८
सूक्षिच्चुवच्चुकोण्टु कुभङ्ङळ् पोट्टुन्नुतु
नोक्किक्कोण्टट्टुत्तु नी वळर्त्तिक्कोळ्कयेन्नाल् ७९
अन्नरुळ्चेय्तु तपस्सिन्नेळुन्नळिळ मुनि ।
पिन्नेग्गान्धारितानुं तेळिञ्ञु मरुविना- ८०
ळुण्टाय कुमारनेप्पाण्डुवुमोटिच्चेन्नु
कण्टुटन् जातकर्म्मचेय्तितु यथाविधि । ८१
सन्तोषं पूण्टु मरुवीटुन्नाळोरुदिनं
कुन्तियोटुरचेय्तु पाण्डुवा नृपवरन् । ८२
अन्तोरु कळिविनि रण्टामतोरु सुत-
नन्तमिल्लात बलमुण्टायुण्टावानेटो । ८३

विचारे अपना पेट मल दिया। फलस्वरूप एक मासपिण्ड निकल आया। ६९-७५ उसी समय सयोग से महामुनि वेदव्यास वहाँ पधारे और गान्धारी ने उनसे अपने मन की बात कही। (मुनिजी ने कहा) "घी से भरे सौ कलश मँगवाओ और मासपिण्ड को पानी से धो दो।" तब मुनि ने मांसपिण्ड को सौ खण्डो मे काटकर एक-एक खण्ड एक-एक कलश मे रखा ताकि सौ पुत्र हो जायँ। और कहा इनकी देखभाल करो और एक-एक कलश के फूटने का समय देखते रहो। घडा फूटने से जो बच्चा निकलेगा उसका पालन करना।" इतना कहकर मुनि तपस्या करने के लिए चले गये। तदनन्तर गान्धारी सुख से रहने लगी। जो-जो पुत्र पैदा हुआ उसे पाण्डु देखने गया और विधि के अनुसार उसका जातकर्म भी करते रहे। जब सब सुख से रहते थे, तब एक दिन राजा पाण्डु ने कुन्ती से कहा—७६-८२ "अब क्या उपाय है कि जिससे हमारे निस्सीम शक्ति-युक्त एक और पुत्र हो जाय। जो क्षत्रियवश मे जन्म लेता है, उसे शक्तिशाली होना चाहिए, तभी तो उसका जन्म सफल होगा। जिस प्रकार यज्ञो मे

पिऱन्नु भीमसेनन् विशदत्रयोदश्यां ।
निऱञ्ञ पातिरय्क्कुमुन्पिले सुयोधनन् १०४
पिऱन्नानतुनेर करञ्ञु कुऱुनरि ।
चोरिञ्ञु मेघङ्ङळु रुधिरवृष्टिकॊण्टु १०५
वरुत्ति विप्रन्मारे धृतराष्ट्ररमप्पोळ् ।
पेरुत्ततापत्तोटु विदुररोटु चोन्नान् । १०६
दुर्न्निमित्तङ्ङळुटे कारण चोल्केन्नप्पोळ्
मन्नवन्तन्नोटाशु विदुररुरचेय्तु । १०७
इन्निप्पोळुण्टायतु नम्मुटे कुलान्तक-
नेन्नतु दैवमऱियिक्कचेय्ततु नूनं । १०८
त्यजिच्चीटेणमोरु पुरुप कुलस्यार्त्थे
त्यजिच्चीटेणमोरु कुलत्ते ग्रामस्यार्त्थे १०९
त्यजिक्कां जनपदस्यार्त्थे केवलं ग्राम
त्यजिक्कामात्मार्त्थे तन्नाटुमेन्नऱियेणं ११०
इत्तर विदुररु विप्ररुमुरचेय्ता-
रुत्तर चोल्लीलेतु पुत्रस्नेहत्ताल् नृपन् । १११
अङ्ङने नूरु मक्कळ् धृतराष्ट्रनुमुण्टाय् ।
तिङ्ङिङ्न मोदत्तोटुं पिन्नेयु पाण्डुनृपन् ११२
लोकविख्यातनायिट्टिनियुमोरु सुतन्
भागवतोत्तमनायुण्टावानेन्तु नल्लू । ११३

तिथि को भीमसेन का जन्म हुआ। आधी रात के समाप्त होने के पहले ही सुयोधन का जन्म हुआ—तब सियार बोले। मेघो ने रक्त की वृष्टि की। तब धृतराष्ट्र ने ब्राह्मणो को बुलाया और बडे दुख के साथ विदुर जी से पूछा कि इन दुर्निमित्तो का क्या कारण है? तब विदुर ने राजा को उत्तर दिया—"आज जो हुआ है उसके द्वारा दैव ने बतलाया है कि हमारे कुल का नाश होनेवाला है। १०३-१०८ कुल के हित के लिए उसके एक अङ्ग को त्यागना चाहिए और गाँव के हित के लिए कुल छोड़ना चाहिए। देश के लिए गाँव को त्यागना ठीक है और जान लो कि अपनी आत्मा के हित के लिए देश को त्यागना भी ठीक है।" जब विदुर और विप्रो ने इस प्रकार कहा तब राजा ने पुत्रस्नेह के कारण कुछ भी न कहा। इसी प्रकार धृतराष्ट्र के सौ पुत्र हुए। पाण्डु जो बडे मुख से रहते थे, अब सोचने लगे कि क्या उपाय है कि जिससे मेरे एक और पुत्र हो जाय जो

कुन्तियुं पत्तांदिनं कुळिप्पान् पोयाळ् निज-
नन्दनन्तन्नेप्पणिप्पेट्टेटुत्तुं कोण्टुटन् । ९५
कुळिच्चु कुमारनेयेटुत्तुकोण्टु कुन्ति
तळर्च्चयोटुमाश्रमत्तिन्नु पोरुनेरं । ९६
पिटिच्चु तिन्मान् व्याघ्रमटुत्तु वेगत्तोटु
पटुत्वमेरुं पाण्डु कोंटुत्तु शरंकोण्टु ९७
मरिच्चु शार्द्दूलवुमीश्वरविधिवशाल् ।
स्मरिच्चु दुर्वासाविन्वरत्ते कुन्तियप्पोळ् ९८
अलरिवरुन्नोरु पुलियेक्कण्टु वृथा
मलमेल् मेलपट्टेक्कु पिटिच्चु करेरुन्पोळ् ९९
वीणुपोयितु बालन् कीऴ्प्पट्टेक्कुरुण्टुटन्
ताणोरु भागत्तोरु कल्लिन्मेलेत्त कण्टं ! १००
चूर्णमाय्च्चमञ्ञितु शिलयुमतु कण्टु
पूर्णविस्मयपरमानन्दत्तोटु पाण्डु । १०१
भगवान् परमात्मा परमेश्वरन् विष्णु
जगता पति परिपालिच्चुकोळ्कयेन्नान् । १०२
सचन्द्रे बृहस्पतौ सिहगे मखान्विते
विजयमुहूर्त्तगे दिनमध्यगे सूर्ये १०३

इस प्रकार राजाओ मे श्रेष्ठ और भीम विक्रमवाले भीमसेन का जन्म हुआ। और अन्य शत्रु राजाओ के मूत्र और आँसू बूँद-बूँद होकर गिरने लगे। जन्म के दसवे दिन कुन्ती अपने पुत्र को बडे श्रम से गोद मे लेकर नहाने गयी। ८९-९६ स्नान करके अपने पुत्र को लेकर थकी हुई कुन्ती जब अपने आश्रम को लौट रही थी तब उसको पकड़कर खाने के लिए एक बाघ निकट आया। कुशल पाण्डु ने उस पर तीर चलाया और भगवान् की विधि के अनुसार बाघ मर गया। उस समय कुन्ती ने दुर्वासा के वरदान का स्मरण किया था, और गरजते हुए निकट आनेवाले बाघ को देखकर डर के मारे कुन्ती पहाड़ पर चढने लगी थी, तब बालक उसकी गोद से नीचे गिर गया। और नीचे की एक चट्टान पर जाकर गिरा, जिससे चट्टान चूर-चूर हो गयी। यह देखकर अत्यन्त विस्मित होकर पाण्डु बोले—"जगत्पति भगवान् परमात्मा परमेश्वर विष्णु ही हमारा परिपालन करे।" ९७-१०२ जब चन्द्रमा मघा नक्षत्र से युक्त था, जब बृहस्पति सिह मे था और जब सूर्य विजयमुहूर्त मे और दिन के मध्य मे था तब त्रयोदशी

गर्भिणियाय कुन्तितन्नुटे तेजस्सुक-
ण्टत्भुतंपूण्टु चमञ्ञीटिनारेल्लावरं । १२४
अर्भकन् पिऱन्नितु फाल्गुनामासे पुन-
र्प्पोळे फल्गुननेन्नतिनाल् पेरुमिट्टान् १२५
केळ्क्कायितशरीरिवाक्कुमन्नेरं दिवि
साक्षाल् श्रीरामसमनायूवरुमिवनेन्ने १२६
चेतसि शतशृंगवासिकळ्क्केल्लामप्पोळ्
प्रीतियु वर्ळन्नितु कुन्तियुं सन्तोषिच्चाल् १२७
देवकळ् पेरुन्पऱयटिच्च नादघोप-
मेवमेन्निनिक्किप्पोळ् चोल्लुवानरुतल्लो १२८
कल्पान्तकालत्तिङ्कल् पेय्युन्न मळपोले
पुष्पङ्ङळ्कोण्टु वृष्टियुण्टायतेन्ते चोल्वू । १२९
देवगन्धर्व्वन्मारुमप्सरस्त्रीवर्गवुं
देविकळोटु पाट्टुमाट्टवु तुटङ्ङिनार् । १३०
जयन्तोत्भवरचितोत्सवमित्तयिल्ल
भयं तीर्न्नितु देवादिकळ्क्कुमतुकालं । १३१
इङ्ङने मून्नु कुमारन्मारुण्टाय कालं
मगलशीलयाय माद्रियुमोरु दिन । १३२

यह सुनकर राजा पाण्डु प्रसन्न हुए और इन्द्र ने जाकर कुन्ती का आलिङ्गन किया। गर्भिणी कुन्ती का तेज देखकर सबको बड़ा आश्चर्य हुआ। फाल्गुन के महीने मे वह लडका पैदा हुआ, अतएव उसका नाम फाल्गुन रखा गया। उस समय आकाश मे यह अशरीरिणी वाक् (आकाशवाणी) सुनायी दी—"यह लडका साक्षात् श्रीराम के समान होगा।" शतशृग के निवासियो के मन मे बडी प्रसन्नता हुई, और कुन्ती भी प्रसन्न हुई। देवो ने महादुन्दुभि को बजाया, जिसके नादघोप का वर्णन नही किया जा सकता है। कल्प के अन्त के समय की वर्षा के समान फूलो की वृष्टि हुई, जिसे कहाँ तक वर्णन किया जाय। १२३-१२९ देव, गन्धर्व और अप्सराओ ने देवियो के साथ नाचना-गाना आरम्भ किया। जयन्त (इन्द्र का पुत्र) के जन्म के अवसर पर जो उत्सव हुआ, वह इतना अच्छा न हुआ था। अतएव देवो का भय भी समाप्त हुआ। इस प्रकार जब तीन पुत्र पैदा हुए, तब एक दिन मगलशील माद्री ने, जिसके अपने ही पुत्र नही थे, एकान्त में अपने पति पाण्डु से कहा—गान्धारी के सौ पुत्र हो गये, और शान्त मनवाली कुन्ती

त्रैलोक्याधिपनाय वासवन् देवश्रेष्ठन्
पौलोमीवरन्तन्नेस्सेविच्चालवनुटे ११४
वीर्यत्ताल् नमुक्कोरु नन्दननुण्टाय्वरु ।
वीर्यवानायिट्टेन्नु कलिपच्चु वळिपोले ११५
तापसश्रेष्ठन्मारुमाय् निरूपिच्चु कलिप-
च्चाभोगानन्दंपूण्टु कुन्तियोटुरचेय्तान् । ११६
वल्लभे! नमुक्किन्नु नल्लोरु तनयने-
स्स्वर्ल्लोकाधिपसुतनायिट्टुण्टाक्कीटेणं ११७
आराधिच्चीटुन्नतुण्टिन्द्रने नीयुं ञानु
पाराते वरिक्केण मन्त्रकोण्टेन्टे चोल्लाल् । ११८
इङ्ङने नियोगिच्चान् मंगलनाय पाण्डु-
वङ्ङनेतन्नेयेन्नु कुन्तियुमुरचेय्ताळ् । ११९
धीरात्मा नृपोत्तमनोरुकाल्कोण्टु निन्नु
घोरमायिरिप्पोरु तपस्सु तुटङ्ङिनान् । १२०
अक्कालं प्रत्यक्षनायीटिन महेन्द्रनु-
मुळ्ळकान्पु तेळिञ्ञु भूपालनोटरुळ्चेय्तु । १२१
मून्नु लोकत्तिङ्कलु विश्रुतनायिट्टिप्पोळ्
ञान् निनक्कोरु सुतन्तन्नेयुण्टाक्कीटुवन् । १२२
ॲन्नतुकेट्टु तेळिञ्ञीटिनान् पाण्डुनृपन्
चेन्नु कुन्तियेप्पुणर्न्नीटिनान् महेन्द्रनु १२३

लोक विख्यात और भागवतो मे श्रेष्ठ निकले । तीनो लोकों का पति और देवो मे श्रेष्ठ तो इन्द्र है । अत उन पौलोमी (शची) के पति इन्द्र की ही सेवा की जाय तो उनके वीर्य (बीज) से हमारे एक पुत्र पैदा होगा जो अवश्य वीर्यवान् होगा । यह सोचकर श्रेष्ठ तापसो के साथ सलाह करके निर्णय पर पहुँचे और बड़े आनन्द के साथ कुन्ती से बोले—१०९-११६ "प्रिये! अब हमारे, स्वर्गलोक के अधिपति के पुत्र के रूप मे एक अच्छा तनय पैदा होना चाहिए । इससे अब तुम और मै इन्द्र की अराधना करे और मेरे कहने से तुम इन्द्र का मन्त्र द्वारा शीघ्र वरण (आवाहन) करो ।" मगलमय पाण्डु ने इस प्रकार आज्ञा दी और कुन्ती ने भी स्वीकार किया । धीर राजा पाण्डु ने एक ही पैर पर खडे होकर घोर तप करना प्रारम्भ किया । तब महेन्द्र प्रसन्न होकर प्रत्यक्ष हुए और राजा से बोले—"मै तुम्हारे लिए ऐसा पुत्र दूँगा जो तीनो लोको मे विख्यात होगा ।" ११७-१२२

पाण्डुविन्टे परमगति

अञ्चु पुत्रन्मारोटु रण्टु पत्निकळोटु
नेञ्चक तेळिञ्ञारण्याश्रमे वाळुकाल १
पञ्चसायकन्तन्टे बन्धुवां कालंवन्नु
पञ्चत्व भविप्पानाय् पाण्डुविन्नतुकालं । २
इन्द्रपुत्रनु पतिन्नालु वत्सरं तिक-
युन्न जन्मर्क्षदिनमित्तेन्नु निरूपिच्चु ३
विप्रभोजनत्तिनु कोप्पिट्टु कुन्तीदेवी ।
तत्पदार्थङ्ङळेल्ला संभरिच्चीरुक्कुन्पोळ् ४
पुष्पवाणनु समनाकिय नरपति ।
पुष्पितलता वृक्षशोभितवनभुवि ५
भद्रशीलांगियाय नारिमार्कुलमणि
माद्राधिपतिसुतयोटु वैचित्रवीर्यन् ६
सञ्चरिच्चितु वसन्ताभयु कण्टुकण्टु
चञ्चलमायि मनोधैर्यवु विधिवलाल् । ७
मन्मथशरमेटु निर्म्मलनाय पाण्डु
कर्म्मवासनावशाल् सम्मोहं पूण्ट मूल ८
माद्रियेक्कण्टु चित्तमार्द्रमाय् चमकयाल्
पार्त्थिवन् तेरुतेरे पेर्त्तु पुल्कियनेर् । ९
मामुनिशापंकोण्टु जीवनु नटकोण्टु
मामुनिमारु कुन्तीदेवियु दुःखंपूण्टार् । १०

पाण्डु की परम गति

पाँच पुत्रो और दो पत्नियो के साथ प्रसन्न होकर पाण्डु अरण्य के आश्रम मे रहते थे, तब कामदेव के मित्र वसन्त का समय आया, क्योंकि उनके मरण की वेला निकट थी। "आज इन्द्रपुत्र (अर्जुन) के चौदह वर्ष पूरे होने का जन्म दिवस है", ऐसा सोचकर कुन्तीदेवी ने ब्राह्मण भोजन का प्रबन्ध किया। जब उसके लिए सब सामग्री इकट्ठा की जा रही थी, तब मदन के समान राजा सुन्दरी और सुशीला और नारीश्रेष्ठ माद्री के साथ पुष्पितलता और वृक्ष की शोभावाले वन मे विचरते थे। वसन्त की शोभा को देख-देखकर विधिवश उनका धैर्य शिथिल हो गया। १-७ निर्मल पाण्डु मदन का बाण लगने से अपने ही कर्म की वासना के कारण मोह मे

पुत्रन्मार् तनिक्कु तान् पेटॊन्नुमिल्लाय्कयाल्
भर्त्तावुतन्नोटोरु रहसि चॊल्लीटिनाळ् । १३३
गान्धारी तनिक्कोरु नूरु पुत्रन्मारुण्टु
शान्तमानसयाय कुन्तीदेविक्कुमिप्पोळ् १३४
पुत्रन्मारुण्टाय्वन्नितीश्वरनियोगत्ताल्
सिद्धमल्लाय्कयाल् ञानॊन्नुण्टु चॊल्लीटुन्नु । १३५
स्त्रीकळ्क्कु तान्तान् पॆट्टु पुत्रन्मारिल्लॆन्नाकिल्
शोकत्तिन्नोरिक्कलुमिल्लोरु शान्ति नूनं । १३६
ऎन्निवयोर्त्तु कुरञ्ञोरु सन्तापमुळ्ळिल्
पिन्नेयुं वर्द्धिक्कुन्नु मूढतकॊण्टुतानुं । १३७
इत्तरं केट्टु पाण्डु कुन्तियोटोरुदिनं
मद्रजामनोगतमऱियिच्चतु केट्टु । १३८
कुन्तियुमोरु मन्त्रं दानं चॆय्तितु माद्रि-
य्कन्तरात्मनि परमानन्दत्तोटुमवळ् १३९
अश्विनीदेवकळॆ वरिक्कनिमित्तमाय्
विश्रुतन्मारायवळ्क्किरुवरुण्टाय्वन्नु । १४०
निश्शेषनृपगुणयुक्तन्मारायिट्टवर्
विश्वनायकसमन्मारॆन्ने पऱयावू । १४१
नकुलनॆन्नुं सहदेवनॆन्नतुं नाम
निखिलजनमनोमोहनन्मारिवयुं । १४२

के भी अव भगवान् की कृपा से (तीन) पुत्र पैदा हो गये। मेरे तो नही है। इसलिए मै एक बात वताती हूँ। १३०-१३५ स्त्रियो के जब तक अपने ही उदर के पुत्र नही होते तव तक उनके शोक की कभी शान्ति नही हो सकती। यह सव सोचते हुए मेरे मन का सन्ताप वढ रहा है, भले ही यह मेरी मूढता हो। यह सुनकर एक दिन पाण्डु ने माद्री के मन की वात कुन्ती को बतलायी। उसे जानकर कुन्ती ने एक मन्त्र माद्री को प्रदान किया। माद्री ने वडे आनन्द के साथ अश्विनी देवो का आवाहन किया, जिसके फलस्वरूप उसके दो विख्यात पुत्र पैदा हुए। वे सभी नृप गुणो से युक्त थे और देवो के तुल्य थे, इतना कहना पर्याप्त है। उनके नाम नकुल और सहदेव थे और वे सभी जनो के मन को हरनेवाले थे। १३६-१४२

कुरुपाण्डववैरं

आट़लोटुण्टाय्वन्न राजपुत्रन्मारोरु-
नूटारुमोरुमिच्चु कळिक्कुं कालत्तिङ्कल् १
सत्सगमेऱेयुळ्ळ पाण्डवन्मारोटोरु-
मत्सरमुण्टाय्वन्नु धार्त्तराष्ट्रन्मार्क्कुळ्ळिल् । २
भीमसेननेक्कुऱिच्चेऱेयुमुण्टु वैर
भूमिपालात्मजना दुरियोधननन्नाळ् । ३
उऱङ्ङुनेरं केट्टिग्गगयिलिट्टारव-
रिऱन्नीटुवान् विषं कोटुत्तार् चोट़िल्त्तन्ने । ४
पान्पिनेक्कोण्टु कटिप्पिच्चार् कोल्लुवानव-
रां पणिचेय्तारतु पऱञ्ञालोटुङ्ङुमो । ५
वन्धुवाय् शकुनियुं कर्ण्णनुमवर्क्कुण्टु
कुन्तितान् तनयन्मार्क्कीश्वरन्तानुमुण्टु । ६
अक्कालं कुमारन्मार्क्कस्त्रङ्ङळ् पठिप्पिप्पा-
नक्कृपाचार्यन्तन्नेक्कल्पिच्चु भीष्मर्चोल्लाल् । ७
अस्त्रज्ञन्मारिल् मुन्पनाकिय कृपन्तन्टे-
युद्भवं पऱयुन्पोळत्भुतमोटुङ्ङीटा । ८

कौरव और पाण्डवों का वैर

उन दिनो जब सभी एक सौ छ राजपुत्र साथ खेला करते थे। तब अधिक सत्सगवाले पाण्डवो से धृतराष्ट्र के पुत्रो को भीतर ही भीतर जलन होने लगी। राजपुत्र दुर्योधन का तो भीमसेन के प्रति अत्यधिक और विशेष वैमनस्य था। उन सब कौरवो ने सोये हुए भीम को बाँधकर गंगा मे फेका और उसके भात मे विष मिला दिया ताकि वह मर जाय। साँप से उसे डँसवाया। इस प्रकार भीम को मारने के लिए उन्होने अनेक प्रयत्न किये जिनका सपूर्ण वर्णन असभव है। शकुनि और कर्ण उनके मित्र थे और कुन्ती के पुत्रो की ओर ईश्वर ही थे। उन दिनो भीष्म के कहने से कुमारो को अस्त्र-शस्त्र सिखाने के लिए कृपाचार्य रखे गये। अस्त्रज्ञो मे श्रेष्ठ कृप के उद्भव का वर्णन करने मे आश्चर्य का अन्त ही न होगा। १-८

कामिनियाय माद्रि कूटवे तीयिल्च्चाटि
कामनु समनाय कामुकनोटु चेन्नाळ् । ११
मुन्नमे बालन्मार्क्कु षोडशक्रियकळ्क्कु
धन्यनां वसुदेवन्तन्नुटे नियोगत्ताल् १२
वन्निरिक्कुन्न गर्गन् वृष्णिकळ् पुरोहित-
नोन्नोळियाते वेण्टु कर्म्मङ्ङळ् चेय्यिच्चतुं १३
चिन्तया वेन्तु वेन्तु कुन्तियुं बालन्मारुं
सन्तापत्तोटु वेण्टु कर्म्मङ्ङळोक्केच्चेय्तार् । १४
बालकन्मारेयुमम्मातावां कुन्तियेयु
पालिप्पानिनियारुमिल्लेन्नु निरूपिच्चु १५
तापसन्मारुं कोण्टे हस्तिनपुरत्ताक्कि
तापवुं मऽच्चवरविटे वसिक्कुन्नाळ् १६
वेदव्यासनुं चेन्नु मेलिले विशेषङ्ङ-
ळादरवोटु सत्यवतियोटरुळ्चेय्तु । १७
अंबिकयोटुमंबालिकयामवळोटु-
मम्मयु तपस्सिनाय् वनत्तिल् चेन्नुपुक्काळ् । १८
मूवरुं परलोकं प्रापिच्चारविटन्नु
चोव्वोटु शेषक्रियचेय्तितु बालन्मारुं । १९

आ गये। माद्री को देखकर उनका चित्त भाव-भरा हो गया और उन्होने उसका आवेश के साथ आलिङ्गन किया। तब मुनि के शाप के कारण उनके प्राण निकल गये, और मुनिगण और कुन्तीदेवी सभी अत्यन्त दु ख-मग्न हो गये। कामिनी माद्री उनकी चिताग्नि मे कूद पडी और अपने शरीर को भस्म करके अपने कासदेव के समान कामुक से मिलकर एकरूप हो गयी। पूज्य वसुदेव की आज्ञा से बालको को सोलह सस्कार कराने के लिए पहिले ही से आये हुए वृष्णिकुल के पुरोहित गर्ग ने एक को भी न छोड़ते हुए सभी अन्त्येष्टि क्रियाएँ करायी और दु ख से जलते हुए कुन्ती और बालको ने सभी क्रियाएँ की। ८-१४ बालको का और माता कुन्ती का पालन करनेवाला अब कोई नही है, ऐसा समझकर तापसो ने उनको हस्तिनापुर पहुँचाया। जब अपने दु ख को छिपाकर वे सभी वहाँ रहते थे, तभी एक बार वेदव्यास जी वहाँ पधारे और उन्होने सत्यवती को सभी समाचार सुनाया। अबिका और अबालिका के साथ माताजी तप करने के लिए वन चली गयी। तीनो का स्वर्गवास हो गया और बालको ने ठीक तौर पर उनकी अन्त्येष्टि क्रिया की। १५-१९

उण्टाय विकारत्ताल् वेपथुशरीरनाय्
पुण्डरीकेषु परवशनेन्निरिक्कलु । १०
धैर्यज्ञानादि तपोबलङ्ङळुण्टाकयाल्
स्थैर्यत्तेप्पूण्टु निन्न शरद्वानतुनेरं । ११
स्रविच्चु रेतस्सतुमरिञ्ञीलवनप्पोळ्
जवत्तोटविटुन्नु गमिच्चान् विवेकत्ताल् । १२
रण्टायि शरस्तबत्तिङ्कल् वीणतुमूल-
मुण्टायि मिथुनवुमाश्रमसमीपत्तिल् । १३
कण्टितु नायाट्टिनायविटे वन्ननेर
कण्टककालनाय शन्तनुसेनानाथन् । १४
अवनु कृष्णाजिनचापबाणङ्ङळोटु
मविटेक्काणाय्वन्न मिथुनतन्नेयप्पोळ् । १५
अवनीदेवापत्यमेन्नु कल्पिच्चु पुन-
रवनीश्वरनाय शन्तनुविनु नल्कि । १६
नृपनु कोण्टुपोयित्तन्नुटे राज्यत्तिङ्कल्
कृपया वळर्त्तितु तनिक्कु मक्कळाक्कि । १७
कृपया वळर्क्कयाल् नृपति पेरुमिट्टान्
कृपनेन्नतु पिन्ने पेण्णिनु कृपियेन्नु । १८

काम विकार के कारण उसका शरीर काँपने लगा। यद्यपि वह पुण्डरीकेषु (कामदेव) के वश मे था, तथापि धैर्य, ज्ञान, तपोवल आदि होने के कारण शरद्वान् ने अपने को सभाला। पर उसका वीर्य गिर गया जिसका उसे पता ही न था। विवेक होने के कारण वह मुनि वहाँ से शीघ्र चले गये। उनके वीर्य के शरस्तम्ब पर दो भागों मे गिरने के कारण आश्रम के निकट दो मिथुन (जुडवाँ) वच्चे पैदा हुए। ७-१३ जब शान्तनु के शत्रुनाशक सेनापति वहाँ शिकार खेलने आये, तब उन्होने उन वच्चो को देखा। वच्चो को कृष्णाजिन, चाप और वाण के निकट पाने के कारण उन्होने निश्चय किया कि ये अवनीदेव (ब्राह्मण) के वच्चे है। सेनापति ने उन वच्चो को लाकर अवनीश्वर (राजा) शन्तनु को दिया। राजा उनको अपने राज्य मे ले गये और अपने ही वच्चे वनाकर उनका वडी कृपा से पालन किया। कृपा से पालन करने के कारण राजा ने लड़के का कृप और लडकी का कृपी नाम रखा। शरद्वान् गौतम ने जान लिया कि ये वच्चे हमारे है इसलिए उन्होने बड़े कौतुक के साथ राजा से सब हाल बतला

शारद्वतोत्पत्ति

पद्मजतनयनामगिरस्सिन्टे पुत्र-
रुत्भविच्चितु मूवरेंत्रयुं तेजस्सोटु । १
उचथ्यन् बृहस्पति सवर्त्तन्मारेंत्रति-
लुचत्यतनयनायुण्टायि दीर्घतमा । २
अवन्टे सुतनल्लो गौतमतपोधन-
नवन्टे मकनल्लो शरद्वानेंत्र मुनि । ३
अवनु वेदत्तिङ्कल् वासन कुरकया-
लवशप्पेंट्टु तातन् जातकं निरूपिच्च्चु । ४
धनुर्व्वेदत्तेप्पठिप्पिच्चितु जनकनु
मुनिवीरनुं जामदग्न्मनु समनायान् । ५
चतुरनायानवनस्त्रङ्ङळक्कतुमूल-
मधिकं भीतिपूण्टु चमञ्ञु शतमखन् । ६
शारद्वानुटे तपोविघ्नत्ते वरुत्तुवान्
सुरश्रेष्ठनु ज्वालापतियें नियोगिच्चान् । ७
चापास्त्रधरनायि निल्कुन्न शरद्वानु
शोभयोटेकावरयामवळतन्नेक्कण्टान् । ८
अप्सरस्त्रीकळिलूवच्चल्भुतागियेक्कण्टि-
टृप्पोळे विल्लुमम्पु वीणुपोयितु वलाल् । ९

शारद्वत की उत्पति

ब्रह्मा के पुत्र अंगिरस् के तीन तेजस्वी पुत्र हुए—उचथ्य, बृहस्पति और सवर्तक। और उचथ्य का पुत्र दीर्घतमा भी हुआ। उसका पुत्र हुआ तपोधन गौतम जिसका पुत्र था मुनि शरद्वान्। उसकी वेद पढने में रुचि कम थी, इसलिए पिता ने लाचार होकर उसका जन्मपत्र देखकर उसको धनुर्वेद सिखलाया जिससे मुनिवीर (शरद्वान्) जामदग्न्य (परशुराम) के तुल्य हो गये। वह शस्त्रों में बहुत ही कुशल हुए जिसके कारण शतमख (इन्द्र) अधिक डर गये। १-६ शरद्वान् के तप में बाधा पहुँचाने के लिए इन्द्र ने ज्वालापति[1] को आज्ञा दी। चाप और अस्त्र धारण किये हुए शरद्वान् ने शोभा के साथ एक वस्त्र पहनकर खडी उस अप्सरा को देखा। अप्सराओं में अद्भुत रूपवाली उसको देखकर तत्क्षण ही धनुष्बाण हाथ से गिर गये।

[1] संस्कृत महाभारत में इस अप्सरा का नाम 'जालपदी' दिया गया है।

भार्ग्गवनोटु धनं चोदिप्पान् चेन्नवारुं
भार्ग्गवनर्त्थमिल्लाञ्ञस्त्रङ्ङळ् कोटुत्ततुं । ८
पाञ्चालनोटु पिन्नेप्पिणक्कमुण्टायतु
ञान् चालेप्पऱयुन्पोळायुस्सु पोरायल्लो । ९
ऎङ्किलु गुरुविन्टेयुल्भवमेन्नोटिप्पोळ्
संक्षेपिच्चऱियिच्चीटेणमेङ्किलो केळ्क्का । १०

भारद्वाजोल्पत्ति

ओरुनाळ् भरद्वाजन् गंगयिल् कुळिप्पानाय्
विरविल् चेन्ननेरं कण्टितु घृताचियें । १
मारुतहृतावरयामवळ्तन्नेक्कण्टु
मारनुवशनायि मामुनियतुनेर । २
इन्द्रियस्खलन वन्नतिनें द्रोणंतन्नि-
लन्नेरमाक्किक्कोण्टानतिल्निन्नुण्टाकयाल् । ३
द्रोणनेन्नतुतन्ने नामधेयवु चोन्ना-
नानन्दंपूण्टु सांगवेदवु पठिप्पिच्चु । ४
भरद्वाजनु सखियाकिय पृपतनां
धरित्रीपतिसुतन् द्रुपदनतुकालं
द्रोणरोटोरुमिच्चु पठिच्चु विद्यकळु । ५

(कृपी) के साथ उसका विवाह, उसका विख्यात अश्वत्थामा को जन्म देना, द्रोण का धन माँगने के लिए भार्गव के पास जाना, धन न होने के कारण भार्गव का अस्त्र दान करना, बाद मे द्रुपद के साथ विरोध हो जाना, यह सव अगर विस्तार से कहने लगूँ तो आयु कम होगी । 'फिर भी गुरु जी का उद्भव मुझसे कह दीजिए ।' 'अच्छा, तो सुन लीजिए ।' ६-१०

भारद्वाज की उत्पत्ति

एक दिन जव भरद्वाज स्नान करने गगाजी गये, तव वहाँ घृताची दिखायी दी । हवा से अपहृतवस्त्र घृताची को देखकर महामुनि मार (कामदेव) के वश मे आ गये । फलस्वरूप वीर्य का स्खलन हुआ जिसे मुनि ने अपने द्रोण मे समेट लिया । उससे जो वच्चा पैदा हुआ उसका 'द्रोण' नाम रखा और उसको आनन्द के साथ साङ्ग वेद पढ़ाया ।

गौतमनद्रिङ्ग्नितु तन्नुटे मक्कळेन्नु
कौतुकत्तोटु नृपनोटु चेन्नद्रियिच्चु । १९
शरद्वान् चतुर्व्विधमाकिय धनुर्व्वेद
सुरश्रेष्ठनुसम तनिक्कु पठिप्पिच्चु । २०

विद्याभ्यास

परमाचार्यनायानतिनाल् कृपरप्पोळ्
सुरवाहिनीसुतन्तन्नुटे नियोगत्ताल् । १
सुरवाहिनीपतिसमनां कृपन् मही-
सुरवृन्दाग्रेसरन् धनुर्व्वेदज्ञमुख्यन् । २
कुरुवीरात्मजन्मार्तम्मेयुं पठिप्पिच्चु
कुरुराज्यत्तिल् सुखिच्चिरिक्कुं कालत्तिङ्कल् । ३
अविटेक्केळुन्नळ्ळियोरुनाळ् द्रोणाचार्य-
नवनोटॊत्त विल्लाळिकळिल्लोरुत्तरुं । ४
द्रोणराकुन्नतारेन्नेन्नोटु चोदिक्किल् आन्
नाणवुं पूण्टु मण्टु चोल्लुवान् काल पोरा । ५
द्रोणर्तानुण्टायतुमादिये चेरुप्पत्तिल्
क्षोणीन्द्रनाकुं द्रुपदेन सख्यावाप्तियु । ६
नल्लोरु शारद्वतितन्नेक्कैपिटिच्चतुं
चोल्लेरुमश्वत्थामाववळ् पेटुण्टायतुं । ७

दिया । शरद्वान् ने देव-श्रेष्ठ के समान राजा को चार प्रकार का धनुर्वेद सिखलाया । १४-२०

विद्याभ्यास

इस प्रकार कृप परमाचार्य हुए । और सुरवाहिनी पुत्र (गंगा के पुत्र भीष्म) की आज्ञा से सुरवाहिनीपति (गगा के पति शन्तनु) के तुल्य, ब्राह्मणों मे श्रेष्ठ, धनुर्वेदज्ञो मे उत्तम कृप ने कुरुवीर के सन्तानो को धनुर्वेद सिखाया । जब इस प्रकार कुरुराज्य मे सुख से रहते थे, तब एक दिन वहाँ द्रोणाचार्य पधारे, जिनके तुल्य धनुष चलानेवालो मे कोई नही था । मुझसे अगर कोई पूछे कि द्रोण कौन है ? तो मै लज्जित होकर चला जाऊँगा, कहने के लिए मेरे पास समय न होगा । १-५ द्रोण की उत्पत्ति, वाल्यावस्था ही मे राजा द्रुपद के साथ उसकी मित्रता, शुभ कन्या शारद्वती

वीटयुमतिनोटुकूटवे वीणनेरं
क्रीडयुं मतियाक्कियतिनेयेटुप्पानाय् । १६
अन्धुविन् करे सोल्क्कण्ठन्मारायेल्लावरु-
मन्धन्मारुपायमिल्लाञ्ञु निल्क्कुन्ननेरं १७
आसन्नपलितनाय् श्यामनाय् कृशांगनाय्
भूसुरोत्तमन् चिरिच्चवरोटुरचेय्तु । १८
वीटयु मुद्रिकयु ञानिपीककळाले
पीडकूटातेयेटुत्तीटुवन् निङ्ङळ् मम । १९
भोजन तन्नीटुविनेन्नतु केट्टु धर्म्म-
राजनन्दनन् चोन्नान् मृष्टाष्टि तरुवन् ञान् । २०
अन्नेरमिपीककळ् मेल्क्कुमेल् प्रयोगिच्चि-
ट्टन्योन्यसमायोगाल् वीटयुमेटुत्तितु २१
धन्यनां द्रोणाचार्यन् मुद्रयुमतुनेरं ।
वन्नितु कुमारन्माक्कुळ्ळलल्भुतमेट् २२
अभिवाद्यवुं चेय्तु चोदिच्चु कुमारन्मा-
रभिलापङ्ङळ् नल्कामारेन्नु परयेणं । २३
चोदिप्पिन् निङ्ङळ् चेन्नु भीष्मरोटवनेन्नाल्
वोधिप्पिच्चीटुमेन्ने निङ्ङळ्क्कु वळिपोले । २४

लेकर द्रोण हस्तिनापुर चले गये। उस समय अनेक वालक गुल्ली-डडा खेल रहे थे। अचानक युधिष्ठिर की अँगूठी कुएँ मे गिर गयी। ८-१५ और उसके साथ गुल्ली भी गिर गयी। अतएव उसे निकालने के लिए खेल वन्द किया गया। जव सभी वालक निकालने का उपाय न जानकर चिन्तित होकर अन्धो की तरह कुएँ के किनारे खडे थे, तव एक ब्राह्मण श्रेष्ठ जिनके वाल सफेद होने को थे, जो स्वय साँवले रङ्ग के थे और दुवले थे, हँसकर वोले—"गुल्ली और मुद्रा को मैं दर्भो के द्वारा आसानी से निकाल दूँगा, पर आप लोग मुझे भोजन दिलाइए।" यह सुनकर धर्मराज के पुत्र (युधिष्ठर) ने कहा—"मै यथेष्ट भोजन दूँगा।" तव पुण्यात्मा विप्र द्रोण ने दर्भ की इपीको (सीको) को एक के ऊपर एक करके प्रयोग किया और उनके सयोग से गुल्ली और मुद्रा दोनो निकाल दी। वालको को वडा आश्चर्य हुआ। उन्होने अभिवादन करके कहा—"हम आपकी अभिलापाओ की पूर्ति करेगे। कहिए आप कौन है?" १६-२३ "आप लोग जाकर भीष्म से पूछिए। वे आप को मेरे सवन्ध में सव समझा देगे।" जब उन्होने

सुरलोकवु पुक्कु पृषतमहीपति
नरपालकनायान् द्रुपदनतुकालं । ६
भारद्वाजनु शारद्वतियें वेट्टु पिन्नें
भारद्वाजात्मजनायश्वत्थामावुमुण्टाय् । ७
पुत्रनें वळर्प्पतिन्नर्थमिल्लाय्कमूल-
मर्त्थिच्चु भार्ग्गवनोटवनुमतुनेर । ८
अर्त्थमेंप्पेरुं दानंचेंय्तुपोयितु निन-
क्कस्त्रसंहार प्रयोगादिकळ् पठिप्पिक्कां । ९
अन्नतु केट्टु भारद्वाजनुं धनुर्व्वेदं
नन्नायिप्पठिच्चितु भार्ग्गवन्तन्नोटप्पोळ् । १०
द्रुपदन्तन्नेच्चेन्नु कण्टितु सखियेन्नो-
र्त्तवनुमधिक्षेपिच्चुरचेंय्तितु पारं । ११
विद्यार्त्थश्रुतप्रज्ञाशौर्यादि गुणङ्ङळ्कों-
ण्टोत्तवरोटे सख्यमुण्टावितेंल्लावर्क्कुं । १२
पुष्टनु विपुष्टनु तम्मिल् सख्यवुमिल्ल ।
रुष्टनां द्रुपदनुमिङ्ङने परञ्ञप्पोळ् १३
पुत्रनुं शिष्यन्मारुमायवन् पुरप्पेंट्टु
हस्तिनपुरत्तिङ्कल् चेन्नु पुक्कतुनेरं । १४
बालन्मार् पलरुमाय् वीटया कळिक्कुन्पोळ्
कालजाङ्गुलीयकमन्धुविल् वीणुपोयि । १५

उस समय भरद्वाज के मित्र राजा पृषत के पुत्र द्रुपद ने भी द्रोण के साथ विद्याएँ पढी। तदनन्तर राजा पृषत का स्वर्गवास हुआ और द्रुपद राजा हुआ। भारद्वाज (द्रोण) ने शारद्वती (कृपी) के साथ विवाह किया और उनके अश्वत्थामा नामक पुत्र का जन्म हुआ। १-७ अपने पुत्र के पालन-पोषण के लिए द्रव्य न होने के कारण द्रोण ने भार्गव से याचना की। (भार्गव ने कहा) "मैने द्रव्य सब दान मे दे दिया है, इसलिए मै तुम्हे अस्त्रो का प्रयोग और सहार सिखा दूँगा।" यह सुनकर द्रोण ने भार्गव से सारा धनुर्वेद अच्छी तरह से पढा। इसके बाद पुराना मित्र समझकर द्रोण द्रुपद के पास गये। परतु उसने अपमान करते हुए इस प्रकार कहा--"जो विद्या, अर्थ, शिक्षा, प्रज्ञा, शौर्य आदि गुणो मे अपने बराबर है उन्ही के साथ मित्रता होती है। समृद्ध और अकिचन मे मैत्री नही हो सकती है।" जब रुष्ट द्रुपद ने इस प्रकार कहा तब अपने पुत्र और शिष्यो को

ॲन्नतु केट्टु भीष्मर् तन्नुटे पौत्रन्मारे
नन्नायिप्पठिप्पिप्पानविटे वच्चुकोण्टान् । ३५
अक्कालं बालन्मारेश्शिक्षिच्चु पठिप्पिच्चु
विख्यातकीर्त्तियोटुमविटे वाळुकाल ३६
ऑरुनाळ् भारद्वाजन् रहसिविळिच्चुटन्
कुरुवीरन्माराकुं शिष्यरोटुरचेय्तु । ३७
ॲन्नुटे मनोरथ निङ्ङळ् साधिप्पिक्केण-
मॆन्नतु केट्टु धार्त्तराष्ट्रन्मार् मिण्टीलेतुं । ३८
अन्नेरं धर्म्मपुत्रन्तन्नुटे मुखं नोक्कि
निन्नोरु सव्यसाचि चॊल्लिनान् तॆळिवोटे । ३९
निन्तिरुवटियुटे कारुण्यमुण्टेङ्किल् ञा-
नन्तरमिल्ल साधिप्पिच्चुकूट्टुवनल्लो । ४०
तॆळिञ्ञु भारद्वाजनतु केट्टुर्ज्जुनने
प्पुणर्न्नु गाढं गाढ मुकर्न्नु शिरस्सिङ्कल् । ४१
आनन्दाश्रुक्कळोटुमश्वत्थामावुतन्ने
मानमेरीटु जिष्णुतन्नुटे कैयिल् नल्कि ४२
निनक्कु सखियिवनॆन्नतुमरुळ्चेय्तान्
कनक्के मोदंपूण्टु पुणर्न्नान् पार्थनप्पोळ् । ४३
नानादेश्यन्माराय राजपुत्रन्मारोटुं
द्रोणरुं पठिप्पिच्चु कौरवन्मारेयॆल्ला । ४४

लिए आया हूँ।" यह सुनकर भीष्म ने अपने पौत्रो को धनुर्वेद पढवाने के लिए द्रोण को वही रख लिया। ३०-३५ द्रोण भी बालको को शिक्षा देते हुए और पढाते हुए बडी कीर्ति के साथ वहाँ रहे। एक दिन उन्होने (द्रोण ने) अपने कुरुवीर शिष्यो को एकान्त मे बुलाकर उनसे कहा--"आप लोग मेरे मनोरथ (अभिलाषा) को सिद्ध कीजिए।" यह सुनकर धृतराष्ट्र के पुत्रो ने कुछ नही कहा। तब युधिष्ठिर का मुँह देखते हुए सव्यसाची (अर्जुन ने) प्रसन्नता के साथ कहा, "अगर गुरुचरणो की कृपा होगी तो, सन्देह नही, मै आपकी अभिलाषा पूरी कर दूंगा।" यह सुनकर भारद्वाज (द्रोण) प्रसन्न हुए और उन्होने अर्जुन का प्रगाढ आलिङ्गन किया और उनके शीर्ष को सूंघ लिया। ३६-४१ आनन्द के आँसू बहाते हुए अश्वत्थामा को अतिमान्य अर्जुन के हाथो मे समर्पित किया और कहा--'यह तुम्हारा मित्र है' अर्जुन ने भी बड़ा प्रमोद प्राप्त करके अश्वत्थामा को

चेन्नवर् चोदिच्चप्पोळ् भीष्मरु द्रोणरेन्नान्
चेन्निनि निङ्ङळ्कूट्टिक्कोण्टिङ्ङुपोन्नीटुविन् । २५
चेन्नितु कुमारन्मार्तम्मोटुं भारद्वाजन्
नन्नायि वन्नतेन्नु चोल्लिनान् गगादत्तन् । २६
वन्न कारणं चोदिच्चीटिनानतुनेर
धन्यना भारद्वाजन् चोल्लिनान् परमार्थं । २७
अग्निवेशाख्यनाकुं मामुनितन्नोटु ञा-
नस्त्रङ्ङळ् पठिप्पानाय् चेन्निरुन्नतुकाल २८
पाञ्चालराजपुत्रनाकिय यज्ञसेनन्
वाञ्छया कूटेप्पठिप्पिच्चिटिनान् मया पुरा । २९
सब्रह्मचारियाकुं यज्ञसेननु ञानु
सुब्रह्मण्यनु जामदग्न्यनुमेन्नपोले । ३०
विद्ययुमभ्यसिच्चु मरुवीटिनकालं
विद्वानां नृपसुतनेन्नोटु चोल्लीटिनान् । ३१
ञानिनि राजावायालेन्नुटे राज्यमोक्क-
ज्ञानियां भवानधीनत्वमाक्कुवनल्लो । ३२
पिन्ने ञान् वेट्टु पुत्रनुण्टायोरनन्तर
चेन्नप्पोळवनेन्ने धिक्करिक्कयु चेय्तान् । ३३
वन्नतुमविटेनिन्निप्पोळ् ञान् महामते !
धन्यनां भवान्तन्नेक्काण्मानेन्नरिञ्ञालु । ३४

जाकर पूछा तो भीष्म ने कहा—"वे द्रोण है । आप लोग जाकर उनको साथ ले आइए ।" भारद्वाज (द्रोण) कुमारो के साथ गये और गगादत्त (भीष्म) ने उनसे कहा—'अच्छा हुआ कि आप आये ।' भीष्म ने आने का कारण पूछा और पुण्यात्मा भारद्वाज ने सब यथार्थ बतला दिया—"अतीत मे जब महामुनि अग्निवश के पास मै अस्त्र-शस्त्र सीखने गया था तब पाञ्चालो के राजा का पुत्र यज्ञसेन भी अपनी इच्छा से मेरे साथ अस्त्र विद्या सीखता था । २४-२९ स्कन्द और जामदग्न्य के समान यज्ञसेन और मै दोनो सहपाठी थे । जब हम दोनो विद्या सीख रहे थे, तब विद्वान् राजपुत्र (यज्ञसेन) ने मुझसे कहा—"जब मै राजा होऊँगा तब सारे राज्य आप ज्ञानी के अधीन कर दूँगा ।" तदनन्तर विवाह तथा पुत्रजन्म होने के बाद जब मै उनके पास गया तब उन्होने मेरा अपमान किया । हे महामते ! जान लीजिए कि मै अब वहाँ से पुण्यात्मा आपके दर्शन के

सुखमे परिश्रमिप्पिच्चितु पलतरं
निखिलराजकुमारन्मार्क्कुमव्वण्णमे । ५५
परञ्ञान् निषादराजावायि मरुवुन्न-
हिरण्यधनुस्सिन्टे तनयनेकलव्यन् । ५६
अटियनेयुंकूटिप्पठिप्पिक्केणमेन्न-
तुटर्न्ने केट्टु भारद्वाजनुमुरचेय्तु । ५७
ऎन्नोटुकूटि नित्यमभ्यसिक्कयु वेण्ट
निन्ने ञाननुग्रहिच्चीटुवनेन्नाल् मति । ५८
ऎन्नुटे शिष्यन् तन्ने नीयेन्नु धरिच्चालु-
मिन्नुतोट्टिनियङ्ङु पोय्कोळ्के वेण्टुतानु । ५९
वन्दिच्चु पोयिट्टवनरण्यं तन्निल्चेन्नु
मण्णुकोण्टात्मगुरुतन्नुटे रूपंतीर्त्तु । ६०
गुरुवे सङ्कल्पिच्चिट्टभ्यसिच्चीटु काल
पेरिके विदग्धनाय् वन्नानेन्नतेवेण्टू । ६१
अक्कालं नायाट्टिनायाचार्यनियोगत्ताल्
पुक्कितु युधिष्ठिरनादिकळ् वनदेश । ६२
एकलव्यनेक्कण्टु कुरच्चु सारमेय
वेगमोटेळुशरमवनु प्रयोगिच्चा- ६३

गदा, तलवार, चर्म (ढाल), तोमर, प्रास, शक्ति, मुसल आदि हथियारो के युद्ध, और समिश्र युद्ध, के अनेक प्रकार आराम से द्रोण ने अर्जुन को अभ्यास कराये । सभी राजकुमारो को द्रोण ने इसी प्रकार सिखाया । ४९-५५ उन्ही दिनो निपादो के अधिपति हिरण्यधनुप के पुत्र एकलव्य ने आकर कहा--"मुझ सेवक को भी कृपया अस्त्रविद्या पढाइए," यह सुनकर द्रोण ने उत्तर दिया--"मेरे साथ प्रतिदिन अभ्यास करने की आवश्यकता नही, मै तुम पर अनुग्रह करूँगा, इतना ही पर्याप्त होगा । जान लो कि तुम मेरे शिष्य हो, और तुम आज ही जा सकते हो ।" तब उनकी वन्दना करके एकलव्य अपने वन मे चला गया और अपने गुरु की एक मिट्टी की मूर्ति बनाकर उनका ध्यान करते हुए वाणविद्या का अभ्यास करता रहा । बहुत कहने से क्या लाभ, वह अत्यन्त विदग्ध (चतुर) वन गया । एक वार आचार्य की आज्ञा से युधिष्ठिर आदि ने शिकार खेलने के लिए वन मे प्रवेश किया । ५६-६२ वहाँ एकलव्य को देखकर उनका कुत्ता भौका । उसने उस कुत्ते पर सात वाण चलाये । वाणो से पीड़ित होकर कुत्ता भाग आया ।

पार्त्थनोटुळ्ळिल् स्पर्द्ध राधेयनुण्टाय्वन्नु
धार्त्तराष्ट्रन्मार्तम्मेयाश्रयिच्चिरिक्कयाल् । ४५
गुरुशुश्रूपारतनाकिय विजयने
प्पेरिकें स्नेहमुण्टाय्वन्नितु गुरुविनुं । ४६
अन्नं फल्गुननिरुट्टत्तु नी कोंटुक्करु-
तेन्नु पाचकन्तन्नोटाचार्यनरुळ्चेय्तान् । ४७
अन्नोरु निशि पार्त्थन् भुजिप्पानिरिक्कुन्पोळ्
वन्नु दीपत्तेप्पोलिच्चीटिनान् चण्डवातं । ४८
अभ्यासबलंकोण्टु हस्तवु वाय्कल् चेन्नि-
तप्पोळुततुकण्टु नित्यवुं पिन्नेप्पार्त्थन् । ४९
रात्रियिल् तानेनिन्नु साधिच्चीटुन्न कालं
पार्त्थन्टे गुणनादं केट्टाशु भारद्वाजन् । ५०
सन्तोषत्तोटुकूटिच्चेन्नुटनाश्लेषिच्चु
कुन्तीनन्दनन्तन्नोटीवण्णमरुळ् चेय्तान् । ५१
उत्साहमित्रयुण्टाय् मटोरु धनुर्द्धरन्
त्वत्समनायिट्टिल्ल सत्यमेन्नतुनेरं । ५२
तेरिलुमानमेलुं कुतिरमेलुं पिन्ने-
प्पारिलुं निन्नु युद्ध चेय्येण्टु प्रकारङ्ङळ् । ५३
गदयुमसिचर्म्म तोमरप्रासशक्ति
मुसलमायुधङ्ङळ् सङ्कीर्ण्णयुद्धत्तिलु । ५४

छाती से लगा लिया । द्रोण ने भिन्न-भिन्न देशो के राजपुत्रो के साथ सभी कौरवो को पढाया । राधेय (कर्ण) के धार्तराष्ट्रो के आश्रम मे रहने के कारण अर्जुन के प्रति उसकी भीतरी स्पर्धा रही । गुरु की सेवा मे तत्पर विजय (अर्जुन) के प्रति गुरु का वड़ा ही स्नेह था । 'फाल्गुन (अर्जुन) को अन्धेरे मे भोजन नही दो,' ऐसा आचार्य ने रसोइया से कहा । एक रात जव अर्जुन वैठकर खा रहा था, तव ऑधी आयी और दीप वुझ गया । ४२-४८ अभ्यास के कारण हाथ मुँह ही मे गया । यह देखकर तव से प्रतिदिन अर्जुन रात को अकेला शस्त्राभ्यास करने लगा । अर्जुन के धनुप की डोरी की ध्वनि सुनकर द्रोण वडे प्रमोद के साथ वहाँ गये, अर्जुन को छाती से लगाया और उससे इस प्रकार कहा—"तुम-जैसा इतना उत्साही धनुर्धर कभी हुआ ही नही, सच कहता हूँ" । ऐसा कहकर रथ पर, हाथी पर, घोड़े पर और पृथ्वी पर खड़े होकर युद्ध करने के प्रकार,

सत्यतलपरत्ववुं भक्तियुं कण्टु पार्त्थ-
नॆन्नयु वहुमानिच्चीटिनानवनॆयु । ७५
यात्रयु चॊल्लिप्पुनरास्थया वर नल्कि-
प्पार्त्थनुमायिच्चॆन्नु हस्तिनपुरं पुक्कान् । ७६

अभ्यासपरीक्ष

आक्कुंवासनयेऽ धनुस्सिङ्कलेक्कॆन्नु
पाक्कॆणमॆन्नु कल्पिच्चॊरुनाळ् द्रोणाचार्यन् । १
वृक्षाग्रत्तिङ्कलॊरु कृत्रिमक्किळियेयुं
निक्षेपिच्चाचार्यनु शिष्यरोटॊक्कच्चॊन्नान् । २
लक्षणस्थितिप्रयोगङ्ङळ् ञान् चॊन्नवण्णं
लक्ष्यत्तॆ भेदिक्कण निङ्ङळिन्नॆल्लावरुं । ३
लक्ष्यत्तॆप्पार्त्तु वलिकूट्टि निर्त्तिनानल्लो
शिक्षिच्चु युधिष्ठिरन्तन्नॆ मुन्पिनालवन् । ४
वृक्षवु लक्ष्यवुमिन्निल्वकुन्न जनङ्ङळु-
मक्षिगोचरमोञान्तानुमॆन्नतु चॊल् नी । ५

है । अगर तुम हमारे शिष्य हो तो हमे गुरुदक्षिणा दो ।" जव उसने पूछा 'दक्षिणा क्या दूँ', तो द्रोण ने कहा 'अपना दाये हाथ का अङ्गूठा काटकर दो ।' तदनुसार उसने अपना दायाँ अङ्गूठा काटकर दक्षिणा दी और वह पहले से भी कही अधिक दक्ष (कुशल) हुआ । उसकी सत्यनिष्ठा और भक्ति देखकर अर्जुन ने उसका वडा आदर किया । द्रोणाचार्य उसको सादर वर प्रदान उससे विदा हुए और अर्जुन के साथ हस्तिनापुर लौटे । ७०-७६

अभ्यास की परीक्षा

द्रोणाचार्य ने निश्चय किया कि यह देखना चाहिए कि धनुर्विद्या मे किसका अधिक कौशल है । इसलिए एक दिन एक पेड के उच्च भाग मे एक कृत्रिम चिड़िया रखकर आचार्य ने अपने सभी शिष्यो से कहा—मेरे वताये हुए लक्षण, स्थिति और प्रयोग के अनुसार आप सव लोग यह निशाना मारिए । लक्ष्य (निशाने) को देखकर उसे ठीक स्थान पर वैठाया, फिर आचार्य ने पहिले युधिष्ठिर को सव वतलाया और पूछा, 'यह वृक्ष, यह निशाना, ये खड़े देखनेवाले लोग और मै,

नन्पुकौण्टळल्पूण्टु मुन्पिल् वन्नितु नायुं
वन्परां कुमारन्मारन्पुपूण्टतुनेर । ६४
आरेन्नु तिरयुन्पोळेकलव्यनेक्कण्टु
वीरन्मार् चोदिच्चितु नीयारेन्नतुनेर । ६५
हिरण्यधनुस्सिन्टे तनयनेकलव्यन्
भरद्वाजात्मजन्टे शिष्यरिल् मुन्पनल्लो । ६६
अतु केट्टोरु कुमारन्मारुं पुरंपुक्कार्
तदनु धनञ्जयन् द्रोणरोट्टुणर्त्तिच्चान् । ६७
निनक्कु समनायिट्टिनिक्कु शिष्यरिल्ले-
न्ननुज्ञ तन्नतिप्पोळसत्यमायुवन्नु । ६८
कण्टितु वनत्तिल्निन्नेकलव्यने यव-
नुण्टाक्कि परिभवंञङ्ङळ्क्केन्नरिञ्ञालु । ६९
अतुकेट्टोरु दिनमर्ज्जुननोटुकूटि
कुतुकालटविपुक्कीटिनान् द्रोणाचार्यन् । ७०
नमस्कारवुं चय्तान् भक्तियोटेकलव्यन्
क्रमत्तालटवुकळ् काट्टियान् कुटं तीर्प्पान् । ७१
श्रमिच्चतेल्लां नन्नु पिळच्चीलोन्नुमिनि
नमुक्कु शिष्यनेङ्किल् दक्षिण चेय्तीटेन्नान् ७२
दक्षिण वेण्टुन्नतेन्तेन्नवन् चोदिच्चप्पोळ्
दक्षिणाङ्गुष्ठं मुरिच्चेनिकु नल्कीटेन्नान् । ७३
दक्षिणचेय्तानवन् दक्षिणाङ्गुष्ठमप्पोळ्
दक्षनाय्वन्नानवन् मुन्नेतिलेटमप्पोळ् । ७४

तब कुशल राजकुमार धनुषबाण लेकर ढूंढने लगे और एकलव्य को देखकर वीरो ने पूछा "तुम कौन हो" ? "मै हिरण्यधनुष का पुत्र एकलव्य हूँ और मै भारद्वाज (द्रोण) के शिष्यो मे प्रमुख हूँ।" यह सुनकर सब राजकुमार अपने नगर को चले गये। तदनन्तर अर्जुन ने द्रोण से निवेदन किया—"तुम्हारे समान मेरा कोई शिष्य नही—यह आप का आशीर्वाद अब असत्य निकला। मैने वन मे एकलव्य को देखा है, उसने हम लोगो को नीचा दिखाया है।" ६३-६९ यह सुनकर एकदिन द्रोणचार्य कौतुक से अर्जुन के साथ वन गये। वहाँ एकलव्य ने भक्ति के साथ गुरु को नमस्कार किया और क्रम से अपने कौशल दिखाये ताकि गुरु दोष बतला दे। (तब द्रोण ने कहा) "जो कुछ भी दिखलाया ठीक है। दोष कही नही

आळवे किटन्नीटु ग्राहत्तेक्कोन्नुपार्त्थन्
तोषवु पूण्टीटिनानाचार्यनतुकण्टु । १५
ताळत्तु मेलु समत्तिङ्कलुमोरुपोले
दोपत्तें वेंटिञ्ञु वेधिक्कामेन्नतु मूलं । १६
ब्रह्मास्त्रमुपदेशिच्चीटिनान् पार्त्थनप्पोळ्
निर्म्मलनिवनेन्नु निर्ण्णयिच्चाचार्यनुं । १७
तेरिलेक्कधिकनाय् वन्नितु युधिष्ठिरन्
मारुतिसुयोधनन्मार् गदय्क्कधिकन्मार् । १८
यमन्मारसिचर्म्मत्तिङ्कलेक्कधिकन्मा-
रमितमहास्त्रङ्ङळ्क्कश्वत्थामावु मुन्पन् । १९
अर्ज्जुननेल्लाटिनु दक्षनाय् चमञ्ञितु
सज्जनमतु कण्टिट्टवनेस्सम्मानिच्चार् । २०
द्रोणरोटस्त्रङ्ङळुमभ्यसिच्चेल्लावरुं
काणेणं दण्डिप्पेन्नु रंगवुं पणिचेय्तु । २१
वेव्वेरे कुमारन्मारेल्लारु प्रयोगिच्चार्
सर्व्वलोकरुं कण्टु विस्मयप्पेट्टु निन्नार् । २२
सव्यसाचियोटु नेरारुमिल्लेन्नुतन्ने
दिव्यन्मार् पऱयुन्पोळ् कर्ण्णनु पोन्नुवन्नान् २३

देखते रहे। लेकिन अर्जुन ने गहराई मे स्थित मगर को मार डाला, जिससे आचार्य वहुत ही प्रसन्न हुए। 'यह नीचे, ऊपर और वरावर मे समान रूप से निशाना निर्दोप मार सकता है,' ऐसा समझकर और यह भी निश्चय करके कि इसकी आत्मा निर्मल है, आचार्य ने पार्थ (अर्जुन) को ब्रह्मास्त्र का उपदेश दिया। युधिष्ठिर रथयुद्ध मे औरो से अधिक कुशल हुए, भीमसेन और सुयोधन गदायुद्ध मे प्रवीण हुए, यमल भाई (नकुल और सहदेव) तलवार चलाने मे दक्ष हुए, और अश्वत्थामा असख्य महास्त्रो के प्रयोग मे सर्वश्रेष्ठ थे। अर्जुन तो सभी मे दक्ष निकले। सभी सज्जनो ने इसी कारण उनका सवसे वढकर सम्मान किया। सवने द्रोणाचार्य से अस्त्र-शस्त्र सीखे। उनका कौशल देखने के लिए एक अखाडा वनाया गया। उसमे कुमारो ने अलग-अलग अपना-अपना प्रयोग दिखलाया और सव लोग देखकर बहुत विस्मित हुए। १४-२२ 'सव्यसाची (अर्जुन) के तुल्य कोई नही,' ऐसा सभी देवगण कह ही रहे थे कि कर्ण वहाँ आ पहुँचा, तव धृतराष्ट्र के पुत्र (दुर्योधन) ने कहा कि कर्ण और अर्जुन की आपस मे स्पर्धा हो। उस

दक्षनागुरुवरनिङ्ङने चोदिच्चप्पो-
ळोक्कवे काणामेन्नु धर्म्मजन् चोल्लीटिनान् । ६
ऒङ्किल् नी वाङ्ङिनिन्नीटन्पयय्क्केण्टयेन्ना-
नङ्ङने निर्त्ति मटेल्लारोटु चोद्य चेय्तान् । ७
ओरोरोतरमीषल्भेदेन चोन्नारव-
रारुमे सूक्ष्मलक्ष्यमात्र कण्टीलयल्लो । ८
पिन्नेप्फल्गुनन्तन्नोटव्वण्णं चोदिच्चप्पो-
ळोन्नुमे कण्टुकूटा लक्ष्यमेन्नियेयेन्नान् । ९
लक्ष्यमां पक्षिरूपमोक्कवे कण्टायो नी
ओक्कवे कण्टुकूटा तल्क्कण्ठ काणामेन्नान् । १०
ऒङ्किलेय्तीटेन्नप्पोळ् पार्थनु प्रयोगिच्चान् ।
भंगं वन्नितु गळमतुकण्टाचार्यनुं ११
विश्वैकधनुर्द्धरनाय् वरिकेन्नु चोन्नान्
विश्वासं वन्नुकूटि मटुळ्ळजनङ्ङळ्क्कु । १२
अक्काल गुरुवरन् गंगयिल् मुळ्ळुकुन्पोळ्
नक्रवु जंघतन्मेल् पिटिच्चान् द्रोणरप्पोळ् । १३
तन्नुटे शिष्यरोटु नक्रत्तेक्कोल्वान् चोन्नान्
निन्नितु विषण्णरायेल्लारुमतुनेर । १४

क्या ये सब दिखायी दे रहे है ?" जब कुशल गुरुवर ने इस प्रकार पूछा, तब धर्मज्ञ (युधिष्ठिर) ने कहा—'हाँ, सब दिखायी दे रहे है" १-६ तब गुरु ने कहा—'अच्छा, तुम अलग खड़े हो जाओ, तीर न चलाओ" । औरो को भी इसी प्रकार खड़ा करके पूछा । सबने थोडा बहुत परिवर्तन के साथ यही उत्तर दिया, किसी ने भी केवल लक्ष्य को नही देखा । जब अर्जुन से उसी प्रकार पूछा गया तो उसने कहा—'लक्ष्य के सिवाय और कुछ भी नही दिखायी देता', फिर पूछा 'क्या लक्ष्य पूरी चिडिया देख रहे हो ?" अर्जुन ने कहा—'सारी चिडिया को नही, सिर्फ उसकी गर्दन देखता हूँ ।' 'तो बाण चलाओ', गुरु ने कहा और पार्थ (अर्जुन) ने तीर चलाया । चिडिया की गर्दन कट गयी । यह देखकर आचार्य ने आशीर्वाद दिया—'तुम विश्व के सर्वोत्कृष्ट धनुर्धर बनो ।' देखनेवाली जनता को भी पूरा विश्वास हो गया । एक दिन जब गुरुवर गगा मे स्नान कर रहे थे, तब एक मगर ने उनकी जाँघ को पकड़ लिया । ७-१३ उन्होने अपने शिष्यो से मगर को मारने के लिए कहा, पर सब विषण्ण होकर

कॊट्टुत्तीटेण्ट भक्तियुळ्ळवर् नन्नायूवरु
कॊट्टुत्तीटिलु भक्तियिल्लाय्किल् फल वरा । ३४
धर्म्मसत्यादि तपोनिष्ठयु नीतिकळु
धर्म्मजादिकळोळ मटार्क्कुमिल्लेन्नेल्ला । ३५
परञ्ञुपरञ्ञवर् पोयोरुशेपत्तिङ्कल्
परञ्ञार् कुमारन्माराचार्यन्तन्नै नोक्कि । ३६

गुरुदक्षिण

दक्षिण कळिक्केण वैकातेयिनियिप्पोळ्
पक्षमाकुन्नतेन्तेन्नरुळिच्चेय्केवेण्टू । १
तल्क्षण द्रोणाचार्यनवरोटरुळ्चेय्तु ।
दक्षिण वेणुन्नतु चेय्यामेन्निरिक्किलो २
पण्टु पाञ्चालनृपन् सन्ततियिल्लाय्कया-
लिण्टल् पूण्टटवियिलिरुन्नु तपस्सोटु । ३
मेनक तन्ने तत्र काणायितोरुदिनं
मानसधैर्यपोयि मारनु वशनायान् । ४
शुक्लवु पतिच्चितु भूमियिलतुनेर
शुक्लत्तालार्द्र पदनायितु नृपतियुं ५

के पुत्रो के पास देने लिए धन कहाँ ? कुछ भी न दें, परन्तु जिनमे भक्ति है, वे शिष्य ठीक निकलेगे । जितना भी दे, 'अगर भक्ति नही है, तो सब निष्फल होगा । धर्म, सत्य, तपोनिष्ठा, नीति—ये गुण जितना युधिष्ठिर आदि मे है उतना औरो मे नही ।' देखनेवालो के इस प्रकार कहकर जाने के बाद कुमारो ने आचार्य का मुँह देखकर कहा । ३०-३६

गुरुदक्षिणा

'हम चाहते है कि हम अब आपको बिना विलम्ब के दक्षिणा दे । आप क्या पसन्द करेगे, यह बतलाने का कष्ट करे ।" तब द्रोणाचार्य ने उनसे कहा—"अगर आप सचमुच हमारे पसन्द की दक्षिणा देना चाहते है (तो सुनिए) पूर्वकाल मे पाञ्चालो के राजा के सन्तान नही हुई । दुःखित होकर वे वन चले गये और वहाँ तपस्या की । उस समय उन्हे वहाँ मेनका दिखायी दी । राजा अपना धैर्य खो बैठे और मदन के वश मे आ गये । उनका वीर्य भूमि पर स्खलित हुआ और उससे उनका पैर

अन्नेरं धृतराष्ट्रनन्दननुरचेय्तान्
कर्ण्णनुमर्ज्जुननु तङ्ङळिल् प्रयोगिप्पान् । २४
अन्नप्पोळ् कृपाचार्यन् चॊल्लिलनान् निल्लुनिल्लु
मन्नवन्माक्कुं तॆळियुन्नते पऱयावू । २५
कुलवु महिमयुमुटय पार्त्थनोटु
कुलहीनतयुळ्ळोराभासनॆतिक्कामो । २६
आभासनॆन्न वाक्कु केट्टिट्टु सुयोधन-
नाभिजात्यत्तिन्निवनन्तरमिल्लयॆन्नान् । २७
अभिषेकवुं चॆय्तानगराजावॆन्नप्पो-
ळभिमानिच्चु कर्ण्णन् भर्त्सिच्चु कुत्सिच्चेटं । २८
अभिजन्मत्वमॆल्लां ञानऱिञ्ञिरिक्कुन्नु
अभिमानित्वं तम्मिलङ्कुरिच्चितु पार । २९
अर्ज्जुननतन्नॆक्कॊल्वन् निश्चयं युधि ञानॆ-
न्नुज्ज्वलिच्चवनोटु कर्ण्णनुमुरचेय्तान् । ३०
कण्टुनिन्नवर्कळुमोरोन्ने पऱयुन्नु
पण्टु नामुण्टो कण्टितीवण्ण बालन्मारॆ । ३१
पठिप्पिच्चतु नन्नु पठिच्चवारु नन्नु
नटिच्चु पक्षपातमायतु पऱकयु । ३२
कॊटुत्ताल् पिळवरा गुरुभूतन्माक्कॆन्नुं
कॊटुप्पानिल्ला धन पाण्डुपुत्रन्माक्कॆन्नु । ३३

समय कृपाचार्य ने कहा, 'रुक जाओ, रुक जाओ। ऐसी बात करना चाहिए जिससे राजा लोग सहमत हो'। 'कुलीन और गौरव-युक्त अर्जुन का एक कुलहीन पुरुषाभास कैसे सामना कर सकता है?' 'आभास' शब्द सुनकर सुयोधन ने कहा—'कुलीनता मे इन दोनों मे कोई अन्तर नही है। और कर्ण का अग देश के राजा के रूप मे अभिषेक किया। तब कर्ण को बडा अभिमान हुआ और उसने गाली देते हुए डॉटा, और कहा—'मै जानता हूँ, क्या उसकी कुलीनता है।' उन दोनो का एक-दूसरे के प्रति अभिमान बढा। २२-२९ 'मै निश्चय ही अर्जुन को युद्ध मे मार डालूँगा,' क्रोधित होकर कर्ण ने ऐसा कहा। देखनेवालो ने तरह-तरह की बाते की। 'हम लोगो ने ऐसे बालको को क्या पहले कभी देखा है? अच्छा पढाया गया और अच्छा पढा भी गया।' इस प्रकार लोगो ने पक्षपात करके कहा। गुरुओ को देते रहने से कोई दोष न होगा, परन्तु पाण्डु

सन्तोषिच्चाशीर्व्वादमाचार्यनरुळ् चेय्तु
वन्धनत्तिङ्कलूनिन्तु मळिच्चान् धर्म्मात्मजन् । १५
नाणवुपूण्टु निल्क्कु द्रुपदन्तन्नें नोक्कि
द्रोणरुमुरचेय्तानेन्ने नी मऽन्निन्तो ? १६
नी समनल्लेन्नेन्नोटल्लयो चोल्ली मुन्नं
नी समनल्लेन्नतो निर्णयमायितिप्पोळ् १७
इत्तरं पऽञ्ञतिनुत्तरं पऽयाते
सत्वरमवन् चेन्नु तन् पुरमकं पुक्कान् । १८

धृष्टद्युम्नोत्पत्ति

दुर्ज्जयनायि मेवु द्रोणरेक्कोल्वानोरु
निर्ज्जरवरसमनाकिय तनयनु । १
अर्ज्जुनन् तनिक्कु नल्कीटुवानोरु पेण्णु-
मिज्जनत्तिनु लभिच्चीटुवान्तक्कतोरु । २
यज्ञ चेय्येणमेन्नु मामुनिमारे नोक्कि
विज्ञानमुळ्ळ नृपन् पऽञ्ञोरनन्तरं । ३
यागवु तुटङ्ङिनारागममऽिञ्ञव-
रागमिच्चितु विण्णोराहुति भुजिप्पानाय् । ४
कुण्डत्तिल्निन्नु नेरे पोङ्ङिनानोरु पुमान्
चण्डभानुविनुनेराकिय कान्तियोटु । ५

आशीर्वाद दिया और युधिष्ठिर ने द्रुपद को वन्धन से छुडवा दिया। लज्जित होकर खड़े द्रुपद से द्रोणाचार्य ने कहा, "क्या तुम मुझे भूल गये ? तुमने मुझसे कहा था—'तुम मेरे तुल्य नही हो', अब निर्णय हो गया है कि तुम मेरे वरावर नही हो ।" इसका कोई उत्तर न देकर वह शीघ्र अपने नगर चले गये । १५-१८

धृष्टद्युम्न की उत्पत्ति

विद्वान् राजा (द्रुपद) ने महामुनियो से कहा—"एक ऐसा यज्ञ कराइए कि मुझे दुर्जय द्रोण को मार सकनेवाला देवो के तुल्य एक पुत्र और अर्जुन को देने योग्य एक कन्या प्राप्त हो जाय ।" तदनन्तर वेदो के विद्वानो ने एक यज्ञ प्रारम्भ किया और आहुति लेने के लिए देवगण पधारे । तव अग्निकुण्ड से सीधे एक पुरुप उठा, जो सूर्य के समान तेजस्वी था ।

तापसा पाञ्चालनु सुतनाय् वन्नितु
द्रुपदनॆन्न नाममतिनालुण्टायितु । ६
अक्कुमारनेयुमन्तच्छन्टे कैयिल् नल्कि-
श्शिक्षिच्चु पठिप्पिच्चु विद्यकळतुकालं ७
पुक्कितु पाञ्चालनु तन्नुटे राज्य पिन्ने-
यॊक्कत्तक्कवे अङ्डळ् विद्याभ्यासवु चेय्तु । ८
पाञ्चालन् परेतनाय्त्तीर्न्नोरु शेषत्तिङ्कल्
तान चेन्नु राजावायि वसिच्चु पुनरवन् । ९
नृपतिकुलश्रेष्ठन् द्रुपदनॆन्नॆप्पण्टु-
कुपितनायिच्चिल दुर्व्वचनङ्ङळ् चॊन्नान् । १०
पिटिच्चु कॆट्टियवन्तन्नॆयॆन् काल्क्कल् वय्क्किल्
पटुत्वं निङ्ङळ्क्कितु मेल्क्कुमेलुण्टामॆन्नान् । ११
दुरियोधनन्तानु पटयुकूटिच्चॆन्नु
पोरुतु तोटु पोन्नतरिञ्ञु पाण्डवन्मार् । १२
युद्धसन्नद्धन्मारायुच्चॆन्नेतिर्त्तुनेर
क्रुद्धनां धनञ्जयनस्त्रङ्ङळ्कॊण्टु कॆट्टि । १३
द्रोणरामाचार्यन्तन् काल्क्कल् वॆच्चळ्कोटे
वीणुटन् नमस्करिच्चीटिनान् ससोदरं । १४

(पद) भीग गया (आर्द्र हुआ)। उनके तपोबल के कारण वही उनकी सन्तान बन गया। अतएव सन्तान का नाम 'द्रुपद' हो गया। उस बच्चे को उन्होने मेरे पिता के हाथ सौप दिया। मेरे पिता द्वारा उसको शिक्षा दी गयी और सभी विद्याएँ पढायी गयी। १-७ तदनन्तर पाञ्चाल (राजा) अपने राज्य चले गये और हम दोनो ने साथ-साथ विद्याभ्यास किया। पाञ्चाल राजा के स्वर्गवासी होने के बाद द्रुपद राजा बने और सुख से रहने लगे। राजकुल के श्रेष्ठ इसी द्रुपद ने क्रुद्ध होकर मुझे गालियाँ दी। अगर आप लोग उनको पकडकर और बाँधकर मेरे चरणो मे रखेगे तो आप (लोगो) का कौशल उत्तरोत्तर बढता ही जायगा। (और जब) पाण्डवो को (यह) मालूम हुआ कि दुर्योधन एक सेना के साथ गया और युद्ध मे हारकर वापस आया है। तब वे युद्ध के लिए तैयार होकर गये और लड़े। कुपित अर्जुन ने अस्त्रो से द्रुपद को बाँधकर द्रोणाचार्य के चरणो मे भक्तिपूर्वक रख दिया और फिर अपने भाइयों के साथ उनको नमस्कार किया। ८-१४ प्रसन्न होकर आचार्य ने उन्हे

पिळुविकक्कूटा नमुक्केतिर्क्किकलवरेतुं
वळुक्कुन्नवरल्ल चतिक्केयुळ्ळु पक्षे । १५
निरप्पिलोरुमिच्चु तातनोटरियिच्चि-
ट्टिरिप्पानवर्क्कोरु पुरत्ते निर्म्मिक्केण । १६
अटच्चु कोळ्ळिवच्चिट्टम्मयु मक्कळेयुं
मुटिच्चुकळयेण नटिप्पु काणां पिन्ने । १७
इङ्ङने निरूपिच्चु कलिपच्चु सुयोधन-
नङ्ङने चेय्तानेन्नेयिनिक्कु परयावू । १८
दुष्टन्मार् चेय्तीटुन्नतोट्टोळियातेयोक्क-
स्पष्टमायुरचेय्वानेत्रयु मटियाकु । १९
राजावु धृतराष्ट्रन्तन्नुळ्ळिल् मरुवीटुं
व्याजवु मरच्चु धर्म्मात्मजनोटु चोन्नान् । २०
दुस्स्वभाविकळ् मम पुत्रन्मार् निङ्ङळोटु
मत्सरमवर्क्कुण्टु ञानरिञ्ञिरिक्कुन्नु । २१
निङ्ङळुमवरुमायिविटे वसिक्कीलो
मंगल वरिकयिल्लापत्तु भविच्चीटु । २२
आकयाल् ञानुण्टोन्नु नल्लतु चोल्लीटुन्नु
नागकेतनन्तनिक्किष्टमल्लेन्नाकिलुं । २३

इसके उपाय क्या है ? उनको दबाना (तो) कठिन है। अगर कही वे हमारा सामना करे, (तो) वे गिरनेवाले नही, हमे ही धोखा देगे । ८-१५ हम सब जाकर पिताजी (धृतराष्ट्र) को सारी बात समझावे और उनके रहने के लिए एक स्थान बनवावे । उनको उसमे बन्द करके जलाना चाहिए, जिससे माँ और बेटे समाप्त हो जायँ । फिर देखे उनकी चाले ! इस प्रकार निश्चय करके सुयोधन ने वैसा ही किया । मै इतना ही कहूँगा । दुष्टो की करतूतो को पूर्ण रूप से स्पष्ट वर्णन करने मे जी नही लगता । राजा धृतराष्ट्र ने अपना भीतर का कपट छिपाकर धर्मपुत्र (युधिष्ठिर) से कहा—"मेरे पुत्र दु स्वभाव के है, तुम लोगो के प्रति उनका वैर है; यह मै जानता हूँ । आप लोग उनके साथ अगर यही रहेगे तो इसमे मगल नही होगा, इसमे खतरा है । इसलिए मैं आप लोगो के हित की एक बात कहता हूँ, यद्यपि वह दुर्योधन को पसन्द नही है । १६-२३

खड्गचापेपुकिरीटादिवर्म्मङ्डळोटु-
मुलगमिच्चितु कण्टु तेळिञ्ञारेल्लावरु । ६
रण्टामतोरु पेण्णुमुण्टायितवळ् कण्टाल्
तण्टार्मानिनियेन्नु कोण्टाटिप्परञ्ञीटा । ७
पिन्नेयुमाणु पेण्णुमल्लातेयोन्नुण्टायि
मुन्नमर्ण्णवतन्निल् ज्येष्ठयुण्टायपोले । ८
धृष्टद्युम्ननु नल्ल कृष्णयुं शिखण्डियु
पुष्टकौतकत्तोटुं वळर्न्नुतुटङ्ङिनार् । ९
कृपरु द्रोणरुमा भीष्मरुं विदुररुं
नृपतिवरनाकु धृतराष्ट्ररुं कूटि- १०
यिळकीटात चित्तमुटय धर्म्मजने-
यिळयराजावाक्कियभिषेकवु चेय्तु । ११
कलितान् वन्नु पिरन्नीटिन सुयोधनन्
कुलनाशननतु सहियाञ्ञतुमूल १२
दुर्न्नयमेरेयुळ्ळ कर्ण्णनु शकुनियु
पिन्नेयक्कणिङ्कनुमायिट्टु निरूपिच्चार् । १३
अवनि नमुक्काक्किच्चमय्क्क वेणमेङ्कि-
लिवरेप्पिळुक्केणमतिनेन्तुपायङ्ङळ् । १४

खड्ग, धनुषबाण, किरीट (मुकुट) और वर्म (कवच) धारण किये हुए उसे उठते देख सब प्रसन्न हुए। फिर एक कन्या निकली, जिसे देखकर विश्वास के साथ कहा जा सकता था कि वह स्त्रियो मे श्रेष्ठ थी। १-७ तदनन्तर जो निकला, वह न पुरुष था और न स्त्री, जैसे पहले समुद्र से ज्येष्ठा[1] निकल आयी थी। इस प्रकार धृष्टद्युम्न, कृष्णा और शिखण्डी ये तीनो बडे कौतुक के साथ बढने लगे। कृप, द्रोण, भीष्म, विदुर, नृपवर धृतराष्ट्र इन सबने मिलकर स्थिर चित्तवाले धर्मपुत्र (युधिष्ठिर) का युवराज रूप मे अभिषेक किया। कुलनाशन दुर्योधन, जो कलि ही का अवतार था, यह सह न सका। इसलिए कुनीति का अनुसरण करनेवाला कर्ण, शकुनि और वह कणिक[2], इन्होने आपस मे सलाह की (कि) अगर हमको सारी पृथिवी अपने वश मे लाना है तो इन पाण्डवो को दबाना है।

१ समुद्र-मन्थन के अवसर पर कालकूट विष के बाद और लक्ष्मी से पहले अलक्ष्मी निकली थी। लक्ष्मी से पहले उत्पन्न होने के कारण उसका ज्येष्ठा नाम हुआ।

२ धृतराष्ट्र का ब्राह्मण मन्त्री।

इत्थं भूपति नियोगिक्कयालरक्किकल्लं
सत्वर तीर्प्पिच्चितु बुद्धिमान् पुरोचनन् । १०
मतिमानायुळ्ळोरु विदुररतुकालं
चतियेन्नरिञ्ञोरु शिलिपयै नियोगिच्चान् । ११
निर्म्मिच्चानोरु विल धर्म्मिष्ठनाकुमवन्
दुर्म्मति पुरोचननेतुमेयरिञ्ञील । १२
धर्म्मजादिकळोटु विदुरनियोगङ्ङळ्
निर्म्मलनाय खनकोत्तमनरियिच्चान् । १३
चेन्नु पाण्डवन्मारुमम्मयुं कुटिपुक्का-
रन्नदानादिकळु भूदेवन्माक्कुं चेय्तु । १४
घोपिच्चु वास्तुबलि कळिच्चुत्सवत्तोटुं
दोपत्ते नीक्कि वसिच्चीटिनारवर्कळुं । १५
सेविच्चु पुरोचनन् वसिच्चानविटेक्कू-
टैवक्कुं विश्वासवु वरुत्तिस्सदाकाल । १६
तिङ्कळ्तन् कुलजातन्माराय पाण्डवन्मार्
शङ्किच्चु शङ्किच्चोराण्टिङ्ङने वाळुंकालं । १७
मुन्नमे विलंतीर्त्त खनकनोरुदिन
वन्नु चोल्लिनान् विदुरोक्तिकळ् विश्वासत्ताल् । १८
श्यामळचतुर्द्दशियाकुन्न दिनमर्द्ध-
यामिनिक्कग्नि कोळुत्तीटुमिप्पुरोचनन् । १९

एक जतुगृह (लाक्षागृह) तैयार कर दिया। बुद्धिमान् विदुर ने समझ लिया कि इसमे कोई धोखे की वात है और उन्होने एक कारीगर को नियुक्त किया। उस धर्मिष्ठ ने उस भवन मे एक सुरग वना दी, जिसका दुर्मति पुरोचन को कोई पता ही न था। निर्मल खनक ने युधिष्ठिर और उनके भाइयों को विदुर के सभी निर्देशो को समझाया। पाण्डव अपनी माता के साथ वहाँ रहने लगे और ब्राह्मणों को अन्नदान किया गया। वड़े समारोह के साथ वास्तुवलि का उत्सव मनाया गया। इस प्रकार दोपो का निवारण करके उन्होने वहाँ निवास किया। ९-१५ पुरोचन भी सेवा करता हुआ उनके साथ रहा और पाँचो भाइयो का विश्वासपात्र वना। चन्द्रवशी पाण्डवो को इस प्रकार शङ्का करते-करते एक पूरा वर्ष वीत गया। तव एक दिन खनक आया, जिसने पहले ही सुरग तैयार किया था और उसने विदुर का सदेश सविश्वास समझाया। कृष्णपक्ष की चतुर्दशी के

जतुगृहनिर्म्माणं

कौरवन्मार्क्कु पण्टुपण्टेयुळ्ळोरु कोट्ट
वारणावतमिप्पोळोळिञ्ञु किटक्कुन्नु । १
अविट पुतुतायिप्पणिचेय्तिरिप्पानाय्
भवनमुण्टाक्किच्चु तरुवन् विचित्रमाय् । २
अतिनु शिल्पिकळे वरुत्ति श्रमिप्पाना-
यधुना पुरोचननुतन्नेयु नियोगिप्पन् । ३
अर्त्थवुं वेण्टुवोळं तरुवन् कौण्टुपोयि-
त्तत्र वाळुविन् निङ्ङळैवरुं जननियुं । ४
भृत्यनाय् पुरोचननुतन्नेयु निङ्ङळ्क्कु ञान्
नित्यसौख्यार्थं नियोगिप्पनेन्नरिञ्ञालु । ५
अविटे वसिप्पवर्क्कवनियटङ्ङिडटु-
मवनीशन्मार् मुन्नमविटे वसिच्चत्रे । ६
भुवनप्रसिद्धन्मारायवन्नु पलरुमे-
न्नवनीदेवेन्द्रमार् परञ्ञु केळ्प्पुण्टु ञान् । ७
अत्रयेल्लिप्पोळ् ञान् चोल्लुन्नतु केळ्क्कयालुं
शत्रुसंहारवरुं निङ्ङळ्क्कोन्नरिञ्ञालुं । ८
आचार्यनियोगत्तेप्पालिक्कुं जनङ्ङळ्क्कु
नाशङ्ङळोन्नुमनुभविक्कयिल्लयल्लो । ९

जतुगृह का निर्माण

कौरवो का बहुत पुराना दुर्ग वारणावत आजकल खाली पड़ा है। वहाँ पर रहने के लिए मैं एक सुन्दर नया भवन बनवा दूँगा। तदर्थ शिल्पियो को बुलाने के लिए मैं अब पुरोचन को आज्ञा दूँगा। यथेष्ट धन भी दूँगा। आप पाँचो (भाई) माता के साथ वहाँ आराम से रहिए। और आप की सुविधा के लिए पुरोचन को ही मै भृत्य के रूप मे दूँगा। पृथिवी वहाँ रहनेवालों के अधीन हो जाती है। पूर्वकाल में राजा वही रहा करते थे, जो कि तीनो भुवनो मे विख्यात हुए। इस प्रकार ब्राह्मण लोगो को कहते हुए मैंने सुना है। इतना ही नही। जो मै कहनेवाला हूँ उसे भी सुनलो। यह तो निश्चित है कि आपके शत्रुओ का नाश होगा। १-८ जो आचार्य की आज्ञा का पालन करते है, वे किसी प्रकार की हानि का अनुभव नही करते।" राजा की इस प्रकार की आज्ञा के कारण बुद्धिमान् पुरोचन ने शीघ्र ही

कानन प्रवेशं

अम्मया कुन्तितानु धर्म्मजनादिकळु
तन्मनमळलूपूण्टु पाताळत्तूटॆ पोन्पोळ् । १
वाच्च सङ्कट चॊल्किलीश्वरन् नटुङ्डीटु-
मीश्वरविलासङ्ङळाक्कुंपोल् तटुक्कावू ! २
नीटॆळु विलत्तूटॆ काटक पुक्कारवर्
पाटे वॆन्तॆरिञ्ञितु जातुपमाय पुर । ३
पेटियुमुऴक्कवु खेदवुकूटियवर्
काटकपुक्कनेरं नटन्नुकूटाय्कयाल् । ४
अम्मयॆ वृकोदरन् चुमलिलॆटुत्तुटन्
धर्म्मपुत्रनेयु पार्त्थनेयु कैकळकॊण्टु । ५
तन्पिमारॆयुमवन् तट्टिक्कॊण्टॊक्कुतन्मेल्
सभ्रमं कूटातॆकण्टिरुट्टिल् वनत्तूटॆ । ६
चुटुन्नचित्ततोटे करञ्ञुमिटयिटॆ
नटन्नङ्डॊरुदिक्किलिरिक्कुन्नतुनेरं । ७
कुन्तियुं तनयरु वॆन्तीलयल्लीयॆन्नु
चिन्तिच्चु परमार्त्थमऱिवान् विदुररु । ८
वन्धुवायिरिप्पोरु दूतनॆयच्चप्पोळ्
वॆन्तीलॆन्नऱिञ्ञुळ्ळल् सन्तोपमुण्टाय्वन्नु । ९

वन मे प्रवेश

माता कुन्ती धर्मपुत्र आदियो के साथ दु:खित होकर जव पाताल मार्ग से जा रही थी, तव उन्होने वडा शोक अनुभव किया। वह कहा जाय तो ईश्वर भी चकित हो जाय। ईश्वर की लीला कौन रोक सकता है ? लम्वी सुरग से जाते हुए उन्होने वन मे प्रवेश किया। और लाक्षा-गृह तो पूरा जल गया। डर, नीद और दु ख के कारण वन मे प्रविष्ट होने के वाद वे चल न सके। इसलिए वृकोदर (भीम) ने अपनी माता को कन्धे पर विठा लिया, धर्मपुत्र और अर्जुन को एक-एक हाथ मे उठा लिया और छोटे भाइयो को उनकी कमर पर ठोकते हुए विना घवराहट के अन्धेरे मे, वन के भीतर दु खित हृदय के साथ, वीच-वीच मे रोते हुए चले और अन्त मे एक स्थान पर वैठ गये। १-७ इतने मे विदुरजी को चिन्ता हुई, कि कुन्ती और उनके पुत्र जल तो नही गये। अतएव उन्होने एक

अन्नल्लो कलिपच्चिरिक्कुन्नितस्सुयोधनन्
तन्नुटे नियोगत्ताल् निङ्ङळतरियाते । २०
वन्नुपोकरुतापत्तुळ्ळतोर्त्तुकोण्टु
नन्नायिस्सूक्षिच्चुकोण्टिरिक्केन्निवयेल्ला । २१
आरुमेयरियाते निश्शेषमरियिच्चु
पाराते पोयानवन् वन्नितद्दिवसवु । २२
विप्रभोजन वेणमेन्नु चिन्तिच्चु कुन्ति
चिल्पमायन्न कोट्टुत्तीटिनाळेल्लावर्क्कु । २३
अन्नु भोजनत्तिन्नाय् वन्नितु निषादियु
तन्नुटे तनयन्मारञ्चुपेरोट्टु कूटे । २४
मद्यपानवु चेय्तङ्ङवरुमुरङ्ङिडनार्
शक्तनां भीमन् विलशोधन चेय्तान् मुन्पे । २५
निद्रय्क्कु पुरोचनन्तन्नुटेयरिके चे-
न्नेत्रयुं विश्वासेन किटन्नु वृकोदरन् । २६
अम्मयु बालन्मारु मुन्पिले विलपुक्कार्
पिन्नाले तीयुंवच्चु भीमनुमिरङ्ङिन्नान् । २७
अप्पुर वेकुन्नेरं मुप्पुर वेकुंपोले
मुप्पारुं निरञ्ञितीरोच्चयु वेळिच्चवुं । २८

दिन आधी रात को यह पुरोचन इस भवन को जला देगा। दुर्योधन की आज्ञा से यही काम उसको बतलाया गया है। यह न हो कि आपसे यह वात छिपी रह जाय। इस वात को ध्यान मे रखते हुए बडी होशियारी से काम लेना। सभी वातो को बतलाकर खनक बिना किसी के जाने विदा हो गया। अन्त मे वह दिन आया। १६-२२ यह समझकर कि ब्राह्मणभोज होना चाहिए, कुन्ती ने सवको ढग से भोजन कराया। उस दिन एक निषादी भी अपने पॉच पुत्रो के साथ भोजन के लिए आयी। वे सव मद्यपान करके सो गये। शक्तिशाली भीम ने पहले ही सुरग की परीक्षा करली। तदनन्तर सोने के लिए विश्वास के साथ पुरोचन के पास ही जाकर लेटे। माता (कुन्ती) और वालक (भीम के अन्य भाई) पहले ही सुरग के अन्दर घुस गये और भीम आग लगाकर उनके पीछे-पीछे चले गये। जब त्रिपुर के समान वह भवन जल रहा था उसकी आवाज और उसकी रोशनी तीनो लोको मे फैल गयी। २३-२८

वलियोररयालुण्टिविटॆक्काणाकुन्नु
सलिलं तिरञ्ञुकॊण्टिङ्ङु कॊण्टरुवन् ञान् । १९
ज्येष्ठनुमुण्णिकळुमम्मयुमत्तणलिल्
वाट्टमॆन्नियेयिरुन्नीटुक कुऱञ्ञॊन्नु । २०
ऎन्नतु पऱञ्ञवन् कूवीटुवळि पोयि
चॆन्नतुनेरमॊरु तामरप्पोय्क कण्टान् । २१
कुळिच्चु तण्णीरॊट्टु कुटिच्चु दाह तीर्त्तु
विळिच्चु विळिच्चवन् वन्नितु वेगत्तोटे । २२
तामरयिलयिलुमुत्तरीयत्तिलुकू-
टामोदं वरुमाऱु तण्णीरु कॊण्टुवन्नान् । २३
उऱक्कमिळय्क्कयु विशप्पु पॆरुक्कयु-
मुऱक्कॆ नटक्कयु चॆय्कयालवरप्पोळ् २४
तळर्न्नु किटन्नुटनुऱङ्ङुन्नतु कण्टु
वळर्न्न दुःखत्तोटे करञ्ञान् ताने निन्नु । २५
पॆरुत्त काट्टिल् वॆऱुनिलत्तु किटक्कॆन्नु
वरुत्ति दैवमतु पॊरुक्कयल्लेयुळ्ळु । २६
उळ्ळवुमळल् पूण्टु दीर्घश्वासवुमिट्टु
वॆळ्ळवुमवर्मेय्यिल् तळिच्चुमेवुन्नेर । २७

और माताजी वहाँ छाँह मे आराम से थोड़ी देर बैठे रहे।" इतना कहकर भीम थोडी दूर चला गया जहाँ एक कमलसरोवर दिखायी दिया। १५-२१ उसमे स्नान करके, फिर जरा पानी पीकर पुकारते-पुकारते वह शीघ्र वापस आया। कमल के पत्ते मे और अपने उत्तरीय मे आनन्द देनेवाला पानी लेकर आया। नीद की कमी से, भूख के आधिक्य से तथा अत्यधिक चलने से सब बहुत थक गये थे, इसलिए सभी सो गये। यह देखकर भीम बहुत दु खित हुआ और रोने लगा। इस घोर वन मे खुली जमीन पर लेटना, यही भगवान् ने कराया है। चुप-चाप सहने के अलावा क्या किया जाय ? (उसके मन के) भीतर बडा दु ख हुआ। दीर्घ नि श्वास लेते हुए भीम ने उन पर जल छिड़क दिया। २२-२७

सन्तापमुण्टेन्नतु पुरमे भाविक्कयुं
सन्तापत्तोटेयवर् गगयु कटन्नितु । १०
बन्धुक्कळ् चेय्ततेल्ला चिन्तिच्चु वाळुकाल
कुन्तियु बालन्मारु वेन्ततु कण्टु वन्नु । ११
धृतराष्ट्ररुं नल्ल मक्कळुं दु:ख कैक्कों-
ण्टुदकक्रियादिकळ्चेय्तु वाणितु पुरे । १२
सन्देहमुण्टायतिल्लाक्कुमे निषादियु
नन्दनन्मारु वेन्तुकिटक्कुं शवं कण्टु । १३
निन्दिच्चु परयुन्नु सज्जन गान्धारितन्-
नन्दनन्मारेयुं तातनेयुमतुकालं । १४
अन्धनां नृपनरिञ्ञिल्लेन्नुमरिञ्ञेन्नुं ।
सन्ततं विवादिच्चीटुन्नितु महाजनं । १५
पाण्डवन्मारुं गंग कटन्नु नटन्नु मा-
र्त्ताण्डनेप्पोलु काण्मानिल्लात वनत्तूटे । १६
पैदाहकोंण्टु मम कैकालु तळरुन्नु
पैतङ्ङळाय माद्रितन्नुटे सुतन्मार्क्कु । १७
एन्नतु कुन्तीदेवी चोन्नतु केट्टु भीमन्
वन्न वेदनयोटुमम्मयोटुरचेय्तान् । १८

मित्र को मालूम करने के लिए दूत के रूप मे भेजा। उससे जब मालूम हुआ कि नही जले तो उनको बड़ा हर्ष हुआ, पर वाहर से वडा दु.ख दिखलाया। इतने मे पाण्डवो ने गगा को पार किया। वे अपने बन्धुवो की करतूतो पर विचार करते हुए रह रहे थे। धृतराष्ट्र और उनके पुत्र आये और कुन्ती और उनके पुत्रो को जला देखकर उन्होने उनकी उदक-क्रिया की और नगर में सुख से रहने लगे। निपादी और उसके पुत्रो के शव को देखकर किसी को शक ही न हुआ। सज्जन लोग गान्धारी के पुत्रो की और उनके पिता (धृतराष्ट्र) की निन्दा करने लगे। ८-१४ जनता मे सदैव विवाद चलता रहा कि अन्धे राजा को वात मालूम थी या नही मालूम थी। पाण्डव गगा पार करके वन से चले, जहाँ सूर्य तक नही दिखायी देता था। "भूख और प्यास से मेरे और माद्री के पुत्रो के, जो अब भी वच्चे ही थे, हाथ-पैर क्षीण हो गये।" —कुन्तीदेवी का यह कहना सुनकर भीम दु खित हुए और माता से वोले—"यहाँ एक वडा पीपल का पेड़ दिखायी दे रहा है। मै कुछ जल ढूँढ लाऊँगा। तव तक वडे भाई

सम्पत्तुवरुकालं सन्तोपिक्कयु वेण्ट
तन्पुरान्तन्टेयॊरु लीलकळत्रेयल्लो । १०
परञ्ञीवण्ण मुनि मरञ्ञु हिडिवियु
निरञ्ञ रागत्तोटु पुणर्न्नाळ् भीमन्तन्ने । ११
पिरन्नु घटोल्क्कचनाकिय तनयनु
निरञ्ञु सन्तोषवुमतिनालेल्लावर्क्कुं । १२
इरुन्नु शालिहोत्रन् तन्नुटेयाश्रमत्ति-
लॊरुनाळविटेयु वेदव्यासनेक्कण्टु । १३

वकवधं

जटयु वल्क्कलवु धरिच्चु पाण्डवन्मा-
रटविकळु पल नदियु गिरिकळुं १
कटन्नु पोन्निङ्ङेकचक्रया ग्राम पुक्कार् ।
नटन्नारविटेयु भिक्षयेटॊट्टुकालं । २
पुत्रनु पत्नितानुं पुत्रभार्ययु कूटि-
ट्टॆत्रयु दुःखिक्कुन्न विप्रन्टे गृहतन्निल् ३
कुन्तियु चेन्नु केट्टाळेन्तिनु शोकिक्कुन्नु ।
सन्तापत्तिन्टे मूल-ब्राह्मणनरियिच्चान् । ४

मुक्त होने के लिए भगवान् की प्रार्थना करना । समृद्धि के समय अधिक प्रसन्न न हो जाना क्योकि यह सब भगवान् की लीला है ।" इस प्रकार कहकर मुनिजी अन्तर्धान हुए । हिडिवी ने बड़े प्रेम के साथ भीमसेन का आलिगन किया । फलस्वरूप पुत्र घटोत्कच का जन्म हुआ और सब वहुत प्रसन्न हुए । एक दिन वे ऋषि शालिहोत्र के आश्रम मे ठहरे, जहाँ फिर व्यासजी का दर्शन हुआ । ७-१३

बकासुर का वध

जटा, वल्कल धारण करके पाण्डव अनेक पर्वत, वन और नदियाँ पार करके अन्त मे एक चक्र नामक ग्राम में पहुँचे और वहाँ भिक्षा माँग-कर कुछ दिन तक अपना निर्वाह करते रहे । वहाँ एक ब्राह्मण था, जो अपने पुत्र, पत्नी और पुत्रवधू के साथ बडा दुःखित था । उसके घर जाकर कुन्ती ने पूछा, 'क्यो दुःखित हो ?' ब्राह्मण ने दुःख का कारण बतलाया । यहाँ एक वक नामक असुर है, जो आकर सबको खा जाने के

हिडिम्बवधं-घटोत्कचोत्पत्ति

हिडिम्बनाय निशाचरन्टे नियोगत्ताल्
हिडिम्बि पोन्नुवन्नाळ् कोन्नुकोण्टङ्ङु चेल्वान् । १
मारुतसुतन्तन्नेक्कण्टिट्टु निशाचरि
मारमाल्पूण्टु मोहिच्चातुरयाकमूलं । २
वैकियनेरं वन्नु हिडिम्बन् वेगत्तोटे
कैकळु तम्मिलटिच्चवळोटट्टत्तप्पोळ् । ३
भीमसेननु चेरुत्तवनेत्तच्चुकोन्नान्
भीमनादङ्ङळ् केट्टिट्टुणर्न्नारवर्कळु । ४
तण्णीरुं कुटिच्चवरेल्लारुमोरुमिच्चु
सन्नाहमोटु पोयारवळुं कूटेयप्पोळ् । ५
वेदव्यासनेक्कण्टारन्नवर् वळियिन्नु
वेदन पर्कयु वीळ्कयु करकयुं । ६
आतुरन्मारायोरु पाण्डुपुत्रन्मारेयुं
मातावुतन्नेयु कण्टाकुलप्पेट्टु मुनि । ७
खेदिक्क वेण्ट निङ्ङळ् नल्लतुवरुं मेलिल्
खेदिप्पिच्चीटवेण्ट हिडिबितन्नेक्कोण्टुं । ८
आपत्तु वरुंकालं तापत्तिल् मुळुकाय्क
पापत्तेक्कळवानायीश्वरसेवचेय्क । ९

हिडिम्ब का वध और घटोत्कच की उत्पत्ति

इतने मे राक्षस हिडिब की आज्ञा से उन सबको मारकर ले जाने के लिए हिडिवी पहुँची। मारुत के पुत्र (भीम) को देखकर राक्षसी कामदेव के वश मे आकर वहुत परेशान हुई। उसके वापस जाने मे देर होने के कारण हिडिव (क्रोध से) हाथ पीटते हुए तुरन्त उसके पास आया। तब भीमसेन ने उसको मार डाला और घोर ध्वनियो को सुनकर वे सब जग गये। और (फिर) जल पीकर सब साथ चले गये और हिडिवी भी उनके साथ गयी। रास्ते मे उन्होने वेदव्यासजी का दर्शन किया, उनको अपना दु.ख वतलाया, उनके चरणो पर पडे और रोये। १-६ दु खित पाण्डवो और उनकी माता को देखकर मुनि वहुत घबराये और वोले—"खेद मत करना, आगे सब ठीक हो जायगा, और हिडिम्बी को भी खेद नही पहुँचाना। विपत्ति के समय दु ख मे न डूब जाना और पापो से

ञान् पोयालिवक्कुंमिल्लाश्रयमेतु मन-
क्कान्पिलुळ्ळलेन्तु चोंल्वतु दैवमल्लो । १५
पोकाञ्ञाल् ञान् मूलमाय् ग्रामवु मुटिञ्ञीट्टु
वेकुन्नु चित्तमिवयोर्त्तिनिक्कय्यो पापं । १६
भूदेवन् पऱञ्ञतुकेट्टु कुन्तियुमप्पो-
ळातुरयायाळल्लो कारुण्यमेरुकयाल् । १७
प्राणिकळ्विषयमायोरनुकम्पकोंण्टु
केणुकेणवरिरिक्कुन्नतु कण्टु कुन्ति । १८
चेतसि विचारिच्चु भूसुरनोटु चोंन्नाळ्
खेदिक्क वेण्टा ञानीस्सङ्कट तीर्प्पनल्लो । १९
पुत्रनायोरुवनेयुळ्ळतु भवानिप्पोळ्
पुत्रन्मारञ्चुपेरुण्टिनिक्कोन्नरिञ्ञालु । २०
इन्नु ञानोरुत्तने निङ्ङळक्कु दुःख तीर्प्पान्
तन्नीटुन्नतुमुण्टु निर्णयं करयेण्टा । २१
नन्नाक मेलिल् निनक्कोन्नोळिञ्ञिनिक्कोन्नु
तन्नीटु वतिनिल्लेन्नुरचेय्तितु विप्रन् । २२
बकन्टे वृत्तान्तङ्ङळरिञ्ञु कुन्तीदेवि
मकन्टे कैयालतु तीर्प्पानाय् निरूपिच्चाळ् । २३
भीमसेनने विळिच्चुरचेय्तितु कुन्ति
भीमना निशाचरन्तन्ने नी कोंल्कवेणं । २४

कोई आश्रय न रह जायगा। अपने मन का दुःख मैं कहाँ तक बताऊँ, ईश्वर की लीला है। अगर कोई न जाय तो मेरे कारण सारा गाँव समाप्त हो जायगा। यह सब सोचकर मेरा चित्त जला जा रहा है, कैसा कष्ट है? ब्राह्मण का कहना सुनकर कुन्ती दुःखित हुई, क्योंकि उसके मन मे दया थी। प्राणियो के प्रति सहानुभूति के कारण और उनके निरन्तर सिसकने के कारण कुन्ती सोचकर ब्राह्मण से बोली। आप खेद न करें, मै आपका दुःख दूर करूँगी। १४-१९ आपका एक ही पुत्र है, पर जान लीजिए, मेरे पाँच-पाँच पुत्र है। उनमे से मै एक (पुत्र) (आपका) दुःख समाप्त करने के लिए दूँगी, इसमे सन्देह नही, आप न रोये। तब ब्राह्मण ने कहा—तुम्हारा आगे भला ही हो, क्योंकि तुम अपना एक पुत्र मुझको दे रही हो। वक के वृत्तान्त सुनकर कुन्तीदेवी ने अपने ही पुत्र के द्वारा उसको समाप्त करने के लिए निश्चय किया। (और)

वकनेन्नोरु निशाचरनुण्टवन् वन्नु ।
सकलजनत्तेयु भक्षिप्पानोरुम्पेट्टान् । ५
अतिनाल् ग्रामत्तिङ्कलुळ्ळोरु ञङ्ङळेल्ला-
मधिकं दु खं पूण्टु समय चेय्तु मुन्न ६
ओरुनाळ् तन्नेयोक्क मुटिच्चु कळयेण्टा ।
पेरिकनाळेक्कुळ्ळ पोरुतियुण्टाक्कीटां । ७
ओरोरोदिनं ञङ्ङळ् नी वाळु वनंतन्नि-
लोरोरो पुरुषन्मारङ्ङु वन्नीटामेल्लो । ८
एन्नतु केट्टु बकनन्नेरमुरचेय्तान् ।
अन्नवु वेणमेनिक्कायिरं नाळियरि- ९
वेच्चोरु नूरुकुट नल्केणं रसाळवु ।
पच्चमांसवुं वेणमीरण्टु पोत्तु नित्यं १०
मृष्टमायुण्मानितु कोण्टुवन्नोरु पुमान्
मुट्टाते तन्नीटुकिल् मतियेन्नरिञ्ञालुं । ११
एङ्किलङ्ङनेयामेन्नवनोटुरचेय्तु
सङ्कटत्तोटु ञङ्ङळिङ्ङने चेय्तु ञाय । १२
इन्नलेयोळमित्थ चेन्नितु मुट्टाते क-
ण्टिन्निनियिविटेनिन्नोरुत्तन् पोयीटेणं । १३
भक्तवु रसाळवु पोत्तुमुण्टायितिनि-
प्पुत्रनेययय्क्कन्नतोर्त्तेट दु.खंतानुं । १४

लिए तैयार हो गया। अतएव हम ग्रामनिवासियो ने दु खित होकर उससे पहले समझौता कर लिया कि तुम एक ही दिन हम सबको समाप्त न करो। हम ऐसा करेंगे कि वहुत दिनो के लिए तुम निश्चिन्त हो जाओगे। १-७ प्रतिदिन हम लोगो मे से कोई वन मे आयेगा, जहाँ तुम रहते हो। यह सुनकर वक ने कहा—"मुझे प्रतिदिन एक हजार सेर चावल का भात चाहिए, उसके साथ सौ घडो की रसेदार सब्जी भी चाहिए। और मास के लिए मुझे प्रतिदिन दो भैसे चाहिए। पेट-भर खाने के लिए अगर कोई प्रतिदिन इतना (एव स्वय को) लायेगा तो पर्याप्त होगा, जान लीजिए।" हम लोगो ने 'हाँ' कह दिया। वडे दु ख के साथ हमने यह समझौता किया। कल तक यह प्रवन्ध निरन्तर चला है और आज इस घर से किसी को जाना है। ८-१३ भात, रसेदार सब्जी और भैसे तो तैयार है, पर पुत्र को भेजना है, यह सोचकर वडा दु ख है। अगर मै चला जाऊँ तो इनका

ऍविटॆनिन्नुवन्नु तानिनिप्पोकुन्नतु-
मॆविटेक्कॆन्नु पऱञ्ञीटेणमॆन्नु केट्टु ३
पाञ्चालपुरत्तिङ्कलुण्टुपोल् स्वयवर
वाञ्छितमायतॆल्ला किट्टुपोल् नमुक्कॆल्ला । ४
आर्क्कु पॆण्णिनॆक्कॊटुक्कुन्नितॆन्नुण्टो केट्टु
चेल्क्कण्णाळ् कण्टालॊट्टु नन्नो केळियो सखे । ५
ऍन्नतु केट्टु चॊन्नानन्नेर वऴिप्पोक्क-
निन्नवक्कॆन्नु दैवमॆन्नियेयऱिञ्ञीला । ६
पार्थनु कॊटुप्पानाय् कल्पिच्चु नृपवर-
नास्थया कर्म्म चॆय्तिट्टुण्टाय नारियल्लो । ७
धार्त्तराष्ट्रन्माररक्किल्लत्तिलिट्टु चुट्टु
पार्थन्मार् वॆन्तुपोयारॆन्नतो केट्टुतल्लो । ८
द्रोणरॆक्कॊल्वानायिट्टुण्टायि धृष्टद्युम्नन्
काणामॆन्नते वेण्टू केवलन्नतुमिनि । ९
पञ्चबाणवु विल्लुमुण्टुपोलुण्टाक्कीट्टु
पञ्चवर्ण्णत्तिलॊरु कृत्रिमक्किळियेयु । १०
तिरिञ्ञु तिरिञ्ञु निन्नीटिन यन्त्रत्तिन्मे-
लिरुन्नीटिन किळितन्नुटॆ कण्ठत्तिङ्कल् ११
विल्लतु कुलच्चॆय्तु मुऱिक्किलवन्तन्ने
वल्लभनाकुन्नतु कन्यकय्क्कॆन्नु केट्टु । १२

जाओगे, यह बतलाओ । यह सुनकर उसने कहा—'सुना है कि पाञ्चालो के नगर मे एक स्वयवर होनेवाला है । यह भी सुना है कि वहाँ अपनी इच्छा के सभी पदार्थ मिल जायेगे । (पाण्डवो ने पूछा) क्या यह भी सुना है कि कन्या किसको दे रहे है ? और वह देखने मे अच्छी है या केवल तमाशा है ?' यह सुनकर यात्री ने कहा—"ईश्वर ही जाने किसको देगे । राजा ने तो अर्जुन को देने के लिए निश्चय किया था, क्योकि कन्या तो श्रद्धा के साथ कर्म करने के बाद पैदा हुई थी । १-७ परन्तु सुना है कि धृतराष्ट्र के पुत्रो ने पाण्डवो को लाक्षागृह मे जलाकर नष्ट कर दिया है । द्रोणाचार्य को मारने के लिए धृष्टद्युम्न पैदा हुआ है । अब देखना है, क्या होगा ? एक धनुष और पाँच बाण बनाये गये है, साथ-साथ पाँच रगवाली एक कृत्रिम चिडिया भी । एक घूमते हुए यन्त्र पर बैठी इस चिड़िया के गर्दन पर निशाना मारकर जो उसे काट दे, वही

भूमिपालक कुलधर्म्ममाकुन्नतल्लो
भूमिदेवन्मारॆप्पालिक्केणमॆन्नतॆल्ला । २५
ग्रामत्तॆक्कूटॆप्परिपालिच्चाल् नमुक्कनि-
क्कामत्तॆस्साधिच्चीटामिल्ल सशयमेतुं । २६
भीमनुमॆङ्किल् चोरु करियु तरिकॆन्ना-
नामोदत्तोटु कॊंटुत्तीटिनान् भूदेवनु । २७
कौन्तेयनतुकॊण्टु कान्तारमक पुक्कु
तान्तन्नॆ भुजिक्कुन्ननेरत्तु निशाचरन् । २८
कुद्धनायणञ्ञतु कण्टु मारुतितानु
बद्धकोपत्तोटूणुंकळिच्चु पुरप्पॆट्टु । २९
घोरमाय् पॊरुत पोरॆङ्ङनॆ पऱयुन्नु
मारुति बकन्तन्नॆक्कॊन्नानॆन्नऱिञ्ञालुं । ३०

पाञ्चालीस्वयंवरं-वार्त्ताकर्ण्णन

अङ्ङनॆ नालञ्चुनाळविटॆयिरिक्कुन्पो-
ळॆङ्ङानु पोन्नुवन्नान् नल्लोरु वळिपोक्कन् । १
आरणनत्ताळमुण्टविटॆक्किटन्नपो-
तोरोरो विशेषङ्ङळ् चोदिच्चु पाण्डवन्मार् । २

भीमसेन को बुलाकर कहा—"तुम इस क्रूर राक्षस का वध करो। क्षत्रियो का यह कुलधर्म है कि वे ब्राह्मणो की रक्षा करे। २०-२५ यदि सारे ग्राम की रक्षा होजायगी तो हमारी इच्छाएँ पूरी हो जायेगी, इसमे कोई सन्देह नही है।" भीम ने कहा—'अच्छा तो भात और भाजी लाओ'। ब्राह्मण ने हर्ष से दोनो दे दिये। वह सब लेकर कुन्ती का पुत्र भीम वन मे घुसा और स्वय खाने लगा, जिसे देख राक्षस अत्यन्त क्रुद्ध हुआ। तब भीम भी क्रुद्ध हुआ और भोजन समाप्त करके युद्ध करने के लिए तैयार हुआ। तब जो युद्ध हुआ उसका कैसे वर्णन किया जाय? अन्त में मारुति (भीम) ने बक को मार डाला। २६-३०

पाञ्चाली-स्वयवर का समाचार सुनना

इस प्रकार चार-पाँच दिन वहाँ ठहरते समय एक सज्जन यात्री कही से आया। जब यात्री ब्राह्मण शाम को भोजन करके आराम कर रहा था तब पाण्डव उससे समाचार पूछने लगे। कहाँ से आये हो और यहाँ से कहाँ

सेविच्चु महेशनुं प्रत्यक्षनायिच्चौन्नान्
तावकमभिमतमेन्तु चौल्लुक वाले ! २२
ऍन्तौरु वर वेण्टतेन्नु केट्टवळप्पोळ्
सन्तोषं पूण्टुचौन्नाळ् संभ्रमत्तोटुमेवं । २३
भर्त्तार देहियेन्नतञ्चुरु चौन्नमूलं
भर्त्ताक्कन्मारु निनक्कञ्चुपेरुण्टाकेन्नान् । २४
यज्ञसेनन्टे मकळाय् पिऱन्नितुमवळ्
विज्ञानज्ञानवतियाकयुमुण्टु पार । २५
इत्तर पल पल कथकळरुळ्चेय्तु
चित्ततापवु तीर्न्नु पोवानाय् नियोगिच्चान् । २६
आशीर्व्वादवु चेय्तु मऱञ्ञु मुनितानु-
माशु पाण्डवन्मारु मातावु नटकोण्टार् । २७
ब्राह्मणरतुनेरं चोदिच्चारवरोटु
धार्म्मिकन्मारे ! निङ्ङळेविटेनिन्नु वन्नु ? २८
एकचक्रयिल्निन्नु वरुन्नु ञङ्ङळिप्पोळ्
पोकुन्नु पञ्चालनां विषय काण्मानल्लो । २९
ञङ्ङळो सोदर्यन्मार् मातृचारिकळ् तानुं
ञङ्ङळेक्कूट्टिक्कोण्टु पोकेण पक्षे निङ्ङळ् । ३०
अङ्ङनेतन्ने ञङ्ङळ् पोकुन्नितविटेक्कु
ञङ्ङळ्क्कु निङ्ङळ् तुण निङ्ङळ्क्कु तुणञङ्ङळ् । ३१

तुम्हारी अभिलाषा क्या है ? तुम्हे क्या वर चाहिए ?' —यह सुनकर वह प्रसन्न हुई और उसने सभ्रम के साथ कहा—'मुझे पति दो, पति दो, पति दो, पति दो, पति दो ।' इस प्रकार पाँच बार कहने के कारण महेशजी ने कहा—'तुम्हे पाँच पति प्राप्त हो जायँ !' उसी ने अब यज्ञसेन की पुत्री के रूप मे जन्म लिया है । उसके पास विज्ञान और ज्ञान बहुत है ।" इस प्रकार की अनेक कथाएँ सुनाकर और दु.ख दूर करके व्यासजी ने जाने के लिए निर्देश दिया, और आशीर्वाद देकर मुनिजी अन्तर्धान हो गये । तत्क्षण ही पाँचो पाण्डव माता के साथ चल पडे । २१-२७ उस समय (रास्ते मे) ब्राह्मणो ने उनसे पूछा—"हे धर्मनिष्ठ ! आप कहाँ से आ रहे है ?" (उन्होंने उत्तर दिया) "हम लोग अब एकचक्र से आ रहे है और पाचाल देश देखने जा रहे है । हम भाई-भाई है और माता की सेवा करते है और आप लोग हमको साथ ले चलिए ।" "(ब्राह्मणो ने कहा)

भूमियिलुळ्ळमन्नोरोक्कवे पोयिट्टुण्टु
भूमिदेवेन्द्रन्मारुमटमिल्लातेयुण्टु । १३
आन तेर् कुतिर कालाळाय पटयुमु-
ण्टानकपटहादिवाद्यघोषवुमुण्टु । १४
सानन्द बहुरसभोजनमतुमुण्टु
मानसत्तिङ्कल् निरूपिच्चवयोक्ककिकट्टु । १५
मल्लाक्षितन्नेयु काणेण्टुकयुण्टुपोले-
न्नेल्लारु चोल्लुन्नितुमेन्तिनु नमुक्कतु । १६
कल्याण काणवेण पोरुविन् पक्षे निङ्ङ-
ळिल्लोरु काळ्चयेङ्ङुमिङ्ङन्नेयेन्नुवरु । १७
आरणराय्मेवीटु पाण्डवरतु केट्टु
कारणमरिञ्ञु सन्तोपिच्चु पुरप्पेट्टार् । १८
वन्नितु वेदव्यासनन्नेरमविटेक्कु
नन्नितु तोन्नियतु चेन्नालु मटियाते । १९
नल्लते वन्नुकूटू पाञ्चालितन्ने निङ्ङ
ळेल्लारु कूटि वेट्टुकोळ्ळुविनेन्नेवेण्टू । २०
पण्टोरु तपोधनन्तन्नुटे पुत्रि तनि-
क्कुण्टायीलोरु भर्त्तावित्नवळ् महेशने २१

कन्या का वर होगा, ऐसा मैने सुना है। पृथिवी के सभी राजा वहाँ पहुँच गये है ओर असख्य ब्राह्मण भी वहाँ उपस्थित है। हाथी, रथ, घोडे, पैदल सेना भी है और आनक, पटह आदि अनेक वाद्यो का घोष भी है। ८-१४ वहाँ सानन्द बहुरस भोजन किया जा सकता है, और मन मे जिन-जिन चीजो की अभिलापा हो सभी मिल सकती है। सव लोग कहते है कि सुन्दरी कन्या भी देखने को मिलेगी, परतु इससे हमारा क्या मतलब है? विवाह देखना है, वस। आप लोग भी आइए। इतना अच्छा दृश्य और कही न मिलेगा, यह सिद्ध होगा।" ब्राह्मण के रूप मे वहाँ रहनेवाले पाण्डवो ने यह सुनकर, मामला समझकर, प्रसन्नता के साथ जाने की तैयारी की। उस समय देदव्यासजी वहाँ पहुँच कर वोले—"यह तो आपको अच्छा सूझा, आप अवश्य चले। इसका परिणाम अच्छा ही होगा। और आप पाँचो मिलकर पाञ्चाली से विवाह करो। १५-२० पूर्वकाल मे एक तपोधन की पुत्री का कोई पति न हुआ था। तव उसने महेश की सेवा की और महेश प्रत्यक्ष होकर बोले—'हे वाले! वतलाओ,

यक्षराक्षसगन्धर्व्वादिकळ्वकुळ्ळ कालं
धिक्करिच्चतिलोभ कैक्कोण्टु नटक्किलो ७
भक्षिक्कु मनुष्यरे रक्षसांपरिपकळ्
रक्षिप्पान् पोरुमेङ्किलेतुमे मटिक्केण्ट । ८
अङ्गारवर्ण्णनेन्न गन्धर्व्वप्रवरन् ञा-
नङ्गारवर्ण्ण मम नामत्ताल् वनमितुं । ९
औषधनाकुन्नतु धनदसखि ञानु
रोषवुमेन्नोळमिल्लाक्कुमेन्नरिञ्ञालु । १०
कौणपादिकळ्पोलुमिविटे वरुवीला
प्राणने वेटिञ्ञु वन्नीटुवानेन्तु निङ्ङळ् । ११
अन्नतु केट्टनेर चौल्लिनान् किरीटियुं
नन्नुनन्नेत्रयुं नी चौन्नतु नन्नु पारं । १२
हिमवल्गिरि गगा समुद्रमिवटिङ्कल्
पकलुं रावु सन्ध्यानेरवुं नटन्नीटां । १३
अल्लाक्कुं गमिच्चीटामेल्लानेरवुमति-
निल्लोरु तटवेतुं दुष्टजन्तुक्कळाले । १४
अन्नल्लो मुनिवरनाकिय वेदव्यासन्
चौल्लियतसत्यमल्लेन्नु नीयरिञ्ञीले ? १५
क्षुद्रन्मारल्लञङ्ङळ् निङ्ङळेप्पेटिप्पति-
न्नद्रिसागरादियुं भेदिप्पन् दिव्यास्त्रत्ताल् । १६

अनादर करके लोभ के कारण अगर सञ्चार करोगे तो राक्षस-गण मनुष्यो को खा लेगे । अगर तुममे अपनी रक्षा करने की शक्ति है तो फिर तुम्हारी खुशी है । १-८ मैं अङ्गारवर्ण नाम का गन्धर्वप्रवर हूँ और मेरे नाम से यह वन भी अङ्गारवर्ण कहलाता है । कुवेर का मित्र औषध मैं ही हूँ और जानलो कि मेरा जैसा क्रोध और किसी का नही है । राक्षस आदि भी यहाँ नही आते है । क्या कारण है कि प्राणभय की परवा न करके आप लोग यहाँ आये । यह सुनकर किरीटी (अर्जुन) ने कहा—जो तुमने कहा वह वहुत ठीक है, हिमालय पर्वत, गगा, समुद्र, इन सवमे दिन, रात, सन्ध्या, सभी समय मैं सचार कर सकता हूँ । (हम) सव सभी समय घूम सकते है, दुष्ट जन्तुओ की ओर से कोई रोक न होगी । यही मुनिवर वेदव्यासजी ने कहा है, उनका कहना असत्य नही हो सकता है, जानते नही हो ? हम क्षुद्र लोग नही है कि तुमसे डर जायँ । मैं अपने दिव्यास्त्र से

इङ्ङने पऱञ्ञवर् भूदेवन्मारुमायि
मगलचित्तन्मारां धर्म्मपुत्रादिकळां ३२
चन्द्रवंशोल्भवन्मार् गंगातीरत्तु चेन्नार्
चन्द्रनुमस्तमिच्चु रात्रियु पाति चेन्नु । ३३

अङ्गारवर्ण्णोपाख्यानं

अर्ज्जुनन् मुन्पिलोरु कोळ्ळियु मिन्नि मिन्नि
निर्ज्जरनदि कटन्नीटुवान् तुटङ्ङुन्पोळ् । १
मज्जन चेय्युन्नोरु गन्धर्व्वन्‌तन्नेक्कण्टु
निर्ज्जराधिपतनयादिकळ् निन्ननेरं । २
अंगनाजनवुमायंगजविवशनाय्
शृंगाररसंपूण्टु शृंगारयोनिसमन् ३
गंगयिल् सोमश्रवायणमा तीर्थत्तिङ्क-
लंगारवर्ण्णनेन्न गन्धर्व्वन् क्रीडिक्कुन्पोळ् । ४
कोपवु कलर्न्नवन् चापवु कुलयेट्टि
भूपतिवरन्मारा पाण्डवरोटु चोन्नान् । ५
पूर्व्वरात्रादियिङ्कल् घोरमायुळ्ळ सन्ध्या-
कालत्तु मनुष्यर्क्कु सञ्चरिक्करुतल्लो । ६

हाँ, हम लोग भी वही जा रहे है। आप लोग हमारे साथी रहे और हम आपके साथी होगे।" इस प्रकार कहकर मगल चित्तवाले चन्द्रवश के भूषण युधिष्ठिर आदि भाई, ब्राह्मणो के साथ गगा के तट पर पहुँचे। चन्द्र अस्त हो गया और आधी रात बीत गयी। २८-३३

अङ्गारवर्ण का उपाख्यान

अर्जुन जब एक लकडी की रोशनी मे निर्जर नदी (देव नदी गगा) पार करने लगे तब उसमे स्नान करनेवाला एक गन्धर्व दिखायी दिया, जिससे अर्जुन आदि रुक गये। अंगारवर्ण नामक वह गन्धर्व गगा तट पर स्थित सोमश्रवायण तीर्थ मे कामदेव के वश मे आकर, श्रृगारस से मत्त होकर मदन के तुल्य, अपनी स्त्रियो के साथ खेल रहा था। तब क्रुद्ध होकर, धनुप पर बाण चढाकर भूपालवर पाण्डवो से उसने कहा—रात्रि के पूर्वभाग के आरभ मे, घोर सन्ध्या के समय मनुष्यो को सञ्चार ही न करना चाहिए। यह यक्ष, राक्षस, गन्धर्व आदियो का समय है। इसका

अङ्गारवर्ण्णनेन्नु पेरिनिक्किनि वेण्ट
सगरत्तिङ्कल् निन्नाल् जितनाय् वन्नमूलं । २७
मानिया निनक्कु ञान् चाक्षुपियेन्न विद्य
दान चेय्युन्नतुण्टिप्राणने रक्षिक्कयाल् । २८
कामदरथाश्वसूतायुधादिकळुण्टा
सोमवशोल्भूतना निनक्कु धनञ्जय ! २९
उत्तम प्रीतिदत्तमतिलु विद्यादत्त-
मेत्रयु शुभं पुनरेङ्किलुमितु केळ्नी । ३०
प्राणरक्षणत्तिनु कूलि वाङ्ङुकयिल्ल
मानिकळाय नृपवीरन्मारर्ङ्कि नी । ३१
अेङ्किलाग्नेयमस्त्रमिनिक्कु पठिक्केण-
मेङ्कल्निन्नेन्टे विद्य वाङ्ङिक्कोळ्कयु वेण । ३२
सख्यवु नम्मिलिनि वेर्ङिटातिरिक्केण
विख्यातयाय कीर्त्ति वर्द्धिप्पिक्कयु वेणं । ३३
गन्धर्व्वन् चोन्नवण्णमन्योन्यं पठिच्चुटन्
कुन्तीनन्दनन् पुनरवनोटुर चेय्तान् । ३४
अेन्तोरु मूलं भवान् ञङ्ङळे विरोधिप्पान्
वन्धमिल्लोन्नुकोण्टु साधुक्कळल्लो ञङ्ङळ् । ३५

डरो'। ऐसा कहने पर गन्धर्ववर अर्जुन के पैरो पडा और वोला—"अव यह नाम अङ्गारवर्ण मुझे नही चाहिए, क्योकि मै युद्ध मे हार गया हूँ। चूँकि तुमने मेरे प्राणो की रक्षा की, (अत.) मै मानयुक्त तुमको चाक्षुपी नामक विद्या का दान करता हूँ। हे सोमवश मे उत्पन्न धनञ्जय! तुम्हारे लिए कामद रथ, अश्व, सूत और आयुध प्राप्त हो जायेगे। प्रीति से जो दिया जाता है, वह सवसे उत्तम है, उसमे भी अगर विद्या ही दी जाय, तो क्या कहना है। फिर भी सुन लो! जान लो कि मानी नृपवीर प्राणरक्षा के वदले मजदूरी नही लेते है। (गन्धर्व ने कहा) मै आग्नेय अस्त्र सीखना चाहता हूँ और मुझसे मेरी विद्या तुम्हे लेनी चाहिए। अव हम दोनो की अटूट मित्रता होनी चाहिए। (हमे) अपनी विख्यात कीर्ति को वढाना भी चाहिए।" गन्धर्व के कहने के अनुसार एक-दूसरे की विद्या पढने के वाद कुन्तीपुत्र (अर्जुन) ने उससे पूछा—"क्या कारण है कि तुमने हम लोगो का विरोध किया? मै कोई कारण नही देखता हूँ, हम लोग तो सज्जन है।" २६-३५ (गन्धर्व ने उत्तर दिया) "अगर जानना

दुर्ब्बलन्माराय् भीतन्माराय मनुष्यरे-
क्कर्ब्बुरादिकळ् पोटिच्चीटुकेन्नतेवरू । १७
दुर्म्मद कलन्नोरु गन्धर्व्ववीरनप्पोळ्
निर्म्मलतरमाय शस्त्रौघ प्रयोगिच्चान् । १८
उन्मुकंकोण्टु तटुत्तीटिनान् किरीटियु
पोन्मयमाय् रथतन्नेयु दहिप्पिच्चा- १९
नर्ज्जुनन् प्रयोगिच्चोराग्नेयास्त्रत्तालप्पोळ्
सज्वरनाय् मोहिच्चु वीणितु गन्धर्व्वनु । २०
कैशिक चुट्टिप्पिटिच्चप्पोळे वधिप्पाना-
याशु फल्गुनन् तुनिञ्ञतुकण्टवन् भार्य- २१
सुन्दरी कुंभीनसि धर्म्मनन्दनन्काक्कल्
क्रन्दन चेय्तु वीणु शरण प्रापिच्चप्पोळ् । २२
स्त्रीनाथन् पराजितन् कीर्तिहीननुमायि
मानवुंवेटिञ्ञवन्तन्ने नी कोन्नीटोल्ला २३
अभयं कोटुक्कोन्नु धर्म्मजन् चोन्ननेर-
मभिमानिकळमुत्पनर्ज्जुनन् चोल्लीटिनान् । २४
धर्म्मात्मा धर्म्मात्मजनभय तन्नमूल
निर्म्मलनाय निन्नेक्कोल्लुन्निल्लिनि आनो २५
पोय्क्कोळ्क पेटिक्केण्ट निय्यिनियेन्ननेर
काक्कल्वीणुरचेय्तान् गन्धर्व्वप्रवरनु । २६

पर्वत और सागर तक तोड सकता हूँ । ९-१६ यह हो सकता है कि राक्षस आदि दुर्बल और भयभीत मनुष्यो को नष्ट कर दे ।" यह सुनकर दुर्मद-युक्त गन्धर्व वीर ने अपने निर्मल शस्त्रो का प्रयोग किया । अर्जुन ने उल्मुक से उनको रोका और उसके सुवर्णमय रथ को जला डाला । अर्जुन के आग्नेयास्त्र के प्रहार से गन्धर्व जल गया और वेहोश होकर गिर गया । अर्जुन को अपने केश सँभालकर (उसका) वध करने के लिए तैयार होते देखकर, गन्धर्व की पत्नी सुन्दरी कुभीनसी युधिष्ठिर के पैरो पडी और रोने लगी और उनके शरण मे आयी । तव युधिष्ठिर ने कहा—'यह स्त्री का नाथ है, हार गया है, अपनी कीर्ति खो वैठा है, इसका मान भी नप्ट है, इसका वध न करो, इसको अभय दो' । यह सुनकर अभिमानियो मे श्रेष्ठ अर्जुन ने कहा—'धर्मात्मा और धर्म के पुत्र ने तुम्हे अभय दिया है, इसलिए हे निर्मल ! तुझको मै न मारूँगा । १७-२५ चले जाओ, मत

सवरणोपाख्यान

चोल्लुवन् चुरुक्कि ञान् केळ्क्क नी धनञ्जय !
चोल्लेळुमादित्यन्टे पुत्रियायुण्टायवन्नु १
सावित्रिक्कवरजयायोरु मनोहरी
देवस्त्रीकळुमवळ्क्कोत्तवरारुमिल्ल । २
तत्क्कालमृक्षपुत्रनाकिय सवरण—
नर्क्कने वळिपोले सेविच्चान् पलकाल । ३
तन्नुटे भक्तनाय चन्द्रवशोल्भूतना
मन्नवर्कुलवरनाकिय संवरणन् । ४
अन्नुटे मकळ्क्कनुरूपनेन्नुळ्ळिल् नण्णि-
क्कन्यकय्क्कीरेट्टाण्टु वयस्सुचेन्नकाल ५
अद्रितन्नुपवन सीमनि नायाट्टिन्नाय्
विद्रुत नरपति नटन्नानोरुदिनं । ६
क्षुत्पिपासादि पूण्टु मरिच्चु कुतिरयुं
पिल्पाट्टु वनभुवि नटन्नु नरेन्द्रनु । ७
अन्नेर काणाय्वन्नु कन्यकारत्नं तन्ने
मन्नवन् मरन्नितु तन्नेयुमतुनेर । ८
नामधेयादिकळेच्चोदिच्चु नरपति
वामलोचन पुनरुत्तर परयाते ९

सवरण का उपाख्यान

(गन्धर्व बोला)—"अच्छा तो सक्षेप मे कहूँगा, धनञ्जय ! सुन लो। विख्यात सूर्य की एक पुत्री थी, जो सावित्री की छोटी बहिन थी और बडी मनोहारिणी थी। अप्सराओ मे उसके समान कोई न थी। उन दिनो ऋक्ष के पुत्र सवरण ने नियमानुसार सूर्य की दीर्घकाल तक सेवा की। जब अपनी पुत्री के सोलह बरस पूरे हुए तब सूर्य ने अपने मन मे सोचा—'यह मेरा भक्त, चन्द्रवश के राजाओ मे श्रेष्ठ, सवरण मेरी पुत्री के अनुरूप है'। एक दिन राजा पर्वत के निकट के उपवन मे शिकार खेलने के लिए सोत्साह गया। भूख और प्यास से उसका घोडा मर गया, तदनन्तर राजा वन मे पैदल ही घूमने लगा। तब उसे एक कन्यारत्न दिखायी दिया, जिसे देखकर राजा अपने ही को भूल बैठा। १-८ राजा ने उसका नाम आदि पूछा, परतु वह सुन्दरी तो बिना उत्तर दिये ही अन्तर्धान हो

ऍङ्किलो धनञ्जय ! केट्टालुमतिन्मूल
सङ्कटमिनि मेल्नाळुण्टाकातिरिप्पानाय् । ३६
ब्राह्मणपुरस्कृतन्मारायिट्टिरिक्केणं
धार्म्मिकन्माराकिलुं मटुळ्ळजातियेल्ला । ३७
यक्षराक्षसगन्धर्व्वोरगपिशाचादि-
दुःखङ्ङळ् नल्कु पलरक्षयुण्टेन्नाकिलु । ३८
निश्चयमब्रह्मण्यमभयङ्करमल्ल
सद्विजार्च्चनयुळ्ळोर्क्किल्लोरु भयमेङ्ङु । ३९
नल्लोरु पुरोहितन् वेणं भूपतियाया-
लल्लल् कूटातवण्णमैहिक पारत्रिक ।
अल्लाय्किल् साधिप्पतिन्नामल्लेन्नरिञ्ञियण ४०
तापत्यागार्थमोरु तापसोत्तमन् तन्ने-
त्तापत्यन्मारे ! निङ्ङळ् गुरुवाय् वरिक्केण । ४१
तापत्यन्मारेन्नतु केट्टु चोदिच्चु जिष्णु
तापत्यन्मारेन्नतु चोल्लुवान् मूल चोल् नी । ४२

चाहते हो तो, हे धनञ्जय ! सुन लो ताकि भविष्य मे कोई वाधा न पैदा हो जाय। आप लोगो को चाहिए कि आप ब्राह्मण के नेतृत्व मे रहे, यद्यपि और जातियाँ भी धर्म का अनुकरण करनेवाली है। यक्ष, राक्षस, गन्धर्व, नाग, पिशाच आदि सुरक्षित लोगो को भी दुःख पहुँचाने वाले है। ब्राह्मण-रहित रहने मे अभय नही है, अच्छे ब्राह्मणो की पूजा करनेवालो को किसी वात का डर नही है। राजा को एक अच्छा पुरोहित चाहिए ताकि ऐहिक और पारलौकिक कार्य विना वाधा के सिद्ध हो जायँ। नही तो उनकी सिद्धि नही हो सकती है, जान लो। हे तपती[1] के सन्तान ! दुःख दूर करने के लिए एक उत्तम तापस को अपना गुरु वनाओ।" 'तापत्य' नाम सुनकर अर्जुन ने कहा—"हम लोगो को तापत्य कहने का कारण वतलाओ"। ३६-४२

---

१ तपती राजा सवरण की पत्नी थी। उसका ही पुत्र कुरु था, जिसके वश में धृतराष्ट्र और पाण्डु दोनो उत्पन्न हुए।

उर्णत्ति राजाविन्टे सङ्कटमेल्लाकण्टु
गणिच्चु बुद्धिकोण्टु कलिपच्चु सचिवनु । २०
राज्यत्तिन्नयच्चितु निश्शेपसैन्यमेल्ला
पूज्यना वसिष्ठनेस्सेविच्चु नरेन्द्रनु । २१
द्वादशदिनंकोण्टु वन्नितु वसिष्ठनु
सादर वीणु नमस्करिच्चु नृपतियु । २२
मेदिनीश्वरन् मुनितन्नोटु मनोरथ-
माधि तीर्त्तीटुवतिन्नायरियिच्चनेर । २३
चेतसि विचारिच्चु भूपति परिताप
द्वादशात्माविन् मकळ्मूलमेन्नरिञ्ञप्पोळ् । २४
अब्जसंभवसुतनाकिय वसिष्ठनु-
मब्जबान्धवन्तन्ने स्तुतिच्चानतुनेरं । २५
चित्रभानवे नम. सूर्याय मार्त्ताण्डाय
मित्राय दिनेशाय भास्वते नमोनम. । २६
वेदरूपाय वेदवेद्याय वेदान्तार्थबोध-
रूपाय जगन्नाथाय नमोनमः । २७
प्रकृतियुटेगुणङ्ङळ्क्कनुरूपमाय-
विकृति पूण्टरूपनामवर्णङ्ङळोटु २८

राजा को जगाया और उनका दु ख देखकर विचार किया, और क्या करना चाहिए—यह निश्चय किया। उन्होने सारी सेना को वापस कर दिया। राजा पूज्य वसिष्ठजी की सेवा करने लगे। बारह दिनो मे वसिष्ठजी पधारे और राजा ने उनके चरणो पर गिर कर सादर नमस्कार किया। राजा ने अपना दु ख दूर करने के लिए मुनिजी को अपनी अभिलाषा सुना दी। विचार करने के बाद वसिष्ठजी ने जान लिया कि राजा का दु ख सूर्य की पुत्री के कारण है। १७-२४ तब अब्जसभव (ब्रह्मा) के पुत्र वसिष्ठ ने सूर्य की स्तुति की। 'चित्रभानवे नम, सूर्याय नम, मार्त्ताण्डाय नम, मित्राय नम, दिनेशाय नम, भास्वते नमोनम। वेदरूपाय नम, वेदवेद्याय नम, वेदान्तार्थ—बोधरूपाय नम, जगन्नाथाय नमोनम'[1]। जो प्रपञ्च

१ इन मन्त्रो और स्तोत्रो मे चित्रभानु को नमस्कार, सूर्य को नमस्कार, मार्तण्ड को नमस्कार, मित्र को नमस्कार, दिनेश को नमस्कार, भास्वान् को नमस्कार, वेदरूप-वाले को नमस्कार, वेद-वेद्य को नमस्कार, वेदान्त के अर्थ के ज्ञान स्वरूपवाले को नमस्कार, जगन्नाथ को बारबार नमस्कार।

मऽ्ञाळतुनेरं नृपनु मनक्कान्पिल्
निऽ्ञशोकं पूण्टु मन्मथविवशनाय् १०
मोहिच्चु वीणु किटन्नीटिनोरनन्तर
मोहनगात्रियाय तपती पोन्नुवन्नाळ् । ११
शीतांशुकुलोल्भवनाकिय नृपोत्तम !
चेतसि वळर्न्नोरु शोकत्तेक्कळञ्ञालु- १२
मेतुमे विषादमुण्टाकरुतेळुनेल्क्क
खेदिप्पान् पात्रमल्ल केवल भवानोट्टु । १३
तपनन्तन्टे मकळाकिय तपति ञान्
तपसा तातन्तन्नेस्सेविक्क विरये नी । १४
जनकन् भवानायिट्टेन्ने नल्कीटुन्नाकि-
लनुवर्त्तन चेय्वनेतुमे मटियाते । १५
ञाननुकूलयल्लेन्नोर्त्तु खेदिक्केण्टा
मानवशिखामणे ! रागमेल्लार्क्कुमोक्कुं । १६
ॲन्नुरचेय्तु मऽ्ञीटिनाळ् तपतियु
मन्नवन्तानु पिन्ने मन्मथविवशनाय् १७
तपति तपतियेन्नधिक परितापाल्
नृपतिवरन् भुवि पतनचेय्तु मोहाल् । १८
सचिवन् तिरञ्ञुवन्नवनीशनेक्कण्टु
कुशलोक्तिकळ्कोण्टु शीतोपचारंकोण्टु १९

गयी । राजा का मन शोक से भर गया और वह कामदेव के वश मे हो गया । जव वह बेहोश होकर गिर पडा, तव मोह करनेवाली तपती उसके पास आयी और वोली—'हे चन्द्रवश के नृपोत्तम ! आप अपने मन का वढा-चढा दु.ख त्याग दीजिए । आपको तनिक भी विषाद नही होना चाहिए, उठिए । आप खेद के बिलकुल पात्र नही है । मैं सूर्य की पुत्री तपती हूँ, आप अपने तप से शीघ्र पिताजी की सेवा कीजिए । अगर पिताजी मुझे आपको दे देगे तो विना हिचक के मै आप के साथ चलूँगी । हे मानवो मे श्रेष्ठ! यह समझकर कि मै अनुकूल नही हूँ, आप खेद न करे । अनुराग सवको पसन्द होता है ।' ९-१६ इतना कहकर तपती अन्तर्धान हो गयी । (तव) राजा पूर्णरूप से मदन के वश मे आ गये और तपती-तपती चिल्लाते हुए बेहोश होकर गिर पडे । तव राजा को ढूँढते हुए मन्त्री आये और उन्होने मगलमय बाते सुनाकर और शीतल उपचार करके

ईवण्णमनुग्रहिच्चयच्चू जनकनु
लावण्याङ्गियु वन्दिच्चनुवादत्तेच्चेय्ताळ् । ३९
तपतियाय दिव्यकन्यका मनोहरी
तपनात्मजामनोरथवु वन्नुकूटि । ४०
कन्यकयोटुकूटि यात्रयु चोल्लि मुनि
मन्नवन् वसिच्चीटु काननभुवि वन्नु । ४१
अब्जलोचनयाय तपतितन्नेक्कनि-
ञ्ञब्जनाशनकुलनाथनु नल्कीटिनान् । ४२
अब्जसायकरसपूण्टवनटवियि-
लब्जकान्तावद वसिच्चीटिनानवळुमाय् । ४३
पिन्ने वैरिकळेयुमोक्कवे निग्रहिच्चु
तन्नुटे नाटु तनिक्कटङ्ङियतुकाल ४४
वसिष्ठन्तन्नेप्पुरोहितनाय् वरिक्कयाल्
सुखिच्चु राज्य वाणु पलनाळ् संवरणन् । ४५
वसिष्ठमुनियुटे वरिष्ठगुणमेल्लाम्
प्रकृष्टमेन्नतोळिञ्ञिनिक्कु पश्यामो । ४६

साथ वहुत दिन सुख से रहो। तुम्हारा एक भुवनविख्यात पुत्र होगा, जिससे तुम्हारे गुण प्रतिदिन वढते जायेगे।' पिता ने इस प्रकार अनुग्रह करके भेजा और सुन्दरी (तपती) ने वसिष्ठ की वन्दना करके अपनी अनुमति दी। इस प्रकार सूर्य की पुत्री मनोहारिणी दिव्यकन्या तपती की इच्छा पूरी हुई। ३३-४० मुनि वसिष्ठ विदा होकर कन्या के साथ उस वन मे आये, जहाँ राजा रहते थे। और कमललोचना तपती को उन्होने चन्द्रवंश के सवरण को दे दिया। और वह मदनरस (शृगार) के प्रभाव मे आकर तपती के साथ पूरा एक सौर वर्ष वन मे रहे। तत्पश्चात् शत्रुओं का निग्रह करके अपने देश को अपने वश मे कर लिया। सवरण ने वसिष्ठजी को अपना पुरोहित वनाया और वहुत दिन तक सुख से अपने राज्य का परिपालन किया। मुनि वसिष्ठ के सभी भले गुण सर्वोत्कृष्ट ही थे, इससे अधिक मै क्या कहूँ ? ४१-४६

प्रपञ्चसृष्टिस्थितिसहारङ्ङळेच्चेय्वान्
विरिञ्चविष्णुरुद्रन्मारायि चमञ्ञीटु २९
परमात्मने परब्रह्मणे नमो नम
परमानन्दात्मने रवये नमो नम । ३०
भास्करन् तानुमरुळ्चेय्ततु वसिष्ठनो-
टाग्रहतन्ने परञ्ञीटुक मटियाते । ३१
ऍङ्किलो चॊल्लीटुवन् वन्न कारणमॊरु
सङ्कटमुण्टु दण्डं पोक्कुवानिल्लतानु । ३२
तिङ्कळ्तन् कुलत्तिङ्कलुळ्ळ संवरणनु
पङ्कजशरताप पार त्वल्पुत्रिमूल । ३३
अवनीश्वरनाय संवरणनु भवा-
नवळेक्कॊटुक्केणमॆन्नतु चॊल्वान् वन्नेन् । ३४
सन्देहमन्तु भवान् कल्पिच्चालॆङ्किल् मम
नन्दने ! तपति नी पोकणं वैकीटाते । ३५
मुन्नमे कल्पिच्चिरिक्कुन्नितु मकळे ञान्
निन्नॆस्संवरणनु कॊटुक्कामॆन्नुतन्ने । ३६
वसिष्ठनरुळ्चेय्युवण्णं नी भूमितन्निल्
वसिक्क पलकाल सुखिच्चु भर्त्तावुमाय् । ३७
जनिक्क तनयनु भुवनप्रसिद्धनाय्
निनक्कु गुणङ्ङळु वर्द्धिक्क दिनतोरु । ३८

की सृष्टि, स्थिति और सहार करने के लिए प्रकृति के गुणो के अनुरूप विकृत होकर नाम, रूप और वर्ण धारण करनेवाले ब्रह्मा, विष्णु और महेश बनता है। उस परमात्मा को, परब्रह्म को नमस्कार है। परमानन्द जिसका स्वरूप है, उस रवि को नमस्कार है।' तब भास्कर (सूर्य) ने वसिष्ठ से कहा—'बिना हिचक के अपनी अभिलाषा बतलाइए'। 'अच्छा तो मै आने का कारण बतलाऊँगा। एक चिन्ता की बात है, जिसे दूर करना है। २५-३२ चन्द्रवश मे समुत्पन्न सवरण का हृदय तुम्हारी पुत्री के कारण मदनताप से सतप्त हो गया है। आप राजा सवरण को अपनी पुत्री दे दे, यह कहने के लिए मै आया हूँ।' तब सूर्य बोले—'अगर यही आप की आज्ञा है तो मुझे कुछ कहना ही नही है। बेटी तपती ! तुम शीघ्र तैयार हो जाओ, तुम्हे सवरण को देने के लिए मैने पहले ही निश्चय किया था। वसिष्ठजी के कहने के अनुसार तुम पृथिवी पर अपने पति के

राजाविनल्ले वेण्टू रत्नभूतङ्डळेल्लां
पूजासाधनङ्ङळे तापसन्मार्क्कु वेण्टू । ९
अन्तु सशयमतु पर्य्येणमो भवान्
चिन्तिच्चालरुतेन्नु चोल्वानिल्लारुमिप्पोळ् । १०
नन्दिनितन्नेयुटन् वन्धिच्चु कोण्टुपोवान्
मन्दप्रज्ञन्मार् नृपभृत्यन्मार् तुटङ्ङुन्पोळ् । ११
नन्दिनियुटेयवयवङ्डळ्तोरु निन्नु
नन्दनन्माराय् पलवशङ्ङळुण्टाय्वन्नु । १२
वल्लवन्मारु शवरन्मारुं शकन्मारुं
वल्लभमेरु यवनन्मारुं किरातन्मार् । १३
सिहळन्मारु द्रमिळन्मारु पुण्ड्रन्मारु
सिहविक्रमवलवान्मारा म्लेच्छन्मारु । १४
कर्व्वुरप्रवरन्मारोटु तुल्यन्माराय
वर्व्वरन्मारुं नल्ल दुर्द्दरन्मारुमेल्लां । १५
अवरु विश्वामित्रन्तन्नुटे पटयुमा-
यवनि नटुङ्ङुमारुण्टाय युद्धत्तिङ्कल् । १६
मून्नुयोजनवळि पाञ्ञतु नृपसैन्य
पोन्नु नन्दिनि मुनितन्नुटे मुन्पिल् वन्नु । १७
पृथ्वीशन् विश्वामित्रन् चित्तत्तिल् निरूपिच्चान्
क्षत्रियवलमतिक्षुद्रमेन्नतु नून । १८
ब्राह्मणतेजोवलं वलमेन्नुरुच्चवन्
तान् मेल्लेत्तपस्सिनु कोप्पिट्टानतुकालं । १९

ने नन्दिनी को बाँधकर ले जाने की तैयारी की, तब नन्दिनी के एक-एक अङ्ग से उसके सन्तान के रूप मे अनेक जातियो के मनुष्य पैदा हुए—पल्लव, यवन, शक, अधिक वल्लभवाले यवन, किरात, सिहल, द्रमिळ, (द्रविड़), पुण्ड्र सिह की शक्ति और शौर्यवाले म्लेच्छ, कर्वुर प्रवरो (राक्षस-प्रवरो) के तुल्य वर्वर अच्छे-अच्छे दुर्द्दर, ये सब विश्वामित्र की सेना के साथ ऐसे लडे कि पृथिवी काँपने लगी। राजा की सेना तीन योजन तक भागी। अन्त मे नन्दिनी मुनि के सामने आकर खडी हुई। राजा विश्वामित्र ने अपने मन में निश्चय किया कि क्षत्रिय का वल अत्यन्त क्षुद्र है, ब्रह्मतेज का वल ही वल है। अतएव वे धीरे-धीरे तप करने की तैयारियाँ करने लगे। ११-१९

वासिष्ठ उपाख्यानं

वासवि चोदिच्चितु गन्धर्व्वन्तन्नोटप्पोळ्
वासिष्ठमुपाख्यान केळ्क्कणमिनिक्कॆङ्किल् । १
विश्वसृक्तनयनु विश्वामित्रनुं तम्मिल्
विश्वान्तकारणमां वैरमुण्टावान् मूल । २
निश्शेषं पर्य्येणमॆन्नु चॊन्नतु केट्टु
विश्वैकधनुर्द्धरन्तन्नोटु चॊन्नानवन् । ३
अॆङ्किलो कन्याकुब्जनाकिय नृपश्रेष्ठन्
मंगलशीलन् गाथियॆन्नु पेरुटयवन् । ४
तन्नुटॆ पुत्रनाय मन्नवन् विश्वामित्र-
नुन्नतनोरुदिनं मृगयाविवशनाय्- ५
च्चॆन्नितु पटयोटु वसिष्ठाश्रमत्तिङ्क-
लन्नु सल्क्कारचेय्तु नृपनॆ मुनिश्रेष्ठन् । ६
अमरावतिपोलॆ चमञ्ञितटवियु-
ममृतोपममाय भोज्यपेयादिकळुं । ७
नन्दितनाय नृपन् विश्वामित्रनुमप्पोळ्
नन्दिनितन्नॆ मम नल्केणमॆन्नु चॊन्नान् । ८

वसिष्ठ का उपाख्यान

अर्जुन ने गन्धर्व से कहा—"मै वसिष्ठ की कथा सुनना चाहता हूँ। ब्रह्मा का पुत्र (वसिष्ठ) और विश्वामित्र मे सारे जगत् का अन्त करनेवाला वैर कैसे हुआ, यह बतलाइए।" यह सुनकर (गन्धर्व ने) विश्व के सबसे श्रेष्ठ धनुर्धर अर्जुन से कहा—"कन्याकुब्ज (कान्यकुब्ज) देश का एक श्रेष्ठ राजा था, उस मगलशील का नाम गाधि (गाधि) था। उनके उत्तम पुत्र राजा विश्वामित्र एक दिन शिकार खेलने की इच्छा के वश मे आकर अपनी सेना के साथ वसिष्ठ के आश्रम पहुँचे। मुनिवर ने वन मे राजा का बहुत सत्कार किया। तब वह वन अमरावती के समान हो गया और वहाँ खाने-पीने के सब पदार्थ अमृत के तुल्य थे। उस समय राजा विश्वामित्र बहुत प्रसन्न होकर बोले—"इस नन्दिनी (कामधेनु) को आप मुझे दे दीजिए। सभी रत्न राजा ही के पास रहने चाहिए, तापस जनों के लिए तो केवल पूजा के साधन चाहिए।" (वसिष्ठ ने उत्तर दिया)—इसमे क्या सदेह है? आपको कहने की आवश्यकता नही। यहाँ तो इनकार करनेवाला कोई नही है।" १-१० जब राजा के मन्दमति नौकरों

नारियुमूरुविङ्कल् मऱच्चाळ् तन्टे गर्भ
नूरु वत्सर तिकञ्ञीटिनकालत्तिङ्कल् । ९
क्रूरन्माराय नृपवीरन्मार् कॊल्वान् चॆन्ना-
रूरुवु पिळन्नुटन् पिऱन्नु कुमारनु । १०
अक्कुमारन्टे तेजस्सतुकण्टवर्क्कॆल्ला-
मक्षिकळ् पॊट्टित्तॆरिच्चन्धन्मारायारल्लो । ११
ञङ्ङळ् चॆय्तपराधमॊक्कवे पॊरुत्तु नी
ञङ्ङळ्क्कु कण्णुण्टाक्कित्तरिकॆन्नवर्कळु १२
कालक्कल् वीणतुकण्टु नल्किनाननुग्रह
भोष्कलल कण्णुकळुमुण्टायि नृपन्मार्क्कु । १३
उग्रमा तपस्सिनु कॊप्पिट्टानौर्व्वन्तानु
निग्रहिच्चीटु लोकमॆल्लामॆन्नतु तोन्नि । १४
भार्ग्गवन्मारामौर्व्वन्तन्नुटॆ पितृक्कळ् व-
न्नाख्यानं चॆय्तारात्मज्ञानमायुळ्ळतॆल्लां । १५
कर्म्मत्तिन्फलं जीवात्मावनुभविच्चीटु
सम्मोहमुण्टा कामक्रोधङ्ङळ्कॊण्टु मेन्मेल् । १६
आरुमे कॊल्लुकयिल्लारेयुमोर्क्कुन्नाकिल्
नेरोटे निरूपिक्किलॊन्नॊळिञ्ञल्ला वरं । १७
शान्तिये नल्लतुळ्ळु नमुक्कु विशेषिच्चु
भ्रान्तियॆक्कळञ्ञु नी शमत्तॆ प्रापिच्चालुं । १८

से ब्राह्मणस्त्रियाँ पर्वतो की गुहाओ मे जाकर छिप गयी। उनमे से एक दिव्य स्त्री गर्भिणी थी। १-८ उसने अपने गर्भ को अपनी जघा मे छिपा दिया। एक सौ वरस के वाद जव क्रूर भूपाल उसे मारने गये तव वालक जघा को फाडकर पैदा हुआ। उसका तीव्र तेज देखकर राजाओ की आँखे फूट गयी और वे सव अन्धे हो गये। तव उन्होने उसके पैरो पडकर कहा--"हमारे सव अपराध क्षमा करके हमको फिर आँखे दे दीजिए"। वालक ने उन पर अनुग्रह किया। इसे झूठ न समझो, उन राजाओ की आँखे फिर ठीक हो गयी। और्व ने उग्र तप करने की तैयारी की। ऐसा प्रतीत हुआ कि वह जगत् का निग्रह कर देगा। और्व के भार्गव पितृगण आये और उन्होने उसको आत्मज्ञान का उपदेश दिया—"जीवात्मा तो कर्म-फल का भोग करेगा ही और काम, क्रोध आदि से उत्तरोत्तर मोह ही होगा। सोचो, कोई किसी को नही मार सकता है। विचार किया जाय तो ऐसी कोई भी वस्तु नही है,

कल्माषपादचरितं

मार्त्तण्डकुलजातन् कल्माषपादनेन्न
धात्रीशन् नायाट्टिनाय् पोयिट्टुवरुन्नेर । १
ऍतिर्त्तुचॆन्नु वसिष्ठात्मजन् शक्तिमुनि
मदत्तोटुर्व्वीशनु नेर्व्वऴि चॊन्नानल्लो । २
नीङ्ङुक वऴियिल्निन्नॆन्नितु नृपश्रेष्ठन्
नीङ्ङु नी वऴि नमुक्कॆन्नितु मुनिश्रेष्ठन् । ३
मार्ग्गं ब्राह्मणन्नु नल्केण भूपालादिकळ्
मार्ग्गमिङ्ङनॆ सनातनमॆन्नतुनेर । ४
कुतिरच्चम्मट्टिकॊण्टटिच्चान् मुनितन्नॆ
क्षितिपालकन्तन्नॆशपिच्चान् वसिष्ठनुं । ५
राजधर्म्मत्तॆ नीक्कि राक्षसधर्म्मं निन्ना-
लाचरिक्कप्पॆट्टतुकारणमिन्नॆमुतल् । ६
राक्षसनाय् पोक नीयॆन्नतु केट्टनेर
मोक्षत्तॆ नृपतियु याचिच्चोरनन्तर । ७
विश्वामित्रोपायत्ताल् किङ्करनाय रक्ष-
स्सप्पोळ् चॆन्नकंपुक्कु भूपतिमनस्सिङ्कल् । ८
अङ्ङनॆ वाळुकालमॊरुनाळॊरु मुनि
तिङ्डीटु पैदाहत्ताल् भूपतियोटु चॊन्नान् । ९

कल्माषपाद का चरित

सूर्य वंश के राजा कल्माषपाद जव शिकार खेलकर लौट रहे थे, तव सामने से वसिष्ठ के पुत्र मुनि शक्ति सीधे आ रहे थे। राजा गर्व के के साथ वोले—"मेरा रास्ता सामने सीधे पडता है।" (और) नृपश्रेष्ठ ने (पुन:) कहा—"रास्ते से हटो।" मुनिश्रेष्ठ ने कहा—"तुम हटो, रास्ता मेरा है। राजा आदियो को चाहिए कि वे ब्राह्मण को रास्ता दे, यही सनातन रीति है।" यह सुनकर राजा ने घोडे के कोडे से मुनि को मारा और वसिष्ठ ने राजा (कल्माषपाद) को शाप दिया—"चूंकि तुमने राजधर्म को त्यागकर राक्षस-धर्म का आश्रय लिया, इसलिए आज से तुम राक्षस हो जाओ।" ऐसा शाप सुनकर राजा ने शाप से मोक्ष की याचना की। उस समय विश्वामित्र के उपाय से एक आज्ञाकारी राक्षस ने भूपति के मन मे प्रवेश किया। १-८ इस स्थिति मे एक दिन एक मुनि ने, जो भूख और

कामक्रोधादिकळे त्यजिच्चीटुकवेण
प्रेमद्वेपादिकळुमावोळ वेण्टीलल्लो । २८
मल्वकुलजातन्मारायुळ्ळोरु जातियल्लो
रक्षसागणमेन्न वात्सल्यमिल्लेन्निल्ल । २९
नल्लतिल्लहिसय्क्कु तुल्यमायोन्नुमेन्नु
चोल्लुवान् वन्नेनिनिस्समर्प्पिक्कण सत्रं । ३०
पुलस्त्योक्तिकळ्केट्टु शक्तिपुत्रनुमितु
पलर्क्कु मतमेङ्किलङ्ङनेतन्नेयेन्नान् । ३१
अग्नियै हिमवान्टे ताळ्वरतङ्कलाक्कि-
यग्निमान् पराशरनतिनाल् वावुतोरु । ३२
दहिच्चीटुन्नु वनमिन्नुमेन्नरिञ्ञालु
सहिच्चीटेण कोप तापसन्मारायवन्ना- ३३
लेन्नेल्लां गन्धर्व्वेशन् चोन्नतु केट्टु पार्त्थन्
पिन्नेयुमवनोट्टु चिरिच्चु चोद्य चेय्तु । ३४
निर्म्मलनाय मुनि वसिष्ठनेन्तुमूलं
कल्मापपादपत्नितन्ने प्रापिच्चतेटो । ३५
चोल्लुवनतुमेङ्किल् केट्टालु धनञ्जय !
चोल्लेळु सूर्यान्वियजातना नृपवीरन् । ३६
कल्माषपादन् शापग्रस्तनाय् पोकुन्नेरं
तन्मनोवल्लभयायुळ्ळोरु सुदेष्णयुं । ३७

वैर वनाये रखना उनके तामसशील का लक्षण है। १९-२७ काम, क्रोध आदि दोषो को त्याग देना चाहिए। राग, द्वेष आदि को जितना हो सके, उतना त्याग देना चाहिए। वह राक्षसजाति मेरे ही वश मे पैदा हुई है, उसके प्रति मेरा वात्सल्य नही है, यह मै न कहूँगा। अहिसा के समान कुछ भी नही है, यह मै कहने आया हूँ। अव यह सत्र समाप्त होना चाहिए। पुलस्त्य की वाते सुनकर शक्ति-पुत्र (पराशर) ने कहा—"अगर वहुतो का यही मत है तो मै उसे स्वीकार करता हूँ।" तव पराशर ने अग्नि को हिमालय के समतल प्रदेश मे रख दिया। यही कारण है कि हर एक पञ्चदशी को वही अग्नि आज भी वन को जलाता है। तापस होकर कोप का नियन्त्रण करना चाहिए।" गन्धर्व की ये सव वाते सुनकर अर्जुन ने हँसकर फिर उससे पूछा—"निर्मल मुनि वसिष्ठ का कल्माषपाद की पत्नी से कैसे सयोग हुआ?" २८-३५ "वह भी कहूँगा, सुन लो हे अर्जुन!

और्व्वनुमतुकेट्टु पितृक्कळोटु चोन्नान्
दुर्व्वारमायुळ्ळमल्क्रोधत्तेयेन्तुचेय्वू ? १९
लोकोपकारार्त्थमायब्धियिलाक्कीटुक
सागर भूमण्डलमाक्रमियातेकोळ्वान् । २०
समत्वं पितृक्कळ् चोन्नतुकेट्टौर्व्वन्तानु
समुद्रतन्निलाक्किक्कत्तन्नुटे कोपाग्निये । २१
शमत्ते प्रापिच्चुग्रतपस्सु कृपयाले
समर्प्पिच्चात्मज्ञानपरनायतु कालं । २२
समस्तलोकङ्ङळुमाश्वसिक्कयु चेय्तु
रमिच्चीटुक परमात्मनि कुमारा नी । २३
तापसन्मारा नमुक्कोक्कयु क्षमिक्केण
कोपमाकुन्नतोट्टुमाकातेन्नरिञ्ञालु । २४
अन्नतु केट्टु पराशरना कुमारनु
पिन्ने राक्षससत्र तुटङ्ङियतिनाले । २५
पेरिके रक्षोगण मरिच्चोरनन्तर
निर्ऋतिनियोगत्ताल् पुलस्त्यनेळुन्नळ्ळि । २६
सामभेदोक्तिकळ्कोण्टुपदेशिच्चीटिनान्
तामसशीलमल्लो वैरानुबन्धं नृणां । २७

जिसकी अपेक्षा शान्ति उत्तम न हो, विशेषत हम लोगो के लिए। इसलिए भ्रम का त्याग करो और शम प्राप्त करो।" ९-१८ यह सुनकर और्व ने अपने पितरो से कहा—"यह जो मेरा असह्य क्रोध है, उसे मैं क्या करूँ ?" तब पितरो ने कहा—"लोकोपकार के लिए उसे समुद्र मे फेक दो ताकि समुद्र भूमण्डल का आक्रमण (उल्लघन) न करे।" पितरो के द्वारा समत्व (शान्ति) का उपदेश सुनकर और्व ने अपने कोपाग्नि को समुद्र मे त्याग दिया। और शान्ति प्राप्त करके और दया के कारण अपने तीव्र तप को अलग रखकर आत्मज्ञान मे तत्पर हो गये। सभी लोगो को आश्वासन प्राप्त हुआ। हे कुमार ! इसी प्रकार तुम परमात्मा ही मे तत्पर रहो। हम तापसो के लिए क्षमा करना ही उचित है तथा क्रोध बिलकुल ही अनुचित है।" यह सब सुनने के बाद भी कुमार पराशर ने राक्षस-सत्र[1] प्रारम्भ किया। बहुत राक्षसो के मरने के बाद निर्ऋति की आज्ञा से पुलस्त्य पधारे। उन्होने साम और भेद की बातो द्वारा उपदेश दिया—"मनुष्यो का परस्पर

१ राक्षसो को मारने की योजनावाला यज्ञ।

आराकनल्लू चौल्लितॆन्नतु केट्टु चौन्ना-
नाराय्कवेण्ट निङ्ङळ् पारमॆन्त्रिङ्ङालुं । २
उल्क्कचकाख्यतीर्थत्तिङ्कलुण्टिरिक्कुन्नि-
तुल्क्कटतपोबलमुळ्ळ मामुनि धौम्यन् । ३
देवलसहोदरन् देवाचार्यनु समन्
सेविच्चीटेणं निङ्ङळवनेयॆन्नालवन् ४
साधिप्पिच्चीटुमल्लो निङ्ङळ्क्कु वेण्टतॆल्लां
खेदिक्कवेण्ट पोकॆन्नवनुमुरचॆय्तान् । ५
अविटॆत्तम्मिल् पलकथयु परञ्ञुपो-
यविटॆक्कण्टुकिट्टि धौम्यना मुनितन्नॆ । ६
श्रीपादङ्ङळिल्वीणु नमस्कारवुं चॆय्तु
तापसेन्द्रनॆक्कूप्पिनिन्नु पाण्डवन्मारु । ७
स्वागतमॆन्नु चौल्लि कुशलप्रश्नङ्ङळु
वेगेन चॆत्तु मुदा सल्ककरिच्चितुनन्नाय् । ८
चन्द्रवशोत्भूतना पाण्डुभूपालेन्द्रनु
पाण्डवन्माराय् ञङ्ङळैवरुमुण्टाय्वन्नु । ९
धार्त्तराष्ट्रन्मारुटॆ दुर्व्यापारङ्ङळ्कॊण्टु
धात्रियिल् वेपच्छन्नन्माराय् सञ्चरिक्कुन्नु । १०
पाञ्चालपुर पुक्कु कल्याण काण्मानुळ्ळल्
वाञ्छयुमुण्टु पार कारुण्यवारान्निधे । ११

कौन हो सकता है ? कृपया बतलाइए !" यह सुनकर गन्धर्व ने कहा--"समझ लीजिए कि आपको ढूँढने की आवश्यकता ही नही। उत्कचक (उत्कोचक) नामक तीर्थ मे उत्कट तपोवल-वाले महामुनि धौम्य रहते है। वे देवल के भाई है और वृहस्पति के तुल्य है। आप लोग उनकी सेवा कीजिए। तब वे आपकी अभिलाषाओ को सिद्ध कर देगे। खेद न कीजिए, उनके पास जाइए।" तब आपस मे तरह-तरह की कथाएँ कहते हुए पाण्डव गये और वहाँ उनको धौम्य मिले। पाडण्व उनके चरणो मे पडे और नमस्कार करके उनके सामने हाथ जोडे खडे हो गये। धौम्य ने उनका स्वागत करके कुशल पूछकर वडे हर्ष से उनका सत्कार किया। १-८ चन्द्रवश के राजा पाण्डु के हम पाँचो पुत्र है और पाण्डव कहलाते है। धृतराष्ट्र के पुत्रो के कुकर्मो के कारण हम पृथिवी मे गुप्त रूप मे सञ्चार कर रहे है। हे कारुण्यसागर ! पाञ्चालनगर जाकर विवाह देखने की हमारे

पिन्नाले खेदंपूण्टु कानने नटक्कुन्पोळ्
नग्नमाय् क्रीडीक्कुन्न भूसुरमिथुनत्तिल् । ३८
पुरुषन्तन्नेक्कोन्नु तिन्नतु कण्टु पत्नि
परितापत्ताल् शपिच्चीटिनाळ् नरेन्द्रनें । ३९
नीयुं निन् पत्नितन्नें तोट्टुकिल् मरिक्कॆन्नान् ।
तीयिल् पाञ्ञुटन् मरिच्चीटिनाळवळ्तानु । ४०
अप्पोळॆ सूर्यवशं मुटियुमॆन्नुकण्टो-
रुल्पलोत्भवात्मजनुल्पादिच्चतुमॆटो । ४१
तन्नुटॆ पुत्रन्मारॆक्कोल्लिच्च विश्वामित्रन्-
तन्नोटु कोन्नुतिन्न कल्माषपादनोटु । ४२
उण्टायीलोरु कोपं वसिष्ठनत्रयुम-
ल्लुण्टायितवर्कळिल् कारुण्यमङ्ङिञ्ञालु । ४३
ऒन्नु मामुनितन्नॆगुरुवाक्किय मूल
वन्नितु सवरणनभ्युदयङ्ङळॆल्लां । ४४

धौम्योपाध्यायलब्धि

अर्ज्जुनन् गन्धर्व्वनोटप्पोळॆ चोद्य चॆय्ता-
निज्जनत्तिनुतक्कोरुत्तमनुपाध्यायन् । १

विख्यात सूर्यवश मे उत्पन्न राजवर कल्मापपाद जव शापग्रस्त होकर घूम रहा था और उसकी प्रियतमा सुदेष्णा भी दु खित होकर उसके पीछे चल रही थी तव नगे होकर रतिक्रीडा करते हुए एक ब्राह्मण मिथुन मे से पुरुष (ब्राह्मण) को मारकर खाते हुए देखकर उसकी पत्नी ने दु ख के कारण राजा को शाप दिया—(जव तुम) 'अपनी पत्नी का स्पर्श करोगे तो तुम्हारी भी मृत्यु हो'। तदनन्तर वह स्वय आग मे कूद पडी। इस शाप से सूर्यवंश की समाप्ति हो जाने के डर से ब्रह्मा के पुत्र (वसिष्ठ) ने राजा की रानी द्वारा सन्तान पैदा किया। जिसने उनके (वसिष्ठ के) पुत्रो को मरवाया, उस विश्वामित्र के प्रति और जिसने मारकर खाया, उस कल्मापपाद के प्रति वसिष्ठ को कोप नही हुआ, (वलिक) उलटे ही उनके प्रति दया आयी। ऐसे महामुनि को अपने गुरु वनाने के कारण सवरण का बड़ा अभ्युदय हुआ। ३६-४४

उपाध्याय धौम्य की प्राप्ति

तब अर्जुन ने गन्धर्व से पूछा—"हम लोगो के लिए योग्य उपाध्याय

पॆरुत्त विल्लुमन्पु चमच्च रंगत्तिङ्कल्
वरुत्ति वन्न नृपन्मारॆल्ला केळ्क्कॆच्चॊन्नान् । ५
विल्लितु कॊलयेटिव्बाणङ्डळिवकॊण्टु
चॊल्लिक्कॊण्टॆय्तु यन्त्र मुरिक्कुन्नवन्तन्टे । ६
वल्लभयल्लो नूनमॆन्नुटॆ भगिनिता-
नल्लातॆ वलं निङ्ङळ् काट्टुकिलप्पोळ्त्तन्नॆ । ७
वल्लाय्मयॆन्नु वरुत्तीट्टुवनल्लाय्किल् आ-
निल्लातॆयाकवेणमॆन्नुटॆयच्छनाणे । ८
पिन्नॆत्तन्भगिनियोटीवण्णमुरचॆय्तु
निन्नॆक्कामिच्चुवन्न मन्नवन्मारॆक्काण् नी । ९
कुरुराजावायुळ्ळ दुरियोधनन्तानु-
मरिके मरुविन नूऱ्नुजन्मारोटुं । १०
शकुनितानु पुनरचलन् वृपकनु
गान्धारराजावुतन्मक्कळॆन्नरिक नी । ११
अश्वत्थामावु भोजन् वृहन्तन् मणिमानु
दन्डधारनु सहदेवनु यज्ञसेनन् । १२
मागधन् मेघसन्धि वीरना विराटनु
शंखनुमुत्तरनुमायवन् पुत्रन्मारुं । १३
वसुधाधिपनाकुमभिभूनृपनॆक्काण्
सुमित्रन् सुकुमारन् वृकनु सत्यधृति । १४

राजाओ के सामने यह घोपणा की—"जो इस धनुप पर डोरी चढाकर इन बाणो को ठीक तरह से लगाकर यन्त्र को तोड देगा, मेरी वहन उसी की पत्नी होगी। अगर आप लोग केवल अपना वल दिखलावेगे तो मै आपकी पराजय समझूँगा, नही तो मेरे पिताजी मुझसे वर्जित हो जायेगे।" १-८ तदनन्तर धृष्टद्युम्न ने अपनी वहन से इस प्रकार कहा—"इन राजाओ को देखो, जो तुम्हे पाने के लिए यहाँ आये है। कुरुओ का राजा दुर्योधन, उसके पास उसके सौ भाई, शकुनि, फिर अचल, वृपक जो, जान लो, गान्धारराजा के पुत्र है। अश्वत्थामा, भोज, वृहन्त, मणिमान्, दण्डधार, सहदेव, यज्ञसेन, मागध, मेघसन्धि, वीर विराट, शख, और उत्तर जो विराट के पुत्र है। अभिभू को देखो, जो एक राजा है, सुमित्र, सुकुमार, वृक, सत्यधृति, रोचमान, सूर्यध्वज, चित्रायुध, श्रेणिमान्, अशुमान्, चेकितान, नील, समुद्रसेन का पुत्र चन्द्रसेन, समर्थ जरासन्ध

निन्तिरुवटियुटे शिष्यर्कळल्लो ञङ्ङळ्
सन्ततं परिपालिच्चीटणं तपोनिधे । १२
मङ्गल वरुत्तुवान् निन्तिरुवटितन्ने
ञङ्ङळ्क्कु पुरोहितनायिरुन्नरुळेण । १३
अन्नेरं मुनीन्द्रनुमुळ्ळिलेक्कणुकोण्टु
नन्नायक्कण्टितु महाभारतोदन्तमेल्लां । १४
अङ्ङनेतन्नेयोरु सशयमतिनिल्ल
निङ्ङळ्क्कु पुरोहितन् ञान्तन्ने नटन्नालु । १५

पाञ्चालीस्वयवर

धौम्यनेप्पुरोहितनाय् वरिच्चवर्कळु
ब्राह्मणरोटुचेर्न्नु तापसवरनोटु । १
दक्षिणपाञ्चालमां नगरमकपुक्कु
रक्षिप्पान् माताविनेक्कुभकारालयत्तिल् । २
शिक्षिच्चु परञ्ञाक्किग्गोपुरमकपुक्का-
रक्षणं वन्नु वन्नु निरञ्ञु राजाक्कन्मार् । ३
वेण्माट तोरुमेरेस्सम्मानिच्चितु धृष्ट-
द्युम्ननु नृपन्मारेयिरुत्ति यथायोग्य । ४

मन मे वड़ी अभिलाषा है । हम लोग तो आप के शिष्य है, हे तपोनिधि ! इसलिए आप निरन्तर हमारा परिपलान करे । हमारे हित के लिए आप ही हमारे पुरोहित वनकर हमारा शासन कीजिए । तव मुनिवर ने अपनी भीतरी दृप्टि से महाभारत के सभी वृत्तान्त देखे । (और तब बोले) 'वैसा ही होगा, सन्देह नही । मै ही आपका पुरोहित हूँ, आप जा सकते है । ९-१५

पाञ्चाली का स्वयवर

धौम्य को पुरोहित चुनने के वाद पाण्डव उनके और ब्राह्मणो के साथ दक्षिण पाञ्चालनगर पहुँचे, जहाँ उन्होने माता को एक कुम्हार के घर मे रक्षा के लिए अपेक्षि निर्देश देकर ठहराया और फिर गोपुर के अन्दर प्रवेश किया। उस समय आये हुए भूपालो से वह स्थान भर गया । धृष्टद्युम्न ने राजाओ को (उनके लिए नियत) अपने-अपने भवनो मे यथायोग्य सत्कार करके वैठाया । एक वडे धनुपवाण को सजे हुए रगमच पर रखवाकर आये हुए

दमघोपात्मजनिल्लवनोटोत्तोरारु-
मग्निकळ् मून्नुपोले दक्षिणाशाधीशन्मार् ।
पाण्ड्यनु केरळनु चोळनुमट्टुकाण् २६
वृष्णिकळाय नरवीररेक्कण्टायो नी ।
कृष्णनालनुदिनं पालितरिवरेल्लां । २७
शुक्लवर्ण्णवु नीलवस्त्रवु धरिच्चति-
शक्तिमाननन्ततेजोमयन् कामपालन् । २८
मद्यपानवु चेय्तु मत्तनाय् मधुगिरा
चित्तवुमेतिर्प्पवर्तम्मेयु पोटिप्पवन् । २९
वल्लवीवल्लभना मल्लारि कल्याणात्मा
तुल्यमिल्लात परन्पुरुषन् वासुदेवन् । ३०
सांवनु चारुदेष्णन् सारणन् गदन्तानु-
मक्रूरन् सत्यकनु सात्यकि युयुधानन् । ३१
पृथुवु विपृथुवु हार्द्दिक्यन् कृतवर्म्मा
कह्वनु समीकनु सारिमेजयन्तानुं । ३२
झिल्लियु दानपति पिगलकनुं पिन्ने
कीर्त्तिमानुशीनरन् पार्त्थिवन् विढूरथन् । ३३
मट्टु काण् पल नृपन्मारिरिक्कुन्नतिवर्
मुट्टु निन् गुणं केट्टु वन्नारेन्नरिञ्ञालुं । ३४
इवरिलेकनिन्नु यन्त्रत्ते मुरिक्कुन्न-
तवने मालयिट्टुकोळ्ळुक नीयुं वाले ! । ३५

तीन भूपाल पाण्डच, केरल और चोल को पास ही मे देखो । १९-२६ क्या नरवीर वृष्णियो को तुमने देखा ? वे प्रतिदिन कृष्ण की रक्षा मे रहते है । नील वस्त्र धारण करता हुआ, गोरे-गोरे रङ्ग का शक्तिमान् अनन्त तेजवाला कामपाल (वलराम), जो मद्य पीकर मत्त रहता है और शत्रुओं का नाशक है । वल्लवीवल्लभ मल्लारि कल्याणात्मा निरुपम पर पुरुष वासुदेव । साव, चारुदेष्ण, सारण, गद, अक्रूर, सत्यक, सात्यकि, युयुधान, पृथु, विपृथु, हार्दिक, कृतवर्मा, कह्व, समीक, सारिमेजय, झिल्लि, दानपति, पिंगलक, कीर्त्तिमान्, उशीनर, पार्थिव और विढूरथ । और भी राजाओ को देखो, जो यहाँ वैठे हुए है । जान लो कि ये सव तुम्हारे गुण सुनकर आये है । हे वाले! इनमे से जो आज यन्त्र तोड़े, उसी को वरमाला पहनाओ । २७-३५ इस प्रकार समझाकर धृष्टद्युम्न ने परदा हटाया और

रोचमाननु सूर्यध्वजनुं चित्रायुधन्
श्रेणिमानशुमानु चेकिताननु नीलन् । १५
समुद्रसेनपुत्रनाकिय चन्द्रसेनन्
समर्त्थन् जरासन्धन्तानु तन् पुत्रन्मारुं । १६
दण्डनु सुदण्डनु पौण्ड्रकवासुदेवन्
ताम्रलिप्तनु भगदत्तनु कलिगनु । १७
पत्तनाधिपन्तानु माद्रराजावाय्मेवु
शल्यरुमरिके काणवन्टे पुत्रन्मारु । १८
रौरव्यन्तानुं रुग्मागदनां तनयनु-
मवन्तन्ननुजनुमरिके रुग्मरथन् । १९
भूरियु भूरिश्रवा शलनुमेंन्नु मून्नु
पुत्रन्मारोट्टुकूटेक्कण्टतु सोमदत्तन् । २०
कांबोजन् सुदक्षिणन् दृढधन्वावुतानु
कौरवन् बृहल्व्बलन् शिबियु सुषेणनु । २१
शूरनामौशीनरन् सैन्धवन् जयद्रथन्
बृहल्क्षेत्रनु बृहद्रथनुं बाल्हीकनु । २२
कितवन् भगीरथन् वीरवानुलूकनुं
कोसलाधिपन् मत्स्यराजनु श्रुतायुस्सुं । २३
अरिके चित्रागदनङ्ङेतु शुभागद-
नंगराजावु कर्ण्णन्तन्मकन् वृषसेनन् । २४
बृहल्कीर्त्तियुं बृहल्व्बलनु दुर्ज्जयनु
बलवान् चेदिराजावाकिय शिशुपालन् । २५

और उसके पुत्र दण्ड, सुदण्ड, पौण्ड्रक वासुदेव, ताम्रलिप्त, भगदत्त, कलिग देश का राजा, मद्रराज शल्य और उसके पास उसके पुत्रो को देखो। ९-१८ रौरव्य, उसका पुत्र रुग्माङ्गद, उसके पास उसका अनुज रुग्मरथ। भूरि, भूरिश्रवा, शल, इन तीन पुत्रो के साथ सोमदत्त को देखो। काम्बोज, सुदक्षिण, दृढधन्वा, कौरव, वृहद्वल, शिबि, सुषेण। शूर औशीनर, सैन्धव, जयद्रथ, वृहत्क्षेत्र, वृहद्रथ, वाल्हीक। कितव, भगीरथ, वीरवान्, उलूक कोसलाधिप, मत्स्यराजा, श्रुतायु। उसके पास चित्राङ्गद, कुछ दूर पर शुभाङ्गद, अङ्गराज कर्ण और उसका पुत्र वृषसेन। वृहत्कीर्ति वृहद्वल, दुर्जय, शक्तिशाली चेदिराज शिशुपाल जो दमघोष का पुत्र है और जिसके तुल्य कोई भी नही है। दक्षिण दिशा के तीन अग्नियो के समान

विद्याभिजात्यवित्तसौन्दर्यौदार्यसार-
स्याद्यङ्ङळ् गुणङ्ङळ् वेव्वेऱे चिन्तिक्कुन्नेरं । ४६
इन्निवळिनिक्कनुरूपयेन्नतुतन्ने
वन्नुकूटीट्टुमत्ते निर्ण्णयमेल्लां कोण्टुं । ४७
कुलवु महिमयु विद्ययु पराक्रम-
बलशीलार्त्थराज्यसमृद्धि भण्डारवु । ४८
रूपयौवनगृहसेनयु पटवीटु
शोभयु गुणजालमोरोन्ने काणुन्तोऱु । ४९
पाञ्चालि नमुक्कनुरूपयेन्नतिन्नोरु-
चाञ्चल्यमुण्टाय्वरा शत्रुक्कळायुळ्ळोर्क्कु । ५०
अन्योन्यं सुहृत्भावं मुन्नमेयुळ्ळवर्क्कु
कन्यकानिमित्तमायुळ्ळिल् वाच्चितु वैरं । ५१
सर्व्ववुमुपेक्षिच्चु पाञ्चालपुत्रियाय
दिव्यकन्यकतन्नेक्कोण्टुपोय्क्कोळ्वानिप्पोळ् ५२
ॲन्तोरु कळिवेन्नतोळिञ्ञु नृपन्मार्क्कु-
चिन्तयिल्लेतु मट्टु सन्ततं मनक्काम्पिल् । ५३
देवकळ् विमानङ्ङळ्तोऱुमाकाशमार्ग्गे
देविकळोटु वन्नु निऱञ्ञु मुनिकळुं । ५४
हरियुं हलियु वृष्ण्यन्धकभोजन्मारु-
मरिके यदुकुलनृपतियोटु तत्र । ५५

अगर अलग-अलग देखे जायँ तो सब इसी निर्णय पर पहुँचेगे कि यह कन्या मेरे ही अनुरूप है । कुल, महिमा, विद्या पराक्रम, बल, शील, अर्थ, राज्य-समृद्धि, भण्डार, रूप, यौवन, सेना, सेनालय, शोभा—ये सब गुण अगर एक-एक करके देखे जायँ तो पाञ्चाली मेरे ही अनुरूप है, इसमे मेरे शत्रुओ का भी मतभेद न होगा । जिनका पहले परस्पर सुहृद्भाव था, उनमे अब कन्या के कारण वैर पैदा हो गया । ४५-५१ और सभी बातो की उपेक्षा करके अब एक ही चिन्ता राजाओ के सिर पर सवार हो गयी कि "इस दिव्य कन्या को ले जाने का क्या उपाय है, और कोई चिन्ता उन्हे न रही । देवियो के साथ विमानो मे बैठकर आकाश-मार्ग से बडी सख्या मे देवगण तथा मुनिगण आये । वहाँ कृष्ण, बलराम, वृष्णि, अन्धक, भोज थे और उनके साथ यदुकुल के राजा भी थे । भस्म के अन्दर छिपे अगारो के समान ब्राह्मणो का रूप धारण करनेवाले पाण्डवो को माधव (कृष्ण)

धृष्टद्युम्ननुमेवं पऱञ्ञु बोधिप्पिच्चु
पेट्टेन्नु मूटुपटमेटुत्तु पिन्वाङ्ङिनान् । ३६
अन्नेरं काणायवन्नु कन्यकनिमित्तमाय्
मन्नवर् काट्टियोरु गोष्ठिकळ् पऱयुन्पो- ३७
ळिन्नवयन्नु कामदेवनेयऱियावू
वन्निंतङ्ङवळ्तन्नाल् वेन्टुन्नतवक्कॆल्लां । ३८
मकुटमणिमय कुण्डलागदहार-
कटककटिसूत्रवलयादिकळाकु- ३९
मखिलविभूषणलेपनाबरङ्ङळाल्
परिशोभितन्माराय् स्वायुधपाणिकळाय् । ४०
छत्रचामरव्यजनादिकळ्कोण्टु शोभि-
च्चेत्रयु मनोहरमाय वेषवु पूण्टु । ४१
तङ्ङळ्तङ्ङळ्क्कुळ्ळोरु विरुतु वाद्यङ्ङळुं
मङ्ङीटार्तोरु चतुरंगवाहिनियोटुं । ४२
पार्त्थिवेन्द्रन्मारेल्लामास्थया कोप्पिट्टुळ्ळल्
प्रीत्या वन्नकंपुक्कु कल्याण साधिप्पानाय् । ४३
स्पर्द्धयु परस्पर वर्द्धिच्चितेल्लावक्कुं
श्रद्धयुमोरुपोले वर्द्धिच्चु मनक्कान्पिल् । ४४
क्रुद्धिच्चु नोक्कीटिनारन्योन्यं पण्टेयुळ्ळल्
स्निग्धन्मारायुळ्ळवर्तङ्ङळुमतुकालं । ४५

वह अलग हो गया। उस समय उस कन्या के कारण राजाओ की तरह-तरह की चेष्टाएँ दिखायी दी। वे क्या-क्या थी, यह केवल कामदेव ही जानता है और इसका वर्णन करने के लिए (वही समर्थ है)। कन्या के कारण उनको सभी आवश्यक वाते सूझी। मुकुट, रत्नो के कुण्डल, बाजूबन्द, हार, ककण, मेखला, वलय आदि समस्त आभूषणो से, लेपन और वस्त्रों से परिशोभित, हाथ मे अपने-अपने आयुध लिये हुए, छत्र, चँवर, पखा आदियों से अति मनोहर वेष धारण किये हुए, अपने-अपने वाद्य वजाते हुए, अपनी तेजस्वी चतुरग सेना के साथ सभी भूपाल वड़ी आस्था के साथ तैयार होकर वड़े हर्ष से विवाह देखने के लिए प्रविप्ट हुए। सवकी परस्पर स्पर्द्धा वढ़ी, साथ-साथ भीतर श्रद्धा भी वढी। ३६-४४ जो पहले आपस मे प्रेम करते थे, वे अव एक-दूसरे को क्रोध की दृष्टि से देखने लगे। (वे सोचने लगे) "विद्या, कुल, धन, सौन्दर्य, औदार्य, सारस्य आदि गुण

विल्लुं वेंच्चतुनेरं नाणिच्चु वाङ्ङिप्पोन्ना-
नल्लल्पूण्टप्पोळत्तन्ने पोयवन् पुरिपुक्कान् । ६५
शल्यरुं चेन्नु कोलच्चीटुवान् मुलगमात्र
मेल्लवेयटुत्तप्पोळ् साद्ध्यमल्लेन्नु कण्टु ।
विल्लुं वेंच्चटङ्ङिनानन्नेरं वैकर्त्तन- ६६
नेटुत्तु रोममात्रमटुत्तु गुणमप्पोळ्
पटुत्व कुरञ्ञवन् मरिञ्ञुवीणीटिनान् । ६७
इत्तरं विल्लाळिकळाकिय नृपेन्द्रन्मा-
रत्तल्पूण्टेल्लावरुं पिन्नेयङ्ङटङ्ङिनार् । ६८
भूसुरजनं पृत्थ्वीनायकन्मारेप्परि-
हासमोटोरोतरं भर्त्सिच्चुतुटङ्ङिनार् । ६९
कूटिय नृपन्मारिल् केवलमोरुवनुं
पाटवमेरुमेन्नु वन्नील चित्रं चित्र । ७०
विल्लितु कोलय्क्कायीलावर्कुमे नृपेन्द्रन्मा-
रेल्लारुमोरुपोले वन्नतुं नन्नु नन्नु । ७१
तुल्यन्मारत्रेयिवरेल्लारु नल्लरल्लो
वल्लभत्तिनु कुरविल्लोरुवर्क्कुमेटो । ७२
कल्लुकळ् कनकवुमेन्तिनु चुमक्कुन्नि-
तल्लल्पूण्टेल्लुनुरुङ्ङीटुवान् सुयोधनन् । ७३

लज्जा के कारण हट गया और वडे दु:ख के साथ अपने नगर चला गया। ६१-६५ तव शल्य वाण सन्धानने गया। धनुप को तिल-मूँग भर (तिल-भर) उठाने पर उसे प्रतीत हुआ कि यह काम उसके लिए असाध्य है। अतएव वह धनुप रखकर हट गया। तदनन्तर वैकर्त्तन उठा और डोरी को वाल-भर ही खीचने पर पटुत्व (कौशल) कम होने के कारण वह भी उलटकर गिर पडा। इस प्रकार सभी धनुर्धर भूपाल हार गये और दु:खित होकर दव गये। तव ब्राह्मण लोग राजाओ की तरह-तरह की हँसी उडाने लगे। इकट्ठे हुए इतने राजाओ में एक भी पर्याप्त पटु (चतुर) न निकला! कैसा आश्चर्य है! इन राजाओ में कोई भी धनुप सधान न कर सका! सव वरावर निकले! शावास! ये सभी भले भूपाल परस्पर तुल्य है! प्रेम मे तो कोई भी कम नही है। यह सुयोधन क्यो मणि और काञ्चन का वोझ उठाता है, (क्या) अपनी हड्डी तुडवाने के लिए? ६६-७३ जरासन्ध तो अपनी प्रतिष्ठा और दाँत खोकर भाग

भूतितन्नुळ्ळिल् मेवु कनल्क्कट्टकळ्पोलें
भूदेवन्मारायमेवुं पाण्डुनन्दनन्मारें
माधवनरिञ्ञु तन्नग्रजनुतन्नेंक्काट्टि- ५६
च्चेतसि सन्तोष मुण्टायितु मुसलिक्कुं ।
वाद्यनादङ्ङळ्कोंण्टु लोकवु मुळङ्ङुन्नु
पार्त्थिवन्मारुं मदनार्त्तन्मारायारल्लो । ५७
विल्लेंटुत्ताक्कुं कौंलय्क्कायील नृपन्माक्कुं
वल्लातें तम्मिल् तम्मिल् नोक्कियङ्ङटङ्ङिनार् । ५८
चेदीशनाय दमघोषजन् शिशुपालन्
मेदिनीपतिवीरन् वेगमोंटेंळुनेट्टु । ५९
विल्लेंटुत्ताशु कौंलच्चीटुवानोरुम्पेंट्टु
मेंल्लवे मापमात्रमट्टुत्तोरनन्तरं । ६०
कौंलच्चु कूटाञ्ञगं वियर्त्तु वशकेंट्टु
निलत्तुवच्चु वाङ्ङिप्पोयवनटङ्ङिनान् । ६१
वन्पनां जरासन्धन् कोंप्पिट्टु चेंन्नु नेरे
गभीरभावत्तोटुं विल्लतु कौंलप्पानाय् । ६२
अेंट्टुत्तु वळच्चोंरु कटुकिन्मणिमात्र-
मट्टुत्तनेरं दूरें मरिञ्ञुवीणीटिनान् । ६३
अेंल्लल्ला नुरुङ्ङित्तान् मुळङ्कालतु पोंट्टि-
प्पल्लेंल्लामिळकिवन्नोरु चोरयु तुप्पि । ६४

ने पहचान लिया और अपने वड़े भाई को दिखलाया, जिससे मुसली (वलराम) को वड़ा हर्ष हुआ। वाद्यो की ध्वनि से सारा ससार गूँज उठा। सभी राजागण मदन से पीडित हो गये। पर वे धनुप लेकर उस पर वाण न चढा सके, वे आपस मे एक-दूसरे का मुँह देखकर रह गये। चेदिराजा, दमघोप का पुत्र, भूपालों मे वीर शिशुपाल जल्दी से उठा और धनुप पर वाण चढाने के लिए तैयार हुआ। धीरे-धीरे उसके पास गया। ५२-६० परन्तु वाण न चढा सका, उसको पसीना आ गया। लाचार होकर उसने धनुप रख दिया और अपने स्थान पर जाकर वैठ गया। फिर शक्तिशाली जरासन्ध वडी तैयारी करके गभीरभाव से वाण संधानने गया। वह धनुप को रत्ती-भर भी न झुका पाया था कि उलटकर गिर पड़ा। उसकी सभी हड्डियाँ दव गयी, पैर टूट गये, सभी दाँत हिल गये और (वह) खून थूकने लगा। उसने धनुप रख दिया, वह

अकृत्यमिदमिदं कृत्यमेन्तुळ्ळतोन्नु
प्रकृत्या बलहीननामिवन्नरिविल्ल । ८४
बालकननागतश्मश्रुवां वटुविनु
कालदेशावस्थादि भेदबुद्धियुमिल्ल । ८५
शल्यकर्णादिकळाल् साध्यमल्लातेयुळ्ळ
विल्लितु कोलचेय्तु यन्त्रत्ते मुरिप्पानाय् । ८६
विल्लोरुनाळु तोट्टिट्टिल्लात भूमिदेवन्
निर्लज्जन् तुनिञ्ञतुमेत्रयुमन्धकारं । ८७
अस्त्रज्ञन्मारा धनुर्व्वेदपारगन्मारि-
क्षत्रिय वीरन्मार्क्कु परिहासत्तिनुळ्ळु । ८८
नम्मळारोक्कप्परिहास्यन्माराय् वन्नीटु
दुर्म्मदमेरुं द्विजबालक भ्रान्तुमूल । ८९
ब्रह्मचापल्य वलुतेन्नतुकोण्टु नामि-
ब्रह्मवादियेप्परञ्ञटक्कीटुकवेण । ९०
साधिक्कुमिवन्तनिक्केङ्किलु भूपालन्मार्
बाधिक्कु नम्मेप्पुनरेन्तिनुवेण्टियतु । ९१
पोण्णिनेयिवन्नु किट्टीटुकयिल्लयल्लो
निर्ण्णयं यन्त्रमेय्तु मुरिच्चालेन्नाकिलुं । ९२
दोपमेयेल्ला कोण्टुं शेपमुळ्ळतु नम्मे
द्वेषवुमुण्टाय्वरुं भूपतिवीरक्केल्ला । ९३

योग्य है, क्या नही है--इस बात का पता नही है। इस बिना मूंछ के बालक को काल, देश, अवस्था आदि के भेद का बोध नही है। शल्य, कर्ण आदि के लिए भी असाध्य इस धनुप का सन्धान करके यन्त्र तोड़ने के लिए कभी धनुष का स्पर्श भी न करनेवाला यह निर्लज्ज ब्राह्मण जो उद्यत हो गया है, यह अन्धेर है। यह अस्त्रज्ञ और धनुर्वेद के पारगत क्षत्रियवीरो के उपहास का पात्र होगा, और क्या हो सकता है? ८१-८८ इस दुर्मदवाले ब्राह्मण बालक के कारण हम सब की हँसी उडायी जायेगी। इसका यह चापल्य बहुत अधिक बढ गया है इसलिए हमलोगो को चाहिए कि हम इस ब्रह्मवादी को बैठावे। यह काम इससे हो भी जाय तो भी भूपाल हम लोगो की हर चीज़ मे बाधा डालते रहेगे। अगर यह निशाना मारकर यन्त्र तोड देगा तब भी कन्या इसको मिलनेवाली नही है। हर एक दृष्टि से इसमे दोप ही दिखायी देता है। ऊपर से

पोयितु जरासन्धन् नाणवु कॆट्टु दन्तं
पोयितु महाजनमारुमेयरियाय्वान् । ७४
इत्तरं बहुविधं ब्राह्मणरोरो दिशि
पृत्थ्वीशन्मारॆ प्रशंसिच्चाक्षेपिक्कुं नेरं । ७५
उत्तमनाय पार्त्थनुत्थानं चॆय्तु चॊन्नान्
पृत्थ्वीदेवन्मारॆल्लां केळ्क्केणमॆन्टॆ वाक्यं । ७६
क्षत्रियवीरन्मार्क्कु विल्लितु कॊलयेटि-
श्शस्त्रङ्ङळ्कॊण्टु यन्त्रं छेदिप्पानरुतॆङ्किल् ७७
कन्यकतन्नॆ विवाह चॆय्कॆन्नतुमिल्ल
निर्ण्णयमॆन्नुवन्नाल् नन्नल्लितॊन्नुकॊण्टु । ७८
मन्नवन्माराल् साध्यमल्लॆन्नुवरिकिल् ना-
मॊन्नुण्टु वेण्टु पुनरेतुमे मटियातॆ । ७९
नम्मळारॆट्टुत्तु विल् कॊलच्चु यन्त्रं भेदि-
च्चिम्मधुमॊळिविवाहं कळिक्कयु वेणं । ८०
निर्ज्जरपतिसुत नर्ज्जुननतुनेरं
विज्वरमनसा वाणासनं सज्जं कर्त्तु ८१
सज्जनसभ वन्दिच्चुत्थानं चॆय्तीटिना-
नुज्ज्वलिच्चग्निज्वाल सत्वरं पॊङ्ङु पोलॆ । ८२
विप्रन्मारतुनेरं मेल्प्पुटवयु वीशि
विभ्रम द्विजकुमारनॆन्तुण्टावानॆन्नार् । ८३

गया ताकि जनता मे कोई न जान ले ! जव इस प्रकार ब्राह्मण जगह-जगह राजाओ पर आक्षेप और (उनका) परिहास कर रहे थे, तव उत्तम अर्जुन उठकर वोला— ब्राह्मण लोग मेरी वात सुन ले! अगर क्षत्रिय वीर इस धनुष का सन्धान करके शस्त्रो द्वारा यन्त्र नही तोड़ सकते है, तो निस्सन्देह कन्या का विवाह न होगा, जो किसी भी दृष्टि से ठीक नही है। अगर राजाओ के द्वारा यह काम नही हो सकता तो फिर हम लोग एक काम अवश्य करे। हम लोगो मे से कोई धनुष का सन्धान करके यन्त्र तोड़कर इस कन्या से विवाह करे। ७४-८० उस समय इन्द्र के पुत्र अर्जुन विना घवडाये सज्जनसभा की वन्दना करके धनुष सधानने के लिए इस प्रकार उठे जैसे एक उज्ज्वल अग्निज्वाला उठती हो। तव ब्राह्मणो ने अपना उत्तरीय हिलाते हुए कहा—'इस ब्राह्मणकुमार को यह मोह कैसे हुआ ? स्वभाव से ही दुर्वल इस ब्राह्मणकुमार को—क्या करने

ईवण्णं वहुविध ब्राह्मणर् पऱयुन्पोळ्
कार्व्वर्ण्णन्मुखांवुज पार्त्तु देवेन्द्रात्मजन् । १०३
अग्रजन्मारोटनुवादवुकोण्टु माद्रे-
याग्रजन् कनिष्ठन्मार्तम्मेयु कटाक्षिच्चान् । १०४
रगत्तें प्रवेशिच्चु चेय्तुटन् प्रदक्षिण-
मंगजारातिशिष्यशिष्यना द्रोणाचार्यन् । १०५
तन् कऴलिण भक्त्या वन्दिच्चु नमस्करि-
च्चंगजन् करिन्पुविल्लेटुत्तु कोलयेटि । १०६
वाणङ्ङळञ्चु तोटुत्तेय्ततुपोले पार्त्थन्
काणिकळ् चित्र चित्रमेन्नु चोल्लीटुनेर । १०७
ऍटुत्तु चाप पोटि तुटच्चु कोलच्चुटन्
तोटुत्तु वाणमञ्चु वलिच्चु यन्त्रमेय्तु । १०८
मुऱिच्चु जितश्रम निन्नीटुन्नतुनेरं
करुत्तु भावं नाना धरित्रीशन्मार्क्केल्लां । १०९
पुष्पवृष्टियुं चेय्तार् शिरसि देवगण-
मप्पोऴे पाञ्चालियुं मालयुमिट्टीटिनाळ् । ११०
चिल्पुरुषानुग्रहाल् सल्प्पुरुषेन्द्रन् पार्त्थन्
क्षिप्र द्रौपदियोटु ब्राह्मणरोटु कूटि । १११
निर्ग्गमिच्चितु रङ्गत्तिङ्कल्निन्नुटन् नृप-
वर्ग्गवु क्रुद्धिच्चितु वेरुते वेरुप्पोटे । ११२

रहे थे तव अर्जुन ने पहले श्रीकृष्ण का मुखकमल देखा, फिर अपने वड़े भाइयों की आज्ञा लेकर अपने छोटे भाइयो को भी देखा। फिर प्रदक्षिणा करके रंगमच मे प्रवेश किया। शिवजी के शिष्य के शिष्य द्रोणाचार्य के चरणकमलो की भक्ति के साथ वन्दना करके पार्थ (अर्जुन) ने धनुष उठा लिया, फिर पाँचो वाणो का सन्धान कर के चलाया। देखनेवालो ने 'आश्चर्य, आश्चर्य' चिल्लाया। फिर धनुष को लेकर, सन्धान कर, कामदेव के अपने गन्ने के चाप पर पाचो वाण चढ़ाकर चलाने के समान पाँचो वाणों को लगाकर यन्त्र पर निशाना मारकर उसे तोड डाला। अपना उद्देश्य पूरा करके जव वे खडे हो गये तव अर्जुन के प्रति सभी राजाओ का भाव कलुपित हो गया। १०३-१०९। उस समय एक ओर तो देवो ने पुष्पवृष्टि की और दूसरी ओर पाञ्चाली (द्रौपदी) ने अर्जुन को माला पहनायी। चित्पुरुष (श्रीकृष्ण) के अनुग्रह से सत्पुरुषो मे श्रेष्ठ अर्जुन द्रौपदी और व्राह्मणो के साथ रङ्गमञ्च से वाहर निकल आये।

इत्तरं चिलर् परञ्ञीटिननेरं पुन-
रुत्तरमतिल् चिलर् सत्वर चोल्लीटिनार् । ९४
वेदङ्ङळ् कोण्टु साद्ध्यमल्लातेन्तोन्तुळ्ळु
वेदज्ञन्मार्क्कु किञ्चिल् कार्यमिल्लसाद्ध्यमाय् । ९५
अत्रयुं श्रीमानिवन् नाकेन्द्रसमनल्लो
सुस्थिरन् पीनस्कन्धनाजानुबाहुयुगन् । ९६
विस्तृतवक्ष.स्थलन् वृत्तोरुद्वन्द्वधरन्
शक्तिमान् ब्रह्मक्षत्रतेजस्वी युवावेटं । ९७
शक्तियिल्लाय्किलितु भाविक्कयिल्लयेन्नुं
सिद्धमल्लाय्कतन्नेयल्लेन्नु धरिच्चालुं । ९८
ब्राह्मणर्क्कसाद्ध्यमायिल्लोरु कर्म्मङ्ङळु
साम्यमिल्लवरुटे माहात्म्यत्तिनुमेतुं । ९९
जल मारुत फलमूलाहारन्मारिवर्
बलहीनन्मारतुकोण्टेन्नु निनय्क्केण्टा । १००
बलमाकुन्नतेल्लां ब्रह्मतेजस्सिन् बलं
फलमिल्लब्रह्मतेजस्विनां बल कोण्टुं । १०१
ब्राह्मणनोन्नुकोण्टुमवमन्तव्यनल्ल
कार्म्मुकवेदोपदेशङ्ङळुमवर्क्कत्रे । १०२

राजाओ का हम लोगो के प्रति द्वेष हो जायगा। जब कुछ लोगो ने इस प्रकार कहा, तब औरो ने इसका तुरन्त यो उत्तर दिया— ८८-९४ "ऐसी कौन वात है जो वेदो के द्वारा असाध्य हो ? वेदज्ञो के लिए कोई भी काम कठिन नही है। यह वालक अत्यन्त श्रीयुक्त है, इन्द्र के समान है, सुस्थिर, पीनस्कन्ध और आजानुवाहु है। इस युवक का वक्ष स्थल विस्तृत है, इसके जाँघ मोटे है, यह शक्तिमान् है, ब्रह्म और क्षात्र दोनो तेजो से युक्त है। उसके शक्ति न होती तो इस कार्य के लिए उद्यत न होता, यह काम इससे न होगा, ऐसा न समझिए। कोई काम नही है जो ब्राह्मणो के लिए असाध्य हो उनके माहात्म्य के समान कुछ नहीं है। हाँ, जल, वायु, फल, भूल आदि ही इनका आहार होता है, पर इस कारण इनको वलहीन न समझिए। इनका वल इनके ब्रह्मतेज का वल है, और ब्रह्मतेजवालो के लिये (शारीरिक) बल से कोई प्रयोजन नही है। किसी भी तरह ब्राह्मणो की अवज्ञा न होनी चाहिए, उनके पास अस्त्र-ज्ञान और वेदज्ञान, दोनो है।" ९५-१०२ जब ब्राह्मण इस प्रकार की वाते कर

सन्नद्धन्मारायतुकण्टु पाञ्चालनृपन्
चेन्नु भूदेवन्मारे शरण प्रापिच्चप्पोळ् । ८
विप्रवेषवु पूण्टु तत्सभामध्ये मेवु-
मद्भुतविक्रमन्माराय भीमार्ज्जुनन्मार् ९
केल्प्पोटु पुरप्पेट्टु युद्धत्तिन्नोरुमिच्चु
विभ्रान्तन्मारायट्टुत्तीटिनारतुनेरं । १०
उन्नतमाय वृक्षं कण्टु भीमनुमतु
चेन्नुटन् परिच्चिलयूरियायुधमाक्कि । ११
निन्नतु कण्टु कृष्णन् रामनोटरुळ्चेय्तु
निर्णयमितु भीमनतिमानुपकर्म्मा । १२
पिन्नाले निल्क्कुन्नतु फल्गुनन्तन्ने नून
मुक्तन्मारायार् पाण्डुपुत्रन्मार् मातावोटु
व्यक्त जातुपगेहत्तिङ्कल्निन्नरिञ्ञालुं । १३
दैवानुग्रहमेङ्किल् नम्मुटे पितृष्वसा
जीविच्चितात्मजन्मारोटुमेन्नाकिलिप्पोळ् १४
अेन्नयु सुख वन्नु चित्तत्तिलेङ्किलिनि
युद्धकौशल कण्टुकोळ्क नामेन्ने वेण्टू । १५
रामकृष्णन्मारित्थ परञ्ञुनिल्क्कुन्नेरं
भूमिपालेन्द्रन्मारुं पोरिनायोरुमिच्चु । १६
नामेतुं कुरयरुतितिनेन्नतुनेर
भूमिदेवेन्द्रन्मारुं पोरिनायोरुम्पेट्टार् । १७

हुए। उनको युद्ध के लिए तैयार देखकर पाञ्चालराज ब्राह्मणों की शरण में गये। उस सभा मे जो ब्राह्मण-वेपधारी और अद्भुत प्रतापवाले भीम अर्जुन आदि थे, वे भी झट से उत्तेजित होकर मिलकर युद्ध के लिए सन्नद्ध हो गये। भीम ने एक ऊँचा पेड उखाडकर उसके पत्ते निकाल-फेककर उसे एक आयुध बनाया। यह देखकर कृष्ण ने बलराम से कहा—नि सन्देह यह भीम है, इसका यह अमानुप कार्य देखो। उसके पीछे जो खडा है, वह अर्जुन है। इससे यह स्पष्ट है कि पाण्डव अपनी माता के साथ लाक्षागृह से निकल गये थे। यह ईश्वर का अनुग्रह है कि हमारी फूफी अपने पुत्रो के साथ अभी जीवित है। यह हमारे लिए बडे हर्ष की बात है। अब हम दोनो इनका युद्ध-कौशल देखे।७-१५ बलराम और कृष्ण इस प्रकार जब बात कर रहे थे तब सभी भूपालश्रेष्ठ भी युद्ध

पाञ्चालन् पटयोटु पार्त्थनु सहायमाय्
वाञ्छया कूटेक्कनिञ्ञरिके मरुविनान् । ११३

राजसञ्चय विजय

कल्याणत्तिनु नम्मे वरुत्तिक्कालत्तोरु-
पुल्लोळं वहुमानियाते पाञ्चालनृपन् । १
विप्रनु कन्यारत्नं कोटुत्तीटुन्नताकिल्
विप्रने वधिक्केणमेन्नतुमरुतल्लो । २
सत्क्कारपूर्व्वं नम्मे वरुत्ति स्वयवरे
धिक्कार काट्टियोरु पाञ्चालन्तन्नेक्कोल्वू । ३
धृष्टनां धृष्टद्युम्नन्तन्नेयु वधिक्केण
कष्टमेत्रयुमवन् काट्टिय दुराचारं । ४
चेरुप्पंकोण्टु मोहाल् ब्राह्मणन् काट्टियतु
पोरुक्केयुळ्ळु नमुक्कवनोटेल्लां कोण्टु । ५
नम्मुटे राज्यधन सन्ततिशौर्यादियुं
ब्रह्मरक्षार्त्थमत्रे निर्ण्णयमरिञ्ञालुं । ६
ऎन्नु कलिपच्चुनिन्न मन्नवरेल्लावरु-
मन्योन्यमोरुमिच्चु युद्धत्तिन्नोरुन्पेट्टार् । ७

तत्काल ही सभी भूपाल निराश होकर व्यर्थ क्रुद्ध हुए। पाञ्चालराज तो अर्जुन की सहायता के लिए अपनी सेना के साथ उन्ही के पास रहे। ११०-११३

राजसमूह का पराजय

"पाञ्चाल ने हमको विवाह मे निमन्त्रित किया परतु तृण-भर भी हमारा सम्मान न किया। और कन्या को तो ब्राह्मण को दे दिया। लेकिन ब्राह्मण की तो हम लोग हत्या भी नही कर सकते है। जिसने हमको विवाह मे वुलाकर अपमान किया उस पाञ्चाल का ही वध करना चाहिए। इस धृष्ट धृष्टद्युम्न को भी मारना चाहिए, क्योकि उसका दिखाया दुराचार तो असह्य है। उस नवयुवक ब्राह्मण ने जो कुछ किया है उसे हम लोगो को किसी तरह सहना ही है। आखिर हमारा राज्य, धन, सन्तान, शौर्य, यह सव ब्राह्मणो की रक्षा ही के लिए है।" १-६ इस प्रकार सोचते हुए सभी भूपाल मिलकर युद्ध करने के लिए तैयार

शल्यरें मुष्टियुद्ध चेय्तु मारुतपुत्रन्
कॊल्लातॆ कॊन्नानतु कण्टु मटुळ्ळ नृपर् । २८
ऎल्लारुं भयप्पॆट्टु वाङ्ङिनार् मन्नव-
र्क्कॆल्लालोकवु जयिक्कामवर् वलुतल्लो । २९
तोटितु विश्वामित्रन् वसिष्ठनोटु मुन्नं
तोटितु राजाक्कन्मार् भार्गवरामनोटुं । ३०
तोटतु कुटमल्ला भूसुरन्मारोटु ना-
मेटतॊरविवेकमॆन्नोर्त्तु वाङ्ङीटिनार् । ३१
मन्दभाववुंपूण्टु भूपालर् निजनिज-
मन्दिरमकपुक्कु वसिच्चु यथापूर्व्व । ३२
विजयत्तोटुं द्रुपदात्मजयोटुं कूटि
विजयवृकोदर वीरन्मार् नटकॊण्टार् । ३३

कुन्तीवाक्य (मुळुस्संस्कृतं)

कुन्तियु भैक्षकाले काणाञ्ञु सुतन्मारॆ-
च्चिन्तिच्चु तुटङ्ङिनाळन्तरायङ्ङळॆल्ला । १
धार्तराष्ट्रन्मार् बलालरिञ्ञु वधिच्चारो
रात्रिचारिकळ् मायकॊण्टु निग्रहिच्चारो । २

फेंके और वाण चलाये। विस्तार से क्या वर्णन किया जाय, अर्जुन ने सूर्यपुत्र कर्ण को हराया। शल्य और भीमसेन का मुष्टि-युद्ध हुआ, जिसमें शल्य मरने से वचा। यह देखकर और सभी भूपाल डर गये और हट गये। (और वोले) "ब्राह्मण तो सभी लोको पर विजय प्राप्त कर सकते है, आखिर वे ही उत्कृष्ट है। विश्वामित्र, वसिष्ठ से हार गये और सभी भूपाल, परशुराम भार्गव से हार गये। हार जाने मे कोई दोष नही है। उनका जो हमने सामना किया वही अविवेक था।" यह सोचकर हट गये। सभी भूपाल उदास होकर अपने-अपने घर चले गये और पहले की तरह रहने लगे। अर्ज्जुन, भीम आदि वीर विजय और द्रौपदी के साथ चले गये। २३-३३

कुन्ती का कथन (शुद्ध सस्कृत मे)

जव भिक्षा के समय कुन्ती ने अपने पुत्रो को न देखा तव सोचने लगी—क्या विघ्न पैदा हो गया है ? क्या धार्तराष्ट्रो ने पहचानकर उनकी

छत्रत्तिन् दण्डङ्ङळुं पादुकङ्ङळु पुन-
रुत्तरीयङ्ङळ् करकङ्ङळेन्निवयुमाय् । १८
हस्तवुमुयर्त्तिनिन्नुद्योग कण्टनेरं
मुग्धहासवु पूण्टु फल्गुननुरचेय्तान् । १९
कुण्ठभाववुं नीक्कि रण्टुभागवु निन्नु
कण्टुकोळ्ळुविन् निङ्ङळेल्लारु द्विजन्मारे ! । २०
कण्ठङ्ङळ् करङ्ङळ् कालेन्निव बाणङ्ङळे-
क्कोण्टुञान् तेरुतेरेक्खण्डिच्चु नृपन्मारे । २१
दन्डहस्तन्टे पुरत्तिङ्कलाक्कीटुन्नुण्टु
दण्डमिल्लिनिक्कतिनरिविन् निङ्ङळेल्लां । २२
इत्थमर्ज्जुनन् परञ्ञीटिनोरनन्तरं
युद्धत्तिन्नटुत्तितु मित्रनन्दनन् कर्ण्णन् । २३
तुटङ्ङी शरङ्ङळाल् वरिषं विजयनु
नटुङ्ङी भुवनवुं चेरुआर्णोलिकळाल् । २४
रुद्रनोटन्तकन्तानटुत्तपोले नेरे
माद्राधिपति शल्यर् भीमनोटटुत्तितु । २५
मटुळ्ळ विप्रन्मारुं धार्तराष्ट्रन्मारुमा-
येटियुमेरिञ्ञुमोट्टेय्तु निन्नितु तम्मिल् । २६
विस्तरिच्चेन्तिनेरेप्परयुन्नितु पार्थन्
मित्रपुत्रनेज्जयिच्चीटिनानतुनेर । २७

के लिए तैयार हुए। इस मामले मे हम औरो से कम न निकले, ऐसा समझकर ब्राह्मण भी युद्ध के लिए तैयार हुए। अपनी छतरियो के दण्ड, अपनी खड़ाऊँ अपने उत्तरीय लेकर अथवा खाली हाथ ही आकर उन्होने हाथ उठाया। यह देखकर अर्जुन मुस्कराये और वोले—हे ब्राह्मणो ! अब आप लोग मत घवडाइए ! आप दोनो ओर खड़े होकर देखिए ! मैं अपने वाणो से इनके कण्ठ, हाथ, पैर आदि लगातार काटता जाऊँगा। और इन राजाओ को यम-सदन भेजता जाऊँगा। मुझे इसमे कोई कठिनाई न होगी, जान लीजिए। १६-२२ अर्जुन के इस प्रकार कहने के वाद सूर्य का पुत्र कर्ण युद्ध के लिए चला आया। अर्जुन ने शरवर्षा प्रारम्भ की और सारा ससार जयघोष से गूँज उठा। मद्राधिपति शल्य ने भीम का इस प्रकार सामना किया जैसे यमराज ने रुद्र का। और ब्राह्मणो और धार्तराष्ट्रो ने आपस मे मारकाट प्रारभ करदी, अस्त्र-शस्त्र

नन्दनं युधिष्ठिरं वचनमुवाचेदं
सुन्दरी द्रुपदराजात्मजा कन्यकेय । १२
त्वल् कनिष्ठाभ्या मयि निःसृष्टा यथोचित
तल्कथा निशम्य भुञ्जीध्वमित्युक्तं मया । १३
नानृतमुक्त मयाप्यद्यैवं कथं भवेल्
मानवश्रेष्ठ ! ब्रवीहि द्रुपदजामिमां । १४
अधर्म्मो न चोपवर्त्तेत न भूतपूर्व्व-
स्स धर्म्मात्मजो विचिन्त्याशु मुहूर्त्तमात्रं । १५
मातरं समाश्वास्य भ्रातरं धनञ्जयं
सादर वभाषे वाक्य परमिदं तदा । १६
भवता जिता पार्त्थ ! द्रुपदात्मजा चेय
भवता तोपिष्यति पावकः प्रज्ज्वाल्यता । १७
हूयतामस्याः पाणि विधिवल् गृहाण त्वं
भार्य्येय तवैवेति श्रुत्वा पूर्व्वजवाक्य । १८
जिष्णुरग्रज प्रोवाचोक्तमयुक्त वाक्य
कृष्णेयं मया जिता चापि वा शृणु भवान् । १९
मा मा मामधर्म्मभाज कृथाह्यधर्म्मोयं
भूमिपालेन्द्र ! भवान् प्रथम प्रणिवेश्यः । २०

द्रुपद की पुत्री यह सुन्दरी कन्या तुम्हारे छोटे भाइयों ने यथोचित मेरे हाथ सौंप दी। उसका वृत्तान्त सुनकर मैंने--'उसे भोग लो'--कह दिया। मैंने कभी झूठ नहीं बोला है, अब क्या हो ? हे मानव-श्रेष्ठ ! कहो जैसे इस द्रुपद-पुत्री हर अधर्म न लग जाय। इसका पहले कभी अधर्म नहीं हुआ है। धर्मपुत्र ने थोडी देर सोचकर अपनी माता को आश्वासन दिया और भाई अर्जुन से सादर इस प्रकार कहा-- ९-१६ "हे पार्थ ! द्रौपदी को तुमने ही जीता है, तुमसे वह खुश रहेगी। आग जलाओ और हवन करो और विधिवत् इसका पाणिगहण करो। यह तुम्हारी ही पत्नी है।" अपने वडे भाई की वात सुनकर अर्जुन ने कहा--"आप ने ठीक नहीं कहा है। यह द्रौपदी तो अवश्य मैंने ही जीती है, फिर भी मेरी वात सुनिए। आप मुझसे अधर्म न कराइए, यह अधर्म होगा। हे राजन् ! पहले आप का विवाह होना चाहिए, तदनन्तर वड़े भाई भीम का, तत्पश्चात् मेरा, तदनन्तर, माद्रीपुत्र नकुल और सहदेव का। यह सुन्दरी कन्या और हम सब आपके हैं। अब जो करना

पार्त्थिवेन्द्रन्मार् पराभूतन्माराकयाले
चीर्त्त मत्सरंकोण्टु पार्त्तु निग्रहिच्चारो । ३
नित्यवु भैक्ष्यमेट्टु वरुन्न कालमिन्नों-
रित्तिरिनेरमुण्ट्टु कळिञ्ञु कण्टीलिन्नु । ४
शक्तिजपुत्रवाक्य व्यर्त्थमाय्वन्नीट्टुमो
सत्यवादिकळिल्वच्चुत्तमोत्तमनल्लो । ५
तत्त्वज्ञन् सत्यवतीपुत्रनेन्नतु नूनं
इत्थमोरोन्ने कुन्ति चित्तत्तिलोर्क्कुन्नेरं । ६
गत्वा भार्ग्गवकर्म्मशालां तां पार्थौ पृथां
नत्वा तां याज्ञसेनीमर्ज्जुनवृकोदरौ । ७
लब्धेयमद्य भिक्षेत्युक्त्वाथ वेदयतां
तत्रैव कुटिं गत्वा सा त्वनपेक्ष्य कुन्ती । ८
पुत्रान् भुञ्जीध्वमिति प्रोवाच सप्रमोदं
पश्चाल् सा कुन्ती प्रसमीक्ष्य कन्यकां कृष्णा- ९
मच्छाङ्गीं कष्टं मया भाषितमित्युवाच
स्वच्छवादिनी कुन्ती तदनु चिन्तयन्ती । १०
साधर्म्मभीता चापि विलज्जमाना कुन्ती
सादरं पाणौ गृहीत्वोपजगाम कन्या । ११

हत्या कर दी है ? या राक्षसो ने अपनी माया से उनका निग्रह किया है ? क्या हार जाने के कारण भूपालो ने बढे हुए बैर के कारण मौका पाकर उनको मार डाला है ? उनका प्रतिदिन भिक्षा लेकर आने का समय वीत चुका, अब कुछ विलम्व हो गया है, पर आये नही । क्या शक्ति ऋषि के पुत्र (व्यास) का वचन व्यर्थ निकलनेवाला है, पर है तो वे सत्यवादियो मे सबसे श्रेष्ठ । सत्यवती के पुत्र (व्यास) तत्त्वज्ञ है, इसमे सन्देह नही है । जब कुन्ती इस प्रकार तरह-तरह की बाते सोच रही थी, तब पार्थ (अर्जुन) और भीमसेन ने भार्गव-कर्मशाला मे जाकर, कुन्ती की वन्दना करके 'आज हमको यह भिक्षा मिली है'—यह कहकर याज्ञसेनी (द्रौपदी) को सामने (प्रस्तुत) किया । कुन्ती जो भीतर थी, विना देखे पुत्रो से बोली— १-८ 'उसे भोग लो' । तत्पश्चात् कन्या द्रौपदी को देखकर बोली—हाय् ! मैंने क्या कह दिया ! सच बोलनेवाली कुन्ती, अधर्म से डरनेवाली, लज्जा का अनुभव करती हुई फिर सोचने लगी । कन्या को सादर अपने हाथ मे लिये अपने पुत्र युधिष्ठर से वोली—"राजा

भार्ग्गव कर्म्मशालतन्निल् वाणीटुन्नोरु
भाग्यपूरुषन्मारा पाण्डवन्मारेक्कण्टु । ३१
ऐङ्ङनेयऱिञ्ञवारेन्नितु युधिष्ठिर-
नङ्ङनेयऱिवन् आनेन्नितु मुकुन्दनुं ३२ ।
तङ्ङळिल् जतुगृहमोचनवृत्तान्तवु
तिङ्ङिङ्ङन सन्तोपत्तोटन्योन्य पऱञ्ञुटन् । ३३
कल्याणं मेलिल् वरेण्टु प्रकारवुं पुन-
रेल्लारुं कूटिक्कण्टु पऱञ्ञुयात्वचोल्लि । ३४
वेगेन मुकुन्दनुं रामनुमेळुन्नळ्ळि
लोकपालन्मारोटु तुल्यरा पाण्डवरुं । ३५
भार्ग्गवनिकेतने वसिच्चारविटेयुं
मार्ग्गमाय् भिक्षयेटुकळिच्चु दिवसवुं । ३६
भार्ग्गवकर्म्मशालासन्निधौ चेन्नुनिन्नु
भाग्यवान् धृष्टद्युम्नन् रात्रियिलवरुटे । ३७
वाक्कु केट्टऱिञ्ञितु पाण्डवन्मारेन्नुळ्ळल्
वाय्क्कमानन्दं पूण्टु तातनोटेल्ला चोन्नान् । ३८
पाञ्चाल नृपेन्द्रनु तन्नुळ्ळिलुण्टायोरु
चाञ्चल्यमकन्नानन्दाकुलनायानल्लो । ३९
अन्नेरमुपाध्यायन्तन्नेयङ्ङयच्चितु
मन्नवन् द्रुपदनुमऱिवान् परमार्त्थं । ४०

के साथ पधारे। भार्गव-कर्मशाला में जो पाण्डव रहते थे, उन भाग्यशालियो से उनकी भेट हुई। २४-३१ युधिष्ठिर ने पूछा—कैसे मालूम हुआ—हम कौन हैं और कहाँ रहते है? मुकुन्द ने कहा—हमको ऐसे ही मालूम हो गया। फिर लाक्षागृह से कैसे निकल गये, इस विषय पर आपस मे वडे हर्ष के साथ वातचीत हुई। आगे विवाह किस प्रकार होगा, इस पर चर्चा हुई। अन्त मे पाण्डवो से विदा होकर कृष्ण और वलराम चले गये। लोकपालों के तुल्य पाण्डव भार्गव-निकेतन मे निवास करने लगे और भिक्षा माँगकर अपना निर्वाह करने लगे। ३२-३६ एक दिन भाग्यशाली धृष्टद्युम्न ने भार्गव-कर्मशाला के पास जाकर रात को उनकी वातचीत से मालूम कर लिया कि ये पाण्डव है। वहुत प्रसन्न होकर अपने पिता को सव वतला दिया। पाञ्चालराज को जो सन्देह था, वह नष्ट हो गया और वे वहुत आनन्दित हुए, और परमार्थ जानने

तदनु वृकोदर. पूर्व्वजः पुनरह
तदनु माद्रीसुतौ नकुलस्सहदेवौ ।
मदिरेक्षणाचेय भवतस्सर्व्वे वयं । २१
यत् करणीयमत्रैवं गते भवानिह
तत् कुरु धर्म्म्यं यशश्यं विचार्यात्महित । २२
यत् प्रिय भवेद् द्रुपदस्य राजेन्द्रस्य वा
तत् ब्रूहि सर्व्वे स्थितास्त्वद्वशे युधिष्ठिर ! । २३
द्रौपदी दृष्ट्वा तत्र तिष्ठन्ती शुचिस्मिता
भूपतिप्रवराणा पञ्चाना पाण्डवानां । २४
मन्मथः प्रादुरासीन्मानसे धैर्यात्मनां ।
सम्मथ्येन्द्रियग्राम विहित स्वयंभुवा । २५
तेषामिङ्गिताकारभावज्ञो युधिष्ठिरो
दोषज्ञो वेदव्यासवचनमनुस्मरन् । २६
अब्रवीत् समेतान् भ्रातॄन्मिथो भेदभयात्
सुप्रियं सर्व्वेषां नो भार्येय भविष्यति । २७
शोभितकळेबरा पाञ्चालनृपात्मजा
द्रौपदी मनोहरी सुन्दरी कृष्णा सती । २८
पूर्व्वजन् परञ्ञतु केट्टु सोदरन्मारु-
मेवमेन्ननुवदिच्चविटे वाळुकालं । २९
देवकीसुतन् जगदीश्वरन् वासुदेवन्
रेवतीरमणनुमायुटनेळुन्नळ्ळि । ३०

उचित हो, धर्म हो, यशस्य हो, वह आप सोचकर करें। राजा द्रुपद को जो प्रिय हो, वह बतलाइए, हम सब आपके वश मे है।" १७-२३ मुस्कराती हुई द्रौपदी को देखकर धैर्यवालो मे श्रेष्ठ पाँचो पाण्डव भूपालो के हृदय मे कामदेव जाग उठा। इन्द्रियो का निग्रह करने पर भी स्वयंभू (कामदेव) ने यही किया। उनके इङ्गित आकार और भाव समझकर दोषज्ञ युधिष्ठिर ने वेदव्यास के कथन को याद किया। तब भाइयों के आपस मे भेद हो जाने के डर से बोले—"यह हम सबकी भार्या होगी, यही सर्वप्रिय होगा। यह पाञ्चालराज की पुत्री कृष्णा, शोभित अङ्ग-वाली है, मनोहरी है, सुन्दरी है और सती है।" बड़े भाई की बात सुनकर सभी भाई स्वीकृति प्रकट करके सुख से रहने लगे। उस अवसर पर देवकी के पुत्र जगदीश्वर वासुदेव अपने भाई रेवतीरमण (बलराम)

मत्तहस्तिकळ् मनोवेगमुळ्ळश्वङ्ङळुं
चित्रमां रथ कालाळ् दासिकळ् दासन्मारुं । ५१
आसनशयनयानङ्ङळु वर्म्मङ्ङळ् वा-
णासनङ्ङळु चर्म्मनिकर खळ्गङ्ङुळु । ५२
अस्त्रशस्त्रङ्ङळ् फलमूलङ्ङळ् माल्यङ्ङळुं
वस्त्रङ्ङळ् नल्लनल्ल पाट्टुक पादुकङ्ङळ् । ५३
वॆण्कॊटक्कुट तळ वॆण्चमरिकळ् नल्ल-
कुङ्कुममलयज कस्तूरि कळभवु । ५४
कॊटिकळ् नल्ल कॊटिक्कूरकळ् वाद्यङ्ङळु
कुटकळालवट्टं दर्प्पण चॊट्टकळु । ५५
मुत्तुमालकळ् मुत्तुक्कॊटिकळ् मुत्तुक्कुट
मुग्द्धङ्ङळाय मेलाप्पुकळुं तिरकळु ५६
आभरणङ्ङळ् किरीटादिकळ् पलतर-
मापादचूडमणिञ्ञीट्टुवानुळ्ळवयु । ५७
आभतेटीट्टु कुप्पायङ्ङळुं तॊप्पिकळु-
माभोगमान्न पॊन्निन् पात्रङ्ङळ् पशुक्कळुं । ५८
धनधान्यङ्ङळॆल्लामवधियिल्लातोळ
मनसि कनिवोटु कॊटुत्तु पाञ्चालनुं । ५९
ॲल्लामे परिग्रहिच्चानन्दमियन्नुट-
नुल्लासमोटु कुन्तीदेवियुमतुनेरं ६०

द्रव्य दिये । ४४-५० मत्त हाथी, मनोवेगवाले घोड़े, देखने-योग्य रथ, पैदल सैनिक, दास-दासियाँ, आसन, शयन, यान, कवच, धनुष, अनेक चर्म और खड्ग, अस्त्र-शस्त्र, फल और मूल, मालाएँ, कपड़े, अच्छे-अच्छे रेशमी वस्त्र, पादुकाएँ, चाँदी के दण्डवाले छत्र, सफेद-चँवर अच्छे-अच्छे कुङ्कुम, चन्दन, कस्तूरी, आठो सुगन्ध-द्रव्य, झण्डे, झण्डे के कपडे, वाजे, छत्र, मोरपख के पखे, दर्पण, तलवार, मोती के हार, मोती के झण्डे, मोती की लकड़ीवाले (मोती से जुड़ा हुआ छत्रदण्ड) छत्र, सुन्दर शामियाने और परदे, अनेक प्रकार के आभूषण और किरीट, सिर से पैर तक पहनने के सामान, सुन्दर कोट और टोपियाँ, ऐश्वर्य व्यक्त करनेवाले सोने के वरतन और पशु तथा निस्सीम धन एवं धान्य—यह सव पाञ्चालराज ने प्रेम से दिये । ५१-५९ उस समय आनन्द से (ये) सव स्वीकार करके वडे उल्लास के साथ पुष्कर-दल के समान विलोल आँखवाली द्रौपदी को लेकर कुन्ती ने हर्ष से अन्तःपुर मे प्रवेश

चेन्नु पाण्डवन्मारेक्कण्टोरु विप्रेन्द्रने
नन्नाय् पूजिच्चु भीमन् धर्म्मजनियोगत्ताल् । ४१
द्रुपदपुरोहितनाकिय भूदेवनु
नृपतिकुलवरनामजातारातियुं । ४२
अन्योन्य वृत्तान्तङ्ङळ् पऱञ्ञु वसिक्कुन्पो-
ळन्यनायिरिप्पोरु पुरुषन् वन्नानल्लो । ४३
पिन्नेयु पाञ्चाल भूपालकनियोगत्ताल्
कन्यार्त्थ द्रुपदनालुपसंस्कृतमायो-
रन्नवु विवाहहेतोरपि वहिच्चवन् ४४
चोल्लिनान् निङ्ङळिनि वैकाते पोरणं पो-
लेल्लारु कूटि राजाधानिक्कु मटियाते ४५
नल्ल तेरितु वसुधाधिपयोग्यमिनि-
क्कल्याण कळिक्कणमेन्नवन् चोन्ननेरं ४६
पाराते पुरोहितन्तन्नेयुमयच्चिट्टु ।
वीरन्माराय पाण्डुराजनन्दनन्मारु ४७
तेरतिल् करयेऱि वेगत्तिल् नटकोण्टु
कारुण्य पूण्टु कुन्तितन्नोटु कृष्णयोटु । ४८
धर्म्मजमतमेल्लामन्नेर पुरोहितन्
सम्मोदं कलर्न्नवनीश्वरनोटु चोन्नान् । ४९
निर्व्व्याजं जिज्ञासया पाञ्चालन् बहुविध
द्रव्यवुं दान चेय्तान् पाण्डवन्माक्कर्यिक्कोण्टु । ५०

के लिए अपने उपाध्याय को भेजा। जब वह ब्राह्मण पाण्डवो से मिलने आये, तव युधिष्ठिर की आज्ञा से भीम ने उनका सत्कार किया। जब द्रुपद का पुरोहित ब्राह्मण और राजवर अजातशत्रु युधिष्ठर बैठकर आपस मे वातचीत कर रहे थे, तव एक और पुरुप वहाँ आया। ३७-४३ वह भी पाञ्चालराजा की ही आज्ञा से कन्या के विवाह के हेतु द्रुपद का सस्कृत अन्न लेकर आया था। वह बोला—"अब विना विलम्ब आप लोग आइए, सब मिलकर राजधानी चलिए, यह राजाओ के योग्य श्रेष्ठ रथ है, अब विवाह-सस्कार होना चाहिए।" यह सुनकर वीर पाण्डवो ने पुरोहित को शीघ्र भेज दिया, और प्रेम से कुन्ती और द्रौपदी के साथ रथ पर बैठकर चल पडे। वहाँ पुरोहित ने युधिष्ठर का सारा अभिप्राय हर्ष के साथ राजा को बतला दिया। पाञ्चालराज ने पाण्डवो को अनेक प्रकार के

चन्द्रवंशत्तिल् वन्नु पौरवन्माराय् पाण्डु-
नन्दनन्माराय् ञङ्ङळैवरुमुण्टायवन्नु । ७१
अग्रजनायतु ञान् भीमसेननु पिन्ने-
प्फलगुननाय पाकशासनपुत्रनिवन् । ७२
नकुलन्तानुं सहदेवनु माद्रीपुत्र-
रखिलगुणनिधे! सत्यमेन्नरिञ्ञालु । ७३
धर्म्मजवाक्कुकेट्टु सन्तोपत्तोटुकूटे
निर्म्मलन् पाञ्चालनु चोल्लिनानतिन्शेप । ७४
यन्त्रवु मुरिच्चु भूपन्मारेज्जयिच्चोरु
कुन्तीनन्दननाय फलगुननिनियिप्पोळ् ७५
ॲन्मकळुटे पाणिग्रहण कळिक्केण-
मेन्मनोरथ परिपूर्ण्णमायवन्नितेन्नाल् । ७६
अक्कथ केट्टु धर्म्मनन्दननुरचेय्ता-
नग्रजन्माराय् ञङ्ङळिरुवरिरिक्कवे ७७
फलगुनन् विवाहं चेय्केन्नतुमरुतल्लो
सल्गुणनिधे! मुन्पिल् ञान् वेळ्क्केन्नतेवरू । ७८
चिन्तिच्चु पाञ्चालनुमन्नेरमुरचेय्तु
सन्तोपमितिलपर्रमिल्लेङ्किन्निनिक्कोटो । ७९
मन्दहासवुं चेय्तु धर्म्मजन् चोन्नानप्पोळ्
सुन्दरियाय तव कन्यकतन्ने ञङ्ङ- ८०

वाद यह भीमसेन, तदनन्तर यह इन्द्रपुत्र फलगुन (अर्जुन) है। नकुल और सहदेव माद्री के पुत्र है। हे सकलगुणनिधे! यही सत्य है।" युधिष्ठिर की वात सुनकर प्रसन्नता के साथ निर्मल पाञ्चालराज ने कहा—"हम चाहते है कि जिन फलगुन ने यन्त्र को तोडा और राजाओ को पराजित किया, वे हमारी पुत्री का पाणिग्रहण करे। तभी तो हमारा मनोरथ पूरा होगा।" ६७-७६ यह सुनकर युधिष्ठिर ने कहा—"आप जानते ही है कि हम दोनो वडे भाइयो के अविवाहित रहते अर्जुन का विवाह करना अनुचित होगा। हे सद्गुणो के निधि! मै पहले विवाह करूँगा।" तव पाञ्चालराज ने सोचकर कहा—"इससे वढकर मेरे हर्ष का कारण और कुछ नही हो सकता।" तव युधिष्ठिर ने मुस्कराकर कहा—"हम पाँचो मिलकर आपकी सुन्दरी पुत्री के साथ विवाह करेगे, यही हो सकता है। ईश्वर की इच्छा को कोई रोक नही सकता।" (तव पाञ्चाल-

पुष्करदलाविलोलाक्षिया कृष्णयोटु
पुक्किकतङ्डन्तः पुरत्तिङ्कलाम्मारु मोदाल् । ६१
सर्व्वलक्षणयुक्तन्माराय पाण्डवरें-
द्दिव्यवेषत्तोटु कण्टीटिन जनमेल्ला- ६२
मल्भुतं पूण्टु निन्नार् निश्चलन्माराय् तत्र
कल्पित सभास्थपीठासने यथा पुरा । ६३
इरुन्नार् पिन्नें स्नानं कळिच्चु वळिपोलें
विरुन्नु परिग्रहिच्चशन कळिञ्ञप्पोळ् । ६४
दृक्परमानन्दरूपन्मारामिवरोरो
दिक्पालकन्मारो गन्धर्व्वन्मार् सिद्धन्मारो । ६५
निर्म्मलन्मारां दिव्यन्मारेक्काणाय्वन्नतु
नम्मुटे भाग्यमेन्न चोल्लिनारेल्लावरु । ६६
द्रौपदितन्नेप्पोलें नालुपुत्रिकळिन्नुं
भूपालनुण्टाय् वरुन्नाकिलेन्तोरु भाग्यं । ६७
द्रौपदिक्कनुरूपन्मारिवरञ्चुपेरुं
रूपलावण्यादिकोण्टितिन्नु वृथाभवं । ६८
चोदिच्चु पाञ्चालनुं निङ्ङळारेन्नु नेरे
वोधिप्पिच्चीटवेणं अङ्ङळेयिनियिप्पोळ् । ६९
ऎङ्किलो केट्टुकोळ्क चोल्लीटा परमार्त्थं
शङ्कयेक्कळञ्ञालुमेन्नु धर्म्मजन् चोन्नान् । ७०

किया। सभी लक्षणो से सम्पन्न पाण्डवों को दिव्य वस्त्र पहनते हुए देखकर सभी लोग आश्चर्य चकित हुए और निश्चल खडे हुए। तत्पश्चात् पाण्डव, सभा मे सजे पीठासन पर पहले की तरह बैठे। फिर स्नान करके आतिथ्य स्वीकार करने के वाद भोजन किया। देखने मे आनन्द देनेवाले ये कौन है ? क्या दिक्पाल है, या गन्धर्व या सिद्ध ? सबने कहा कि यह हमारा भाग्य है कि हमको ये निर्मल दिव्य पुरुष देखने को मिले। ६०-६६ अगर राजा की द्रौपदी के समान चार और पुत्रियाँ हो जायँ तो कितनी सौभाग्य की बात होगी! ये पाँचो द्रौपदी के अनुरूप है रूप और लावण्य मे पाञ्चालराज ने पूछा—"आप लोग कौन है ? हम लोगो को सच वतलाइए।" युधिष्ठिर ने उत्तर दिया—"सुन लीजिए! मैं परमार्थ कह दूँगा। आप शङ्का न करे। हम पाँचो का चन्द्रवश के पुरु की परम्परा मे पाण्डुपुत्र के रूप मे जन्म हुआ। मै ही ज्येष्ठ हूँ, मेरे

कुन्तियुं नीयुं मम धृष्टद्युम्ननु कूटि-
च्चिन्तिच्चिट्टिनि नाळेक्कलिपक्कामेन्नेवेण्टू । ९१
पिटन्नाळेल्लावरुमोन्निच्चु विचारिप्पा-
नुटवन्धुक्कळुमाय् वसिच्चीटिननेर । ९२
वेदव्यासनुमेळुन्नळ्ळिनान् यदृच्छया
सादर मुनि तन्नेप्पूजिच्चारवर्कळुं । ९३
काञ्चनासने मरुवीटिन मुनियोटु
पाञ्चालनृपतियु तोळुतु चोल्लीटिनान् । ९४
ओरु नारियेप्पलर्कूटि वेळ्क्केन्नुळ्ळति-
ल्लोरुकालत्तुमोरुदिक्किलुमोरुवक्कुं । ९५
इन्निप्पोळ् पाण्डवन्मारैवरुं कूटि मम
कन्यकतन्ने वेळ्प्पान् भाविक्कुन्नतुमामो ? ९६
निन्तिरुवटियरुळ्चेय्यणं विचारिच्चु
सन्तापमतुकोण्टु पारमुण्टेन्नु नृपन् । ९७
चोन्नतु केट्टनेर मुनियुमरुळ् चेय्तु
निन्नुटे कुटमल्ल धर्म्ममल्लेन्नु तोन्नु । ९८
भूपतियुटे कैयुपिटिच्चु मुनिवरन्
शोभतेटीटु मणियरयिलकंपुक्कु । ९९

होगा ।" युधिष्ठिर की यह वात सुनकर राजा द्रुपद ने उत्तर दिया—"कुन्ती, आप और मेरे पुत्र धृष्टद्युम्न इस पर साथ विचार करे। निर्णय कल होगा ।" ८३-९१ दूसरे दिन जव वे साथ विचार करने के लिए निकट के वन्धुओ के साथ वैठे, तव सयोग से वेदव्यासजी पधारे और सवने उनका सादर सत्कार किया । तदनन्तर पाञ्चालराज ने सोने के आसन पर वैठे हुए मुनिजी की वन्दना करके कहा—"अनेक पुरुषो का मिलकर एक स्त्री के साथ विवाह करना, यह कभी, कही, किसी भी वर्ग मे नही देखा गया है । आज ये पाँचो पाण्डव मिलकर मेरी कन्या के साथ विवाह करने के लिए सोच रहे है । क्या यह ठीक है ? आप सोचकर कृपया वतला दीजिए, क्योकि इस विषय मे मुझे वडा दु ख हो रहा है ।" यह सुनकर मुनि ने कहा—"यह तुम्हारा दोप नही है कि यह तुम्हे अधर्म लगता है ।" तत्पश्चात् राजा का हाथ पकडकर मुनिजी ने एक भीतर अलकृत कमरे मे प्रवेश किया । ९२-९९

ळैवरुं कूटि विवाह् चेय्कॅन्नतेवरू
दैवकल्पितमाक्कु तट्टुक्कावॉन्नुमल्ल । ८१
कष्टमाहन्त कष्ट ! आनतु केट्टिट्टिल्ल
दृष्टमायिट्टुमिल्लॅन्नालतु धर्म्ममल्ल । ८२
निश्चय दैवलोकविरुद्धमितु पार्त्तालॖ
दुश्चरित्रङ्ङळॖ निङ्ङळ्क्कलिव तोन्नीटेण्टू । ८३
ऑरुत्तननेक भार्यक्कळॆयुण्टाक्कीटा-
मॊरुत्तिक्कनेक भर्त्ताक्कन्मारुतल्लो । ८४
वेदत्तिलॖ विधिच्चतुतन्नॆयल्लॅन्नाकिलु
लोकक्कु केट्टालॖ मतमायिरिक्कॆणमल्लो । ८५
वेदत्तिनॖ विधियल्ल लोकक्कु मतमल्ल
पातित्य वरुमॅन्नालॖ नरकमतुमुण्टां । ८६
धन्यना धर्म्मात्मजनन्नेरमुरचॆय्तानॖ
मन्नव ! देवलोकविरुद्धमॅन्नाकिलु । ८७
सूक्ष्मधर्म्मत्तॆप्पार्त्तु आनिव परञ्ञतु
भोष्कल्ल धर्म्मेतरबुद्धियुमिनिक्किल्ल । ८८
माताविन्मतमितु दैवसङ्कल्प तानु
चेतसि मम हितमाकयुमुण्टिटॅन्नालॖ । ८९
धर्म्ममल्लॅन्नु वरा निर्णयमॅन्नुतन्नॆ
धर्म्मजनॖ चॊन्ननेरं द्रुपदनुतानु चॊन्नानॖ । ९०

राज ने कहा—) "हा ! कष्ट ! हन्त कष्ट ! यह मैने कभी न सुना है और न कही देखा है। और यह धर्म नही है। ७७-८२ निश्चय ही यह ईश्वरविरुद्ध और लोकविरुद्ध है, ऐसे दुश्चरित्र आप जैसे लोगो को कैसे सूझे ? एक पुरुष की अनेक पत्नियाँ हो सकती है पर एक स्त्री के अनेक पति नही हो सकते है। कोई बात अगर वेदविहित नही है तो कम से कम लोकसम्मत तो होनी चाहिए। यह तो न वेदविहित है और न लोकसम्मत है। इससे हम पतित हो जायेगे और नरक जाने की नौबत आवेगी।" यह सुनकर धन्य युधिष्ठिर ने कहा—हे भूपाल ! मै मानता हूँ कि यह वेदविरुद्ध और लोकविरुद्ध है, परन्तु मैने सूक्ष्म धर्म का ध्यान रखते हुए यह कहा है। यह तुच्छ बात नही है, अधर्म की बात मै कभी नही कहता। यह हमारी माता की सम्मति है, दैवसङ्कल्प के समान है, मेरे अभिप्राय मे यह हितकर निकलेगा। निश्चय ही यह अधर्म न सिद्ध

शङ्ककूटातॆयतुमुण्टवळॆळ्ळुनेट्टु
तन्कळल् तलोट्टुवान् चॆन्नुनिल्कुन्ननेरं । १०
भार्ययोटरुळ्चॆय्तु मौल्गल्यन् पतिव्रत-
माराय नारिमारिल् निन्नोळं नन्नल्लारु । ११
ऎन्तॊरु वरं निनक्किच्छयॆन्नुरचॆय्ता-
लन्तरमेतुमिल्ल तरुवनिप्पोळ्त्तन्नॆ । १२
वृद्धनु कट्टुकनुमीर्ष्यनु लोलुपनु
क्रुद्धनु दुर्ग्गन्धियुमल्ल ञानॆटो बाले ! । १३
ऎङ्ङनॆ रमिक्केण्टू निनक्कॆन्नतु चॊन्ना-
लङ्ङनॆ रमिप्पिप्पनिल्ल सशयमेतुं । १४
कल्याणशीले ! मनोवल्लभे ! नाळायणी !
फुल्लपङ्कजमुखि ! चॊल्लुनिन् मनोरथं । १५
भर्तृवाक्यङ्ङळ् मुहुरित्तर केट्टनेर-
मुत्तमशीलतानुमुत्तरमुरचॆय्ताळ् । १६
पञ्चधा विभक्तात्मा रमय त्वं मा भवान्
पञ्चसायकसमरूप लावण्यसिन्धो ! । १७
मौल्गल्यनतु केट्टु कामरूपवु पूण्टु
भार्ग्गवितनिक्कुनेराकिय पत्नियोटु । १८
आश्रमङ्ङळिल् तपोधनरायनुभवि-
च्चाश्चर्यमवळ्क्कु चेर्त्तानन्दिप्पिच्चु नन्नाय् । १९

टूटकर खाने मे गिर गया। कोढी के खाने के बाद उसकी स्त्री ने भात मे पडे अगूठे को निकाल फेककर शेप विना हिचक के खा लिया। खाने के बाद उठी और पति के पैर दवाने के लिए उसके पास गयी। पति मौद्गल्य ने कहा--पतिव्रता स्त्रियो मे तुम्हारे समान कोई भी नही। मुझसे क्या वर चाहती हो, यह वतलाओ और मै तुम्हे तुरन्त ही दे दूंगा। मै वृद्ध, कडुआ, ईर्ष्यालु, लालची, क्रुद्ध और दुर्गन्धी नही हूं। कहो किस प्रकार रमना चाहती हो, उसी प्रकार तुमको भोग-विलास करा दूंगा, इसमे सन्देह नही। हे कल्याणशीले! विकसित कमल के समान मुखवाली! मेरी प्यारी नालायणि! अपनी इच्छा वतलाओ। ८-१५ पति की यह वात वार-वार सुनकर उत्तम शीलवाली पत्नी ने इस प्रकार उत्तर दिया--"हे कामदेव के समान रूप और लावण्यवाले ! अपने को पाँच भागो मे बाँटकर मुझसे रमो।" यह सुनकर मौद्गल्य कामदेव के समान रूप धारण करके लक्ष्मी के समान अपनी पत्नी के साथ अनेक आश्रमो मे तपोधन बनकर

पाञ्चालियुटे पूर्व्वजन्मवृत्तान्त

रहस्यमायुळ्ळोरु धर्म्म ञान् चोल्लुन्नुण्टु
महत्वमेरु भवान् केट्टुकोळ्ळुकवेण । १
निन्नुटे मकळिवळ्तन्नुटे पूर्व्वजन्म
निन्नोटु चोल्ला महीवल्लभतिलकमे । २
भोष्कल्ल नाळायणियेन्नु पेरिवळ्क्कन्नु
मौल्गल्यनेन्नु नामं भर्त्ताविन्नरिञ्ञालु । ३
अंन्नयु वृद्धन् कोपशीलनाकयुमुण्टु
भर्त्तव्यनल्ल तोलुं ञान्नुकोण्टेल्लु पोङ्ङि । ४
कष्टं कोण्टोक्क मुरटिक्किटक्कुन्नु देहं
निष्ठुरमाय वाक्कुमटमिल्लातेयुण्टु । ५
जरयु नरयुमिल्लीवण्णमार्क्कु मट्टु
कुरयु पारमुण्टु क्रिमिपीडयुमुण्टु । ६
दुर्ग्गन्धमेरुकयालट्टुत्तु चेन्नुकूटा
निर्ग्गुणरूपशीलयुक्तना विप्रन् सदा । ७
वर्त्तिक्कु कालमोरु दिवसमुण्णुन्नेर
भुक्तत्तिलंगुष्ठवुं मुरिञ्ञुवीणु बलाल् । ८
कुष्ठितानुण्टशेष चोरतिल् किटन्नोर-
गुष्ठवु कळञ्ञुपजीविच्चाळ् पतिशेषं । ९

पाञ्चाली के पूर्वजन्म की कथा

(मुनि ने कहा) मै एक महत्त्वपूर्ण रहस्य बतला रहा हूँ, आप सुनने की कृपा करे। हे भूपालो मे श्रेष्ठ! मैं तुम्हारी इस पुत्री के पूर्वजन्म का वर्णन करूँगा। यह जल्प (गप्प) नही है। उस समय इसका नाम था—नालायणि और इसके पति का नाम था—मौद्गल्य। वह अत्यन्त वृद्ध था और बहुत ही कोपशील। उसका चर्म लटक रहा था और हड्डियाँ उठी हुई थी, उसका पालन कठिन था, उसका शरीर कष्ट सहने के कारण सूख गया था। उसकी निठुर-निठुर बातो की सीमा न थी, इतने अधिक बुढापे के चिह्न और किसी के न थे। ऊपर से वह बहुत खाँसता था और उसको कीड़ो की बीमारी भी थी। दुर्गन्ध के कारण उसके पास जाना असभव था। वह एक रूपहीन और शीलहीन ब्राह्मण था। १-७ जब वह इस प्रकार रहता था, तब एक दिन खाने के समय उसका अगूठा

इन्निप्पोळ् निन्टे मकळायतुमवळ्तन्ने ।
निर्णयमॆन्नु कृष्णनरुळ्चॆय्ततुनेर २८
ऎन्नुटॆ मकळाय् वन्नीटुवानॆन्तु मूल-
मॆन्नतुमिनियरुळ् चॆय्यणमॆन्नीवण्ण २९
चोदिच्च पाञ्चालनोटन्नेरं वेदव्यासन्
कौतुक पूण्टु केट्टुकॊळ्ळुकॆन्नरुळ् चॆय्तु । ३०
चॊल्लॆळुमिन्द्रसेनयाकिय नाळायणि
वल्लभनाय मौल्गल्यन्तन्ने शुश्रूषिच्चु । ३१
पलनाळ् कळिञ्ञितु दिव्यभोगङ्ङळोटु-
मलसापागितन्नेशमिष्पिच्चनारत । ३२
विरक्तिवन्नु कामभोगसौख्यङ्ङळेयु
परित्यागवु चॆय्तु कोप्पिट्टु तपस्सिन्नाय् । ३३
अन्नेर नाळायणि मौल्गल्यनोटु चॊन्ना-
ळॆन्ने नी वॆटियातॆ भर्त्तावेयॆनिक्कुळ्ळिल् । ३४
तृप्ति वन्नीला कामभोगत्तिनतिनाल् स-
न्तप्तयाय् चमञ्ञितु ञानॆन्नु केट्टनेरं । ३५
मौल्गल्यनरुळ्चॆय्तु शङ्ककूटातॆयॆन्नो-
राग्रहकॊण्टु चॊन्नाळॆन्तिप्पोळवक्तव्यं ? । ३६
मत्तपोविघ्न चॆय्वान् कामसायकमेटु
मत्तयाय् चमञ्ञ नी भूमियिल् पिरक्क पोय् । ३७

जब कृष्णद्वैपायन ने इस प्रकार कहा, तब राजा ने पूछा—'मेरी पुत्री होने का क्या कारण है,' यह भी कृपया बतला दीजिए। इस प्रकार प्रश्न करनेवाले पाञ्चालराज से वेदव्यासजी ने कहा—'अच्छा, तो वह भी सुन लीजिए। विख्यात इन्द्रसेना नालायणि ने अपने प्यारे पति की शुश्रूषा (सेवा) की। मौद्गल्य ने उससे बहुत दिनो तक क्रीडाएँ करके उसको दिव्य भोगो का आनन्द दिया। अन्त मे मौद्गल्य विरक्त हो गया और कामभोग का त्याग करके वह तपस्या करने की तैयारियाँ करने लगा। २८-३३ तब नालायणि ने मौद्गल्य से कहा—"पतिदेव! मुझे न छोड दीजिए, अभी तो मेरी कामभोगो से तृप्ति नही हुई। इसलिए मै काम की अग्नि से भीतर जल रही हूँ।" यह सुनकर मौद्गल्य ने कहा—"तुमने क्यो निश्शङ्क होकर काम के कारण मुझसे यह अनुचित बात कही?" मेरे तप का विघ्न पैदा करने के लिए कामान्ध हो गयी

त्रिदशालय प्रापिच्चमृताहार चेय्तु
मदनरसंपूण्टु सुखिच्चु मरुविनान् । २०
पौलोमियालु पूज्यमानानाय् तत्र चिर-
कालं सञ्चरिक्कुनाळिन्द्रसेनया साक । २१
आदितेयेन्द्रगृह प्रापिच्चु रमिप्पिच्चा-
नादित्यरथ परमारुह्य दिवं पिन्ने ।
मोदत्तोटिरुन्नितु मेरुविङ्कलुमत्ना- २२
ळाकाशगगां द्रुतमाप्लुत्य तया सह
स्वाकांक्षासम परमानन्दिप्पिच्चु नन्नाय् । २३
चन्द्ररश्मिकळमद्ध्ये वसिच्चु पुनरथ ।
मन्दमारुतवेषं कैक्कोण्टु चिरकाल- २४
मद्रियाय् चमञ्ञितु मौल्गल्यन् नाळायणि
तत्र निम्नगयायि रमिच्चु चिरकाल । २५
पुष्पितसालरूप पूण्टितु मौल्गल्यनु-
मप्पोळे लतारूपं पूण्टु वेष्टिच्चाळवळ् । २६
यातोरु रूप कैक्कोळ्ळुन्नितु मौल्गल्यनु ।
तादृशियाय् वन्नीटुमन्नु नाळायणियुं । २७

रहे और अपनी पत्नी को आश्चर्य और आनन्द का अनुभव कराया। तदनन्तर वह देवलोक पहुँचा और वहाँ अमृत खाकर कामदेव के वश मे आकर दोनो सुख से रहे। वहाँ पौलोमी ने उनका आदर-सत्कार किया। वहुत दिन तक इन्द्रसेना (नालायणि का दूसरा नाम) के साथ वहाँ घूमते रहे। १६-२१ तदनन्तर देवो के राजा इन्द्र के निवास-स्थान मे पहुँचकर वहाँ भी रमे। सूर्य के रथ पर बैठकर द्युलोक पहुँचे और वडे हर्ष के साथ मेरु पर्वत पर वैठे। तदनन्तर अपनी पत्नी के साथ आकाश-गगा मे नहाया, और उसकी इच्छा के अनुसार उसे आनन्द का अनुभव कराया। उसके वाद चन्द्र की किरणो के बीच मे निवास किया। मन्द मारुत का वेश वहुत दिन तक धारण करने के वाद मौद्गल्य एक पर्वत हुआ और नालयणि वहाँ एक नदी वनकर वहुत दिन तक सुख से रही। तदनन्तर मौद्गल्य एक फूलो से भरा शाल का पेड हुआ तो उसकी पत्नी लता का रूप धारण करके उससे लिपट गयी। मौद्गल्य ने जो रूप धारण किया नालायणि ने भी उसी के तुल्य रूप धारण किया। २२-२७ वही नालायणि आज निस्सन्देह तुम्हारी पुत्री है।

भर्त्ताक्कन्मारञ्चु पेरुण्टावानवकाश
भद्रे वन्नीटुमतिनेतुमे दोषमिल्ल । ४८
चोंल्लिनाळ् नाळायणि शङ्करन्तन्नोटप्पो-
ळिल्लल्लो विधियतु वेदत्तिलेन्नु केळ्प्पू । ४९
ओंरुत्तिक्कोंरु भर्त्तावोंळिञ्ञु विधिच्चति-
ल्लोंरुत्तन्नेक नारिकळेक्कोंळ्ळातानु । ५०
वामलोचनमाक्कुं केवलमोंरु वरन्
कौमारमायिट्टुळ्ळ लौकिकमेन्नाकुन्नु । ५१
पुत्रार्थ भर्तृनियोगत्तालापदि कोंळ्ळा-
मन्ने मटोंरुत्तनें केवलमुल्पादिप्पान् । ५२
मून्नामतोंरुत्तनें प्रापिच्चाल् प्रायश्चित्त
मान्यन्मार् विधिच्चवण्णं चेंय्ते मतियावू । ५३
नालामतोंरुवनें प्रापिच्चाल् पतितयां
नीलवेणिकळेन्नु निर्णयमरिञ्ञालुं । ५४
वन्धकियाय् वन्नीटुमञ्चामतोंरुवनें
चिन्तिक्किलन्नेल्लामुण्टेन्नु केट्टिरिप्पु ञान् । ५५
आकयालनेक भर्त्ताक्कन्मारुण्टाकेण्टा
लौकिकमल्ला नून वैदिकमतुमल्ल । ५६

दो' की प्रार्थना को दोहराया[1], इसलिए तुम्हारे पाँच पति होगे, इसमे कोई दोष नही है। तब नालायणि ने शिवजी से कहा--"सुना है कि वेदो मे ऐसी कोई विधि नही है। स्त्री के लिए एक ही पति विहित है, पुरुप को तो अनेक स्त्रियाँ हो सकती है। महिला के लिए एक ही जवान पति लोक मे माना गया है। ४६-५१ सुना है कि सकट के समय, पति के नियोग से केवल पुत्रोत्पत्ति के लिए दूसरे से सवन्ध हो सकता है। अगर किसी तीसरे पुरुप से सम्बन्ध हो जाय तो पाप समझा जाता है और विहित प्रायश्चित करना अनिवार्य है। स्त्री अगर एक चौथे पुरुष को ग्रहण कर ले तो निस्सन्देह पतित हो जाती है। पाँचवे पुरुप को केवल सोचने पर ही स्त्री वेश्या हो जाती है। यह सब नियम मैने सुन रखा है। इसलिए अनेक पति होना ही न चाहिए, वह न लोकसम्मत है और न वेदसम्मत। मैने यह भी सुना है कि इससे सङ्कर का दोष हो जायगा।" उस पर शिवजी ने नालायणि से कहा—

१ यह द्रौपदी के पूर्वजन्म मे हुआ था।

पार्त्थिवनन्दनयाय्क्कामभोगङ्ङळेल्ला-
मास्थतीर्न्नीट्टुवोळ भुजिक्क यथासुख । ३८
द्रुपदनृपतितन्मकळाय् तत्र तव
नृपतिवीरन्मारायञ्चु भर्त्ताक्कन्मारु । ३९
उण्टाकेन्नरुळ्चेय्तु मौत्गल्यमहामुनि
वण्टार् पूङ्कुळलाळु तपसे वन पुक्काळ् । ४०
तण्टलर्बाणवैरि चन्द्रशेखरन् नील-
कण्ठनु प्रत्यक्षनायरुळिच्चेय्तीटिनान् । ४१
भूमियिलोरु नृपश्रेष्ठनु मकळायि
कोमळरूपिणियाय्पिरक्क नीयु वाले ! ४२
भर्त्ताक्कन्मारु निनक्कञ्चुपेरुण्टाय्वरि-
कुत्तमन्मारायेटमुत्तमगुणशीले ! ४३
देवकार्यवु साधिप्पिक्क नीयेन्नीवण्ण
देवदेवेशनरुळ्चेय्ततु केट्टनेरं । ४४
पञ्चभर्त्ताक्कळोरु नारिक्कुण्टामो नाथ
पञ्चबाणारेयतु धर्म्ममल्लेन्नु केळ्प्पू । ४५
वामदेवनु चिरिच्चरुळिच्चेय्तीटिनान् ।
वामलोचने ! केळ्क्क कारणमतिन्नु नी । ४६
भर्त्तार देहीति भूयो भूयो भूयो मुदा
सत्वरमत्याग्रहालञ्चुरु प्रार्त्थिक्कयाल् । ४७

हो, इसलिए पृथ्वी पर जाकर जन्मो। एक राजपुत्री होकर तृप्ति होने तक सभी कामभोगो का यथेष्ट अनुभव करो। राजा द्रुपद की पुत्री हो जाओ और वहाँ पाँच भूपालवीर तुम्हारे पति हो जायँ।" ३४-३९ महामुनि मौद्गल्य ने जब इस प्रकार कहा, तब भवँर की तरह काले-काले केशवाली (नालायणि) तप करने वन चली गयी। कामदेव के शत्रु चन्द्रशेखर, नीलकण्ठ, शिवजी प्रत्यक्ष हुए और बोले। "हे वाले! तुम पृथ्वी पर एक नृपश्रेष्ठ की कोमलरूपवाली पुत्री के रूप मे जन्म लो। और हे उत्तम गुणवाली! तुम्हारे उत्तम गुणवाले पाँच पति भी हो। तुम देवो का कार्य सिद्ध करो।" देवदेवेश (शिव) की यह बात सुनकर उसने कहा "हे नाथ! एक स्त्री के पाँच पति कैसे हो सकते है? ४०-४५ तब वामदेव (शिवजी) ने हँसकर कहा—"हे सुन्दरि! इसका कारण सुन लो। तुमने जो पाँच बार बड़े सभ्रम के साथ 'पति दो' 'पति

पञ्चेन्द्रोपाख्यान

मुन्न देवकळेल्ला नैमिशारण्यत्तिङ्कल्
निन्नोरु सत्रमारभिच्चितु नरपते ! १
नल्लोरु पत्नियेयुमुण्टाक्कि वैवस्वतन्
कल्याण वन्नीटुवान् तापसेन्द्रन्मारोटु । २
यागवु दीक्षिच्चिरुन्नीटिनानतुकाल
रोगादि मरणवु मनुष्यर्क्किल्लातेयाय् । ३
मर्त्त्यन्माक्कवनियिल् मरणमिल्लाय्कयाल्-
वर्द्धिच्चुचमञ्जितु देवकळतुकोण्टु । ४
सुत्रामादिकळ् पोयि ब्रह्मनेच्चेन्नु कण्टा-
रेत्रयु भयमायिच्चमञ्जु अङ्ङळ्क्किप्पोळ् । ५
मर्त्यरुममर्त्यरुं भेदमिल्लेन्नाय् वन्नु
सत्रवु पितृदेवादिकळ्क्किल्लेन्नाय् वरुं । ६
सन्तापमतुकोण्टु चित्तत्तिलुण्टाकुन्नु
निन्तिरुवटियेन्नि शरणं अङ्ङळ्क्किल्ल । ७
शक्रादि देवगणमित्थ चोन्नतु केट्टु
पुष्करभवननु पुञ्चिरिपूण्टु चोन्नान् । ८
अमरन्मारां निङ्ङळेन्तिनु पेटिक्कुन्नु
शमनवशन्मारां मानुषजनङ्ङळे ? ९

पॉच इन्द्रो का उपाख्यान

हे राजवर ! पूर्वकाल मे देवो ने नैमिपारण्य मे एक सत्र (यज्ञ) प्रारभ किया। तव वैवस्वत (यमराज) ने अपनी अच्छी पत्नी के साथ लोक का कल्याण साधने के लिए तापसवरो के अनुग्रह-सहित यज्ञ दीक्षा ले ली, और मनुष्यो मे व्याधि और मृत्यु का अभाव हो गया। पृथ्वी पर मनुष्यो का मरण न होने से उनकी सख्या वढी। अतएव इन्द्र आदि देवगण ब्रह्मा के पास पहुँचे और वोले—ब्रह्माजी ! अव हमारे सामने एक वड़ा भय उपस्थित है। क्योकि अव मनुष्य और देवो मे कोई भेद न रहा ! अव पितरो और देवो के लिये सत्र न होने की दशा हो जायगी। इसलिए हम लोग वहुत दु खित है और आप ही लोगो के शरण है। शक्र (इन्द्र) आदि देवो की यह वात सुनकर ब्रह्मा ने मुस्कराकर कहा— १-८
आप लोग अमर होकर यमराज के वश मे स्थित मनुष्यो से क्यो डरते है ?

सङ्करदोषमिनिक्कुण्टाकॆन्नतु केट्टु
शङ्करन् नाळायणियोटरुळ्चॆय्तीटिनान् । ५७
पण्टु नारिकळनावृतमारत्रे निन-
क्कुण्टाकयिल्ल दोषमतिनालॊन्नुकॊण्टुं । ५८
ऒंङ्किलुमिनिक्कञ्चु भर्त्ताक्कन्मारुण्टायाल्
संगमे पुनरपि कौमार भविक्कण । ५९
भर्तृ शुश्रूषकॊण्टु सिद्धियॆ प्रापिच्चेन् ञा-
नॆत्तेणमिनिक्किनिस्सिद्धियुमितिनाले । ६०
सिद्धियुं रतियुं केळन्योन्यं भविक्कयि-
ल्लुत्तमे सिद्धि लभिच्चीटा दुर्भगयाकिल् । ६१
सिद्धिक्कु रतिगुण सुभगय्क्कॆन्नु नून
सिद्धिक्कुं विरोधमिल्लेतुमे निनक्कॆटो । ६२
कौमारमञ्चु भर्त्ताक्कन्मारॆक्कॊण्टु प्रापि-
च्चामोद पूण्टु महाभागयाय् भविक्क नी । ६३
चॆन्नु नी गगाजलतन्निल् निल्क्कॆन्नाल् काणा-
य्वन्नीटुमॊरु पुमान्तन्नॆयॆन्नरिञ्ञालु । ६४
विण्णवर् नाथनवनाकुन्नतवने नी-
यॆन्नुटॆ मुन्पिल् कॊण्टुवन्नीटु मटियातॆ । ६५
अन्नेरं प्रदक्षिणचॆय्तु वन्दिच्चु पोयि
कन्यकतानु गगतन्नॆ प्रापिच्चाळल्लो । ६६

"पूर्वकाल में स्त्रियाँ बिलकुल स्वतन्त्र थी। इस विवाह से तुम्हारी कोई हानि न होगी।" ५२-५८ "फिर भी मुझे अगर पाँच पति होने है। (तो) ऐसा कीजिए कि सगम के बाद भी मेरा कौमार्य सुरक्षित रहे मैंने पति की सेवा करके ही सिद्धि प्राप्त कर ली है, यह करने के बाद भी मै सिद्धि प्राप्त करना चाहती हूँ।" (शिवजी ने कहा) "हे महिलोत्तम! सुनो। सिद्धि और रति दोनो मेल नही खा सकती है। जो दुर्भगा (भाग्यहीना) है उसको सिद्धि प्राप्त न होगी। जो सुभगा (भाग्यवती) है, उसके लिए रतिगुण तो होगा ही। तुम सिद्धि भी अवश्य प्राप्त करोगी। पाँच पतियो के होते हुए भी तुम कौमार्य-सहित रहो और बड़े प्रमोद के साथ सौभाग्यवती हो जाओ। अब चलो और गगा के जल मे खड़ी हो जाओ। तब तुम्हे एक पुरुष दिखायी देगा। वह देवों का अधिपति ही होगा, उसे मेरे सामने अविलम्ब ले आओ।" यह सुनकर कन्या शिवजी की प्रदक्षिणा करके और वन्दना करके निकली और गगाजी के पास पहुँची। ५९-६६

निर्भाग्यवतियायोरेन्नुटे दु:खमूल-
मिप्पोळ् ञानरियिक्कामेन्नोटुकूटेप्पोन्नाल् । २०
उन्परिल् वन्पु मुन्पुमुळ्ळ नी पोन्नीटुक
मुन्पिल् ञान् नटन्नीटामेतुमे मटिक्केण्टा । २१
अन् परितापत्तिन्टे मूलवुमरिञ्ञीटा
निन् प्रियमतु वरुमेन्नवळ् चोल्लीटिनाळ् । २२
अन्नेरमवळुटे पिन्नाले चेन्ननेरं
विण्णवर् नायकनु काणाय् वन्नितु नेरे २३
दिव्यनायिरिप्पोरु पुरुषन्तन्ने पूर्ण-
यौवनत्तोटुमोरु युवतीरत्नत्तोटु । २४
पर्व्वतशिरसि सिहासनत्तिन्मेलति-
गर्व्वेण चूतु पोरुतिरुन्नीटुन्नतप्पोळ् । २५
अभ्युत्थानादि सल्क्कारङ्ङळ् चेय्यायकमूल-
मभ्रवाहनन् कोपिच्चवळवु विश्वनाथन् २६
मन्दहासवुचेय्तु तृक्कण्पार्त्ततुनेर-
मिन्द्रनुमिळकाते निन्नितु कुरञ्ञोन्नु । २७
देवनुमक्षक्रीड कळिञ्ञोरनन्तर
देवियोटरुळ्चेय्तु नीयिनियोन्नुवेणं २८
इप्पोळे पुरन्दरदर्प्पत्तेक्कळयेणं
पिल्पाटु नन्नाय्वरुमिल्ल सशयमेतु । २९

वतला दूँगी । देवो मे सबसे शक्तिशाली आप चले, मैं आगे-आगे चलूंगी, आप बिना हिचक के आइए । मेरे दु ख का कारण भी मालूम हो जायगा और आपका भी हित हो जायगा । उसने इतना कहा । १६-२२ जब देवो के राजा उसके पीछे-पीछे जा रहे थे तब ठीक सामने एक यौवन-से विराजमान दिव्यपुरुष और एक स्त्रीरत्न दिखायी दिये । पर्वत के शिखर पर दोनो एक सिहासन पर बैठे बड़े गर्व के साथ जुआ खेल रहे थे । जब उन्होने उठकर सत्कार नही किया तब इन्द्र क्रुद्ध हुआ । शिवजी मुस्कराये और अपने तृतीय नेत्र से देखते रहे । इन्द्र भी बिना हिले थोडी देर खडा देखता रहा । जुआ का खेल समाप्त होने के बाद शिवजी ने देवी से कहा "तुम्हे एक काम करना है । इन्द्र के घमड को अभी नष्ट करना चाहिए, आगे इसका फल अच्छा होगा, इसमे सन्देह नही ।" २३-२९ जब देवी ने इन्द्र का स्पर्श किया, तत्क्षण ही इन्द्र

अन्तकनिङ्ङु यागं दीक्षिच्चु वसिक्कया-
लन्त मानुषजनङ्ङळ्विकप्पोळिल्लात्ततु । १०
निङ्ङळु निङ्ङळुटे वीर्यकोण्टवनुटे-
यगमाय् भविच्चिट्टु कोल्लुविन् मनुष्यरे । ११
धाताविन्नरुळ्प्पाटिङ्ङने केट्टशेष-
मादितेयन्मारेल्ला पोयितु यागत्तिङ्कल् । १२
चेन्नवर् मन्दाकिनितङ्कल् वाणीट्टु नेर
स्वर्णवर्णत्तोटोरु पुण्डरीकत्तेक्कण्टार् । १३
चित्रमेत्रयुमतेन्नोर्त्तवरेल्लारिलु-
मेत्रयुं शूरनाय सुत्रामावतुनेर । १४
तत्र चेन्नीट्टुन्नेर काणायितोरुत्तिये-
च्चित्रभानुविनुनेराकिय तेजस्सोट्टु । १५
अन्नेरं जलार्त्थिनियायेट करयुन्न
तन्वितन् कण्णुनीरु वीणितु जलंतन्निल् । १६
अविटेयुण्टायोरु काञ्चनपद्म कण्टि-
ट्टवळोटमरेन्द्रन् चोदिच्चु मधुरमाय् । १७
आरेटो नीयेन्नेन्नोटादराल् पऱयण
नेरोटे करयुन्नतेन्तिनेन्नतु चोल् नी । १८
अेन्नतु केट्टनेरमवळु चोल्लीटिना-
ळेन्ने नीयऱियुन्नतिल्लयो देवपते । १९

इधर यमराज यज्ञदीक्षा लिए हुए है। यही कारण है कि मानव आज कल नही मर रहे है। आप लोग अपने वीर्य से यमराज का अग बनकर मनुष्यो का नाश कर दीजिए। जब इन्द्र आदि ने ब्रह्मा की यह आज्ञा सुनी तब वे सब यज्ञ मे गये। जब वे गगा के तट पर पहुँचे तब उन्होने सुवर्ण के रग का एक पुण्डरीक देखा। यह कितना सुन्दर है! ऐसा समझकर उनमे से सबसे अधिक शूर इन्द्र जब उसे देखने गया तब सूर्य के समान तेज धारण करनेवाली एक स्त्री दिखायी दी। ९-१५ जल की प्यास के कारण रोनेवाली उस महिला के आँसू जल मे गिरे। तत्काल ही वहाँ एक सुवर्ण-वर्ण का कमल पैदा हुआ। उसे देखकर इन्द्र ने मधुर स्वर से स्त्री से पूछा--कहो, तुम कौन हो और क्यो रो रही हो, यह भी बतलाओ। यह सुनकर उसने उत्तर दिया--हे देवो के नाथ, क्या आप मुझे नही पहचानते ? मेरे साथ चलिए तो मै अभागिनी अपने दु:ख का कारण

दिव्यशस्त्रास्त्रङ्ङळाल् दुष्टरेयोक्क वधि-
च्चुर्व्वीभारवु तीर्त्तु वरुविन् निङ्डळेल्लां । ४०
पूर्व्वेन्द्रन्मारुमतुकेट्टुरचेय्तीटिनार्
पार्व्वतीपते ! मोक्ष अङ्ङडळक्कु तन्नीटेणं । ४१
वीर्यकर्त्ताक्कन्माराय् वरिकवेण धर्म्म-
राजनुमनिलनुमिन्द्रनु दस्रन्मारु । ४२
पिन्नेयु वज्रपाणि चोल्लिनान् भगवानो-
टोन्ननुग्रहिक्केणमिनियु दयानिधे ! ४३
कार्यकारणालिनि ञानोरु पुरुषने
वीर्यकोण्टुण्टाक्कुवनतिनुण्टोन्नुवेण्टु । ४४
पञ्चमं मल् प्रसूतमाक्केणमिवरिल् वे-
च्चञ्चिततेजोबलवीर्यश्रीकीर्त्तियोटे । ४५
अतु केट्टवनोटु कूटि विश्वेशन् चेन्नु
मधुसूदनन्तन्नै प्रार्त्थिच्चु वृत्तान्तवु । ४६
अरियिच्चुतुनेर नरनारायणन्मार्-
पिरविकूटेयुण्टामेन्नालिन्द्रन्टे वीर्य । ४७
नरन्तन्नुटेयशमाय्क्कोळ्ळामलयल्ल
नरकवैरिकेशयुगळांशवुमिप्पोळ् । ४८
शुल्कमा वर्ण्णमोन्नु मटेतु कृष्णवर्ण्ण
तल्केशयुगळ तल्क्षत्तङ्ङडळाकुन्नतु । ४९

पृथ्वी का भार थोडा हल्का करके आप लोग वापस आवे। यह सुनकर पहलेवाले चारो इन्द्रो ने कहा—"हे पार्वतीपते! हम लोगो को मोक्ष दे दीजिए। यमराज, वायुदेव, इन्द्र और अश्विनीकुमार वीर्य (पराक्रम) के काम करनेवाले हो जायँ! ३६-४२ फिर वज्रपाणि इन्द्र ने शिवजी से कहा—हे दयानिधे! कृपया एक और अनुग्रह कर दीजिए। कार्य-सिद्धि की दृष्टि से मै अपने वीर्य से एक पुरुष की सृष्टि करनेवाला हूँ। उसमे आपकी सहायता चाहिए। इनमे से पाँचवाँ मेरा ही पुत्र हो अत्यन्त तेज, बल, वीर्य और कीर्त्ति से सम्पन्न हो। यह सुनकर विश्वेश (शिवजी) उसके (इन्द्र के) साथ मधुसूदन (विष्णु) के पास गये और उनको सारा वृत्तान्त सुनाया। तब उन्होने कहा—'नर और नारायण का भी जन्म होगा। इन्द्र का वीर्य नर का अश बन जायगा। इतना ही नही। नरकवैरि (कृष्ण-विष्णु) के दो वालो (एक सफेद और दूसराकाला) का भी

देवियाल् सस्पृष्टनायीरुनेरत्तुतन्ने
देवेन्द्रन् वित्रस्तङ्ङळाकुमंगङ्डळोटुं । ३०
वीणितु भूमितन्निलन्नेर पशुपति:
वानवर्कोनोटित्थमरुळिच्चेय्तीटिनान् । ३१
पर्व्वतोत्तमन्तन्ने पोय् विवर्त्तनं चेय्क
दुर्व्वीर्यमुळ्ळ भवानन्नेरं काणामल्लो । ३२
निन्नोटु तुल्यन्मारायु नालुपेरेयुमवर्
विण्णवर् नायकन्मारायतेन्नरिक नी । ३३
अन्नतु केट्टु शक्रन् पर्व्वतोत्तमन्तन्ने
चेन्नुटन् विवर्त्तनंचेय्तप्पोळ् काणायवन्नु । ३४
तुल्यतेजसा नालिन्द्रन्मारेयोरुपोले
स्वर्लोकनाथन्तानु वेपथुपूण्टानप्पोळ् । ३५
ञानुमिन्निवर्कळेप्पोलेयाय् चमञ्ञीटु
नूनमेन्नोर्त्तु भयप्पेट्टितु पुरन्दरन् । ३६
वज्रपाणिये नोक्किक्कोपिच्चु गिरीशनु-
मुज्ज्वलिच्चेटं दीप्तिपूण्टुटनरुळ्चेय्तु । ३७
धिक्करिच्चतु मूलं शक्रन्मारायनिङ्ङळ्
निष्कृतियाय् मानुपयोनियिल् पिरक्कपोय् । ३८
भार्ययायवरुमिवळ् निङ्ङळ्क्कैवक्कुं कूटि-
क्कार्यङ्ङळ् पलतुण्टु निङ्ङळाल् साधिप्पानु । ३९

काँपता हुआ भूमि पर गिर पड़ा और तव शिवजी ने देवों के नाथ से इस प्रकार कहा—"आप जाकर पर्वतोत्तम को उलट दीजिए, तव दुर्वीर्यवाले आपको आपके तुल्य वीर्यवाले चार और इन्द्र दिखायी देगे। जान लीजिए वे भी देवो के नायक ही है।" यह सुनकर शक्र (इन्द्र) ने पर्वतोत्तम को उलट दिया। उस समय समान तेजवाले चार और इन्द्र दिखायी दिये, उन्हे देखकर स्वर्गलोक के नाथ इन्द्र काँपने लगे। ३०-३५ (और सोचने लगे कि) "मैं भी इन्ही की तरह हो जाऊँगा इसमे सन्देह नही।" यह सोचकर पुरन्दर (इन्द्र) डर गये। वज्रपाणि (इन्द्र) को देखकर शिवजी क्रुद्ध हुए और जाज्ज्वल्यमान होकर वोले—"चूँकि आपने मेरा अपमान किया, इसलिए आप पाँचो इन्द्र जाकर मानुप-योनि मे जन्म लो। यह आप पाँचो की पत्नी हो जायगी। आप लोगो से वहुत कुछ कार्य कराना है। दिव्य अस्त्रो और शस्त्रो के द्वारा दुष्टो का निग्रह करके,

ज्ञानमिल्लात ञङ्ङळेन्तरिञ्ञरिक्कुन्नु
ज्ञानिकळाय निङ्ङळ् चोन्नतु केळ्क्कयेन्नि ? ५९
ऍल्लां निन्तिरुवटियरुळिच्चेय्युंवण्ण-
मिल्लल्लो ञङ्ङळ्क्कु मटाधारं तपोनिधे ६०

पञ्चनैतन्तवचरितं

वादरायणमुनि पिन्नेयुमरुळ्चेय्तु
सादरं द्रुपदभूपालनोटतुनेर । १
केळ्क्कण पुरावृत्त चोल्लुवन् नृपाधिप !
भाग्यवारिधे विषादिक्कोला चेरुते नी । २
पण्टोरु राजर्षि नितन्तुवेन्नुळ्ळ पेरा-
युण्टायान्नवनञ्चु पुत्ररुमुण्टायवन्नु । ३
साल्वेयन्तानु शूरसेननु श्रुतसेनन्
बाल्यज्ञानिकळ् तिन्दुसारनु मतिसारन् । ४
अश्वमेधादिकळुं चेय्तवरैवरुमाय्
विश्वासमन्योन्यं पूण्टेकमानसन्मारायृ । ५
विश्रुतकीर्त्तियोटुमोरुमिच्चन्नुदिनं
विश्वपालनं चेय्तु मरुवीटिनकालं । ६
भौमाश्विर्येन्नवळे वेट्टितैवरुं कूटि-
क्कौमारवयस्सिङ्कल् सुखिच्चु भार्ययोटुं । ७

वैसे ही हम सब करेंगे, हे तपोनिधे ! हमारा और कोई आश्रय नही है।" ५२-६०

पाँच नैतन्तवों का चरित

मुनि वादरायण ने फिर राजा द्रुपद से सादर इस प्रकार कहा—"हे राजन् ! मैं एक और प्राचीन कथा कहूँगा, सुन लीजिए। हे भाग्य के समुद्र ! आप व्यर्थ विषाद न कीजिए। पूर्वकाल में नितन्तु नामक एक राजर्षि थे। उनके पाँच पुत्र हुए, जिनके नाम थे—साल्वेय, शूरसेन, श्रुतसेन, तिन्दुसार, मतिसार। पाँचों बचपन से ही बड़े विद्वान् थे। पाँचों ने अश्वमेध आदि यज्ञ किये। परस्पर विश्वास के कारण उन पाँचों का मन एक था। पाँचों ने बड़ी कीर्त्ति के साथ प्रतिदिन मिल-जुलकर पृथ्वी का पालन किया। पाँचों ने मिलकर भौमाश्वी से विवाह किया और

अवयुं यदुकुले नारिकळाय्वन्नीटु-
मवक्कुं नामधेयं रोहिणि देवकियु । ५०
अवरिल् शुल्क वलदेवनाय् भविच्चीटु-
मवनीपते! पिन्नेक्केशवन् कृष्णाशवु । ५१
इत्थमञ्चिन्द्रन्माक्कुळ्ळभिमानांश वन्नु
पृत्थ्वियिल् पाण्डवन्मारायतु नरपते ! ५२
लक्ष्मितन्नशव्यक्तिरूपयां कृष्णतानु-
मिक्षितितन्निल् तव पुत्रियाय् पिरन्नतुं । ५३
व्यक्तमाय्क्काण्मान् दिव्यलोचन नल्कीटुव-
नोक्कवे तीरुं तव सशयमेन्नालिप्पोळ् । ५४
उळ्क्कान्पु तेळियेणमेन्नरुळ्चेय्तु मुनि-
मुख्यनुं दिव्यचक्षुस्सवनु नल्कीटिनान् । ५५
पञ्चपूर्व्वेन्द्रन्मार् तन्नभिमानांशं पोन्नु
पञ्चपाण्डवन्मारायक्काणायि पाञ्चालनु । ५६
ओरुत्तन् पलरायिट्टिरिक्कुन्नतुमेन्न-
न्नङ्कुरुच्चु मनसि पाञ्चालनुमतुनेरं । ५७
पादपङ्कजङ्ङळिल् वणङ्ङिच्चोल्लीटिनान्
वेदव्यासनें नोक्कित्तेळिञ्ञु भक्तियोटे । ५८

जन्म होगा । वे पत्नी वन जायेगे । वे यदुकुल मे महिलाएँ हो जायेगे । उनके नाम होगे रोहिणी और देवकी । हे भूपाल! उनमे सफेद वाल का जन्म वलदेव के रूप में और काले वाल का जन्म कृष्ण के रूप मे होगा ।" ४३-५१ हे राजन् ! इस प्रकार पाँच इन्द्रो के अभिमानाश ही पाँच पाण्डवो के रूप मे इस पृथिवी मे आये है । और कृष्णा (द्रौपदी) जो लक्ष्मी के अश का प्रकाश है वही इस पृथ्वी मे तुम्हारी पुत्री के रूप मे जन्मी है । यह सव स्पष्ट देखने के लिए मैं आपको दिव्य दृष्टि दूँगा ताकि आपका सारा सन्देह नष्ट हो जाय । यह आवश्यक है कि चित्त निस्सन्देह हो । इतना कहकर मुनिवर ने दिव्यचक्षु दे दिये । तव पाञ्चालराजा को पहलेवाले पाँचो इन्द्र पाँच पाण्डवो के रूप मे दिखायी दिये । तव पाञ्चालराजा को मन मे विश्वास हुआ कि एक ही व्यक्ति पाँच रूप धारण किये हुए है । तदनन्तर पाञ्चालराज वेदव्यासजी के चरणो पर गिर पडे और भक्ति के साथ वोले—"ज्ञानरहित हम लोग क्या जानते है ? आप ज्ञानी लोगो का कहना मानने के अतिरिक्त हम क्या करे ? जैसे आप महानुभाव वतावेगे

पिन्नेयु पिन्नेयुं नी भर्त्तारं देहियेन्न-
तेन्नोटञ्चुरु वरिच्चीटुकनिमित्तमाय् । १८
पञ्च भर्त्ताक्कन्मारुण्टाकेन्नोरनुग्रह
पञ्चबाणारितानु कोटुत्तानल्लो मुन्नं । १९
मुनिकन्यकयवळ् निन्नुटे मकळाय-
तनवद्यागि कृष्णयेन्नतुमरिञ्ञालुं । २०
अन्निवयेल्लामोर्त्तालु पाण्डवरैवरुमाय्
निन्मकळ्तन्ने वेट्टुकोळ्ळुक मटियाते । २१
वेदव्यासनु पाञ्चालनुमन्योन्य पर-
ञ्ञेतुमे दोषमिल्लेन्नुरच्चु पुरप्पेट्टु । २२
कुन्तियु पुत्रन्मारु धृष्टद्युम्ननुं वाळु
मन्तशालयिल्च्चेन्नु परञ्ञु वैकियाते । २३
दैवकल्पितमोळिक्कावतल्लोरुवक्कुं-
मैवरुंकूटि वेट्टुकोण्टालुमेन्नारवर् । २४
काञ्चनाभरणालेपनवस्त्रादिकळाल्
पाञ्चालितन्नेयलङ्करिप्पिच्चगनमार् । २५
मोहनमाकियोरु देहंपूण्टवळ्तन्ने
रोहिणियोटु चेर्न्नु शीतांशु मरुवुन्नाळ् । २६
सव्यसाचियु ज्येष्ठकनिष्ठन्मारु कूटि-
द्दिव्यवेषत्तोप्पूण्टु दानङ्ङळेल्लांचेय्तु । २७

पूर्वजन्म मे सेवा करने के कारण, तथा 'मुझे पति दो' इस प्रकार पाँच बार याचना करने के कारण भी, पञ्चवाण (कामदेव) के शत्रु शिवजी ने इसे 'तुम्हारे पाँच पति हो' इस प्रकार वर दिया है। जान लीजिए कि वही कन्या आपकी सुन्दरी पुत्री कृष्णा (द्रौपदी) के रूप मे जन्मी है। इन सब बातो पर विचार किया जाय तो पाँचो पाण्डव मिलकर आपकी पुत्री से विवाह कर सकते है।" १६-२१ इस प्रकार वेदव्यासजी और पाञ्चालराज ने आपस मे बातचीत करके निश्चय किया कि इसमे कोई दोष नही है। तदनन्तर वे वहाँ गये, जहाँ कुन्ती, उनके पुत्र और धृष्टद्युम्न थे और उनसे सब कह दिया। और उन्होने कहा—"ईश्वर जो चाहता है, उससे कोई बच नही सकता। पाँचो मिलकर विवाह करो।" महिलाओ ने सोने के आभूषणो और आलेपन तथा वस्त्रो से पाञ्चाली को सजाया। और उसने ऐसा मोहन रूप धारण किया, जैसे चन्द्रमा रोहिणी के साथ

पञ्चभूतङ्ङळो पञ्चेन्द्रियङ्ङळो बत
पञ्चगोचरङ्ङळो पञ्चमारुतन्मारो । ८
पञ्चमूर्त्तिकळो भूपालकन्मारामिवर्
किञ्चन भेदमिल्ल तङ्ङळिलोरुनेरं । ९
विख्यातगुणंकोण्टु लोकरुं प्रशंसिच्चु
दुःखवुमकन्नवरैवरुं कूटि वाणार् । १०
अक्कालमैववर्कुमायञ्चु नन्दनन्मारुं
विख्यातन्मारायुण्टायवन्नितु धरापते ! ११
चोल्लुन्नु नैतन्तवन्मारेन्नु नाममव-
र्क्केल्लाक्कुमोरो राज्यं वेव्वेरुण्टायवन्नु । १२
भूमियिल् नैतन्तवन्मारुटे पारम्पर्य
भूमिपालक ! पञ्चमात्स्यन्मारिञ्ञालुं । १३
नल्ल साल्वेयन्मारुं शूरसेनन्मारेन्नुं
चोल्लुन्नु श्रुतसेनन्मारेन्नुमवर्कळे । १४
तिन्दुसारन्मारेन्नु मतिसारन्मारेन्नु-
मिन्द्रसम्मितसमाज्ञाकरन्मारायिन्नुं । १५
ओरोरोमूलमिव वेव्वेरे निरूपिच्चा-
लारालुं तटुक्कावोन्नतल्लीश्वरमतं । १६
पन्नगाभरणनुमरुळिच्चेय्तानिवळ्-
तन्नुटे पूर्व्वजन्मत्तिङ्कल् सेविच्चमूलं । १७

पत्नी के साथ यौवन मे सुखमय जीवन व्यतीत किया । १-७ ये पाँच भूपाल क्या पाँच महाभूत है, या पाँचो इन्द्रिय है, या पाँचो इन्द्रिय-विषय है, या पाँचो वायु है, या पाँच मूर्तियाँ है ? उनका आपस मे कोई भेद नही है । उनके विख्यात गुणो के कारण लोगो ने उनकी प्रशंसा की । वे दुःख को दूर करके सुख से रहे । हे धरापते ! उस समय उन पाँचो के, पाँच विख्यात पुत्र पैदा हुए । वे नैतन्तव कहलाते है । उनमे हर एक का अपना अलग राज्य हुआ । हे भूपाल, जान लीजिए कि पृथ्वी मे ये पाँच मात्स्य नैतन्तवो की परम्परा मे है । उनको साल्वेय, शूरसेन, श्रुतसेन, तिन्दुसार और मतिसार कहते है और वे उनको इन्द्र के समान राजा समझते है । ८-१५ इन भिन्न-भिन्न कारणो पर अगर अलग-अलग विचार किया जाय तो स्पष्ट है कि ईश्वर का मत कोई नही रोक सकता । पन्नगाभरण (शिवजी) ने भी ऐसा ही कहा है । इस आपकी कन्या द्वारा

पटहमुखवाद्यादिकळु दिव्यङ्ङळां
कोटिकळ् तोरणङ्ङळ् चामरङ्ङळु मटु । ३७
पार्त्थिवोचितङ्ङळायुळ्ळव पलतर-
मास्थया कोटुत्तितु पेर्त्तुमानन्दमूर्त्ति । ३८
पार्त्थन्मार् भक्तियोटे वाङ्ङिनारवयेल्लां
चीर्त्तकौतुकत्तोटे वसिच्चु पाञ्चालियुं । ३९

धार्त्तराष्ट्रन्मारुटे कुण्ठतं

कुन्तीपुत्रन्मारुटे परमार्त्थङ्ङळ् परि-
पन्थिकळरिञ्ञप्पोळन्तस्तापवु पूण्टार् । १
वेन्तुपोयवरेल्लामिङ्ङने चमञ्ञवा-
रेन्तोरु कष्टमतु चिन्तिच्चाल् चित्रं चित्रं । २
नन्दितन्मारायोरु सज्जनङ्ङळालति-
नन्दितन्मारायवन्नु धार्त्तराष्ट्रन्मारेल्लां । ३
चिन्तिच्चु कर्ण्णगान्धारादिकळोटु चेर्न्नु
मन्त्रवुं तुटङ्ङिनार् दुरियोधनादिकळ् । ४
अन्नेरं शकुनियु परञ्ञारिवरे ना-
मिन्निनियोटुक्केणमेतुमे वैकियाते । ५
पार्त्तोळं पिळयत्रे नमुक्केन्नरिञ्ञालुं
कीर्त्तियुमुण्टायवन्निनतवर्क्किन्नतुमूलं । ६

आनन्दमूर्ति नारायण ने वडे आदर के भेंट की। पाण्डवों ने वडी भक्ति के साथ सव स्वीकार किया और पाञ्चाली वड़ी प्रीति के साथ वहां रहने लगी। ३४-३९

धृतराष्ट्र के पुत्रों का नैराश्य

कुन्ती के पुत्रो के संवन्ध मे सभी वास्तविक वृत्तान्त जानकर उनके शत्रु अत्यन्त खिन्न हुए। उनके इस स्थिति पर पहुँचने पर वे सव जल उठे। कैसी कष्ट की वात है! सोचने पर विचित्र मालूम होता है। जो सज्जन उनकी स्थिति पर प्रसन्न हुए उन्होने धार्तराष्ट्रों की निन्दा की। दुर्योधन और उनके साथी कर्ण और गान्धार के साथ विचार-विमर्श करने लगे। तव शकुनि ने कहा—"अव विना विलम्व के इन पाण्डवो को समाप्त करना चाहिए। विलम्व करके हम लोगो ने गलती की, इसीलिए

धौम्यना पुरोहितन्तन्नुटे नियोगत्ताल्
काम्याङ्गियुटे पाणिग्रहणं क्रमत्ताले । २८
विधिच्चवण्णं चेय्तु वसिच्चीटिनकालं
कौतिच्चवण्णतन्ने योगं वन्नतुमूल । २९
स्त्रीधनं कोटुत्तितु पाञ्चालननवधि
गोधनधान्यरथतुरगगजनर- ३०
साधनान्वितदासदासीयानादिकळुं
मोदेन परिग्रहिच्चीटिनान् धर्म्मात्मजन् । ३१
सन्तोषं कैक्कोण्टाशीर्व्वचनङ्ङळुं चोल्लि
कुन्तियु द्रौपदिक्कु चोल्लिनाळुपदेशं । ३२
ओरोरो पतिव्रता धर्म्मङ्ङळ् परञ्ञुळ्ळि-
लारूढानन्दंपूण्टु सुखिच्चुवाळुकालं । ३३
श्रीवासुदेवन् जगन्नायकन् नारायणन्
देवदेवेशन् भक्तवत्सलन् जनार्द्दनन् ३४
कार्व्वर्ण्णन् कारुण्याब्धि माधवन् प्रीतिपूर्व्व-
मावोळं धनरत्नमाशु सल्क्कारं चेय्तु । ३५
पटयु भण्डारवुमाभरणादिकळुं
कुटयु तळकळु तालवृन्तादिकळु । ३६

रहते समय धारण करता है । अर्जुन ने अपने ज्येष्ठ और कनिष्ठ भाइयो के साथ द्विव्य वेप पहन लिया और विविध दान किये । २२-२७ पुरोहित धौम्य के निर्देशानुसार सुन्दरी द्रौपदी का पाणिग्रहण क्रम से विधिवत् सम्पन्न हुआ और सब सुख से रहने लगे । सब काम अपनी इच्छा के अनुसार हो जाने के कारण पाञ्चालराज ने बहुत स्त्रीधन (दहेज) दिया । और युधिष्ठिर ने भी अनेक गाये, धान्य, रथ, घोड़े, हाथी, भृत्य, प्रभूत साधन-सहित दास, दासियाँ और अनेक दान स्वीकार किये । कुन्ती को बड़ा हर्ष हुआ । उन्होने द्रौपदी को आशीर्वाद देकर उपदेश भी किया । उन्होने उसको पातिव्रत धर्म समझा दिये । –इस प्रकार सब सुख से रहने लगे । २८-३३ उस अवसर पर श्रीवासुदेव, जगत् के नायक, नारायण, देवो के ईश, भक्तवत्सल, जनार्दन, कृष्णवर्ण, कारुण्य के समुद्र, माधव ने बड़ी प्रीति के साथ बहुत धन और रत्न का पुरस्कार दिया । सेना, भण्डार, अनेक आभूपण, छत्रियाँ, झण्डे, पखे, पटह, मुँह से बजाने योग्य अनेक वाद्य, दिव्यध्वज, तोरण, चामर और अनेक राजाओ के योग्य वस्तुएँ

धन्यन्मारोटु पारं मत्सरमुण्टायवरुं
दुर्न्नयमुळ्ळिलेरुं दुर्भगन्मार्क्कु नित्यं । १७
विद्याभिजात्यवित्तवृत्तशीलौदार्यास्त्र-
मित्ररूपादिगुणकीर्त्तिकळ् काणुतोरुं । १८
मानसे सहियाञ्ञु साधुक्कळ्क्कुळ्ळ गुण-
हानियें वरुत्तुवानेन्तावतेन्नुतन्ने । १९
सन्ततं चिन्तिच्चोळं साध्यमल्लेन्नु कण्टा-
लन्तरं पार्त्तुपार्त्तु मरुवीटिनकालं । २०
छिद्रमेतानु काणाय्वन्नीटुमप्पोळेट्-
मुद्योग कैक्कोण्टतिसाहसचेतस्सोटुं । २१
तन्नेक्काळ् वलियवन्तन्नेयु भेदिप्पिच्चु
तन्नेत्तान् प्रशंसिच्चुळ्ळन्यायकर्म्मं चेय्ताल् । २२
तन्नुटे मित्रत्तोटुकूटवे तानुं वीणु
सन्नमाय् पोकुमल्लो पिन्नेयेन्नतुनेरं । २३
नन्नल्ल महद्वैरमार्क्कुमेन्नरियेणं
वन्द्यन्मारायवरे वन्दिच्चीटुक नल्लू । २४
निन्द्यन्मारायुळ्ळोरे निन्दिच्चिटेण्स्तानुं
निन्द्यनाय् वरिकयिल्लारालुमेन्नालवन् । २५
इत्तरं सौमदत्ति चोन्नतु तेळियाञ्ञि-
ट्टुत्तरमुरचेय्तीलारुमोन्नतुनेरं । २६

निवेदन क्रिया—मुझ मूर्ख की बाते आप बड़े लोग सुनने की कृपा करें। दुर्जनो का सज्जन लोगो के साथ बहुत वैर हो जाता है, और उनकी दुष्टता रोज बढती जाती है। विद्या, कुल, धन, चरित्र, शील, औदार्य, अस्त्र-शस्त्र, मित्र, रूप, गुण, कीर्त्ति आदि औरो के गुणों को वे सह नही सकते, सज्जनों को हानि कैसे पहुँचायी जाय—यही निरन्तर सोचते रहते है। जब उन्हे कोई उपाय नही सूझता है तो वे मौका देखते रहते है। १४-२० जब कोई छिद्र दिखायी देता है, तब साहस के साथ बड़ा प्रयत्न करते है और अपने से बडो से लड़ बैठते है तथा अपनी ही प्रशसा करते हुए अन्याय करते है। तब (वे) अपने मित्रो के साथ गिरते है और नष्ट-भ्रष्ट हो जाते है। इसलिए जान लीजिए कि बडो के साथ वैर करना अच्छा नही है। जो वन्द्य है, उनकी वन्दना करना ही अच्छा है; और जो निन्द्य है, उनकी निन्दा करने की आवश्यकता भी नही है। जो ऐसा करता है, वह कभी किसी के द्वारा

अल्पवीर्यवानाकु पाञ्चालनाश्रयमा-
यिप्पोळिप्पाण्डवन्मारविटे वसिक्कुन्नु । ७
पाञ्चालपुरमेल्लां तकर्त्तु पाण्डवरे-
प्पाञ्चालनोटुकूटे वधिक्कवेणमिप्पोळ् । ८
इत्तर पलवाक्कु शकुनि परञ्ञप्पो-
ळुत्तरं सोमदत्तपुत्रनुमुरचेय्तान् । ९
अेत्रयु पणियतु साध्यमल्लिप्पोळ् नम्माल्
शक्तन्मारल्लो पाण्डुपुत्रन्मारेल्लांकोण्टु । १०
अर्थमित्रास्त्रसम्पत्तिकळुण्टवक्केन्नाल्
शत्रुसहारं चेय्वानर्ज्जुनन्तन्ने पोरुं । ११
वन्धुक्कळायुळ्ळ नामिवर् तङ्ङळिलिन्नु
सन्धियें चेय्यिप्पिच्चु पोकेणमते नल्लू । १२
अेन्नुटे मतमितेन्निङ्ङने सौमदत्ति
चोन्नतु केट्टनेर कर्ण्णनुमुरचेय्तान् । १३
अप्पुर तकर्क्कुन्पोळरिया वलावलं
केल्पोटु पटक्कोप्पु कूट्टुक मटियाते । १४
कर्ण्णनिङ्ङने परञ्ञीटिनोरनन्तरं
पिन्नेयु सोमदत्तनन्दननुरचेय्तान् । १५
मूर्खनायीटुन्न ञान् चोल्लीटु वचनङ्ङळ्
केळ्क्कण महत्तुक्कळायुळ्ळ निङ्ङळेल्ला । १६

उन्होने कीर्त्ति भी कमा ली । ये पाण्डव आजकल अल्पवीर्यवाले पाञ्चाल के आश्रय मे रह रहे है । हमको चाहिए कि हम पाञ्चाल-नगरी को नष्ट करे और पाञ्चालराजा के साथ पाण्डवो को समाप्त कर दे ।" १-८ जव शकुनि ने इस प्रकार की वाते की, तव सोमदत्त के पुत्र ने उत्तर दिया । यह कठिन काम है, यह हमलोगो से न हो सकेगा । हर एक दृष्टि से पाण्डव शक्तिशाली है । उनके पास अर्थ, मित्र, शस्त्र और सम्पत्ति सब है । यो तो शत्रुओ का नाश करने के लिए केवल अर्जुन ही पर्याप्त है । अच्छा तो यही होगा कि हम इन वन्धुओ मे सन्धि कराके चले जायँ । सोमदत्त के पुत्र का यह मत सुनकर कर्ण ने इस प्रकार उत्तर दिया— ९-१३ "जव हम उस नगरी का नाश कर देगे तो पता चलेगा वल किसमे है, और किसमे नही है । अविलम्व सेना तैयार हो जाय ।" जव कर्ण ने इस प्रकार कहा, तव सोमदत्त के पुत्र ने फिर

धृष्टद्युम्ननु पिन्नेंग्शिखण्डि सुमित्रनुं
पुष्टवीर्यवानाकु प्रियदर्शनन् तानु । ६
चित्रकेतुवु सुकेतुध्वजसेनन्मारु
पुत्रन्मारेळुपेरु द्रुपदनृपेन्द्रनु । ७
क्रुद्धन्मारायङ्डटुत्तीटिनारतुनेर
कर्ण्णनु जयद्रथन् तानुमायोरुमिच्चु
कौन्नितु सुमित्रनें प्रियदर्शननेयु । ८
वृत्रारिपुत्रनप्पोळ् कौन्नितु जयद्रथ-
पुत्रनें कर्ण्णात्मजना सुभानुविनेयु ९
सिन्धुभूपनुमगाधिपनुमतुकण्टु ।
कुन्तीनन्दनरथ पूट्टीटुमश्वङ्डळे १०
मून्निनेंक्कौन्नारतुकण्टु भीमनुमतु ।
मून्नु वेगेन योजिप्पिच्चतुकण्टु पार्त्थन् ११
वायुवेगत्तोटटुत्तीटिनानतुनेर ।
सायकावलि सह्यिाञ्ञु कौरवरेल्लां १२
सायुधन्मारायोरोरोदिक्किले पाञ्ञीटिनार्
वायुनुन्नङ्डळाय मेघङ्डळेन्नपोले । १३
मन्नवनाय दुरियोधनन्तन्नेक्कण्टि-
ट्टुन्नतमाय वृक्षं परिच्चङ्डिलयूरि १४
सन्नद्धनायङ्डटुत्तीटिनान् वृकोदरन् ।
खिन्ननायोटि मण्ञ्ञीटिनान् सुयोधनन् । १५

सुमित्र, अत्यन्तवीर्य प्रियदर्शन, चित्रकेतु, सुकेतु, ध्वजसेन—इन सात पुत्रों के साथ द्रुपदराज क्रुद्ध होकर युद्धभूमि में आये। कर्ण और जयद्रथ ने मिलकर सुमित्र और प्रियदर्शन का वध किया। तब वृत्रारि (इन्द्र) के पुत्र (अर्जुन) ने जयद्रथ के पुत्र और कर्ण के पुत्र सुभानु की हत्या की। यह देखकर सिन्धुराज और अगराज ने कुन्तीपुत्र के रथ में लगे घोड़ों में से तीन को मार डाला। यह देखकर भीम ने तीनों को फिर जोत दिया। तब अर्जुन वायु के समान वेग के साथ वहाँ पहुँचा। उसकी शर वर्षा सह न सकने के कारण सब कौरव इधर-उधर अपने आयुध लिये भाग गये, जैसे कि वायुवेग से बादल इधर-उधर भागते हैं। ६-१३ भूपाल दुर्योधन को देखकर भीम ने एक ऊँचे पेड़ को उखाड़ा और पत्ते सब निकालकर युद्ध के लिये तैयारी करके उसकी ओर दौडे। सुयोधन (दुर्योधन)

सिद्धमल्लात मम वाक्कुकळ् कैक्कोळ्ळेण्ट
युद्धत्तिन्निनियेतु पाक्करुतेन्निङ्ङने २७
मन्युभावेन सौमदत्ति चोन्नतुनेरं
सन्नाहमोटु पटक्कूट्टवुमोरुमिच्चु । २८

कौरवपाञ्चालयुद्ध

किटङ्ङुं तीर्त्तु कोट्टयिल्निन्नुम् कुरुसैन्यं
तुटङ्ङुंनेरमतु कण्टु पाञ्चालनृपन् । १
धृष्टद्युम्नादिकळां तन्नुटे पुत्रन्मारुं
पेट्टेन्नु पुरप्पेट्टु नालगण्पटयोटुं । २
भैरवतरतुमुलारवकोलाहल-
भेरीनादत्तोटिटचेर्न्नितु पेरुंपट । ३
कौरवपाञ्चाल भूपालकबलं तम्मिल्
घोरमायीट्टुंवण्णमेटतिन्ननन्तरं । ४
युद्धसन्नद्धन्माराय् पुरप्पेट्टितु पाण्डु-
पुत्रन्मारतुकण्टु वेपथु पूण्टीटिनार्
धार्त्तराष्ट्रन्मार् मोद पूण्टितु पाञ्चालन्मार् । ५

निन्द्य नही ।" जब सोमदत्त के पुत्र ने इस प्रकार कहा, तो किसी को भी अच्छा न लगा और किसी ने कुछ न कहा। तब सोमदत्त के पुत्र ने रुष्टता के साथ कहा—"अगर मेरी बात अच्छी नहीं लगती है, तो कोई न सुने। युद्ध करने मे अब और विलम्ब न किया जाय ।" इस पर सेना इकट्ठी की गयी। २१-२८

कौरव और पाञ्चाल का युद्ध

दुर्ग के चारो ओर खाई पार करके कौरवो की सेना उससे निकलने लगी। यह देखकर पाञ्चालराज अपने पुत्र धृष्टद्युम्न आदिकों और चारो अगवाली अपनी सेना के साथ उठे। घोर और तुमुल सिहनाद, कोलाहल और भेरीनाद करती हुई वह बड़ी सेना शत्रुसेना से मिली। कौरव और पाञ्चाल सेनाओ का घोर युद्ध प्रारम्भ होने के बाद, पाण्डव युद्ध के लिए तैयार होकर निकले, जिन्हे देखकर धृतराष्ट के पुत्र कांपने लगे और पाञ्चालराज के पक्षवाले प्रसन्न हुए। १-५ धृष्टद्युम्न, शिखण्डी,

पार्त्थण्मार् पाञ्चालियें वेट्टु जयिच्चतु
धार्त्तराष्ट्रन्मार् नाणकेट्टु पोन्नतुमेल्ला २६
केट्टु सन्तोषं पूण्टु विदुरर् चेन्नु धृत-
राष्ट्रभूपतितन्नोटीवण्णमद्रियिच्चान् । २७
नाट्टिलुळ्ळवर्क्केल्ला सन्तोषं वाय्क्कुवण्णं
वेट्टितु नराधिप! निन्नुटे पुत्रन्मारिल् ।२८
ज्येष्ठनामवन् द्रुपदात्मजतन्नेयिप्पोळ्
वाट्टमेन्निये कुरुवंशवु वर्द्धिच्चीटु । २९
विदुरवाक्यं केट्टु धृतराष्ट्ररुमति-
कुतुकंपूण्टु दैवानुग्रहमेन्नु चोन्नान् । ३०
तनयन्मारिल् ज्येष्ठनेन्नतुकेट्टु सुयो-
धननेन्नोर्त्तु पुनरन्धनुमुरचेय्तान् । ३१
आभरणङ्ङळेल्ला कोटुत्तीटुक वेणं
द्रौपदिक्कलङ्करिच्चीटुवान् वैकियाते । ३२
वाञ्छया मत्सन्निधौ दुरियोधननोटुं
पाञ्चालितन्ने कूट्टिक्कोण्टिङ्ङु पोन्नीटेणं । ३३
चोल्लिनान् मन्दस्मितं पूण्टुटन् विदुररु-
मल्लल्ल धर्म्मात्मजन् वेट्टितेन्नल्लो केट्टू । ३४
स्वाकाराच्छादनार्त्थं धृतराष्ट्ररुमेङ्किल्
भागधेय पाण्डवन्मार् जीविच्चतुमेन्नान् । ३५

चले गये। पाण्डवों का पाञ्चाली के साथ विवाह करना, युद्ध मे विजय प्राप्त करना, धार्त्तराष्ट्रों का अपयश प्राप्तकर लौटना, यह सब समाचार सुनकर विदुर प्रसन्न हुए और धृतराष्ट्र के पास जाकर इस प्रकार बोले— २१-२७ "देश के रहनेवालो के मन मे हर्ष उत्पन्न करते हुए तुम्हारे ज्येष्ठ पुत्र ने द्रुपदराज की पुत्री से विवाह कर लिया है। अब बिना रुकावट के कुरुवश की वृद्धि होगी।" विदुर की बात सुनकर धृतराष्ट्र को प्रसन्नता हुई और बोले—"यह भगवान् का अनुग्रह हुआ"। २८-३० पुत्रो मे ज्येष्ठ का निर्देश सुनकर अन्धे धृतराष्ट्र ने (अपने ज्येष्ठ पुत्र) सुयोधन को समझा और कहा, "अविलम्ब ही द्रौपदी को सभी आभूषण देना चाहिए, ताकि वह अपने को सजा सके। और फिर दुर्योधन अपनी इच्छा से पाञ्चाली को लेकर मेरे पास आये।" तब मुस्कराते हुए विदुरजी ने कहा, "नही नही, युधिष्ठिर ने उससे विवाह किया, यही मैने सुना।"

मुन्पिले कुरुसैन्यं पाञ्चालपुरमेल्ला
वन्पोटु वळञ्ञप्पोळयच्चु पाण्डवन्मार् १६
वृष्णिकळोटु बलदेवादि वीररोटु
कृष्णन्तन्नोटु वृत्तान्तङ्ङळेयरियिप्पान् । १७
रामकृष्णन्मारतुकेट्टुटनोटिवन्ना-
रामोदपूण्टु चतुरङ्गवाहिनियोटुं १८
धार्त्तराष्ट्रन्मारेल्लां साद्ध्वसन्मारायू पर-
मार्त्तिपूण्टोक्कत्तक्क हस्तिनपुर पुक्कार् । १९
पोकुन्पोळ् दुश्शासनन्तन्नोटु सुयोधन-
नाकुलप्पेट्टु मन्द मन्दमोरोन्नु चोन्नान् । २०
कुन्तियु पुत्रन्मारु जातुषगेहे मुन्न
वेन्तीलेन्नतुमिप्पोळ् निश्चय वन्नतल्लो । २१
बन्धुक्कळवर्क्किप्पोळुण्टायि पाञ्चालनु-
मन्धकवृष्णिकळां रामकृष्णादिकळु । २२
अन्तोन्नु पुरोचनन् चेय्ततु भोषत्वकों-
ण्टेन्तेल्ला वरुमिनि मेलिलेन्नरिञ्ञील । २३
नम्मुटे पौरुषवुमेट धिक्करिक्केणं
निर्म्मलगात्रितन्नेक्कोण्टवर् पोयारल्लो । २४
इत्तर परञ्ञवर् मन्द पोयकंपुक्कु
हस्तिनपुरत्तिङ्कल् वन्धुवर्ग्गङ्ङळोटु । २५

घबडाता हुआ भागा और छिप गया। जब कुरुसेना ने पाञ्चालनगर को घेर लिया तब पाण्डवो ने वृष्णियो, बलदेव आदि वीरो और श्रीकृष्ण को समाचार कहने के लिए आदमी भेजा। समाचार सुनकर बलराम और कृष्ण चतुरङ्ग सेना के साथ सोत्साह दौडे आये। यह देखकर सभी धार्त्तराष्ट्र बडे खिन्न हुए और बड़े दु ख के साथ हस्तिनापुर लौट गये। जाते समय सुयोधन ने विपण्ण होकर दुश्शासन से धीरे-धीरे विविध बाते की। १४-२० जैसे—अब स्पष्ट हो गया है कि कुन्ती और उसके पुत्र लाक्षा-गृह मे जल नही गये थे। अब उनके बन्धु भी हो गये है जैसे पाञ्चाल-राज, राम, कृष्ण, अन्धक और वृष्णि। पुरोचन ने अवश्य कोई मूर्खता की है, उसके फलस्वरूप आगे क्या-क्या होगा, यह समझ मे नही आता है। हमारे शौर्य को धिक्कार है! आखिर पाण्डव सुन्दरी द्रौपदी को ले ही गये! इस प्रकार की बाते करते हुए वे धीरे-धीरे अपने बन्धुओं के साथ हस्तिनापुर

मेदिनीपतियाय धृतराष्ट्रन् तन्नोटु
सादरं धर्म्माधर्म्मङ्ङळु नीतियुमेल्लां । ४६
कर्ण्णगान्धारगान्धारीतनयन्मारेयु
मुन्निलाम्मारु वरुत्तिप्परञ्ञतुनेर । ४७
मन्नवन् धृतराष्ट्रन् तन्नुळ्ळिल् निरूपिच्चु
नन्नल्ल महद्वाक्यमाचरियाञ्ञालिप्पोळ् । ४८
ॲन्नुटे मत वॆळिच्चत्तु काट्टुन्नील ञा-
नॆन्नोटु वॆरुप्पुण्टां पुत्रन्मार्क्कॆन्नाकिलुं । ४९
अङ्ङळ्क्कु नाश भविक्कुन्नतुमिवर्क्कुळ्ळ-
लॊन्नुमे चॆन्नीलॆन्नाल् ञानिप्पोळॆल्लांकॊण्टुं । ५०
नम्मुटे कुलत्तिनु नल्लतु चॊल्लीटुन्न-
धर्म्मिष्ठन्मार्वाक्कुकळ् कैक्कॊळ्ळुन्नतेयुळ्ळु । ५१
इत्थमात्मनि कल्पिच्चवरोटुरचेय्तु
सिद्धान्तं निङ्ङळ्क्कॆल्लामॆन्तॆन्नु चॊल्लीटुविन् । ५२
भद्रमाकुन्नतिप्पोळिविटे नमुक्कॆन्तु
विद्वल्प्रौढन्मार् निङ्ङळ् चिन्तिच्चु कल्पिक्कुन्न । ५३
तुत्तममतिन्नु मटेप्पुरमॊरुनाळुं
वर्त्तिच्चीटुकयिल्ल ञानॆन्नु धरिच्चालुं । ५४
तापवुं मरच्चुळ्ळिल् पुरमे सन्तोषवुं
भूपति भाविच्चवरोटितु चॊन्ननेरं । ५५

कर्ण, गान्धार और गान्धारीपुत्र (दुर्योधन) को भी बुलवाकर, उनके सामने राजा धृतराष्ट्र को, पुरुवश को विपत्ति से बचाने के लिए धर्म, अधर्म और नीति का सादर उपदेश दिया । ३७-४७ तब राजा धृतराष्ट्र ने मन ही मन सोचा, 'बड़ो की बात का उल्लङ्घन करना ठीक नही होगा । मैं अपना मत प्रगट नही करूँगा क्योकि मेरे पुत्र मुझमे अप्रसन्न होगे। उन्होने समझा ही नही कि हमारा नाश हो जायगा । इसलिए सब सोचने के बाद हमारे कुल के हित के लिए जो ये धर्मिष्ठ लोग कह रहे है, मैं उसी को स्वीकार करूँगा ।' इस प्रकार अपने मन मे निश्चय करके बोले, "आप लोग अपना निश्चित मत बतला दीजिए कि मेरे लिए उचित बात क्या होगी । आप विद्वान् और प्रौढ है । आप सोचकर जो कुछ भी आज्ञा देगे, उसे टालकर मैं और कुछ कभी नही करूँगा, जान लीजिए ।" ४८-५४ जब राजा ने अपना दु ख छिपाकर ऊपर से प्रसन्नता दिखाते हुए इस

कुन्तियुं पाण्डवरुं पाञ्चालन् तन्नुटै सं-
बन्धिकळायवन्नितु नन्नायितेन्नु चोन्नान् । ३६
कर्ण्णनु सुयोधननुतानुमाय् विदुरर् पो-
येत्ततुकण्टु चेन्नु मन्नवनोटु चोन्नार् । ३७
ञङ्ङळ्क्कु तिरुमुन्पिल् विदुररुण्टाकया-
लिङ्ङु वन्नुणर्त्तिप्पानिल्लाञ्ञवसरं । ३८
शत्रुक्कळ् वर्द्धिच्चतु नामेल्ला क्षयिच्चतुं
क्षत्ताविनुळ्ळिलु मोदमेन्नतुमरिञ्ञितो ? । ३९
कुन्तीनन्दनन्मारे वैकातेयोटुक्कुवा-
नेन्तोरु कळिवेन्नु पलरुमोरुमिच्चु । ४०
चिन्तिक्कवेणमेन्ने मनसि नमुक्केल्लां
सन्तोषं वरू पुनरल्लायिकिल् तोलि पार । ४१
कर्ण्णनु शकुनियु दुरियोधननुमा-
य्क्कर्ण्णे भूपतियोटु मन्त्रिच्चार् पलतर । ४२
दुर्न्नयं नरपतितन्नोटु दुर्म्मन्त्रिकळ्
चेन्नुपदेशिक्कुन्नतरिञ्ञ भीष्मादिकळ् ४३
पुरुवंशत्तिङ्कलेक्कापत्तु वरायवानाय्
दूरवीक्षणमुळ्ळ शन्तनुतनयनु । ४४
भारद्वाजनु कृपाचार्यनुं विदुररुं
सारज्ञन्मारायमट्टुमुळ्ळ सज्जनङ्ङळुं । ४५

धृतराष्ट्र ने अपना आकार छिपाकर कहा, "यह सौभाग्य की बात है
पाण्डव अभी जीवित है । यह भी अच्छा हुआ कि अब कुन्ती और पाण
पाञ्चालराज के सवन्धी हो गये है ।" ३१-३६ - जव विदुरजी चले ग
तव कर्ण और सुयोधन राजा के पास जाकर वोले, "विदुर आपकी सन्नि
मे थे । इसलिए हमको आपके पास आकर कहने का अवसर न मिल
शत्रुओ की जो वृद्धि हुई और हमारी जो हार हुई, इससे क्षत्ता (विदु
भीतर ही भीतर प्रसन्न है, आपको मालूम है ? अव हम सब मिलकर सो
कुन्ती के पुत्रो को अविलम्ब ही कैसे नष्ट किया जाय ? तभी तो हम
मन को आश्वासन प्राप्त होगा, नही तो हमारी हार ही समझिए ।" क
शकुनि और दुर्योधन ने राजा के कान मे विविध राये दी । बुरे म
राजा को वुरी नीति का उपदेश दे रहे है, यह जानकर दूरदर्शी शान्तनु
भीष्म, भारद्वाज (द्रोण), कृपाचार्य, विदुर, और अन्य सारज्ञ सज्जनो

ॲन्नुटॆयनुजनां पाण्डु वाणतुपोलॆ
मन्नवनाये वाळ्क नीयुण्णि युधिष्ठिर ! २
ॲन्नुटॆ तनयन्मारॆल्लारुं दुरात्माक्क-
ळॊन्नुमे केळ्क्कयिल्ल ञान् पऱञ्ञवयुण्णी ! ३
पाण्डवन्मारे निङ्ङळ् तङ्ङळिल् पिणङ्ङातॆ
खाण्डवप्रस्थत्तिङ्कल् नाटुवाणिरिक्क पोय् । ४
पातिनाट्टिनु पुनरभिषेकवुं चॆय्क
माधवन्तनिक्कुळ्ळिल् चेर्न्नितो चोदिक्केणं । ५
ॲन्नतु केट्टु दामोदरनुमरुळ्चॆय्तु
मन्नव! कणक्किनिक्कॆल्लामॆन्नऱिञ्ञालुं । ६
वारणावतत्तिङ्कल् पण्टिरुन्नतुपोलॆ
पारितु पाति परिपालिच्चु वसिच्चालु । ७
ॲल्लामानन्दमिनिक्कॊळ्ळॊळं खेदमुळ्ळि-
लिल्लल्लो ममत्वमिल्लॊन्निनुमतुमूल । ८
मन्नवन् चॊन्नवण्णमभिषेकवुं चॆय्तु
चॆन्नुटनिन्द्रप्रस्थंपुक्कितु पाण्डवरुं । ९
नारदनतुकालं धर्म्मजनतन्नॆक्कण्टु
नारियॆक्कॊण्टुतम्मिल् पिणक्कमुण्टाकाय्वान् । १०
ओरोरो संवत्सरमोरोरुत्तरोटुकू-
टारेयुं भेदमॆन्नियिरिप्पान् नियोगिच्चु । ११

राज करो। मेरे पुत्र सब दुष्ट है, कोई भी मेरा कहना नही सुनता है। हे पाण्डु के पुत्र ! तुम लोग आपस मे विना झगडा किये खाण्डवप्रस्थ चले जाओ और वहाँ से राज करो। आधे राज्य का अभिषेक भी करवा लो। मैं पूछता हूँ, क्या माधव इससे सहमत है ?" यह सुनकर दामोदर (कृष्ण) ने कहा, "हे महाराज ! जान लीजिए कि मेरे मत मे सब ठीक ही है। पहले की भाँति वारणावत मे रहकर (पाण्डव लोग) आधे राज्य का परिपालन करे। मेरे लिए सब आनन्द ही है, मेरे मन मे खेद तनिक भी नही है, किसी भी चीज के प्रति मेरी ममता नही है।" १-८ जैसे राजा ने कहा, वैसे ही अभिषेक हुआ और पाण्डवो ने इन्द्रप्रस्थ मे प्रवेश किया। उस समय नारदजी (वहाँ) पहुँचे, और स्त्री के कारण पाण्डवो का आपस मे वैमनस्य न हो जाय, इसलिए युधिष्ठिर से बोले, "द्रौपदी एक-एक वर्ष एक-एक भाई के साथ विना भेद-भाव के रहा करे। जब एक भाई के

द्रोणरु विदुररुं भीष्मरुं कृपरुमाय्
क्षीणलोचननाय नृपनोटरियिच्चार् । ५६
विरयँ वरुत्तुक पाण्डवन्मारेयॅन्नाल्
पॅरिकॅ नाशमिल्लतल्लाय्किल् मुटिञ्ञुपों । ५७
ऍङ्किलो विदुरर् पोय् वरुत्तीटुकयॅन्नु
सङ्कटं मरच्चाशु धृतराष्ट्ररुं चॊन्नान् । ५८
विदुररतुकेट्टु द्रुपदपुरंपुक्कु
पृथयु पुत्रन्मारुं पोरिकॅन्नुरचॅय्तु । ५९
कृष्णनु विदुररु कुन्तियुं द्रुपदनु
कृष्णयु पाण्डुसुतन्मारुमाय् निरूपिच्चार् । ६०
हस्तिनपुरपुक्कु कल्याणघोषत्तोटु-
मॆत्रयु तॆळिञ्ञतु नगरवासिकळ्क्कुं । ६१
पाण्डवन्मारुं नल्ल पत्नियुं जननियु
पाण्डुपूर्व्वजनादियाय बन्धुक्कळेयु । ६२
वणङ्ङियॊरुमिच्चु पाण्डुविन्गृह तन्निल्
गुणङ्ङळोटु सुखिच्चिरिक्कुं कालत्तिङ्कल् । ६३

अर्द्धराज्याभिषेकं

वरुत्ति युधिष्ठिरन्तन्नेयुं कृष्णनेयुं
निरत्तीटुवानायिप्परञ्ञु धृतराष्ट्रन् । १

प्रकार कहा, तब द्रोण, विदुर, भीष्म और कृप ने दु खित राजा से निवेदन किया—"तो फिर पाण्डवो को जल्दी बुलवाइए। अब भी तो कुछ विगडा नही है, नही तो सब नष्ट हो जायगा।" उस पर धृतराष्ट्र ने अपना खेद छिपाकर कहा—"अगर ऐसा है तो विदुरजी जाकर बुला लावे।" यह सुनकर विदुर पाञ्चालपुर गये और कुन्ती और उनके पुत्रो से चलने के लिए कहा। कृष्ण, विदुर, कुन्ती, द्रुपद, द्रौपदी और पाण्डवो ने आपस मे परामर्श किया। तदनन्तर विवाह के धूम-धाम के साथ सब हस्तिनापुर गये और (सभी) नगरवासी बहुत ही प्रसन्न हुए। पाण्डव, उनकी अच्छी पत्नी और माता, पाण्डु के ज्येष्ठ भ्राता (धृतराष्ट्र) आदि बन्धुओ की वन्दना करके पाण्डु के घर मे अपने-अपने गुणो के साथ सुख से रहने लगे। ५५-६३

अर्धराज्य का अभिषेक

धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर और कृष्ण को बुलाकर उनसे इस प्रकार कहा, "वेटा युधिष्ठिर! जैसे मेरा छोटा भाई राज करता था, वैसे ही तुम भी

अन्योन्यं भ्राताक्कन्मारामवरिरुवरु-
मोन्निच्चु तम्मिल् पिरियाते वाळुन्नकाल । ४
त्रैलोक्य जयिक्केण नमुक्कॅन्नुरच्चवर्
शैलाढ्यनाय विन्ध्यनुतन्नुटे मुकळिल् पोय् । ५
सन्ततं पितामहन्‌तन्नुटे पादांबुज
चिन्तिच्चु घोरमाय तपस्सु तुटङ्ङिनार् । ६
वायुभक्षणं चेय्तु पादाङ्गुष्ठवुमून्नि-
क्कायवु मल पूण्टु जटयु वल्कलवु । ७
धरिच्चु कूप्पित्तोळुतक्षिकळिळकाते
निरस्ताशया नित्यं व्रतत्तोटोरुपोले । ८
चॅन्नितु कालमप्पोळ् पोङ्ङिय धूमंकोण्टु
नन्नायि निरच्चितु विन्ध्यना मलयॅल्ला । ९
उग्रमा तपस्सुकोण्टक्कालं देवकळुं
व्यग्रिच्चु भयप्पॅट्टु चिन्तिच्चार् पलतरं । १०
ऍन्तोन्नुकोण्टु तपोविघ्नत्ते वरुत्तावू
पन्तोक्कुं मुलमारालेतुमिल्लोरु फल । ११
शूलवुमोङ्ङियोरु राक्षसनटुत्तितु
कालनेप्पोले देवन्मारुटे माययाले । १२
सुन्दोपसुन्दन्मारामसुरेन्द्रन्मारुटे
सुन्दरिमारां भार्याभगिनीजननिमार् १३

उन्होने त्रैलोक्य जीतने का निश्चय किया। तदनुसार पर्वतवर विन्ध्य के शिखर पर गये और सदा ही ब्रह्मा के पादाम्बुज का ध्यान करते हुए वहाँ घोर तप करने लगे। १-६ केवल वायु ही उनका आहार था। अपना पादाङ्गुष्ठ भूमि मे गाडकर, मलयुक्त शरीर के साथ जटा और वल्कल धारण करते हुए, हाथ जोडे, बिना आँख हिलाये, सभी इच्छाएँ त्यागकर व्रत करते रहे। समय बहुत बीता। उठते धुएँ से सारा विन्ध्यपर्वत निरन्तर भर गया। इस उग्र तप के कारण उस समय देवगण घबडाये और डर गये तथा सोचने लगे—इनके तप मे विघ्न कैसे पहुँचावे। कन्दुक-समान स्तनवालियो से कुछ काम न बनेगा। देवो की माया के द्वारा यमराज के समान एक राक्षस शूल उठाते पहुँचा। सुन्द और उपसुन्द की पत्नियाँ, भगिनियाँ और माता जो सुन्दरी थी भयभीत होकर 'हमारी रक्षा करो,' ऐसा चिल्लाती हुई भागी। इसे देखकर भी वे दोनो भाई न

मटोरुत्तनुमायि वाळुन्नकालत्तिङ्कल्
मटोरुत्तनु चेन्नानविटेयेन्नाकिलो । १२
अप्पोळे तीर्थयात्र चेय्येणमोराण्टव-
निप्पोलेयल्लेन्नाकिल् निश्चयं नाशमुण्टां । १३
सुन्दरियाय तिलोत्तम कारण मुन्न
सुन्दरन्मारायोरु सुन्दोपसुन्दन्मारु । १४
तङ्ङळिल् तच्चु मरिच्चीटिनारतुपोले
निङ्ङळालितुकालमुण्टाकातिरिक्केण । १५
नन्दिच्चु नृपेन्द्रनु नारदनोटु चोन्नान्
सुन्दोपसुन्दोपाख्यानं मम केळ्प्पिक्केणं । १६
मन्दहासवु चेय्तु नारदन् पितृपति-
नन्दन ! केट्टुकोळ्क सोदरन्मारोटुं नी । १७

सुन्दोपसुन्दोपाख्यानं

हिरण्यकशिपुतन् कुलत्तिल् वन्नु मुन्नं
पिरन्नु निकुंभनामसुरवरनुटे । १
नन्दनन्मारायुवन्नितु वीरन्माराय्
सुन्दोपसुन्दन्मारेन्निरुवरतुकालं । २
वृन्दारकारिकळाय् मुन्नमुण्टायिवन्न-
सुन्दोपसुन्दन्मारुं वयस्यन्मारेप्पोले ३

साथ रहे तव दूसरा कोई भाई उसके पास न जाये। अगर जायेगा तो उसको तत्काल ही साल-भर के लिए तीर्थयात्रा मे जाना पडेगा। ऐसा प्रवन्ध अगर न होगा तो नाश होगा। पूर्वकाल मे सुन्दरी तिलोत्तमा के कारण अभिरूप भाई सुन्द और उपसुन्द आपस मे लडकर मर गये। ऐसा न हो कि इस युग मे आप भाइयो मे यह बात हो जाय।" खुश होकर राजा ने नारद जी से कहा— कृपया मुझे सुन्द और उपसुन्द का उपाख्यान सुनाइए। नारद ने मुस्कराकर कहा, "हे पितृपतिनन्दन (युधिष्ठिर!) अपने भाइयो के साथ वह कथा सुन लो।" ९-१६

सुन्द और उपसुन्द का उपाख्यान

पूर्वकाल मे हिरण्यकशिपु के कुल मे निकुम्भ नामक असुर का जन्म हुआ। उसके दो वीर पुत्र हुए, जिनके नाम थे—सुन्द और उपसुन्द। पहले ही से देवो के शत्रु वनकर ये दोनो भाई—सुन्द और उपसुन्द आपस मे मित्रो की तरह रहे और सदा ही रहते थे, कभी अलग न होते थे।

अन्योन्यमोंळिञ्ञु मटारालुमोरुनाशं
वन्नुकूटातवण्ण नल्केणमनुग्रह । २४
धातावुं नाशं निङ्ङ्ळतङ्ङळिलोंळिञ्ञोरु-
भूतङ्ङळालु वन्नुकूटायकेन्नुरचेय्तान् । २५
आस्थया मरञ्ञरुळीटिनान् विरिञ्चनु
दैत्यन्मार् तपस्सुमन्नेरत्तु समर्प्पिच्चार् । २६
सर्व्वजन्तुक्कळालुमवद्ध्यन्मारायति-
गर्व्वितन्माराय् निजमन्दिरं पुक्कारवर् । २७
सन्तोपमुण्टायवन्नु वन्धुक्कळक्कॆल्लामुळ्ळिल्-
चिन्तिच्चवण्णं वरं किट्टुकनिमित्तमाय् । २८
तापसवेप परित्यजिच्चु दिव्यङ्ङळा-
माभरणादिकळुं धरिच्चु दीपिच्चेट । २९
सल्क्कारं चेय्तीटिनारत्यर्थ सुहृज्जन
तल्क्कार्यमवर्क्कॆल्ला साधिप्पिच्चनुदिनं । ३०
भक्ष्यतां पुनरपि भुज्यता यथासुखं
वक्ष्यता वहुविधं रम्यतामिहैव मे । ३१
पीयतां यथाकाम गीयतामुच्चैस्तरं
नीयतामिति गेहेगेहे केळ्क्कायि वाक्कुं । ३२
तत्र तत्रैव पानमत्तचित्तन्मारव-
रेत्रयु विहरिच्चुकळिञ्ञु पलकाल । ३३
हिरण्यकशिपुतन् कुलत्तिल् वन्नु मुन्नं
पिरन्न निकुभन्तन् पुत्रन्मारायुण्टाय । ३४

अन्तर्धान हो गये और दोनो दैत्यो ने अपनी तपस्या समाप्त कर दी। सभी जन्तुओ से अवध्यता प्राप्त करके और अत्यन्त गर्वित होकर वे अपने घर लौटे। अपनी इच्छा के अनुसार वर प्राप्त होने के कारण उनके सभी वन्धु अत्यन्त प्रसन्न हुए। अपने तापस का वेप त्यागकर, दिव्य आभूषण पहनकर दोनो विराजे। २१-२९ मित्रों ने उनका वहुत सत्कार किया, क्योकि उन्होने सब के लिए वह कार्य सम्पन्न किया था। "आओ, खाओ और फिर खाओ, सुख से भोजन करो, तरह-तरह की वाते करो, यही पर खूब रमो। यथाकाम पियो, ऊँचे स्वर में गाओ", घर-घर इस प्रकार की वाते सुनायी देने लगी। जगह-जगह मद्य पीकर लोग मत्त हुए और वहुत दिन तक भोग-विलास करते रहे। पहले हिरण्यकशिपु के वश मे जो

पेटिच्चु परिपालिच्चीटणमॆन्नु चॊल्लि-
योटिच्चॆन्नतुकण्टुमिळकीलवरेतुं । १४
ऒन्नुकॊण्टुमे तपोभंगत्तॆच्चॆय्तुकूटा-
त्तिन्द्रादि देवगणमाकुलप्पॆट्टशेष १५
मुन्पिलाम्माऽङ्ङॆळुन्नळ्ळिनान् पितामह-
नन्पोटु वेण्टु वर तरुवनॆन्नु चॊन्नान् । १६
वन्दिच्चु सुन्दोपसुन्दन्मारुमरविन्द-
नन्दनन्तन्नोटत्यानन्दमायुरचॆय्तार् । १७
निन्तिरुवटिक्कु कारुण्यमुण्टॆङ्किल् जङ्ङळ्-
क्कन्तरं वरातॊरु देवत्वं तन्नीटेणं । १८
अन्नेरं विधातावुमवरोटरुळ्चॆय्तु
तन्नुकूटामो मम देवत्वं निङ्ङळ्क्किप्पोळ् । १९
मटु वेण्टुन्नतॆल्लां नल्कुवनुरचॆय्विन्
कुटमुण्टमरत्व निङ्ङळ्क्कु तन्नीटिनाल् । २०
ऎन्नतु केट्टनेरं सुन्दोपसुन्दन्मारु
नन्नायिक्कूप्पित्तॊळुतजनोटरियिच्चार् । २१
स्थावरजगमङ्ङळायुळ्ळ भूतङ्ङळा-
लावयोरॊरुनाळु मरणमरुतल्लो । २२
लोकङ्ङळ् मून्निङ्कलुमुळ्ळॊरु जन्तुक्कळा-
लेकदा मृत्यु भविच्चीटरुतॊरुनाळु । २३

हिले । ७-१४ किसी भी प्रकार तपोभग न कर सकने से इन्द्र आदि देवगण व्याकुल हुए । तब पहले की तरह ब्रह्मा पधारे और उन्होने यथेष्ट वर देने की प्रतिज्ञा की । सुन्द और उपसुन्द ने वन्दना करके ब्रह्माजी से सानन्द इस प्रकार कहा, "अगर आपको हमारे प्रति कारुण्य हो तो हमको निर्बाध देवत्व दे दीजिए ।" उस पर विधाता (ब्रह्मा) ने उनसे कहा, "मैं आपको देवत्व कैसे दे सकता हूँ ? और जो कुछ भी चाहिए सो माँग लीजिए । अमरत्व (देवत्व) देने मे मुझे दोष लगेगा ।" यह सुनकर सुन्द और उपसुन्द ने वडी नम्रता के साथ हाथ जोडकर कहा, "किसी भी भूत के द्वारा, चाहे वह स्थावर हो या जङ्गम, हम दोनो की मृत्यु तो नही हो सकती है । तीनो लोको मे जो प्राणी है, उनके द्वारा हमारी कभी मृत्यु न हो । हम पर ऐसा अनुग्रह कर दीजिए कि हमी को छोडकर और किसी से भी हमारा नाश न हो ।" उस पर ब्रह्माजी ने कह दिया, "तुम दोनो को छोड़कर और किसी से भी तुम्हारा नाश न होगा ।" यह कहकर ब्रह्मा

रत्नभूतङ्ङळेल्लामटक्किक्कोण्टु देव-
पत्निकळेयुमाट्टिप्पिटिच्चु कोण्टारल्लो । ४४
तापसप्रवररुमंबरचारिकळुं
तापमुळ्क्कोण्टु पुरुहूतादिदेवकळु । ४५
सत्यलोकेत्तें प्रापिच्चेत्रयु खिन्नन्मारायु्
चित्ततापं पूण्टेटमत्तलायापत्तुकळ् । ४६
अबुजसभवनोटरियिच्चतुनेर-
मवरचारिकळोटरुळिच्चेय्तु देवन् । ४७
विश्वसिच्चालु मम वचन वैकाते ञान्
निश्शेषपरिताप निङ्ङळ्क्कु तीर्त्तीटुवन् । ४८
विश्वकर्त्तावुतानुमुळ्क्कान्पिल् निरूपिच्चु
विश्वकर्म्मावुतन्ने विळिच्चु नियोगिच्चु । ४९
निर्म्मलमाय रूपलावण्यत्तोटुमिप्पोळ्
निर्म्मिक्कवेणमोरु तरुणीरत्नत्तें नी । ५०
विश्वकर्म्मावु नमस्करिच्चु धाताविनें
विश्वमोहनमाय नारीरूपवु तीर्त्तु । ५१
चारुतकलर्न्नुळ्ळ मोहनवस्तुक्कळि-
लोरोरो तिलत्तोळमेटुत्तु सारांशत्ते- । ५२

मे चलनेवाले, इन्द्र आदि देव सभी दु.खित होकर सत्यलोक पहुँचे और बड़ी मानस-पीड़ा अनुभव करते हुए (उन्होने) सभी विपत्तियो को ब्रह्मा से निवेदन कर दिया। तव ब्रह्मा ने देवो से कहा, "आप लोग मेरी बात पर विश्वास कीजिए, विना विलम्ब के मै आपका दु ख समाप्त कर दूंगा।" विधाता ने अपने मन मे सोचकर विश्वकर्मा को बुलाया और आज्ञा दी— "निर्मल रूप और लावण्यवाली एक कन्यारत्न का अभी-अभी निर्माण करो।" विश्वकर्मा ने ब्रह्मा की वन्दना करके विश्व को मोहित करनेवाली एक स्त्री का निर्माण किया। ४५-५१ जगत् की सभी सुन्दर और मोहन वस्तुओ मे से तिल-तिल भर का अंश लेकर उन सबको मिलाकर एक दिव्य रूप की सृष्टि की, जो जगत् के मन को मोहित करने-योग्य था। जगत् के अद्भुत पदार्थो को इकट्ठा करके, उनके तिल-तिलभर साराश का मन्थन करके विश्वकर्मा के शिल्प से निकाले गये उस (सौन्दर्य-राशि) से यह कल्पित रूप तैयार हुआ। कमलोद्भव (ब्रह्मा) ने उसको तिलोत्तमा नाम दिया। (उसे देखकर) अन्य महिलाएँ वोली कम और लज्जित हुई।

सुन्दोपसुन्दन्मारुं दैत्यवाहिनियुमाय्
विण्णवर् पुरं पुक्कु देवेन्द्रादिकळेयु । ३५
वेन्नुटनाट्टिक्कळञ्ञीटिनानवर्कळु
चेन्नु पुक्कितु विधातावुतन्नुटे लोकं । ३६
दन्दशूकन्मारेयुं जयिच्चु पाताळवुं
चेन्नवर् जयिच्चितु समुद्रद्वीपङ्ङळु । ३७
म्लेच्छजातिकळेयु जयिच्चु वशत्ताक्कि
वाच्च शौर्यंण भूमिजयिप्पानोरुन्पेट्टार् । ३८
यागादिकर्म्मङ्ङळुमोक्कवे मुटक्कियार्
शोकंपूण्टितु मुनिवर्ग्गवुं द्विजन्मारु । ३९
कृषि गोरक्षादियु मुटक्कि कृपाहीन-
मृषिकळतम्मे वधिच्चीटिनार् मटियाते । ४०
पितृकर्म्मवुं देवपूजयुमिल्लातेयाय्
दितिजप्रवरन्मारटक्की भूचक्रवु । ४१
लोकवासिकळेयुमोक्कवेयाट्टिक्कळ-
ञ्ञेकमानसन्मारायवर्कळिरुवरु । ४२
पर्व्वतवनग्रामनगरद्वीपान्तरे
सर्व्वदा दिव्याङ्गनमारुमाय् क्रीडक्कयुं । ४३

निकुम्भ पैदा हुआ था, उसके पुत्र सुन्द और उपसुन्द ने दैत्य-सेना के साथ देवो के नगर मे प्रवेश किया। फिर इन्द्र आदि देवो से युद्ध करके उनको वहाँ से भगा दिया। वे सव ब्रह्मलोक चले गये। ३०-३६ तदनन्तर नागों को जीतकर पाताल को वश मे कर लिया, तत्पश्चात् समुद्र और द्वीपो को भी जीत लिया। म्लेच्छ जातियो को भी हराकर अपने वश मे कर लिया और वड़े शौर्य के साथ सारी पृथिवी को जीतने के लिए उद्यत हुए। याग (यज्ञ) आदि कर्म सव वन्द हो गये और सारा मुनिवर्ग और ब्राह्मण-वर्ग दु:खित हुए। कृषि-गोरक्षा आदि कार्यो को भी बन्द करा दिया गया। बिना हिचक के ऋषियो की भी हत्या की गयी। श्राद्ध आदि क्रियाएँ और देवो की पूजा समाप्त हो गयी और दैत्यो ने सारी पृथिवी को दवा दिया। दोनो ने एक मन होकर सभी लोकनिवासियो को भगा दिया। पर्वतो, वनो, ग्रामो, नगरो और द्वीपो मे सदैव दिव्याङ्गनाओ के साथ क्रीडा करते हुए, सभी रत्नो को अपने अधिकार मे करके, देवो की पत्नियो को भी उन्होने पकड़ लिया। ३७-४४ तापसवर, तथा आकाश

सुन्दररूपे ! पोयीटेणं वैकातें चेंल्क
सुन्दोपसुन्दासुरेन्द्रन्मारुळ्ळविटें नी । ६४
निन्नुटें रूपशोभालावण्यं कोंण्टु तयो-
रन्योन्यविरोधवुमुण्टाक्किकच्चमय्क्केण । ६५
निन्नाले साद्ध्यमिनिद्देवकळुटें कार्य
पिन्नें नी वैकातेंकण्टिङ्ङु पोरिक वाले ! ६६
लोकेशनियोगवु कैक्कोंण्टु तिलोत्तम
नाकेशकुलत्तेयु चेंय्तुटन् प्रदक्षिणं ६७
आकाशमार्गे मन्द मन्द पोय् चेंल्लुन्नेरं
पाकशासनवैरिमारेयु काणाय्वन्नु । ६८
गन्धमाल्यालङ्कृतमाराय् नर्त्तकीजन-
मन्तिके पाटिक्कूत्ताटुन्नतु कण्टुकण्टु ६९
भक्ष्यभोज्यङ्ङळोटुं सेवकजनत्तोटु
पुष्कलमाय भोगत्तोटुमन्योन्य चेर्न्नु । ७०
हृद्यमायीटुन्नोरु मद्यपानवुं चेय्त-
ङ्ङुद्यानदेशे विन्ध्यसानुनि शिलातले । ७१
स्निग्द्धमायीटुन्न भद्रासने वाळुन्नेर
मुग्द्धयायोरु तिलोत्तमयु मन्द मन्दं । ७२
रक्तवस्त्रवुं पूण्टु मुक्ताहारादिकळु
रक्तमाल्यानुलेपनादियुमलङ्करि- ७३

अपने रूप, शोभा और लावण्य के द्वारा उनमे परस्पर विरोध पैदा कर द
यह देवो का कार्य है, जो तुमसे ही साध्य है। तदनन्तर जल्दी वा
चली आना।" ६०-६६ तिलोत्तमा ने जगत् के प्रभु की आज्ञा स्वीक
की और देवकुलो की प्रदक्षिणा करके जब धीरे-धीरे आकाश-मार्ग से च
लगी, तब उसे इन्द्र के शत्रु (सुन्द और उपसुन्द दोनो दैत्य) दिख
दिये। वे गन्ध और मालाओ से अलङ्कृत थे। नर्तकियो का गाना अ
नाचना देखते हुए, सेवकजनो द्वारा तैयार किये हुए अनेक प्रकार के भ
और भोज्य तथा विपुल भोग का आस्वादन करते हुए और हृद्य (म
चाहा) मद्य पीते हुए, विन्ध्यपर्वत के शिखर पर एक उद्यान मे शिला
पर सजे हुए एक भद्रासन पर वे दोनो विराजमान थे। मु
तिलोत्तमा तो, धीरे-धीरे, लाल रग का वस्त्र पहने हुए और मोतियो
हार आदि आभूषण, लाल माला, चन्दन आदि से युक्त मनोहर वेष के स

च्चेर्त्तु कोण्टोरुक्कूट्टित्तीर्त्तोरु दिव्यरूपं
पात्त्रोळां जगन्मनोमोहनतरमल्लो । ५३
अद्भुतमाय पदार्त्थङ्ङळ् सन्पादिच्चति-
लुल्पन्नमाय सारांश कटञ्ञॆटुत्तितु ५४
शिल्पमार्य्योरु तिलमात्रमङ्ङुतुकोण्टु-
कल्पितमाय रूप पूर्ण्णमायतुनेरं ५५
उल्पलोद्भवन् तिलोत्तमयॆन्निट्टु पेरु-
मल्पभापिणिकळ् मट्टुळ्वर् नाण पूण्टार् । ५६
उल्पलोद्भवयाय लक्ष्मियु रुद्राणियु
कर्प्पूरशुभ्रगात्रियाकिय भारतियु । ५७
दर्प्पकप्राणनाथयाकिय रतितानु
दर्प्पमुळ्ळकान्पिलेरुमप्सरस्त्रीवर्ग्गवु ५८
सर्प्पभूषणप्रिययाकिय गंगतानु
सुप्रभागियॆक्कण्टु सोहिच्चारसूययाा । ५९
विश्वकर्म्मावुतानु विस्मयप्पॆट्टानेटं
विश्वकर्त्तावु तलकुलुक्कि तृक्कण्पार्त्तु । ६०
कण्टोरु पुरुपन्माक्कुण्टाय परवशं
तण्टलर्बाणन्तानु मुळुवनरिञ्ञील । ६१
कुण्ठनायितु नीलकण्ठनुमतुनेरं
कोण्टल्नेर्व्वर्ण्णन्तानुं कोण्टाटि स्तुतिचॆय्तान् ६२
धातावु तिलोत्तमयोटरुळ्चॆय्तीटिना-
नेतुमे मटियाते नीयोरु कार्य वेण । ६३

कमल से उत्पन्न लक्ष्मी, पार्वती, कपूर के समान श्वेतवर्ण-युक्त सरस्वती, मदन की प्रियतमा रति, अत्यन्त गर्ववाली अप्सराएँ, शिवजी की प्यारी गगा, ये सभी उस चमकनेवाली स्त्री को देखकर उससे मोहवश डाह करने लगी । ५२-५९ स्वय विश्वकर्मा तक अत्यन्त विस्मित हुए और विश्व के स्रष्टा ने भी सिर हिलाया तथा अपनी तृतीय आँख से देखा । जो विवशता देखनेवाले पुरुषो को हुई, उसका पूरा पता कामदेव तक को न था । उस समय नीलकण्ठ (शिवजी) भी पीडित हुए, मेघो के-से वर्णवाले श्रीकृष्ण भी उनकी प्रशसा करने लगे । ब्रह्मा ने तिलोत्तमा से कहा—"एक काम है, जिसे तुम बिना हिचक के कर दो । हे सुन्दरि ! तुम बिना विलम्ब के वहा चली जाओ, जहाँ असुरेन्द्र सुन्द और उपसुन्द रहते है ।

ऒन्नतु केट्टनेरमुपसुन्दनुं चॊन्ना-
नॆन्नुटॆ भार्ययिवळ् कैत्तळिरयच्चालु । ८४
चिन्तिच्चीटुकिल् वधुवाय्वरु भवानिव-
ळॆन्तरियातॆ काट्टीटुन्नतन्धतयाले ? ८५
ऎन्नुटॆ भार्ययिवळ् मटुळ्ळतॆल्ला भवा-
नन्याय काट्टीटातॆ कैययच्चीटुकॆन्नान् । ८६
मून्नु लोकत्तु ज्येष्ठनुटयतल्लो धन-
धान्यरत्नादिकळुमिनिक्कु वेण्टयल्लो । ८७
दैवानुग्रह कॊण्टिन्निनिक्कु कट्टियोरु
पार्व्वणशशिमुखितन्नॆयिङ्ङयय्क्केण । ८८
ऎङ्ङनॆ किट्टि निनक्कॆन्नतु परयेण
तिङ्ङिङनमद कॊण्टु पेपरयाय्कवेण । ८९
अङ्ङुळ्ळ मदत्तॆक्काळॆरॆयिल्लिनिक्केतु-
मगनारत्नत्तॆ ञानयय्क्कयिल्लयॆन्नु । ९०
नीययच्चीटेणमो मल्प्रणयिनितन्नॆ-
प्पेयाय वाक्कु परयातॆ कैययय्क्क नी । ९१
पेयल्ल परयुन्नतेतु ञानॆन्टॆ जीव-
नायिकयुटॆ कर पिटिप्पानॆन्तु मूल ? । ९२
जीवनायिकयुण्टो निनक्कॆन्नाशु सुन्द-
नावोळं वेगाल् गदयॆटुत्तानॊरुकैयाल् ९३

उपसुन्द ने कहा, "यह मेरी पत्नी है, उसका करकिसलय छोड दो। विचार किया जाय तो यह तुम्हारी वहू ठहरती है। क्या तुम अन्धे हो गये जो इस प्रकार का व्यवहार करते हो ? यह मेरी स्त्री है। इसलिए तुम बाते न करके, अन्याय भी न करके, इसका हाथ छोड़ो"। ८१-८६ (तब सुन्द ने कहा—) "तीनो लोको मे धन, धान्य और रत्न ज्येष्ठ के होते है, इसलिए यह मेरी है। भगवान् के अनुगह से यह चन्द्रमुखी मुझे मिली है। इसे तुम छोड दो।" (तव उपसुन्द ने उत्तर दिया,) 'यह पहले वतलाओ कि यह तुम्हे मिली कैसे ? अपने मद के कारण वकना मत"। "तुमसे वढकर मैं मत्त नही हूँ, इस स्त्री-रत्न को मै नही छोडूँगा", सुन्द ने कहा। "मेरी प्रियतमा को भेजनेवाले तुम कौन हो, पागल की तरह वाते न करके इसका हाथ छोडो", उपसुन्द ने जवाव दिया। "मैं पागलपन की वाते नही कर रहा हूँ। तुमने क्यो मेरी जीवन की नायिका का हाथ पकड़

च्चेंत्रयु मनोहरमायॊरु वेषत्तॊटु
चित्रमायिरिप्पोरु मन्दसञ्चारत्तोटु । ७४
कर्णिणकारवुमङ्ुत्तुन्नतस्तनङ्ङ्ळु
तन्वंगि मद्ध्ये मद्ध्ये चॆरुतु काट्टिक्काट्टि । ७५
निन्नुमङ्ङोट्टु चॆन्नु मॆल्लवे कटाक्षिच्चु
पिन्नॆयुमिटॆयिटॆप्पिन्नोक्कि वाङ्ङिङ्ङ्पोन्नु । ७६
वाहिनीतीरे विळयाटुन्न नारीमणि-
मोहनरूप कण्टु सुन्दोपसुन्दन्मारु । ७७
काञ्चनचषकवु वॆटिञ्ञु ससभ्रम
वाञ्छया मतिमङ्न्नसुरप्रवरन्मार् । ७८
चञ्चाटिच्चॆन्नारवळ्तन्नुटॆ मुन्पिलॊरु-
चाञ्चल्य कलर्न्नतिल् सुन्दना ज्येष्ठनप्पोळ् । ७९
दक्षिणकर पिटिच्चीटिनानुपसुन्दन्
दक्षिणेतरकरमप्पॊळे पिटिपॆट्टान् ८०
मत्तचित्तन्माराय दैत्यन्मारवळुटॆ
हस्तपङ्कज रण्टु पिटिच्चु निल्कुन्नेर । ८१
सुन्दनुमुपसुन्दन्तन्नोटु चॊल्लीटिनान्
सुन्दरियाकुमिवळॆन्नुटॆ भार्ययल्लो । ८२
निन्नुटॆ गुरुभूतयाकुन्नतोर्त्तीटिवळ्-
तन्नुटॆ करांबुजमयच्चु दूरॆप्पो नी । ८३

सञ्चार करने लगी। ६७-७४ उसके उन्नत स्तन कर्णिकार के पुष्पो से अलंकृत थे। वह सुन्दरी बीच-बीच मे कुछ अपने विलास को दिखाती हुई खड़ी होती थी, फिर आगे जाकर कटाक्ष करती थी, और फिर पीछे की तरफ देखती थी। इस प्रकार नदी के किनारे खेलती हुई उस महिलारत्न के मोहन रूप को देखकर असुरप्रवर सुन्द और उपसुन्द अपने सोने के चषक (प्याले) का मद्य समाप्त करके सभ्रम के साथ काम से प्रेरित होकर और अपना विवेक खोकर कूदकर उठे और चाञ्चल्य के साथ उसके सामने खड़े हुए। ज्येष्ठ सुन्द ने उसका दाहिना हाथ पकड़ लिया और उपसुन्द ने उसका बायाँ हाथ पकड़ लिया। ७५-८० जब मत्तचित्त वाले दोनो असुर उसके करकमलो को पकडे खड़े थे, तब सुन्द ने उपसुन्द से कहा, "यह सुन्दरी मेरी पत्नी है, इसलिए तुम्हारी गुरु हुई। ऐसा ठीक से समझकर उसका करकमल छोड़कर दूर चले जाओ।" यह सुनकर

अन्योन्य सुहृद्भावमुळ्ळवरेन्नाकिलु
पेण्णुङ्ङळ्मूल वैर वर्द्धिच्चुवरुमत्ते । १०३
निङ्ङळेक्कुरिच्चुळ्ळल् स्नेहमेरुकुयाल् आ-
निङ्ङने वन्नु चोन्नेन् निङ्ङळोटरिञ्ञालुं । १०४
इत्तरमरुळ्चेय्तु नारदनेळुन्नळ्ळि
पृत्थ्वीपालकन्मारुमप्पोले वाळुकालं । १०५

अर्ज्जुनन्टे तीर्थयात्रा

कुरुराज्यत्तिलोरु धरणीदेवेन्द्रनु
पेरिकेप्पशुक्कळेक्कळ्ळन्मार् कोण्टुपोयार् । १
अतु चेन्निन्द्रप्रस्थगोपुरद्वारत्तिङ्क-
लतिवेदनयोटु परञ्ञु भूदेवनुं । २
अप्पोळे धनञ्जयनाश्वसिप्पिच्चान् पिन्ने-
क्कोल्पेरुमायुधङ्ङळेटुप्पान् चेन्ननेरं । ३
आयतमिळियाळुं धर्म्मपुत्ररुं पञ्च-
सायकरस पूण्टु मरुवुन्नतु कण्टान् । ४
आयुधशालतन्निलर्ज्जुननवन्तानु
पोयानन्नेरंतन्ने भूसुरोत्तमनोटु । ५
तस्करन्मारेयोक्क निग्रहिक्कयु चेय्तु
सल्ककरिक्कयु चेय्तान् विप्रनु पशुक्कळे । ६

हो जाता है। आप लोगो के प्रति मेरा स्नेह है, इसलिए, जान लीजिए, मैंने आपसे इस प्रकार कहा। यह कहकर नारदजी सिधारे और भूपाल-गण भी उनके कहने के अनुसार रहने लगे। १०२-१०५

अर्जुन की तीर्थयात्रा

(एक बार) कुरुओ के राज्य मे चोर एक ब्राह्मण की बहुत गाये चुरा ले गये। तब इन्द्रप्रस्थ के गोपुरद्वार पर जाकर ब्राह्मण ने दुःख के साथ सब बतला दिया। अर्जुन ने ब्राह्मण को आश्वासन दिया। तदनन्तर मजबूत आयुध लेने के लिए अन्दर गये। उस समय अर्जुन ने युधिष्ठिर और द्रौपदी को आयुधशाला ही मे बैठकर कामदेव की लीलाएँ करते हुए देखा। फिर वह ब्राह्मण के साथ निकल गये। अर्जुन ने चोरो का निग्रह करके ब्राह्मण की गाये वापस करा दी। तदनन्तर इस उद्देश्य से

सोदरन्तानु गदयेटुत्तानोरुकैयाल्
क्रोधं पूण्टिरुवरुमन्योन्य प्रहरिच्चार् । ९४
तल्लुकोण्टवनियिल् वन्मलपोले वीणा-
रल्लो सुन्दनुमुपसुन्दनुमतुनेर । ९५
अन्तकपुरिपुक्कारप्पोळ् देवारिकळ्
सन्तोषवन्नु जगद्वासिकळ्क्कतुमूल । ९६
सन्तापत्तोटे परिचारकन्मारु पोयार्
सन्धिप्पिच्चितु तिलोत्तमयु देवकार्यं । ९७
पाताळं पुक्कीटिनार् मट्टुळ्ळ दैत्यन्मारुं
पाथोजभवननुमिन्द्रादिदेवकळु ९८
प्रीतिपूण्टनुग्रह कोटुत्तु तिलोत्तम-
य्क्कादराल् सूर्यपथ प्रापिच्चाळवळ्तानु । ९९
इन्द्रनुमटक्कि वाणीटिनान् त्रिभुवनं
नन्दिच्चु सत्यलोक पुक्कितु विरिञ्चनु । १००
सुन्दरी तिलोत्तम कारण मरिच्चितु
सुन्दोपसुन्दन्मारुमन्योन्य प्रहरत्ताल् । १०१
निङ्ङळुमतु पोले पाञ्चालिनिमित्तमाय्
तङ्ङळिल् कलहमुण्टाकातेयिरिक्केणं । १०२

लिया ? तुम्हारी कहाँ जीवन की नायिका ?" यह कहकर सुन्द ने एक हाथ मे झट से गदा ले ली, तब भाई ने भी एक हाथ मे गदा ले ली और क्रोध मे आकर दोनो ने एक-दूसरे को मारा । ८७-९४ सुन्द और उपसुन्द दोनो चोट खाकर पहाड़ की भाँति पृथिवी पर गिरे । तत्क्षण ही दोनों देव-शत्रु यमलोक सिधारे और सभी जगत् के निवासियों को (बडा) हर्ष हुआ । उन दोनो के परिचारक दुःख के साथ चले गये । इस प्रकार तिलोत्तमा ने देवकार्य को सम्पन्न कर दिया । (और) जितने दैत्य थे, सब पाताल चले गये । ब्रह्मा, और इन्द्र आदि देवगणो ने तिलोत्तमा पर बड़ी प्रीति के साथ अनुग्रह किया जिससे वह भी सूर्य के मार्ग पर चली गयी । इन्द्र ने त्रिभुवन को अपने अधीन कर लिया और ब्रह्माजी ने हर्ष के साथ सत्यलोक मे प्रवेश किया । इस प्रकार सुन्दरी तिलोत्तमा के कारण सुन्द और उपसुन्द आपस मे लड़कर मर गये । ९५-१०१ आप लोग भी पाञ्चाली के कारण आपस मे कलह न कर बैठे । यद्यपि आप लोगो का आपस में सुहृदभाव है फिर भी, कहते है, कि स्त्रियो के कारण वैर

अविटेनिन्नु नेरे किळक्कोट्टिरङ्ङीट्टु
भुवनप्रसिद्धयामुल्पलिनियेक्कण्टान् । १७
नैमिशारण्य कण्टान् प्रतिनन्दयु कण्टान्
वैमल्यं कलर्न्नीट्टुमपरनन्द कण्टान् । १८
नल्ल कौशिकी गय, गगयुमाटिप्पिन्ने
चोल्लेळुमङ्गराज्य वंगवु कलिङ्गवुं । १९
कण्टितु महार्ण्णवमविटे स्नान चेय्तु
कण्टितु महेन्द्रमा पर्व्वतं धनञ्जयन् । २०
चोल्लेळु गोदावरियाटिनान् कावेरियु
कल्याणालयमाय रंगवु वणङ्ङिनान् । २१
सत्वरं मणलूरमाकिय पुरिपुक्कु
चित्रवाहननाय राजावुतन्नेक्कण्टान् । २२
अवनु चित्रांगदयेन्नोरु मकळुमु-
ण्टवळे वेट्टुकोण्टानविटेयिरुन्नना- २३
ळप्पुरितन्निल्निन्नु केल्पोटे पुरप्पेट्टा-
नप्पोळे पञ्चतीर्थमाटिनान् पेटि नीक्कि । २४
अल्भुतागिकळाय नालु दासिकळोटु-
मप्सरस्त्रीयायोरु वन्दयुमोरु शापाल् । २५

जोडे, तदनन्तर हिरण्यविन्दु के तीर्थो का दर्शन किया । ९-१५ अनेक पर्वत देखे, पुण्यक्षेत्र देखे और दिव्य क्षेत्रो मे स्नान किया । वहाँ से सीधे पूरब की ओर उतरकर लोकविख्यात उत्पलिनी को देखा । तदनन्तर नैमिषा-रण्य, फिर प्रतिनन्दा, तत्पश्चात् शुद्ध अपरनन्दा को भी देखा । निर्मल कौशिकी और गया देखकर गगा मे स्नान किया । तदनन्तर विख्यात अङ्गदेश तथा वङ्ग, कलिङ्ग आदि देशो को देखकर समुद्र मे स्नान किया । फिर अर्जुन ने महेन्द्र पर्वत देखा ओर सुप्रसिद्ध गोदावरी और कावेरी मे स्नान किया । और कल्याण के केन्द्र रग (नाथ महादेव) की भी वन्दना की । तदनन्तर मणलूर नगर मे प्रवेश करके वहाँ के राजा चित्रवाहन का दर्शन किया । उनके चित्रागदा नामक एक पुत्री थी, जिससे अर्जुन ने वहाँ रहते समय विवाह किया । तत्पश्चात् उस नगर से धूमधाम से निकले और पञ्चतीर्थो का दर्शन किया । १६-२४ वहाँ वन्दा नामक अतिसुन्दरी अप्सरा और उसकी उतनी ही सुन्दरी चार दासियाँ किसी के शाप के कारण घड़ियाल के रूप मे परिणत होकर उन पञ्चतीर्थो मे रहती

पिन्नेत्तन् गुरुभूतन्मारेयुं वणङ्ङीट्टु
तन्नुटे समयत्तिन्नन्तर वराय्वानु । ७
सन्नाहमोटु तीर्त्थयात्रयुं तुटङ्ङिनान्
पिन्नाले कूटेप्पोयार् विप्रादि साधुक्कळु । ८
सागर सरिल् सरो वन शैलङ्ङळ् कण्टु
वेगेन गंगाद्वारे चेन्निरुन्नितु पार्त्थन् । ९
गगयिल् मुळुकिनान् मंगलमनस्कना-
यंगजतापंपूण्ट पन्नगतरुणियु । १०
वेळ्ळत्तिल् ताळ्त्तिक्कोण्टाळुळ्ळवु ताळ्त्तिक्कोण्टा-
ळुळ्ळलिन्ञुलूपियुमार्योरु निशि वाणान् । ११
उण्टायितिरावानेन्नात्मजनवळ् पेट्टु
तण्टलर्बाणसमनाय पाण्डवन् पिन्ने । १२
हिमवत्पार्श्व पुक्कानगस्त्यवाटं कण्टान्
हिमवन्मूर्द्धिन बिन्दुसरस्सु कण्टु पार्त्थन् । १३
भृगुतुन्दवु कण्टान् पलदानङ्ङळ् चेय्तान्
भगवत्भक्तनाय फल्गुनन् पाण्डुपत्रन् । १४
हरिद्वारवु कण्टु विस्मयप्पेट्टु कूप्पि
हिरण्यविन्दुविन्टे तीर्त्थङ्ङळेल्लामाटि १५
पर्व्वतङ्ङळुं कण्टान् पुण्यक्षेत्रङ्ङळ् कण्टान्
दिव्यङ्ङळाय तीर्त्थङ्ङळिलुं मुळुकिनान् । १६

कि पहले के ठहराव (निश्चय) का उल्लङ्घन न हो, गुरुजनो की वन्दना करके बड़े समारोह के साथ तीर्थयात्रा मे जाने लगे। (और) ब्राह्मणो तथा अन्य सज्जनो ने उनका अनुसरण किया । १-८ अनेक सागर, नदियाँ, सरोवर और पर्वत देखने के बाद अर्जुन गगाद्वार पर जाकर बैठे । जब मगलमय चित्त के साथ गगा मे मज्जन किया तब उलूपी नामक एक नाग-कन्या, जो कामदेव से विवश हो गयी थी, अर्जुन को नीचे खीच ले गयी । वह उससे प्रेम करती थी, और अर्जुन ने भी, प्रेमार्द्र होकर, उसके साथ एक रात बितायी । फलस्वरूप उलूपी ने इरावान् नामक पुत्र को जन्म दिया । तदनन्तर मदन के समान सुन्दर अर्जुन ने हिमालय पर्वत के घाटों मे प्रवेश किया और अगस्त्य का आश्रम देखने के बाद हिमालय के शिखर पर बिन्दुसर भी देखा । भगवान् के भक्त अर्जुन ने भृगुतुन्द देखा और अनेक प्रकार के दान किये । हरिद्वार देखकर विस्मित हुए और हाथ

अक्षमाल्यागुलीययोगभारवुं वहि-
च्चक्षिकळिळकातें मुख्यमा ध्यानत्तोटुं ३
वृक्षेशनाय वटकोटरच्छायतङ्कल्
पुक्कितु लक्ष्मीपतियाकिय वासुदेवन् ४
पुष्करनेत्रन्तन्नें चिन्तिच्चु चिलदिन
पुष्करविशिखनु पुक्कितु सन्नद्धनाय् । ५
अव्ययन् नारायणनव्यक्तनतुकालं
दिव्यज्ञानेन कण्टु सव्यसाचियेयप्पोळ् । ६
सत्यभामयुमायित्तन्न चेन्नीटुन्नेर
सुप्तनाय् किटक्कुन्न भक्तनेक्कण्टु कृष्णन् । ७
आनन्दविवशनायेटवु चिरिच्चप्पोळ्
मानिनी सत्यभाम चोदिच्चाळतिन्मूलं । ८
अत्यर्थं चिरिच्चतिनेन्तु कारण नाथ !
सत्यमेन्नोटु परञ्ञीटेणमेन्नीवण्ण । ९
सत्यभामोक्ति केट्टु भगवान् पद्मेक्षणन्
सत्यपूरुपन् सकलेश्वरन् सनातनन् १०
सत्यमायुळ्ळ वृत्तमवळोटुरचेय्तु
सत्यभामय्क्कुमेटमानन्दं वन्नितप्पोळ् । ११
पुण्यवानेयुमुणर्त्तीटिनान् जगन्नाथ-
नन्योन्य कण्टु गाढाश्लेषवुं चेय्तु पिन्नें १२

दण्डी वन गये । अक्षमाला और अङ्गुलीयक पहने हुए, आँखो को निश्चल रखते हुए एक वृक्षराज वट की छाया मे बैठकर ध्यान करने लगे। लक्ष्मीपति और कमलाक्ष वासुदेव का ही कभी-कभी स्मरण किया। कमलवाण कामदेव ने भी सन्नद्ध होकर प्रवेश किया। उस समय अव्यय, अव्यक्त, नारायण ने अपनी दिव्यदृष्टि से सव्यसाची (अर्जुन) को देखा। सत्यभामा के साथ कृष्ण जव वहाँ पधारे तव उन्होने अपने भक्त को सोते हुए देखा। १-७ आनन्द से विवश होकर जव कृष्ण ऊँची आवाज मे हँसे, तव मानिनी सत्यभामा ने कारण पूछा, "हे नाथ ! क्या कारण है कि आप इतना हँसे ! मुझसे सच वतलाइए।" सत्यभामा की यह वात सुनकर भगवान् कमलेक्षण, सत्यपुरुप, सकलेश्वर, सनातन ने उससे सही वात कह दी (जिसे) सुनकर सत्यभामा को वडा आनन्द हुआ। जगन्नाथ ने अर्जुन को जगाया। दोनों एक-दूसरे को देखकर गले लग गये। तदनन्तर अर्जुन

नक्ररूपिणिकळायञ्चु तीर्थङ्ङळिलु
पुक्कु वाळ्कयालारु तीर्थङ्ङळाटुमारि २६
ल्लुग्रवेगेन भक्षिच्चीटुमेन्नुळ्ळ भयाल् ।
ॲन्नतु केट्टु पार्त्थ लोकोपकारार्त्थमाय् २७
पञ्चतीर्थङ्ङळिलुं कुळिच्चु तर्प्पिच्चितु ।
पञ्चनक्रङ्ङळेयु पञ्चत्व चेर्त्तानल्लो । २८
वन्दयक्कु सखिकळक्कु शापमोक्षवु वन्नु
वन्दिच्चु पाण्डवने स्तुतिच्चु पोयारल्लो । २९
पिन्नेयु चित्रांगदतन्नेक्काणमतिन्नायि-
च्चेन्नितु मणलूरपुरियिलिन्द्रपुत्रन् । ३०
विभ्रमं कलर्न्नवळोटु चेर्न्निरिक्कुनाळ्
बभ्रुवाहनन्नेर्रर्भकनुण्टाय्वन्नु । ३१
पश्चिमसमुद्रतीरत्तुकूटवन् पिन्ने
स्वच्छमां प्रभासतीर्थत्तिङ्कल् चेन्नु पुक्कान् । ३२

सुभद्राहरण

यादवनाय गदन् परञ्ञु केट्टानन्नु
माधवभगिनियां सुभद्रागुणमेल्लां । १
पण्डितनाय पाण्डुनन्दन नवळ्मूलं
मुण्डितनायिक्कुण्डियाय् त्रिदण्डियुमायान् । २

थी । इस डर से कि वे तुरन्त ही पकड़कर खा लेगी, कोई भी उनमे स्नान न करता था । यह सुनकर, लोकोपकार के उद्देश्य से अर्जुन ने पाँचों मे स्नान करके तर्पण किया । (और उन) पाँचो घड़ियालों को यमलोक भेज दिया । वन्दा और उसकी सखियाँ शाप से मुक्त हुई । पाँचो अर्जुन की वन्दना और स्तुति करके चली गयी । तदनन्तर अर्जुन चित्रागदा को देखने के लिए फिर मणलूर नगर चले गये । जब वे उसके साथ प्रेम से रहते थे, तब उसके वभ्रुवाहन नामक पुत्र का जन्म हुआ । तदनन्तर पश्चिम समुद्र के किनारे से जाते हुए अर्जुन स्वच्छ प्रभासतीर्थ पहुँचे । २५-३२

सुभद्रा-हरण

उन दिनो यादव गद ने श्रीकृष्ण की भगिनी सुभद्रा के गुणो का अर्जुन के सामने वर्णन किया । उसके कारण विद्वान् अर्जुन अपना सिर मुँडवाकर

मट्टुमिङ्ङनेयुळ्ळ वीरन्मारोक्कत्तक्क-
प्पुक्कितु पुष्कराक्षनुत्सव पालिप्पानाय् । २३
सन्यासवेषपूण्ट धन्यना पार्त्थनोटु
नन्नायुत्सव कण्टु नटन्नीटिननेर २४
कन्यकसुभद्रयु तन्नुटे सखीमध्ये
मिन्नलेन्नतुपोले काणायि सन्यासिक्कुं । २५
तन्नेत्तान् मरन्नितु सन्यासि कन्यकयाल्
पिन्नेयुण्टाय कुळ्प्पङ्ङळ् आर्नेन्तु चोल्लू ! २६
वासुदेवनुमुपदेशिच्चानुपायङ्ङळ्
वासवतनयनुमव्वण्णमारभिच्चान् । २७
उत्सवं कळिञ्ञप्पोळ् वृष्णिकळेल्लावरुं
सत्सभावन्दन चेय्तोक्कवे पुरप्पेट्टार् । २८
सुभद्रतानु पिन्ने रैवतकाद्रीन्द्रने-
स्सुभक्त्या वलत्तुवच्चर्च्चिच्चु वन्दिच्चुटन् २९
दैवतभूदेवेन्द्रन्मारेयु वणङ्ङीट्टु
कैवरेणमे मम काक्षितमेन्नु नण्णि । ३०
श्रीमद्वारकापुरिपूवानाय् पुरप्पेट्टाळ्
भीमसेनानुजनु पुक्कितु मद्ध्येमार्ग्ग । ३१
भद्रयां सुभद्रये चिन्तिच्चु चिन्तिच्चवन्
निद्रयु वेटिञ्ञुपोयद्रिपुगवतटे ३२

और इनके सदृश अन्य वीर भी कृष्ण का उत्सव मनाने के लिए पधारे । सन्यासी का वेष धारण किये हुए अर्जुन के साथ जब लोग उत्सव देख रहे थे तब सन्यासी को कन्यका (युवती) सुभद्रा अपनी सखियो के बीच मे बिजली के समान दिखायी पड़ी । कन्या के कारण सन्यासी अपने को भूल ही गये । तदनन्तर जो कोलाहल हुआ, उसका कैसे वर्णन किया जाय ? वासुदेव ने तरह-तरह के उपाय बतला दिये और अर्जुन ने तदनुसार ही काम किया । २१-२७ उत्सव के समाप्त होने के बाद वृष्णि लोग सभा का वन्दन करके जाने के लिए तैयार हुए । सुभद्रा ने भी रैवतक पर्वत के देवता की भक्तिपूर्वक प्रदक्षिणा करके आराधना की । तत्पश्चात् देवो और ब्राह्मणो की वन्दना करके 'मेरी अभिलाषा पूरी हो जाय', ऐसी प्रार्थना की, और द्वारका नगरी मे प्रवेश करने के लिए चली । भीमसेन के अनुज (अर्जुन) भी उसी मार्ग के बीच मे प्रविष्ट हो गये । उनका

रैवतकाख्याचलं पुक्किनु वसिप्पानाय्
दैवतसहायनाय् चमञ्ञु विजयनु । १३
पिन्नेप्पोय् द्वारवतिपुक्किनु भगवानु
वन्नीटु मनोरथमेन्नायी किरीटिक्कु । १४
अक्काल रैवतकमाय पर्व्वतत्तिङ्कल्
चोल्क्कोण्ट महोत्सव कल्पिच्चु वासुदेवन् । १५
भोजवृष्ण्यन्धकन्मारोक्कच्चेन्नोरुमिच्चु
भोजनादिकळ् महादानङ्ङळापूरिच्चु । १६
वादित्रादिकळ् नादमेट्टवुमाघोषिच्चु
मोदत्तोटोरो दिव्यमेळङ्ङळ् मेळिप्पिच्चु । १७
वृक्षाग्रं तोरुं दीपं वच्चोक्कज्ज्वलिप्पिच्चु
पुष्कराक्षिकळ् कोप्पिट्टेटवु फलिप्पिच्चु । १८
रेवतियोटु कूटे क्षीबना बलभद्रन्
सेवकन्मारुमायिच्चमञ्ञु वन्नीटिनान् । १९
उग्रसेननुं नारीसहस्रसहितना-
यग्रे वन्नितु चतुरगवाहिनियोटु । २०
प्रद्युम्नन् सांबन् पुनरक्रूरन् सारणनु
सत्यकन् सहावरन् सात्यकि भगकरन् २१
चारुदेष्णनु पृथु विपृथु कृतवर्म्मा
वीरना विढूरथन् निशठन् भानु गदन् २२

रहने के लिए रैवतक पर्वत पर चले गये। इस प्रकार अर्जुन को भगवान् का साहाय्य प्राप्त हुआ। भगवान् तो द्वारवती सिधारे और किरीटी (अर्जुन) को विश्वास हो गया कि अपना मनोरथ सिद्ध हो जायगा। ८-१४ उन दिनो वासुदेव ने रैवतक पर्वत पर एक महोत्सव का प्रबन्ध किया। भोज, वृष्णि, अन्धक आदि सब साथ गये और भोजनो और महादानो की वहाँ भरमार हुई। वाद्यो का वहाँ बड़ा ही आघोष हुआ। बड़े प्रमोद के साथ विविध दिव्य बाजे बजाये गये। वृक्षो के शिखरो पर दीप जलाये गये और कमलाक्षियों ने खूब अलंकृत होकर अपना प्रभाव डाला। और बलभद्र मत्त होकर रेवती के साथ और अपने सेवको को साथ लिये पधारे। और सहस्र महिलाओ-सहित उग्रसेन भी आये, उनके साथ चतुरग सेना भी थी। १५-२० प्रद्युम्न, साब, अक्रूर, सारण, सत्यक, सहावर, सात्यकि, भंगकर, चारुदेष्ण, पृथु, विपृथु, कृतवर्म्मा, वीर, विढूरथ, निशठ, भानु, गद,

ञङ्ङळेक्कुरिच्चेटं कारुण्यमुण्टाकेण-
मेङ्ङुनिन्नेळुन्नळ्ळत्तेन्नतु केट्टीटेण । ४२
निन्तिरुवटिकण्ट पुण्यदेशङ्ङळेल्ला-
मन्तरं कूटातेकण्टरुळिच्चेय्तीटेणं । ४३
क्षेत्रङ्ङळ् पर्व्वतङ्ङळ् वनङ्ङळ् नदिकळु
तीर्त्थङ्ङळ् दिग्वृत्तान्तभेदङ्ङळोक्कच्चोन्नान् । ४४
मोक्षधर्म्मङ्ङळेल्लामाख्यान चेय्तानिवन् ।
साक्षाल् ज्ञानार्त्थि भिक्षु मुमुक्षुश्रेष्ठनेन्नार् । ४५
सन्यासिक्कुपद्रवकूटाते वसिप्पति-
न्निन्नु नामोरु निल कल्पिच्चीटुकवेण । ४६
ऒन्नु वृष्णिकळ् वलनोटु चोल्लियनेरं
वन्नितु वसुदेवनन्दनन् नारायणन् । ४७
पेरिकेस्सन्तोपिच्चु वलभद्ररु चोन्नान्
वरिक कृष्ण ! वरिकोन्नु चोल्लेणमिप्पोळ् । ४८
दिव्यनायिरिप्पोरु संन्यासिवरनिवन्
निर्व्व्याज सेविक्केणमिवने नामेल्लारुं । ४९
इविटेच्चातुर्मास्यमिरिप्पानोरु निल-
मेविट नल्लतेन्नु चिन्तिच्चु चोल्लेणं नी । ५०
निन्तिरुवटिक्कुळ्ळिल् तेळिञ्ञ देशंतन्ने
सन्तोष मटेल्लाक्कुमेन्ततु विचारिप्पान् । ५१

महानुभाव ने कौन-कौन पुण्यदेश देखे, यह भी विना विलम्व के वतलाने की कृपा करे।" तव अर्जुन ने सभी क्षेत्रो, पर्व्वतो, वनो, नदियों तीर्थ-स्थानो और विविध दिशाओ के वृत्तान्तो को कह सुनाया। ३८-४४ (पुन.) ऊपर से मोक्षधर्म का उपदेश किया। सवने कहा, "यह भिक्षु वास्तविक ज्ञानार्थी और मुमुक्षुओ मे श्रेष्ठ है। आज हमें चाहिए कि हम एक भूमि ढूंढ निकाले, जहाँ सन्यासी विना वाधा के रह सके।" जव वृष्णियो ने इस प्रकार वलभद्र से कहा तव वसुदेव के पुत्र नारायण वहाँ पधारे। तव वहुत प्रसन्न होकर वलभद्र ने कहा—आओ, कृष्ण ! आओ! एक वात वतलाओ। यह संन्यासी तो वहुत ही अच्छे मालूम होते हैं। हम सवको चाहिए कि इनकी निष्कपट सेवा करे। इनको अपना चातु-र्मास्य विताने के लिए कौन सा स्थान उपयुक्त होगा, ज़रा सोचकर वतलाओ।" ४५-५० तव कृष्ण ने कहा, "जो स्थान आप को उचित प्रतीत

रम्यकाननदेशे निर्म्मलशिलातले
मन्मथविवशनाय् धर्म्मजानुजन् पुक्कान् । ३३
अर्ज्जुनसालताल बकुळतमालङ्ङ-
ळश्वकर्ण्णङ्ङळ् चम्पकाशोकपुन्नागङ्ङळ् ३४
केतकपाटलङ्ङळ् कर्णिणकारङ्ङळ् नल्ल-
चूतङ्ङळङ्कोलङ्ङळतिमुक्तकङ्ङळ् ३५
इत्यादि वृक्षङ्ङळ्कोण्टेलयुं मनोज्ञमां
सुस्थले वसिक्कुन्न सन्यासितन्नेक्कण्टु- ३६
पोकुन्न वृष्णिवीरन्मारोटु परञ्ञितु
साकं नम्मोटुमत्र निङ्ङळ् चेटिरिक्केण । ३७
रेवतीरमणनु साबनु प्रद्युम्ननु
सारणन् कृतवर्म्मा चारुदेष्णनु गदन् ३८
भानुवं विढूरथन् निशठन् विपृथुवु
पृथुवुमित्यादिकळाकिय वृष्णिकळु ३९
यदुवीरन्मारुमाय् संन्यासितन्नेक्कण्टु
कुतुक पूण्टु नमस्करिच्चु भक्तियोटे । ४०
मृदुपल्लवङ्ङळिलिरुन्नारेल्लावरुं
कुशलप्रश्नङ्ङळु चेय्तितु संन्यासियु ।
कुशलमत्रेयेन्नु परञ्ञु मुसलियु ४१

मन साध्वी सुभद्रा ही पर निरन्तर लगा रहा। वे सो न सके। इसलिए पर्वत के तट पर रमणीय वन-प्रदेश मे, निर्मल शिलातल पर कामदेव से विवश होकर आराम करने लगे। २८-३३ अर्ज्जुन, साल, ताल, वकुल, तमाल, अश्वकर्ण, चम्पक, अशोक, पुन्नाग, केतक, पाटल, कर्णिकार, अच्छे-अच्छे आम के वृक्ष, अङ्कोल, अतिमुक्त, इस प्रकार के वृक्षो से मनोज्ञ स्थान मे वह सन्यासी आराम करते थे। उन्हे देखते जानेवाले वृष्णिवीरो से अर्जुन ने कहा, "आप मेरे साथ थोडी देर बैठे।" ३४-३७ रेवतीरमण (वलराम), साव, प्रद्युम्न, सारण, कृतवर्मा, चारुदेष्ण, गद, भानु, विढूरथ, निशठ, विपृथु, पृथु आदि अनेकानेक वृष्णियो और यदुवीरो ने सन्यासी का दर्शन किया और प्रसन्न होकर उनकी भक्ति-सहित वन्दना की। सव मुलायम पल्लवो पर बैठे रहे और सन्यासी ने कुशल-प्रश्न पूछे। मुसली (वलराम) ने कहा, "सव कुशल ही है। हम लोगो के प्रति आपकी कृपा वनी रहे। आप कहाँ से आ रहे है, यह भी हम सुनना चाहते है। आप

भद्रयां सुभद्रयोटिङ्ङने पऱयेणं
भद्रनायिरिप्पोरु सन्यासिप्रवरनु ६२
भक्ष्यङ्ङळ् भोज्यङ्ङळु पेयङ्ङळिवयेल्लां
नित्यवु शिक्षयोटे भिक्षयिट्टीटवेण-
मत्युदारतयोटु ञान् चोन्नतेन्नु चोल्क । ६३
कोमळनाय कृष्णनङ्ङनेतन्नेयेन्नु-
कामपालानुज्ञयुं कैक्कोण्टु वळिपोले । ६४
संन्यासियाय पार्त्थन्तन्नुटे कैयु पिटि-
च्चन्यूनकौतूहलंपूण्टु तन् गृह पुक्कान् । ६५
रुग्मिणियोटु सत्यभामयां कान्तयोटु
पद्मलोचनन् परमार्त्थवुमऱियिच्चान् । ६६
पार्त्थनागतनाय वार्त्त केट्टवर्कळु
पूर्त्तिया मनोरथमेन्नु सन्तोष पूण्टार् । ६७
सन्यासियोटु कूटिक्कन्यकागृह पुक्कु
धन्ययां भगिनियोटीवण्णमरुळ्चेय्तु । ६८
भद्रयां सुभद्रे नी केळार्यन्टे नियोग नी
भद्रनायिरिप्पोरु संन्यासिवरनिवन् । ६९
भक्ष्यभोज्यादिकळा भिक्षा नल्कीटवेण
भिक्षुविन्ननुग्रह सिद्धिप्पान् नमुक्केल्लां । ७०
नित्यवुं भिक्षुवशवर्त्तिनियाकवेण
सिद्धिक्कुमभिमतमेन्नाल् निश्चय बाले ! । ७१

जितेन्द्रिय, धृतिमान्, विनयवान् और उच्च कोटि के विद्वान् भी है। तुम उनको भक्ति के साथ कन्यागृह ले जाओ और साध्वी सुभद्रा से इस प्रकार कहो, 'इस शिष्ट सन्यासिवर के भिक्षापात्र मे भक्ष्य, भोज्य और पेय बड़ी उदारता के साथ ढग से डाल देना' और कहना कि मैंने ही ऐसा कहा है। कोमल कृष्ण ने 'ऐसा ही करूँगा', कहते हुए कामपाल (वलराम) की आज्ञा स्वीकार की और सन्यासी अर्जुन का हाथ पकड़ते हुए वड़े कुतूहल के साथ अपने घर मे प्रवेश किया। ६०-६५ वहाँ कमलाक्ष (कृष्ण) ने रुक्मिणी और सत्यभामा को यथार्थ वतला दिया। अर्जुन के आने की वार्ता सुनकर लोग अपने मनोरथ के सिद्ध होने की आशा से प्रसन्न हुए। तदनन्तर कृष्ण संन्यासी के साथ कन्यागृह गये और अपनी वहन से इस प्रकार वोले, "हे भद्रे सुभद्रे! आर्य (वलराम) की आज्ञा सुनो—यह एक सज्जन सन्यासी है।

अन्तर्म्मोदेन पुणर्न्ननुजन्तन्नो नोक्कि-
च्चिन्तिच्चु कामपालन् कृष्णनोटरुळ्चेय्तु ५२
आरामत्तिङ्कलति कोमळलतागृहे
धीरनां सन्यासिक्कु वसिप्पान् सुखमुळ्ळु । ५३
भोजनत्तिन्नु कन्यकागृहमुण्टटुत्तेन्नाल्
भोजन्मावक्कनुवाद नीकूटेक्कल्पिक्कुन्पोळ् । ५४
बलदेवोक्तिकेट्टु परञ्ञु माधवनुं
बलवानिवनतिसुन्दरन् वाग्मी युवा । ५५
कन्यकापुर समीपत्तिङ्कलाक्कीटुवा-
निन्नवन् योग्यनल्लेन्नेन्नुटे मत मिन्नो ५६
शास्त्रज्ञन् गुरु धर्म्मज्ञोत्तमन् नेतावाय ।
शास्ता निन्तिरुवटि ञङ्ङळक्किन्नेल्लावर्क्कु । ५७
भवता समुक्तमायतिने विरोधिप्पा-
निविटे मटारुमिल्लित्र पोन्निट्टु पिन्ने ५८
चिन्तिच्चाल् शुभाशुभमरिवानोरुत्तरु
निन्तिरुवटिक्कुनेरिल्लेन्नु धरिक्कण । ५९
इत्तरं कृष्णवाक्य केट्टु रामनु चोन्नान्
सत्यवान् जितेन्द्रियन् धृतिमान् विनयवान् ६०
उत्तमनाय भिक्षु विद्वानेत्रयुमिवन् ।
भक्त्या नी कूट्टिक्कोण्टु पोकेण कन्यागृहे ६१

होगा वही सब लोग पसन्द करेगे, इसमे क्या सोचना है ?" उस पर वहुत प्रसन्न होकर कामपाल (वलराम) ने सोचा और अपने अनुज कृष्ण से कहा, "किसी उद्यान के कोमल लतागृह मे ही यह धीर सन्यासी सुख से ठहर सकते है । भोजन के लिए पास मे अगर कोई कन्यागृह भी होगा तो भोजन लेना वे स्वीकार कर लेगे, विशेपत: जव तुम आदेश दोगे ।" वलदेव की वात सुनकर कृष्ण ने कहा, "यह शक्तिशाली है, सुन्दर है, वाग्मी हैं, जवान है । यह कन्यापुरी के पास ठहराने-योग्य नही है, यह मेरा अभिप्राय है । परतु आप शास्त्रज्ञ है, गुरु है, धर्मज्ञो मे उत्तम है । आप ही हम सवके उपदेशक है । आपके कहने का विरोध करनेवाला यहाँ कोई भी नही है । ऊपर से विचार करके शुभ और अशुभ को समझनेवाला आप के तुल्य यहाँ कोई भी नही है, यह भी जानना चाहिए ।" ५१-५९ कृष्ण की यह वात सुनकर वलराम वोले, "यह उत्तम भिक्षु सत्यवान्,

कातर्यं कण्टुं चेतोवैधुर्यं कण्टुं मार-
वैकार्यं कण्टु वाञ्छासौकर्यं कण्टु वेप- ८१
सौकुमार्यं कण्टुं तल्लावण्यं कण्टु वृत्ति-
दाक्षिण्य कण्टुमुळ्ळिल् कारुण्य कण्टु नल्ल- ८२
तारुण्यं कण्टुं स्मितभापित केट्टुं भाव-
वैवर्ण्य कलर्न्नितु सव्यसाचिक्कु मेन्मेल् । ८३
माधवभगिनियु शैशवत्तिङ्कल्त्तन्ने
माधवसखियाय फल्गुनगुणङ्ङळ्के- ८४
ट्टादरवोटु मन्मथातुरयायाळल्लो ।
कण्टवर् पऱञ्ञुकेट्टर्ज्जुनरूपगुणं ८५
कण्टतुपोलेतन्नेयुण्टल्लो सुभद्रय्क्कु ।
रण्टुकैकळ्क्कुमुण्टु ञाण्तळम्पतु कण्टु-
मुण्टायि संन्यासियिल् कौतुक दिनंतोरुं । ८६
चिन्तिच्चु चिन्तिच्चुळ्ळिल् सशयं मुळुक्कयाल्
पन्तोक्कु मुलयाळा माधवियोरुदिन ८७
मृष्टभोजन कळिञ्ञिष्टमोटिरिक्कुम्पोळ्
पुष्टकौतुकत्तोटु मट्टोलुंमोळियाळु ८८
तुष्टनायिरिप्पोरु शिष्टनां यतियोटु
कष्टमेन्निरिक्कलुं मट्टलर्वाणन्चोल्लाल् ८९

को, भावो की गम्भीरता को, आँखो की कातरता को, चित्त के वैधुर्य को, कामदेव-कृत विकारो को, अभिलापाओ के सौकर्य को, वेप के सौकुमार्य को, उसके लावण्य को, उसके व्यवहार के दाक्षिण्य को, उसके भीतरी कारुण्य को, और उसके शोभन यौवन को देखकर और उसके स्मितपूर्वक भाषण को सुनकर सव्यसाची (अर्जुन) के भावविकार उत्तरोत्तर वढे । ७४-८३ माधव की वहिन भी, वचपन से ही कृष्ण के मित्र फल्गुन (अर्जुन) के गुणों को सुनने के कारण आदर करती हुई कामदेव से पीडित हुई । अर्जुन के रूप और गुण, जिनका द्रष्टाओ ने वर्णन किया था, सुभद्रा को ऐसे लगे, मानो उससे स्वय देखे हो । सन्यासी के दोनो हाथो मे धनुष की डोरी का निशान देखकर उसके प्रति कौतुक दिन-पर-दिन वढता गया । जव बहुत विचार करने पर भी सशय वढता गया तव एक दिन कन्दुक के समान स्तनवाली मृदुभापिणी सुभद्रा यथेष्ट भोजन करने के वाद अत्यत कौतुक के साथ वहाँ गयी (जहाँ) तुष्ट और शिष्ट सन्यासी (-रूपधारी अर्जुन वैठे

मुन्नं वन्नितु चिल संन्यासिवररव-
रिन्निप्पोळ् दाशार्हन्तन् पुत्रिकळायुण्टाय- ७२
कन्यकागृहङ्ङळिलिरुन्नीटुन्नु बाले !
नन्नायि शुश्रूषिच्चीटुन्नितु भक्त्या नित्यं । ७३
ॲन्नॆल्लां बोधिप्पिच्चु माधवनॆळुन्नळ्ळि
सन्यासि कन्यागृहं तन्निलु पुक्कानल्लो । ७४
रम्यगात्रियॆक्कण्टु मन्मथविवशनाय्
धर्म्मजसहोदरनॆत्रयु तापं पूण्टान् । ७५
निद्रयुमिल्ल पुनरूणुमिल्लॆन्नु वन्नु
नित्यवु ध्यानत्तिनु निष्ठयुमुण्टाय्वन्नु । ७६
मटॊरु चिन्तयुमिल्लुटवरिलुकूटॆ
मुटुमस्सुभद्रयिलॆन्नियॆ नक्तन्दिवं । ७७
आळिकळोटु कूटिक्केळिकळ् कोलुन्पोळु
व्रीळादिमनोहरभावङ्ङळ् काणुन्पोळु । ७८
पन्ताटुन्नतु कण्टु पन्परक्कळिकळु
चिन्तुकळ् पाटुन्नतु चन्तमायाटुन्नतु ७९
चातुर्यं कण्टु वेणुवीणादिकळिल् शील-
माधुर्यं कण्टु भावगांभीर्यं कण्टु नेत्र- ८०

हम सबके लिए इस भिक्षु का अनुग्रह प्राप्त करने के लिए उनको विविध भक्ष्य और भोज्य आदि की भिक्षा देना चाहिए। हे बाले! निरन्तर इस भिक्षु की शुश्रूषा करो। इससे अवश्य ही तुम्हारी अभिलाषा सिद्ध होगी। पहले भी कुछ सन्यासी आये थे, वे अब दाशार्ह (कृष्ण) की जो पुत्रिया है उन कन्याओ के घर ठहरे हुए है। उनकी भक्ति के साथ शुश्रूषा की जा रही है।" ६६-७३ ऐसा समझाकर कृष्ण सिधारे और सन्यासी ने कन्यागृह मे प्रवेश किया। सुन्दरी को देखकर युधिष्ठिर के अनुज कामदेव से विवश हुए और परेशान हुए। ऐसी दशा हुई कि वे न सो सके और न खा सके, निरन्तर उसी का ध्यान करने ही मे उनका मन लगा रहा। रात-दिन उस सुभद्रा को छोडकर और किसी भी वस्तु पर, अपने बन्धु-मित्रो पर भी, उनका ध्यान नही गया। अपनी सखियो के साथ होनेवाले उसके खेलो को, उसके व्रीडा (लज्जा) आदि मनोहर भावो को, उसकी गेदो और लट्टुओ की क्रीडा को, उसके धीमे-धीमे गानो को, मनोहर नाच को, उसके बॉसुरी और वीणा-वादन के चातुर्य को, उसके शील-माधुर्य

प्रणयसुखपरमास्तिक्यमोटु चौन्नान्
गुणशालिनियोटु सकल वृत्तान्तवु । १००
अन्योन्यसल्लापवु चॆय्तु मेवीटु नेर-
मन्योन्य कौतूहल पूण्टु पुञ्चिरिक्कौण्टु १०१
सन्यासितन्नॆ नोक्किक्किप्पिन्नॆयु सुभद्रया
कन्यक सगद्गद मॆल्लवे चौल्लीटिनाळ् १०२
अन्यायमल्लो रहस्सल्लाप नम्मिल् भवान्
धन्यनाकयालतु योग्यमॆन्नते वरू । १०३
अन्यमायिरिप्पौरु वृत्तान्त चोदिक्कुन्नु-
ण्टॆन्नोटु परमार्त्थमरुळिच्चॆय्तीटेण १०४
खाण्डवप्रस्थत्तिङ्कलॆळुन्नळ्ळियो मम
पाण्डवमातावाय कुन्तियॆयुण्टो कण्टु ? १०५
ऍन्नुटॆ पितृष्वसावाकुन्नतरिञ्जितो
मन्नवन् युधिष्ठिरन्तन्नॆयुमुण्टो कण्टु ? १०६
सोदरन्मारुमायि स्वैरमाय् वाळुन्नोरो ?
वातनन्दननाय भीमनु सुखमल्ली ? १०७
फल्गुननपराधं पोक्कुवान् तीर्त्थत्तिनु-
निर्ग्गमिच्चिरिक्कुन्नितॆन्नतो केट्टुतल्लो । १०८
इक्कालमेतु दिक्किल् सञ्चरिक्कुन्नितवन् ?
दु खिप्पान् पात्रमल्ल भाग्यवानल्लो पार्त्थन् । १०९

राग, मन्दाक्ष (लज्जा) वात्सल्य, आनन्द, दयारस, प्रणयसुख और आस्तिक्य के साथ उस गुणशालिनी से सभी वृत्तान्त बतलाये । ९४ १०० तदनन्तर दोनो वार्तालाप करते रहे । दोनो का कौतूहल बढा और दोनो ने स्मित-पूर्वक भाषण किया । तब कन्या सुभद्रा सन्यासी को देखती हुई गद्गद स्वर के साथ धीरे-धीरे बोली, "हम दोनो को इस प्रकार का एकान्त मे वार्तालाप करना उचित नही है । आप शिष्ट है, इसलिए यह कदाचित् अनुचित न समझा जाय । मै एक और वृत्तान्त पूछ रही हूँ, कृपया मुझसे सही-सही आप बतला दे । क्या आप खाण्डवप्रस्थ गये थे और वहाँ आपने पाण्डवो की माता कुन्ती का दर्शन किया है ? क्या आप जानते है कि वह मेरी बुआ है ? क्या आपने राजा युधिष्ठिर को भी देखा है ? क्या वे अपने भाइयो के साथ सुख से राज्य कर रहे है ? क्या पवन-पुत्र भीम अच्छी तरह से है ? सुना है कि फल्गुन (अर्जुन) अपना अपराध मिटाने

वट्टॊत्त मुलकळुं दृष्टियुं कवाटकॊ-
ण्टॆट्टॊट्टु मऱच्चिचट्टु निन्नवळ् विचारिच्चाळ् ९०
चॆऱुतु पऱयुम्पोळऱियामल्लो पक्षे ।
वॆऱुते चिल चोद्य चॆय्ततॆन्नते वरू ९१
भगवन् प्रसीद मे ! भगवन् प्रसीद मे !
सुकृतमल्लो मम भवत्सगममिप्पोळ् ९२
शैशवं कॊण्टु चिल कौतुकमुण्टाकयाल्
वैशिष्यमेऱुं भवानोटु ञान् चोदिक्कुन्नु । ९३
देशङ्ङळ् सरित्तुकळ् शैलङ्ङळ् सरस्सुकळ्
ग्रामङ्ङळ् नानाजनपदङ्ङळ् नगरङ्ङळ् ९४
राज्यङ्ङळरण्यङ्ङळॆन्निवयॆल्लामॊक्क-
प्पूज्यनां भवान्तानो नटन्नु कण्टुवल्लो ९५
भोज्यङ्ङळिन्नदिक्किलिन्नवयॆन्नु पिन्नॆ-
त्याज्यङ्ङळिन्नदिक्किलिन्नवयॆन्नुमॆल्ला ९६
अरुळिच्चॆय्तीटेणमऱिवान् तक्कवण्ण-
मरुणाधरि मन्दमीवण्णं चोदिच्चप्पो- ९७
ळरुणेतरकुलजातनाकिय पार्त्थन्
करुणारसपरवशमानसनाये ९८
सन्तोषबहुमान स्नेह कौतुक राग-
मन्दाक्ष वात्सल्यानन्दाकुलदयारस- ९९

हुए) थे । ८४-८९ यद्यपि वात अनुचित थी, तथापि कामदेव की प्रेरणा से अपने गोल स्तनो और आँखो को किवाड़ की आड मे तनिक छिपाकर सोचने लगी । छोटी बातो से स्थिति मालूम हो जाती है । यो ही कुछ प्रश्न पूछूँ ऐसा सोचकर उससे कहा—हे भगवन् ! मुझ पर कृपा करो! मुझ पर कृपा करो ! मेरा वडा पुण्य है कि आपका दर्शन हुआ । शैशव के कारण मुझे कौतूहल हो गया है, इसलिए आप महानुभाव से मै पूछ रही हूँ । ९०-९३ आप पूज्य ने देशो, सरिताओ, पर्वतो, सरोवरो, ग्रामो, विविध जनपदो, नगरो, राज्यो, बनो आदियो मे पर्यटन करके बहुत कुछ देखा है । किस देश मे क्या-क्या भोज्य है और किस देश में क्या-क्या त्याज्य है, यह सव आप वतला दे, ताकि हम जान ले । जव लाल अधर-वाली (उस सुभद्रा) ने धीरे-धीरे इस प्रकार पूछा, तव चन्द्रवंशी पार्थ (अर्जुन) ने, करुणारस से विवश होकर, सन्तोष, वहुमान, स्नेह, कौतुक,

कालविरल्कोंण्टु भुवि वरच्चुवरच्चुटन्
कोळ्मयिक्कोंण्टु चेट्टु विरच्चुविरच्चेव १२०
निल्क्कुन्न सुभद्रयिल् चेल्लुन्न चित्ततन्ने
निल्क्कॅन्तु विलक्कीट्टु पिन्नेयु चोन्नान् पार्त्थन् । १२१
आन्तन्ने धनञ्जयनाकुन्नतरिक नी
तान्तन्ने वरिक्केणमेन्नेयेन्नरिञ्ञालु । १२२
पिन्नेप्पोय् लतागृहपुक्कितु धनञ्जयन्
कन्यक सुभद्रयु मन्मथातुरयायाळ् । १२३
शिल्पमायिरिप्पोरु पुष्पतल्पत्तिन्मेल्च्चे-
न्नत्भुतागियु वीणु मोहिच्चाळतुनेर । १२४
कन्यकागृहत्तिङ्कलुण्टाय वृत्तान्तङ्ङ-
ळण्र्णोजनेत्रन् दिव्यचक्षुस्सुकोंण्टु कण्टान् । १२५
पत्मसंभवयाकुं विदर्भपुत्रियाय
रुक्मिणितन्ने नियोगिच्चितु भगवानुं । १२६
भिक्षुविन् भिक्षार्त्थमायन्नुतोट्टर्ज्जुननु
भक्ष्यभोज्यादिकळिल् वैराग्यमुण्टायवन्नु । १२७
स्वस्थयल्लातेवन्नु भद्रया सुभद्रयु-
मेत्रथुं कृशांगियाय् विवर्ण्णवदनयाय् । १२८
शोकचिन्तादिकोंण्टु निश्वासमुण्टाकयु
भोगसाधनङ्ङळिल् वैमुख्यमेरुकयुं । १२९

होकर द्वारका नगर मे रहते है और कृष्ण की बहन सुभद्रा के प्रति उनका प्रेम हो गया है।" यह सुनकर लज्जा, प्रेम और अनुराग के कारण सुन्दरी सुभद्रा ने प्रणाम किया। पाँव के अँगूठे से भूमि पर लिखती हुई और रोमांच के साथ कुछ काँपती हुई सुभद्रा की ओर आकर्षित होते अपने मन को दबाकर अर्जुन ने फिर कहा, "जान लो कि मैं ही धनञ्जय हूँ, और तुम मुझसे विवाह करो।" ११७-१२२ तदनन्तर धनञ्जय ने लतागृह में प्रवेश किया। और कन्यका सुभद्रा मन्मथ से पीड़ित हो गयी। वह अद्भुत अङ्गवाली सुभद्रा ढग से सजी हुई एक पुष्पशय्या पर जाकर लेटी और बेहोश हो गयी। कन्यागृह मे जो वृत्तान्त हुआ उसे अर्णोजनेत्र (कमलाक्ष=कृष्ण) ने अपने दिव्यनेत्रों से देखा। कमल से उत्पन्न[1] विदर्भराज की पुत्री रुक्मिणी को भगवान् ने निर्देश दिया। भिक्षु की

१ लक्ष्मी के अंश से उत्पन्न होने के कारण।

अवनेयुण्टो कण्टु केट्टितो विशेषङ्ङळ् ?
विवशभावत्तोटुमीवण्ण चोदिच्चप्पोळ् । ११०
अवळोटुरचेय्तु मन्दहासवुं पूण्टु
पवनात्मजसहोदरना विजयनु । १११
आर्यया कुन्ति कुरुक्षेत्रत्तिङ्कलु तत्र
स्वैरक्केटिल्ल विशेषिच्चेतुमेन्नु केट्टू । ११२
धर्म्मजन्मावुमनुजन्मारुमिन्द्रप्रस्थ
धर्म्मेण परिपालिच्चिरिक्कुन्नितु बाले ! ११३
भ्राताक्कन्मारुं कुन्तियाकिय् जननियु-
मेतुमे धरिच्चितिल्लर्ज्जुनविशेषङ्ङळ् । ११४
बालिके ञानिन्नोरु किवदन्तियु केट्टेन्
काले वैकाते परमार्त्थवुमरिञ्ञीटा । ११५
रहस्य चोल्लीटरुतंगनमारोटेन्नु
महल्सवादमेन्नाकिलु ञान् चोल्लीटुवन् । ११६
द्वारकापुरतन्निल् संन्यासवेषपूण्टु
मारमाल् कलर्न्निरिक्कुन्नितु धनञ्जयन् । ११७
कृष्णसोदरियाय सुभद्रतन्निलति-
तृष्णपूण्टिरिक्कुन्नोनर्ज्जुननेन्नु केट्टु । ११८
मन्दाक्षभावकोण्टुं प्रेमानुरागंकाण्टु
सुन्दरिसुभद्रयु कुन्पिट्टाळप्पोळ्तन्ने । ११९

के लिए तीर्थयात्रा मे निकले है । वे इस समय कहाँ भ्रमण कर रहे है ! घवडाने की आवश्यकता नही है, क्योकि पार्थ भाग्यशाली है । आपने उनको देखा है या उनके सवन्ध मे कुछ सुना है ?" १०१-१०९ जव विवश होकर सुभद्रा ने इस प्रकार पूछा, तव भीमसेन के अनुज (अर्जुन) ने मन्दहास के साथ उससे कहा, "आर्या कुन्ती कुरुक्षेत्र मे है । सुना है कि वे प्रसन्न है, कोई विशेष वाधा नही है । हे वाले ! धर्मपुत्र (युधिष्ठिर) अपने भाइयो के साथ इन्द्रप्रस्थ मे धर्मपूर्वक राज्य कर रहे है । उनके भाइयो को और उनकी माता कुन्ती को अर्जुन के समाचार बिलकुल अविदित है । हे वालिके! मैने आज एक अफवाह सुनी है, वह ठीक है या नही, (शीघ्र ही) मालूम हो जायगा । वडो की एक राय है कि महिलाओ को रहस्य न वतलाना चाहिए, फिर भी मै वतलाऊँगा । ११०-११६ सुना है कि अर्जुन सन्यासी का वेश धारण करते हुए, कामदेव से विवश

पुत्रमित्रादि कळत्रङ्ङ्ळोटौरुमिच्चु
मित्रमाय्च्चातुर्व्वर्ण्यत्तोटे पोकयु वेणं । १३९
पुष्पवाणारितनिक्कल्भुतमहोत्सव
मुप्पत्तुनालुदिवसत्तिनु वेणंतानु । १४०
कृष्णरामाक्रूरप्रद्युम्नसत्यकमुख्य-
वृष्णिकळौक्कत्तक्क विक्रमत्तोटुं कूटि । १४१
तोणिकळ् चङ्ङाटङ्ङळ् वञ्चिकळ् पटवुक-
ळाणुपोकात वळर्कप्पलु पलतरं १४२
आयतमिळिमारुमायुधजालङ्ङळु-
मावोळमुपकरणङ्ङ्ळुं द्विजन्यारुं १४३
पोवानायौरुमिच्चनेरत्तु सुभद्रयु
देवकीसुतनोटु मेल्लवे चौल्लीटिनाळ् । १४४
द्वादशदिनं चेन्नु संन्यासि वन्निट्टिप्पोळ्
भ्रातावे वेण्टतु ञानेन्तरुळ्चेय्तीटणं । १४५
प्रीतियु विनयवु भक्तियुं विश्वासवु
भीतियु कुतुकवु लज्जयुपूण्टु निल्क्कुं १४६
सोदरितन्नै नोक्कि मन्दहासवु चेय्तु
सादरमरुळ्चेय्तु माधवन्तिरुवटि । १४७
एन्तोन्नु संन्यासितन् चिन्तितमेन्नालति-
नन्तरवराते नी वशयाय् वर्त्तिक्केणं । १४८

है । शिवजी का उत्सव मनाया जाय और आज से चौथे दिन हम सब द्वीप चले चले । पुत्र, मित्र और कलत्रो के साथ और चारो वर्णो को अनुकूल बनाकर जाना चाहिए । पुष्पवाण (कामदेव) के शत्रु (शिवजी) का महोत्सव चौतीस दिन अवश्य चलेगा । कृष्ण, बलराम, अक्रूर, प्रद्युम्न, सत्यक आदि वृष्णिलोग बडे विक्रम के साथ तोणि, चङ्ङाट, वञ्चि, पटवु, वळर्कप्पल् आदि अनेक प्रकार की नावो पर बैठकर और महिलाओ और विविध हथियारो, अन्य यथेष्ट उपकरणो और ब्राह्मणो को लेकर जब जाने के लिए एकत्रित हुए तब सुभद्रा ने देवकीपुत्र (कृष्ण) से धीरे-धीरे कहा, "संन्यासी को आये बारह दिन बीत गये है । भाईजी, कृपया बतलाइए अब मुझे क्या करना है ?" १३७-१४५ प्रीति, विनय, भक्ति, विश्वास, भीति, कौतुक और लज्जा अनुभव करती हुई अपनी बहिन को देखकर पूज्य माधव मुस्कराये और सादर बोले, "संन्यासी की जो इच्छा हो,

राप्पकल् किटक्कुन्नु बाष्पवु वार्त्तु वार्त्तु
कोप्पुकळ् कण्टु मकळोटु देवकि चोन्नाळ् । १३०
दुःखिक्कवेण्ट वाले ! कैक्कोळ्क धैर्यमिप्पो-
ळुळ्ळकाम्पिल् निनच्चवयोक्कवे साधिप्पिप्पन् । १३१
रामकृष्णन्मारोटु ञान् परञ्ञिनि निन्टे
कामत्ते वरुत्तुवनिल्ल संशयमेतुं । १३२
इत्तर परञ्ञवळ् दुःखवुमोट्टु पोक्कि-
स्सत्वरं वसुदेवरोटु देवकि चोन्नाळ् । १३३
वसुदेवनुं पुनराहुकनक्रूरनु
वसुदेवात्मजना कृष्णनुमोरुमिच्चु १३४
उग्रसेननुं शिनि गदनुमोरुमिच्चु
रुग्मिणीसत्यभामारोहिणीदेवाकियुं १३५
ओन्निच्चु परोहितन्तन्नेयु कूट्टिक्कोण्टु
नन्नायि निरूपिच्चु कल्पिच्चु विवाहवु । १३६
उद्धवर्तानु बलभद्ररुमरियाते
सत्वरं कळिक्केणमतिनुण्टुपायवु । १३७
अन्तकान्तकन् तनिक्कुत्सवमुण्टाक्केण-
मन्तर्द्वीपत्तिङ्कल् ना नालांनाळ् पोकवेणं । १३८

भिक्षा के रूप मे दिये गये भक्ष्य और भोज्य पदार्थो मे उस दिन से अर्जुन का वैराग्य हो गया। भद्रा सुभद्रा भी अस्वस्थ हो गयी, अत्यन्त दुबली हो गयी, उसके मुँह का रग फीका हो गया। शोक और चिन्ता के कारण नि:श्वास छोडती रही और सभी भोग-साधनो से उसने मुँह मोड़ लिया। १२३-१२९ दिन-रात लेटी हुई आँसू वहाती रही। इन विकारो को देखकर देवकी ने अपनी बेटी से कहा, "वेटी ! दु:ख मत करो, धैर्य का सहारा लो। जो तुम्हारी अभिलापा है, उसे मै पूरा कर दूँगी। कृष्ण और वलराम से कहकर मैं तुम्हारी इच्छा साध दूँगी (पूर्ण करूँगी), इसमे सन्देह नही है।" इस प्रकार कहकर थोडा बहुत (उसका दु ख) दूर किया। फिर विना विलम्ब के देवकी ने वसुदेवजी से कहा, वसुदेव, आहुत, अक्रूर, वसुदेव के पुत्र कृष्ण के साथ, उग्रसेन, निशि और गद एक होकर, रुक्मिणी, सत्यभामा, रोहिणी, देवकी, इन सबने पुरोहित के साथ वैठकर विवाह का दिन निश्चित किया। १३०-१३६ उद्धव और बलभद्र के विना जाने ही तुरन्त विवाह सम्पन्न होना चाहिए। इसके लिए उपाय

निन्नुटे पित्रादिकळ् पुत्रमित्रादियोटु-
मर्णवमध्ये मेवुमन्तद्द्वीपवु पुक्कार् । १५९
ॲन्नुटे वन्धुक्कळुमिविटेयट्टुत्तिल्ल
निन्नोटोन्नुण्टु परयुन्नु ञानतुमूल । १६०
गान्धर्व्वविवाहमञ्चामतेत्रयु मुख्यं
कान्तलोचने ! पुनरेतुमे मटिक्केण्टा । १६१
मन्त्रतन्त्रङ्ङळेल्लामन्योन्यराग कोण्टे
सन्धिक्कू सन्ततियुमेन्नल्लो चोल्ली मनु । १६२
पक्षवु मास तिथि करणमयनवु-
मृक्षवु शुभलग्नमेन्निव वेणं तानु । १६३
उत्तरायणमिप्पोळ् वैशाखमल्लो मास-
मत्तमा नक्षत्रवु शुक्लपक्षवु वन्नु । १६४
तिथियु तृतीय केळ् वारणक्करणवु
मधुराधरीकुलमौलिमालिके ! बाले ! १६५
मकरमल्लो लग्न पेरिके शुभमतु
मकरविलोचने ! मकनुमुण्टाय्वरु । १६६
अस्तमिच्चितु सूर्यनट्टुत्तु मुहूर्त्तवु-
मुत्तर परयेणमुत्तमे ! सुभद्रे ! नी । १६७

बतला दिया। "तुम यथाविधि राज्य का परिपालन करो। मैं विना विलम्ब के लौटूँगा।" उसने उत्तर दिया—"मैं ऐसा ही करूँगा।" तदनन्तर सभी वृष्णिगण श्रीकृष्ण के नेतृत्व मे महोत्सव को मनाने के लिए निकले। अर्जुन ने सुभद्रा को एकान्त मे बुलाकर कहा, "हे बाले! अब हम दोनो का कल्याण हो! पिता, भाई, माता, मामा, चाचा, गुरु, कन्या-दान करने का अधिकार रखनेवालो का यही क्रम है। तुम्हारे पिता आदि अपने पुत्र और मित्रो-सहित समुद्र के बीच मे स्थित द्वीप को चले गये है। मेरा बन्धु-वर्ग भी यहाँ पास मे नही है। इसलिए मैं तुमसे एक बात बतला रहा हूँ। १५३-१६० विवाहो मे गान्धर्व नामक जो पाँचवाँ (विवाह) है, वह अत्युत्तम है! इसलिए हे कान्तलोचने! तुम्हे किसी प्रकार की शङ्का न होनी चाहिए। मनु ने कहा भी है कि मन्त्र और तन्त्र का वही प्रयोग होता है, जहाँ अनुराग हो और सन्तान-उत्पत्ति तभी होती है। पक्ष, मास, तिथि, करण, अयन, नक्षत्र, लग्न, ये सब तो ठीक होने चाहिए। अब उत्तरायण है, माह वैशाख, हस्त नक्षत्र और शुक्ल पक्ष चल रहे है।

इनिक्कु सन्यासिक्कुमिक्कण्ट बन्धुक्कळ्क्कुं
निनक्कु कल्याणमाय्वरुमेन्नरिक नी। १४९
सन्यासिवरनिवनेन्नरिञ्ञीले नीयुं
चोन्निनि शुश्रूषिच्चीटेन्नयच्चितु कृष्णन्। १५०
चित्रमाल्यानुलेपनांबराभरणङ्ङ-
ळेत्रयु वळरेस्सभरिच्चु यदुक्कळु। १५१
विळिच्चु पाञ्चजन्य भगवान्तुनेरं
कळिच्चुविळिच्चोक्केप्पुळच्चु पुरप्पेट्टार्। १५२
ओळिच्चु कोण्टुपोवानुरच्चु किरीटियु
मुळच्च मनोरथ फलिच्चु सुभद्रय्क्कुं। १५३
विपृथुतन्ने वेरे विळिच्चुकोण्टु मधु-
रिपुतन्नन्तर्गतमखिलमरुळ्चेय्तु। १५४
परिपालिच्चुकोळ्क राज्य नी वळिपोले
वरुवन् वैकाते ञानेङ्ङिलङ्ङनेयेन्नान्। १५५
कृष्णनेप्पुरस्करिच्चोक्कवे पुरप्पेट्टार्
वृष्णिकळ् महोत्सवं पालिप्पानतुकाल। १५६
सुभद्रतन्ने मेल्ले विळिच्चु चोन्नान् पार्थन्
सुभद्र भविक्केण नमुक्कुमिनिब्वाले ! । १५७
जनकन् भ्राता माता मातुलन् पितृभ्राता
गुरुवेन्नेव कन्यादानकर्तृकक्रम। १५८

उसमे कोई बाधा न हो, ऐसा तुम उसके साथ बर्ताव करो। जान लो कि इससे मेरा, सन्यासी का, इन सभी बन्धुओ का और तुम्हारा (कल्याण) भला[1] ही होगा। क्या तुम नही जानती हो कि यह सन्यासिश्रेष्ठ[2] है ?" कृष्ण ने कहा, "अब जाओ और उनकी सेवा करो।" यदुओ ने सुन्दर-सुन्दर मालाएँ, अनुलेप, वस्त्र और आभूषण विपुल सख्या मे एकत्रित किये। तब भगवान् ने अपना पाञ्चजन्य नामक शङ्ख बजाया। खेलते हुए और विविध नाद करते हुए सब लोग यात्रा के लिए चल पड़े। १४६-१५२ किरीटी (अर्जुन) ने छिपाकर ले जाने के लिए निश्चय किया। और सुभद्रा का उगा हुआ मनोरथ फलने लगा। विपृथु को एकान्त मे ले जाकर मधुरिपु (श्रीकृष्ण) ने अपना सारा अन्तर्गत का अभिप्राय उसको

१ मलयाळम मे 'कल्याण' शब्द का दूसरा अर्थ है 'विवाह'। २ 'वर' के भी दो अर्थ है—श्रेष्ठ और विवाह करनेवाला।

मकुटागदहारकुण्डलकटकादि
मकनु शतमखनणिञ्ञाननवधि । १७८
ईवण्ण स्वयवरमुण्टायिट्टिल्लयॆन्नु
देवकळ्पोलुमोक्क स्तुतिच्चारतुनेर । १७९
देवदेवेशनाय कृष्णन्टॆ नियोगत्ताल्
देवेन्द्रादिकळ् चॆन्नु नाकलोकवुं पुक्कार् । १८०
अजनव्ययन् परमानन्दमूर्त्ति कृष्णन्
विजयनोटु मॆल्लॆ रहसि चॊल्लीटिनान् । १८१
इरिक्कामिरुपत्तुरण्टुनाळेक्कु पिन्नॆ
वरुत्तित्तरुवन् ञानॆन्नुटॆ रथतन्नॆ । १८२
सत्वरमन्नुतन्नॆ गमिच्चीटॆन्नाल् निन्नॊ-
टॆत्तुकयिल्ल तटुत्तीटुवानॊरुत्तरु । १८३
पिन्नॆ ञान् बन्धुक्कळुमायट्टॊरु दिन-
मिन्द्रप्रस्थत्तिङ्कलेक्काम्मारु वन्नीटुवन् । १८४
कुन्तीनन्दनन्तन्नोटीवण्णमरुळिच्चॆ-
य्तन्द्द्वीपत्तिन्नॆळुन्नळ्ळिनान् भगवानु । १८५
श्रीरामन्तिरुवटि सीतयोटॆन्नपोलॆ
पौरवन् सुभद्रयोटॊन्निच्चु मरुविनान् । १८६
विशतिपर दिनद्वितय चॆन्नतिनि-
स्सशयमिल्ल पुरप्पॆटुक वैकीटातॆ । १८७

स्वयवर सचमुच अद्भुत था। मगलस्त्रियो के करने योग्य कर्मो को मगल-देवता पौलोमी (इन्द्राणी) ने और देवकी ने किया। देवो और लोकपालो के साथ इन्द्र ने अपने पुत्र (अर्जुन) का अभिषेक किया। अप्सराएँ गाने और नाचने लगी और देववृन्द दुन्दुभि वजाने लगे। शतमख (इन्द्र) ने अपने पुत्र को मुकुट, अगद, हार, कुण्डल, कटक आदि अनेक आभूषण पहनाये। "ऐसा स्वयवर कभी भी नही हुआ है", इस प्रकार (कहकर) सभी देवो ने उसकी प्रशसा की। १७४-१७९ देवदेवेश श्रीकृष्ण की आज्ञा से इन्द्र आदि देवो ने स्वर्ग मे प्रवेश किया। तदनन्तर अज, अव्यय, परमानन्दमूर्त्ति कृष्ण ने अर्जुन से एकान्त मे कहा, "बाईस दिन यहीं रहना। तदनन्तर मै अपना ही रथ मँगवा दूँगा। तुरन्त उसी दिन चले जाना ताकि कोई भी तुम्हे रोकने के लिए पहुँच ही न सके। फिर मैं वन्धुओ के साथ एक दिन इन्द्रप्रस्थ चला आऊँगा।" कुन्तीनन्दन (अर्जुन)

मौनानुवादमोटे निन्नितु सुभद्रयु
मानसे जनकनेंद्ध्यानिच्चु किरीटियु । १६८
वन्नितु शचीदेवितन्नोटुं विण्णोर्नाथन्
पिन्नेयुमुळ्ळ देवस्त्रीकळुमोक्क वन्नार् । १६९
वसिष्ठनरुन्धतितन्नोटु कूटि वन्नु
वसिच्चु देवमुनि नारदनुतानु वन्नु । १७०
भगिनीमनोरथमरिञ्ञिट्टुळ्ळुन्नळ्ळि
भगवान् बलभद्ररुरुक्कंपुक्कशेष । १७१
देवकीवसुदेव सात्यकादिकळोटु
देवदेवेशनेळुन्नळ्ळियोरनन्तर । १७२
काश्यपमहामुनि होतावायतु पिन्ते-
क्काश्यपीदेवप्रौढन्मार् परिकर्म्म चेय्तार् । १७३
सदस्यादिकळेल्लां नारदादिकळल्लो
तदत्यल्भुततर सुभद्रास्वयवरं । १७४
मंगलस्त्रीकळ् वेण्टु कर्म्मङ्ङळरुन्धति
मंगलदेवतयु पौलोमी देवकियु १७५
देवकळोटु लोकपालन्मारोटु कूटि
देवेन्द्रनभिषेक चेय्तितु तनयनु । १७६
देवनारिकळ् पाट्टुमाट्टवु तुटङ्ङिनार्
देवदुन्दुभिकळु घोपिच्चु नादपूण्टु । १७७

अब तिथि तृत्तीया है, करण है वारण । हे वाले ! मधुर अधरवालियो के कुल की शिरोमालिके ! अब मकर लग्न है, जो अत्यन्त शुभ है-। हे मकरविलोचने ! इसमे पुत्रजन्म की सभावना है । अब सूर्य अस्त हो गया है और शुभ मुहूर्त्त निकट हो गया है । हे उत्तम सुभद्रे ! मुझे उत्तर दो ।" १६१-१६७ मौन के द्वारा अनुमति देती हुई सुभद्रा खडी थी और अर्जुन ने अपने पिता का ध्यान किया । तव देवो के पति शचीदेवी के साथ पधारे और अन्य देवस्त्रियाँ भी आयी.। वसिष्ठजी अरुन्धती के साथ पधारे और देवमुनि नारद भी चले आये । अपनी वहिन की इच्छा को जानकर भगवान् बलभद्र सवके सो जाने के वाद पधारे । देवकी, वसुदेव, सात्यकि आदिको के साथ देवदेवेश (श्रीकृष्ण) के पधारने के वाद महामुनि काश्यप होता हुए और तदनन्तर व्राह्मणश्रेष्ठो ने कर्म का अनुष्ठान किया । १६८-१७३ उसमे नारद आदि ही सदस्य थे । सुभद्रा का

चेय्तालुमाकुंवण्ण जन्यं ञान् पात्रमत्रे
चैतन्यमेतुमिनिक्किल्लेन्नो निरूपिच्चु । १९६
वाहुकवंश तन्निलल्लयो पिरन्नु ञान्
वाहुवीर्यं पारमुण्टल्लो मल् भ्रातावक्कळ्क्कुं । १९७
बाहुलेयोपमना भर्त्तावे ! धराधर-
वाहनसूनो ! पाण्डुनन्दन ! कुन्तीसुत ! १९८
भागत्तिल् समरसयोगत्तिनोत्तवण्णं
वेगत्तिल् कूट्टीटुवन् काट्टिक्कोण्टालुं शौर्य । १९९
एतुमे कुरुयुन्नीलिनिक्कु पठिच्चतेन्
भ्रातावाकिय कृष्णन् माधवनरिञ्ञालुम् । २००
मेघनिर्घोषंपोले तेरुरुळ्नादं केट्टु
वेगत्तिलटुत्तितु पुरपालन्मारप्पोळ् । २०१
मिटुक्कु काट्टुन्नवनेवनेन्नरियेण-
मटुक्क वैकाते नामोरुमिच्चोक्कत्तक्क- । २०२
त्तटुक्क मुन्पिल् पुक्कु तिरिच्चु नटक्किलो
पिटिच्चु केट्टिक्कोळ्क पटय्क्कु भाविक्किलो २०३
कोटुक्क वेट्टु कुत्तु कटुक्कोन्निनियेन्नु
नटिच्चु चेन्नु शरं पोळिच्चारतुनेरं । २०४
तटुत्तु शरङ्ङळाल् मुरिच्चुकळञ्ञवन्
पटुत्वमोटु शर पोळिच्चुतुटङ्ङिनान् । २०५

हूँ। क्या आपने सोचा है कि मुझमे चैतन्य बिलकुल नही है ? मेरा जन्म तो वाहुक[२] के वश मे हुआ है और मेरे भाई वड़े वाहुवीर्य (वलिष्ठ भुजाओ वाले) है। हे वाहुलेय (स्कन्द, कार्तिकेय) के समान मेरे पति ! हे धराधरवाहन (इन्द्र) के पुत्र ! पाण्डुनन्दन ! कुन्तीसुत ! युद्ध के संयोग के अनुसार मै तुरन्त ही उपस्थित हो जाऊँगी। आप अपना शौर्य दिखलाइए। जो मैंने सीखा, वह अव भी जानती हूँ, (मैं) कम नही (हूँ)। और फिर जान लीजिए कि माधव कृष्ण मेरे भाई है।" १९५-२०० मेघनिर्घोष के समान रथो के चलने का नाद सुनकर नगर के रक्षक सब तुरन्त ही निकट आये। (और बोले), "देखे कौन अपना कौशल दिखाना चाहता है ? तुरन्त ही सब हम मिलकर उनके पास पहुँचे; सामने जाकर रोको, और वापस लौटाकर पकड़कर बाँधो, अगर लड़ने लगे तो तुरन्त ही

२ एक वृष्णिवश का वीर, जो वडा ही पराक्रमी था।

विप्रभोजनं वेण मृष्टमायॆन्नु पार्त्थ-
नुल्पलनेत्रयाय सुभद्रयोटु चॊन्नान् । १८८
विप्रभोजनं नल्कि सुभ्रुवा सुभद्रयु
विभ्रमत्तोटे कोप्पिट्टप्पोळ् पुरप्पॆट्टाळ् । १८९
उग्रमा व्रतसमाप्तिक्कु पोकेणमॆति-
न्नुग्रसेनन्टॆ रथ वेणमॆन्नपेक्षिच्चाळ् । १९०
रक्षिकळतुकेट्टु रथवु योजिप्पिच्चु
तल्क्षणे नल्कीटिनार् कन्यकतानुमप्पोळ् १९१
भर्त्तावुतन्टॆ मुन्पिल् निर्त्तिनाळ् महारथ
वस्त्रधान्यौघधनदानवु चॆय्तु नन्नाय् । १९२
तॆळिच्चीटेणं तेरिन्निनिक्कु सुभद्रे ! आ-
नॊळिच्चुकॊण्टुपोयीतॆन्नतुमरुतल्लो । १९३
विळिच्चु परयेणं विपृथु तन्नोटु आन्
कळिच्चु युद्धं चॆय्युन्नतु नी कण्टुकॊळ्क । १९४
माधवि मन्दस्मित चॆय्तु कुन्पिट्टु निन्नु
माधुर्यतरवाचा वासवियोटु चॊन्नाळ् । १९५

से इस प्रकार कहकर भगवान् अन्तर्द्वीप को सिधारे। १८०-१८५ पौरव (अर्जुन) सुभद्रा के साथ सुख से रहे, जैसे कि श्रीरामचन्द्रजी सीता के साथ रहे थे। वाईस दिन बीतने के बाद अर्जुन ने सुभद्रा से कहा, "अब कोई सन्देह नही, जाने के लिए तैयार हो जाओ।" फिर पार्थ ने कमलाक्षी सुभद्रा से निवेदन किया, "ब्राह्मणो को अच्छा भोजन खिलाना चाहिए।" सुन्दर भौहवाली सुभद्रा ने ब्राह्मणो को भोजन दिया। तदनन्तर शोभन वस्त्र धारण करके जाने के लिए तैयार हुई। 'उग्र व्रत की समाप्ति के अवसर पर जाना चाहिए, यह कहकर उग्रसेन के रथ को माँगा। रक्षको ने रथ को सजाकर उसी समय दे दिया। और कन्यका सुभद्रा ने रथ को अपने भर्त्ता के सामने खडा करवाया और वस्त्र, धान्य का ढेर और धन का दान किया। (अर्जुन ने कहा,) "हे सुभद्रे ! मै ही आज रथ को चलाऊँगा ताकि लोग न कहे कि मै तुमको छिपाकर ले गया। और विपृथु को बुलाकर कह देना कि मुझे लीला मे युद्ध करते हुए देख लेना।" १८६-१९४ माधवी[1] ने मुस्कराकर, हाथ जोडकर मीठी आवाज़ मे वासवि (अर्जुन) से कहा, 'जितना हो सके, युद्ध करना, मै सह सकती

१ सुभद्रा पूर्वजन्म मे ऋषि गालव की कन्या माधवी थी।

वासवतनयनु वन्दिच्चु वाङ्ङिक्कोण्टु
वासुदेवन्टे तेरिलाम्मारु करेरिनान् । २१५
पार्त्थविक्रम चॆन्नु तोटवररियिच्चार्
पार्त्तोरु सभापालन् भेरियुमटिप्पिच्चान् । २१६
वन्पिच्च पॆरुन्पर्नादत्तॆक्केट्टनेर
वन्परा वृष्ण्यन्धकभोजन्मारोटिवन्नार् । २१७
माधवनवरेयु परञ्ञु पठिप्पिच्चान्
माधवियोटुंकूटि वासवि तानु पोयान् । २१८
रैवतकवु पुरोद्यानवु कटन्नथ
दिव्यना सव्यसाचि कटन्नान् गिरिव्रज । २१९
उज्जयिनियुमुपवनङ्ङळ् वनङ्ङळुं
निर्ज्जरालय तोल्क्कुमानर्त्तविपयवु । २२०
सज्जनबहुलमा दिक्कुकळ् पलवुं क-
ण्टर्ज्जुनन् धेनुमतियाकिय तीर्त्थ कण्टु । २२१
मज्जनचॆय्तु तत्र पिन्नेयु नटकॊण्टान्
दुर्ज्जनकुलकालन् दुष्कृतमॊक्क नीक्कि । २२२
निर्ज्जरवरसुतन् विज्ज्वरतेजस्सोटु
सज्जमा धनुस्सोटु सत्वरं पोकुन्नेरं २२३
कण्टितङ्ङश्वरोधसरस्सु धनञ्जयन्
विण्टलर्कुलवैरि पुण्टरीकाक्षप्रियन् २२४
अर्बुदमद्रिकळ् कण्टलभुत पूण्टु पार्त्थन्
चॊल्पॊङ्ङु करवतीनदियु कटन्नुपोय् २२५

है।" अर्जुन भी उसे सादर स्वीकार करके वासुदेव के रथ पर बैठ गये। जो हार गये उन्होने दौडकर अर्जुन के पराक्रम को घोषित किया और एक सभापाल ने भेरी पिटवा दी। बडी भेरी का नाद सुनकर वृष्णि, अन्धक और भोजो के नायक दौडकर आये। माधव ने उनको समझाया। तब अर्जुन सुभद्रा के साथ चले गये। २१३-२१८ रैवतक, नगर और उद्यान पार करके सव्यसाचि (अर्जुन) गिरिव्रज के भी आगे चले गये। उज्जयिनी, उपवन, वन, स्वर्ग को भी हरानेवाला आनर्त्त देश, और सज्जनो से भरी विविध दिशाएँ देखकर धेनुमती नामक तीर्थ मे पहुँचे। वहाँ स्नान करके और पापो को दूर करके दुर्जनो के नाशक (अर्जुन) वहाँ से चल दिये। जब देवो के नायक के पुत्र धनञ्जय अपने परिपूर्ण तेज के साथ सज्य

प्रासादध्वजस्तम्भहर्म्म्यगेहङ्ङळ्तोरु
मासारं तुटङ्ङिनान् बाणङ्ङळ्कोण्टु पार्त्थन् । २०६
ओक्कयोन्तिळक्किनान् तल्पुरमतुनेर
पक्षिनायकन् ताक्ष्यनंबुधियेन्नपोले । २०७
रैवतकाद्रिद्वार प्रापिच्चु धनञ्जयन्
देवताज्ञया कूटे देवनायकसुतन् । २०८
विपृथु पृथासुतन्पिऱके चेन्नु वृथा-
निभृतं विपाठङ्ङळवनु प्रयोगिच्चान् । २०९
अस्त्रङ्ङळ् वरूथङ्ङळीषकळ् युगङ्ङळु
कृन्तनं चेय्तान् दृढबन्धनसूत्रङ्ङळुं । २१०
आभरणादिकळुमायुधजालङ्ङळु
कोपेन कळञ्ञितु सव्यसाचियुमप्पोळ् । २११
विधनुष्कन्मारायि विरथन्मारुमायार्
विधियालाशु वीतकवचन्मारुमायार् । २१२
वाङ्ङिच्चु पटयेल्लां विपृथु पिन्नेच्चेन्नु
पाङ्ङाय्निन्नुरचेय्तान् माधवनियोगङ्ङळ् । २१३
तेरितु भगवान्टेताकुन्नतरिञ्ञालु
पाराते भवानु मल्कीटुवानरुळ्चेय्तु । २१४

काटो और घूँसे जमाओ।" —ऐसा कहते हुए सब आगे गये और शरो की वर्षा करने लगे। तब अर्जुन ने अपने शरो से सबको रोका और मारा। (वे) बडे कौशल के साथ शरवर्षा करने लगे। सभी प्रासादो, ध्वजस्तम्भो, महलो और घरो पर पार्थ शरो की वर्षा करने लगे। २०१-२०६ सारे शहर को उन्होने हिला दिया, जैसे पक्षिनायक ताक्ष्र्य (गरुड) ने समुद्र को कँपा दिया था। देवताओ की आज्ञा से इन्द्रपुत्र धनञ्जय रैवतक पर्वत के पास पहुँचे। अर्जुन के पीछे-पीछे जाकर विपृथु ने उनके ऊपर छिपकर शरो का प्रयोग किया। (उसने उनके) अस्त्रो, वरूथो (रथो के रक्षक चादरों), शरो, और बाँधने की दृढ रस्सियो को भी काट डाला। तव सव्यसाचि (अर्जुन) ने आभूषणो, और हथियारो को गुस्से मे फेंक दिया। दोनो धनुष-रहित रथहीन और विधि-वश कवचहीन भी हुए। २०७-२१२ तब विपृथु ने (अपनी) सेना को (अलग) हटा दिया और माधव की आज्ञाओ को यथावसर (पाकर) कहा, "जान लीजिए कि यह रथ भगवान् का है और तुरन्त ही आपको समर्पित करने के लिए कहा

पार्त्थिवन् धर्म्मपुत्नरादियां महाजनं
पार्त्थवृत्तान्तपरमार्त्थङ्ङळरिञ्ञप्पोळ् । २३५
आर्त्तु नालङ्गप्पटयोटु चेन्नेतिरेटु
चीर्त्त कल्याणघोषत्तोटकंकोन्टशेष । २३६
आर्त्ति तीर्न्नानन्दिच्चारग्रजानुजादिकळ्
तीर्त्थयात्रयु कळिञ्ञास्थया धनञ्जयन्
पेर्त्तु तन् गुरुभूतन्मारेयु वणङ्ङिनान् । २३७
माद्रीनन्दनन्मारुं पार्त्थने वणङ्ङिनार् ।
आर्द्रमानसत्तोटु पुल्किनान् किरीटियु । २३८
प्रेममानसयाय पाञ्चालितनिक्कुळ्ळि-
लामयमतु तीर्त्तु बन्धुवर्ग्गङ्ङळोटु २३९
नेत्रमोहनतरगात्रियां सुभद्रये
पेर्त्तुमाश्लेषचेय्तु सुखिच्चु मरुविनान् । २४०

स्त्रीधनं कोटुक्कुवान् श्रीकृष्णादिकळुटे आगमनं

अक्काल वलभद्ररादियां यदुक्कळुं
पुष्करविलोचननाकिय भगवानुं १

किया । कृष्ण-भक्ता कृष्णा (द्रौपदी) ने भी कृष्ण की वहिन (सुभद्रा) के प्रति अत्यन्त प्रेम दिखाया।२२९-२३४ राजा धर्मपुत्र (युधिष्ठिर) आदि गुरुजन अर्जुन के परमार्थ (-पूर्ण) वृत्तान्त को जानकर, हर्षनाद करके, चतुरङ्ग सेना के साथ, उनके स्वागत मे निकले और कल्याण-ध्वनि के साथ उनको (घर) ले आये। उनके बड़े और छोटे भाई पूरी तृप्ति होने तक आनन्दित हुए। अर्जुन ने भी तीर्थयात्रा समाप्त होने पर अपने गुरुजनो की वन्दना की। माद्री के पुत्रो ने अर्जुन को प्रणाम किया। अर्जुन ने भी प्रेम के साथ उनको छाती से लगा लिया। स्नेह करनेवाली द्रौपदी के हृदय का खेद शान्त करके, अपने वन्धुवर्ग के साथ, नेत्रो को मोहित करनेवाले शरीर से युक्त सुभद्रा को, फिर आश्लेप करके अर्जुन सुख से रहे। २३५-२४०

स्त्रीधन देने के लिए श्रीकृष्ण आदि का आगमन

उन दिनो वलभद्र आदि यदुवर्ग और कमललोचन भगवान् श्रीकृष्ण पाण्डवो को स्त्रीधन देने के लिए दिव्य श्री और धन के साथ बड़े हर्ष से

सात्वेयराष्ट्रङ्ङळुं निपधविषयवु
पात्यमां देवपथपुरवु कटन्नुपोय् २२६
चेन्नितु देवारण्यतङ्कलेन्नरिञ्ञालु
वन्नु सत्क्कारचेय्तार् मामुनिजनङ्ङळु । २२७
कौरवविषय प्रापिच्चितु धनञ्जयन्
पौरन्मार-रिञ्ञतिल्लद्दिनमोरुवरु । २२८
पुरत्तिल् क्रोशमात्रमट्टुत्तुण्टोरु गोष्ठ
मुरश्रेष्ठात्मजनुमविटे विश्रमिच्चान् । २२९
बालिकाकुलमौलिमालिके ! सुभद्रे ! गो-
पालिकवेष पूण्टु नीयिनि राज्य पुक्कु २३०
वन्दिक्क कुन्तियेयु पाञ्चालपुत्रियेयु
सुन्दरगात्रि ! परीक्षार्थमामोदपूर्व्वं । २३१
गोपालनारियुटे वेष पूण्टवळप्पोळ्
गोपालनारिमारुमायक पुक्कनेरं । २३२
कुन्तियच्चेन्नुकण्टु वन्दिच्चाळवळेटं
सन्तोषं पूण्टु पूण्टु गाढाश्लेषवु चेय्ताळ् । २३३
कृष्णनिल् भक्तिपूण्ट कृष्णयुमतुपोले
कृष्णसोदरितन्निलेवयु प्रेमं पूण्टाळ् । २३४

धनुष लिये हुए जल्दी-जल्दी जा रहे थे, तब असुरो के शत्रु और कृष्ण के प्रिय (उन अर्जुन) ने अश्वरोध नामक सर देखा। असख्य पर्वतो को देखकर अर्जुन आश्चर्य-चकित हुए। फिर विख्यात करवती नदी को पार करके, तदनन्तर साल्वेयराष्ट्र और निपध देश और रमणीय देवपथपुर को भी छोड़कर आगे गये, और जान लीजिए कि देवारण्य पहुँचे। वहाँ पर महामुनि लोगो ने आकर उनका सत्कार किया। तदनन्तर अर्जुन कौरवो के देश मे पहुँचे, पर उस दिन नागरिको को इसका पता न चला। २१९-२२८ नगर से एक कोस की दूरी पर एक गोष्ठ था, जहाँ देवो के पति (इन्द्र) के पुत्र (अर्जुन) ने विश्राम किया। (अर्जुन ने कहा,) "हे बालिकाकुल की शिरोमालिके ! सुभद्रे ! तुम गोपालिका का वेष धारण करके नगर मे प्रवेश करो और कुन्ती तथा पाञ्चालपुत्री (द्रौपदी) की, हे सुन्दरगात्रि ! सादर वदना करो, देखे क्या होता है ?" तव गोपियो का वेप धारण करके सुभद्रा ने नगर मे प्रवेश किया। फिर कुन्ती का दर्शन करके उनकी वहुत वन्दना की और वड़े हर्ष के साथ उनका प्रगाढ़ आलिङ्गन

चॊल्लॆळुमजातशत्रुक्षितिपतिवीर-
नॆल्लामे परिग्रहिच्चवरॆस्सम्मानिच्चान् । १३
पानभोजनकळभादिभोगङ्ङळ्कॊण्टु-
मानन्दिच्चेळुदिन कल्याणघोपत्तोटुं । १४
कळिञ्ञोरनन्तर रामादि यदुक्कळु-
मळिञ्ञु परञ्ञुटन् पोवानायुपुरप्पॆट्टार् । १५
परिरंभणं चॆय्तु भगिनितन्ने रामन्
भरिच्चुकॊळ् नीयॆन्नु पाञ्चालियोटु चॊल्लि । १६
तॊळिञ्ञु पितृष्वसाविनॆयु वणङ्ङिप्पोय्-
विळङ्ङु द्वारवतिपुक्कितु पटयोटे । १७
उत्पलविलोचनन् चिल्पुमान् नारायणन्
मुप्पत्तुनालुदिन फल्गुननोटुं कूटि । १८
शक्रप्रस्थत्तिङ्कल् वाणरुळि सुखत्तोटे
शक्रनन्दनन्तानुमतिनालानन्दिच्चान् । १९
अभिमन्युविनॆयु पॆटितु सुभद्रयु
द्रुपदपुत्रितानुमञ्चु मक्कळॆप्पॆटाळ् । २०
धर्म्मजात्मजन् प्रतिविन्ध्यनॆन्नरिञ्ञालु
धर्म्मात्मा भीमात्मजनायतु सुतसोमन् २१
मघवत्पुत्रात्मजन् कृतवर्म्मावुतानुं
नकुलतनयनाकुन्नतु शतानीकन् २२

वस्त्र और कम्बल, सबका आश्चर्य बढानेवाले सोने के बर्तन, धन और रत्नों के बडे ढेर—ये सभी पदार्थ दिये। ६-१२ विख्यात राजा अजातशत्रु (युधिष्ठिर) ने सादर स्वीकार करके दाताओ का सम्मान किया। पान, भोजन, आठो प्रकार के सुगन्धि द्रव्य और अन्य भोगो से आनन्द लेते हुए सात दिन बडे धूमधाम से बिताने के बाद बलराम आदि यदुवर्ग कुछ शिथिल हुए और विदा होने के तैयार हुए। बलराम ने अपनी बहिन को छाती से लगाकर, द्रौपदी से 'सब ठीक से चलाओ' ऐसा कहकर, प्रसन्नता के साथ अपनी फूफीजी की वन्दना करके अपनी सेना के साथ चमकती हुई द्वारवती मे प्रवेश किया। १३-१७ कमलाक्ष, चित्पुमान् श्रीकृष्ण तो चौतीस दिन अर्जुन के साथ इन्द्रप्रस्थ मे सुख से विराजे, जिससे अर्जुन अत्यन्त प्रसन्न हुए। सुभद्रा ने अभिमन्यु को जन्म दिया और द्रौपदी ने पाँच पुत्रो को जनाया। जान लीजिए कि युधिष्ठिर का पुत्र था प्रतिविन्ध्य,

स्त्रीधनं कोट्टुप्पानाय् पाण्डवन्मारक्कु दिव्य-
श्रीधनादिकळोट्टु वन्नितु सन्तोषत्ताल् । २
वेर्पिट्टुपोय जीवन् पिन्नेयु वन्नपोले ।
पारिच्च मोदंपूण्टु वेगत्तोटेतिरेटान् ३
अन्तिके काणाय्वन्नारन्तरात्मानं नित्यं
बन्धुवां कृष्णन्तन्ने च्चिन्तिच्चवण्णंतन्ने । ४
सन्तापमकन्नुळ्ळिल् सन्तोपं वायक्कुवण्ण
सन्ततानन्दं पूण्टु कुन्तीनन्दनन्मारुं । ५
सहस्रं रथङ्ङळु सहस्र गजङ्ङळुं
सहस्रं शिविककळ् सहस्रं दासिकळु ६
प्रीत्या नल्कियशेषं पिन्नेयु कोट्टुत्तितु
जात्याश्वरथिकळुं नूटिरुपत्तञ्चल्लो । ७
नियुतं शीलगुणमेरिय पशुक्कळुं
प्रयुतं नरन्माराल् चुमन्निट्टुळ्ळ पोन्नु ८
उत्तमतरमाय भूषणं नूरुभार
मुत्तुमालकळनर्घङ्ङळायव नूरुं ९
पविळमालकळुमायिरमतुपोले
सुवर्ण्णपादपीठङ्ङळुमास्तरणङ्ङळ् १०
दिव्यङ्ङळायिट्टुळ्ळ वस्त्रकंबळङ्ङळु
सर्व्वविस्मयकरं काञ्चनपात्रङ्ङळु ११
रामकृष्णन्मार् महाधनरत्नौघङ्ङळु
सोमवंशोल्भूतना भूमिपालनु नल्कि । १२

पधारे, मानो अलग किया हुआ प्राण फिर चला आया हो। तुरन्त ही अर्जुन बड़े प्रमोद से उनका स्वागत करने उठे। तव निकट ही मे सदैव सबके अन्तरात्मा, बन्धु श्रीकृष्ण दिखायी दिये। कुन्ती के पुत्र दुःख छोडकर और अपना हर्ष बढाते हुए, निरन्तर आनन्द अनुभव करने लगे। १-५ एक हजार रथ, एक हजार हाथी, एक हजार शय्याएँ और एक हजार दासियाँ बड़ी प्रीति के साथ देने के वाद उच्च जाति के एक सौ पच्चीस घोड़े और सारथि दिये गये। बलराम और श्रीकृष्ण ने चन्द्रवंश के राजा को शील और गुणवाली एक लाख गायें, दस लाख आदमियो से ढोया हुआ सुवर्ण, सर्वोत्तम आभूषणो के सौ बोझ, एक सौ बहुमूल्य मोती के हार, एक हजार मूँगे के हार और सोने के पादपीठ, अनेक आस्तरण, (बिछौने) दिव्य

ऍङ्किल् ञानग्नियल्लो खाण्डव वनमॊक्क-
त्तिङ्कयिलपेक्षयुण्टॆन्नतुमग्रियेण । ८
तक्षकनिरिक्कुन्न काननमाककॊण्टु
रक्षिच्चीटुन्नु शक्रन् सख्यमन्योन्य तम्मिल् । ९
दहिप्पान् तुटङ्ङुन्पोळ् वर्षिप्पिक्किलुमिन्द्रन्
महत्वमुळ्ळ निङ्ङळतिनॆत्तटुक्केणं । १०
हव्यवाहननाकुमिनिक्किल्लावतेतु
दिव्यास्त्रज्ञन्मार् निङ्ङळॆन्नु ञान् केळ्प्पु पण्टे । ११
सव्यसाचियुमतु केट्टवनोटु चॊन्नान्
दिव्यास्त्रङ्ङळिल् चिलतरिञ्ञिजट्टिल्लॆन्निल्ल । १२
इल्लल्लो तेरु विल्लुमावनाळिकयतुं
नल्ल वाजिकळुमिल्लॆङ्ङनॆ तटुप्पू ञान् । १३
ऍन्नॆल्लां धनञ्जयन् चॊन्नतु केट्टनेर
निन्नॊरु धनञ्जयन् ध्यानिच्चु वरुणनॆ । १४
वन्नितु वरुणनुमवनोटग्नि चॊन्ना-
निन्नॊरु कार्यं चिन्तिच्चोर्त्तितु भवानॆ ञान् । १५
कपिलक्षणद्ध्वजरथवुं मनोवायु-
जवङ्ङळाय सिततुरगवरङ्ङळु १६
शरङ्ङळॊटुङ्ङातॊरावनाळिकयतु
परन्मारॊटुङ्ङीटुमायुधजालङ्ङळुं १७

खा सकते है उतना तैयार कराएँगे, इसलिए बतलाइये कितना चाहिये' ऐसा पाण्डवों ने कहा। (तब) ब्राह्मण ने उत्तर दिया, 'मैं तो अग्नि हूँ। इसलिए जान लीजिये कि मै सारा खाण्डव वन खाना चाहता हूँ। तक्षक का निवास-स्थान होने के कारण इन्द्र उसकी रक्षा कर रहा है। उनका आपस मे सख्य है। मै जब जलाना प्रारभ करूँगा तब हो सकता है कि इन्द्र वर्षा शुरू करे। आप बडे है। आपको उसे रोकना पड़ेगा। मै केवल हव्यवाहन हूँ, मेरे पास कुछ (कोई शस्त्र) नही है और मैने पहले ही सुन रखा है कि आप दिव्यास्त्र जानते हैं।' यह सुनकर अर्जुन ने उनसे कहा— 'हाँ, दिव्यास्त्रो में एक आध जानता ही हूँ। ७-१२ परतु न मेरे पास रथ है, न शर, न तूणीर, अच्छे घोडे भी नहीं। रोकूँ कैसे ?' अर्जुन की यह बात सुनकर धनञ्जय (अग्नि) ने वरुण का ध्यान किया। वरुण तत्क्षण ही आ गये। तब अग्नि ने कहा। 'एक काम है। इसलिए आपको

सहदेवन्टे पुत्रन् श्रुतसेननुमल्लो ।
एकवत्सरं वयस्सन्तरमुण्टु तम्मि-
लेकिनानाभीष्टदानङ्ङळु युधिष्ठिरन् । २३

खाण्डवदाहं

सुभद्राविवाहवु कळिञ्ञु धनञ्जयन्
निबद्धानन्दं सुखिच्चिरुन्नीटिनकालं १
उळ्ळकमलत्तिलुवाळु माधवनोटुकूटि
निर्गमिच्चितु वनक्रीडय्क्कु वनन्तोरुं । २
आळिकळोटु चेर्न्नु भार्यमारोटु कूटि-
क्काळिन्दीतीरत्तिङ्कल् कळिपूण्टिरिक्कुन्नाळ् ३
कृष्णवस्त्रवुं धरिच्चैत्रयुं तेजस्सोटु
कृष्णन्मारोटु परञ्ञीटिनानोरु विप्रन् । ४
ब्राह्मणश्रेष्ठन् बहुभोक्तावेन्नरिकेन्ने-
द्धार्म्मिकन्मारे ! निङ्ङळोन्नुण्टु वेण्टतिप्पोळ् । ५
ओरुनाळुमे तृप्तिवरुमारिल्ल मम
तरुविन् तृप्तिवरुवोळवुमन्नं निङ्ङळ् । ६
अत्र चोरुण्णामेन्नालत्र चोरुण्टाक्कीटा-
मेत्रयुण्टपेक्षयेन्नवरुं चोद्यं चेय्तार् । ७

भीमसेन का पुत्र हुआ धर्मात्मा सुतसोम, अर्जुन के पुत्र का नाम था कृतवर्मा, नकुल का शतानीक नामक पुत्र हुआ और अन्त मे सहदेव का पुत्र श्रुतसेन हुआ। उन पाँचो में एक-एक वर्ष का अन्तर है। उनके जन्म के उपलक्ष मे युधिष्ठिर ने यथेष्ट दान दिया। १८-२३

खाण्डव का दाह

सुभद्रा के विवाह के बाद अर्जुन जब बडे आनन्द से रह रहे थे तब एक दिन वे अपने हृदयकमल मे विराजमान माधव के साथ वन-वन मे क्रीड़ा करने निकले। जब सखियो से युक्त अपनी पत्नियो के साथ यमुना के के तट पर विहारकर रहे थे तब काले कपड़े पहने हुए एक तेजस्वी ब्राह्मण ने श्रीकृष्ण और अर्जुन से इस प्रकार कहा। "जान लीजिये कि मै एक ब्राह्मणश्रेष्ठ हूँ और खाता बहुत हूँ। हे धार्मिक ! मै चाहता हूँ कि आप एक काम करे। खाते-खाते मुझे किसी भी दिन तृप्ति नही होती है। आप तृप्ति हो जाने तक मुझे भोजन खिलाइये।" १-६ 'जितना भात आप

पन्नग पक्षि मृगजालङ्ङळ् दहिच्चोक्क-
स्सन्नङ्ङळाकुन्नेरमुण्टाय विलापवुं २७
पक्षिकळ् पऱन्नन्तरीक्षे पोङ्ङीटुन्नेरं
पक्षङ्ङळ् करिञ्ञु वेन्तग्गिनियिल् पतिक्कयु २८
वृक्षङ्ङळ् वेन्तु पोट्टियलरिवीळुन्नतु-
मृक्षङ्ङळच्चाटिच्चाटिप्पिटञ्ञु केळुन्नतु २९
ओट्टोळियाते केट्टु रुष्टनाय् शतक्रतु
पुष्टमेघङ्ङळोटु निष्ठुरनादत्तोटुं ३०
दृष्टिकळ् चुवप्पिच्चु देववाहिनियोटुं
नष्टमाक्कुवनग्गितन्ने ञान् कण्टुकोळ्विन् । ३१
नन्दननेन्नाकिलु सोदरनेन्नाकिलु
निन्दिच्चालोटुक्कुवनिल्ल संशयमेतु । ३२
इत्तरं पऱञ्ञु तन् मत्तेभन्कळुत्तेरि-
स्सत्वर वज्रमोङ्ङि क्रुद्धना वृत्राराति ३३
केल्पोटु पुऱप्पेट्टु सेनानायकनोटुं
कल्पान्तवरिषवुं तुटङ्ङियतुनेर । ३४
निष्ठुरतरमिटिवेट्टियु त्रिभुवनं
ञेट्टियु मर वेन्तु पोट्टियु तेरुतेरे । ३५
दृष्टिकळ् मिन्नल्कोण्टु नष्टमाय् चमकयुं
वृष्टिकळ् करिकराकारमाय् चोरिकयुं ३६

उड़ते हुए पक्षियो के पक्ष जल जाने से उनकी अग्नि मे गिरने की ध्वनि को, वृक्षो के जलकर और फूटकर गिरने के शब्द को, भालुओ के कूद-कूद कर गिरने और तडपने की आवाज को इन्द्र ने सुना और वे रुष्ट हुए। (और बोले) 'क्रोध से लाल आँखोवाला मै, जल भरे मेघो, भयङ्कर नादो, और आकाशगङ्गा के द्वारा, इस अग्नि को नष्ट कर दूंगा, देख लीजिये। २५-३१ चाहे पुत्र हो, चाहे भाई हो, जो मेरी निन्दा करेगा उसे मै समाप्त कर दूंगा, इसमे कोई सन्देह नही।' इस प्रकार कहकर, अपने मत्त हाथी के कन्धे पर चढकर क्रुद्ध वृत्राराति (इन्द्र) ने अपना वज्र उठाया और अपने सेनापति के साथ जल्दी से चल पड़े; और कल्प के अन्त की सी वर्षा प्रारभ कर दी। निठुर-स्तनित (घनगर्जन) फूटे, त्रिभुवन चकित हुआ, वृक्ष जलकर फूटे, निरन्तर विजली के कारण आँखे नष्ट हुई, मूसलाधार वर्षा हुई, वात के तीव्र वेग से सभी दिशाएँ उलट गयी, और समुद्र

गाण्डीवमाय धनूरत्नवुं कौटुक्केणं
पाण्डवनाय धनञ्जयनु मटियातें । १८
ऒंङ्किलो नल्कामॆन्नु चॊल्लिनान् वरुणनुं
पङ्कजनेत्राज्ञया वाङ्ङिनान् किरीटियु । १९
रथत्ते प्रदक्षिणं चॆय्तु कुन्पिट्टु कूप्पि-
स्तुतिच्चु गुरुविनॆ स्मरिच्चु वळिपोलॆ । २०
देवतमारॆयॊक्क वॆव्वेरॆ वणङ्ङीट्टु
देवराजात्मजनुं तेरतिल् करेरिनान् । २१
बद्धगोधाङ्गुलित्रयुक्तनाय् खड्गियाय् स-
न्नद्धनाय् कवचियाय् ब्रह्मनिर्म्मितमाय २२
गाण्डीवं धनुस्सुमाय् शोभिच्चानतुनेरं
पाण्डुनन्दननाय कौन्तेयनिन्द्रपुत्रन् । २३
ऒंङ्किलो दहिच्चालु खाण्डवारण्यमॆन्नान्
पङ्कजनेत्रनोटु कूटवे किरीटियुं । २४
पिटिच्चु दहननुं दहिच्चुतुटङ्ङिनान्
पिटच्चिल् तुटङ्ङिनार् दुष्टजन्तुक्कळॆल्लां । २५
पाण्डवकरगतगाण्डीवविलासवु
खाण्डवारण्यगतपावकविलासवु २६

याद किया । आप पाण्डव अर्जुन को कपिध्वजवाला रथ, मन और वायु के समान वेगवाले सफेद घोड़े, शर समाप्त न होनेवाला तूणीर, शत्रुओ को नाश करनेवाले हथियार, गाण्डीव नाम धनुष, यह सब विना विलम्ब के दे दीजिए ।' १३-१८ वरुण ने देने की प्रतिज्ञा की और श्रीकृष्ण की आज्ञा से अर्जुन ने स्वीकार भी किया । फिर रथ की प्रदक्षिणा करके, नमस्कार करके हाथ जोड़कर अपने गुरु का स्मरण किया और उनकी स्तुति की । देवो को अलग-अलग नमस्कार करने के बाद इन्द्र के पुत्र (अर्जुन) रथ पर चढे । उस समय पाण्डुनन्दन, कौन्तेय और इन्द्रपुत्र अर्जुन गोह की खाल से बने हुए अङ्गुलित्र (अगुलियो के कवच) पहने हुए, खड्ग और कवच धारण करके तैयार हुए तथा ब्रह्मा द्वारा बनाये हुए गाण्डीव धनुष के साथ शोभायमान हुए । तब किरीटी और कमलाक्ष, दोनो ने कहा—'अच्छा, तो खाण्डव वन को जलाइये ।' १९-२४ तब अग्नि सारे वन को जलाने लगा और सभी दुष्ट मृग तड़पने लगे । अर्जुन के हाथ मे विद्यमान गाण्डीव के विलास को, खाण्डव वन को जलानेवाले अग्नि के विलास को, साप, पक्षि, हिरण आदि मृगवर्ग के जलकर गिरने के समय के विलाप को, अन्तरिक्ष मे

तक्षकन् कुरुक्षेत्रं पुक्किकत्तेन्नरिक नी
सख्यत्तिन्नेतुमोरु विघ्नवु वन्नीलल्लो । ४७
कृष्णपाण्डवन्मारेज्जयिप्पानरुतावर्कु
कृष्णपादाब्जङ्डळिल् वन्दिच्चुकोळ्क नल्लू । ४८
नरनारायणन्मारोटभिमानिप्पाने-
न्तोरु कारणमतुमैश्वर्यमदमल्लो । ४९
अेन्नतु केट्टु वाङ्ङिङप्पोन्नितु महेन्द्रनुं
वह्नियु पिन्ने नन्नाय् दहिच्चुतुटङ्ङिङनान् । ५०
वारण व्याघ्र हरि मूकर सर्प्पादिया-
मारण्यजन्तुवर्गमारणकारणमा ५१
दारुणवह्निज्वालामालकळ् कत्तिप्पोङ्ङिङ-
ग्शोभिच्चु भुवनवु फल्गुनकृष्णन्मारुं । ५२
क्षोभिच्चु समुद्रद्वीपाद्रिवृन्दवुमेल्लां
तक्षकालयत्तिङ्कलिरुन्न मयासुरन्
तल्क्षणे पुरप्पेट्टु मण्डिनान् भयत्तोटे । ५३
भक्षणमिनिक्किदिन्नयय्क्कुन्निल्लेन्नाशु-
शुक्षणितानुमाशु चेन्नितु वुभुक्षया । ५४
कृष्णवर्त्मावु शीघ्र पिन्नाले चेल्लुन्नेरं
कृष्णन् तृच्चक्रवुमायटुत्तानतु पारं ५५

(आकाशवाणी) सुनाई दी—'हे देवो के नाथ ! अच्छा यही होगा कि आप अपनी पराजय मान ले । तक्षक तो कुरुक्षेत्र मे प्रवेश कर चुका है और अव सख्य करने मे कोई विघ्न नही है । कृष्ण और पाण्डवो को कोई भी हरा नही सकता है और अच्छा यही होगा कि आप श्रीकृष्ण के पादपद्मो की वन्दना करे । नर और नारायण के साथ अभिमान क्यो करते है ? यह तो आपका ऐश्वर्य मद है ।" यह सुनकर महेन्द्र पीछे हट गये और अग्नि-देव अच्छी तरह से जलने लगे । हाथी, वाघ, सिंह, सूकर, साँप आदि जगल के प्राणियो के जलाने के कारण भीषण वह्नि की ज्वालाएँ उठी और कृष्ण एवं अर्जुन के साथ सारा भुवन शोभायमान हुआ । ४६-५२ समुद्र, द्वीप और पर्वतवृन्द क्षुब्ध हुए । मयासुर जो तक्षकालय मे था, उसी क्षण वहाँ से निकला और वहुत डर गया । यह सोचकर कि यह मेरा भोजन है अग्नि खाने की इच्छा से उसके पास गया । जव कृष्णवर्त्मा (अग्नि) उसके पीछे-पीछे जा रहा था तव कृष्ण अपना चक्र लिये उसके निकट पहुँचे ।

घोरमारुतवेगालोरोरो दिक्कुकळु
वारिधिपूरङ्ङळुमिळकिमऱियुन्नु । ३७
अभ्रसञ्चय परन्नभ्रवु मऱयुन्नु
विभ्रमपूण्टु जगद्वासिकळ् मरुकुन्नु । ३८
श्वभ्रकीलङ्ङळेटु सर्प्पङ्ङळुरुकुन्नु
श्वभ्रङ्ङळ् तोरुमुण्णमुळ्प्पुक्कु पिटयुन्नु । ३९
गन्धवाहननग्नितनिक्कु देवेन्द्रनु
बन्धुवाय्निन्नान् विदग्धन्मारङ्ङनेयुळ्ळु । ४०
पेय्तोरु मळ कण्टनेरत्तु शरकूटं
चेय्तोरु जिष्णुतन्टे चैतन्यमेन्ते चोल्लू । ४१
कैतवमूर्त्ति कृष्णन् तन्नुटे वैभवत्ताल्
कै तळर्न्नितु काळमेघङ्ङळ्क्केल्लामप्पोळ् । ४२
प्रथन पृथात्मजनोटु चेय्तमरेन्द्रन्
पृतन तोटु वृथाफलमाय् चमञ्ञप्पोळ् । ४३
कृष्णसारथियाय जिष्णु दिव्यास्त्रङ्ङळाल्
जिष्णुतन् मदमटक्कीटिनानतुनेरं । ४४
जिष्णुताननुवदिच्चीटिनान् धनञ्जयन्
जिष्णुवेन्नग्निभवादिकळ् तोटतुमूल । ४५
अन्नेरमशरीरिवाणियुमुण्टाय्वन्नु ।
विण्णवर्कोने ! नी पोयटङ्ङिक्कोळ्क नल्लू ४६

की लहरे ऊँची-ऊँची उठकर गिरने लगी। मेघो के समूह सारे आकाश मे फैले और जगत् के सभी निवासी घवड़ाए। ३२-३८ अपने बिलो मे ज्वाला लगने से साप पिघले, क्योकि एक-एक बिल मे आग घुस गयी। गन्धवाहन (वायु) तो अग्नि और इन्द्र दोनो का मित्र वनकर रहा। चतुर लोग तो ऐसा ही करते है। घोर वर्षा को देखकर जिस जिष्णु (अर्जुन) ने पानी रोकने के लिए शरो का भवन बनाया उसके चैतन्य का कैसे वर्णन करूँ। कैतवमूर्त्ति (छली) श्रीकृष्ण के वैभव के कारण उस समय काले-काले मेघो के, पानी वरसाते-बरसाते हाथ थक गये। पृथा (कुन्ती) के पुत्र (अर्जुन) के साथ युद्ध करनेवाली इन्द्र की सेना हारी और इन्द्र सफल नही हुए। जिनके श्रीकृष्ण सारथि थे, ऐसे अर्जुन ने अपने दिव्यास्त्रो के द्वारा इन्द्र के मद को नष्ट किया। हार जाने के कारण इन्द्र ने अर्जुन की जीत मान ली। ३९-४५ उसी समय एक अशरीरी वाक्

मन्दपालोपाख्यान

धर्म्मज्ञन्मारिल् मुख्यनाकिय तपोनिधि
निर्म्मलन् मन्दपालनाकिय महामुनि । १
ब्रह्मचर्यवुं दीक्षिच्चिरुन्नु चिरकालं
ब्रह्मज्ञानवु पूण्टु पितृलोकवु पुक्कान् । २
अक्काल सुखलेश सिद्धियाञ्ञतु कण्टु
दु.खिच्चु मन्दपालन् देवकळोटु चोन्नान् । ३
अन्तरं तपस्सिनु ञानेतु वरुत्तीति-
ल्लेन्तोरु कर्म्मिनिक्किङ्ङने वन्नतोर्त्ताल् । ४
देवकळ् विचारिच्चु चोल्लिनारतु केट्टु
तावकमाय दु खकारण केट्टालुं नी ५
मून्नृणत्तोटुकूटि मानवन् जनिक्कुन्नु
मून्नु वीट्टीटुन्नवनूर्द्ध्वलोकङ्ङळुण्टा । ६
ब्रह्मचर्य्यत्तेक्कोण्टु नित्ययज्ञत्तेक्कोण्टु
निर्म्मलप्रजकोण्टु वीट्टेणमवमून्नु । ७
ऒन्नतिल् पुत्रोत्पत्ति चेय्तील भवान् मुन्न-
मेन्नतु विरोधमाकुन्नतु गतिक्किप्पोळ् । ८
ऎङ्किल् ञान् भूमितन्निल् चेन्निनि प्रजकळे-
स्सङ्कटं तीर्त्तीटुवानुल्पादिक्कुन्नेन् द्रुत । ९

मन्दपाल का उपाख्यान

धर्मज्ञो मे प्रमुख और तपोनिधि निर्मल महामुनि मन्दपाल चिरकाल तक ब्रह्मचर्य का पालन करते रहे और अन्त मे ब्रह्मज्ञान प्राप्त करके पितृलोक सिधारे। उस समय भी सुखलेश न प्राप्त होने के कारण दु खित मन्दपाल ने देवो से कहा—"मेरे तप मे कोई भी अन्तर नही हुआ, फिर मैने क्या पाप किया था कि अब यह हाल हो गया ?" यह सुनकर देवो ने सोचकर कहा—"अपने दु ख का कारण सुन लो। तीन ऋणो को लेकर मनुष्य जन्म लेता है, जो उन तीनो को चुका देता है वही ऊँची गति प्राप्त करता है। १-६ ब्रह्मचर्य का पालन, सदैव यज्ञो का अनुष्ठान और निर्मल प्रजा का जनन, ये ही उनको चुकाने के उपाय है। इनमे से आपने पुत्रोत्पत्ति नही की, यही आपकी अच्छी गति मे वाधा बन गयी।" (मन्दपाल ने सोचा—)"अच्छा तो फिर मै जल्दी पृथिवी जाऊँगा और अपना दु'ख दूर करने के लिए सन्तान पैदा करूँगा।" "अल्प समय मे अधिक सन्तान

रक्षणत्तिन्नारेयु काणाञ्ञु मयासुर-
नक्षीणभयं पूण्टु शरणं पुक्कीटिनान् । ५६
हाहा ! पाण्डव ! पार्त्थ ! हाहा ! फल्गुन ! जिष्णो !
पाहि मा भवानहो ! पाहि मा भवानहो ! ५७
पार्त्थनुमार्त्तनाद केट्टपोतुरचेय्ता-
नास्थया पेटिक्केण्ट नीयेन्नतुटनुटन् । ५८
नमुचिभ्रातावाकुं मयना दनुजेन्द्र-
न्नमरप्रौढात्मजनभय नल्कीटिनान् । ५९
वह्नियु दहिप्पतिन्निच्छिच्चीलतुनेरं
पिन्नेयुमञ्चुजनमुण्टल्लो दहियाते । ६०
अश्वसेननु पिन्ने नालु शार्ङ्गकङ्ङळु
निश्शेष दहिच्चितु खाण्डव मट्टल्लामे । ६१
मुनिनायकनाय वैशन्पायननोटु
जनमेजयनृपन्नेर चोद्य चेय्तान् । ६२
शार्ङ्गपक्षिकळ् नालुं कानन दहिच्चप्पोळ्
वाङ्ङिड्प्पोयतिनेन्तु कारण दहियाते ? ६३
ऒन्नतु केट्टु मुनि वैशन्पायनन् चॊन्नान्
मन्नव ! शार्ङ्गङ्ङळ् वेकाञ्ञतिन्मूल चॊल्ला । ६४

अपनी रक्षा करनेवाले किसी को न देखकर मयासुर बहुत भयभीत होकर अर्जुन की शरण मे गया । 'हा हा ! हे पाण्डव ! हे पार्त्थ ! हा हा ! हे फल्गुन ! हे जिष्णु ! आप मुझे बचाइये ! आप मुझे बचाइये !' यह आर्त्त-नाद (पीडित की पुकार) सुनकर अर्जुन सहानुभूति से तत्क्षण ही बोले—'डरो मत,' 'डरो मत' । ५३-५८ नमुचि के भाई दनुजेन्द्र मय को देवो के नाथ के पुत्र ने अभय प्रदान किया । अग्नि को भी जलाने की इच्छा न हुई । पॉच और व्यक्ति इस प्रकार जलने से बचे । अश्वसेन और चार शाड्र्गक—इनको छोड़कर सारा खाण्डव वन जल गया । उस समय राजा जनमेजय ने मुनियो के नायक वैशम्पायन से पूछा—'जब सारा वन जल गया तो क्या कारण है कि ये चार शाड्र्ग पक्षी बच गये ?' 'हे भूपाल !

निर्घृणनाय पिताविवटेयुपेक्षिच्चान्
दु.खिक्कुमाऽायि ञान् पैतङ्ङळिवरोटु । २०
पऽक्कप्पोकातेयु वन्नितु बालन्मावर्कु
निरक्कप्पिटिपेट्टु वनत्तिलग्नितानु । २१
ञानिनियिवटेयेन्तोर्त्तेन् तन्पुराने !
काननत्तिङ्कलग्नि पिटिच्चु नालुपाटु । २२
इङ्ङने करयुन्पोळ् पैतङ्ङळुरचेय्ता-
रेङ्ङानुं पोय्क्कोळ्कम्मे नीकूटे मरिक्केण्टा । २३
ञङ्ङळ् चाकिलो पिन्नेप्पेटु सन्ततियुण्टा-
मेङ्ङनेयुण्टाकुन्नु नीकूटे मरिक्किलो ? २४
ञङ्ङळे स्नेहिच्चु नी सन्तान मुटिक्केण्टा
मंगल वन्नुकूटु पिन्नेयुमेन्नेवरू । २५
अल्लाय्किल् तातन् चेय्ततोक्क निष्फलमल्लो
नल्ल लोकङ्ङळ् किट्टा तातनेन्नतु वरु । २६
अन्नतु केट्टु पऽञ्ञीटिनाळ् जरितयु-
मेन्नुटे पैतङ्ङळे ! निङ्ङळुमोन्नुवेणं २७
इक्कण्ट मरत्तिन्कीळुण्टेलिमटयतिल्
पुक्कुकोळ्ळुविन् निङ्ङळेन्नाल् ञानोन्नुचेय्वन् २८
पूळिकोण्टतिन्मुखं मूटिवय्क्कयु चेय्या-
मूळितन् ताळे तीयुं तट्टुकयिल्लयल्लो । २९

है । १४-२० ये मेरे बच्चे उड़कर भी नही चले जा सकते है क्योकि अ
तो सारे वन मे व्याप्त है । हे प्रभो ! अब मैं इनके लिए क्या करूं
अग्नि तो वन मे चारो तरफ फैल गया । जब वह इस प्रकार रो रही
तब बच्चो ने कहा—"माँ ! तुम कही चली जाओ । नही तो तुम भी
जाओगी । अगर हम लोग मरेगे तो तुम फिर बच्चो को जन्म दे
सन्तान उत्पन्न कर सकोगी । अगर तुम ही मर जाओगी तो फिर सन्
कैसे होगा ? हम लोगो से प्रेम करके सन्तान का विच्छेद न क
(अगर तुम भाग जाओगी) तो बाद में फिर मगल हो जायगा । नही
जो कुछ भी पिता ने किया था वह सब व्यर्थ हो जायगा और वह
कोई अच्छा लोक प्राप्त नही करेगे ।" २१-२६ यह सुनकर जरित
कहा—'मेरे बच्चो ! तुम्हें एक काम करना है । इस पेड़ के नीचे एक
का बिल है, तुम सब उसके अन्दर चले जाओ । तब मै एक काम करूँ

कुरुन्नकालंकोण्टु वळरे प्रजकळे-
प्पेरुन्न जन्तुक्कळेतेन्नतु निनच्चवन् १०
पक्षिवर्ग्गत्तिल् शार्ङ्गमाय् जनिच्चात्मज्ञान-
मुळ्ळकान्पिलुरप्पिच्चु पितृक्कळ्कट तीर्प्पान् । ११
जरितयेन्नु पेरा पत्नितन्नोटु कूटि-
प्पेरिकेस्सुखपूण्टु खाण्डवंतन्निल् वाणान् । १२
नालु पुत्रन्मारेयु जनिप्पिच्चतुकालं
बालन्मारेयुमवळ्तन्नेयुमुपेक्षिच्चान् । १३
लपितयोटु कूटि वसिच्चु मन्दपालन्
विपिने बालन्मारेब्भरिच्चु जरितयु । १४
पावकनतुकाल खाण्डव दहिप्पानाय्
पोवतु कण्टु मन्दपालनुमरुळ्चेय्तु । १५
देवकळ्क्केल्ला मुखमाकुन्न भगवाने !
पावकदेव ! भवानोन्नु चेय्येणमिप्पोळ् । १६
अेन्नुटे सुतन्मारेद्दहियातिरिक्केणं
निन्नुटे कारुण्यत्तालेन्नतु केट्टनेर । १७
अङ्ङनेतन्नेयेन्नु पावकनुरचेय्तु
मङ्डात कान्तियोटे नटन्नु दहननुं । १८
अरण्य तन्निल् पिटिपेट्टितु वह्निदेवन्
करञ्ञु तुटङ्ङिनाळ् जरिततानुमप्पोळ् । १९

पैदा करनेवाले प्राणी कौन है" ऐसा सोचकर पक्षियो में शाङ्र्ग जाति मे पैदा होकर पितरो का ऋण चुकाने के लिए उसने आत्मज्ञान प्राप्त किया। जरिता नामक अपनी पत्नि के साथ खाण्डववन मे बडे सुख से रहने लगा। चार पुत्रो के जन्म लेने के वाद उसने बच्चो को और अपनी स्त्री को त्याग दिया। ७-१३ तदनन्तर मन्दपाल लपिता के साथ रहने लगा और बेचारी जरिता ने वच्चो का पालन-पोषण किया। तव एक दिन मन्दपाल ने अग्नि को खाण्डव जलाने के लिए जाते देखकर कहा—"हे भगवन् ! पावक-देव ! आप देवो का मुख हो ! आप कृपया एक काम करे !। आप अपने कारुण्य (दया) से मेरे पुत्रो को न जला डाले।" यह सुनकर अग्नि ने कहा—"अच्छा ! ऐसा ही होगा" और अपनी पूरी कान्ति के साथ चले गये। जव वन मे आग लग गयी तब जरिता रोने लगी। इनके दयाहीन पिता ने इनको छोड़ दिया और इनके साथ रोना ही मेरे भाग्य मे

हिरण्यरेतस्सिनें स्तुतिच्चुतुटङ्ङनान्
जरितारियु तोंळुतधिकं भक्तियोटे । ४०

शार्ङ्गपक्षिकळुटॆ जातवेद.स्तुति

लोकङ्ङळ्क्कॆल्ला प्राणनाकिय वायुतनि-
क्केकात्मावाय चैतन्यात्मकन् भवानल्लो । १
जीवनमायोरमृतत्तिनु योनियाय
पावकनाकुन्नतु निन्तिरुवटियल्लो । २
देवकळुटॆ मुखमायतु भवानल्लो
स्थावरजगमङ्ङळुळ्ळिल् वाणीटुन्नतुं । ३
केवलभूतनाय निन्तिरुवटियल्लो
तावकमहिमानमार्क्कॊरियावू नाथा ! ४
पक्षिपोतङ्ङळाय ञङ्ङळॆ दहियातॆ
रक्षिक्कीटुकवेणं कारुण्यमूर्त्ते ! पोटी ! ५
ईवण्णं जरितारि देवनॆ स्तुतिचॆय्ता-
नावोळ भक्तिपूण्टु तत्सहोदरनाकु- ६
शारिसृक्पनुं वह्निदेवनॆ स्तुतिचॆय्तान्
पारिच्च भयंतीत्तु पालिच्चु कोंळ्वानाये ७

जव उन्होने चारो ओर जलनेवाली आग की ज्वालाएँ देखी तव वे वहुत व्याकुल हुए । तव जरितारि वड़ी भक्ति के साथ वन्दना करके हिरण्यरेता (अग्नि) की स्तुति करने लगा । ३४-४०

शार्ङ्गपक्षियों की अग्निस्तुति

"सभी लोको का प्राण जो वायु है उसकी आत्मा चैतन्यस्वरूप आप है । अमृत जो जीवन है उसकी योनि पावक भी आप ही है । देवो का मुख आप है और सभी स्थावर और जङ्गमो के भीतर आप ही है । केवल भूत भी आप महानुभाव है । हे नाथ! आपकी महिमा का कौन वर्णन कर सकता है ? हे कारुण्यमूर्त्ते ! हे पालक ! हम पक्षी के वच्चो की रक्षा करो ताकि हम जल न जायँ ।" १-५ जरितारि ने इस प्रकार अग्निदेव की स्तुति की । उसके भाई शारिस्पृक्प ने भी वडी भक्ति के साथ वह्निदेव की इस प्रकार स्तुति की । "वडे-वडे भयों को नष्ट कराकर रक्षा करनेवाले आप हव्यवाहन[1] ही है । देवो औ[illegible] पितरो को दिये जानेवाले वलि, गव्य आदि नानाप्रकार के

---

1 हव्य को देवो के पास ले जानेवाला अग्नि ।

कीळ्ळेपोय्विक्कटन्नुकोण्टीट्टुविन् तीयाट्रियाल्-
पूळियु नीक्किकक्कोण्टु पोन्नुकोळ्ळुवनल्लो । ३०
पैतङ्ङळतुकेट्टु मातावोट्टुरचेय्तार्
पैदाहत्तोटु मेवुमेलियुण्टतिलम्मे ! ३१
पट्रप्पान् चिट्रकिल्ल नटप्पानिल्ल कालु-
मिट्रच्चि कण्टालेलि पिटिच्चु तिन्नुमल्लो । ३२
जन्तुक्कळ् भक्षिच्चिट्टु मरिक्कुन्नतिनेक्काळ्
वेन्तु चाकुन्नतत्रे गतियेन्नरिञ्ञालुं । ३३
भर्त्तावुतन्ने प्रापिच्चुत्तमन्मारायुळ्ळ
पुत्रन्मारेयु लभिच्चीटुक मातावे ! नी । ३४
अन्नतु केट्टनेर वन्नोरु शोकत्तोटे
तन्नुटे पैतङ्ङळे नोक्कियुं करञ्ञिट्टु ३५
पिन्नेत्तान् पट्रक्कयु मरिञ्ञु नोक्कुकयु-
मेन्नुटे कर्म्ममेन्नु कल्पिच्चु पोयाळवळ् । ३६
अग्नियु कत्तिक्कत्तिच्चेन्नटुत्तितु ताप-
मग्नन्माराय पक्षिपोतङ्ङळ् चोन्नारप्पोळ् । ३७
अग्रजन् जरितारि शारिसृक्पनुं पिन्ने-
च्चोल्क्कोळ्ळु स्तंबमित्रन् द्रोणनुमोरुमिच्चु ३८
नालु दिक्किलु कूटिक्कत्तिप्पोङ्ङीटुमग्नि-
ज्वालामालकळ् कण्टिट्टाकुलप्पेट्टनेरं । ३९

मै उसका मुँह मिट्टी से ढक दूँगी ताकि मिट्टी के नीचे आग न लग जाय। तुम सब नीचे जाकर लेट जाओ। जब आग बुझ जायगी तब मिट्टी हटाकर निकल आना।" यह सुनकर बच्चो ने कहा—"मगर माँ ! उसके अन्दर एक भूखा प्यासा मूसा बैठा है। हम लोगो के तो न उड़ने के लिए पख है, न चलने के लिए पैर। मास देखकर मूसा तो अवश्य पकड़कर खायेगा। जानवरो द्वारा खाये जाकर मरने से जलकर मरना कही अच्छा है। २७-३३ अतएव माताजी ! अपने पति से मिलकर फिर उत्तम पुत्र प्राप्त करो। यह सुनकर उसको बड़ा शोक हुआ। अपने बच्चो को देख-देख रोती हुई वह उड़कर गयी और पीछे देखकर "यह सब मेरे ही कर्म का फल है" ऐसा कहकर चली गयी। अग्नि तो जलते-जलते बच्चो के निकट पहुँच गया। तब दु ख मे मग्न चिडिया के बच्चो ने कहा। उनमे सबसे ज्येष्ठ था जरितारि, उसके बाद शारिसृक्प, फिर स्तबमित्र और चौथा था द्रोण।

कर्म्मणामाधारभूताय ! शोचिष्केशाय
कर्म्मसाक्षिणे ! करुणाय ! ते नमोनमः १८
कर्त्रे ! लोकैकभर्त्रे ! सहर्त्रे ! नमोनम.
कस्तव वेत्ति परमार्त्थमाद्याय ! नमः । १९.
मर्त्त्यन्मार् पितृदेवादिकळैस्सङ्कल्पिच्चु
नित्यवु नल्कीटुमाहुतियॆप्परिग्रहि २०
च्चत्तल् तीर्त्तल्लावर्क्कु तृप्तियॆ वरुत्तीटु
नित्याय ! जगत्प्रदीपाय ! तेजसे ! नम. । २१
सत्यसाक्षिणे ! पवित्राय ! भास्वते ! नमः
तत्त्वमूर्त्तये ! परमात्मने ! नमोनम: २२
कुन्पिट्टु जरितारि शार्ङ्गसृक्पनु पिन्ने-
स्तवमित्रनु द्रोणन्तानुमायॊरुमिच्चु २३
पक्षिकळाय मन्दपालपुत्रन्माराशु-
शुक्षिणितन्ने स्तुतिच्चोरुनेरत्तु देवन् २४
सन्तुष्टनायेनह निङ्ङळॆक्कुरिच्चॊरु
सन्तापमिनि निङ्ङळ्क्कुण्टाकयिल्ल नून । २५
सन्तोप पूण्टु जननीजनकन्मारोटुं
सन्तत वसिच्चालुमिविटॆत्तन्ने निङ्ङळ् । २६
अन्तरात्मनि परमानन्दत्तोटुमॆन्ने-
च्चिन्तिच्चु वसिच्चुकॊळ्कॆप्पॊळुमॆन्नाल् निङ्ङळ् २७

धारण करनेवाले, कर्मसाक्षी और दयालु आपको नमोनम. । लोको के कर्ता, लोको के एकमात्र भर्ता, और लोको के सहर्ता आपको नमोनम । आपका रहस्य कौन जानता है ? आदिभूत आपको नम । १३-१९ पितरो और देवो का सकल्प करके जो आहुति मनुष्य प्रतिदिन देते हैं उनको आप स्वीकार करते है और सबका दु ख दूर करके उनकी तृप्ति करते है । ऐसे नित्य और जगत् के प्रदीपस्वरूप तेज को नमोनम । सच्चे साक्षी को, पवित्र, शोभायमान, तत्त्वमूर्त्ति परमात्मा आपको नम ।" जब (मन्दपाल के चारो पुत्रो) जरितारि, शारिसृक्प तथा स्तंबमित्र और द्रोण ने एक होकर आशुशुक्षणि (अग्नि) की स्तुति की तब अग्निदेव ने कहा—"मै आप लोगो से प्रसन्न हूँ । अब आपको कोई दु.ख नही होगा । २०-२५ आप प्रसन्न होकर अपने माता-पिता के साथ यही हमेशा के लिए निवास कीजिये । अपने भीतर परम आनन्द के साथ सदा मेरा ध्यान करने हुए रहो । तुम्हे जल जाने का डर

हव्यवाहननाय निन्तिरुवटियल्लो
हव्यमायीटुन्नतु कव्यमायीटुन्नतु ८
गव्यादि वहुविध द्रव्यङ्ङळाकुन्नतु
दिव्यन्मारुळ्ळिलुळ्ळोरन्धकारङ्ङळ् नीक्कि ९
निर्व्याजमात्मज्ञानात्मकनाय् शोभिच्चीटु-
मव्ययानन्दनायोरव्यक्तनाकुन्नतु १०
सुव्यक्त सकललोकव्याप्तनाकुन्नतु
भव्याकारत्तोंप्पूण्ट निन्तिरुवटियल्लो । ११
आधार मट्टु ञङ्ङळ्क्कारुमिल्लय्यो भुव-
नाधारमूर्त्ते ! परिपालय कारुण्याब्धे ! १२
स्तंवमित्रनु पुनरन्नेर स्तुतिचेय्ता-
नम्मयायीटुन्नतु तातनायीटुन्नतु १३
प्रकृतियाकुन्नतु पुरुपनाकुन्नतु
सकलात्मावायीटु निन्तिरुवटियल्लो । १४
वेदमायीटुन्नतु वेदार्थमाकुन्नतु
आदितेयास्याकृते ! निन्तिरुवटियल्लो । १५
पालय कृपालय ! पावक ! परमात्मन् !
वालकानस्माननालबनान् नमोस्तु ते । १६
द्रोणनु वैश्वानरदेवनें स्तुतिचेय्तान्
प्राणसंकटत्तोटुमत्यर्थ भक्तियोटे । १७

द्रव्य हो जानेवाले, देवो के भीतर के अन्धकार को दूर करके व्याजरहित आत्मज्ञानात्मक होकर चमकनेवाले, अव्यय आनन्द होकर अव्यक्त वन जानेवाले, स्पष्ट रूप से समस्त लोको को व्याप्त करनेवाले और एक भव्य आकार धारण करके शोभायमान आप ही महानुभाव है । हम लोगो के लिए और कोई आधार नही है । हे भुवन की आधारमूर्त्ति ! हे दयासागर ! रक्षा करो ।" ९-१२ उस समय स्तवमित्र ने भी स्तुति की—"माता वन जानेवाले, पिता वन जानेवाले, प्रकृति हो जानेवाले, पुरुप हो जानेवाले, और सवकी आत्मा वन जानेवाले आप ही है । वेद वन जानेवाले, वेदार्थ हो जानेवाले, तथा देवो का मुखस्वरूप रखनेवाले महानुभाव आप ही है । हे दयानिधे ! हे पावक ! हे परमात्मन् ! हम अनाथ वालको की रक्षा करो ! आपको प्रणाम हो !" द्रोण ने भी प्राणसकट मे आकर वडी भक्ति के साथ वैश्वानर(अग्नि)देव की स्तुति की । "कर्मो के आधारभूत, ज्योतिरूप केश

तळर्न्नु चमञ्ञतु पार्त्थनुमश्वङ्ङळुं
तळर्न्नीलेतुमतुकण्टु देवेन्द्रनप्पोळ् ३८
भगवत्पाद कूप्पि स्तुतिच्चान् पलतरं
भगवत्प्रसादत्ते लभिप्पान् प्रीतियोटे । ३९

देवेन्द्रन्टे भगवत्स्तुति

भगवन् ! प्रसीद मे भगवन् ! प्रसीद मे
भगवन् ! जय जय भगवन् ! जय जय १
वैकुण्ठ ! जय जय गोविन्द जय जय
श्रीकण्ठसेव्य ! जय श्रीपते ! जय जय । २
श्रीवत्सचिह्न ! जय श्रीरामकृष्णा ! जय
श्रीवासुदेव ! जय मुकुन्द ! जय जय । ३
निन्मायामोहग्रस्त निखिल त्रिभुवन
दुर्म्मदमतुमूलमेनिक्कुमुण्टाय्वन्नू । ४
निन्मायतन्नेज्जयिच्चीटुवानरुतल्लो
निर्म्मलन्मारायुळ्ळ तापसवरन्मार्क्कु ५
ब्रह्मादिस्तंवान्तमायुळ्ळोरु जन्तुक्कळु
मन्मथवैरितानुमाम्नायङ्ङळुमेल्ला ६

महेन्द्र, उनकी सेना और मेघ तो क्षीण हुए, परन्तु अर्जुन और उनके घोड़े बिलकुल नहीं थके। यह देखकर उस समय इन्द्र भगवान् के चरणों पर गिर पड़े और भगवान् का प्रसाद प्राप्त करने के लिए उनकी स्तुति करने लगे। ३३-३९

देवेन्द्र की भगवत्स्तुति

हे भगवन् ! मुझ पर प्रसाद (कृपा) करो, हे भगवन् ! मुझ पर प्रसाद (कृपा) करो। हे भगवन् ! जय जय ! हे भगवन् ! जय जय ! हे वैकुण्ठ ! जय जय ! हे गोविन्द जय जय ! हे श्रीकण्ठ के सेव्य ! जय ! जय ! हे श्रीपते ! जय ! जय ! हे श्रीवत्सचिह्न[1] ! जय ! हे श्रीरामकृष्ण ! जय ! हे श्रीवासुदेव ! जय ! हे मुकुन्द जय ! जय ! यह सारा त्रिभुवन तुम्हारी माया के मोह से ग्रस्त है। यही कारण है कि मेरे मन में दुर्मद उत्पन्न हो गया। जो निर्मल तापस लोग हैं वे भी तुम्हारी माया को जीत नहीं

---

१ विष्णु के वक्षस्थल का महर्षि भृगु के लात मारने का चिह्न।

वेन्तुपोमेन्नोर्त्तोरु भीतियुमुण्टाकेण्ट
वन्धु आनुण्टु निङ्ङळ्क्कतिनु किल्लिल्लेतु । २८
एतुमे दुःखिक्केण्ट तापमुण्टाकयिल्ल
जातवेदस्सुमित्थ नल्किनानुग्रह । २९
कानन दहिक्कुम्पोळ् मन्दपालनुमेरे
मानसताप पूण्टान् पुत्ररे निनय्क्कयाल् । ३०
जरिततानुमेन्टे चेरिय पैतङ्ङळु-
मेरिञ्ञुपोयितेन्नु दुःखिच्चु चोन्ननेर ३१
परञ्ञु लपितयाय्मेवुन्न सपत्नियु
परञ्ञीलयो दहिक्कुन्नतिल्लेन्नु वह्नि । ३२
मक्कळुं दिव्यन्मारेन्नल्लयो चोल्ली भवान्
दुःखिप्पानवकाशमेन्तिनियितुमूलं ? ३३
सापत्न्य तोन्निच्चोरु लपिततन्निलप्पोळ्
तापसश्रेष्ठनुळ्ळिल् वैराग्यमुण्टाय्वन्नु । ३४
जरितानु वन्नु पैतङ्ङळतम्मेक्कण्टु
पेरिकेस्सन्तोषिच्चु मन्दपालनु वन्नु । ३५
पितृक्कळ्क्कुळ्ळ कट तीर्त्तवनतुकाल
मुतिन्नान् पिन्नेश्शुभलोकत्ते गमिप्पानाय् । ३६
पतुक्केप्पतुक्केप्पोयटङ्ङि दहननु-
मेतिर्त्त महेन्द्रनु पटयु मेघङ्ङळुं ३७

कभी पैदा नही होगा। मै आपका बन्धु हूँ, इसमे कोई सन्देह नही है। अव चिन्ता बिलकुल न करना, कोई दुःख न होगा। जातवेदा (अग्नि) ने इस प्रकार उन पर अनुग्रह दिया। जब वन जल रहा था तव अपने पुत्रो का स्मरण करते हुए मन्दपाल को भी बडा दुःख हुआ। जब उसने दुःख के साथ कहा—"मेरी जरिता और मेरे छोटे-छोटे बच्चे जल गये होगे" तव लपिता, जो (जरिता की) सौत थी, बोली—"अग्नि ने तो कहा है कि उनको न जलावेगे"। २६-३२ आपने भी कहा है कि आपके बच्चे सब देव है। फिर दुःखित होने की क्या आवश्यकता है?।" उस समय सपत्नी का भाव दिखलानेवाली लपिता के प्रति तापसश्रेष्ठ (मन्दपाल) की विरक्ति हुई। उस समय जरिता भी आयी। मन्दपाल तो बच्चो को देखकर बहुत प्रसन्न हुए। इस प्रकार पितरो का ऋण चुकाकर वह शुभ-लोक प्राप्त करने के लिए तैयार हो गये। अग्नि भी धीरे-धीरे शान्त हुआ।

इरुपत्तोन्नु दिनकोण्टु खाण्डववन-
मेरिञ्ञु तेळिञ्ञनुग्रहिच्चु वह्निदेवन् । १६
तोळुतु धनञ्जयनाशीर्व्वादिवु चोल्लि-
त्तोळुतु भगवाने मरुञ्ञु धनञ्जयन् । १७
इन्द्रादिदेवगणं वानुलकवु पुक्का-
रिन्द्रसोदरनाकुमिन्दिरावरनोटु १८
इन्द्रारिशिल्पिश्रेष्ठनाकिय मयनोटु-
मिन्द्रनन्दननाय पाण्डवन् विजयनु । १९
काळिन्दियुटे तीरं पुक्कारेन्नरिञ्ञालुं
केळेन्नु नृपनोटु मामुनियरुळ्चेय्तु । २०
नाळेयामिनिश्शेष चोल्लुवान् पक्षेयेन्नाळ्
मेळमेरीटुन्नोरु पैङ्किळिमकळ्प्पोळ् । २१

॥ सभव समाप्त ॥

जला । तदनन्तर प्रसन्न होकर अग्निदेव ने अनुग्रह किया । अर्जुन ने भी अग्नि की वन्दना की और आशीर्वाद दिया । तदनन्तर भगवान् की वन्दना करके अर्जुन चले गये । इन्द्र आदि देवगण ने देवलोक में प्रवेश किया । तब इन्द्र के भाई और इन्दिरा के पति के साथ, तथा इन्द्र के शत्रुओ के शिल्पिवर मय के साथ इन्द्र के पुत्र पाण्डव अर्जुन यमुना के तट पर पहुँचे, यह जान लीजिए । महामुनि ने राजा से कहा—"और पूछ लीजिए ।" परन्तु मीठे स्वरवाली शुकी ने कहा—"अब शेप तो कल बतलाऊँगी" । १६-२१

॥ संभव पर्व समाप्त ॥

निन्तिरुवटियुटे तत्त्वमाराञ्ञु नित्य
चिन्तिच्चु चिन्तिच्चरियाञ्ञुळ्ळुन्नुतल्लो । ७
नन्दनवनत्तिङ्कल् सुन्दरीजनत्तोटु
मन्दमारुतमेटु कन्दर्प्पवशन्मारा ८
मन्दन्माराय ञङ्ङळेङ्ङनेयरियुन्नु
नन्दनन्दन ! नाथ ! निन्महिमानमोर्त्ताल् । ९
निन्मायामोहाबुधौ वीणुळ्ळन्नळल् पूण्टु
जन्मवु मरणवुं सुखदु खादिकळु १०
कैक्कोण्टु वलयुन्नतोक्कवे माटित्तव-
तृक्कळ्ळलोटु चेर्त्तुकोळ्ळेण दयानिधे ! ११
देवेन्द्रन् त्रिभुवननाथनेन्नभिमानि-
च्चीवण्णमुळ्ळ जाळ्यमिनियुमुण्टाकाते १२
देवदेवेश ! तव पादारविन्दङ्ङळे-
स्सेविप्पानेत्तीटुवान् नल्केणमनुग्रहं । १३
शक्रनीवण्णं कूप्पिस्तुतिच्चु नमस्कार
तृक्काक्कल् वीणुचेय्तु तोळ्ळुतोरनन्तरं १४
मघवान् मकनेयुमाश्लेप चेय्तु मोदाल्
सकलास्त्रङ्ङळेयु कोटुत्तु वरं नल्कि । १५

सकते है। ब्रह्मा से लेकर गुल्म तक के सभी प्राणी, मदन के शत्रु (शिवजी), सभी वेद आप के तत्त्व को न समझने के कारण लगातार विचार करते रहते है और फिर भी न समझकर दु खित होते है। हम लोग तो मन्दबुद्धिवाले नन्दनवन मे सुन्दरियो के साथ मन्दमारुत खाते हुए, कामदेव के शरो के शिकार बनते है। १-८ हम क्या समझ सकते है ?। हे नन्द के पुत्र! हे नाथ! हे दयानिधे! आपकी महिमा का हम ध्यान करते है। हम आपकी माया के मोहसागर मे गिरकर जन्म, मरण, सुख, दु ख आदि अनुभव करते हुए दु खित है। यह सब दूर करके हमे अपने श्रीचरणो से मिला लो। हे देवदेवेश! ऐसा अनुग्रह कीजिए कि हम आपके चरण-कमलो की सेवा कर सके ताकि मुझमे फिर देवेन्द्र और त्रिभुवननाथ होने का अभिमान न हो और मै फिर जाड्य (मूर्खता) न कर बैठूँ। इस प्रकार इन्द्र ने हाथ जोडकर, स्तुति करके पैरो पर पडकर नमस्कार किया और पूजा की। तदनन्तर अपने पुत्र से हर्ष के साथ गले लगाकर उसको सभी अस्त्र दे दिये और वर प्रदान किया। ९-१५ इक्कीस दिन मे खाण्डव वन

मायामयनां मयन् धर्म्मनन्दन-
नायङ्ङोरु सभ निर्म्मिच्चु नल्किनान् । १०
मेघपुष्पस्थलभ्रान्तिकळादिया
मोहनशिल्पङ्ङळावर्कु परयावू । ११
वासुदेवन् निजबन्धुक्कळुमायि
वासवसूनुविनोटुमोरुमिच्चु १२
वासवुंचेय्तु युधिष्ठिरन् चोल्लाले
वासवप्रस्थमाकुन्न पुरितन्निल् । १३
मासवुमञ्चारु पोयितङ्ङञ्चारु-
वासर पोयपोले पिन्ने माधवन् १४
नारायणन् परन् दामोदरनीशन्
नारदनादिकळ्क्कु तिरियातवन् १५
नारीजनमनोमोहनन् केशवन्
नारकनाशनन् नाथन् नरकारि १६
निष्कळन् निर्ग्गुणन् निश्चलन्
निर्म्ममन् निष्कळङ्कन् निरातङ्कन् निरुपमन् १७
नित्यन् निरामयरूपन् निराकुलन्
भक्तप्रियन् पुमान् भुक्तिमुक्तिप्रदन् १८
भक्तिसाद्ध्यन् पत्मनाभन् परापरन्
शक्तियुक्तन् सकळानन्दविग्रह- १९
नद्वयनव्ययनव्यक्तनत्भुत-
नध्ययनप्रियनाम्नायगोचरन् २०

के लिए एक सभा रचा दी । उसके मेघ, पुष्प, थल का भ्रम पैदा करने-वाले मोहन शिल्पो का कौन वर्णन कर सकता है ? युधिष्ठिर के कहने पर वासुदेव अपने बन्धुओ के साथ, इन्द्रपुत्र अर्जुन के साथ, इन्द्रप्रस्थ नामक नगर मे निवास करने लगे । ८-१३ पाँच छ महीने पाँच छ दिनो के समान बीत गये । तदनन्तर माधव, नारायण, पर, दामोदर, ईश, नारद आदियो के लिए भी अज्ञेय, नारीजनो के मन के मोहन, केशव, नरक के नाशक, नाथ, नरकासुर के शत्रु, निष्कलङ्क, निर्गुण, निश्चल, निर्मम, निष्कलङ्क, निरातङ्क, निराकुल, भक्तप्रिय, पुमान्, भक्ति और मुक्ति देनेवाले, भक्ति से प्राप्त करने योग्य, पद्मनाथ, परात्पर, शक्तियुक्त, सभी आनन्दो की मूर्ति, अद्वय, अव्यय, अव्यक्त, अद्भुत, अध्ययनप्रिय, श्रुति द्वारा वेद्य, सभी तत्त्वो

सभा पर्व

तत्ते ! वरिकरिकत्तङ्ङिङरि मम
चित्तं मुहुरपि तॆळिञ्ञितल्लो । १
नित्यं निरुपमभक्त्या कनिविनॊटि-
त्थ चरितङ्ङळुरचॆय्क नी । २
नारायणङ्कथ कॆट्टोळवुमति-
लेरुन्नितु रुचि किळिमकळे ३
पारातिनियितु शेष पऱवति-
नारु पळि तव पऱकयिल्ले । ४
पारं पळिक्किलुं भारतं चॊल्लुवा-
नारु मटिक्कॆण्ट नीङ्ङु दुरितङ्ङळ् । ५
नारायणलील कॆळ्क्कयु चॊल्कयु
पारिल् नरनाय् पिऱन्नाल् वरॆण्टतु । ६
ताल्परियमतिलुण्टु निङ्ङळ्क्कॆङ्किल्
कॆळ्प्पिन् कथ पऱञ्ञीटुवन् चॆट्टु ञान् । ७
नारायणनुं नरना विजयनु
नारिमारॊटु द्विजवरन्मारॊटु ८
पारॆळुरण्टु निऱञ्ञ पुकळॊटु
तेरिलेऱिप्पोन्नु वाणु पुरिपुक्कु । ९

सभा पर्व

हे शुकि ! आओ और पास बैठो । मेरा चित्त तो फिर प्रसन्न हो गया है । सदा ही इस प्रकार निरुपम भक्ति के साथ कृपया तरह-तरह के चरित बतलाती जाओ । हे शुककन्ये ! नारायण की कथा जितनी भी सुनी जाय उसमे रुचि बढती है । अगर तुम उसे बिना विलम्ब के सुनाओगी तो कोई भी तुम्हे दोषी न बतलावेगा । पाप बहुत करने के बाद भी भारत-कथा सुनाने मे कोई न हिचके । पाप सब मिट जायेगे । जो पृथिवी पर मनुष्य बनकर जन्म ले उसे चाहिए कि वह नारायण की कथा सुने और सुनावे । अगर आपकी उसमे इच्छा हो तो कथा सुन लीजिए । मै सब कुछ बतलाऊँगी । १-७ नारायण और नर, अर्थात् अर्जुन स्त्रियो और ब्राह्मणवरो के साथ चौदहो लोको मे व्याप्त अपनी कीर्ति के साथ रथ पर बैठकर चले और नगर मे प्रवेश करके विराजे । मायायुत मय ने युधिष्ठिर

नेरत्तिनियु वरुन्नतुण्टेन्नति-
सारस्यमोटरुळिच्चेय्तु सत्वरं । ३२
द्वारवतियिलेंळुन्नळ्ळि मेविनान्
दारङ्ङळोटु रमिच्चु निरन्तर । ३३
कारुण्यवारिधियेक्कण्टनुदिन
द्वारकावासिकळुं मुखिच्चीटिनार् । ३४

राजसूय

निर्म्मलनाकिय धर्म्मतनयनु
धर्म्म पिळयाते भूमिये रक्षिच्चान् । १
कर्म्मङ्ङळुं चेय्तु कीर्त्तियु पोङ्ङिच्चु
रम्यङ्ङळाय भोगङ्ङळोटु मुदा । २
सन्मार्ग्गचारिकळाय् मरुवीटिन
सन्मतिवीररा मन्त्रिजनत्तोटु ३
दुर्म्मदमेरिन वैरिकुलत्तिनु
धर्म्मराजोपमन्मारायृविळङ्ङिन ४
सोदरन्मारोटुमात्मजन्मारोटु-
मादरमेरिन भामिनितन्नोटु ५
यादववीरनाकुन्न मुकुन्दन्टे
पादपत्मत्तिलुरच्च मनस्सोटु ६

प्रारम्भ हुई तब पाण्डव आँसू गिराते हुए थोड़ी दूर साथ चले । 'यथासमय फिर आऊँगा' ऐसा बडी प्रीति के साथ श्रीकृष्ण ने कहा । तदनन्तर द्वारवती पहुँचकर वहाँ अपनी स्त्रियों के साथ निरन्तर सुख से रहे । और द्वारका के निवासी भी दयासागर (श्रीकृष्ण) को प्रतिदिन देखते हुए बड़े सुख से रहे । २९-३४

राजसूय

और निर्मल धर्मपुत्र (युधिष्ठिर) ने भी विना धर्म के उल्लङ्घन के भूमि की रक्षा की । अनेक कर्म करके अपनी कीर्ति बढ़ा दी । रम्य भोगों का अनुभव करते हुए आनन्द से रहे । धर्मराज के पुत्र, अजातशत्रु और प्रभु (युधिष्ठिर) अपने सन्मार्ग के अनुयायी और सन्मति देने मे कुशल मन्त्रियो के, दुर्मद शत्रुओ के लिए यमराज के तुल्य अपने भाइयो और पुत्रो

तत्त्वङ्ङळेल्लाटिनु मूलमायवन्
सत्यस्वरूपन् सकलजगन्मयन् २१
सच्चित्परब्रह्ममाय सनातन-
नच्युतनेकनात्मारामनीश्वरन् २२
आनन्दपूर्णननन्तन् जनिमृति-
हीनन् दयानिधि विष्णु निरञ्जनन् २३
नानाजगत्परिपूर्णन् सदाशिवन्
न्यूनातिरेकप्रवीणन् जनार्द्दनन् २४
गोविन्दनिन्द्रानुजन् मुकुन्दन् हरि
देवन् दिनाधिपचन्द्रविलोचनन् २५
भूतपञ्चात्मकन् भूतिभूषार्च्चितन्
भूतङ्ङळुळ्ळिले जीवनाकुन्नवन् २६
पूतनतन्नुटे जीवनमुण्टवन्
पूतन् पुराणपुमान् पुरुषोत्तमन् २७
ऎन्नुटेयुळ्ळिल् विळङ्ङुन्न तन्पुरान्
तन्नुटे भक्तर्क्कु सङ्कट तीर्प्पवन् २८
पन्नगनाथशयनन् परमात्मा
पन्नगव्राताशनद्ध्वजन् माधवन् २९
पार्त्थन्मारोटु द्रुपदात्मजयोटु
यात्रयुं चॊल्लिप्पुरप्पेट्टु तेरेऱि । ३०
यात्र तुटङ्ङियनेरत्तु पाण्डवर्
नेत्राबुवु वार्त्तनुयात्रयु चेय्तार् । ३१

के मूलभूत, सत्य स्वरूप, सकल जगन्मय, सच्चित्परब्रह्म, सनातन, अच्युत, एक, आत्माराम, ईश्वर, आनन्दपूर्ण, अनन्त, जन्म और मृत्यु से रहित, दयानिधि, विष्णु, निरञ्जन, विविध जगो से परिपूर्ण, सदाशिव, अपने को कम या अधिक बनाने मे कुशल, जनार्दन, गोविन्द, इन्द्रानुज, मुकुन्द, हरि, देव, सूर्य और चन्द्र-रूपी ऑखवाले, पञ्चभूतात्मक, भस्मालकार से अर्चित, भूतो के भीतर स्थित प्राण, पूतना के प्राण को चूसनेवाले, पवित्र, पुराण-पुरुष, पुरपोत्तम, मेरे मन मे विराजमान प्रभु, अपने भक्तो का दुःख दूर करनेवाले, २२-२८ पन्नगनाथ (शेषनाग) पर लेटनेवाले, परमात्मा, साँपो को खानेवाला (गरुड) जिनका ध्वज है, माधव (कृष्ण) पार्थो (पाण्डवो) और द्रौपदी से बिदा होकर प्रस्थान के लिए रथ पर बैठे। जब यात्रा

आस्थानमण्डपे सिंहासने वसि-
च्चास्थयोटोरो कथकळ् परञ्ञुन्पोळ् । १७
अच्युतभक्तप्रवरन् तपोनिधि
स्वच्छवाचा नृपन्तन्नोटु चोदिच्चु । १८
कच्चिदद्ध्यायोक्ति चॊल्लुवानर्थंवु
निश्चयिच्चीटुवान् वेलयुण्टेन्नयु । १९
राजसूय चॆय्वानाग्रहमुण्टॆन्नु
राजावु मामुनियोटु परञ्ञप्पोळ् २०
तेजोनिधिया तपोनिधि भूपति-
पूजितन् नारदन् नीरजोल्भूतजन् २१
तानॊरु कार्यं निरूपिच्चु वन्नतु
मानववीरनङ्ङोट्टु परकयाल् २२
मानसतारिल् निरञ्ञॊरु कौतुक-
माननमायिरमुळ्ळवन् चॊल्किला । २३
चिन्तिच्चु मन्दस्मित चॆय्तु वीणतन्
तन्त्रि विरल्कॊण्टु मॆल्लॆन्निळक्किनान् २४
सन्तोपमॆल्लावनु वळरुं निज
बन्धुक्कळॆक्कण्टालॆन्नतिलु परं २५

(यमराज) के पुत्र (युधिष्ठिर) आस्थान-(सभा) मण्डप मे सिंहासन पर बैठे हुए बडी भक्ति के साथ विविध बाते करने लगे । ११-१७ तब अच्युत के भक्तो मे श्रेष्ठ, तपोनिधि नारद ने अपनी स्वच्छ वाणी द्वारा राजा से पूँछा[1]—"कच्चिदध्याय को सुनाना और उसके अर्थ का निर्णय करना कठिन काम है । जब राजा ने महामुनि से कहा कि मेरी राजसूय करने की इच्छा है तब स्वय सोचे हुए कार्य को राजा द्वारा पहले कह देने के कारण तेजोनिधि, तपोनिधि तथा राजा द्वारा पूजित ब्रह्मा के पुत्र नारद के मन मे जो भरा-पूरा कौतुक (प्रीति) हुआ उसे हजार मुखवाले शेषनाग ही वर्णन कर सकते है । १८-२३ तदनन्तर विचार करके मुस्कराकर (नारद ने) अपनी वीणा के तारो को उगलियो से धीरे-धीरे हिलाया । (और कहा), अपने बन्धुओ को देखकर सबको सुख होता ही है । ऊपर से यह हर्ष की

१ नारदजी ने जो प्रश्न पूछे वे महाभारत के सभापर्व के पाँचवे अध्याय मे दिए हैं । उनके हर एक श्लोक का प्रथम पद है 'कच्चित्' । इसलिए उसे कच्चिदध्याय कहते है ।

नालुवेदत्तिनु मूलमायुळ्ळवन्
नीलविलोचनन् पीताबरधरन् ७
पालाळियिल्त्तुयिर्कोळ्ळुन्न नाथन्टे
लीलकळ् चिन्तिच्चु सन्तुष्टनायवन् ८
नालाळिचूळुमूळिक्केकनाथनाय्
पालनवु चेय्तु बन्धुक्कळुमायि ९
कालदेशावस्थकळ्क्कनुरूपेण
कालात्मजनामजातशत्रुप्रभु । १०
राजप्रवरनाय् वाळुन्नकालत्तु
राजसूयं वेणमेन्नु तोन्नीयुळ्ळिल् । ११
राजीवलोचनन्तन्टे तिरुवुळ्ळ
व्याजमोळिच्चेन्निलुण्टाकिलेन्नुमे १२
दण्डमुण्टाकयिल्लेन्नु निरूपिच्चु
दण्डधरात्मजन् वाळुन्ननेरत्तु । १३
पण्डितनाकिय मामुनि नारदन्
चण्डभानुप्रभन्तानुमेळुन्नळ्ळि । १४
दण्डनमस्कारवु चेय्तु भूपति
मण्डनन् पाद्यासनार्घ्यङ्ङळु नल्कि । १५
पुण्डरीकोत्भवपुत्रनियोगेन
पुण्डरीकप्रियनन्दननन्दनन् १६

के साथ, अपनी वहुत आदरणीय भामिनियो (स्त्रियो) के साथ यादववीर मुकुन्द के चरणकमलो का ध्यान करते हुए, चारो वेदो के मूल, नील-विलोचन, पीतावर धारण करनेवाले क्षीरसागर मे शयन करनेवाले नाथ (विष्णु) की लीलाओ के ध्यान से सन्तुष्ट होकर चारो समुद्रो से घिरी पृथिवी के एकमात्र नाथ वनकर अपने वन्धुओ के साथ काल, देश और अवस्था के अनुसार उस (पृथ्वी) का पालन करने लगे। १-१० तव उन्हे यह वात सूझी कि राजसूय यज्ञ का अनुष्ठान होना चाहिए। जव धर्मपुत्र यह सोच रहे थे कि 'अगर मैं बिना व्याज (कपट) के राजीवलोचन (श्रीकृष्ण) का ध्यान करूँ तो मुझे कभी दुःख नही प्राप्त होगा' तभी सूर्य के समान प्रभा रखनेवाले विद्वान् महामुनि नारदजी पधारे। राजा ने साण्टाङ्ग प्रणाम किया और पाद्य, आसन और अर्घ्य दिए। पुण्डरी-कोद्भवपुत्र (ब्रह्मा के पुत्र) नारद की आज्ञा से पुण्डरीकप्रिय (सूर्य) के पुत्र

माधवनृतन्नै वरुत्तुवन् आनेन्नु
माधुरियचेर्न्नु वीणयु वायिच्चु ३७
नारायणा ! शिव राम हरे ! जय
नारकनाशन ! नाथ ! दयापरा ! ३८
नीरजनेत्र ! निरञ्जन ! निर्म्मल !
नीरदविग्रह ! नीतिपरायण ! ३९
वृष्णिकुलोत्भव ! कृष्णा ! जगन्मय !
विष्णो ! मुकुन्द ! दामोदर ! गोविन्द ! ४०
जिष्णुमुखामरवन्दित ! श्रीपते !
जिष्णुप्रिय ! जगन्मङ्गल ! गोपते ! ४१
सक्तिविनाशन ! रक्तपत्मानन-
युक्तरमानुरक्त ! त्रिलोकीपते ! ४२
भक्तजनप्रिय ! भुक्तिमुक्तिप्रद !
शक्तियुक्तप्रभो ! पाहि निरन्तरं । ४३
इत्तर नामसङ्कीर्त्तनवुं चेय्तु
सत्वरं द्वारावतियिलकं पुक्कान् । ४४
उद्धवर् सात्यकियेन्नु तुटङ्ङियु-
ळ्ळुत्तमन्मारोटुंकूटि सभान्तरे ४५
मायामयनाय् मरुवुन्न गोविन्दन्
मायारहितन् मनोहरन् माधवन् ४६

दिया। ३१-३५ विधिसुत (नारद) ने कहा—"सदेह बिलकुल न करो। कार्य-सिद्धि अवश्य हो जायगी।" 'मैं माधव को बुलाऊँगा', ऐसा कहकर माधुर्य के साथ वीणा बजायी। हे नारायण! हे शिवराम! हे हरे जय! हे नरक का नाश करनेवाले! हे नाथ, हे दयानिधे! हे कमलाक्ष! हे निरञ्जन! हे निर्म्मल! हे मेघ के समान शरीरवाले! हे नीतिपरायण! हे वृष्णिकुलोद्भव! हे मुकुन्द! हे दामोदर! हे गोविन्द! हे इन्द्र आदि देवों द्वारा पूजित! हे श्रीपते! हे अर्जुन के प्यारे! हे जगन्मङ्गल! हे गोपते! हे विषयासक्ति का नाश करनेवाले! हे लालकमल सदृश मुख-वाली स्त्रियों के प्रिय! हे त्रिलोकीपते! ३६-४२ हे भक्तजनप्रिय! हे भुक्तिमुक्तिप्रद! हे शक्तिशाली प्रभु! तुम निरन्तर हमारी रक्षा करो! इस प्रकार नाम-सङ्कीर्त्तन करते हुए नारदजी ने द्वारवती में प्रवेश किया। उद्धव, सात्यकि आदि प्रमुख व्यक्तियों के साथ मायामय,

अॅन्ने सुखमे परङ्ङतु नन्नितु ।
मन्नवा ! ञानतु चॊल्लुवान् वन्नतु । २६
निन्नुटॆ तातना पाण्डुवु वानिल्नि-
न्नॆन्नोटु चॊल्लिनान् निन्नोटु चॊल्लुवान् । २७
राजा हरिश्चन्द्रनिन्नु तॆळिवोटु
राजसूय चॆय्क कारणमायल्लो २८
तेजोमयनाय् सुरमुनिवृन्देन
पूजितनाय् महाभोगसमन्वित २९
वानिल् सुखिच्चु वसिक्कुन्नतॆन्नतु ।
तानादरवोटु कण्टतुकॊण्टॆटो । ३०
दानयागादिकळ्क्कुळ्ळ फल कण्टु
मानसे विस्मय वर्द्धिच्चितॆन्नयु । ३१
कर्म्मङ्ङळुण्टु पलवयॆल्लाटिलु
नन्मयुळ्ळॊन्नहो राजसूयमॆन्नु ३२
तन्मकनाकिय निन्नोटु चॊल्लुवान् ।
नम्मोटु चॊन्नतु चॊन्नेनरिकॆटो ३३
अप्पोळ् नरपति चोदिच्चितादराल् ।
तल्प्रकारङ्ङळरुळ्चॆय्तु केळ्क्कणं । ३४
तल्प्रसङ्गेन हरिश्चन्द्रोपाख्यान-
मॆप्पेरुमेयरुळ्चय्ततु नारदन् । ३५
एतुमे संशयिच्चीटरुतिक्काल
साधिक्कुमॆन्नरुळ्चॆय्तु विधिसुतन् । ३६

बात है कि आप सदा सुख से रहे है। हे भूपाल ! मै भी आपके सुख की बात कहने आया हूँ। तुम्हारे पिता पाण्डु ने तुम्हे बतलाने के लिए मुझसे एक बात कही है। राजा हरिश्चन्द्र आज भी, राजसूय करने के कारण, स्वर्ग में, तेजोमय होकर, देवो और मुनियो से पूजा पाते हुए बडे-वड़े भोगो का अनुभव करते हुए सुख से रह रहे है। यह मैने आदर के साथ देखा है। २४-३० अतएव दान, याग आदि के फल देखकर मेरे मन मे वडा आश्चर्य हुआ। कर्म अनेक प्रकार के है, उनमे राजसूय ही श्रेष्ठ है। इस बात को अपने पुत्र तुझसे कह देने के लिए मुझसे कहा गया है। और मैने कह दिया। तब नरेन्द्र ने सादर पूछा—कृपया विस्तार से उसका वर्णन कीजिए। उसी प्रसङ्ग मे नारद ने सपूर्ण हरिश्चन्द्रोपाख्यान सुना

निन्नुटॆ भक्तरिल् मुन्पनायुळ्ळवन्
मन्नवर्मन्नवनाय युधिष्ठिरन्- ५७
तन्नुटॆ चॊल्लिनालिन्निविटेक्कु ञान्
वन्नितितिनुळ्ळ कारणवुं चॊल्ला ५८
उण्टॊरु याग कळिक्कयिलाग्रह ।
कॊण्टल्नेर्वर्ण्णनेक्कण्टु परञ्ञाकिल् । ५९
रण्टुं तिरिक्कायिरुन्नितॆन्नॆन्नोटु
पण्डतयोटवन् चॊन्नानरिञ्ञालु । ६०
अत्तॊळिलॆल्ला परञ्ञिरिक्कुन्नति-
न्मद्ध्येयॊरन्तणन् वन्नतु काणायि । ६१
ऐन्नयु निर्म्मलन् पृथ्वीसुरोत्तमन्
सत्तमन् वृत्तवान् वुद्धिमान् केवलं । ६२
पण्टॊरु नाळुमे कण्टरियाय्किलुं
कॊण्टल्नेर्व्वर्ण्णनेक्कण्टवन् चॊल्लिनान् ६३
कण्टाल् मनोहरमायोरु रूपमुळ्-
क्कॊण्टु पिरन्न वैकुण्ठ ! दयानिधे ! ६४
साधुजनङ्डळ्क्कॊराधारमाकिय ।
माधवने ! जय ! नारायणा ! जय ! ६५
वेधाविनुं विचारिच्चाल् तिरियात ।
वेदान्तवेद्य ! वेदात्मकने ! जय ! ६६
धीरपराशरनन्दनवर्ण्णित
शौरे ! चराचराचार्य ! चतुर्भुज ! ६७

वतलाऊँगा । 'मेरी एक यज्ञ करने की इच्छा है । यह वात अगर आप श्रीकृष्णजी से जाकर कहेगे तो दोनो वात स्पष्ट हो जायेगी ।' ऐसा उन्होने पण्डता के साथ मुझसे कहा—जान लीजिए ।" जव उस विषय पर वातचीत हो रही थी तव वहाँ एक व्राह्मण आया हुआ दिखाई दिया । वह एक अत्यन्त निर्मल, सत्तम, चरित्रवान् और वुद्धिमान् व्राह्मण था । ५७-६२ यद्यपि वह विलकुल अपरिचित था फिर भी उसने श्रीकृष्ण को देखकर कहा । "हे देखने मे मनोहर रूप धारण करके पृथ्वी मे अवतीर्ण वैकुण्ठ ! हे दयानिधे ! हे साधु जनो के एकमात्र आधार, हे माधव ! जय ! हे नारायण ! जय ! हे विचार करने पर व्रह्मा द्वारा भी अवेद्य ! वेदान्त के द्वारा ही वेद्य ! हे वेदात्मक ! जय ! हे धीर व्यासजी के

कायाविन्पूविन्निऱमुळ्ळ गोविन्दन्
मायावरन् परन् कारणमानुषन् ४७
मेवुन्ननेरत्तु सौदामिनिपोलें
देवन्मुनीन्द्रप्रभया दिगन्तर ४८
धावळ्यशोभया व्यापिच्चु काणायि
देवनु विष्णुपदत्तिङ्कल्निन्नु की- ४९
ळाविर्भविच्चोरु चन्द्रबिबपोलें ।
देवदेवन् जगदीश्वरन् शाश्वतन् ५०
देवकीनन्दनन् वासुदेवन् विभु
गोविन्दनिन्दीवरेक्षणनच्युतन् ५१
कार्व्वर्ण्णनन्तिके नारदनेक्कण्टु ।
भाविच्चु भक्त्या नमस्करिच्चीटिनान् ५२
वन्दिच्चु निन्नार् सभयिङ्कलुळ्ळोरु ।
नन्दिच्चिरुन्नरुळु मुनिश्रेष्ठनु ५३
नन्दजनिन्द्रादि वृन्दारकवृन्द-
वन्द्यनानन्दन् मुकुन्दनिन्द्रानुजन् ५४
नारायणन्तानु नारदनुं तम्मि-
लोरो विशेषङ्ङळुं पऱञ्ञित्तिरि- ५५
नेरमिरुन्नवाऱे मुनि नारदन्
नेरे पऱञ्ञतु तान् चेन्न कारिय । ५६

मायारहित, मायावर, 'काया' पुष्प के समान नीलवर्ण शरीरवाले, केशव, पर, कारणपुरुष, माधव, गोविन्द जब सभा मे विराजमान थे तब देवर्षि नारद की धवल प्रभा से चारो दिशाएँ व्याप्त हो गयी । मानो देव चन्द्र विष्णु-पद को छोड़कर नीचे उतर आया हो । ४३-४९ देव-देव, जगदीश्वर, शाश्वत, देवकीनन्दन, वासुदेव, विभु, गोविन्द, कमललोचन, अच्युत श्रीकृष्ण ने नारदजी को अपने निकट देखा और बड़ी भक्ति के साथ नमस्कार किया सभी सदस्यो ने भी वन्दना की । मुनिश्रेष्ठ भी प्रसन्न होकर विराजे । नन्द के पुत्र, इन्द्र आदि देवो के वन्द्य, आनन्दमय, मुकुन्द, इन्द्र के अनुज नारायण और नारद ने आपस मे तरह-तरह की बाते करते हुए थोडा समय व्यतीत किया । तत्पश्चात् मुनि नारद ने अपने आने का प्रयोजन बतलाया । ५०-५६ "तुम्हारे भक्तो मे प्रमुख राजाओ के राजा युधिष्ठिर के कहने से मै आज यहाँ आया हूँ । इसका कारण भी

मान काम क्रोध लोभ मोहग्रस्त
मानसन्मारल्लो मानुषजातिकळ् । ७८
दुष्टना मागधनाय जरासन्ध-
निष्टन्मारल्लात राजाक्कळॆयॆल्ला । ७९
कॆट्टियिट्टीटिनान् कारागृहंतन्नि-
लॊट्टुनाळुण्टवरङ्ङनॆ वाळुन्नु । ८०
कष्टमिरुपतिनायिरत्तॆण्णूरु
शिष्टरायुळ्ळ नृपवरन्मारवर् । ८१
नष्टाशनस्नानयानभोगैरति-
क्लिष्टन्माराय् वलञ्ञीटुन्नितॆन्नयुं । ८२
ऎल्लावरुमॊरुमिच्चु निरूपिच्चि-
ट्टुल्लल् कॆटुप्पतिनॆन्नोटु चॊल्लिनार् । ८३
मल्लन्मारोटु करिवरन्तन्नोटुं
कॊल्लुवान् भाविच्च कंसनॆक्कॊन्नवन् ८४
मल्लीशरवीरवाणङ्ङळ्कॊण्टु कॊ-
ण्टल्ललुण्टेटमुळन्नुचमञ्ञोरु ८५
वल्लवमानिनिमारुटॆ सन्ताप-
मॆल्ला कळञ्ञु सुखेन रक्षिच्चवन् । ८६
फुल्लाम्बुजाभिरामाननन् मन्मथ-
तुल्यन् सुकुमारन् सुन्दरविग्रहन् ८७

किरणमण्डल से सुशोभित अपने मुख को, हे दीनो पर दया करनेवाले ! मुझ दीन दास की ओर जरा कर दीजिए । ७१-७७ मनुष्य जाति तो मान, काम, क्रोध, लोभ, मोह मे ग्रस्त मनवाली होती है । मगध के राजा दुष्ट जरासन्ध ने अपने मित्रो के अतिरिक्त राजाओ को बाँधकर कारागृह मे डाल दिया । कुछ समय हो गया है जब से उनकी यह स्थिति है । यह बड़े विषाद की बात है कि ये अत्यन्त शिष्ट बीस हजार आठ सौ राजवर बिना भोजन, स्नान, यान आदि भोगो के बड़े दुःख मे समय व्यतीत कर रहे है । सबने आपस मे सलाह कर के अपने दुःख को दूर करने के लिए मुझसे यो कहा है— ७८-८३ मल्लो और करिवर द्वारा मरवाने का प्रयत्न करने वाले कंस के नाशक, कामदेव के बाणो के लगने से अत्यन्त पीडित हुई गोपियो का सन्ताप दूर करके रक्षा करनेवाले, विकसित कमल के सदृश, मदन के तुल्य, सुकुमार, सुन्दर शरीरवाले,

शूरसुरासुरवन्दितसुन्दर !
वीर ! रमावर ! विश्वभरावरा ! ६८
भूरिधराधराधीशधर ! हरे !
घोरधराभारभूतभूपान्तक ! ६९
क्रूरासुरवर ! शूरात्मज ! प्रभो !
मारशरातुरगोपिकावल्लभ ! ७०
क्षीररत्नाकरवास ! ऋषीकेश !
क्षीररत्नाकरनन्दनावल्लभ ! ७१
सारससंभव मारहर ! मुनि-
श्रेष्ठ विद्याधरचारणसेवित ! ७२
धाराधराभ ! धरापते ! गोपते !
धाराधरवाहनाराधित ! जय ! ७३
चारुतराकृते ! कारुण्यवारिधे !
दारुकसारथे ! नाथा ! यदुपते ! ७४
राधापयोधराधारमायुळ्ळ मा-
ऽाधारमायुळ्ळ सारसमानिनि- ७५
क्काधि तीर्त्तीटुसरुणाधरामृत-
दीधितिमण्डलतुल्यसामानन ७६
दीननायन्वह दासनां मां प्रति
दीनदयानिधे ! चेंट्ङ्ङरुळणं । ७७

वर्णित ! हे शूरपुत्र ! हे चर और अचर के नाथ ! हे चतुर्भुज ! हे शूर देवो और असुरो द्वारा वन्दित ! हे सुन्दर ! हे वीर ! हे लक्ष्मीपते ! हे पृथ्वीपते ! हे अनेक सम्राटो के नाथ ! हे हरि ! हे घोर पृथ्वी के भारभूत राजाओ के नाशक ! हे क्रूर असुरो में श्रेष्ठ ! (?) हे शूरपुत्र ! हे प्रभो ! हे मदन के वाणो से आतुर गोपियो के प्रिय ! ६३-७० हे क्षीरसागर मे निवास करनेवाले ! हे इन्द्रियो का निग्रह करनेवाले ! हे क्षीरसागर की पुत्री (लक्ष्मी) के वल्लभ ! हे सारससभव ! हे मदन का निग्रह करनेवाले ! हे मुनियो मे श्रेष्ठ ! हे विद्याधर और चारणो द्वारा सेवित ! हे घनश्याम ! हे पृथ्वीपते ! हे गोपते ! हे मेघवाहन (इन्द्र) के आराधित ! जय ! हे सुन्दर आकृतिवाले ! हे दयासागर ! हे दारुक नामक सारथिवाले ! हे नाथ ! हे यदुपते ! हे राधा के पयोधर को आश्रय देनेवाले, आपके वक्ष स्थल पर आश्रित लक्ष्मी का खेद मिटानेवाले तथा लाल ओठो के

इप्रकारं परञ्ञीटिन विप्रनो-
टप्पोळ् चिल्पुमानद्भुतविक्रमन् ९९
अप्रमेयप्रभावप्रकाशात्मकन्
कुप्रभुत्वभ्रमप्रौढिविनाशनन् १००
पङ्कजमङ्कनन् कोङ्कत्तटङ्ङळिल्
तङ्ङुन्न कुङ्कुमपङ्कमलङ्करि- १०१
च्चेङ्कल् विळङ्ङुन्न पङ्कजलोचनन्
शङ्कवेटिञ्ञरुळिच्चेय्तानिवण्णं । १०२
हुङ्कृतिपूण्ट जरासन्धनिक्कालं
शृङ्खलकोण्टु तळच्च नृपरुटे- १०३
सङ्कटं तीर्प्पनतिनिल्ल संशयं
शङ्करन्तन्नाणे ! पोयालुमेङ्किलो । १०४
ऎन्ननु केट्टु तॆळिञ्ञवनुं पोयान्
वन्न महामुनि नारदनुं पोयि । १०५
पिन्ने मुकुन्दनानन्दरूपन् नन्द-
नन्दनन् गोविन्दनिन्दुविवाननन् १०६
ऎन्तिनि वेण्टतु मुन्पिल् नामॆन्ततुं
चिन्तिच्चु कल्पिक्क निङ्ङळिनियॆन्नु १०७
मन्त्रिकळोटुरचॆय्तवारे सुर-
मन्त्रिसमनाकुमुद्धवर् चॊल्लिनान् १०८
रण्टॆन्न भावमिल्लात लोकेश ! वै-
कुण्ठ ! ञान् कुण्ठनॆन्नाकिलुं चॊल्लुवन् १०९

दी।९२-९६ अब आप सर्वभूतात्मा और सर्वज्ञ मुझे क्षमा करे। हे शेषनाग पर सोनेवाले ! हे दयानिधे ! इस प्रकार जब ब्राह्मण ने सूचना दी तब चित्पुरुष अद्भुतविक्रम, निस्सीम प्रभाववाले, प्रकाशात्मक, कुप्रभुत्व के कारण होनेवाले घमड के नाशक, लक्ष्मीदेवी के स्तनो पर स्थित कुङ्कुम से सुशोभित, मुझमे विराजमान कमललोचन ने नि.शक होकर यो कहा— घमडी जरासन्ध के द्वारा इस समय जजीर से बांधे गये राजाओं का दु.ख मैं दूर करूँगा, इसमे सदेह नही। आप जा सकते है। ९७-१०४ यह सुनकर ब्राह्मण प्रसन्न हुए और चले गये। तदनन्तर मुकुन्द, आनन्द-रूप, नन्दपुत्र, चन्द्रमुख गोविन्द ने अपने मन्त्रियों से कहा—अब हमको क्या करना चाहिये, यह सोचकर बतलाइए। तब देवगुरु बृहस्पति के समान

कल्याणदेवतयाय पत्मालया-
वल्लभन् नारायणन् मधुसूदनन् ८८
काश्यपीकामुकन् कामारिसेवितन्
शाश्वतन् शखचक्राब्जगदाधर- ८९
नाश्रितन्माक्कुं शरणमाय् मेविनो-
रीश्वरनाकिय कृष्णन् दयानिधि ९०
कारुण्यलेशमिल्लाय्किलितुकाल-
मारु नमुक्कु तुणयिल्ल दैवमे ! ९१
घोरना मागधन् निर्द्दयन् बन्धिच्चु
पारं वलयुन्नितन्वह गोपते ! ९२
इङ्ङने वन्नरकतन्निल् वीणोरु-
ञङ्ङळेयाशु करेटणमे पोटि ! ९३
इङ्ङने ञङ्ङळ् परयुन्नितेन्नतु-
मङ्ङुणर्त्तिक्कयेन्नेन्नोटु चोल्लिनार् । ९४
गर्व कलर्न्न जरासन्धभूपति
दुर्वीर्यकर्म्म पोराञ्ञळल्पूण्टोळु । ९५
उर्व्वीश्वरन्मार् परञ्ञोरुकारणं
निर्वैरमानसनाकयालिङ्ङने ९६
निर्व्रीळनायुणत्तिच्चतेल्लामिनि
सर्व्वभूतात्मकनां निन्तिरुवटि ९७
सर्व्वज्ञनाकयालोक्क क्षमिक्कण
दर्व्वीकरेन्द्रशयन ! दयानिधे ! ९८

कल्याण करनेवाली पद्मालया (लक्ष्मी) के वल्लभ, नारायण, मधुसूदन, पृथिवी के पति, कामदेव के शत्रु (शिव) द्वारा पूजित, शाश्वत, शख, चक्र, कमल और गदा को धारण करनेवाले, आश्रितो को शरण देनेवाले, ईश्वर, कृष्ण ! दयानिधि की दया यदि न होगी तो, हे भगवन् ! हमारी सहायता करनेवाला कोई नही है । ८४-९१ घोर मागध (जरासन्ध) के बाध दिये जाने से हम अत्यन्त दु खित है, हे नाथ ! हे गोपते ! इस प्रकार घोर नरक मे गिरे हुए हमको, जल्दी उठाइए ! उन्होने मुझसे कहा—भगवान् से जाकर कहो कि हम लोग ऐसा कह रहे है । घमडी राजा जरासन्ध के कुवीर्य की करतूत न सह सकने से अति दु खित अन्य राजाओ के कहने से वैररहित मैने इस प्रकार नि.सकोच सूचना

कर्म्मणामाधारभूतनां निर्म्मलन्
कल्मषनाशनन् प्रीतिपूण्टीटिनान् । १२०
अल्ललु तीर्न्नवरेल्लावरुं कूटि
सल्लापवुं चैय्तिरिक्कुन्ननेरत्तु । १२१
मल्लारियोटुणर्त्तिच्चु युधिष्ठिरन्
कल्याणशीलन् कळल् तोळुतादराल् । १२२
दुर्ल्लभ्यमाय विपयङ्ङळिल् मन-
स्सेल्लावनुं चेल्लुमल्लो दयानिधे । १२३
निर्ल्लज्जनाय ञान् चोल्लुन्न कारिय
वल्लाय्कयाकिल् क्षमिच्चुकोळ्ळेणमे । १२४
राजत्वमुण्टेनिक्केन्न मौढचकोण्टु
राजसूय चेय्कयल्लयल्लीयेन्नो- १२५
राशयेनिक्कुमुण्टुळ्ळिलुण्टाकुन्नु
केशव ! कृष्ण ! कृपालय ! दैवमे ! १२६
निन् कृपयेङ्कलुण्टेङ्किलेनिक्कोरु
सङ्कटमायुळ्ळ वङ्कटल्तङ्करे १२७
शङ्ककूटाते करेरामहो ! तव
किङ्करनाकयाल् सौख्यपद मम १२८
कण्टुवसिक्कामतिल्लयेन्नाकिलो
कुण्टिल् वीणेवयु कुण्ठनायीट्टु ञान् । १२९

साथ, वड़े प्रमोद (प्रसन्नता) के साथ उनका स्वागत किया। १११-११९ तब कर्मो के एक ही आधार, निर्मल और पापो के नाशक श्रीकृष्ण वड़े प्रसन्न हुए। जव निश्चिन्त होकर सव एक साथ वैठकर वातचीत कर रहे थे तव कल्याणशील युधिष्ठिर ने मल्ल के शत्रु (श्रीकृष्ण) के चरणो की सादर वन्दना करके कहा—हे दयानिधे ! यह स्वाभाविक है कि सभी का मन दुर्लभ वस्तुओ की ओर झुके। जो कार्य मै निर्लज्ज भाव से कहनेवाला हूँ अगर वह असाध्य है तो क्षमा करना। "मै राजा हूँ" इस मूढ भावना के कारण, हे केशव ! हे कृष्ण ! हे कृपालय ! हे भगवन् ! मेरी यह इच्छा हो रही है कि मै एक राजसूय याग करूँ। १२०-१२६ मुझ पर आपकी कृपा है तो मै विना किसी शङ्का के दुर्गम महासागर के तट तक पहुँच जाऊँगा क्योकि मै आपका सेवक हूँ। मै अपना सुख प्राप्त कर सकूँ। यदि आपकी कृपा नही है तो मै गर्त

रण्टुमोन्नायित्तटुक्कामितिन्निप्पो-
ळुण्टोरुपायवु कण्टिट्टतु चोल्लां । ११०
राजसूयत्तिनु दिग्जय चेय्युम्पोळ्
राजप्रवरनायुळ्ळ जरासन्धन् १११
राजीवनेत्र ! पुरैव नम्मोटेट्टो-
राजियिल् तोटान् पलवट्टमाकयाल् ११२
ॲन्नु तिरु कोंटुत्तीटुकयिल्लिप्पोळ्
कोन्निट्टु याग कळिक्कॆन्नतु वरुं । ११३
नन्नितु तोन्नियतङ्ङनेतन्नेये-
न्निन्दिरावल्लभनुतानुमरुळ्चेय्तु । ११४
इन्द्रादिवृन्दारकवृन्दवन्द्यना-
मिन्द्रावरजनिन्दीवरलोचनन् । ११५
इन्दुकुलोत्भवनिन्दुबिबाननन्
नन्दजन् सुन्दरन् देवकीनन्दनन् । ११६
नान्दकपाणि सनन्दादिवन्दितन्
दन्दशूकेन्द्रशयननरविन्द- । ११७
मन्दिरकन्दर्प्पवैरिमुखनतन्
इन्द्रात्मजप्रियनिन्द्रप्रस्थ पुक्कान् । ११८
धर्म्मजन्मावुमवरजन्मारुमाय्
सम्मोदमुळ्ळक्कोण्टेतिरेट्टु वन्दिच्चान् । ११९

उद्धवजी ने निवेदन किया—हे द्वैतभाव से रहित लोकेश ! वैकुण्ठ ! मै मन्दमति हूँ, फिर भी कहूँगा। हम दोनो को एक साथ रोक सकेंगे, इसका एक उपाय मैंने सोचा है, उसे वतला दूँगा। १०५-११० हे कमल-लोचन ! राजसूय के लिए दिग्विजय करने के अवसर पर यह राजप्रवर जरासन्ध, जो पहले कई वार हम लोगो से युद्ध मे हार चुका है, कभी कर नही देगा। इसलिए उसका वध करके ही याग करना पडेगा। इन्दिरा-वल्लभ (विष्णु, कृष्ण) ने कहा—यह आपको अच्छा सूझा। ऐसा ही हो ! तव इन्द्र आदि देवगण द्वारा वन्दनीय, इन्द्र के अनुज, कमल-लोचन, चन्द्रवशोद्भव, चन्द्रमुख, नन्दपुत्र, सुन्दर, देवकीपुत्र, हाथ मे नन्दक खड्ग धारण करनेवाले, सनन्द आदि के वन्दनीय, शेषनाग पर शयन करनेवाले, ब्रह्मा, शिव आदि के वन्दनीय और इन्द्रपुत्र (अर्जुन) के प्रिय श्रीकृष्ण ने इन्द्रप्रस्थ मे प्रवेश किया। युधिष्ठिर ने, अपने अनुजी के

नारिमारुमुण्टिरुवरवर्कळ्क्कु
नेरे पकुत्तु कौंटुत्तितु भूपनु । ४
पप्पातियायुळ्ळ देहवुमोरोरो
दुष्प्रज पेटारिरुवरुमप्पोळ् । ५
कौण्टप्पुरत्तु कळञ्ञतिनेञ्जर-
कण्टङ्ङेटुत्तिट्टु सन्धिच्चनेरत्तु । ६
रण्टुमोरुमिच्चुकूटीततुकण्टु
मण्टी जरया पिशाचि कुमारनु ७
अन्नु जरासन्धनेन्नु पेरुण्टायि-
तिन्नुळ्ळ मन्नरिल् मुन्पनवनल्लो । ८
मुष्करनेन्नोटु पोर्क्किरुपत्तिमू-
न्नक्षौहिणिप्पटयोटुमोरुमिच्चु । ९
वन्नान् पतिनेळुवट्टमतिन्नु ञान्
वन्न पटयोक्कवक्कोन्नयच्चीटिनेन् । १०
अङ्ङनेयुळ्ळोरु वैरमुण्टेन्नोटु
निङ्ङळ्क्कुमेन्नु तिर तरिकिल्लवन् । ११
कोन्नु कळञ्ञु याग कळिक्केन्नते
वन्नुकूटूवतिनर्ज्जुननु ञानु । १२
भीमनुमायिट्टु पोकण वैकाते
भूमीपते ! विट नल्कीटुकेन्नप्पोळ् । १३

पुत्र-रत्न पैदा होगा, उसे मागध को दे दिया। राजा की दो पत्नियाँ थी। इसलिए उसके ठीक दो विभाग करके उनको दे दिये गये। तब दोनो पत्नियो ने आधी-आधी देहवाले एक एक विकृत सन्तान को जन्म दिया।१-५ पत्नियो ने उनको वाहर फेक दिया। तब जरा नाम की पिशाची ने उन अद्धो को जोड दिया। दोनो एक हो गये। यह देखकर जरा भाग गयी। उस कुमार का जरासन्ध नाम हुआ। आज के राजाओ मे सबसे शक्तिशाली वही है। वह घमण्डी तेईस अक्षौहिणी सेना के साथ मेरे साथ लडने आया था। मैंने सत्तरह वार उन सेनाओ को नष्ट करके भगा दिया। उसका मेरे साथ इतना वैर है। वह आप लोगो को कभी कर नही देगा। उसका वध करने के वाद ही याग करना चाहिये। अतएव आवश्यक है कि अर्जुन, भीम और मैं जल्दी चले। हे भूपाल हम लोगो को आज्ञा दीजिये। ६-१३ यह सुनकर

पुण्डरीकोत्भवनादिकळ्क्कुं नील-
कण्ठनुमाधारमल्लो भवल्पद । १३०
कुन्तीसुतनितु चोन्नतु केट्टोरु
चेन्तामराक्षन् चिरिच्चरुळिच्चेय्तु । १३१
ऒन्तिनु सन्तापमुळ्ळिलुण्टाकुन्नु
पिन्नुतुणयुण्टु ञानन्तणरुमुण्टु १३२
राजशिखामणियायुळ्ळ नीयिप्पोळ्
राजसूय चेय्वानेतु मटिक्केण्ट । १३३
व्याजमोळिञ्ञु वेण्टुन्न कर्म्मङ्ङळ्क्कु
राजप्रवररटिमप्पणिचेय्यु । १३४
ऒन्ने विषममायुळ्ळु नमुक्कतु-
मिन्नतेन्नन्पोटु चोल्लुवन् ञानेटो । १३५

जरासन्धवधं

पण्टु भृगुमुनियेच्चेन्नु मागधन्
कण्टु सेविच्चितु सन्ततियुण्टावान् । १
अम्मुनितन्मटितन्निलप्पोळ् देव-
निर्म्मितमायोरु मान्पळवुं वीणु । २
पत्निक्कितु कोटुत्तीटुकेन्नाल्
पुत्ररत्नमुण्टामेन्नु नल्कि महामुनि । ३

मे गिर कर विपण्ण होजाऊँगा। आपके चरण ही ब्रह्मा आदि देवो के और नीलकण्ठ (शिव) के आश्रयदाता है। कुन्तीपुत्र (युधिष्ठिर) का यह कहना सुनकर कमलाक्ष (श्रीकृष्ण) हँसे और बोले—१२७-१३१ तुम्हारे मन मे सन्ताप क्यो होता है ? मै और ब्राह्मण लोग तुम्हारे सहायक है। राजाओ के शिखामणि आप अब बिना सकोच के राजसूय अवश्य कीजिये। और जो भूपाल है वे अपेक्षित कर्मो मे बिना कपट के आपकी सेवा करेगे। हमारा एक ही प्रतिबन्ध होगा। वह क्या है यह भी मैं प्रेम के साथ कहूँगा। १३२-१३५

जरासन्ध का वध

पूर्वकाल मे मगध के राजा ने सन्तानोत्पत्ति के हेतु भृगु मुनि की सेवा की। तब उन मुनि के गोद मे देवो का निर्मित एक आम गिर पड़ा। महामुनि ने, यह कहकर कि इसे अपनी पत्नी को दो तो तुम्हारे एक

इन्न निलत्तुनिन्नॆन्नतुमिन्नना-
ळॆन्नतुमोन्नुमे तोन्नुन्नतुमिल्ल २४
अक्कथ केट्टरुळ्चॆय्तितु कृष्णनु-
मोक्कुमोक्कुमतिनुण्टवकाशवु । २५
पण्टु मधुरय्क्कु कृष्णनोटु पट
कॊण्टु चॆन्नोरुनाळ् मण्टुन्ननेरत्तु । २६
कण्टुनिल्क्कुन्नितु ञानुमॆन्नाकिला
कण्टीट्टुवानवकाशं धरापते । २७
ऎन्नतुकेट्टु चॊन्नान् जरासन्धनु-
मन्नु मम बल कण्टतल्ली भवान् ? २८
वीररे मण्टिच्चुपोरुन्न कृष्णनु
पाराते पाञ्ञुकळञ्ञतु कण्टीले ? २९
कण्टेनटुत्तङ्ङेतिर्त्तोरुनेरत्तु
कॊण्टल्नेर्व्वण्णनुं नीयुमोटुन्नतुं । ३०
ओटिच्चतारन्नुमोटियतारॆन्नु-
मूटे तिरिच्चुपोन्नेतु तिरिञ्ञील । ३१
सशयमुण्टु भवानुळ्ळिलॆङ्किलो
संशय तीर्क्कामिन्नुण्टायतु केळ्क्क । ३२
केळ्विकलु केळाय्किलुमिनिक्किन्नियु
पोर्क्कळत्तिङ्कले सशय वेण्टा । ३३

को ध्यान से देखकर मागध (जरासन्ध) को शंका हुई और वह बोला— "तुम्हारा चेहरा देखकर मुझे लगता है कि मैने तुम्हे पहले कही देखा था। परन्तु कहाँ देखा था और किस दिन देखा था यह मुझे बिल्कुल ही नही याद आता है।" यह सुनकर कृष्ण ने कहा—"ठीक है और कारण भी है कि आपको ऐसा लगता है। पहले एक दिन आप सेना के साथ कृष्ण का सामना करने के लिए मथुरा गये। २०-२६ जब आप भाग रहे थे तब मैं खड़ा सब देख रहा था। यही अवसर होगा जब आपने मुझे देखा था।" यह सुनकर जरासन्ध ने कहा, "उस दिन आपने मेरा बल नही देखा था ? जो कृष्ण वीरो को भगाता है वही उस दिन जल्दी भाग गया, देखा नही ? जब निकट से युद्ध हुआ तब मैने मेघवर्ण को और तुझको भागते देखा। लौटकर यह भी न मालूम किया कि किसने भगाया और कौन भागा।" (मागध ने फिर कहा) "अगर आपको इस विषय मे

धर्म्मजनुं विट नल्किनान् वैकातॆ
विप्रायुन्मदमोटवरेवरुं १४
नन्मतिलुमेरि वन्मरवुं तक-
र्त्तुं विळिच्चु कळिच्चु पुळच्चुचॆ-
न्नम्मागधन्टॆ नगरमकं पुक्कार् १५
अर्घ्यपाद्यादिकळ्कॊण्टवर् तङ्ङळे-
स्सल्क्कारवुचॆय्तु चोदिच्चु मन्नवन् । १६
उळ्ळिलहङ्कारमुळ्ळारणर् निङ्ङ-
ळुळ्ळवण्ण परञ्ञीटुविनॆन्नप्पोळ् । १७
माधवन् मन्दस्मितं चॆय्तु चॊल्लिना-
न्मागधनाय जरासन्धभूपते ! १८
चॊल्लियतॆल्ला कॊटुक्कुपोलन्तण-
र्क्किल्ल विकल्पमॆन्नॆल्लारुं चॊल्लुन्नु । १९
तळ्ळलुण्टायतुमुळ्ळलतुतन्नॆ
कळ्ळमॊळिञ्ञतु मुन्पे परयण । २०
चॊल्लुविन् वाञ्छितं नल्कुवन् निङ्ङळुं
चॊल्लणमारॆन्नु नेरे मटियातॆ । २१
पिन्नॆयु कृष्णनॆस्सूक्षिच्चु मागधन्
चॊन्नान् तनिक्कॊरु शङ्क मुळुक्कयाल् । २२
पण्टॊरेटत्तिन्नु कण्टवारुण्टॆन्न-
तुन्टु तव मुखं कण्टु तोन्नुन्नतुं । २३

युधिष्ठिर ने तुरन्त ही आज्ञा दी। तब ब्राह्मणो का वेष धारण करके तीनो निकले। बडे-बडे प्राकारो को लाँघते हुए, बड़े पेड़ो को नष्ट करते हुए, सिंहनाद करते हुए, खेलते हुए और गर्व दिखलाते हुए वे मागध (जरासन्ध) के नगर मे पहुँचे। तब राजा ने उनका अर्घ्य पाद्य आदि से सत्कार करके पूँछा। आप लोग भीतर अहङ्कार रखनेवाले ब्राह्मण है। आप क्या चाहते है? सच कहिए। तब श्रीकृष्ण मुस्कराकर बोले, हे मगध के राजा जरासन्ध! ब्राह्मण जो कुछ भी माँगे आप तुरन्त दे देते है, इसमे कोई सन्देह नही, सब लोग यही कहते है। १४-१९ इसी कारण हम लोग भी भीतर से प्रेरित हुए। बिना कपट के पहले ही कह दीजिए। (राजा ने कहा) अपनी इच्छा बतलाइए। मै दे दूँगा। आप लोग कौन है यह भी बिना छिपाये बतलाइए। फिर कृष्ण

ऍन्नोटो फल्गुननोटो वृकोदरन्
तन्नोटो युद्ध तुटङ्ङुन्नु नीयिप्पोळ् ? ४४
एव जगन्मयभाषित केट्टुटन्
भावं पकर्न्नु पऱञ्ञितु मागधन् । ४५
गोपन् भवान् जिष्णु कोमळनॆन्नुटॆ
कोप पॊऱुप्पान् वृकोदरनाकिला । ४६
ऍन्नु पऱञ्ञोरु मन्नवन् मागधन्
चॆन्नुटनायुधशालयक पुक्कान् । ४७
रण्टु गदकळॆटुत्तुकॊण्टुवन्नु
रण्टिलु वेण्टतॆटुत्तुकॊळ् भीम ! नी । ४८
ऍन्नवन् चॊन्नप्पोळ् माधवन् भीमनॆ
चॆन्नालुमॆन्नोन्नु तट्टि करं कॊण्टु । ४९
पिन्नॆयुण्टाय विशेप पऱवति-
नॆन्नाल् पणि पणि चित्तं निरूपिच्चाल् । ५०
वट्टत्तिल्निन्नु पॆरुमाऱियु गद-
तट्टियु तङ्ङळिल् दृष्टि पऴियातॆ । ५१
तप्पान् पळुतुकळ् नोक्कियुमॆत्रयु
कॆल्प्पुकलन्नॆवरत्भुतमावण्ण । ५२
मुप्पुरवैरियुमन्तकनु पण्टु
मुप्पार् नटुङ्ङुमाऱुण्टाय पोर्पोलॆ । ५३

राजवीरो में श्रेष्ठ ! उसी युद्ध पर हम लोगो का वड़ा मोह हो गया है। किसके साथ तुम युद्ध प्रारम्भ करोगे, मुझसे, फल्गुन (अर्जुन) से या वृकोदर (भीम) के साथ ?" जगन्मय (कृष्ण) की यह वात सुनकर मागध ने भावावेश मे आकर कहा। आप केवल एक गोप हे, अर्जुन तो कोमल शरीरवाला है, भीम ही एक हैं जो हमारा क्रोध सह सकते है। ४०-४६ यह कहकर राजा मागध ने तुरन्त ही अपनी आयुधशाला मे प्रवेश किया। वहाँ से दो गदाएँ लाकर भीम से कहा—'इनमें से जो तुम्हे पसन्द है, ले लो"। यह कहकर मागध ने भीम को हाथ से थपथपाते हुए कहा—"अच्छा फिर चलो"। उसके वाद जो हुआ है उसका वर्णन करना अत्यन्त कठिन काम है। सोचने पर अद्भुत प्रतीत होता है। उन दोनो का कभी चक्राकार घूमना, उनकी गदाओ का टक्कर खाना, उनका अपने को न देखकर दूसरे की गलतियाँ पकड़ना, उन दोनो का

निल्क्कतेल्लामवकाशं वरुन्नना-
ळोक्कवे तीरु परविनारेन्नतु । ३४
अङ्ङळपेक्षिच्चतु तरामेन्नतु-
मिङ्ङोट्टीरु सत्यं चेय्तुतरुन्नाकिल् । ३५
अङ्ङळु सत्यं परयुन्नतुण्टेन्नु
मंगलदेवताकामुकनु चोन्नान् । ३६
जीवनेत्तन्ने तरेणमिनिक्कोन्नु
पावननायोरु भूसुरन् चोल्लुकिल् । ३७
एतु मटियाते आन् कोटुत्तीटुवन्
भूतेश्वरनाय शङ्करन् तन्नाणे । ३८
सत्यमितेन्नाशु केट्टवारे पुरु-
षोत्तमनाकिय कृष्णनु चोल्लिनान् । ३९
नेरे परया परमार्त्थमेङ्किलो
पोरिल् पतिनेळुरु निन्नेत्तोल्पिच्च । ४०
कृष्णनहमय जिष्णु शक्रात्मजन्
जिष्णुतन्नग्रजन् भीमनिवनेटो । ४१
मन्नवनाकिय धर्म्मजन् चोल्कयाल्
निन्नोटु युद्धमपेक्षिच्चु वन्नितु । ४२
देहि युद्धं नृपवीरशिखामणे ।
मोहमतिङ्कल् अङ्ङळ्क्केतयु पारं । ४३

सन्देह हो तो मै उसे दूर करूँगा। उस दिन का किस्सा सुनिये।" २७-३२ मै सुनूँ या न सुनूँ। इस विपय मे सन्देह तो रणक्षेत्र मे ही दूर हो सकता है (ऐसा कृष्ण ने कहा)। अच्छा फिर ठहरिये। "अवसर आने पर सब स्पष्ट हो जायगा। अव कहिये आप लोग कौन है ?" तव मगल देवता (लक्ष्मी) के वल्लभ (कृष्ण) ने कहा—"अगर आप प्रतिज्ञा करेगे कि जो कुछ भी हम माँगे आप देगे तो हम भी सच्ची वात कहेगे।" (तब मागध वोले) "अगर एक पावन ब्राह्मण हमारे प्राण ही को माँग वैठे तो मै तुरन्त ही देदूँगा, भूतेश्वर शकर की कसम !" ऐसा सुनकर पुरुपोत्तम कृष्ण ने निवेदन किया। ३३-३९ "अच्छा तो मै सीधी वात कहूँगा। मैं वही कृष्ण हूँ जिसने तुम्हे सत्तरह वार युद्ध मे हराया था, यह इन्द्रपुत्र अर्जुन है और उसका वडा भाई भीम यह विराज रहे है। राजा युधिष्ठिर की आज्ञा से हम लोग तुमसे युद्ध माँगने आये है। हमको युद्ध दे दो, हे

निल्लेंटा निल्लुनिल्लेन्नङ्ङुरय्क्कयुं
तल्लु वरक्कण्टु तुळ्ळिप्पतिक्कयु । ६४
वल्लभ कैक्कोंण्टु वेगालोंळिक्कयु
चौंल्लिक्कोंण्टन्योन्यमाशु ताडिक्कयुं । ६५
इङ्ङने चेन्नू पतिनञ्चु नाळ्प्पोळ्
अेङ्ङने वन्नु आयमेन्नु सशय । ६६
अर्ज्जुननुण्टायितुळ्ळलतुनेर-
मच्युतनोटु चोदिच्चरुळीटिनान् । ६७
कोंण्टल्नेर्व्वर्ण्णनुपदेशवु चौंन्नान्
रण्टाय् पौंळिच्चु मरिच्चिट्टुवानप्पोळ् । ६८
पच्चिल कीरि मरिञ्चिट्टानर्ज्जुनन्
विच्चयाय् मारुति मागधन्तन्नेयु । ६९
तच्चुनिलत्तु पतिप्पिच्चोरु पद
निश्चलमाकच्चवुट्टिनिन्नप्पोंळे । ७०
मटेच्चरण पिटिच्चङ्ङुयर्त्तीट्टु
पेंट्टेन्नु चीन्तिनान् मारुतपुत्रनु । ७१
क्षुत्तुकोंण्टेट्टवु मत्तनाय् मेवुन्न
हस्तिवरन् पन चीन्तुन्नतुपोले । ७२
क्रुद्धतयोटतिशक्तना भीमनु
मृत्युपुरत्तिनयच्चानवनेयुं । ७३

के छिद्रो पर मारते, कभी आयुधो की नोक से बचते, कभी ताल बजाकर पुकारते। उनको कभी थकावट हो जाती, कभी पसीना आजाता। वे कभी, दौड़ते हुए लड़ते, कभी 'ठहरो' 'ठहरो' ऐसा चिल्लाते, कभी आघात को आता देखकर बचने के लिए कूदते, कभी वल्लभ (एक प्रकार का आयुध) लेकर रोकते और कभी आपस मे बोलते हुए मारते जाते थे। इस प्रकार पन्द्रह दिन बीत गये। अन्त मे बोध कैसे हुआ, यह कहना कठिन है। ६०-६६ अर्जुन को एक बात सूझी, जिसे उन्होने कृष्ण से पूँछा। उस पर मेघवर्ण (कृष्ण) ने उपदेश दिया कि जरासन्ध को फाड-कर फेक दिया। तब भीम ने (कुशलता के साथ) मागध को मारकर नीचे गिराया और उसके एक पाँव को अपने पैर से दबाकर निश्चल करके दूसरे पाँव को पकड़कर उठाया और झट से फाड डाला जैसे कि एक घायल और पीड़ित हाथी तालवृक्ष को फाड़ डालता है। इस प्रकार

भीमनु भीमनाकुं जरासन्धनुं
भूमि कुलुङ्ङुमारोत्ति वीळुन्नतुं । ५४
नीङ्ङिक्कळकयुं वाङ्ङिच्चुरुङ्ङियुं
तूङ्ङियटुक्कयु नीङ्ङातॆ निल्क्कयु । ५५
चालनापातनोत्थापनभ्रामण-
चालनालोकनालेपनाद्यङ्ङळां ५६
ओरो तोळिलुकळ् काट्टुन्ननेरत्तु
वीररायुळ्ळवर् कण्णु कुळुर्क्कुन्नू । ५७
वारिजलोचननु विजयन् मुख-
वारिजं पार्त्तुकोण्टाटिच्चिरिक्कुन्नु । ५८
मुष्करमाय गदकळ् तम्मिल्क्कोण्टु
पुष्करं पोट्टुमारुळ्ळोरु शब्दवुं । ५९
सिहवुमानयुमेट कणक्किनॆ
सिंहनादङ्ङळुं चेय्तुचेय्तङ्ङनॆ । ६०
पारमटिक्कयु चोरयोलिक्कयुं
वीरर्तोळिल् कण्टु कण्णु कुळुर्क्कयु । ६१
कूटक्कोटुक्कयुं मूटित्तटुक्कयु
चाटिक्कळिक्कयु केटिल्प्पळिक्कयु । ६२
कोटियोळिक्कयुं माटिविळिक्कयुं
वाटिवियवर्कयुमोटिक्कळिक्कयुं । ६३

बड़ी शक्ति के साथ ऐसा लडना जैसा पहले त्रिपुरारि (शिव) और यमराज तीनो लोको को हिलाते हुए लड़े थे, ४७-५३ भीम और भयकर जरासन्ध का पृथिवी को कँपाते हुए साय गिरना, कभी एक दूसरे से हटना, कभी झुकना, कभी आगे को झुककर पास जाना, कभी एक ही स्थान पर डट जाना, चालन, आपातन, उत्थापन, भ्रामण, पालन, आलोकन, आलेपन आदि तरह-तरह की चाल दिखलाते समय वीर प्रेक्षको की आँखो को वडा आनन्द प्राप्त हुआ। कमलाक्ष (श्रीकृष्ण) तो अर्जुन का कमलमुख देखते हुए हँसते रहे। जव उनकी वड़ी गदाएँ टक्कर खाती तो वायुमण्डल को तोडने-योग्य शव्द होता। ५४-५९ सिह और हाथी के युद्ध के समान सिहनाद होते रहे। लोहे के आयुधो का प्रयोग, वहुत रक्तपात, ऐसे वीरकार्यो को देखकर प्रेक्षको को नयनानन्द प्राप्त हुआ। इनके लगातार परस्पर आघात होते रहे और इनसे वचते भी रहे। वे कभी कूदते, कभी शत्रु

मिन्दिरावासवक्षःस्थल ! सन्ततं ।
इन्दीवरेक्षण ! वन्दामहे वय- ८४
मिन्दिन्दिराळका ! वृन्दारकमुनि-
वृन्दनिषेवित ! चन्द्रकुलोत्भव- ८५
च्छन्दस्स्वरूप ! सततमरविन्द-
मन्दिरावन्द्य ! जय परमानन्द ! ८६
वन्दारुवृन्दमन्दारतरो ! जय !
वृन्दावनवास ! वल्लवसुन्दरी- ८७
कन्दर्प्पविष्टपकुन्द ! जय जय !
विन्दुनादात्मक ! कृष्णा जय जय ! ८८
मुट्टु निनक्कोंळिञ्ञङ्ङने केवलं ।
मट्टोरुवक्कुमिल्लाश्रितवात्सल्यं ८९
तामसमाय गुणोत्भवमायुळ्ळ ।
काममोहक्रोधलोभमानादियु ९०
भूमिपालभूमाहकारभाववु ।
कामिनिमारिलुळ्ळोरहङ्कारवुं ९१
माधव ! त्वन्महामायतन् वैभव ।
बाधिक्करुतिनि अङ्ङळे दैवमे ! ९२
जन्मनि जन्मनि निन्पादपङ्कजं ।
ब्रह्मादिसेवितं सेविच्चुकोंळ्ळुवान् ९३

गोविन्द ! हे कमलाक्ष ! हे नन्दनपुत्र ! हे अरविन्द के अभ्यन्तर (भीतरी भाग) के समान सुन्दर ! हे सर्पराज पर सोनेवाले ! तुम्हारी जय हो ! हे शिवजी के प्रिय ! हे लक्ष्मी के अपने वक्ष स्थल पर धारणकरनेवाले ! हम आपके पादपद्म की वन्दना करते है। हे कमललोचन ! हम वन्दना करते है। हे भँवर के समान केशवाले ! हे देवगण और मुनियो के वन्दित ! हे चन्द्रकुलोद्भव ! हे छन्द स्वरूप ! हे निरन्तर अरविन्द-मन्दिरा (लक्ष्मी) के वन्द्य ! हे परमानन्द ! तुम्हारी जय हो ! हे स्तुति करनेवाले भक्तो के मन्दारवृक्ष ! जय ! हे वृन्दावन के रहनेवाले ! गोपियो के मदनस्वर्ग के कन्द ! जय जय ! हे विन्दुनादात्मक ! हे कृष्ण जय ! जय ! सभी देवताओ मे आपको छोड़कर और किसी का आश्रितो के प्रति इतना वात्सल्य नही है। ८१-८९ तमोगुण से उत्पन्न काम, मोह, क्रोध, लोभ, मान आदि और राजाओ का वड़ा अहकार और कामिनियो

दुष्टन् पिटिच्चु कॆट्टीटुन्न मन्नरॆ
पॆट्टॆन्नळिच्चुविट्टीटिनान् कृष्णनु । ७४
नारायणा जय ! नाथा हरे जय !
नारदसेवित नारकनाशन ! ७५
नारीजनमनोमोहन ! माधव !
पारेळुरण्टिनु कारणने ! जय ! ७६
दामोदरा ! जय ! पीताम्बर ! जय !
नामसहस्रमियन्नवने ! जय ! ७७
रामा ! रमारमण ! त्रिलोकीशा-
त्माराम ! लोकाभिराम ! त्रिदशेश्वर ! ७८
विष्णो ! जय जय ! विश्वंभरापते !
वृष्णिकुलाधिप ! कसान्तका ! जय ! ७९
विष्णुमुखामरसञ्चयवन्दित !
जिष्णुवयस्य ! मुकुन्द ! जय जय ! ८०
कुन्दप्रसूनमन्दस्मितास्य ! मुचु-
कुन्दनृपाधिपवन्दितपादार- ८१
विन्द ! गोविन्दारविन्दविलोचन !
नन्दसुतारविन्दोदरसुन्दर ! ८२
दन्दशूकेन्द्रशयन ! जयजय !
इन्दुचूडप्रिय ! वन्दामहेपद- ८३

अत्यन्त क्रुद्ध होकर शक्तिशाली भीम ने जरासन्ध को यमपुरी भेज दिया। ६७-७३ और कृष्ण ने तुरन्त ही उन राजाओ को मुक्त कर दिया जिनको उस दुष्ट ने बाँध दिया था। हे नारायण ! हे नाथ ! हे हरि तुम्हारी जय हो ! हे नारद द्वारा सेवित! हे नरक को नष्ट करनेवाले ! हे नारियो के मन के मोहन! हे माधव! हे चौदहो लोको के कारण! तुम्हारी जय हो! हे दामोदर! हे पीताम्बर! तुम्हारी जय हो ! हे हजार नाम रखने वाले ! जय ! हे राम ! हे रमारमण ! हे त्रिलोकीश ! हे आत्माराम ! हे लोकाभिराम ! हे देवो के ईश्वर ! हे विष्णो ! हे पृथिवीपते ! जय जय ! हे वृष्णिकुल के नाथ ! हे कस के नाशक ! तुम्हारी जय हो ! हे विष्णु आदि देवगण द्वारा वन्दित ! हे अर्जुन के मित्र ! हे मुकुन्द ! तुम्हारी जय हो ! ७४-८० हे कुन्दपुष्प के समान मन्दस्मित (मुसकान) वाले ! हे मुचुकुन्द राजवर द्वारा वन्दित चरणवाले ! हे

अभ्यंगस्नानादि वस्त्राभरणङ्ङळ्
पिलपाटु मृष्टाशन कळिच्चादराल् । १०४
यात्रयु चौलिल मुकुन्दनेयु नन्नाय्
वाळ्त्ति वणङ्ङि स्तुतिच्चवरं पोयार् । १०५

दिग्जयं

मागधन्तन्नेयु कौन्नु जयत्तोटे
माधवन्मार् वन्नु मन्ननेयु कण्टार् । १
दिक्कुकळ् नालिलुमोरोरनुजन्मा-
रुग्रमायुळ्ळ पटयोटे पोकणं । २
मक्कळु मट्टुळ्ळ वन्धुक्कळुमायि
मुख्यवलेन वरुन्नतुमुण्टु आन् । ३
इत्थमरुळ्चेय्तु मुग्धविलोचनन्
नित्यन् निरामयन् निर्म्मलनीश्वरन् ४
दुग्धांवुराशितिरुमकळ्वल्लभन्
भक्तप्रियन् पद्मनाभनेळुन्नळ्ळि । ५
पार्त्थनुमुत्तरदिक्कु जयिप्पति-
न्नार्त्तु नालगवलेन पुरप्पेट्टान् । ६
मेरुमहामलयोळवु चेन्नवन्
नेरे पौरुतु जयिच्चु तिरु कौण्टान् । ७

मे अभिषेक भी किया । उसने पहले अपने पिता के द्वारा निरुद्ध राजाओ का सत्कार किया । वे भी अभ्यङ्ग स्नान (तेल लगाकर स्नान) करके वस्त्र और आभूषण पहनकर फिर यथेष्ट भोजन करके बड़ी प्रसन्नता के साथ चले गये । १०१-१०५

दिग्विजय

मागध (जरासन्ध) का वध करके विजय के साथ माधव आदिको ने राजा का दर्शन किया । "आप का एक-एक भाई उग्र सेना के साथ एक-एक दिशा को चला जाय । मै भी अपने पुत्रो और अन्य वन्धुओ के साथ एक वडी सेना के साथ आऊँगा ।" ऐसा कहकर मुग्धविलोचन, नित्य, निरामय, निर्मल, ईश्वर, क्षीरसागर की पूज्य पुत्री के वल्लभ, भक्त-प्रिय पद्मनाभ (कृष्ण) सिधारे । अर्जुन भी उत्तर दिशा को जीतने के

कल्मषनाशन ! निन्नुटे कारुण्यं ।
नम्मॆक्कुण्टाकणमिन्निनियुं ९४
दुःखसुखादिकळॊक्ककक्कळञ्जिनि
तृक्कालिणयोटु चेर्त्तुकॊळ्ळेणमे ! ९५
इङ्ङने कूप्पि स्तुतिच्चु तॆळिञ्ञवर्
तिङ्ङिन भक्त्या नमस्करिक्कुनेरं । ९६
मंगलदेवतावल्लभन् चॊल्लिनान्
निङ्ङळिनियङ्ङु वैकाते पोयालु । ९७
तङ्ङळ्तङ्ङळ्क्कुळ्ळ राज्यमकपुक्कु
मंगलत्तोटे वसिच्चालुमेवरु । ९८
अङ्ङने नालञ्चुनाळ् कळिञ्ञालुप्पिन्नॆ
मङ्डात वन्पटयोटु वन्नीटण । ९९
उत्तमनाय धर्म्मात्मजन्तन्नुटे
सत्रत्तिनाशु कोप्पिट्टु वन्नीटुविन् । १००
इत्थं नियोगिच्चु मागधन्तन्नुटे
पुत्रनायोरु सहदेवनॆक्कॊण्टु १०१
पित्रार्थमाय शेषक्रिय चॆय्यिच्चु
पृथ्वीपतियायभिषेकवु चॆय्तु । १०२
मुन्नजनकनिरुद्धन्मारायोरु
मन्नवन्मारॆयु सत्ककरिच्चीटिनान् । १०३

का अहकार यह सब, हे माधव ! तुम्हारी माया का वैभव है। और यह अब हमारी बाधा न करे ! हे पापनाशन ! हम लोगो के प्रति सदैव तुम्हारी दया हो ताकि हम हरएक जन्म मे तुम्हारे ब्रह्मादिसेवित पादपकज की सेवा कर सके। ९०-९४ हमारे दुःख सुख आदि को दूर करके हमे अपने पूज्य पादपद्मो मे लीन होने दीजिए। इस प्रकार वे हाथ जोडकर स्तुति करके प्रसन्न हुए और बडी भक्ति के साथ उन्होने नमस्कार किया। तब मगलदेवता (लक्ष्मी) के वल्लभ (श्रीकृष्ण) ने कहा, "अब आप लोग बिना विलम्ब के अपने-अपने राज्य मे प्रवेश कीजिए और सुख-मगल के साथ रहिये। इस प्रकार चार पॉच दिन बीतने के बाद एक बड़ी सेना के साथ आइए। उत्तम युधिष्ठिर के यज्ञ के लिए तैयार होकर आ जाइए। ९५-१०० इस प्रकार आज्ञा देकर कृष्ण ने जरासन्ध के पुत्र सहदेव के द्वारा अपने पिता की शेषक्रियाएँ कराकर उसका राजा के रूप

भूमियेयौक्कज्जयिच्चु तिरु वाष्ङिङ
सोमकुलोत्भवनाय युधिष्ठिरन् १९
कोमळन्मारामवरजन्मारोटु
वामागियायुळ्ळ पाञ्चालितन्नोटु २०
कञ्जविलोचनन् पादपत्मङ्ङळि-
लञ्जलिचेर्त्तिरिक्कुन्न करत्तोटु २१
तत्गुणनामङ्ङळाय जपत्तोटुं
निर्ग्गुणत्तिङ्कलुरुच्च मनस्सोटु २२
वाळुन्न कालत्तु कृष्णन् तिरुवटि-
याळिमाताकुन्न रुक्मिणियादिया २३
वल्लविमार् पतिनारायिरत्तेण्व-
रेल्लावरुं पतुप्पत्तु पेट्टुण्टायि २४
चौल्लुवानावतल्लात सुतरोटु
वल्लवीवल्लभन् वल्लभमारोटु २५
उद्धवर् सात्यकियेन्नु तुटङ्ङियु-
ळ्ळुत्तमन्मारामात्यजनत्तोटु २६
मन्त्रिकळ् सेनापतिकळोटुं निज
बन्धुवर्ग्गत्तोटु भृत्यजनत्तोटुं २७
आन तेर् कालाळ् कुतिरप्पटयोटुं
आनकशंख पटहादिकळोटुं २८
अन्तोरु घोष परवानेळुन्नळ-
त्तन्तणरोटु मुनिवरन्मारोटुं २९

रत्न दे दिये। जितने भी रत्न मिले सहदेव ने सब लाकर युधिष्ठिर के चरणो पर समर्पित किये। नकुल तो पश्चिम दिशा को चले और विपुल धन के साथ निश्चल होकर वापस आये। १४-१८ इस प्रकार सारी पृथिवी को जीतकर चन्द्रवश के राजा युधिष्ठिर अपने सुकुमार भाइयो के साथ, और वामागी (सुन्दरी) पाञ्चाली के साथ, कमललोचन कृष्ण के चरणकमलो पर अञ्जलि के रूप मे लगे हाथो के साथ, उनका नाम सकीर्तन करते हुए, निर्गुण का निरन्तर ध्यान करते हुए जब विराज रहे थे तब समुद्र की पुत्री लक्ष्मी की ही दूसरे रूप रुक्मिणी के साथ, तथा सोलह हजार एक सौ आठ गोपियो मे प्रत्येक के दस-दस के हिसाब से जिनकी गिनती करना असभव है इतने पुत्रो के साथ, अपनी वल्लभाओ

वेगेन चेन्नुत्तरकुरुराज्यवु-
माके जयिच्चु रत्नङ्ङळ् वाङ्ङीटिनान् । ८
अटमिल्लातोळं दिव्यरत्नङ्ङळु
कोटवनाय नृपनु नल्कीटिनान् । ९
भीमन् किळक्कोट्टु पोयिप्पटयुमाय्
भूमिपालन्मारेयोक्कजयिच्चवन् । १०
अर्त्थमनेकं चुमप्पिच्चुकोण्टुव-
न्नुत्तमना धर्म्मपुत्रक्कु नल्किनान् । ११
तेक्कुदिशि सहदेवनु पोयोरो-
मुष्करन्माराय राजाक्कळे वेन्नान् । १२
लङ्कयिल् चेन्नु विभीषणन् तन्नोटु
शङ्कूटाते घटोल्क्कचन् चोल्लिनान् । १३
पुण्डरीकेक्षणन्तन् कृपयुण्टाक-
कोण्टु युधिष्ठिरनाकुन्न मन्नवन् १४
राजसूयत्तिनु कोप्पिट्टितिक्काल
पूजितनाय नीयु तिऱ नल्कुक । १५
कृष्णनामं केट्टु भक्तन् विभीषणन्
रत्नङ्ङळटमिल्लातोळ नल्किनान् । १६
उण्टाय रत्नङ्ङळोक्कस्सहदेवन्
कोण्टन्नु धर्म्मजन्काल्क्कल् वच्चीटिनान् । १७
पश्चिमदिक्किनु पोयि नकुलनुं
निश्चलनाय्पेरिकर्त्थवुमाय् वन्नान् । १८

लिए चतुरग सेना के साथ निकले । मेरु पर्वत तक जाकर युद्ध मे विजय पाकर (वहाँ के राजाओ से) कर ले लिया । १-७ फिर उत्तरकुरु राज्य जाकर उसे जीतकर असंख्य रत्न ले लिये । अनन्त दिव्यरत्न विजयी राजा (युधिष्ठर) को दे दिये । भीम तो पूरब की तरफ सेना के साथ गये और वहाँ के राजाओ को जीतकर विपुल धन लदवाकर लाये और उत्तम धर्मपुत्र को उन्होने दे दिया । दक्षिण दिशा मे जाकर सहदेव ने अनेक शक्तिशाली राजाओ का वध किया । घटोत्कच तो लङ्का गया और वहा नि.शङ्क विभीपण से बोला । ८-१३ कमललोचन (कृष्ण) की कृपा के कारण राजा युधिष्ठिर ने अब राजसूय यज्ञ करने के लिये तैयारी की है । पूज्य ! आप भी कर देदे । कृष्ण का नाम सुनकर भक्त विभीपण ने निस्सीम

गान्धारिमुन्पाय मातृजनत्तेयुं
गान्धारनादिया वन्धुवर्ग्गङ्ङळु ४०
अच्छन् दुरियोधनादिकळ् कर्णनुं
स्वच्छचित्तन्मारा द्रोणरु भीष्मरु ४१
विश्वविल्लाळियायुळ्ळ कृपर्तानु-
मश्वत्थामावुममात्यवरन्मारुं ४२
विश्वासमुळ्ळ विदुररु वैकाते
निश्शेषमाय पटयुमायादराल् । ४३
दुश्शासननोटु वेरे पऱञ्ञिङ्ङु
निश्शङ्कमिन्ने कणिकनुमाय् वन्नु ४४
यागं कळिक्कॅन्नु चॊन्नान् नकुलनु-
मागमिच्चारवरव्वण्णमेवरु । ४५
आनर्त्तवीरन्मार् पाञ्चालभूपरु
मानिच्चु साल्वन्मार् वीरन् विदर्भनु ४६
सृञ्जयभूपनुं माद्रराजावकळु
कुञ्जरवीररु कॊङ्कणमन्नरुं ४७
वन्पु नटिक्कुन्न सुभन्मार् मागधन्
कम्पमिल्लातोरु काशिनृपन्तानु- ४८
मंगरुं वंगरुं वीरर् कलिंगरुं
मंगलनाकिय पुंड्रनृपन्तानु ४९
कुन्तळवीरनुं कारूपभूपरुं
सिन्धुरभूपरु नैषधवीररुं ५०

उनका स्वागत किया और आवश्यक पदार्थों का सग्रह करने लगे । ३३-३८ नकुल हस्तिनपुर चला जाय और मित्रजनो को निमन्त्रण दे । गान्धारी आदि मातृजनों को, गान्धार आदि वन्धुवर्गों को, पिता धृतराष्ट्र, दुर्योधन आदि, कर्ण, शुद्धचित्तवाले द्रोण, भीष्म, विश्व के एकमात्र धानुष्क(धनुर्धर) कृपाचार्य, अश्वत्थामा अमात्यवर, और विश्वास के पात्र विदुर, इन सवको वुलावे और कहे कि वे सपूर्ण सेना के साथ पधारे । दुश्शासन से अलग से कहे कि वह आज ही कणिक के साथ निश्शङ्क आवे और याग करावे । नकुल ने ऐसा ही कहा और उसी प्रकार सव लोग चले आये । ३९-४५ आनर्त्त देश के वीर, पाञ्चाल के भूपाल, मान्य साल्वभूपाल, वीर विदर्भ-पति, राजा सृञ्जय, मद्रदेश के भूपाल, कुञ्जर देश के वीर, काङ्कण के

अन्धकवृष्णिभोजादिकळ्तम्मोटुं
चेन्तारिल्मानिनितन्नुटे वल्लभन् । ३०
नन्दनु नन्दननिन्दिरामन्दिर-
निन्द्रादिवृन्दारकवृन्दवन्दित ३१
निन्दुकलाधरवन्द्यन् मुकुन्दना-
नन्दस्वरूपन् जगन्मयन् गोविन्दन् ३२
अव्ययनव्यक्तनद्वयनीश्वरन्
दिव्यजनङ्डळ्मनसि वसिप्पवन् ३३
सव्यसाचिप्रियन् हव्यवाहप्रभन्
क्रव्यादनाशननुर्व्वीधरधरन् ३४
उन्पर्कोन्तन्पुरानंभोजलोचनन्
उन्परिलन्पन् परन्पुरुषन् कृष्णन् ३५
कुंभीन्द्रडभंकेटुत्त वन्पन् विभ
कुभीन्द्रतापापहारी मधुवैरि ३६
पाण्डवन्तन्नुटे राजसूयत्तिनु
खाण्डवप्रस्थमाकुन्न पुरिपुक्कान् । ३७
आनन्दमुळ्क्कोण्टु वन्दिच्चवर्कळु
वेणुन्नतेल्लामोरुक्किक्त्तुटङ्ङिनार् । ३८
हस्तिन पुक्कु नकुलन् वरुत्तणं
मित्रमायुळ्ळ जनत्तेयु वैकाते । ३९

और उद्धव, सात्यकि आदि उत्तम मन्त्रियो के साथ, १९-२६ अमात्यो, सेनापतियो, अपने बन्धुओ, भृत्यो, हाथियो, रथो, सैनिको, घोड़ो, आनक, शख, परह आदि वाद्यो, ब्राह्मणो, मुनिवरो, और अन्धक, वृष्णि, भोज आदिको के साथ लक्ष्मीदेवी के वल्लभ, नन्दपुत्र, इन्दिरा के पति, इन्द्र आदि देवो के द्वारा पूजित, चन्द्रकला को धारण करनेवाले (शिव) के वन्द्य, मुकुन्द, आनन्दस्वरूप, जगन्मय, गोविन्द, २७-३२ अव्यय, अव्यक्त, अद्वय, ईश्वर, भक्तजनो के मन मे निवास करनेवाले, सव्यसाचि (अर्जुन) के प्रिय, अग्नि के समान तेजवाले, राक्षसो के नाशक, पर्वत को धारण करनेवाले, देवो के पति कमललोचन, देवो के नाथ, परमपुरुष, कृष्ण, कुभीन्द्र (गजराज) का गर्व मिटानेवाले, विभु, कुभीन्द्र (गजेन्द्र) का दु ख दूर करनेवाले, मधु के शत्रु, युधिष्ठिर के राजसूय मे उपस्थित होने के लिए खाण्डवप्रस्थ नामक नगर पहुँचे । पाण्डवो ने बड़े आनन्द के साथ

कण्टु तुटरेत्तुटरे वरुन्नतु ।
कण्टु कूटातोळमुळ्ळ पॆरुम्पट । ६१
शंखङ्ङळ् भेरि पॆरुपऱ मद्दळ
दुन्दुभि नक्रयिटय्क्कयुट्टुक्कुकळ् ६२
कॊम्पु कुळलुकळ् ताळवु वीणयु
तम्पुराने ! शिवशङ्करायॆन्नते ६३
चॊल्लावतुण्टाय घोष निरूपिक्किल् ।
ऍल्लारॆयुमॊक्क सल्क्कारवु चॆय्तु ६४
नल्ल वॆण्माळिकतोऱमिरुत्तिनान्
कल्याणमोटमात्यानुजन्मादिकळ् । ६५
कूपतटाकङ्ङळ् वेण्टुवोळमुण्टु ।
शोभकलर्न्न नॆट्टु कोणिकळुण्टु ६६
किङ्करन्मारुण्टु वेण्टतॊरुक्कुवान्
सङ्कटमॊन्निनु मिल्लॊरुवर्क्कुमे । ६७
इप्रभावङ्ङळ् कण्टुळ्ळ्पूविलॆत्रयु-
मत्भुतमान्नॊरु धर्म्मजन्मानस ६८
चिल्पुरुषङ्कलुऱच्चितु शान्तमाय् ।
तल्प्रभावङ्ङळितॊक्कयॆन्नोर्त्तिट्टु ६९
तल्पादपत्मङ्ङळुळ्प्पूविलाक्किनान्
पॊल्प्पूविल्मानिनितन् विळयाट्टवु- ७०

वेग से चलनेवाले पैदल सैनिक, जल्दी-जल्दी आते दिखाई दिये। इतनी बड़ी सेना थी कि उसका अन्त अदृश्य था। हे प्रभो! शख, भेरी, वडे वडे नगाडे, मर्द्दल, दुन्दुभि, नक्र, इटय्क्क, उटुक्कु, आदि वाद्यविशेष, सिंगियाँ, तुरहियाँ ताल, वीणाएँ इन सभी वाजो का ऐसा शव्द निकला कि सोचने पर 'हे शिव!' हे शङ्कर' के सिवाय और कुछ नही कहा जा सकता था। सवका यथोचित सत्कार करके अच्छे-अच्छे महलो मे अमात्यो और अनुजो ने उनको ठहराया ताकि वे सुख से रहे। ५८-६५ वहाँ यथेष्ट कुएँ और तालाव थे और देखने योग्य लम्वे-लम्वे जीने थे। आवश्यक वस्तुएँ लाने के लिए पर्याप्त नौकर थे। किसी को भी किसी प्रकार की असुविधा नही हुई। इन प्रभावो को देखकर धर्मज (युधिष्ठिर) आश्चर्यचकित हुए और उनका मन शान्त होकर चित्पुरुष ही मे स्थिर हुआ। उनके ये सव प्रभाव है, ऐसा समझकर उनके चरणकमलो को

कोसल केकय चेदिनृपन्मारुं
मेदुरन्मारा विराटराजाक्कळुं ५१
माळवन् चोळनु केरळन् पाण्डचनु
केळियेरुन्न मट्टुळ्ळ नृपन्मारु ५२
नारद व्यास धौम्यादिकळायुळ्ळ
घोरतपोधनन्मारोट्टु शिष्यरुं ५३
ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्रादियु
धार्म्मिकनायुळ्ळ धर्म्मजन्तन्नुटे ५४
राजसूयत्तिनु वन्नु निरञ्ञितु
राजितयाय महाराजधानियिल् । ५५
तङ्ङ्ळाल् तङ्ङळालाय सल्क्कारङ्ङळ् ।
तङ्ङळ्तङ्ङ्ङक्कुळ्ळ कोप्पु पदवियु ५६
तिङ्ङ्ङिविळङ्ङिडन वन्पटक्कोप्पुमा-
यिङ्ङने भूमियिलुळ्ळ राजाक्कन्मार् । ५७
कुभत्तु कोन्पु पौतिञ्ञ चेन्पोन्निनाल्
वन्पुळ्ळ कुंभिकळ् मुन्पिलकन्पटि ५८
कल्लोलमालकळ् चेल्लुन्नतुपोले ।
तुळ्ळिनटक्कुन्न वेळ्ळक्कुतिरकळ् ५९
तेराळिकळाय पोराळिवीररुं
कालायमेरुन्न कालाळ्प्पटकळु ६०

भूपाल, घमडी सुभ, मगध के राजा, निष्कम्प काशिराज, अग, वग और कलिङ्ग के वीर, मागलिक पुड्रदेश के राजा, कुन्तलदेश का वीर, कारूष के राजा सिन्धुभूपाल, नैपधवीर, ४६-५० कोसल, केकय, और चेदि के भूपाल, हृष्टपुष्ट विराट के राजा, मालव, चोल, केरल और पाड्य के नृपवर, और भी उल्लासवाले भूपाल, नारद, व्यास, धौम्य आदि घोर तपोधन और उनके शिष्य, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ये सभी धार्मिक धर्मपुत्र (युधिष्ठिर) के राजसूय मे आये और उनसे राजधानी भर गयी। सब अपनी-अपनी पदवी के योग्य उपहार लाये और अपने-अपने योग्य आडम्बर के साथ रहे। इस प्रकार पृथ्वी के सभी भूपाल चमकनेवाली सेना के साथ पधारे। ५१-५७ वडे-वडे हाथी जिनके कुभ (मस्तक) और दाँत चमकनेवाले सोने से ढके थे, आगे-आगे चल रहे थे मानो समुद्र के तरङ्ग आगे जा रहे हो। कूदते हुए सफेद घोड़े, महारथी सैनिक वीर,

पाचकन्मारोटट्टुक्कळयिल् वेण्टता-
चरिच्चीटण भीमन् मटियाते । ८१
स्वर्ण्णङ्ङळ् कोण्टुळ्ळ दानङ्ङळ् चेय्यणं
कर्ण्णनुमाचार्यनाय कृपरुमाय् । ८२
इन्नि वेणुन्नतु भीष्मरोटेल्लारुं
चेन्नु चोदिच्चुकोळ्कॆन्नते वेणुन्नु । ८३
इत्थ नियोगिच्चु धर्म्मजन्तानन्नु
शुद्धमनस्सोटु यागवु दीक्षिच्चान् । ८४
ऋत्विक्कुकळ् सदस्यादिकळु क्रिया-
बद्धत कैक्कोण्टु कर्म्म तुटङ्ङिनार् । ८५
वेदद्ध्वनिकळुमाहुतिशब्दवु
वेदियर् तम्मिल् पऱञ्ञुळ्ळ घोपवुं ८६
होमधूमङ्ङळु पावकज्ज्वालयु
सामगानप्रभेदद्ध्वनिपूरवु । ८७
वेऱे पलतरमोरो रसङ्ङळिल्
चोऱु कऱिकळुमुण्टङ्ङोरु दिशि ८८
वाद्यघोप चतुरंगसेनारवं
चोद्योत्तरकोण्टु सवन्धशब्दवुं ८९
घोपिच्चिवण्ण तुटङ्ङि महाक्रतु
पोपिच्चु देवकळु मनुजादियुं । ९०

चाहिये । सज्जनो की पूजा अर्जुन करे और अच्युतजी ब्राह्मणो का पाद-प्रक्षालन करे । और भीम रसोई मे जाकर याचको से आवश्यक काम करावे । कर्ण तो आचार्य कृप के साथ उचित स्वर्णदान करे । और क्या होना चाहिये इसके सवन्ध मे सव लोग भीष्मजी से जाकर पूंछे । इस प्रकार आज्ञा देकर युधिष्ठिर जी ने उस दिन शुद्ध चित्त के साथ यागदीक्षा ली । ७८-८४ ऋत्विक्लोगो और सदस्यो ने अपनी-अपनी जिम्मेदारी स्वीकार कर याग प्रारम्भ किया । वेदध्वनि, आहुतियो के शव्द, और वैदिको के आपस मे चर्चा करने के घोप होने लगे । होम के धुएँ, अग्नि की ज्वालाओ, और तरह-तरह के सामगानो की ध्वनि भी होने लगी । दूसरी तरफ भात और तरह-तरह की रसवाली भाजी आदि खाद्य पदार्थ तैयार हुए । वाद्यघोप, चतुरंग सेना का शव्द, प्रश्नो और उत्तरो के कारण लोगो का पारस्परिक शव्द, इस प्रकार के घोष के वीच

मुल्पलनेत्राधिवासमुण्टाकया-
लिप्पोळिविटेयुण्टायतु निर्णय । ७१
शान्तनायुळ्ळ युधिष्ठिरनन्नेर
शान्तनवन्तन्नो वन्दिच्चु चोल्लिनान् । ७२
ताता ! विदुरा ! सुयोधना ! निङ्डळि-
न्नादरवोटिनिक्कुळ्ळ धनं काण्क । ७३
निङ्डळुटेयतिवर्योक्क निर्णय-
मिङ्डु वेणुन्नतु चेय्क चोदिक्केण्ट । ७४
अच्छनिवर्योक्क सूक्षिच्चिरिक्कण
वेच्चोरु काळ्चयेटुक्क सुयोधनन् । ७५
मन्नवन्मार्क्कु वेणुन्नतु सञ्जय-
नोन्नोळियातेयोरुविकक्कोटुक्कणं । ७६
कृत्यमकृत्यमपकृत्यमेन्निव
नित्यवु भीष्मरुं द्रोणरुं चोल्लणं । ७७
अश्वत्थामावद्रियेणं द्विजन्मारे
दुश्शासननिल पन्तियिल् वय्क्कण- ७८
मेच्चिलेटुप्पिच्चटिच्चुतळिप्पिच्चु
निश्शेपशुद्धिवरुत्तुकयु वेणं । ७९
सज्जनपूजकळर्ज्जुनन् चेय्यण-
मच्युतन् विप्ररे काल्कळुकिक्कण । ८०

अपने मन मे रख लिया । और सोचने लगे कि यहाँ जो महालक्ष्मी की कृपा हुई है वह कमललोचन के यहाँ रहने के कारण ही हुआ है, इसमे कोई सन्देह नही । ६६-७१ उस समय शान्त युधिष्ठिर ने शान्तनव (भीष्म) से कहा, "हे दादाजी ! हे विदुरजी ! हे सुयोधन ! आप लोग आज मेरा धन सादर देख लीजिए । यह सब आप लोगो का ही है । इससे जो कुछ करना है कर लीजिये, पूँछने की आवश्यकता नही । पिताजी इन सबका देखभाल करे और यह जो उपहार दिया गया है उसे सुयोधन ले ले । राजाओ को जो कुछ चाहिये वह उनको सञ्जय पहुँचा दे । और भीष्म और द्रोण मुझे सदैव बताते रहे कि क्या करना है, क्या न करना है और क्या गलती हुई है । ७२-७७ अश्वत्थामा ब्राह्मणो की सेवा करे और दुश्शासन को भोजन के लिए पक्ति मे बैठाया जाय । और जूठा उठवाकर सफाई कर दी जाय और सभी स्थानो मे शुद्धि रहनी

गूढमायुळ्ळोरु गोविन्दमूर्त्तियें
पीठत्तिन्मेल्वच्चु तृक्काल् कळुकिच्चु १०१
पूजिच्चु वन्दिच्चु वीणुनमस्करि-
च्चाचारवुचेय्तु राजावु निन्नप्पोळ्- १०२
क्रुद्धनायोरु शिशुपालमन्नव-
नुत्थानवु चॊय्तिट्टुच्चत्तिल् चॊल्लिनान् । १०३
कुण्डिनं तन्निल् निन्नुण्टायतोक्कुन्पोळ्
कुण्डन्मारायुळ्ळ पाण्डवन्मारेयु १०४
ऒन्नॊण्टु तोन्नुन्नितेन्नुळ्ळिलेन्नतु
नन्नल्ल चॊल्लिकलो निर्णयमेङ्किलु १०५
उळ्ळलरिविल्लयातोरु निङ्ङळि-
क्कळ्ळनायुळ्ळोरु गोपालकन्तन्ने १०६
कालु कळुकिच्चु पूजिच्चतोक्कुन्पोळ्
बालन्मारे ! पळुतायवन्नु यागवु । १०७
इन्नवनेन्नुमिल्लिल्लवुमिल्लिव-
नॊन्नुमोरुगुणमिल्ला निरूपिच्चाल् । १०८
मातरुमिन्नवरेन्निल्ल भोगिप्पान्
मातुलनेक्कोन्न पातकवुमुण्टु । १०९
पॆण्कोलयु चॆय्तु साधुक्कळॆयोरु
सशयकूटातें तान्तोन्नियायवन् ११०

युधिष्ठिर ने गूढ गोविन्द की मूर्त्ति को पीठ पर बैठाकर पादप्रक्षालन करके उसकी पूजा, वन्दना और साष्टाङ्ग नमस्कार और अन्य उपचार किया तब क्रोधित होकर राजा शिशुपाल उठा और उच्च स्वर मे बोला। "कुण्डिन मे जो हुआ है उसे जब मैं याद करता हूँ तब इन मोटे पाण्डवो के सबन्ध मे जो बात मुझे सूझ रही है वह निस्सन्देह कहने योग्य नही है। हे मूर्खो ! फिर भी इतना तो स्पष्ट है कि आप लोगो के इस कोरे अज्ञ, कपटी ग्वाले के पादप्रक्षालन और पूजन से यह सारा याग व्यर्थ हो गया है। १००-१०७ कोई नही जानता है कि यह कौन है, न इसका कोई मकान है, सोचिये तो इसमे कोई भी गुण नही है। स्त्री सभोग के विपय मे इसका कोई नियन्त्रण नही है, और अपने मामा के वध का पाप भी इस पर लगा है। इसने स्त्रीवध किया है, और यह साधुजनो के साथ निश्शक मनमाना करनेवाला है। सोचिये तो इसके मन मे एक

पञ्चेन्द्रियङ्ङळुमन्तक्करणवु
पञ्चजनादितेयादि शरीरिणां ९१
प्रीतिवळर्न्नु तुटङ्ङि दिनप्रति
नीतियिलिङ्ङने कर्म्मङ्ङळ् चेय्कयाल् । ९२
मुप्पत्तुनालु मासंकोण्टोटुङ्ङुवो-
रत्भुतराजसूयान्त.क्रियान्तरे ९३
योग्यमाकुन्नताग्र्यपूजय्क्कॆन्नु
योग्यन्मारॆल्लारुं कूटि निरूपिच्चु । ९४
श्रोत्रियरुं नल्ल शास्त्रिकळुंकूटि
पात्रमितिन्नारॆन्नारुं तिरिच्चील । ९५
माद्रीतनयनाकु सहदेवनु-
मार्द्रमनस्सोटु शान्तनवन् तानु- ९६
माद्यनजन् परमात्मा जगन्मयन्
वेद्यनल्लातनारायणन् वैकुण्ठन् ९७
मून्नु लोकत्तिनु मूलमामीश्वरन्
मून्नाय मूर्त्तिकळॊन्नायि निलपवन्- ९८
तानिरिक्कॆयॆन्तु सशयमुण्टावान्
नूनमवन्तन्ने योग्यनॆन्नारवर् । ९९
शाखिमुरट्टु ननच्चाल् मतियल्लो
शाखकळ्तोरुं ननय्क्कुमङ्ङिल्ललो । १००

मे वह वड़ा यज्ञ प्रारम्भ हुआ । देवो और मनुष्यो की पञ्चेन्द्रियो और अन्त.करण की पुष्टि हुई । पञ्चजन और आदितेय (देव) आदि शरीरियो की प्रीति प्रतिदिन वढ़ने लगी, नियम के अनुसार सव कर्म होने लगे । ८५-९२ चौतीस महीनो मे समाप्त होनेवाले इस अद्भुत राजसूय यज्ञ के वीच मे योग्य अभ्यागतो मे यह विचार होने लगा कि अग्र्यपूजा के लिए कौन योग्य है ? अनेक श्रोत्रियो और शास्त्रियो के विचार करने पर भी यह निर्णय न हो सका कि अग्र्यपूजा का पात्र कौन है । तव माद्री पुत्र सहदेव और प्रेमवत भीष्मजी ने कहा—"जव आद्य, अज, परमात्मा, जगन्मय, अवेद्य, नारायण, वैकुण्ठ, तीनो लोको के मूल ईश्वर, तीनो मूर्त्तियो के एकीभूत स्वरूप, स्वय यहाँ विद्यमान है, तव सन्देह का क्या स्थान है ? वही अग्र्यपूजा के पात्र है । ९३-९९ यदि वृक्ष की जड को सीचा जाय तो हर एक शाखा को सीचने की आवश्यकता नही है" । जव राजा

न्यायमल्लाततु नी पऱञ्ञीटुकिल्
कायवुं नाय् नरि तिन्नुमाऱाक्कुवन् । १२१
पोरात्मपूण्ट शिशुपालनन्नेर
पोरिन्नु तेरिल्क्करेऱि निन्नीटिनान् । १२२

विश्वरूपप्रदर्शनं

कण्णु चुवत्ति विऱच्चु नारायणन्
सन्नद्धनायतु कण्टु युधिष्ठिरन् १
नूऱायिरं कोटि मार्त्ताण्डमण्डल-
मेऱियोराभ कलर्न्नुदिक्कुवण्णं २
आर्क्कुमे नोक्करुतार्तोरु दीप्तियु-
मार्क्कुं तिरिक्करुतार्तोरु रूपवु ३
कैक्कोण्टुकण्टु भगवल्स्वरूपत्ते-
युळ्क्काम्पिलाक्कि वन्दिच्चु धर्म्मात्मजन् । ४
आरवनायतु नेरे पऱकेन्नु
पारातॆ देवव्रतनोटु चोदिच्चान् । ५
आरॆन्तऱिवानऱियरुतार्तोरु
नारायणनजनव्ययनच्युतन् । ६

न्याय फिर देखा जायगा। अगर तुम अन्याय की बाते कहोगे तो तुम्हारे शरीर को कुत्ते और शेर के खाने योग्य बना दूंगा। तब शिशुपाल लज्जित होकर युद्ध करने के लिए रथ पर चढकर बैठा। ११५-१२२

विश्वरूप का प्रदर्शन

उस समय युधिष्ठिर ने देखा कि नारायण की आँखे लाल है और वे काँप रहे है और सन्नद्ध (लड़ने के लिए तैयार) हो रहे हैं। सौ हज़ार कोटि सूर्यमण्डलो से भी अधिक प्रभा लेकर उठ रहे थे। उनकी दीप्ति को कोई भी न देख सकता था और उनके रूप को कोई भी न समझ सकता था। भगवान् के ऐसे स्वरूप को देखकर धर्मपुत्र ने उसका ध्यान किया और उसकी वन्दना की। और देवव्रत (भीष्म) ने कहा "ठीक-ठीक जल्दी बतलाइए कि यह कौन है"। १-५ तब भीष्म बोले—"यह वह अज, अव्यय, अच्युत नारायण है जिन्हे ठीक जानना बहुत कठिन है। जब ब्रह्मप्रलय हुआ उसी दिन उन्होने मधु और कैटभ की सृष्टि की।

ब्राह्मणश्रेष्ठनु पिन्ने श्वपचनु
साम्यमत्रेयिवनुळ्ळिलोक्कुविधौ । १११
श्वाक्कळु गोक्कळुमोक्कुमिवन्तनि-
क्काक्कुमङ्रियावतल्लिवन्मायकळ् । ११२
इल्लात्ततुण्टाक्कुमुळ्ळतिल्लाताक्कु
नल्लतुमाकात्ततु भेदमिल्लेतु । ११३
वर्ण्णविशेषवुमिल्लिवन्नेतुमे
पुण्यपापङ्ङळु चिन्तिक्कयिल्लिवन् । ११४
निष्किञ्चनप्रियन् निर्ल्लज्जनेत्रयुं
निष्कुलजातनां निष्कामने निङ्ङळ् ११५
योग्यन्मारोक्कवे नोक्कियिरिक्कवे
योग्यमल्लेतुमिच्चेटततु निर्ण्णय । ११६
वृद्धरायुळ्ळ गाङ्गेयनु द्रोणरुं
बुद्धि नेरल्लातेयायिच्चमञ्जितो ? ११७
इत्तरं केट्टाशु पोत्तिच्चेवि चिलर्
मुग्धविलोचननेतुमे मिण्टील । ११८
पार्त्थिवनाकिय चेदिपनुतन्नोटु
चीर्त्त कोपत्तोटु पार्त्थनु चोल्लिनान् । ११९
इत्तरं चोल्लुकिलस्त्रङ्ङळ्कोण्टु आ-
नुत्तरं चोल्लि आयं पिन्ने मन्नवा ! १२०

ब्राह्मणश्रेष्ठ और एक श्वपाक मे कोई भेद नही है। कुत्ते और गौएँ इसके लिए समान है। इसकी मायाओ को कौन नही जानता है ? जो असत् है उसको सत् और सत् को असत् बनायेगा। अच्छे-बुरे का भेद ही नही जानता है। वर्णभेद को यह मानता ही नही है। पुण्य क्या है और पाप क्या है, यह सोचता ही नही है। १०८-११४ अकिचनो से प्रेम करता है, बिलकुल निर्लज्ज है। इसका एक दुष्कुल मे जन्म हुआ, अनेक योग्यो के होते हुए भी, इस निष्काम का इस प्रकार आप लोगो ने जो पूजन किया यह निस्सन्देह उचित नही है। इन वृद्ध भीष्म और द्रोण की बुद्धि क्या बिलकुल बिगड गयी है ?" इस प्रकार की बात सुनकर कुछ लोगो ने कान बन्द कर लिये। मुग्धविलोचन (श्रीकृष्ण) तो बिलकुल मौन रहे। अर्जुन ने तीव्र कोप के साथ चेदि राजा से कहा, "इस प्रकार की बात करोगे तो हे राजन् ! अस्त्रो से उसका उत्तर दूँगा,

क्षीराबुराशि कटञ्ञमृतुण्टाक्कि-
प्पारातॆ सेविक्कयॆन्नाल् सुख वरुं । १७
पुक्कितु पाल्क्कटलाशु पुरन्दरन्
पुष्करनेत्रनोटत्तल् परञ्ञप्पोळ् १८
मूर्त्तिकळ्मूवरुमॊन्निच्चु कल्पिच्चु
दैत्यर्कळोटॊरुमिच्चितु देवकळ् । १९
वासुकि पाशमाय् मन्दरं मत्तुमा-
यादरवोटु कटञ्ञुतुटङ्ङुन्पोळ् । २०
ताणुतुटङ्ङीतु पर्व्वतमन्नेरं
तानॊरु कूर्म्ममाय् पॊङ्ङिच्चतुमिवन् २१
कल्पकवृक्षङ्ङळ् नल्ल सुरभियु-
मत्भुतमायुळ्ळ कौस्तुभरत्नवु २२
चन्द्रक्कलयुममृतुमज्येष्ठयु
चन्द्रसमाननयाकिय लक्ष्मियु २३
नाल्कॊन्पनानयुमुच्चै. श्रवाश्ववु
भाग्यभोग्यारोग्ययोग्यपीयुषवु २४
साक्षाल् पराशमां धन्वन्तरितानु-
मार्क्कु पॊरुक्करुतात काकोळवुं २५
चॆल्क्कण्णिमाराकुमप्सरस्त्रीकळु
पाल्क्कटल्तन्निल्निन्नुण्टायितु मट्टु । २६
मायाविकळामसुरकळक्कालं
पीयूषवुं कट्टुकॊण्टु पोयीटिनार् । २७

प्राप्त होगा' । १२-१७ इन्द्र ने क्षीरसागर मे प्रवेश किया और पुष्करनेत्र (विष्णु) से अपना दु:ख कहा । तब (विष्णु ने) आज्ञा दी कि यह काम तीनो मूर्तियाँ दैत्य और देव मिलकर करे । नाग वासुकि को रस्सी और मन्दर पर्वत को मथानी बनाकर वे सब क्षीरसागर को मथने लगे । तब पर्वत डूबने लगा । उस समय कूर्म बनकर इन्होने ही उसे उठाया था । अनेक कल्पवृक्ष, सुरभिनामक साध्वी कामधेनु, अद्भुत कौस्तुभ मणि, चन्द्रमा, वह ज्येष्ठा (अलक्ष्मी), चन्द्र के समान आननवाली लक्ष्मी, चार दाँत वाला हाथी, उच्चै श्रवा नामक घोड़ा, भाग्यवानो के पीने योग्य और आरोग्य देनेवाला अमृत, साक्षात् भगवान् का ही अश धन्वन्तरि, सभी के लिए असह्य विष, सुन्दर आँखवाली अप्सराएँ—ये सब और इनसे अतिरिक्त

ब्रह्मप्रळयमुण्टायन्नुतान्तन्नॆ
निर्म्मिच्चॆळ्ळुं मधुकैटभन्मारवर् । ७
तन्नोटुतन्नॆ कलहतुटर्न्नप्पोळ्
कॊन्नानवरुटॆ देहत्तिल्निन्नुळ्ळ ८
मेदस्सुतन्नॆयुरच्चुचमञ्ञतु
मेदिनियायतुमॆन्नरिञ्ञीटु नी । ९
नाभिसरोजत्तिलुण्टाय नान्मुखन्
नानाविधयाय सृष्टि चॆय्तीटिनान् । १०
वेदङ्ङळ्कट्ट हयग्रीवनॆक्कॊन्नु
वेधाविनाक्कुवान् मीनायितन्नवन् । ११
सर्व्वेशनायॊरु शर्व्वांशमायिट्टु
गर्व्वकलर्न्नॊरु दुर्व्वासावां मुनि । १२
शक्रनु नल्किय मालयॆटुत्तुट-
नक्करिवीरन् चवुट्टिक्कळकयाल् । १३
क्रुद्धनायम्मुनि शापवुं नल्किनान्
वृत्रहन्ताविनेयुं सुरन्मारॆयुं । १४
वृद्धश्रवस्साय नीमुतलायवर्
वृद्धन्मारायि जरानरयुण्टाक । १५
ऎन्नतु केट्टु तॊळुतु महेन्द्रनुं
पिन्नॆ वरवु कॊटुत्तु महामुनि । १६

उन दोनो ने उन्ही से कलह किया। तव उन्होने उनका वध किया। और जान लो कि उनके शरीर का जो मेद था वही जमकर मेदिनी (पृथिवी) वनी। उनके नाभिकमल से जो चतुर्मुख पैदा हुआ उसी ने तरह-तरह की सृष्टियाँ की। जव हयग्रीव ने वेदो को चुराया तव मत्स्य वनकर उसकी हत्या करके वेदो को उन्होने ही ब्रह्मा के पास पहुँचाया। ६-११ दुर्वासा नामक एक गर्वयुक्त मुनि था जो सर्वेश शिवजी का ही अंश था। उसने इन्द्र को एक माला दी थी जिसे हाथी ऐरावत ने अपने पैरो से कुचल दिया। इससे क्रुद्ध होकर मुनि ने इन्द्र को और देवो को इस प्रकार शाप दिया—'तुम वृद्धश्रवा और अन्य देवता वृद्ध हो जाये और तुम लोगो के जरा और सफेदी आ जाय'। यह सुनकर इन्द्र ने हाथ जोड़ा, तव महामुनि ने उनको एक वर दिया। 'क्षीरसागर का मन्थन करके अमृत पैदा करो और उसका सेवन करो तव तुम्हे सुख

अरमय्यक्कुलकुकळ् काट्टिनान् वा पिळ-
र्न्नंवुजलोचननामिवन् माधवन् । ३८
वृन्दावनं पुक्कु नन्नाय् रमिच्चतु
नन्दजनाकिय नारायणनिवन् । ३९
केशियेक्कैक्कोण्टु वाकीरि कोन्नतु
केशवनाकिय नारायणनिवन् । ४०
काळिन्दियिल्निन्नु नीक्किक्कळवानाय्
काळियन्मेल् निन्नु नृत्तं नटिच्चतु । ४१
सुन्दरिमारुटे चेलकळ् वारीट्टु
कन्दर्प्पमन्दिरं कण्टु रसिच्चतु । ४२
आरणन्मारुटे पत्निकळ्भक्तियें
नेरोटे कण्टिट्टनुग्रहं चेय्ततु । ४३
गोवर्द्धनं कुटयाक्किप्पिटिच्चतु
गोपीजनत्तोटुकूटिक्कळिच्चतु ४४
अक्रूरन् वन्निट्टु रामनु तानुमाय्
मुख्यमायुळ्ळोरु तेरेरिप्पोयतु ४५
काळिन्दियिल् मुळुकीटुमक्रूरनु
मेळ वरुमारनुग्रह चेय्ततुं ४६
चेन्नु रजकनेक्कोन्नु कळञ्जतु
सन्नद्धनाय् विल्लॆटुत्तु मुरिच्चतुं ४७

वाल-क्रीडाएँ करते हुए दूध और मक्खन चुराया और अपना मुँह खोलकर उसमे अपनी माँ को सारा जगत् दिखलाया, वह यह अम्वुजलोचन माधव है । ३१-३८ जिसने वृन्दावन जाकर वहाँ रासलीला की वह यही नन्दपुत्र नारायण है । जिसने केशी को पकडकर उसका मुँह फाडकर मारा वही यह केशव नारायण है । इन्होने ही यमुना नदी से हटाने के लिए कालिय सर्प के ऊपर खडे होकर नृत्य किया था । सुन्दरियो का वस्त्रापहरण करके और उनका मदन-मन्दिर देखकर इन्होने ही आनन्द अनुभव किया । इन्होने ही ब्राह्मणो की पत्नियो की भक्ति देखकर उन पर अनुग्रह किया । ३९-४३ गोवर्द्धन पर्वत को छत्र वनाकर उठाना, गोपियो के साथ खेलना, जव अक्रूर आया तव वलराम के साथ एक सुन्दर रथपर चढकर चले जाना, यमुना मे स्नान करनेवाले अक्रूर को मुक्तिप्रद अनुग्रह करना, रजक को मार डालना, और सन्नद्ध होकर धनुप को तोड़ डालना, उन्नत

मायामनोहरियायिच्चमञ्जितु
मायामयनिवन् वीण्टुकोण्टीटुवान् । २८
वाराहमायोरु रूपं धरिच्चिट्टु
वीरनायुळ्ळ हिरण्याक्षनेक्कोन्नु २९
पारितु वीण्टतु यज्ञांगनाकिय
कारुण्यवारिधि नारायणनिवन् । ३०
दुष्टनायुळ्ळहिरण्यकशिपुवे
नष्टतचेय्वान् नरसिंहमायतु ३१
श्यामळसुन्दरनिन्द्रावरजना
वामननायिब्बलियेच्चतिच्चतु ३२
भूमिपालन्मारेक्कोन्नोटुक्कीटुवान्
जामदग्न्याकृतियायिच्चमञ्जतुं ३३
रामनाय् वन्नु पिरन्नु वळर्न्निट्टु
रावणनेक्कोन्नु तापं केटुत्ततु ३४
रामनायिन्नु बलभद्रनायतु
कोमळनायुळ्ळ कृष्णनिवन्तन्ने । ३५
पेमुलयुण्टतु चाटु तकर्त्ततु
तामरसाक्षनां कृष्णनिवन्तन्ने । ३६
बालकलीलकळाण्टु नटन्नतुं
पालोट्टु वेण्ण कट्टुण्टु कळिच्चतुं ३७

पदार्थ भी क्षीरसागर से निकले। १८-२६ उस समय मायावी असुर लोग अमृत को चुराकर भाग गये। उसे फिर ले लेने के लिए इन मायामय (कृष्ण) ने ही मायामनोहारी (मोहिनी) का रूप धारण किया। वराह का रूप धारण करके और वीर हिरण्याक्ष का वध करके यह कारुण्यसागर और यज्ञांग नारायण ही इस पृथिवी को वापस लाये थे। २७-३० दुष्ट हिरण्यकशिपु को नष्ट करने के लिए जो नरसिंह बने, जिस श्यामसुन्दर, इन्द्र के अनुज ने वामन बनकर बलि को पराजित किया, जिसने भूपालों को नष्ट करने के लिए जामदग्न्य (परशुराम) का रूप धारण किया, जिसने राम होकर जन्म लिया और रावण को मारकर जगत् का दुःख दूर किया, और जो आज बलभद्र नामक दूसरा राम बना है, सब यही कृष्ण है। दुष्ट (पूतना के) स्तन का पीनेवाला और चाटुवाक्य का तिरस्कार करनेवाला भी यही कमललोचन कृष्ण है। जिसने अपनी

पिन्नेयवन् पतिनेट्टामतु वरं
मुन्नमे वन्नु यवनन् पटयुमाय् । ५८
मून्नुकोटिप्पटयुळ्ळतुं कोन्नु तान्
मन्देतरं पाञ्ञु पर्व्वतकन्दरं । ५९
तन्निलोळिच्चतुनेरं यवननु
चेन्नु मुचुकुन्दनेच्चवुट्टीटिनान् । ६०
पेट्टेन्नुणर्न्नवन् नोक्किकयनेरत्तु
दुष्टनु नेत्राग्निदग्धनायीटिनान् ६१
पिन्ने मुचुकुन्दभूपनु कैवल्यं
तन्ने कोटुत्ततुं नारायणनिवन् । ६२
अन्धचित्तन् पतिनेट्टामतुं जरा-
सन्धन् मधुरापुरियै वळञ्ञप्पोळ् ६३
वारिधियोटपेक्षिच्चु वाङ्ङीटिनान्
द्वारवतियां महाराजधानियुं । ६४
स्त्रीधनधान्यादिकळुं कटत्तिव-
च्चाधियुं तीर्न्नु वलभद्ररामनुं ६५
तानुमाय् मागधन् सेन मुटिच्चतु
मानियां मागधनेक्कोलचेय्याते-
योटि मलमेल् करेरिक्कळञ्ञतु ६६
चुट्टुमवन् ती कोळुत्तिय नेरत्तु
मटारुमेयरियाते वलनुमाय् ६७

भागकर छिप गये। तव यवन भी उनके पीछे गया और उसने गुहा मे मुचुकुन्द के लात मारी। ५५-६० ततक्षण ही जागकर जव मुचुकुन्द ने उस पर दृष्टि डाली तव वह दुष्ट मुचुकुन्द की आँखो की अग्नि से जल गया। तदनन्तर राजा मुचुकुन्द को जिन्होंने कैवल्य (मोक्ष) प्रदान किया वे यही नारायण हैं। जव अन्धचित्त जरासन्ध ने अठारहवी वार मथुरा नगरी को घेर लिया, तव समुद्र से मांगकर अपनी राजधानी द्वारवती लेली। फिर स्त्री, धन, धान्य आदि वहाँ पहुँचाकर दुःख दूर करके राम वलभद्र के साथ मागध की सेना को ध्वस करके, घमंडी मागध की विना हत्या किये पर्वत के शिखर पर जाकर वैठ गये। ६१-६६ जव उसने चारो तरफ आग लगा दी तव विना किसी से वताये वलराम के साथ अपनी ही पुरी मे आकर जिन्होने निवास किया वे नन्दपुत्र दामोदर येही

उन्नत मल्लरंग प्रवेशिच्चतु
पिन्नेक्कुवलयापीडत्तेक्कोन्नतु ४८
मुष्टिकन् चाणूरनादियां मल्लरे
मुष्टियुद्धं चेय्तु पोट्टिच्चु कोन्नतु ४९
दुष्टनां कंसनेक्कोन्नुकळञ्ञिट्टु
कैट्टुपेट्टीटिनोरच्छनुमम्मयक्कु ५०
पुष्टकुतुकमुण्टाक्किच्चमच्चतु
तुष्टि पुरवासिकळ्क्कु वळर्त्ततु ५१
विद्यपठिप्पिच्च विप्रनु दक्षिण
मृत्युभविच्च सुतनेक्कोटुत्ततु ५२
पञ्चजननामसुरकुलेन्द्रने--
प्पञ्चतचेर्त्तवनतन्नुटेयस्थियाल् ५३
पाञ्चजन्याख्य कलन्नोरु शंखवु
चाञ्चल्यमेन्निये कैक्कोण्टुपोन्नतु । ५४
चोल्क्कोण्ट मागधन् वन्निरुपत्तिमू-
न्नक्षौहिणिप्पटयोटे वळञ्ञप्पोळ् ५५
वन्पट कोन्नु जरासन्धनाकिय
वन्पने कोल्लातयच्चुकळकयाल् ५६
पिन्नेयु वन्नान् पतिनेळुरुववन्
कोन्नोटुक्कुं पटयोक्कवे माधवन् ५७

मल्लरग मे प्रवेश करना, और फिर हाथी कुवलयापीड को मार डालना, मुष्टिक, चाणूर आदि मल्लो को मुष्टियुद्ध करके मार डालना, दुष्ट कस का वध करके कारागार मे बँधे अपने पिता और अपनी माता को निस्सीम प्रीति देना, और नगरवासियो का हर्ष वढाना, अपने विद्यागुरु ब्राह्मण को गुरु-दक्षिणा के रूप मे उनके मृत पुत्र को जिला देना, पञ्चजन नामक असुरकुलेन्द्र की हत्या करके उसकी हड्डी से पाञ्चजन्य नामक शख बनाकर उसे लेकर निश्शङ्क चले आना आदि अद्भुत और अलौकिक कर्म इन्ही कृष्ण के है। ४४-५४ जब विख्यात मागध (जरासन्ध) ने आकर तेईस अक्षौहिणी सेना से इन्हे घेर लिया तब उस बड़ी सेना को नष्ट करके मागध को जिन्दा ही छोड़ दिया, इस लिए वह फिर सत्तरह बार आया और माधव ने उसकी सारी सेना को परास्त कर दिया, पर वह अठारहवी बार फिर आनेवाला था। इससे पहले ही यवन (कालयवन) सेना के साथ आया था। उसकी तीन करोड़ की सेना को नष्ट करके स्वय पर्वत गुहा में

शिशुपालवधं

शार्ङ्गवरायुधन्तन्टे चरित्रङ्ङळ्
गाङ्गेयनिङ्ङने चौन्नोरनन्तरं १
दुर्न्निमित्तङ्ङळुण्टायतु कण्टिट्टु
मन्नवन् नारदन्तन्नोटु चोदिच्चु । २
ऍन्तितिन् कारणमॅन्नतु केट्टिट्टु
चिन्तिच्चु नारदन्तानुमरुळ्चेय्तु । ३
चेदिपनाय शिशुपालनेयिन्नु
माधवन् कॊल्लुमतिनुळ्ळ लक्षणं ४
काणायतॆन्नु परञ्ञिरिक्कुंनेर
काणायि तेरिल् मधुवैरितन्नेयु- ५
मस्त्रप्रयोगवुं तम्मिलुण्टायतु
विस्तरिच्चेरॅप्परञ्ञालॊटुङ्ङुमो । ६
राघवरावणन्मार् पॊरुपोलेय-
म्मेघनिरमुळ्ळ कृष्णचेदीशन्मार् ७
अस्त्रमॆटुत्तु तॊटुत्तुवलिच्चय-
च्चॆत्रयु घोरमाय् वन्नितु युद्धवुं । ८
धर्म्मजनादियुं नारदनादियु
निर्म्मलराकिय देवसमूहवु ९
नारीजनङ्ङळुं भूसुरजालवु
वीरराय् मेवुन्न भूपतिवृन्दवु १०

शिशुपालवध

इस प्रकार गाङ्गेय (भीष्म) के श्रीकृष्णचरित्रो के वर्णन के बाद अनेक दुर्निमित्त दिखाई दिये। तव राजा ने नारदजी से पूछा। "इन निमित्तो का क्या कारण है ?" यह सुनकर नारद ने सोचकर वतलाया—"आज माधव चेदिराजा शिशुपाल का वध करेगे। उसके ये लक्षण दिखाई दे रहे है।" यह वात कह ही रहे थे कि मधुवैरि(माधव) रथ पर वैठे हुए दिखाई दिये। उनका जो आपस मे अस्त्र-प्रयोग हुआ उसका वर्णन कोई करे तो समाप्त नही हो सकता। १-६ राम और रावण के युद्ध के समान वे मेघ के समान वर्णवाले कृष्ण और चेदीश (शिशुपाल) अस्त्र निकालकर, लगाकर और खीचकर छोडते गये और उनका युद्ध अतीव

वन्तु निजपुरिपुक्कु वसिच्चतुं
नन्दतनयना दामोदरनिवन् । ६८
चेन्नु नरकमुरन्मारेयु कोन्नु
कुण्डलं नल्लदितिक्कु कोटुत्ततु ६९
पारिजातं कोण्टुपोन्नुकळञ्ञतु
वारिजनेत्रना वासुदेवनिवन् । ७०
भार्यमारायिप्पतिनाऌायिरत्तेट्टु
नारिमारे विवाहं चेय्तुकोण्टतु ७१
शङ्करन्तन्नेप्पोरुतु जयिच्चतुं
हुंकृतिपूण्टोरु वाणन्करङ्ङळे- ७२
च्छेदिच्चनिरुद्धने वीण्टुकोण्टतुं
वेदप्पोरुळाय नारायणनिवन् । ७३
मट्टुं पलपल विक्रमं चेय्तिट्टु
मुट्टु जगत्त्रयरक्षाकरनिवन् । ७४
कर्त्ताविाकुन्नतु कारणनायतुं
मद्ध्ये करणमाकुन्नतुं तान्तन्ने । ७५
उत्पत्तियिल्ल मरणवुमिल्लिव-
नुत्भवमार्क्कुमऱिञ्ञुकूटा चोल्वान् । ७६
मायामयनाय नारायणा ! पोटि !
नीये गतियेन्निरिक्क नी सन्तत । ७७

है। जिन्होने नरक और मुर को मारकर अदिति को कुण्डल दिया और जो पारिजात लाये वे येही कमललोचन वासुदेव है। जिन्होने सोलह हजार एक सौ आठ स्त्रियो से विवाह किया, साक्षात् शङ्कर को ही युद्ध मे जीत लिया और क्रोधी वाणासुर के हाथो को काटकर अनिरुद्ध को छुड़वाया वे येही वेदो के रहस्य-रूपी नारायण है। ६७-७३ और भी तरह-तरह के विक्रम करके इन्होने ही तीनी लोको की रक्षा की। ये ही पहले कर्ता होते है और कारण भी और बीच मे करण भी बन जाते है। इनका जन्म और मरण कोई नही जानता और न बतला सकता है। हे मायामय नारायण ! हे पालक ! आप ही गति है, आप ही नित्य है। ७४-७७

पारातॆ चॆन्नुटन् वाळुमाय् चाटिनान्
वारियिल् पट्टुमुटुत्तु सुयोधनन् । २१
आरुं काणातॆ चिरिच्चितॆल्लावरु
पारं चिरिच्चितु भीमनतुनेर । २२
नाणवु पूण्टभिमानक्षयत्तोटु-
माननवु ताऴ्त्तयारॆयुं नोक्कातॆ २३
पोयि सुयोधननन्नु तुटङ्ङीट्टु
कायं मॆलिञ्ञु पनियुं पिटिच्चुते । २४
मन्नवरुं पिन्नॆ मटुळ्ळवर्कळुं
वन्नवऴियॆपोय् तङ्ङळिटं पुक्कार् । २५
वृष्णिकुलजातन् विश्वंभरन् परन्
जिष्णु वेदान्तवेद्यन् वेदविग्रहन् । २६
जिष्णुप्रमुखवृन्दारकवन्दितन्
जिष्णुतनयप्रियन् वयस्यन् हरि २७
कृष्णन्तिरुवटि धर्म्मजन्तन्नोटुं
कृष्णयोटु सुभद्रादिकळ्तम्मोटु २८
जिष्णुविनोटुं मटुळ्ळ जनत्तोटुं
उष्णेतराशुविवानन् माधवन् २९
आस्थया वात्सल्यमुळ्क्कॊण्टु सादरं
यात्रयुं चॊल्लि वेगत्तोटॆऴुन्नळ्ळि । ३०

कपड़ा पहनकर हाथ मे तलवार लिये मायामय मय के वने सभा के फर्श को तालाव समझकर पानी मे कूद पड़ा। चुपके सव हँसे, सबसे अधिक तो भीमसेन हँसे। प्रतिष्ठाहानि के कारण लज्जित होकर मुँह नीचा करके विना किसी को देखे सुयोधन चला गया। उस दिन से उसका शरीर दुबला होने लगा और उसको ज्वर आ गया। सभी भूपाल और अन्य लोग भी अपने-अपने रास्ते गये और अपने घर पहुँचे। २०-२५ वृष्णिकुल मे पैदा हुए, विश्वभर, पर, जिष्णु, वेदान्तवेद्य, वेदमूर्त्ति, इन्द्र आदि देवो के वन्दित, अर्जुन के प्रिय वयस्य (मित्र) हरि, चन्द्रमुख, माधव प्रभु कृष्ण युधिष्ठिर से, द्रौपदी से, सुभद्रा आदियो से, तथा और जनो से, सादर और सप्रेम विदा होकर शीघ्रतापूर्वक अपनी द्वारकापुरी की ओर सिधारे। २६-३०

पारिलुळ्ळोरॆल्लामायोधनं कण्टु
नारायणा ! हरे ! नारायणयॆन्नार् । ११
विक्रमशालियां विष्णु जगन्मयन्
चक्रमॆरिञ्ञु मुरिच्चानवन्तल । १२
देहवुं भूमियिल् वीणिततुनेरं
देहियु माधवदेहमकंपुक्कान् । १३
देवकळ् पूमलर् तूकित्तुटङ्ङिनार्
देवनॆ वन्दिच्चु मामुनि जालवुं । १४
यादवन्मारुं तॆळिञ्ञु चमञ्ञितु
मेदिनीपालकन्मार् चिलर् कोपिच्चु । १५
धर्म्मजन् चॊल्लालॆ शेषक्रियकळु
निर्म्मलनामवनुतन्टॆ मकन् चॆय्तान् । १६
शेषं महाक्रतु चॆय्तु मुटिच्चितु
घोषिच्चु धर्म्मराजात्मजन् निर्म्मलन् । १७
आनन्दमुळ्क्कॊण्टु मन्नवनभृथ-
स्नानवुं चॆय्तितु वन्धुजनत्तॊटु । १८
इन्द्रन् सुधर्म्मयिलॆन्नपोलॆ धर-
णीन्द्रनास्थाने वसिक्कुन्नतुनेरं । १९
मायामयनां मयन् पणिचॆय्तोरु
तोयाकरं जलमॆन्नु निरूपिच्चु २०

घोर हुआ। युधिष्ठिर आदि और नारद आदि, निर्मल देवगण, नारीजन और ब्राह्मण लोग, सभी वीर राजगण और पृथिवी के अन्य निवासी भी युद्ध देखकर बोले "हे नारायण ! हे हरे ! हे नारायण !"। विक्रमशाली जगन्मय विष्णु ने अपना चक्र फेककर उसका सिर काट डाला। ७-१२ उसका शरीर भूमि पर गिर गया और उसकी आत्मा तो माधव ही मे लीन हो गयी। देवगण पुष्पवृष्टि करने लगे और मुनिजनो ने देव (कृष्ण) की वन्दना की। सभी यादव बहुत प्रसन्न हुए, पर कुछ भूपाल क्रुद्ध हुए। युधिष्ठिर के कहने पर उसके (शिशुपाल के) निर्मल पुत्र ने शेषक्रियाएँ की। महाक्रतु राजसूय का जो शेष था उसे समाप्त करके निर्मल धर्मपुत्र ने उसकी घोषणा की। तदनन्तर राजा ने बड़े आनन्द के साथ अपने बन्धुओ के साथ अवभृथ (यज्ञान्त) स्नान किया। जैसे इन्द्र अपनी सुधर्म्मा (देवसभा) मे विराजते है उसी प्रकार राजा युधिष्ठिर अपने आस्थान (सभामडप) मे विराजे। १३-१९ उस समय सुयोधन रेशमी

अच्छनेक्कोण्टु चौल्लिच्चु वरुत्तुक
निश्चय नाटु पऱिक्कुन्नतुण्टु ञान् । १०
ऐन्नु शकुनि पऱञ्ञतु केट्टप्पोळ्
चैन्नवन् तातनोटाशु चौल्लीटिनान् । ११
अन्धना भूपन् मुहूर्त्तमात्रमुळ्ळिल्
चिन्तिच्चु नन्दननृतन्नोटु चौल्लिनान् । १२
अन्धकारङ्ङळ् निरूपिच्चु मानसे
चिन्त मुळ्त्तु मुळ्त्तु दिनं प्रति । १३
सन्तापमुण्टाय् मॆलिञ्ञु वशंकॆट्टु
सन्ततं क्लेशिप्पतिनॆन्तु कारण ? १४
बन्धमिल्लेतुमितिन्नितु चौल्लिय
वन्धुक्कळेतु निनक्कु नन्नल्ल केळ् । १५
अन्तवरुमितुमूलमन्नेरत्तु
पिन्तुणयारु निनक्किल्लऱिक नी । १६
मन्त्रिकळिण्ट पऱयुं चिलरव-
रन्तरमिल्ल कौल्लिक्कुमतोर्क्कण । १७
कुन्तीसुतन्मार् निनक्कितिनाल् परि-
पन्थिकळाय्वरु पाण्डवन्मारुटॆ १८
वन्धुवाकुन्नतारॆन्नतोर्त्तीटणं
अधकवशाधिपन् नरकान्तक- १९

इसमे कोई सन्देह नही । पिताजी से कहलवाकर उसको वुलाओ । यह निश्चय है कि मैं उसका राज्य छीन लूँगा । शकुनि की यह वात सुनकर सुयोधन अपने पिता के पास जाकर वोला । अन्धे राजा ने थोड़ी देर सोचकर अपने पुत्र से कहा—"दु ख-हेतुओ को सोचते-सोचते प्रतिदिन तुम्हारी चिन्ता वढ रही है । सन्ताप के कारण दुवले हो रहे हो । लाचार होकर क्यो दु ख का अनुभव कर रहे हो ? कोई कारण नही है, और जिन वन्धुओ ने तुम्हे यह राय दी वे तुम्हारे हितैपी नही है । मेरी वात सुनो । ८-१५ इसके कारण तुम्हारा सत्यानाश होगा और उस समय तुम्हारा कोई अवलम्बन न होगा, जान लो । कुछ ऐसे मन्त्री है जो अभिलषित वाते कहते है, उनके लिए कोई अन्तर नही है वे मरवा देगे, याद रखो । इससे कुन्ती के पुत्र तुम्हारे शत्रु हो जायेगे और पाण्डवो के कौन वन्धु है यह याद रखे । अन्धकवश के पति, नरकासुर के नाशक (इनके) वन्धु है । इसका आधा भी मुझसे न कहो । पहले की तरह ही रहो ।

द्यूतक्रीड

हस्तिन पुक्कु धृतराष्ट्रपुत्रनु-
मत्तल् मुळुत्तुचमञ्ञु दिनंप्रति । १
धर्म्मजन् तन्टे धनवु प्रतापवु
नन्मयुं कण्टु सहियाञ्ञतुकालं । २
ताणितु बुद्धितळर्च्चयु पारमा-
यूणुमुरक्कवुमिल्लातेवन्नितु । ३
चेन्नु शकुनियोटेल्लाममात्यर्कळ्
चोन्नतु केट्टवनु वन्नु चोल्लिनान् । ४
पोक्कुवन् निन्नुटे दुःखङ्ङळोक्कवे
भोष्कॆन्निये परञ्ञीटु नी वैकाते । ५
धर्म्मजन्माविन् प्रतापवुमर्त्थवु
नन्मयु कण्टु पोरुत्तीलेनिक्कय्यो । ६
कुटमल्लेतुमतुण्टामतिन्नु नी
पटुवतल्ल शोकिप्पतोरिक्कलु । ७
अतुमितुकोण्टु दुःखिक्कवेण्ट नी
चूतुपोरुतु जयिच्चवन् तन्नुटे ८
नाटु नगरवुमर्त्थवु निन्नुटे
पाटाक्किक्कवय्क्कुन्नतुण्टिनि निर्ण्णयं । ९

द्यूत क्रीड़ा

धृतराष्ट्र का-पुत्र (सुयोधन) हस्तिनापुर पहुँचा और उसका दुःख दिन पर दिन बढने लगा। युधिष्ठिर का धन, प्रताप और सज्जनता देखकर वह सह न सका। उसकी बुद्धि भी कम होने लगी, वह बहुत दुबला हो गया। वह न खा सका, न सो सका। सभी अमात्यो ने शकुनि के पास जाकर बात बतलादी। वह भी सब सुनकर आया और बोला। मै तुम्हारे सभी दुःख दूर कर दूँगा। बिना विलम्ब के बतला दो क्या बात है। सुयोधन ने कहा "युधिष्ठिर का प्रताप, धर्म और सज्जनता को मै सह नही सकसा हूँ।" शकुनि बोला "यह कोई दोष नही। ऐसा होता है। परन्तु इसके लिए शोक करना तुम्हारे लिए उचित नही है। १-७ इसके लिए तुम दुःख मत करो। जुआ खेलकर, उसमे जीतकर उसका राज्य और नगर और धन मै तुम्हारा कर दूँगा,

मिल्लातेयाय्वरुमेल्लावरु कूटि
वल्लायम शिक्षिच्चटक्कुक नीतन्नें । ३०
एवं विदुरर् परञ्ञतु केळ्प्पति-
न्नावतल्लाते चमञ्ञु धृतराष्ट्रर् । ३१
पुत्रवात्सल्य निमित्तमाय् माधवन्
भक्तप्रियन् महामायाबलवशाल् ३२
भूभारनाशनत्तिन्नु पिरन्नोरु
गोपतिवैभवमार्क्कु तटुक्कावू । ३३
पार्त्थनेन्च्चेन्नु वरुत्तुकयेङ्किलु
मोर्त्तिटामेन्नतु केट्टु विदुररु । ३४
खाण्डवप्रस्थमकं पुक्कतुनेर
पाण्डवन्मारुमेतिरेट्टु पूजिच्चार् । ३५
अंविकापुत्रनु सौख्यमल्ली पुन-
रवुधिपत्नीसुतनेन्तरुळ् चेय्तु ? ३६
ऒन्तोरु वार्त्त पुतुतायिट्टुळ्ळतु-
मेन्तोरु कार्यं निरूपिच्चु वन्नतु ? ३७
धर्म्मजनिङ्ङने चोदिच्चनेरत्तु
निर्म्मलनाय विदुररुरचेय्तु ३८

दवाओ। पुत्रप्रेम के कारण धृतराष्ट्र तो विदुर की इस प्रकार की वाते मानने मे असमर्थ निकले। महामाया के वल के कारण पृथिवी का भार कम करने के लिए पैदा हुए भक्तप्रिय, माधथ गोपाल का वैभव कौन रोक सकता है ? धृतराष्ट्र ने कहा "ज़रा जाकर पार्थ (युधिष्ठिर) को बुलाओ, उससे भी सलाह कर ले" २९-३४ यह सुनकर विदुरजी खाण्डवप्रस्थ पहुँचे। तव पाण्डवो ने आगे चलकर उनका सत्कार किया और पूँछा—अविकापुत्र (धृतराष्ट्र) तो स्वस्थ है ? और अवुधिपत्नी (गगा) के पुत्र (भीष्म) ने क्या कहा ? क्या नया समाचार है और किस काम के लिये आप पधारे है ? जव युधिष्ठिर ने इस प्रकार पूछा तव निर्मल विदुर ने उत्तर दिया। "सव विधि के हाथ मे है, हे युधिष्ठिर ! मालूम होता है कि दुर्योधन जुआ खेलना चाहते हैं। इस लिए तुम्हे बुलाने के लिये, राजा धृतराष्ट्र ने मुझे भेजा है। क्या भला है और क्या बुरा है, यह सोचकर मै तो भला करने के लिए ही राय दे सकता हूँ।" ३५-४१ तव निर्मल सन्मति धर्मपुत्र ने प्रमोद के साथ विदुरजी से कहा—"ताऊजी जहाँ बुलाते हो वहाँ मैं अवश्य जाऊँगा। मैं जाकर उन्हे जूए के दोष

नॅन्नोटितेतु पऽयाय्क पातियु
मुन्नेवण्णतन्नें वाळ्क नीयॅन्नतु- २०
मंबिकापुत्रन् पऽञ्ञतु केट्टप्पोळ्
तन्मनक्कान्पिल् वॅरुत्तु सुयोधनन् । २१
तीर्त्थमाटीट्टुवान् पोकुन्नतुण्टु आन्
पेर्त्तिविटेक्कु वरुन्नतुमिल्लिनि । २२
तातननुजनिलुळ्ळॊरु वात्सल्य
चेतसि धर्म्मात्मजनिलुमुण्टल्लो । २३
तातनुदकपिण्डादिकळ् नल्कुवान्
प्रीतियु पाण्डुसुतङ्कले निर्ण्णयं । २४
आनिनि देशान्तरं गमिच्चीटुवन्
नूनमॅन्नाल् तव कर्म्ममतिन्निल्ल । २५
मन्नवनॅन्नतु केट्टु विदुररॆ-
च्चॅन्नु वरुत्तुकॅन्नानवनु वन्नु । २६
गूढमायिङ्ङनॆयेल्लावरुमॊत्तु-
कूटि निरूपिच्चु कल्पिच्च कारिय २७
उळ्ळवण्ण धरिच्चोरु विदुररु
चॊल्लिलनानन्नु धृतराष्ट्ररॆ नोक्कि । २८
नल्लतिनल्ल तुटङ्ङुन्नु निन्मकन्
नल्लतल्लेतुमे मेलिलितुमूल- २९

अविकापुत्र (धृतराष्ट्र) की यह बात सुनकर सुयोधन अप्रसन्न हुआ । १६-२१ (और बोला) मै तीर्थयात्रा के लिए जा रहा हूँ और फिर यहाँ वापस नही आऊँगा । पिताजी का अपने छोटे भाई के प्रति जितना प्रेम है उतना प्रेम युधिष्ठिर के प्रति भी है । पिताजी यही पसन्द करेगे कि पाण्डुपुत्र (युधिष्ठिर) ही आपको उदक और पिण्ड दे, इसमे सन्देह नही । मैं अब देशान्तर चला जाऊँगा क्योकि मुझे तो आपकी क्रिया न करनी होगी । यह सुनकर राजा (धृतराष्ट्र) ने कहा— "विदुर को बुलाओ" । विदुर भी आ गये । जिस काम को करने के लिए सब ने रहस्य मे सोचकर निर्णय किया था उसकी यथार्थ स्थिति को समझकर विदुरजी धृतराष्ट्र से बोले । २२-२८ जो तुम्हारा पुत्र प्रस्तुत कर रहा है यह अच्छा काम नही है, इसके कारण आगे चलकर सब नष्ट हो जायेगे । इस बुरे काम को मना करो और तुम ही इसको

मूत्तिलुमोन्नु साधिक्कामतेन्निये
मून्नु वराय्कलुमिल्लोरु सङ्कट । ५१
तङ्ङळिलित्थ विशेषङ्ङळु पऱ-
ञ्ञङ्ङने रात्रि कळिञ्ञोरनन्तर । ५२
नेरत्तेळुन्नेट्टु नित्यकर्म्म चेय्तु
कूटलर्कालन्माराकिय पाण्डवर् । ५३
तेरिल् करेऱि विदुररुमाय् चेन्नु
पाराते हस्तिनमाय पुरं पुक्कार् । ५४
अम्मयां गान्धारितन्नेयु वन्दिच्चा-
रंबुराशिप्रियपुत्रनेयु तोळु- ५५
तन्पिनोटाचार्यन्मारेयुं वन्दिच्चार्
अश्वत्थामादि बन्धुक्कळेयुं कण्टु । ५६
विश्रमिच्चीटिनार् पाण्डुसुतन्मारु
इष्टमायुळ्ळ जनत्तोटुमोन्निच्चु
मृष्टमायूणुं कळिञ्ञुरङ्ङीटिनार् । ५७
पिटेन्नाळ् नेरत्तु नित्यकर्म्म कळि-
च्चुटवरोटुमरचन् सभ पुक्कु ५८
चूतु पोरुवान् विळिच्चितेन्नु पिता-
वादरपूर्व्व परञ्ञोरनन्तर ५९
चूतिनापत्तोळिञ्ञिल्लेन्नु धर्म्मजन्
मोदालनेकमितिहासवुं चोन्नान् । ६०

फिर तीन बातो मे से एक अवश्य होगी। तीनों मे से एक सिद्ध हो सकती है। उनमे से अगर एक भी न हो जाय तो कोई हानि नही है। इस प्रकार आपस मे समाचार कहते हुए रात बिता दी। तदनन्तर तड़के उठकर अपने नित्यकर्म से निवृत्त होकर शत्रुओ के नाशक पाण्डव विदुरजी के साथ रथ पर बैठकर निकले और तुरन्त ही हस्तिनापुर पहुँचे। ५१-५४ उन्होने माँ गान्धारी की वन्दना की, समुद्र की प्रिया (गगा) के पुत्र (भीष्म) को प्रणाम किया, प्रेम से आचार्यो की भी वन्दना की और अश्वत्थामा आदि बन्धुओ का दर्शन किया। तदनन्तर पाण्डवो ने विश्राम किया। फिर इष्टजनो के साथ यथेष्ट भोजन करके सो गये। दूसरे दिन तड़के उठकर नित्यकर्म से निवृत्त होकर बन्धुओ के साथ, राजा (धृतराष्ट्र) सभा मे आये और बोले कि जुआ खेलने के लिए मैने तुम्हे बुलवाया। तब युधिष्ठिर ने कहा कि जूए मे दोप बहुत है और अनेक

अॅल्ला विधिवशमल्लो युधिष्ठिर !
पॉल्लात चूतु पॉरेणंपोलॅन्निट्टु ३९
निन्नॆ वरुत्तुकॅन्नॆन्नॆयर्यच्चितु
मन्नवनाय धृतराष्ट्रर्तान्तन्नॆ । ४०
नल्लतुमाकात्ततु निरूपिच्चिट्टु
नल्लतु चॆय्कॅन्नॆ चॉल्लावितॆन्नाले । ४१
सन्मति निर्म्मलन् धर्म्मजन् चॉल्लिनान्
सम्मोदमोटु विदुररोटन्नेर । ४२
तातन् विळिच्चविटत्तिनु चॆल्लुवा-
नेतुमे संशयिच्चीटुन्नतिल्ल ञान् । ४३
चूतिनुळ्ळोरु दोषङ्ङळ् चॉल्लीटिनाल्
चूतु पॉरातॆ कळिक्किलो नन्नल्लो । ४४
पिन्नॆस्सुयोधनाभीष्टङ्ङळायव
तन्नॆ पणयकॉटुत्तवनाय्वन्नाल् ४५
निङ्ङळ् तटस्सन्मारायुळ्ळवर् चिलर्
मंगलवाक्यङ्ङळ् कॉण्टॊळिच्चीटुविन् । ४६
अॅन्नालुमावतिल्लाय्किल् मून्नामतु
पिन्नॆयु चूतु पॉरुतु तोटीटुवन् । ४७
अॅन्नाल् जयमत्तनाय सुयोधनन्-
तन्नॆ सभापालकन्मारॆ निन्दिच्चु ४८
दुर्भाषणादि दुष्कर्म्मङ्ङळ् चॆय्तीटु-
मप्पोळ् सभातिक्रम कण्टु सभ्यन्मार् ४९
कर्ण्णवु कण्णुमटच्चु नटकॉळ्ळु
पिन्नॆयेतानुमॉन्नुण्टु वरु बलाल् । ५०

बतला दूँगा। उन्हे सुनकर अगर वे जुआ खेलने के लिए मना कर देंगे तो अच्छा ही होगा। तदनन्तर सुयोधन को उसके अभीष्ट पदार्थ देकर सन्तुष्ट किया जाय। तत्पश्चात् अगर वह स्वय आवे तो आप लोगो मे से जो जुए के विरोधी है वे उससे मगल शब्द कहकर उसे जुए से दूर करे। इसके बाद भी उसे अगर रोका नही जा सकता है तो तीन बार जुआ खेलकर मैं हार जाऊँगा। परंतु जयमत्त सुयोधन स्वय सभापालको की निन्दा करेगा, दुर्भाषण और दुष्कर्म करेगा। तब सभा का यह अति-क्रम देखकर सदस्य लोग कान और आँख वन्द करके चले जायँगे। ४२-५०

वच्चतु वच्चतु तोटितु पाण्डवन्
वच्चु पणयं धनधान्यराज्यवु । ७१
वच्चतु वच्चतु वेन्नु शकुनियु
वच्चु पणयवु धर्म्मजनेप्पेरुं । ७२
वञ्चन चोल्लुवान् नेञ्चकमञ्चुन्नु
किञ्चन संशयं कूटाते धर्म्मजन् ७३
नेञ्चकमायुळ्ळनुजन्मार्तम्मेयुं
कोञ्चुंमोळियाळा पाञ्चालितन्नेयु ७४
वच्चु पणय चिरिच्चितु वैरिक-
ळय्यो ! शिव ! शिव ! कष्टमेन्नार् चिलर् । ७५
सज्जनमेट्ट वेरुत्तु शकुनियेे
सज्वरमप्पोळ् विदुररुरचेय्तु । ७६
अबिकानन्दन ! केळ्क्क ञान् चोल्वतु
निन्मकनङ्ङु पिरन्ननेरं तुलो ७७
दुर्न्निमित्तङ्ङळुण्टायतरिञ्ञीले
मन्नवर्वशमशेप मुटिवानाय् । ७८
कळ्ळच्चूतिट्टु शकुनि चतिक्कया-
लुळ्ळं तेळिवुळ्ळ धर्म्मजन्माविनो- ७९
टुळ्ळ पोरुळटयक्कोण्टुकोण्टान्पोल्
उळ्ळतल्लेतुमतेन्नरिञ्ञीट्टु नी । ८०

फिर धन, धान्य और राज्य ही को पण (दाँव) पर लगाया। जो कुछ भी लगाया गया उसे शकुनि ने जीत लिया। पर धर्मपुत्र सब लगाते ही गये। बेईमानी कहने मे लज्जा मालूम होती है। युधिष्ठिर ने तो बिना हिचके, अपने हृदय के समान छोटे भाइयो को, मीठी आवाज़वाली द्रौपदी तक को भी पण (दाँव) मे लगा दिया। शत्रु हँसे परन्तु कुछ लोगो ने कहा—हा! शिव! यह क्या अन्धेर है? ६८-७५ सज्जनो को शकुनि से घृणा हो गई। और विदुरजी घबडाकर बोले—हे अबिकापुत्र (धृतराष्ट्र)! मेरी बात सुनो! जब तुम्हारे पुत्र का जन्म हुआ उस समय, तुम्हे स्मरण होगा, अशुभ लक्षण बहुत हुए जो सारे राजवश के नाश के सूचक थे। शकुनि ने झूठा खेल, खेलकर सीधे युधिष्ठिर की सारी सम्पत्ति जीत ली। जान लो कि यह हो ही न सकता। यह बन्द हो! अगर और लोगो का नाश न होना है तो सुयोधन यहाँ से चला जाय युधिष्ठिर सारी पृथिवी पर राज़ करे। हे राजन! बटवारे की बात व्यर्थ है। ७६-८२ विदुरजी

तातनियोगमनुष्ठिप्पतिन्नु ञा-
नेतु मटिक्कुन्नतिल्लॆन्नु धर्म्मजन् ६१
व्याकुलमानसनायिरिक्कु नेरं
नागध्वजनु मुतिन्न्नानतुनेरं । ६२
अक्षवु चूतुमॆट्टुत्तुकॊण्टन्निट्टु
वय्क्कणमॆन्नु मुतिन्न्नु शकुनियुं । ६३
कर्म्मिच्चतॆल्ला वरुमॆन्नु चिन्तिच्चु
धर्म्मजन्तानुमिरुन्नु सभयिङ्कल् । ६४
कळ्ळच्चूतेतु पॊरॊल्ल नीयॆन्नतु-
मुळ्ळतॆळिञ्ञुरचय्तु युधिष्ठिरन् । ६५
अय्यो ! चतियुण्टो चूतिङ्कल् काट्टावू
मॆय्योटु पण्टु पॊरुमितु मन्नवर् । ६६
दैवमत्रॆयितिन्नाधारमाकुन्न-
तव्याजमायॊन्नु चूतॆन्नरिञ्ञालुं । ६७
गान्धारवीरन् पॊरुन्नोरु चूतिन्नु
ञान्तन्नॆ वय्क्कां पणयं पॊरुतालु ६८
ऎन्नु दुरियोधनन् परञ्ञीटुन्पोळ्
मन्नवन् चूतु पॊरुतु तुटङ्ङिनान् । ६९
वाल्हिकदत्तरथकुण्डलादिकळ्
सोल्लासमादियिल् वच्चु पणयमाय् । ७०

इतिहास वतलाकर प्रेम से समझाया और कहा, "यो तो मैं पिताजी (धृतराष्ट्र) की आज्ञा का पालन करने के लिए तैयार हूँ"। ५५-६१ यह कहकर युधिष्ठिर उत्कण्ठित होकर बैठ गये। इस समय नागध्वज (दुर्योधन) तैयार होकर आगे वढा। 'अक्ष (पाँसा) और जूए की सामग्री मगवाना', ऐसा कहकर शकुनि भी आगे वढा। यह समझकर कि अपने कर्म का फल तो होगा ही, युधिष्ठिर भी सभा मे बैठ गये। युधिष्ठिर ने शुद्ध हृदय से कहा, "जूआ खेलने मे वेईमानी न करो"। तव सुयोधन ने कहा, 'वाह! क्या जूए मे वेईमानी की जाती है? पहले के राजा वड़ी नेकी से खेलते थे। भगवान् ही इस खेल का आधार है। ६२-६७ जानलो कि जूए मे कपट नही होता है। गान्धार के वीर जव खेलेगे तो मै ही उसमे पण (दाँव) लगाऊँगा। खेलिये।' यह सुनकर राजा (युधिष्ठिर) खेलने लगे। प्रारम्भ मे वाल्हीक के दिये रथ और कुण्डल सोल्लास पण (दाँव) के रूप मे लगाये गये। राजा ने जो कुछ भी लगाया उसे खो दिया।

कृष्णे ! वरिक नी मुटमटिप्पानें-
न्नुण्णिच्चुनिन्नोरु दुश्शासनन् चॊन्नान् । २
दुश्शासनन् चॆन्नु लज्जयु कैविट्टु
दुश्शासनचॆय्तनेरत्तु कृष्णयुं ३
पोरुवानुण्टु विषममॆनिक्कॆन्नु
वारिजलोचनतानुरचॆय्तप्पोळ् । ४
तन्वि रजस्वलयायिरिक्कॆत्तन्नॆ
चॆन्नु तलमुटि चुटिप्पिटिपॆट्टु । ५
सज्जनमॆल्लारुं नोक्किकयिरिक्कवे
दुर्ज्जनाग्रेसरन् दुश्शासनन् खलन् ६
कच्चेल्मुलयाळॆयीळ्त्तु सभयिङ्कल्
स्वच्छमायेट मृदुतरमाकिय ७
वस्त्रमॊरुतल चुटिप्पिटिपॆट्टु
निस्तेजनेटं मटियातळिच्चप्पोळ् । ८
नारीमणियुं मुऱ्तुटङ्ङीटिनाळ्
नारायणा ! हरे ! राम ! दयापर ! ९
विष्णो ! जगल्पते ! वृष्णिकुलोत्भव !
कृष्ण ! यदुपते ! पाहि नमोनमः । १०
श्रीवासुदेव ! धरणीधर ! चक्रपाणे !
हे वराह ! नरसिंह ! हे राघव ! । ११

कहा, "मै नही आ सकती हूँ" । तव जाकर दुश्शासन ने उस रजस्वले का केश पकड़ लिया । जव सभी सज्जन देख रहे थे तव दुष्टो के नेता खल दुश्शासन ने इस रूपवती को सभा मे खीचा । और उसके स्वच्छ और महीन वस्त्र को एक सिरे से पकडकर वह निर्लज्ज उसे बिना हिचक के उतारने लगा । १-८ तव वह महिलारत्न चिल्लाने लगी—हे नारायण ! हे राम ! हे दयानिधे ! हे विष्णो ! हे जगत्पते ! हे वृष्णिकुलोद्भव ! हे कृष्ण ! हे यदुपते ! रक्षा करो, नमोनम । हे वासुदेव ! हे धरणीधर ! हे चक्रपाणे ! हे वराह ! हे नरसिंह ! हे राघव ! हे पद्मनाभ ! हे कृष्ण! हे राम ! हे मुरहर ! हे कमलाक्ष ! हे लक्ष्मीपते ! हे केशव ! हे देवाधिनाथ ! हे हरे ! तुम्हे प्रणाम ! हे देवकीनन्दन ! रक्षा करो ! नमोनमः ! द्रौपदी ने जब इस प्रकार विलाप किया, ९-१४ तब उसका वस्त्र जितना उतारा गया उतना उसके स्थान पर दूसरा दिखाई दिया । बहुत कपड़ो के

आका सुयोधनन् पोकयिविट्टुन्नु
चाकातिरिक्कण मट्टुळ्ळवरेङ्किल् ८१
वाळ्क युधिष्ठिरन् वैकाते भूतलं
भाग पऱञ्ञाल् फलमिल्ल मन्नवा ! ८२
ऎन्नु विदुरर् पऱञ्ञतु केट्टप्पोळ्
मन्नवनाय सुयोधनन् चॊल्लिनान् । ८३
कर्णा ! नी केट्टीले नल्ल विदुरर्वा-
क्कॆन्ने दूषिच्चे पऱयूयिवन् पण्टुं । ८४
दुश्चेष्टयुळ्ळोरु दासीसुतन् तनि-
क्कॆच्चिल् कॊट्टुत्तु वळर्त्ततिन्टे फलं । ८५
आक ञानॆङ्किलिविट्टुन्नुतान् पोयि
वाळ्क तनिक्कु तोळिञ्ञेटत्तॆङ्ङानुं । ८६
निल्क्कर्तल्लां वॆळिच्चत्तिट्टुन्निल्ल ञान्
धिक्करिच्चाल् पिळच्चीटुमॆल्लावनुं । ८७
पार्क्कुन्नतॆन्तिन्निनिच्चिल कार्यङ्ङळ्
भोष्काय् वरुमो युधिष्ठिरन् चॊल्लियाल् । ८८

द्रौपदीवस्त्राक्षेपं

पाञ्चालितन्नॆ विळिक्कयिनियेतुं
चाञ्चल्यं वेण्टयॆन्नाशु सुयोधनन् । १

की यह बात सुनकर राजा सुयोधन ने कहा—"हे कर्ण ! सुनी विदुर की बात ? यह हमेशा मुझ पर दोष लगाते है । इस कुकर्मी दासी के पुत्र को जूठा खिलाकर पालन-पोषण करने का यही फल होता है । अब मुझसे न होगा । अब मै यहाँ से जाता हूँ, जहाँ तुम्हे पसन्द होगा वहाँ रहो । जाने दो । इन बातो को मै न खोलूँगा, अगर कोई अपमान करे तो सभी के मुँह से बाते निकल जाती । अब विलम्ब क्यो किया जा रहा है ? । युधिष्ठिर की कही बाते असत्य थोड़े ही निकलेगी ? । ८३-८८

द्रौपदी-वस्त्रापहरण

"पाञ्चाली को बुलाओ । अब बिलकुल न हिचकना", ऐसा सुयोधन ने आवेश से कहा । तब दुश्शासन बडी गर्मी के साथ बोले—"हे कृष्णे (द्रौपदी !) आओ और घर के सामने झाड़ू लगाओ !" जब दुश्शासन ने इस प्रकार लज्जा छोड़कर अनुचित आज्ञा दी तब कमलाक्षी द्रौपदी ने

धार्त्तराष्ट्रन्मारे ! निङ्डळिलारानु
पार्त्थिवनन्दनयाय पाञ्चालियें २३
वल्लभयाक्कि भरिच्चुकॊळ्कॆन्नतु
चॊल्लिनान् कर्ण्णनसूय मुळुक्कयाल् । २४
कात्तुकॊळ्कॆन्नॆद्धृतराष्ट्रमन्नव !
कात्तुकॊळ्कॆन्नॆ नी गान्धारिमातावे ! २५
कात्तुकॊण्टीटुविन् द्रोणरुं भीष्मरुं
कात्तुकॊळ्विन् सभापालन्मारें ! निङ्डळ् । २६
धर्म्मराजावे ! जगल्प्राण ! मारुत !
धर्म्मप्रधाननायुळ्ळ देवाधिप ! २७
अश्विनीदेवकळे ! वन्नु निङ्ङळुं
दुश्शासनकृतदु.खमटक्कुविन् ! २८
अय्यो ! युधिष्ठिर ! भीम! धनञ्जय !
कैवॆटिञ्ञो निङ्डळ् माद्रीसुतन्मारे? २९
आर्त्तयायिङ्ङनॆ पेर्त्तु मुऱयिट्टु
पार्त्थिवनन्दन शापमिट्टीटिनाळ् ३०
धार्त्तराष्ट्रन्मारे! निङ्ङळ् शतत्तेयुं
पोर्त्तलत्तिङ्क्कॆन्नु कॊल्लुक मारुति। ३१
पोराय्म चेर्प्पतिन्नाळाय कर्ण्णनॆ-
प्पोरिलॆतिर्त्तु धनञ्जयन् कॊल्लुक । ३२

प्रेयसी वनाकर रख लो", ऐसा कर्ण ने असूया के बढ़ने से कहा । "हे राजा धृतराष्ट्र ! मेरी रक्षा करो ! हे माता गान्धारी जी ! मेरी रक्षा करो ! हे द्रोणजी और भीष्मजी ! मेरी रक्षा करो ! हे सभापाल ! आप लोग भी मेरी रक्षा करो । हे धर्मराज (यमराज) ! हे जगत्प्राण वायो ! हे धर्मप्रधान देवाधिप ! २२-२७ हे अश्विनी देव ! आप सब आकर दुश्शासन का किया हुआ मेरा दु.ख दूर करो । हा युधिष्ठिर ! भीम ! अर्जुन ! हे माद्री के पुत्र ! क्या तुम लोगो ने मुझे छोड़ दिया है ?" दु खित होकर इस प्रकार चिल्लाती हुई राजपुत्री ने इस प्रकार शाप दिया—हे धार्तराष्ट्र ! आप सौ भाइयो को भीम युद्धभूमि मे नष्ट कर दे ! अपमान करनेवाले कर्ण को धनञ्जय युद्ध मे हत्या करे ! घृणा के कारण शकुनि को वीर सहदेव युद्ध मे ध्वस कर दे ! २८-३३ शाप देकर जब वह रो रही थी तब भीष्म, द्रोण और विदुर क्रुद्ध होकर धृतराष्ट्र के पास

पत्मनाभ ! कृष्ण ! राम ! मुरहर !
पत्मावलोकन ! पत्मालयापते ! १२
देव देव ! महादेवेश ! केशव !
देवाधिनाथ ! हरे ! ते नमो नमः १३
देवकीनन्दना ! पाहि नमो नमः ।
इत्थं प्रलापं कलन्नोरुनेरत्तु १४
वस्त्रमळिच्चोळमुण्टङ्ङु पिन्नेयु ।
एऱियोराटयवनळिच्चिट्टिट्टु १५
कूऱयरयीन्तु वेऱायितिल्लेतु ।
कूऱरविन्दाक्षनुण्टायालुळ्ळोरु १६
कारियमङ्ङने वन्तु जायमेटो ।
निर्ज्जरनायकनन्दननाकियो- १७
रर्ज्जुनभीमादिकळ् कण्टुनिल्क्कुन्नू ।
पिच्चयवरुटे धैर्य निरूपिक्कि-
लच्युतन्तन्नुटेमायाबलवशाल् । १८
आर्क्कभिमानक्षयवुमापत्तुमि-
तोर्क्किल् मनुष्यनायाल् वरातेयुळ्ळु ? १९
काञ्चिकळ्ळकोण्टु मुऱुकिक्किटन्नोरु
पाञ्चालितन्नुटे पूञ्चेलयन्नेरं २०
मटोरु दुष्टन् पिटिच्चळिक्कुन्नतु
कुटमोळिञ्ञवर् कण्टुनिन्नीटिनार् । २१
सत्यत्ते लघिक्करुतेन्नु चिन्तिच्चु
सत्यपरायणन्मारटङ्ङी दृढं । २२

उतर जाने पर भी उसकी कमर वस्त्रहीन कभी न हुई । अगर अरविन्दाक्ष (कृष्ण) के प्रति प्रेम है तो उसका ऐसा फल होना स्वाभाविक है । देवो के पति के पुत्र अर्जुन, भीम और अन्य लोग देखते खडे है ! उनका धैर्य अद्भुत निकला, अच्युत के मायाबल के कारण । सोचिये तो इस बात को सोचकर कौन ऐसा मनुष्य है जिसकी प्रतिष्ठाहानि और विपत्ति नही हो सकती ? मेखला मे बँधी हुई द्रौपदी की साड़ी को एक दुष्ट पकडकर उतार रहा था और सज्जन लोग उसे देखकर चुप खडे थे ! । १५-२१ 'सत्य का उल्लघन नही करना चाहिये', यह समझकर ईमानदार लोग चुप रह गये । "हे धार्तराष्ट्र ! आप लोगो मे कोई इस राजपुत्री पाञ्चाली को अपनी

इन्नुमोरिक्कल् विळिच्चु पोरुतेङ्कि-
लेन्ततनुवदिच्चु धृतराष्ट्ररुं । ४५
वन्नुपोकिन्नुमोरिक्कल् पोरुकेन्नाल्
वन्नुपोकेण कुलनाशमेन्मतं । ४६
इन्निप्पणयमाकुन्नतु तोटव-
रिन्नुतन्ने वनवास तुटङ्ङण । ४७
द्वादशसंवत्सरं मुळुवन् गत-
साद तपसा वनत्तिल् वसिक्कणं । ४८
अज्ञातवासवुमोराण्टु चेय्यण
विज्ञानिकळुळ्ळनाट्टिलिरुन्निट्टु । ४९
मध्येयरिञ्ञुपोयीटुकिल् पिन्नेयु-
मव्दत्रयोदशमिङ्ङने वाळण- ५०
मेन्नु परञ्ञु निरत्तिप्पोरुतितु
मन्नवन् धर्म्मजन् पिन्नेयु तोटुपोल् । ५१
कुन्तीसुतन्मार् धृतराष्ट्रर्तन्नेयु
कुन्तियोटोत्तु गान्धारियेत्तन्नेयुं ५२
द्रोणरेयु कृपाचार्यनेत्तन्नेयु
ताणुतोळुतितु भीष्मरेयु नन्नाय् । ५३
वीणु नमस्करिच्चार् मुनिमारेयुं
केणुतुटङ्ङिनार् पौरजनङ्ङळु । ५४

भूपाल दुर्योधन और शकुनि और कर्ण ने आपस मे सलाह की और निश्चय किया—"ये पाण्डव किसी दिन फिर बड़े हो सकते है और हमको उस समय इनको जीतना कठिन होगा। इसलिए इनको फिर जूआ खेलने के लिये बुलाया जाय!" धृतराष्ट्र ने भी इसका अनुमोदन किया। "आज एक बार और चले आओ और लडो (जुआ खेलो)। मेरे मत मे कुलनाश हो ही जायगा। ४१-४६ और आज शर्त यह होगी कि हारनेवाले आज से ही वनवास प्ररम्भ करे। और बारह बरस लगातार वन मे तपस्या करते रहे। उसके बाद किसी ऐसे देश मे एक बरस अज्ञातवास करे जहाँ विद्वान् हो। अगर बीच मे पहचाने गये तो फिर और तेरह बरस इसी तरह बिताना होगा।" ऐसा कहने के बाद जूआ का खेल प्रारभ हुआ और युधिष्ठिर फिर हार गये। कुन्ती के पुत्रो ने, कुन्ती के साथ, धृतराष्ट्र को, गान्धारी को, द्रोणाचार्य को और कृपाचार्य को और भीष्म को झुककर प्रणाम किया। ४७-५३ मुनियो को भी उन्होने साष्टाङ्ग

वीरुकोंट्टुत्त शकुनियेयुं पोरिल्
वीरनायोरु सहदेवन् कोंल्लुक । ३३
शापवुमिट्टवळ् केळुन्ननेरत्तु
कोपेन भीष्मरुं द्रोणर् विदुररुं ३४
चेन्नु धृतराष्ट्ररोटु परञ्ञितु
नन्नल्ल मक्कळ् मुटिञ्ञुपोमिप्पोंळे । ३५
तेञ्चोंल्लाळाकिय पाञ्चालितन्नुटे
पून्चायलुं नल्ल पून्चेलयुमोंरु ३६
चाञ्चल्यमेन्निये तोंट्टवनन्नं नी-
तान्चेन्नु शिक्षिक्कयेन्नतु केट्टप्पोळ् ३७
पाञ्चालियोटु परञ्ञु धृतराष्ट्रर्
वाञ्छितमायतु ञान् तरुवन् वर । ३८
चोंल्लुक वेणुन्नतेन्नतु केट्टवळ्
चोंल्लिनाळ् तोंण्टविरच्चुकोंण्टाकुलाल् । ३९
भर्त्ताक्कन्मारुटे दास्यवुमेन्नुटे
भृत्य प्रवृत्तियुमिल्लातेयाक्कण । ४०
अल्लल् कळञ्ञालुमिन्नुतोंट्टेङ्किल-
तिल्लेन्नु चोंल्लि धृतराष्ट्रर्तान्तन्ने । ४१
वन्दिच्चु पाञ्चालि पाण्डवन्मारुमा-
यिन्द्रप्रस्थत्तिनु पोवान् तुटङ्ङुम्पोळ् ४२
मन्नन् दुरियोधननु शकुनियु
कर्ण्णनुं कूटि निरूपिच्चु कलिपच्चार् । ४३
इन्नुमोंरुनाळवर् वलुताय् वरु-
मेन्नाल् नमुक्कु जयिप्पान् पणियत्रे । ४४

गये और बोले—"यह ठीक नही है । तुम्हारे सभी पुत्र नष्ट हो जायेगे । मीठी आवाजवाली पाञ्चाली के केशपाश को और शोभन वस्त्र को जिसने धृष्टता के साथ छुआ उसको तुम ही दण्ड दो ।" यह सुनकर धृतराष्ट्र ने पाञ्चाली से कहा—"तुम्हे जो वर चाहिये मैं दूंगा । कहो क्या चाहिये ।" यह सुनकर उसने दु.ख से कॉपती हुई आवाज मे कहा—"मेरे पतियो के दासत्व और मेरे भृत्वत्व को समाप्त करो" । ३४-४० तब धृतराष्ट्र ने स्वय कहा—"घबड़ाओ मत । आज से दोनो समाप्त समझो" । पाञ्चाली उनकी वन्दना करके पाण्डवो के साथ इन्द्रप्रस्थ जाने ही वाली थी । जब

आरण्यं

कालत्तेक्कळयाते चॊल्लु नी किळिप्पॆण्णे !
नीलत्ते वॆन्न निरमुळ्ळ गोविन्दन्तन्टे १
लीलकळ् केट्टाल् मतियाकयिल्लॊरिक्कलु
पालोटु पळं पञ्चसारयु तरुवन् ञान् । २
मालोकर्क्किकतमुळ्ळ माधवन्तन्टे लील
कालंवैकाते परञ्ञीटुवन् केळ्प्पिन् निङ्ङळ् । ३
पालाळिमङ्कतन्टे कॊङ्कयिलिळ्कुन्न
मालेयं पूण्ट तिरुमारुळ्ळ नारायणन् ४
पालाळितन्निल् पळ्ळिकॊळ्ळुन्न परन् पुमान्
कालदेशावस्थयिल् खण्डना जगन्नाथन् ५
नालाय वेदङ्ङळ्क्कुमीरेळु लोकङ्ङळ्क्कुं
मूलमाकिय मूर्त्ति मुकुन्दन् मुरवैरि ६
कालनाशनसेव्यन् कामदन् कमलाक्षन्
कालिकळ्मेच्चु काट्टिल् कळिच्चीटिन देवन् ७
पालनविनाशनसृष्टिकळ्चेय्युं देवन्
नीलांभोरुहदललोचनन् मूर्त्ति कृष्णन् ८
ऎन्नुळ्ळिल् विळङ्ङुन्न तन्पुरान्तन्टे पादं
तन्नुळ्ळिल् चेर्त्तुकॊण्टु धर्म्मजन् तिरुवटि ९

आरण्य पर्व ।

हे शुकी ! विना विलम्ब के और सुनाओ ! नील का उपहास करनेवाले (श्यामवर्ण को धारण) करनेवाले गोविन्द की लीलाएँ सुनकर कभी तृप्ति नही होती । मैं तुम्हें दूध के साथ कदली फल और शक्कर दूँगा । (शुकी बोली) जनता को प्रिय लगनेवाली माधव की लीलाएँ विना विलम्ब के सुनाऊँगी, सुन लीजिये । लक्ष्मी के स्तनो के चन्दन से लिप्त वक्ष:स्थलवाले नारायण, क्षीरसागर ही मे सोनेवाले परपुरुष, (और) काल, देश और अवस्था के अनुसार अनेक हो जानेवाले, चारो वेदों की और चौदहो लोकों की मूल मूर्त्ति, मुकुन्द, मुरवैरि, शिवजी के सेव्य, कामद, कमललोचन, वन मे गाय चराकर खेलनेवाले देव, १-७ सृष्टि, पालन और विनाश करनेवाले देव, नीलकमल के दल के सदृश लोचनवाले कृष्ण भगवान् के चरणों का ध्यान करते हुए आदरणीय युधिष्ठिर ने अपने भाइयों और

अश्वत्थामावादियायुळ्ळोरवरोटु
निश्वासमुळ्क्कोण्टु यात्नयु चोल्लिनार् । ५५
विश्वसिच्चीटुविन् दैवत्तेयेन्नतु
विश्वस्तनाय विदुररुरचेय्तान् । ५६
पारिच्च कारुण्यमुण्टायिरिक्कणं
नेरत्तु ञङ्ङळ् वरुन्नतुमुण्टल्लो । ५७
कर्म्मवशत्ताल् वरुन्नतोळिक्कामो
धर्म्मसुत ! अेन्नवर्कळुं चोल्लिनार् । ५८
नाटु नगरवुं वीटुमुपेक्षिच्चु
काटकंपूवान् जटावल्क्कलं पूण्टु । ५९
कूटवे पोयितु धौम्यनवरुमाय्
गूढस्मितनाय्च्चमञ्ञु सुयोधनन् । ६०
ब्राह्मणरुमनुजन्मारुं भार्य्यु ।
धार्म्मिकनाकिय धर्म्मतनयनु । ६१
पोकुन्नतु कण्टु साधुजनङ्ङळुं
वेकुं मनस्सोटु कण्णुनीरुं वार्त्तु । ६२
तङ्ङळिल्तङ्ङळिल् नोक्काते मिण्टाते
तिङ्ङिन वेदन पोङ्ङियेल्लावरु । ६३
निल्क्कुन्ननेरत्तु मल्गतियुण्टावान्
पुक्कारटवियिल् पाण्वरुमन्ने ६४

नमस्कार किया । और नगर के निवासी रोने लगे । अश्वत्थामा आदि जनो से भी निश्वास लेते हुए बिदा हुए । विश्वस्त विदुरजी ने कहा— "भगवान् मे विश्वास करते रहो" । (उन्होने उत्तर दिया) "हम लोगों के प्रति कारुण्य रहे, हम लोग जल्दी ही आजायेंगे" । "हे धर्मपुत्र, अपने कर्म के कारण जो होता है उसे कैसे टाला जा सकता है?", ऐसा (विदुर आदि ने) कहा । देश, नगर और घर को ग्यागकर बन जाने के लिए उन्होने जटा और वल्कल धारण किया । ५४-५९ धौम्यजी भी उनके साथ गये । सुयोधन भीतर ही भीतर हँस रहा था । धार्मिक युधिष्ठिर को ब्राह्मणो, अपने छोटे भाइयो और पत्नी के साथ बन जाते देखकर सज्जनो ने दु:खित होकर आँसू गिराये । आपस मे न देखते हुए और न कुछ कहते हुए जब सब लोग खडे देख रहे थे, तब पाण्डवो ने उसी दिन सद्गति प्राप्त करने के लिए वन मे प्रवेश किया । ६०-६४

॥ सभापर्व समाप्त ॥

सेविच्चु पाञ्चाळियुं कोंटुत्तु पात्रं देवन्
देवभक्तन्मार्क्कुण्टो सङ्कटमुण्टाकुन्नु ? २०
भूदेवन्मारुं पिन्नेत्तङ्ङळु पाञ्चालियुं
प्रीतियावोळमुण्टे चोऽरतिलोंटुङ्ङीट्टू । २१
काम्यकं वनं पुक्कान् कण्टितु विदुररे
काम्यमायतु वरुमेन्नितु विदुररुं । २२
पण्टरक्किकल्लत्तिलिट्टिटच्चु चुट्टोरुना-
ळुण्टाय दु:खमोर्क्किकलिन्नेट सुखमल्लो । २३
सुखदु:खङ्ङळिटतुटरेक्कूटक्कूटे
सकलजन्तुक्कळ्क्कुमुण्टेन्नु धरिच्चालुं । २४
सत्यधर्म्मादिकळे रक्षिच्चुपोरुन्नव-
र्क्कत्तलुण्टाकयिल्ल निश्चयमोन्नुकोंण्टुं । २५
अच्युतन् तानुं तुणयुण्टल्लो निङ्ङळ्क्कोन्नाल्
निश्चयं नित्यं जयमुण्टामिङ्ङने काण्क । २६
क्षत्तावुं धर्म्मातमजन्तानुमायिरुन्नुट-
नित्तरं पऽयुन्पोळविकासुतन्चोल्लाल् २७
ब्राह्मणभक्तश्रेष्ठनाकिय विदुररे
सौम्यनां गावलगणि कूट्टिक्कोण्टङ्ङुपोयान् । २८
हस्तिनपुर चेन्नु पुक्कितु विदुररुं
वृत्तान्तमरचनोटॆप्पेरुमऽियिच्चा-२९

को कभी दु:ख प्राप्त होता है ? सभी ब्राह्मणों की, अपने लोगों की तथा पाञ्चाली की तृप्ति होने तक का भात उस पात्र में सदैव रहता है। युधिष्ठिर काम्यक वन गये और विदुरजी का दर्शन हुआ। विदुरजी ने कहा—अच्छी वातें होनेवाली है। पहले लाक्षागृह में वन्द करके जलाये गये। उस समय का दु:ख याद करो तो अब सुख है। जान लो कि सुख और दु:ख सभी प्राणियों के कभी-कभी होते हैं। जो सत्य और धर्म की रक्षा करते रहते है उनको निस्सन्देह कोई दु:ख नहीं प्राप्त होगा। आप लोगों का अच्यतनी (कृष्ण) का साथ तो है ही। इसलिये जय तो प्राप्त ही हो जायगी। यह दृष्टि रखना। २०-२६ जब विदुरजी और युधिष्ठिर इस प्रकार वातें कर रहे थे तब धृतराष्ट्र के कहने से सौम्य गावलगणि आकर ब्राह्मण भक्तो मे श्रेष्ठ विदुरजी को साथ ले गये। विदुरजी हस्तिनापुर पहुँचे और राजा से सब समाचार वतला दिये। उस समय श्री मैत्रेय ने सुयोधन से युधिष्ठिर का राज्य लौटाने के लिये कहा। तब

काननमकपुक्कु सोदररोटु तन्टे
मानसनाथयोटु मामुनिजनत्तोटुं । १०
अन्नवर् गंगातीरं प्रापिच्चारेल्लावरुं
उन्नतमाकु प्रमाणाख्यमां वटत्तिङ्क- ११
लिन्द्र प्रस्थत्तिल्निन्नेण्पत्तेण्णायिरवु
वन्नितु गृहस्थन्माराकिय भूदेवन्मार् । १२
संन्यासिजनङ्डळुं पतिनायिरं वन्नू
मन्नवन्तन्नेक्कण्टु दु.खिच्चारवरेल्ला- १३
मद्दिनमुपवासंचेय्तितु समस्तरु-
मेन्नयु तापं वन्नु धर्म्मजनतुमूल । १४
भरणीयन्मार्तम्मे भरिप्पानुपायमे-
न्तरचन्मारायवन्नु जनियाय्कोरुत्तरुं । १५
आहारत्तिनु पणियेन्तेन्नु युधिष्ठिरन्
मोहनाशननाय शौनकनोटु चोन्नान् । १६
शौनकन् धौम्यनोटु चोन्नारे धौम्यन् चोन्नान्
भानुदेवनेस्सेविच्चीटुवानुपदेश । १७
कुन्तीनन्दनन्तनिक्कन्नेरं धौम्यन् मूल-
मन्त्रवुमुपदेशंचेय्तितु सागमप्पोळ् । १८
अन्तकतनयनुं द्रौपदिक्कतुनेर
चिन्तचेय्तुपदेशं चेय्तितु वळिपोले । १९

मुनिजनो के साथ अपने मन की रानी को लेकर वन मे प्रवेश किया। उस दिन सब लोग गङ्गातट पर एक उन्नत वटवृक्ष के पास पहुँचे। इन्द्रप्रस्थ से अठासी हजार गृहस्थ ब्राह्मण चले आये। दस हज़ार सन्यासी भी आये थे। राजा को देखकर सब दु खित हुए। ८-१३ उस दिन सभी ने उपवास किया जिसके कारण युधिष्ठिर वहुत दु खी हुए। जिनको पालना है उनके पालने का क्या उपाय है ? ऐसा हो कि कोई भी राजा होकर जन्म न ले ! । "आहार मिलने का क्या मार्ग है ?" ऐसा युधिष्ठिर ने मोह के नाशक शौनक से पूछा। और शौनक ने धौम्य से पूछा तब धौम्य ने सूर्यदेव की सेवा करने का उपदेश दिया। और कुन्तीपुत्र (युधिष्ठिर) को उस समय धौम्य ने साग मूलमन्त्र का उपदेश दिया। युधिष्ठिर ने तो द्रौपदी को सोचकर नियम के अनुसार उपदेश दिया। १४-१९ पाञ्चाली ने सेवा की और भगवान् ने उसको एक पात्र दिया। देवभक्तो

मन्नेरं मार्क्कण्डेयनाकिय महामुनि-
तन्नेयु कण्टु तोळुताशीर्व्वादवु कोण्टार् । ४०
तीर्त्थङ्ङळतुमाटि वसिक्कुकालत्तिङ्कल्
पार्त्थिवनोटु भीमसेननुमुरचेय्तु । ४१
ञानुमर्ज्जुननुमाय् शत्रुक्कळतम्मेक्कोल्ला
मानमोटरचु वाणीटु निन्तिरुवटि । ४२
काल पार्प्पतिनेन्तु कारणमरुळ्चेय्क
कालनन्दननाय कूटलर्कुलकालन् ४३
दुष्टरेप्पेटिच्चेव दुःखिक्कोन्नुळ्ळतेल्ला
कष्टमेन्नतु केट्टु धर्म्मजन्तानु चोन्नान् । ४४
द्रोणभीष्मादिकळेक्कोल्लुवान् पणियुण्टु
वेणमे सत्यं पालिच्चीटुकयेन्नुळ्ळतु । ४५
वत्सर त्रयोदशानन्तर वध चेय्या
मत्सरमतिकळा कौरवन्मारेयेल्ला । ४६
इत्तर परञ्ञवरित्तिरियिरिक्कुन्पो-
ळुत्तमन् वेदव्यासनविटेक्कोळुन्नाळ्ळि । ४७
अर्घ्यपाद्यादिकळाल् पूजिच्चु वन्दिच्चोरो
दु खङ्ङळ् मुनियोटु धर्म्मजन् परञ्ञप्पोळ् । ४८
कारुण्य पूण्टु वेदव्यासना पितामहन्
पोरुं नी दु खिच्चतु केळितेन्नरुळ्चेय्तु । ४९

वन्दना की और उनके आशीर्वाद प्राप्त हुए। जव वे तीर्थो मे स्नान करते हुए विराज रहे थे तव एक दिन भीमसेन ने राजा से कहा—३५-४१ "मैं और अर्जुन शत्रुओ का नाश करेगे और आप सम्मान के साथ राज्य कीजिये। प्रतीक्षा करने की क्या आवश्यकता है ? वतलाइये। आप जैसे यमराज के पुत्र और शत्रुनाशक के लिये दुष्टो के डर के मारे दु ख का अनुभव करना कष्ट की वात है"। यह सुनकर युधिष्ठिर ने कहा, "द्रोण, भीष्म आदियो का वध करना कठिन काम है और सत्य का पालन करना भी तो है। तेरह वरस के वाद मत्सर की वुद्धिवाले कौरवो का वध करना ठीक होगा। जव इस प्रकार की वाते हो रही थी तव उत्तम वेदव्यासजी वहाँ पधारे। उनको अर्घ्य और पाद्य देकर वन्दना करने के वाद युधिष्ठिर ने अपने दु खो को उन्हे सुनाया। ४२-४८ तव कारुण्य से प्रभावित होकर पितामह वेदव्यास ने कहा—"अव और दु:ख मत करो।

नन्नेर सुयोधनन्तन्नोटु श्रीमैत्रेयन्
धन्यना धर्म्मजन्टॆ राज्यं नी कॊटुक्कॊन्नान् । ३०
अन्नपहासत्तोटु तुटमेल् कॊट्टियार्त्तान्
मन्नवन् धृतराष्ट्रनन्दनन् मैत्रेयनु । ३१
भीमन्टॆ तल्लु निन्टॆ तुटमेल् कॊण्टु चाक
भूमिपालककुलनाशननाय नीयु । ३२
शापवुमरुळ्चॆय्तु मरञ्ञु महामुनि।
तापसवेषंपूण्टु धर्म्मजनादिकळु ३३
काननत्तूटॆ पोकुनेरत्तु किर्म्मीरना
मानमुळ्ळरक्कनॆक्कॊन्नितु भीमसेनन् । ३४
अन्धकवृष्णिकळुं पाञ्चालन्मारु नल्ल
बन्धुवा कृष्णन्तानु पाण्डवन्मारॆक्कण्टु । ३५
धर्म्मजन् कुशलप्रश्नादिकळ्चॆय्तशेष-
मम्बुजविलोचनन् कृष्णनुमरुळ्चॆय्तु । ३६
यागवु कळिञ्ञु ञानङ्ङु चॆल्लुन्पोळ् मुन्नं
प्रागल्भ्यमेरुन्नॊरु साल्वनु पटयुमाय् ३७
श्रीमद्द्वारक चॆन्नु वळञ्ञारवरप्पोळ्
वार्मॆत्तु पटयुमाय् चॆन्नवनॆयुं वॆन्नेन् । ३८
नेरत्तॆन्नुरचॆय्तु पोयितङ्ङवर्कळु
घोरमा द्वैताटविपुक्कितु पाण्डवरु- ३९

राजा धृतराष्ट्रपुत्र (सुयोधन) अपनी जाँघे पीटते हुए और उपहास करते हुए बहुत चिल्लाया। यह देखकर मैत्रेय ने शाप दिया कि भीमसेन के प्रहार तुम्हारी जाँघो पर पडने से तुम्हारी मृत्यु हो। ऐसा शाप देकर महामुनि अन्तर्धान हो गये। युधिष्ठिर आदि जब तापसवेष धारण करके वन के भीतर से जा रहे थे तब भीमसेन ने किर्म्मीर नामक राक्षस का वध किया। २७-३४ अन्धक, वृष्णि, पाञ्चाल और अच्छे बन्धु कृष्ण ने पाण्डवो को देखा। युधिष्ठिर द्वारा कुशल-प्रश्न आदि पूछे जाने के बाद कमलोचन कृष्ण ने निवेदन किया। राजसूय समाप्त होने के बाद जब मै लौटा तब प्रगल्भ साल्व ने अपनी सेना के साथ द्वारकापुरी को घेर लिया था। अतएव एक शक्तिशाली सेना के साथ जाकर मुझे उसको मारना पडा। इतना कहकर वे जल्दी चले गये। पाण्डवो ने तदनन्तर घोर द्वैतवन मे प्रवेश किया। वहाँ महामुनि मार्कण्डेय का दर्शन करके उनकी

शत्रुसहारंचेय्वान् ञानिन्नु देवकळो-
टस्त्रशक्तियेस्सन्पादिच्चङ्ङु वन्नीटुवन् । ६०
तीर्थस्नानादिकोण्टुं क्षेत्रोपवास कोण्टु-
मास्थया चापशक्ति सन्पादिच्चीटुकेन्नु । ६१
धर्म्मनन्दननोटु चोल्केन्नु धनञ्जयन्
निर्म्मलनाय मुनिमुख्यने नियोगिच्चान् । ६२
वृत्रारिपुत्रनुटे सन्देशवाक्यङ्ङळु
वृत्तान्तङ्ङळुमेल्ला धर्म्मजादिकळोटु ६३
रोमेशमहामुनितानरुळचेय्तीटिनान्
भूमिपालनु मुनिमुख्यने वणङ्ङिनान् । ६४

नळोपाख्यान

तल्क्काल युधिष्ठिरन् भूप्रदक्षिण चेय्तु
चोल्क्कोण्ट तीर्थङ्ङळुमाटि वाळुन्न कालं । १
धर्म्मजन्तन्ने वन्नु कण्टितु वृहदश्वन्
धर्म्मजन् दु.खङ्ङळुं गामुनियोटु चोन्नान् । २
अम्मुनिवरन्तानुं दु.खत्तेक्कळवानाय्
धर्म्मजनोटु नळोपाख्यानमरियिच्चान् । ३

को रोमेश (लोमश) मुनि का दर्शन हुआ और उनसे उन्होने पृथ्वी पर जाकर युधिष्ठिर आदि से सब वृत्तान्त कहने के लिए प्रार्थना की। अगर शत्रुओ का संहार करना है तो राजाओ के पास चापशक्ति और शरशक्ति होनी चाहिये। शत्रुसहार के लिये देवो से अस्त्रशक्ति प्राप्त करके मैं वापस आजाऊँगा। "तीर्थ स्नान करके और क्षेत्रो मे उपवास करके बड़ी आस्था के साथ अपनी चापशक्ति को बढाना।"—ऐसा युधिष्ठिरजी से कहने के लिए धनञ्जय ने निर्मल मुनिवर से प्रार्थना की। वृत्रशत्रु (इन्द्र) के पुत्र (अर्जुन) के सन्देश को और वृत्तान्तो को रोमेश (लोमश) महामुनि ने युधिष्ठिर आदियो को सुनाया। और राजा (युधिष्ठिर) ने मुनिवर की वन्दना की। ५७-६४

नलोपाख्यान

उन दिनो युधिष्ठिर पृथ्वी की प्रदक्षिणा करते हुए विख्यात तीर्थो मे स्नान कर रहे थे। तब वृहदश्व उनके दर्शन के लिए पधारे। युधिष्ठिर ने उनको अपने दु ख सुनाये। मुनिवर ने उनके दु ख दूर करने के लिए

कैलासत्तिङ्कल् चेन्नु कालारितन्नेस्सेवि-
च्चालोरु कळिवु वन्नीटुं निङ्ङळ्क्केन्नतिन्-५०
मूलमन्त्रवुमुपदेशिच्चु महामुनि
कालनन्दनन्तनिक्कवन्टे नियोगत्ताल् ५१
अर्ज्जुनन् तपस्सु चेय्तीटिनान् महेशने
निर्ज्जरनाथन्तानु काट्टाळनायि वन्नान् । ५२
पन्नियाय् मूकासुरन् पार्त्थनेक्कोल्वान् वन्नु
पन्नियेयेय्तन्नेर काट्टाळनाय देवन् । ५३
मन्नवनोटु युद्ध चेय्तवन् मदं पोक्कि-
प्पिन्ने प्रत्यक्षनाय् नल्कीटिनाननुग्रहं । ५४
पाशुपतास्त्र नल्किप्पार्त्थनु स्वर्ग पुक्कान्
क्लेशवुमोळिच्चसुरन्मारेयोक्कवक्कोन्नान् । ५५
उर्व्वशि शपिच्चोरु शापवुमेटुकोण्टु
देवेन्द्रन् कोटुत्तोरु वरवुं वाङ्ङिक्कोण्टान् । ५६
षण्डत्वमज्ञातवासत्तोटुकूटित्तीर्न्नु
कुण्ठभाववु पोकेन्नरुळिच्चेय्तानिन्द्रन् । ५७
रोमेशनुतन्नेक्कण्टु परञ्ञङ्ङयच्चितु
भूमियिल्च्चेन्नु वृत्तान्तङ्ङळेयरियिप्पान् । ५८
चापशक्तियु शरशक्तियुं वेणमल्लो
भूपालन्मार्क्कु शत्रुसंहार वेणमेङ्किल् । ५९

मेरी बात सुनो। तुम लोग कैलास चलो और कालारि (शिव) की सेवा करो तो शक्ति प्राप्त करोगे।" तदनन्तर महामुनि ने युधिष्ठिर की प्रार्थना पर उनको मूलमन्त्र का उपदेश दिया। तब अर्जुन ने शिवजी की तपस्या की और देवो के नाथ (शिव) किरात के रूप मे पधारे। उस समय मूकासुर वराह के रूप मे अर्जुन को मारने आया। किरातरूपी देव ने वराह पर निशाना मारा। तव अर्जुन और किरात मे युद्ध छिड़ गया। जिसमे भगवान् ने अर्जुन का मद दूर करके, प्रत्यक्ष होकर उस पर अनुग्रह किया। उसको पाशुपतास्त्र दिया। तत्पश्चात् अर्जुन स्वर्ग पहुँचे और वहाँ (इन्द्र के शत्रु) असुरो को नष्ट कर दिया। वहाँ अर्जुन पर उर्वशी का शाप लग गया—पर देवेन्द्र ने उसको वर प्रदान किया, ४९-५६ "तुम्हारी लाचारी अज्ञातवास के बाद समाप्त हो! और कुठभाव (शक्ति-हीनता) भी नष्ट हो!" ऐसा इन्द्र ने आशीर्वाद दिया। तदनन्तर अर्जुन

भक्षिप्पानटुत्तोरु पेरुन्पाम्पिनेक्कोन्नु
रक्षिच्चानप्पोळोरु काट्टाळल् दैववशाल् । १३
अन्नोटुकूटिस्सुखिच्चिविटे वसिक्कुन्नाल्
निन्नेयु भरिच्चुकोण्टीटुवनेन्नु चोल्लि १४
मन्मथविवशनायटुत्तु काट्टाळनु
निर्म्मलागियु शपिच्चवनेक्कोन्नीटिनाळ् । १५
पान्थन्मारोटु कूटि चेदिराज्यत्तिल्चेन्नु
तान्तयाय् मातामहियरिके वाणीटिनाळ् । १६
बुद्धि नेरल्लाय्कयाल् पत्नियेयुपेक्षिच्चु
पृथ्वीपालकन् महारण्यान्ते पोकुन्नेरं १७
काट्टुती पिटिपेट्टु नालुदिक्किलु महा-
काष्ठमुण्टतिन्मद्ध्ये निल्क्कुन्नतरुतन्मेल् १८
इरुन्नु काक्कोटकन् करयुन्नतु केट्टु
परन्नोरग्नियुटे नटुवे चेन्नू नळ- १९
नेटुत्तु काक्कोटकन्तन्नेयुं कोण्टुपोन्नान्
कोटुत्तानोरु दिव्यवस्त्रवुमतु नृप- २०
नुटत्तनेरं नेरायवन्नितु बुद्धियुमो-
ट्टुत्तु मेवुमयोध्यापुरं पुक्कान् नळन् । २१
ऋतुपर्ण्णनुं नळन्तन्नुटे गुणं कण्टु
पथिकजनङ्ङळक्कु भोजनं कोटुप्पानाय् २२

उसको शाप देकर नष्ट कर दिया। तदनन्तर वह कुछ यात्रियो के साथ चेदिराज्य चली गयी और वहाँ अपनी नानीजी के साथ रही। ८-१४ जब बुद्धि ठीक न होने के कारण अपनी पत्नी को त्यागकर राजा महारण्य के भीतर से जा रहे थे तब चारो तरफ आग लग गयी और उस वन के अन्दर जो एक बडा वृक्ष था उस पर बैठे हुए कर्कोटक नाग का रोना सुनाई दिया। तब फैले हुए अग्नि के बीच मे घुसकर नल ने कर्कोटक नाग को उठा लिया। तब कर्कोटक नाग ने राजा को एक दिव्य वस्त्र दिया। १५-२० राजा ने जब उसे पहना तब उनकी बुद्धि ठीक हो गयी; और वे पास ही मे विराजमान अयोध्यापुरी चले गये। वहाँ के राजा ऋतुपर्ण ने नल के गुणो को देखकर उनको यात्रियो का भोजन बनाने के लिये खुशी से अपना रसोइया बनाकर अपने पास रखलिया। उस समय किसी को भी नही मालूम हुआ कि वे राजा हैं। शक्र, वरुण, अग्नि और यमराज से प्राप्त प्रसन्नता से दिये वरो के कारण राजा नल विना चावल,

दु.खङ्ङळितिल् परमुण्टायि पण्टु नळ-
नोक्कवे केळ्क्क नीयुं दु.खङ्ङळकलुवान् । ४
चोल्क्कोण्ट विदर्भभूपालनन्दनयाय
मैक्कण्णाळ्कुलमौलि दमयन्तियुमायि ५
स्वर्ग्गसम्मितमाय निपधविषयवु
मुख्यभोगेन परिपालिच्चु वाळुकाल ६
पुष्करनोटु चूतु तोटुपोय् वनपुक्का-
नुळ्क्कान्पुं भ्रमिच्चितु कलितन्नावेशत्ताल् । ७
पुष्करविलोचनयाकिय दमयन्ति
दुःखिच्चु पिन्पे चेन्नु वस्त्रवु कोटुत्तप्पोळ् । ८
रात्रियिलोरु पेरुवळियन्पलंतन्निल्
पार्त्थिवन् पत्नियुमाय् वसिच्चीटिननेर ९
भर्त्तावां नळनृपोत्सङ्गसीमनि कनि-
ञ्ञुत्तमागवु चेर्त्तु निद्रयु पूण्टाळवळ् । १०
चित्तविभ्रम कोण्टु मत्तना नृपोत्तमन्
निद्रार्त्तयायीटुन्न भद्रयां भार्यतन्नै ११
रात्रियिलुपेक्षिच्चु पिन्नेयु पोयानव-
नार्त्तयायवळ् करञ्ञुळन्नुनटक्कुन्पोळ् । १२

उनको नलोपाख्यान सुनाया । पूर्वकाल मे नल को आप से भी अधिक दु.ख सहना पडा था । वह सब सुन लीजिये ताकि आपके दु ख दूर हो जायँ । जव नल विख्यात विदर्भ राजा की पुत्री महिलाकुल की शिरोमणि दमयन्ती के नाथ स्वर्ग के समान निपधदेश का सभी भोगो के साथ परिपालन कर रहे थे, तव पुष्कर से जूए मे हारकर वन चले गये और उनका मन भी कलि के आवेश से विक्षिप्त हुआ । १-७ कमलाक्षी दमयन्ती दु खित हुई और अपने कपडे का अश देकर उनके साथ चली । रात को वडी सड़क के एक मन्दिर मे वह अपनी पत्नी के साथ रहे । वह अपने पति नल की छाती पर प्रेम से सिर रखकर निद्रा मे मग्न हो गयी । चित्तविभ्रम के कारण नृपोत्तम अपनी सोती हुई साध्वी पत्नी को रात को त्यागकर कही चले गये और उसकी दु खित पत्नी रोती हुई इधर-उधर घूमने लगी । तव एक वडा अजगर उसे खाने के लिये निकट आया । भगवान् की कृपा से एक जगली मनुष्य ने उसे मारकर वचाया । फिर वह 'मेरे साथ यहाँ सुख से रहो, तुम्हारा मै पालन पोषण करूँगा' ऐसा कहता हुआ -मन्मथ (कामवेग) से वेवस होकर पास आने लगा । तव निर्मलागी दमयन्ती ने

पोकणमतिनेन्नु कोप्पिट्टानृतुपर्ण्णन्
तेर्क्किट विटुवन् ञानेन्नितु नळन्तानुं । ३२
अन्तेरमश्वहृदयमन्त्रं प्रयोगिच्चान्
मन्ननुमक्षहृदयमन्त्र प्रयोगिच्चान् । ३३
अश्वत्तिन्वेगपूण्ट तेरतिलिरिक्कुन्पो-
ळश्वत्थपत्रमित्रयुण्टेन्नानृतुपर्ण्णन् । ३४
अन्योन्य पठिच्चप्पोळ् नळनुं कलि वेन्ताय् ।
मन्नवन् विदर्भराज्यत्तिनु चेन्ननेर ३५
सुन्दरियाय दमयन्तियुं नळनुमाय्
मन्दिरं पुक्कु राज्यं पालिच्चु वळिपोले । ३६
पुष्करनेयु पिन्ने निग्रहिच्चुर्व्वीतल-
मोक्कत्तानटक्कि वाणीटिनान् चिरकालम् । ३७
दुःखङ्ङळ् पण्टुळ्ळोर्क्कुमुण्टायिट्टुण्टु मन्न !
दु खिक्कवेण्टा मेलिल् नन्मकळ् वन्नुकूटु । ३८
धर्म्मजन्तनिक्कक्षहृदयं पठिप्पिच्चि-
ट्टम्मुनि मरञ्ञप्पोळ् नारदनेळुन्नळ्ळि । ३९
तीर्थत्तिन् महिमकळोट्टोळियातेयोक्क-
त्तीर्त्तरुळ्चेय्तु मुनि नारदन् मरञ्ञप्पोळ् । ४०
पार्त्थिवन् धौम्यनोटु पिन्नेयु चोदिक्कयाल्
तीर्थमाहात्म्यमरुळ्चेय्तितु धौम्यन्तानुं । ४१
रोमेशनेळुन्नळ्ळि पार्त्थन्टे विशेषङ्ङ-
ळामोद वरुमारु धर्म्मजनोटु चोन्नान् । ४२

तव सुन्दरी दमयन्ती और नल दोनो साथ-साथ अपने घर गये और नियम के अनुसार राज किया । २९-३६ तत्पश्चात् पुष्कर को हराकर सारी पृथिवी को अपने वश मे करके चिरकाल तक राज्य किया । पूर्वकाल के लोगो को भी वहुत दु ख प्राप्त हुए थे, इसलिए हे राजा ! आप दुःखित न होवे ! कल्याण होनेवाला है । जव वे मुनि युधिष्ठिर को अक्षहृदय सिखाकर चले गये तव नारदमुनि पधारे । मुनि नारद ने सभी तीर्थो के महत्व को सुना दिया । तदनन्तर अन्तर्धान हो गये । तव राजा ने तीर्थो के माहात्म्य के संवन्ध से धौम्य से पूँछा और उन्होने सव वतला दिया । इतने मे रोमेश (लोमश) पधारे और उन्होने अर्जुन के सभी हर्षप्रद समाचार युधिष्ठर को सुनाये । ३७-४२ देवेन्द्र के वृत्तान्त भी वतला दिये ।

पाचकनाक्किवच्चुकोण्टितु सन्तोपिच्चु
राजावेन्नोरुवरुमरिञ्ञीलतुकाल । २३
शक्रनुं वरुणनुमग्नियु कृतान्तनु-
मुळ्ळकान्पु तेळिञ्ञु नल्कीटिन वरङ्ङळाल् २४
अरियुं तीयुमुप्पु विरकुं कूटातेयुं
विरविल् वेण्टुवोळ चोरवनुण्टाक्किटुं । २५
अतु केट्टत्यलभुत पूण्टितु महाजन ।
पृथिवीश्वरनाय विदर्भनतुकाल- २६
मयच्चू चारन्मारे राज्यङ्ङळ्तोरुमप्पोळ्
नियुक्तन्मारायोरु चारन्मारन्वेषिच्चार् । २७
नळनुण्टयोद्धययिलेन्नरिञ्ञवर्कळुं
तेळिवोटुळरिच्चेन्नवस्थयरियिच्चार् । २८
विदर्भन् चेदिराज्यस्थितयां मकळ्तन्ने
विदित्वा कूट्टिक्कोण्टुपोयितु सम्मोदत्ताल् । २९
तन्नुटे मकळाय दमयन्तिक्कु नृपन्
पिन्नेयु मुतिर्न्नितु कल्याण मुन्नेप्पोले । ३०
उण्टुपोलिन्नुं दमयन्तिक्कु स्वयंवरं
रण्टामततिन्नोक्कच्चेन्नितु भूपालन्मार् । ३१

आगी, नमक, और लकड़ी के जितना चाहिये उतना भोजन बडे अच्छे ढंग से वनाता था। यह सुनकर सारी जनता आश्चर्य चकित हुई। उस समय विदर्भ के राजा ने चरपुरुपो (गुप्तचरो) को हर एक राज्य मे भेजा। उन नियुक्त चरपुरुपो (गुप्तचरो) ने सब जगह ढूँढा। जब उनको मालूम हुआ कि नल अयोध्या मे है तव तुरन्त ही उन्होने इस बात को सप्रमाण राजा से कह दिया। २१-२८ विदर्भ राजा ने चेदिराज्य मे स्थित अपनी लड़की को बडे प्रमोद से अपने यहाँ वुलवा लिया। तदनन्तर राजा ने अपनी लड़की दमयन्ती का फिर विवाह कराने का निश्चय किया। यह सुनकर कि दमयन्ती का फिर स्वयवर होनेवाला है सभी भूपाल उसमे सम्मिलित होने के लिए चले। जव ऋतुपर्ण भी जाने के लिए तैयार हुए तव नल ने कहा "रथ को तो मै ही चलाऊँगा"। नल ने अश्व-हृदयमन्त्र का प्रयोग किया और राजा ने अक्षहृदयमन्त्र का। घोड़े के समान वेगवाले रथ मे वैठे हुए ऋतुपर्ण ने अश्वत्थवृक्ष मे कितने पत्न है यह वतलाया। जव दोनो ने एक दूसरे की विद्या सीख ली तव कलि नल (के शरीर) से अलग हुआ। जब राजा ऋतुपर्ण विदर्भराज्य पहुँचे

सुन्दरि पाञ्चालियुं चौल्लिनाळौरु पुष्प
तन्नुटे परिमळमायतुमतिने नी । २
अेन्नुटे भर्त्तावायुळ्ळोवे । गन्धवाहज ।
चेन्नु कौण्टन्नु मम नल्कणमेन्ननेर । ३
भीमनुं गदयुमाय् नटन्नू हनुमानु
प्रेममुळ्क्कौण्टु मुतुवानरवेप पूण्टान् । ४
मार्गवु मुटिच्चवनिरिक्कुनेरं भीमन्
मार्ग्ग नल्किनिक्कड्ङु नीड्ङुकेन्नुरचेय्तान् । ५
नीङ्ङुवानरुतेतु गदयाल् नीक्किक्कळ
वाङ्ङिनिन्नाशु चाटिक्कटन्नीटल्लयाय्किल् । ६
नीक्कुवान् भाविच्चिट्टु नीड्ङात्तोरनन्तरं
नोक्कियाल् कटक्कयुमरुतु निरूपिच्चाल् । ७
इक्कुलतन्निलुळ्ळोरग्रजनिनिक्कुण्टु
मर्क्कटवृद्धन्तन्टे वालोटुड्ङुन्नेटत्तु । ८
कूटेप्पोयीटामेन्निट्टेट्रिय वळि चेन्नु
कूटवाल् नीण्टुकौण्टिट्टोटुङ्ङिड्क्कूटाय्कयाल् । ९
सन्देहं मनक्कान्पिलुण्टायिट्टवन्वन्नु
वन्दिच्चु हनुमानुमवनोटुरचेय्तु । १०
चेन्नु नी सौगन्धिक पट्रिच्चुकौण्टु पोन्नाल्
निन्नेक्कौन्नीटुमतु काक्कुन्न निशाचरर् । ११

वायुपुत्र ! आप जाकर उस पुष्प को लाकर मुझे दे दीजिये !" तब अपनी गदा लिये भीम चले । हनुमान् ने भी प्रेम से पक्का वानरवेप धारण किया । और रास्ता रोककर बैठ गए । तब भीम ने कहा, "रास्ता दो और हटो" । हनुमान् ने कहा "मै बिलकुल ही नही हिल सकता हूँ, अपनी गदा से मुझे हटाओ । नही तो कुछ पीछे हटकर कूदो और मुझे लाघ जाओ । १-६ भीम ने हटाने की कोशिश की पर असफल हुए । तब सोचा, "इसे लाघना भी उचित न होगा । इसी कुल के एक मेरे बड़े भाई है । इसलिए इस वानरवृद्ध की पूँछ जहाँ समाप्त होती है वहाँ से निकल जाऊँगा, ऐसा समझकर आगे देखने गये । जितनी दूर गये उतनी दूर पूँछ भी बढती गयी । तब उनके मन मे सन्देह हुआ और लौटकर आये और वानर को प्रणाम किया । तब हनुमान् ने कहा—"अगर तुम जाकर सौगन्धिक पुष्प को तोड़ोगे तो उसके रक्षक राक्षस तुम्हे मार डालेगे । तुम्हे सचेत करके

देवेन्द्रविशेषवुमरिियिच्चवरुमाय्
पोयितु तीर्त्थस्नान चेय्वानायोरुम्पेट्टार् । ४३
पोयितु पाण्डवरु रोमेशनोटुकूटि-
प्पोयितु दुरितङ्ङळ् मायामोहवु तीर्न्नु । ४४
गंगयु सरस्वति यमुना कुरुक्षेत्रं
संगनाशनमाय पुष्कर प्रभासवु ४५
आटिनारविट्टन्नु कण्टितु कृष्णन्तन्ने
केट्टुकळ् तीरुमेन्नु माधवनरुळ्चेय्तु । ४६
पोयितङ्ङविट्टुन्नु रोमेशनोटु कूटि
माय वेरिट्ट मुनि परञ्ञु पुराणङ्ङळ् । ४७
नरनारायणन्मारालयमायिट्टुळ्ळ
पेरिय बदर्याख्यमाश्रमसकंपुक्कार् । ४८
कण्टितु घटोल्ककचन्तन्नेयुमविटेनि-
न्नुण्टायि सन्तोषवुमवर्कळ्क्कतुकाल । ४९

कल्याणसौगन्धिकं

मन्दमाय्पण्टु कण्टिट्टिल्लात गन्धत्तोटु
वन्नानङ्ङोरु वायु भीमनोटतुनेर १

तदनन्तर पाण्डवो के साथ तीर्थस्नान के लिये जाने को तैयार हुए। पाण्डव रोमेश (लोमश) के साथ गये और उनके सभी पाप नष्ट हुए और उनका मायामोह भी समाप्त हुआ। गगा, सरस्वती, यमुना, कुरुक्षेत्र, आसक्ति का नाश करनेवाला पुष्कर, प्रभास आदि सभी तीर्थस्थानो पर गये। प्रभास मे कृष्ण का दर्शन हुआ। उन्होने आश्वासन दिलाया कि सभी विपत्तियाँ दूर हो जायेगी। वहाँ से वे फिर रोमेश (लोमश) के साथ चले और माया से मुक्त मुनि ने पुराणो को सुनाया। तदनन्तर उन्होने नर और नारायण के निवासस्थान वदरिकाश्रम मे प्रवेश किया। वहाँ उन्होने घटोत्कच को देखा जिससे उन सबको वडी प्रसन्नता प्राप्त हुई। ४३-४९

कल्याणसौगन्धिक

उस समय अपूर्व गन्धवाला वायु वहने लगा और सुन्दरी पाञ्चाली ने भीमसेन से कहा—"मेरे पतिदेव ! यह किसी पुष्प का सुगन्ध है। हे

इन्द्रवैरिकळेयुं निग्रहिच्चविटेनि-
न्निन्द्रसोदरनेयुमुळ्क्कान्पिल्च्चेर्त्तुनन्नाय् २२
अय्याण्टु चेन्नशेप धर्म्मजन्तन्टे काल्क्कल्
पय्यवे नमस्करिच्चीटिनान् धनञ्जयन् । २३
ऐवरु पाञ्चालियु भूदेववरन्मारु
दैवज्ञन्मारायुळ्ळ मामुनिजनङ्ङळुं
ओक्कत्तक्कोरुमिच्चु दुःखंतीर्न्निरिक्कुन्पोळ् । २४

नहुपमोक्षं

मुष्करनायुळ्ळोरु पेरुन्पान्पोरुदिनं
पटुमानसनाय भीमन्तन्नुटलेल्लां
मुटियोटटियिट मुळुवन् चुटिक्कोण्टु । १
वानवर्कोनङ्ङोरु दीननाय् मरुञ्जनाळ्
वानुलकटक्किवाणिरुन्नू नहुपनु । २
मानिनियाय शचीदेवियेप्पुणराञ्जु
मानसतापत्तोटु पलनाळ् चेन्नशेप । ३
तापसन्मारेक्कोण्टु तण्टेटुप्पिच्चुकोण्टु
भूपति वरुन्नाकिल् पुल्कामेन्नवळ् चोन्नाळ् । ४
महिमयेरीटुन्न मामुनिमारेक्कोण्टु
नहुषन् पळ्ळित्तण्टुमेटुप्पिच्चेळुन्नळ्ळि । ५

मे मिले। तब उनके साथ जल्दी लौटे और दोनो आश्रम के अन्दर गये। इन्द्रपुत्र (अर्जुन) जो इन्द्र के निवासस्थान मे गये थे वे इन्द्र आदियो से अस्त्र सीखकर, इन्द्र के शत्रुओ का नाश करके, इन्द्र के सोदर (विष्णु) को मन मे स्थिर करके पॉच साल बीत जाने पर लौटे और युधिष्ठिर के चरणो पर पड़कर उनकी वन्दना की। पाँचो पाण्डव, पाञ्चाली, ब्राह्मण लोग और दैवज्ञ महामुनिजन बिना दुःख के एक साथ सुशोभित हुए। १९-२४

नहुपमोक्ष

एक शक्तिशाली अजगर ने एक दिन होशियार भीमसेन के शरीर को सिर से पाँव तक बाँध दिया। जब देवो के राजा (इन्द्र) पीड़ित होकर अलग हुए थे तब नहुप ने देवलोक को अपने वश मे करके वहाँ राज्य किया। उसकी मानिनी शचीदेवी का आलिगन करने की इच्छा हुई,

ऍन्नतिन्नुपदेश चॊल्लुवानिरुन्नु आन्
चॊन्नवण्णं नी चॆन्नु कॊण्टुपोन्नालुमिति । १२
ऍन्नवनयच्चप्पोळ् वन्दिच्चु भक्तियोटे
निन्नितञ्जनासुतन्मुन्निलम्मारु तदा । १३
वारिधि चाटियोरुनेरत्तॆ रूपं काण्मान्
मारुति कामिच्चॊरुनेरत्तु वायुपुत्रन् । १४
कण्टुकॊण्टालुमॆन्नु निन्नतुनेर भीमन्
कण्टु पेटिच्चु कूप्पि स्तुतिच्चु निन्ननेर । १५
पेटिक्कवेण्टयेतुमॆन्ननुग्रह चॆय्तु
गाढप्रेमत्तोटयच्चीटिनान् कपिवीरन् । १६
उन्नतनाय भीमसेननु सौगन्धिक
मन्दमॆन्निये पऱिच्चीटिननेरत्तिङ्कल् १७
ऎतिर्त्त राक्षसरॆक्कॊन्नितु भीमसेन-
नॆतिर्त्तु गन्धर्व्वन्मारसंख्य पटयोटु । १८
अवरॆयॊरुजाति जयिच्चु कॊण्टुपोन्ना-
नवनॆक्काणाञ्ञिट्टु शोकिच्चु युधिष्ठिरन् । १९
ऒट्टॆटं चॆल्लुन्नप्पोळ् कण्टवनोटु कूटि
पॆट्टॆन्नु पोन्नुवन्निङ्ङाश्रम पुक्कशेषं । २०
इन्द्रमन्दिरं पुक्कॊरिन्द्रनन्दननुतानु-
मिन्द्रनादिकळ्तम्मोटस्त्रवुं पठिच्चुटन् २१

उपाय वतलाने के लिए ही मैं यहाँ वैठा था। जैसे मैने वतलाया वैसे ही जाकर अव ले आओ। ७-१२ जब इस प्रकार भेजे गये तब भीम बड़ी भक्ति के साथ अञ्जनापुत्र के सामने खडे हो गये। और वोले, "समुद्र लाघने के समय का आप का रूप देखना चाहता हूँ।" तब वायुपुत्र (हनुमान्) ने 'देख लीजिये' कहकर उन्हे अपना रूप दिखलाया। तब भीम डर गये और हाथ जोड़कर स्तुति करने लगे। तब हनुमान ने 'डरना विलकुल मत' ऐसा कहकर अनुग्रह किया और प्रगाढ प्रेम से साथ भीम को भेज दिया। जव दीर्घकाय भीमसेन ने बिना विलम्ब के सौगन्धिक पुष्प को तोड़ा तो रक्षक राक्षस उनसे लड़े और मारे गये। तदनन्तर असख्य गन्धर्वो ने सेना सहित उनका सामना किया। १३-१८ उन सवको भीम ने किसी तरह हराया और पुष्प ले आये। इतने मे उनके न लौटने से युधिष्ठिर घवड़ाये। वे कुछ दूर ढूँढने गये ही थे जब रास्ते

घोषयात्र

अक्कालं धृतराष्ट्रपुत्ररुं बन्धुक्कळु
मुख्यमायुळ्ळ चतुरगमा वलत्तोटु १
दिक्कुकळ् मुळङ्ङवे वाद्यघोषङ्ङळोटु
विख्यातन्मारायुळ्ळ पाण्डवन्मारेक्कोल्वान् २
भोषनां नागध्वजन्तन्नुटे नियोगत्ताल्
घोषयात्रयु तुटङ्ङीटिनार् वनतोरुं । ३
पतिनोराण्टु कळिञ्ञिरिक्कुन्ननन्तरं
चतियाल् पोय्ककतन्निल् मरुन्नु कलक्किकयार् । ४
उद्योग कण्टनेरं कौरवन्मारे वेल्वान्
वृत्रारि चित्ररथन्तन्नेयुं नियोगिच्चान् । ५
योग्यमल्लितु निङ्ङळ्क्केन्नितु गन्धर्व्वन्मार्
भाग्यहीनन्मारवरोटु पोर्चेय्तारप्पोळ् । ६
पोरिनु विरुतुळ्ळ वीरनां चित्ररथन्
पाराते नूटुपेरे पिटिच्चुकेट्टिक्कोण्टान् । ७
आरिनि वीण्टुकोळ्वतेन्नु कर्णादिकळु
नारिमारेन्नपोले धर्म्मजनोटु चोन्नार् । ८

घोषयात्रा ।

उन दिनो धृतराष्ट्र के पुत्र और उनके बन्धु अपनी चतुरग सेना के साथ चारों दिशाओं मे फैलनेवाले वाद्यघोष कराते हुए विख्यात पाण्डवों का वध करने के लिए मूर्ख नागध्वज (दुर्योधन) की आज्ञा से वन-वन में घोषयात्रा के लिए निकले । ग्यारह वरस वीत चुके थे । उन्होने तालाव के पानी मे वेईमानी से दवा मिला दी । उनकी इस करतूत को देखकर वृत्रारि (इन्द्र) ने कौरवो को मारने के लिए चित्ररथ को नियुक्त किया । गन्धर्वो ने उनसे कहा कि यह काम उचित नही है परन्तु उन भाग्यहीनो ने गन्धर्वो से युद्ध किया । १-६ युद्धकुशल और वीर चित्ररथ ने तुरन्त ही उन सौवो (कौरवों) को पकडकर वाँध लिया । कर्ण आदियो ने कहा—"अव हम लोगो को छुड़ानेवाला कौन है ?" अन्त मे महिलाओ की तरह युधिष्ठिर से प्रार्थना की । जव भीम ने निवेदन किया कि यह वह काम है जिसे हमको युद्ध मे करना चाहिये, इसलिये इसे रोकना नही उचित होगा तव युधिष्ठिर वोले—हे वीर ! न रोके तो धर्म नही होगा । राजाओ

अंगुष्ठमात्रमायोरगस्त्यन् नटाय्कया-
लंगत्तिल् चवुट्टिनान् नहुषनतुनेर । ६
अगजशरमेटिट्टंगनमारिलेरे-
स्संगमुण्टाकक्कोण्टु मन्ननाकिय नीयुं ७
पारिच्च पेरुन्पान्पाय् वनत्तिल् किटक्कॅन्नु
पूरिच्च कोपत्तोटुमगस्त्यन् शपिक्कयाल् । ८
पलनाळ् काट्टिल्क्किटन्नीटिनान् नहुषनुं
बलवान् मारुतियें चुट्टिनान् शापतीर्प्पान् । ९
धर्म्मजन्मावुतानु नहुषनृपेन्द्रनु
धर्म्माधर्म्मङ्ङळ्तम्मिल् परञ्ञोरनन्तरं १०
मोक्षंवन्नितु नहुषाख्यनां नृपेन्द्रनु
साक्षाल् श्रीनारायणन् गोविन्दन्तिरुवटि ११
पाण्डवन्मारेक्काण्मानॆळुन्नळ्ळियनेरं
पाण्डवन्मारु कण्टु सन्तोषत्तोटु कूटि १२
काननभुवि वसिच्चीटिनारवर्मुन्पिल्
ज्ञानिया मार्क्कण्डेयमामुनियॆळुन्नळ्ळि । १३
वन्दिच्चु पाण्डवन्मार् नन्दिच्चु महामुनि
मन्दत तीर्प्पान् पुराणङ्ङळुमरुळ्चॆय्तु । १४

पर न हो सकने से वह वहुत दिन दु खित रहा। शची ने कहा "अगर राजा तापसो से अपनी पालकी उठवाकर मेरे पास आयेगे तो मै राजी हो जाऊँगी। तब नहुष वडे महिमावाले महामुनियो से अपनी पालकी उठवाते हुए पधारे। जव मुनि अगस्त्य जो वहुत छोटे थे चल न सके तो नहुष ने उनको लात मारी। तब अगस्त्य ने क्रुद्ध होकर "काम देव का वाण लगकर अधिक स्त्रीसग करनेवाला तू अजगर वनकर वन मे पड़ा रह", ऐसा उनको शाप दिया। १-८ इस शाप के फलस्वरूप वह वहुत दिनो वन मे पड़ा रहा। अपने शाप की समाप्ति के लिए ही उसने भीम को लपेट लिया। युधिष्ठिर और राजा नहुप ने धर्म और अधर्म के सवन्ध मे वातचीत की। तदनन्तर नहुष का शाप से मोक्ष हुआ। साक्षात् श्रीनारायण गोविन्द भगवान् पाण्डवो से मिलने के लिए पधारे। तव पाण्डव बहुत प्रसन्न हुए। तदनन्तर वे वन मे सुख से रहे। उस समय वडे ज्ञानी महामुनि मार्कण्डेय वहाँ पधारे। पाण्डवो ने उनकी वन्दना की। महामुनि प्रसन्न हुए। और उन्होने दु ख दूर करने के लिए पुराण सुनाये। ९-१४

पोयितु पाण्डवन्मार् नायाट्टिन्नेल्लावरु-
मायतमिळितन्नेयाश्रम तन्निलुळ्ळु । २०
मायत्तालवनटुत्तप्पोळे तेरिलेट्टि-
प्पायुन्नेरमवळ् मुऱयिट्टतु केट्टु २१
कटुक्कोन्नोटिवन्नु पाण्डववीरन्मारुं
पिटिच्चुकेट्टिज्जयद्रथनेव्भीमसेन- २२
नटिच्चु तन्नेक्कोल्वान् तुटङ्ङुन्नतु कण्टु
मुटक्कि द्धर्म्मपुत्ररयय्ककयिनियेन्नान् । २३
नम्मुटे भगिनिक्कु वैधव्यमकप्पेटु
दुर्म्मदमटक्किययङ्ङययकेन्नतु नेरं २४
चिरच्चु कुटुम्मयु मीशयुं कळञ्ञिट्टु
चिरिच्चु पोयालुमेन्नयच्चू भीमसेनन् । २५
तिरिच्चुपोन्नु मुनिमारुमायिरुन्नुटन्
तिरक्कित्तुटङ्ङिनारितिहासङ्ङळ्कोण्टे । २६

रामायणकथ

अन्नेर मार्क्कण्डेयन्तन्नोटु धर्म्मात्मज-
नेन्नोळ दु:खमुळ्ळोरुण्टायिट्टुण्टो अेन्नान् । १

उस समय सुन्दरी पाञ्चाली का अपहरण करने के लिए जयद्रथ ने वन मे प्रवेश किया । १३-१९ सभी पाण्डव शिकार खेलने गये थे और पाञ्चाली आश्रम मे अकेली थी । उसको माया से पकड़कर रथ पर चढाकर जव जयद्रथ भाग रहा था तो उसकी चिल्लाहट सुनकर तुरन्त ही पाण्डववीर दौड़कर आये । भीमसेन तो उसको पकडकर और वांधकर मार डालने वाले ही थे कि युधिष्ठिर ने रोका और कहा—"अव की वार इसे जाने दो ।" नही तो हमारी वहिन को वैधव्य प्राप्त हो जायगा । इसके दुर्मद का नाश करके इसे छोड़ दो ।" तव भीम ने इसका सिर और मूंछ मुँडवाकर हँसते हुए कहा—"अव चले जाओ" । तदनन्तर सव वापस आये । और मुनियो के साथ इतिहासों के सम्वन्ध में पूछताछ करते रहे । २०-२६

रामायण की कथा

एक दिन युधिष्ठिर ने मार्कण्डेय से पूँछा—'क्या मेरे समान दु:खी कभी कोई हुआ है ?' तव मार्कण्डेय वोले—हे धर्मपुत्र ! पूर्वकाल मे

पोरिल् नां चेय्येण्टुन्न कारियमितुकाल-
मारानुं चेय्युन्नतु मुटक्कीटरुतल्लो ९
मारुतियेन्नु चोन्ननेरत्तु धर्म्मात्मजन्
वीर ! केळतु धर्म्ममल्लेन्नु धरिच्चालुं । १०
शाश्वतनृपधर्म्म शत्रुक्कळेन्नाकिलु-
माश्रितन्मारे रक्षिच्चीटणमेन्नाकुन्नु । ११
पाण्डवन्मारुं चेन्नार् वीण्टुकोळ्वतिन्नायि-
ग्गाण्डीवं वलिच्चेय्तु फल्गुनन् वीण्टुकोण्टान् । १२
मन्नवा ! सुयोधन ! पोक राज्यत्तिनन्नु
धन्यनां धर्म्मात्मजननुज्ञकोटुत्तप्पोळ् । १३
उन्नतनाय भीमन् संशय तीरुवानाय्
पन्नगध्वजनादियायुटनेण्णियिट्टान् । १४
ओन्निनेयेत्तीलेन्निट्टरिञ्ञानेण्णियप्पोळ् ?
मन्ननुमोत्तुवन्निट्टनुज्ञकोटुत्तप्पोळ् । १५
नाणिच्चु पुरिपुक्कान् मानिच्चु सुयोधनन्
दीनत्तेक्कळवानाय् मामरयवर्चोल्लाल् १६
पाण्डवन्मारिलसूयापरन् धार्त्तराष्ट्रन्
पौण्डरीकाख्यमाय यागवुं तुटङ्ङिनान् । १७
यागादिकर्म्म चेय्तु भोगमोटिरुन्नितु
नागकेतननाय भूपति सुयोधनन् । १८
अक्कालं जयद्रथनटवितन्निल् पुक्कान्
मैक्कण्णाळ्मणियाय पाञ्चालितन्नेक्कप्पान् । १९

का शाश्वत धर्म यही है कि आश्रितों की, चाहे वे शत्रु ही क्यो न हो, रक्षा करनी चाहिये । पाण्डव उनको छुडाने के लिए गये और अर्जुन ने अपने गाण्डीव धनुष से उनको छुड़वाया । ७-१२ तब युधिष्ठिर ने कहा— "हे राजा सुयोधन ! अब अपने राज्य को चले जाओ ।" उन्नत भीम ने जब उसने गिन लिया और जब राजा ने भी अनुज्ञा दी तब मालूम हुआ कि एक मिल नही रहा है । अपना सन्देह मिटाने के लिए सुयोधन से लेकर सबको गिन लिया । मानी सुयोधन लज्जित होकर अपने नगर की ओर चल पडा और ब्राह्मणो के उपदेश के अनुसार अपनी दीनता दूर करने के लिए पाण्डवो से जलनेवाले सुयोधन ने पौण्डरीक नामक याग करना प्रारम्भ किया । इस प्रकार याग आदि कर्म करते हुए नागध्वज राजा सुयोधन सुख से रहे ।

पिन्नेप्पोय् सिद्धाश्रमंपुक्कु यागवुं कात्तु
सन्नराक्किनान् सुबाहुप्रमुखन्मारेयु । १३
खिन्ननाय् वणङ्ङु मारीचन्नु वर नल्कि
पन्नगाभरणविल् काण्मानाय् पुरप्पेट्टान् । १४
सन्नद्धन्मारां मुनि तन्नोटु कुमारन्मार्
तन्वियामहल्यतन् शापमोक्षवु नल्कि । १५
मिथिलपुक्कु पुरमथनन्तन्टे विल्लुं
मथनचेय्तु सीतावरनायोरुनेर । १६
भरतशत्रुघ्नन्मारोटु मातावकन्मारुं
गुरुवां वसिष्ठनु तातनु वन्नशेषं १७
अनुजन्मारुं विवाहचेय्तु कल्याणवु
मनसि कनिवोटु कळिञ्ञु पुरप्पेट्टार् । १८
पोकुन्न वळियील्नु भार्ग्गवन्तन्ने वेन्नु
वेगमोटयोद्धचपुक्किरुन्नु पन्तीराण्टु । १९
भरतशत्रुघ्नन्मार् मातुलन्तन्नेक्काण्मान्
परमादरमोटु केकयराज्यं पुक्कार् । २०
भाविच्चु दशरथनभिषेकत्तिनतु
दैवत्तिन्नियोगत्ताल् मन्थरचोल्लालतु २१

विश्वामित्र ने उन राजकुमारो को भूख और प्यास शान्त करने के लिए वला और अतिवला नामक विद्या का उपदेश दिया। ताटका को यमपुरी भेजकर मुनि और दोनों वालक भय से निवृत्त हुए। तदनन्तर वे सिद्धाश्रम पहुँचे। वहाँ याग की रक्षा करते हुए सुवाहु आदियो का वध किया। ७-१३ दुखित मारीच को वर देने के वाद शिवजी का धनुप देखने के लिए चले। सन्नद्ध दोनो वालको ने मुनि के साथ तन्वी अहल्या का शापमोक्ष किया। तदनन्तर मिथिला मे प्रवेश करके शिवजी के धनुप को चढ़ाकर राम सीता के वर हुए। तव वहाँ पर भरत, शत्रुघ्न, माताएँ, गुरु वसिष्ठ, और पिताजी भी पधारे, छोटे भाइयो का भी विवाह हुआ। प्रेम के साथ विवाह समाप्त होने पर सवने प्रस्थान किया। मार्ग मे भार्गव (परशुराम) को हराया। फिर अयोध्या जाकर वहाँ वारह वरस रहे। भरत और शत्रुघ्न मामाजी को देखने के लिए वडे आदर के साथ केकय राज्य सिधारे। १४-२० दशरथ ने राम का अभिषेक करने के लिए सोचा परन्तु दैव के प्रभाव से, मन्थरा के कहने पर क्रुद्ध कैकेयी ने मना किया और श्रीराम (उसका) दुख

तापसन् चिरिच्चरुळ्चेय्तितु धर्म्मात्मज !
तापं पण्डितिलपरमुण्टायोरुण्टु पलर् । २
पण्टु श्रीनारायणन् मानुषनायमूल-
मुण्टायदु:खमेल्लां केळ्क्क निन् दु:खं तीरुं । ३
देवनां विधातावु देवकळोटुं देव-
देवनां नारायणपादङ्ङळ् वन्दिच्चितु । ४
देवब्राह्ममुनिधर्म्मभूमिकळ्क्केल्ला
रावणन्तन्नेक्कोन्नु सङ्कटं तीर्प्पानायि । ५
मनुवंशत्तिल् मणिविळक्का दशरथ-
तनयनाय्वन्नु पिरन्नू भगवानुं । ६
अनुजन्मारुमुण्टाय् मूवरेन्नरिञ्ञालुं ।
मनसि सुखत्तोटु वळरुंकालत्तिङ्कल् । ७
विश्वरक्षार्थमायि वन्नितु महामुनि
विश्वामित्रनुमयोध्यापुरमकंपुक्कु । ८
विश्वनाथनेयपेक्षिच्चोरुनेरमुळ्ळिल्
विश्वासत्तोटुं रामलक्ष्मणन्मारे नृपन् । ९
अयच्चान् मुनियोटुमवरु वन पुक्कार्
नयज्ञन् विश्वामित्रनाकिय महामुनि- १०
युपदेशिच्चानतिबलयु बलयुम-
न्नृपतिसुतन्मार्क्कु पैदाह कोटुप्पानाय् । ११
अयच्चु यमपुरितन्निल् ताटकतन्ने
भयत्तेक्कळञ्ञु कौशिकनुं बालन्मारु । १२

आप से भी अधिक दुःखी वहुत हुए थे। जव श्रीनारायण भगवान् मनुष्य हुए थे तव उनको जो दुःख प्राप्त हुए वे सुन लीजिये, आपके दुःख समाप्त होगे। ब्रह्मा ने अन्य देवो के साथ देवदेव नारायण के चरणो की वन्दना की। इसलिए कि रावण का वध करके देवो, ब्राह्मणो, मुनियो, धर्म और भूमि का दुःख दूर करे। तव भगवान् ने मनुवश के मणिदीप दशरथ के पुत्र के रूप मे जन्म लिया। १-६ उनके तीन छोटे भाई भी थे। वे सव सुख से रह रहे थे। तव मुनि विश्वामित्र विश्व की रक्षा के लिए अयोध्यापुरी पधारे। जव मुनि ने राजा से मागा तव उन्होने वड़े विश्वास के साथ राम और लक्ष्मण को उनके सग भेजा। दोनो मुनि के साथ वन चले गये। तव नयज्ञ (नीतिज्ञ) महामुनि

सम्प्रति तपोबल कण्टुकूटात मुनि
कुभसभवनुतन्नेक्कुन्पिट्टु रघुवरन् । ३२
सर्व्वराक्षसवधप्रतिज्ञचेय्तु चेय्वान्
देवेन्द्रदत्तमाय शार्ङ्गचापादिकळु ३३
दिव्यङ्ङळायिट्टुळ्ळोरायुधङ्ङळु वाङ्ङि
गीर्व्वाणकुलपरित्राणार्थं रघुनाथन् ३४
पुण्यवाहिनि गोदावरितन् तीरत्तिङ्कल्
दण्डकारण्यंतन्निलाश्रममतु केट्टि ३५
वाळुन्नकालत्तिङ्कल् वन्न शूर्प्पणखयां
पाळियें मूक्कु मुलयु कळञ्ञयच्चप्पोळ् । ३६
पोरिनु वन्नू खरदूषणत्रिशिराक्कळ्
घोरमाय् पतिन्नालु सहस्र पटयोटुं । ३७
नाळिक मून्नेमुक्काल्कोण्टु कोन्नितु राम-
नाळियु कटन्नळल्पूण्टवळरियिच्चाळ् ३८
सोदरनाय रात्रिञ्चरनायकनोटु
क्रोधं पूण्टवन् मिथिलात्मजाहरणार्थं ३९
रावणन् मारीचनेय्पोन्मानाययच्चति-
लावेशिच्चितु चित्तं सीतय्क्कु रघुवरन् ४०
पिटिक्कानटुत्तप्पोळरुताञ्ञतुनेरं
कोंटुत्तु शरं कोण्टु करञ्ञानवनप्पोळ् ४१

इस समय उनके तपोवल को देखना ही कठिन है। ऐसे कुँभसंभव मुनि को राम ने प्रणाम किया। २७-३२ सभी राक्षसो के वध की प्रतिज्ञा की। उनसे निपटने के लिए देवेन्द्र के दिये शार्ङ्ग और चाप और अन्य दिव्य अस्त्र भी लेकर देवो के कुलो की रक्षा करने के लिए पुण्यनदी गोदावरी के तट पर दण्डकारण्य मे एक आश्रम वनाकर जव राम रह रहे थे तव तुच्छ शूर्पणखा आयी। राम ने उसके नाक और स्तन कटवाकर उसको भगाया। तव खर, दूषण, त्रिशिरा आदि राक्षस चौदह हज़ार सैनिको की घोर सेना लेकर लडने आये। राम ने उनका पौने चार नाड़िकाओ (घडियो) के अन्दर नाश किया। दुखित शूर्पणखा समुद्र पार करके अपने भाई राक्षसो के नायक रावण के पास गयी और उसको सव हाल वताया। रावण ने क्रुद्ध होकर मिथिलात्मजा (सीता) के हरण के लिए मारीच को सुवर्णहिरण के रूप में भेजा। सीता का मन उसमे

कोपिच्चु कैकेयितान् मुटक्कि रामन्तानुं
तापत्यागार्त्थं वनवासार्त्थं पुरप्पेट्टु । २२
लक्ष्मणनोटु मिथिलात्मजयोटु कूटि
तल्क्षण गंग कटन्नुटने चित्रकूटं । २३
पुक्कितु दशरथन् वानुलोकवु पुक्कान्
तत्काले वसिष्ठदूतोक्तचा वन्नकंपुक्कु २४
भरतशत्रुघ्नन्मारुदकक्रिय चेय्तु
नरपालकन् वाळु चित्रकूटत्तिल् वन्नार् । २५
तातवृत्तान्तं केट्टु रामलक्ष्मणन्मारु
खेदमुळ्क्कोण्टु वेण्टुं कर्म्मङ्ङळोक्कच्चेय्तार् । २६
पादुकं कोटुत्तयच्चीटिनान् भरतने-
स्सादरं भूयो भरद्वाजनेक्कण्टु कूप्पि । २७
चण्डदीधितिकुलजातना रघुवरन्
दण्डकारण्यं प्रापिच्चीटिनोरनन्तरं २८
कोन्नितु विराधनेप्पिन्नेप्पोय् शरभंगन्-
तन्नुटे गति कण्टु काननत्तूटे पोन्पोळ् २९
अगस्त्यसहोदरन्तन्नेयु कण्टु पुन-
रगस्त्यपादाब्जवुं वन्दिप्पान् नटकोण्टान् । ३०
विन्ध्यनेयटक्कि वातापियेद्दहिप्पिच्चु
सिन्धुवारियुमेल्लामाचमिच्चोरिक्कले । ३१

दूर करने के लिए वन चले गये । लक्ष्मण और सीता के साथ गगा पार करके चित्रकूट पहुँचे । दशरथ का स्वर्गवास हो गया । तब वसिष्ठजी के दूत भेजने पर भरत और शत्रुघ्न लौटे और उन्होने दशरथ की अन्त्येष्टि क्रिया की । तदनन्तर चित्रकूट गये जहाँ राजा राम रहते थे । पिताजी का वृत्तान्त सुनकर राम और लक्ष्मण दु खित हुए और उन्होने उनकी आवश्यक क्रियायें की । २१-२६ राम ने अपनी पादुका देकर भरत को घर लौटाया । तत्पश्चात् राम ने भरद्वाज मुनि का दर्शन करके प्रणाम किया । सूर्यवशी रघुवर (राम) के दण्डकारण्य मे प्रवेश करने के बाद विराध का वध हुआ । शरभग की गति देखकर वन के भीतर से जाते हुए अगस्त्य के भाई का दर्शन किया । तदनन्तर अगस्त्य के चरणो की वन्दना करने के लिए चले । अगस्त्य ने विन्ध्य को दबाया था, वातापि को जलाया था और समुद्र के पानी को एक ही आचमन मे पीलिया था ।

कण्टितु हनूमानुं कोण्टुपोय् सुग्रीवनुत-
न्निण्टल् तीर्प्पतिन्नायि सख्यवुं चेय्यिप्पिच्चान् । ५१
दुन्दुभिकायं पादागुष्ठंकोण्टेट्टुत्तेरि-
ञ्ञिन्दिरावरनाय राघवन्तिरुवटि । ५२
सुन्दरियाय सीता भूषणङ्ङळुं कण्टु
मन्दमेन्नियेे किष्किन्धापुरि नोक्किप्पोयार् । ५३
वट्टत्तिल्निन्न मरमेळुमोरम्पुकोण्टु
पोट्टिच्चु रामदेवन् वालियेत्तन्नेक्कोन्नान् । ५४
इरुन्नू चातुर्म्मास्यं माल्यवान् मुकळुतन्मेल्
पऱञ्ञवण्णंतन्ने वाराञ्ञु सुग्रीवनुं ५५
निऱञ्ञ कोपत्तोटे सोदरनुतन्नोटाशु
पऱञ्ञू रघुवरन् वन्नितु शरत्क्कालं । ५६
लक्ष्मणा ! वैकाते नी किष्किन्धापुरि पुक्कु-
मर्क्कटप्रवरना सुग्रीवनोटु चोल्क ५७
सत्यत्ते मऱक्कयो सख्यवुं मऱन्नुवो ?
इत्तरं काट्टीटुकिलत्तर तन्ने वरुं । ५८
अग्रजनुतन्नेक्कोन्न बाणमिन्नियुमुण्टि-
ङ्ङुग्रत कुऱञ्ञतुमिल्ल मल्करङ्ङळ्क्कुं । ५९

सरोवर के तट पर पहुँचे। हनुमान ने उनको देखा और उनको सुग्रीव के पास ले जाकर उनके दुःख दूर करने के लिए उनके साथ सुग्रीव की मित्रता भी कराई। तदनन्तर लक्ष्मीपति पूज्य राघव (राम) ने दुन्दुभि के शरीर को अपने पाँव के अँगूठे से उठाकर दूर फेंक दिया। सुन्दरी सीता के आभूषणो को देखने के बाद विना विलम्ब के किष्किन्धापुरी की ओर चले। फिर रामदेव ने गोलाकार खड़े सात वृक्षो को एक ही वाण से काट डाला। तदनन्तर वालि का वध किया। माल्यवान् नामक पर्वत के ऊपर चौमास विताया। जैसे कहा था उसके अनुसार जब सुग्रीव नहीं आया, तब वडे क्रोध के साथ रघुवर ने अपने भाई से कहा, अब शरद् ऋतु भी आ गई। ४९-५६ हे लक्ष्मण ! तुम जल्दी किष्किन्धा जाओ और वानरप्रवर सुग्रीव से कहो कि क्या सत्य को भूल गये ? क्या मित्रता भी कुछ नही ? इस प्रकार करोगे तो वही वात होगी। जिस वाण से तुम्हारे वड़े भाई को मारा था वह अब भी है। मेरे हाथों की उग्रता भी अभी कम नही हुई है। अगर सुग्रीव सोचता है कि वड़े

अय्यो ! जानकीदेवि ! लक्ष्मणायेन्नुतन्ने
मय्येलुकण्णितन्नेययच्चु कुमारने । ४२
तक्कत्तिल् दशग्रीवन् तैक्कोङ्क्त्तरुणियें-
क्कैक्कोण्टु तेरिलेटि वेगत्तिल् पोकुन्नप्पोळ् ४३
पक्षीन्द्रन् जटायुतान् मुल्पुक्कु युद्ध चेय्तान्
पक्षवुं वेट्टियरुत्तवनु पुरि पुक्कान् । ४४
आरामभुवि चारुशिशपावृक्षत्तिन्कीळ्
ताराऱ्मातिनेवच्चु रावणन् गृह पुक्कान् । ४५
मैक्कण्णितन्नेक्काणाञ्ञुळ्क्कान्पिलळल्पूण्टु
दु.खिच्चु रघुपति लक्ष्मणनोटुकूटि । ४६
नटक्कुंनेरं कण्टु पऱञ्ञु जटायुवु-
मट्टुत्तवण्णंतन्ने मरिच्चानवनुट- ४७
लेंटुत्तु दहिप्पिच्चु नटुक्कत्तोटुंकूटि
अटुत्त शेषक्रिय चेय्तितु रामदेवन् । ४८
विल्वाद्रितन्निल्प्पिऱन्नुण्टाय शबरियु
कल्याणत्तोटु कण्टु पूजिच्चु वरं कोण्टाळ् । ४९
कोल्लुवान् तुटङ्ङिय कबन्धन्तन्नेक्कोन्नु
नल्लोरु गति नल्कि पुक्कितु पन्पातीरं । ५०

लग गया । -राम जव उसे पकडने के लिए पास गये तो वह भागकर दूर चला गया । जब राम ने उस पर बाण छोड़ा तब वह "हा ! सीते ! हा लक्ष्मण !" ऐसा चिल्लाया । सुनकर सीता ने लक्ष्मण को देखने के लिए भेजा । ३३-४२ अवसर पाकर रावण आया और सीता को पकड़ कर अपने रथ पर बैठाकर जव जल्दी ले जा रहा था तव पक्षीन्द्र जटायु ने उसका सामना करके उससे युद्ध किया । रावण उसके पंख काटकर अपने नगर को चला गया । वह एक उद्यान मे सुन्दर शिशपा वृक्ष के नीचे सुन्दरी सीता को वैठाकर अपने घर गया । सीता को न देखकर राम वहुत दु.खित हुए और लक्ष्मण के साथ जव उसको ढूँढते चल रहे थे तव जटायु को देखा । उसने सब वृत्तान्त वताया और प्राण छोड़ दिये । रामदेव ने आदर के साथ उसके शरीर को जलाया और इसकी शेषक्रियाएँ की । ४३-४८ शवरी ने जिसका जन्म विल्वाद्रि मे हुआ था सोत्साह राम का दर्शन किया, उनकी पूजा की और वर पाया । कबन्ध जब उनको मारने लगा तब उसका वध करके उसकी अच्छी गति बनाकर पम्पा

मक्कंटप्परिपव्वकु चापल्यं पेरुतल्लो
कार्य्यंतोळमेयुळ्ळु नमुक्केन्नङ्ङिञालुं ७०
वीर्यत्तेक्काट्टीटुवानिविटे वेण्टीलल्लो
पोयालुमिनियेङ्ङ्कलेन्नतु केट्टनेरं ७१
पोयवन् किष्किन्धातन् गोपुरद्वारं पुक्कान् ।
मेल्लवेयोरु चेरुञाणोलियिट्टनेर ७२
चोल्लेळुं ब्रह्माण्डङ्ङळोक्कवे विरच्चुते ।
ॲन्तोरु शब्दमेन्नु चिन्तिच्चु दशास्यनु- ७३
मन्धनायुळ्ळोरु रण्टुनाळिक निन्नान् ।
चेविकळिरुपतु विरलिट्टिळक्किनान् । ७४
प्लवगपटलिकळ् मोहिच्चु वीणारल्लो ।
वळर्न्नु सिंहासनमतिन्मेलिरुन्नेरे- ७५
ञेळिञ्ञ सुग्रीवनु विरच्चु ञेट्टि वीणान् ।
चिरिच्चु परञ्ञितु श्रीहनुमानुमप्पोळ् ७६
शरत्क्कालत्तेक्कण्टिट्टुणर्त्तिच्चीले ञानो ।
इन्निप्पोळ् निनक्कङ्ङिन्नीट्टुवान्तक्कवण्णं ७७
मन्नवर् कुलमौलि राघवन्तन्टे तम्पि ।
तन्नुटे गुणनादं केट्टतेन्नङ्ङिञालुं ७८
चेन्निनिक्कालकल् वीळ्क वैकाते मटिक्केण्ट ।
पेटिच्चु तिरुमुन्पिल् चेल्लुवान् पणियत्रे ७९

लोग तो बहुत चपल होते हैं। हमको तो अपने काम से मतलब है, इसलिए यहाँ अपना वीर्य (पराक्रम) दिखलाने की कोई आवश्यकता नही है। अच्छा अब तुम जा सकते हो। यह सुनकर वे चले और किष्किन्धा के गोपुरद्वार पर पहुँचे। जब उन्होने अपने धनुष की ज्या (डोरी) की ध्वनि की तो सभी ब्रह्माण्ड काँपने लगे। 'यह कैसा शब्द है?' ऐसा सोचकर रावण भी बिना कुछ समझे घंटा भर खडा रहा और अपने बीसो कानो मे उसने उँगली डाल ली। ७०-७४ वानर लोग बेहोश होकर गिर पडे। सुग्रीव भी, जो मोटा होकर सिंहासन पर गर्व से बैठा था, चकित होकर गिर पडा। तब हनुमान् ने हँसते हुए कहा—"मैंने शरद् ऋतु को देखकर बताया नही था? अब राजाओ के शिरोमणि राम के छोटे भाई ने आपको बोध कराने के लिए अपना ज्या-घोष (धनुष की डोरी का शब्द) किया है, अब बिना हिचक के और विलम्ब

अग्रजन् पोयवऴि नल्लतॆन्नितुकालं
सुग्रीवन्तनिक्कुऴिऌल् तोन्नीट्टुण्टॆन्नाकिलो ६०
व्यग्रमिल्लिनिक्केतुमॆन्नतु धरिक्केणं
निग्रहमनुग्रहं चॆय्तवर्क्कॆन्तु दण्डं ? ६१
बन्धुक्कळिहलोक सौख्यत्तिन्नल्लयल्लो
चिन्तिक्किलपारत्रिक सौख्यत्तिन्नल्ल नून । ६२
मऴयुं मञ्ञु काट्टु वॆयिलुमेट्टु काट्टि-
लऴल्पूण्टिरुन्नुऴळ कायकनिकळु तिन्नु ६३
पिळुकिक्किटन्नवन्तन्नॆ आन् वाऴिच्चप्पोळ्
मुळ्ळुवनवयॆल्लां मऱन्नुकळञ्ञवन् । ६४
ऒळिञ्ञु सिहासनमेऱिड्डंभवुं काट्टि-
त्तॆळिञ्ञु तरुणिकळोटुकूटिटचेर्न्नु ६५
मद्यपानवुं चॆय्तु मत्तनायिरुन्नवन्
नित्यसौख्यङ्ङळ् कण्टु समय चॆय्ततॆल्लां ६६
मऱन्नानॆङ्किलतु आनेतुं मऱन्नील
पऱञ्ञालिल्ल रण्टॆन्नङ्ङु नी चॆन्नु चॊल्क । ६७
लक्ष्मणनतु केट्टु कलिपच्चु पुऱप्पॆट्टान्
सौमित्रि तिरिच्चतु कण्टु राघवदेवन् ६८
सौमुख्यमोटु वीण्टु विळिच्चिट्टरुळ्चॆय्तु
निल्क्कॆटो कुमारा ! नी केट्टुपोकणमितु । ६९

भाई जिस मार्ग से गया वह ठीक है तो मुझे उसमे कोई दिक्कत नही है, जान ले। निग्रह और अनुग्रह दोनो करनेवाले के लिए क्या मुश्किल है ? बन्धुजन ऐहिक (इस लोक के) सौख्य (सुख) के लिए है, सोचो तो वे पारत्रिक (परलोक के) सौख्य के लिए बिलकुल नही है। ५७-६२ जो जङ्गल में वर्षा, सर्दी, हवा, और धूप लगने से पीडित दशा मे वहाँ के कन्दमूल खाता हुआ पडा रहता था उसे मै ने राजसिहासन पर बैठाया। पर वह सब भूल बैठा है। अब गर्व के साथ सिहासन पर बैठकर आडम्बर दिखलाता है और आनन्द से तरुणियो के साथ मद्यपान करके मत्त हो गया है। इस निरन्तर सुख के कारण अपनी प्रतिज्ञा को भूल बैठा है परन्तु मैं नही भूला हूँ। उससे जाकर कह दो कि इसमे दो मत नही हो सकते है। यह सुनकर लक्ष्मण जाने के लिए तैयार हुए। सौमित्रि (लक्ष्मण) को जाते देखकर रामदेव ने प्रसन्नता से फिर बुलाकर उनसे कहा। भाई ! जरा ठहर जाओ और यह भी सुन लो। ६३-६९ बन्दर

ऍन्तय्यो ! पुऱत्तुनिन्नरुळीटुवानिप्पोळ्
निन्तिरुवटि कनिञ्ञिङ्ङॊऴुन्नळ्ळीटण । ८९
बन्धुविन् गृहमॆन्नु चिन्तिच्चीलयोयितु
सन्तोषत्तोटु कटन्निङ्ङिरुन्नरुळणं । ९०
निर्णयमयोध्ययु किष्किन्धानगरवु-
मॊन्नुकॊण्टुमे भेदमिल्लॆन्नु धरिक्कण । ९१
तिरुवुळ्ळक्केटिल्लयल्लीयॆन्नतु नण्णि-
प्पेरिकॆव्भीतिकॊण्टु सुग्रीवन् तिरुमुन्पिल् ९२
वरुवान् वैकीटुन्नु निन्तिरुवुळ्ळमॆन्नि
शरणमिल्ल मट्टु ञङ्ङळ्क्कु दयानिधे ! ९३
वानरजातिक्केऱ्च्चापल्य पॆरुतल्लो
वानरप्रवरन्मार् वन्नुकूटाय्ककॊण्टु ९४
वानरवीरन् विटकॊळ्ळातिन्निनियिप्पोळ्
वानरन्मारॆ रक्षिच्चीटुवानाळुण्टल्लो । ९५
सारस्यलीलकळुं सौजन्यविलासवुं
सारज्ञवीरन् कण्टु तॆळिञ्ञोरनन्तर ९६
किष्किन्धयकंपुक्कु लक्ष्मणकुमारनुं
मर्क्कटाधिपन्तन्नॆ वरुत्ति तारतानु । ९७
मानिनिमारोटॊट्टिटचेर्न्नु वानरवीरन्
मानववीरन्कळल् कूप्पिनान् पेटियोटे । ९८

होकर कह रहे हैं। आप कृपया भीतर चले आवे। यह आपका वन्धुगृह है, क्या आप ने ऐसा नही समझा ? प्रसन्नता के साथ आप अन्दर आवे और वैठकर वोले। समझ लीजिये कि अयोध्या और किष्किन्धा नगर मे कोई भेद नही है। यह समझकर कि आप कदाचित् अप्रसन्न है सुग्रीव डर के मारे आपके सामने आने मे देर कर रहे है। परन्तु आपके सिवाय, हे दयानिधे ! हम लोगो का और कोई शरणदाता नही है। ८८-९३ वानर जाति का चापल्य (चचलता) तो प्रसिद्ध ही है। वानर वीरो के अब न आने के कारण वानरवीर (सुग्रीव) ने आप से आज्ञा नही ली। अब तो वानरो की रक्षा करनेवाले विद्यमान है। इन सद्भावना की लीलाएँ और इस सौजन्य के विलास को देखकर जब सारज्ञ और वीर कुमार लक्ष्मण प्रसन्न हुए तो वे किष्किन्धा के अन्दर गये। तब तारा ने वानराधिपति को वुलवाया। महिलाओ के साथ वानरवीर भय के साथ

माटॊत्त मुलयाळां तार पोय् मुन्पे चॆन्नु
कोपत्तॆश्शमिप्पिच्चे कण्टु कैकूप्पिक्कूटू
कोपत्तॆक्कॆटुप्पानाय् वेलकळ् चॆय्क नीयु । ८०
मेरुमामलय्क्कुनिन्तिन्नलॆ वन्न कपि-
वीरन्मार् कॊण्टुवन्न फलमूलङ्ङळॆङ्ङु ? ८१
पॊन्निऱमल्लो कण्टाल्त्तिन्नालु मॊरुमास-
त्तिन्नु पैदाहङ्ङळुं पिन्नॆयुण्टाकयिल्ल । ८२
नन्नतु सौमित्रिक्कु तिरुमुल्क्काळ्च्चवय्प्पान्
धन्ययां तारतन्नॆ पोकणमतु कॊण्टु । ८३
सारसमिऴियाळां तारेशमुखियाय
तारयुमतु केट्टु पारातॆ पुऱप्पॆट्टाळ् । ८४
ऒट्टुऴिञ्ञुलञ्ञङ्ङु किऴिञ्ञ नीवीबन्ध-
मॊट्टॊट्टु करकॊण्टु ताङ्ङियुमुऱप्पिच्चु । ८५
इण्टल् चेर्न्निरुण्टॊरु कण्टिवार् कुऴलतु
कुण्ठतचेर्त्तु चिलपुष्पङ्ङळ् कळञ्ञुटन् । ८६
कळभमऴिञ्ञॊट्टु शेषिच्चु पटियतु
कळञ्ञु परन्नीटु विमलगन्धत्तोटु ८७
कण्टालॆत्रयुं मनोमोहनमाय वेष-
कॊण्टवळ् कुमारनॆक्कण्टुटनुणर्त्तिच्चाळ् । ८८

के जाकर पैरो पड़िये" । तब सुग्रीव ने कहा—"डर के मारे उनके सामने जाना कठिन हो गया है । पहले तो उन्नतस्तनवाली तारा उनके सामने जाकर उनका कोप ठडा करे, तब मै जाकर हाथ जोड़ूँगा । उनका कोप शान्त करने के लिए तुम भी काम करो । ७५-८० कपिवर कल मेरु महापर्वत से जो फल और मूल लाये थे वे कहाँ है ? वे देखने मे सुनहले रग के है और अगर खाये जायँ तो महीना भर भूख और प्यास नही लगेगी । वे लक्ष्मणजी को उपहार देने के लिए अत्यन्त उपयुक्त है । उनको लेकर तारा भी यह सुनकर जल्दी जाने के लिए तैयार हुई । अपने ढीले और तनिक फटे नीवीबन्ध को अपने हाथ से पकड़कर स्थिर किया । अपने काले-काले केशो के पुराने फुलो को फेक दिया । अपने शरीर पर लगे चन्दन के अवशेष को पोछकर नया सुगन्ध लगाया । ८१-८७ और देखने मे मन को मोहनेवाला वेष धारण करके कुमार (लक्ष्मण) के सामने जाकर उसने सब बताया । यह क्या बात है कि आप बाहर खड़े

अगदन् गजन् गवयन् गवाक्षनुं पिन्नॆ
तुगना नीलन् नळन् दुर्म्मुखन् दधिमुखन् १०८
शरभन् शतवलि ऋषभन् प्रमाथियु
अरिकळ्कालन् वेगदर्शियु कुमुदनु १०९
मैन्दनुं विविदनु जांववान् सुमुखनु
गन्धमादनन्तानु मट्टुमीवण्णमुळ्ळ ११०
वानरप्पटय्क्कॊक्क नायकन्मारायुळ्ळोर्
मानमोटोटिच्चाटित्तकर्त्तुवन्नीटिनार् । १११
अरुपत्तॆळुकोटि वानरराजाक्कन्मा-
रिरुपत्तॊन्नुवॆळ्ळ पटयुमायि वन्नार् । ११२
अवरु तानु कूटि सुग्रीवन् पुरप्पॆट्टि-
ट्टवनीपतिवीर ! यॆळुन्नळ्ळीटामॆन्नान् । ११३
वानरप्पटयुमाय् लक्ष्मणकुमारनुं
मानववीरन्कळल् कूप्पिनानतुनेरं । ११४
सुग्रीवन् मुतलाय वानरप्रवरन्मा-
रॆक्कवे तॊरुतॊरे तृक्कळल् वणङ्ङिनार् । ११५
इक्कपिसैन्यमॊक्कत्तृक्काल्क्कल् वेलचॆय्वान्
तक्कवरॆन्नु तिरुवुळ्ळत्तिलेरॊटण । ११६
अर्क्कनन्दनन्मॊळि केट्टु राघवदेवन्
मर्क्कटप्रवरनॆत्तळुकियरुळ्चॆय्तु । ११७
नालु दिक्किलुमयच्चीटणं कपिकळॆ-
प्पालोलुंमॊळियाळां सीतयॆयन्वेषिप्पान् । ११८

सुमुख, गन्धमादन और इस प्रकार के अन्य वानरसेना के नायक दौड़ते और कूदते हुए अभिमान और उत्साह के साथ चले आये। सरसठ करोड वानर नरेन्द्र इक्कीस अरव की सेना को लेकर चले आयें। १०७-११२ सुग्रीव ने कहा—"इनके साथ, हे नरेन्द्रवीर ! मैं आ रहा हूँ।" तदनन्तर वानरसेना के साथ लक्ष्मण निकले और मानववीर (राम) के चरणो की वन्दना की। सुग्रीव आदि वानरवीरो ने भी पूज्य चरणो की वन्दना की। सुग्रीव ने कहा, "आप समझ लीजिये कि इस वानर-सेना का एक-एक अङ्ग पूज्य चरणो की सेवा करने योग्य है।" सूर्यपुत्र की इस बात को सुनकर राघवदेव ने सुग्रीव को छाती से लगाकर कहा—कमललोचना सीता को ढूँढने के लिये कपियो को चारो दिशाओं मे भेज देना। तब

पेटिक्कवेण्टा पारमॆन्नॆ नीयॊन्नुकॊण्टु
पेटिक्कवेण्टू पक्षे रामदेवनॆयल्लो । ९९
तृक्कटक्कण्णु चॆट्टु चुवन्नु कण्टिट्टु आन्-
धिक्कारमुळ्ळ निन्नोटरियिप्पानाय् वन्नु । १००
किष्किन्धाराज्यत्तिङ्कल् मटॊरुवनॆयिनि
मर्क्कटाधिपनायि वाळिक्कुं रघुश्रेष्ठन् । १०१
इत्तरमरुळ्चॆय्किलिज्जनत्तिनु पिन्नॆ
मट्टॊरु शरणमिल्लॆन्नतु धरिक्कणं । १०२
ऎन्नु तारयु चॊन्नाळन्नेरं सुग्रीवनुं
मन्नवन्तन्नॆ वीणुवणङ्ङ्ङ्युरचॆय्तान् । १०३
वन्न वानरन्मारुमटियन् तानु कूटि
मन्नवर् कुलरत्नंतन्नटिमलर् कूप्पि १०४
तन्वगिमणियाय जानकियिरिप्पेटं
अन्वेषिच्चरिञ्ञीटा राघवनियोगत्ताल् । १०५
वानरराजन्तानुं मारुतियोटु चॊन्नान्
वानरन्मारॆयॊक्क वरुवान् नियोगिक्क । १०६
मारुति परञ्ञप्पोळ् तारनुं सुषेणनु
मारुतिजनकनां केसरिवीरन्तानु १०७

मानववीर के पैरो पड़े । लक्ष्मण ने कहा, "मुझसे तो बिलकुल न डरना । परन्तु रामदेव से डरना तो आवश्यक है । उनकी आदरणीय आँखों को तनिक लाल पाकर ही मैं तुम उदासीन को सचेत करने के लिये आया हूँ । ९४-१०० रघुश्रेष्ठ और किसी को किष्किन्धा राज्य के वानराधिपति के स्थान मे रखकर राज्य करा सकते है ।" यह सुनकर तारा ने कहा— "अगर आप ऐसी बाते करेंगे तो हम लोगो को और कोई शरण नही है ।" सुग्रीव तो लक्ष्मण के पैरो पड़े और विनम्रता के साथ इस प्रकार बोले, "आगत वानरो के साथ यह दास रामदेव की आज्ञा से राजवश के रत्न के चरणों की वन्दना करके 'महिलारत्न जानकी इस समय कहाँ है' यह ढूँढकर मालम कर लेगा ।" तदनन्तर वानरराज ने मारुति (हनुमान्) से कहा—सभी वानरो को आने के लिये आज्ञा दो । १०१-१०६ जब मारुति ने आज्ञा दी तब तार, सुषेण, मारुति के पिता वीर केसरी, अगद, गज, गवय, गवाक्ष, ऊँचे कद का नील, नल, दुर्मुख, दधिमुख, शरभ, शतबलि, ऋपभ, प्रमाथि, शत्रुओ का नाशक वेगदर्शी, कुमुद, मैन्द, द्विविद, जाम्बवान्,

मायमेरीटुं छायाग्रहिणितन्नें वेन्नु ।
वायुनन्दनन् त्रिकूटाचलोपरि वीणान् । १२९
लङ्काश्रीतन्नेंत्ताडिच्चवळ्तन्ननुग्रहाल्
शङ्ककूटातें निशि कृशनायकपुक्कान् । १३०
लङ्कयिलुळ्ळ विचित्रङ्ङळुं कण्टुकण्टु
पङ्कजमुखिवाळुमुद्यानमकंपुक्कान् । १३१
शिंशपावृक्षत्तिन्मेलेतुमेयिळकातें
शैशववेषपूण्टु वसिच्चीटिननेरं । १३२
रावणन् शृंगारकोलाहलत्तोटे वन्नु ।
देवियोटनुसरिच्चोरोन्नें परञ्ञतु १३३
जानकि दशाननन्तन्नोटु परञ्ञतुं ।
मानसकोपत्तोटे दुष्टनां निशाचरन् १३४
देवियें वेट्टिक्कोंल्वानोङ्ङुन्पोळ् मण्डोदरि
रावणन्तन्नेंप्पिटच्चटक्कि निर्भर्त्सिच्चु १३५
सत्वर कोण्टुपोयवारुमेल्लामे कण्टु चित्त-
कौतुकत्तोटुमिरङ्ङिडत्तोळुतवन् १३६
विश्वनायकन्तन्टे वृत्तान्तमेल्लां चोल्लि
विश्वासं वरुत्तियोंट्टाश्वसिप्पिच्चशेषं १३७
अंगुलीयक कोंटुत्तटयाळवु परञ्-
ञंगनारत्नत्तोटु चूडारत्नवुं वाङ्ङि १३८

आये। मैनाक पर्वत के द्वारा सत्कृत होने के बाद गरुड़ के समान ऊपर ही ऊपर उड़ते समय मायायुक्त छायाग्राहिणी का वध किया। तदनन्तर हनुमान् त्रिकूटपर्वत पर उतरे। १२१-१२९ वहाँ लङ्काश्री (लंका की राजलक्ष्मी) का दमन करके उसके ही अनुग्रह से निःशङ्क होकर छोटा रूप धारण करके रात को लङ्का मे प्रविष्ट हुए। वहाँ उस शिंशपावृक्ष पर बालक का रूप धारण करके बिना तनिक भी हिले बैठे रहे। तब रावण अपने शृंगार का कोलाहल रचे हुए चलकर आया। उसने देवी सीता से तरह-तरह की बाते की और जानकी ने उनका जवाब भी दिया। बहुत क्रुद्ध होकर जब दुष्ट राक्षस ने देवी को मार डालने के लिए हाथ उठाया तब मन्दोदरी ने उसको रोका और बहुत डाँटा और घर ले गयी। यह सब देखने के बाद हनुमान् बड़े कौतुक के साथ वृक्ष से उतरे और सीताजी को प्रणाम करके विश्वनायक राम का वृत्तान्त कहने लगे। इस प्रकार विश्वास पैदा करके और आश्वासन देने के बाद अँगूठी दी और लक्षण

तिरञ्ञु सीततन्नेक्काण्मानाययच्चितु
परन्न कपिकळे नालुदिक्किलुमवन् । ११९
ओरोरो लक्षं कपिवीररेयोरोदिशि
शूरतयेरुं यजमानन्मारोटुं पोयार् । १२०
अन्नतिल् तेक्कुदिक्किन्नायिट्टु नटकोण्टार्
मैन्दनुं विविदनुं शरभन् सुषेणनु- १२१
मगदन् नळन् विरिञ्चात्मजन् वायुसुतन्
तुंगपर्व्वतशरीरन्मारामिवरेल्ला- १२२
मन्नेर दाशरथि मारुतियुटे कैयिल्
तन्नुटे नामाङ्कितमायुळ्ळोरंगुलीयं १२३
सन्देशमाय् नल्किनान् मैथिलिक्ककतारिल्
सन्देहं तीरुवानाय् मारुतियतुं वाङ्ङि १२४
वन्दिच्चु कपिवरन्मारुमाय् नटकोण्टान्
दक्षिणोदधितीरं प्रापिच्चु सम्पातियां १२५
पक्षिश्रेष्ठानुग्रहंकोण्टु सन्तोषत्तोटे
मारुति महेन्द्रमां पर्व्वतंतन्मेलेरि
वारिधितीरे चाटिप्पोकुम्पोळ् मद्ध्येमार्ग्ग १२६
नागमातावा सुरसामुखद्वारत्तूटे
वेगेन नाभिपुक्कु कृषनाय् पुरप्पेट्टान् ।१२७
मैनाकाचलंतन्नाल् सत्कृतनायशेषं
वैनतेयनेप्पोले मेले पोयीटुनेरं १२८

सुग्रीव ने सीता को ढूँढने के लिए वानरो को चारो तरफ भेजा। एक-एक दिशा मे एक-एक लाख वानर अत्यन्त शूर नेताओ के साथ चले। ११३-१२० उनमे मैन्द, द्विविद, शरभ, सुषेण, अगद, नल जो विरिञ्चि का पुत्र था, वायुपुत्र हनुमान्--ऊँचे पर्वत के समान शरीरवाले ये सभी वानर दक्षिण दिशा की ओर चले। उस समय दाशरथि (राम) ने हनुमान् के हाथ मे अपनी नामङ्कित अँगूठी सन्देश के रूप मे दी ताकि सीता को सन्देह न हो जाय। उसे लेकर और प्रणाम करके हनुमान् अपने वानरो के साथ चल पडे। दक्षिणसमुद्र के तट पर पहुँचकर पक्षिश्रेष्ठ सम्पाति का अनुग्रह लेकर हनुमान् उत्साह से महेन्द्रपर्वत पर चढे और वहाँ से जब कूदकर जा रहे थे तब रास्ते मे नागमाता सुरसा के मुँह में प्रवेश करके तुरन्त ही छोटा रूप धारण करके उसकी नाभि से निकल

ब्रह्मास्त्रंकोण्टु बन्धिच्चीटिनानतुनेरं
सम्मोहं पूण्टपोले किटन्नु हनुमानु । १४८
रावणन्तन्नेक्कण्टु परञ्ञानवस्थकळ्
देववैरियुमतु केट्टुटन् नियोगिच्चान् । १४९
वालिन्मेलग्नि कोळुत्तीटुकेन्नतुनेरं
चेलकळ्कोण्टु चुट्टिक्कोळुत्तीटिनान् तीयुं । १५०
मारुतियेळुनूरुयोजन लङ्कापुर-
मारूढकोपत्तोटे चुट्टुपोट्टिच्चितल्लो । १५१
तारिल्मातिनेक्कण्टु परञ्ञु रण्टामतुं
वारिधितन्निल् तीयु पोलिच्चु चाटीटिनान् । १५२
दक्षिणसमुद्रत्तिन्नुत्तरतीरे वन्नु
दक्षनां वायुपुत्रन् वानरप्पटयोटुं । १५३
'कण्टेन ञान् जानकियें' येन्नुणर्त्तिच्चशेषं
तण्टार्मानिनि चूटुं चूडारत्नवुं नल्कि १५४
मानववीरनोटु वृत्तान्तं चोन्नशेषं
वानरप्पटयोटुकूटे राघवदेवन् १५५
दक्षिणसमुद्रत्तिन्नुत्तरतीरं पुक्कान्
तल्क्षणं दशग्रीवन्तन्नोटु विभीषणन् १५६
नल्लतु परञ्ञतु केळाञ्ञु दशाननन्
नल्लनां विभीषणन् राघवन्तन्नेक्कण्टान् । १५७

सभी वाते वतला दी । देववैरी रावण ने भी सभी वाते सुनकर इस प्रकार आज्ञा दी—"इसकी पूँछ पर आग दो ।" तव इन्द्रजित् ने चिथड़ो से लपेटकर पूँछ को जला दिया । मारुति (हनुमान्) ने तो सात सौ योजन की लङ्का को क्रोध के आवेश मे आकर जला डाला । सीताजी को दुवारा देखकर उनको आश्वासन दिया । आग को समुद्र मे बुझाकर फिर कूदे । १४६-१५२ तदनन्तर दक्ष हनुमान् दक्षिणसमुद्र के उत्तरतट पर वानर-सेना से मिले । 'मैने सीताजी को देखा', ऐसी घोषणा करने के वाद उनके चूडारत्न को राम को समर्पित किया, और मानववीर राम को सारा वृत्तान्त सुना दिया । तव राघववीर राम वानरसेना के साथ दक्षिण-समुद्र के उत्तरतट पर पहुँचे । उस समय दशग्रीव (रावण) ने विभीषण का सदुपदेश नही सुना । तव विभीषण ने राम का दर्शन किया । तव राम ने लक्ष्मण के द्वारा विभीपण को लङ्कानायक के पद पर निःशङ्क

वन्दिच्चु विटवळ्ङिङच्चु सन्ताप तीर्त्तु ।
नन्दनसममाकुमुद्यान भग चेय्तु १३९
उद्यानपालन्मारेयोक्कवे तच्चु कोन्नान् ।
वृत्तान्तं केट्टशेषं क्रुद्धनाय् निशाचरन् १४०
अयच्चान् नूरायिरं किङ्करन्मारेय्प्पो-
ळयच्चानवरकळेक्कालनूक्करक्षणाल् । १४१
पञ्चसेनाधिपरेययच्चाननवरेयुं
पञ्चत्वं चेर्त्तीटिनान् पञ्चास्यपराक्रमन् । १४२
उन्नतन्मारायुळ्ळ मन्त्रिनन्दनन्मारे-
प्पिन्नेयुमेळुपेरेययच्चान् दशाननन् । १४३
वन्नोरु पटयोटुमेळुपेरेयु तच्चु-
कोन्नितु परिघत्तालञ्जनातनयतुं । १४४
रक्षोनायकन्तन्टे पुत्रनाकिय वीर-
नक्षना कुमारनङ्ङटुत्तान् पटयोटे । १४५
तल्क्षणमवनेयु कोन्नतु केट्टनेरं
रक्षोनाथनु वन्न कोपमेन्तोन्नु चोल्लू । १४६
कोपत्तोटिन्द्रजित्तुमटुत्तु युद्ध चेय्तान्
शोभिच्च दिव्यास्त्रङ्ङळेटवु प्रयोगिच्चान् । १४७

बतलाये। तदनन्तर महिलारत्न से चूड़ारत्न ले लिया, १३०-१३८ उनका दु ख दूर किया, उनकी वन्दना की और जाने की आज्ञा मागी। इसके बाद नन्दनवन के समान उद्यान का नाश करके सभी उद्यानपालको का वध किया। यह समाचार सुनकर रावण क्रुद्ध हुआ और उसने एक लाख कर्मचारी भेजे। उन सबको हनुमान् ने एक ही क्षण मे यमलोक भेज दिया। तब पाँच सेनापति भेजे गये। पर वे भी सिह के समान पराक्रमवाले (हनुमान्) के द्वारा मारे गये। तब रावश ने सात बड़े मन्त्रिपुत्रों को भेजा। अञ्जना-पुत्र हनुमान् ने उन सातो को भी उनकी सेना के साथ परिघ (भाला) से नष्ट कर दिया। तत्पश्चात् राक्षस-नायक का पुत्र वीर अक्षयकुमार अपनी सेना लिये चले आये। १३९-१४५ (हनुमान् ने) उनको भी तत्क्षण ही मार डाला। यह सुनकर राक्षसेन्द्र को जो क्रोध आया उसका वर्णन नही किया जा सकता। तब बड़े क्रोध के साथ इन्द्रजित् (मेघनाद) लडने आये। उन्होने चमकनेवाले दिव्य अस्त्रो का प्रयोग किया। ब्रह्मास्त्र से हनुमान् को बाँध दिया। हनुमान इस प्रकार लेट गये मानो बेहोश हो गये हो। फिर रावण को देखकर उसको

वन्नितु गरुडनुमन्नेरमविटेक्कु
पन्नगशरङ्ङळु सन्नमाय् वन्नुकूटि । १६८
वीरना धूम्राक्षने मारुति कौलचैय्तान्
वीरुळ्ळ वज्रदंष्ट्रन्तन्नेयंगदन् कौन्नान् । १६९
वन्पनामकन्पनुमुन्पर्तन्पुरि पुक्का-
नन्पौळिञ्ञोरु वायुसंभवन्तन्टे कैय्याल् । १७०
नीलनु प्रहस्तनेक्कौन्नु भूमियिलिट्टान्
नीलमामलपोले रावणन् पुरप्पेट्टान् । १७१
रामनोटेटु तोटु रावणन् पुरि पुक्कान्
भीमतयुळ्ळ कुंभकर्णनेयुणर्त्तिनान् । १७२
अवनुं पोन्नु वन्नु रामसायकङ्ङळे-
टवनितन्निल् वीणु मरिच्चानतुनेरं । १७३
कौन्नितु नरान्तकन्तन्नेयुं वालि पुत्रन्
वन्नोरु देवान्तकन्तन्ने मारुति कौन्नान् । १७४
चौल्लेळु महोदरन्तन्ने नीलनुं कौन्नान्
वल्लभमेरुं त्रिशिरस्सिने हनूमानुं । १७५
मर्क्कटप्रवरनामृपभन्तन्नोटेटान्
मुष्करन् महापार्श्वन् कौन्नितु वायुपुत्रन् । १७६
पङ्क्तिकन्धरन्तन्टे नन्दननतिकाय-
नन्तकपुरिपुक्कु लक्ष्मणबाणंकौण्टु । १७७

किया । तत्क्षण ही गरुड वहाँ पहुँचा और सभी नागास्त्र नष्ट हो गये । वीर धूम्राक्ष का वध मारुति (हनुमान्) ने और अङ्गद ने क्रुद्ध वज्रदंष्ट्र का किया । प्रमुख अकम्प निष्करुण वायुसभव (हनुमान्) के हाथ स्वर्ग भेजा गया । नील ने प्रहस्त को मार गिराया । तब नीलपर्वत के समान रावण निकला । १६५-१७१ राम का सामना करके हारा और नगर वापस गया । तदनन्तर उसने भयङ्कर कुभकर्ण को जगाया । वह भी युद्ध के लिए पहुँचा और राम के बाणों के लगने से भूमि पर गिरकर मर गया । बालिपुत्र अगद ने नरान्तक का वध किया और जो देवान्तक पहुँचा उसे हनुमान् ने मारा । विख्यात महोदर को नील ने और शक्तिशाली त्रिशिरा को हनुमान् ने मारा । वानरप्रवर ऋषभ का सामना किया शक्तिशाली महापार्श्व ने, जिसको हनुमान् ने समाप्त किया । पङ्क्तिकन्धर (रावण) का पुत्र अतिकाय लक्ष्मण का बाण लगने पर यमपुरी

लङ्कानायकनेन्नु लक्ष्मणन्तन्नेक्कोण्टु
शङ्ककूटाते चेय्यिच्चीटिनानभिषेक । १५८
सेविच्चु वरुणनेक्काणाञ्ञु रघुवरन्
कोपिच्चु तोंटुत्तितु पावकमाय शर । १५९
वेपिच्चु वरुणनु तृक्कालक्कल् वणङ्ङीट्टु
शोभिच्चु चिऱयिट्टुकोळ्ळुवान् वऴि नल्कि । १६०
अस्त्रत्ते मरुकान्तारत्तिलेक्कयच्चिट्टु
भद्रमा राज्यमाक्किच्चमच्चानविटवु । १६१
कोट्टिनान् चिऱ नळनञ्चुवासरंकोण्टु
मुट्टिच्चु लङ्कतन्टे वटक्के गोपुरत्तिल् । १६२
विस्तारमुण्टु चिऱ पत्तु योजनवऴि
चित्रमायोरु नूऱु योजन नीळमुण्टु । १६३
वटक्के गोपुरत्तिन्मुकळिल् करयेऱि
पटक्कोप्पुकळ् कण्टु रावणनिरिक्कुन्पोळ् । १६४
अटर्त्तुकोण्टुपोन्नु सुग्रीवन् किरीटङ्ङळ्
नटिच्चु पुऱप्पेट्टु राक्षसप्पटयप्पोळ् । १६५
वानरराक्षसन्मार् तङ्ङळिल् पोरुत पो-
राननमायिरमुळ्ळवनुं पऱयामो । १६६
वेगत्तोटटुत्तितु मेघनादनुमप्पोळ्
नागास्त्रं प्रयोगिच्चु वेन्नु रामादिकळे । १६७

अभिषेक कराया । १५३-१५८ वरुण जब पूजा करने के बाद भी नही माने तब राम ने क्रुद्ध होकर आग्रेय धनुष पर शर चढाया । उस समय वरुण कांपे और राम के पैरो पड़े और प्रसन्न होकर सेतु बनाने के लिए मार्ग बतलाया । राम ने चढे बाण को मरुकान्तार (जङ्गल) मे भेजकर उसको एक अच्छा देश बना लिया । नल ने पाँच दिन मे एक सेतु बनाया और उसे लङ्का के उत्तर गोपुर से मिलाया । वह सेतु दस योजन चौड़ा और सौ योजन लम्बा था । उत्तर के गोपुर के ऊपर चढकर सुग्रीव ने रावण के रहते सेना की तैयारियाँ देखी । १५९-१६४ सुग्रीव रावण के किरीट छीन ले आये । तब रावण की सेना अभियान (आक्रमण करने) के लिए निकली । तव वानरो और राक्षसो मे जो युद्ध हुआ उसका हजार मुँहवाला भी वर्णन नही कर सकता है । उस समय मेघनाद बडे वेग से वहाँ पहुँचा और नागास्त्र का प्रयोग करके उसने राम आदियो पर आक्रमण

मायमेरीटुन्नोरु मेघनादनुमप्पोळ्
मायासीतयेक्कोन्नान् मारुति काण्केत्तन्ने । १८८
राघवनुतन्नोटप्पोळ् मारुतियरियिच्चा-
नाकुलप्पेट्टु रामदेवनुमतुनेर । १८९
कण्टितु परिभ्रममायतु विभीषणन्
मण्टिवन्नरचनेत्तोळुतङ्ङुणर्त्तिच्चान् । १९०
कण्टतारिन्द्रजित्तिन् मायकळ् कपिकळे !
कण्टिवार्कुळलियेक्कोन्नतु मायमत्रे । १९१
तण्टार्मातिनेयाक्कु कोन्नुकूट्टुकयिल्ल
पण्टे चापल्यमुण्टु वानरन्माक्कु नूनं । १९२
तक्कत्तिल् निकुभिल पुक्किप्पोळ् मेघनाद-
नोक्कवे कळिच्चीटु तन्नुटे होममन्त्राल् । १९३
पिन्ने मट्टोरुत्तर्क्कुमावतिल्लवनोटु
मुन्ने नामतुं चेन्नु मुटक्किक्कोळ्ळुन्नाकिल् १९४
इन्ने रावणितन्नेक्कोन्नीटामरिञ्ञालुं
पिन्ने रावणनुतानुं मरिच्चानेन्ने वेण्टू । १९५
पोरिक हनूमानुं लक्ष्मणकुमारनुं
पोरिनु विरुतुळ्ळ वानरवीरन्मारुं । १९६

स्वर्ग चला गया। उस समय मायावी मेघनाद ने हनुमान् के सामने माया-सीता को मार डाला। हनुमान् ने राम से जाकर यह वात कही तब रामदेव वहुत ही दु खित हुए। राम को दु.खित देखकर विभीषण दौड़कर आया और राम से हाथ जोड़कर वोला—इन्द्रजित् (मेघनाद) की मायाओं को कौन जानता है। सीता को जो मारा गया है वह मायामात्र था। १८६-१९१ सीतादेवी को कौन मार सकता है ? वानर तो स्वभावत: चचल होते है। मेघनाद तो अव अवसर पाकर निकुभिला[1] जायगा और वहाँ अपना हवन समाप्त करेगा। उसके वाद कोई भी उससे लड़ न सकेगा। अगर हम पहले ही जाकर हवन मे वाधा डाले तो आज ही रावणि (मेघनाद) मारा जा सकता है। उसके वाद रावण का वध ही शेष रह जायगा। हनुमान्, कुमार लक्ष्मण और लड़ने मे समर्थ वानरवीर भी चले जावे। जव नक्तञ्चरपति (विभीषण) ने इस प्रकार कहा तव पुरुषोत्तम (राम) चिन्तित होकर वोले। १९२-१९७ "अच्छा तो फिर

१ लका के पश्चिम भाग मे स्थित एक गुहा जहाँ हवन हुआ करते थे।

कण्मायमेरुँयुळ्ळोरिन्द्रजित्ताय वीरन्
ब्रह्मास्त्रंकोण्टु रामादिकळे मोहिप्पिच्चान् । १७८
ब्रह्मनन्दननाय जाम्बवान्नियोगत्ताल्
निर्म्मलनाय कपिवीरनञ्जनापुत्रन् । १७९
मारुति कोण्टुवन्नानौषधमहामल
पोरतिल् मरिच्चवरोक्कवे जीविच्चितु । १८०
रावणन्तन्टे पट चत्तताळियिलिट्टि-
ट्टावतल्लातेवन्नु जीविप्पानतु दैव । १८१
चुट्टितु लङ्कापुरं वानरप्रवरन्मार्
पेट्टेन्नु पुरप्पेट्टु कुंभनुं पटयुमाय् । १८२
शोणिताक्षनुं विरूपाक्षनुं यूपाक्षनु
मानियां प्रजंघनुं मरिच्चानतुनेर । १८३
वानरप्रवरन्मार् कोन्नुकोन्नवरोट्टु
मानमेरीट्टुं रक्षोबलवु मरिच्चुते । १८४
अग्रे वन्नेतिर्त्तितु कुंभनुमतुनेर
सुग्रीवनवनेयु निग्रहिच्चितु वेगाल् । १८५
अग्रजन् मरिच्चप्पोळेतिर्त्तान् निकुंभनु-
मुग्रना वायुपुत्रनवनेक्कोलचेय्तान् । १८६
खरन्तन्मकन् मकराक्षनु पुरप्पेट्टान्
पोरुतु रामशरमेट्टु पोय् स्वर्ग्गं पुक्कान् । १८७

पहुँचा। मायावी वीर इन्द्रजित् (मेघनाद) ने ब्रह्मास्त्र के द्वारा राम आदियो को वेहोश कर दिया। १७२-१७८ ब्रह्मपुत्र जाम्ववान् की आज्ञा से निर्मल वानरवीर अञ्जनापुत्र (हनुमान्) औषधो का पर्वत उठा लाये और युद्ध में मरे सब वानर जिलाये गये। रावण की सेना के मरे सब समुद्र मे फेक दिये जाने के कारण न ज़िलाये जा सके, यह दैव की लीला है। वानर प्रवरो ने लका को जला डाला। तुरन्त ही कुभ सेना लेकर निकला। शोणिताक्ष, विरूपाक्ष, यूपाक्ष और मानी प्रजघ, उस समय मरे। अनेक वानर प्रवर मरे और उनके मारे हुए अनेक राक्षस सैनिक भी समाप्त हुये। तव कुभ ने आगे आकर सामना किया और सुग्रीव ने उसका निग्रह किया। १७९-१८५ जव वड़े भाई का निधन हुआ तव निकुभ सामने आया और उसको उग्र वायुपुत्र (हनुमान्) ने समाप्त किया। तव खर का पुत्र मकराक्ष निकला और युद्ध मे राम का शर लगने पर वह

नटिच्चु वन्नारॆन्नु निनच्चु मेघनाद-
नट्टत्तु वाणजाल पॊळिच्चु तुटङ्ङिनान् । २०७
अट्टत्तु मुन्पिलक्कण्टु वैरिया मायाविये-
यॊटुक्कीटणमिनिक्कटुक्कत्तॆन्नु नन्नाय् २०८
अट्टत्तुनिन्नु युद्ध तुटङ्ङि कुमारनुं
पट्टवमेऱ शरमॆटुत्तु तॊटुत्तुटन् २०९
वलिच्चुतॊटुत्तयच्चीटिनान् नक्तञ्चरन्
मलच्चीटुन्नु चत्तु चोरयुं पलवळि- २१०
यॊलिच्चीटुन्नु मेघनादनुमतु कण्टु
चलिच्चीटुन्नु चित्त राघवसहजनु । २११
ज्वलिच्चीटुन्नु कोपं रावणतनयनु
फलिच्चीटुन्नु मनोरथमायुळ्ळतेल्लां । २१२
राघवसहजनु रावणतनयनु
वेगमेटट्टत्तु चेय्तीटिन युद्धपोलॆ । २१३
पण्टु कीळुण्टायतुमिल्लिनिमेलिलॆ-
न्नुमुण्टाकयिल्लयॆन्नु निर्णयिच्चुरच्चेय्यां । २१४
मून्नु राप्पकल् पिरिञ्ञीटातॆ पॊरुतप्पोळ्
मून्नु लोकत्तुमुळ्ळॊरापत्तुमॊटुङ्ङिते । २१५
देवकळ् पुष्पवृष्टिचेय्कयु स्तुतिक्कयुं
देविकळ् कूत्तुं पाट्टुं तुटङ्ङि सन्तोषत्ताल् । २१६

शत्रु को आज मुझे निकट से ही समाप्त करना चाहिये', ऐसा सोचकर लक्ष्मण ने निकट से युद्ध प्रारम्भ किया। तव राक्षस ने एक तीक्ष्ण वाण लेकर धनुप पर चढाकर और खीचकर चलाया। सैनिक वेहोश होने लगे। चारो ओर रक्त वहने लगा। उसे देखकर मेघनाद का और लक्ष्मण का भी चित्त विचलित होने लगा। रावण के पुत्र का क्रोध प्रचड हो उठा और उसके मनोरथ पूरे होने लगे। २०६-२१२ राम के भाई और रावण के पुत्र मे निकट से जो युद्ध हुआ उसके समान कोई युद्ध पूर्वकाल मे और उसके वाद कभी नही हुआ और भविप्य मे भी नही होगा। ऐसा निश्चित रूप से कहा जा सकता है। तीन दिन और तीन रात निरन्तर युद्ध हुआ और तीनो लोको की विपत्तियाँ समाप्त हुई। देवो ने स्तुति करते हुए पुष्पवृष्टि की और देवियाँ हर्ष के कारण नाचने-गाने लगी। जव देवों ने दुन्दुभि वजाया तव उसका नाद सुनकर रावण का जो दुःख

सत्वरं नक्तञ्चरनित्तर पऱञ्ञप्पोळ्
चित्तमाल् तीर्न्नु पुरुषोत्तमनरुळ्चेय्तु । १९७
ऒङ्किल् वैकाते चेन्नु रावणितन्नॆक्कोन्नु
सङ्कटं तीर्क्कयेन्नु राघवनयच्चप्पोळ् १९८
लक्ष्मणकुमारनु मारुतिसुतलाय
मर्क्कटवीरन्मारुं रावण सहजनुं १९९
ऒक्कत्तक्कवे चेन्नु पुक्कितु निकुंभिल
रक्षोवाहिनियतुकण्टु संभ्रमं पूण्टु । २००
चुटु वन्पट निर्त्ति चोल्कोण्ट मेघनादन्
कुटमेन्निये होमं तुटङ्ङियतुनेरं । २०१
पटलर्कुलकालन्माराय कपिवरर्
चुटुं चेन्नणञ्ञु पोर्तुटङ्ङि भयङ्कर । २०२
मारिनेर् पोळिञ्ञितु बाणङ्ङळ् कुमारनुं
मारुतिप्रमुखरां वानरप्रवररुं २०३
मामल मरामरं वलिय शिलकळु
रूमयोटॆटुत्तुटन् तूकिनारतुनेर । २०४
अटुत्त निशिचरर् तिरिच्चु भयत्तिना-
लॆटुत्तु विल्लुमन्पुमन्नेरं मेघनादन् । २०५
अटुत्त शत्रुक्कळॆयकटि योळिञ्ञिनि
मुटिच्चुकूटा होमं मुटक्कुमत्रेयिवर् । २०६

बिना विलम्ब के जाकर मेघनाद को मारकर सकट समाप्त करो ।" जब ऐसी आज्ञा हुई तब कुमार लक्ष्मण, हनुमान् आदि वानरवीर और रावण का भाई, ये सब लोग निकुभिला पहुँचे । यह देखकर राक्षससेना क्षुब्ध हुई । मेघनाद ने अपनी सेना को चारो तरफ खडी करके निर्दोष ढग से अपना हवन प्रारभ किया । तब शत्रुओ के नाशक वानरप्रवरो ने चारो तरफ घेर कर युद्ध प्रारम्भ किया । कुमार ने बाणो की वर्षा की और मारुति आदि वानर प्रवरो ने पहाड़ के वृक्षो और बड़े-बड़े पत्थरो को उठाकर शत्रुओ पर फेका । निकट के सभी राक्षस डर के मारे भागे । तब मेघनाद ने अपना धनुषबाण उठाया । १९८-२०५ (उसने सोचा) इन निकट के शत्रुओ को बिना हटाये यह हवन समाप्त होनेवाला नही है क्योकि ये अवश्य बाधा डालेगे । यह समझकर कि शत्रु घमड से आये है मेघनाद निकट आया और बाणो की वर्षा करने लगा । 'सामने के मायावी

रामरावणरणसाम्यत्तॆच्चॊल्लीटिलो
रामरावणरणतुल्यमॆन्नतु चॊल्लां । २२७
नूरोळं तलयरुत्तिट्टितु रघुवरन्
पोरिनु कुरञ्ञतिल्लॆळ्ळोळं दशमुखन् । २२८
आरेळुदिनं पिरियातॆनिन्नॊरुपोलॆ
घोरमाय् पॊरुत पोरॆङ्ङनॆ परयुन्नु । २२९
आदित्यहृदयमाम्मन्त्रत्तॆयुपदेशि-
च्चाधितीर्त्तितु कुंभसंभवनाय मुनि । २३०
राघवन् ब्रह्मास्त्रवुमयच्चानतुकॊण्टु
रावणन् मरिच्चुवीणीटिनानवनियिल् । २३१
ईरेळुपतिन्नालुलोकवुं तॆळिञ्ञितु
घोरनां दशमुखन् मरिच्च निमित्तताल् । २३२
नारिमार् मुरविळितुटङ्ङी लङ्कतन्निल्
धीरना विभीपणन् परञ्ञु दुःखं तीर्त्तु । २३३
चॆय्तितु शेपक्रिय सर्व्ववु विभीपणन्
कैतवमरियात जानकियतुनेरं २३४
राघवन् नियोगत्तालग्नियिल् मुळुकिना-
ळाकुल तीर्न्नु वन्नारन्नेरं सुरन्मारुं । २३५
योपमार् कुलमणियाकिय सीतय्क्कॊरु
दोपमिल्लॆन्नु सर्व्वदेवतमारुं चॊल्लि । २३६
मैक्कण्णितन्नॆयुटन् कैक्कॊण्टु रघुवरन्
तृक्काक्कल् निल्क्कुन्नॊरु रक्षोनायकनेयुं २३७

से ही की जा सकती है। रघुवर ने रावण के सौ तक सिर काट डाले परन्तु वह तिल भर भी कम नही लड़ा। छ सात दिन निरन्तर जो उनका घोर युद्ध हुआ उसका वर्णन कैसे किया जाय? अगस्त्य मुनि ने राम को आदित्यहृदय नामक मन्त्र का उपदेश देकर आश्वासन दिया। राघव ने ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया। उससे रावण मरकर भूमि पर गिर पड़ा। घोर रावण के मरने से चौदहो लोक प्रसन्न हुए। लका मे स्त्रियाँ रोने-पीटने लगी और धीर विभीषण ने उनको समझाकर शान्त किया। २२६-२३३ सभी शेपक्रियाएँ विभीपण ने ही की। उस समय जानकी जो बिलकुल सीधी थी राम की आज्ञा से अग्नि मे प्रविष्ट हुई। तब शान्त होकर सभी देवगण पधारे। "महिलाकुल की मणि सीताजी

देवकळ् पेरुम्परय्यटिच्च नादं केट्टु
रावणनुण्टायोरु सङ्कट परयामो ? २१७
मक्कळुं मरुमक्कळ् तन्पिमारमात्यरु
मुष्करन्मारायुळ्ळ पटनायकन्मारुं २१८
मिक्कतुमोट्टुङ्ङियनेरत्तु दशाननन्
दुःखत्तेयटक्किस्सन्नद्धनाय् पुरप्पेट्टान् । २१९
मुन्पिनाल् मूलबलाद्यखिलरक्षोगणं
वन्पटयोटु पाताळत्तिङ्कल्निन्नु वन्नार् । २२०
पङ्कजनेत्रन् पन्तिरण्टुनाळिककोण्टु
संख्ययिल्लात पटयोक्कवेयोटुक्किनान् । २२१
रावणन्तन्टे मुन्पिल् मरिच्चु महोदरन्
देववृन्दारातीन्द्रना महापार्श्वन्तानुं । २२२
राघवन्तिरुवटितन्नुटे मुन्पिल् चेन्नु
वेगेन शस्त्रावलि तूकिनान् दशाननन् । २२३
पारिल्निन्नरचनु तेरिल्निन्नरक्कनु
पोरति कोटुमयाय् चेय्ततु कण्टु विण्णोर् । २२४
पारमुण्टिळप्पमेन्नरिञ्ञु पुरन्दरन्
तेरुमाय् पोकयेन्नु मातलियोटु चोन्नान् । २२५
मातलिकोण्टुवन्न तेरतिल्क्करयेरि-
च्चेतसि तेळिञ्ञु पोर्तुटङ्ङि रघुवरन् । २२६

हुआ वह कैसे कहा जाय। जब पुत्र, भाजे-भतीजे, भाई, अमात्य और वीर-शूर सेनानायक भी अधिकाश समाप्त हुए तब दशानन (रावण) अपने दु ख को दबाकर तैयार होकर निकला। २१३-२१९ पहले तो मूलबल आदि समस्त राक्षसगण बडी सेना के साथ पाताल से आये। पङ्कजनेत्र राम ने बारह नाडिकाओं (घडियो) मे (पाँच घटो मे) असख्य सेना को समाप्त कर दिया। रावण के ही सामने महोदर मरा और देवगणो का शत्रु महापार्श्व (भी मरा)। तव राम के सामने जाकर दशानन ने शस्त्रो की वर्षा की। देवो ने राजा (राम) को भूमि पर खडे होकर और राक्षस को रथ पर वैठे हुए तीव्र युद्ध करते देखा। इन्द्र ने राम की कमी जान ली और अपने सारथि मातलि से कहा—"रथ लेकर जाओ"। २२०-२२५ मातलि के लाए हुए रथ पर चढकर राम प्रसन्न हुए और फिर लडने लगे। राम-रावण के युद्ध की अगर उपमा करनी है तो राम और रावण के युद्ध

कुंभसभवन् परञ्ञन्पोट्टु निशिचर-
संभवमरिञ्ञितु राघवन् तिरुवटि । २४८
नाना तापसन्मारुं राक्षस प्रवररुं
वानरवीरन्मारु पाराते नटकोण्टु । २४९
पुष्पकमाय विमानत्तेयुमयच्चितु
पुष्पसायकसमनाकिय रघुवरन् । २५०
जानकियोट्टु कूटिक्कामलीलकळ् नन्नाय्
मानसमिरविकनान्मानववीरन्तानुं । २५१
पुष्पबाणार्त्तिपूण्टु पुळच्चु कळिक्कुन्नाळ्
गर्भवुमुण्टाय्वन्नू जानकिक्कतुकालं । २५२
कळञ्ञानपवादं पेटिच्चु रघुनाथन्
विळङ्ङीटिन सीतादेवियेयवळुं पोय् । २५३
वाल्मीकिमुनितन्टेयाश्रमत्तिङ्कल् वाणाळ्
काम्यन्माराय कुमारन्मारुमुण्टाय्वन्नु । २५४
आदराल् कुशलवन्माराय पैतङ्ङळ्क्कु
जातकर्म्मादियोक्केच्चेय्तितु वाल्मीकियुं । २५५
तान्तन्ने चमच्च रामायणमाय काव्यं
तान्तन्माराय कुमारन्मारे पठिप्पिच्चान् । २५६
मधुनन्दननाय लवणन्तन्नेक्कोन्नु
मधुरापुरियु वाणिरुन्नु शत्रुघ्ननुं । २५७

इस प्रकार राज्य करने लगे तब चारो दिशाओ मे रहनेवाले मुनिजन उनका दर्शन करने पधारे। उनमे से कुभसभव (अगस्त्य) द्वारा प्रेम से बतलाने पर पूज्य राम ने रावण की उत्पत्ति जान ली। विविध तापस, राक्षस-प्रवर और वानरवीर सभी जल्दी से (अपने-अपने घरो को) चले गये। पुष्पसायक (कामदेव) के समान रघुवर ने पुष्पक नामक विमान को वापस कर दिया। मानववीर ने जानकी के साथ कामलीलाएँ करने मे अपना मन लगाया। पुष्पवाण (कामदेव) की आर्ति लगकर सोत्साह खेलते समय जानकी उन दिनो गर्भिणी हो गयी। २४७-२५२ परन्तु रघुवर ने जनापवाद के डर मे गर्भिणी सीतादेवी को त्याग दिया। वे जाकर मुनि वाल्मीकि के आश्रम मे निवास करने लगी। वहाँ उनके दो रमणीय कुमारो का जन्म हुआ। कुश और लव नामक उन कुमारो के वाल्मीकि ने सादर जातकर्म आदि सस्कार कराये। उन शान्त कुमारो को अपना ही रचा रामायण काव्य पढाया। शत्रुघ्न ने मधु के पुत्र लवणासुर को

चोल्क्कोण्ट निशिचरराजावेन्नभिषेकं
लक्ष्मणनेक्कोण्टु चेय्यिच्चितु रघुवरन् । २३८
पुष्पकविमानवुमेरिनान् रामचन्द्र-
नप्पोळुतवन्तन्नेक्कण्टितु दशरथन् । २३९
सन्तोषत्तोटे वीणु नमस्कारवु चेय्तान्
चिन्तयु तेळिञ्ञितु रामनेक्कण्टमूल- २४०
मानन्दिच्चनुग्रहिच्चीटिनान् दशरथन्
वेणुन्न वरङ्ङळ् नल्कीटिनार् सुरन्मारु । २४१
रक्षोनायकन् मुतलाय राक्षसन्मारु
सुग्रीवन् मुतलाय वानरवीरन्मारुं २४२
लक्ष्मणकुमारनु जानकीदेवितानु-
मोक्कत्तक्कवे रामन् पुष्पकमेरुनेरं । २४३
तिक्किप्पोय् मरञ्ञितु वानवरेल्लामप्पोळ्
मुक्कण्णन्तानुं कैलासं पुक्कु देवियुमाय् २४४
सत्यलोकवुं पुक्कु धातावुं वाणियुमाय् ।
सत्यतत्परनाय भगवान् दाशरथि २४५
राघवनयोद्धचपुक्कभिषेकवु चेय्तु
लोकङ्ङळ् पतिन्नालु पालिच्चु वळिपोले । २४६
वाळुन्न कालत्तिङ्कल् नालुदिक्किलुमोक्क
वाळुन्न मुनिजनं वन्नितु काण्मानतिल् । २४७

बिलकुल निर्दोष है" ऐसा सभी देवो ने कहा। तत्क्षण ही रघुवर ने सीता को स्वीकार किया। और जो राक्षसो का नायक उनके पैरो पडा था उसको राक्षसो के राजा के रूप मे राम ने लक्ष्मण के द्वारा अभिषेक कराया। रामचन्द्रजी पुष्पक विमान पर चढे। तब दशरथ ने उनको देखा। २३४-२३९ राम ने सहर्ष उनको नमस्कार किया। राम को देखने से दशरथ निश्चिन्त हुए और उन्होने आनन्द से राम पर अनुग्रह किया। देवो ने भी अपेक्षित वरदान दिये। राक्षसनायक विभीषण आदि राक्षस, सुग्रीव आदि वानरवीर, कुमार लक्ष्मण, देवी जानकी, इन सबके साथ जब राम पुष्पकविमान पर चढ़े तब सभी देव एक साथ अन्तर्धान हो गये। त्र्यक्ष (शिव) पार्वतीदेवी के साथ कैलास सिधारे और ब्रह्मा, वाणी (सरस्वती) के साथ सत्यलोक गये। सत्यतत्पर भगवान् दशरथपुत्र राम अयोध्या सिधारे जहाँ उनका अभिषेक हुआ। तदनन्तर उन्होंने चौदहो लोको का विधिवत् पालन किया। २४०-२४६ जब राम

मारुतिविभीषणन्मारौंळिञ्ञुळ्ळ कपि-
वीरन्मारोंटु नक्तञ्चरवीरन्मारोंटु २६८
भक्तराययोध्ययिल् वाळुन्न जनत्तोंटुं
भक्तवत्सलन् प्रापिच्चीटिनान् निजलोकं । २६९
मानुपजन्मं जनिच्चीटुकिल् दु खमुण्टां
मानसतारिल् परमेश्वरनेन्नाकिलु । २७०
चिन्तिच्चु सदाकालमीश्वरध्यानं चेय्तु
कुन्तीनन्दन ! मन.खेदमुण्टाकवेण्ट । २७१
रामनामत्ते सर्व्वकालवुं जपिक्कयुं
रामने नन्नायुळ्ळिल् ध्यानिच्चुकोळ्ळकयेन्नु । २७२
मामुनि मार्क्कण्डेयन् धर्म्मजनोटु चोंल्लि
राममन्त्रवुमुपदेशिच्चान् वळिपोले । २७३
यात्रयुमयप्पिच्चु पोयितु मार्क्कण्डेय-
नास्थया केट्टु तोंळुतीटिनार् पाण्डवरुं । २७४
अक्कालमिन्द्रनोरु विप्रनायपेक्षिच्चा-
नर्क्कनन्दननोटु कुण्डलकवचङ्ङळ् । २७५
कोटुत्तानवनेतुं मटिच्चीलतुमूलं
कोंटुत्तानिन्द्रनोरु वेलुमेन्नरिञ्ञालुं । २७६

किया । २६०-२६७ अन्त मे मारुति और विभीषण को छोड़कर अन्य वानरो और राक्षसो के साथ, और अयोध्या मे निवास करनेवाले भक्तजनों के साथ भक्तवत्सल राम निजलोक को गये । मनुष्य जन्म लेकर दु.ख अवश्य होगा । इसलिए सदैव मन मे परमेश्वर का ध्यान करते रहो। "हे कुन्तीपुत्र ! सदैव ईश्वर का ध्यान करते रहो, अपने मन में खेद न किया करो । सदैव राम नाम का जप करते रहो और राम का अपने मन मे ठीक से ध्यान करते रहो ।" इस प्रकार महामुनि मार्कण्डेय ने युधिष्ठिर से कहा और उनको राममन्त्र का उपदेश दिया । पाण्डवो ने वडी आस्था के साथ सव सुना और प्रणाम किया । तदनन्तर उन्होने मार्कण्डेय को विदा किया और वे चले गये । उन दिनो इन्द्र एक ब्राह्मण के रूप मे सूर्यपुत्र (कर्ण) के पास गये और उनसे कुण्डल और कवच मागा । कर्ण ने विना हिचक के सव दे दिया और वदले मे इन्द्र ने उसको एक शक्ति दी । २६८-२७६

अश्वमेधत्तिन्नाशु कोप्पिट्टु रघुवरन्
निश्शेषं निशिचरवानरन्मारुं वन्नु । २५८
मानववीरन्मारुं तापसश्रेष्ठन्मारु
क्षोणीनिर्ज्जरन्मारुं निर्ज्जरन्मारुं वन्नु । २५९
अक्काल कुशलवन्माराय तनयन्मार्
शिक्षयिल् रामायण चॊल्लियारतु केट्टु । २६०
राघवन् तन्टे मक्कळॆन्नरिञ्ञतुमूल
राकेन्दुमुखितन्नॆ वरुत्ति रण्टामतु । २६१
नीयिनियॊरु दिनमॆल्लारुं काणुंवण्णं
तीयिल् चाटीटवेणमॆन्नितु रघुवरन् । २६२
मेदिनि पिळर्न्नु ताणीटिनाळ् वैदेहियुं
मेदिनीपालनॊट्टु कोपिच्चानतुनेर । २६३
पॊन्नुकॊण्टॊरु सीततन्नॆयुं चमच्चुटन्
पिन्नॆयु यागङ्ङळॆच्चॆय्तितु रघुवरन् । २६४
अम्ममारुटॆ शेषक्रियकळॆल्ला चॆय्तु
निर्म्मलन्मारायवर् नाल्वर्क्कु सुतन्माराय् । २६५
ऒॆण्मरुण्टवरॆयु वाळिच्चानोरोदिक्किल् ।
कल्मष लोकङ्ङळ्क्कु तीर्त्तु राघवदेवन् । २६६
पतिनोरायिरत्ताण्टिङ्ङनॆ धर्म्म चॆय्तु
पतिन्नालुलकवु परिपालिच्चु वाणान् । २६७

मारकर मथुरापुरी मे राज्य किया । उस समय रघुवर ने अश्वमेध यज्ञ करने के लिए तैयारियाँ की । सभी राक्षस और वानर आये । मानववीर तापसवर, भूदेव और देव पधारे । २५३-२५९ उस समय सीता के पुत्र कुश और लव ने ढग से रामायण का पाठ किया । यह सुनकर राम ने जब समझ लिया कि ये मेरे पुत्र है तो उन्होने पूर्णचन्द्रमुखी सीता को फिर अपने सामने बुलवाया । और कहा, "तुम एक दिन सब के सामने अग्नि मे प्रवेश करो" । तब पृथिवी खुली और वैदेही उस मे प्रविष्ट हुई । राजा राम कुछ कुपित हुए । तब राम ने सीता की एक सोने की प्रतिमा वनवाकर यज्ञ को समाप्त किया । तदनन्तर माताओ की शेपक्रियाएँ की । उन चार निर्मल भाइयो के आठ पुत्र थे । उनको भिन्न भिन्न दिशाओ का राजा बनाया । इस प्रकार राघवदेव ने लोगो के दु ख को दूर किया । ग्यारह हजार वर्ष इस प्रकार धर्मपूर्वक चौदहो लोको का परिपालन

ॲन्नतु केट्टवनु पोय्च्चेन्नितु पोय्क्कतन्निल्
तन्नुटेयनुजने कण्टितन्नकुलनु । ९
दाहत्तेक्केट्टुत्तितिन् कारण तिरयामे-
न्नावोळ पोट्टुक्कने कोरियान् तण्णीरवन् । १०
कुटिच्चीटोल्ल तण्णीर् मरिक्कु नीयुमेङ्किल्
कटुक्कप्पोय्क्कोळ्कॅन्नु केळ्क्कायित्तोरुमोळि । ११
मरिक्किल् दाहंपूण्टु मरिच्चीटुकयल्ल
तेरिक्केन्निनित्तण्णीर् कुटिक्कयॅन्नु निन- । १२
च्चुरच्चु नकुलनु कुटिच्चु मरिच्चुते
मनक्कान्पतिलळ्ल् मुळुत्तु नृपतियुं । १३
तन्पिमारिरुवरुं वन्नतिल्लॅन्नु कण्टु ।
संभ्रमिच्चयच्चितु धर्म्मजन् विजयने । १४
चेरुतु निरूपिच्चु नटन्नु विजयनुं
विरविल् पोय्क्कपुक्किकट्टनुजन्मारॆक्कण्टान् । १५
दाहवेगत्ताल् तण्णीर् कुटिप्पान् तुटङ्ङुन्पोळ्
मोहिच्चु कुटिक्कोल्ला तण्णीरॅन्नतु केट्टु । १६
कलिपच्चवण्णं वरुमॅन्नुरच्चिचन्द्रात्मजन्
निर्म्मलन् तण्णीर् कुटिच्चप्पोळे मरिच्चुते । १७
पोयवरारुं वन्नीलॅन्नुकण्टरचनुं
वायुनन्दननोटु पोयालुमॅन्नु चोन्नान् । १८

जल्दी हो सका पानी निकाला। "पानी मत पियो, नही तो तुम भी मरोगे। जल्दी चले जाओ।" —ऐसी एक वाणी सुनाई दी। "अगर मरना है तो प्यासा नही मरूँगा, जल्दी कुछ पीलूँ" ऐसा सोचकर नकुल ने पीने का निर्णय किया। वह भी पानी पीकर मर गया। यह देखकर कि दोनो भाई नही लौटे है राजा के मन मे दु ख वढा। तव युधिष्ठिर ने विजय (अर्जुन) को भेजा। ८-१४ मामले को छोटा समझकर अर्जुन चल पडा और आराम से सरोवर पर पहुँचकर उसने भाइओ को देखा। प्यास की तीव्रता के कारण जव वह पानी पीनेवाला ही था तभी "मोह मे पड़कर पानी मत पियो" ऐसी आवाज सुनाई दी। निर्मल इन्द्रपुत्र (अर्जुन) ने अपने मन मे यह तय करके कि जो होना है वह होगा, पानी पी लिया और तत्क्षण मर गया। यह देखकर कि जो कोई भी गया वापस नही आया, राजा ने वायुनन्दन भीमसेन से कहा—"तुम ज़रा चले जाओ"।

यक्षप्रश्नं

अक्कालं कुरुक्षेत्रत्तिङ्कलुळ्ळोरु विप्र-
नग्नियुं परिपालिच्चङ्ङने मरुवुंनाळ् । १
अरणियेटुत्तुकोण्टोटिप्पोयोरु मृग-
मरण्य पुक्कानेन्नु भूदेवन् परञ्ञप्पोळ् २
अटवितोरुं नटन्नरणि तिरञ्ञव-
रिटर्पूण्टितु दाहं मुळुत्तुचमकयाल् । ३
पक्षियाय् चमञ्ञवन् पोय्कतङ्करेच्चेन्नु
पुक्कितु धर्म्मराजन् धर्म्मत्तेप्परीक्षिप्पान् । ४
पानीयं तिरञ्ञिङ्ङु पारातॆ वरिकेन्नु
दीनतपूण्टु सहदेवने नियोगिच्चान् । ५
कटुक्कॆन्नवन् नीळेत्तिरञ्ञु पोय्क कण्टु
कुटिप्पानायित्तण्णीर् कोरिय नेरत्तिङ्कल् । ६
कुटिच्चीटोलायेन्नु केळ्क्कायितोरु मोळि
कुटिच्चान् दाहं कोण्टु मरिच्चानवनप्पोळ् । ७
कण्टील सहदेवन् पोयवन्तन्नेयेङ्ङुं
कोण्टुवा नकुला ! नी तण्णीरेन्नितु मन्नन् । ८

यक्ष-प्रश्न

उन दिनो जब कुरुक्षेत्र का एक ब्राह्मण अपनी अग्नि मे हवन करता था तव उसकी अरणि को लेकर कोई मृग भाग गया और वन मे प्रविष्ट हुआ। ऐसा जब ब्राह्मण ने कहा तब पाण्डव वन-वन मे अरणि को ढूँढने निकले और प्यास वढने से पीडित हुए। इतने मे धर्मराज (यमराज), युधिष्ठिर के धर्म की परीक्षा करने के लिए एक पक्षी का रूप धारण करके सरोवर के तटपर जाकर छिप गये। तब युधिष्ठिर ने प्यास से लाचार होकर कही से कुछ पानी ढूंढ लाने के लिए सहदेव को भेजा। तुरन्त ही वह निकलकर दूर जाकर एक सरोवर के पास पहुँचा और उसमे से पीने के लिए कुछ जल उसने निकाला। तब "मत पियो" ऐसी एक वाणी सुनाई दी। पर प्यास के कारण उसको पी लिया और तत्क्षण ही मर गया। १-७ तव राजा (युधिष्ठिर) ने कहा। "सहदेव का पता नही जो पानी लाने गया था। नकुल! तुम जाकर पानी लाओ।" यह सुनकर नकुल सरोवर गया और वहाँ उसने अपने भाई को देखा। "प्यास बुझाकर इसका कारण जानलूंगा", ऐसा सोचकर उसने जितना

ऐन्क्किलो नकुलने वेण्टुवेन्नितु मन्नन्
शङ्ककूटाते चोन्ननेरत्तु धर्म्मराजन् २९
ऐन्नयुं तेळिञ्ञितु सूक्ष्मधर्म्मत्तेप्पार्त्तु
प्रीत्या सत्वर पिन्ने प्रत्यक्षवेपत्तोटे । ३०
तन्नुटे परमार्त्थमोक्कवेयरियिच्चू
निन्नुटेयनुजन्मारेवरु जीविक्केन्नान् । ३१
निन्नुटे मातावुतान् पेट्टुळ्ळ सहजन्मार्
मन्नवा ! पराक्रमाद्यखिलगुणमुळ्ळोर् । ३२
शत्रुसंहारत्तिन्नु शक्तन्मारेन्नयुम-
ल्लस्त्रज्ञन्मारिल्वच्चु मुख्यन्मारल्लोतानुं । ३३
कार्यसाद्धचवुमवरालत्रे निनक्केन्नुं
शौर्यवुमवरोळं मट्टाक्कुंमिल्लयल्लो । ३४
वीर्यपूरुपन्मारां भीमपार्त्थन्मारेयु
धैर्येण परित्यजिच्चेन्तोन्नु निनच्चु नी ३५
माद्रेशन् जीविक्केण्टतेन्नेन्नोटपेक्षिप्पा-
नोर्त्ततिन्मूलं नेरे चोल्लेण नृपोत्तम ! । ३६
धर्म्मराजोक्ति केट्टु धर्म्मजन्मावु चोन्नान्
धर्म्मसूक्ष्मत्ते विचारिच्चप्पोळतु तोन्नि । ३७
अम्ममारिरुवर्क्कुं पिण्डादिदान चेय्वान्
कर्म्मवन्धङ्ङळ् विचारिच्चप्पोळङ्ङने तोन्नि । ३८

चाहिये", राजा ने नि.शङ्क कहा । धर्मराज (यमराज) उनका सूक्ष्मधर्म देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए । तदनन्तर प्रेम से तुरन्त ही अपना निज स्वरूप दिखलाकर अपने सवन्ध मे परमार्थ वतला दिया और कहा—"आपके सभी भाई जिये !" हे भूपाल ! आप ही की माता के पुत्र जो आपके भाई है वे पराक्रम आदि अखिल गुणवाले है, वे शत्रु का नाश करने मे अत्यन्त शक्त है, वे अस्त्रशस्त्रज्ञो मे मुख्य हैं, उन्ही के द्वारा आपकी कार्यसिद्धि होती है, उनके समान शौर्य और किसी का नही है, वीरपुरुप भीमसेन और अर्जुन को धैर्य के साथ छोडकर किस अभिप्राय से आपने मुझसे प्रार्थना की कि माद्रेश (नकुल) जिलाया जाय ? हे नृपोत्तम ! इसका कारण आप मुझे ठीक वतलाइये । २९-३६ धर्मराज की वात सुनकर धर्मपुत्र ने कहा—"सूक्ष्मधर्म पर विचार करने पर मुझे यही सूझा । दोनों माताओ का पिण्डदान करने के सम्वन्ध मे जो क्रियाये है उन पर विचार

चेन्नवन् तण्णीर् कुटिच्चप्पोळ् मरिच्चुते
मन्नवन्तानुं वन्नान् पिन्नालेयतुनेरं । १९
तन्पिमारुटे शवं पोय्कतन् करेक्कण्टु
सभ्रमत्तोटुकूटेक्कम्र्ममेन्नुरच्चवन् २०
पानीय कोरिक्कुटिच्चीटुवान् तुटङ्ङुन्पोळ्
पानीयं कुटिक्कोल्लायेन्नोरु मोळि केट्टु । २१
अन्ततिन् मूलमेन्नु तण्णीरुं कळञ्ञव-
नन्तरा नोक्कुंनेर काणायि पक्षितन्ने । २२
आरु नीयेन्तु तण्णीर् कुटिप्पानरुताय्क ?
नेरे चोल्लेन्नु धर्म्मनन्दनन् परञ्ञप्पोळ् २३
ञानोरु यक्षनेन्टे चोद्यत्तिनेल्लाट्टिनु
ज्ञानियायुळ्ळ नी तानुत्तर परयणं । २४
धर्म्मजनतुकेट्टु चोल्लुकयेङ्किलेन्नान्
धर्म्मत्तिन् सूक्ष्मङ्ङळेच्चोदिच्चु यक्षन्तानुं । २५
चोद्यङ्ङळेल्ला परिहरिच्चु नृपतियु-
मास्थया तेळिञ्ञितु धर्म्मराजनुमेट । २६
धर्म्मनिष्ठकळ्क्कु नी मुन्पनेन्नतुं नूनं
निर्म्मलनाय भवानिनियोण्टोन्नु वेण्टु । २७
नाल्वरिलोरुवने जीविप्पिच्चीटुवन् ञा-
नेवने वेण्टुवेन्नु चोल्लिक्कोळ्ळुकेवेण्टू । २८

वह गया और पानी पीते ही मर गया । तदनन्तर राजा स्वय चले आये । सरोवर के तट पर भाइओ के शव देखकर घवडाये और समझा कि यह सव कर्म का ही फल है । वे भी पानी लेकर पीने ही वाले थे तभी "पानी मत पियो", ऐसी वाणी सुनाई दी । १५-२१ तव पानी फेककर उस वाणी का कारण ढूँढने लगे और एक पक्षी दिखाई दिया । "तुम कौन हो ? और पानी क्यो नही पीना चाहिये ? ठीक उत्तर दो !" जव युधिष्ठिर ने ऐसा कहा (तव पक्षी बोला) "मैं एक यक्ष हूँ । आप ज्ञानी है इसलिए मेरे सभी प्रश्नों का उत्तर दीजिये" । युधिष्ठिर ने कहा—"अच्छा पूछो ।" यक्ष ने धर्म की सूक्ष्म-सूक्ष्म वाते पूछी । राजा ने सभी प्रश्नो का समाधान किया । उनकी आस्था देखकर यमराज प्रसन्न हुए और वोले "धर्मनिष्ठ लोगो मे आप सव से आगे है । आप निर्मल धार्मिक एक वात वतलावे । आप के चार भाइयो मे से एक को मै जिला दूंगा किस को जिलावे ? आप के कहने मात्र की देर है" । २२-२८ "अगर ऐसा है तो नकुल ही हमको

तच्चरितङ्ङळ् परञ्ञालरुतियि-
ल्लच्युतभक्तरिल् मुन्पना धर्म्मजन् । ३
जीविच्चेंळुन्नेट सोदरन्मारोंटु
भाविच्चितु पिन्ने वेणुन्न कारिय । ४
अज्ञातवासं कळिप्पानुपायवुं
जिज्ञासिच्चीटिनारैवरुमायप्पोळ् । ५
अज्ञानमेल्लामकलेक्कळञ्ञोरु
विज्ञानिकळाय धर्म्मजन्मादिकळ् ६
आयुधमोंक्कें ॰शमीवृक्षत्तिन्मेल् व-
च्चायतनेत्रया कृष्णयुं तङ्ङळु ७
छन्नमायुळ्ळोरु नामवेपत्तोंटु
चेंन्नु विराटपुरियिलकपुक्कार् । ८
कङ्कनेंन्नोंरु सन्यासियाय् वन्नितु
शङ्कूटातें युधिष्ठिरनां नृपन् । ९
पुक्कितु भीमन् वललनेंन्नुळ्ळ पेर्
कैक्कोंण्टु मन्नन्महानसतन्निले । १०
वृत्रारिपुत्रन् वृहन्नळयायिट्टु
पृथ्वीशपुत्रिक्कु नृत्तगीतादिकळ् ११
शिक्षयोटे पठिप्पिच्चु तुटङ्ङिनान्
अक्षविलासङ्ङळ्पूण्ट तरुणियाय् । १२
अश्विनीपुत्ररिल् मुन्पन् नकुलनुं
अश्वङ्ङळ् मेप्पतिन्नायोंरुन्पेंट्टितु । १३

उनके चरित कहते कभी अरुचि नही होती । अपने जिलाये गये भाइयो के साथ वे आगे के कार्य सोचने लगे । अज्ञातवास कैसे चलाया जाय इस पर पाचो भाई सोचने लगे । १-५ अज्ञान को दूर किये हुए विज्ञानवाले युधिष्ठिर आदि भाई अपने सभी आयुधो को एक शमीवृक्ष पर जमाकर आयताक्षी द्रौपदी के साथ गुप्त नाम और वेप धारण करके विराटपुरी पहुँचे । राजा युधिष्ठिर विना हिचक के कङ्क नामक सन्यासी वने । वलल नाम धारणकर भीमसेन ने रसोई मे प्रवेश किया । इन्द्रपुत्र अर्जुन एक अक्षविलासयुक्त तरुणी वनकर वृहन्नला नाम धारण करके विराटराजा की पुत्री को नियमानुसार सिखाने लगे । ६-१२ अश्विनियो के पुत्रो मे ज्येष्ठ नकुल ने घोड़ो को चराने का काम अपने ऊपर ले लिया । विश्व का

ञानुण्टु कुन्तीदेवी पॆटतिल् माद्रियुटॆ
सूनु मूत्तवनल्लो नकुलनतुमूल ३९
माद्रिक्कु कर्म्मंबन्धं नकुलनेरुमॆन्न-
तोर्त्तु ञान् नकुलनॆ प्रार्थिच्चु मट्टॊन्नल्ल । ४०
धर्म्मराजावुतानु धर्म्मनन्दननुटॆ
धर्म्मतत्परत्व कण्टेट्टवु प्रसादिच्चु । ४१
विघ्नकूटातॆ कळिक्कज्ञातवासमॆन्नु-
मुळ्क्कान्पु तॆळिञ्ञु नल्कीटिनाननुग्रह । ४२
कालवु पन्तीराण्टु तिकञ्ञु कळिञ्ञितु
कालमे चॊल्वनिन्नु नाळॆयु मटियातॆ-
न्नालस्यं कळञ्ञिरुन्नाळ् किळिप्पैतल्तानु । ४३

॥ आरण्य समाप्त ॥

करने पर मुझे यही सूझा । कुन्तीदेवी के पुत्रो मे मै जीवित हूँ, माद्री का ज्येष्ठ पुत्र नकुल ही है, अतएव माद्री की क्रियाओ का बन्धन नकुल पर अधिक है, यह सोचकर मैने नकुल के लिए आपसे प्रार्थना की, और कुछ नही । धर्मपुत्र की धर्मतत्परता देखकर धर्मराज अत्यन्त प्रसन्न हुए। और बोले—"आप का अज्ञातवास निर्विघ्न समाप्त हो !" इस प्रकार प्रीति से अनुग्रह किया । बारह वर्ष पूरे हो चुके थे । 'अब आज फिर कहूँगी और कल भी' ऐसा कहकर शुकी आलस्य बिलकुल छोड़कर तैयार रही । ३७-४३

॥ आरण्य पर्व समाप्त ॥

विराटं

नारायणतिरुनामामृतरस-
मोरातवरधमरिलधमर् । १
पोरा परञ्ञतु बाले ! विरवोटु
नेरे परक तच्चरितमिन्नुं । २

विराट पर्व

जो नारायण के पुण्यनामो के अमृतरस का पान नही करते वे अधमों मे अधम है । हे वाले ! तुमने अब काफी सुनाया है । आज भी उनके चरित ठीक से सुनाओ । अच्युत के भक्तो मे युधिष्ठिर सबसे आगे है ।

कॊल्लुवान्तन्नेयॆन्नल्लयल्लीयॆटो ।
चॊल्लुवन् ञानिनि नल्लतु नी मम ६
वल्लभयाकणमिल्लॊरु संशय ।
कल्यत कोलुन्न कल्याणशीलवु ७
पल्लवंपोलॆ पतुत्तॊरु मेनियु
मल्लमिऴियिणत्तल्लिन् विलासवुं
मल्लीशरक्ष्मापालाधिवासवुं । ८
चन्द्रिकपोलॆ लसन्मृदुहासवुं
चन्द्रबिबाभिरामाननांभोजवुं ९
पङ्कजकोरक पन्परं पन्तुचे-।
ङ्कुङ्कुमालंकृत कुंभिकुंभद्वयं १०
शुंभल्स्सुवर्णोरुकुंभमॆन्नित्तरं
कुन्पिटुं कॊङ्कयुं रोमाऴिभंगियु ११
कॊण्टाटि मारन् कुणुङ्ङुं नटकऴुं
कण्टाल् तरिपॆटुन्नॊरु तुटकऴु १२
कण्टुकण्टन्नाऴुण्टु ञानिङ्ङने
वण्टार्तऴक्कुऴलाळे ! पॊरुक्कुन्नु । १३
इन्निमेलिल् पॊरुक्केणमॆन्नाकिलो
निन्नाणॆ ञान् मरिच्चीटुं पॊळियल्ल । १४
नल्कुक चोरिवा पुल्कुक पोर्मुल
नल्कुवन् ञान् तव वेणुन्नतॆल्लामे । १५

अवश्य मुझे मार डालेगे। मै एक अच्छी बात बतलाऊँ। तुम नि सन्देह मेरी प्रियतमा बन जाओ। तुम्हारा यह शोभन और कल्याण शील, १-७ पल्लवों के समान कोमल शरीर, तुम्हारी आँखो के ये विलास जो कि कामदेव के निवासस्थान है, चाँदनी के समान चमकनेवाला मृदु हास, चन्द्रबिंब के तुल्य दर्शनीय मुखकमल, कमल की कलियो, गेदो, कुङ्कुम-विभूषित हाथी के कुभ (मस्तक) और चमकनेवाले सोने के कुंभ (घड़े) के समान स्तनद्वय, सुन्दर रोमावली, कामदेव को जगानेवाली तुम्हारी यह चाल, देखने मे क्षोभ पैदा करनेवाली ऊरु (जाँघे), यह सब कितने दिनो से देख कर मै धीरज धारण कर रहा हूँ। ८-१३ अगर मुझे धीरज धारण करना होगा तो मै मर जाऊँगा, झूठ नही बोल रहा हूँ। तुम मुझे अपने अधर-रस का पान करने दो और अपने स्तनो से आलिगन करो और तुम्हे जो

पश्वाळि मेप्पानाय् वन्नु सहदेवन्
विश्वैकविद्वान् विरोधिकळक्कन्तकन् । १४
याज्ञसेनिक्कु सैरन्ध्रियां पेरेंटो
राज्ञियायुळ्ळ सुदेष्णतन् दासियाय् । १५
वृत्तियुं रक्षिच्चविटेयिरिक्कुंनाळ्
अत्रयु विक्रममुळ्ळ वृकोदरन् १६
शक्तनायुळ्ळोरु मल्लनेयु कोन्नान्
पत्तुमासं कळिञ्ञु पिन्नेयक्कालं । १७

कीचकवधं

नल्ल सुदेष्णतन् भ्रातावु कीचकन्
मल्लाक्षियाकिय सैरन्ध्रियेक्कण्टु १
मुल्लबाणङ्ङळेटल्लल् पोराञ्ञवन्
चोल्लिनानेत्रयु नल्लमधुरमाय् । २
वल्लातिविटे मटेल्लावरुमोक्क
चोल्लुन्न वेलकळेल्लामोरुक्कि नी ३
अल्ललिल् वाळुवानिल्लोरु कारणं ।
मुल्लबाणन्तन्टे विल्लिनेप्पोर् चेय्तु ४
वेल्लुन्न निन्नुटे चिल्लिक्कोटियिण-
त्तेल्लुकोण्टेन्ने नी तल्लुन्न तल्लुकळ् ५

एकमात्र विद्वान् और शत्रुओं के नाशक सहदेव गाय चराने के लिए तैयार हुए। द्रौपदी का नाम हुआ सैरन्ध्री और वह रानी सुदेष्णा की दासी हुई। जब इस प्रकार अपनी-अपनी वृत्ति की रक्षा करते हुए सभी पाण्डव वहाँ रहते थे तब अत्यन्त पराक्रमी वृकोदर (भीमसेन) ने एक शक्तिशाली मल्ल का वध किया। इस प्रकार दस महीने बीत गये। १३-१७

कीचकवध

साध्वी सुदेष्णा का भाई कीचक सुन्दरी सैरन्ध्री को देखकर पुष्पबाणो (कामदेव के बाणो) का शिकार बना और पीड़ा न सह सकने से बडी मीठी आवाज मे बोला—"कोई कारण नही है कि तुम यहाँ औरो के बताये काम करती हुई दुःख मे पड़ी रहो। पुष्पबाण (कामदेव) के धनुष के समान अपनी भौहो की जोडी से जो तुम मुझ पर प्रहार कर रही हो वे

आटलोटेयवन् कूटेयङ्ङोटिनान्
पेटियोटे सभयिङ्कल् वीणीटिनाळ् । २६
अलिलत्तार्कून्तल् चुटिप्पिटिच्चानव-
नोल्लायिर्तेन्नु सभयिलिरुन्नोरु । २७
रक्षिप्पतिन्नु दिनेशनयच्चोरु
रक्षोवरनु परोक्षमतिद्रुत । २८
इक्षुकोदण्डशरक्षतचित्तना-
यक्षमनाकिय कीचकनीचने २९
प्रक्षेपण चेय्तानक्षणं भूमियिल्
सक्षतनाय् वीणुरुण्टानतुनेर । ३०
वल्लाते निन्नु जळनायिळिच्चवन्
मेल्लवे पोयोरु कोणिलकपुक्कान् । ३१
अन्नु राववुजलोचन मारुति-
तन्नुटे मार्व्वत्तु वीणु केणीटिनाळ् । ३२
कण्णुनीरुं तुटच्चुण्णी ! पोरुक्कोरु-
वण्णमोरुमासमिन्नुमेन्नानवन् । ३३
मासमो पिन्नयल्लोयिनिक्किङ्ङोरु-
वासरमल्लोरु नाळिकयु पोरा । ३४
कीचकनेक्कोन्नु सङ्कटं तीर्क्क नी
नीचनेक्कोण्टु पोरुतियिल्लेतुमे । ३५

दौड़ा ।' डर के साथ वह द्रौपदी सभा मे गिर पड़ी । तब उसने कमल-विभूषित केश पकड़ लिये । तब सभा मे बैठे लोगो ने कहा—'यह बुरी बात है' ! २१-२७ उसकी रक्षा के लिए सूर्य ने परोक्ष मे एक राक्षस को भेजा, जिसने उस पर शरवर्पा की और उससे पीड़ित और अक्षम नीच कीचक को फेक कर भूमि पर गिरा दिया और कीचक घायल होकर पृथ्वी पर लोटने लगा । फिर खडे होकर निर्जीव जैसा धीरे-धीरे चला गया और कही कोने मे छिप गया । उस दिन रात को कमललोचना द्रौपदी भीमसेन की छाती पर सिर रखकर रोई । उसके आँसू पोछकर भीम ने कहा—वाले ! किसी तरह एक मास धीरज धरो । "एक महीना ! एक दिन क्या मैं अब एक घटा भी सबर नही कर सकती हूँ । २८-३४ कीचक का वध करके मेरा दु:ख दूर करो, उस नीच के कारण मुझे चैन नही है ।" द्रौपदी की यह बात सुनकर भीमसेन बोले अच्छा, उसे मारकर

इत्थं पलवकयु पऱञ्ञिट्टवळ्
चित्तमिळकाञ्ञु दुःखिच्चु कीचकन् । १६
तन्नुळ्ळिलुळ्ळलुळ्ळवण्णतन्ने
चोन्नानुटप्पिऱन्नुळ्ळवळ्तन्नोटुं । १७
काम मुळुत्तु तन्नत्तान् मऱन्नुळ्ळ
कामुकन्मार्तोळिलेङ्ङनेयेन्निल्ल । १८
इन्ननेरत्तेन्नुमिन्नवरोटेन्नु-
मिन्नवण्ण वेणमेन्नुमिल्लेतुमे । १९
निन्नुटे दासियायुळ्ळोरिवळ्तन्ने-
येन्नोटुकूटिययय्क्क भगिनि ! नी । २०
भ्रातावुतन्नुटे सङ्कटं कण्टवळ्
चेतोहरागियां कृष्णयोटोतिनाळ् । २१
खेदं वरिकयिल्लेतु निनक्कोटो
कादम्बरियु करिकळु वैकाते २२
कीचकन्तन्नोटु वाङ्ङि नी कोण्टुवा-
मेचककान्ति कलर्न्न मनोहरे ! २३
मौनानुवादमोटङ्ङने पोयवळ्
ताने वरुन्नतु कण्टिट्टु कीचकन् २४
नेत्रसुखत्तोटट्टुत्तितु मैरेय-
पात्रवुमिट्टु कळञ्ञवळोटिनाळ् । २५

कुछ चाहिये मैं दे दूंगा। इस प्रकार बहुत कहने पर भी जब सैरन्ध्री का चित्त न विचलित हुआ तब कीचक को दुःख हुआ। उसने जाकर अपने मन का सारा दुःख अपनी बहिन से कह दिया। काम बढने से जब अपने को भूल जाते है तब कामुकलोग क्या-क्या नही करते। किससे कब और किस प्रकार कहना चाहिये उनको इसका विवेक बिलकुल नही रहता। "बहिन जी! यह जो तुम्हारी दासी है उसे मेरे साथ भेज दो!" (कीचक ने ऐसा कहा) १४-२० अपने भाई का दुःख देखकर उस सुदेष्णा ने सुन्दरी कृष्णा (द्रौपदी) से कहा—"हे कृष्णकान्ति मिली हुई सुन्दरी! तुम्हारी कोई हानि नही होगी। जल्दी जाकर मद्य और तरकारियाँ कीचक से माँग लाओ"। वह मौन से हाँ कह कर चली गयी। उसे अकेली आती हुई देखकर कीचक नेत्रानन्द से उसके पास आया। तब वह मद्यपात्र को फेंककर भागी। घबड़ाकर वह पीछे-पीछे

पल्लुतेच्चामोदं वेट्टिलयुं तिन्नु
नल्ल माल्यङ्ङळ् कुसुमङ्ङळुं चूटि ४६
दिव्यांबराभरणालेपनादिकळ्
सर्व्वांगमेल्लामलङ्करिच्चानवन् । ४७
उत्तरमायुळ्ळ पाञ्चालि चोल्लिय
मेत्तमेल् चेन्नु किटन्नितु भीमनु । ४८
चित्तकौतूहलं कैक्कोण्टु कीचकन्
मत्तनाय् कूत्तरङ्ङत्तु पुक्कीटिनान् । ४९
चित्तजन्मावुतन्नस्त्रङ्ङळेल्ककयाल्
पुत्तन्कुळुर्मुलत्तोत्तु पुल्कीटिनान् । ५०
तङ्ङळिल् तिङ्ङिविङ्ङिक्कनंपोङ्ङि नि-
न्नङ्ङने कण्टु कुळुर्मुलक्कोरकं । ५१
विस्तारमाण्टु निरक्कोप्परुपरे-
क्कुत्तुन्न रोमङ्ङळुळ्ककोण्टु काणायि । ५२
रोमलतामुरटायतेविटमा-
रोमलायुळ्ळ दासियल्लोयिवळ् । ५३
ऍङ्किलतुमोरु कौतुकमेन्नोर्त्तु
पङ्कजबाणमाल्कोण्टु पोराञ्ञवन् ५४
नन्नाय् मुरुकमुरुकत्तळुकिनान्
मुन् नटन्नीटिनान् भीमनुमेन्नयु । ५५
ऍत्ति मुरुकमुरुकप्पुणर्न्नव-
नस्थि नुरुक्कि ञेरिच्चितु पिन्नेयुं । ५६

मालाएँ और फूल पहन कर, दिव्य वस्त्र और आभूषण धारण कर के और चन्दन आदि का आलेपन कर कीचक ने अपने सारे शरीर को अलकृत किया। उधर भीमसेन पाञ्चाली (द्रौपदी) के बताए हुए उत्तम गद्दे पर लेट गया। कौतूहल से भरा हुआ कीचक मत्त सा होकर नाट्यमण्डप मे पहुँचा। ४२-४९ कामदेव के शरो के लगने से उसने नये-नये स्तनाग्रो का आलिगन किया। उसने आपस में स्पर्श करते हुए, फूले हुए और ऊचे स्तनो को देखा। फिर बहुत फैले हुए नुकीले रोम भी भीतर दिखाई दिये। यह क्या है जो रोमलता से कठिन मालूम होता है? यह क्या वह दासी नही है जिसकी कोमल रोमलता थी? परन्तु उसे भी एक कौतुक समझकर और कामदेव की पीड़ा को न सह सकने से उसने गाढ़

अॅन्नवळ् चॊन्नतु केट्टॊरु मारुति
कॊन्नवन्तन्नॆ ञान् निन्निटर् पोक्कुवन् । ३६
कूत्तरङ्ङत्तु कुरिक्क नी मन्मथन्-
कूत्तिनु पातिरानेरमॆन्नानवन् । ३७
मारमाल्पूण्टॊरु कीचकन्तन्नोटु
मारुतिचॊन्नपोलेयवळ् चॊल्लिनाळ् । ३८
नारिमार् ञङ्ङळ् स्वधर्म्ममरिकॆटो
मारवशगमाराकयालन्वहं । ३९
नानाजनङ्ङळुमॊन्निच्चपेक्षिच्चा-
लूनमिल्लातवण्णमिणङ्ङीटण । ४०
उण्टॆङ्किल् पञ्चमे गान्धर्व्वन्मार्पीड-
योरोदिनं प्रति काणामॆन्नुवरुं । ४१
ऒट्टुनाळेय्क्कु कण्टीलॆन्नतुवरुं
पट्टाङ्ङु ञान् परञ्ञीलयॆन्निल्लॆटो । ४२
पय्यवे कूत्तरङ्ङत्तॆन्नु तङ्ङळिल्
कैयुं पिटिच्चु तॆळिञ्ञु मनस्सॊत्तु ४३
सैरन्ध्रि चॊन्नतु केट्टु तॆळिञ्ञुळ्ळल्
स्वैरं तनिक्कु वरुमॆन्नु कल्पिच्चु । ४४
क्षौरं कळिच्चु तैलाभ्यङ्गवुं चॆय्तु
मैरेयमायुळ्ळ मद्यवुं सेविच्चु ४५

मैं तुम्हारा दु ख समाप्त करूँगा ।" नाट्यमण्डप मे आधी रात के समय कामलीला के लिए उससे सकेत करो । कामदेव से पीडित कीचक से उसने वैसा ही तय किया जैसा भीम ने बतलाया था । "हम महिलाओ का धर्म समझलो जो प्रतिदिन काम के वश मे रहती है । जब बहुत लोग साथ प्रार्थना करते है तब ऐसा स्वीकार करना चाहिये कि उसमे कोई दोष न हो । अगर कोई दोष रह जायगा तो पाचवे दिन गान्धर्वपीडा (एक प्रकार का उन्माद) दिखाई देगी । ३५-४१ कुछ दिन के लिए वह न भी दिखाई देगा । यह नही कि मैने परमार्थ नही बतला दिया । 'धीरे-धीरे नाट्यमण्डप चले आना' इस प्रकार कीचक का हाथ पकड़कर प्रसन्न होकर और एकमन होकर जब सैरन्ध्री ने कहा तब कीचक ने मान लिया कि अब सुख होने वाला है । इस लिए और कर्म करके, तेल लगाकर, मैरेय मद्य का सेवन करके, दाँत माजकर, पान खाकर, अच्छी-अच्छी

गन्धर्व्वन्मार् बलाल् कोन्नतिन्नेन्तीरु
वन्धमिवळेयुपद्रविप्पान् निङ्ङळ् ? ६७
वृद्धवालागना गो द्विजाद्यङ्ङळे-
व्वद्धरोपाल् विरोधिक्कुन्न दुष्टरे ६८
मृत्युपुरत्तिन्नयय्क्कण वैकाते
पृथ्वीपतिकळेन्नल्लो विधिमत । ६९
आश्रयमिल्लात नारियेक्कोण्टुपो-
याश्रयाशङ्कलाक्कुन्नतु योग्यमो ? ७०
आश्रितरक्षणं धर्म्मं नृपतिकळ्-
क्काश्रितयल्लो विशेपिच्चिवळ्तानुं । ७१
आयुधपाणियल्लेन्नङ्ङिङरिक्किलु
न्यायमल्लात कर्म्मङ्ङळ् काट्टु विधौ ७२
नोक्कियिरिक्कामो राजभटन्माक्कु
योग्यमल्लेतुमतेन्नु परञ्ञुटन् ७३
काटञ्चुवेगमोटे वन्नु कोपिच्चु
नूटञ्चिनेयुमोट्टुक्किनान् वैकाते । ७४
कूटन् चुरमान्ति निल्क्कुन्नतु पोले-
येट चिनत्तोट्टु निन्नितु पिन्नेयु । ७५
भीमनेक्कण्टु पेटिच्चु जनङ्ङळु
कामनेत्तन्नेयुं पेटियुण्टाय्वन्नु । ७६

देखा और पूंछा—"गन्धर्वो ने अपने वल से इसे मारा है। आप लोग इस स्त्री को क्यो परेशान करते हैं ? जो वृद्धो, बालको, महिलाओ, और गो-ब्राह्मणो को क्रोध के आवेश मे आकर सताते है, उनको विना विलम्ब के यमपुरी भेजना राजाओ का काम है, यही शास्त्रो का मत है। एक निराश्रय स्त्री को पकडकर आश्रयाश (अग्नि) मे डाल देना, यह क्या न्याय है ? आश्रितो की रक्षा करना राजाओ का धर्म है और यह विशेप रूप से राजा की आश्रित है। ६४-७१ यद्यपि मेरे पास कोई हथियार नही है फिर भी जब अत्याचार किया जाता है तब राजपुरुप उसे कैसे देखते रहे ? यह ठीक नही होगा"। ऐसा कहते हुए भीम ने क्रुद्ध होकर पाँचो प्राणो के वेग से आकर एक सौ पाँचो को जल्दी समाप्त कर दिया। जैसे साँड भूमि को रगडता हुआ खडा हो जाता है वैसे ही वह क्रोध के मारे फिर खड़े हो गये। भीम को देखकर लोग डर गये, उनको कामदेव

चित्तभ्रमत्तोटु पत्तुनूऱायिर
कुत्तिनान् मुष्टि चुरुट्टित्तेरुत्तेरे । ५७
प्रेममिल्लेन्नु वरुमेन्नु शङ्किच्चु
भीमन् नखङ्ङळुमेलिपच्चितादराल् । ५८
अय्यो ! मतिमतियय्यो ! मति पोरुं
मय्यल्मिऴियाळे ! कय्ययच्चीटेटो ! ५९
नीयल्लयोयितु नीयल्लयो बाले !
पोय्ये परञ्ञु चतिक्कयो चेय्ततु ? ६०
मेय्येन्नु कलिपच्चु वन्नु पुणर्न्नु आन्
मेय्यल्ल नल्ल करिङ्कल्लु निर्णयं । ६१
पत्तुंनूऱित्थ करञ्ञु करञ्ञवन्
चत्तान् मिऴिकळ् तुऱिच्चु पोट्टुक्कने । ६२
वातात्मजनाय भीमनुं पोयित-
ङ्ङेतुमऱिञ्ञील तानेन्नु भाविच्चु । ६३
चत्तोरु कीचकन्तन्नुटे तम्पिमार्
पत्तिल् पेरुक्किय पत्तुमोरञ्चुमु- । ६४
ण्टत्तल् पूण्टेत्तिप्पिटिच्चवर् कृष्णये
चत्त शवत्तोटु वच्चुकेट्टीटिनार् । ६५
कूटेयिवळेयु चुट्टुकळवानाय्
कूटलर्कालना भीमनतुकण्टान् । ६६

आलिगन किया । भीमसेन भी आगे बढ़ा । उसने ऐसा दृढ लिपट लिया कि हड्डियाँ दब गयी और टूट गयी । ५०-५६ बड़े चित्तभ्रम के साथ हजारो बार लगातार घूँसा मारा । भीम ने अपने नखो को भी खूब लगाया ताकि यह न समझा जाय कि प्रेम की कमी है । 'हा ! बस ! बस ! हा ! समाप्त करो बहुत हो गया है ! हे ! काजल के लोचनवाली! अपने हाथो को ढीला करो ! क्या यह तुम नही हो ? वाले ! यह तुम नही हो ? क्या झूठ बोलकर मुझे धोखा दिया है ? सच समझकर मैंने आकर आलिगन किया । सच नही था, यह तो निःसन्देह पक्का पत्थर है । इस प्रकार सैकडो बार चिल्लाकर वह मरा और उसकी आँखे फोडकर निकल आयी । वायुपुत्र भीम वहाँ से चले गये मानो उनको कुछ भी नही मालूम है । ५७-६३ मरे कीचक के एक सौ पाँच छोटे भाई दौड़कर आये और दु.खित होकर उन्होने द्रौपदी को पकड़कर शव के साथ वाध दिया ताकि वह भी साथ ही जलायी जाय । शत्रुओ के नाशक भीम ने यह

केट्टिट्टु ञङ्ङळ् तिरञ्ञितु गन्धर्व्व-
श्रेष्ठन्मारन्नेयतायतु मन्नव ! ८
अप्पोळुरचेय्तु भीष्मरुमीवण्ण-
मुळ्ळ्पूविलोन्नुण्टिनिक्किन्नु तोन्नुन्नु । ९
चत्ततु कीचकनेङ्किलो मारुत-
पुत्रनत्रे कोलचेय्ततु निर्ण्णयं । १०
युक्तियुं चेरुमितिन्नु निरूपिक्कि-
लुत्तमयायुळ्ळ पाञ्चालिकारण । ११
इत्थं धृतराष्ट्रपुत्रनोटु गंगा-
दत्तन् परञ्ञतु केट्टवनु चोन्नान् । १२
ऐङ्किलो मत्स्यराजाविन् पशुक्कळे
शङ्ककूटाताट्टिक्कोण्टु ना पोरणं । १३
कण्टङ्ङटङ्ङियिरिक्कयिल्लट्टिक्कि-
लुण्टेङ्किलर्ज्जुननादिकळेन्नुमे । १४
मुन्पिले पोक पटयु त्रिगर्त्तनुं
पन्पोटु ञङ्ङळ् वळिये वरुंतानु । १५
इङ्ङने कल्पिच्चनेरं त्रिगर्त्तनु
मङ्ङात वन्पटयुं कूट्टियप्पोळ् १६
चेन्नु विराटपुरिपुक्कु गोक्कळे-
योन्नोळियाते तेळिच्चवर् पोकुन्पोळ् १७

हुआ था उसके सम्बन्ध में कुछ भी नही सुना है ? । "हे राजन् ! सुना तो जरूर है और सुनकर ढूँढा भी । मालूम हुआ कि कुछ गन्धर्ववरो ने ही वह सब किया था ।" उस समय भीष्मजी ने निवेदन किया— "मुझे एक बात सूझ रही है । अगर कीचक ही मारा गया है तो उसे निस्सन्देह वायुपुत्र (भीमसेन) ने ही मारा है । सोचो तो इसके लिए युक्ति भी है । उत्तम पाञ्चाली ही के कारण यह हुआ होगा ।" गगादत्त (भीष्म) की यह बात सुनकर धृतराष्ट्रपुत्र (सुयोधन) ने कहा— "अगर ऐसा हो तो हमलोगो को चाहिये कि हम मत्स्यराजा की गायों को निश्शङ्क भगा लावे । ७-१३ अगर अर्जुन आदि वहाँ पर है तो वे यह देखकर चुप कभी न बैठे रहेगे । त्रिगर्त सेना लेकर आगे चले ।" यह सुनकर त्रिगर्त ने एक शक्तिशाली सेना लेकर विराटपुरी मे प्रवेश किया और एक को भी न छोड़कर सभी गायो को भगा ले जाने लगा । तब मत्स्यराजा

श्यामळयाकिय सैरन्ध्रितन्नेयु
कोमळयाकिलु मन्नुतोट्टारुमे ७७
नाट्टार् मुखत्तु नोक्कातेचमञ्ञतु
कूट्टमे कोल्लिक्कुमेन्नु भयत्तिनाल् । ७८

गोग्रहणं

वाट्टमकन्न सुयोधननक्कालं
कूट्टवुंकूटित्तुटङ्ङि निरूपणं । १
नाट्टिलेङ्ङानुमिप्पाण्डवरुण्टेङ्कि-
लोट्टाळारोक्क नटन्नु तिरयणं । २
धार्ष्टचमेरीटुन्न धर्म्मजन्मादिये-
क्काट्टिलाक्कामेन्नु कण्टुकिट्टीटुकिल् । ३
राज्यङ्ङळ् तोरुमतुकेट्टु दूतन्मार्
पाच्चिलतुटङ्ङिनार् कण्टुकोण्टीटुवान् । ४
ऎङ्ङुमे काणाञ्ञु चेन्नवर् चोल्लिनार्
ञङ्ङळो कण्टीलयेङ्ङुमे मन्नवा ! ५
धार्त्तराष्ट्रन् पऱञ्ञानवरोटप्पोळ्
पार्थन्मारुळ्ळेटं ञान् पऱयामेङ्किल् । ६
भोषन्मारे ! निङ्ङळ् मत्स्यराज्यत्तिङ्कल्
घोषमुण्टायवयोन्नुमे केट्टीले ? ७

से भी डर होने लगा। सॉवली सैरन्ध्री (द्रौपदी) को (यद्यपि वह सुन्दरी थी) उस दिन से लोगो ने देखना तक बन्द कर दिया, इस डर से कि कही गन्धर्व लोग सबको समाप्त न कर दे। ७२-७८

गोग्रहण

उन दिनो हृष्ट-पुष्ट सुयोधन ने अपने मित्रो को इकट्ठा करके परामर्श किया— "इस देश मे पाण्डव कहाँ है ? हम चाहते है कि कुछ लोग निकलकर घूमे और उनको ढूँढे। अगर कही ढूँढे मिल जायँ तो इस अधिक धार्ष्टचवाले (धृष्ट) युधिष्ठर आदि को सदा के लिए वन मे कर दे।" यह आज्ञा सुनकर कुछ दूत निकलकर देश-देश मे उनको देखने के लिए दौड़ने लगे। कही न मिलने से वे बोले, "हे राजन् ! वे हमलोगो को कही भी न मिले।" तव सुयोधन ने उनसे कहा— अच्छा तो मैं बतलाऊँगा पाण्डव कहाँ है। १-६ हे मूर्ख ! तुम लोगो ने मत्स्यराज्य मे जो गड़बड़

वृत्रारिपुत्रनामर्ज्जुनन्तान्तन्नें
युद्धत्तिनाय्‌वरुन्नाकिलवनेयु २९
वेल्लुन्नतुण्टतिनिल्लोरु किल्लति-
न्निल्लोरु सूतनतत्रे कुर्रविप्पोळ् । ३०
मत्तनायुत्तरनित्तरं चोन्नतु
मत्तेभगामिनि पाञ्चालि केट्टिट्टु ३१
चित्तत्तिलीर्ष्य पोळिञ्ञवळ् चोल्लिनाळ्
भर्त्तावायुळ्ळ वृहन्नळयोटेल्लां । ३२
पार्थनतुकेट्टु पाञ्चालितन्नोटु
वास्तवमायुळ्ळ वार्त्तयुरचेय्तान् । ३३
तेर् तेळिच्चीटुवानाळु ञानुण्टोरु
सूतनिल्लाञ्ञुळ्ळलायकॅन्नु चोल्लु नी । ३४
अप्रकारं परञ्ञीटिनाळ् कृष्ण-
युमप्पोळुत्तरन्तानुमुरचेय्तान् । ३५
आरतु चेन्नु परञ्ञु केळ्प्पिप्पतु
पाराते गोक्कळे त्रीण्टुकोण्टीटुवान् । ३६
उत्तर चोन्नतु केळ्क्कुमतिनुट-
नुत्तरयोटु चोल्केन्नितु कृष्णयुं । ३७
उत्तरनुत्तरयोटु परञ्ञप्पो-
ळ्ळुत्तरचोल्केट्टु वृत्रारिपुत्रनु ३८

क्रुध होकर उत्तर ने कहा— "मैं जाकर उनसे लड़ूंगा और गायो को वापस लाऊँगा। अगर इन्द्रपुत्र अर्जुन ही लड़ने आजाय तो उसका भी वध करूँगा, इसमे सन्देह नही। परन्तु सूत (सारथी) कोई नहीं है। यही एक कमी है।" मत्त उत्तर की इस प्रकार की बाते सुन्दरी पाञ्चाली ने सुनी और उसने अपने मन मे ईर्ष्या का अनुभव किया और जाकर अपने पति बृहन्नळा (अर्जुन) से सब कह दिया। २८-३२ यह सुनकर अर्जुन नेपाञ्चाली से परमार्थ की बात कह दी। "रथ चलानेवाला मैं हूँ। जाकर कह दो कि सारथि न होने से परेशान न हो।" कृष्णा (पाञ्चाली) ने वैसा ही जाकर कह दिया। तब उत्तर ने कहा— "कौन जाकर (बृहन्नळा को) समझायेगा कि जल्दी जाकर गायो को वापस लाना है ?।" तब कृष्णा ने कहा— "उत्तरा की बात सुनेगा। इसलिए उत्तरा से कह दीजिये।" जब उत्तर ने उत्तरा (उत्तर की बहिन) से कहा, तब

सन्नाहमुळ्क्कोण्टु पिन्नाले मत्स्यनुं
चेन्नु कलहंतुटङ्ङिय नेरत्तु १८
मन्ननेयेत्तिप्पिटिच्चु कॅट्टीटिना-
नुन्नतनाकुं त्रिगर्त्तन् महारथन् । १९
पल्लुं कटिच्चु निन्नीटिनान् भीमनुं
चेल्लुकॅन्नन्पोटु चॊल्लि युधिष्ठिरन् । २०
कण्टिरुन्नीटुकयिल्लेन्नु कल्पिच्चु
मण्टियणञ्ञु वृकोदरनन्नेरं २१
शक्तिमानाकुं त्रिगर्त्तनेयुं वॅन्नु
वृद्धनां मत्स्यने वीण्टुकॊण्टीटिनान् । २२
अप्पोळणञ्ञु कुरुप्रवरन्मारु
कॅल्पोटु गोक्कळेक्कॊण्टुपोयीटिनार् । २३
पटलराय सुयोधननादिकळ्
मटॆप्पुरमेयटुत्तु पशुक्कळे २४
तॆटॆन्नु कॊण्टुपोकुन्नोरु नेरत्तु
चेटु पॊरुतु तोटार् पशुपालरु । २५
युद्धकोलाहलमुण्टाय् चमञ्ञतुं
शत्रुक्कळ् गोक्कळेक्कॊण्टङ्ङु पोयतुं २६
मत्स्यमहीपतिपुत्रनाय् मेविनो-
रुत्तरनोटु गोपालकन् चॊल्लिनान् । २७
क्रुद्धनायुत्तरन्तानुमुरचेय्ता-
नॆत्तियॆतिर्त्तु जान् वीण्टुकॊण्टीटुवन् । २८

तैयार होकर उनके पीछे गये और उनसे युद्ध करने लगे। उसमे प्रमुख महारथ त्रिगर्त ने राजा को किसी तरह पकड़कर बाँध लिया। भीम तो वहुत क्रुध हुआ और युधिष्ठिर ने प्रेम से कहा— "मदद के लिए चले जाओ।" १४-२० "इसे देखकर चुप वैठे न रहूँगा", ऐसा निर्णय करके उस समय वृकोदर चले। शक्तिमान् त्रिगर्त का वध करके वृद्ध मत्स्यो के राजा को छुड़ा लाये। इतने मे कुरुप्रवर पहुँचे और गायो को भगा ले गये। जव सुयोधन आदि शत्रु दूसरी ओर से आकर गायो को ले जा रहे थे तव गोपालक उनसे कुछ लड़े, पर हार गये। युद्ध का छिड़ जाना, शत्रुओ के द्वारा गायो का भगा ले जाना, यह सब समाचार गोपालक ने मत्स्यो के राजा के पुत्र उत्तर को वतला दिया। २१-२७

ओटिक्क पिन्नोक्कमॆन्नुटनुत्तर-
नोटिच्चु मुन्नोक्कमर्ज्जुनन् पिन्नॆयु । ४९
पेटिच्चतीव विरच्चानतुकण्टु
पेटिक्कीलायॆन्नु चॊल्लि किरीटियु । ५०
ओटिच्च तेरिल्निन्नुत्तरनन्नेरं
चाटिक्कळञ्ञु निलत्तु वीणीटिनान् । ५१
कूटक्कुतंकॊण्टु चाटिप्पिटिच्चवन्
तेटुन्न पेटिकण्टर्ज्जुननन्नेर ५२
पॆट्टॆन्नु कालु करङ्ङळुमॊन्निच्चु
कॆट्टियिट्टीटिनान् तेरिल् महारथन् । ५३
विलस्तनाकियोरुत्तरनन्नेरं
वृत्रारिपुत्रनोटित्तरं चॊल्लिनान् । ५४
नाटुं नगरवुमॊक्कत्तरुवन् आ-
नोटुन्न तेर् तिरिच्चोटिक्क पिन्नोक्कं । ५५
नीयॆन्तिवण्ण तुटङ्ङुन्नतॆन्नोटु
अय्योयॆनिक्कॆन्टॆयम्मयॆक्काणण । ५६
ऎन्नतु केट्टु चिरिच्चु किरीटियुं
चॆन्नु शमीवृक्षं वन्दिच्चु वेगत्तिल् ५७
एऱियॆट्टुत्तितु चापशरादिकळ्
कूऱिनानुत्तरन्तानतु कण्टप्पोळ् । ५८

बढाया। उत्तर ने तुरन्त कहा 'पीछे की ओर चलाओ', परन्तु अर्जुन ने आगे ही बढ़ाया। यह देखकर उत्तर डर के कारण काँपने लगा। किरीटी (अर्जुन) ने कहा— 'मत डरो'। तब दौडते हुए रथ पर से उत्तर कूदा और जमीन पर गिर पड़ा। उस भयभीत को देखकर महारथ अर्जुन ने आधा (क्षणभर) कूदकर उसे पकड़ लिया और हाथ पैर बाँधकर उसको रथ चढा लिया। तब वित्रस्त उत्तर ने वृत्रारिपुत्र (अर्जुन) से इस प्रकार निवेदन किया। "मै तुम्हे देश और नगर दूंगा, इस दौड़ते रथ को घुमाकर पीछे की ओर चलाओ"। ४८-५५ (अर्जुन ने कहा) 'तुम क्यों मुझसे इस प्रकार कह रहे हो ?' (उत्तर बोला) 'हा! मैं अपनी माँ को देखना चाहता हूँ।' यह सुनकर अर्जुन हँस पडे। तदनन्तर शमीवृक्ष जाकर उसकी वन्दना की। फिर उस पर चढकर धनुष-बाण निकाले। यह देखकर उत्तर बोला— 'हे बृहन्नळे! ये आयुध किसके हैं? माया

पार मॆलिञ्ञ कुतिरकळॆप्पूट्टि-
त्तेरु चमच्चितु पोरिनु वैकातॆ । ३९
सत्वरमुत्तरन् तेरिल् करेरिनान्
वृत्रारिपुत्रनु तेर् तॆळिच्चीटिनान् । ४०
युद्धत्तिनुत्तरन् सत्वरं पोकुम्पोळ्
मुग्धाक्षिमारुमवनोटु चॊल्लिनार् । ४१
शत्रुभूपालरॆक्कॊन्निङ्ङु पोरुम्पोळ्
वस्त्रङ्ङळ् नल्लव ञङ्ङळ्क्कु नल्कणं । ४२
अङ्ङनॆतन्नॆयॊरन्तमिल्लॆन्न-
तंगनमारोटु चॊल्लियुळ्टोटे ४३
पुक्कितु चॆन्नु कुरुक्षेत्रमन्नेर-
मुळ्क्कान्पिलुण्टाय पेटियोटुत्तरन् ४४
वन्नवळियॆ नटक्क रिपुक्कळॆ
वॆन्नुकूटा नमुक्कॆन्नुमे निर्ण्णयं । ४५
द्रोणरु भीष्मरुं धार्त्तराष्ट्रन्मारुं
द्रोणियु कर्ण्णनुमायोधनत्तिङ्कल् । ४६
प्राणभयमिल्लयातवरोटिन्नु
ञानॊरु बालकनॆल्क्कुन्नतॆङ्ङनॆ ?४७
ऒन्नतु केट्टॊरु पार्त्थनुमन्नेर
पिन्नॆयुं तेरतु मुन्नोक्कमोटिच्चान् । ४८

उत्तरा की बात सुनकर वृत्रारिपुत्र (अर्जुन) ने दुबले-दुबले घोडों को जोतकर युद्ध के लिए जल्दी रथ तैयार किया। ३३-३९ तुरन्त ही उत्तरा रथ पर चढा और अर्जुन भी रथ चलाने लगे। जब उत्तर युद्ध के लिए जा रहा था, तब महिलाओ ने उससे कहा— "शत्रु भूपालों का वध करके जब लौटोगे तव हम लोगो को अच्छे-अच्छे कपडे भेट करना।" "ज़रूर, ऐसा ही होगा, जितना चाहो ले लेना" महिलाओ को ऐसा जवाब देकर जल्दी उत्तर ने कुरुक्षेत्र मे प्रवेश किया। उस समय उत्तर के मन मे डर पैदा होने के कारण (उसने कहा) जिस रास्ते से आये उसी रास्ते वापस चलो। मै कभी शत्रुओ को नही मार सकता हूँ, इसमें कोई सन्देह नही। द्रोण, भीष्म, धृतराष्ट्र के पुत्र, अश्वत्थामा, कर्ण आदि प्राणभय से मुक्त वीरो का युद्ध मे मै बालक कैसे सामना कर सकता हूं ? । ४०-४७ यह सुनने के बाद भी पार्थ (अर्जुन) ने रथ को आगे

पेटि कळञ्ञु रथं नी नटत्तुकिल्
पाटे पशुक्कळे वीण्टुतरुवन् ञान् । ७०
मन्नवा ! निन्नोटु तुल्यनेन्नेन्ने ञान्
मुन्नमे चोन्नतिरिञ्ञु पोरुक्कण । ७१
इन्द्रनु मातलि तेरुनटत्तुंवण्ण-
मिन्द्रतनूज ! नटत्तुन्नतुण्टु ञान् । ७२
ॲन्नतु केट्टवन् विल्लु कुलयेटि
पिन्ने हनुमानेयुं करुतीटिनान् । ७३
वन्नु कोटिमरमेरि हनुमानु-
मोन्नङ्ङलरि नटुङ्ङीजगत्त्रय । ७४
देवदत्ताख्यमां शंखुमेटुत्तिटट्टु
देवराजात्मजनु विळिच्चीटिनान् । ७५
पिन्नेच्चेरुञाणोलियिट्टुटनुटन्
मन्नवन् सिहनादङ्ङळ् चेय्तीटिनान् । ७६
तेरुरुळोच्चयु सिहनादङ्ङळुं
पारमुळङ्ङुन्न शंखद्ध्वनिकळु ७७
वीरन्मारञ्चु चेरुञाणोलिकळु
मारुतितन्नुटे हुकारनादवु ७८
घोरघोरं केट्टु भीतिपूण्टुत्तरन्
पार विरच्चानरयालिलपोले । ७९

बीभत्सु, इन दसो नामो का प्रतिदिन भक्ति के साथ जप करो तो तुम्हारे सभी भय दूर हो जायेगे । ६३-६९ डर छोड़कर अगर तुम रथ चलाओगे तो मै जल्दी गायों को वापस लादूंगा ।" हे राजन् ! मैंने जो पहले अपने को आपके तुल्य बतलाया उसके लिए क्षमा कीजिये । मातलि जैसे इन्द्र का रथ चलाता है उसी प्रकार मै भी (आपका) रथ चलाऊँगा । यह सुनकर अर्जुन ने धनुष पर ज्या (डोरी) चढाई और हनुमान् का ध्यान किया । हनुमान् पधारे और ध्वजस्तंभ पर जा बैठे और तीनो लोक चकित हुए और कांपने लगे । अर्जुन ने देवदत्त नामक अपना शख लेकर उसे बजाया । तदनन्तर लगातार ज्याघोष (धनुष की डोरी की आवाज) करके राजा (अर्जुन) ने सिंहनाद किया । ७०-७६ रथ के चलने का शव्द, सिंहनाद, अत्यन्त गूंजनेवाली शखध्वनि, पाँचो वीरो के ज्याघोष, भीमसेन के हुंकार (जो अतीव घोर थे), यह सव सुनकर उत्तर डर के कारण पीपल के पत्त के समान कांपने लगा । रथ ही पर गिर पड़ा और चिल्लाने लगा । तव

आयुधमार्क्किकवयुळ्ळु बृहन्नळे ?
मायमोळिञ्ञु नीयेन्नोटु चोल्लणं । ५९
चोल्लां परमार्त्थमेङ्किलिवयेल्लां
चोल्लुळ्ळ पाण्डवक्कुळ्ळु धरिक्क नी । ६०
पाण्डवन्मारेविटत्तु बृहन्नळे ?
वेण्टा पोळिपऱकोन्नतेन्नोटेटो । ६१
ऐङ्किलो केळ्क्क ञानर्जुननायतु
कङ्कनाकुन्नतु धर्म्मजन्मावेटो । ६२
आक्कमेऱीटु वललन् वृकोदरन्
चोल्क्कणाळाकिय सैरन्ध्रि पाञ्चालि । ६३
मेय्क्कुन्नतु नकुलन् तुरगङ्ङळे
गोक्कळे मेय्क्कुन्नतु सहदेवनु । ६४
ऐङ्किल् निन् पत्तु पेरु पऱञ्ञीटु नी
शङ्कपोवानिनिक्कोन्नितु मत्स्यनु । ६५
भोष्कलल चोल्लुवनेङ्किलो निन्नोटु
केळ्क्क नीयेन्नुटे पत्तु नामङ्ङळु । ६६
अर्ज्जुनन्, फल्गुनन्, पार्त्थन्, विजयनु
विश्रुतमायवन् पिन्नेक्किरीटियु ६७
श्वेताश्वनेन्नुं धनञ्जयन् जिष्णुवुं
भीतिहरन् सव्यसाचि बीभत्सुवुं ६८
पत्तु नामङ्ङळुं नित्य जपिक्क नी
भक्त्या भयङ्ङळकन्नुपो निश्चयं । ६९

छोड़कर मुझसे सच कहो'। (अर्जुन बोले) 'अच्छा ! तो कहूँगा। ये सब विख्यात पाण्डवो के है, समझ लो !' उत्तर ने पूँछा "हे वृहन्नळे ! पाण्डव आज कल कहाँ है ? मुझसे झूठ न वोलना।" अर्जुन बोले 'अच्छा, तो सुनो। मै ही अर्जुन हूँ। कङ्क ही युधिष्ठिर है। ५६-६२ शक्तिशाली वलल जो है वही भीम है। कमललोचना सैरन्ध्री पाञ्चाली है, घोड़ो को चरानेवाला नकुल है और गायो को चरानेवाला सहदेव है।' 'अगर ऐसा है तो अपने दसो नाम सुनाओ ताकि मेरी शङ्का मिट जाय', उत्तर ने ऐसा कहा। "मै झूठ नही बोल रहा हूँ। तुमको मै अपने दसो नाम सुना दूँगा, सुनो। अर्जुन, फल्गुन, पार्थ, विजय, तदनन्तर विश्रुत किरीटी, श्वेताश्व, धनञ्जय, जिष्णु भय हटानेवाला सव्यसाची और

केट्टीलें तोळा ! विशेषङ्ङळ् कर्णा ! नी
कूट्टमिट्टोरो जनं पऱयुन्नतु ? ९१
वाट्ट भवानुळ्ळिलेतुमुण्टाकेण्ट
कूट्टु ञानुण्टेन्नऱिञ्ञतिल्लेयिप्पोळ् । ९२
वेण्मऴुवेन्तिय रामन् वरिकिलु-
मेन्मुन्निल् निल्कयिल्लेन्नु धरिक्कणं । ९३
इन्द्रादिदेवकळोत्तुवरिकिलुं
मन्दतयिल्ल जयिक्कुन्नतुण्टु ञान् । ९४
इन्द्रतनूजनुमिन्द्रावरजनु-
मेन्नोटु तुल्यरल्लेन्नु धरिक्कणं । ९५
ॲन्नित्तरं वन्पु कर्णन् पऱञ्ञप्पोळ्
निन्न कृपरुं चिरिच्चोन्नुरचेय्तु । ९६
कर्णा ! मति मति पोरुं पऱञ्ञतु
निन्नुटे वीर्यङ्ङळ् नाविन्मेलेयुळ्ळु । ९७
जभारिनन्दनन्वन्पुकळ् केळ्क्क नी
किं फलमात्मप्रशंसकोण्टोक्केट्टो । ९८
मुन्पिल् द्रुपदनेब्बन्धिच्चु दक्षिण-
यन्पोटु चेय्ततवनेन्नऱिक नी । ९९
चित्ररथनाय गन्धर्व्ववीरने
युद्धे जयिच्चतवनल्लयो पुरा । १००

कभी उचित बात कहते ही नही और मुझे तो आचार्य प्राणो के तुल्य बतलाते भी है। हे सखे कर्ण ! सुना तुमने समाचार, और जो कुछ गुट बनाकर लोग कहते है ? (कर्ण ने उत्तर दिया) आप परेशान न हो ! क्या आपको नही मालूम है कि मैं आपके साथ हूँ ? ८५-९२ जान लो कि परशुराम ही अगर स्वय आजायँ तो मेरे सामने टिक नही सकते है। अगर इन्द्र आदि देव मिलकर चले आवे तब भी मेरी हार न होगी— मैं जीत जाऊँगा। जान लो कि इन्द्र का पुत्र और इन्द्र के छोटे भाई (विष्णु) भी मेरे तुल्य नही है। जब कर्ण ने इस प्रकार की आत्मश्लाघा की तब कृपाचार्य हँस पड़े और बोले— हे कर्ण ! बस बस, अब और कुछ न कहो। तुम्हारी वीरता तुम्हारी जबान तक ही है। अर्जुन के पराक्रमो को जरा सुनो, अपनी प्रशसा करके तुम्हे क्या मिलेगा ? स्मरण रहे कि पहले द्रुपद को बाँधकर उसने अपने गुरु को प्रेम से दक्षिणा दी। गन्धर्ववीर चित्ररथ को युद्ध मे उसी ने तो हराया था। ९३-१०० लक्ष्य (निशान)

तेरिल् वीणान् मुऱयिट्टान् तेरुतेरे-
प्पाराते निल्क्क नीयेन्नु विजयनु । ८०
हुंकारमेऱु चेऱुञाणोलिकळु
शंखनादङ्ङळुं सिह्नादङ्ङळु ८१
पिन्नेयुं पिन्नेयु चेय्तान् तेरुतेरे
मन्नवनुत्तरन्भीति कळवानाय् । ८२
पार्त्थनीवण्ण नटन्नोरुनेरत्तु
धात्रि कुलुङ्ङि कलङ्ङी समुद्रवु । ८३
घोषङ्ङळ् केट्टु भरद्वाजनन्दनन्
भोषनां नागद्ध्वजनोटु चोल्लिनान् । ८४
पार्त्थन्वरविता केळ्क्कायतुमेंटो
पार्त्थिवनन्दना ! तोल्क्कुमेल्लावरु । ८५
दुश्शकुनङ्ङळ् पलतुण्टु काणुन्नु
निश्शेषनाशं भविक्कु पटय्क्कप्पोळ् । ८६
नागद्ध्वजनतु केट्टिट्टु कोपिच्चु
भागीरथीसुतन्तन्नोटु चोल्लिनान् । ८७
पण्टु पऱञ्ञ समयं वरुंमुन्पे-
युण्टु वरुन्नितु पाण्डवरेङ्किलो ८८
रण्टामतु वनं पूकेन्नतेवरू
कोण्टाटियारुमतिन्नु पऱयण्टा । ८९
द्रोणरुचितं पऱकयिल्लेन्नुमे
प्राणनोटोप्पिक्कुमेन्नेयाचार्यनु । ९०

अर्जुन ने कहा 'उठो और अपने को सभालो'। राजा (अर्जुन) लगातार बार-बार हुँकारवाले ज्याघोप, शखनाद, और सिहनाद, करते गये ताकि उत्तर का भय नष्ट हो जाय। जब पार्थ ने इस प्रकार किया तब पृथिवी हिली, समुद्र क्षुब्ध हुआ। ये सब घोप सुनकर भरद्वाजपुत्र द्रोण ने मूर्ख सुयोधन से कहा। ७७-८४ 'अर्जुन का आगमन ही सुनाई दे रहा है। हे भूपालपुत्र! अब सब हार जायेंगे। अनेक दुश्शकुन दिखाई दे रहे है, अब सारी सेना नष्ट हो जायगी। यह सुनकर नागध्वज (सुयोधन) क्रुद्ध हुआ और भागीरथीसुत (भीष्म) से बोला। जो समय पहले ही निश्चित है उससे पहले ही अगर पाण्डव आ रहे हो तो दुबारा उनको वन जाना पडेगा, बस। इसलिए कोई उत्साह न दिखलावे! द्रोण तो

गगासुतनतुकण्टवर्तम्मोटु
तङ्डळिल् कोपियार्क्केन्नु चौल्लीटिनान् । १११
पिन्नेयु चौन्नान् वरिषं पतिम्मून्नु
कर्ण्णा ! कळिञ्ञितु पार्त्तीलयो नीयुं ? ११२
अन्नेर कोपिच्चु चौन्नान् सुयोधन-
नेन्नुटे राज्यं कौटुक्कयिल्लेतुमे । ११३
पोरिनोरुमिच्चु पार्त्थन् वरुन्नाकिल्
घोरमायिङ्ङु पटक्कोप्पु कूट्टुक । ११४
व्यूह चमच्चुरप्पिच्चितु भीष्मरुं
वाहिनी वारिधिपूरङ्ङळेप्पोले । ११५
अंबरचारिकळ् वन्नु निरञ्ञितु
तुबुरुनारदनादिकळु वन्नु । ११६
मत्स्यराजात्मजनुत्तरन् पेटि ती-
र्न्नुत्साहमुळ्क्कौण्टु तेरु नटत्तिनान् । ११७
पार्त्थन् गुरुभूतन्मारेयुं वन्दिच्चु
कूर्त्त शरनिर तूकित्तुटङ्ङिनान् । ११८
शखद्ध्वनियु चेरुआणोलिकळु
हुंकारवु केट्टु कौरवरन्नेर ११९
शङ्किच्चकन्नितु गोक्कळेयुं विट्टु
शङ्कारहितमट्टुत्तान् किरीटियु । १२०
पार्त्थनुमुत्तरन्तन्नोटु चौल्लिनान्
पेर्त्तु कौटियटयाळङ्ङळोरोन्ने । १२१

न करो"। फिर कहा— "हे कर्ण ! तेरह वरस पूरे हो गये। क्या तुमको नही मालूम है ?" उस समय क्रुद्ध होकर सुयोधन ने कहा—"मै अपना राज्य कभी न दूंगा"। अगर अर्जुन युद्ध के लिए आ रहा है तो यहाँ भी एक घोर सेना इकट्ठा की जाय ! भीष्मजी ने व्यूह रचाकर तैयार किया मानो वह सेना समुद्र की तरङ्गो के समान थी। १०९-११५ आकाशचारी देवादिको से आकाश भर गया और तुम्बुरु नारद आदि भी (उस युद्ध को देखने के लिए) पधारे। मत्स्यराजा के पुत्र ने भय छोडकर सोत्साह रथ चलाया। अर्जुन अपने गुरुओ की वन्दना करके तेज-तेज वाणो की वर्षा करने लगे। शखध्वनि, ज्याघोप, और हुकार सुनकर कौरव लोग शङ्का के कारण गायो को छोड़कर दूर हट गये। अर्जुन

लक्ष्यवुं भेदिच्चु पाञ्चालपुत्रियां
पुष्करनेत्रयेक्कोण्टङ्ङु पोयतुं १०१
कामपालादि यदुक्कळेयु वेन्नु
कामिनियाय सुभद्रयें वेट्टतुं १०२
खाण्डवकाननदाहं कळिच्चतुं
गाण्डीवमग्नियोटन्नु लभिच्चतुं १०३
अन्तकवैरियोटस्त्रं परिच्चतु-
मिन्द्राज्ञया पिन्नें वेगेन पोयवन् १०४
वानुलकं पुक्कसुररेक्कोन्नतु
ताने पोयुत्तरदिक्कु जयिच्चतु १०५
मटु पलपल विक्रममोर्क्कुन्पोळ्
मुटुं परकयोंळिञ्ञु निनक्कामो ? १०६
इत्तरं केट्टिट्टु कोपिच्चु कर्ण्णनु-
मुत्तरं चोंन्नान् कृपाचार्यनोटप्पोळ् । १०७
पेयाय वाक्कुकळ् पेटिच्चु चोंल्लाय्क
पोयोंरामन्त्रणमुण्क मटियातें । १०८
यागादिकर्म्मङ्ङळ् चेंय्कतल्लाय्किलो
पोक विरवोटु भिक्षयेटीटुवान् । १०९
दुर्भाषणं कर्ण्णनित्थं परञ्ञप्पोळ्
विप्रोत्तमनश्वत्थामावु कोपिच्चु । ११०

को तोड़कर पाञ्चालपुत्री कमललोचना को ले जाना, कामपाल आदि यदुओ को नष्ट करके कामिनी सुभद्रा से विवाह करना, खाण्डव वन को जला देना और उस अवसर पर अग्नि से गाण्डीव धनुष पाना, अन्तकवैरि (शिवजी) से अस्त्र लेना, फिर इन्द्र की आज्ञा से स्वर्ग जाकर वहाँ असुरो का वध करना, और अकेला जाकर पूर्व दिशा को जीतना, जब अर्जुन के इस प्रकार के अनेक विक्रमो को स्मरण करते है तब और कुछ न कहने के अतिरिक्त तुम्हे क्या चारा है ? इस प्रकार की बाते सुनकर कर्ण क्रुद्ध हुआ और कृपाचार्य से बोला— डर के मारे ऐसी मूर्खता की बाते मत करो। चलो, जाकर कही निमन्त्रण पाकर भोजन करो। १०१-१०८ अगर याग आदि कर्म नही करा सकते हो तो कही भीख मागने के लिए चले जाओ। जब कर्ण ने इस प्रकार दुर्भाषण किया तब विप्रवर अश्वत्थामा को कोप आया। यह देखकर गगासुत (भीष्म) ने कहा— "बस, आपस मे झगड़ा

मन्नवनाय सुयोधनन् केतु वि-
च्छिन्नमाय् नल्ल मणिमयमाकिय १३१
पन्नग कण्टितो मत्स्यराजात्मज !
स्वर्न्नदीपुत्रना भीष्मरङ्ङेतेटो १३२
श्वेतावदातेन पञ्चतालेन तल्-
केतुना वैडूर्यदण्डेन राजित । १३३
वृत्रारिपुत्रनित्थं पऱञ्ञोरु वा-
क्कुत्तरन् केट्टु तेळिञ्ञोरनन्तरं १३४
ञाने जयिक्कुन्नतुण्टेन्नु कर्ण्णनु
मानिच्चु चोन्नतु केट्टश्वत्थामावु १३५
वाय्पटयोट्टु कुऱय्क्केटो कर्ण्णा ! नी
वाय्पोटु पार्त्थन् वरुन्नतु कार्णेङ्किल् । १३६
कर्ण्णनु पार्त्थनु तम्मिलेतिर्त्तप्पोळ्
कर्ण्णन्पटयेल्लामोटित्तिरिच्चुते । १३७
अन्पुकोळ्ळातवरिल्ल कुरुक्कळिल्
वन्पना कर्ण्णनुमोटित्तुटङ्ङिनान् । १३८
अन्नेरं द्रोणरेतिर्त्तु किरीटियो-
टन्नेरमुण्टाय युद्धं भयङ्करं । १३९
द्रोणर् तिरिच्चु नटन्नितततुनेरं
द्रोणात्मजनश्वत्थामावु नेरिट्टान् । १४०

है, वह उनके स्वच्छ और श्वेत, पञ्चतालात्मक और वैडूर्यमय दण्ड से विभूषित ध्वज अलकृत है। अर्जुन की कही इन वातो को सुनकर उत्तर प्रसन्न हुआ। 'मै अवश्य जीत जाऊँगा' ऐसी कर्ण की गर्वयुक्त बात सुनकर अश्वत्थामा ने कहा—हे कर्ण ! अपना यह विकत्थन ज़रा कम करो ! अर्जुन तो सोत्साह आ रहा है, देख लो ! जव कर्ण और पार्थ सामने-सामने आये तो कर्ण की सेना भागने लगी। कौरवो मे ऐसा कोई नही था जिसको शर न लगा हो। घमडी कर्ण स्वय भागने लगा। १३१-१३८ तव द्रोण ने अर्जुन का सामना किया और फलस्वरूप जो युद्ध हुआ वह भयङ्कर रहा। जव द्रोण वापस चले गये तो उनके पुत्र अश्वत्थामा ने सामना किया। यह समझकर कि यह द्रोण से बडा नही है अर्जुन ने वाणवर्षा की। यह देखकर लज्जा के कारण अश्वत्थामा वापस चले गये। उनके सम्मान मे अर्जुन भी शान्त हो गये। तव कृपाचार्य ने लगातार

शोणहयरथंतन्निल् विळङ्ङीटुं
द्रोणरुटॆ केतुतन्मेलटयाळ । १२२
कार्णॆटो पॊन्मयवेदि तत्सन्निधौ
काणायतश्वत्थामावु महारथन् । १२३
द्रोणात्मजन् सिंहलागूलकेतुमान्
बाणधनुर्धरन्मारिलग्रेसरन् १२४
क्षोणियुमादित्यचन्द्ररुमुळ्ळनाळ्
प्राणविनाशमवनिल्लरिक नी । १२५
अग्रे वृषद्ध्वजंपूण्टु काणायव-
नुग्रन् वृषद्ध्वजतुल्यन् धनुर्द्धरन् । १२६
अग्र्यकुलोत्भवन्मारिलिन्नाळियि-
लग्रगण्यन् कृपाचार्यनरिक नी । १२७
इल्ल शारद्वतनुं मृति भार्ग्गव-
तुल्यनॆल्लांकॊण्टुमिल्लॊरु सशयं । १२८
स्वर्ण्णकंबूगजकक्ष्या परिष्कृत-
मुन्नतमां ध्वजं शोभिच्चुकण्टतु १२९
कर्ण्णनुटॆ रथमायतरिक नी
मिन्नल्क्कॊटिपोलॆ नीळप्रकाशितं १३०

निःशङ्क होकर निकट पहुँच गये। और उन्होने उत्तर से एक-एक ध्वज का लक्षण बतलाते हुए कहा—लाल-लाल अश्वो से युक्त रथ पर द्रोण का ध्वज विराजता है और उस का चिह्न, । ११६-१२२ देखो ! वह सोने की वेदी है और उसके पास महारथ अश्वत्थामा दिखाई दे रहे है। वे द्रोण के पुत्र है और उनका ध्वजचिह्न है सिह की पूँछ। धनुष-बाण धारण करने वालो मे वे अग्रेसर है। जब तक पृथिवी और सूर्य-चन्द्र होगे तब तक उनकी मृत्यु न होगी, जान लो। आगे जो वृषध्वज स्वीकार किये हुए दिखाई देते हैं वह वृषध्वज (शिवजी) के समान, उग्र, धनुर्धर और उच्च-कुलोद्भवो मे इस समय श्रेष्ठ कृपाचार्य है। जान लो। शारद्वत की भी मृत्यु न होगी जो सभी बातो मे निस्सन्देह भार्गव के तुल्य है। जो स्वर्णचित्रित गज प्रतिमा से अलंकृत उन्नत और शोभायुक्त ध्वज दिखाई दे रहा है वह कर्ण का रथ है। वह बिजली की रेखा के समान दीर्घ और चमकनेवाला है। १२३-१३० राजा सुयोधन का ध्वज भी स्पष्ट है, वह एक अच्छे मणिमय सर्प के रूप मे है, हे मत्स्यराज के पुत्र ! उसको देखा ? स्वर्नदी (गगा) के पुत्र भीष्म का रथ उस तरफ

वन्पु परञ्ञोरु कर्ण्णनेङ्ङोनिप्पो-
ळुन्पर्कोन्पुत्रन् वरुन्नतु कण्टीले ? १५२
इत्थमधिक्षेपवाक्कु केट्टंगेश-
नेत्रयु कोपिच्चटुत्तु युद्ध चेय्तान् । १५३
वृत्रारिपुत्रनुं मित्रपुत्रन्तानु-
मस्त्रङ्ङळत्यर्थमुग्रं प्रयोगिच्चार् । १५४
रण्टामतु कर्ण्णनर्ज्जुननोटेटु
मण्डिप्पटयुमाय् कूवीटु सत्वरं । १५५
द्रोणरुं द्रोणियु कर्ण्णनुं भीष्मरु
मानियां नागद्ध्वजनुमनुजनु १५६
शारद्वतनु पेरुपटयुं तोट-
नेरत्तु पिन्नेयु वेगेन फल्गुनन् १५७
शस्त्रङ्ङळ् तूकियटुत्तितु पिन्नाले
वित्रस्तराय् मरुञ्ञीटिनारेवरुं । १५८
देवदत्ताख्यशखारवघोपवु
देवराजात्मजज्यानादघोपवु १५९
वानरवीरहुकारप्रघोषवु
धेनूसमूहपलायनघोषवु १६०
केट्टु भयप्पेट्टोरोरो वळिक्कव-
रोट्टं तुटङ्ङियनेरं परवशाल् १६१

कर्ण अव कहाँ है ? इन्द्रपुत्र को आते हुए उसने नही देखा ? अधिक्षेप की इस वात को सुनकर अङ्गेश (कर्ण) क्रुद्ध होकर निकट गया और युद्ध करने लगा । इन्द्रपुत्र और सूर्यपुत्र (कर्ण) ने उग्र रूप से अस्त्रो का प्रयोग किया । १४६-१५४ दुवारा अर्जुन का सामना करके कर्ण अपनी सेना के साथ तुरन्त भागा । द्रोण, द्रोणि, कर्ण, भीष्म, मानी नागध्वज (दुर्योधन), उसका भाई, शारद्वत, सहित सारी सेना जव हार गई तव अर्जुन ने शस्त्रो का प्रयोग करते हुए उनका पीछा किया जिसके कारण सभी लोग भयभीत होकर भाग गये । देवदत्त नामक शख का घोप, इन्द्रपुत्र के धनुष की ज्या (डोरी) का नाद, वानरवीर के हुंकार का प्रघोप, गायो के भागने का शव्द, यह सव सुनकर कौरव डर गये और लाचार होकर इधर-उधर भागने लगे । १५५-१६२ मोहनास्त्र के कारण सभी लोग भूमि पर गिर पड़े और वेहोश हो गये । सुलानेवाले अस्त्र की शक्ति से सव सो गये । तव

द्रोणरेक्काळ् वलुतल्लेन्नु जिष्णुवुं
बाणगणं वरिषिच्चानतुकण्टु १४१
नाणिच्चु वाङ्ङिनानश्वत्थामावुतान्
मानिच्चणञ्ञु पिन्नेयुमर्ज्जुनन् । १४२
अप्पोळ् कृपरटुत्तेय्तु तेरुतेरे-
क्कॊल्पुळळ विल्लेय्तु फल्गुनन् खण्डिच्चान् । १४३
नोक्किय नोक्किय दिक्किलेल्लाटवु-
माक्कमोटर्ज्जुनन्मारेन्नु कौरवर् १४४
ओटित्तुटङ्ङिनार् पार्त्थशरङ्ङळुं
कूटत्तुटरत्तुटरेयटुक्कुन्नु १४५
दुश्शासनादि शकुनियु तोटितु
दुश्शकुनङ्ङळ् पलतरं काणायि । १४६
गगातनयनुं कुन्तीतनयनुं
तङ्ङळिलुण्टाय शस्त्रप्रयोगङ्ङळ् १४७
इङ्ङनेयेन्नु परञ्ञुकूटायिनि-
क्कङ्ङनेयुण्टाय युद्धकोलाहल । १४८
कण्टवरोक्क प्रशसिच्चु निल्क्कुन्पोळ्
कण्टितु भीष्मरोळिक्कुन्नतु मेल्ले । १४९
आर्त्तणञ्ञान् दुरियोधनन् पार्त्थनु
कूर्त्तशरमेय्तु कूवीटु मण्डिच्चान् । १५०
निश्श्वासमुळ्क्कोण्टोळिच्चितु कौरव-
रश्वत्थामावतुनेरमुरच्चेय्तु । १५१

वाण छोड़ा और अर्जुन ने एक दृढ धनुप से उनको ध्वस्त कर दिया। जिस दिशा मे भी देखा वहाँ अर्जुन ही अर्जुन को देखकर कौरव भागने लगे और अर्जुन के शर उनका निरन्तर पीछा करते रहे। १३९-१४५ दुश्शासन आदि और शकुनि सभी हार गये और तरह तरह के दुश्शकुन दिखाई देने लगे। गंगापुत्र (भीष्म) और कुन्तीपुत्र मे परस्पर जो शस्त्र प्रयोग हुआ, वह कैसा रहा यह कहने की सामर्थ्य मुझ मे नही। वह युद्धकोलाहल इस प्रकार का था। जब सब दर्शक लोग प्रशसा करते हुए खडे थे तब उन्होने देखा कि भीष्म वापस जा रहे है। दुर्योधन भी पीडित होकर शान्त हुआ और अर्जुन ने एक तेज बाण का प्रयोग करके उसे भगाया। दीर्घ निश्वास लेते हुए कौरव चले गये। तव अश्वत्थामा ने कहा—गर्व की बाते करनेवाला

मच्चरितं प्रकाशिप्पिक्करुतेन्नु-
मर्ज्जुननुत्तरनोटु चोल्लीटिनान् । १७२
आयोधने जयिच्चोरु धनञ्जय-
नायुधंकोण्टे वच्चू शमीकोटरे । १७३
उत्तरन् कौरवन्मारे जयिच्चिते-
न्नुत्तरद्गूतन्मार् चेन्नु चोल्लीटिनार् १७४
मत्स्यनुं प्रीतनाय् राज्यमलङ्कारि
च्चुत्सव घोषिक्कयेन्नु नियोगिच्चान् । १७५
अक्षङ्ङळ् कोण्टुवरिक सैरन्ध्रि नी
वेय्क्कणमाशु चूतेन्नितु मत्स्यनु १७६
कङ्कनोटेवं पऱञ्ञोरु नेरत्तु
शङ्कारहितं पऱञ्ञितु धर्म्मजन् । १७७
हृष्टनायुळ्ळवनोटु कितवनां
दुष्टनोटु कूटि नन्नल्ल देवनं । १७८
अेन्नु केळ्प्पुण्टु ञानेङ्किलुमिन्निप्पोळ्
मन्नवा ! वेणमेन्नाकिल् ञानो पोरां । १७९
चूतिन्नु दोषमोळ्ळिञ्ञिल्ल निर्ण्णय
मेदिनीपालका ! केट्टतिल्ले भवान् ? १८०
साधुवायुळ्ळ धर्म्मात्मजन्माविनु
चूतिनालापत्तु वन्नितु मन्नवा ! १८१
इत्थं पऱञ्ञतु केट्टु विराटनुं
बद्धमोदं नामोरुवर वय्क्केन्नान् । १८२

मत्स्यो के राजा ने प्रसन्न होकर आज्ञा दी कि देश अलङ्कृत किया जाय और उत्सव मनाया जाय । और सैरन्ध्री से कहा—'चलो, जाकर अक्षो (पासो) को लाओ । जुआ खेला जाय । १७०-१७६ जब कङ्क से यह कहा गया तब युधिष्ठिर ने निश्शङ्क कहा— "सुना जाता है कि जो आनन्द मे मग्न हो अथवा दुष्ट या उन्मत्त हो उससे जुआ न खेलना चाहिये । परन्तु हे राजन् ! अगर आप चाहते हो तो मै आप से खेलूंगा । जुआ तो निस्सन्देह दोषहीन नही है । हे भूपाल ! आपने क्या नही सुना है कि बेचारे सीधे युधिष्ठिर को जुए के ही कारण विपत्ति प्राप्त हुई है" । यह बात सुनकर विराट ने प्रमोद के साथ कहा— "अच्छा एक हाथ हो जाय" । जब मत्स्यो के राजा और युधिष्ठिर समत्सर (अभिमानपूर्वक) खेल रहे थे तब

मोहनास्त्रं कौण्टु वीणितु भूमियिल्
मोहिच्चु बुद्धिमऴन्नितेल्लावरुं । १६२
सुप्त्यस्त्रशक्त्या कुरुवरन्मारेल्लां
सुप्तरायवन्नू किरीटियुमन्नेरं १६३
उष्णीषवस्त्राभरणादिकळेल्ला
तृष्णतीर्प्पान् पुरस्त्रीजनङ्ङळ्क्किद १६४
कृत्स्नं गुरूणामोऴिच्चवऴिच्चीटेन्नु
कृष्णसखियाय जिष्णुजन् जिष्णुवु १६५
उत्तरनोटु चोन्नानतुकेट्टवन्
वस्त्रङ्ङळोक्कयऴिच्चुकोण्टीटिनान् । १६६
आर्त्तु विजयन् जयिच्चु पशुक्कळे-
च्चेर्त्तु तेळिच्चुकोण्टिङ्ङु पोन्नीटिनान् । १६७
पार्थनीरण्टु शरङ्ङळेक्कोण्टभि-
वाद्यवुंचेय्तु गुरुभूतन्मारक्केल्लां । १६८
उत्तरन्तन्नोटु चोल्लिनानर्ज्जुनन्
सत्वरं नी पुरं पुक्करियिक्कणं १६९
युद्धे जयिच्चु पशुक्कळे वीण्टुकों-
ण्टत्र वन्नेनहमेन्नुरचेय्क नी । १७०
ञानपराह्ने वरुवन् पुरत्तिङ्कल्
मानमोटे नी पिताविनेक्काण्क पोय् । १७१

अर्जुन ने, जो कृष्ण के सखा थे, जिष्णु के पुत्र थे और स्वय जिष्णु थे, उत्तर से कहा "गुरुओ के छोडकर इन सब के उष्णीष (पगडी), वस्त्र, आभूषण आदि नगरनारियो की तृष्णा शान्त करने के लिए उतार लो"। यह सुनकर उत्तर ने सभी के वस्त्रो को उतार लिया। जीते हुए अर्जुन जयघोष करके सभी गायो को इकट्ठा करके भगा लाया। तदनन्तर अर्जुन ने अपने सभी गुरुओ को दो-दो बाणो से अभिवादन किया। और उत्तर से कहा—"तुम तुरन्त नगर मे जाकर सब वृत्तान्त कहो। १६३-१६९ कि 'मैंने युद्ध मे विजय पाकर मै गायो को वापस लाया'। मैं दोपहर को नगर लौटूंगा। तुम सम्मान के साथ पिता जी का दर्शन करो"। अर्जुन ने उत्तर से यह भी कहा— "मेरा चरित्र प्रकाशित न करो"। युद्ध मे विजयी अर्जुन ने आयुधो को फिर शमीवृक्ष के अन्दर छिपा दिया। उत्तर के दूतों ने दौड़कर घोषित कर दिया कि उत्तर ने कौरवो को परास्त कर दिया।

उत्तरास्वयवरं

उत्तरन्‌तन्टे भागिनियाय्‌ मेविनो-
रुत्तरतन्नेक्किरीटिक्कु नल्किनान्‌ । १
पुत्रभार्यार्थं परिग्रहिच्चानवन्‌
मित्थ्यापवादमुण्टामेन्न शङ्कयाल्‌ । २
ॲन्तॆल्लां मुन्ने पठिप्पिच्चितेन्नतो
चिन्तिक्किल्‌ मट्टारुमेयङ्ङोलल्लो । ३
ॲन्नु महालोकर्‌ पिन्नॆप्परञ्ञीटु-
मॆन्नॆयॆन्नोर्त्तु भयंपूण्टु फल्गुनन्‌ । ४
नल्लनेरत्तविटुन्नु पुरप्पॆट्टु
कल्याणमोटुपप्लाव्यनगरत्तिल्‌ ५
चॆन्निरुन्नात्मवन्धुक्कळॆप्पाण्डवर्‌
पिन्ने वरुत्ति विवाहत्तिनक्कालं । ६
कृष्णन्तिरुवटियादियायुळ्ळोरु-
वृष्णिकळोक्कवे वन्नारतुकालं ७
भद्रयायोरु सुभद्रयुमाशु सौ-
भद्रनायुळ्ळोरभिमन्युतन्नोटु ८
वन्नितु पाञ्चालनोटु धृष्टद्युम्न-
नॆन्निवरोक्कवे वन्नोरनन्तरं ९
उत्तमस्त्रीकुलोत्तंसरत्नांगिया-
मुत्तरतन्नॆयभिमन्यु कैक्कॊण्टान्‌ । १०

उत्तरास्वयंवर

उत्तर ने अपनी वहिन उत्तरा को अर्जुन को प्रदान किया। इस शङ्का से कि व्यर्थ की वदनामी न हो जाय, अपने पुत्र की पत्नी के रूप में अर्जुन ने उसे स्वीकार किया।[1] "पहले ही क्या-क्या सिखाया है? सोचो तो किसी को कुछ भी नही मालूम है"। इस प्रकार लोग कहने लगेंगे—ऐसा सोचकर फल्गुन को भय हुआ। शुभ समय पर वहाँ से सप्रमोद चलकर उपप्लाव्य नगर पहुँचे और वहाँ रहते हुए अपने वन्धुओ को विवाह के उपलक्ष में पाण्डवो ने वुलवाया। उस समय पूज्य कृष्ण से लेकर सभी

१ अर्जुन तो वृहन्नला के रूप मे नाटच और संगीत सिखाने के लिए नियुक्त किया गया था।

मत्स्यराजावुं युधिष्ठिरन् तन्नोटु
मत्सरमुळ्ळकॊण्टु चूतुपॊरुनेरं १८३
वत्सनामुत्तरन् वन्नितॆन्नॆत्रयु-
मुत्सवं पूण्टु विराटन् परञ्ञप्पोळ् १८४
मन्नवन्तन्नोटु मन्दस्मितं पूण्टु
धन्यनां धर्म्मजन् मॆल्लवे चॊल्लिनान् । १८५
उत्तरनल्ल जयिच्चतु निश्चय-
मुत्तमयाय बृहन्नळयाकिलां । १८६
अन्यस्तुति केट्टु कोपिच्चु मत्स्यनु-
मॊन्नॆरिञ्ञानॊरु चूतुकॊण्टन्नेर १८७
नॆटिमेल् कॊण्टिट्टु धर्म्मात्मजन् तनिक्कि-
टिटु चोर वरुन्नतु पाञ्चालि १८८
उत्तरीयत्तिलतेटुकॊण्टीटिनाळ्
मत्स्यराजाविन् मरणं चॆरुप्पानाय् । १८९
संन्यासितन्नुटॆ चोर वीळुन्निट-
मॆन्नुं मुटिञ्ञिटुमॆन्नु चॊल्लिद्रुतं । १९०
उत्तरन् वन्नु नमस्करिच्चीटिना-
नुत्तमन्मारां गुरुजनपादङ्ङळ् १९१
पाण्डवन्मारॆयरिञ्ञितॆल्लावरुं
गाण्डीवधन्वावुतन्नुटॆ धैर्यवुं । १९२

पुत्र उत्तर आया और सोत्साह सब वृत्तान्त सुनाने लगा। १७७-१८४ तब युधिष्ठिर ने मुस्कराकर राजा से धीरे-धीरे कहा— उत्तर ने नही जीता है, इसमे कोई सन्देह नही। बृहन्नळा ने ही जीता होगा! औरो की स्तुति सुनकर मत्स्य क्रुद्ध हुआ और उसने युधिष्ठिर पर एक अक्ष फेका। वह उनके माथे पर लगा और रक्त बहने लगा। यह देखकर पाञ्चाली ने अपने उत्तरीय से उसे पोछा ताकि मत्स्यो के राजा की मृत्यु न हो। और तुरन्त कहा भी कि जहाँ सन्यासी का रक्त गिरता है वह स्थान सदा के लिए नष्ट हो जाता है। तब उत्तर आया और युधिष्ठिर और अन्य गुरुजनो के चरणो पर गिर पडा। सब लोगो ने पाण्डवो को, और अर्जुन की वीरता को भी जान लिया। १८५-१९२

तानु जयद्रथनुतानुं त्रिगर्त्तनुं
ज्योतिष्मतिपतियां भगदत्तनु
मातुलनाय शकुनि गान्धारनु २१
मटुं महारथन्मारामवरॆल्ला-
मुट वन्धुक्कळ् सुयोधननाकयाल् २२
युद्ध तुटन्नॆल् जयिप्पान् पणियुण्टु
चित्तत्तिलेट विचारिक्कयुं वेण । २३
द्रोणरामाचार्यर् कैयिल् विल्लुळ्ळनाळ्
प्राणभयमवनिल्लॆन्नरियणं । २४
अच्छना शन्तनुतन्टॆ वरत्तिनाल्
स्वच्छन्दमृत्युवायुळ्ळ पितामहन् २५
विश्वनाश वरुनाळुं मरणमि-
ल्लश्वत्थामाविनस्त्रज्ञोत्तमनवन् । २६
मृत्युभय कृपाचार्यनॊरुनाळु-
मॆत्तुकयिल्लवन् ब्रह्मज्ञसत्तमन् २७
मित्रतनयनु मृत्युभयमिल्ल
वृत्रारि नल्किय शक्तियुण्टाकयाल् । २८
इङ्ङनॆयुळ्ळ दिव्यन्मारॆ नामिप्पो-
ळॆङ्ङनॆ निग्रहिक्कुन्नु निरूपिच्चाल् । २९
मल्लारियाकिय माधवने गति-
युळ्ळु नमुक्कॊरु नल्लतॆन्नोर्त्तुळ्ळिल् ३०

आपस मे सलाह करे। द्रोण, भीष्म, शारद्वत (कृपाचार्य), द्रौणि (अश्वत्थामा), कर्ण, सोमदत्त का पुत्र, जयद्रथ, त्रिगर्त, ज्योतिष्मती का राजा भगदत्त, मामा और गान्धार का राजा शकुनि और अन्य महारथ सुयोधन के निकट के वन्धु होने के कारण, अगर युद्ध छिड़ जाय तो हमको जीतने मे कठिनाई होगी। इस वात को हमे ध्यान मे रखना होगा। १६-२३ जब तक आचार्य द्रोण के हाथ मे धनुष है तब तक उनको कोई प्राणभय नही है। यह हम जान ले। पितामह भीष्म तो अपने पिता शन्तनु के दिये वर के कारण स्वच्छन्दमृत्यु (अपनी इच्छा के अनुसार मरनेवाले) है सारे जगत् का नाश होने तक अश्वत्थामा का मरण न होगा, वह अस्त्रज्ञो मे श्रेष्ठ है। मृत्युभय तो कृपाचार्य को कभी स्पर्श भी न करेगा क्योकि वे ब्रह्मज्ञो मे प्रमुख है और सत्तम है। कर्ण भी मृत्युभय से विहीन है क्योकि उसके पास इन्द्र की दी हुई शक्ति है। हम

कल्याणवुं कळिञ्ञेल्लावरुं-
कूटियुल्लासमोटुपप्लाव्यनगरत्तिल् ११
अल्ललुतीर्न्नज्ञातवासवुं चेय्तु सल्-
सल्लापमोटु सखिच्चितु पाण्डवर् । १२
मित्रसम्पत्तियुमर्थसम्पत्तियुं
पुत्रसम्पत्तियुमस्त्रसम्पत्तियु । १३
वर्द्धिच्चु वर्द्धिच्चनुदिवस धर्म्म-
पुत्रादियायुळ्ळ पाण्डुतनयन्मार् । १४
अर्त्थिक्कवेण समयेन दायमा-
मर्द्धराज्य धृतराष्ट्रजनोटु नां १५
अन्नाल् नमुक्कु तरिकयुमिल्लवन्
पिन्ने प्रवृत्तियेन्तेन्नु चिन्तिक्कण । १६
आपत्तिनास्पदमायतविवेक-
मेवर्क्कुमेन्नालिनि नामितुकालं १७
आवोळमुळ्ळल् विचारिक्कयुं वेण
श्रीवासुदेवन्तिरुवटितन्नोटुं । १८
गोविन्दनेन्तु तिरुमनस्सेन्नरि-
ञ्ञेवरुमोत्तु विचारिक्कयुं वेण । १९
द्रोणरुं भीष्मरु शारद्वतन्तानु
द्रौणियुं कर्ण्णनुं सोमदत्तात्मजन् २०

वृष्णि वहाँ पधारे । १-७ सुभागिनी सुभद्रा तो तुरन्त ही आयुष्मान् अभिमन्यु के साथ आयी, और पाञ्चाल के राजा के साथ धृष्टद्युम्न भी आया । इस प्रकार सब के आने के बाद अभिमन्यु ने उत्तम स्त्रीकुलो के आभूषण के रत्न उत्तरा का पाणिग्रहण किया । विवाह के बाद सब लोग सोल्लास सभी दु.खों को दूर करके आपस मे सप्रमोद वार्तालाप करते हुए सुख से उपप्लाव्य नगर मे अज्ञातवास किया। उनकी मित्रसम्पत्ति, अर्थसम्पत्ति, पुत्रसम्पत्ति और अस्त्रसम्पत्ति, प्रतिदिन बढती गयी । तब युधिष्ठिर आदि पाण्डुपुत्रो ने विचार किया । "अब हम को धृतराष्ट्र के पुत्र (दुर्योधन) से अपना राज्य का आधा हिस्सा माँगना चाहिये । ८-१५ किन्तु वह देगा नही । तब हमको सोचना होगा कि आगे क्या किया जाय । अविवेक ही सब की विपत्ति का कारण होता है । इस लिए हमको चाहिये कि हम अब जहाँ तक हो सके इस पर विचार करे, और पूज्य वासुदेवजी के साथ भी गोविन्दजी का इस पर क्या विचार है यह जानने के बाद हम

कालुत्तळिरिणयुळ्ळिलच्चेर्त्तुकोंण्टिरिप्पव-
क्कार्त्तिकळखिलवु तीर्त्तु मगल नल्कि ५
कात्तुकोंण्टविरत कालुत्तळिरिणयोटे
चेर्त्तुकोळ्ळुन्न विष्णुमूर्त्तितान् मनुष्यनाय् ६
धात्रितन् भारं तीर्प्पान् धात्रियिल् पिरन्नवन्
नेत्रगोचरनायिट्टास्थया पाण्डवन्मार् ७
पार्त्तुनिन्नेतिरेटु पाद्यवु नल्किप्पिन्ने-
ग्गात्रङ्ङळ्तोरु नन्नाय् चेर्त्तु सन्ताप तीर्त्तु । ८
मार्त्ताण्डन्तन्नेक्कण्ट पद्मङ्ङळेन्नपोले
पार्थन्मारुटे मुखमेटवुं तेळिञ्ञुते । ९
श्रोत्रवु कुळुर्त्तितङ्ङन्योन्यसल्लापत्ताल्
वास्तवमायिट्टुळ्ळ वार्त्तयु केट्टशेप १०
पार्थन्मार् पाञ्चालनु मत्स्यनु मुकुन्दनु
पेर्त्तुमङ्ङोरो कार्य पार्त्तुपार्त्तेल्लारुमा- ११
योर्त्तु कल्पिच्चारिनिप्पार्त्तिरियातेकण्टु
पार्त्तलतन्निल् नम्मेक्कूरुळ्ळोररियण १२
वन्धुभूपालन्मारोटवस्थयरियिप्पान्
कुन्तीनन्दनन् दूतन्मारेयुमयच्चुते । १३
सन्ततं चिन्तिप्पवर् सन्तापं कळयुन्न
वन्धुवां कृष्णन्तानु द्वारकय्क्केळुन्नळ्ळि । १४

करते हुए अपने चरणयुगलो के द्वारा सबका उद्धार करनेवाले विष्णुमूर्ति ही मनुष्य के रूप मे पृथिवी का भार हलका करने के लिए पृथिवी पर जन्म लेनेवाले कृष्ण प्रत्यक्ष हुए और पाण्डवो ने आगे चलकर उनका स्वागत किया । १-७ और पाद्यादि भेट करने के वाद उनका आलिगन किया और प्रसन्न हुए । उन सबके मुख इस प्रकार खिल उठे जैसे सूर्य को देखकर पद्म विकसित होते हैं । आपस मे वार्तालाप होने के वाद उनके कानो को भी प्रसन्नता प्राप्त हुई । सभी वृत्तान्त सुनने के वाद पाण्डव, पाञ्चाल, मत्स्य और मुकुन्द विविध मामलो पर विचार करने लगे और अन्त मे मिलकर निर्णय किया कि अव विना विलम्व के हमारे सभी वन्धु हमको जान ले । तव युधिष्ठिर ने स्थिति वतलाने के लिए अपने वन्धु भूपालो के पास दूत भेजे । निरन्तर ध्यान करनेवालो का दुःख दूर करनेवाले वन्धु श्रीकृष्ण भी द्वारका सिधारे । ८-१४

अल्ललकन्नु तॊळिञ्ञोर पाण्डवर्
कल्याणमुळ्ळकॊण्टिरुन्नारतुकालं । ३१
नल्ल कथयितु मेलिले चॊल्लवने-
न्नुल्लासमोटिरुन्नाळ् पैङ्किळिमकळ् । ३२

विराट समाप्त

सोचें, इस प्रकार के दिव्य पुरुषों का हम कैसे निग्रह करें ?" 'मल्ल के शत्रु माधव ही हमारी एकमात्र सद्गति हैं', यह सोचकर दुःख दूर करके प्रसन्न होकर पाण्डव उन दिनों सुख से रहे । "यह एक अच्छी कथा है । आगे भी कहूँगी" । २४-३२ शुकी ने सोल्लास ऐसा कहा ।

विराटपर्व समाप्त

उद्योगं

ओरोरो कथकळ् नी चॊन्नतु केळ्क्कुन्नोरु-
मारोमल्क्किळिप्पैण्णे ! पारमुण्टानन्दमो १
वीरन्माराय पाण्डुजातन्मारेन्तु पिन्ने-
द्धीरतयोटु चेय्ततॆन्तॆक्क नी परयेण । २
ओक्कवे परवतिनीट्टमे कालं पोरा
सल्कथयल्लोयेन्तालोट्टॊट्टु चॊल्लीटुवन् । ३
धर्म्मजादिकळुटे वार्त्तकेट्टेळुन्नळ्ळि
निर्म्मलन् निखिललोकैकनायकन् कृष्णन् । ४

उद्योगपर्व

हे अतिप्रिय शुकि ! तुम्हारी कही विविध कथाओं को सुनते-सुनते बड़ा आनन्द प्राप्त होता है । वीर पाण्डवों ने तदनन्तर धैर्य के साथ क्या-क्या किया, वह सब सुना दो । "पूरी कथा सुनाने के लिये समय कम है । कथा तो बहुत अच्छी है । इस लिए थोड़ा-थोड़ा कहूँगी" । युधिष्ठिर आदियों का वृत्तान्त सुनकर निर्मल मन वाले और समस्त लोकों के एकमात्र नायक कृष्णजी पधारे । जो उनके चरणयुगल का ध्यान करते रहते हैं उनके दुःखों को दूर करके उनको मंगल देनेवाले और निरन्तर उनकी रक्षा

राजसिंहासनवु तलय्क्कल् वय्पिच्चुटन्
व्याजनिद्रयुं पूण्टु किटन्नु भगवानु । १०
अन्नेर नागद्ध्वजन् वन्नु चोदिच्चानल्लो
निन्नोरु कृष्णभृत्यन्मारोटु कनिवोटे । ११
माधवनेविटत्तु चोल्लुविनेन्ननेरं
नाथनुं पळ्ळिक्कुरुप्पेन्नवररचेय्तार् । १२
धार्त्तराष्ट्रनुमहो निद्रवेलयो कृष्ण-
नोर्त्तिरुन्नितु मुन्पे ञानितेन्नुरचेय्तान् । १३
ऎङ्किलु नमुक्कङ्ङु चेल्लरुतेन्निल्लल्लो
शङ्कितनल्लल्लो ञानेन्नवनकं पुक्कान् । १४
ञानत्रे मुन्पिल् वन्नतेन्नतु वन्नुवल्लो
नूनमेन्नोटुकूटेप्पोरिकेन्नते वरु । १५
निद्रय्क्कु भगं वरुत्तीटरुतेन्नुकण्टु
भद्रमां सिंहासनं पुक्कितु सुयोधनन् । १६
अप्पोळुतमरेन्द्रपुत्रनु वन्नानल्लो
विभ्रमत्तोटु चोदिच्चीटिनान् धनञ्जयन् । १७
उळ्प्पूविल् विळङ्ङुमेन् चित्पुमानेङ्ङु चोल्लि-
नुत्पलेक्षणभृत्यन्मारवनोटु चोन्नार् । १८
लोकनायकन् पळ्ळिक्कुरुप्पुकोळ्ळुन्नितु
नागकेतनन् पळ्ळियरयिलुण्टुतानुं । १९

इस विचार से भगवान् अपने शयनगृह चले गये । और राजसिंहासन को सिरहाने रखवाकर व्याजनिद्रा (बहाने की नींद) मे लेट गये । उसी समय नागध्वज (दुर्योधन) पहुँचा और उसने कृष्ण के भृत्यो से प्रेम से पूँछा—"माधव कहाँ है, बतलाइये" । उन्होने उत्तर दिया— "नाथ निद्रा मे हैं" । सुयोधन ने कहा— "क्या सोना ही कृष्ण का काम है ? मुझे यह पहले ही से मालूम था । मेरे वहाँ जाने मे तो कोई आपत्ति नही है, मैं तो शङ्कास्पद व्यक्ति नही हूँ ?" यह कहकर वह अन्दर गया, "मै ही पहले आया, इतना तो सिद्ध हो जायगा और उनको मेरे ही साथ जाना पड़ेगा" । ८-१५ ताकि निद्राभंग न हो, सुयोधन भद्र सिंहासन पर बैठ गया । उसी समय अमरेन्द्र (इन्द्र) के पुत्र अर्जुन पधारे और घबड़ाते हुए उन्होने पूँछा— "मेरे मन मे विराजमान चित्पुरुष कहाँ है ?" तब कमललोचन कृष्ण के भृत्यो ने उत्तर दिया— "लोकनायक निद्रा मे हैं और नागकेतन (सुयोधन) शयनगृह मे ही हैं" । यह सुनकर पार्थ ने शयनगृह

भगवद्वरण

मार्त्ताण्डात्मजसुतन् तन्पिमारोट्टुकूटि-
प्पेर्त्तु चिन्तिच्चनेर तोन्नीतङ्ङोरु कार्य । १
धार्त्तराष्ट्रन्मारोटु पोर् तुटङ्ङुकिल् कृष्ण-
मूर्त्तियें नमुक्कोरु बन्धुवाय् वरिक्केण । २
धार्त्तराष्ट्रनुमोर्त्तानक्कालमिनिक्किप्पोळ्
पार्त्थन्मारोटु युद्ध वेण्टुकिल् कृष्णनृतन्नें- ३
प्पार्त्तिरियातें मुन्पे बन्धुवाय्क्कोळ्कवेण ।
पार्त्थिवेन्द्रन्मारोर्त्ततरिञ्ञु कृष्णन् मुन्पे ४
धार्त्तराष्ट्रनु वरुं पार्त्थनुं वरुमिप्पोळ्
आस्थया पटय्क्कोन्नेक्कोण्टुपोवतिनायि । ५
अर्ज्जुनन् वरुं मुन्पे वन्नीटुं सुयोधन-
निज्जनत्तिनु कूटेप्पोकेन्नु वरुमल्लो । ६
आचार मुन्पिल् क्षणिक्कुन्नवरोटु कूटि-
व्भोजनत्तिनुं प्रथनत्तिनुमेन्नुण्टल्लो । ७
भक्तन्मारुटे मरुपुरत्तु पोकेन्नतु-
मेल्लयुं मटियाकुमतिनुण्टुपायवु । ८
मुन्पिले सुयोधनन् कण्टु चोल्लरुतेन्ना-
युन्पर्कोन् निद्रागृहं प्रापिच्चानतुनेर । ९

भगवद्वरण

जब युधिष्ठिर ने अपने भाइयो के साथ फिर विचार किया तब उनको एक कार्य सूझा। अगर धार्तराष्ट्रो से युद्ध करना होगा तो हमे कृष्ण को अपना बन्धु बनाना है। दुर्योधन ने भी उस समय सोचा—'अगर मुझे पाण्डवो से युद्ध करना होगा तो तुरन्त पहले ही जाकर कृष्ण को अपना बन्धु बनाना है'। इन दोनो भूपालो का विचार कृष्ण ने पहले ही जान लिया। अब मुझे अपनी सेना मे शामिल करने के लिए दुर्योधन आयेगा और अर्जुन भी आयेगा। अर्जुन से पहले ही सुयोधन आजायगा और मुझे उसके साथ जाना पड़ेगा। आचार तो यही है कि भोजन मे और युद्ध मे जो पहले निमन्त्रण देता है उसी के साथ जाना चाहिये। १-७ अपने भक्तों के विरुद्ध पक्ष मे जाने मे बहुत अनिच्छा प्रतीत होगी। अव एक उपाय है। "यह न होना चाहिये कि सुयोधन पहले ही दर्शन करके बुला ले"।

ऒन्नुमेयऱियाते चॊन्नतेन्तॆन्नु भावि-
च्चन्नेरं धृतराष्ट्रनन्दननुरचॆय्तान् । ३०
वन्नतु पटय्क्कु पोरेणमॆन्नतिनिप्पो-
ळॆन्नोटुकूटिप्पोन्ने मतियावितु ञानो ३१
मुन्ने वन्निरिक्कुन्नतॆन्नतु केट्टु नाथन्
मुन्न ञान् कण्टु पार्थन्तन्नॆयॆन्नरियेण । ३२
मुन्ने वन्नितु भवानॆन्नतु नूनमल्लो
ऎन्नतुकॊण्टु भेदमिल्लॆनिक्करिङ्गालुं । ३३
मन्नवन्मारे ! ञानुण्टॊन्नु चॊल्लुन्नतिप्पो-
ळॆन्नतु केट्टु चिन्तिच्चॊत्ततु चॆय्क निङ्ङळ् । ३४
मत्सरादिकळिनिक्किल्लॆन्नु सिद्धमल्लो
मत्समन्मारां नारायणगोपालन्मारु ३५
सेनानिसमनाय सेनानि भोजन्तानु
सेनयुमॊरुत्तनु ञानेकनॊरुत्तनुं ३६
ऎल्लारुमॊक्कु निङ्ङळॆनिक्कु नृपन्मारे !
नल्लतुवरुवाने तालपरियवुमुळ्ळु । ३७
वल्लवरोटुं कूटिप्पोरामॆन्निरिक्किलु
वल्लभमोटु युद्ध चॆय्क ञानिल्लतानु । ३८
चॊल्लुवानसख्यमायुळ्ळॊरु पटयुमु-
ण्टॆल्लारुं पोरुमवरॊरुत्तरोटुं कूटि । ३९

ही आप साथ आये होगे" । २३-२९ तब मानो उसने कृष्ण की कही कुछ भी न समझी हो इस प्रकार सुयोधन ने कहा, "मैं इस लिए आया हूँ कि आप मेरी सेना मे शामिल हो और मेरे साथ अवश्य चले । मैं ही पहले आया हूँ" । यह सुनकर नाथ वोले— "जान लीजिए कि मैने अर्जुन को पहले देखा । आप अवश्य पहले आये होगे परन्तु इससे कोई अन्तर नही पडता है । हे भूपाल ! मैं एक वात कहूँगा । उस पर आप दोनो विचार करके जैसा उचित समझे करे । यह वात सिद्ध है कि मेरा किसी के प्रति मत्सर आदि नही है । मेरे तुल्य नारायण और गोपाल, सेनानी (कार्तिकेय) के तुल्य सेनापति भोज और सेना, एक के पक्ष मे, और मै अकेला दूसरे के पक्ष मे । हे भूपाल ! आप सब मेरे लिए समान है । और मेरी इच्छा यही है कि सब ठीक हो जाय ! । ३०-३७ मैं किसी के भी साथ जाऊँगा परन्तु मैं युद्ध तो नही करूँगा । मेरी जो असख्य सेना है वह सारी सेना,

ऄन्नतु केट्टु पळ्ळियऱयिल् पुक्कान् पार्त्थन्
वन्दिच्चु तृक्काक्कल् निन्नीटिनान् भक्तियोटे । २०
जृंभितभावत्तोटे मॆल्लवेयुणर्न्नीट्टु
जंभारिपुत्रन्मुखत्तुटने तृक्कण्पार्त्तु । २१
वन्नितो भवानहो मुन्नमे ञानो निद्र
वन्नतु कॊण्टु बोध मऱन्नेनॆन्नु नाथन् । २२
मन्दहासवु चॆय्तु मन्दमायरुळ्चॆय्तु
इन्द्रनन्दनन्तानुं कण्णुकॊण्टुणर्त्तिनान् । २३
ज्येष्ठनुमनुजनुं कूटियुळ्ळतुनेर
ज्येष्ठनोटल्लो मुन्पिलरुळ्चॆय्येण्टू नूनं । २४
उपधानत्तिन्मेल् तन् मुळ्कैयून्नित्तिरि-
ञ्ञुपपर्यङ्कं वाळु नृपनोटरुळ् चॆय्तान् । २५
कष्टं ! ञानुऱङ्ङियालेतुमॊन्नऱियुन्नी-
लॊट्टु मुन्नमे भवान् वन्नितो शिवशिव ! २६
इष्टन्मारायुळ्ळवर्क्कुणर्त्तामॆन्नुण्टल्लो
ऒट्टुमाकाञ्ञु भवानिळक्कातिरुन्नतुं । २७
अत्रयुमळकिनोटॊक्क वन्नतुमिनि-
स्निग्धन्माराय निङ्ङळ् तम्मिल् कैपिटिक्कणं । २८
अन्योन्यमाश्लेषं चॆय्तॊन्निच्चु वसिक्कण-
मॆन्नॆल्लां निनच्चल्ली निङ्ङळॊन्निच्चु वन्नु ? २९

मे प्रवेश किया और कृष्ण के चरणो मे भक्ति के साथ प्रणाम करके खड़े हो गये। अँगड़ाई सी लेते हुए धीरे-धीरे जागने के बाद कृष्ण की दृष्टि जभारिपुत्र (अर्जुन) के मुख पर पड़ी। तब नाथ ने कहा— 'क्या आप पहले आये है ? मुझे तो नीद आ गयी। इस लिए मै सो गया'। १६-२२ अर्जुन ने मुस्कराकर धीरे-धीरे बोलते हुए अपनी आँखो से सभी बाते बतला दी ! । सुयोधन ने कहा, "जब बडा भाई और छोटा भाई दोनो साथ है तब निस्सन्देह आपको बड़े भाई से पहले बोलना चाहिये"। तब कृष्ण तकिये पर हाथ टेककर घूमे और सिहासन पर बैठे राजा को देखकर कहा— "मुझे खेद है ! जब मैं सो जाता हूँ तो मुझे कुछ भी नही मालूम होता है, क्या आप पहले ही आ गये है ? शिव शिव ! मित्र लोगो को तो जगाने का भी अधिकार है परन्तु आपने कुछ न किया चुप बैठे रहे ! कैसा सौभाग्य है कि आप दोनो आये है ! अब आप दोनो सुहृदय आपस में हाथ मिलाइये। दोनो आपस मे छाती लगाकर साथ रहिये। यह सब सोचकर

चौल्लिवक्कौळ्ळुक वरं वेणुन्नतिनियॆन्नान् ।
चौल्लिनान् माद्रेशनोटन्नेर धर्म्मात्मजन् ५०
इल्लौरु खेदमिनिक्कौन्निनुमॆन्नाकिलुं
चौल्लेरु कर्ण्णन् वन्नु पार्त्थनोटॆतिर्क्कुंपोळ् ५१
तेर्विट्टुन्नतिल् भवान् कर्ण्णनॆट्टुपिच्चु-
टनावोळं पऱयणमॆन्नते वेण्टतुळ्ळु । ५२
ऒङ्ङिलङ्ङनॆ तम्मिलॆन्नरुळ्चॆय्तु शल्यर्-
तन्कळल् कूप्पि यात्रययच्चु धर्म्मात्मजन् । ५३
विप्रमामुनि वेदव्यासनुमॆऴुन्नळ्ळि
विभ्रम पोवान् भीष्मरादिकळ् केळ्क्कॆच्चौन्नान् । ५४
अनर्थ कळवानाय् निनय्क्कयॆल्लावरु
मनक्काम्पितिलिप्पोळॆनिक्कुण्टौन्नु तोन्नि ५५
धर्म्मचित्तन्माराय धर्म्मजादिकळ्तम्मॆ ।
सम्मानिच्चवर् नाट्टु पातियुं कौट्टुकिल्कने ५६
नन्म वन्नीटुं नाशं वन्नीटुमल्लयाय्कि-
लुन्मूलनाशं वरु धार्त्तराष्ट्रन्मार्क्कॆल्लां ५७
इत्थ व्यासोक्ति केट्टिट्टप्पौळॆ धृतराष्ट्र-
पुत्रनुमर्द्धराज्य कौट्टक्कयिल्लयॆन्नान् । ५८
ऎन्नतु केट्टु मुनिश्रेष्ठनुमॆऴुन्नळ्ळि
वन्नीटुमल्ले कर्म्मफलमॆन्नुऱय्क्कयाल् । ५९

मे आ गया हूँ । ४४-४९ जो वर आप चाहते हों सो कह दीजिये" । तब युधिष्ठिर ने माद्रेश (शल्य) से कहा— "इसमे मेरा कोई खेद नही है । फिर भी जब विख्यात कर्ण अर्जुन का सामना करेगा तब आप रथ चलाते समय कर्ण का जितना हो सकेगा उतना दूषण कहिये । बस, मैं इतना ही चाहता हूँ" । "अच्छा, तो यह आपस मे तय है", ऐसा कहनेवाले शल्य के चरणो प्रणाम करके युधिष्ठिर ने उनको विदा किया । ब्राह्मण महामुनि वेदव्यास भी पधारे । और भीष्म आदियो के सामने ही भ्रम दूर करने के लिए कहा— 'आप सब ऐसा उपाय सोचे कि अनर्थ न हो जाय' । मुझे अब एक बात सूझ रही है, वह यह— कि धर्मबुद्धिवाले युधिष्ठिर आदियो का सम्मान करके आधा राज्य उनको दिया जाय, तभी तो भला होगा, नही तो नाश हो जायगा । धार्त्तराष्ट्रो का उन्मूलन हो जायगा' । व्यास की यह बात सुनकर उसी समय सुयोधन ने कह दिया कि मैं आधा राज्य न

अन्पोटु रण्टु जनमौरिक्कल् वरिक्कुन्पोळ्
मुन्पिनालिळयवन् वेणमेन्नुण्टु आयं । ४०
कल्याणालयनाय कारुण्यमूर्त्तितन्नै-
क्कल्याण वरुमारु कैक्कोण्टु धनञ्जयन् । ४१
मल्लारि निरायुधनेन्नोर्त्तु सुयोधनन्
चौल्लिनानेङ्किल् पटयेल्लामिन्निनिक्केन्तु ४२
वल्लवत्तरुणिमार्वल्लभन् चिरिच्चुटन्
नल्ल सामर्त्थ्यमितु चौल्लियपोलेयेन्नान् । ४३
जिष्णुनन्दननाय जिष्णुविनोटु कूटि
विष्णु कैवल्यमूर्त्ति वृष्णिकळ्कुलजातन् ४४
कृष्णनुमेळुन्नळिळद्धर्म्मजन्तन्नेक्कण्टु
कृष्णयु पाण्डवरुमतिनालानन्दिच्चार् । ४५
गान्धारीतनयनुं दूतरेययच्चितु
वान्धवन्मारायुळ्ळ मन्नवर्नाट्टुतोरु । ४६
धर्म्मजादिकळ्क्केल्लामम्मामनाय शल्यर्
धर्म्मत्तिल् पिळयाय्वान् सम्मतमल्लेङ्किलु ४७
सम्मतमिल्लातोरु पन्नगद्ध्वजनोटु
सम्मान वाङ्ङुकयाल् नूट्टुवर्कूट्टत्तिलाय् । ४८
शल्यरुं धर्म्मसुतन्तन्नेक्कण्टुरचेय्तान्
वल्लातें वैरिकळ्क्कु वन्धुवाय् चमञ्ञु ञान् । ४९

एक के साथ चलेगी । जव दो जन प्रेम से चुननेवाले है तो आचार यही है कि छोटा पहले चुन ले" । तव धनञ्जय ने कल्याणालय, कारुण्यमूर्ति को कल्याण होने के हेतु स्वीकार कर लिया । यह समझ कर कि कृष्ण निश्शस्त्र होगे, सुयोधन ने कहा—"अच्छा ! तो सारी सेना मेरी है" । गोपियो के वल्लभ ने हँसते हुए कहा— "आप वडे होशियार है ! जैसे कहा गया वैसे ही होगा" । ३८-४३ जिष्णु (इन्द्र) के पुत्र जिष्णु (अर्जुन) के साथ वृष्णिकुल मे पैदा हुए कैवल्यमूर्ति विष्णु कृष्ण चले और युधिष्ठिर से मिले । द्रौपदी और पाण्डवो ने आनन्द का अनुभव किया । गन्धारीपुत्र (सुयोधन) ने अपने वन्धुराजाओ के देशो को दूत भेजे । युधिष्ठिर आदियो के मामा शल्य, धर्म से हटना तो नही चाहते थे परन्तु असम्मत सुयोधन का सम्मान प्राप्त करने के कारण सौ कौरवो के साथ हो गये । उन्होने युधिष्ठिर से मिलकर कहा— "मै वेवस होकर आपके शत्रुओ के पक्ष

सल्गुणनिधे ! सुता ! सल्गुणं प्रशसिच्चु
निर्ग्गुणत्तिङ्कलाक्कि राज्य नी नीक्कोंळ्ळण । २
पोरिनु तुटङ्ङाते पोय् वनतन्निल् वाणु
पाराते गतिवरुत्तीटुकयिनि नल्लू । ३
आचार्यभूतरुळ्ळिलाधिकळुण्टावण्ण-
माचारमुळ्ळ जनं वर्त्तिक्कुमारिल्लल्लो । ४
अन्नु चोल्लेन्नु केट्टु सञ्जयन् पुरप्पेट्टु
मन्नवन् धर्म्मात्मजन्तन्नेयु वन्नु कण्टु । ५
पार्त्थिवनतुनेर सञ्जयनोटु चोन्नान्
वार्त्तकळेन्तोन्नुळ्ळू वास्तव परकोटो । ६
अविकातनयनु सौख्यमो गान्धारिक्कु
नन्मयो भीष्म द्रोणविदुरादिकळ्क्कोल्ला ? ७
अन्तोन्नु चोलिलविट्टतेन्नेल्लां चोदिच्चप्पोळ्
कुन्तीनन्दननोटु सञ्जयन्तानु चोन्नान् । ८
स्वैरमाय् वसिक्कुन्नितेल्लारुमिनिमेलिल्
स्वैरमाय् वरुन्नतिन्नाग्रहमुण्टु तानु । ९
सूरिकळ्मुन्पनाय सूतन् चोन्नतु केट्टु
सूर्यजतनयना भूपनुमुरचेय्तु । १०
स्वैरमेन् जनकनु तान्तन्ने वरुत्तेणं
स्वैरक्केटुण्टिङ्ङतिनेत्ताय्कनिमित्तमाय् । ११

अपना मन निर्गुण मे लगाओ और राज्य का त्याग करो । युद्ध की तैयारी न करके वन चले जाओ । और जल्दी अपनी गति प्राप्त करना ही अच्छा होगा । जो आचार का पालन करते है उनका ऐसा वर्ताव नहीं होता जिससे अपने आचार्य-तुल्य जनो के दिल मे दुःख हो जाय"। ऐसा जाकर कह दीजिये । यह सुनकर सञ्जय चले और आकर उन्होने राजा युधिष्ठिर का दर्शन किया । तब राजा ने सञ्जय से कहा— "क्या समाचार है ? सच बतला देना । क्या अंबिकापुत्र (धृतराष्ट्र) अच्छे है और गान्धारी भी ? और भीष्म, द्रोण, विदुर आदि कुशलपूर्वक है ? क्या सन्देश भेजा है ?" जब इस प्रकार प्रश्न पूछा तब सञ्जय ने कुन्तीपुत्र से निवेदन किया । १-८ "सब सुख से रह रहे है और चाहते है कि आगे भी सब ठीक ही रहे" । सूरियो के नेता सञ्जय ने जब ऐसा कहा तब राजा युधिष्ठिर ने निवेदन किया । "मेरे ताऊजी की शान्ति आप ही को बनाना होगा । मेरा खेद

अक्कालं द्रुपदोपाद्ध्यायनुमजातश-
त्रुक्षितीशाज्ञयाले हस्तिनपुर पुक्कान् । ६०
मुख्यभेदोक्ति धृतराष्ट्रर्तानग्रिञ्जिट्टु
धिक्कारत्तोटु परञ्जयच्चोरनन्तरं ६१
पाञ्चालपुरोहितन् पाण्डवन्मारोटङ्ङे-
वाञ्छितङ्ङळु वृत्तान्तङ्ङळुमग्रियिच्चान् । ६२
विप्ररेयपमान तुटङ्ङि भूपेन्द्रनु-
मिप्पोळुतध.पतनत्तिनु कालं वन्नु । ६३
पार्त्तिरियाते पटकूट्टुकेवेण्टूतव
कीर्त्तियुं जयवुमुण्टायवरुं नाटु किट्टुं । ६४
सुज्ञानमुळ्ळलेरुं यज्ञसेनोपाद्ध्यायन्
विज्ञानि नृपन्तन्नोटज्ञानरहितमाय् ६५
वाक्कुकळरुळ्चेय्तु कालदेशावस्थयु
भाग्यकालवु जयलग्नवुमरुळ्चेय्तु । ६६

सञ्जयवाक्यं

सञ्जयन्तन्नोटप्पोळबिकासुतन् चौन्ना-
नञ्जसा चेन्नु धर्म्मनन्दननोटु चौल्क । १

दूँगा । ५०-५८ यह सुनकर और यह समझकर कि कर्म का फल होगा ही, मुनिश्रेष्ठ चले गये । उस समय अजातशत्रु (युधिष्ठिर) की आज्ञा से द्रुपद का उपाध्याय हस्तिनपुर पहुँचा । जब धृतराष्ट्र ने अपमान करके उनको बिदा कर दिया तब पाञ्चाल के पुरोहित ने पाण्डवो के पास जाकर उन लोगो की इक्छाएँ और वृत्तान्त बतला दिये । अब उन्होंने ब्राह्मणो का अपमान प्रारम्भ कर दिया है, उनके अध पतन का समय आ गया है । अब आपको बिना बिलम्ब के अपनी सेना इकट्ठा करना है । आपकी कीर्ति होगी, जय होगी और राज्य भी मिलेगा । विद्वान् यज्ञसेन (द्रुपद) के उपाध्याय ने ज्ञानी राजा (युधिष्ठिर) को अज्ञानरहित बाते बतला दी । काल और देश की अवस्था, भाग्य का समय और विजय का लग्न, यह सब कह सुनाया । ५९-६६

सञ्जयवाक्य

अम्बिकासुत (धृतराष्ट्र) ने सञ्जय से कहा— आप जल्दी जाकर युधिष्ठिर से कहें—"हे सद्गुणो का निधि ! हे पुत्र ! सद्गुण की प्रशसा करो,

पातकहरङ्डळां तीर्त्थङ्ङळाटिक्कोळ्क
पातिनाटिनिक्किट्टुमॆन्नतु भाविक्कॆण्ट । २२
सञ्जयन् पऱञ्ञतु केट्टु धर्म्मजन् चोन्नान्
मञ्जुळमाय वाक्कु केट्टिट्टु सुख वन्नु । २३
अर्द्धराज्यत्तिल् कोतियिल्लिनिक्कोन्नुकोण्टु
युद्ध चेय्तॊरु पुऱमॊट्टुङ्ङिङश्शेपिच्चवर् २४
नाटितु परिपालिच्चीट्टुकॊन्नते वरू
परातयङङ्डुचॆन्नु सञ्जया ! पऱञ्ञालु । २५
धर्म्मजन् पऱञ्ञतु केट्टु सञ्जयन् चोन्नान्
नन्म वन्नीटुनाळे नल्लतु तोन्निक्कूटू । २६
धार्त्तराष्ट्रं भीष्मद्रोणकर्णादिकळु
पोर्त्तलवन्माराय मट्टुळ्ळ वन्धुक्कळु २७
ऒक्कवे मरिच्चु नी नाटुवाणिरिक्कुन्पो-
ळुळ्क्कान्पिलुळ्ळ सुखमॆन्तॆन्नु पऱञ्ञालुं । २८
चिन्तिक्क राज्य लभिच्चीटिनालुळ्ळ फल
वन्धुक्कळुटॆ सौख्य वन्नुकूटुकयत्रे । २९
पिन्नेयुं जरानराशोकङ्ङळ् पोन्नुवन्नु
मन्नवा ! मरिच्चुपोकॊन्नि मटॆन्तोन्नुळ्ळु ? ३०

सञ्जय ने कह— "अगर आप सब सुनना चाहते है तो निष्कर्ष यह है कि आप लोगो के लिए वनवास ही ठीक होगा । १५-२१ पापो का नाश करनेवाले तीर्थो की यात्रा करो और इस आशा मे न रहो कि आधा राज्य मिलनेवाला है" । सञ्जय की वात सुनकर युधिष्ठिर ने कहा— "आपकी मीठी वाते सुनकर आनन्द हुआ । मुझे तो आधे राज्य का लालच हरगिज नही है । युद्ध मे एक पक्ष समाप्त हो जायगा और जो वचेगे वे इस राष्ट्र का परिपालन करेंगे, यही होगा । हे सञ्जय ! यह जाकर जल्दी उनको वतला दीजिये" । युधिष्ठिर की वात सुनकर सञ्जय ने कहा— "जव कोई अच्छी स्थिति मे है तभी तो अच्छी वात सूझती है । धृतराष्ट्र के पुत्र, भीष्म, द्रोण, कर्ण और युद्ध के नेता अन्य वन्धु, इन सव के मरने के वाद जव तुम राज्य करोगे तो वतलाओ तुम्हारे दिल मे कैसा सुख होगा । २२-२८ सोचो ! राज्य प्राप्त करने का फल तो यही है न कि वन्धुओ का सुख हो जाता है । तदनन्तर वार्द्धक्य, सफेद वाल और दुःख उत्पन्न होते है, और हे राजन् ! मृत्यु हो जाती है । इसके अतिरिक्त

संन्यसिक्केणं ञङ्डळेङ्किले सुख वरू
मन्नवनुळ्ळिलेन्नु ञानऱिञ्ञिरिक्कुन्नु । १२
अेन्नतु चोल्वानल्ली वन्नतु भवानिप्पोळ्
मन्नवनियोगत्तालेन्नु शङ्किक्कुन्नेन् ञान् । १३
वैषम्यमितिनुण्टु राजसूय चेय्तेन् ञान्
दोषमुण्टग्नित्याग चेय्तालुमेन्नु केळ्प्पू । १४
अेन्नालो ञानो कोळ्ळा संन्यासमेन्नाकिलु-
पिन्नेयु वैषम्यमुण्टेन्ततेन्नुरचेय्यां । १५
ञान् तन्ने सन्यसिच्चाल् तातनु पोरायल्लो
कौन्तेयन् भीमन्कूटे संन्यसिक्किले पोरू । १६
अेन्नतिन्नष्टग्रासि सन्यासि भीमसेन-
निन्नुळ्ळजनङ्ङळिलेवयु बहुभोक्ता । १७
इन्द्रपुत्रादिकळुमिन्द्रियवशगन्मा-
रेन्नतिल्परमुण्टु पिन्नेयुमोरु दण्ड । १८
शूद्रनां विदुररुंकूटे सन्यसिक्केण
रौद्रकर्म्मङ्ङळित्थं चेय्किलुं मतिवरा । १९
अेन्निव निरूपिच्चु ञानिव चेय्यायिन्नु
पिन्नेयु चोल्लेन्तोन्नु चोल्लिविट्टतु तातन् ? २०
चोल्लिविट्टवस्थकळेल्लामे केळ्क्कयेङ्किल्
नल्लतु निङ्ङळ्विकन्नु काननवास तन्ने । २१

है कि मै कर नही पा रहा हूँ। मैं पहले ही जानता हूँ कि हम लोग सन्यास ले तभी तो उनका सुख होगा। यही उनकी अभिलाषा है। मेरी शङ्का यह है कि इसी को कहने के लिए राजा की आज्ञा से आप यहाँ पधारे है। परन्तु इसमे कठिनाई यह है कि मैंने राजसूय किया है और कहते है कि अग्नित्याग करने मे दोष है। ९-१४ अगर मै संन्यास ले भी लूँ फिर भी कठिनाई होगी। वह क्या है मै बतलादूँगा। मेरे अकेले सन्यास लेने से ताऊजी तृप्त न होगे। कुन्तीपुत्र भीम भी सन्यास ले तभी तो पर्याप्त समझेगे। वह तो सबसे अधिक खाने वाला है। वह अष्टग्रासि सन्यासी कैसे हो जाय ? इन्द्रपुत्र आदि तो इन्द्रियो के वशीभूत है, यह एक उससे भी बडी कठिनाई है। शूद्र विदुरजी को भी सन्यास लेना पडेगा। इन रौद्रकर्मो के किये जाने पर भी तृप्ति न होगी। यह सब सोचकर मै यह नही कर सकता हूँ। अब कहिये ताऊजी ने और क्या सन्देश भेजा है ?"

सञ्जयन् नृपनोटु नाळे ञान् चॊल्वनॆन्नाल्
कञ्जलोचननरुळ्चॆय्ततुमॆन्नानवन् । ४१

विदुरवाक्यं

चिन्तिच्चु धृतराष्ट्रन् विदुररतन्नॆ नोक्कि
वॆन्तुरुकुन्नु मन निद्रयिल्लॆतुमॆन्नान् । १
नल्लतु चॊल्लीटण निन्नुटॆ वाक्कु केट्टा-
लल्ललुण्टाकयिल्ल चिन्तयुमिल्लातॆयां । २
निद्रयिल्लाय्ककॊण्टु सङ्कट पारमुण्टु
भद्रमॆन्ततिनॆन्नु चिन्तिच्चु चॊल्लॆण नी । ३
विदुररतु केट्टु मनसि निरूपिच्चु
मतिमानाय नरपतियोटुरचॆय्तु । ४
बलवान्तन्नालभियुक्तनाय् चमञ्ञोरु
बलहीननु वृत्तिसाधनविहीननु ५
हृतद्रव्यनुमतिकामिक्कु तस्करनु
क्षितिनायका ! निद्रयिल्लॆन्नु केळ्प्पू ञानो । ६
इङ्ङनॆयुळ्ळ दोषमॊन्नुमिल्लल्लो भवा-
नॆङ्ङनॆ पिन्नॆ प्रजागरत्तिन्नवकाशं ? । ७

गये । सञ्जय ने राजा (युधिष्ठिर) से कहा— "जो कुछ कृष्ण ने कहा वह मैं कल जाकर कह दूंगा" । ३५-४१

विदुर के वाक्य

धृतराष्ट्र चिन्तित हुए और विदुर की ओर देखकर बोले— "मेरा मन जल रहा है । नीद बिलकुल नहीं आती हैं । मुझे सदुपदेश दे दो । तुम्हारी बात सुनकर दु.ख नही होगा और चिन्ता नष्ट हो जायगी । नींद न आने के कारण पीडा बहुत है । इसके लिए क्या करना चाहिये, सोचकर बतलाओ ।" यह सुनकर विदुर ने सोचकर बुद्धिमान् राजा से निवेदन किया । हे भूपाल ! मैंने सुना है कि जो बलवान् के द्वारा अभियुक्त किया गया हो, बलहीन हो, जिसका जीविका का साधन न हो, जिसका अर्थ छीना गया हो, अतिकामी हो या चोर हो, उसको नीद नही आती है । १-६ आप मे इस प्रकार का कोई दोष नही है तो फिर नीद क्यो नही आती है ? क्या परद्रव्य को छीन लेने का बडा मोह भीतर पैदा होने के कारण तो यह नही हो रहा है ? सारे विश्व को अपने वश मे लाकर राज करने के लिए तुमने और तुम्हारे पुत्रो ने समस्त

धर्म्मजनतु केट्ट्ु मन्दहासवुं चेय्तु
सन्मार्ग्गमरिञ्ञोरु सञ्जयनोटु चोन्नान् । ३१
पाटवं पारमुण्टु वाक्किनु निनक्कोटो
मूढन् ञान् वक्रोक्तिकळरियप्पोकायिकलुं । ३२
वेळ्ळयिल् परञ्ञोरु निर्म्मलवाक्कु तन्टे-
युळ्ळिल् संग्रहिच्चुळ्ळोरर्त्थमोट्टरिञ्ञु ञान् । ३३
केळ्क्क सञ्जयार्येङ्किलूक्कुळ्ळ भीष्मादिकळ्
पोर्क्कळं तन्निल् वीणु मरिक्कु मटियाते । ३४
अन्धनां नरपतिनन्दनन्तनिक्कुळ्ळो-
रन्धकारङ्ङळेतुं पोकयिल्लेन्नुवन्नु । ३५
देवकीदेवि पेट्ट देवकळ्देवन् वासु-
देवनां कृष्णन् तुणयुण्टिनिक्करिञ्ञालु । ३६
अन्नेरं मुकुन्दनुं सञ्जयनोटु चोन्ना
नन्नन्नु कूट्टंकूटीट्टेन्तोरु कार्यमितिल् ? ३७
ञान् तुण पाण्डवन्मार्क्कुण्टिङ्ङु नाशं तीर्प्पान्
गान्धारीसुतन्मारुं बन्धुवर्ग्गवुमेल्लां ३८
कालन्टे पुरिपुक्कु कळिच्चुवसिच्चीटु
कालं वैकाते चेन्नु सञ्जया ! परञ्ञालु । ३९
चोल्लुवनेल्लामेङ्किल् पोकुन्नेनिनियेन्नु
मेल्लवे यात्र चोल्लि नटन्नानवन्तानुं । ४०

क्या है ?" यह सुनकर युधिष्ठिर मुस्कराये और सन्मार्ग जाननेवाले सञ्जय से बोले— "आप बोलने मे बहुत ही चतुर है और मैं तो मूर्ख हूँ। यद्यपि मैने वक्रोक्तियाँ नही समझी तथापि आपकी सीधी और निर्मल बाते मैने समझ ली है। फिर भी हे सञ्जय ! सुन लीजिये। शक्तिशाली भीष्म आदि रणभूमि मे गिरकर विना हिचक के मरेगे। २९-३४ अन्धे राजा के पुत्र के अन्धकार नही दूर होगे, यही प्रतीत होता है। जान लीजिये कि देवकी देवी के जन्मे देवो के वेव वासुदेव कृष्ण मेरे सहाय है"। इस समय मुकुन्द ने भी सञ्जय से कहा— "प्रतिदिन आपस मे सलाह करने से क्या लाभ है ? मै पाण्डवो की हानि से वचने में सहायता करूँगा, गान्धारी के पुत्र और उनका बन्धुवर्ग यमपुरी मे प्रवेश करके वहाँ की लीलाएँ करेगे। हे सञ्जय ! विना विलम्व के जाकर सब कह दो। मै सब वतला देता परन्तु मै जा रहा हूँ"। यह कहकर (माधव) बिदा हुए और चले

कट्टोटं मरक्कोट्ट तोणियुमुलक्कयु-
मोट्टेटकोण्टु यागपात्रङ्ङळाय् मेवीटुं १९
स्रुववुं जुहुवुमित्यादिकळ् पणिचेय्युं
नृवरशिखामणे ! केळ्क्कणमतुपोले । २०
ओरुवन्तन्टे पुत्रन्मारायिट्टुण्टाय्वन्न
पुरुषन्मारुं वरुमीवण्णमरिञ्ञालुं । २१
अत्यर्थं प्रशस्तङ्ङळायव सेविच्चीटुं
नित्यवु निन्दितङ्ङळायव वर्ज्जिच्चीटुं २२
अश्रद्दधाननल्ल नास्तिकत्ववुमिल्ल
विद्वानाकुन्नतवन् पण्डितनरिक नी । २३
क्रोधदर्प्पादि हर्षस्तंभलज्जादिकळा-
लेतुमे विघ्न कार्यसाद्धयत्तिनुण्टाकाते २४
स्वच्छमामात्मावोटु मान्यमानित्वंकोण्टु
निश्चलनाकुन्नवन् पण्डितनरिक नी । २५
शीतोष्णभयरति समृद्धिदारिद्रयादि-
हेतुना कृत्यत्तिनु भंगत्ते वरुत्ताते २६
नित्यवुं कर्त्तव्यानुष्ठानं चेय्तीटुन्नवन्
विद्वानेत्रयुमवन् पण्डितश्रेष्ठनल्लो । २७
नष्टमायतु चिन्तिच्चेतुमे दुःखियाते
तुष्टनाय प्राप्यमायुळ्ळतु कामियाते २८

से देखकर एक पेड को काटते है तो उसके एक भाग से काठ के घड़े, नाव, मुसल आदि बनाते है और दूसरे भाग से यज्ञ के पात्र स्रुव, जुहू आदि बनाते है, उसी प्रकार, हे भूपालवर! यह भी होता है। १४-२० जानलो कि एक ही व्यक्ति के पुत्रो मे इस प्रकार के भेद हो जाते हैं। जो अत्यन्त स्तुत्य कार्य है उनका सेवन करनेवाला, निन्दित कार्यो का सदैव वर्जन करने वाला, श्रद्धायुक्त, और नास्तिकत्व से हीन, और विद्वान्, ऐसा व्यक्ति ही पण्डित है, जान लो। और यह भी जान लो कि वही पण्डित है जो अपने क्रोध, दर्प, हर्ष, स्तभ, लज्जा आदि से कार्य-सिद्धि का कभी विघ्न नही पैदा करता है और अपनी स्वच्छ आत्मा के द्वारा और अपने मान्य-मानित्व के द्वारा निश्चल रहता है। शीत, उष्ण, भय, रति, समृद्धि, दारिद्र्य, इन के कारण जो कर्तव्य का भग नही होने देता है, जो सदैव कर्तव्यानुष्ठान करता रहता है वही विद्वान् है, वही पण्डितो मे श्रेष्ठ है। २१-२७ जो नष्ट वस्तु के पीछे दुःख नही करता है और सन्तुष्ट होकर अप्राप्य वस्तु की अभिलाषा

परद्रव्यत्तेत्तनिक्कटक्किक्कोळ्वानुळ्ळिल्
पेरुत्त मोहमुण्टाय्वरिकक्कोण्टल्लल्ली । ८
विश्वत्तेयटक्कि रक्षिच्चु वाणीटुवानाय्
निश्शेषतरराजलक्षणसन्पन्ननां । ९
धर्म्मनन्दननोटु नीयुं निन्पुत्रन्मारुं
निर्म्मूल विपरीतमायतु निरूपिच्चाल् । १०
भाग्यमिल्लाय्क तव केवलमतुमिह
योग्यमेन्नरिवुळ्ळोक्कार्क्कुमे तोन्नील्लल्लो । ११
तातनेन्नोरु भक्तिबहुमानस्नेहङ्ङळ्
चेतसि सदाकालमुण्टाकनिमित्तमाय् १२
अेन्तेल्लां दुःखमनुभविच्चीटुन्नु नित्यं
कुन्तीनन्दननाय धर्म्मजन् गुरुभक्तन् । १३
ज्ञानवु तितिक्षयुं धर्म्मवुं वाक्शान्तियुं
दानवुमित्यादिकळाकिय गुणमेल्लां १४
इल्लात सुयोधनकर्ण्णसौबलादिकळ्-
क्कल्लो नी राज्यैश्वर्य कोटुत्तु भोगत्तिनाय् । १५
ओरु वंशत्तिङ्कल्निन्नुण्टाय जनङ्ङळिल्
पेरिके गुणवान्मार् चिलर् दुष्टन्मार् चिलर् १६
अेन्नुण्टो वरुन्नतेन्नोक्केण्टा भवानिति-
न्नोन्नुण्टु परयुन्नु आनतिन्नुपमयाय् । १७
तच्चन्मार् वनभुवि चेन्नुटन् नोक्कियोरु
वृक्षत्ते वेट्टिक्कुरच्चतिनेक्कोण्टुतन्ने १८

राजलक्षणो से सम्पन्न युधिष्ठिर से सोचो तो विना कारण विरोध पैदा कर रखा है। यह तुम्हारा दुर्भाग्य है कि यह बात यहाँ के कार्याकार्य के ज्ञानवालो से किसी को भी न सूझी। तुम्हारे प्रति, ताऊ होने के नाते दिल मे सदैव भक्ति, वहुमान और स्नेह होने के कारण गुरुभक्त कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर प्रतिदिन क्या क्या दु ख अनुभव कर रहे है। ७-१३ ज्ञान, तितिक्षा, धर्म, वाग्मिता दान आदि विविध गुणो से रहित सुयोधन, कर्ण, सौवल जैसे लोगो को ही तुमने भोगने के लिये राजैश्वर्य दिया है। एक ही वंश के पैदा हुए व्यक्तियो मे कई गुणवाले हों और कई दुष्ट हो यह कैसे हो सकता है? तुम इस प्रकार न सोचो। मैं एक उदाहरण वतलाता हूँ। जव वढ़ई लोग वन जाते है और ठीक

सकल पुरुषरिल्वच्चुपायज्ञनुमाय्
सकल विज्ञानियायुळ्ळवन् महाविद्वान् । ३९
प्रज्ञानुगतमाय विश्रुतमुण्टु पिन्ने
प्रज्ञयु श्रुतानुगयावण्णमुण्टुतानु ४०
असभिन्नार्यजनमर्यादियोटुं नित्य-
मसन्दिग्धात्मावायुळ्ळवन् महाविद्वान् । ४१
अर्थमाकिलुं वलालैश्वर्यमेन्नाकिलु
विद्ययाकिलुं तनिक्केरियोन्नुण्टायवन्नाल् ४२
अॅन्नयु विनीतनायसमुन्नद्धनाय
विद्वानु समन्मारायिल्ल विद्वान्मारारुं । ४३
अश्रान्तं दरिद्रनायुळ्ळवन् महामन-
स्सश्रुतनायुळ्ळवनत्यर्थं समुन्नद्धन् ४४
अर्थाश पारं प्रवर्त्तिक्कयिल्लेतुं तानु-
मेन्नयु मूढनवनेन्नल्लो वुधमतं । ४५
अर्थंत्तनिक्कुळ्ळतळिच्चु परमार्थमाय्
मित्रार्थं मिथ्याचारं चेय्युन्नतवन् मूढन् । ४६
तन्नेक्कामिच्चिटात नारियेक्कामिक्कयु
तन्नेक्कामिच्चवळे तान् परित्यजिक्कयु । ४७
तन्नेक्काळ् बलवानोटेरे मत्सरिक्कयुं
तन्नेत्तानडियाते चेय्तीटुन्नवन् मूढन् । ४८

जो सभी प्राणियो का अत्यन्त अनुकूल हो, सभी कार्यो मे योगदान देने वाला हो और जो सभी विज्ञान जानता हो वही महाविद्वान् है। ३४-३९ जो अपनी प्रज्ञा के अनुसार अध्ययन करता है और जिसका अध्ययन के अनुसार वैदुष्य हो, जो आर्य मर्यादाओ का उल्लघन नही करता है और जो संशयात्मा नही है, वही महाविद्वान् है। अर्थ या ऐश्वर्य, या विद्या की पराकाष्ठा तक पहुँचने पर भी जो अत्यन्त विनीत और अनुद्धत विद्वान् हो उसके समान और कोई विद्वान् नही है। जो अत्यन्त दरिद्र हो और साथ साथ महामना हो जो विलकुल अनपढ़ हो और घमण्डी भी हो अर्थ की इच्छा से जो कभी प्रेरित न होता हो ऐसा व्यक्ति मूर्ख है, यही वुधो का मत है। अपने अर्थ की परवा न करके जो मित्र के लिए मिथ्याचार करता है वह मूढ़ है। ४०-४६ जो प्रेम नही करती है उस से प्रेम करने वाला, जो प्रेम करती है उसका त्याग करने वाला, अपने से शक्तिशाली के साथ विरोध करने वाला

आपत्तुवरुंकालमेतुमे मोहियार्ते
तापत्तेंस्सहिप्पवन् पण्डितनरिक नी । २९
कालत्तें निरूपिच्चु कलिपच्चु निश्चयिच्चो-
रालस्यं मद्धचे तुटङ्ङीटार्ते कर्म्म चेंय्तु ३०
कालवुमवन्ध्यमाक्किक्कोंण्टु वश्यात्मावाय्
पालिच्चु पुरुषार्त्थ वाणीटुन्नवन् विद्वान् । ३१
अन्यायकर्म्म वाचा मनसा चेंय्यातेंक-
ण्टन्येषां हितत्तिङ्कलीर्ष्ययुमुण्टाकार्ते ३२
आर्य्यकर्म्मणि रञ्जिच्चेंरिय सत्क्कर्मणा
धीरनायिरिप्पवन् पण्डितनरिक नी । ३३
सम्मानत्तिङ्कलुळ्ळल् सम्मोदमुण्टाकार्ते
निर्म्मूलमवमानत्तिङ्कलुं खेदियार्ते ३४
अक्षोभ्यनायिग्गंगतन्निलें ह्रदंपोलें
रक्षिच्चु धर्म्मत्तेंयुं वाणीटुन्नवन् विद्वान् । ३५
संप्रवृत्तोक्तिमानाय् विचित्रकथनुमाय्
संप्रति दानवानाय् शुद्धोक्तिवक्तावुमाय् ३६
ऊहापोहादिकळिल् चतुरहृदयनाय्
माहात्म्यत्तोटु वाणीटुन्नवन् महाविद्वान् । ३७
सकलभूतङ्ङळ्क्कुमेंतयु मनोज्ञनाय्
सकलकर्म्मङ्ङळ्क्कुमुचितयोगज्ञनाय् ३८

नही रखता है और दु:ख सह सकता है, वही जानलो पण्डित है। जो समय के अनुसार अपना कार्य निश्चित करता है और बीच मे असल न होते हुए उसे करता रहता है और समय को व्यर्थ न बिताते हुए अपने को वश में रखते हुए पुरुपार्थ की प्राप्ति के लिये प्रयत्न करता है वही विद्वान् है। जो बात से या मन से न अन्याय करता है और अन्यो के हित से न जलता है आर्य कर्म्मो मे ही तत्पर होकर सत्कर्म करता रहता है और सदैव धीर होता है, वही, जानलो, पण्डित है। २८-३३ सम्मान होने पर जिस को प्रमोद न होता हो और अवमान हो जाने पर जो व्यर्थ खेद न करता हो, जो गंगा के ह्रद के समान अक्षोभ्य रहता है और धर्म की रक्षा करते हुए रहता है वही विद्वान् है। जो समयोचित बात करता है और सरस बात करता है जो तत्क्षण ही देने वाला है, शुद्ध बात कहने वाला है जो ऊह और अपोह मे चतुर है और अपने माहात्म्य के साथ रहता है वही विद्वान् है।

सन्पन्नमाकुंवण्ण तनिक्कु भुजिक्कणं
शुभमन्दिरत्तिङ्कल् वासवु चेय्तीटण ५९
तन्नुटे पुत्रमित्रकळत्रभृत्यादिकळ्-
क्कोन्नुमे पोरुतिक्कु कोटुक्कयिल्लतानुं । ६०
अङ्ङनेयुळ्ळ नरन्तन्नोळं दुष्टनायि-
ट्टिङ्ङुमे निरूपिच्चालारुमिल्लरिञ्ञालुं । ६१
ओरुत्तन् पापकर्म्म चेय्तीटिलतिन् फलं
परक्केयुळ्ळ महाजनङ्ङळ्क्कोक्कत्तट्टुं । ६२
कालत्ताल् मोचिच्चीटुमापत्तु मटुळ्ळोर्क्कु
मेलिल् तान्तन्नेयनुभविक्कुं चिरकालं । ६३
वेगेन विल्लाळियाल् मुक्तमामस्त्रं पोय्च्चे-
न्नेकने हनिक्किलुमा हनियाय्किलुमां । ६४
तन्नुटेयात्माविने राजावु मोचिक्किलो
निर्ण्णयं सराजकं नशिक्कुं राज्यमेल्ला । ६५
ओन्तिनालुट्य्क्कण रण्डिन्टे बलाबलं
पिन्ने मून्निने नालाल् वशत्तु वरुत्तणं ६६
अञ्चनेज्जयिच्चुळ्ळिलारिनेयरिञ्ञट्टु
वञ्चनादिकळेल्लामरिनेयरिञ्ञु वळिपोले ६७
एळिनेयुपेक्षिच्चु सौख्यत्ते लभिक्कण
केळियेरीटुं नृपन्मारायालवनियिल् । ६८
एकने हनिच्चीटुमत्ने काकोळरस-
मेकनेत्तन्नेयोरु शस्त्रवु हनिच्चीटु । ६९

भृत्यों को शान्ति के लिये भी कुछ भी नही देता है । ५५-६० ऐसे आदमी के समान दुष्ट सोचो तो कही भी न मिलेगा । अगर कोई पाप करे तो उसका फल चारो ओर रहने वाली जनता पर पड़ेगा । और लोग तो समय वीत जाने पर उस से मुक्त हो जायेगे पर स्वय को तो चिरकाल तक भुगतना पड़ेगा । धनुर्धर का छोड़ा हुआ वाण किसी को मार सकता या नही भी मार सकता है । राजा अगर अपनी आत्मा को छोड़ देगा तो राजा के साथ सारा राज्य नष्ट हो जायगा । पृथ्वी मे अगर विख्यात राजा वनकर रहना है तो एक से दो का वलावल जान लेना है, चार से तीन को अपने वश मे लाना है, पाँच पर विजय प्राप्त कर, छः को अच्छी तरह समझ कर वञ्चना

मित्रत्तोे द्वेषिप्पानायमित्रं मित्रमाक्कि
प्रत्यहं दुष्टकर्म्मं चेय्तीटुन्नवन् मूढन् । ४९
उळ्प्पूविल् कृत्यङ्ङळेस्संशयिच्चनुदिनं
क्षिप्रार्त्थं कर्म्मं चिराल् चेय्तीटुन्नवन् मूढन् । ५०
अन्यमन्दिरत्तिङ्कल् चोल्लाते चेल्लुकयु
तन्नोटु चोदियाते तानेऱ्प्पऱकयु ५१
उद्धतनायुळ्ळवन्तन्नोे विश्वसिक्कयु
बद्धमोदेन चय्तीटुन्नवन् महागूढन् । ५२
अन्यदोषङ्ङळ् पऱञ्ञेटवुमाक्षेपिक्कु
तन्नुटे वर्त्तमानमव्वण्णंतन्नेतानु ५३
पिन्नेत्तानोरुवक्कुंमीशनल्लातेयुळ्ळो-
नन्वह कोपिक्कयुं चेय्तीटुन्नवन् मूढन् । ५४
तन्नुटे बलमऱियाते धर्म्मार्त्थ विना
तन्नाल् साद्ध्यवुमल्लयात कर्म्मङ्ङळ् चेय्वान् ५५
अन्नन्नु तुटङ्ङियुमन्नन्नु मुटङ्ङियु
पिन्नेयुमतिन्नारंभिच्चीटुन्नवन् मूढन् । ५६
शिष्यनल्लातवने वेरुते शासिक्कयु
निस्स्वनायुळ्ळवने नियतं सेविक्कयुं ५७
दुष्टनेवृभजिक्कयुं शिष्टने निन्दिक्कयुं
कष्टमोर्त्तोळमवनेत्रयुं महामूढन् । ५८

और अपने को भूलकर व्यवहार करने वाला मूर्ख है। जो मित्र का विरोध करने के लिये शत्रु को मित्र बनाकर प्रतिदिन दुष्ट कर्म करता रहता है और जल्दी करने लायक काम को देर मे करता है वह मूर्ख है। जो औरो के घर विना कहे जाता है जो न पूंछे जाने पर भी वोल उठता है जो घमण्डी का विश्वास करता है वह महामूर्ख है। जो औरो के दोष आरोपित करता है जव कि स्वयं उसी प्रकार का है, जिसका किसी पर भी कोई प्रभाव नही है और प्रतिदिन क्रुद्ध भी होता है वह मूर्ख है। ४७-५४ जो अपनी शक्ति को न जानकर, अपने से असाध्य और धर्म से न सम्वन्ध रखने वाले काम, प्रतिदिन आरम्भ करता है और उसी दिन छोड़ भी देता है और फिर प्रारम्भ करता है, वह मूढ है। जो निरपराधी को व्यर्थ दण्ड देता है, अकिंचन की सदैव सेवा करता है और दुष्टो की प्रशंसा और शिष्टो की निन्दा करता है, सोचो तो वह अत्यन्त मूर्ख है। स्वयं तो तृप्त होने तक खाना चाहता है और शुभ भवन मे निवास करना चाहता है। पर अपने पुत्र मित्र, कलत्र और

पारुष्यवाक्कु पऱयाय्कयुं दुष्टन्मारो-
टेऱ्ऱॆच्चॆन्नॊन्नुमर्त्थिच्चीटाते कऴिक्कयु । ८०
रण्टु जातिकळ् परप्रत्ययकारिकळा-
युण्टतु रण्टु पऱञ्ञीटुवन् नरपते ! ८१
चॆल्क्कण्णारॆल्लामॊक्ककामितकामिनिमार्
मूर्खन्मारॆल्लामॊक्कप्पूजित पूजिकन्मार् । ८२
रण्टुण्टु शरीरत्तॆश्शोषिप्पिच्चीटुवानाय्
कण्टकजातिकळ् केळ्क्कणमो धरापते ! ८३
निर्द्धनन् कामिक्कयुमस्वामि कोपिक्कयु
पृत्थ्वीन्द्र ! चॊल्लीटुवन् केळ्क्कणमॆङ्किलिन्नुं । ८४
रण्टुपेरुण्टल्लो स्वर्गत्तिनु मेलेलोके
कुण्ठत नीक्कि सुखिच्चीटुन्नु सदाकालं । ८५
प्रभुवाकिलु क्षमापरनायिरिप्पोनु
विभवहीनन् दानशीलनायिरिप्पोनुं ८६
अर्थत्तिन्नतिक्रममायिट्टु रण्टुण्टल्लो
नित्यं न्यायार्ज्जितमा द्रव्यमॆन्निरिक्किलुं ८७
प्रतिपत्तियुमपात्रत्तिङ्कल् पात्रत्तिङ्क-
लतिनॆप्पोलॆ पुनरप्रतिपादनवुं । ८८

ही शान्ति का एकमात्र कारण है। एक ही विद्या है और वह है औरो को सन्तुष्ट करना और सदैव सुख पैदा करने वाली एकमात्र अहिसा है। इस दुनिया मे दो बाते है जिन से सभी देखने वाले प्रसन्न होते है। कभी कठोर वाते न करना और दुष्टो से कभी विना माँगे ही काम चला लेना। ७५-८० दो प्रकार के लोग औरो को विश्वास दिलाते है हे भूपाल ! मै दोनो को वतला दूँगा। सभी तीखी आँखवालियाँ कामियो की कामिनियाँ है और मूर्ख सव पूजितो के पूजक है। शरीर को सूखा करने वाली दो कण्टकजातियाँ है। हे भूपाल ! क्या आप सुनना चाहते है ? निर्धन होकर इच्छाएँ रखना, और परतन्त्र होकर क्रोध करना। हे भूपाल ! सुनना हो तो और वतलाऊँगा। दो प्रकार के लोग है जो स्वर्ग से भी ऊपर के लोको मे दु ख दूर करके सुख से सदैव रहते है। प्रभु होकर भी जो क्षमाशील है और दरिद्र होकर भी जो दानशील है। ८१-८६ दो वाते है जो अर्थ के (लिये) विरोधी है—अपने न्याय से कमाये हुए द्रव्य को भी अपात्र को दान करना तथैव पात्र को दान न करना। इस पृथ्वी पर तीन प्रकार के

अन्तरमेतुमिल्ल सप्रजं सराष्ट्रकं
मन्त्रविस्स्रव राजाविनेयुं हनिच्चीटुं ७०
एकनायतिस्वादु भुजिच्चीटरुतल्लो
एकनाय् चिन्तिच्चु कल्पिक्करुतोरुकार्य- ७१
मेकनाय् पेरुवळि पोकयुमरुतल्लो
एकवेश्मनि पलरु किटन्नुरङ्ङुम्पो- ७२
ळेकनायुणर्न्निरुन्नीटरुतु के-
ळेकमिन्नियुमुण्टु भूपालशिखामणे ! ७३
एकमेयुळ्ळु पिन्ने रण्टामतिल्ल चोल्वान्
नाकलोकत्तिन्नु सोपानमाय् नरपते ! ७४
सत्यमाकुन्न वस्तु तरणिपोले पुन-
रब्धिक्कु मतिमतांप्रवर ! कुरुपते ! ७५
एकमे दोषमुळ्ळु सन्ततं क्षमावतां
लोकरुमशक्तरेन्नाक्कुवोरोट्टुचेन्नाल् । ७६
एकमां धर्म्मं पर श्रेयस्साकुन्नतोर्त्ता-
लेकैव क्षमा शान्तियायतेन्नतु नूनं । ७७
एकैव विद्य परतुष्टियेन्नरियण-
मेकैवाहिंस सततं निजसुखावहा । ७८
रण्टु कर्म्मङ्ङळ् चेय्तुकोण्टिहलोकत्तिङ्कल्
कण्टवर् कोण्टाटुवान् कारण महीपते ! ७९

आदि को ठीक से जानकर और सात की उपेक्षा करके सुख प्राप्त करना है। ६१-६८ साँप का विष एक को मार सकता है शस्त्र भी एक ही को मारता है। इसमे कोई सन्देह नही कि मन्त्रभेद प्रजा और राष्ट्र के साथ राजा का नाश करता है। किसी भी अत्यन्त स्वादु पदार्थ को अकेला नही खाना चाहिये। कोई भी काम अकेला सोचकर तय नही करना चाहिये। महामार्ग पर अकेला नही चलना चाहिये जब घर मे बहुत लोग पड़े सो रहे हो तब अकेला जागकर उठना न चाहिये। हे भूपालश्रेष्ठ ! सुनो, एक बात और है। एक ही बात अब कहनी है, दूसरी नही और वह, हे भूपाल ! स्वर्ग चढने के लिये सीढी जैसी है। ६९-७४ हे बुद्धिमानो में श्रेष्ठ ! हे कुरुवर ! सत्य जो है वह समुद्र पार करने के लिए नाव के समान है। राजाओ का एक ही दोष होता है और वह है कि प्रजाओं को अशक्त समझना। सोचो तो धर्म ही एकमात्र परम श्रेय है और क्षमा

पापकर्म्मणां विनाशत्त्येयुमिव नालुं
तापत्त्येयणयातें कळञ्ञीट्टुवानुळ्ळू । ९९
अञ्चुण्टु रक्षिक्केण्टुमग्निकळ् गृहस्थन-
तञ्चुं वेव्वेरे केट्टुकोळ्ळुक धरापते ! १००
तातनु जननियुमात्मावुमग्नितानु
प्रीतनामाचार्यनुमञ्चितेन्नरियेण । १०१
अञ्चुपेरेयुं पूजिच्चीटिन पुरुषनाल्
सञ्चित यशस्सतेन्नरिक धात्रीपते ! १०२
भृत्यन्मार् संन्यासिकळ् देवकळ् पितृक्कळुं
नित्यमागमिच्चीटुमतिथिजनङ्ङळु । १०३
दोषङ्ङळारुण्टकलेक्कळञ्ञीटेण्टव
दोषज्ञोत्तम ! भूमिपालक ! केट्टीटेणं । १०४
निद्रयु तन्द्रीभयं क्रोधमालस्य पिन्ने
प्रत्यहं दीर्घसूत्रत्वत्त्येयु त्यजिक्कण । १०५
बुद्धिमानिवरारुपेरेयुमुपेक्षिक्कु-
मब्धियिल् सभिन्नयां तरियेप्पोलेतन्ने । १०६
अप्रवक्तावामाचार्यनेयु सदाकाल-
मप्रियवादिनियायीटिन पत्नियेयुं १०७
अध्ययनं चेय्यात शिष्यनामवनेयु
सत्वरमरक्षितावाय राजाविनेयुं १०८

विनाश। इन चारो को बिना दुःख प्राप्त किये त्यागा नहीं जा सकता है। पाँच अग्नि हे जिनकी रक्षा गृहस्थ को करना चाहिये। पाँचों को हे भूपाल ! सुन लीजिये। ९४-१०० पिता, माता, आत्मा, अग्नि और प्रसन्न आचार्य, ये ही पाँच है, जान लीजिये। जो पुरुष इन पाँचो की पूजा करता है वही, हे भूपाल ! यश कमाता है, जानलीजिये। भृत्य, सन्यासी, देव, पितर और प्रतिदिन आने वाले अतिथि, इनका सम्मान करना चाहिये। दूर त्याग करने लायक छ दोष हैं हे दोषज्ञोत्तम ! भूपाल ! सुनलीजिये। निन्दा, तन्द्रा, आलस, भय, क्रोध, सुस्ती, और दीर्घसूत्रता, इनको प्रतिदिन त्याग करना है। बुद्धिमान् पुरुष छ व्यक्तियो की उपेक्षा करे जो समुद्र मे बिगडी हुई नाव की तरह है। १०१-१०६ न पढानेवाले आचार्य की, सदैव अप्रिय कहने वाली पत्नी की, न पढने वाले शिष्य की, रक्षा न करने वाले राजा की, गोपाल की जो ग्रामपाल हो गया हो, और नाविक की

मून्नुपेरधमन्माराकुन्नितवनियिल्
मून्नुपेर्युमहं वेव्वेरे चोल्लामल्लो । ८९
भृत्यनिल्लातवनुं पत्नियिल्लातवनु
पुत्रनिल्लातवनुमेत्रयु दरिद्रन्मार् । ९०
नालुण्टु राजाविनाल् वर्ज्यङ्ङळायिट्टव
नालु पण्डितन्मारायुळ्ळवरङ्ङिञ्ञीटुं । ९१
अल्पप्रज्ञन्मारोटु दीर्घसूत्रन्मारोटु-
मेप्पोळुमलसन्मारोटु चारणरोटु- ९२
कूटि राजावु कार्यमन्त्रत्तेच्चेय्तीटरु-
ताटल्पूण्टुळन्नीटुमारु वन्नीटुमेन्नाल् । ९३
नालुपेर्यु श्रीमानाकिलो गृहस्थन्त-
न्नालयत्तिङ्कल् कूटेवच्चु पालिच्चिटेण्टू । ९४
ज्ञातियामवनतिश्रान्तनाय् वरिकिलुं
नीतिमान् कुलश्रेष्ठन् निःस्वनाय् वरिकिलुं ९५
पुत्रनिल्लेङ्किल् स्वसाविनेयुं निज सखि-
यत्यर्थ दरिद्रनाय् वरिकिलवनेयु । ९६
पण्टु देवेन्द्रनोटाचार्यना वृहस्पति-
युण्टु नालुपदेश चेय्तिट्टिन्नतु चोल्ला । ९७
देवतासङ्कल्पवुं बुद्धिमान्मारिलनु-
भाववु विद्वान्मारोटेटवुं विनयवु ९८

अधम है तीनो को अलग अलग वतला दूँगा। जिन के कोई भृत्य नही है, जिनकी पत्नी नही है और जिन का कोई पुत्र नही है, वे दरिद्र है। चार वाते है जो राजाओ के लिये वर्जनीय है, चारो को बुद्धिमान् लोग समझ लेते है। अल्पज्ञो, दीर्घसूत्रियो (हर काम मे देर लगाने-वालो) सदैव आलसियो और चारणो के साथ राजा को राज्यकार्य की मन्त्रणा न करना चाहिये, नही तो ऐसी स्थिति हो जायगी कि दु:ख से निकल न सके। ८७-९३ चार व्यक्ति है जिनको एक श्रीयुक्त गृहस्थ अपने ही घर मे रखकर पालन करे। वे है-रिश्तेदार जो जीवन मे अत्यन्त श्रान्त हो गया हो, अच्छे कुल का नीतिमान् जो अकिंचन हो गया हो, अपनी वहिन जिसका कोई पुत्र न हो और अपना मित्र जो दरिद्र हो गया हो। पूर्वकाल मे आचार्य वृहस्पति ने देवेन्द्र को चार उपदेश दिये। उनको भी सुना दूँगा। देवताओ के प्रति श्रद्धा, वुद्धिमानो के प्रति आदर, विद्वानो के प्रति विनय और पाप कर्मो का

नाशं वन्नटृत्तिरिक्कुन्न राजावुतनि-
क्काशु मुन्पिले काणामॆट्टु कारणङ्ङळुं । ११९
ब्राह्मणद्वेप मुन्पिल् ब्राह्मणविरोधवु
ब्राह्मणस्वङ्ङळुपादान चॆय्तीटुकयुं १२०
ब्राह्मणरॆत्तन्नॆ हिंसिक्कयुमतुमूल
ब्राह्मणनिन्द हेतुवायिट्टु रमिक्कयु १२१
ब्राह्मणप्रशंस केळ्क्कुन्नेरसक्षान्तियु
ब्राह्मणरॆक्कूटातॆ कृत्यानुष्ठानङ्ङळुं १२२
ब्राह्मणरपेक्षिक्कुनेरमभ्यसूययु
ब्राह्मणशापत्तिनु कारणमिवयॆल्ला । १२३
आवोळ विचारिच्चु मुन्पिले कळयेण-
मावतिल्लिवयकप्पॆट्टालॊन्नाक्कुं पिन्नॆ । १२४
ऎट्टु वस्तुक्कळेटमुण्टेटं प्रमादत्तॆ-
प्पुष्टमाक्कीटुवानाय् मर्त्यनु पृथ्वीपते ! १२५
तन्नुटॆ सखिकळोटुळ्ळॊरु समागमं
पिन्नॆयॊट्टतियायिट्टुळ्ळॊरु धनागम १२६
धन्यनां तनयनालुळ्ळॊरु परिष्वङ्गं
सन्निपातवुं सुरतत्तिङ्कलॊरुपोलॆ १२७
कालातिक्रमविरहे निज प्रियालाभं
मालोकर् कूटुन्नेर तम्मिले सम्मानवुं १२८

हैं। ११३-११९ पहले तो ब्राह्मणद्वेष, फिर ब्राह्मणविरोध, ब्राह्मणो की सम्पत्ति का अपहरण, ब्राह्मणो की हिंसा करना, उसके कारण ब्राह्मणो की निन्दा करने का शौक, ब्राह्मणो की प्रशंसा सुनकर चिढना, ब्राह्मणो को अलग करके कर्मानुष्ठान करना, ब्राह्मणो के याचना करने पर असूया करना ये सब ब्राह्मणशाप के कारण होते है। विचार करके इनको पहले ही नष्ट करना चाहिये। ये अगर किसी तरह हो गये तो कोई कुछ नही कर सकता है। हे भूपाल ! आठ बाते है जो मनुष्य के प्रमोद को अत्यन्त पुष्ट करती है। १२०-१२५ अपने मित्रो के साथ समागम, और अच्छी मात्रा मे धनागम, अपने धन्य पुत्र से छाती लगाना सुरत मे सन्तुलित तत्परता, बिना विलम्ब के अपनी इच्छा की पूर्ति, जनता जब इकट्ठा होती है तब अपना सम्मान, अपने जन्म के कारण उत्पन्न कीर्ति और अपने पहले ही अभिप्रेत वस्तु का लाभ, ये आठ वस्तुएँ, हे नरपतिकुल के मकुट के मणि ! तुरन्त ही सन्मोद की पुष्टि

गोपालन् ग्रामपालनायीटिलवनेयु
नाविकन् वनकामनायीटिलवनेयु । १०९
आरुण्टु गुणवुमुपेक्षिक्करुतातें पुसा-
मारुं चौल्लुवन् सत्य दानवुमनालस्यं ११०
अनसूययुं क्षम धृतियुमिवयेल्लां
मनसा चिन्तचेय्तु धरिच्चीटुकवेणं । १११
आरुपेरुण्टु जीविच्चीटुन्तितनारत-
मारुपेरिलुं पिन्नेयेळामतारुमिल्ल । ११२
तस्करन् प्रमत्तङ्कल् वैद्यन् व्याधितङ्कलुं
मैक्कण्णिमारेल्लारुं कामयानन्मारिलु ११३
याचकन्मारेल्लारुं यजमानन्मारिलुं
राजावु विमदमानन्मारामवरिलुं ११४
विद्वान्मारेल्लां नित्यमूर्खन्मारिलुमल्लो
नित्यवुं जीविक्कुन्नु भूपालशिखामणे ! ११५
दोषङ्ङळुपेक्षिक्केण्टुन्नव राजाविना-
लेळुण्टु सप्तव्यसनङ्ङळेन्नल्लो चौल्लू । ११६
परस्त्रीजनसेव देवनं मृगययुं
विरक्तिवरातौरु मद्यपानवुमेटं ११७
वाक्पारुष्यवुं दण्डपारुष्यमाकुन्नतुं
वाय्पोटु नित्यमर्त्थदूषणं चेय्केन्नतु । ११८

जो वनवासी हो गया हो। छ गुण है जो मनुष्य के लिये उपेक्षा करने योग्य नही है। छहो को बतलाता हूँ। सत्य, दान, अनालस्य, अनसूया, क्षमा, और धृति। इन पर ध्यान करके इनको अपनाना चाहिये। छ प्रकार के लोग है जो अन्य छ प्रकार के लोगो पर जीवित है, सातवाँ प्रकार नही है। १०७-११२ चोर प्रमत्त पर, वैद्य रोगी पर सभी काजल की आँखवालियाँ कामुको पर, सभी भीख माँगने वाले यजमानो पर, राजा मदहीन और अभिमान-हीनो पर, सभी विद्वान् मूर्खो पर सदैव जीवित है, हे भूपाल ! राजा के त्याज्य सात दोष है जिन को 'सप्तव्यसन' कहते है। परस्त्रियो की सेवा, जुआ खेलना, अतिमात्र मद्यपान जिससे विरक्ति नही होती, कठोर बाते करना, कठोर दण्ड देना, और ऋण ले लेकर अर्थ का नाश करना। जो राजा विनाश के निकट पहुँच रहा है उसके पहले ही से आठ लक्षण दिखाई देते

दत्तमायतु चिन्तिच्चनुतापवुमर्-
तुत्तमनेङ्किलतु चोल्कयुमरुतल्लो । १३९
देशाचारवुं जातिधर्म्मवु चेय्तीटण-
माशु वज्जिच्चीटण दुर्ज्जनविवादवु १४०
डभमत्सरं मोहं पैशुनं पापकृत्यं
संप्रति वर्ज्जिक्केणं भूपतिद्विष्टनेयुं । १४१
मत्तोन्मत्तन्मारोटुमुत्तरं परयरु-
तुत्तमन्मारेप्पुरस्करिच्चु नटक्कणं । १४२
सख्यवुं विवाहवु व्यवहारवुं तनि-
क्कोक्कुमोट्टाभिजात्यमुळ्ळवरोटु वेण । १४३
हीनन्मारोटुकूटि संसर्ग्गमरुतोट्टु
दानवुं चेय्तीटणमाश्रितन्मार्क्कु नित्यं । १४४
भूपते ! तव नियोगत्तेयुं पालिच्चेटं
तापत्तेप्पूण्टु वाळुं पाण्डवर्तन्टे राज्यं । १४५
पातियुं कोटुप्पतु धर्म्ममतल्लयाय्किल्
खेदवु वरुं भवानेटमेन्नरिञ्ञालुं । १४६
नल्ल वाक्कुकळ् तव केट्टालिल्ललभावं
चोल्लुचोल्लिलनियुं नीयेन्नितु धृतराष्ट्रन् । १४७
चोल्लियनेरमतिनुत्तरं विदुररु
चोल्लिनान् मनोहरमायुळ्ळ वाक्कुकळाल् । १४८
नल्लतुमाकात्ततु चोल्लुवन् चोन्नाल् केळ्क्क-
यिल्ल नीयतुकोण्टु चोल्लुवान् मटियाकुं । १४९

का पालन करना चाहिये और दुर्जनो के साथ विवाद का वर्जन करना चाहिये। दम्भ, मत्सर, मोह, पिशुनता, पापकर्म, राजा को जो द्विष्ट है इन सवका वर्जन करना चाहिए, मत्त और उन्मत्तो से वात ही न करना चाहिये और उत्तम पुरुषो का आदर करते रहना चाहिये। मैत्री सम्बन्ध, विवाह और व्यवहार उन्ही लोगो के साथ करना चाहिये जिनका कुल अपने से तुल्य है। अधमो के साथ ससर्ग ही न करना चाहिये और आश्रितो को दान करते रहना चाहिये। १३९-१४४ हे भूपाल ! आप की आज्ञा का पालन करते हुए और दु:ख अनुभव करते हुए पाण्डवो को राज्य का आधा दे देने मे ही धर्म है। नही तो आपको वडे दु ख भोगने पडेगे। तव धृतराष्ट्र ने कहा— "तुम्हारा सदुपदेश सुनकर तृप्ति नही होती है। और कहते जाओ।" यह सुनकर विदुरजी ने मनोहर शब्दो में उत्तर

तन्नुटे जातितन्नेक्कण्टुळ्ळ सन्नामवुं
तन्नाल् पण्टभिप्रेतमायतिनुटे लाभ १२९
अेन्निवयेट्टुं सद्यस्सम्मोदं वळर्त्तीटु
मन्नवकुलमकुटत्तिन् नायकक्कल्ले ! १३०
क्षेत्रज्ञन्तन्नालधिष्ठितमायिरिक्कुमि-
क्षेत्रत्ते नवद्वारं पञ्चसाक्षिकमेन्नु १३१
त्रिस्थूणमेन्नुमऱियुन्नवन् महाविद्वा-
नेत्रयुमवन् क्षेत्रक्षेत्रज्ञवेदियल्लो । १३२
पत्तुपेरुण्टु भुवि धर्म्मत्तेयऱियाते
मत्तनु प्रमत्तनु क्रुद्धनुमुन्मत्तनुं १३३
चिन्ताश्रान्तनु त्वरमाणनु बुभुक्षितन्
लुब्धनु भीरुतानुं कामियायुळ्ळवनु । १३४
आकयालीवण्णमल्लामुळ्ळ भावङ्ङळि-
लेकनिष्ठया विद्वानिल्लेतु प्रमादङ्ङळ् । १३५
पुत्रार्त्थं पुरा सुधन्वाविनाल् गीतमाकु
चित्रमामितिहास केट्टिट्टिल्लयो भवान् ? १३६
उद्धतजनवेष कैक्कोण्टीटरुतल्लो
कत्थन चेय्तीटरुतात्म पौरुषत्तेयु । १३७
तन्नुटे सुखत्तिङ्कल् मोदिच्चीटरुतोट्टु-
मन्यदु.खत्तिङ्कलुण्टाकणं करुणयु । १३८

करती है। क्षेत्रज्ञ (आत्मा) का अधिष्ठित यह जो क्षेत्र (शरीर) है उसे नवद्वार और पञ्चसाक्षिक (पाँच इन्द्रियो वाले)। १२६-१३१ और त्रिस्थूण को जो जानता है वह महविद्वान् है उसी को 'क्षेत्र क्षेत्रज्ञविद्' कहते है। दस प्रकार के लोग है जो धर्म नही जानते है—वे है—मत्त, प्रमत्त, क्रुद्ध, उन्मत्त, चिन्ता के कारण थका हुआ, जल्दी काम करने वाला, भूखा, लालची, डरपोक और कामी। इस लिये इस तरह के भावो मे एकनिष्ठ विद्वान् प्रमाद नही कर बैठता है। आपने क्या वह सरस इतिहास नही सुना है जिसे पुत्र के सम्वन्ध मे सुधन्वा ने गाया है ?। उद्धत जनो की वेपभूपा नही अपनाना चाहिये और अपने ही पौरुप की श्लाघा न करनी चाहिये। अपने ही सुख मे प्रमोद न करना चाहिये और परदु.ख मे दया भी होनी चाहिये। १३२-१३८ जो दान किया गया उस पर पश्चात्ताप न करना चाहिये और उत्तम व्यक्ति उसकी घोपणा भी नही करते है। देशाचार और जातिधर्म्म

पादपफलं पळुक्कुंमुन्पे भुजिच्चीटिल्
स्वादुमिल्लल्लो पिन्नें वित्तुमिल्लातेवरु । १६०
पक्वमायतु भुजिच्चालतिरसमुण्टां
वृक्षवुमुण्टां पिन्नेप्फलवुमुण्टाय्वरुं । १६१
पुष्पङ्ङळ्तोरुंचेन्नु नित्यवुमुळ्ळ मधु-
पळ्पदमुरुक्कूट्टि रक्षिच्चु वर्द्धिप्पिक्कु । १६२
अप्पोलें नृपवरनेंत्रयुमहिंसया
तल्प्रजकळिल्निन्नार्ज्जिक्केणमर्त्थमेटं । १६३
विरिञ्ञ विरिञ्ञ पूवरुत्तुकोंळ्केयावू
विरञ्ञु मूलच्छेद चेय्यरुतोंरिक्कलु । १६४
आरामत्तिङ्कल् चेन्नु मालाकारनेप्पोलें
दारुमूलार्त्थियाकुमगारकारकन्टें १६५
कारियं काट्टीटरुतेन्नुमे नरपते !
सारनेन्निरिक्किलेन्नरिक कुरुपते । १६६
अनर्त्थ प्रजकळ्क्कु वरुत्तु निरर्त्थकन्
तनिक्कोरर्त्थलाभं वरिकयिल्लतानु । १६७
कुण्ठनां भूपालनेयाक्कुमे वेण्टीलेन्नाल्
पण्डनां भर्त्ताविनें नारिकळ्क्केन्नपोलें । १६८

गया । १५२-१५८ फिर अगर अविनय होगा तो वह सम्पत्ति को नष्ट कर देगा जैसे वार्धक्य रूप को नष्ट करता है, इसमे सन्देह नही। पकने से पहले ही फल अगर खाया जाय तो स्वाद भी नही होगा और बीज भी न बचेगा। पक्व फल खाने से एक तो बड़ा आनन्द होगा और दूसरा आगे वृक्ष भी होगे और फल भी। मधुमक्खी तो हर एक फूल का प्रतिदिन का मधु लेकर इकट्ठा करती है और उसकी रक्षा करके उसको बढाती है इसी प्रकार राजवर को चाहिये कि वह अपनी प्रजाओ से अधिक से अधिक धन ग्रहण करे। जो फूल विकसित है उसी को लेना चाहिये, जल्दी मे जाकर जड ही नही काटना चाहिये। १५९-१६४ उद्यान मे माली की तरह करना चाहिये, वृक्ष की जड़ को चाहनेवाले को कोयला बनानेवाले का काम कभी न करना चाहिये, हे भूपाल! हे कुरुपते! जान लीजिये कि बुद्धिमान् ऐसा ही करता है। एक निकम्मा राजा अपनी प्रजाओ का अनर्थ करेगा और अपना कोई लाभ नही पैदा कर सकता है। एक निकम्मे राजा को कोई नही चाहता है जैसे एक नपुसक पति को कोई भी नारी नही

नल्लतु पाण्डवर्क्कु नाट्टु पातियुं नल्कि-
यल्लल् तीर्न्निरिक्कतावल्लाय्किल् सुतन्मारे- १५०
क्कोल्लुमे पाण्डवन्मारिल्ल संशयमेतु
नल्ल भीष्मद्रोणकर्ण्णादियु मरिच्चीटु । १५१
प्रियमाकिलु पुनरप्रियमेन्नाकिलु
नयमाकिलुमपनयमाकिलु मति- । १५२
शुभमाकिलुमेटमशुभमेन्नाकिलुं
अभिमोदेन चोद्यं चेय्किले पऱयावू । १५३
वैचित्रवीर्यनृप ! केळ्क्कणमिवयेल्लां
वैशद्यं मनस्सिङ्कलुण्टल्लो भवानेटं । १५४
वैदुष्य भवानेक्काळेटमुण्टायिट्टल्ल
वैदग्ध्यं वाक्किनेटमुण्टेङ्किलतुमल्ल । १५५
स्नेहमुण्टतुकोण्टु केळ्क्कुं ञान् चोन्नालेन्न-
मोहमुण्टेनिक्कतुकोण्टु ञान् पऱयुन्नु । १५६
वंशनाशत्तेक्कण्टु सङ्कटं पारमुण्टु
सशयं तीर्न्नुतल्लो निन्नुटे सुतन्मार्क्को १५७
प्राप्तमायितु राज्यमिनिक्केन्नकतारि-
लोर्त्तु वर्त्तिच्चीटरुतुर्व्वीश न साप्रतं । १५८
पिन्नेयुमविनय सम्पत्ते हनिच्चीटु
निर्ण्णयमल्लो नल्ल रूपत्तेज्जरपोले । १५९

दिया। मै तो कार्य और अकार्य बतला दूँगा। पर आप तो उनको मानते नही। इस लिये कहने मे हिचकता हूँ। अच्छा तो यही होगा कि पाण्डवो को आधा राज्य देकर सुख से रहना। अगर यह नही होगा तो आपके पुत्रो का वध करेगे, सन्देह नही, और भीष्म, द्रोण, कर्ण आदि सज्जन भी मरेगे। १४५-१५१ प्रिय हो या अप्रिय, नय हो या अपनय, शुभ हो या अत्यन्त अशुभ तभी कहा जा सकता है जब प्रीति के साथ पूँछा जाय। हे विचित्रवीर्य के पुत्र राजन्! यह सब सुन लीजिये। आपका मन तो शुद्ध है। यह नही कि मेरा आप से अधिक वैदुष्य है और यह भी नही कि मेरी वाक् मे अधिक वैदग्ध्य है। मै इस लिये कह रहा हूँ कि मेरा आपके प्रति प्रेम है और मै इस मोह मे हूँ कि आप मेरा कहना मानेगे। भावी वशनाश को सोचकर मुझे बड़ा दुःख होता है। अब आपका सन्देह तो मिट गया। और आप के पुत्र ऐसा सोचकर व्यवहार न करे कि अब राज्य हमको प्राप्त हो

रक्षिच्चुकोळ्कवेण मानत्तेक्कोट्टु धान्यं
रक्षिक्कामनुक्रमकोण्टु वाजिकळेयुं । १७८
अन्तिके विलोकनंकोण्टु गोकुल रक्ष्यं
सन्ततं कुचेलकळ्कोण्टु नारिकळेयु । १७९
वृत्तिहीननु कुलमप्रमाणंपोल् नल्ल-
वृत्तवानेङ्किलन्त्यजातनु नन्नुतानुं । १८०
परन्मारुटे वित्तरूपवीर्याभिजात्य-
गुरुसौभाग्यसुखसल्क्कारादिकळ् कण्टाल् १८१
चित्तत्तिलसूय वर्द्धिच्चीटु पुरुषनु-
नित्यवुमाधियोळिञ्ञिल्लन्नु धरिक्कणं । १८२
उत्तमाशन मांसोत्तरमेन्तरिञ्ञालुं
मद्ध्यमाशनमल्लो गोरसोत्तरं नूनं । १८३
अधमाशन लवणोत्तरमेवं मून्नु-
विधमायुळ्ळ भुवि भोजनं नरपते ! १८४
अत्यन्तमधमन्माक्कशनाल् भयं पिन्ने
मद्ध्यमन्माक्कु मरणत्तिङ्कल्निन्नु भयं १८५
उत्तमन्माक्कु भयमपमानत्तिङ्कल्नि-
न्नित्तरमिनियुं ञान् चोल्लुवन् वेणमेङ्किल् । १८६
कार्यङ्ङळ् चेय्यायिकलुं चेय्किलुमकार्यङ्ङ-
ळार्यन्मार् भयप्पेटुमेप्पोळु रण्टिङ्कलुं । १८७

स्त्रियो की। जो सदाचारहीन है उसका कुल कोई प्रमाण नहीं सदाचारवाला अन्त्यज भी अच्छा है। १७३-१८० पराया वित्त, रूप, वीर्य, कुल, बडा सौभाग्य, सुख, सम्मान आदि देखकर जलनेवाले पुरुष का मानसिक दुःख कभी समाप्त नही होगा, जान लीजिये। सामिष भोजन ही उत्तम भोजन है दुग्धसहित भोजन तो मध्यम है और लवणप्रधान भोजन अधम है, इस तरह, हे भूपाल ! जगत् मे तीन प्रकार के भोजन है। अत्यन्त अधमो को भोजन से भय होता है, मध्यमों को मरण से भय होता है और उत्तम पुरुष तो अपमान से डरते है। आप चाहें तो इस प्रकार और कहूँगा। १८१-१८६ अपने कर्तव्यो का पालन न करना और अकार्य को करना, इन दोनो बातो से आर्य लोग बहुत डरते हैं। जो पदार्थ पीने पर मन का मद पैदा करता है उसका पान बड़े लोग

कर्म्मङ्ङळ्कोण्टुं नोक्कुकोण्टुं वाक्कुकळ्कोण्टुं
सम्मानिच्चीटुकिले रञ्जिप्पू लोक तन्कल् । १६९
पीडिप्पिच्चीटुन्नाकिल् पेटिक्कुं प्रजकळुं
वेगत्तिलोटुं मृगं व्याधनेक्काणुन्नेरं । १७०
कर्त्तव्यं परराष्ट्रमर्द्दनंपोलेतन्ने
नित्यवुं निज राष्ट्ररक्षणं राजाविनाल् । १७१
उन्मत्तनेन्नाकिलु बालकनेन्नाकिलुं
सम्मतमाय सारवाक्कु कैक्कोळ्केवेण्टू । १७२
शङ्किक्कवेण्ट सुवर्ण्णत्ते कैक्कोळ्के वेण्टू
पङ्कत्तिल् किटक्कुन्नतेङ्किलुमतिद्रुत । १७३
गोक्कळो गन्धंकोण्टुं ब्राह्मणर् वेदकोण्टुं
भोष्कल्ल चारन्मारेक्कोण्टु भूपालन्मारुं
नोक्किक्काणुन्नु कण्णुकोण्टु मटुळ्ळ जनं । १७४
मित्रबान्धवन्मारायुळ्ळु भूपालेन्द्रन्मार्
भर्त्तृबान्धवन्मारायुळ्ळु नारिकळेल्लां १७५
वेदबान्धवन्मारायुळ्ळु भूदेवेन्द्रन्मार्
मेदिनीश्वर ! गोक्कळ् पर्ज्जन्यबान्धवन्मार् । १७६
सत्यत्तेक्कोण्टु धर्म्ममभ्यासकोण्टु विद्य
वृत्तत्तेक्कोण्टु कुलं मज्जनंकोण्टु रूपं १७७

चाहती है। अपने कर्मो से, दृष्टियो से और बातो से सम्मान करने से ही अपने को लोकप्रिय किया जा सकता है। सताने से प्रजा डर जाती है जैसे शिकारी को देखते ही हिरन भागता है। जिस प्रकार शत्रुराष्ट्र का दमन करता है उसी प्रकार अपने राष्ट्र का रक्षण भी करता है। उन्मत्त हो या बालक हो धर्म की बात उस से स्वीकार करना ही है। १६५-७२ सुवर्ण अगर मट्टी मे भी पडा हो तो उसको निःशङ्क स्वीकार करना ही ठीक है। गाये गन्ध के द्वारा, ब्राह्मण वेदो के द्वारा राजालोग चारो के द्वारा देखते है, और लोग अपनी आँखो से देखते है, सच कहता हूँ। मित्र ही राजाओ के बन्धु होते हैं, पति ही स्त्रियो के बन्धु होते है, वेद ही ब्राह्मणों के बन्धु होते है और गायो का तो पर्जन्य ही बन्धु है। सत्य के द्वारा धर्म की, अभ्यास के द्वारा विद्या की, सदाचार द्वारा कुल की स्नान के द्वारा रूप की, नाप के द्वारा अनाज की रक्षा करना चाहिये और घोड़ो की रक्षा अनुक्रम से की जा सकती है। निकट से निरीक्षण करने से गोकुल की रक्षा होती है और सदैव बुरे कपड़े पहनने से

सत्यमार्ज्जवं शौचं सन्तोषमनसूय
चित्तशान्त्यनायासं प्रियवाक्यादिगुणं १९८
उण्टाकयिल्लयल्लो निर्णयं दुरात्मना-
मुण्टाकिलतु परपीडय्क्काय्वरुन्तानु । १९९
आत्मनि धर्म्मनित्यत्वं वचोगुप्ति दान-
मात्मज्ञानवुमसंरंभवु तितिक्षयु २००
तुष्टियुमहिंसयुमनुकम्पादिकळु
दुष्टर्क्कु कुरञ्ञोन्नुमुण्टाकयिल्लयल्लो । २०१
भूपते ! हिंस बलं केवलमसाधूनां
भूभृतां बलं दण्डविधियेन्नरिञ्ञालु । २०२
स्त्रीणां शुश्रूष बलं गुणिनां क्षम बलं
प्राणिना बल जलं पार्त्थिवकुलपते ! २०३
अटवि मळुकॊण्टु वॆट्टियालकच्चिटुं
कठिनवाचा वॆट्टिमुरिच्चालकच्चिटा । २०४
नाराचशल्यं देहत्तिङ्कल्निन्नॆटुत्तीटां
क्रूरवाक्शल्यमॆटुक्कुं चिकित्सकनिल्ल । २०५
विश्वपालनराजलक्षणसम्पन्ननाय्
विश्वासयोग्यनाय भूपति युधिष्ठिरन् २०६
धीरात्मा दुःखङ्ङळॆस्सहिच्चीटुन्नु तव
गौरवं निमित्तमायॆन्नतोर्त्तरुळणं । १०७

लीजिये। सत्य, नेकी, शुद्धि, सन्तोष, अनसूया, चित्तशान्ति, अनायास प्रियवाक्य आदि गुण निस्सन्देह दुष्टो मे नही होते है। अगर होते भी है तो औरों के दुख के कारण होते है। १९३-१९९ निरन्तर धर्मतत्परता, वचन का पालन, दान, आत्मज्ञान, असंरंभ, तितिक्षा, सतोष, अहिंसा, दया आदि गुण दुष्टो में छोटी मात्रा में भी नही होते है। हे राजन् ! केवल दुर्जनो का वल अहिंसा है। भूपालो का बल है दण्डविधि, जानलीजिये। हे राजकुलो के नायक ! शुश्रूपा ही स्त्रियों का वल है, गुणियो का बल है क्षमा, प्राणियो का वल है जल। वन के वृक्ष अगर काटे जायँ तो बरसात मे फिर फूलपत्र निकलेगे, परन्तु कठोर वचन से जो काटा जाता है वह फिर नही जुड़ेगा। लगा हुआ शर शरीर से निकाला जा सकता है परन्तु क्रूर वचन के शल्य को निकालने वाला चिकित्सक नही है। २००-२०५ सारे विश्व के पालन के लक्षणो से युक्त विश्वास के पात्र राजा युधिष्ठिर धीरात्मा है और आप के प्रति

मानसमदकरमयुळ्ळ पेयङ्ङळे-
प्पानवुं चेय्तीटुमारिल्लल्लो महत्तुक्कळ् । १८८
अर्त्थाभिजात्यविद्यादिकळालुळ्ळ मद-
मेन्नयुं विरयेप्पों सज्जनसगत्तिनाल् । १८९
सत्तुक्कळसज्जनत्तोटु चेन्नेतानुमों-
न्नर्त्थिच्चालसज्जन सल्भावं नटिच्चीटुं । १९०
वस्त्रवानायुळ्ळवनाल् जितयल्लो सभ
सत्वरं गतिमता निर्ज्जितमद्ध्वातानु । १९१
गोमता जितमशनाग्रहं शीलवता
श्रीमता सर्व्वं जितमुर्व्वीन्द्रशिखामणे ! । १९२
शीलमेन्नयुं प्रधानं पुरुषनु नूनं
शीलमल्लायिकिल् मित्रार्थङ्ङळ्कोण्टेन्तु फलं ? १९३
ऐश्वर्यमत्तन् पापिष्ठन् मधुमत्तनिलु-
मैश्वर्यमत्तनूद्ध्वंगतियुमिल्लयल्लो । १९४
धर्म्मार्त्थङ्ङळे त्यजिच्चिन्द्रियवशगनाय्
दुर्म्मदत्तोटु वर्त्तिच्चीटिन पुरुषनु १९५
वित्तवुं धान्यङ्ङळु जीवनुं नशिच्चुपो-
मुत्तमनाकुन्नवनिन्द्रियजयं वेणं । १९६
अर्त्थेशनिन्द्रियेशनल्लेङ्किलवनुळ्ळो-
रर्त्थवुं नशिच्चुपोंक्षिप्रमेन्तरिञ्ञालुं । १९७

नहीं करते है। अर्थ, कुल, विद्या आदि का मद सज्जनो के सम्पर्क से जल्दी मिट जाता है। सज्जन दुर्ज्जन कपट सद्भावना दिखलाते हैं। अच्छा कपड़ेवाला सभा को जीतलेता है और वेग से चलनेवाला मार्ग को जीतलेता है। जिसकी गाय है वह खाने की इच्छा को जीतता है और, हे भूपालों के शिखामणे !, शीलवान् और श्रीमान् सब को जीत लेता है। १८७-१९२ निस्सन्देह शील ही मनुष्य के लिये प्रधान है जिसका शील नही है उसका मित्र और धन से क्या लाभ है ? ऐश्वर्यमत्त और मधुमत्त में ऐश्वर्यमत्त ही की ऊद्ध्र्वगति नही है। जो पुरुष धर्म और अर्थ को त्याग कर इन्द्रियो के वश में आकर दुर्मद दिखलाता है उसका धन, धान्य और जीवन नष्ट हो जायेगे। जिसने इन्द्रियो को जीता है वही उत्तम हो सकता है। धनी प्रभु की इन्द्रियाँ अपने वश में अगर नही है तो तुरन्त ही उसका अर्थ नष्ट हो जायेगा, जान

क्रोधिक्कर्त्थवुमिल्ल शठनु मित्रमिल्ल
क्रूरनु नारियिल्ल सुखिक्कु विद्ययिल्ल। २१८
कामिक्कु नाणमिल्ल कोशमिल्ललसनु
सर्व्ववुमिल्ल नूनमनवस्थितनोर्त्तालू। २१९
कृतज्ञत्ववु पराक्रमवुं विनयवुं
मितभाषण दानमन्वयविशुद्धियु
श्रुतवुं सल्प्रज्ञयुमुळ्ळवन् शोभिक्कुन्नु २२०
इच्चौन्न गुणमेट्टुमिल्लातपुरुपने-
स्सज्जनमेतुं वहुमानिक्कयिल्लयल्लो। २२१
स्वर्लोकत्तिनु निदर्शङ्ङळायिट्टुण्टुपोल्
चोल्लुन्नितेट्टु गुणमन्त्रिक धात्रीपते ! २२२
अन्ववेदङ्ङळ् नालुमन्ववायङ्ङळ् नालुं
मन्नवा ! चोल्लीटुवन् केट्टालु यथासौख्यं। २२३
यज्ञदानाध्ययनतपसा निष्ठ नालुं
विज्ञानिजनमन्ववेदङ्ङळेन्नु चोल्लू। २२४
सत्यमार्ज्जवं दममानृशस्यवुमिव
चत्वारि बुधमतमन्ववायङ्ङळेन्नु। २२५
वृद्धन्मारिल्लात्तोरु सभयुं सभयल्ल
वृद्धन्मारल्ल धर्म्मत्तेच्चोल्लीटातवरुं। २२६

देती है और हे निर्मल मते ! अतिमान सबका अपहरण करता है। क्रोधी अर्थहीन रहता है, शठ तो मित्रहीन, क्रूर स्त्रीहीन, सुखी विद्याहीन कामी लज्जाहीन, आलसी कोपहीन और जो अनवस्थित (अप्रतिष्ठित) है, वह सभी से वञ्चित रहता है। २१३-२१९ कृतज्ञता, पराक्रम, विनय, मितभाषण, दान, वंशशुद्धि, विद्या, और सद्बुद्धि जिसकी हैं वह समाज मे चमकता है। ये आठ गुण जिस के पास नही हैं उसका वहुमान सज्जन नही करते है। हे भूपाल ! जान लीजिये कि ये आठ गुण जो मैं अभी कहूँगा स्वर्ग जाने के लिए पथप्रदर्शक है। चारो अन्ववेदो को और चारो अन्ववायो को हे भूपाल ! मैं कहूँगा, आप सुन लीजिये। यज्ञ, दान, अध्ययन और तप मे निष्ठा इन चारो को विज्ञानी लोग अन्ववेद कहते है सत्य, आर्ज्जव (नेकी), दम और अनृशस्य (दया) इन चारों को विद्वान् लोग अन्ववाय कहते है। वह सभा नही है जिसमे वृद्ध न हो, वे वृद्ध नही है जो धर्म का उपदेश न करते हो। २२०-२२६ सत्यहीन धर्म धर्म ही नही है, माया से मिला हुआ सत्य सत्य नही

सर्व्ववेदज्ञनेक्काळुल्क्रुष्टनाकुन्नतु
सर्व्वभूतङ्ङळिलुमार्ज्जवमुळ्ळ पुमान् । २०८
आकयाल् पुत्रन्मारिलार्ज्जवं प्रतिपादि-
च्चेकान्तसौख्यं वाणाल् स्वर्ग्गप्राप्तियु वरुं । २०९
अत्रनाळेक्कु कीर्त्ति निल्क्कुन्नितवनियि-
लत्रनाळेक्कु स्वर्ग्गवासमुण्टवनोर्त्तालू । २१०
दैत्येन्द्रन् विरोचनन् केशिनिनिमित्तत्ता-
लास्थया सुधन्वाविनोटुळ्ळ सवादं नी २११
केट्टिट्टिल्लयो नृपश्रेष्ठनां धृतराष्ट्र !
केट्टालेत्रयु मनोमोहनमितिहास । २१२
क्षत्तावु धृतराष्ट्रर्त्तन्नेक्केळ्प्पिच्चीटिना-
नुत्तममाय पुरावृत्तमेप्पेरुमप्पोळ् । २१३
रूपत्तिन् गुणमपहरिच्चीटुन्नु जर
कोपमर्त्थत्तेयेल्लां प्रत्यपहरिक्कुन्नु । २१४
शीलत्तेयपहरिच्चोटुन्नु खलसेव
कालन् प्राणनेयपहरिच्चीटुन्नुवल्लो । २१५
आशतानपहरिच्चीटुन्नु धैर्य्यत्तेयु-
माशु कन्दर्प्पनपहरिच्चीटुन्नु नाण । २१६
धर्म्मचर्य्ययेयपहरिक्कुमसूययु
निर्म्मलमते ! सर्व्व हरिक्कुमतिमानं । २१७

गौरव के कारण दुःखो का अनुभव कर रहे है, यह स्मरण रहे। सभी वेदों के विद्वान् की अपेक्षा सभी भूतो के प्रति नेकी दिखलाने वाला पुरुष उत्कृष्ट है। इस लिए अगर आप पुत्रो के प्रति नेकी से काम लेगे तो एकान्त सौख्य भी होगा और स्वर्गप्राप्ति भी होगी। जितने दिन पृथिवी मे अपनी कीर्ति रहेगी उतने ही दिन स्वर्ग मे निवास भी होगा। केशिनी के हेतु दैत्येन्द्र विरोचन और सुधन्वा के बीच जो सवाद हुआ था वह नृपश्रेष्ठ धृतराष्ट्र ! आपने नही सुना है ? वह इतिहास सुनने मे अत्यन्त मनोहर है। २०८-२१२ तब विदुर ने धृतराष्ट्र को सभी उत्तम इतिहासो को सुनाया। वार्धक्य रूप के गुणों का अपहरण करता है, क्रोध तो अर्थ का नाश कर देता है, दुष्टो की सेवा शील का अपहरण करती है और काल प्राणों का अपहरण करता है। आशा तो धैर्य का अपहरण करती है और कामदेव तुरन्त ही ही लज्जा का अपहरण करता है। असूया धर्मचर्या को नष्ट कर

उद्भवस्थानमन्वेषिक्केण्ट दिव्यन्मार्क्कि-
ल्लुत्पत्तिदोषमॆन्नतोर्क्कणं नरपते ! २३७
व्याहृतत्तेक्काळ् श्रेयस्साकुन्नतव्याहृत
व्याहृतं रण्टामतु सत्यत्ते वदिक्कण २३८
व्याहृत पिन्ने प्रिय वदिक्क मून्नामतुं
व्याहृतं धर्म्म वदिक्कॆन्नतु नालामतुं । २३९
उत्तमन्मारे वेणं सेविच्चुकॊळ्ळुवानुं
मध्यमन्मारॆक्कार्यकाले सेविक्कवेण्टू । २४०
सेविच्चीटरुतधमन्मारेयोरिक्कलुं
भविच्चीटरुतवरोटाभिमुख्यंपोलुं । २४१
मानसतापंकॊण्टु बलवु शरीरवुं
ज्ञानवुं क्षयिच्चुपो व्याधियु वर्द्धिच्चीटुं । २४२
पॆरिके विश्वस्तन्टे पत्नियॆ प्रापिप्पवन्
गुरुतल्पगन् वृषलीपतियाकुं द्विजन् २४३
शरणागतहन्ता मद्यपनिवरॆल्लां
करुतीटणं ब्रह्महन्ताविनोक्कुमल्लो । २४४
ऎप्पॊळु प्रियं पऱञ्ञीटुवान् पलरुमु-
ण्टप्रियमॆन्नाकिलुं पत्थ्यत्तॆच्चॊल्लीटुवान् २४५
सत्पुरुषन्मारिल्ला केळ्प्पानुमारुमिल्ल
दुर्ब्बोधमुळ्ळ जनमॊळिञ्ञिल्लॊरेटत्तुं । २४६

कहना ही है तो सच कहना चाहिये, यह दूसरी वात हुई, और अगर कहना है तो प्रिय वात कहना चाहिये, यह तीसरी वात हुई और चौथी वात यह है कि धर्म वतला दो। उत्तमो की ही सेवा करनी चाहिये और काम पडने पर ही मध्यमो की सेवा हो। २३२-२४० अधमो की कभी सेवा न करना चाहिये उनके सामने जाना भी न चाहिये। मनोदुःख के कारण वल, शरीर, और ज्ञान नष्ट हो जाते हैं और व्याधि बढती है। अपने विश्वस्त मित्र की पत्नी को लेने वाला, गुरुतल्पग, ब्राह्मण जो वृषली का पति होता है, शरणागत की जो हत्या करता है, मद्य पीनेवाला ये सब जान लीजिये ब्रह्महत्या करनेवाले के तुल्य है। सदैव प्रिय कहने वाले वहुत होते हैं अप्रिय होते हुए भी जो हित का है उसे कहने वाले सत्पुरुष कम है और सुनने वाले है ही नही। दुर्बोध वाले लोग जहाँ नही हो वैसा कोई स्थान नही है। २४१-२४६ राजा के पास ऐसा अमात्य होना चाहिये जो अपने स्वामी का प्रिय और

सत्यमिल्लात धर्म्मं धर्म्मवुमल्लयल्लो
सत्यवु सत्यमल्ल मायानुविद्धमायाल् । २२७
सत्यवुं रूपं श्रुतं विद्ययुं कुल शील
शक्तियु धनं शौर्य विचित्रभाष्यमिव २२८
पत्तुण्टु संसर्ग्गयोनिकळेन्नरियणं
पृत्थ्वीशतिलकमे ! केट्टालुमिनियु नी । २२९
वासरत्तिङ्कल् प्रवर्त्तिक्किले रात्रौ पिन्ने
वासंचेय्तीटावितु सुखमायेन्नु नूनं । २३०
एट्टु मासवुं प्रवर्त्तिक्किले पुनरति-
वृष्टिमासङ्ङळ् नालु सुखमाय् वसिक्कावू । २३१
यौवनत्तिङ्कल् प्रवर्त्तिच्चर्थमार्ज्जिक्किले
चेौव्वोटे वार्द्धक्यत्तिल् सुखिच्चुवसिक्कावू । २३२
जीवपर्यन्त प्रवर्त्तिक्किले मरिच्चालु
देवलोकादिकळिल् स्वैरमाय् वसिक्कावू । २३३
आचार्यनात्मवतां शास्तावु दुरात्मनां
राजावु शास्ता पिन्नेच्छन्नपापन्माक्कॅल्लां २३४
अन्तकन्तन्ने शास्तावाकुन्नतरिञ्ञालु-
मेन्तिनु वळरे ज्ञानिरत्तरं पऽयुन्नू । २३५
तापसन्मारुटेयुं वाहिनिमारुटेयु
शोभतेटीट्टु महात्माक्कळ्वंशस्तिन्टेयुं २३६

है। सत्य, रूप, श्रुत (अध्ययन), कुल, शील, शक्ति, धन, शौर्य और वाग्मिता, ये, दस गुण, जान लीजिये, हे भूपाल ! सत्सग से पैदा होते है। और सुन लीजिये। दिन मे काम करने से निस्सन्देह रात मे सुख से रहा जा सकता है। आठ महीने काम करने से ही वर्षा के चार महीने आराम से कट सकते है। जवानी मे काम करने से ही बुढापे मे कोई सुख से रह सकता है। आजीवन काम करने से ही मरने के बाद देवलोक आदि स्थानो मे सुख से वास हो सकता है। २२७-२३२ सज्जनो का शासन करनेवाला आचार्य है, दुरात्माओ का शास्ता राजा है, छिपकर पाप करने वालो का शास्ता है अन्तक (यमराज), जान लीजिये। इस प्रकार अधिक कहने मे क्या लाभ है? तापसो को, वाहिनियो के, महात्माओ के उज्जवल वश के, उत्पत्तिस्थान को ढूंढने की आवश्यकता नही है, क्योकि, हे भूपाल ! दिव्यो का उत्पत्तिदोष नहीं है, स्मरण रहे। कही हुई से न कही हुई (बात) श्रेष्ठ है, अगर

भर्त्ताविन् नियोगत्तेयादरियातेयतिल्
प्रत्युक्ति परञ्ञेटमात्माभिमानतोटुं २५७
चित्तत्तिल् प्रतिकूलमाय् परञ्ञीटुन्नोरु
भृत्यने त्यजिक्केणं बुद्धिमानाय नृपन् । २५८
सकल भूतङ्ङळ्क्कुं हितमायात्माविनुं
सुखमायिरिप्पते चेय्यावू भूपालनुं । २५९
बुद्धियु प्रभाववुं तेजस्सुमुत्थानवुं
सत्वरमेटं व्यवसायवुमुळ्ळवनु २६०
वृत्तिक्कु भयमोरुनाळुमुण्टाकयिल्ल
वृत्तिक्कु भयमायाल् निष्फलं गुणमेल्लां । २६१
नारिमारेयु परन्मारेयुं सर्प्पत्तेयुं
वैरिपक्षिकळेयुं स्वाद्ध्यायत्तेयु निज- २६२
भोगानुभवत्तेयु जीवितकालत्तेयुं
भागधेयत्तेयु विश्वासमुण्टाकवेण्टा । २६३
सर्प्पाग्निसिहङ्ङळु कुलपुत्रनुमुळ्ळिल्
स्वल्पवुमवज्ञेयन्मारल्लेन्नरियणं । २६४
विद्याभिजनवयोबुद्ध्यर्त्थशीलङ्ङळाल्
वृद्धन्मारवमन्तव्यन्मारल्लोरिक्कलुं । २६५
गुणवान्मारायुळ्ळ पाण्डवन्मारे नित्य-
मणयत्तिरुत्तुकिल् निनक्कु सौख्यं वरुं । २६६

बनकर अपनी शक्ति दिखलाता है वैसे भृत्य के समान प्रेम का पात्र और कोई नही है। स्वामी की आज्ञा का आदर न करके, उसका आक्षेप करता है और आत्माभिमान रखता है और अपने चित्त मे उसके प्रतिकूल आचरण करता है वैसे भृत्य को बुद्धिमान् राजा त्याग करे। एक भूपाल को चाहिये कि ऐसा व्यवहार करे कि सभी प्राणियो का हित हो और अपना भी सुख हो। जो बुद्धिमान्, प्रभावशाली, तेजस्वी, और अत्यन्त प्रयत्नशील है उसको कभी भी अपनी जीविका की चिन्ता न करनी पडेगी, जीविका की चिन्ता अगर हो जाय तो सभी गुण व्यर्थ हो जाते है। २५५-२६१ स्त्रियो, शत्रुओ, सांपो, शत्रुपक्षवालो, स्वाध्याय, अपने भोगानुभव, अपने जीवितकाल और भाग्य पर विश्वास न रखना चाहिये। जानलीजिये कि सर्प, अग्नि, सिंह, और कुलपुत्र, ये, तनिक भी उपेक्षा के पात्र न होने चाहिये। विद्या, कुल, वय, बुद्धि, अर्थ, शील इन के कारण जो वृद्ध है इनकी कभी भी अवज्ञा

भर्त्ताविन् प्रियाप्रियमरिञ्ञीटातें धर्म्मं-
तत्त्ववुमरिञ्ञुकोंण्टप्रियमेन्नाकिलुं २४७
पत्थ्यत्तेच्चोंल्लुममात्यन् वेणं राजावाया-
लेंत्रयुं वन्नुकूटुमभ्युदयवुमेन्नाल् । २४८
सर्व्ववुमुपेक्षिच्चुमात्मावें रक्षिक्कण-
मुर्व्वियेयुपेक्षिच्चुं मित्रत्तें रक्षिक्केणं । २४९
ग्रामत्तेयुपेक्षिच्चुं राज्यत्तें रक्षिक्केणं
ग्रामत्तेयोरु गृहं कळञ्ञुं रक्षिक्कणं । २५०
ओंरुवन्तन्नेक्कळञ्ञोंरिटं रक्षिक्कणं
करुतीटुक मनतारतिलिवयेल्लां । २५१
पुत्रनेयुपेक्षिच्चुं वंशत्तें रक्षिक्कण-
मुत्तमन्मारायुळ्ळोरिङ्ङने चेंय्तुआयं । २५२
अर्थत्तें रक्षिक्कणमापत्तुवरुन्पोंळे-
क्कर्थत्तोंक्काळुं धर्म्मदारङ्ङळ् रक्षिक्केणं । २५३
दारार्थङ्ङळेक्काळुमात्मावें रक्षिक्कणं
धीरन्मारायुळ्ळवरिङ्ङने चेंय्तु आयं । २५४
भर्त्ताविन्नभिमतमरिञ्ञु कार्यङ्ङळे
नित्यवुमवक्रबुद्धया स्वयं रक्षचेंय्तु २५५
पत्थ्यङ्ङळ् वचिच्चनुरक्तनाय् शक्तिज्ञनां
भृत्यन्तन्नोटु तुल्यनायनुकम्प्यनिल्ल । २५६

अप्रिय न जानता हो, पर धर्मतत्त्व को जानता हो और अप्रिय होने पर भी हित की बात कहने वाला हो। तभी तो अभ्युदय होगा। सब की उपेक्षा करके अपनी आत्मा की रक्षा करना चाहिये। पृथिवी की उपेक्षा करके मित्र की रक्षा करना चाहिये। गॉव की उपेक्षा करके देश की रक्षा करना चाहिये एक घर की उपेक्षा करके गॉव की रक्षा करना चाहिये। एक व्यक्ति को खोकर भी एक स्थान की रक्षा करना चाहिये यह सब आप ठीक से समझ लीजिये। अपने पुत्र की भी उपेक्षा करके वश की रक्षा करना चाहिये। उत्तम व्यक्ति इस प्रकार त्याग करते है। सकट आने पर अर्थ की रक्षा करना चाहिये अर्थ से भी पहले धर्मपत्नी की रक्षा करना चाहिये। अर्थ और कलत्र से भी पहले आत्मा की रक्षा करना है। धीर पुरुष इस प्रकार त्याग करते है। २४७-२५४ स्वामी का अभिमत जान कर सीधी बुद्धि से जो सभी कर्तव्यों का पालन करता है और हित की बाते कहते हुए अनुरक्त

इत्तरमुळ्ळ विदुरोक्तिकळ् वहुविधं
विस्तरिच्चुरचेय्यानेतुमे कालं पोरा । २७७
दैवकल्पित तट्टुक्कावतल्लोरुवनु
दैवत्ताल् कृतमिदमेन्नोर्त्तु विढुररु । २७८
पौरुप निरर्त्थकमेन्नुरूच्चतुनेरं
कौरववीरनोट्टु पिन्नेयुमुरचेय्तान् । २७९
भूभारहरणत्तिनाय् पिरन्नोरु देवन्
भूपति रमापति लोकैकपति कृष्णन् २८०
कर्म्मणां पति वेदपति देवानां पति
धर्म्मैकपति यज्ञपति सत्पति हरि २८१
भक्तवत्सलन् करुणानिधि पशुपति
भुक्तिमुक्तिकळ् दानं चेय्तीट्टु यदुपति । २८२
तत्वादि गुणत्रययुक्तना प्रकृतिक्कु
तत्त्वङ्ङळ्ळेल्लाट्टिनुमाधारभूतन् नाथन् २८३
तन्तिरुवटियुटे कल्पितमेल्लामेन्नु
चिन्तिच्चु तत्पादाब्ज सेविच्चुकोळ्क नित्यं । २८४
पिन्नेयस्सनत्कुमारन् मुनियेळ्ळुन्नळ्ळि
मन्नवन् धृतराष्ट्रर्तन्नोटायरुळ्चेय्तु । २८५
अध्यात्मं पलतरमज्ञानं कळवाना-
यत्यन्तमूढन्मावकर्त्तेत्रियुं विपरीतं । २८६

वर्णन करने के लिये समय नही है । २७४-२७७ दैव का तय किया हुआ कोई रोक नही सकता, यह सव देव ने ही किया है, यह समझकर और यह निर्णय करके कि इसमे पौरुष व्यर्थ है विदुरजी ने फिर धृतराष्ट्र से कहा । पृथिवी का भार कम करने के लिए जन्म लिये हुए देव भूपति, रमापति, लोको का एकमात्र पति कृष्ण, कर्मो का पति, वेदो का पति, देवो का पति, धर्म का एकमात्र पति, यज्ञ-पति, सत्पति, हरि, भक्तवत्सल, करुणानिधि, पशुपति, भुक्ति और मुक्ति प्रदान करनेवाले यदुपति तत्त्वो से और गुणत्रय से युक्त प्रकृति का और सभी तत्त्वो का एकमात्र आधार नाथ की ही आज्ञा से यह सव होता है, ऐसा मानकर उनके पादपद्मो का ध्यान करते हुए उसकी सदैव सेवा करो । तदनन्तर मुनि सनत्कुमार पधारे और उन्होने राजा धृतराष्ट्र से निवेदन किया । २७८-२८५ "अध्यात्म के सवन्ध मे जो तरह-तरह के अज्ञान है उनका त्याग करना अत्यन्त मूर्खो के लिये नापसन्द है" । तापसश्रेष्ठ के सिधारने के वाद

शिष्टनामवन्तन्नै द्वेषमुण्टेन्नाकिलुं
तुष्टनाय् परिग्रहिच्चीटुकेन्नतेवरू । २६७
आर्त्तनायिरिप्पवनौषधं कय्क्कुन्नतु-
मास्थया सेविच्चीटुमाऽल्लो कण्टुपोरू । २६८
दुष्टनामवन्तन्नै स्नेहमुण्टेन्नाकिलुं
पेट्टेन्नु परित्यजिच्चीटुकेन्नतेवरू । २६९
दष्टमायितु विरल् पाम्पिनालेन्नाकिलो
पेट्टेन्ना विरल्तन्नै छेदिक्केन्नतु वरं । २७०
मारीचन् मण्डोदरि मयनु सुमालियुं
वीरनां कुंभकर्ण्णन् नीतिमान् विभीषणन् २७१
ऍन्निवर् पऽञ्ञतु केळाञ्ञु दशमुखन्
तन्नुटे कामत्तिन्टे मूर्च्छतनिमित्तमाय् २७२
इन्द्रजित्तिन्टे वाक्कु केट्टतु निमित्तमाय्
वन्नितु दशास्यनु नाशमेन्नेऽरिञ्ञालुं । २७३
ऍन्नतुपोले वरुं नाशमिन्निविटेयुं
निन्नुटे मकन्तन्टे वाक्कुकळ् केळ्क्कुन्नाकिल् । २७४
कामत्तालतुवन्नु राक्षसप्रवरनु
लोभत्ताल् वरुन्नितु निन्नुटे मकनिप्पोळ् । २७५
मक्कळे लाळिक्करुताकायेन्नतु कण्टाल्
शिक्षिच्चु तन्टे कालं कळिच्चुकोळ्केयावू । २७६

न हो। गुणी पाण्डवो को सदैव अपने पास रखने से आप का सुख होगा। शिष्टजन पर द्वेप होने पर भी तुष्ट होकर उनको स्वीकार करना ही ठीक है। २६२-२६७ यही देखा जाता है कि रोगी कड़ुई दवा का भी आस्था के साथ सेवन करता है। दुष्ट का, स्नेह होने पर भी, तुरन्त त्याग करना ही उचित है। साँप की कटी उँगली को तुरन्त काट डालना ही पड़ता है। मारीच, मन्दोदरी, मय, सुमाली, वीर कुम्भकर्ण, नीतिवाला विभीपण, इनका कहना न मानने से अपने काम की तीव्रता के कारण और मेघनाद का कहना मानने के कारण रावण का नाश हुआ, जान लीजिये। २६८-२७३ यहाँ भी वैसा ही नाश होगा अगर आप अपने पुत्र की बाते सुनेगे। राक्षसप्रवर का नाश काम के कारण हुआ आपके पुत्र का तो लोभ के कारण होगा। बच्चों के लालन मे दोष देखकर उनको दण्ड देते हुए अपना समय बिताना ही ठीक है। विदुर की इस प्रकार की वहुविध उक्तियो का विस्तार से

बन्धिच्चु तीयुं वच्चितन्तरं वरिकया-
लन्तवुमवक्कुं वन्नीटातें जीविच्चोरु । २९७
कुन्तितन्तनयन्मारभ्युदयत्तेक्कण्टु
सन्तापं पूण्टोरु नी कळ्ळच्चूताले नाटु- २९८
मेन्तोरु कष्टं । पङ्च्चटवीतन्निलाक्कि-
येन्तिनि नल्लू नमुक्केन्नतु मनक्कान्पिल् २९९
चिन्तिच्चु वाळुंकालं पिन्नेयु चतियाले
अन्तकपुरत्तिङ्कलयप्पान् पोय्कतन्नि- ३००
लन्तरा चेन्नु निङ्ङळ् मरुन्नु कलक्कुन्पोळ्
गन्धर्व्वश्रेष्ठन् चित्तरथनुं पटयुमाय् ३०१
बन्धिच्चु निङ्ङळेयु कोण्टवन् पोकुन्नेर
वन्धुक्कळाय निङ्ङळ् चेय्त दुष्कर्म्मेल्लां ३०२
चिन्तचेय्यातें वन्नु वेगत्तिल् युद्धंचेय्तु
गन्धर्व्वप्रवरनें जयिच्चु वीण्टुकोण्टु ३०३
वन्धुभावेन राज्यत्तिङ्कलेक्कयच्चोरु
कुन्तितन् तनयन्माराकिय पाण्डवन्मार् ३०४
चिन्तिच्चालशक्तन्मारेन्नो निन्पक्षमुळ्ळि-
लन्धत्व चेरुतल्ल निनक्कु सुयोधन ! ३०५
धर्म्ममुळ्ळवर् जयिच्चीटुमेन्नतुकोण्टु
धर्म्मजन् जयिक्कुमेन्नेल्लारुं पऱयुन्नु । ३०६

पर तुम लोगो के भ्रम के कारण उनका नाश न हुआ और वे जीवित रहे। उनके अभ्युदय को देखकर तुम जलने लगे और कपट-जुआ के द्वारा— कैसी लज्जा की बात है— उनका राज्य छीनकर उनको वन को भगा दिया। फिर 'हमारा भला कैसे हो' ऐसा सोचकर। २९४-९९ दुवारा वेईमानी ही से उनको यमलोक भेजने के लिये तुम लोग जव सरोवर के पानी मे दवा मिला रहे थे तव गन्धर्वश्रेष्ठ चित्तरथ सेना के साथ पहुँचे और तुम लोगो को वाँधकर ले जा रहे थे। परन्तु तुम वन्धु लोगो के दुष्कर्मो को भूलकर कुन्ती के पुत्त पाण्डव जल्दी वहाँ पहुँचे और गन्धर्वप्रवर को युद्ध मे पराजित करके तुम लोगो को छुड़वाया और अपने राज्य भेज दिया। हे सुयोधन ! तुम तनिक विचार करो ऐसे पाण्डव शक्तिहीन हो सकते है ? अगर यही तुम्हारा मत है तो तुम्हारा अन्धापन छोटा नही है। धर्म जिसका है वह जीतेगा, इस लिए सव कहते है कि युधिष्ठिर की विजय होगी। द्रोणजी ने भी

तापसश्रेष्ठनुतानुमेळुन्नळिळयशेपं
तापमुळ्क्कोण्टु पिन्ने विदुररुरचेय्तु । २८७
मेलिले विशेषङ्ङळेल्लामे केट्टु केट्टु
कालवुं पुलर्न्नितु पिन्नेयङ्ङेल्लावरुं २८८
मन्त्रशालयिल्पुक्कु तुटङ्ङीनिरूपण-
मन्धनां नृपतियु भीष्मद्रोणादिकळुं । २८९
सञ्जयनतुनेर धर्म्मजन् पऱञ्ञतुं
कञ्जलोचननरुळ्चेय्ततुमऱियिच्चान् । २९०
अच्युतनरुळ्चेय्त वाक्कुकळ् केट्टु भीष्मर्
निश्चयं कृष्णन् चोन्नतन्तरमिल्लयेन्नान् । २९१
मूर्त्तिकळ् मून्नुपेर्क्कु मूलमां मुकुन्दनु
पार्त्थनुन्मोरु भेदमिल्लेटो सुयोधना ! २९२
तन्नेत्तान् पुकळ्त्तुन्न कर्ण्णनु नीयुमोट्टु
सन्नाहमोटु पाण्डुनन्दनन् वरुन्नेरं । २९३
गोक्कळे वीण्टुकोण्टु पोयतु कण्टतिल्ले ?
नोक्केटो सुयोधना ! कण्टालोट्टऱियेणं । २९४
वरुवानुळ्ळतोक्क वन्नाल् पिन्नयुमेतु-
मऱियप्पोकातवरेङ्ङने पोरुक्कुन्नु ? २९५
वेन्तुपोकेणमिवरेन्नतु निङ्ङळुळ्ळिल्
चिन्तिच्चु जतुगृहं तीर्त्ततिलाक्कि वातिल् २९६

दुःखित होकर विदुरजी ने कहा। आगे के वृत्तान्त सब सुन-सुनकर समय बहुत बीत गया। तब अन्धे राजा, भीष्म, द्रोण आदि सबने मन्त्रशाला मे प्रवेश करके विचार प्रारम्भ किया। उस समय सञ्जय ने युधिष्ठिर की और कृष्ण की कही बातो को सुनाया। कृष्ण की कही बातो को सुनकर भीष्म ने कहा— "इस मे कोई मतभेद नही हो सकता है"। तीनों मूर्त्तियो का मूल मुकुन्द मे और अर्जुन मे, हे सुयोधन ! कोई भेद नही है। आत्मश्लाघा करने वाला कर्ण और तुम दोनो भागेगे जब सन्नद्ध होकर पाण्डुपुत्र आयेगा। २८६-२९३ गायो को कैसे भगाकर वापस ले गये, यह तुमने देखा ? हे सुयोधन ! देखलो और देखकर समझ भी लो। जो होने वाला है वह सब अगर हो जाय तो कुछ भी न समझने वाले कैसे सह सकेगे ? यह सोचकर कि 'ये जल जायँ' तुम लोगो ने जतुगृह बनाया और उसमे उनको वन्द करके आग लगा दी।

मित्रमाय् नीतिज्ञनाय् शान्तनाय् शास्त्रज्ञना-
यत्रयुं महापुरुषन्मारिलोरुत्तनें २
सन्ध्यर्थमयच्चुटन् निरप्पु पऱयिच्चु
सन्धियाञ्ञोरु शेषमायिरुन्नितु युद्धं । ३
सज्जनमेल्लां पुनरिङ्ङनें पऱञ्ञोट्टु-
मिज्जनत्तेक्कोण्टतिन्नारेयङ्ङयय्क्कावू ? ४
धर्म्मजनतुनेरं तन्नुळ्ळिल् निरूपिच्चु
निर्म्मलनाय वासुदेवनोट्टुरचेय्तु । ५
आश्रितजनपरायणनायीट्टुं जग-
दीश्वर ! दयानिधे ! गोपते यदुपते ! ६
मूढना ञानुण्टोन्नु निन्तिरुवटितन्नो-
ट्टूढावमानमाय वचनं चोल्लीटुन्नु । ७
मुट्टु निन्तिरुमनस्सेन्निये अङ्ङळ्क्कोर्त्तालु
मटोरु शरणमिल्लेन्नतु निरूपिच्चु ८
सर्व्वज्ञनल्लो भवानेन्नतुकोण्टुं मम
दुर्व्विनयोक्ति केट्टाल् पोरुत्तुकोळ्ळेणमे । ९
चिन्तिक्कवेणं पक्षे सन्धिक्किल् मतियल्लो
निन्तिरुवटितन्नें वन्धुवाय् पोकवेणं । १०
अन्धत्वं ञान् चोल्लुन्नतोर्त्तुळ्ळिल् क्षमिक्कण-
मन्धककुलजातनाकिय जगल्पते ! ११
अन्धनां नरपतितन्नुटे पुत्रनायो-
रन्धात्मा सुयोधनन्तन्नोटु पिणङ्ङातें १२

अगर सन्धि न हो सकी तो युद्ध ही एक उपाय रह जाता है" सभी सज्जन इस प्रकार कहेंगे। इसलिए मेरी तरफ से किसको भेजा जाय ? अपने मन मे ऐसा सोचकर युधिष्ठिर ने निर्मल वासुदेव से कहा। "हे आश्रितवत्सल ! जगदीश्वर ! दयानिधे ! गोपते ! यदुपते ! मुझ मूर्ख को आप महानुभाव से एक लज्जावह बात कहनी है। १-७ यह सोचकर कि आप महानुभाव के अतिरिक्त हम लोगो की और कोई शरण नही है, और इसलिए कि आप सर्वज्ञ हैं, मेरी दुर्विनय की बात क्षमा कीजियेगा। इस पर विचार करना ही है, सन्धि अगर हो जाय तो ठीक है। आप महानुभाव ही हमारे बन्धु बनकर चलें। हे अन्धककुल मे पैदा हुए जगत्पते ! मेरा यह कहना

द्रोणरुमुरचॆय्तु पातियुं कॊट्टुक्क नी
नाणक्केटेतुमिल्ल धर्म्ममे जयिच्चीटू । ३०७
शन्तनूसुतन् द्रोणर् सञ्जयन् विदुररुं
सन्तत पऱञ्ञिट्टुं केळाञ्ञु सुयोधनन् ३०८
अन्धनां नृपेन्द्रनुं कृपरुं द्रोणितानुं
बन्धुक्कळाय सोमदत्तपुत्रादिकळु- ३०९
मावोळमनुसरणं चॆय्तु पऱञ्ञिट्टु
आवतिल्लॆन्नु कलिपच्चटङ्ङिक्कॊण्टारल्लो । ३१०
काटुवाळुकयॊळिञ्ञिङ्ङु पाण्डवर् वन्नु
नाटुवाळुकिलॆय्तु कॊल्लुक मटियातॆ । ३११
उटवराय निङ्ङळ् मटॊन्नुं पऱयेण्ट
कुटङ्ङळॊळिञ्ञिल्ल मटॊन्नुमिनिक्किप्पोळ् । ३१२
इत्तरं वाक्कु केट्टु मटुळ्ळ महाजन-
मुत्तरं पऱयातॆ पोयारङ्ङोरोदिक्किल् । ३१३

भगवद्दूतु

युद्धमेल्क्कुन्पोळॆन्नेक्कॊण्टोरो कुटं चॊल्वान्
वृद्धन्मावर्क्कॆन्तोन्नुळ्ळतॆन्नोर्त्तु युधिष्ठिरन् । १

कहा— 'आधा राज्य दे दो। इसमे तुम्हारी अप्रतिष्ठा नही है। धर्म ही जीतेगा"। ३००-३०७ शन्तनु का पुत्र, द्रोण, सञ्जय, विदुर, इन सब के लगातार कहने पर भी सुयोधन ने न माना। अन्धे राजा, कृप, अश्वत्थामा, और बन्धु सोमदत्त के पुत्र, इन सबके बार-बार अनुनय करने पर भी 'नही हो सकता' कहकर वे चुप हो गये। वनवास छोडकर पाण्डव अगर देश मे निवास करने आयेगे तो उनको निश्शङ्क मार डालना। आप शक्तिशाली है, और कुछ हम से न कहिये। उनका कोई भी दोष मेरी राय में अब दूर न हुआ है। इस प्रकार की बात सुनकर और लोग विना कुछ कहे ही चले गये। ३०८-३१३

भगवान् का दौत्य

"युद्ध छिड जाने पर वृद्धलोग मेरा क्या दोष वतला सकते है?" युधिष्ठिर ने ऐसा सोचा। महापुरुषों मे से किसी शान्त, नीतिज्ञ, शास्त्रज्ञ मित्र को सन्धि कराने के लिए भेजकर शर्तें सुनवाकर भी

ऒन्तिनु तुरङ्ङुन्नु चॊल्लुकॆन्नॊटुकूटि-
च्चिन्तिच्चे नटक्कावू कार्यङ्ङळिनियॆल्लां । २३
धृष्टना धृतराष्ट्रपुत्रन्टॆ तुट तच्चु-
पॊट्टिच्चु कळकयु कौरववंशमॆल्लां २४
कॊट्टिक्कॊन्नॊक्कॆ पॊटिपॆट्टुत्तुकळकयु
दुष्टना दुश्शासनन्तन्नुटॆ मारु पिळ- २५
न्निष्टमाय् रक्त कुटिच्चीटुकयॆन्नुळ्ळतुं
पॊट्टनां भीमन् चॆय्कयिल्लयॆन्नुण्टो तोन्नि ? २६
पॆट्टॆन्नु सन्धिचॆय्तुकॊण्टालु युधिष्ठिरन्
ऒट्टुमे विरोधमिल्लतिनिन्नॆन्नाल् नूनं । २७
गन्धवाहात्मजनां भीमन् चॊन्नतु कॆट्टु
मन्दहासवुं चॆय्तु माधवनरुळ्चॆय्तु २८
चिन्तिच्चवण्णतन्ने पन्ति ञान् कूट्टुन्नुण्टु
सन्तापमतुकॊण्टु चित्तत्तिलुण्टाकॆण्टा । २९
कृष्णयु कण्णीरोटे कृष्णनोटरुळ्चॆय्तु
कृष्णनुं कृपयोटे कृष्णयोटरुळ्चॆय्तु । ३०
निश्वासमुण्टाकॆण्टा विश्वसिच्चालुमॆन्नॆ-
क्कश्मलन् दुश्शासनन्तानु तन् बन्धुक्कळु ३१
निश्शेपमॊटुक्कणमॆन्नन्नतिन्नत्रे ञानु
निश्चयं तुटङ्ङुन्नु पोयालुं खेदिक्कॆण्टा । ३२

भीमसेन ने कृष्ण से कहा। अब क्या शुरू हो रहा है, कहिये। आगे मुझसे परामर्श करने के बाद ही काम चलेगा। धृष्ट धृतराष्ट्रपुत्र की जांघ मारकर तोड़ डालना, सारे कौरववंश को मार डालकर चूर-चूर कर देना, दुष्ट दुश्शासन की छाती फाड़कर उसका रक्त यथेष्ट पी लेना, यह सब भोला भीम नहीं करेगा, ऐसा सोचा है क्या ? २०-२६ युधिष्ठिर तो झट से सन्धि कर ले, अवश्य मुझे कोई विरोध नहीं है। वायुपुत्र भीम का कहना सुनकर मन्दहास करते हुए माधव बोले। जैसे आपने सोचा है वैसे ही मैं तैयारी कर रहा हूँ, इस लिए घबडाना बिलकुल नहीं। कृष्णा (द्रौपदी) ने आँसू गिराती हुई, कृष्ण से कहा, और कृष्ण ने भी करुणा के साथ कृष्णा से कहा। विश्वास न छोड़ना, मुझपर विश्वास करना दुष्ट दुश्शासन और उसके बन्धु निश्शेष समाप्त हो जायँ, इसी हेतु मैं यह सब प्रारम्भ कर रहा हूँ; खेद मत करना। २७-३२. कृष्ण ने कहा—'जैसा तुम चाहती हो वैसा सब

वन्धुवत्सलनाय निन्तिरुवटितन्नॆ-
व्बन्धुत्वमोट्टुमनुसरिच्चु पऱयणं । १३
पाति नाटपेक्षिच्चालरुतॆन्नवन् चॊल्किल्
पातियुं वेणमॆन्निल्लञ्चुदेशमे पोरुं । १४
देशमिल्लॆङ्किलञ्चु गेहमे पोरुमॆन्नाल्
नाशं कूटातॆकऴिञ्ञीटुकिलते वेण्टू । १५
सारसविलोचननाकिय नन्दात्मजन्
सारनां युधिष्ठिरन् चॊन्नतुकेट्टनेरं १६
तन्नुटॆ मनक्काम्पिल् हस्तिनपुरत्तिनु
चॆन्नुपोरेणं ञान्तानॆल्क्कुं मुन्पिलेयॆन्नु १७
मुन्नमेयुळ्ळताशु धर्म्मनन्दननाय
मन्नवन् पऱञ्ञप्पोळ् कौतुकमुण्टाय्वन्नु । १८
रण्टुमून्नवस्थकळ् साधिक्केण्टुन्नतिप्पो-
ळुण्टतिन्नाय्क्कॊण्टु ञान्तन्नॆ चल्किले पोरू । १९
ऎन्नतोर्त्तिरुन्नरुळीटुन्पोळ् कुन्तीपुत्रन्-
तन्नुटॆ नियोगत्तॆक्कैक्कॊण्टु भगवानु २०
सारथे ! शीघ्रं गरुडद्ध्वजयुक्तमाकुं
तेरु कॊण्टरिकॆन्नु दारुकनोटु चॊन्नान् । २१
कण्णुकळ् चुवन्नु कैञॆरिच्चु पल्लुं कटि-
च्चण्णॊजनेत्रनोटु भीमसेननु चॊन्नान् । २२

अन्धापन ही है, आप मुझको क्षमा करे। अन्धे भूपाल के उस अन्धात्मा पुत्र सुयोधन से विना झगड़ा किये बन्धुवत्सल आप महानुभाव ही वन्धु होने के नाते कह दे। आधा राज्य देने मे अगर आपत्ति करेगा तो आधा राज्य न सही, पाँच देश पर्याप्त होगे। ८-१४ देश देने मे अगर आपत्ति है तो पाँच गृह पर्याप्त होगे, सर्वनाश से अगर हम वच जायेगे तो इतना ही चाहिए। तव कमललोचन, नन्दपुत्र, कृष्ण सारज्ञ युधिष्ठिर की वात सुनने के वाद, "हस्तिनपुर जाकर सन्धि कराने का भार मैं ही अपने कन्धे पर उठाऊँगा", ऐसे पहले के निश्चय का युधिष्ठिर के द्वारा समर्थन होने पर भीतर बडा हर्ष हुआ। "दो तीन् स्थितियाँ पैदा करना है, इस लिए मेरे जाने से ही काम बनेगा"। १५-१९ ऐसा सोचकर भगवान् ने कुन्ती-पुत्र की आज्ञा को स्वीकार किया। "हे सारथि ! गरुड का झण्डावाला रथ जल्दी लाओ" ऐसा दारुक से कहा। आँखे लाल करते हुए, हाथ मलते हुए और दाँत काटते हुए

शिष्टरक्षणत्तिनु दुष्टनिग्रह चैय्वान्
निष्ठुरमाय करपत्मवुं श्रीवत्सवुं ४३
इन्दिरादेवि चित्तानन्दमोटिरुन्नीटु
सुन्दरतरमाय मन्दिरमायिट्टुळ्ळ ४४
वक्षोदेशवुं कमलोत्भवन् पिरन्नोरु-
कुक्षियु ब्रह्माण्डङ्ङळसंख्य किटक्कुन्नो- ४५
रुदरोपरि पोङ्ङु रोमाळिविलासवुं
मधुराधरीजन मयङ्ङु मध्यत्तिङ्कल् ४६
काञ्चनमयमाय काञ्चिकळिट्टु मञ्ञ-
प्पूञ्चेलयतिन्मीते नानाशोभितङ्ङळाय् ४७
मिन्नुन्न रत्नङ्ङळुमॆन्नुळ्ळिल् विळङ्ङुन्न
धन्यपादाब्जङ्ङळु कण्टु मामुनिकळुं ४८
वेदवादिकळाय भूदेववरन्मारुं
वेदत्तिन् पोरुळाय वेदान्तवेद्यन्तन्टे ४९
पादपत्मवु कूप्पि स्तुतिच्चु पाटिक्कोण्टु
यादववीरनॆळुन्नळ्ळुन्न वळियेकू-
टादरवोटु नटन्नीटिनार् भक्तियोटे । ५०
गोविन्दनवरवु केट्टादरवोटु भीष्म-
राविम्मोदेन मटुं भक्तरायुळ्ळोरॆल्लां ५१
मुन्पिनालॆळुन्नळ्ळत्तिविटेयॆन्नङ्ङोर्त्तु
संभ्रमिच्चलङ्करिच्चीटिनारालयङ्ङळ् । ५२

जन्म हुआ था, असख्य ब्रह्माण्ड छिप कर रहने वाली उदर के ऊपर विराजमान रोमावली, अङ्गनाजन को मोहित करने वाले मध्य-भाग पर । ४०-४६ विद्यमान स्वर्णमय काञ्चीगुण से शोभित पीताम्बर और उस पर चमकनेवाले अनेक रत्न, मेरे अन्त:करण मे विराजमान धन्य पादपद्म को देखकर मुनिजन, और वेदविद् भूदेवगण, वेदो का प्रतिपाद्य और वेदान्तवेद्य के पादपद्म की ओर हाथ जोड़े यशोगान करते हुए यादवो के वीर के जाने के मार्ग से भक्ति के साथ सादर चले। गोविन्द का आगमन सुनकर भीष्म और अन्य भक्तजन सादर प्रमोद के साथ, यह सोचकर कि विना सूचना दिये पहले ही आ गये, आलयो को जल्दी जल्दी अलकृत करने लगे । ४७-५२ भल्लारि विचित्रवीर्य के गृह में जाकर निवास प्रारम्भ करने के वाद धृतराष्ट्र ने कुशल-

ञान् चाले वरुत्तुवन् वाञ्छितमेन्नु कृष्णन्
पाञ्चालियतु केट्टु तेळिञ्ञु मरुविनाळ् । ३३
दारुकन् कॊण्टुवन्न तेरतिल्क्करयेरि-
प्पारातेयेळुन्नळ्ळित्तुटङ्ङि भगवानु । ३४
वेण्कॊटक्कुट तळ वेण्चमरिकळ् नल्ल
भगितेटीटुमालवट्टङ्ङळ् पलतर । ३५
पन्नगरिपुतन्ने चिह्नमाय् विळङ्ङीटु-
मुन्नतमाय कॊटि मिन्नुन्न कॊटिक्कूर ३६
पङ्कजनाथन्तन्टे शखनादवु पल
मगलस्तुतिकळुं वाद्यङ्ङळ् निनादवु ३७
कल्मषं कळयुन्न चिन्मयन् मनोहरन्
पॊन्मणिक्किरीटवुं निर्म्मलचिकुरवु ३८
मालेयं मेल्पोट्टिट्ट फालवुं त्रिभुवन-
पालनादिकळ् चेय्युं चिल्लियुं मकरमां- ३९
कुण्डल मिन्नीटुन्न गण्डवुं मनोज्ञमां-
कण्मुनविलासवु कम्रमां नासिकयु ४०
किञ्चन तुळुम्पुन्न पुञ्चिरिप्पुतुमयु
चञ्चलाक्षिकळमन वञ्चिक्कुमधरवु ४१
मुग्धमायुळ्ळ मुखपद्मवुं गळभुवि
मुत्तुमालकळ् वनमालकळ् कौस्तुभवुं ४२

करा दूंगा।' यह सुनकर पाञ्चाली प्रसन्न हुई। दारुक के लाये हुए रथ पर बैठकर भगवान् जल्दी जाने लगे। श्वेतच्छत्र, नवपल्लव, श्वेतचँवर, अच्छे और तरह तरह के सुन्दर तालवृन्त, गरुड के चिह्नवाला ऊँचा झण्डा-दण्ड और चमकने वाला झण्डा, पङ्कजनाथ के शङ्ख का नाद, अनेक मङ्गलस्तुतियाँ, भिन्न-भिन्न वाद्यों के नाद, पाप का नाश करने वाले चिन्मय का मनोहर सोने और मणि का किरीट, निर्मल केश, माला से अलंकृत ललाटदेश, त्रिभुवन की रक्षा करने वाली भौंहें, मकराकार - ३३-३९ कुण्डल, चमकनेवाले कपोल, मनोज आपाङ्गों के विलास, कमनीय नासिका, तनिक विकसित होनेवाली मुस्कुराहट, चञ्चलाक्षियों (महिलाओं) का मन लुभानेवाले अधर, मुग्ध मुखकमल, गले पर मुक्ताहार, वनमालाएँ, कौस्तुभ शिष्टपरिपालन के लिए दुष्ट-निग्रह करने वाला कठिन करकमल, श्रीवत्स, लक्ष्मीदेवी को सानन्द रहने योग्य सुन्दरतम मन्दिररूप वक्ष स्थल, वह उदर जहाँ ब्रह्मा का

मुग्धलोचननरुळिच्चेय्तु विदुररो-
टेन्नयु सुख वन्नितिविटे वन्नमूलं । ६३
दुग्धमाकिलु कय्क्कुं दुष्टर् नल्कियालेटो !
भक्तन्मार् तरिकिले भुक्तिक्कु रसमुळ्ळू । ६४
इत्तरमरुळ्चेय्तु विप्ररं तानुंकूटि-
यत्ताळमुण्टु नल्ल मेत्तमेल् करेरिनार् । ६५
पार्थन्मारुटे नल्ल वार्त्तयुमरुळ्चेय्तु
रात्रियु कळिञ्ञितु मार्त्ताण्डनुदिच्चप्पोळ् । ६६
सन्ध्ययु कळिच्चाशु नित्यकर्म्मङ्ङळुं चे-
य्तन्तणर् चुळन्नोरु तेरतिल् करेरिनान् । ६७
मन्दमेन्नियेकृष्णनबिकासुतन्तन्टे
मन्दिर मकंपुक्कु सुन्दरन् नन्दात्मजन् । ६८
कोटुत्तु सिहासनमिरिप्पान् नृपतियु-
मटुत्तु भीष्मद्रोणविदुरादिकळेल्लां । ६९
परन्न सभ तन्निल् निरन्नु महाजन
परन्नु तुटङ्ङिनान् माधवन् कार्यङ्ङळु । ७०
अंबिकातनयनु तन्नुटे सुतन्मारु
निर्म्मलन्मारां मुनिवर्ग्गवुं द्विजन्मारु ७१
द्रोणरु कृपरुमश्वत्थामा विदुररुं
मानिच्चु केळ्क्क भीष्मर् कर्ण्णनु शकुनियु । ७२

यहाँ आने से मैं अत्यन्त प्रसन्न हूँ। दुष्टो का दिया दूध भी कड़ुआ होता है, भक्तो का दिया ही खाने मे स्वाद रखता है। ५९-६४ इस प्रकार बाते करते हुए विप्रो के साथ भोजन करके एक अच्छे गये पर सब लोग बैठ गये। पाण्डवो के सम्बन्ध में वार्तालाप होता रहा। इस प्रकार रात बीत गयी और सूर्योदय हुआ। नित्यकर्म और सन्ध्या करने के बाद (श्रीकृष्ण) ब्राह्मणो के साथ रथ पर बैठ गये। सुन्दर ने अंबिकापुत्र (धृतराष्ट्र) के घर मे प्रवेश किया। राजा ने उनको बैठने के लिए सिहासन दिया। भीष्म, द्रोण, विदुर, आदि उनके पास पहुँचे। विशाल सभा मे जनता इकट्ठा हुई थी और माधव ने कार्य प्रस्तुत किया। ६५-७० धृतराष्ट्र और उनके पुत्र, निर्मल मुनिवर्ग और ब्राह्मण, द्रोण, कृप, अश्वत्थामा और विदुर, भीष्म, कर्ण और शकुनि, सब सादर सुने। बीती बातो को मै न सुनाऊँगा, युधिष्ठिर ने जो न्यूनतम बात कही है वह सुनिये। हे सुयोधन! चन्द्रवंश का

मल्लारि विचित्रवीर्यात्मजन्तनिक्कुळ्ळो-
रिल्लवुमकपुक्कु वसिच्चोरनन्तर ५३
कुशलप्रश्नादिकळ् चेय्तितु धृतराष्ट्रर्
कुशलमेन्नुतन्नेयरुळ्चेय्तितु कृष्णन् । ५४
चेरुतु कार्यमुण्टु परञ्ञुपोवानति-
न्नेतिरे वरुवन् ञानटुत्तदिनतन्ने । ५५
उळ्ळीटिनेनिप्पोळटुत्तु सन्ध्ययेन्न-
ङ्ङेळुन्नळ्ळिनान् जगन्मंगलन् वासुदेवन् । ५६
अच्छन्टे भगिनियां कुन्तीदेवियेक्कण्टि-
ट्टच्युतन् विशेषङ्ङळोक्कवेयरियिच्चान् । ५७
पण्टु कीळ्कळिञ्ञतुं वर्त्तमानवुम्मेलि-
लुण्टावानिरिक्कुन्न वार्त्तयुमरुळ्चेय्तु । ५८
कात्तुकोळ्ळुक नीयेन्मक्कळयेन्नु कण्णीर्-
वार्त्तवळुटे दु.खं तीर्त्तु माधवन् पिन्ने ५९
धार्त्तराष्ट्रन्टे गृह पुक्कितङ्ङवर्कळु
पार्त्तु निन्नेतिरेट्टु सल्ककरिच्चिरुत्तिनार् । ६०
ऊणिनु विदुरर्तन् वीटुपुक्कितु कृष्णन्
मानसं तेळिञ्ञवनानन्दमुण्टाय्वन्नु । ६१
क्षत्तावु भक्तिपरवशनाय् वन्नु पुरु-
षोत्तमन् भक्तवात्सल्यं कोण्टुमतुपोले । ६२

प्रश्न पूंछे और कृष्ण ने उत्तर दिया-"सब कुशल ही है। एक छोटा सा काम है सुनाना। उसके लिए मैं कल ही आप के पास आऊँगा। अब मैं थका हुआ हूँ और सन्ध्या भी निकट है"। ऐसा कहकर जगन्मङ्गल वासुदेव चले गये। अपने पिताजी की वहिन कुन्तीदेवी का दर्शन करके अच्युत ने सारा वृत्तान्त उनको सुनाया। जो वाते हो चुकी है, जो वर्तमान है और जो होने को है, सब वतला दिया। ५३-५८ 'मेरे पुत्रो की रक्षा करो' ऐसा आँसू गिराती हुई कहनेवाली कुन्ती का दु.ख दूर करके माधव धृतराष्ट्र के घर गये, जो उनकी प्रतीक्षा कर ही रहे थे। उन्होने कृष्ण का सत्कार किया। भोजन के लिए कृष्ण विदुरजी के यहाँ चले गये। प्रसन्न होकर उन्होने आनन्द का अनुभव किया। विदुरजी भक्तिपरवश हुए और पुरुषोत्तम भी भक्तवात्सल्य के कारण वैसे ही हुए। मुग्धलोचन (कृष्ण) ने विदुर से कहा—

अप्पोळो पाण्डुपुत्रनाकिय युधिष्ठिर-
नेप्पोरुमटक्किकवाणीटुकयल्लो वेण्टू ? ८३
पाण्डुविन् पुत्रर्तन्नेयल्लवरेङ्किल् चोल्लां
पाण्डवन्मारिल् पक्षपाति नी कोपिक्कोल्ल । ८४
मामुनिशापंकोण्टु काननंतन्निल् पाण्डु
भामिनीजनत्तोटु वेरुपेट्टिरुन्ननाळ् ८५
मट्टु कण्टवर्कळ्क्कु मक्कळायुण्टायवर्
पट्टमो राज्यं वाळ्वानेन्नु नी पऱञ्ञालुं । ८६
ऒङ्किलो निन्टे तातनंबिकासुतन्तानुं
तिङ्कळ्तन् कुलजातनल्लेन्नु धरिक्कणं । ८७
विचित्रवीर्यन् नृपन् मरिच्चशेपत्तिङ्कल्
विचित्रमत्रे पिरन्नुण्टाय प्रकारवुं । ८८
अक्कथ निल्क्क निनक्कोक्क मूळरुतेङ्कि-
लिक्कालं पातिराज्यं पकुत्तु कोटुक्क नी । ८९
कोटुक्कयिल्ल राज्यं पाति ञानोन्नुकोण्टुं
कोटुप्पानवकाशमिल्लवर्क्करिञ्ञालुं । ९०
ऒङ्किलोरञ्चु देशमिरिप्पान् कोटुक्क नी
सङ्कटमार्क्कुं वेण्ट नाशवुमुण्टाकेण्ट । ९१
आग्रहं पऱयाते वाक्कु मुट्टियाल् पिन्ने-
यार्क्कानुं कोटुक्कणमेङ्किलन्तणर्क्कत्रे । ९२
राज्यवुं पुरग्रामदेशङ्ङळ् वेण्टायेङ्किल्
त्याज्यरल्लवरन्नु निन्नुटे कृपयाले ९३

के पुत्र नही है तो पाण्डवो का पक्षपाती मैं कहूँगा, क्रुद्ध न हो जाओ। अगर तुम कहोगे कि महामुनि के शाप के कारण जब पाण्डु स्त्रियो से अलग होकर वन मे रहते थे) तब जिस किसी से पैदा हुए पुत्र राज्य कैसे कर सकते है ? तो तुम याद रखो कि तुम्हारा पिता अंबिका का पुत्र चन्द्रवश का पैदा हुआ नही है। राजा विचित्रवीर्य के देहान्त होने के बाद जिस प्रकार उनका जन्म हुआ वह विचित्र ही है। यह किस्सा रहने दो, वह तुम से कहने योग्य नही है। इस समय तो आधा राज्य बाँट कर दे दो। आधा राज्य तो मै कभी न दूँगा और उनको लेने का अधिकार भी नही है। अच्छा तो रहने के लिए उनको पाँच देश दे दो, किसी को दु.ख न हो और सर्वनाश भी न हो। ८४-९१ अपनी अभिलापा तो नही बतला रहे है, अगर जवाब न दे सकने

कलिङ्ञ वृत्तान्तङ्ङळ् परञ्ञुतुटङ्ङेण्टा
किलिङ्ङु धर्म्मात्मजन् परञ्ञ वाक्कु केळ्प्पिन् । ७३
सोमवंशत्तिल् पण्टुळ्ळाचारमऱियाय्किल्
मामुनिजनत्तोटु चोदिक्क सुयोधन ! ७४
नाळिकनेरंपोलुं मूत्तवन्तन्ने नाटु-
वाळुकेन्नतेवरू नीति नी निरूपिक्क । ७५
पूर्व्वन्मार् पण्टु वाण केळियु निनक्किल्ले ?
सार्व्वभौमत्वं तन्ने भाविच्चाल् वन्नुकूटा । ७६
अन्नतु केट्टु दुरियोधननरुळ् चेय्तान्
चोन्नतु नन्नुनन्नु देवकीतनया नी ! ७७
चोल्लेळुं ययातियां भूपतितन्टे मक्क-
ळल्लयो यदुमुतल् नाल्वरुमिरिक्कवे ७८
पुरुवल्लयो पण्टु पारिन्नु पतियाय-
तारुमेयऱियातेयल्लिवयिरिक्कुन्नु । ७९
नन्नु निन् केट्टुकेळि मन्नव ! सुयोधन !
निन्नोटोन्नुण्टु पऱयुन्नु जानतु केळ् नी । ८०
पूज्यनाय् नृपगुणयोग्यनायुळ्ळवने
राज्यत्तिल् प्राप्तियुळ्ळतेन्नतुकोण्टल्लयो ? ८१
निन्नुटे तातन् धृतराष्ट्रर् तानिरिक्कवे
मन्नवनायि वाणू पाण्डुवेन्नऱिक नी । ८२

परम्परागत आचार अगर नही मालूम है तो महामुनियो से पूँछो। नाडिका भर के लिए भी ज्येष्ठ ही राज कर सकता है इस नीति पर तुम विचार करो। हमारे पूर्वजो ने कैसे राज किया था, तुमने सुना ही होगा ? स्वयं अपने को सार्वभौम मानने पर कुछ न होगा। ७१-७६ यह सुनकर दुर्योधन ने कहा— "हे देवकीपुत्र ! तुमने ठीक ठीक कहा ! विख्यात राजा ययाति के, यदु आदि चार पुत्रो के रहते ही पुरु ही राजा हुआ, यह बात किसी से छिपी नही है" । हे राजा सुयोधन ! तुमने अच्छी बात सुन रखी है ! मैं एक बात बतलाता हूँ सुनो । जो पूज्य है और नृपगुणो से युक्त है वही राज करने का अधिकारी है । इसी लिए तो तुम्हारे पिताजी धृतराष्ट्र के रहते पाण्डु ही राजा हुआ, जान लो । इसी प्रकार पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर को सब अपने वश मे लाकर राज नही करना चाहिये ? ७७-८३ अगर कहोगे कि ये पाण्डु

मिल्लोरु भेदमेनिक्कारुमेयरिञ्ञालुं
नल्लतु चोल्लीटणमेङ्किलुमेल्लारोटुं । १०४
कालदेशावस्थयुं धर्म्मवुमधर्म्मवुं
मूलवुं तम्मिलुळ्ळ दौर्व्वल्यप्राबल्यवुं १०५
मोळियु मोळिक्केटुं वळियुं वळिक्केटु-
मळकोटकतारिलावोळमोर्त्तीटणं । १०६
कोटुत्तार् कोल्लुवानाय् भीमनु विषं मुन्नं
केटुप्पान् पान्पुतन्नाल् कटिप्पिच्चितु पिन्ने । १०७
उरुक्कत्तोटे कालुं करवुं वरिञ्ञुट-
नुरक्कक्कोट्टि गंगाजलत्तिलेरिञ्ञतुं । १०८
मरुप्पानरुतातवण्ण नी पिन्ने नन्ना-
यरक्किल्लत्तिलिट्टु चुट्टतुं पिन्ने निङ्ङळ् । १०९
कळ्ळच्चूताले नाटुमर्त्थवु परिच्चतुं
कळ्ळक्काटतिल्पर पिन्नेयु काट्टि निङ्ङळ् । ११०
दुष्टनां दुश्शासनन् पेट्टेन्नु सभामद्ध्ये
मट्टोलुंमोळियाळां पाञ्चालीतलमुटि १११
पिटिच्चु वलिच्चुटनीळ्त्ततुमवळुटे-
युटुत्त पुटवयुमळिच्चुकळञ्ञतुं । ११२

भूमि मैं दूंगा इस भ्रम मे आप न रहिये। अगर वे युद्ध के लिये आवेगे तो मैं देखलूंगा"। (तब कृष्ण ने कहा—) हे सुयोधन ! यह ठीक नही है। इस से नाश हो जायगा। उन राजाओ का जितना अधिकार है उतना दे दो, मुझे कोई आपत्ति नही है, चाहे जो जान लो। हित की बात सभी से कहना ही है। काल, देश, अवस्था, धर्म, अधर्म, मूलकारण, दूसरे की अपेक्षा दौर्वल्य और प्रावल्य, बातो की अच्छाई और बुराई, अच्छा और बुरा मार्ग यह सब ठीक से ध्यान मे रखना चाहिये। १००-१०६ पहले तो उन्होने (कौरवों ने) भीम को विष खिलाया, तदनन्तर उनको साँप से डँसवाया। तत्पश्चात् नीद मे हाथ-पैर बाँधकर गगा के प्रवाह मे फेक दिया। फिर आप लोगो ने एक अविस्मरणीय बात की, यानी उन सबको जतुगृह मे बन्द करके जलाया। कपट की जुआ के द्वारा उनका राज्य छीन लिया, इससे भी अधिक दुष्टता तुम लोगो ने दिखलायी। दुष्ट दुश्शासन ने सभा के बीच मीठे स्वरवाली पाञ्चाली का केशपाश पकड़कर खीचा और उसकी शाटी को उतार दिया। आप सब लोगो ने इसको पराक्रम

वसिप्पानञ्चु गृह चमच्चुकॊट्टुक्क नी
वसुक्कळ् धान्यङ्ङळुं पकुत्तु कॊटुक्केण्ट । ९४
अतिनु मटियॆङ्किलैवर्क्कु कूटियॊरु-
सदन नाट्टिलॊरुभागत्तु कॊटुक्क नी । ९५
अन्धककुलजातनन्तकान्तकसेव्य-
मन्तवुमादियुमिल्लातवन् परन्पुमान् ९६
बन्धूकसममाय चॆन्तळिरटियुळ्ळोन्
बन्धुक्कळिल्लातोर्क्कु बन्धुवाकिय कृष्णन् । ९७
बन्धुररूपन् पाण्डुराजनन्दनन्मार्क्कु
बन्धुवायॊरु दूतनिन्नतु परञ्ञप्पोळ् ९८
अन्धना नरपतिनन्दननुरचॆय्तान्
बन्धमिल्लॆन्ताकिलुमॆन्नोटित्तरं चॊल्वान् । ९९
ऒन्तिनु पलतरमिङ्ङने परयुन्नु
कुन्तितन्मक्कळॆन्नु कूरुकॊण्टल्लयल्ली ? १००
सन्तत परयुन्नु देवकीतनय ! नी
सूचकनाय निन्टे वाक्कुकळ् केळ्क्कुन्तोरुं १०१
सूचितन्मुनकॊण्टु कुत्तुवानुळ्ळ निल
कॊटुक्कुं आनॆन्नतु निनच्चीटेण्टयेतु ।
पटय्क्कु वरुन्नाकिल् कण्टुपोकणंतन्ने । १०२
नन्नल्ल सुयोधना ! नाशङ्ङळुण्टाय्वरुं
मन्नवर्क्कवकाशमुळ्ळ नाटयच्चालु- १०३

के कारण किसी को देना ही है तो ब्रह्मणो को देगे। अगर राज्य, पुर, ग्राम, और देश नही देना है तो अपनी ही कृपा से उनके रहने के लिए पॉच गृह बना दो, क्योकि वे त्याज्य तो नही है। धनधान्य न वॉट दो। इतना भी अगर नही करना है तो कम से कम देश के किसी कोने मे पॉचो का एक निवासस्थान दे दो। अन्धक वश मे उत्पन्न, अन्तक के सेव्य, अन्त और आदि रहित, पर पुरुष, बन्धूकपुष्प के समान पादपल्लववाले, सुन्दर बन्धुहीनो के बन्धु कृष्ण ने, पाण्डवो का दूत बनकर जब इस प्रकार कहा तब अन्धे राजा के पुत्र ने उत्तर दिया— कोई कारण नही है कि आप मुझ से इस प्रकार कहे। ९२-९९ मुझ से क्यो तरह तरह के प्रस्ताव आप कर रहे है ? पाण्डव कुन्ती के पुत्र होने के नाते ही तो आप देवकीपुत्र मुझ से बार-बार कह रहे है। आप सूचक (दूत) होकर जितना भी कहते जाइये, सुई के नोक भर की भी

विल्लेंटुत्तवर्कळिल् नल्लना धनञ्जय-
नल्लयो पाञ्चालना मन्ननें वन्धिच्चतु । १२३
रात्रियिलेंतिर्त्तोंरु गन्धर्व्वन्तन्नें वेन्नान्
पार्त्थनल्लयो यन्त्रमेंय्तुटन् मुरिच्चतु । १२४
पोक्कोंरुमिच्च नम्मेंयोक्कवे जयिच्चतुं
भोष्कल्ल बलदेवादिकळां अङ्ङळेयु । १२५
जयिच्चु सुभद्रयेंक्कोंण्टवन् पोन्नुकोंण्टान् ।
जयिच्चान् वरिपिच्चु वन्नोंरु शक्रनेयु । १२६
खाण्डव दहिप्पिप्पान् शरकूटत्तेंच्चेय्तु
गाण्डीव वाङ्ङिक्कोंण्टानग्नियोटतुमूल । १२७
उत्तरयाय दिक्कुमोंक्कवे जयिच्चव-
नुत्तममाय कैलासाचलंतङ्कल् चेन्नान् । १२८
मुक्कण्णन्तन्नोटु पोरेंत्रयुं पार चेय्तान्
कैक्कोंण्टान् पाशुपत वानुलोकत्तु चेन्नान् । १२९
देववैरिकळेयु निग्रहिच्चविटन्नु-
देवकळोटुमस्त्रमेंप्पेरुं वाङ्ङिक्कोंण्टान् । १३०
निन्नेयुं केंट्टिक्कोंण्टुपोयोंरु चित्ररथन्-
तन्नेयुं वेन्नु निन्नें वीण्टुकोंण्टतुमवन् । १३१
पोक्कोंरुमिच्चु निन्न निङ्ङळेंयोक्क वेन्नु
गोक्कळें वीण्टुकोंण्टुपोयतुमवनल्लो । १३२

मारा जो रात को लडने आया था और उसी ने वाण से यन्त्र को तोड़ा था और हम सवको हराया था जो लड़ने के लिए एक हो गये थे। मैं झूठ नही बोल रहा हूँ, वलदेव आदि हम सव को जीतकर सुभद्रा को वह ही लाये थे। जव शक्र पानी वरसाते गये तव उनको पराजित किया। खाण्डव वन को जलाने के लिए शरो का एक भवन वनाया और उसके कारण अग्नि से गाण्डीव धनुप प्राप्त किया। उत्तर की दिशा को जीतने के वाद उत्तम कैलास पहुँचे। १२२-१२८ त्रिनेत्र (शिवजी) के साथ घोर युद्ध किया, और पाशुपतास्त्र स्वीकार करके स्वर्गलोक गये। वहाँ देवो के शत्रुओ का निग्रह किया और देवो से अनेक अस्त्रो का ग्रहण किया। जव गन्धर्व चित्ररथ तुम को वाँधकर ले जा रहा था तव तुमको छुटवाकर लानेवाले वे ही है। जव आप लोग सव एक होकर युद्ध कर रहे थे तव आपको पराजित कर गायो को वापस ले जाने वाले वे ही है। जिन्होने इस प्रकार के अनेक विक्रम

इत्तरं पराक्रममायतु निङ्ङळ्क्कॊल्ला-
मॆत्रयु परिभवमुण्टवर्क्किततुमूलं । ११३
निस्त्रप कष्ट निङ्ङळ् चॆय्तवयॆल्लामुळ्ळिल्
शक्तनां भीमसेनन् मऱन्नलिलरिक्कुन्नु । ११४
कॊटुक्क पातिनाटिन्नवक्कुंमल्लयाल्कि-
लॊटुक्कुं भीमसेनन् निङ्ङळॆयल्लाकॊण्टु । ११५
मुन्पिले हिडिम्बनॆक्कॊन्नतु बकनाय-
वन्पनॆ वधिच्चेकचक्रयिलिरुन्नतुं ११६
मागधनाय नृपवीरनॆ वधिच्चतु
वेगत्तिल् किळक्कुदिक्कॊक्कवे जयिच्चतु । ११७
शक्तनां किम्मीरनॆक्कुत्तियङ्ङमर्त्ततुं
मुत्तणिमुलयाळां द्रौपदितन्टॆ चॊल्लाल् ११८
कल्याणसौगन्धिकं कॊण्टुपोरुन्ननेरं
चॊल्लुळ्ळ गन्धर्व्ववीरन्मारॆज्जयिच्चतु ११९
ऒत्तिय जयद्रथन्तन्नॆ माल्पॆटुत्ततु-
मॆत्रयुं विरुतुळ्ळ मल्लनॆ वधिच्चतु १२०
कीचकनादिकळॆक्कालनूक्कयच्चतु-
माशुगसुतनाय भीमनॆन्नरिञ्ञालुं । १२१
कॊल्लुमेयवन् निङ्ङळ् नूरुपेरॆयुमॆटो
नल्लतु पाति नाटु कॊटुक्क सुयोधन ! १२२

समझा परन्तु उनका इस से वडा परिभव हुआ । १०३-११३ [illegible]
लोगो ने जो निर्लज्ज होकर यह सव किया है [illegible]
भीमसेन नही भूले है। आधा राज्य दे दो, [illegible]
लोगों को खतम कर देगा। पहिले हिडिम्ब [illegible]
हत्या करके एकचक्र में निवास, [illegible]
की विजय, शक्तिमान् किर्म्मीर का [illegible]
स्तनवाली द्रौपदी के कहने से [illegible]
विख्यात वीर गन्धर्वो को [illegible]
कही से आ गया था और [illegible]
आदियो का यमसदन [illegible]
ने ही किया है। [illegible]
लिए अच्छा [illegible]
ने ही दो [illegible]

सभयिलिरुन्नवरेल्लारुमोरुपोले
शुभमायुळ्ळ वाक्कु परञ्ञु केट्टनेर १४३
निरन्नीलेतुमुळ्ळिल् निरञ्ञ कोपत्तोटुं
इरुन्न सुयोधनन् नटन्नान् कोपत्तोटे । १४४
जननि गान्धारियुं परञ्ञाळिनि महा-
जनङ्ङळिवर्चोल्लु केळ्क्क नी सुयोधना ! १४५
ॲन्तम्म परञ्ञतु केळातेयवन् पोयि
कर्ण्णनुं शकुनियुमायिट्टु निरूपिच्चु । १४६
गोपालनाय कृष्णनिविटे सभयिङ्कल्
भूपालरोटु सिहासनवुमेरियोप्पं । १४७
इरिक्कुन्नतु योग्यमल्ल नां चिलर्तन्ने
परक्केयरियातेयोन्नु चेय्यणमिप्पोळ् । १४८
दूतन्मारवद्ध्यन्मारेन्नल्लो शास्त्रविधि
पातकमुण्टां कोन्नालतिनुण्टुपायवुं । १४९
पिटिच्चु केट्टीटणं पिन्नेप्पाण्डवर् पोन्नु
नटिच्चुवरिकयिल्लेन्नतुमरिञ्ञालुं । १५०
मिटुक्कु वच्चु काट्टिलिरिक्केयुळ्ळू पिन्ने-
प्पटय्क्कु भाविक्कुन्नतारेन्नुमरियणं । १५१
पटुत्वमेल्लामिवन्तनिक्काकुन्नु नूनं
किटक्कवेण कारागृहत्तिल्त्तन्नेयिवन् । १५२

तनिक भी न विचला । क्रुद्ध होकर वह वहाँ से चला गया । १३७-१४४
माता गान्धारी ने भी कहा—"वेटा, सुयोधन ! अव इन वड़े लोगो की वात सुनो" । माँ की भी ऐसी वात न सुनकर वह निकल गया और उसने कर्ण और शकुनि के साथ परामर्श किया । यह उचित नही है कि यह ग्वाला कृष्ण यहाँ सभा मे आकर राजाओ के साथ सिहासन पर बैठे । अतएव हम ही कुछ लोग एकान्त मे कुछ करे । शास्त्र मे लिखा है कि दूत अवध्य है । इस लिये उसके वध से पाप हो जायगा । परन्तु एक और उपाय है । उसको पकड़कर वाँधा जाय । तदनन्तर, जानलीजिये, पाण्डवो को यहाँ अकड़कर आने की हिम्मत न होगी । उनको अपनी कुशलता को लेकर वन ही मे रहना होगा । फिर देखें युद्ध के लिये कौन आनेवाले है ? निस्सन्देह करने करानेवाले तो यही है, इसलिए यह कारागृह ही मे पड़े रहे । १४५-१५२

इत्तरं पलपल विक्रममेल्लां चेय्त
वृत्रारिपुत्रन्तन्ने मिक्कतुमोट्टुक्कीट्टु । १३३
अर्क्कनन्दननाय कर्ण्णने विशेषिच्चु
शक्रनन्दनन्तन्ने कोल्लुमेन्नरिञ्ञालु । १३४
अच्छनेप्पिटिच्चुकेट्टिप्पिच्च परिभव
वच्चुकोण्टिरिक्कुन्नु धृष्टद्युम्ननुमेटो । १३५
निश्चयं द्रोणर्तन्नेक्कोन्नीटुमवन्तानु
पिच्चयाय् शिखण्डियुं भीष्मरे वधिच्चीट्टु । १३६
शल्यरे युधिष्ठिरन् कोल्लुमेन्नरिञ्ञालु
कळ्ळना शकुनियेक्कोन्नीट्टु सहदेवन् । १३७
मट्टुळ्ळ बन्धुक्कळु मक्कळु कनिष्ठरु
पट्लर् कालन्मारा पाण्डवरोट्टुक्कीट्टु । १३८
नल्लतु पाति नाट्टु कोट्टुक्क सुयोधना !
नल्लतु वरिकयिल्लल्लाय्किलोन्नुकोण्ट्टु । १३९
श्रीवासुदेवन् जगन्नायकनिवयेल्ला-
मावोळमरुळ्चेय्त वाक्कुकळ् केट्टशेषं । १४०
अंबिकासुतन्तानुं भीष्मरुमाचार्यनु-
मन्पुळ्ळ मट्टुळ्ळवर्तङ्ङळुमुरचेय्तार् । १४१
कुरळक्कारन् चोन्न वाक्कुकळ् केळात नी-
यरुळिच्चेय्तवण्ण केळ्क्केन्नारेल्लावरु । १४२

किये इन्द्र के वह पुत्र सब समाप्त कर देगे। सूर्यपुत्र कर्ण को विशेष कर शक्रनन्दन (अर्जुन) ही वध करेगा, जान लीजिये। अपने पिता के पकडकर बाँधे जाने का परिभव धृष्टद्युम्न अब भी महसूस करता है। वह अवश्य द्रोण को मारेगे और निश्चय ही शिखण्डी भीष्म को मारेगे। १२९-१३६ युधिष्ठिर तो शल्य का वध करेगे और दुष्ट शकुनि को सहदेव मारेगे। अन्य बन्धुओं, पुत्रो और कनिष्ठो को शत्रुओ के नाशक पाण्डव अवश्य समाप्त करेगे। हे सुयोधन ! अच्छा यही होगा आधा राज्य दे दो, नही तो परिणाम किसी भी तरह अच्छा नही हो सकता है। जगन्नायक श्रीवासुदेव की यथेष्ट कही हुई इन बातो को सुनकर अंबिकापुत्र (धृतराष्ट्र), भीष्म, आचार्य और प्रेम रखने वाले अन्य लोगो ने कहा— लड़ानेवालो की बात सुनकर अभी कही गयी बात के अनुसार काम करो, ऐसा सब ने कहा। सभा के सभी सदस्यो की यह हितयुक्त बात सुनकर क्रोध के कारण सुयोधन तो

विष्णुविन् विश्वरूपं कण्टिट्टु भक्तन्मारुं
कृष्णा ! गोविन्दा ! शिवराम ! रामात्मारामा ! १०
लोकाभिरामा ! रमारमणा ! यदुपते !
गोकुलपते ! जगन्नायक ! धरापते ! ११
विश्वमायतु नीये ! विश्वकारण नीये
विश्वकार्यवु नीये ! विश्वपालनु नीये १२
विश्वतातनु नीये विश्वमातावुं नीये
विश्वरूपनुं नीये विश्वनायका ! पोटी ! १३
निष्कळनाकुन्नतु सकळनाकुन्नतु
निर्ग्गुणनाकुन्नतु सगुणनाकुन्नतुं १४
पुरुषनाकुन्नतुं प्रकृतियाकुन्नतु
पुरुषोत्तमा ! पोटि ! निन्तिरुवटियल्लो । १५
शिवनायीटुन्नतुं शक्तियायीटुन्नतु
भुवनेश्वरा ! पोटि ! निन्तिरुवटियल्लो ! १६
जीवनायीटुन्नतु परनायीटुन्नतुं
केवलस्वरूपना निन्तिरुवटियल्लो । १७
क्षेत्रमायीटुन्नतुं क्षेत्रज्ञनाकुन्नतुं
धात्रियिल् पिरन्नोरु कृष्णनां भवानल्लो । १८
पालय कृपालया ! शरण नारायण !
पालय विष्णो ! रामकृष्णा ! गोविन्दा ! हरे ! १९

हे आत्माराम ! लोकाभिराम ! रमारमण ! यदुपते ! गोकुलपते ! जगन्नायक ! धरापते ! सारा विश्व तू है, विश्व का कारण तू है, विश्व का कार्य तू है, हे विश्वनायक ! हे रक्षक ! विश्व का पिता तू है, विश्व की माता तू है, विश्वरूप तू ही है, हे विश्व के नायक ! तू ही रक्षक है । ७-१३ निष्कल भी तू है और सकल भी तू है निर्गुण भी तू है और सगुण भी तू है पुरुष भी तू है और प्रकृति भी तू है हे पुरुषोत्तम ! हे रक्षक !, यह सब आप महानुभाव है। हे भुवनेश्वर ! हे रक्षक ! आप महानुभाव ही शिव भी है और शक्ति भी है। केवल स्वरूप आप महानुभाव ही जीवात्मा भी है और परमात्मा भी। पृथ्वी पर जन्म लिये हुए आप ही क्षेत्र भी है और क्षेत्रज्ञ भी। हे कृपालय ! पालन करो ! हे नारायण ! तुम ही शरण हो ! हे विष्णो ! पालन करो, हे रामकृष्ण ! हे गोविन्द ! हे हरे ! १४-१९ इस प्रकार भिन्न भिन्न लोगो ने

विश्वरूपदर्शनं

इङ्ङने रहस्यमाय् तङ्ङळिल् मन्त्रिक्कुन्न-
तङ्ङरिञ्ञुणर्त्तिच्चु सात्यकियतुनेरं । १
पोक नामिविटुन्नु वैकरुतिनियेतुं
पोर् करुतियुमल्ल नामिविटेक्कु पोन्नु । २
सात्विकनायुळ्ळोरु सात्यकियुणर्त्तिच्च-
वार्त्त केट्टतुनेरं गोविन्दन् तिरुवटि । ३
तरुणादित्यबिब पतिनायिरं कूटि-
यॊरुमिच्चुदिच्चुटनुयरुन्नतु पोले । ४
करुणाकरन् देवन् कमलविलोचनन्
विरवोटॆळुनेट्टु पॆरिकॆक्कोपत्तोटे । ५
वरिक पिटिक्कॆंटो कॆट्टुवान् सुयोधन !
पॆरिकॆ वैकिक्केण्टा पक्षे, वन्नटुत्तालु । ६
असंख्यं मुखङ्ङळुमसख्यं बाहुक्कळु-
मसंख्यमायुधङ्ङळसंख्यं चरणङ्ङळ् ७
शङ्करन् विरिञ्चनुमिन्द्रादिदेवकळुं
पङ्कजविलोचनन्तङ्कले काणाय्वन्नु । ८
रोमङ्ङळ्तोरुमोक्क वानवरायुवन्नु
कोमळमाय रूपं घोरमाय् काणाय्वन्नु । ९

विश्वरूपदर्शन

इस एकान्त परामर्श को जानकर सात्यकि ने सूचना दे दी। उसने कहा— "हम लोग यहाँ से चले, अब विलम्ब न करे युद्ध करने के लिए तो हम यहाँ नही आये"। सात्विक सात्यकि की सूचना सुनकर भगवान् गोविन्द, करुणाकर, देव, कमलविलोचन सुचारु रूप से उठे, मानो दस हजार तरुण आदित्य बिंब एक साथ उदय हो रहे हो। वे अत्यन्त क्रुद्ध थे। उन्होने कहा— हे सुयोधन ! पकड़कर बाँधने के लिये आओ ! अधिक विलम्ब न करो, निकट आजाओ ! । १-६ असख्य मुख, असंख्य बाँहे असख्य आयुध, असंख्य चरण, शङ्कर, ब्रह्मा, इन्द्र आदि देव पङ्कजविलोचन (कृष्ण) मे दिखाई दिये। एक एक रोम देव बन गया और उनका कोमल रूप घोर हो गया। विष्णु का विश्वरूप देखकर भक्तजन ने कहा— हे कृष्ण !, हे गोविन्द ! हे शिवराम ! हे राम !

परमानन्दमूर्त्ति भगवान् परमात्मा
परिचोटॆळुन्नळ्ळिळ तेरतिलेऱ्रिप्पिन्नॆ । ३०
कुन्तियॆच्चॆन्नु कण्टु सन्तापमतुं तीर्त्तु
कुन्तियु तॊळुतेऱ्र स्तुतिच्चु सुतन्मारॆ ३१
तन्तिरुवटियाय कृष्णनॆब्भरमेल्पि-
च्चन्तिके निल्क्कु कर्ण्णनोटु मन्त्रिच्चु मॆल्ले । ३२
कर्ण्णा ! ञानॊन्नुण्टिन्नु चॊल्लुन्नु रहस्यमाय्
निन्नुटॆ तन्पिमारा पाण्डवरऱ्रिक नी । ३३
नी कूटियङ्ङुचॆन्नु धर्म्मजाग्रजनायि
वाळ्क भूमियॆ रिपुनाशवु चॆय्कयॆन्नाळ् । ३४
कर्ण्णनु चिरिच्चुरचॆय्तितु कृष्णनुतन्नो-
टॆन्नुटॆयनुजन्मार् पाण्डवरॆन्नु नूनं । ३५
ऒन्नालु नागध्वजनुतन्नॆयुमुपेक्षिच्चि-
ट्टिन्नु ञानङ्ङु पोरिकॊन्नतु चॆय्कयिल्ल । ३६
भर्त्तृपिण्डत्तिन् प्रतिक्रियय़ॆच्चॆय्कवेणं
भृत्यनामवन् प्राणन्पोवोळमॆन्नुण्टल्लो । ३७
अर्ज्जुनन्तन्टॆ कैयाल् मरणमिनिक्कतु
निश्चयं विरयॆप्पोय् पोरिन्नु कोप्पिट्टालु । ३८
मारुतितन्नॆ कॊल्लुं गान्धारीसुतन्मारॆ-
प्पोरतिलॊटुङ्ङीटु मटुळ्ळ जनङ्ङळु । ३९

दूर किया। कुन्ती ने भी प्रशसा करके वन्दना की और अपने पुत्रो को महानुभाव श्रीकृष्ण को सौप दिया और निकट मे खड़े कर्ण से धीरे धीरे बोली। २९-३२ हे कर्ण! मै एक वात आज तुम से रहस्य मे बतला रही हूँ— जान लो कि पाण्डव तुम्हारे छोटे भाई है। (कृष्ण ने कहा) "तुम भी उन के साथ हो जाओ और युधिष्ठिर के बड़े भाई होकर उनके साथ राज करो और शत्रुनाश करो"। तव कर्ण ने हँसते हुए कृष्ण से कहा— पाण्डव तो अवश्य मेरे अनुज है परन्तु नागध्वज (सुयोधन) को छोडकर मैं उनके पास न जाऊँगा। स्वामी के दिये पिण्ड का प्रतिदान करना चाहिये भृत्य का आजीवन यही धर्म है। अर्जन के हाथ से ही मेरा निधन अवश्य होगा जल्दी जाकर युद्ध की तैय्यारी कराइये। भीमसेन ही गान्धारी के पुत्रों का वध करेगा और युद्ध मे सभी लोगो का निधन होगा। ३३-३९ दोनो पक्षो की बडी सेना समाप्त हो जायगी और बड़े बड़े वीर जीवित न वापस आवेंगे।

इत्तरमोरो जनमद्भुतं पूण्टु पूण्टु
पत्तुदिक्किलुं निन्नु वाळ्त्तियुमानन्दिच्चु २०
भक्तियाल् स्तुतिक्कयु नृत्तचेय्तीटुकयु
मुक्तिदानैकमूर्त्तितन्महिमानं कण्टु २१
तोळुतुं वीणु नमस्करिच्चुं वणङ्ङियुं
मुळुकि परमानन्दाबुधितन्निल् वीणु । २२
करञ्ञुं चिरिच्चु कण्णिमच्चु मिळियाते
निरञ्ञ भक्तियोटु मामुनिजनङ्ङळुं २३
वेदवेदान्तार्थङ्ङळ् तिरियाञ्ञुळन्नीटुं
वेदियरोटु नल्ल भीष्मरुं विदुररुं २४
यक्षकिन्नरसिद्धगन्धर्व्वासुरभूत-
रक्षोगुह्यकप्रेतकिंपुरुपादिकळु २५
नाकवासिकळ् नल्ल नागनायकन्मारुं
नाकनारिकळोटु नारिमार् मटुळ्ळोरु । २६
गूढस्थनायवनेक्कूटस्थनायिक्कण्टु
पाटियुमानन्दं पूण्टाटियु चमञ्ञुते । २७
दुष्टरायुळ्ळ जनमोक्कवे कण्णुपोत्ति-
प्पेट्टेन्नु मलमूत्रादिकळु वीणुवीणु २८
पेट्टुपाटोटुमोरो गुहकळ्तोरु पुक्कार्
शिष्टरायुळ्ळजनं कण्टुकण्टिरिक्कवे । २९

अद्भुत अनुभव करते हुए दसो दिशाओ मे रहकर, प्रशसा करते हुए और आनन्द का अनुभव करते हुए भक्ति के साथ स्तुति की, नाचा। उन्होने मुक्तिप्रद मूर्ति की महिमा देखी। प्रणाम करते हुए वे परमानन्द के सागर मे डूबे। रोते हुए, हँसते हुए आँख वन्द करते हुए सपूर्ण भक्ति के साथ महामुनिजनो ने, वेद और वेदान्त का अर्थ न समझने से पीड़ित वैदिको के साथ भीष्मजी और विदुरजी ने, यक्ष, किन्नर, सिद्ध, गन्धर्व, असुर, भूत, राक्षस, गुह्यक, प्रेत, और किंपुरुपो ने। २०-२५ स्वर्ग के निवासी और नागो के नेताओ ने, और अप्सराओ की तरह अन्य नारियो ने भी गूढस्थ को कूटस्थ के रूप मे देखा और वे गाने लगे और आनन्द से पूर्ण हुए। सभी दुष्टजन आँख वन्द करते हुए तत्क्षण ही मलमूत्र का विसर्जन करने लगे और पीडित होकर तरह तरह की गुहाओ मे प्रविष्ट हुए और शिष्टजन यह सव देखते रहे। तव परम आनन्दमूर्ति भगवान् रथ पर वैठकर सिधारे। पहले जाकर कुन्ती का दर्शन करके उनका दुःख

नायकन् धृष्टद्युम्ननेन्नभिषेकं चेय्तु
नायकनाय कृष्णन् पार्त्थसारथियायान् । ३
अक्कालं नागद्ध्वजन् वन्पेना भीष्मर्तन्ने-
स्सल्क्कारं चेय्तु पटनायकनाक्किवच्चान् । ४
अयुतरथकरितुरगपदातियें
नियतिवशालोरोदिवस कोल्वनेन्नान् । ५
पूरिच्चु वाद्यघोषं मून्नु लोकत्तुमप्पोळ्
कूरोत्त बलभद्ररुळ्क्कान्पिल् निरूपिच्चु । ६
इक्कालमिविटे ञान् कूटियिल्लोन्नुकोण्टुं
चोल्क्कोण्ट तीर्त्थमाटामेन्नोळुन्नळीटिनान् । ७
पुष्करनेत्रनप्पोळ् उळक्कान्पिल् निरूपिच्चु
मुख्यसम्मतमाक्कि दुरियोधनवध- ८
मग्रजन्तन्नेक्कोण्टु मूळिच्चीलतिन्निनि
तल्क्कालत्तिङ्कुलामेन्नुळक्कान्पुमटक्किनान् । ९
धर्म्मजादिकळोटु विदर्भनरियिच्चान्
नम्मुटे बन्धुत्वमो पोकरुतल्लो पार्त्तल् । १०
शक्रनन्दनन् पोरिल् विल्लेटुत्ताकिलप्पोळ्
मुख्यभावेन निल्पान् ञानुण्टेन्नरिञ्ञालु । ११
अन्नेरं धनञ्जयन् चोल्लिनान् विदर्भनो-
टेन्नोटु नेरे निल्पोरारुमिल्लरिञ्ञालुं । १२

को (सेना) नायक के पद पर अभिषेक करके नायक कृष्ण पार्थ (अर्जुन) के सारथि बने। उस समय नागध्वज (दुर्योधन) ने प्रमुख भीष्मजी को सत्कार करके सेनानायक बनाया। उन्होने कहा— मै प्रतिदिन विधि के कारण असख्य रथ, हाथी, घोड़े और पैदल सैनिक को नष्ट करूँगा। तब तीनो लोग वाद्य के घोषो से भर गये। निष्पक्षपाती बलभद्र ने अपने मन मे सोचा— 'इस समय मैं यहाँ हरगिज किसी का साथ नही दे सकता हूँ। इस लिए विख्यात तीर्थो की यात्रा करने चले गये। १-७ तब कमललोचन ने अपने मन मे सोचा— "बड़े भाई की सम्मति लेकर उन्ही के हाथ दुर्योधन का वध नही कहलवाया गया, अब वह अपने ही समय मे देखा जायगा" और चुप हो गये।) विदर्भ के राजा ने युधिष्ठिर आदियो से निवेदन किया— "यह नही होना चाहिये कि आपका हमारा बन्धुत्व समाप्त हो जाय। परन्तु अर्जुन अगर धनुष लेकर युद्ध मे उतरेगे तो उनका सामना करनेवाला मैं हूँ, जान लीजिये"।

रण्टुभागत्तुमुळ्ळ वन्पटयोटुङ्ङीटुं
मण्टुकयिल्ल महावीरन्मार् मरियातें । ४०
चिन्मयनाय परब्रह्मं निर्म्मलमूर्त्ते !
निन्मनोविलासवुमेन्नुळ्ळिलुण्टु पोटी । ४१
यात्रयुं चोल्लिक्कृष्णन् पिन्नेयङ्ङुळरिप्पोय्
पेर्त्तुटनश्वत्थामातन्नुटे गृह पुक्कान् । ४२
पोरिनु सेनापतियाकातयिरिक्केन्नु
वीरना द्रौणियोटु माधवनपेक्षिच्चान् । ४३
विश्वस्तनायविप्रनश्वत्थामावुतानु
विश्वनायकमनोरथत्तेयरिञ्ञप्पोळ् । ४४
निश्चयमतु चेय्कयिल्ल ञानेन्नु चोन्नान
च्युतन् दीर्घायुष्मानाकेन्नुमरुळ् चेय्तान् । ४५
पारातेयेळुन्नळ्ळिप्पाण्डवरोटु चोन्ना-
नोरोरो विशेषङ्ङळुण्टायतेप्पेरुमे । ४६

युद्धोद्योगं

युद्धत्तिनिनि मुतिर्न्नीटुक मटियातें
मित्रङ्ङळाय भूमिपालरेयरियिक्क । १
ऒन्नरुळ्चेय्तनेर पाण्डवर् बन्धुक्कळे-
च्चेन्नरियिच्चु वरुत्तीटिनार् पटय्क्केल्लां । २

हे चिन्मय परब्रह्म ! हे निर्मलमूर्ते ! हे रक्षक ! मेरे भीतर आप के मन का विलास भी विद्यमान है। कृष्ण बिदा होकर चले गये और सीधे अश्वत्थामा के गृह गये। और माधव ने द्रौणि (अश्वत्थामा) से अनुरोध किया कि वे युद्ध मे सेनापति न होवे। विश्वस्त विप्र अश्वत्थामा ने विश्वनायक की इच्छा को जानकर कहा— 'यह न होगा, यह निश्चित है''। तब अच्युत (कृष्ण) ने 'दीर्घायुष्मान् हो, ऐसा आशीर्वाद दिया। तुरन्त जाकर पाण्डवो को जो कुछ हुआ वह सब सुना दिया। ४०-४६

युद्ध के लिए तैयारियाँ

और कहा— अब युद्ध के लिए विना विलम्ब के तैयार हो जाओ और मित्र राजाओ को सूचना दो। जब कृष्ण ने इस प्रकार कहा तब पाण्डवों ने बन्धुओं को सूचना दी और सेना को बुलाया। धृष्टद्युम्न

द्रोणरुमश्वत्थामा कृपरु त्रिगर्त्तनु
द्रोणर्क्कु तुल्यन् शल्यर् सोमदत्तात्मजनुं २३
कृतवर्म्मावु भगदत्तनु शकुनियु
पृथिवीशन्मार् मट्टु पलरुण्टरिक नी । २४
ञानुमुण्टल्लो पिन्नेप्पलरोटेतिर्निल्पान्
भानुनन्दननर्द्धरथनेन्नरिक नी । २५
अङ्ङोट्टु चेल्लुवानुमिङ्ङोट्टु मण्टुवानु-
मिङ्ङनेयारुमिल्ला कर्ण्णनेप्पोलयेटो । २६
कर्ण्णनुमतु केट्टु भीष्मरोटुरचेय्ता-
निन्नु ञानर्द्धरथनल्लेन्नु धरिक्कणं । २७
नामिरुवरुं कूटियल्लिनि युद्धत्तिनु
पोर्मदमुळ्ळ भवान् मरिच्चेयुळ्ळु पक्षे २८
शन्तनुतनयनुमेङ्क्लिन्तोरु हानि
निन्तोळिल् निनक्कोत्तवण्णमेन्नुरचेय्तु । २९
मन्नव ! सुयोधना ! केळिनि युधिष्ठिरन्-
तन्नुटे तेराळिकळायुळ्ळ जनत्ते नी । ३०
धर्म्मजन् भीमन् पार्त्थन् नकुलन् सहदेवन्
निर्म्मलन्मारायुळ्ळ पाञ्चालीसुतन्मारु ३१
धीरना धृष्टद्युम्नन् घोरनां घटोल्क्कचन्
वीरनामभिमन्यु सारनां सात्यकियु ३२

छोटे भाई उसके पति है। १५-२२ इसके अतिरिक्त द्रोण, अश्वत्थामा, कृप, त्रिगर्त्त, द्रोण के समान शल्य, सोमदत्त का पुत्र कृतवर्मा, भगदत्त, शकुनि, और अन्य अनेक भूपाल भी यहाँ है, जान लो। और मै भी हूँ जो अनेक का सामना कर सकता हूँ। और जान लो कि भानुनन्दन (कर्ण) अर्धरथ ही है। उधर जाने मे और फिर इधर वापस आने मे कर्ण के समान कोई नही है।" यह सुनकर कर्ण ने कहा— "जान लीजिये कि आज मैं अर्धरथ नही हूँ।" हम दोनो युद्ध मे साथ नही रहेगे, युद्धमदवाले आप तो अवश्य मरेगे, और इससे शान्तनु के पुत्र को बडी हानि होगी। आपका काम तो आप ही के अनुरूप है। २३-२९ हे राजा सुयोधन! सुन लो युधिष्ठिर के पक्ष मे कौन कौन रथी है। युधिष्ठिर, भीम, पार्थ, नकुल, सहदेव पाञ्चाली के ये निर्मल पुत्र, धीर धृष्टद्युम्न, घोर घटोत्कच, वीर अभिमन्यु, सारवान् सात्यकि, क्रूर शख, शूर पाञ्चाल, जान लो कि ये सब हम से लड़ने आवेगे। इसमे सन्देह

पोकिल् नी पोकयिङ्ङु माधवन् तुणयुमु-
ण्टाकुलमेतुमिल्लयेन्नतु केट्टनेर १३
विदर्भन् चेन्नु दुरियोधनन्तन्नेक्कण्टु
विदग्धनेन्नु भाविच्चवनु सम्मानिच्चान् । १४
पन्नगद्ध्वजन् कर्ण्णन् शकुनि विदर्भनु-
मेन्निवर् पलर्कूटीट्टोन्नायि निरूपिच्चु । १५
धर्म्मजादिकळोटु चेन्नरियिक्कयेन्नु
नन्मयिलुलूकनेययच्चानतुनेर । १६
ओन्नुकिल् वनत्तिनु पोय्क्कोळ्कयल्लयाय्किल्
वन्निङ्ङु मरिच्चुकोण्टीटुविन् पुलर्काले । १७
अप्रकारङ्ङळवन् वन्नरियिच्चतु के-
ट्टप्पोळे भीमसेननटिच्चानतु कण्टु १८
गोविन्दन् चाटिक्करपिटिच्चानुलूकनु
गोविन्द ! जय ! जय ! ऎन्नुरचेय्तु पोयान् । १९
अवनु कुरुक्षेत्र पुक्कुटनरियिच्चो-
रवस्थ केट्टु दुरियोधननतुनेर २०
चोल्लुळ्ळ तेराळिकळेतुकूट्टत्तिलेरु
चोल्लुकेन्नतु केट्टु चोल्लिनान् गगादत्तन् । २१
पतिनोन्नक्षौहिणिप्पटयुण्टिङ्ङु निन-
क्कतिनु पति नीयुमनुजन्मारुं पिन्ने । २२

तब अर्जन ने विदर्भ के राजा से कहा— 'जान लो कि मेरा सामना करने वाला कोई नही है। तुम्हे अगर जाना है तो जाओ, यहाँ तो माधव ही सहायक है और कोई चिन्ता नही है। यह सुनकर विदर्भ दुर्योधन के पास गया जिसने उसे विदग्ध समझकर उसका सम्माम किया। ८-१४ दुर्योधन, कर्ण, शकुनि, विदर्भराजा ये सब मिलकर सलाह करने लगे। उन्होने उलूक के द्वारा युधिष्ठिर आदियो के पास यह सन्देश भेजा— "या तो वन चले जाओ अथवा कल ही यहाँ आकर मर जाओ"। इस प्रकार का सन्देश सुनकर भीमसेन ने उसको मारा। यह देखकर गोविन्द ने तुरन्त ही उसका हाथ पकड़ा और उलूक गोविन्द की जय पुकारकर चला गया। वह कुरुक्षेत्र पहुँचा और उसने सबको हाल सुना दिया। हाल सुनकर दुर्योधन ने भीष्म से पूँछा— "विख्यात रथिक किस वर्ग मे आते है, बतलाइये" यह सुनकर गगदत्त (भीष्म) ने कहा— "तुम्हारी सेना ग्यारह अक्षौहिणियो की है। तुम और तुम्हारे

मेदिनि पॊटिञ्ञॊक्कद्धूळियु पॊङ्ङीटुन्नु
खेदमायॆन्नपोलॆ भानुवु मऱयुन्नु । ४३
वासवमुखपत्ममावोळ विळङ्ङुन्नु
वासविनयनङ्ङळ् कोपेन चुवक्कुन्नु । ४४
मारुतदेवन्तानु मन्दमाय् वीयीटुन्नु
मारुतियुटॆ गद वेगेन चुऴलुन्नु । ४५
धर्म्मदेवनुमुळ्ळिलानन्द वळरुन्नु
धर्म्मजन्माविन्मुखमेटवु तॆळियुन्नु । ४६
धर्म्मनाशनन् कलि मन्द पोय्मऱयुन्नु
दुर्म्मति सुयोधनन्तन्मुखं वाटीटुन्नु । ४७
निर्म्मलन् निरुपमन् नित्यनव्ययन् परन्
चिन्मयन् जगन्मयन् कल्मषविनाशनन् । ४८
धर्म्मस्थापनकरन् निष्कळन् निरञ्जनन्
कर्म्मैकसाक्षिभूतन् निर्ग्गुणन् निराकुलन् । ४९
सन्मतिनिलयनन्नॆन्नुळ्ळिल् वाऴु कृष्णन्
तन्मुखनळिनवु नन्नायि विरियुन्नु । ५०
आमिषभोजिकळुमामोद कलरुन्नु
पोयिनिक्कनमॆन्नु भूमियुं तॆळियुन्नु । ५१
रामरावणरणसन्नाहमॆन्नपोलॆ
भूमियिलुळ्ळ भूपरॊक्कवे वन्नुवन्नु ५२
पुक्कितु कुरुक्षेत्रं दुःखवुमुपेक्षिच्चु
पुष्करदेशे विमानङ्ङळुमॊरुमिच्चु । ५३

इन्द्र का मुखकमल खिल रहा है और वासवि (अर्जुन) की आँखे कोप से लाल हो रही है। वायु देव धीरे-धीरे चल रहा है और वायुपुत्र (भीम) की गदा वेग से घूम रही है। धर्मदेव (यमराज) के मन मे आनन्द वढ रहा है और धर्मपुत्र का मुख अत्यन्त प्रसन्न हो रहा है। धर्म का नाशक कलि धीरे-धीरे छिप रहा है और दुर्मति सुयोधन का मुख मुरझा रहा है। निर्मल, निरुपम, नित्य, अव्यय, पर, चिन्मय, जगन्मय, पापविनाशन, धर्म का स्थापक, निष्कल, निरञ्जन, कार्य का एकमात्र साक्षी, निर्गुण, निराकुल, सन्मति का आश्रय और मेरे अन्दर विराजमान कृष्ण का मुखकमल ठीक से खिल रहा है। ४४-५० आमिषभोजी सव प्रमुदित हो रहे है और पृथिवी प्रसन्न हो रही है कि अव भार कम

क्रूरनाकिय शंखन् शूरना पाञ्चालनुं
पोरिनु नम्मोटवर् पोरुमेन्नरिञ्ञालुं । ३३
पोरा नामवरोटु पोरिनेन्नतु नूनं
कारुण्यमूर्त्ति कमलेक्षणनोटुं कूटि- ३४
त्तेरतिल् करयेरीट्टर्ज्जुनन् वरुन्नेर-
मारुमिल्लेतिरेटो मून्नु लोकत्तिङ्कलु । ३५
वीरनां देवव्रतन् दुरियोधननोटु-
मेन्नुटे मरणवु वन्नीटुं शिखण्डिया-
लेन्नतिनंबोपाख्यानत्तेयुमुरचेय्तु । ३६
ओरोरो दिक्किल्निन्नङ्ङोरोरो राजाक्कन्मार्
वारणवाजिरथकालाळां पटयोटुं ३७
वारिधितन्निल् नदीपूरङ्ङळ् चेरुंपोले
कौरवसैन्य तन्निल् वन्नाकेक्कूटीटुन्नु । ३८
भैरवतरङ्ङळां वाद्यघोषङ्ङळोटु
पोरिनु विरुतुळ्ळ राक्षसवीरन्मारु- ३९
मार्त्तोक्क निलविळिच्चव्वण्णंतन्नेवन्नु-
पार्त्थन्मारुटे पटवीट्टिलुं कूटीटुन्नू । ४०
ईरेळुपतिन्नालु लोकवु कुलुङ्ङुन्नू
वारिधिकळुमिरच्चोक्कवे कलङ्ङुन्नु । ४१
सारतचेरुं गिरिवरन्मारिळकुन्नु
घोरमायुळ्ळ वाद्यनादङ्ङळ् मुळङ्ङुन्नु । ४२

नही कि हम उनसे युद्ध करने योग्य नही है। जब कारुण्यमूर्त्ति कमलेक्षण (कृष्ण) के साथ रथ पर चढकर अर्जुन आगे बढ़ता है तो उसका सामना करने वाला तीनो लोको मे कोई नही है। वीर देवव्रत (भीष्म) ने दुर्योधन से कहा— "शिखण्डि के द्वारा मेरा मरण होगा" और इस प्रसङ्ग मे अबोपाख्यान को भी सुनाया। ३०-३६ भिन्न भिन्न दिशाओ से भिन्न भिन्न भूपाल गज, रथ, घोड़े और पैदल सैनिकवाली सेनाओ के साथ कौरवो की सेना मे जाकर मिल लेते है, जैसे नदियो का जल समुद्र के पानी मे मिल जाता है उसी प्रकार भयङ्कर वाद्य-घोषों के साथ युद्ध मे निपुण राक्षसवीर सिंहनाद करते हुए आते है और पार्थो के सैनिक भवनो मे जमा होते है। चौदहो लोक कॉप रहे है और सभी समुद्रो का पानी हिल रहा है। पृथिवी के टूटने से धूल उड़ रहा है और सूरज भी अदृश्य हो रहा है, मानो खेद कर रहा है। ३७-४२

भीष्म

शुकतरुणिजनमणियुमणिमकुटमालिके !
चॊल्लॆटो चॊल्लॆटो कृष्णलीलामृत । १
सुखविभवमितिलधिकमिह नहि नमुक्कहो !
दु.खङ्ङळुळ्क्कान्पिलोक्क नीङ्डी तुलो । २
मधुरपरिणतकदळिफलमधुगुळादियु
भक्षिच्चिरुन्नु तॆळिञ्ञु परक नी । ३
अमरपरिवृढनमरपति सुतनु सूतना-
याचरिच्चीलयो सारथ्यवेलयुं ? ४
अविटमरिवतिनु परकळकिनॊटु शारिके !
आत्मशुद्धिप्रद भक्तिमुक्तिप्रदं । ५
पल पकलुमिरवुमतु भुजगपति चॊल्किलुं
भारतायोधनं पातियुं चॊल्लुमो । ६
कुतुकमतिलधिकतरमकतळिरिलॆङ्किलो
कूरीटुवन् कुरञ्ञोन्नु चुरुक्कि ञान् । ७
अधमकलुमखिलजगदधिपतिकथामृत-
माजीवनान्त मुषिच्चिलुण्टाय्वरा । ८
पकलिरवु पदकमलमकमलरिल् नण्णुकिल्
पङ्कजाक्षन् कनिञ्ञॆन्तु चॆय्यातनु । ९

भीष्मपर्व

हे शुकतरुणि ! हे जन-ताप हरनेवाली मणिमुकुटमालिके ! पिलाओ, पिलाओ कृष्णलीलामृत ! हमारे लिए इससे बढ़कर कोई सुख नही है, और भीतर के सब दु ख दूर हो गये । मीठा पक्का केला, शहद और गुड़ आदि खाकर आराम करो और प्रसन्न होकर सुनाओ । जिन्होने देवो के नायक और पति के पुत्र (अर्जुन)का सूत बनकर सारथ्य का काम किया था, उनको जानने के लिए, हे शारिके ! आत्मशुद्धि करनेवाली और भक्ति और मुक्ति देनेवाली कथा ढग से सुनाओ । अनेक दिन और अनेक रात अगर शेष ही सुनावे तब भी क्या भारत-युद्ध का आधा भी समाप्त हो सकता है ? १-६ अगर मन मे अधिक कुतूहल है तो सक्षेप मे सुना दूंगी । जगत् के अधिपति का कथामृत आजीवन पाप को दूर करेगा और नीरसता कभी न होगी । अगर कोई रातदिन पङ्कजाक्ष (कृष्ण) के चरणकमलो का ध्यान करे तो

नर्म्मदयाय नदितन्निरुकरे व-
न्तुन्मदमोटु पुक्कु वन्पटयतुकालं । ५४
आभरणङ्ङळ् पुनरायुधङ्ङळु नल्ल-
शोभतेटीटुमुष्णीषङ्ङळ् कन्चुकङ्ङळुं ५५
वेव्वेरे यथायोग्यं नल्किनान् धर्म्मात्मजन्
निर्व्याजं प्रतिज्ञयुं चोल्लिनारेल्लावरु । ५६
भूदेवप्रसादवुं देवताप्रसादवु
सादर चेय्तु चेय्तारायुधपूजकळुं । ५७
कृष्णनु किरीटियुं मटुळ्ळ नृपन्मारु
कृत्यमायतुचेय्तु युद्धत्तिन्नोरुमिच्चार् । ५८
व्यग्रमुण्टाकवेण्ट चित्तत्तिलटियनु-
ण्टग्रमां पाशुपतमस्त्रमेन्नरिञ्ञालु । ५९
निग्रहिच्चीटुवन् ञान् निश्चयं पलरेये-
न्नग्रजन्तन्ने नोक्कीटृर्ज्जुननुरचेय्तान् । ६०
इक्कथाशेषं चोल्वानेन्नाले पणियेन्ना-
यक्किळिमकळाय भक्तिशालिनियन्ने । ६१

उद्योग समाप्तम्

हो जायगा। पृथिवी के सभी पृथ्वीपाल आ-आकर कुरुक्षेत्र मे इकट्ठा हो गये, मानो रामरावण-युद्ध की तैयारियाँ हो रही हो। और विमान सव पुष्कर देश मे एकत्रित हुए। नर्मदा नदी के दोनो तटो पर उस समय वड़ी सेना ने प्रवेश किया। युधिष्ठिर ने सवको उनकी योग्यता के अनुसार आभूषण, आयुध, सुन्दर पगड़ियाँ, और चादर अलग अलग दिया और उन्होने विना छल के प्रतिज्ञा भी की। ५१-५६ ब्राह्मणो और देवताओं की उन्होने सादर वन्दना की और आयुधो की पूजा भी की। यह सव नियम से करके कृष्ण, अर्जुन और अन्य भूपाल युद्ध के लिए एक हो गये। अर्जुन ने युधिष्ठिर को देखकर कहा— 'चिन्ता मत करना। दास के पास पाशुपत नामक अस्त्र है, जान लीजिये। मैं वहुतो का नाश करूँगा, सन्देह नहीं'। उस भक्तिशालिनी शुकी ने कहा— "इस कथा का शेष सुनाने मे (अभी) वहुत काम है"। ५७-६१

उद्योगपर्व समाप्त।

नोंटियिटयिलटल् पोंरुतु शठररिक तव तनयर्
नूरु मरिक्कुं भवानिरिक्कु वृथा । ६
समरदरिशनमतिनु नयनमिह नल्कुवन्
तल्परियं निनक्कुण्टेङ्किल् मन्नवा ! ७
नयनरहितनुमतिनु मुनिवरनु चोंल्लिनान् ।
नाथा ! नमुक्कु केळ्क्कोंन्नि वेण्टा रण । ८

सञ्जयन् युद्ध वर्णिक्कुन्नतु

अतुपोंळुतु मुनिवरनुमरिवतिनु सञ्जय-
नेकिनान् दिव्यमामीक्षणं चोंल्लुवान् । १
मरकळुटे मरपोंरुळ्कळरिवतिनु चतुरनां
मामुनिश्रेष्ठनु पोय् मरञ्ञीटिनान् । २
करबदरसममखिलभुवनमपि सञ्जयन्
कण्टु कौतूहल पूण्टु मेवीटिनान् । ३
अरचनतुपोंळुतु निजसचिवनोंटु चोंल्लिना-
नरिवतिनु सञ्जया ! चोंल्लु लोकोत्भवम् । ४
सुरमनुजखगभुजगमृगपशुतृणाद्यमा
सृष्टियु कालचक्रभ्रमप्राप्तियुं ५

मुनि ने, अपना ही पुत्र होने के कारण विगतनयन (अन्धा धृतराष्ट्र) से कहा—युद्ध न होना चाहिये, उसे रोको। जानलो कि तुम्हारे पुत्र जल्दी युद्ध करनेवाले शठ है, सौओ मरजायेगे और तुम देखते रह जाओगे। अगर तुम चाहते हो तो, हे भूपाल ! तुम्हे युद्ध देखने के लिए आँखे दूंगा। उत्तर मे अन्धे ने मुनि से कहा— "हे नाथ ! मुझे युद्ध का समाचार सुनना ही नही" । १-८

सञ्जयकृत युद्धवर्णन ।

तव मुनिवर ने सञ्जय को युद्ध देखकर वतलाने के लिए दिव्य चक्षु प्रदान किया। तदनन्तर वेदो के अर्थ समझने मे निपुण महामुनिवर अन्तर्धान हो गये। और सञ्जय तो समस्त जगत को करवदर (हाथ मे स्थित वेर) के समान स्पष्ट देखते हुए आनन्द से रहे। तदनन्तर राजा ने अपने सचिव सञ्जय से कहा— 'लोकोद्भव ! ज़रा सुनाओ'। देव, मनुष्य, पक्षि, साँप, हिरण, गाय, तृण आदि की सृष्टि, कालचक्र का भ्रमण,

भवमरणभयविहति विरवॊटरुळीटुवान्
भक्तवात्सल्यमीवण्णमिल्लावर्कुमे । १०
अजनमलनमृतमयनखिलजगदीशना-
मबुजाक्षन् पिऱन्नीटिनान् कृष्णनाय् । ११
असुरवररधिकशठरवनिपतिवीररा-
यत्यन्तदुष्टरायुत्भविच्चीटिनार् । १२
अवनिभरमकलुवतिनवर्कळॆयॊटुक्कुवा-
नादिदेवन् मुतिर्त्तीनॊरायोधनं । १३

युद्धत्तिनु राजाक्कन्मार् ऒरुङ्ङुन्नतु

कुरुपतिकळिरुपुऱवुमरुमयॊटु पोरिनाय्-
क्कोप्पिट्टु युद्धकोलाहल कूट्टिनार् । १
करितुरगरथनिकरविविधकालाळ्प्पट-
य्क्कट़मिल्लातोळं कॊटुमुण्टाक्किनार् । २
अवनिवररवरवर्कळिरवुपकल् वाळुवा-
नावासशालयं कॆट्टियुण्टाक्किनार् । ३
अरुमऱकळरुमयॊटु वक वक तिरिच्चव-
नायोधनोद्यमं कण्टॆळुन्नळ्ळिनान् । ४
विगतनयननॊटु मुनि निज तनयनाकयाल्
वेण्टा रणं विलक्कीटुकॆन्नोतिनान् । ५

वह प्रसन्न होकर क्या न करेगा ? जन्म और मरण का भय वह ठीक से नाश करेगा। इतना भक्तवात्सल्य और किसी का नही है। अज, अमल, अमृतमय, अखिल जगत् का ईश, कमलाक्ष ने कृष्ण के रूप मे जन्म लिया। असुरवर तो जो अधिक शठ और अत्यन्त दुष्ट थे वे भूपाल के रूप मे उत्पन्न हुए। उनका नाश करके पृथिवी का भार कम करने के लिए आदिदेव ने एक युद्ध का उपक्रम किया। ७-१३

युद्ध के लिए राजाओ की तैयारी।

कुरुओ के नेताओ ने उत्साह के साथ दोनो ओर युद्धकोलाहल का उपक्रम किया। हाथी, घोडे, रथ और विविध पैदल सैनिको के लिए नि सीम आहारसामग्री तैयार की। राजाओ को अनेक दिनो और रातो रहने के लिए आवास-स्थान का निर्माण भी हुआ। जिन्होने वेदो का प्रेम से विभाग किया वे (व्यास) युद्ध की तैयारियाँ देखकर पधारे।

पुनरवनुमरच्चनोटु पुतुमयोटु चोल्लिनान्
पूरुवशोत्भवन्माराय मन्नवर् १५
तकिल् मुरशु परा पटहतुटिकळोटु शंखवु
तम्मिट्टवु नल्ल मद्दळ वीणयु १६
मधुरतर मृदुलरसनिनदकुळल् काहळ
मटु शृगङ्ङळिटय्क्कयुटुक्कुकळ् १७
पेरिय रथमलरिवरुमळवरियघोषवुं
पेय्तमदत्तोटु कुंभिकळ्नादवुं १८
तुरगवरखुरनिकरपरिपत्तनधूळियु
तुळ्ळुन्न कालाळ्निलविळिघोषवुं १९
नरपतिकळरुमयोटु तेरुतेरे वलिच्चुटन्
नाद वळक्कुं चेरुआणीलिकळु २०
त्रिभुवनवुमतुपोळ्ळुतु विरयलोटु चेर्न्नुते
तीर्त्तु पतिनेट्टुकूट्टमक्षौहिणि । २१
कुटतळकळ् चमरि कोटियुं कोटिक्कूरयु
कोलाहलमेन्तु चोल्लावतोरोन्ने ! २२
परशुधर मुनिवरनुसमनरियभीष्मरु
भार्ग्गवशिष्यन् भरद्वाजपुत्रनुं २३
कुरुनृपतिवरनुमिळयवर्कळ् भगदत्तनु
कूरुळ्ळ भूरिश्रवा कृतवर्म्मावुं २४
गुरुकृपरुमधिकतरवलमुटय सौवलन्
क्रूरतयेरुं निशाचरवीररुं २५

पर, पटह, तुटि, शख, तम्मिट्ट, अच्छे-अच्छे मद्दल और वीणाएँ मीठी-मीठी आवाजवाली सीग, भेरियाँ, अन्य प्रकार की सीग, ढक्काएँ (डमरू), बड़े-बड़े रथो के दौड़ने का घोप, प्रभूत मद निकलनेवाले हाथियो का नाद, अच्छे-अच्छे घोडो के खुरो के आघात से उठती हुई धूल, कूदते हुए पैदल सैनिको की चिल्लाहट, भूपालो के सोत्साह खीचने से उत्पन्न ज्याघोष आदि से उस समय त्रिभुवन काँपने लगा। अठारह अक्षौहिणियाँ इकट्ठा हुईं। १४-२१ श्वेतच्छत्र, चँवर, झडा और अन्य आडम्बर की वस्तुएँ कहाँ तक वताई जायँ। परशुराम के समान श्रेष्ठ भीष्मजी, भार्गव के के शिष्य भरद्वाज का पुत्र, कुरुओ का नृपवर, उनके अनुज, भगदत्त, शक्तिशाली भूरिश्रवा, कृतवर्मा, गुरु कृप, अधिक बलवान् सौवल, अधिक

विविधतम विलसदधिपतिविमललीलयु
विश्वकार्यङ्ङळु लोकयालादियु । ६
परनमलजनखिलभुवनपति चॆय्ततु
वर्त्तमानङ्ङळु मेलिल् भविप्पतुं ७
सरिदवनिवनशिखरिजलधिपरिमाणवु
त्रिभुवनविभागवुं दिग्विशेषङ्ङळु ८
प्रियसचिवनवनिपनोटाशु चॊल्लीटिनान्
पिन्नॆयु वर्त्तमानं परञ्ञीटिनान् । ९
दितिजवररवनियतिलवनिवररायतु
दिव्यनामीश्वरन् कृष्णनाय् वन्नतु १०
कलिपुरुषकरनखिलनृपतिकुलनाशनन्
कश्मलन् त्वल् सुतनायिप्पिरन्नतु । ११
अरिक कळकळल् मनसि सुखमोटिरि मन्नवा !
आनन्दमूर्त्तियॆस्सेविक्क सन्ततं । १२
सरसमिति सचिवनतिसरभस चॊन्नतु
तात्परियत्तोटु केट्टु नरवरन् । १३
अरिवतिनु विरविनोटु परक नीयिन्नियु-
मात्मजन्मार्पटकोप्पुकळ् सञ्जया ! १४

अनेक प्रकार के अधिपतियो की विमल लीलाएँ, विश्व के कार्य, लोकयात्रा के प्रकार, १-६ पर, अमल, अज, और अखिलभुवनपति का चरित्र, अतीत के समाचार और भविष्य मे होनेवाली वाते नदी, पृथिवीतल, वन, पर्वत, समुद्र आदि का परिमाण, त्रिभुवन के विभाग और दिग्विशेष, प्रिय सचिव ने यह सब राजा को वतला दिया और तदनन्तर अन्य समाचार भी सुनाये। हे भूपाल, जान लो कि दैत्य पृथिवी पर राजा हुए, दिव्य ईश्वर ही कृष्ण हुए, समस्त नृपकुलो का नाशक, दुष्ट कलिपुरुष ही तुम्हारे पुत्र के रूप मे पैदा हुआ है। चिन्ता छोड़ दो और आनन्दमूर्ति की निरन्तर सेवा करते हुए सुख से रहो। अपने सचिव की रस और घवडाहट के साथ कही यह वात नरवर ने तत्परता के साथ सुनी। ७-१३ और वोले। हे सञ्जय! मेरी जानकारी के लिए मेरे पुत्रो की सेना की तैयारियाँ सुनाओ। तव उन्होने राजा से फिर कहा— पुरुवश मे पैदा हुए भूपालो के तकिल, मुरशु[1],

१. तकिल, मुरुशु आदि मलयाळम के शब्द है और वाद्यविशेषो के नाम हैं। इनके हिन्दी नाम अनुपलब्ध हैं।

यमतनय ! विरविनोटु वरिक ! जयमूळियुं
वाळ्क नी वाळ्क आन् वानिल् वाणीटुवन् । ८
समरभुवि मरणमिह वरुवतिनु पोरिनाय्
धर्म्मज ! निङ्ङळोटिन्नु मुतिर्न्नतुं । ९
कुरुकुलवुमरुतिपेटुमिनियुळरुकेङ्किल् नी
कुन्तीसुत ! येन्ननुज्ञयु नल्किनान् । १०
गुरुकृपयोटतुपोळुतु गुरुकृपजनत्तेयु
कुन्तीसुतन्मार् वणङ्ङि वाङ्ङीटिनार् । ११
विरविनोटु पोरुवतिनु करुतियिरुपुऱवुमति
वीर्यंनटिच्चु राजाक्कळ् निल्क्कुंविधौ १२
निधनभयमुटयवर्कळ् विरविनोटु पोरुविन्
नीतियिल् पालिप्पनेन्नितु धर्म्मजन् । १३
कुरुनृपतिसुतरिलिळयवनोरु युयुत्सुवुं
कूटिप्पुऱप्पेट्टु धर्म्मजन् पिन्नाले । १४
रणशिरसि नरपतिकळिरुपुऱवुमतुपोळुतु
चेणुटेळु महाव्यूहवु कूट्टिनार् । १५
चेंकिटुपटयलरिनोरु पटहमुखवाद्यवु
तेरोलि आणोलि सिंहनादङ्ङळु । १६
कलहरसविवशतरमतिकळतिशूरन्मार्
कण्टुकोण्टाटिप्परस्परं निल्क्कुन्पोळ् । १७

का उल्लघन नही किया । १-७ हे युधिष्ठिर ! आओ ! तुम्हारी विजय होगी । तुम राज करो, मैं स्वर्ग मे निवास करूँगा । रणभूमि मे मृत्यु प्राप्त करने के लिए हे युधिष्ठिर ! मैं आज आपलोगो से लडने चला हूँ । हे कुन्तीसुत ! अगर तुम जिद दिखलाओगे तो कुरुवश नष्ट होगा । ऐसा कहकर भीष्म ने अनुज्ञा दी । तव कुन्ती के पुत्र बड़ी कृपा के साथ गुरुजनो को प्रणाम करके विदा हुए । अच्छी तरह से लडने के विचार से जव दोनो तरफ के राजा वीर्य प्रदर्शित करते हुए खड़े हो गये तव युधिष्ठिर ने कहा— जिनको मृत्यु से भय है वे चले आवे, मैं नीति से उनकी रक्षा करूँगा । ८-१३ कुरुनृपतियो मे से एक तरुण युयुत्सु युधिष्ठिर के पीछे आकर उनके साथ हो गये । उस समय दोनो ओर के राजाओ ने रणभूमि में दृढ महाव्यूह वनाये । काण के कठोर पटह आदि वाद्य, रथो की ध्वनि, ज्याघोष और सिंहनाद मुनाई दिये । जव वडे-वडे शूर युद्ध-रस से वेवस होकर परस्पर स्वागत करते हुए खडे थे । १४-१७

गुरुतनयरिकळ् कुलमरुति करुतीट्टुवान्
कूटे त्रिगर्त्तादि सिन्धुभूपालरुं २६
कटलोटटलुकरुतुमोरु कटलोटु समानमाय्-
क्काणायि पाण्डवन्मार्पटक्कूट्टवुं । २७

श्रीकृष्णन्टे अर्ज्जुनसारथ्य

नरकरिपुनळिनदळनयननखिलेश्वरन्
नारायणन् परन् तेरिलुक्करेरिनान् । १
अमरपतितनयनोरु कुरवुकळ्वरायवति-
न्नानन्दमूर्त्ति चम्मट्टि कैक्कोण्टुटन् २
धवळमयतुरगयुतरथमतु नटत्तिनान्
धन्वियामर्ज्जुनन्तानुं करेरिनान् । ३
पितृपतिज पवनसुत नकुल सहदेवन्मार्
पिन्पे घटोत्क्कचन् वन्पनभिमन्यु ४
पलनृपतिकळुमवर्कळ्पटयुमति घोरमाय्
पाटे परन्नितु पारिषदादिकळ् । ५
शमनसुतनतुपोळ्तु सुहृदनुजसहितनाय्
शन्तनुजातनेक्कैवणङ्ङीटिनान् । ६
तरिक मम युधि विजयमतिनु वरमेकु नी
सत्यत्तिलेतु पिळच्चीलटियनो । ७

क्रूरतावाले राक्षसवीर, गुरुपुत्र (अश्वत्थामा), शत्रुनाश के सम्बन्ध मे सलाह करने के लिए त्रिगर्त आदि सिन्धुभूपाल, समुद्र से स्पर्धा करनेवाली और समुद्र के समान पाण्डव-सेना भी दिखाई दी । २२-२७

श्रीकृष्ण का अर्जुन-सारथ्य

नरकासुर के शत्रु, कमललोचन, अखिलेश्वर, नारायण रथ पर चढे । आनन्दमूर्ति ने चाबुक सँभाला ताकि अमरपति के पुत्र को कोई असुविधा न हो, और श्वेत घोडो से युक्त रथ को चलाया । तब धनुष-बाण लिये अर्जुन भी रथ पर चढे । युधिष्ठिर, भीम, नकुल और सहदेव, और पीछे घटोत्कच, शक्तिशाली अभिमन्यु, अनेक नृपति अपनी-अपनी सेना के साथ अपने पारिषदो के साथ सब जगह फैल गये । तब युधिष्ठिर ने अपने मित्र और अनुजो के साथ भीष्म को प्रणाम किया । (और कहा) मुझे युद्ध मे विजय दे दो । उसके लिए वर प्रदान करो । मुझ दास ने कभी सत्य

गुरुवधमिततिदुरितमरुतरुतु माधव !
कूट्टोल्ल तेर् पिन्तिरिक्कॆन्नु फल्गुनन् । १०
अतिकरुणमसुरकुलहरनोटुरचॆय्तु ता-
नायुधं वच्चु तेरिल् किटन्नीटिनान् । ११
जगदुदयभरणपरिहरणवहुलीलयु
चॆय्ताळियिल् पळ्ळिकॊळ्ळुन्न नाथनु १२
अलमलमितरुतरुतु चपलतकळ् नरपति-
कळाक्षेपमे चॆय्युमिल्ल किल्लेतुमे । १३
अनुचितमितऱिक नृपकुलमतिनु नल्लत-
ल्लय्यो ! निनक्कु दुष्कीर्त्तियुण्टाय्वरु । १४
फलमतिनु नरकमोरु गतिवरिकयिल्लेटो
पार्त्थिवन्मार्क्कु युद्धवॆटिञ्ञीटिनाल् । १५
परमपुरुपनुसतिनु परिचोटरुपळीटिनान्
पार्त्थनद्ध्यात्ममायुळ्ळतॊप्पेरुमे । १६
विमलनजनखिलजगदधिपनथ काट्टिनान्
विश्वसिच्चीटुवान् विश्वरूपत्तॆयु । १७
त्रिभुवनवुमसुरसुरमनुजखगमृगभुजग-
दनुज पशुमुख वहुलभूतवृत्तान्तवु १८
बहुचरण वहुवदन बहुलकरजालवु
विस्मयत्तोटु कण्टीटिनानर्ज्जुनन् । १९

गयी ! यह गुरुवध बड़ा पाप है, हे माधव ! यह होना न चाहिए । रथ को मोडो', ऐसा फल्गुन (अर्जुन) ने कहा । असुरकुलो के नाशक से इस प्रकार अतिकरुण बात कहकर आयुध भी रखकर रथ पर बैठ गये । तब जगत् की उत्पत्ति, रक्षण और नाशन आदि अनेक लीलाएँ करते हुए समुद्र पर निवास करनेवाले नाथ ने कहा— 'बस, वस, यह न करो, यह चापल्य न दिखलाओ, नरपति लोग कुछ भी आक्षेप न करेगे । ८-१३ जान लो कि यह एक राजवश के लिए अनुचित है, विलकुल ठीक नही है । इससे तुम्हारा अपयश ही होगा । अगर राजा लोग युद्ध से भागेगे तो नरक ही उसका फल होगा, और कोई गति नही हो सकती है' । तब परमपुरुष ने सुन्दर ढग से अर्जुन को सपूर्ण अध्यात्म का उपदेश दिया । और विश्वास दिलाने के लिए विमल, अज, अखिलजगदधिपति ने अपना विश्वरूप दिखलाया । और अर्जुन ने वडे विस्मय के साथ तीनो लोक, असुर, सुर, मनुज, पक्षी मृग, नाग, दानव, पशु आदि के विविध वृत्तान्त, अनेक मुख,

भगवद्गीत

कमलदलनयननोट्टु विजयनथ चोल्लिनान्
कारुण्यवारिधे ! श्रीपते ! दैवमे ! १
कपटमतिकळिलिनिय चेरुविरल् सुयोधनन्
कश्मलन्तन्नेक्कुड्डिच्चु युद्धत्तिनाय् २
निजतनयधनसदनजीवनाद्यङ्ङळे
नित्यमल्लेन्नुपेक्षिच्चु सन्नद्धराय् ३
कलितरणमरणमिह वन्न योद्धाक्कळे-
क्काण्मानटुत्तु निर्त्तेणमी स्यन्दन । ४
मरुतलकळिरुपुरवुमटल्करुति निन्नतिन्
मद्धये महारथं निर्त्तिनानच्युतन् । ५
सुहृदनुजतनयगुरुजनपितृपितामह-
न्मारेयु युद्धसन्नद्धराय् कण्टवन् । ६
त्रिदशवरतनयनतिकरुणयोटु चोल्लिनान्
तेर् पिन्तिरिच्चु विट्टुत्ति निर्त्तीटुक । ७
निशिततरविशिखगणमरुतु गुरुवपुषि आन्
निष्करुणनाय् प्रयोगिप्पतय्यो ! हरे ! ८
हर ! वरद ! शिव ! गिरिश ! दुरितहर ! शङ्करा !
हाहा ! निनच्चततिमोहमेत्रयुं । ९

भगवद्गीता ।

अर्जुन ने कमललोचन से कहा— हे कारुण्यसागर ! हे श्रीपते ! हे भगवन् ! रथ को ऐसा खडा करो ताकि कपटमतियो मे सब से पतित और दुष्ट दुर्योधन के कारण अपने पुत्र, धन गृह और जीवन को अनित्य समझकर युद्ध के लिए तैयार होकर जो योद्धा यहाँ कलि पार करनेवाली मृत्यु मे आये है उनको मै देख सकूँ । तब अच्युत ने युद्ध के लिए सन्नद्ध होकर खड़े दोनो ओर के सैनिको के बीच रथ खडा कर दिया । मित्र, अनुज, पुत्र, गुरुजन, पिता, पितामह आदि को युद्ध के लिए तैयार देखकर इन्द्रपुत्र ने बड़ी करुणा के साथ कहा— 'रथ को घुमाकर अलग खडा करो । १-७ हे हरे ! यह बिलकुल नही हो सकता है कि मै निष्करुण होकर गुरुजनो के शरीर पर तीक्ष्ण वाण चलाऊँ । हे हर ! वरद ! शिव ! गिरीश ! पापहर ! शङ्कर ! हा, अत्यन्त मोह की बात सोची

निजसदृशबलसहितजनघटनचेतसा
नीतियोटेटु पोरुन्नतालोकितुं ४
गगनमतिलमरवरर् विरवोटु निङ्ञ्ञिते
गन्धर्व्वसिद्धविद्याधरौघादियु । ५
नरपतिकळेतिर्पोरुतु तेरुतेरे मरिक्कयु
नाकनारीजनं वन्नु वरिक्कयु ६
नरतुरगतति रुधिरनदिकळिलालिक्कयुं
नारदन् कण्टुकोण्टाटिच्चिरिक्कयुं । ७
खगनिवहमथ रुधिरजलमतु कुटिक्कयुं
कण्ट शव पिशाचाळि भुजिक्कयु । ८
कनमकलुमतु करुति वसुमति हसिक्कयु
काणिकळ् नारायणेति जपिक्कयु । ९
घनगळित जलसदृशशरनिर पोळिक्कयुं
खळ्गपातं चतुरन्मार् कळिक्कयु । १०
निशिततरविशिखभयपरवशमोळिक्कयु
निर्भयन्मारतु कण्टु पळिक्कयुं । ११
करविगळदरिकळरिगळतलमरुक्कयुं
कण्ठं मुरिञ्ञु तलकळ् तेरिक्कयुं । १२
चपलतरमतिचतुरवरगुणमरुक्कयुं
चातुर्यमोटु चापङ्ङळ् मुरिक्कयुं । १३

प्रकार अपने बल के तुल्य बलवालो का नीति के साथ सामना करके होनेवाले युद्ध को देखने के लिए देववर, गन्धर्व, सिद्ध, विद्याधर आदियो से गगन भर गया। नरपतिगण लड़ते हुए जल्दी-जल्दी मरने लगे, और स्वर्ग की स्त्रियाँ आकर उनको स्वीकार करने लगी। १-६ नरो और घोड़ो का समूह रुधिरनदी मे बहता था और नारद देखकर हर्ष से हँसने लगे। पक्षिगण तो उधर रक्त पीते थे और पिशाच तो नजर मे आये शव को खाने लगे। यह सोचकर कि अब भार कम होगा, पृथिवी हँसी। और देखनेवाले 'नारायण!' ऐसा जपने लगे। मेघ से गिरने वाले जल के समान शरसमूह गिरा और चतुर योद्धाओ ने खड्गपात किया। जो तीक्ष्ण शरो के डर से पीड़ित थे वे छिप गये और निर्भीक लोग तो उनका नाश करने लगे। हाथ से छोडे गये चक्रो द्वारा शत्रुओं के गले काटे गये और गरदन कट जाने से शीर्ष अलग हो गये। धनुप की डोरियाँ झट से काटी गयी और बड़ी कुशलता के साथ धनुप ही तोड़े

भयमीटवनतुपौऴुतु तॆरुतॆरॆ नमस्करि-
च्चभयमरुळॆन्नु कूप्पिस्तुतिच्चीटिनान् । २०
कुरुकुलज ! भयमौऴिक्क कुरु समरमाशु नी
कुण्ठनायीटॊला कण्टतॆल्लामह । २१
मधुमथननमरवरसुतनॊटुपदेशमाय्
मायाप्रभावमतु नीङ्ङुंप्रकारमुटन् २२
उऴङ्ङियरुळिन मॊऴिकळुपनिषत्ताकया-
लोतिनार् गीतयॆन्नादराल् ज्ञानिकळ् । २३
अतु पॊऴुतु चपलतकळखिलमकलॆक्कळ-
ञ्ञर्ज्जुनन् पोरिनाय् विल्लॆटुत्तीटिनान् । २४

युद्धं

अथ कलहमतिभयदमरुतु मम चॊल्लुवा-
नन्पुकॊण्टे मरुच्चीटिनानवरम् । १
अथ विजयनतुपॊऴुतु शरयुगळवु तॊटु-
त्ताचार्यपादाभिवाद्य प्रयोगिच्चान् । २
करिकळॊटु करिकळथ रथिकळॊटु रथिकळु
कालाळ्क्कु कालाळुमश्वत्तिनश्ववु ३

अनेक चरण, असख्य करजाल को अपनी आँखो देखा । १४-१९ और उस समय बडे भय के साथ जल्दी नमस्कार किया और अभय की याचना करते हुए हाथ जोडकर स्तुति की । (भगवान् ने कहा) हे कुरुकुलोत्पन्न! भय त्यागो, जल्दी युद्ध करो, कुठित न हो जाओ, जो कुछ तुमने देखा, सब मैं ही हूँ । मधुमथन (श्रीकृष्ण) ने इन्द्रपुत्र से माया के प्रभाव को दूर करने के लिए जो वाते उपदेश के रूप मे कही वे उपनिषत् होने के कारण ज्ञानियो ने उनको सादर 'गीता' नाम दिया । तब अर्जुन ने अपना सारा चापल्य छोडकर युद्ध करने के लिए धनुष-बाण उठाया। २०-२४

युद्ध

अब इस अत्यन्त भयप्रद युद्ध का वर्णन करना कठिन है । शरो से सारा आसमान ढँक दिया गया । उस समय अर्जुन ने दो वाण चलाकर आचार्यचरणो का अभिवादन किया । हाथियो के साथ हाथी, रथियो के साथ रथी-पैदल सैनिको के साथ पैदल सैनिक, घोडो के साथ घोडे, इस

करिकळोट्टु पवनसुतनुटनुटनट्टुक्कयु
कैक्किकतमेळु परिच्चु मुष्कोटटिक्कयु २४
घटमुटयुमटवटिकळ् कठिनतरमेल्क्कयु
घटारवेण पिटञ्ञु किटक्कयु । २५
कलशभवनतिनु शरततिकळ् वरिपिक्कयु
कौतूहलेन घटोल्वकचनार्क्कयु । २६
त्रिदशपतिसुतनुमथ शरनिर पोळिक्कयु
चेम्मे भयत्तोटरिवाहिनियोळिक्कयु । २७
नदिमकनुमतिनुळरि विजयनोटेतिर्क्कयु
नल्ल धर्म्मात्मजन् शल्यरोटट्टुक्कयु । २८
पेरिय रथमतिल् विरवोटेरिवन्नुत्तरन्
पिन्निट्टु धर्म्मजनें मुल्पुक्केतिर्त्ततिनु २९
मदसलिलमोळुकिनोरु करिमुतुकिलेरिनान्
मद्रेशनायुळ्ळ शल्यर् महारथन् । ३०
कोलकरुतियवरिरुवर् पोरुतळवु शल्यरुं
कोन्नीटिनानुत्तरन्तन्नेयन्नेर । ३१
दिवसकरनोळिविनोटु कटलिल् मुळुकीटिनान्
दिक्कोड्ङुमेल्लामिरुट्टु निरञ्ञुते । ३२
पकलरुतिवरुमळवु पटयुं पिरिञ्ञुते
पाण्डवन्मार्क्कु सन्तोषं कुरञ्ञुते । ३३

'यहाँ शरण कहाँ है ?' ऐसा कहते हुए कुछ इधर-उधर चले और शन्तनुपुत्र ने सेना को सँभाला। भीससेन ने वार-वार हाथियो के निकट जाकर उनको अपने हाथ के अनुगुण आयुधो से मारा। उन पर कुभ तोडने वाले युद्ध-प्रहार लगे और वे घण्टा-ध्वनि करते हुए जमीन पर लोटते रहे। कलशभव ने शरो की वर्षा की और घटोत्कच कौतुहल के साथ चिल्लाया। इन्द्रपुत्र ने शरवर्षा की और भय के कारण शत्रुसेना भाग गयी। यह देखकर नदीपुत्र (भीष्म) ने अर्जुन का सामना किया और अच्छे युधिष्ठिर शल्य के निकट पहुँचे। २१-२८ एक वडे रथ पर वैठकर उत्तर चला आया। मद्रेश महारथ शल्य मदजल वहानेवाले एक हाथी के पृष्ठ पर वैठे, युधिष्ठिर का सामना करने के लिए दोनो का वध करने के लिए तैयार थे। युद्ध मे शल्य ने उत्तर को मार डाला। सूर्य अपने-प्रकाश के साथ समुद्र मे डूव गया और चारो दिशाओ मे अन्धकार छा गया। जव दिन समाप्त हुआ, सेनाएँ अलग हुई।

चपलकळॊंटुपमतकुमसिलतकळेल्क्कयु
चापल्यमुळ्ळवर् कण्टु विरय्क्कयुं । १४
समररसमतिकळ् निजसमरॊंटु मरुक्कयु
सावज्ञमेहीति चॆन्नु विळिक्कयु । १५
रणकरणनिपुणतरमपकरुणमार्क्कयु
रेणुकापुत्रशिष्यन् प्रमोदिक्कयु । १६
मधुमथनवदननळिन विकसिक्कयुं
मान नटिच्चवर् देह त्यजिक्कयुं । १७
रणमरणभयरहितमतिकळे नुतिक्कयु
राजवृन्द चोर कण्टु मदिक्कयु । १८
समरभुवि विमुखभटरॆप्परिहसिक्कयुं
संयुगकामिकळट्टहसिक्कयुं । १९
दनुजसुरवरसमरमितिनॊटुपमिक्कयुं
द्वन्द्वयुद्धं कण्टवर् विवादिक्कयु । २०
शमनभटवरनिवहमेरॆ श्रमिक्कयु
शन्तनुजन् धनुस्सेट् नमिक्कयुं । २१
विबुधयुवतिकळ् नरन्मारॆ भ्रमिक्कयु
वीतशोकं कौतुकेन रमिक्कयुं । २२
शरणमिह किमिति चिलर् पलवळि तिरिक्कयु
शन्तनु पुत्रन् बलौघं भरिक्कयु । २३

गये । ७-१३ बिजली के समान तलवार जब लगी तब चापल्यवाले देखकर डर गये । युद्ध मे रस लेनेवाले तो अपने बरावरो के साथ लडे और ऐसे योद्धाओ के पास जाकर उनको युद्ध के लिए बुलाने लगे । युद्धकुशल योद्धागण निर्दयतापूर्वक चिल्लाये और रेणुकापुत्र (परशुराम) के शिष्य (भीष्म) प्रमुदित हुए । श्रीकृष्ण का मुखकमल विकसित हुआ और अभिमान दिखलानेवालो को अपना शरीर छोडना पडा । रणभूमि मे मरने का भय न दिखलानेवालो की स्तुति की गयी और राजवृन्द रक्त देखकर मद मे आ गये । रणभूमि से मुँह मोडनेवालो की हँसी उड़ायी गयी और युद्धप्रियो ने अट्टहास किया । इस युद्ध की देवासुरयुद्ध से उपमा की गयी और द्वन्द्वयुद्ध को देखनेवालो मे विवाद चला । १४-२० यमराज के सैनिकसमूह ने अधिक परिश्रम किया और शन्तनु के पुत्र ने अपना धनुप बहुत चलाया । विबुध-युवतियाँ (अप्सराएँ) मनुष्यो से मोहित हुई और उनके साथ, शोक त्याग कर, सकौतुल रमण किया ।

अधिकसिततुरगयुतरथमतिललकरि-
च्चादितेयाधिपपुत्रनुतानुमाय् ४४
अरिकळ्कुलमरुतिपेंटुमतिनतिरुपा मुति-
न्नर्त्तेंतिर्त्तीटिनान् भीष्मरोटप्पोंळ्ळे। ४५
कलहमतिनुपमपरवतिनरिमयुण्टेंटो
कालनूर्पुक्कारनेकं पटज्जनं। ४६
भयमोंटुरु परवशतपेंरुकियिरुपुरवुमोरु-
पाच्चिल् तुटङ्ङीतिळकी पेंरुम्पट। ४७
मरुतलयुमटल्निलवुमरियरुतु पोंटि पेंरुकि
मण्टुन्नितोरो जनङ्ङळोरो वळि। ४८
पटयिळकियतुकरुति विरवोंटु सुयोधनन्
पाञ्ञटुक्कुन्नतु कण्टिट्टु भीमनुं ४९
गिरिमुकळिल् मळ पोंळियुमतिनु सममेंय्तेंय्तु
कीरी शरीर धृतराष्ट्रपुत्रनु। ५०
उपरिचरमकळ् मकनु मकनु मकनायव-
नूक्कुळ्ळ भीष्मरोटत्तल् चोंल्लीटिनान्। ५१
कटुकतिनु करुतलोंटेंतिर्पोंरुतु भीष्मरुं
कौन्तेयसैन्यवुमोटिव्भयत्तिनाल्। ५२
बलसहजनमरवरतनयनोंटु चोंल्लिलनान्
वन्पट केंट्टु मण्डुन्नतु काण्केंटो। ५३

हुए आदितेयाधिप (इन्द्र) के पुत्र के साथ शत्रुकुलो का नाश करने के लिए सरोप उद्यत होकर सिंहनाद करते हुए भीष्म का सामना किया। उस युद्ध की उपमा वतलाना कठिन है। अनेक सैनिक यमलोक भेजे गये। भय के कारण दोनो ओर परेशानी वढी और भागना प्रारम्भ हुआ और वडी सेना हिलने लगी। धूल के उठने से शत्रु को और रणभूमि को पहचानना कठिन था, अतएव लोग इधर उधर दौड़ने लगे। ४२-४८ सेना का सक्रिय होना देखकर सुयोधन को झट से आते देखकर भीम ने पर्वतशिखर पर पानी वरसने के समान शरवर्षा करके धृतराष्ट्रपुत्र के शरीर को चीर डाला। उपरिचर की लडकी के लडके के लडके ने शक्तिशाली भीष्म से दु:ख वतलाया और भीष्म ने उसको मरसो के समान तुच्छ समझकर उससे युद्ध किया और डर के मारे कुन्तीपुत्रो की सेना भागने लगी। वलराम के भाई (कृष्ण) ने अर्जुन से कहा— देखो, वड़ी सेना हारकर

[illegible]
[illegible] ३४
[illegible]
[illegible] ३५
[illegible]
[illegible] ३६
[illegible]
[illegible] ३७
अदितिसुत[illegible]
[illegible] ३८
[illegible]
[illegible] ३९
उदयगिरिशिखरमुपगते दिनपे बलयो-
[illegible] ४०
समरभुवि [illegible]
सन्नाह्नाद् [illegible] । ४१
जलदनिभसुभग यदुकुलजन्माखिलेश्वरम्
जन्मादिविहीनं जनार्दनं सात्वतम् ४२
जनिमरणभयहरणाभिधुरचरणाम्बुजम्
जङ्गमाजङ्गमाचार्यम् जगन्मयम् ४३

परमपुरुष (कृष्ण) का ध्यान करते हुए राजागणों ने अपने शिविर में प्रवेश किया। दूसरे दिन सुबह कुरुराजाओं ने युद्ध के लिए रणभूमि में आकर आह्वान किया। ३४-३५ अनिलसुत (भीम) के साथ युद्ध करते हुए कलिंगराजा के पुत्र यमसदन चले गये। तब शान्तनुनन्दन (भीष्म) ने बड़ी बरसात के समान शरवर्षा की। अदितिसुतवरतनय (इन्द्रपुत्र) ने उसके बराबर शरवर्षा की और उसके फलस्वरूप एक अद्भुत युद्ध प्रारम्भ हुआ। जब सूर्य अस्ताचल पहुँचा तब देखनेवाले सब चले गये। जब सूर्य फिर उदयाचल पर दिखाई दिया तब तीसरे दिन शक्तिशाली राजा युद्ध करने के लिए रणभूमि पहुँचे और तैयार होकर चिल्लाने लगे। ३६-४१ मेघ के वर्णवाले यदुकुलोत्पन्न, अखिलेश्वर, [illegible]जन्मादिरहित, जनार्दन, जन्म और मरण के भय के [illegible] चरणवाले, स्थावर [illegible] के आचार्य, जगन्मय ने, [illegible] से युक्त रथ को [illegible]

कुरुकुलजवररिवर्कळिरुवरुमटुत्तुटन्
कूरम्पु कोरिच्चौरिञ्ञुतुटङ्ङिनार् । ६४
रघुपतियुममररिपुदशमुखनुमुळ्ळपो-
रन्नु काणातवर् कण्टारतुपोले । ६५
तुमुलतररणरणितहृदयमोटु काणिकळ्
तुल्यमितिनु मटिल्लोरु पोरेन्नार् । ६६
उटलिलोळुकिन रुधिरजलमोटवर्तङ्ङळि-
लुण्टाय युद्धकोलाहल चोल्लुवान् ६७
अरुतरुतु पुनरदितितनयवरनन्दन-
नालस्यमेटमुण्टायि मुरिकयाल् । ६८
निजसचिवनुटलिल् मुरिविटरिनोटु काण्कयाल्
निर्त्तिनान् तेरेटुत्तीटिनान् चक्रवु । ६९
मधुमथननणयवरुमळवु देवव्रतन्
मन्दस्मितं चेय्तु निन्नु चोल्लीटिनान् । ७०
कमलदलनयन ! मधुमथन ! करुणानिधे !
काळमेघाभिरामकृते ! श्रीपते ! ७१
जनिमरणभयहरणनिपुणतरचरण युग !
जन्तुक्कळ्जीवनमाय जगत्पते ! ७२
नळिनशरशमनकर ! नळिनभवनमितपद !
नारायणा ! हरे ! नारायणा ! हरे ! ७३

नही हुआ कि मेरी मृत्यु न हो। कुरु के कुल मे पैदा हुए इन दोनो ने तीक्ष्ण शरो की वर्षा की। जिन्होने रघुपति-रावण का युद्ध नही देखा था उन्होने उसके समान युद्ध देखा। प्रेक्षकगण ने, जिनका हृदय तीव्र शब्दो से पीडित हुआ, कहा कि इस युद्ध के समान और कोई युद्ध नही है। उन दोनो के शरीरो मे रक्त बहने के कारण जो युद्ध-कोलाहल हुआ उसका वर्णन करना असभव है। घायल होने के कारण इन्द्रपुत्र को बडा आलस्य हुआ। अपने सचिव के शरीर मे व्रण देखकर कृष्ण ने रथ रोका और अपना चक्र ले लिया। ६३-६९ जब मधुमथन (कृष्ण) निकट आने लगे तब देवव्रत (भीष्म) ने मुस्कराकर कहा— हे कमललोचन ! हे मधुमथन ! हे करुणानिधे ! काले मेघ के समान सुन्दर आकृतिवाले हे श्रीपते ! जन्म और मरण का भय दूर करने मे निपुण चरणयुगवाले ! हे जन्तुओ के जीवन ! हे जगत्पते ! मदन का शमन करनेवाले ! ब्रह्मा

त्रिजगदधिपतिवचननिशमनदशान्तरे
धीरन् धनञ्जयन् बाणङ्डळ् तूकिनान् । ५४
त्रिदशपतिसुतकृतशरप्रयोगं कण्टु
दिव्यन् नदीसुतन् विस्मयं तेटिनान् । ५५
परिभवमोंटमितकरबलमोंटु पितामहन्
पार्थनेंक्कण्टेतिर्त्तार्त्तिट्टुत्तीटिनान् । ५६
अमरवरतनयनेंयुममरवरसहजनेंयु-
मन्पिनाल् मूटिनान् वन्पनां भीष्मरुं । ५७
कमलदलनयनमृदुवपुषि शरमेट्टतु
कण्टिट्टु कोपं मुळुत्तितु पार्त्थनु । ५८
विबुधपतिसुतनतिनु विरविनोंटु भीष्मर्तन्
विल् मुरिच्चीटिननेरत्तु भीष्मरुं । ५९
विगतभयमपरमोंरु विल्लटुत्तीटिनान्
वीरनां पार्त्थनतु मुरिच्चीटिनान् । ६०
विवशतयिलरिशमोंटु विरवोंटु पितामहन्
वीण्टु मटोंन्नु कैक्कोंण्टु चोंल्लीटिनान् । ६१
विजय ! तव समरचतुरत पेंरिकें नन्नेंटो
विस्मयं वीरा ! विचित्र तोंळिलुकळ् । ६२
चरतमोंटु पोंरुवतिनु वरिकवरिकाशु नी
चाकातनाळल्ल ञानुं पिरन्नितु । ६३

भाग रही है। त्रिजगत् के अधिपति जब बात सुन रहे थे तब धीर धनञ्जय ने शरवर्षा की। इन्द्रपुत्र के शर-प्रयोग को देखकर दिव्य नदीपुत्र (भीष्म) बहुत विस्मित हुए। ४९-५५ परिभव का अनुभव करते हुए बड़े बाहुबल के साथ पितामह (भीष्म) ने सिहनाद करते हुए अर्जुन का सामना किया। शक्तिशाली भीष्म ने इन्द्र के पुत्र और इन्द्र के भाई को शरो से ढंक दिया। कमलदलनयन (कृष्ण) के मृदुशरीर पर शरो का लगना देखकर पार्थ क्रुद्ध हुआ। और विबुधपति (इन्द्र) के पुत्र ने भीष्म के धनुप को तोड डाला। उस समय भीष्म ने निडर होकर दूसरा धनुष ले लिया, पर वीर पार्थ ने उसे भी तोड डाला। तब पितामह ने क्रुद्ध होकर ढग से दूसरा धनुप हाथ मे लेकर कहा— हे विजय ! तुम्हारी युद्ध-कुशलता अद्भुत है, विस्मयावह है, तुम्हारी चेष्टाएँ विचित्र है। ५६-६२ आओ ! अच्छा युद्ध करने के लिए जल्दी आओ। मेरा जन्म ऐसे दिन

व्यथयुमोरु परिभववुमकतळिरिल् वाय्क्कयाल्
वीरनां शल्यरटुत्तु पटयुमाय् । ८४
करतळिरिलोरु गदयुमळकिनोटेटुत्तुटन्
काटिन्मकनुमटुत्तान् कटल्पोले । ८५
कटमुटयवटिविनोटु कठिनमोटटिच्चुटन्
कालपुरत्तिन्नयच्चान् करिकळे । ८६
पटनटुविललरिनोरु पवनतनयन्तन्ने-
प्पटलर् कण्टु पेटिच्चकन्नीटिनार् । ८७
कुरुनृपतिवरतनयनवरजन्मारुमाय्
कूटनेप्पोलेयटुत्तानतुनेरं । ८८
बलमुटय पवनसुतनतिनु तेरेरिनान्
पेय्तुतुटङ्ङिनान् बाणगणमवन् । ८९
कोटुमयोटु पोरुतु कुरुवरसहजन्मारेयुं
कोन्नान् पतिमून्नुपेरेयुं मारुति । ९०
नरतुरगकरिरथिकळनाशङ्ङळ् कण्टिट्टु
नाथन् भगदत्तनेय्तटुत्तीटिनान् । ९१
पवनसुतवपुषि शितशरनिरकळ् कोण्टतु
पार्त्तु घटोल्क्कचनार्त्तटुत्तीटिनान् । ९२
मरुतलकळ् नटुविलटल्पोरुवतिनु पुक्कवन्
मायङ्ङळ् कोण्टु पोर्चेय्तोटुक्कीटिनान् । ९३

धृष्टद्युम्न ने उस के निकट पहुँचकर उसको मारा । ७७-८३ दिल मे दु.ख और परिभव हो जाने के कारण वीर शल्य अपनी सेना के साथ आया तुरन्त ही गदा अपने हाथ मे लेकर वायुपुत्र समुद्र के समान निकट आया और ज़ोर से मारकर उसने हाथियो को यमसदन भेज दिया । सेना के बीच मे सिंहनाद करते हुए वायुपुत्र को देखकर शत्रु अलग हो गये । तब कुरुनृपति का ज्येष्ठ पुत्र वृषम के समान अपने अनुजो के साथ आया । इसके जवाव मे शक्तिशाली भीम रथ पर चढा और शरवर्षा करने लगा । तीव्र युद्ध करके तेरहो अनुजो को मारुति (भीम) ने मार डाला । ८४-९० सैनिको, घोडो, हाथियो और रथियो का नाश देखकर नेता भगदत्त वाण छोडते हुए निकट आया । भीम के शरीर पर तीक्ष्ण शरो का लगना देखकर सिंहनाद करता हुआ घटोत्कच आया । शत्रुओ के वीच लड़ने के लिए घुसकर उसने माया का प्रयोग किया और उनको समाप्त कर

सलिलनिधिदुहितृवर ! सकलजगदवनपर !
सच्चिल्स्वरूपप्रभो ! नाथ ! गोपते ! ७४
निगममयसदन ! विधुवदन ! मुरमथन ! जय !
निन्नुटे कैकॊण्टु कॊन्नरुळेणमे । ७५
मम मनसि नियतमभिलषितमतु माधवा !
मटॆन्तु पिन्ने वरेण्टतेनिक्कहो ! ७६
मधुरतरवचनमॊटु कुरुकुलजनिङ्ङने
मानिच्चु चॊन्नतुनेरत्तु पार्त्थनु ७७
अरुतरुतितॊळिकॊळिक करुतुकॊरु सत्यमु-
ण्टानन्दमूर्त्ते ! मऽन्नितो मानसे ? ७८
विजयनयवचनमितु विमलनसुरारियां
विश्वैकनायकन् केट्टटङ्ङीटिनान् । ७९
खरकिरणनॊळिविनॊटु कटलिल् मुळ्ळुकीटिनान्
कैनिल पुक्कीटिनार् महीपालरुं । ८०
कलहरसमकतळिरिल् निऽयुमरिवीररुं
कण्टेतिर्त्तार् तम्मिल् नालांदिवसवुं । ८१
द्रुपदसुतनॊटु पॊरुतुनिन्न शल्यानुजन्
तेर् कळञ्ञानतिन्नाशु धृष्टद्युम्नन् ८२
कुपितनतिचतुरनवनॊटु पॊरुतटुत्तुटन्
कॊन्नितु शल्यानुजन्तन्नेयन्नेरं । ८३

द्वारा वन्दित चरणवाले ! हे नारायण ! हरे ! हे नारायण ! हरे ! हे समुद्र की पुत्री के पति ! सकल जगत् की रक्षा मे तत्पर ! सत्चित् स्वरूप प्रभो ! हे नाथ ! हे गोपते ! हे वेदमय निवासवाले ! हे चन्द्र-मुख ! मुरमथन ! जय हो ! अपने हाथ से मुझे मारने की कृपा करो ! हे माधव ! मेरे मन की यही अभिलाषा है। मुझे और क्या होनेवाला है ? ७०-७६ जब कुरुकुलज (भीष्म) ने अपने मधुर-वचनो से इस प्रकार कहा तब अर्जुन ने कहा— नही ! नही !, रुक जाओ ! एक सत्य है, क्या तुम उसे भूल गये हो ? । अर्जुन के इस नीतिवाक्य को सुनकर विमल असुरशत्रु विश्व के नायक ने अपने को सँभाला। उस समय सूर्य अस्त होने के लिए समुद्र में डूबा और राजगण अपने-अपने शिविर को चले गये। तदनन्तर चौथे दिन दिल मे युद्धरस रखनेवाले शत्रुवीर रणभूमि मे आकर एक दूसरे का सामना करने लगे। द्रुपदपुत्र के साथ युद्ध के लिए उद्यत शल्यानुज ने अपना रथ खोया। अतएव क्रुद्ध और अति चतुर

पल मलकळरुमयोटु मलकळोटु पोरुवतिनु
पाञ्ञटुक्कुंवण्णमेटितञ्चांदिन । १०४
परमगुरुचरितनथ रथमतु नटत्तिनान्
पार्थनु भीष्मरोटेय्तटुत्तीटिनान् । १०५
मुसलशरपरिघवरपरशुमुखमायुध
पार्त्थिवन्मारुटन् तूकित्तुटङ्ङिनार् । १०६
परनिवहशमनकरनमरवरनन्दनन् ।
भैरवास्त्र प्रयोगिच्चितु भीष्मरे । १०७
परशुधरनोटु पोरुतु जयमतु लभिच्चवन्
प्रत्यस्त्रमेय्तु तटुत्तुनिन्नीटिनान् । १०८
पटनटुविलोरु रुधिरनदियुमोळुकी तदा
पट्टितु सात्यकिक्कात्मजन्मार् पत्तुं । १०९
पुरुपवरनधिकरथनाय भूरिश्रवा
पुत्रगणत्ते वधिक्कयाल् सात्यकि ११०
कनल्चितरुमेरिमिळियोटेतिर्पोरुतटुत्तुटन्
काणाय शत्रुक्कळेयोटुक्कीटिनान् । १११
करितुरगनररथिकळिरुपुरवुमेटवुं
कालराज्यं गमिच्चार् पिणङ्ङत्तुलोम् । ११२
अरुणनलकटल् नटुविलरचरथ कैनिलयि-
लळकिनोटुपुक्कार् पुलर्न्नितारांदिनं । ११३

आया तब ऐसा लगा कि अनेक पहाड और पहाडो का सामना कर रहे है। परमगुरु (कृष्ण) ने रथ चलाया और अर्जुन बाण छोडते हुए भीष्म के निकट पहुँचा। ९९-१०५ और राजा लोग मुसल, शर, परिघवर, परशु आदि आयुधो का प्रयोग करने लगे। शत्रुसमूह का नाश करनेवाले अर्जुन ने भीष्म पर भैरवास्त्र का प्रयोग किया। जिसने परशुराम से लड़कर जय प्राप्त किया उस (भीष्म) ने प्रत्यस्त्र का प्रयोग करके उसको रोका। सेनाओ के बीच मे रक्तनदी बहने लगी। सात्यकि के दसो पुत्र मारे गये। पुरुषवर, अधिरथ भूरिश्रवा के द्वारा अपने पुत्रगण के मारे जाने से सात्यकि ने आग बरसती हुई आँखो के साथ रणभूमि मे उतर कर जो-जो शत्रु देखने मे आये उनको समाप्त कर दिया। दोनो ओर हाथी, घोड़े, आदमी और रथी लडलडकर यमसदन चले गये। तब छठे दिन की प्रभात हुई। १०६-११२ अरुण क्षुब्ध समुद्र के बीच और राजगण अपने तम्बू

परवशतयोॅट्टु पटयुमिळकि नटकोॅण्टुते
पार्त्थिवेन्द्रन् भगदत्तनुमोटिनान् । ९४
मुसलधरकरिकळ् पल पट्टुपोयीतुटन्
मुल्पॅट्टु वाङ्ङी सुयोधनसैन्यवुं । ९५
सुहृदनुजसहितयमतनयनु सेनयु
सूर्यन् मरञ्ञारॅ कैनिलयु पुक्कार् । ९६
अपजयवुमनुजजनमरणवु चोॅल्लिना-
नार्त्तनाय् भीष्मरोटन्नु सुयोधनन् । ९७
नदिमकनुमतिनु कुरुनृपतियोॅट्टु चोॅल्लिनान्
नन्नाकयिल्ला पट नमुक्कॅन्नुमे । ९८
सकलजगदवनपरनवनिभरनाशनन्
साक्षाल् जगन्नाथनाय नारायणन् ९९
पकलिरवुतुणयरिकिलुण्टु सुयोधना !
पाण्डवन्माक्कॅ जयं वरू निर्ण्णयं । १००
वरदनजनखिलजनहृदि मरुवुमीश्वरन्
वासुदेवन्तन्नॅ वन्दिक्क नी तानु । १०१
यमतनयनवनियोॅरु पातियु नल्क नी
चॅम्मे सुखिच्चु वसिक्क पिणङ्ङातॅ । १०२
अनुनयमोॅटशुभशुभमऱिवतिनु चोॅन्नपो-
तादित्यदेवनुदिच्चानतुनेरं । १०३

दिया। लाचार होकर सेना भाग गयी और नृपवर भगदत्त भी भाग गया। अनेक बड़े हाथी मारे गये और सबसे पहले सुयोधन की सेना हटी। युधिष्ठिर, अपने मित्र और अनुजो के साथ सूर्य के अस्त होते ही अपने शिविर चले गये। उस दिन सुयोधन ने अपने पराजय और अनुजो की मृत्यु से दुःखित होकर भीष्म से कह दिया। नदीपुत्र (भीष्म) ने तव कुरुनृपति से कहा— हमारे लिए युद्ध कभी ठीक नही होगा। ९१-९८ समस्त जगत् की रक्षा मे तत्पर, दुष्ट राजाओ के नाशक साक्षात् जगन्नाथ नारायण दिन रात उनकी सहायता कर रहे है, हे सुयोधन! इसलिए पाण्डवो की ही जय होगी। तुम भी वरद, अज, सव के हृदय मे निवास करनेवाले वासुदेव की वन्दना करो। युधिष्ठिर को आधा राज्य दे दो और बिना आपस मे झगडा किये सुख से रहो। और उसको समझाया कि शुभ और अशुभ पहचानो। तव सूर्योदय हुआ। जव पाँचवाँ दिन

पटनटुविल् वरिकिलुटल् तविटुपोटियाक्कुवन्
पापि ! सुयोधना ! पायाते निल्लु नी । १२४
अटल्वटिवुमटल्विटमकळुमुटय भीमनु-
मोटुन्न कौरवरोटटुत्तीटिनार् । १२५
चेंकिटटयुमळवलरुमनिलसुतभीतियाल्
चेन्नवर् कैनिलपुक्किरुन्नीटिनार् । १२६
मरुतलकळ् तोल्पतिन्नेळां दिवसवुं
मण्डलव्यूहं चमच्चितु भीष्मरुं । १२७
वरिकिलिळकरुतु पटयेन्नुरप्पिच्चुटन्
वज्रमां व्यूहवुं वज्रधरात्मजन् । १२८
सलिलधरनिकरसटमळ पोळियुंवण्णं
सायकपक्तिकळ् तूकित्तुटङ्ङिनान् । १२९
उदरगळ कर चरण मुखमवयवङ्ङळ-
टक्कोन्नु चोरयोलिक्कुन्नितेट्वु । १३०
रथिनिकरतुरगवरनरकरिकळ् चाकयुं
रक्षोगणप्रेतभूतङ्ङळार्क्कयु १३१
रुधिरनदि पलवळियुमुटनुटनोलिक्कयु
रूक्षतयुळ्ळवर् पोर्क्कङ्ङटुक्कयुं । १३२
नरपतिकळ् चिलरधिकभयमोटु तिरिक्कयु
नारदन् तुंबुरुसाकं चिरिक्कयु । १३३

अगर तुम युद्ध के बीच आओगे तो सुम्हे चूर-चूर कर डालूगा । बिना भागे खडे हो जाओ । ढग से युद्ध करनेवाला भीम तो भागते कौरवो के पास पहुँच गया । कान फोडने लायक गर्जन करनेवाले वायुपुत्र के डर से वे अपने तबू चले गये । शत्रुओ के पराजय हेतु सातवे दिन भीष्म ने मण्डलव्यूह की रचना की । १२१-१२७ और वज्रधर के पुत्र ने वज्रव्यूह की भी रचना की, ताकि शत्रुओ के आने पर सेना न हिले । वज्रधरात्मज (इन्द्रपुत्र अजुन) ने मेघसमूह के धाराप्रवाह से बरसने की भॉति शरवर्षा करना प्रारम्भ किया। उदर, गला, हाथ, चरण, मुख आदि सभी अवयवो से ज़ोर से ख़ून बह रहा है । अनेक रथी, तुरगवर, हाथी और आदमी मरे । रक्षगण, प्रेत और भूत चिल्लाये, रक्तकी नदियाॅ चारो ओर बही, रूक्षतावाले यद्ध के लिए आगे बढे, कुछ राजगण अधिक डर के मारे वापस चले गये, नारद और तुबुरु हँसे। द्रोण के तीक्ष्ण शरो के लगगे से विराट का धनुप टूट

कृतिकळतिल् मिकवियलुमरिय गंगासुतन्
क्रौञ्चमां व्यूहं चमच्चुनिर्त्तीटिनान् । ११४
कृतिकळकमतिल् मरुवुमखिलजगदीशनां
कृष्णनुं पार्त्थनुं तेरिलुक्करेरिनार् । ११५
अरचर्कुलमवरवर्कळेतिर्पोरुतु तम्मिले-
टन्तकन्वीट्टु पुक्कारनेकं जनं । ११६
द्रुपदसुतनतिचतुरनाय धृष्टद्युम्नन्
मोहिच्चितेटवु मोहास्त्रमेल्क्कयाल् । ११७
गुरुवरनुमवनोटेतिर्पोरुतु तेरु विल्लु
कूटेक्कळञ्ञेय्तटुत्तु चेन्नीटिनान् । ११८
कुरुपतियुमतुपोळुतु पलरोटु चोल्लिनान्
कुन्तीसुतनाय भीमनेक्कोल्लुवान् । ११९
उळरुकिनि विरविनोटु कळयरुतु कालमे-
न्नूक्कोटटुत्तु कुरुप्रवरन्मारुं । १२०
द्रुपदनृप दुहितृसुतसुरवरज केकय-
द्रुपदमुखरथिकळ् तुणचेन्नितु भीमनु । १२१
द्रुततरमोटधिनिकटमटल् पोरुतनन्तर
द्रोणादिकळुमोळिच्चु वाङ्ङीटिनार् । १२२
कुटकोटिकळटलिटयिलिटरोटु पोटिच्चुटन्
कूटत्तुटर्न्नटुत्तीटिनान् भीमनु । १२३

के अन्दर प्रविष्ट हुए अपने कार्यो मे सदैव तत्पर महान् गगापुत्र ने क्रौञ्चव्यूह की रचना की। सभी कार्यो मे विद्यमान जगदीश कृष्ण और अर्जुन रथ पर चढे। राजागण मे अनेक ने एक दूसरे का सामना किया और अन्त मे अन्तक (यमराज) के घर पहुँचे। मोहास्त्र लगने से द्रुपदपुत्र अतिचतुर धृष्टद्युम्न बिलकुल बेहोश हो गये। गुरुवर ने उसका सामना किया और अपने रथ और धनुप खोकर भी उसके पास पहुँचे। उस समय कुरुपति ने वहुतो से कुन्तीपुत्र भीम को मारने के लिए कहा। अव जल्दी करो, समय न खोओ, ऐसा कहते हुए कुरप्रवर जोर से निकट आने लगे। ११३-१२० भीम तो द्रुपद राजा की पुत्री के पुत्र की और द्रुपद आदि रथियो की सहायता के लिए गया। द्रोण आदि निकट आकर वडी द्रुत गति से युद्ध करने के बाद पीछे हट गये। युद्ध के दौरान मे छत्री-झण्डा आदि को तोडते हुए भीम निकट पहुँच गया। हे सुयोधन !

विबुधपतिसुततनयनेय्तेय्तटुत्तितु ।
वित्रस्तनायवनंबरमेरिनान् । १४५
पुनरसुरनोरुवनवनोटटुत्तीटिनान्
पोरिलवन्तन्नेक्कोन्नानिरावानु । १४६
अतिनुपरि भयमियलुमसुरकळसंख्यमा-
याशीविषङ्डळाय्क्काणायि माययाल् । १४७
सुरवरजसुतनुमथ निन्नू विषण्णनाय्
सूक्षिच्चु मायमरिञ्ञिट्टिरावानु । १४८
अतुपोळुतु गरुडनुटल्पूण्टु सर्प्पङ्ङळे-
याश्चरियंवरुमारुवन् भक्षिच्चान् । १४९
अवनेयवरतुपोळुतु मायया कोन्नपो-
तार्त्तु दुरियोधनादिकळोक्कवे । १५०
पवनसुततनयनथ पवनसमवेगेन
पट्लरोच्च केट्टुट्टुत्तीटिनान् । १५१
भ्रमणकरपरिघमोटु वीरन् घटोल्कचन्
भ्रातावितेक्कोलचेय्ततु कारण । १५२
इटियोटेतिरिट्टुमटवुपोटुपोटलरीटिना-
निन्द्रात्मजाग्रजन्तानुमव्वण्णमे । १५३
पवनजनुमवरजनुमोरुमयोटटुत्तुटन्
पटलर्कूट्टमोटुक्किक्त्तुटङ्ङिनार् । १५४

यह सब विधि की आज्ञा है । दुःख छोड़ो । वीरो के मरने मे शोक न करो । निशाचरो के राजा अति शक्तिशाली अलबुस को लडता हुआ सेना को समाप्त करता देखकर अर्जुन-पुत्र बाण छोड़ता हुआ उसके पास पहुँचा । तब डर के मारे वह आकाश मे चढा । तब एक असुर उसके पास पहुंचा और अर्जुनपुत्र इरावान् ने उसको मार डाला । तदनन्तर असख्य भयंकर असुर माया के द्वारा आशीविष (सर्प) के रूप मे दिखाई दिये । तब अर्जुनपुत्र इरावान् ने माया को जान लिया और बहुत विषण्ण हुआ । १४२-१४८ तब उसने गरुड का रूप धारण करके आश्चर्यजनक ढग से सर्पो को खा लिया । तदनन्तर असुरो ने उसको माया से मारा । तब दुर्योधन आदि ने सिहनाद किया । इतने मे भीम का पुत्र वायु के वेग से शत्रुओ के शब्द सुनकर निकट पहुँचा । अपने भाई के वध के कारण वीर घटोत्कच एक भयकर भाला लेकर आया । इन्द्रपुत्र के बडे भाई (भीम) ने भी ऐसी गर्जना की, मानो मेघनिर्घोष भी हार जाय ।

कलशभवनिशिततरविशिखगणमेल्क्कयाल्
खण्डमाय्वन्नू विराटनु चापवुं । १३४
शरशकलरथतुरगतातनेक्कण्टाशु
शंखनुं द्रोणरोटेटानतुनेरं । १३५
निमिषमोटु शमनपुरि निलयनवुमाक्किनान्
निन्न भरद्वाजपुत्रन् गुरुवरन् । १३६
सभयतरहृदयमथ वाङ्ङी विराटनु
सव्यसाचिक्कतिर् चन्नु भगदत्तन् । १३७
महितगुणमुटय यमसुतनोटु सुयोधनन्
माद्रनुं माद्रीतनयनुं तम्मिलु । १३८
असुरसुरसमरसममन्ते पऽयावि-
तस्तमिच्चीटिनानादित्यदेवनुं । १३९
हरिसहितहरिहयजनरियरथमेऽिना-
नरिमयोटु पोरिनायेट्टां दिवसवु । १४०
पवनसुतनोटु पोरुतु चत्तारोरेळुपेर्
पापिकळाय सुयोधनतन्पिमार् । १४१
परुषमोटु पलवचनमतिनु दुरियोधनन्
पार्त्तु देवव्रतन् तन्नोटु चोल्लिनान् । १४२
विधिविहितमिति करुतु कळकळल् सुयोधना !
वीरर् मरिक्कुन्नतिन्नु शोकिक्कोला । १४३
निशिचररिलरचनतिबलमेळुमलबुसन्
निन्नु पट कोन्नोटुक्कुन्नतु कण्टु । १४४

गया। १२८-१३४ अपने पिता का रथ और तुरग शरो से नष्ट देखकर शख ने द्रोण का सामना किया। गुरुवर भरद्वाजपुत्र (द्रोण) ने तो उसको एक ही क्षण मे यमपुरी भेज दिया। तब विराट कॉपते दिल से पीछे हटा। भगदत्त ने सव्यसाचि (अर्जुन) का सामना किया। श्रेष्ठ गुणवाले यमसुत (युधिष्ठिर) का सुयोधन ने सामना किया और माद्र और माद्रीपुत्र आपस मे लडे। यह युद्ध देवासुर युद्ध के समान था। इतने मे सूर्यदेव अस्त हुए। हरि(कृष्ण)के साथ हरिहयज (अर्जुन)श्रेष्ठ रथ पर चढा, ताकि आठवे दिन का युद्ध प्रारम्भ हो। १३५-१४१ सुयोधन के पापी अनुजो मे से सात भीम से युद्ध करके मर गये। अतएव दुर्योधन ने देवव्रत (भीष्म) से अनेक खरी बाते कही। (भीष्म ने उत्तर दिया) हे सुयोधन! समझो कि

श्री कृष्णन् भीष्मवधत्तिनु ओरुम्पेट्टुन्नतुंपिन्वाङ्ङुन्नतुं ।

विजयरथमतुपोळुतु विगतभयमच्युतन्
वीरना भीष्मक्कुनेरे नटत्तिनान् । १
सलिलधरनिकरमटमळपोळियुमव्वण्ण
सायकौघं प्रयोगिच्चारिरुवरु । २
नदिमकनुमतुपोळुतु चेरुतु कोपिक्कयाल्
नारायणनु नरनुमेट्टु शरं । ३
त्रिदशपतिसुतनुमथ विल् मुरिच्चीटिनान्
वीरना भीष्मर् मटोन्नेटुत्तीटिनान् । ४
कमलदलनयनसखियाय धनञ्जयन्
खण्डिच्चितञ्चम्पुकोण्टतुतन्नेयुं । ५
विरविनोटु पुनरपरमोरु धनुरनन्तरं
वीरना भीष्मर् कैक्कोण्टटुत्तीटिनान् । ६
शरनिकरपरिपतनशकलितशरीरनाय्
शक्रात्मजनु तळर्न्निटर्पूण्टुते । ७
समरभुवि रथमपि च निर्त्ति नारायणन्
चक्र तिरिच्चटुक्कुन्नतु काणायि । ८
जय परमपुरुष ! जय जय सकल भुवनमय !
जन्मनाशङ्ङळिल्लात जगत्प्रभो ! ९

श्रीकृष्ण का भीष्मवध करने का इरादा और उनका त्याग ।

तदनन्तर अच्युत ने निडर विजयरथ को (अर्जुन के रथ को) वीर भीष्म की ओर चलाया । मेघसमूह की अतिवृष्टि करने के समान दोनो ने शरवर्षा की । नदीपुत्र (भीष्म) के तनिक क्रुद्ध होने के कारण नारायण और नर (अर्जुन) को शर लगे । अर्जुन ने भीष्म का धनुष तोड़ डाला । तब भीष्म ने दूसरा ले लिया । कमलदलनयन (कृष्ण) के मित्र धनञ्जय ने उसे भी पाँच बाणो से काट दिया । तदनन्तर वीर भीष्म एक और धनुष लेकर निकट पहुँचे । १-६ शरसमूह के लगने से इन्द्रपुत्र का शरीर अत्यन्त छिन्न हुआ और वह थक गया । तब नारायण (कृष्ण) ने युद्ध-भूमि मे रथ को रोक लिया और अपने चक्र को घुमाते हुए निकट आते दिखाई दिये । हे परमपुरुष ! तुम्हारी जय हो ! हे सकल भुवनमय ! जय, जय ! हे जन्म और नाश से रहित जगत्प्रभो ! हे कमलदलनयन !

नदिमकनुमतिनु भगदत्तनोटेटिनान्
नन्नायटुत्तानुटन् भगदत्तनुं । १५५
निजतनयमरणमतु केट्टु दु:खत्तोटु
निन्न धनञ्जयन् कोपिच्चटुत्तप्पोळ् । १५६
कुरुबलवुमुरुभयमोटूळरि नटकोण्टुपोय्
कूट्टमे कैनिल पुक्किरुन्नीटिनार् । १५७
दिवसकरनुदयमतुकण्टपोतोन्पता
दिवसवुमणञ्ञु पोर्चेय्तुतुटङ्ङिनार् । १५८
पितुरधिकनधिकबलमुळ्ळ सौभद्रनु
पेटिच्चलंबुसनोटुवोळमेय्तान् । १५९
गुरुविनोटु गुणसदृशनाय किरीटियु
कुंभिकळोटु वृकोदरवीरनुं । १६०
शमनतनयनुममितबलमुटय शल्यरुं
शक्तियेरीटु महारथर्तम्मिलु १६१
पौरुतळवु नरतुरगकरिकळिरुभागवुं
पोरिल् मरिच्चारसंख्यमरक्षणाल् । १६२
रुधिरमयनदिकळिरुपुरवुमोळुकी तदा
रोषं मुळुत्ततिघोरमायी रणं । १६३

भीम और उसके छोटे भाई ने मिलकर शत्रुओं को समाप्त करना प्रारम्भ किया। इसके जवाव मे नदीपुत्र (भीष्म) ने भगदत्त को उत्तेजित किया जो झट से निकट पहुँच गया। १४९-१५५ अपने पुत्र का मरण सुनकर दु:खित धनञ्जय जय क्रोध के साथ निकट आया तव कुरुवल वहुत डर गया और चला गया। सवके सव तवू के अन्दर छिप गये। तदनन्तर सूरज का उदय देखकर नवे दिन सव युद्ध करने लगे। अपने पिता से भी अधिक, शक्तिशाली सौभद्र ने अलंवुस के भागने तक शरवर्षा की। जव गुरु के साथ उनके गुणवाले अर्जुन का, हाथियो के साथ भीम का, युधिष्ठिर और शक्तिशाली शल्य का और आपस मे शक्तिशाली महारथियो का युद्ध हुआ तव एक क्षण मे दोनो ओर असख्य नर, घोड़े और हाथी मरे। दोनो ओर रक्त की नदियाँ वही और रोप के वढने से युद्ध अतीव घोर हुआ। १५६-१६३

अपटुतयोटटल्नटुविलिटरोटु धनञ्जय-
नच्युतनोटु सत्यत्तें रक्षिक्कॅन्नान् । १९
कोंटुपटयोटिटरोटळल् पूण्टु कुन्तीसुतन्
खेदिच्चु कैनिलपुक्किकरुन्नीटिनान् । २०
शमनसुतनमरवरतनयनोटु चोल्लिनान्
शान्तनवादिकळेज्जयिप्पान् पणि । २१
वयमवनि वरुत्रतिनु कोंतियोळिक कानन
वाळ्क वसुदेवपुत्रनेन्तावतु ? २२
युधि मरणमोंळिक वनमळकिनोटु पूक ना
योगं धरिच्चु गति वरुत्तीटुवान् । २३
इति शमनसुतविविधनयवचनमाशु के-
ट्टिन्दिरावल्लभन्तानुमरुळ्चेय्तान् । २४
अमरकुलवरवसुगणाधिपन्मारुटे-
यंशमायुत्भविच्चुण्टाय भीष्मरें २५
अमरिलरुतसुरसुरनिकरमोरुमिक्किलु-
माक्कुं जयिक्करुतेन्तरिं मन्नवा ! २६
परशुधरनरचर्कुलमटयें वेन्नीटुवान्
पण्टेतिर्त्तन्नु तोट़ानरिञ्ञीलयो ? २७
विबुधनदियुटें तनयनटिमलरिणय्क्कल् नी
वीळ्क युधिष्ठिरा ! वेण जयमेङ्किल् । २८

करो। १३-१९ कुन्तीपुत्र (अर्जुन) विपण्ण हुआ और अपनी थकी सेना के साथ अपने तबू चला गया। युधिष्ठिर ने अर्जुन से कहा— शान्तनव (भीष्म) आदियो को जीतना कठिन है। हम भूमि पाने की इच्छा छोड़ दे और वन मे रहे। वसुदेव पुत्र (कृष्ण) क्या कर सकता है ? हम युद्ध मे मरण को त्याग दे और खुशी से वन मे प्रवेश करे ताकि योगाभ्यास करके अपनी सुगति प्राप्त करे। युधिष्ठिर की इस प्रकार की विविध बाते सुनकर इन्दिरावल्लभ (श्रीकृष्ण) ने कहा— देवकुलो मे श्रेष्ठ वसुगण के नेताओ के अंश से उत्पन्न भीष्म को युद्ध मे देव और असुर एक होकर भी जीत नही सकते है—जान लो, हे राजन् ! क्या तुम जानते नही हो कि पूर्वकाल मे परशुराम, जो सारा क्षत्रियकुल का नाश चाहता था, उनसे हारा था। २०-२७ हे युधिष्ठिर ! अगर विजय चाहते हो तो दिव्य नदी के पुत्र के चरणो पड़ो। हे कालात्मज (युधिष्ठिर) ! उनको युद्ध मे

जय कमलदलनयन ! जय कमलभवसदन !
जाग्रल्भ्रमप्रद ! प्राणिजीवात्मक ! १०
जय कमलवदन ! जय जय वरदकमलकर !
जाड्यप्रणाशन ! त्राहि मा त्राहि मा ! ११
जय विवुधमुनिनमित ! जय गिरिशनतचरण !
जात्याभिमानादिहीनप्रभानिधे ! १२
जय सकळसगुणमय ! जय विमल त्रिगुणमय !
जन्तुधर्म्मप्रिय ! श्रीपते ! गोपते । १३
जय गिरिशनमितपद ! जय सकलतनुभुवन !
जन्तुवृन्दक्षेत्र वेदवेदान्तग ! १४
क्षितिविबुध ! जनहृदयनिलयन ! नमोस्तुते
कीर्त्तनध्यानमात्यन्तिक देहि मे ! १५
जय विजयरथनिलय ! परगति वरुत्तुवान्
चेंम्मे मुतिर्न्नतिन्नेतुं मटिक्कोला । १६
वरिक वरिकयि समरमरणभयमिल्ल मे
वासुदेवा जयिक्कॅन्नितु भीष्मरु । १७
निजसमयवचनमतिनन्तर चेय्किलुं
निश्चयं भक्तसत्यत्तॆ रक्षिक्कुमे । १८

जय ! हे ब्रह्मा के सदन ! जय ! हे जाग्रद् अवस्था रूपी भ्रम करानेवाले ! प्राणिजीवात्मक ! जय ! हे कमलवदन ! हे वरदहस्त ! जय जय ! हे जाड्य का नाश करनेवाले ! मुझे बचाओ, मुझे बचाओ ! हे देवो और मुनियो का वन्दनीय ! शिवजी का पूज्य ! हे जन्म से ही अभिमानादिहीन ! हे प्रभानिधे ! जय ! ७-१२ हे सकलगुणमय ! हे विमल ! हे निर्गुण ! जय ! हे जन्तुधर्मप्रिय ! हे श्रीपते ! गोपते ! हे गिरिश (शिव) का पूजितचरण ! सकल शरीरो का भुवन ! हे सभी जन्तुओ का क्षेत्र ! हे वेद और वेदान्त से वेद्य ! ह पृथिवी का देव ! जन के हृदय मे रहनेवाले ! मेरा नमन स्वीकार हो ! मुझे आत्यन्तिक कीर्तन और ध्यान करने दो। अर्जुन के रथ पर वैठनेवाले ! जय ! परगति करने के लिए उठे हो, अव हिचकना मत ! आओ ! आओ ! मुझे इस युद्ध मे मरने से डर नही है। हे वासुदेव ! तुम्हारी जय हो ! —भीष्म ने ऐसा कहा। अपने वचन का अन्तर करके भी नि.सन्देह भक्तो के सत्य की रक्षा करोगे। धनञ्जय ने युद्ध के वीच मे संकोच से अच्युत (कृष्ण) से कहा— सत्य की रक्षा

निवस मम हृदि सततमतिनु तोंळुतीटिनेन्
नीळाकुचाभोगमेळाभरणमे । ३९
निजचरणनळिननतजनसुखपरायणा !
नित्यं नमोस्तु ते नित्यं नमोस्तु ते ! ४०
पितृपतिज पवनसुत विबुधपतिसुत नकुल-
वीर शस्त्रार्थसिद्धान्तसहदेवा ! ४१
वरिक वरिकरिकिलिनि वरुवतिनु कर्म्ममो
वासुदेवन् नियोगिक्किलेयुळ्ळु ते । ४२
भवतु सुखमपि च युधि वरिक भवतां जय
पार्त्थादिकळे ! सुखमल्लियेंल्लाक्कुं ? ४३
तमसि निशि रभसतरमिविटे वरुवानहो
सन्तापमेतानुमुण्टाकयल्लल्ली ? ४४
नदितनयनयवचननिशमनदशान्तरे
नन्दिच्चजातशत्रुक्षितीशन् चोन्नान् । ४५
गुरुनिवहकरुणयोंटु कुरुकुलमोंटुक्कि ञान्
कूटलर्कालनाय् नाटुवाणीटुवान् ४६
कीर्ति मनसि पेरुतु तव तिरुमनमतिन्नु नी
कूटेत्तुणय्क्किकले वन्नुकूटू दृढं । ४७

नीति की स्थिति करनेवाले ! हे निखिल राक्षसों का अन्त करनेवाले ! हे दैव ! हे मेघवर्ण ! निराकुल ! निर्मम ! मैं तुम्हारी वन्दना करता हूँ ताकि तुम निरन्तर मेरे हृदय मे रहो । हे पृथिवी के स्तनतट का आभूषण ! हे अपने चरणो मे नत जन का सुख करने मे तत्पर ! नित्य तुम्हारा प्रणाम हो ! नित्य तुम्हारा प्रणाम हो ! हे युधिष्ठिर ! भीम ! अर्जुन ! वीर नकुल ! और शस्त्रो के सिद्धान्त जाननेवाले सहदेव ! आओ ! निकट आओ! अब भविष्य मे जो कुछ होगा वासुदेव की आज्ञा से ही होगा। ३५-४२ आप लोगो का सुख हो । और युद्ध मे आप लोगो की जय हो ! हे अर्जुन आदि पाण्डवो ! आप लोगो का सुख तो है ? रात को अन्धेरे मे जो आप यहाँ जल्दी आये है । कोई विशेष दु ख तो नही है ? नदी-तनय (भीष्म) की नीति की बाते सुनकर राजा अजातशत्रु (युधिष्ठिर) प्रसन्न हुए और बोले— गुरुजनो की कृपा से कुरुकुल को समाप्त करके शत्रुनाशक बनकर राज करने की मेरी बडी इच्छा है । परन्तु वह तभी साध्य है जब मुझे तुम्हारा साथ हो । मुझे वर प्रदान करो । तुम्हारे चरणकमल ही सदा

करबलमोटवनोटेतिर्पोरुतु जयमाक्कुमे
कालात्मजा ! जयिप्पान् पणि तेरु नी । २९
त्रिपुरहर सुरदितिजजनवुमोरुमिच्चुटन्
धीरतयोटेतित्तालुं जयं वरा । ३०
शरणमिह चरणतलसरसिरुहमेन्निये
शन्तनुजनच्चन्नु वन्दिक्क वैकाते । ३१
मधुरतरमधुमथनवचनमतु केट्टुटन्
महितगुणगणमुटय पितृपतिजनादराल् ३२
सुहृदनुजसहितनटिमलरिण वणङ्ङिनान्
सुहृदधिपनमरनदिसुतनुमरुळिच्चेय्तान् ३३
नरकहर ! दुरितहर ! मुरमथन ! मधुमथन !
नारदसेवित ! नारायणा ! हरे ! ३४
निगममय ! निखिलजगदवन ! हृदिसंभव !
निष्कळ ! निर्ग्गुण ! निश्चल ! निर्म्मल ! ३५
निरतिशय ! निरुपम ! निरञ्जन ! निराधार !
नित्य ! निरामय ! नीरजलोचन ! ३६
नियमपरजनहृदयनिलयन ! नमोस्तु ते !
नीचजनान्तक ! नीतिस्थितिकर ! ३७
निखिलनिशिचरनिवहशमनपर ! दैवमे !
नीरदवर्ण्ण ! निराकुल निर्म्मम ! ३८

बाहुबल से जीतना कोई भी नही कर सकता है, जान लो। अगर त्रिपुरहर देव और दैत्य सब एक होकर धैर्य से उनका सामना करे तब भी जय प्राप्त न कर सकेगे। उनका पादपद्म ही तुम्हारा शरण है। बिना विलम्ब के शन्तनुज (भीष्म) की वन्दना करो। मधुमथन (विष्णु, कृष्ण) के इस मधुर वचन को सुनकर वन्द्य गुणवाले पितृपतिज (युधिष्ठिर) ने सादर अपने मित्र और अनुजो के साथ भीष्म के चरणो की वन्दना की। तब सुहृदो के नेता अमरनदीपुत्र (भीष्म) ने कहा—हे नरकहर ! पापहर ! मुरारि ! मधुमथन ! हे नारदसेवित ! नारायण ! हरे ! २८-३४ हे वेदमय ! निखिल जगत् के रक्षक ! हृदय मे रहनेवाले ! निष्कल ! निर्गुण ! निश्चल ! निर्मल ! हे निरतिशय ! निरुपम ! निरञ्जन ! निराधार ! हे नित्य ! निरामय ! कमललोचन ! हे नियमो के पालन करनेवालो के हृदयो मे स्थित ! तुम्हे प्रणाम हो ! हे नीचजनो के नाशक !

फलमतिनु दुरितचयमरुतरुतु माधवा !
पत्मनाभा ! जगन्नायका ! चॊल्लु नी । ५८
दुरितफलनरकमतिनिल्लॆटो धर्म्मजा !
तोन्नीलयो राजधर्म्मङ्ङ्ळॊन्नुमे ? ५९
नृपतिकुलविहित बहुविधविमलकर्म्मवुं
नीतियु कृष्णनरुळ्चॆय्तनन्तर । ६०
विदयमपि विभयमथ विजयमुखभूपरुं
वीरोटट्टुत्तितु पत्तांदिवसवु । ६१
कुरुनृपतिसुतनखिलबलपतिसुयोधनन्
कूटिय सैन्यवुमॊत्तॊरुमिच्चुटन् ६२
कुरुकुलजनमितबलनहितकुलकालनां
गुणनिलयनाय भीष्मक्कुं तुणच्चितु । ६३
पलरुमॊरुमयॊटथ पाण्डवन्मार्कळुं
पारमटुत्तु पॊरुतु तुटङ्ङिङ्ङनार् । ६४
परशुशरपरिघवर मुसलकुन्तङ्ङ्ळु
पार्त्थिवन्मारस्त्रशस्त्रप्रयोगवुं । ६५
पटुनिनदपटहमुख झटझट निनादवु
पारिल् किळर्न्नु पॊङ्ङीटिन धूळियुं । ६६
करितुरगरथनिकरबहुविध निनादवुं
काणिकळ् कण्टु कॊण्टाटुन्न नादवु । ६७

यह नही होगा। हे पद्मनाभ ! हे जगन्नाथ ! बतलाओ ! (तब कृष्ण ने कहा—) पाप का फल नरक इसके लिए नही होगा। हे धर्मज ! क्या राजधर्म कुछ भी नही याद है ? तदनन्तर कृष्ण ने राजकुलो के लिए विहित अनेकविध कर्म और नीति का उपदेश दिया। अर्जुन आदि भूपति निर्दय और निर्भय होकर दसवे दिन धैर्य के साथ युद्ध मे पहुँचे। ५६-६१ कुरुराजा का पुत्र, सभी सेना का पति सुयोधन ने सेनाओ को इकट्ठा करके कुरुकुल के पैदा हुए निस्सीम शक्तिवाले, शत्रुओ के नाशक और गुणों के आधार भीष्म की सहायता की। पाण्डव और अन्य बहुत भूपतियो ने एक होकर युद्ध प्रारम्भ किया। परशु, शर, भाला, मुसल, कुन्त आदि अस्त्र-शस्त्रो का भूपतियो द्वारा प्रयोग हुआ। उच्च शब्द करनेवाले पटह आदि वाद्यो का तुरन्त निनाद हुआ। भूमि के टूटने से धूल उठी। हाथी, घोड़े, और रथसमूह के विविध निनाद हुए। प्रेक्षक लोगो ने देखकर

तरिक मम वरमतिनु शरणमरुणांघ्रि मे
सन्ततमॆन्नु कुन्तीसुतन् चॊल्लिनान् । ४८
अलमलमिततिनॆळुतु कळकिनि विषादवु-
माशु निङ्ङळ्क्कु जयं वरुं निर्ण्णय । ४९
शृणु शमनतनय ! पुनरतिनॊरुपदेशवुं
शूरनामर्ज्जुननावतल्लेतुमे । ५०
द्रुपदवरवरतनयनाय शिखण्डियॆ-
त्तुमयोटर्ज्जुननॆन्नोटॆतिर्क्कुन्पोळ् ५१
पौरुवतिनु मम निकटभुवि झटिति निर्त्तुविन्
पोर्क्कळं तन्निल् ञान् नाळॆ वीणीटुवन् । ५२
मम निधनमतिनु विधिविहितमितु निर्ण्णयं
मानिनियाकियोरबानियोगत्ताल् । ५३
भयमॊळिक भवतु भवतां जयं भाग्यवु
भागीरथीसुतन् पार्त्थनोटिङ्ङनॆ ५४
परिचिनॊटु निजनिधनमतिनॊरु निदानवुं
नीतियु चॊल्लियनुग्रहं नल्किनान् । ५५
यमनियममुटययमतनयनुमनन्तर
यादववीरनॆ वन्दिच्चु चॊल्लिनान् । ५६
प्रणयतरहृदयमॊटु मरुविन पितामहन्
प्राणन् कळयामो वाणङ्ङळॆय्तहो ! ५७

मेरा शरण है। कुन्तीपुत्र (युधिष्ठिर) ने ऐसा कहा। बस ! अधिक न कहो। विषाद छोडो ! निःसन्देह तुमलोगो की जल्दी विजय होने वाली है। ४३-४९ हे शमनतनय (युधिष्ठिर) ! सुनो ! मै एक उपदेश देता हूँ। शूर अर्जुन का असाध्य कुछ भी नही है। जब अर्जुन मुझ से ढग से युद्ध करेगा तब द्रुपद के पुत्रवर शिखण्डि को मेरे पास युद्ध करने के लिए खडा कर दो। मै कल रणभूमि मे गिरूँगा। नि.सन्देह मेरे निधन के सम्बन्ध मे मानिनी अंबा की आज्ञा से यही विहित है। भय छोडो। तुम लोगो का जय और भाग्योदय हो ! भागीरथीपुत्र (भीष्म) ने इस प्रकार अपने निधन का कारण और उसकी नीति स्पष्टरूप से अर्जुन से बतलाकर उनका अनुग्रह किया। ५०-५५ यम और नियम का पालन करनेवाले यमतनय (युधिष्ठिर) ने वन्दना करके यादववीर (कृष्ण) से कहा— पितामह (भीष्म) तो प्रेमपूर्ण हृदयवाले है, उनके प्राण शरो से कैसे लिये जायँ ? इसका फल पापो का ढेर ही होगा। माधव !

कमलजनुमरुतरुतु पुकळ्वतिनोर्क्किलो
कौरवपाण्डवसैन्यकोलाहल । ७८
फणिकळ्कुलवरनुमितु पणिपेरुतु वाळ्त्तुवान्
भैरवमेन्ने परय्यावितेन्नयुं । ७९
पौरुतु पौरुतरचरिरुपुरवुममरकळुलकु-
पुक्कु विमानङ्ङळ्तोरुं मरुविनार् । ८०
अरुवयरोटतिसुखमोटरुमयोटु मेविना-
राशु युद्धत्तिल् मरिक्कनिमित्तमाय् । ८१
अयुतनरकरितुरगरथिकळेयोटुक्किना-
ननुदिनमणञ्ञु पोर्चेय्तु देवव्रतन् । ८२
पुनरवनोटरुमयोटु पौरुवतिनु पार्थनु
पोरिल् शिखण्डिये मुन्पिल् निर्त्तीटिनान् । ८३
उपरिचरवसुनृपतिदुहितृवरनन्दन-
नोर्त्तानीराणुमप्पेण्णुमल्लात्तवन् ८४
पौरुवतिनु करुतियोरु समरभुवि वन्नतो
पोराळिकळ्क्कु पौरुन्नुकयिल्लेतु । ८५
पुरुपमण पुकळ्पेरिय विजयनेयोळिञ्ञुमे
पोरा नपुंसकमायवन्तन्नोटु ८६
पौलिमयोटु समरभुवि विविधमयमायुधं
पोरिन्नयय्क्करुतेन्नोर्त्तु भीष्मरुं । ८७

पाण्डव-सैन्य के इस कोलाहल का वर्णन करना ब्रह्मा के लिए भी कठिन है। यह काम फणिकुलवर (शेप) के लिए भी असाध्य है। वह एक भैरव युद्ध था, इतना ही कहा जा सकता है। लड़लड़कर दोनो ओर के भूपति अमरलोक (स्वर्ग) पहुँचे और विमानो मे बैठे। युद्ध मे जल्दी निधन प्राप्त करने के कारण वे सुन्दरियो के साथ प्रेम से और सुख से वहाँ रहे। देवव्रत (भीष्म) ने लाखो नर, हाथी, घोडे, रथी, प्रतिदिन युद्ध मे मारे। ७६-८२ तदनन्तर अर्जुन ने भीष्म से प्रेम से लड़ने के लिए शिखण्डी को सामने खडा कर दिया। भीष्म ने सोचा कि इस 'न पुरुप और न स्त्री' का युद्ध करने के लिए रणभूमि मे आना सैनिको को उचित नही मालूम होगा। भीष्म ने सोचा कि पुरुषत्व मे प्रसिद्ध अर्जुन को छोड़कर, युद्धभूमि मे इस नपुसक के खिलाफ विविध आयुधो को ढग से छोड़ना मेरे लिए उचित न होगा। विबुधपतितनय (अर्जुन) के विरोध मे निडर होकर

कमलभवमुखविबुधजयजयनिनादवुं
काटटिक्कुं कोटिक्कूड्कळ्नादवु । ६८
रुधिरयुतपललमतु भक्षिच्चु राक्षस-
रुच्चत्तिल् निन्नलरीटुन्न नादवु । ६९
प्रेतभूतादि पिशाचङ्ङळार्त्तिट्टु
पेटियाकुंवण्णमुळ्ळ निनादवु । ७०
त्रिदशवरदनुजकुलमुखकुतुकनादवुं
सिंहनादङ्ङळुं ञाणोलिनादवुं । ७१
तिरमोटेतिरिटुमरिय रथिकळ्गुणनादवुं
तेरुरुळ्नादवुमानकळ्नादवुं ७२
परिभवमोटरिनिकरमलरिननिनादवुं ।
पारं कुतिक्कु कुतिरकळ्नादवु ७३
तुमुलतररणजनित भयकरनिनादवुं ।
तुम्बुरुनारदगीतप्रयोगवुं ७४
अमरवरतनयकरगतदरनिनादवु-
मंबरचारिकळ्वाद्यनिनादवुं ७५
कठिनतरमनिलसुतनलरिननिनादवु ।
कंबुनादङ्ङळुं दुन्दुभिनादवुं ७६
कमलभवतनयमुनिवीणानिनादवुं ।
कम्पंवरुंपटि वन्पर्निनादवुं ७७

सोत्साह अपना नाद किया। ब्रह्मा आदि देवो ने जयघोष किया। हवा चलने के कारण झण्डो में उच्च नाद हुआ। ६२-६८ राक्षसो ने रक्तयुक्त मांस खाकर जोर से चिल्लाहट की। भूत, प्रेत और पिशाचो ने भयंकर ध्वनि निकाली। देवो और दानवो ने कौतुक से नाद किया। सैनिको का सिंहनाद और ज्याघोष उठे, शक्ति के साथ युद्ध करनेवाले रथियो का ज्याघोष सुनाई दिया। रथो के घूमने का नाद, हाथियो का गर्जन और शत्रुओ का हारकर परिभव से चिल्लाने का नाद सुनाई दिया। ऊँचा कूदनेवाले घोड़ो का नाद उठा। तुमुल युद्ध का भयङ्कर शव्द हुआ। तुम्बुरु और नारद ने गीतप्रयोग किया। अमरवरतनय (अर्जुन) के शंख की ध्वनि सुनाई दी। आकाश मे सचार करनेवालो का वाद्यघोष उठा। ६९-७५ वायुसुत (भीम) के जोर से चिल्लाने का नाद सुनाई दिया। शखध्वनि, दुन्दुभिनाद हुए। ब्रह्मा के पुत्र (नारद) की वीणा का नाद उठा। देवो का ऐसा नाद कि लोग कॉपने लगे। कौरव और

दहनकणसदृशशरनिकरपातेन मे
देहवुमोक्कवे काण्क मुरिञ्ञितु । ९९
मुटियुमिटरोटुमटलिलिनिय पटयोक्कवे
मोहमिनिक्किनियिल्ल जीविक्कयिल् । १००
असुरसुरसमरसममितु करुतुमाकिल् म-
ट्टाहवमिङ्ङने कण्टिट्टुमिल्ल ञान् । १०१
अहितनृपकुलवररोटेतिर्पोरुतु तोट्टुकों-
ण्टाहन्त केट्टिट्टुमिल्ल ञानिङ्ङने । १०२
पुनरिनियुमोरुमयोटु मरुवुक पिणङ्ङाते
पोरिल् मरियातिरिक्कणमेङ्किलो । १०३
पुकळ्पेरिय पितृपतिज नृपवरनु सादरं
भोषन्मारे ! निङ्ङळ् नाटु नल्कीटुविन् । १०४
हितवचनमिति विविधतरमथ पितामह-
नित्थं परञ्ञु परञ्ञिरिक्केत्तदा १०५

भीष्मपराजय (शरशयन प्राप्ति)

कलहमतिरभसतरमरिमयोटु चेय्तु चे-
य्तस्त्रङ्ङळ्कोण्टुटल् भूमियिल् वीणुते । १
विविधतरनिशितशरमतुलमुटनेल्क्कयाल्
वीणतुनेरमवनियिल् तट्टील । २

लिया है। यह एक निरुपम युद्ध है और भयप्रद है। तुम देख लो। मै थका हुआ हूँ। अग्निकण के समान शरसमूह के लगने से देखो, मेरा शरीर छिन्न हो गया है। यह सारी सेना शत्रु के द्वारा नष्ट हो जायगी। अव मेरी जीवित रहने की कोई इच्छा नही है। यह देवासुरयुद्ध के समान है। ऐसा युद्ध मैने कभी सुना ही न था। अव भी आपस मे विना झगड़ा किये मिलकर रहो, अगर युद्ध मे नही मरना है। हे मूर्खो ! तुम लोग विख्यात यमपुत्र भूपति (युधिष्ठिर) को राज दे दो। जव पितामह इस प्रकार के विविध हित की वाते वतलाते थे तव—१०२-१०५

भीष्मपराजय (शरशयनप्राप्ति)

युद्ध के अति तीव्र होने के कारण भीष्म वहुत जोर से लड़े और शरों के लगने से उनका शरीर भूमि पर गिरा। विविध अनेक शर लगने से जव गिरे तव भूमि का स्पर्श नही हुआ। तव कुरुवृषभ भीष्म

विबुधपतितनयनोटु विगतभयमादराल्
वीरॅंळुमस्त्रङ्ङळॊक्क प्रयोगिच्चान् । ८८
प्रणयमकतळिरिल् मुहुरपि वळरुमारुटन्
प्रत्यस्त्रमॆय्तु तट्टुत्तु किरीटियु । ८९
प्रथनचतुरत कलरुममरवरनन्दनन्
प्रत्यक्षनाकिय कृष्णनियोगत्ताल् । ९०
अमितकरवलमुटय रथिकळवर्तङ्ङळि-
लस्त्रशस्त्रङ्ङळ् वरिषिच्चटुत्तुटन् ९१
निशिततरविशिखगणमुटनुटनयच्चपो-
तत्तल्प्पॆटुत्तु रोमङ्ङळ्तोरुं द्रुत । ९२
परनिवहकुलशमनकररिरुवरुं तम्मिल्
पत्तनूरायिरमॊत्तु तूकीटिनार् । ९३
परवशत पॆरुकियोरु पटयुमतुकण्टुटन्
पट्लर् पेटिच्चकन्नितु मटुळ्ळोर् । ९४
त्वरितमतुपॊळ्ळुतु कुरुकुलवरनु सन्निधौ
दुश्शकुनङ्ङळुं पारमुण्टायिते । ९५
तुमुलतरसमरभुवि झटिति देवव्रतन्
दुश्शासननोटु चॊल्लिनानीवण्णं । ९६
अमरकुलवरसुतनुममितबलसंयुत-
मय्यो ! मरुतल वन्नु चुळन्नितु । ९७
निरुपममितरिक रणमतिभयदमॆतयुं
नीयतु काण्क वलञ्ञितु ञानॆटो । ९८

जय लानेवाले अस्त्रो का सादर प्रयोग किया। इसके जवाब मे किरीटी (अर्जुन) ने ऐसे प्रत्यस्त्र भेजे कि हृदय में फिर प्रणय बढे। ८३-८९ युद्धकुशल अमरवरनन्दन (अर्जुन) ने प्रत्यक्ष कृष्ण की आज्ञा से ऐसा किया। निस्सीम वाहुवलवाले रथी आपस मे अस्त्रशस्त्रो की वर्षा करते हुए निकट पहुँचे और तीक्ष्ण शरो की जव वर्षा की गयी तव रोम-रोम मे पीड़ा हुई। शत्रुकुलो का नाश करने मे कुशल दोनो ने एक दूसरे पर लाखो शर छोडे। सेना को अत्यन्त पीड़ित देखकर शत्रुगण डर से पीछे हट गये। उस समय अचानक कुरुकुलवर (भीष्म) के सामने अनेक दुश्शकुन दिखाई दिये। ९०-९५ तव भीष्म ने रणभूमि मे दुश्शासन से इस प्रकार कहा— अर्जुन ने अव निस्सीम वल के साथ शत्रुओं को घेर

विनयमोटु कुरुवृपभनतिरथननाकुलं
विण्णोरिल् मुन्पन् वसुप्रवरन् भीष्मर् १३
नरकरिपु नळिनदलनयननेयुमोर्त्तुळ्ळिल्
नल्लतेल्लावरोटु पऱञ्ञीटिनान् । १४
शुभवुमशुभवुमपनयवुमऱिवानवन्
चोल्लिलनान् पिन्नेयुमल्ललोटे तदा । १५
सदयमभिमुखममलतरवचनमन्पोटु
ताणुपोयोरु तलयुयर्त्तीटुवान् । १६
विमलतरमतिमृदुलमलिवोटु समुन्नत
वेणमुपधानमेन्नतु केळ्क्कयाल् १७
कुमति कुरुकुलपति सुयोधनन् वैकाते
पट्टुतलयिण कोण्टु चेन्नीटिनान् । १८
पुनरमितहसितमतुपोळुतु चोल्लीटिनान्
पोट्टनल्ले नी सुयोधना ! निर्णय । १९
तुहिनकरकुलजननमिह विफलमेव ते
तुष्टि वरायितु वच्चालिनिक्केतुं । २०
करुणयोटु विबुधपतितनय ! विरवोटु नी
कण्टुनिल्लाते तलयुयर्त्तीटेन्नान् । २१
विशदतरहृदयनथ विजयनतिशूरनां
वृन्दारकाधिपनन्दननर्ज्जुनन् २२
वनजदलनयनसखि वासवाद्यन्मारे
वन्दिच्चु गाण्डीवचापमेटुत्तुटन् २३

का अपने मन मे ध्यान करते हुए सविनय सब से कुशल की बाते कही । ७-१४ उन्होने बडे दु ख, प्रेम और दया के साथ सब के सामने निर्मल वचन कहे, ताकि वे शुभ, अशुभ और अपनय पहचान सके । 'झुके सिर को उठाने के लिए एक विमलतर, ऊँचा और नरम तकिया चाहिए' —ऐसा सुनकर कुमति, कुरुकुलपति सुयोधन एक रेशमी तकिया लाया । तब भीष्म ने हँसते हुए कहा— हे सुयोधन ! तुम निस्सन्देह मूर्ख हो । तुम्हारा यह चन्द्रवश मे जन्म बिलकुल व्यर्थ है । इसको लगाने से मुझे आराम कभी न होगा । १५-२० हे अर्जुन ! कृपा करके सिर्फ देखते न रहकर मेरा सिर जरा उठा दो । तब निर्मलहृदय, अतिशूर, वृन्दारकाधिप (इन्द्र)का पुत्र अर्जुन, जो कुमुददलनयन (कृष्ण) का मित्र था, ने वासवाद्यों

कुरुवृषभनुटनटलिल् नृपवरकुलोचित
देहवुमाशु शरशयनत्तिन्मेल् ३
मुरमथनचरणसरसीरुहवु कण्टु
मोहमकन्नु वसिच्चितु भीष्मरु । ४
दशदिवससमरमिति मुनिवरननुग्रहाल्
सञ्जयनित्थं परञ्ञोरनन्तरं ५
अखिल बलकलहमिति सचिववचनेन के-
ट्टञ्जसा मोहिच्चु वीणू धृतराष्ट्रन् । ६
मुहुरमितकुतुकमोटु धरणिपतितन्नुटे
मोहवु तीर्त्तवन् पिन्नयुं चौल्लिनान् । ७
त्यज मनसि कलुषतकळखिलमवनीपते !
देहमनित्यमेन्तुळ्ळतङ्िक नी । ८
निखिलनृपकुलवररुममितबलसंयुतं
निन्नुटे मक्कळु कुन्तीतनयरुं ९
तदनु निजनिज मनसि कलरुमुरुशोकेन
धन्यरां मट्टुळ्ळ बन्धुजनङ्ङळु १०
जगधिपनजनमलनु मुनिवृन्दवुं
चेन्नितु भीष्मरुटेयरिकत्तङ्ङु । ११
वटिवोटुटनधिनिकटमवरवर् करञ्ञाशु
वन्नु निरञ्ञोरु बन्धुक्कळेक्कण्टु । १२

युद्ध के बीच मुरमथन (कृष्ण) के चरणकमल को देखकर मोह छोडकर अपने राजकुल के धर्म के अनुसार शरशय्या पर ही रहे। मुनिवर (व्यास) के अनुग्रह से सञ्जय के दस दिन के युद्ध का इस प्रकार वर्णन करने के वाद अपने सचिव के मुँह से सारी सेना के युद्ध को सुनकर झट से धृतराष्ट्र वेहोश होकर गिर पड़े। १-६ धरणीपति (धृतराष्ट्र) के मोह को बड़े प्रेम से समाप्त करके वह (सञ्जय) फिर बोले। हे भूपति ! अपने मन से सारी कलुपता को हटाओ। जान लो कि देह अनित्य है। तदनन्तर अपने अमित वल के साथ सारे नृपकुल, तुम्हारे पुत्र, कुन्ती के पुत्र, अन्य धन्य समस्त बन्धुजन, अज और अमल जगदधिप (कृष्ण) और मुनिवृन्द, सव अपने मन के तीव्र शोक के साथ भीष्मजी के पास गये। इस प्रकार सव निकट आकर रोनेवाले वन्धुओ की भीड देखकर कुरुवृषभ, अतिरथ, देववर, वसुप्रवर भीष्मजी ने अनाकुल होकर नरकरिपु कमललोचन (कृष्ण)

करुतियॊळुकिन नयनसलिलमॊटु कैनिल
कौरवसैन्यवुं पुक्किरुन्नीटिनार् । ३४
उपसि पुनरपरदिनमिरुपुऱवुमुळ्ळव-
रुट्टुत्तीटिनार् शन्तनुपुत्रने । ३५
तरुविनिह विरविनॊटु जलममलमादराल्
दाहमुण्टेटमॆन्नान् नदीनन्दनन् । ३६
विमलतरसलिलमॊटु विविधरसभक्ष्यवु
वेगेन कॊण्टुचॆन्नान् दुरियोधनन् । ३७
विफलमिदमशुभमरुतरुतु दुरियोधना !
वीरा ! विजया ! विरयॆ नीर् नल्कॆन्नान् । ३८
पुनरवनुमथ सदयमटिमलर् वणङ्ङिनान्
पोराळि पार्ज्जन्यमस्त्रं प्रयोगिच्चान् । ३९
गगनसरिदमलजलमळ्कॊटु कॊटुत्तवन्
गगातनयनु दाहवुं पोक्किनान् । ४०
पुकळ्पॆरिय पुरुषमणि नीये पुरन्दर-
पुत्रा ! भुजबलमुळ्ळ भूपालका ! ४१
सुचिरमवनियिलधिकसुखमॊटु वसिक्क नी
सूक्षिच्चुकॊळ्क सुयोधना ! नीयिव । ४२
विरविलिनियॊरुमयॊटु मरुविनिनि निङ्ङळुं
वेण्टा विरुद्ध नशिक्के फलं वरू । ४३

को ध्यान में रखते हुए गिरती आँसुओ सहित तंबू के अन्दर घुस गयी । दूसरे दिन तड़के दोनो ओर के वीर शन्तनुपुत्र (भीष्म) के पास पहुँचे । 'अब मुझे बहुत प्यास लग रही है, इस लिए मुझे शुद्ध पानी दे दो', ऐसा कहा नदीपुत्र (भीष्म) ने । तब दुर्योधन निर्मल जल के साथ अनेक रसवाले भोजन लेकर तुरन्त चला आया । 'हे दुर्योधन ! यह सब व्यर्थ है, नही ! नही ! हे वीर अर्जुन जल्दी पानी लाओ', भीष्म ने कहा । ३३-३८ तब उस वीर योद्धा ने चरणो की वन्दना करके पार्जन्य शस्त्र का प्रयोग किया । आकाशगङ्गा का निर्मल जल देकर उनकी प्यास को बुझाया । हे पुरन्दरपुत्र ! विख्यात पुरुषमणि तुम ही हो ! हे बाहुबल वाले भूपाल ! चिरकाल तक तुम पृथिवी पर सुख से रहो । हे सुयोधन ! तुम होशियार रहो । अब तुम लोग मिल कर रहो । विरोध छोडो । नही तो विनाश ही एकमात्र फल होगा । परन्तु कुरुपति इससे सहमत न होने के

चपलतरमचपलमेंटुत्तु मून्नन्पुकों-
ण्टून्तुं कोंटुत्तु तलयुयर्त्तीटिनान् । २४
परशुधर मुनिवरनु सदृशनां भीष्मरुं
पार्त्थनोटाशु चिरिच्चरुळिच्चेय्तु । २५
शम, दम दयादि नानागुणवारिधे !
शास्त्रङ्ङळ् निन्नोळमारुमरिञ्ञील । २६
सकलजनकुलविहितविविधकर्म्मङ्ङळुं
क्षात्रधर्म्मङ्ङळुं निङ्कलू निर्ण्णय । २७
बहुलतरमिति कथकळ् परयुमळवादराल्
वैद्यर्कळ् वन्नार् चिकित्सचेय्तीटुवान् । २८
अतिनवनुमवर्कळे विलक्किनानादरा-
लाण्मयिल् विरोचितपुरि पूकणं । २९
शुभमरणसमयमयनं तेळिञ्ञुत्तरं
शोभयिल्वन्ने मरिक्कावु निर्ण्णयं । ३०
अवरवर्कळरिकिलळ्कोटु रक्षिच्चुकों-
ण्टात्मशुद्ध्या वसिच्चीटिनारेवरुं । ३१
विजयनोटु विजयमुखयमतनयसैन्यवुं
वृष्णिप्रवररु पुक्कितु कैनिल । ३२
व्यथयुमुरुभयवुमपजयवुमवशतकळुं
वीळातवण्णं परिभवं वन्नतुं ३३

की वन्दना करके अपना गाण्डीव धनुप लेकर तुरन्त धैर्य के साथ तीन वाणो के सहारे सिर उठा दिया । मुनिवर परशुराम के समान भीष्मजी ने हँसते हुए अर्जुन से कहा । शम, दम, दया आदि गुणो का सागर ! तुम्हारे समान शास्त्र जाननेवाला कोई नही है । २१-२६ समस्त जनो के लिए विहित सभी कर्म और क्षात्रधर्म निस्सन्देह तुम्हारे पास है । जब इस प्रकार की वहुत वाते हो रही थी तव वैद्य आये चिकित्सा करने के हेतु । परन्तु उन्होने उनको मना कर दिया क्योकि अपने पुरुपत्व को लेकर यमसदन जाना चाहिए । शुभमरण के समय रास्ता साफ हो, उसके वाद ही मरना चाहिए, इसमे सन्देह नही । तब सब अच्छी तरह से रक्षा करते हुए निकट मे आत्मशुद्धि के साथ वैठे रहे । अर्जुन से लेकर सभी युधिष्ठिर की सेना और वृष्णियो के प्रमुख तम्बू के अन्दर चले गये । २७-३२ कौरवसना तो अपने दु ख, भय, अपजय, अक्षमता और असाध्य परिभव

द्रोणं

पञ्चवर्ण्णक्किळिप्पैंण्किटावे ! तैळि-
ञ्ञेन् चैवि रण्टु कुळुक्कैप्परक नी । १
नैञ्चतैळिञ्ञु कुरुक्किक्कोळुत्त पाल्
पञ्चसारप्पोटि कूट्टिक्कुळम्पाक्कि २
नल्ल कदळिप्पळङ्ङळ् तैरिञ्ञु ञान्
मैल्लैत्तिरुम्मियुटच्चु तेनु वीळ्त्ति ३
वैल्लवु शक्करयु पोटिच्चिट्टतिल्
वैळ्ळित्तळिकयिल् मेळिच्चु वैच्चेरं ४
वैच्चिरिक्कुन्नतैट्टुत्तु भुजिच्चालु-
मिच्छयाकुन्नतु दाहमुण्टैङ्किलो ५
नीलक्करिम्पुतन् चारुमिळन्नीरुं
पालुं मधुवुं कुटिच्चालुमावोळं । ६
ग्रीष्मसमाननरिनिवहत्तिनु
भीष्मर् शरशयनत्तिन्मेल् वीणारं ७
तोट्टु सुयोधननादिकळाकिय
नूट्टुपेरन्तोन्नु चेय्ततु चौल्लु नी । ८
चौल्लुवानावतल्लैङ्किलुमोट्टोट्टु
चौल्लुन्नतुण्टु कनक्कैच्चुरुक्कि ञान् । ९

द्रोणपर्व

हे पाँच रङ्गवाली शुकी ! प्रसन्न होकर और सुनाओ ताकि मेरे दोनो कानो को आनन्द हो ! आराम होने के बाद जो उबाला हुआ दूध शक्कर मिलाकर रखा है और जो चुने हुए केले काटकर उसमे शहद मिलाकर और फिर उसमे गुड़ और चीनी मिलाकर चादी के कटोरे मे रखा है यह सब अपनी इच्छा के अनुसार खा लो और उसके बाद अगर प्यास लगे तो नीले गन्ने का रस, नारियल का पानी, दूध और मधु जितना चाहो पियो । शत्रुओ को ग्रीष्म के समान भीष्मजी जब शरशय्या पर पडे तब सुयोधन आदि सौ कौरवो ने हारकर क्या किया, यह बतलाओ । यद्यपि सब कहना असम्भव है तथापि सक्षेप करके थोड़ा-थोड़ा मैं बतलाऊँगी । १-९

अतिनु कुरुपतियुमनुवादमल्लाय्कयाल्
अङ्ङुमिङ्ङु पिरिञ्ञाशु वाङ्ङीटिनान् । ४४
अथ तरणितनयनटिमलरिण वणङ्ङिङ्ङना-
नन्पोटु गंगातनयनुं चौल्लिनान् । ४५
तव सहजररिक पृथयुटे तनयराकयाल्
ताप कळञ्ञु नीयङ्ङु चॆन्नीटॆटो । ४६
कथकळकतळिरिलितु विदितमखिल मया
गान्धारिपुत्ररॆ वेरिट्टुन्निल्ल ञान् । ४७
समरभुवि जयमतिनु तरिक वरमाशु मे
सन्तापनाशना ! शन्तनुनन्दना ! ४८
भ्रममरिक वरुवतिनु विषममतु भास्करे !
भ्राताक्कळे वधंचॆय्कयुं वेण्टील । ४९
वेणमॆन्नाकिल् पोरुतु वीर्यस्वर्ग्ग
वीरा वरिक्क निनक्कॊन्नते वेण्टू । ५०
तॊळुतवननुज्ञयु वाङ्ङि वाङ्ङीटिनान्
चॊल्लुवानावतो पिन्नेटमॆन्नालॆ-
न्नुल्लासमोटिरुन्नाळ् नल्क्किळिमकळ् । ५१

भीष्म समाप्त

कारण इधर-उधर भटककर हट गया। तदनन्तर तरणितनय (सूर्य-पुत्र) ने (कर्ण ने) चरणो की वन्दना की और गगापुत्र ने प्रेम से कहा— ३९-४५ पृथा (कुन्ती) के पुत्र होने के कारण (पाण्डव) तुम्हारे भाई है। जलन छोड़कर तुम उस ओर चले जाओ। मै इस सारे वृत्तान्त को अपने मन मे जानता हूँ (तब कर्ण बोला—) मै गान्धारी के पुत्रो को कभी न छोड़ूँगा। हे सन्तापनाशन ! शन्तनुनन्दन ! मुझे वरदान करो कि मै युद्धभूमि मे विजय पाऊँ। (भीष्म बोले—) जान लो कि यह तुम्हारा भ्रम है। हे भास्करपुत्र ! यह होना कठिन है। अपने भ्राताओ का वध मत करो। अगर मुझे कुछ कहना है तो यही है—युद्ध करके, हे वीर ! वीर्यस्वर्ग पाने को ठान लो। यही तुम्हारे लिए ठीक है। तब वह प्रणाम करके आज्ञा लेकर चला गया। कहाँ तक सुनाऊँ ? फिर आगे कहूँगी। ऐसा कहकर साध्वी शुककन्या सोल्लास बैठ गयी। ४६-५१

। भीष्मपर्व समाप्त ।

आशयंतन्निलुळ्ळाश नी चॊल्लुक
नाशं कळञ्ञु वरं तरुन्नुण्टु ञान् । २
चिन्तितमॆङ्किल् युधिष्ठिरन्तन्नॆयुं
बन्धिच्चु कॊण्टन्नु नल्कुकवेण्टतु ३
अङ्ङनॆतन्नॆयॊरन्तरमिल्लति-
निङ्ङनॆ नालञ्चुनाळ् ञानिरिक्किलो । ४
ऎन्नु गुरुवु प्रतिज्ञ चॆय्तानितु
चॆन्नु युधिष्ठिरन् तन्नोटु चॊल्लिनान् ५
कूरुळ्ळ दूतनतु केट्टु धर्म्मजन्
नीरुं मनस्सोटु माधवन्तन्नुटॆ ६
चेवटित्तारिण वन्दिच्चु चॊल्लिनान् ।
केवलानन्दमूर्त्ते ! जगन्नायका ! ७
बन्धिच्चुकॊण्टुपोमाचार्यनॆन्नॆयॊ-
रन्तरमिल्लतिनॆन्नु धरिच्चालुं । ८
चिन्तिच्चु कृष्णनु जिष्णुवुं मट्टुळ्ळ
बन्धुक्कळु पऱञ्ञीटिनारॆन्नुमे ९
बन्धिच्चुकॊण्टुपोवानयय्क्कुन्नति-
ल्लन्तकवैरितान्तन्नॆ वरिकिलुम् । १०
शङ्कियाय्केतुमे वैकिक्करुतॆन्नु
शखुविळिच्चु पुऱप्पॆट्टितु पट । ११
युद्धं भयङ्करमाय्वन्नितॆन्नयुं
चत्तितु रण्टुपुऱत्तुमसंख्यमाय् । १२

हो । अगर आपकी राय हो तो युधिष्ठिर को बाँधकर लाइये और मुझे दे दीजिये— (ऐसा सुयोधन ने कहा ।) "बिलकुल ठीक है, इस मे कोई मतभेद नही है, और चार पाँच दिन मे ऐसा ही होगा"— गुरु ने इस प्रकार प्रतिज्ञा की । एक विश्वस्त दूत ने इस बात को युधिष्ठिर से कह दिया । यह सुनकर युधिष्ठिर दुःखित होकर माधव के लाल चरणयुग की वन्दना करके बोले । केवलानन्द मूर्ते ! जगन्नायक ! आचार्य मुझे बाँधकर लेजायेगे इसमें कोई सन्देह नही, जान लीजिये । १-८ तब कृष्ण, जिष्णु (अर्जुन) और अन्य बन्धुओ ने सोचा और कहा । हम कभी बाँधकर ले जाने न देगे चाहे अन्तकवैरी (शिवजी) ही क्यो न आजायँ । शङ्का बिलकुल मत करना । अब और विलम्ब न हो । शंखध्वनि

द्रोणसेनापत्यभिषेकं

वन्पना कर्ण्णनोटाशु सुयोधन-
नन्पोटु सेनापतियाक नीयेन्नान् । १
कर्ण्णनुं मन्दस्मितं चेय्तु चोल्लिनान्
कर्ण्णसुखं ञान् परकयिल्लारोटुं । २
द्रोणरामाचार्यन्तानिरिक्केयेन्तु
मानिच्चु मट्टुळ्ळोर् निर्त्तुन्नितु पट ? ३
मन्नवा ! केळ्क्क भरद्वाजनन्दन-
निन्नुळ्ळ योद्धाक्कळिल् प्रबलाधिपन् । ४
पिन्ने ञान् पक्षे भरिक्कुन्नतुमुण्टु
मन्नवा ! सङ्कटमुण्टाकयिल्लेतुं । ५
मानियायुळ्ळ सुयोधनन् द्रोणरे-
स्सेनापतियायभिपेकवुं चेय्तु ६
नानाविधमाय वाद्यघोषङ्ङळाल्
वानवर्नाटु कूटिक्कुलुङ्ङी तदा । ७

युधिष्ठिरबन्धनोद्यमं

आचार्यनाशु सुयोधननाकिय
नीचनोटाशु तेळिञ्ञरुळिच्चेय्तु । १

द्रोण का सेनापति के पद पर अभिषेक

सुयोधन ने शक्तिशाली कर्ण से कहा— तुम सेनापति हो जाओ। कर्ण ने मुस्कराकर कहा— केवल कर्णसुख देनेवाली बात मै किसी से न कहूँगा। द्रोणाचार्य के रहते और लोग इस सेना को कैसे सँभाल सकते है ? हे राजन् ! सुनो ! भरद्वाजपुत्र (द्रोण) ही विद्यमान योद्धाओ मे सव से प्रवल है। और फिर मै तो हूँ ही और नेतृत्व करूँगा। हे राजन् ! इसमे कोई हानि न होगी। मानी सुयोधन ने द्रोण का सेनापति के पद पर अभिषेक किया। अनेक प्रकार के वाद्यघोषो से स्वर्ग भी काँपने लगा। १-७

युधिष्ठिर को बाँधने का प्रयास

प्रसन्न होकर आचार्य (द्रोण) ने नीच दुर्योधन से कहा। अपने मन की इच्छा वतलाओ, मै तुम्हे वह दूँगा ताकि तुम्हारा कोई नाश न

पन्तिरण्टा दिवसं गुरुसैन्यवुं
पन्तिरण्टायिप्पुऱप्पेट्टु पोरिनाय् । २३
म्लेच्छजङ्ङळुं सशप्तकन्मारु-
मार्त्तुविळिच्चार् पटय्क्कु पुलर्काले । २४
युद्धत्तिनाशु विळिच्चतु केट्टोरु-
वृत्रारिपुत्रनु कृष्णनुमेत्तिनार् । २५
आचार्यनुं महाव्यूहवु कूट्टिनि-
न्नायोधनत्तिन्नुऱच्चु निन्नीटिनान् । २६
पाञ्चालनाय धृष्टद्युम्ननेतुमे
चाञ्चल्य मेन्नियटुत्तानतुनेर । २७
द्रोणर् जयिच्चतुकण्टोरु कौरव-
सेनयुमार्त्तु निलविळिच्चीटिनार् । २८
मूर्खनायुळ्ळ दुरियोधननोटु
भास्करनन्दनन् पेर्त्तु चोल्लीटिनान् । २९
इक्कण्टतोन्नुं कणक्कल्ल मन्नवा !
चोल्वकोण्ट पाण्डवन्मारे जयिप्पति- ३०
न्निक्कण्टवर्क्काक्कुमावतुमिल्ल केळ् ।
इक्कालमुळ्क्कान्पिलोराय्कतिन्नु नी- । ३१
येन्नु पऱञ्ञु निन्नीटुन्ननेरत्तु
वन्नुनिरञ्ञितु पाण्डवसैन्यवु । ३२
सात्यकि केकय पाञ्चालवीररुं
पार्थतनयरुं माद्रीतनयरुं । ३३

गुरुसेना वाहर होकर युद्ध के लिए निकली। म्लेच्छजन और सशप्तको ने तडके ही युद्ध के लिये पुकारा। युद्ध के लिए यह पुकार सुनकर अर्जुन और कृष्ण वहाँ पहुँचे। आचार्य अपना महाव्यूह वनाकर युद्ध के लिए विलकुल तैयार खडे हुए। उस समय पाञ्चाल धृष्टद्युम्न विना चाञ्चल्य के निकट पहुँचे। द्रोण की जीत देखकर कौरवसेना ने ज़ोर से जयघोष किया। २३-२८ भास्करनन्दन (कर्ण) ने मूर्ख दुर्योधन से फिर कहा— हे राजन्! यह सव कुछ नही है। यहाँ जो दिखाई देते है उनमे से कोई भी विख्यात पाण्डवो को जीत नही सकता है। इस प्रकार जव वाते कर रहे थे तव पाण्डवो की सेना आकर डट गयी। सात्यकि, केकय और पाञ्चाल के वीर, पार्थ के पुत्र और माद्री के पुत्र,

शल्यरुं मारुतियु पोरुतोरु पो-
रॆल्लावरुं कण्टु विस्मयिच्चीटिनार् । १३
अन्तियुमाय् पटयुं पिरिञ्ञितु
पिन्तुटर्न्नारुमोरु पदं वच्चील । १४
रात्रियिलत्ताळुमुण्टु किटन्नारॆ
धार्त्तराष्ट्रन्तन्नोटाचार्यनुं चॊन्नान् । १५
पार्त्थिवनन्दननाय सुयोधना !
पार्त्थनुं कृष्णनुमोन्निच्चेर्तिक्किलो १६
मूर्त्तिकळ् मून्नुपेर्क्कुं जयिच्चीटरु-
तोर्त्तुकण्टङ्ङवर्तम्मेयकट्टुकिल् १७
भोष्कल्ल धर्म्मजन्तन्नॆ बन्धिच्चु निन्-
काल्क्कल् वच्चीटुवनिल्लोरु संशयं । १८
ऎन्नु गुरुवरुळ्चेय्तोरु नेरत्तु
मन्नन् त्रिगर्त्तन् प्रतिज्ञचेय्तीटिनान् । १९
एट्मकट्टिच्चमय्क्कुन्नतुण्टु ञा-
नेट्टु धनञ्जयमाधवन्मारॆयु । २०
इत्थं त्रिगर्त्तराजाक्कळ् पलरु-
मायोत्तु सहशपथ चेय्त कारणं २१
संशप्तकन्मारॆन्नेटं प्रसिद्धराय्
संशयमॆन्नियॆ पोरिन्नोरुमिच्चार् । २२

करती हुई सेना निकली। अत्यन्त भयङ्कर युद्ध हुआ और दोनो ओर असख्य सैनिक मरे। शल्य और मारुति (भीम) का युद्ध देखकर सब लोग विस्मित हुए। शाम हुई, सेना अलग-अलग हुई। कोई भी एक पद भी पीछे न हटा। रात को भोजन करके सब लेटे। तब आचार्य ने धार्तराष्ट्र (सुयोधन) से कहा— ९-१५ हे राजा के पुत्र सुयोधन! अगर अर्जुन और कृष्ण साथ युद्ध करे तो त्रिमूर्ति (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) भी उनको न जीत सकते। यह ध्यान मे रखकर अगर वे अलग किये जायँ तो, सच कहता हूँ, मै युधिष्ठिर को बाँधकर तुम्हारे पैरो पर रख दूंगा, इसमे कोई सन्देह नही। जब गुरुवर ने इस प्रकार कहा तब राजा त्रिगर्त ने प्रतिज्ञा की। धनञ्जय और माधव को अलग करने का काम मैं अपने ऊपर लेता हूँ। इस प्रकार त्रिगर्त के राजाओ के एक होकर शपथ करने के कारण उनका नाम 'संशप्तक' हुआ और वे निस्सन्देह युद्ध के लिए एक हुए। १६-२२ बारहवे दिन

हस्तितन्नस्थिकळ् कुत्तिञेरिक्कयुं
मस्तकं कैत्तलंकोण्टु भेदिक्कयुं ४४
चक्रं तिरिक्कयुं वक्रिच्चु वाङ्ङियु-
मग्रे वरुन्नेरमुग्रमटिक्कयु ४५
तुन्पिक्कैतन्निलकप्पेटुंनेरत्तु
तुन्पि पऱक्कुप्रकारं कळिक्कयुं ४६
कन्पंवरुमाऱु भूमियिल् वीळ्कयुं
कोन्पु ताळ्त्तुन्पोळुरुण्टुकळकयुं ४७
मध्ये नटयिट पुक्कुदरस्थले
कुत्तियुं पिन्निल् पुऱप्पट्टु मण्डियुं ४८
पृत्थ्वीशनां भगदत्तनेय्तीटुन्न-
शस्त्रङ्ङळ् पेटिच्चकन्नुकूटाय्कयुं । ४९
अप्रतिमप्रभावप्रबलेन्द्रना-
मभ्रमातंगवीरभ्रमणोपमन् ५०
सुप्रतीकक्रमं कण्टु वातात्मज-
नत्भुतं कैक्कोण्टु विभ्रमतेटिनान् । ५१
ओत्त बलमुळ्ळ भीमनुमानयुं
बद्धकोपत्तोटु युद्धं तुटर्न्नप्पोळ् ५२
पृत्थ्व कुलुङ्ङि नटुङ्ङी जगत्त्रयं
अब्धिकळेळुमलऱिक्कलङ्ङुन्नु । ५३

मारनेवाले हाथी का और उसे पकडनेवाले भीम का आपस मे जो युद्ध हुआ वह अद्भुत था। हाथी की हड्डियो को मारकर तोडना, उसके मस्तक को करतल से फोडना, उसको चक्र की तरह घुमाना, घूमकर पीछे हटना, सामने आते समय उसको जोर से मारना, उसकी सूँड मे फँस जाते समय भँवर के समान उसको उड़ाना, उसका ऐसा गिरना कि पृथिवी हिले, उसके दाँत को नीचा करने पर उसका भूमि पर लोटना, उसके पैरो के वीच घुसकर उसके उदर पर चाकू भोंककर भाग जाना, पृथ्वीश भगदत्त के छोड़े अस्त्रों से डरकर भी उनसे बच न सकना, यह सब हुआ। ४२-४९ अप्रतिभ प्रभाववाले वीर अभ्रमातग (ऐरावत) के समान सुप्रतीक (उत्तर-पूर्व का दिग्गज) की सी चाल देखकर भीम चकित हुआ और डट गया। समान वलवाले भीम और (भगदत्त का) हाथी दोनो क्रुद्ध होकर जव युद्ध करने लगे तव पृथिवी हिली, जगत्त्रय काँपा, सातो सागर गरजे और

घोरनायुळ्ळोरु मारुतितानुमाय्
पारमट्टुत्तु कण्टु कुरुक्कळुं । ३४
चाटीतु तेरु कुतिरयुमानयु
कूटियिटकलन्नार्त्तु पेरुपट । ३५
कोटीतु चापङ्ङळ् तेराळिकळ्कैयिल्
मूटी शरङ्ङळ्कोण्टाकाशवीथियु । ३६
पाटीतु नारदन् पार पोंटि पोङ्ङि
मूटीतु दिक्कुकळ् चोरप्पुळ्यायि । ३७
कूटी जलधियिल् मारी पोंटिकळु
पेटिकळञ्ञु मरिक्कुन्न वीररे-
प्पाटीरवु तेच्चु नाकनारीजन- ३८
मोटियणञ्ञङ्ङु तेरिल्क्करेट्टिनार् ।
ओटियणञ्ञु मरिक्कुन्नितु चिलर् । ३९
वाटी मुख दुरियोधनसैन्यवु-
मोटियतु कण्टु वीरन् भगदत्तन् ४०
पत्तु सहस्र गजत्तिन् बलमुळ्ळ-
मत्तगजत्तिन् कळुत्तिल् करेट्टिनान् । ४१
अत्र बलमुळ्ळ वृत्रारिजाग्रजन्
पत्तुनूरार्त्तु पाञ्ञेत्तियट्टुत्तुटन् । ४२
कुत्तुन्न कुभियुमेत्तुन्न भीमनु-
मेत्तियेतिर्त्त पोरेत्रयुमद्भुत । ४३

और घोर मारुति बिलकुल निकट पहुँच गये। कौरवो ने यह देखा। रथ, घोड़े और हाथी दौड़कर आये। जब ये सब आपस मे मिले तब बड़ी सेना ने युद्धघोप किया। २९-३५ रथियो के धनुष पर ज्या लग गयी और शरो से आकाशमार्ग छा गया। नारद गाने लगे, धूल उठी, दिशाये छिप गयी और रक्त की नदी वहने लगी और सागर मे जाकर गिरी। धूल भी बैठ गयी। निडर होकर मरनेवाले वीरो को चन्दन लगाकर अप्सराओ ने दौडकर स्वागत किया और रथ पर बैठाया। कुछ लोग दौडकर थके और मरे। दुर्योधन का मुँह निष्प्रभ हुआ। उसकी सेना भागी, यह देखकर वीर भगदत्त दस हजार हाथियो की शक्तिवाले एक मत्तगज के कन्धे पर जाकर बैठा। ३६-४१ उतनी शक्तिशाली वृत्रारिजाग्रज (भीम) ने सौ बार सिंहनाद किया और उसके निकट पहुँचे। दाँत से

पिन्तुटर्न्नाशु वरुन्नतु कण्टपो-
तन्तमिल्लाते शरवर्षवु चेय्तु । ६४
पिन्तेर्च्चवन्न रिपुक्कळेयु वेन्नु
चेन्तामराक्षना कृष्णनु पार्त्थनु । ६५
काटिनेक्काळ् वेगमोटे तेरोटिच्चु
काटिन्मकनु भगदत्तनानयु ६६
ऊटमाय् पोरिनायेट पटनिल-
त्तेटमुळ्टोटे चेल्लुन्नतु कण्टु । ६७
पोट्टिविळिच्चु सुयोधननादिया
नूटुपेरोटिनार् पेटियोटाकुलाल् । ६८
एटू भगदत्तवीरनु पार्त्थनुं
काटिन्मकनोटु केवलमानयुं । ६९
उण्टाय संगर कण्टु महाजन
कोण्टाटिनिल्क्कुन्ननेरं भगदत्तन् । ७०
माधवन्तन्नेयुं वासवितन्नेयु
बाधवरुंवण्णमेय्तु पिळर्न्नितु । ७१
कोपिच्चु पार्त्थनु बाण प्रयोगिच्चु
बाण मुरिच्चतु कण्टु भगदत्तन् । ७२
तेटेन्नु मट्टुळ्ळोरारुमरियाते
मटोरु विल्लुमेटुत्तटुत्तीटिनान् । ७३
नारायणास्त्रमेटुत्तभिमन्त्रिच्चु
पारातयच्चान् किरीटियेक्कोल्लुवान् । ७४

वालो का वध किया। वात्या से भी अधिक वेग से रथ चलाया गया। वायुपुत्र और भगदत्त का हाथी जोर से लडने के लिए बडे वेग से युद्ध-भूमि जाते देखे गये। सुयोधन आदि सौओ बन्धु डर के मारे रक्षा के लिए चिल्लाते हुए भागे। वीर भगदत्त और पार्थ (अर्जुन) आपस मे लड़ने लगे और केवल हाथी और वायुपुत्र का युद्ध हुआ। ६४-६९ जब महाजन इस युद्ध को सोल्लास देख रहा था तब भगदत्त ने माधव और अर्जुन को शरो से ऐसा घायल किया कि उनको बडी बाधा हुई। तब क्रुद्ध होकर अर्जुन ने बाण का प्रयोग करके उसका धनुष तोड डाला। यह देखकर भगदत्त तुरन्त ही, बिना औरो के देखे, दूसरा धनुष लेकर निकट पहुँच गया। उसने पार्थ की हत्या करने के लिए नारायणास्त्र को मन्त्रोच्चारण

योगिप्रतियोगि रण्टुजनङ्ङळुं
नाकिकळुं मटु काणिकळायोरुं ५४
चित्र विचित्रं विचित्रं विचित्रमि-
तत्भुतमत्भुतमत्भुतमत्भुतं ! ५५
इत्थं पुकळ्त्तुन्न शब्दवुं वारणं
मत्तनायेटमलरुन्न शब्दवुं । ५६
आरवारङ्ङळुं कोलाहलङ्ङळुं
पोराळिवीरर्निलविळिघोषवुं ५७
घोरघोरं केट्टु दुर्न्निमित्तङ्ङळु
पारमाय्क्कण्टु भयंपूण्टु फल्गुनन् ५८
पारातें पोक वटक्कुदिशियेन्नु
वारिजलोचननन्तन्नोटु चोंल्लिनान् । ५९
तेरुं तिरिच्चटिच्चीटिनान् माधवन्
नेरे तुटर्न्नटुत्तारवीररुं । ६०
पोरिलरिकळे वच्चेच्चु पोवतु
पोरा महारथन्मार्क्केन्नरिञ्ञालुं । ६१
पोराय्मयिल्लयो पार्त्थनुं कृष्णनुं
पोरिलेतिर्त्तु तिरिञ्ञुनिन्नीटुविन् । ६२
इत्थ पऱयुं त्रिगर्त्तनुं म्लेच्छरु-
मेत्तुन्न संशप्तकन्मारेयुमवन् । ६३

उनका पानी कलुषित हो गया। योगि और प्रतियोगि दोनो ओर के लोगो का, स्वर्ग के रहनेवाले और अन्य प्रेक्षको का चित्र ! विचित्र ! विचित्र ! विचित्र ! अद्भुत ! अद्भुत ! अद्भुत ! इस प्रकार का प्रशसा करने का शब्द और योद्धाओ का घोर युद्धघोष सुनकर और अनेक दुर्निमित्त देखकर, फल्गुन (अर्जुन) कुछ डर गया और श्रीकृष्ण से बोला—जल्दी उत्तर की ओर चलो। तब माधव ने रथ घुमाकर चाबुक मारा और दोनों वीर सीधे चले और निकट पहुँच गये। युद्ध मे शत्रुओ को छोड़कर चले जाना महारथियो के लिए उचित नही है, जान लीजिये। अर्जुन और कृष्ण का युद्ध मे सामना करने के बाद पीछे को मुडना क्या लज्जा की बात नही है ? ऐसा कहेगे त्रिगर्त और म्लेच्छ, और जो संशप्तक पहुंचेगे उनके सम्बन्ध मे भी। ५७-६३ पीछा करनेवालो को देखकर उन पर अनन्त शरवर्षा की। कमललोचन और अर्जुन ने पीछा करने

कॊन्पुतन्मेल् वन्नु वीऴुवानायिट्टु-
कॊन्पुमुर्त्तिनिन्नानतु कण्टिट्टु ८५
संभ्रमत्तोटॊरु वाणं प्रयोगिच्चा-
नुन्पर्कोनूतन्नुटॆ नन्दननर्ज्जुनन् । ८६
वारणवीरन्तलयटु विल्लटु
वीरन् भगदत्तन्तटॆ तलयटु ८७
नालामतानतन् वालुमरिञ्ञिट्टु
कोलाहलत्तोटु पोयितु वाणवुं । ८८
भीमनतिन्मीते वन्नु वीणीटिनान्
पूमऴ चॆय्तारमररुमन्नेरं । ८९
आश्चरियप्पॆट्टु कण्टनिन्नोर्कळुं
पाच्चिल्पिटिच्चितु शेपिच्च सैन्यवु । ९०
मायकळ् काट्टिप्पॊरुत शकुनियु
मायामयसखियाकिय पार्त्थनुं ९१
चूतल्लितु नल्लु पोरॆन्नरिक नी
पोर्तिरि निल्लु निल्लॆन्नटुत्तीटिनान् । ९२
विल्लुं कुटयुं कॊटियु कुतिरयुं
चॊल्लिलक्कॊण्टॆय्तुकळञ्ञान् धनञ्जयन् । ९३
तॆक्कॆत्तलय्क्कलॆतिर्त्त यदुक्कळुं
दक्षन्माराकुं त्रिगर्त्तादिवीररुं ९४

हुआ ताकि भीम उन पर गिरे । यह देखकर देवो के पति के पुत्र अर्जुन ने झट से एक वाण का प्रयोग किया । वह वीर (वाण) हाथी के सिर को, फिर (भगदत्त) के चाप को, उसके सिर को, और चौथा हाथी की पूंछ को काटकर वड़े कोलाहल के साथ कही चला गया । उसके ऊपर आकर भीम गिरा और देवो ने उस समय पुष्पवृष्टि की । प्रेक्षक जो खड़े थे सव आश्चर्यचकित हुए और अवशिष्ट सेना भागी । मायाप्रयोग करते हुए लड़नेवाले शकुनि से मायामय (कृष्ण) के मित्र अर्जुन ने कहा— यह जुआ नही है, यह है असली युद्ध । युद्ध के लिए खडे हो जाओ— ऐसा कहता हुआ निकट पहुँचा । ८५-९२ अर्जुन ने धनुष, छत्री, झण्डे और घोड़े को अपने तीरो से नष्ट कर दिया । दक्षिण की ओर लडनेवाले यदु और दक्ष त्रिगर्तवीर, पाण्डवो का सामना करके हारे और युद्ध ताण्डवनृत्य सा हो गया । द्रोणपुत्र ने उस समय अपने तीर चलाये और

पारमेरिञ्ञणयुन्न शरं कण्टु
नारायणन्मेय्यिलेट्टु कौण्टीटिनान् । ७५
भूषणमायितु कृष्णनतु कण्टु
भाषणमायितु मट्टुळ्ळवक्केल्ला । ७६
मुल्पुक्कु माधवनेट्टुतट्टुक्कयाल्
दुर्ब्बलन्तानेन्नु कलिपच्चु पार्त्थनु । ७७
चेट्टु कोपिच्चतुकण्टु दामोदरन्
कुटमिल्लेन्नु परञ्ञु बोधिप्पिच्चान् । ७८
अन्नेरमानयु भीमनेक्कैक्कोण्टु-
नन्नायेट्टुत्तु मेल्पोट्टेरिञ्ञीटिनान् । ७९
वीळुन्न नेरत्तु वारणं कुत्तियु
भीषणन् भीमनुरुण्टुकळकयु । ८०
अभ्रमूकान्तसमप्राणनायोरु
सुप्रतीकप्रकोपभ्रमक्षेपणाल् । ८१
उळ्प्पूविलोर्त्तान् जगत्प्राणपुत्रनु
चित्पुरुषन् चरणोत्पलयुग्मवु । ८२
पिन्नेयु पिन्नेयुं तड्डळिलिङ्ङने
खिन्नतयोट्टु पौरुतोरनन्तर ८३
कुत्तुकोळ्ळाञ्ञु कोपिच्चु मदकरि-
येत्तिप्पिटिच्चु मेल्पोट्टेरिञ्ञीटिनान्'। ८४

करके जल्दी छोडा। इस प्रकार जलते शर को देखकर नारायण (कृष्ण) ने उसे अपने ही शरीर मे ले लिया। वह कृष्ण का भूषण सा हो गया, तथा और लोगो के भाषण का विषय हो गया। ७०-७६ माधव के आगे जाकर उसे रोकने के कारण अर्जुन ने अपने को दुर्बल समझा और तनिक अप्रसन्न भी हुआ। यह देखकर दामोदर (कृष्ण) ने समझाया कि इसमे कोई दोष नही है। उसी समय हाथी ने भीम को पकडकर जोर से ऊपर को फेक दिया। जब गिरा तब हाथी ने अपने दातो से मारा और भीषण भीम पृथिवी पर लोटने लगा। अभ्रमुकान्त (ऐरावत) के तुल्य-बल सुप्रतीक का क्रुद्ध होकर घुमाकर फेकना ही इसका कारण था। तब जगत्प्राण (वायु) के पुत्र (भीम) ने चित्पुरुष के चरणयुगल का ध्यान किया। बार बार इस प्रकार लड़ने के बाद वह मत्तगज अपने आघातो को विफल देखकर क्रुद्ध हुआ और उसने भीम को पकडकर ऊपर की ओर फेक दिया। ७७-८४ तदनन्तर अपने दाँत ऊपर करके खड़ा

पारमकटुक पार्त्थनेयेङ्किलो
नेरेवरुवोरै निग्रहिच्चीटुवन् । १०६
नाळे ञान् मून्निलुमोन्नु चेय्तीटुवन्
नाळीकलोचनन् पादङ्ङळ्तन्नाणे । १०७
आहवत्तिन्नोरु काणिपळुताते
व्यूहमिळकाते निर्त्तीटुवनल्लो । १०८
अस्तमिप्पोळवुमेन्नालवर्कळ्क्कु
पृत्थ्वक्कवकाशमिल्लेन्नतुवरुं । १०९
शत्रुक्कळ् सैनिकव्यूहमिळक्काते-
यस्तमिप्पोळवु निन्नितेन्नाकिलो ११०
चोद्यत्तिनाय्क्कोण्टु चेन्नवर् तोटृते-
न्नाद्यमायीटुन्न धर्म्म सनातन । १११
अल्लाय्किलो नृपन्तन्ने बन्धिच्चु ञा-
निल्लवकाशमेन्नु वरुत्तीटुवन् । ११२
रण्टुं वराय्किलो पिन्ने मून्नामतु-
मुण्टोन्नतेन्तेन्नु केळ् नी सुयोधना ! ११३
कूट्टुवन् पङ्कजव्यूहमेन्नालतिल्
कूट्टमिळक्कुन्नवने ञान् कोल्लुवन् । ११४
ऐङ्किल् त्रिगर्त्तादिकळ् चेन्नु पार्त्थने-
प्पङ्कजलोचननोटुमकटण । ११५

अर्जुन को दूर हटाओ और सीधे सामने आनेवालो का मै निग्रह करूँगा । १००-१०६ कल तीनो मे एक (काम) मैं करूँगा कमलनयन के चरणो मे । मै विना विलम्ब युद्ध के लिए एक ऐसे व्यूह की रचना करूँगा जो सूर्यास्तसमय तक न हिले ताकि यह सिद्ध हो जाय कि उनको पृथ्वी पर कोई अधिकार नही है । अगर शत्रुगण सूर्यास्तसमय तक अपने सैनिकव्यूह को हिलने न दे तो आपत्ति करनेवाले हार गये, यही पहला सनातन धर्म है । नही तो मै राजा (युधिष्ठिर) ही को वान्ध लाऊँगा और सिद्ध करूँगा कि उनको अधिकार नही है । १०७-११२ अगर ये दोनो बाते न होगी तो एक तीसरा रास्ता भी है । वह क्या है ? सुनो ! हे सुयोधन ! मै पङ्कजव्यूह की रचना करूँगा और जो उसे विगाडेगा उसे मै ही मार डालूँगा । परन्तु त्रिगर्त आदियो को चाहिये कि वे अर्जुन को पङ्कजलोचन (कृष्ण) से अलग करे । 'इस मे कोई सन्देह नहीं है'

पाण्डवसेनयोटेटु तोट़ीटिनार्
ताण्डवपोलें चमञ्ञितु युद्धवुं । ९५
द्रोणात्मजन्नणञ्ञेय्तानतुनेरं
बाणगणं वरिषिच्चितु पार्त्थनुं । ९६
कन्पंवरुमारु वन्पट कॆट्टुपोय्
वन्पनां कर्ण्णन्टॆ पिन्पिलायीटिनार् । ९७
कर्ण्णनु पार्त्थनु तम्मिलॆतिर्त्तप्पोळ्
कर्ण्णात्मजन्मारॆक्कॊन्नितु पाण्डवर् । ९८
अर्ण्णवं तन्निल् मङ्ञितु सूर्यनु
कर्ण्णादिकळ् तोट्टु कैनिलयुपुक्कार् । ९९
दु:खिच्चु चॆन्नु गुरुवरन्तन्नुटॆ
तृक्काक्कल् वीणु दुरियोधनन्नृपन् । १००
बन्धुक्कळाय भगदत्तनादिक-
ळन्तकन्वीट्टुपुक्कीटिनार् पोरिले । १०१
कोप भवानुळ्ळिलुण्टायतिल्लेतु
तापवुमिल्लॆङ्ङिलिङ्ङनॆ वन्निटा । १०२
इत्थं परुषं पऱञ्ञ सुयोधन-
नत्तल्पोवान् गुरुवीरनरुळ्चॆय्तु । १०३
नारायणनु नरनां विजयनु
पोरिलॊरुमिच्चॆतिर्त्तालवरोटु १०४
पोरिनु पिन्नॆयॆतिक्कुन्नतारॆटो
पोरुं परुष पऱञ्ञतु नी वृथा । १०५

अर्जुन ने शरवर्षा की। सब काँपने लगा और बड़ी सेना बिगड़ गयी और शक्तिशाली कर्ण के पीछे हो गयी। जब कर्ण और अर्जुन आपस मे लड़ने लगे तब पाण्डवो ने कर्ण के पुत्रो का वध किया। सूर्य समुद्र मे डूबा और कर्ण आदि हारकर अपने तबू चले गये। ९३-९९ तब दु:खित होकर राजा सुयोधन अपने गुरुवर के चरणो पडे। भगदत्त आदि बन्धु युद्ध मे मरकर यमसदन मे प्रविष्ट हुए। आपको तनिक भी कोप नही हुआ और न दुख। नही तो इस प्रकार न होता। इस तरह खरी-खरी सुनानेवाले दुर्योधन का दुख दूर करने के लिए गुरुवीर ने कहा— जब नारायण और अर्जुन मिलकर हमारे खिलाफ लड़ते है तब उनका कौन सामना कर सकता है ?। बस, व्यर्थ कड़ी बाते न करो।

वीर ! कुमारा ! कुमारनु नेराय
वीर ! सुकुमार ! सुन्दर ! सौभद्र ! ६
पोरिनाचार्यर् विळिच्चु निल्क्कुन्नतिल्
पोराय्मयुण्णी ! नमुक्कु वरुत्तोला । ७
पार्त्थनु तुल्यनायुळ्ळ नीयॆङ्किलॆ-
न्नार्त्ति कॆटुक्क जयिक्क रिपुक्कळॆ । ८
नीयॊळिञ्ञारॆयुं कण्टील मटिनि-
प्पोयितु पार्त्थनुं कृष्णनुं दूरवे । ९
धर्म्मजन् चॊन्नतु केट्टभिमन्युवु
धर्म्मजन्तन्नॆत्तॊळुतु चॊल्लीटिनान् । १०
इन्नटियन्नुतन्ने जयिक्कावतो
मन्नवा ! माटलरूटमायुळ्ळवर् । ११
इत्थ परञ्ञ सुभद्रात्मजनोटु
चित्त तॆळिञ्ञु धर्म्मात्मजन् चॊल्लिनान् । १२
भीमनु द्रौपदितन्नुटॆ मक्कळुं
भीमात्मजनां घटोल्कचवीरनु १३
केकयन्मारुं मटुळ्ळ पटयुमाय्
पोक नी तेरु नटत्तुं सुमित्रनुं । १४
सूतनायुळ्ळ सुमित्रनतु केट्टु
नीतियिल् सौभद्रनोटु चॊल्लीटिनान् । १५
द्रोणरुं धीरनां द्रौणियु कर्ण्णनु
प्राणभयं कुरयुं कृपर् भोजनुं १६

(कार्तिकेय) के समान वीर ! हे सुकुमार ! सुन्दर ! हे सुभद्रा के पुत्र ! जिस युद्ध के लिए आचार्य हमको ललकार रहे है, बेटा ! उसमे हमारी कमी न हो ! । १-७ अगर तुम पार्थ के तुल्य हो तो मेरा दुख दूर करो और शत्रुओ को जीतो । तुम्हे छोडकर अब और कोई नही है । अर्जुन और कृष्ण दूर रह गये । युधिष्ठिर की बात सुनकर अभिमन्यु ने उनकी वन्दना करके कहा । आज क्या अभिमन्यु अकेला जीत सकता है ? हे राजन् ! शत्रु तो बहुत शक्तिशाली है । सुभद्रा के पुत्र की यह बात सुनकर युधिष्ठिर प्रसन्नता के साथ बोले । भीम, द्रौपदी के पुत्र, भीमपुत्र वीर घटोत्कच, केकय और सेना के साथ तुम चलो । सुमित्र रथ चलायेगा । ८-१४ यह सुनकर सूत सुमित्र ने सौभद्र से सादर कहा—

सन्देहमिल्लतिनॆन्नवर्‌तङ्ङळुं
सन्नाहमोट्टुषस्सिन्नु पुऱप्पॆट्टार् । ११६
पार्थनुं पङ्कजनेत्रनु वैरिक-
ळार्त्ततु केट्टु तेरेऱिप्पुऱप्पॆट्टु । ११७
संशप्तकन्मारुमोटिनार् तॆक्कोट्टु
संशयमॆन्नियटुत्तितु पार्थनुं । ११८
इङ्ङु पद्मव्यूहवु चमच्चाचार्य-
नॆङ्ङुमिळकातॆ वन्पट निर्त्तिनान् । ११९

अभिमन्युविन्टॆ युद्धवुं मरणवुं

एट्टु पॊरुततु नेरत्तु पाण्डवर्
तोटतु कण्टु युधिष्ठिरन् चॊल्लिनान् । १
माधवन्तन्टॆ मरुमकनाकिय
वासवनन्दनपुत्रनभिमन्यु २
माधवफल्गुनन्मारॊट्टुतुल्यनॆन्-
बाध कळवानवन्मतियाय्वरु । ३
व्यूहं विषममायुळ्ळोन्नतिल् पुक्कु
साहसत्तोटॆ पटयिळक्कीटुवान् ४
आहवत्तिङ्कल् चतुरनाकु मेघ-
वाहननन्दनन् दूरयकप्पॆट्टु । ५

—ऐसा कहकर वे सब तडके युद्ध के लिए गये। शत्रुओ का सिंहनाद सुनकर अर्जुन और कृष्ण रथ पर चढकर चले। संशप्तक दक्षिण की ओर चले और निश्शङ्क होकर अर्जुन निकट पहुँचा। इधर आचार्य ने पद्मव्यूह वनाकर अपनी वड़ी सेना निश्चल खड़ी की। ११३-११९

अभिमन्यु का युद्ध और निधन।

जव शत्रुओ का सामना करके युद्ध प्रारम्भ हुआ तव पाण्डव हारे और यह देखकर युधिष्ठिर ने कहा। माधव का भाञ्जा अर्जुनपुत्र अभिमन्यु, माधव और अर्जुन का तुल्य है और वह मेरी वाधाओ को दूर करने के लिए पर्याप्त है। उस विषम व्यूह के अन्दर घुसकर बड़े साहस के साथ सेना को हिलाने के लिए, युद्ध मे कुशल मेघवाहन (इन्द्र) का पुत्र (अर्जुन) अव कुछ दूर हो गया है। हे वीर! हे कुमार! हे कुमार!

शूलं परिघं मुसलवुं चक्रवु
वेलोटु वेंमळु कुन्त गदकळु २७
तुळ्ळुमुनयोटिळकु चुरिकक-
ळुळ्ळंनटुङ्ङु कटुत्तिल वाळुकळ् २८
मिन्निप्परिचकळ् विल्लु शरङ्ङ्ळु
तूणीरमोटु कवचमुष्णीषवु
पूणियु पूण्टु शोभिच्च योद्धाक्कळु २९
कल्लु कविणयु नल्ल वटिकळु
कैयिलेटुत्तुळ्ळ काळ्चप्पटकळु ३०
पायु कुतिरकळ् पूट्टि नानाविध-
मायुधमोक्क निरच्चुळ्ळ तेरुकळ् ३१
तोयाकरमलड्डीटुन्नतुपोले
वायुवेगेन परन्नु काणाय्वन्नु । ३२
पोन्नणिञ्ञानकळ् मुळ्त्तटि कैक्कोण्टु
पोन्निन्मलकळ् नटक्कुन्नतुपोले । ३३
वेळ्ळत्तिले तिर तळ्ळुन्नतुपोले
तुळ्ळिक्कळिक्कुन्न वेळ्ळक्कुतिरकळ् ३४
मुन्पिल् कळिक्कुन्न कालाळ्प्पटकळु
वन्पोटलरु पटहवु भेरियु ३५
वन्कटल्पोले परन्नितु वन्पट ।
हुंकारमोटुमटुक्कुन्नतुनेर । ३६

पीछे-पीछे गयी । २१-२६ शूल, परिघ, मुसल, चक्र, भाला, कुल्हाड़ी, कुन्त, गदाएँ, तीक्ष्ण नोकवाली छुरियाँ, चित्त को कँपानेवाली महीन तलवारें, चमकनेवाले चर्म, धनुष और बाण, तूणीर, कवच और उष्णीष, आभूषण पहनकर चमकनेवाले योद्धा, पत्थर और अच्छे-अच्छे डंडे हाथ में लिए जानेवाले दर्शनीय सैनिक, दौड़नेवाले घोड़े, अनेक रथ जिन में विविध आयुध बन्द किये गये हैं ये सब गरजते सागर के समान वायु के वेग से फैलते हुए दिखाई दिये। २७-३२ सोने के आभूषणों से अलंकृत, अङ्कुशयुक्त चलते सोने के पहाड़ के समान हाथी, आगे बढ़नेवाले पानी के लहर के समान कूदते-खेलते सफेद घोड़े, आगे-आगे सोल्लास जानेवाले पैदल सैनिक, उच्च ध्वनि करनेवाले नगाड़े और दुन्दुभि, यह सब धारण करनेवाली बड़ी सेना एक बड़े समुद्र के समान फैली। जब वह गरजती हुई निकट

मटुं महारथन्माराय वैरिकळ्
कुटमौळिञ्ञु पोर् चेय्युन्ननेरत्तु १७
मुटाते बालनायुळ्ळोरु निन्नाले
मुटुं जयिप्पान् पणियेन्नरिञ्ञालु । १८
अन्नु सुमित्रनां सारथि चोन्नतु
निन्न सुभद्रात्मजन् केट्टु चोल्लिनान् । १९
ञानतिबालनशक्तनेन्नाकिलुं
मानियामेन्नुटे तातनेयोर्क्क नी । २०
पिन्नेप्पितावुतन्नग्रजन् मारुति
सन्नद्धनाय घटोल्कचन् भ्रातावु २१
मातुलनायतु माधवनायतिल्
आनोरुत्तन् पिटियात्तवनेङ्किलुं २२
प्राणन् कळवतिन्नाय् मतियाय् वरुं ।
पिन्नेप्परिभविच्चीटुवानाळुक- २३
ळेन्नेक्कुरिच्चवरुण्टेन्नरिक नी ।
अन्नतल्लेयवर्कारुण्यमुण्टेङ्कि-
लिन्नु समस्तरेयुं जयिच्चीटुवन् । २४
पोक पुरप्पेटुकेन्नु पार्त्थात्मजन्
वेगेन तेरिल् करेरिनान् विल्लुमाय् । २५
पाण्डवसेनयुं चेन्नितु पिन्नाले
गाण्डीवधन्वावुतन्मकन्तन्नोटुं । २६

द्रोण, धीर द्रोणपुत्र (अश्वत्थामा), कर्ण, प्राणभय से रहित कृप, भोज, अन्य महारथी शत्रु जब बिना गलती किये लडेगे तब इस दशा मे बालक ! तुम्हारे लिए पूर्ण जय प्राप्त करना कठिन होगा, जान लो। सारथि सुमित्र की यह बात सुनकर सज्ज सुभद्रापुत्र ने कहा। माना कि मै बालक और शक्तिहीन हूँ परन्तु स्मरण रहे कि मेरे पिता मानी अर्जुन है। १५-२० फिर पिता के बडे भाई भीम, सन्नद्ध भाई घटोत्कच, मामाजी माधव भी तो है, केवल मुझ मे कुछ कमी है पर प्राणत्याग मै भी कर सकता हूँ। फिर जान लो कि मेरे सम्बन्ध मे दु.ख करने के लिए वे तो है ही। उनकी कृपा अगर होगी तो मैं आज सब को जीत लूंगा। 'चलो', 'निकलो', ऐसा कहता हुआ अर्जुनपुत्र धनुष लिए रथ पर बैठ गया। गाण्डीवधन्वा (अर्जुन) के पुत्र के साथ पाण्डवसेना

आर्त्तु पद्मव्यूह मूक्कोटु भेदिच्चु
पार्त्थात्मजन् करयेरिनान् कूट्टत्तिल् । ४७
चिन्निच्चमञ्ञितु कौरवसैन्यवु
छिन्नमाय् वन्नितु कालु करङ्ङळु । ४८
छन्नमाय् वन्नितु भास्करबिंबवु
खिन्नमाय् वन्निताचार्यनु चित्तवु । ४९
सन्नमाय् वन्नितनेकायिरं पट
धन्यमाराय् वन्नितप्सरस्त्रीकळु । ५०
धन्वियायुळ्ळभिमन्युशरङ्ङळाल्
मन्यु मुळुत्तरिमन्नोरोळिक्कयु । ५१
चङ्ङाति वीळ्वतु कण्टु तोळिक्कयु ।
तङ्ङळिलुत्तङ्ङळिल् पारं पळिक्कयु । ५२
वाणं पोळिक्कयु काणक्कळिक्कयुं
चोरप्पुळकळ् पलवयोलिक्कयुं
वारिधिवारियुंकूटे चुवक्कयुं । ५३
पोरिल् नटुक्कमोटोटिक्किळय्क्कयु
नारीजनमतु कण्टु तोळिक्कयु ५४
नारदन् कौतुकंपूण्टु चिरिक्कयु
नारायणा ! नमो ऎन्नु जपिक्कयुं ५५
निल्लु निल्लॆन्नु परञ्ञडुक्कयुं
नल्ल शूरन्मार् तिरिञ्ञु मरिक्कयु- ५६

गया और कौरवसेना छिन्नभिन्न हो गयी। हाथ और पैर छिन्न मिले और सूर्यबिंब ढक गया। आचार्य का चित्त खिन्न हुआ और सहस्रो की सख्या में सैनिक नष्ट हुए। अप्सराएँ धन्य हुई धानुष्क अभिमन्यु के शरो के कारण। क्रोध बढ़ने के कारण शत्रुभूपाल अलग हुए। अपने मित्र का गिरना देखकर दु खित हुए। योद्धाओ ने आपस ही मे एक दूसरे की निन्दा की। ४६-५२ शरवर्षा की गयी, रक्त की अनेक नदियाँ वही और सागर का पानी भी लाल रङ्ग का हो गया। युद्ध मे डरके मारे भागने से हाँफना, उसे देखकर महिलाओ का दु·खित होना, नारद का कौतुक से हँसना, और नारायण ! नमस्ते ! ऐसा जपना, कुछ लोगो का 'ठहरो ठहरो' कहकर निकट पहुँचना, अच्छे-अच्छे शूरो का घूमकर मरजाना, विमानो का आकाश को छिपा देना, जो न मरे उनका भागकर

दिक्कुकळोक्क मरुञ्ञु पॊटिकॊण्टु ।
चक्र तिरिञ्ञितु कौरवसैन्यवु। ३७
विल्लाळिवीरना द्रोणरतु कण्टु
निल्ला पट नमुक्कॆन्नुरुच्चीटिनान् ३८
चॊल्लिनान् मट्टुळ्ळवरोटितु काण्क ।
नल्ल वरवु भयङ्करमॆन्नयुं । ३९
ऎल्लावरुमॊरुमिच्चु निन्नीटुविन् ।
नल्ल गजङ्ङळॆ मुन्पिल् निर्त्तीटुविन् ।४०
वल्लातॆ धूळिप्पटयकटीटुविन् ।
वल्लभमुळ्ळवरॊन्निच्चु कूटुविन् । ४१
इत्तरं चॊल्लियुरच्चु भरद्वाज-
पुत्रना द्रोणरुरप्पिच्चु निर्त्तिनान् । ४२
मेघङ्ङळ् मारि चॊरियुन्नतु पोलॆ
तूकित्तुटङ्ङी शरङ्ङळतुनेरं ।४३
ऎय्तॆय्तटुत्तटुत्तर्ज्जुननन्दनन्
चैतन्यमुळ्ळ जनत्तॆयॊटुक्किनान् । ४४
शक्तरायुळ्ळवरॆत्तियॆतिर्त्तुटन्
चत्तुं मुरिञ्ञुमॊळिञ्ञु वाङ्ङीटिनार् । ४५
मॆल्लमॆल्लॆ क्रमत्तालॆय्तटुत्तटु-
त्तल्लल् मरुतलय्क्कुण्टॆन्नु कण्टप्पोळ् ४६

आयी तब सारी दिशाएँ धूल से ढक गयी। कौरवसेना चक्र के समान घूमी। यह देखकर धनुर्धरो मे श्रेष्ठ द्रोण ने समझ लिया कि सेना रुकेगी नही। तब वह औरो से बोले। यह आगमन अच्छा रहा और भयङ्कर। ३३-३९ अब सब एक होकर खडे हो जाओ। अच्छे हाथियो को आगे खडा करो, अधिक धूल करनेवाली सेना को दूर रखो। आपस मे प्रेम करनेवाले साथ हो जाओ। इस प्रकार कहकर भरद्वाजपुत्र द्रोण ने सेना को स्थिर करके खडी कर दिया। मेघो के वारिधारा वरसने के समान उस समय शरवर्षा होने लगी। बाण छोडता हुआ अर्जुनपुत्र आगे बढा और चैतन्यवाले जनो को समाप्त करता गया। शक्तिशाली लोग पहुँचकर लड़े और कुछ मरे और व्रणी होकर कुछ अलग हुए।४०-४५ धीरे धीरे, क्रम से, बाण छोडता हुआ, शत्रु को दुखित समझकर सिहनाद करता हुआ अभिमन्यु पद्मव्यूह को तोडते हुए और सेना के बीच मे पहुँच

सौमित्रि रावणियोट्टु चेल्लुवण्ण
सौभद्रनार्त्तङ्ङट्टुत्तानतुनेरं । ६८
केट्टु तिरिच्चितु वन्पट तल्क्षणे
पेटटेन्नु शल्यानुजन् तिरिञ्ञीटिनान् । ६९
वाट्टमिल्लाते पार्त्थात्मजनन्तकन्-
वीट्टिलिरिक्क नीयेन्नयच्चीटिनान् । ७०
निश्वासमुळ्क्कोण्टतुकण्टुनिन्नोरु
दुश्शासननु दुरियोधनन्तानुं ७१
कोल्लुक वैकातिवनेयिनियेन्नु
चोल्लियटुक्कुन्नतुकण्टभिमन्यु ७२
निल्लु निल्लाकिल् नृपतिकुलाधमा !
शल्यानुजन्नु तुणययच्चीटुवन् । ७३
पाञ्चालियेस्सभयिङ्कलेन्नु नी पण्टु
पूञ्चेल चुटियिळच्चीलयो चाल्क । ७४
कोल्लुवान् भीमन् प्रतिज्ञ चेय्तीटिनान्
वल्लाय्कयाय्वरु निन्ने ञान् कोल्लुकिल् । ७५
ऎन्नु परञ्ञु शरङ्ङळ् पोळिच्चवन्
चेन्नु तरच्चतुकण्टु दुश्शासनन्- ७६
तन्नुटे सारथि तेरुमोळिच्चुको-
ण्टिन्नल्लितिनेन्नु कोण्टुपोयीटिनान् । ७७

को सताने लगा तव दुर्योधन दुःखित हुआ । आचार्य और भूपालगण एक होकर विना शङ्का के लडे । ६१-६७ तव लक्ष्मण का मेघनाद से लड़ने जाने के समान सौभद्र (अभिमन्यु) सिंहनाद करता हुआ निकट पहुँचा । यह सुनकर वडी सेना घूमी और तुरन्त ही शल्य का छोटा भाई भी घूमा । पार्त्थात्मज (अभिमन्यु) ने उसको 'तुम अन्तक के घर रहो' ऐसा कह कर भेज दिया । यह देखकर निश्वास छोडते हुए दुश्शासन और दुर्योधन को 'अव विना विलम्ब के इसे मारो' ऐसा कहते हुए निकट आते देख अभिमन्यु ने कहा— 'हे नृपतिकुलाधम ! अगर कर सकते हो तो ठहरो ! ठहरो ! तुम्हे शल्यानुज के साथ भेज दूंगा । कहो तुम्ही ने तो पहले सभा मे द्रौपदी का वस्त्र उतारा और खीचा था । ६८-७४ भीम ने तुम्हे मारने की प्रतिज्ञा की है । अतएव अगर मै तुम्हारा वध करूँ तो अनुचित हो जायगा' । ऐसा कहकर उसने शरवर्षा की जो दुश्शासन पर लगी । यह देखकर दुश्शासन के सारथि 'यह आज का काम नही है' ऐसा कहकर रथ को चला ले गया ।

माकाशमौक्क विमानं मऽय्क्कयुं
चाकातवर् पाञ्ञुपोयङ्ङौळिक्कयु ५७
तम्मिल् पिरिञ्ञु काणाञ्ञु विळिक्कयुं
कर्म्मंप्पिळयेन्नु कण्णीरोलिक्कयु ५८
आनकळ् कैकाल् पिटञ्ञु किटक्कयुं
काणिकळ् कण्टुकोण्टेट्मऽय्क्कयुं ५९
कूळिकळ् कूट्टमिट्टार्त्तु कळिक्कयु
काळि रुधिरं कुटिच्चु पुळय्क्कयु ६०
चक्रङ्ङळ्कोण्टु कळुत्तु तेऽिक्कयु
विक्रममुळ्ळवर् पोरिन्नटुक्कयुं ६१
विख्यातरायवर् नोक्कित्तटुक्कयुं
विल्क्करुत्तुळ्ळवरेट्न्त्तटिक्कयुं ६२
भीमन् गदकोण्टु पारमटिक्कयुं
भीमगजङ्ङळेयोक्कत्तकर्क्कयुं ६३
वाजिकळेक्कोलचेय्तु मुटिक्कयुं
वाशिपऽकयुमार्त्तुविळिक्कयु । ६४
वन्पटक्कूट्टत्तिलन्पोटु पुक्कुको-
ण्टुन्पर्कोन्तन्नुटे नन्दननन्दनन् । ६५
कन्पं वरुत्तिच्चमच्चोरुनेरत्तु
तुन्प कलर्न्नु दुरियोधनन्तानुं । ६६
आचार्यनुमरचन्मारुमोन्निच्चु
कूशातॆ निन्नु पोर्चेय्तोरुनेरत्तु । ६७

कहीं छिप जाना, अलग होकर फिर न मिलने से पुकारना, अपना ही कर्म का दोष है ऐसा समझकर आँसू गिराना, हाथियो का हाथ-पैर तड़पते हुए पृथिवी पर लोटना, प्रेक्षको का देखकर नफरत होना, पिशाचो का इकट्ठा होकर चिल्लाना, काली का रक्त पीकर क्रुद्ध होना, ५३-६० चक्रो के द्वारा गरदन का अलग होकर गिरना, वीरो का युद्ध के लिए निकट आना, विख्यात लोगो का रोकने का प्रयत्न करना, धनुष मे कुशल योद्धाओ का तीर चलाना, भीम का अपनी गदा से खूब मारना और भीषण हाथियो को समाप्त करना, घोडो को मार-मारकर समाप्त करना, औरो को चुनौती देना और चिल्लाना, यह सब हुआ। जब इन्द्र के पुत्र का पुत्र (अभिमन्यु) बड़ी सेना के अन्दर सोल्लास घुस गया और शत्रुओ

विल्लाळिया पार्त्थनेन्नियै मट्टुळ्ळो-
रेल्लावरेयु जयिक्काय्वरिकेन्नु । ८८
तळ्ळलोटार्त्तङ्ङट्टुत्तु जयद्रथन्
कळ्ळमोळिञ्ञु पोरुतानतुनेर । ८९
पेटिच्चकन्नितु पाण्डवसैन्यवु
पेटिच्चोळिञ्ञुनिन्नानभिमन्युवु । ९०
वन्पट केट्टु मण्टुन्नतुनेरत्तु
वन्पुळ्ळरिकळ् वळञ्ञारवरेयुं । ९१
व्यूहवु नन्नायुरच्चोरनन्तर-
माहवमेत्रयु घोरमाय् वन्नितु । ९२
वालनायुळ्ळ पार्त्थात्मजन्तन्नेयुं
चालेच्चुळन्नु पोर्चेय्तु तुटङ्ङिनान् । ९३
नानारथिकळोटु पोरुतार्ज्जुनि
तानेयटुत्तारवर्कळु मण्टिनार् । ९४
मण्टुन्नतेन्तिनु निङ्ङळेल्लावरु
कण्टुनिन्नीटुविनेन्नु शल्यात्मजन् ९५
वन्नानवनेप्पटयोटुकूटवे
कोन्नान् कुमारनायुळ्ळ पार्त्थात्मजन् । ९६
चेन्नितु चावानवन्टे पटयेल्ला-
मोन्नोळियाते कोन्नानभिमन्युवु । ९७

जीतोगे । ८२-८८ अतएव वह जयद्रथ अहङ्कार के साथ निकट पहुँचा, निष्कपट युद्ध करने लगा । भयभीत होकर पाण्डवसेना हटी और डर के कारण अभिमन्यु भी अलग हो गया । जब सेना बिगड़कर भागने लगी तब शक्तिशाली शत्रुओ ने उनको घेरा । व्यूह का स्थिर होने के बाद युद्ध अत्यन्त घोर हुआ । बालक अभिमन्यु को घेर कर उससे लड़ने लगा । आर्जनि (अभिमन्यु) ने अनेक रथियो से युद्ध किया । पर वे सब भाग गये । ८९-९४ तब शल्यपुत्र— 'क्यो भाग रहे हो ? खडे होकर देख लो' ऐसा कहता हुआ आया और कुमार अभिमन्यु ने उसे सेना सहित समाप्त कर दिया । उसके सैनिक मरने ही के लिए गये और अभिमन्यु ने उनको एक न छोडकर मार डाला । तब धृतराष्ट्रपुत्र दुर्योधन चिल्लाता हुआ आया और अभिमन्यु ने तीक्ष्ण शरो की वर्षा की । तब पीड़ित होकर दुर्योधन अलग हो गया । औरो से बोला— 'जल्दी

अप्पोळ् तिरिञ्ञतु कर्ण्णनवनोटु
कॊल्पोटट्टुत्तु पोर्चॆय्तानभिमन्यु । ७८
विल्लुं कुटयुं कॊटियुं कुतिरयुं
चॊल्लिक्कॊण्टॆय्तु मुऱिच्चानतुनेरं । ७९
ओटिनान् पेटियोटाकुलाल् कर्ण्णनु-
मोटातॆ निल्लुनिल्लॆन्नभिमन्युवु । ८०
आलिलपोलॆ विऱच्चरिवाहिनी
चालत्तिरिच्चु नटन्नानतुनेरं । ८१
शङ्करन्तन्टे वरप्रसादत्तिनाल्
शङ्कूटातयट्टुत्तान् जयद्रथन् । ८२
पण्टु वनत्तिङ्कल् निन्नु पाञ्चालियॆ-
क्कॊण्टुपोवान्तुनिञ्ञोरु जयद्रथन् । ८३
मण्टुन्ननेरत्तु मारुतनन्दनन्
मण्टियणञ्ञु पिटिच्चवन्तन्नुटॆ ८४
कण्ठं मुऱिप्पान् तुटङ्ङियनेरत्तु
कण्टुनिन्नोरु धर्म्मात्मजन्चॊल्लिनाल् ८५
कॊल्लातॆ नाणंकॆटुत्तयच्चानति-
न्नल्ललपूण्टाशु जयद्रथन् पार्व्वती- ८६
वल्लभन्तन्नॆत्तपस्सुचॆय्तानवन्
नल्ल वरङ्ङळ् कॊटुत्तानतुकालं ८७

तब कर्ण उसकी ओर बढा और अभिमन्यु उससे सोल्लास लडा। उसका धनुष, छत्री, झण्डा और घोडा सब बाण से नष्ट किया गया। व्याकुल होकर डरके मारे कर्ण भागा पर अभिमन्यु ने कहा— 'भागो मत ! ठहरो ! ठहरो !' पीपल के पत्ते के समान काँपता हुआ अपनी सेना को घुमाकर वह (कर्ण) चला गया। ७५-८१ उस समय जयद्रथ, जिसको शिवजी का वरप्रसाद मिला था, निश्शङ्क निकट पहुँचा। बहुत पहले जयद्रथ ने पाञ्चाली को वन से छीन लेजाने की कोशिश की थी। जब भाग रहा था तब भीम ने उसे दौडकर पकडा था और उसकी गरदन काटनेही वाला था जब देखते हुए युधिष्ठिर के कहने पर उसका वध न करके केवल अपमान करके छोड दिया था। इससे दु खित होकर तुरन्त ही जयद्रथ ने पार्वतीवल्लभ (शिव) की तपस्या की ! तब शिवजी ने अच्छे-अच्छे वर दिये। (जैसे) धानुष्क अर्जुन को छोड़कर और सबको तुम

चोन्नानतुकण्टभिमन्यु कोपिच्चु
नन्नायि कण्टतु निल्लुनिल्लिन्निनि । १०९
निन्नुटे तातन्टे मुन्निलिट्टिन्नु ञान्
निन्ने यमपुरत्तिन्नयच्चीटुवन् । ११०
ॲन्नवारे दुरियोधनपुत्रनु-
मिन्द्रात्मजसुतन्तन्नेयेय्तीटिनान् । १११
चोन्नवण्णंतन्ने धार्त्तराष्ट्रन्मुन्निल्
कोन्नुवीळ्त्तीटिनान् लक्षणन्तन्नेयु । ११२
चत्तु मनस्सु दुरियोधनन्तनि-
क्केत्रयुमत्तल्पूण्टानतु काण्कयाल् । ११३
अर्ण्णवपोलेयलरियभिमन्यु
तिण्णं पोरुतङ्ङ्टुक्कुन्नतुनेर ११४
कण्णिलकप्पेट्ट वैरिकळेयेल्लां
कण्णिमय्क्कुन्नतिन्मुन्नेयोटुक्किनान् । ११५
कर्ण्णन् कृपर् कृतवर्म्मा वृहल्वलन्
धन्वियां द्रोणरुं पुत्रनुमेन्निवर् ११६
आरु महारथन्मारुमोरुमिच्चु
वीरोटटुत्तु पोरुतारतुनेरं । ११७
ॲल्लावरोटुं तटुत्तु पोर्चेय्तुटन्
विल्लाळिवीरन् वृहल्वलनेक्कोन्नान् । ११८

क्रुद्ध हुआ और वोला—'अच्छा हुआ कि तुम दिखाई दिये। अव ठहरो। आज में तुमको तुम्हारे पिता के सामने ही यमपुरी भेज दूंगा'। ऐसा कहने पर दुर्योधनपुत्र ने इन्द्रात्मजपुत्र (अभिमन्यु) पर तीर चलाया। तव अपने कहने के अनुसार अभिमन्यु ने दुर्योधन के सामने ही लक्षण को मार गिराया। दुर्योधन का चित्त मर गया, उसे देखकर अत्यन्त दुःखित हुआ। समुद्र के समान गरजता हुआ अभिमन्यु तुरन्त लडता हुआ आया और जिन-जिन शत्रुओ को उसने देखा सवको एक ही निमेप मे समाप्त कर दिया। १०९-११५ कर्ण, कृप, कृतवर्म्मा, वृहद्वल, धानुष्कवर द्रोण, उनका पुत्र, ये छ. महारथी मिलकर जल्दी निकट पहुंचे और लडे। (अभिमन्यु ने) सव का सामना करते हुए युद्ध किया और धनुर्धरो में श्रेष्ठ वृहद्वल का वध किया। अवशिष्ट पाँच वहुत विपण्ण हुए और हा! शिव! शिव! कहते हुए अलग हुए।

धार्त्तराष्ट्रन् दुरियोधनन् तानट्टु-
त्तार्त्तु पोर्च्चेय्तितु पार्थात्मजन्तानुं । ९८
कूर्त्तुमूर्त्तुळ्ळ शरङ्ङळ् तूकीटिना-
नार्त्तनायोट्टकन्नान् दुरियोधनन् । ९९
मट्टुळ्ळवरोट्टु चोन्नान् तेरुतेरे
तेट्टेन्निवने वधिक्केन्नु केळ्क्कयाल् १००
उटबन्धुक्कळायुळ्ळ तेरालिकळ्
चुट्टुं चुळन्नु पोर्च्चेय्तुतुटङ्ङिनार् । १०१
अटमिल्लातोळमुळ्ळ शस्त्रङ्ङळु
पट्लरोन्निच्चु तूकुन्नतु कण्टु १०२
कौन्तेयसूनु सुभद्रात्मजन्तानुं
गान्धर्व्वमस्त्रमयच्चानतुनेरं । १०३
तन्मेय्यिलोन्नुमेलाते चमञ्ञतु
सम्मानिच्चारतु कण्टिट्टु काणिकळ् । १०४
नोक्किय नोक्किय दिक्किलेल्लाटवुं
नीक्कमोळिञ्ञभिमन्युविनेक्कण्टु । १०५
वैरिकळ् विस्मयप्पेट्टकन्नीटिनार्
वैरं कलर्न्न सुभद्रात्मजन्तानुं १०६
नन्नायुणङ्ङिवरण्ट वनंतन्निल्
चेन्नुटनग्नि पिटिपेट्टतुपोले १०७
कोन्नुकोन्नोक्कयोट्टुक्कुन्नतु कण्टु
चेन्नु सुयोधनपुत्रनां लक्षणन् । १०८

इसका वध करो'। इस आज्ञा को सुनने के कारण उनके निकट के वन्धु रथियो ने उसको घेरकर उस पर तीर चलाये। ९५-१०१ कौन्तेयसूनु सुभद्रात्मज (अभिमन्यु) ने जव देखा कि शत्रु सव मिलकर उस पर निस्सीम सख्या में शस्त्र छोड़ रहे है तव गान्धर्वास्त्र का प्रयोग किया। उसके फलस्वरूप शत्रुओ के शस्त्र उसके शरीर पर न लगे। यह देखकर प्रेक्षको ने उसको साधुवाद दिया। दिशाओं मे जहाँ भी देखो वहाँ निस्सन्देह अभिमन्यु दिखाई दिया। शत्रु आश्चर्यचकित होकर रह गये। वैर भरे हुए सुभद्रात्मज (अभिमन्यु) ने सवको मार-मार कर समाप्त कर दिया, मानो बिलकुल सूखे वन मे आग लग गयी हो। वह देखकर दुर्योधन का पुत्र लक्षण वहाँ पहुँचा। १०२-१०८ उसको देख अभिमन्यु

नेरोटिवनॆप्पोरुतु जयिप्पति-
नारुं करुतायक विल्लु नी खण्डिक्किल् १३०
अर्ज्जुननन्दननॆक्कॊलचॆय्वति-
निज्जनत्तिन्नु पणियिल्ल निर्ण्णय । १३१
दुर्ज्जनधर्म्ममितॆन्नु वरु नम्मॆ-
स्सज्जनं निन्दिक्कुमिल्लॊरु सशय । १३२
सज्जचापायुधन्मार् निजकीर्त्तिकॊ-
ण्टर्ज्जुनवर्ण्णमाक्केणं जगत्त्रयं । १३३
दिग्जयं चॆय्किलुमाशु महारणे
निर्ज्जरलोकं गमिक्किलुमारुम १३४
वर्ज्जनकार्यङ्ङळ् चॆय्यातिरिक्कण
गर्ज्जनंचॆय्वोर् दुपिच्चतुमूलमाय् । १३५
कर्ण्णनु धर्म्ममव्वण्णमोरोतर
वर्ण्णिच्चु चॊन्नताकर्ण्य गुरुवरन् १३६
वर्ण्णधर्म्मक्रिय निर्ण्णय पार्त्तुका-
रुण्यनिधिमत कण्टु चॊल्लीटिनान् १३७
ऒन्नालुमिन्निनि प्राणनॆक्काप्पति-
न्निन्नितु चॆय्कॆन्नु केट्टॊरु कर्ण्णनु १३८
पिन्नूटॆ चॆन्नॊळियन्पॆय्तु चापवुं
खण्डिच्चितश्वङ्ङळ् कॊन्निताचार्यनु । १३९

आचार्य ने अङ्गेश्वर (कर्ण) से कहा— 'तुरन्त तुम वञ्चना करके उसका धनुष काट डालो। १२३-१२९ सीधे लडकर इसको जीतना कोई भी न कर सकता। अगर तुम धनुप काटोगे तो अर्जुननन्दन का वध करने मे मुझे निस्सन्देह कोई दिक्कत न पडेगी। हाँ! कहा जायगा कि यह दुर्जनो का धर्म है और इसमे कोई सन्देह नही कि सज्जन हमारी निन्दा करेगे। सज्ज धनुपवालो को चाहिए कि वे अपनी कीर्ति से सारे जगत् को शुक्लवर्ण वना दे। दिग्विजय किया जाय अथवा रणभूमि मे प्राण देकर कोई स्वर्ग चला जाय, परन्तु किसी को भी वर्जित कार्य न करना चाहिये, क्योकि गर्जन करनेवालो (महापुरुषो) ने उसकी निन्दा की है। कर्ण का इस प्रकार का विविध धर्मो का वर्णन सुनकर गुरुवर ने वर्णधर्म को ध्यान मे रखते हुए कारुण्यनिधि का मत देखकर इस प्रकार कहा। १३०-१३७ (धर्म के विरुद्ध होने पर भी) प्राणरक्षा के लिए अवश्य कर्तव्य काम को गुरुमुख से सुनकर कर्ण ने पीछे-पीछे जाकर एक

ऐवरुं पिन्नें विषण्णरायाकुला-
लय्यो ! शिवशिवयेन्नकन्नीटिनार् । ११९
पार्थतनयनु भास्करपुत्रनु
पेर्त्तुमट्टुत्तु पोरुतार् भयङ्करं । १२०
अन्पुकळ्कोण्टुकोण्टगं पिळक्कयाल्
चेन्परत्तिप्पूवुपोले शरीरवु १२१
वन्पोटु चोरयाल् मूटीतिरुवरु-
मुन्परुं कण्टु तेळिञ्ञितायोधन । १२२
कर्ण्णनुटे पटनायकन्मारुटन्
चेन्नु पोरुतानरुवरेयुमवन् १२३
कोन्नानतु कण्टटुत्तितु मागधन्
कोन्नानवनेयुमर्ज्जुननन्दनन् । १२४
इण्टल् मुळुत्तु कण्टरिवर्ग्गवुं
मण्टिनार् पेटिच्चोरुत्तरोळियाते । १२५
वन्चतियुळ्ळ शकुनिक्कनुजन्मा-
रञ्चुपेर् तुञ्चिनारञ्चियोटु विधौ । १२६
कर्ण्णसुयोधनद्रोणभोजादिकळ्
कण्णुनीर्वार्त्तुटन् तम्मिल् नोक्कीटिनार् । १२७
अप्पोळटुत्तभिमन्यु तेर्वीथियि-
लुळ्प्पुक्कुकोण्टु कोन्नोक्कयोटुक्किनान् । १२८
आचार्यनङ्गेश्वरनोटु चोल्लिना-
नाशु नी विल्लु चतिच्चु मुरिक्कण । १२९

अभिमन्यु और कर्ण फिर एक दूसरे के निकट पहुँचकर आपस मे भयङ्कर रूप से लडे। वाणो के वार-बार लगने से शरीर कट गये और रक्त से लिप्त हो जाने के कारण, दोनो के शरीर जवाकुसुम के समान हो गये। देवगण युद्ध को देखकर प्रसन्न हुए। ११६-१२२ अर्जुनपुत्र ने जाकर कर्ण के छहो सेनापतियो से युद्धकर के उनका वध किया। यह देखकर मागध निकट आया और वह भी मारा गया। कठिनाइयो को वढती देख एक न छोड़कर सव भागे। बड़े वञ्चक शकुनि के पाँच छोटे भाई हटे, मानो लज्जित होकर भाग रहे है। कर्ण, सुयोधन, द्रोण और भोज आँसू गिराते हुए एक दूसरे को देखने लगे। तव अभिमन्यु ने निकट पहुँचकर रथों की सड़क पर घुसकर सव को समाप्त कर दिया। तब

तच्चु पोँटिच्चु तकर्त्तु रथङ्ङळु-
मच्युतन्तन्टे मरुमकनायवन् । १५०
गान्धारनेँत्तच्चु कोँन्नोँटुक्कीटिनान्
तान्तान् तनिक्कोँत्त दिक्किनु मण्टिनान् । १५१
दुश्शासनसुतनाय भरतनुं
विश्वैकवीरनोटेँय्तटुत्तीटिनान् । १५२
मारिनेराय शरङ्ङळ् वरुन्नव
नेरे गदकोँण्टु तट्टित्तटुत्तवन् । १५३
पाञ्ञणयुन्नवन्तन्नुटे तेरुम-
ङ्ङाञ्ञुपिटिच्चु गदकोँण्टटिच्चवन् । १५४
ओँक्कत्तकर्त्तु पोँटिच्चान् भरतनु-
मुळ्क्करुत्तोटु कैक्कोँण्टानोँरु गद । १५५
तङ्ङळिल् पिन्नेँगदकोँण्टु चेँय्तपो-
रिङ्ङनेँयेँन्नु परवान् पणि पणि । १५६
पार परप्पिल् परयुन्नतेँन्तिनु
पोरिल् मरिच्चारिरुवर् कुमाररुं । १५७
हा हा ! शिवशिवायेँन्नु महाजन
हा हा ! हरि हरियेँन्नुरच्चीटिनार् । १५८
शूरनायुळ्ळ कुमारनभिमन्यु
पोरिल् मरिच्चतु केट्टु युधिष्ठिरन् १५९

उसको तोड डाला। तदनन्तर अभिमन्यु ने एक गदा लेकर हाथियो, घोड़ों आदियो को मार डाला। अच्युत के भाजे ने रथो को मार पीस डाला। १४५-१५० गान्धार को मारकर समाप्त कर दिया। हर एक अपनी-अपनी दिशा को भाग गया। दुश्शासन का पुत्र भरत विश्वैकवीर अभिमन्यु के पास वाण छोडता हुआ पहुँचा। वर्षा के समान आनेवाले शरो को सीधे गदा से रोक लिया। भागनेवाले के रथ को आगे वढ़कर पकड लिया और गदा से मार कर समाप्त कर दिया। तव भरत ने भीतरी शक्ति के साथ एक गदा हाथ मे लेली। तव उन दोनो का आपस में जो युद्ध हुआ उसका वर्णन करना वहुत कठिन काम है। १५१-१५६ विस्तर से क्यो कहा जाय ? वस ! इतना ही है कि दोनो कुमारो का युद्ध मे निधन हुआ। जनता ने हा हा ! शिव शिव ! हा हा हरि हरि ! ऐसा विलाप किया। शूर कुमार अभिमन्यु के निधन की वार्ता सुनकर

सूतनेवकोन्नु कृपरुमतुनेर-
मादितेयाधिपपुत्रतनयनु १४०
वाळुं परिचयु कैक्कोण्टतुनेरं
चीळेन्नु पौङ्ङिनानाकाशवीथियिल् । १४१
वेट्टुकळ्कोण्टतुनेरमरिकळ्क्कु
तट्टुकेटुण्टायतु पऽवान् पणि । १४२
मेल्पट्टु नोक्किनारेन्तुगतियेन्नु
पेप्पेट्टु निन्नितु कौरवसैन्यवुं । १४३
वाळुं परिचयुमेय्तु खण्डिच्चितु
वाणङ्ङळ्कोण्टु गुरुवुमंगेशनुं । १४४
पार्त्थात्मजन् पटक्कूट्टत्तिलन्नेर-
मार्त्तट्टुत्तीटिनानायुधकूटातें । १४५
शक्रात्मजसुतन् विक्रम कैक्कोण्टु
चक्रवुं ध्यानिच्चटक्कुन्नतुनेर । १४६
चक्रायुधन्तन्नुपदेशमायोरु
चक्र तिरिञ्ञटुक्कुन्नतु काणायि । १४७
वित्रस्तरायरिवर्गमकन्नपो-
तस्त्रज्ञनाय गुरुवेय्तु खण्डिच्चान् । १४८
पिन्नेयोरु गद कैक्कोण्टभिमन्यु
कोन्नान् गजतुरगादिकळ्तम्मेयुं । १४९

छिपे वाण से धनुप को काट डाला और आचार्य ने घोडों को नष्ट कर दिया। उसी समय कृपाचार्य ने सूत (सारथि) का वध किया। तव आदितेयाधिपपुत्रतनय (अभिमन्यु) तलवार और चर्म लेकर झट से आकाश मे उठा। उसके तलवार से शत्रुओ पर जो आघात हुए उनसे हुई हानि का वर्णन करना कठिन है। क्या करना है यह न जानकर सव आकाश देखने लगे और कौरवो की सेना भयभीत होकर निश्चल हो गयी। गुरु और अंगेश (कर्ण) ने अपने वाणो से तलवार और चर्म को तोड़ डाला। १३८-१४४ तव अभिमन्यु निःशस्त्र होकर सिंहनाद करता हुआ शत्रुसेना के वीच घुस गया। केवल विक्रम का आश्रय लिए और चक्र का ध्यान करता हुआ अभिमन्यु आगे वढा। तव चक्रायुध (कृष्ण) के उपदेश के रूप मे एक चक्र घूमता हुआ आता दिखाई दिया। जव वित्रस्त होकर अरिवर्ग हटने लगा तव अस्त्रज्ञ गुरु ने अपने वाण से

सृञ्जयोपाख्यानं

पण्टु महीपतियाकिय सृञ्जय-
नुण्टायितु सुतनेत्रयुमादराल् १
नारदन्तन्टे वरप्रसादत्तिनाल्
चारुकुमारनायुळ्ळवन्तन्नुटे २
मूत्रपुरीषङ्ङळ्पोलु कनकमा-
यास्थकलर्न्नु मरुवुन्नतुकाल । ३
दुष्टर् वधिच्चारटवियिल्निन्नति-
कष्टं ! महीपतिक्कुण्टायि दु.खवु । ४
सृञ्जयन्तन्नुटे शोक कळवति-
नञ्जसा नारदन्तानुमेळुन्नळ्ळि । ५
केळ्क्क महीपते ! दु.खं कळक नी
चाक्किल्लयातवरारुमिल्लोर्क्क नी । ६
भोष्कल्ल धातावु कल्पिच्च मृत्युविन्
पोक्कलकप्पेटुमेवनु मन्नवा । ७
पण्टु पलगुणमुण्टाय मन्नव-
रुण्टायितु पतिनारुपेरूळ्ळियिल् ८
अन्तकन्तन्नेयु वेल्लुमवर्कळु-
मन्तरमेन्ये मरिच्चाररिक नी । ९
मुन्पिल् मरुत्तन् सुहोत्रनुमंगनु
वन्पनौशीनरन् रामन्तिरुवटि १०

सृञ्जय का उपाख्यान ।

पूर्वकाल मे राजा सृञ्जय का, आदरणीय नादरजी के वरप्रसाद से, एक पुत्र हुआ । उस चारु कुमार के मूत्र और पुरीप को भी आस्था के साथ स्वर्ण के समान राजा देखता था । दुष्टो ने उस पुत्र का जङ्गल मे वध किया और, हा कष्ट ! राजा को वडा दु ख हुआ । राजा का दु ख दूर करने के लिए तुरन्त ही नारदजी वहाँ पहुँचे । हे राजन् ! सुनो ! दु ख छोडो ! याद रखो कि कोई भी मरण से नही वच सकता है । १-६ मै झूठ नही कहता हूँ, धाता की कल्पित मृत्यु के वश मे हर एक प्राणी आ ही जायेगा । पूर्वकाल मे पृथ्वी मे अनेक गुणवाले सोलह राजा थे जो यमराज को भी मार सकते थे । पर वे भी, जानलो, विना किसी भेद के, मर गये । पहला मरुत्त, फिर सुहोत्र, अग, वडा औशीनर, भगवान्

पारिल् मरामर वीणकणक्किनें
पारमळ्ळूपूण्टु मोहिच्चु वीणुटन् । १६०
पिन्नेयुणर्न्नु विलाप तुटङ्ङिना-
नुण्णी ! चतिच्चो कुमारा ! मनोहरा ! १६१
अन्नुटे चोल् केट्टु पोयि मरिच्चोरु-
निन्ने आनेन्निनिक्काणुन्नु नन्दन ! १६२
अर्ज्जुननोटुं मुकुन्दनोटुं पुन-
रिज्जनमेन्तु पऱयुन्नतीश्वरा ! १६३
राज्यवुं वेण्टा मति मति युद्धवुं
पूज्यनामीशनेस्सेविक्क वेण्टतुं । १६४
इत्थं पऱञ्ञु करयुन्न धर्म्मजन्-
चित्तशोकं कळञ्ञीटुवानाय्क्कोण्टु १६५
सत्यवतीसुतनाय मुनीश्वरन्
सत्यव्रतनुटे मुन्पिलेळ्ळुन्नळ्ळि । १६६
धर्म्मजनाचारवु चेय्तु निन्नितु
तन्मनोदुःखं कळवान् मुनीश्वर- १६७
नध्यात्मवाक्कुकळ् चोन्नोरनन्तरं
चित्त तेळिवानितिहासवु चोन्नान् । १६८

युधिष्ठिर दु.खित और बेहोश होकर गिरा मानो एक बड़ा सालवृक्ष गिरा हो। फिर जगकर विलाप करने लगा— बेटा ! हे कुमार ! हे मनोहर ! तुमने क्या धोखा दिया है ? बेटा ! मेरे कहने पर तुम गये और मरे ! अब मै तुम्हे कब फिर देख सकूँगा ? १५७-१६२ हे ईश्वर ! मैं अब अजुन और मुकुन्द को क्या जवाब दूँगा ? मुझे कोई राज्य नही चाहिये। बस, अब युद्ध भी समाप्त हो। अब इतना ही चाहिये कि हम पूज्य भगवान् की सेवा करे। इस प्रकार रोता हुआ युधिष्ठिर अपना दु ख दूर करने के लिए सत्यवती का पुत्र मुनीश्वर सत्यव्रत के पास पहुँचा और वन्दना करके खडा रहा। उसके मन का दु.ख दूर करने के लिए मुनीश्वर ने अध्यात्म की बाते की, तदनन्तर चित्त की प्रसन्नता के लिए इतिहास भी सुनाया। १६३-१६८

अॆल्लामऱिञ्ञिरिक्कुन्न मल्लारियुं
मॆल्लवे चॊल्लिनानल्ललोटु तदा २२
नाशङ्ङळुण्टां रणत्तिङ्कलॆङ्किलु
नाशं नृपनेतुमिल्लॆन्नु निर्ण्णय । २३
इत्थमन्योन्यं पऱञ्ञु विषादिच्चु
सत्वरं कैनिल पुक्कोरनन्तर । २४

अर्ज्जुनप्रतिज्ञयु जयद्रथवधवुं

वृत्रारिपुत्रनु पुत्रन् मरिच्चॊरु-
वृत्तान्तमत्याकुलत्तोटु केट्टप्पोळ् १
उळ्क्कान्पिलुण्टाय दु:ख पऱवति-
नित्रिलोकत्तिङ्कलार्क्कुमरुतॆटो । २
मोहिच्चु भूमियिल् वीणु किरीटियु
मोहैकनाशननाकिय कृष्णनुं ३
स्नेहपरवशनायवनुत्तनुटॆ
देहमॆट्टत्तु मुऱुकॆत्तळुकिनान् । ४
केळुन्नितु चिल वन्धुक्कळाकुलाल्
वीळुन्नितु चिलरोटुन्नितु चिलर् । ५
तङ्ङळत्ताडिच्चु मोहिच्चितु चिल-
रिङ्ङनॆ सर्व्वरुं केळुन्ततुनेरं । ६

बहुत बडा नाश हो गया है" तब सब जाननेवाले मल्लारि (कृष्ण) ने धीरे-धीरे दु:ख के साथ कहा— युद्ध मे नाश तो होगा ही परन्तु निस्सन्देह राजा का कोई नाश न हुआ। इस प्रकार आपस मे कहते हुए दु.खित हुए और तुरन्त अपने तबू चले गये। २०-२४

अर्जुन की प्रतिज्ञा और जयद्रथवध।

जब वृत्रारिपुत्र (अर्जुन) ने अपने पुत्र के निधन की बात सुनी तब उसके चित्त मे जो दु ख पैदा हुआ उसका वर्णन तीनो लोको मे कोई नही कर सकता है। किरीटी (अर्जुन) बेहोश होकर पृथ्वी पर गिर गया। मोह का नाश करनेवाले कृष्ण ने स्नेह के वश मे आकर उसके (अभिमन्यु के) शरीर को गाढ़ आलिगन किया। कुछ बन्धु दु.ख से रोने लगे। कुछ गिरे और कुछ भागने लगे। अपनी-अपनी छाती पीटकर कुछ लोग

नल्ल भगीरथन्तानु दिलीपनु
मान्धातावोट्टु ययाति मुचुकुन्दन् ११
अंबरीपन् शशविन्दुमहीपति
रन्तिदेवन् भरतन् पृथु भार्ग्गव- १२
नन्तमिल्लात पुकळ्ुळ्ळ मन्नव-
रेन्तहो चेय्ततेन्नोक्कँटो सृञ्जय ! १३
नारदनेवं परञ्ञु मरञ्ञपो-
तारी महीपतितन्नुटे तापवु । १४
नीयु कळकळ्ल् धर्म्मजा ! निर्म्मल !
नीयऱियातवयिल्लेन्नु निर्ण्णय । १५
अँन्नरुळ्चेय्तु मरञ्ञु महामुनि
मन्ननु शोकवुमोट्टु कुरञ्ञुते । १६
देवकीदेवीतिरुमकन्तानुमाय्
देवराजात्मजन् वैरिकळे वेन्नु । १७
वेगेन सायाह्ननेरत्तुळऱिनान्
पोकेन्तु चोल्लित्तिरिच्चोरु नेरत्तु । १८
कण्टवर् कण्टवर् मण्टुन्नतु कण्टु
कण्ट शकुनप्पिळकळतु कण्टु १९
इण्टलकतारिलुण्टायतुकोण्टु
कोण्टल्नेर्वर्ण्णनोटिङ्ङने चोल्लिनान् २०
अङ्ङु वलियोरुनाशं पिणञ्ञितु
मंगलमूर्त्ते ! मधुरिपो ! माधव ! २१

रामचन्द्र, अबरीष, राजा शशबिंदु, रन्तिदेव, भरत, पृथु, भार्गव, इन निस्सीम यशवाले राजाओ ने हे सञ्जय, क्या क्या काम किये है, याद करो। ७-१३ जब इस प्रकार कहकर नारदजी अन्तर्धान हुए तब राजा का ताप कुछ ठण्डा हुआ। तुम भी अपना दु ख छोडो हे निर्मल युधिष्ठिर! निस्सन्देह कोई भी बात नही है जो तुम नही जानते हो। ऐसा कहकर महामुनि (व्यास) चले गये और राजा का शोक कुछ कम हुआ। देवकीदेवी के पूज्य पुत्र के साथ अर्जुन ने शत्रुओ को मारा। और शाम को कहा 'अब हम जल्दी चले'। जिसे भी देखा उसका भागना देखकर विविध दुश्शकुन देखकर और मन मे दु ख पैदा होने के कारण श्रीकृष्ण से इस प्रकार कहा— "हे मगलमूर्त्ते ! हे मधुरिपु ! हे माधव ! एक

निन्नोटुतन्ने ञान् चोन्नोरुपदेश-
मिन्नु जलरेखयायितो फल्गुन ? १७
जातनायाल् मृतनामवन् जातना-
मिङ्ङने जन्तुधर्म्म पुरा निर्णय । १८
जीर्णवस्त्रङ्ङळुपेक्षिच्चु मानवर्
पूर्णशोभङ्ङळां वस्त्रङ्ङळ् कौळ्ळुवोऱ । १९
जीर्णदेहं कळञ्ञङ्ङने देहिकळ्-
पूर्णशोभङ्ङळां देहङ्ङळेक्कोळ्ळु । २०
राजधर्म्मङ्ङळ् निरूपिक्किलिन्नति-
व्याजेन पङ्कजव्यूहत्तिलायोरु २१
बालनेयञ्चारुपेर्कूटोरुमिच्चु
कालपुरत्तिनयप्पानवकाशं । २२
अन्तकवैरिवरप्रसादत्तिनाल्
सिन्धुपतिया नृपनल्लो कारणं । २३
पेण्णुङ्ङळेप्पोले दुःखिच्चिरिक्काते
तिण्णमटुत्तु जयद्रथन्तन्नुटे २४
कण्ठं मुऱिप्पतु तक्कमिनियेन्नु ।
कोण्टल्नेर्वर्णनरुळ्चेय्त कारण २५
चारुनयनङ्ङळ् चेङ्ङिङमऱिञ्ञितु
घोरं पुरिक ञेरिञ्ञु वळञ्ञितु । २६
पारं विऱच्चुचमञ्ञु तिरुवुटल्
शूरनायोरु किरीटिकिरीटवुं २७

दिया था वह हे फल्गुन ! क्या सब जलरेखा हो गयी है ? जो पैदा होता है वह मरता है, जो मरता है वह फिर जन्म लेता है, निस्सन्देह जन्तुओ का यह शाश्वत धर्म है । मानव अपने जीर्ण वस्त्रो को त्यागकर सम्पूर्ण शोभावाले देह अपनाते है । अगर राजधर्म ही पर विचार किया जाय तो धोखे से पङ्कजव्यूह मे फँसे एक वालक को पाँच-छ व्यक्ति मिलकर यमपुरी भेज दे यह कहाँ तक उचित है ? १५-२२ अन्तकवैरि (शिव) के दिये वर के प्रसाद से इसका कारण सिन्धुपति राजा ही है । स्त्रियो के समान दुःख मे बैठे न रहकर तुरन्त निकट जाकर जयद्रथ का सिर काट डालना, यही अब कर्तव्य है ।" मेघवर्ण (कृष्ण) के इस प्रकार कहने के कारण अर्जुन के चारु नयन लाल हो गये, उसकी घोर भौहे चढी । उस

कण्णुमिळिच्चु तिरुमुखवुं नोक्कि
विण्णवर्कोन्मकन् केणुतुटङ्ङिनान्—७
अय्यो ! मकने ! कुमारा ! चतिच्चितो !
नीयेन्नेयिङ्ङनेयाक्किच्चमच्चितो ! ८
सूर्यसमान ! सुकुमार ! सुन्दर !
शूरा ! सुभद्रात्मज ! शुभमन्दिर ! ९
हा हा ! पौरुक्कुन्नतेङ्ङने निन्नुटे
देहमेन् कण्कोण्टु काणाते ञानिनि । १०
हा हा ! पौरुप्पतेन्तेन्तु ञान पैतले !
हा हा ! वृथाफलमायितेप्पेरुमे । ११
वेण्टीलेनिक्किनि युद्धवुं राज्यवुं
वेण्टील भूमियिल् वाळ्कयुमिन्नि ञान् । १२
प्राणन् कळयुन्नतुण्टेन्नु फल्गुनन्
वीणु मुरयिटुं नेरत्तु कृष्णनुं १३
मूढरेप्पोले चमयुन्नतेन्तु नी
तेटोला चापल्यमेतुमे मन्नवा ! १४
युद्धत्तिल् मुन्नोक्कि वेगालटुत्तति-
शक्तियेरीटुन्न शत्रुक्कळेक्कोन्नु १५
वीर्यपुरुषनायुळ्ळ तवात्मजन्
वीर्यस्वर्ग्ग पुक्कानेन्नरिञ्ञीटु नी । १६

वेहोश हुए। इस प्रकार जब सब दु खित हुए, तब अर्जुन ने आँख खोलकर उस प्यारे मुख को देखा और विलाप करने लगा। १-७ हा ! बेटा ! हे कुमार ! तुमने धोखा दिया ! तुमने मुझे इस हालत मे पहुँचा दिया ! हे सूर्य के तुल्य ! सुकुमार ! सुन्दर ! हे शूर ! हे सुभद्रा के पुत्र ! हे शुभमन्दिर ! हा ! तुम्हारे शरीर को अपनी आँखो से बिना देखे मै कैसे जीवन सह सकता हूँ ? हा बेटा ! मैं कैसे यह सह सकता हूँ ? हा सब कुछ व्यर्थ निकला है। अब मुझे न युद्ध चाहिये और न राज्य, अब मुझे इस पृथिवी मे कही भी नही राज करना है। पृथिवी पर लेटकर जब अर्जुन दोहरा रहा था कि मै प्राण छोड़दूँगा तब कृष्ण ने कहा "तुम क्यो मूढो की तरह हो रहे हो ? हे राजन् ? चापल्य बिलकुल छोड़ दो। ८-१४ जान लो कि वीर्यपुरुष तुम्हारे पुत्र ने युद्ध मे आगे बढ़कर अत्यन्त शक्तिशाली शत्रुओ को मारकर वीर्यस्वर्ग मे प्रवेश किया है। मैने जो तुम्हे उपदेश

इत्थं प्रतिज्ञयुंचेय्तु पार्त्थन् पितृ-
दत्तमा शखुमेट्टुत्तु विळिच्चितु । ३८
चाञ्चलयमिल्लाते देवकीपुत्रनु
पाञ्चजन्यत्ते विळिच्चरुळीटिनान् । ३९
शंखनादङ्ङळु वाद्यघोषङ्ङळु
शङ्कवेटिञ्ञुळ्ळ सिहनादङ्ङळु ४०
केट्टु कुलुङ्ङि जगत्त्रयमन्नेर
वाट्टं कळञ्ञितु पाण्डवसेनयु । ४१
पार्थिवरार्त्ततु वाद्यघोषङ्ङळु
पार्त्थन् प्रतिज्ञचेय्तानेन्न वार्त्तयु ४२
आर्त्तिवरुमारु केट्टु जयद्रथन्
चीर्त्त विषादमोटे पऱञ्ञीटिनान्— ४३
मन्नवर्मन्नवनाय सुयोधन !
कर्ण्णा ! कनिवेरुमाचार्य ! निङ्ङळु ४४
पाण्डवकैनिलतन्निले घोषङ्ङळ्
ताण्डवंपोले शिव ! शिव! केट्टीले ? ४५
उग्रना पार्त्थन् प्रतिज्ञचेय्तीटिनान्
निग्रहिच्चीटुमवनेन्ने निर्ण्णय । ४६
रक्षिप्पतिन्नु बलमिल्ल निङ्ङळ्क्कु
शक्रात्मजनोटु निल्क्करुताक्कुमे । ४७

है" । ३०-३७ ऐसी प्रतिज्ञा करने के वाद अर्जुन ने अपने पिता का दिया शख उठाकर बजाया । देवकीपुत्र ने भी बिना चाञ्चल्य के अपने पाञ्चजन्य को वजाया । शखनाद, वाद्यघोष, और निश्शङ्क किये गये सिहनाद सुनकर तीनो लोक उस समय काँपे और पाण्डवसेना ने अपना औदासीन्य त्याग दिया । राजाओ के सिहनाद, वाद्यघोष, और अर्जुन के प्रतिज्ञा करने की वार्ता सुनकर जयद्रथ घबडाया और बड़े विषाद के साथ वोला । ३८-४३ हे राजाओ के राजा सुयोधन ! कर्ण ! कारुण्यमूर्ति आचार्यजी ! आप लोगो ने भी पाण्डवो के तबू से निकलनेवाले ताण्डव के समान घोप सुने होगे ? उग्र पार्थ ने प्रतिज्ञा कर ली है, निस्सन्देह वह मेरा निग्रह करेगा । आप लोगो मे मेरी रक्षा करने की शक्ति नही है । शक्रात्मज (अर्जुन) का कौन सामना कर सकता है ? । तुरन्त कही दूर जाकर अगर हम लोग अपने को छिपा ले तो मै मौत से अपनी रक्षा

सूर्यप्रभमायेँरिञ्ञिळकी तुलो ।
निर्ज्जरनायकनन्दननाकियो- २८
रर्ज्जुनन्तन्नुटे खेदकोपङ्ङळाल्
उज्ज्वलिच्चुळ्ळोरु तेजस्सु काण्कयाल् ।
सज्ज्वरन्माराय् चमञ्ञितु लोकरुं । २९
नानाजनङ्ङळुं केळ्क्कुमार् ङ्ङने
मानमोटेवं प्रतिज्ञचेय्तीटिनान् । ३०
सत्यमितेल्लावरुं केळ्प्पिनेङ्किलेन्-
चित्ते विळङ्ङुन्न कृष्णन्तिरुवटि ३१
पोल्त्तारटियिणयाणे पोळियल्ल ।
सत्यव्रतनाकुमग्रजन्तन्नाणे ३२
नित्यनां केशवन्तन्नाणे निर्णय-
मेत्रयुं शत्रुवायुळ्ळ सुयोधन-३३
नत्यन्तमाश्रयनाय जयद्रथन्
पुत्रनेक्कोल्लुवान् कारणमाकयाल् ३४
मित्रनुदिक्कुन्नताकिलो नाळे आ-
नस्तमिक्कुन्नतिलुमुन्पेयवन्तल ३५
पत्रिकोण्टेय्तु मुरिक्कुन्नतुण्टति ।
न्नेत्ताय्किलेतुमे सशयंकूटाते ३६
गाढमायुळ्ळोरु विल्लुमायग्नियिल्-
चाटि मरिक्कुन्नतुण्टेन्नु निर्णय । ३७

का शुभ शरीर काँपने लगा, और शूर किरीटी (अर्जुन) का किरीट सूर्य के समान चमकने लगा। निर्जरनायक-नन्दन (अर्जुन) के खेद और कोप के कारण उसका तेज और उज्ज्वल दिखाई देता था। अतएव लोग ज्वरग्रस्त हो गये। २३-२९ और अर्जुन ने अभिमान के साथ ऐसी प्रतिज्ञा की कि सब लोग सुन सके। "यह सत्य है, सब लोग सुने। मेरे चित्त में विराजमान पूज्य कृष्ण के चरणयुगल की सौगध ! यह झूठ नही है। बडे भाई सत्यव्रत की कसम, नित्यकेशव की कसम, अत्यन्त शत्रु सुयोधन का बिलकुल आश्रित जयद्रथ का मेरे पुत्र के वध का कारण होने के कारण कल अगर सूर्य का उदय होगा तो उसके अस्त होने के पहले उसका सिर बाण से काट डालूँगा। अगर यह न होगा तो निस्सन्देह अपने दृढ धनुष के साथ आग मे कूदकर मर जाऊँगा, यह मेरा निर्णय

वीरा ! विशेषङ्ङळ् केट्टतिल्ले सखे !
वीरवादं पऱञ्ञीटिनार् कौरवर् । ५९
नानामहारथन्मारुमायोन्निच्चु
नानाप्रकारवु नाळे युद्धत्तिङ्कल् ६०
कौन्तेयनाकिय पार्त्थनु कोल्लुवान्
सैन्धवन्तन्नेयय्क्कुन्नतिल्लेन्नु ६१
इत्थं प्रतिज्ञचेय्तारवर् निन्नुटे
सत्यवुं पार कटुत्तेटो फल्गुन ! ६२
साधिच्चुकोळ्वान् पेरिकेप्पाणियुण्टु
बाधिच्चुकूटुमो वन्पुळ्ळरिकळे ? । ६३
मल्लारि मेल्लवे चोल्लिय चोल्लुके-
ट्टल्ललोटु तदा चोल्लिनान् फल्गुनन्— ६४
अन्परिलन्पने ! वन्परिल् मुन्पने !
उन्पर्कोने ! मम तन्पुराने ! हरे ! ६५
निन् तिरुवुळ्ळमोरन्तरमेन्निये
सन्ततमन्धनामेन्निलुण्टाकया- ६६
लन्तकवैरिपुरान्तकन्तान् परि-
पन्थियेन्नाकिलु ञान् जयिच्चीटुवन् । ६७
व्याकुलमिल्लतु निल्क्क विरविनो-
टाकुलमाराय् मुऱयिट्टलच्चिटु ६८
नारीजनङ्ङळ्तन् खेदमटक्कुक
नारायणा ! तव वाक्यामृतत्तिनाल् । ६९

समाचार सुना है ? कौरवो ने वीरवाद किया है । ५२-५९ अनेक महारथो ने मिलकर प्रतिज्ञा की है कि कल युद्ध मे कौन्तेय पार्थ से लडने के लिए सैन्धव (जयद्रथ) को अकेला नही भेजेगे । इस लिए, हे फल्गुन, अव तुम्हारी प्रतिज्ञा कुछ कठिन हो गयी है । उसकी पूर्ति करने मे प्रयत्न वहुत करना पड़ेगा, शक्तिशाली शत्रुओ को कैसे रोके ? मल्लारि (कृष्ण) की कही यह वात सुनकर अर्जुन ने दु ख के साथ कहा । हे ! नेताओ के नेता ! प्रेम करनेवालो मे श्रेष्ठ ! हे ! मेरे प्रभु ! हरे ! सदैव अन्धे मुझ पर तुम्हारी निरन्तर कृपा होने के कारण अन्तकवैरि (यम का शत्रु) पुरान्तक (शिव) ही अगर बाधक हो जायँ तव भी मै जीत जाऊँगा । ६०-६७ मैं घवड़ाता नही हूँ, तनिक ठहरिये । हे नारायण ! व्याकुल होकर

वेगेन दूरत्तु पोयौळिच्चाकिलु
चाकातें कात्तुकोंण्टीटुवनेंन्नें ञान् । ४८
अेंन्नतु केट्टु सुयोधनन् चोंल्लिना-
निन्नुमोंरुत्तर् केळ्क्केंप्परञ्ञीटोंला । ४९
काननं पूकेंन्नकारियमिन्नभि-
मानमिल्लातोंरु दुर्व्वलन्मारुटें ५०
पक्षमितेंन्नुचेंवि केळ्क्कें नी चोंल्लुकि-
लोक्कवक्कळिञ्ञितु मेलिलें युद्धवुं । ५१
विश्वैकवीरनाय् मेवुमाचार्यनु-
मश्वत्थामावु वृपसेननुं ञानुं ५२
कर्ण्णनुं मट्टु महारथन्मारुमाय्
निन्नें रक्षिक्कुन्नतुण्टेन्नु निर्ण्णयं । ५३
नाळेटमेतुचेंय्तुं कळिञ्चीटुवा-
नाळु ञानेंन्नरिञ्ञीटुकेंन्नानवन् । ५४
मट्टुळ्ळवर्कळुमिङ्ङनें चोंल्लिनार्
तेंट्टेन्नु कौरवसेनयुमार्त्तितु । ५५
वद्धवैरत्तोटु रण्टु परिषयुं
युद्धत्तिनाशु सन्नद्धरायीटिनार् । ५६
कौरवन्मारुटें कैनिलतन्निलें
भैरवनादवुं वार्त्तयुं केट्टथ ५७
शौरि मुरारि नरकारि कंसारि
गौरवभावमोटेवमरुळ्चेंय्तु— ५८

कर सकूँगा। यह सुनकर सुयोधन ने कहा— किसी के सामने ऐसा मत कहो। वन मे प्रवेश करने की बात अभिमानरहित दुर्वलो की ही है, अगर तुम मुझे यह सुनाओगे तो समझो कि सव समाप्त है, आगे का युद्ध भी। ४४-५१ विश्व का एक मात्र वीर आचार्यजी, अश्वत्थामा, वृषसेन, मैं, कर्ण और अन्य महारथी मिलकर तुम्हारी रक्षा करेंगे, इसमे सन्देह नही॥ जान लो कि आज सव कुछ करनेवाला मै हूँ—ऐसा उसने कहा। औरो ने भी इसी प्रकार कहा और कौरवो की सेना ने जयघोष किया। वद्धवैर के साथ दोनो पक्षो ने युद्ध के लिए तैयारी की। कौरवो के तवू से निकलता भैरवनाद और वार्ताओ को सुनकर शौरि मुरारि नरकारि कंसारि कृष्ण ने गौरव के साथ इस प्रकार कहा— हे मित्र! हे वीर!

चित्रमितोर्विकलर्निमिषंकोण्टु
चित्रमा योगेशनल्लो जगत्पति । ८०
उळ्ळिलू प्रपञ्चमेल्लामटक्कुंपुमान्
पळ्ळिवकुरुप्पुकोण्टीटिनानिट्टने । ८१
प्राणसमन् मम पार्थनुटे सत्य-
मूनंवराते काक्किण्णान् पणि गुन्नो । ८२
द्रोणादिकळभयं कोटुत्तानव-
नेणाङ्कचूडप्रसादवुमुण्टल्लो । ८३
इत्थं निनच्चु निनच्चु किटन्नकया-
लर्द्धरात्रिक्कुणर्न्नीटिनान् माधवन् । ८४
दारुकन्तन्ने विळिच्चरुळिच्चेय्तु—
घोरतिघोरमां नाळेयड्किनी । ८५
ज्ञान्तन्ने गैन्धवनून्नन्नेकोगनेन्नु-
कौन्तेयनत्यन्तं रक्षिक्कयुं वेण । ८६
वान्धवमायुळ्ळतङ्ङनेयुळ्ळन-
न्तान्तरमायेळ्ळुमात्मा धनञ्जयन् । ८७
पोन्मयमाय गरुडध्वजमुळ्ळ-
नम्मुटे तेरुमोरुमिच्चिन्निर्त्तणं ८८
निर्म्मलमायेळ्ळमायुधजालवु-
चेम्मे पिरियाते वेण्टिनक्मेटो । ८९
ओन्नुटे सेवकन्मारेयुपेक्षिक्क-
येन्नुळ्ळतोन्नुकोण्टुवरा निर्णयं । ९०

निमिष में इस योगेश, जगत्पति, भीतर सारा प्रपञ्च रखनेवाले पुरुष ने अपनी दिव्य निद्रा प्राप्त की । ७५-८१ "मेरे प्राणतुल्य अर्जुन के शपथ की पूर्ति करना कठिन काम है । द्रोण आदि ने उसको (जयद्रथ को) अभय प्रदान किया है और एणाङ्कचूड (शिवजी) का प्रसाद भी उसको प्राप्त है । ऐसा सोचते लेट रहे थे । इस लिए माधव आधी रात को जग गये । तब दारुक को बुलाकर बोले—"आज की कल अति घोर युद्ध होनेवाला है । बान्धव की बात ऐसी ही होती है और धनञ्जय तो मेरी भीतरी आत्मा है । ८२-८७ स्वर्णमय गरुडध्वजवाला मेरा रथ साथ रहे और मेरे अपने निर्मल आयुधजाल को भी अपने साथ रखने की आवश्यकता पड़ेगी । अपने सेवकों की उपेक्षा करना यह बात

अॅन्नतु केट्टु मुकुन्दन्तिरुवटि
चॅन्नु नारीजनत्तोटरुळिच्चॅय्तु— ७०
भद्रे ! सुभद्रे ! भगिनी ! करयरु-
तुत्तममार्कुलोत्तंसमामुत्तरे ! ७१
बाले ! सुशीले ! विमले ! मनोहरे !
मालेरि माळ्काय्क पाञ्चालनन्दने । ७२
वीरमाताक्कळ्धर्म्मंङ्ङळोर्त्तीटुविन्
दूरवे नीक्कुविन् चापल्यमोक्कवे । ७३
वीरन्माराय रिपुक्कळॅयुं वॅन्तु
वीर्यस्वर्ग्गंपुक्किरिक्कुं पुरुषनॅ । ७४
चिन्तिच्चुनिङ्ङळ् करञ्ञालवनति-
नन्तरं वन्नुपोमत्रे पुनरिनि । ७५
सन्तापमॊट्टु कुरच्चीटुविन् निङ्ङ-
ळॅन्तरियातवरॅप्पोलॅ केळुवान् ? । ७६
इत्थमरुळ्चॅय्तटक्कि विलापवुं
मुग्धविलोचनॅनाकिय माधवन् । ७७
वृत्रारिपुत्रनु शोकमकट्टुवान्
पुत्रनॅक्कण्टे मतियावितॅन्निट्टु ७८
वृत्रारिलोकत्तवनुमाय् चॅन्नुटन्
पुत्रनॅक्काट्टि विषादवु तीर्त्ततु । ७९

रोनेवाली स्त्रियो का अपने वाक्यामृत से खेद दूर कीजिये । यह सुनकर प्रभु मुकुन्द भीतर जाकर नारीजन से बोले । हे भद्रे ! सुभद्रे ! हे बहिन! रोओ मत ! हे उत्तमस्त्रियो के कुल का अलकार उत्तरे ! हे बाले ! हे सुशीले ! हे विमले ! हे मनोहरे ! हे पाञ्चालपुत्रि ! अतिदुःख से पीडित न हो जाओ ! वीरो की माताओ का धर्म याद करो ! जो पुरुप वीर शत्रुओ को मारकर वीर्यस्वर्ग मे प्रवेश कर चुका है । उसके सम्बन्ध मे अगर तुम लोग रोओगी तो, कहा जाता है, उसको हानि पहुँचेगी । ६८-७५ तुम लोग अपना दु.ख कम करो, अज्ञजन के समान यह क्या विलाप कर रहे हो ? इस प्रकार कहकर मुग्धविलोचन माधव ने उनके दु.ख को दवाया । अर्जुन का शोक तो पुत्र के दर्शन से ही दूर होगा, ऐसा समझकर उसके साथ वृत्रारिलोक (स्वर्ग) जाकर वहाँ पुत्र को दिखाकर विपाद को समाप्त किया । सोचो तो यह विचित्र है कि आधे-

सर्वज्ञ ! सर्व्वलोकेश ! सर्व्वात्मक !
शर्व्व ! शंभो ! महादेव ! देवेश्वर ! १०२
गगाधर ! हर ! चन्द्रक्कलाधर !
तुगजटाभार ! कारुण्यवारिधे ! १०३
भस्मविलेपना ! भर्ग्ग ! भयापह !
विस्मयानन्द ! नृत्तप्रिय! त्र्यबक ! १०४
शङ्कर ! स्थाणो ! गिरीश ! पुरहर !
चेङ्कनलूतूकुन्न फालविचोचन ! १०५
मुण्डमालाधर ! दण्डधरान्तक !
खण्डपरशो ! पशुपते ! धूर्ज्जटे ! १०६
शूलपरशुमुखायुधभीषणा !
नालुवेदर्प्पोरुळाकुन्न नाथने ! १०७
अस्थिकळ् मुत्तुकळ् नल्ल तळिरुक-
ळुत्तममायुळ्ळ पुष्पङ्ङळ् मुण्डङ्ङळ्
इत्तरं कोण्टुळ्ळ माल्यविराजित ! १०८
मृत्युञ्जय ! जय ! भीम ! जय ! जय !
मारमदहर ! काळकूटाहार ! १०९
कारणपूरुष ! वारणभञ्जन !
चारणसेवित ! सारसाक्षिप्रिय ! ११०
पाहि नमोनमो पाहि नमोनमो !
देहि वरं परमानन्द ! श्वाश्वतं । १११

पार्वतीवल्लभ ! हे सर्पवर से अलकृत ! हे सर्वज्ञ ! सर्वलोकेश ! हे सर्वात्मक ! हे शर्व ! शभो ! महादेव ! देवेश्वर ! हे गगाधर ! हर ! चन्द्रकलाधर ! हे ऊँची जटावाले ! हे कारुण्यसागर ! हे भस्मविलेपन ! हे भर्ग ! हे भय दूरकरनेवाले ! हे विस्मयानन्द ! हे नृत्तप्रिय ! हे त्र्यबक ! हे शङ्कर ! स्थाणो ! गिरीश ! पुरहर ! लाल-लाल अग्नि निकालनेवाले फाललोचन से युक्त ! हे मुण्डमालाधर ! यम के नाशक ! हे खण्डपरशो ! पशुपते ! हे धूर्जटि ! हे शूल, परशु आदि आयुधो से भीषण ! १०१-१०७ हे चारो वेदो के अर्थस्वरूप नाथ ! हड्डियाँ, मोतियाँ, अच्छे-अच्छे पल्लव, उत्तमोत्तम पुष्प, मुण्ड, इस प्रकार की वस्तुओ की मालाओ से विभूषित ! हे मृत्युंजय ! हे भीम ! तुम्हारा जय हो ! हे मदन के मद को नाशकरनेवाले ! कालकूट विष को खानेवाले ! हे कारणपुरुष ! हे वारणभञ्जन ! हे चरणो का सेवित ! हे पार्वती का प्रिय ! रक्षा करो ! नमोनम: !

इत्तर दारुकनोटरुळिच्चेय्तु
निद्रयुमोट्टु कुरञ्ञु भगवानु । ९१
तानतिघोरमाय् चेय्तोरु सत्यवुं
मानमेऱीटुन्न वैरिकळ्वीर्यवुं ९२
ताने निरूपिच्चु फल्गुनन् खेदिच्चु
मानसं माळ्किन्तळर्न्नुऱङ्ङुविधौ । ९३
विष्णुभगवान् विरिञ्चादिवन्दितन्
वृष्णिकुलोत्भवन् विश्वंभरावरन् ९४
कृष्णन्तिरुवटितन्नेयुऱक्कत्ति-
लुष्णनिश्वासशमनं वरुवण्णं । ९५
उष्णेतरांशुकुलोत्भवनाकिय-
जिष्णुवुं कण्टितु सङ्कटं तीरुवान् । ९६
शत्रुक्कळेज्जयिच्चीटुवानाशु नां
मृत्युञ्जयनाय रुद्रने वन्दिप्पान् ९७
पोकेन्नु नारायणन् नरन्तन्नोटु
वेगन कैयुं पिटिच्चरुळिच्चेय्तु । ९८
नानानगनगरग्रामराज्यङ्ङळ्
काननौघं नदीजालवुं पिन्निट्टु ९९
कैलासमाकिय शैलोपरि वन्नु
नीलकण्ठन्कळल् कूप्पि स्तुतिचेय्तान्— १००
पर्व्वतमन्दिर ! पार्व्वतीवल्लभ !
दर्व्वीकरवरभूषणभूषित ! १०१

कभी न होगी, इसमे सन्देह नही"। इस प्रकार दारुक से वोले और भगवान् की निद्रा भी कुछ कम हुई। अर्जुन तो अपने घोर शपथ का और अत्यभिमानवाले शत्रुओ के वीर्य का ध्यान करता हुआ दु खित हुआ और अन्त मे थककर सो गया। ८८-९३ तव भगवान् विष्णु, ब्रह्मा आदियों का वन्द्य वृष्णिकुल में उत्पन्न, इन्द्र का अनुज, पूज्य कृष्ण को चन्द्रवश मे पैदा हुए अर्जुन ने अपनी नीद मे दु.ख दूर करने के लिए देखा ताकि अपना उष्ण निश्वास भी शान्त हो जाय। 'शत्रुओ को जीतने के लिए हम मृत्युञ्जय रुद्र को पूजने चले' ऐसा नारायण ने नर (अर्जुन) के हाथ पकड़ते हुए कहा। अनेक पर्वत, नगर, ग्राम, राज्य, वन और नदियाँ पार करके कैलाश पर्वत पर पहुँचे और नीलकण्ठ (शिव) के चरणों पड़े और उनकी स्तुति की। ९४-१०० हे पर्वत पर रहनेवाले !

इन्नरुळीटणमेन्नुण्टु पार्त्थनु
वन्नतुमिप्पोळतिनु जगल्पते । १२२
क्केशमतु चोल्लियुळ्ळलुण्टाकाय्क
केशवफल्गुनन्मारे ! पुरैव ञान् १२३
पाशुपतास्त्र कोटुत्तेन् विजयनु
नाशमरिकळ्क्कतिनाले वन्नुपो । १२४
पोयालुमेन्नभयं कोटुत्तीटिनान्
मायापतियाय मारारि शङ्करन् । १२५
चेन्पोल्त्तळिरटि कुम्पिटुं नेरत्तु
जंभारिनन्दन् कण्टानोरत्भुत । १२६
तान् तलनाळतिभक्तिपूर्ण्टेत्तयु
शान्तनाय् तन्टे नियमविधियिङ्कल् १२७
विष्णुपदत्तिङ्कलर्च्चिचच्च पुष्पङ्ङळ्
विस्मयत्तोटु कण्टानरमौलियिल् । १२८
विष्णुवेन्नु शिवनेन्नु भुवनत्तिल्
विज्ञानिकळ् परयुन्नतोरज्ञान । १२९
कण्टवरोक्कवे रण्टेन्नु चोल्लुवोर्
कण्टवरल्लवरारुमे निर्ण्णयं । १३०
इत्थ निरूपिच्चुरच्चु किरीटियु-
मद्वैतमाकिय धामत्ते वन्दिच्चान् । १३१

इसके वदले मे सभी शत्रुओं का नाश करने के लिए आज ही आप एक दिव्यास्त्र प्रदान करे । यही पार्थ की इच्छा है । हे जगत्पते, इसी लिए हम लोग आये है । ११५-१२२ हे केशव और अर्जुन, यह वात कहते हुए आपको दुख न हो ! मैने पहले ही अर्जुन को पाशुपतास्त्र दे रखा है । उससे सभी शत्रुओ का नाश हो जायगा । अव आप लोग चले— ऐसा कहते हुए मायापति मदनशत्रु शङ्कर ने अभय प्रदान किया । (शिवजी के) लाल पल्लव के समान चरणो का प्रणाम करते समय जभारिनन्दन (अर्जन) ने एक अद्भुत वात देखी । पिछले दिन शान्त होकर वडी भक्ति के साथ अपने नियम के अनुसार जो पुष्प विष्णु के चरणो पर चढाये थे उन्हे विस्मय के साथ शिव के शीर्ष पर देखा । इस भुवन मे जो विद्वान्लोग विष्णु और शिव की वात पृथक् करते है, वह अज्ञान है । १२३-१२९ जिसे देखो वह उनको अलग-अलग वतलाता है । उनमे किसी ने भी देखा नही है, इसमे सन्देह नही । किरीटी

भूतिप्रिय ! नमो ! भूतिप्रद ! नमो !
भूतेश ! ते नमो ! भूतकर्त्ते नमो !
भूतभर्त्ते नमो भूतहर्त्ते नमो ११२
शान्ताय घोराय दान्ताय शूराय
कान्ताय रुद्राय भर्गाय शर्व्वाय ११३
दक्षान्तकाय ते रक्षाकराय ते
नित्यं नमो नमो नित्य नमो नमः । ११४
भक्तिपूण्टित्थ वणङ्ङि स्तुतिच्चोरु-
पत्माक्षफल्गुनन्मारोटु शङ्करन् ११५
भक्तप्रियन् परमेश्वरनीश्वरन्
भद्रप्रदन् परमानन्दमुळ्क्कोण्टु- ११६
मन्दस्मितंचेय्तोरिक्कले पुल्कीट्टु
चन्द्रक्कलाधरनेवमरुळ्चेय्तु— ११७
अर्द्धरात्रिक्कुतन्ने गमिच्चीटुवा-
नत्तलुण्टायतेन्तेन्नोटु चोल्लुविन् । ११८
मुग्धविलोचननन्मूलप्रकृतिक्कु
वित्ताय कृष्णनुमप्पोळरुळ्चेय्तु— ११९
अञ्चारु सेनापतिकळोरुमिच्चु
वञ्चिच्चभिमन्युवाय कुमारने- १२०
क्कोन्नानतिनु रिपुक्कळेयोक्कवे
कोन्नोटुक्कीटुवान् तक्कोरु दिव्यास्त्रु । १२१

रक्षा करो नमोनमः हे परमानन्द ! शाश्वत वर प्रदान करो ! हे भूतिप्रिय! नमो ! हे भूतिप्रद ! नम हे प्राणियो के नाथ ! तुम्हे प्रणाम हो ! हे ! प्राणियो की सृष्टि करनेवाले तुम्हे प्रणाम हो ! हे भूतो का पोषण करनेवाले ! तुम्हे प्रणाम हो । हे भूतो का सहार करनेवाले ! तुम्हे प्रणाम हो । शान्त, घोर, दान्त, शूर, कान्त, रुद्र, भर्ग, शर्व, दक्षान्तक, रक्षकर, तुम्हे नित्य प्रणाम हो, नित्य प्रणाम हो ! १०८-११४ भक्तप्रिय, परमेश्वर, ईश्वर, भद्रप्रद, चन्द्रकला धारण करनेवाले शङ्कर ने, जिसकी इस प्रकार स्तुति की गयी, कमललोचन और फल्गुन से परमानन्द अनुभव करते हुए मुस्कराकर दोनो को साथ आलिङ्गन करते हुए कहा—, क्या वात हुई कि आधी रात को दोनो चले आये, यह मुझसे कह दो। मूलप्रकृति का बीजस्वरूप मुग्धविलोचन कृष्ण ने तब कहा— पाँच छ· सेनापतियो ने मिलकर वञ्चना करके कुमार अभिमन्यु का वध किया।

वासुदेवन् जगन्मंगलन् केशवन् ।
वासवितन्नेत्तळुकियरुळ्चैय्तु— १४३
खेदिक्कवेण्टा जयं वरुं निर्णय ।
साधिक्कुमेन्नरिङ्ञ निन्नुटे सत्यवुं । १४४
अंबुजलोचन ! तुंबुरुवन्दित !
कंबुधरामृत ! स्यन्दनानन्दमे ! १४५
अंबिकावल्लभ ! सेवितशाश्वत !
बिंबफलाधर ! चन्द्रबिंबानन ! १४६
कृष्ण ! कृपानिधे ! वृष्णिकुलाधिप !
जिष्णो ! मुरारे ! मधुसूदन ! हरे ! १४७
राम ! रमावरा ! श्यामाभिराम ! मा-
राकार ! सन्मधुरूपाय ते नमः । १४८
निन् कृपयुण्टेङ्किलेन्तोरु सङ्कट
पङ्कजलोचन ! केट्टरुळ्केङ्किल् नी १४९
निद्रयिल् ञान् निन्तिरुवटितन्नोटुं
रुद्रनेक्कण्टु वरं वरिच्चीटिनेन् । १५०
त्वत्पदाब्जार्च्चितपुष्पङ्ङळोक्कयुं ।
तत् पदांभोज नमस्करिक्कुंविधौ १५१
शंभुतन् मौलियिल् कन्टु तेळिञ्ञु ञान् ।
किं परं विस्मय तम्पुराने ! हरे ! १५२

और प्रमोद के साथ युधिष्ठिर ने स्वागत सत्कार किया। और पुष्करनेत्र, वासुदेव, जगन्मगल केशव की प्रीति हुई। वासवि (अर्जुन) को छाती से लगाते हुए कहा— खेद मत करो। विजय अवश्य होगी। जान लो कि तुम्हारा शपथ सत्य निकलेगा। १३६-१४४ हे अबुजलोचन ! हे तुबुरुवन्दित ! हे कबुधरामृत ! स्यन्दनानन्द ! हे लक्ष्मीवल्लभ ! शाश्वत का सेवन करनेवाले ! बिंबफल के समान अधरवाले ! चन्द्रबिंब के समान मुखवाले ! हे कृष्ण ! हे कृष्ण ! हे कृपानिधे ! हे वृष्णिकुल के नाथ ! हे जिष्णो ! मुरारे ! मधुसूदन ! हरे ! राम ! रमावर ! श्यामाभिराम ! मदनाकार ! सन्मधुस्वरूप तुम्हे प्रणाम हो ! तुम्हारी कृपा हो तो दुःख कहाँ ? हे पङ्कजलोचन ! तनिक सुन लो ! नीद मे मैंने आप पूज्य के साथ रुद्र का दर्शन किया और वर प्राप्त किया। आप के चरणो मे जो मैंने पुष्प अर्पित किये थे उनको रुद्र के चरणों की वन्दना करते समय उनकी मौलि पर देखकर मै प्रसन्न हुआ ! हे

कृष्णनुं तानुमायिङ्ङु पोन्नीटिनान्
जिष्णुवुमप्पोळुणर्न्नुपोयी बलाल् । १३२
स्वप्नत्तिलिङ्ङने कण्टिट्टु फल्गुनन्
कलिपच्चितु जयमुण्टाय् वरुमेन्नु । १३३
कारणनाकिय नारायणन् परन्
पारमायेन्नुटे शंखनादं केट्टाल् १३४
पाराते तेरु नी कोण्टुवरिकेन्नु
दारुकनोटरुळ्चेय्तु भगवानुं । १३५
ब्राह्मे मुहूर्त्ते मुकुन्दन्तिरुवटि
साम्यमिल्लात जगत्पति माधवन् १३६
नित्यन् निरामयन् नीतिमानीश्वरन्
नित्यकर्म्मङ्ङळुं चेय्तुषय्क्कुंविधौ १३७
भक्तनां धर्म्मजन् वाळुन्न मन्दिरे
सत्वरं चित्तमोदालेळुन्नळ्ळिनान् । १३८
मंगलगीतस्तुतिकळु वाद्यवुं
शखनिनादवुं वन्पटनादवुं १३९
दानङ्ङळ् वाङ्ङि वाङ्ङि क्षमादेवक-
ळानन्दनादवुमाशीर्व्वचनवु १४०
केट्टुकेट्टङ्ङटुत्तीटिननेरत्तु
वाट्टंवरातोरु भक्तियुं मोदवुं १४१
कैक्कोण्टु सल्क्करिच्चीटिनान् धर्म्मजन् ।
पुष्करनेत्रनु प्रीतिपूण्टीटिनान् १४२

ने इस तत्त्व को अपने मन मे स्थिर कर लिया और अद्वैतधाम की वन्दना की, और कृष्ण के साथ लौटा। तब विष्णु (अर्जुन) जग भी गया। स्वप्न मे यह सब देखकर अर्जुन ने समझ लिया कि विजय होगी। कारणभूत पर नारायण ने मेरा (अर्जुन का) ऊँचा शखनाद सुनने पर 'तुम रथ लेकर आजाओ' ऐसा भगवान् ने दारुक से कहा। १३०-१३५ फिर पूज्य मुकुन्द, निरुपम जगत्पति माधव नित्य, निरामय, नीतिमान् ईश्वर ब्राह्ममुहूर्त मे अपने नित्यकर्म करके सबेरे ही भक्त युधिष्ठिर के घर चित्तप्रमोद के साथ जल्दी सिधारे। मगलगीत और स्तुतियाँ, वाद्यघोष, शखध्वनि, वडी सेना का नाद, दान ले-लेकर जानेवाले ब्राह्मणो का आनन्दनाद और आशीर्वाद सुनते हुए जब निकट पहुँचे तब अटल शक्ति

कैनिलचुट्टुमेन् ज्येष्ठनेक्कात्तुकों-
ण्टैकमत्यत्तोटु निलिपनेल्लावरु । १६३
मुट्टु मुकुन्दन् तुणयुळ्ळ आनेन्नि-
मटारुमिन्नु करुत्ताय्क पोरिनाय् । १६४
कोट्टवनाय नृपनें रक्षिक्कण-
मुटवरायवरिन्नेक्कु सर्व्वरु । १६५
तेऴिनारङ्ङनेयामेन्नु सर्व्वरु
तेरेऴिनार् नरनारायणन्मारु । १६६
देवासुरोरगसिद्धविद्याधर-
गन्धर्व्वकिन्नरकिम्पुरुपादियु १६७
यक्षरक्षोगणचारणगुह्यक-
प्रेतभूतादियुमप्सरस्त्रीकळु १६८
अंबरमार्ग्गे विमानङ्ङळेऴिनार्
तुंबुरुनारदन्मारुमुळऴिनार् । १६९
भेरिपटहशंखादिकळ्नादवु
शूरन्मारायवर्सिहनादङ्ङळु १७०
तेरुरुळ्नादं चेरुआर्णोलिकळु
वारणन्मारुटे गर्ज्जितघोपवु १७१
चारुतुरगाळिहेषारवङ्ङळु
नारदवीणामनोहरनादवु १७२
ओक्कवे पोङ्ङि मुळङ्ङिच्चमकयाल्
दिग्गजङ्ङळ्क्कु चेविनुमटच्चिते । १७३

ऐकमत्य से खडे हो जायँ। मुकुन्द की सपूर्ण सहायता मुझे प्राप्त है, आज युद्ध मे और किसी की प्रतीक्षा न की जाय। और सबको चाहिये कि वे आज विजयी राजा की रक्षा करे। सबने स्वीकार किया कि ऐसा ही होगा और नर और नारायण रथ पर चढे। १६१-१६६ देव, असुर, उरग, सिद्ध, विद्याधर, गन्धर्व, किन्नर, किंपुरुष आदि, यक्षो और रक्षो के गण, चारण, गुह्यक, प्रेत, भूत आदि, अप्सराएं आकाशमार्ग मे विमान पर चढे और तुबुरु और नारद जल्दी करने लगे। भेरी, पटह, शंख आदियो का नाद, शूरो का सिहनाद, रथो के घूमने का नाद, ज्याघोप, हाथियो के गरजने का नाद, दर्शनीय घोड़ो का हेषारव, नारद की वीणा का मनोहर नाद, ये सब उठे और गूंजने लगे जिसके फलस्वरूप दिग्गजो

स्वप्नप्रकारङ्ङळॊक्कप्परञ्ञुटन्
चिल्पुरुषङ्कलुरप्पिच्चु मानस । १५३
अर्ज्जुनन् निल्क्कुन्ननेरत्तु धर्म्मजन्
पिच्चयल्लेतुमतॆन्नरुळिच्चेय्तान्— १५४
अच्युतनुं पुनरन्तकवैरियु
निश्चय चिन्तिक्किलॊन्नॆन्नरिक नी । १५५
वैकरुतेतुमुदिच्चितु भास्करन् ।
वैरिकळ् वन्नॊरुमिच्चाररिकॆटो । १५६
इन्नु चॆरुतु कलहमुण्टाय्वरु ।
निर्ण्णयमिन्ननाळॆप्पोलॆयल्लॆटो । १५७
पिन्नॆयुं चॊन्नान् धनञ्जयन् निल्क्कुन्न
मन्नवन्मारोटुमग्रजन्मारोटुं— १५८
उग्रनायुळ्ळ गुरुविनु सत्यमु-
ण्टग्रजनां मम धर्म्मतनयनॆ १५९
युद्धत्तिलॆत्तिप्पिटिच्चु कॆट्टीटुवान्
चित्तत्तिलुण्टिन्निनिक्कॊरु सकङ्कटं । १६०
अग्निक्कु बन्धुवां वायुतनूपुत्रनु-
मग्नियिलुत्भविच्चोरु पाञ्चालनुं १६१
सात्यकियुं महावीररां मटुळ्ळ- ।
धात्रीपतिकळुमॊक्कयॊरुमिच्चु १६२

प्रभो ! हे हरे ! इससे बढकर आश्चर्य की बात क्या है ? १४५-१५२ स्वप्न की सारी बाते सुनाकर चित्पुरुष मे अपने मन को स्थिर किया। जब अर्जुन इस प्रकार की बात करता हुआ खड़ा था तब युधिष्ठिर ने कहा— "इसमे कोई आश्चर्य की बात नही है। अच्युत (विष्णु) और अन्तक-वैरि (शिव) विचार करने पर दोनो एक है, जान लो। अब विलम्ब न करना, सूर्योदय हो गया। शत्रु आकर इकट्ठा हो गये। आज निस्सन्देह एक छोटा युद्ध होनेवाला है। पिछले दिनो के समान नही है"। अर्जुन ने उपस्थित राजाओ और बड़े भाइयो से फिर कहा— "उग्र गुरु ने शपथ किया है मेरे बडे भाई युधिष्ठिर को युद्ध मे पकडकर बाँधने का। इससे मेरे चित्त मे बड़ा दुःख है। १५३-१६० अग्नि के बन्धु वायु का पुत्र, अग्नि मे उत्पन्न पाञ्चाल, सात्यकि, अन्य महावीर भूपाल, ये सब मिलकर तबू के चारो ओर मेरे ज्येष्ठ की रक्षा के लिए

कण्णुकळ्तङ्ङळेच्चिचम्मुन्नितु चिलर्
चापङ्ङळाय् मिकुमिन्द्रचापङ्ङळु
वाणङ्ङळायुळ्ळ धारावरिपवु । १८४
चोरयायुळ्ळोरु वारिप्रवाहवुं ।
पेय्तुपेय्तोक्क निरञ्ञु नदिकळा-
योरोवळियेयोलिक्कुन्ननेरत्तु । १८५
वक्त्रङ्ङळाकिय पत्मङ्ङळुण्टतिल्
केशङ्ङळाकिय शैवलपूरवुं । १८६
हस्तपादङ्ङळायुळ्ळ मत्स्यङ्ङळुं
हस्तिकळायुळ्ळ पाषाणजालवुं । १८७
चित्तमायुळ्ळोरु शखुमुत्तादियु
मद्धयेयोळुकुन्न चोरप्पुळ कण्टु
चित्रं ! विचित्रं ! विचित्रमेन्नू जनं ! १८८
दुश्शासननेतिर्त्तेत्तानवनेयुं
विश्वैकवीरन् विजयन् जयिच्चितु ।१८९
शस्त्रङ्ङळ्कोण्टभिवाद्यवुचेय्तु त-
न्नुळ्ळतापमेल्लामरियिच्चतुनेरं १९०
तोट्पोलेयोळिच्चु गुरुवीरनु ।
मटलरोटेतिर्त्तू कुरुवीरनुं । १९१
कोन्नुकोन्नोक्कयोटुक्कुन्नतु कण्टु
पिन्नेयुं द्रोणरेतिर्त्तानतुनेरं । १९२

और वर्षधारा ही उसके वाण थे। रक्तप्रवाह ही उसका जलप्रवाह था। रुधिर वरस-वरस कर भर गया और नदी वनकर इधर-उधर वहने लगा। वहाँ जो मुख थे वे ही कमल थे, जो केश था वही शैवल (सेवार) वना। हाथ पैर ही वहाँ के मत्स्य थे और हाथी ही वहाँ के पाषाण थे। चित्तरूप शख और मोती और बीच मे वहनेवाली रक्तनदी को देखकर लोगो ने कहा— हा ! चित्र ! विचित्र ! । १८१-१८८ तव दुश्शासन ने उसका सामना किया पर विजय (अर्जुन) ने उसको हरा दिया। जव अर्जुन ने शस्त्रो के द्वारा अभिवादन करके अपने दुख को अवगत किया तव गुरुवीर पराजित के समान हट गये। पर कुरुवीर ने शत्रुओ का सामना किया। सवको मारे जाते देखकर द्रोण फिर लड़ने आये। कुछ लड़कर फिर चले गये। तव हार्दिक्य ने भिड़कर सामना किया और

कल्पान्तकालत्तु सप्तसमुद्रङ्ङ-
ळुळ्भ्रान्तिकैक्कोण्टलरुन्नतुपोले । १७४
घोरघोरमिरुभागवु वन्पट-
वारिधिपोले परन्नुचमञ्ञुते । १७५
सूचीसरसिजव्यूहं चमच्चुकों-
ण्टाचार्यनाय भरद्वाजनन्दनन् १७६
निर्त्तिनान् दक्षिणभागत्तु वन्पट
चित्रमायोरु शकटाह्वयव्यूह । १७७
इत्थमुरुप्पिच्चु वामभागे तथा
चित्तमुरुप्पिच्चु रण्टुकूट्टत्तिनु १७८
मद्ध्ये महारथतन्निलाचार्यनु
क्रुद्धनाय् विल्लुं धरिच्चुनिन्नीटिनान् । १७९
युद्धनिलमायोराकाशमोक्कवे
हस्त्यश्वपत्तिमयङ्ङळाय् मेघङ्ङ- १८०
ळोत्तु परन्नतुनेरत्तु धूळियाल्
मित्रबिबं मरञ्ञीटुदशान्तरे । १८१
दिक्कुकळोक्कवे ञेट्टुमारङ्ङने
वेट्टुमिटिकळ्पोले पटहङ्ङळुं । १८२
सन्नद्धरायुळ्ळ वीरर् कैवाळाय-
मिन्नल्प्पिणरुकळ् मिन्नुन्ननेरत्तु । १८३

कान वन्द हो गये। १६७-१७३ जैसे कल्पान्त के समय सातो समुद्र ुब्ध होकर गरजते है उसी प्रकार दोनो घोर सेनाये सागर के समान ारो ओर फैल गयी। आचार्य भरद्वाजपुत्र (द्रोण) ने सूचीव्यूह और ़मव्यूह बनाकर अन्त मे दक्षिणभाग मे अपनी सेना को चित्र शकटव्यूह ाकर खड़ी कर दी। वाये ओर भी इसी प्रकार अपनी सेना स्थिर र दी। तदनन्तर दृढ़निश्चय करके दोनो सेनाओ के वीच मे आचार्य ुद्ध होकर धनुष लिये महारथ पर खड़े हो गये। सारा आकाश युद्धभूमि न गयी जिसमे हाथी, घोडे और पैदल सैनिक ही मेघ थे। १७४-१८० व वे सव फैले तो धूल के कारण सूर्यविब ढक गया। सारी दिशाओ ो कँपाने योग्य वादलो की गरज के समान पटह ध्वनित हो उठे। युद्ध के ाए सन्नद्ध वीरों के खड्ग बिजली की कडक के समान चमकने लगे। व कुछ लोगों ने आँखे वन्द कर ली। इन्द्रधनुष ही उसके चाप थे

कात्तु जयद्रथनुतन्नेयुमेन्नेयु
पात्थभयं तीर्त्तु रक्षिक्ककवेणम । २०४
शत्रुक्कळेक्कोन्नु राज्य तरुवति-
नुळ्ळतारिलिप्पोळ् मटिक्काय्ककवेणमे । २०५
द्रोणर् कवच जपिच्चु कोटुत्तितु
मानियायुळ्ळ सुयोधननन्नेर । २०६
खाण्डव पुक्कोरु पावकनेप्पोले
पाण्डवसेन दहिप्पिच्चिताचार्यन् । २०७
गाण्डीवधन्वावु पोयितोरुवळि
वेण्टू जयद्रथनेक्कण्टुकोळ्ळुवान् । २०८
अन्नेरमेङ्ङुनिन्नेन्नरिञ्ञील पो-
न्नुन्नतनाय धृष्टद्युम्ननु वन्नान् । २०९
द्वन्द्वयुद्धत्तिल् मरिच्चार् पल नृप-
रान्दोळितमायितन्नेरमाहवं । २१०
सोमकपाञ्चालभूपतिवीरन्मार्
कार्मुकिल् पेमळ तूकुन्नतुपोले । २११
वाण पोळिञ्ञङ्ङट्टुत्तारतुनेर
द्रोणरुटे पट केट्टु पाञ्ञू तुलो । २१२
वन्पनायीटु द्रुपदनु चापिकळ्
मुन्पनामाचार्यनुं पोरुतोरु पो- २१३

दुर्योधन वहुत दु खित हुआ और द्रोणजी के चरणों पर प्रेम से पडकर वोला। "जयद्रथ को और मुझे आप देखते रहे और अर्जुन से हमारी रक्षा कीजिये। शत्रुओ का नाश करके राज्य मुझे दिलाने मे आप कृपया न हिचके।" तव द्रोण ने मानी सुयोधन को एक कवच मन्त्रपूत करके दिया। खाण्डववन मे घुसे अग्नि के समान आचार्य ने पाण्डवसेना को जलाया। गाण्डीवधन्वा (अर्जुन) जयद्रथ की खोज मे एक ओर चला। तव, न मालूम कहाँ से, उन्नत धृष्टद्युम्न वहाँ पहुँचा। २०३-२०९
अनेक वीर द्वन्द्वयुद्ध मे मरे और उस समय युद्ध अतीव तुमुल हुआ। सोमक और पाञ्चाल के भूपतिवीर, काले-काले मेघ जैसे धाराप्रवाह वरसते है, वैसे ही शरवर्षा करने लगे और द्रोण की सेना भागने लगी। शक्तिशाली द्रुपद और धानुष्को मे श्रेष्ठ आचार्य का आपस मे जो युद्ध हुआ उसे देखकर देवगण प्रसन्न हुए और उन्होने प्रशसा की। तुवुरु

ऒट्टु युद्धचय्तु पिन्नेयुं पोयितु ।
मुट्टिच्चेतिर्त्तितु हार्दिक्यनन्नेरं । १९३
ऎय्तु तलयुमरुत्तु धनञ्जय-
नॆय्तु शरङ्ङळ् वरुणात्मजनप्पोळ् । १९४
छत्रध्वजाश्वङ्ङळॆल्लामतुनेरं
वृत्तारिपुत्रन् कळञ्ञोरनन्तरं । १९५
तॆट्टॆन्नोरु गद कैक्कॊण्टटुत्तव-
नॆटिनान् कृष्णनॆयप्पोळ् विजयनुं १९६
कण्ठवुं कैयुमॊरन्पाल् मुरिच्चतु-
कण्टटुत्तीटिनान् कांबोजनन्नेरं १९७
अन्तकन्वीट्टुपुक्कान् पोरुतेटवु-
मन्तिके निन्न पटयोटुकूटवे । १९८
पिन्ने श्रुतायुराख्यन् नृपनेटितु
कॊन्तानरनिमिषं कॊण्टवनेयु । १९९
अप्पोळवन्तन्ननुजनुं कोपिच्चु
मुल्पुक्कॆतिर्त्तु कण्टाशु पार्त्थनु २००
तल्बलौघत्तोटुकूटवे कोपिच्चु
कैल्प्पोटु बाणङ्ङळॆय्तुकॊन्नीटिनान् । २०१
ऒन्नॆयॆन्नेक्कोल चॆय्युन्नुतर्ज्जुन-
नॆन्नरिवीररॊळिच्चु वाङ्ङीटिनार् । २०२
धार्त्तराष्ट्रन् पॆरिकार्त्तनाय् द्रोणर्तन्
काल्त्तळिरन्पोटु वन्दिच्चु चॊल्लिनान्— २०३

धनञ्जय ने उसका सिर काट डाला। उस समय वरुणपुत्र ने अपने तीर चलाये। अर्जुन के अपने छत्र, झण्डा और घोड़ो के खोने के बाद, वह एक गदा लिये निकट पहुँचा, । १८९-१९५ और कृष्ण को मारने लगा। तब अर्जुन ने एक बाण से उसका कण्ठ और हाथ काट डाला। यह देखकर काम्बोज आगे बढा और तीव्र युद्ध करके अपनी सेना के साथ यमराज के घर पहुँच गया। तदनन्तर श्रुतायु नामक राजा आगे बढा और आधे निमेष में वह भी मारा गया। तब उसका छोटा भाई क्रुद्ध होकर सामने आया। यह देखकर अर्जुन ने भी कोप मे आकर तीर चला चलाकर उसकी सेना के साथ उसका वध किया। 'अर्जुन मेरी हत्या करेगा' ऐसा समझकर शत्रुवीर एक-एक करके हटने लगे। १९६-२०२

बद्धवैरत्तोटट्टुनिन्नङ्ङनॆ
युद्ध भयङ्करमाय्वन्ननेरत्तु । २२४
शुद्धनखण्डन् जगत्परिपूर्णनां
दुग्धांबुराशितिरुमकळ्वल्लभन् २२५
आशु जयद्रथनक्कॊलचॆय्वति-
नाशुगवेगत्तिलाशु तेरोटिच्चान् । २२६
शक्तिकळ् वज्रङ्ङळ् चक्रङ्ङळ् शूलङ्ङळ्
शस्त्रङ्ङळस्त्रङ्ङळुं गदाजालवुं २२७
उग्रङ्ङळाय मुसलङ्ङळॆन्निव
निग्रहिक्केणमवनॆयॆन्नोन्निच्चु २२८
शक्रनुनेराय विक्रममुळ्ळवन्
शक्रात्मजनुनेर् तूकित्तुटङ्ङिनान् । २२९
खण्डिच्चु खण्डिच्चतॊक्कक्कळिच्चोरा-
खण्डलनन्दनन् चॆल्लुन्ननेरत्तु २३०
विन्दनुमूक्कुळ्ळनुविन्दनुंकूटि
मन्देतरमॆय्तट्टुत्तारतुनेर । २३१
इन्द्रात्मजन् कॊलचॆय्तानवरॆयु-
मिन्दिरावल्लभनोटथ चॊल्लिनान्— २३२
पैदाहमुण्टु कुतिरकळ्क्केटवुं
कैतवमिल्लात कारुण्यवारिधे ! २३३

और उनका भयङ्कर युद्ध हुआ। उस समय शुद्ध, अखण्ड, जगत्परिपूर्ण, क्षीरसागर की पूज्य पुत्री के वल्लभ (विष्णु, कृष्ण) ने जयद्रथ का वध कराने के लिए अपने रथ को जल्दी वेग से चलाया। तव शक्र के समान विक्रमवाले ने शक्रात्मज (अर्जुन) के खिलाफ शक्ति, वज्र, चक्र, गदाये, उग्र मुसल, ये सब एक साथ छोड़े, इस इरादे से कि अव इसका निग्रह करना चाहिये। २२३-२२९ जव आखण्डलनन्दन (अर्जुन) ने उन सबको खण्डित करके नष्ट कर दिया तव विन्द और शक्तिशाली अनुविन्द जोर से वाण छोडते हुए निकट पहुँचे। इन्द्रात्मज (अर्जुन) ने उनका भी वध किया और इन्दिरावल्लभ (कृष्ण) से कहा— "हे निष्कपट कारुण्य के सागर! घोडो को भूख और प्यास लग रही है। उनके हाथ पैर थके है और चल नही पा रहे है, इसलिए युद्ध भी कुछ विगड रहा है। पानी पिलाकर उनकी थकावट दूर करने पर ही सोत्साह

ऱन्पऱं कण्टु तॊळिन्ऩु पुकळ्त्तिनार्
तुंबुरुनारदन्मारुं पुकळ्त्तिनार् । २१४
वाळुमायेटमट्टुत्तितु पाञ्चालन्
बाणङ्ङळ् मॆय्यिल् निऱच्चिताचार्यनुं । २१५
कॊल्लुन्नतुण्टॆन्नुऱच्चु गुरुवरन्
विल्लुं कुळियॆक्कुलच्चु वलिच्चुटन् २१६
निल्लुनिल्लॆन्नणञ्ञीटुन्ननेरत्तु
मल्लारितन् प्रियनाकुन्न शैनेयन् २१७
किञ्चन चञ्चलमॆन्नियॆ चॊल्लिना-
नञ्चियोटुन्नवनल्लॆन्नऱिञ्ञालुं । २१८
अत्र वैदग्ध्यमुण्टाकिलो नम्मिलु-
मित्तिरिनेरं पॊरुते मतियावू । २१९
कॊल्पोटिवण्णं पऱञ्ञाशु सात्यकि
मुल्प्पुक्कॊतिर्त्ततु कण्टु गुरुवरन्२२०
अस्त्रङ्ङळ् शस्त्रङ्ङळ् नाराचपङ्क्तिक-
ळर्द्धचन्द्राकारमायुळ्ळ बाणङ्ङळ् २२१
इत्तरं कोरिच्चॊरिञ्ञुतुटङ्ङिना-
नत्तरंतन्नॆ युयुधानननुमॆय्तान् । २२२
मुग्धविलोचनभृत्यप्रवरनुं
क्षत्रकुलान्तकशिष्यप्रवरनुं २२३

और नारद ने भी स्तुति की। जब तलवार लेकर पाञ्चाल निकट पहुँचा तब आचार्य ने उसको शरो से भर दिया। २१०-२१५ जब वध करने का निश्चय करके गुरुवर अपने धनुष की ज्या को खीचते हुए 'ठहरो' 'ठहरो' कहकर निकट पहुँचे तब मल्लारि (कृष्ण) का प्रिय शैनेय (सात्यकि) ने विना चाञ्चल्य के कहा— "समझ लो कि डरकर भागनेवाला नही हूँ। अगर इतना वैदग्ध्य है तो थोड़ी देर मेरे साथ भी युद्ध हो जाय, तभी मैं सन्तुष्ट हूँगा"। इस प्रकार सोत्साह कहते हुए आगे बढकर सासना करते देखकर गुरुवर ने उस पर अस्त्रो, शस्त्रो, तीरो और अर्धचन्द्र के आकारवाले वाणो की वर्षा करना प्रारम्भ किया और युयुधान (सात्यकि) ने भी उसी प्रकार किया। २१६-२२२ मुग्धविलोचन (कृष्ण) का भृत्यप्रवर (सात्यकि) और क्षत्रकुलान्तक (परशुराम) का शिष्यप्रवर (द्रोण) दोनो बद्धवैर होकर एक दूसरे के निकट खड़े हुए

चेन्नु जयद्रथन् निल्क्कुन्न दिक्कति-
लोन्नोळ्रियातेयुऱच्चितु कौरवर् । २४५
पारमट्टु महारथन्मारोटु
घोरमायर्ज्जुनन्तानु पोरुतितु । २४६
कोलाहलमाय् चमञ्ञु कलहवु
तोलातवण्ण पोरुतारिकळु । २४७
पारमुयन्नु कोटिकोटिक्कूऱयु
पोराळिकळुटे विल्लिन् कोटुमयुं । २४८
आलवट्टङ्ङळु वेण्चामरङ्ङळुं
चालत्तेळिक्कटञ्ञुळ्ळ कुन्तङ्ङळु २४९
तिक्कियोरु निलत्तोक्कयोरुमिच्चु
निल्कुन्ननेरत्तु फल्गुनवाणङ्ङळ् २५०
मामलमेल् मळ तूकुन्नतुपोले
तूमकलर्न्नु पोळिञ्ञुतुटङ्ङिनान् । २५१
कालुं करङ्ङळुं तोळुं तुटकळु
माऱु वयऱु कळुत्तुं तलकळु २५२
आयुधजालवुमाभरणङ्ङळुं
कोटक्कुटकळ् तळकळ् कोटिमर २५३
कुटमिल्लात कोटिक्कूऱचित्तवुं
चुटु चुळन्नीटुमालवट्टङ्ङळु- २५४

आदि चारो ओर भागे जैसे गरुड़ को देखकर सर्पगण भागते है। अर्जुन तो वही गया जहाँ जयद्रथ था और एक नही छूटा, सभी कौरव जमकर खड़े हो गये। अर्जुन महारथियो के पास पहुँच गया और उनके साथ घोर युद्ध हुआ। अव सारा युद्ध कोलाहल हो गया। शत्रुओ से बिना हार माने लडा। खभा और झण्डा वहुत ऊँचा दिखाई दिया और योद्धाओ के धनुष देखने मे भयङ्कर थे। तालवृन्त और सफेद चँवर अच्छे रगड़े गये और चमकनेवाले कुन्त सव जव स्थान पर इकट्ठा हो गये तव अर्जुन, अपने बाण गिरिशिखर पर वर्षा के गिरने के समान आवेग के साथ गिराने लगा। २४४-२५१ पैर, हाथ, कन्धे, जाँघ, छाती, पेट, गरदन, सिर, आयुधो के ढेर, आभूषण, राजाओ के छत्र, मोरछल, झंडे के खभे, दोषरहित झडे, चारो ओर घूमनेवाले तालवृन्त, इन सबके नष्ट होकर गिरने से रणभूमि भर गयी। रक्त की बूँदे गिरकर वहने लगी।

कैकाल् तळर्न्नु नटक्कुन्नतिल्लेतुं
वैकार्यमुण्टतुकोण्टु रणत्तिनु । २३४
तण्णीर् कोटुत्तु तळर्न्न कॆटुक्किले
सन्नाहमोटु पोर्चेय्तुकूटू दृढं । २३५
ऎन्नु पऱञ्ञु शरौघं प्रयोगिच्चु
नन्नाय् कुळिच्चु पानीयमुण्टाक्किनान् । २३६
ऎन्नतु कण्टु मुकुन्दन्तिरुवटि
पन्नगशायि परन्पुरुषन्तानु- २३७
मश्वङ्ङळेत्तॊळियिच्चु तेर् पूट्टिनान्
विश्वभरन् निज भक्तजनप्रियन् । २३८
पारिल् निन्नीटुं धनञ्जयनेक्कण्टुं
तेरिलेकाकियां सारथियेक्कण्टुं २३९
पारमटुत्तु महारथन्मारॆल्लां ।
पोरिनु पाक्करुतिप्पोळॆरिकॊन्नु । २४०
छिद्रमिदमिति छिद्रमिदमिति
विद्रुतं तूकिनारायुधपत्किकळ् । २४१
पौरवयादवन्मारॆ वधिक्कॆन्नु
कौरववीररुमोत्तु कूटीटिनार् । २४२
नागद्ध्वजनु पोरुतितु पारमाय्
वेगमोटेट्मटुत्तितु पार्त्थनुं । २४३
नागारियॆक्कण्ट नागङ्ङळॆप्पोलॆ
नागद्ध्वजादिकळ् नाल्पाटुमोटिनार् । २४४

युद्ध किया जा सकेगा, इसमे सन्देह नही।" ऐसा कहकर और शरो के ढेर का प्रयोग करके भूमि खोदी और पानी निकाला। २३०-२३६ यह देखकर पूज्य पन्नगशायी, परपुरुष, विश्वभर, भक्तजनप्रिय मुकुन्द ने घोडो को खोल दिया और रथ को अलग किया। अर्जुन को पृथ्वी पर खड़ा देखकर और रथ पर सारथि को अकेला देखकर सभी महारथ उनके निकट पहुँच गये। "अब युद्ध करने मे विलम्ब न होना चाहिये, अब छिद्र मिल गया, अब छिद्र मिल गया", ऐसा कहते हुए उन्होने आयुधवर्षा की। "पौरवो और यादवो को मारो" ऐसा चिल्लाते हुए कौरववीर इकट्ठा हुए। नागध्वज (सुयोधन) भी अच्छा लड़ा। तब पार्थ भी वेग से निकट पहुँचा। २३७-२४३ दुर्योधन

रण्टु परिषय्क्कुमप्पोळतुकण्टु
कोण्टाटिनार् कण्टुनिन्नवरोक्कवे । २६६
वाळु परिचयुमायिट्टिरुवरु
चीळेन्नु पोङ्ङिडनाराकाशवीथियिल् । २६७
चित्रयुद्ध चेय्तु चत्तितलंबुसन्
चित्तवुं चत्तितु कौरवर्क्कन्नेरं । २६८
पार्त्थनु मट्टुळ्ळ तेराळिवीररु
पेर्त्तु पिरियातणञ्ञु पोरुन्नेर । २६९
पोर्क्कळंतन्निल्निन्नाक्कुन्न घोषवु
वाय्क्कुन्न पाचजन्यत्तिन् निनादवुं २७०
ब्रह्माण्डमेल्ला कुलुङ्ङपटि केट्टु
निर्म्मलनाकिय धर्म्मात्मजन् चोन्नान्— २७१
पङ्कजलोचनन्तन् करतारिले
शंखनादमता घोषिच्चु केळ्क्कुन्नु । २७२
शङ्कवेटिञ्ञु तेळिञ्ञरिवाहिनि
हुङ्कारमोटुकूटार्क्कयुमुण्टल्लो । २७३
सङ्कटमेतानुमेन्ट्येनुजनु
संभविच्चू पुनरिल्लोरुसंशयं । २७४
नाशं वराते पटयुमायिप्पोळे
नी चेन्नरिञ्ञु वरिक शिनिसुत ! २७५

घोड़ा—सव युद्ध मे अलग-अलग हो गया और धनुष दोनो ओर टूटा । यह देखकर सभी प्रेक्षको ने प्रशसा की । २५९-२६६ तलवार और चर्म लिए दोनो झट से आकाशवीथी मे उठे । चित्रयुद्ध करने के बाद अलवुष (किर्मीरपुत्र) मरा और कौरवो का चित्त भी मरा । अर्जुन और अन्य रथिवीर जव पीडित होकर लगातार युद्ध कर रहे थे, तव निर्मल युधिष्ठिर युद्धभूमि से निकलती चिल्लाहट को और वजाये जानेवाले पाचजन्य के निनाद को जो सारे ब्रह्माण्ड को कँपाता था, सुनकर बोला । "श्रीकृष्ण के हाथ के शख का घोष अव सुनाई दे रहा है । और शत्रुसेना अव भय कम होने के कारण प्रसन्न है और सब एक होकर हुकार के साथ चिल्ला रही है । २६७-२७३ इसमे कोई सन्देह नही है कि मेरा छोटा भाई (अर्जुन) सकट मे है । हे सात्यकि ! कुछ नाश हो जाने के पहले ही तुम सेना के साथ चले जाओ और मालूम करके आओ ।"

मटटु वीणु निरन्नू रणाङ्कण-
मिटिटुवीळुन्न चोरयॊलिक्कयु । २५५
मुटिनिन्नीटुन्न पटलर्तम्मोटु
चुटुं चुळन्नु पॊरुतु धनञ्जयन् । २५६
धर्म्मसुतनु भरद्वाजपुत्रनुं
तम्मिल् पॊरुति तुलञ्ञु युधिष्ठिरन् । २५७
भीमनतुकण्टुळरियटुत्तप्पोळ्
भीमान्तकसममायितु युद्धवुं । २५८
किर्म्मीरनन्दननाकिय राक्षसन्
निर्म्मरियादप्पॆरुमाळतुनेरं २५९
भ्रातावितेयु पितावितेयु कॊन्न
वातात्मजनोटु पाञ्ञटुत्तीटिनान् । २६०
तॆटॆन्नटुत्तितु मारुतपुत्रनु
चॆटु पोर्चॆय्ताशु तोटु निशाचरन् । २६१
निल्लॆन्नणञ्ञु पोर्चॆय्तिताचार्यनु
कॊल्लॆवनॆङ्किल् ञानॆन्नु घटोत्कचन् । २६२
चॊल्लुळुं द्रोणरोटार्त्तटुत्तीटिनान्
विल्लॆमायाचार्यनुमटुत्तीटिनान् । २६३
चॆटु वलञ्ञिताचार्यनतुकण्टु
तॆटॆन्नटुत्तितु किर्म्मीरपुत्रनु । २६४
तेरुं कुटयुं कॊटियुं कुतिरयु
पोरिलळिञ्ञितु विल्लुं मुरिञ्ञितु । २६५

अर्जुन ने तो एक होकर खडे शत्रुओ के साथ युद्ध किया। धर्मपुत्र और भरद्वाजपुत्र आपस मे लड़े और धर्मपुत्र (युधिष्ठिर) हारा। यह देखकर भीम चिल्लाता हुआ निकट पहुँचा और उनका युद्ध शिव और यम के युद्ध के समान हुआ। २५२-२५८ किर्मीर का पुत्र वह राक्षस, निर्मर्यादा का वडा पुजारी, अपने भाई और पिता के नाशक भीम के पास दौड़कर पहुँचा। तुरन्त ही मारुतपुत्र भी आगे वढा। कुछ युद्ध करने के वाद निशाचर हार गया, तव डटकर आचार्य लडे। "तो फिर मैं मार डालूँगा," ऐसा कहकर घटोत्कच विख्यात द्रोण के पास सिहनाद करता हुआ पहुँचा। धनुष लेकर आचार्य भी आगे बढे। जव आचार्य कुछ थके तो तुरन्त ही किर्म्मीरपुत्र उनके पास पहुँचा। रथ, छत्र, झण्डा,

मागधनाकिय सत्यसन्धन् तल-
माळ्कातरुत्तु धरणियिलिट्टुपोय् । २८६
आन तेर् कालाळ् कुतिरप्पटयोक्क
मानमेऱ्रीटुन्न सात्यकि कोन्नुको- २८७
न्नाऱ्रोळुकिक्कुरुतिप्पुनलुतन्नाले ।
चीऱ्रियटुत्तु भरद्वाजपुत्रनु । २८८
कल्पान्तमेघं वरिपिप्पतुपोले
कोल्पोटु वाणङ्ङळ् तूकित्तुटङ्ङिनान् । २८९
इप्रथनत्तिनु नेराय पोरु प-
ण्टिप्रपञ्चत्तिङ्कलुण्टायतिल्लेन्नु । २९०
केळिमुळ्ळुत्त कवन्धवु काळियुं
कूळिकळु नटमाटित्तुटङ्ङिनार् । २९१
ओन्नु तळर्न्नुचमञ्ञु गुरुवरन्
चेन्नु तुणच्चानतुकण्टु भोजनु । २९२
कोपिच्चु सात्यकि वाणङ्ङळ् पेय्तप्पोळ्
मोहिच्चु तेरतिल् वीणितु भोजनु । २९३
आरिनियुळ्ळतेन्नाशु शिनिसुत-
नाराञ्ञु पाञ्ञुनटक्कुन्ननेरत्तु २९४
रण्टनुजन्मारुमाय् वन्नेतिर्त्तितु
कुण्ठत कैविट्टु नागध्वजनृपन् । २९५
कण्टुकूटुन्पोळ् शरवरिपंचेय्तु
मण्टिच्चानप्पोळणञ्ञु दुश्शासनन् । २९६

रथ, पैदल सैनिक, घुडसेना, सबको सात्यकि ने मारा और रक्त की नदी वहने लगी। चिल्लाते हुए भरद्वाजपुत्र निकट पहुँचे। २८१-२८८ कल्पान्त के मेघो के वरसने के समान वेग से वाणो की वर्षा करने लगे। इस युद्ध के समान कोई युद्ध पहले इस ससार मे कभी न हुआ, ऐसा समझकर कवन्ध, काली और पिशाच उल्लास मे आकर नाचने लगे। गुरुवर कुछ थक गये। यह देखकर भोज सहायता करने गया। जब क्रुद्ध होकर सात्यकि ने वाण वर्षा की तव वेहोश होकर भोज रथ पर गिर पडा। 'अव कौन वचा है ?' ऐसा सोचकर जव सात्यकि ढूँढता फिरता था तव दो छोटे भाइयो के साथ मन्दता छोडकर राजा दुर्योधन आगे वढ़ा। २८९-२९५ उन्हे देखते ही शरवर्षा करके भगाया। तव दुश्शासन सामने आया। और थोड़ी देर के लिए संकोच छोड़कर लड़ा।

धर्म्मजन् चॊन्नतु केट्टु चॊल्लीटिनान्
निर्म्मलनाकिय सात्यकिवीरनु । २७६
बन्धिच्चुकॊळ्ळुवान् तक्कवुं पार्त्तु पा-
र्त्तन्तणनाकुमाचार्यनिरिक्कुन्नु । २७७
ञङ्ङळ् चिलरतु कण्टुनिल्क्केणमॆ-
न्निङ्ङनॆ चिन्तिच्चु पोकाञ्ञतु नटे । २७८
पार्त्थनु सङ्कटमुण्टाकयिल्लुळ्ळि-
लोर्त्तिटुकच्युतन्तन्टॆ चरित्रङ्ङळ् । २७९
ऎन्तु शिनिसुतन् चॊन्नतु केट्टाशु
मन्नवन् धर्म्मजन् पिन्नॆयुं चॊल्लिनान्— २८०
ऎन्नॆक्कुरिच्चॊरु वात्सल्यमुण्टॆङ्कि-
लॆन्नुटॆ कृष्णधनञ्जयन्मारॆ नी २८१
चॆन्नरिकॆन्नुळ्ळ निर्ब्बन्धवाक्कु के-
ट्टन्नेरमात्मोपमनाय सात्यकि २८२
घोरमायुळ्ळ पटयुमाय् वेगेन
पोरिनु नेरे पुरप्पॆट्टु चॆल्लुम्पोळ् । २८३
ऎटं मरुतलयॆक्कॊलचॆय्तपो-
रुटमुळ्ळाचार्यनॆय्तटुत्तीटिनान् । २८४
तोट्टु गुरुवरनॆन्ने परयेण्टु
पोटिविळिच्चितु भोजनरेन्द्रनॆ । २८५

निर्मल वीर सात्यकि युधिष्ठिर की बात सुनकर बोला। "आपको बाँधने के लिए यह ब्राह्मण आचार्य मौका देख रहा है। हम कुछ लोगो को यहाँ रखवाली करना चाहिये यह समझकर हम पहले ही न गये। अर्जुन को कोई सकट नही होगा। कृष्ण के चरित्र का जरा याद कीजिये।" शिनिपुत्र (सात्यकि) की यह बात सुनकर राजा युधिष्ठिर ने फिर कहा। २७४-२८० "मेरे प्रति अगर तुम्हे प्रेम है तो कृष्ण और धनञ्जय का समाचार लेकर आओ"। इस प्रकार की हठ की बात सुनकर आत्मोपम सात्यकि एक भयङ्कर सेना के साथ तुरन्त ही वही गया जहाँ युद्ध चल रहा था। तब अत्यधिक शत्रुओ को नाश करके युद्ध मे शक्तिशाली आचार्य तीर चलाते हुए निकट आये। बस, इतना ही कहना है कि गुरुवर हारे और स्तुति करके उन्होने नरेन्द्र भोज को बुलाया। मागध सत्यसन्ध का सिर साफ काटकर भूमि पर गिरा दिया। हाथी,

मारुतियाकुमवरजन्तन्नोटु
धीरत कैविट्टु चोन्नान् नृपाधिपन् ।
धार्त्तराष्ट्रन्पटक्कूट्टमुण्टाक्कुन्नु ३०८
पोय शिनिसुतन्तन्नेयु कण्टील ।
पायुन्नितङ्ङुमिङ्ङु भ्रमिच्चेवरु- ३०९
मेन्तोरु सङ्कटंवन्नतु दैवमे !
चेन्तारिल्मातुतन् पुण्यविलासमे ! ३१०
नेञ्चमिटिञ्ञिटिञ्ञीटुन्नितेटवुं
चेञ्चम्मे तन्नेक्कळिकयिल्लिन्नेट । ३११
वैकल्यमेतुं वराते पटयुमाय्
वकाते पोक नी मारुतनन्दन ! ३१२
अन्तखळ्चय्युन्नतेन्नालतु केळ्प्पा-
नन्तरमिल्लिनिक्केङ्किलुमिन्निप्पोळ् ३१३
बन्धिच्चुकोळ्वानुपायङ्ङळ् सन्ततं
चिन्तिच्चिरुन्नरुळुन्नु गुरुवर- ३१४
नुत्तमनाकुन्न नम्मुटे ज्येष्ठने
शत्रुक्कळेत्तिप्पिटिच्चुकेट्टुनेर- ३१५
मेत्तील नामारुमेन्तिनि नल्लते-
न्नेत्रयुं दुःखिच्चु नारिकळेप्पोले ३१६
नाणवु केट्टिरुन्नीटुमाराकाते
प्राणन्कळयातिरिक्कणमन्नेरं । ३१७

का नाश होनेवाला समझकर राजा (युधिष्ठिर) फिर बहुत विपण्ण हुए और अपने भाई मारुति (भीमसेन) से धैर्य छोड़कर फिर बोले— "दुर्योधन की सेना चिल्ला रही है और सात्यकि जो गया है, अब भी दिखाई नहीं दे रहा है। सब लोग घबडाकर इधर-उधर दौड रहे हैं। हे भगवान् ! क्या संकट हो गया है। यह लक्ष्मीदेवी का विलास है ! । ३०४-३१० हृदय तो अत्यन्त तडप रहा है। आज का दिन ठीक से बिताना कठिन है। हे मारुतनन्दन ! नाश होने के पहले तुम जल्दी सेना लेकर चलो।" जब ऐसा कहा तब भीम ने सोचा— "मैं ऐसा करता, पर आज गुरुवर, युधिष्ठिर को पकडकर बाँधने के उपाय सोचे बैठे हैं। हमारे उत्तम बड़े भाई को शत्रुगण पकड़कर बाधने के समय हम लोगों के वहाँ न पहुँच सकने के कारण 'अब क्या करना है ?' इस प्रकार दुखित होकर मान खोकर स्त्रियों के समान चुप बैठना न पड़े या प्राणत्याग न करना

कोळ्कळञ्ञु पोरुतानोरित्तिरि
केळिच्चवनेयुमोटिच्चु सात्यकि । २९७
जन्यभयंकरं कण्टु रणभुवि
जन्यमां नादवु कृष्णनुटे पाञ्च- २९८
जन्यनिनन्दवुं धन्यतचेरुन्न-
धन्विकळ्तन् चेरुञाणोलिनादवु २९९
केट्टुकेट्टाकुलप्पेट्टु युधिष्ठिरन्
कूट्टुक नम्मुटे तेरेन्नु चोल्लिनान् । ३००
उग्रनां मारुति चोन्नानतुनेर-
मग्रजन्तन्नटटङ्ङणमित्तिरि । ३०१
उग्रविरचितानुग्रहशक्तिस-
मग्रप्रभावना शक्रतनयने ३०२
निग्रहिप्पानरुताक्कुमे कोमळ-
विग्रहयोगबलेन महीपते ! ३०३
व्यग्रमुण्टाकाय्क कृष्णभक्तन्मारि-
लग्रगण्यन् मम सोदरन् निर्णयं । ३०४
अग्राह्यशौर्यमियन्न गुरुवर-
नग्र्यकुलोत्भवनाय भरद्वाज- ३०५
नुग्रशिष्योत्तमशिष्यनामाचार्यन्
त्वल्ग्रहणाग्रहंपूण्टु मरुवुन्नु । ३०६
पार्त्थनु नाशमेन्नोर्त्तुथ पार्त्थिवन्
चीर्त्त विषादमोटार्त्तनाय् पिन्नेयुं । ३०७

पर सात्यकि ने उसे हराकर भगाया। इस भयङ्कर युद्ध को देखकर और रणभूमि से निकलती ध्वनि को, कृष्ण के पाञ्चजन्य के निनाद को और धन्य धानुष्को के ज्याघोष को सुन-सुनकर युधिष्ठिर घबड़ाये और बोले "मेरा रथ तैयार करो"। तब उग्र भीमसेन ने अपने बड़े भाई से कहा 'थोडी देर के लिए सवर कीजिये'। शिवजी के दिये अनुग्रहो की शक्ति के कारण संपूर्ण प्रभाववाले अर्जुन का निग्रह करनेवाला कोई भी नही है, क्योकि उसका अपने कोमल शरीर और योग का वल भी है। २९६-३०३ विषाद न कीजिये, क्योकि मेरा भाई कृष्णभक्तो मे अग्रगण्य है। अग्राह्य शौर्यवाले गुरुवर, जो उच्चकुलोद्भव भरद्वाज के उग्र शिष्यो मे उत्तम शिष्य है और आचार्य है, तुम्हे पकड़कर बाँधने की इच्छा रखते है। अर्जुन

अण्डकटाहं नटुङ्ङुमारङ्डनें
दण्डमौळिञ्ञु चेरुत्तानतुनेर । ३२८
दण्डधरन्मुनियोटटुक्कुन्नेर
खण्डपरशु चेरुत्ततुपोलेयु ३२९
चण्डमुण्डप्रणाशान्तरे सुभनें-
च्चण्डिकादेवि चेरुत्ततुपोलेयु ३३०
चण्डकरकुलजातन् रघुवीरन्
दण्डकारण्यनिवासि खरादियें- ३३१
क्कण्टु कोविच्चु चेरुत्ततुपोलेयु ।
मण्टियणञ्ञु वृकोदरनन्नेर ३३२
तेरु कळञ्ञु तिरिच्चु नटन्नप्पोळ्
वीरनां गान्धारपुत्ररटुत्ततिल् ३३३
पत्तिनेक्कौन्नु नटन्नलरीटिनान्
मत्तनां मारुतपुत्रन् महारथन् । ३३४
मारुतितन्टे वरवु कण्टन्नेरं
शूरनां कर्ण्णनणञ्ञु पौरुतप्पोळ् ३३५
मत्तगजत्तोटु केसरियेंप्पोलें
शक्तनां मारुतपुत्रनटुत्तुटन् ३३६
पत्रिकळ्कौण्टु तकर्त्तु तेरुं विल्लुं ।
मित्रात्मजनेयुमेय्तु पिळर्क्कयाल् ३३७
अविकानन्दननन्दनन्मार् तुण-
यन्पोटु चेन्नितु कर्ण्णनतुनेर । ३३८

काँपने लगा। वह युद्ध जव यमराज मुनि के निकट पहुँचा था तव खण्डपरशु (शिवजी) के मारने के समान और चण्डमुण्डो के नाश के वीच चण्डिकादेवी के सुभ को मारने के समान, और सूर्यवश मे पैदा हुए रघुवीर के दण्डकारण्य मे रहनेवाले खर आदियो को देखकर और क्रुद्ध होकर इनको मारने के समान था। उस समय भीम ने दौड़ते हुए मारा और जव अपना रथ खोकर लौट रहा था तव वीर गान्धारपुत्र सामने आया। ३२७-३३३ उनमे से दस को मारकर सिहनाद किया, मत्त महारथ मारुतपुत्र ने। भीम का आना देखकर शूर कर्ण उससे लडा जैसे सिंह मत्त हाथी के साथ लडता है। शक्तिशाली भीम ने अपने वाणो से उसका रथ और धनुष नष्ट कर दिया। मित्रात्मज (कर्ण) को भी

अॆन्नतिनॆन्नोटु सूक्षिच्चुकॊळ्ळुवान्
पिन्नॆयुं पिन्नॆयुं नन्नायुरप्पिच्चु ३१८
पोयितु पोरिनायॆन्नुटॆ सोदरन्
पोयीटुवान् पणियुण्टतुकॊण्टु मे । ३१९
सोदरन् चॊन्नतो पूर्व्वजन् चॊन्नतो
सादरं केळ्क्केण्टतॆन्नु निरूपिक्क । ३२०
यादव पार्त्थ शिनिसुतन्मारॆयु-
माराञ्ञु कण्टुवरिक विरयॆ नी । ३२१
पारिषदादिकळॆब्भरमेल्पिच्चु
पारातॆ भीमन् नटन्नु पटयुमाय् । ३२२
पोर्क्कळंतन्निलकंपुक्करिकळॆ
बीक्कुन्नतिन्मुन्ने वीळ्त्तिनानन्पिनाल् । ३२३
वॆण्कुट वॆण्तळ वॆञ्चामरङ्ङळु
चॆङ्कनकक्कॊटियुं कॊटिक्कूरयुं ३२४
मन्थरकन्धरघण्टारवमुळ्ळ-
सिन्दुरबन्धुरस्यन्दनाश्वङ्ङळुं ३२५
खण्डिच्चुखण्डिच्चरिकळॆयुं कॊन्नु
चण्डनां मारुतपुत्रन् वरुन्नेरं । ३२६
पण्डितनाय भरद्वाजनन्दनन्
मण्डलाकारमायुळ्ळ धनुस्सिनाल् ३२७

पड़े" । ३११-३१७ इस प्रकार मुझे सचेत करके और बार-बार समझाकर छोटा भाई अर्जुन युद्ध करने के लिए निकला है। इसलिए मुझे चले जाना आसान नही है। छोटे भाई का वचन माने या बड़े भाई की आज्ञा सादर करे, यह सोचने की बात है। कृष्ण, अर्जुन और सात्यकि को ढूँढ़कर जल्दी देखकर आना है। अपने अनुयायियो पर भार सौपकर भीम सेना लिए चल पड़ा। शत्रुओ के मारने के पहले ही रणभूमि मे प्रवेश करके उनको बाणो से मार गिराया। चाँदी की छत्री, चाँदी का मोरछल, चाँदी का चँवर, सोने का झडा, झडे का अशुक, सुन्दर कन्धे पर बजनेवाली घटी से भूषित और सिन्दूर से शोभायमान रथ के घोडे, इन सबको खण्डित करते हुए और शत्रुओ को मारता हुआ चण्ड भीम आगे बढ़ा। ३१८-३२६ तब पण्डित भरद्वाजपुत्र (द्रोण) ने अपना मण्डलाकार (गोल) धनुष लेकर ऐसी आसानी से मारा कि मानो ब्रह्माण्ड

वञ्चकनाय सुयोधनन्तन्पिमा-
रञ्चुपेर्कूटेयटुत्तारतुनेरं । ३४९
पञ्चतचेर्त्तानवरे वृकोदरन् ।
चञ्चलंपूण्टटुत्तीटिनान् कर्ण्णनुं ।३५०
नेञ्चुरप्पिच्चु भयङ्करन् मारुति
किञ्चन संशयमेन्नियटुत्तेय्तु ३५१
तेरुं कुतिरयु विल्लु कोटि कुट
नेरे पोटिच्चु कुळच्चितु चोरयिल् । ३५२
पारं वलञ्ञितु कर्ण्णनतुकण्टु
नेरेयटुत्तु सुयोधनतन्पिमार् । ३५३
चेन्नारोरेळुपेर् भीमनवरेयु-
मोन्निच्चु कूट्टियुरुट्टिच्चमच्चितु
पिन्नेप्पिरिञ्ञुपोकाय्वानोरिक्कलुं । ३५४
मुन्नमरिञ्ञु पऱञ्ञु विदुररे-
न्नन्तेरमोर्त्तान् दुरियोधननूतानु ३५५
कण्णुनीरु वार्त्तु शोकिच्चितु तुलो ।
कर्ण्णनुं मटोरु तेरेऱिवन्नितु ३५६
मुन्नमिवण्णमकप्पेट्टतिल्लेन्नु ।
सन्नाहमुळ्क्कोण्टु सूर्यतनयनु- ३५७
मर्ण्णवंपोलेयलऱियटुक्कुन्पोळ्
कण्णुं चुवत्तियणञ्ञु वृकोदरन् ३५८

साथ लड़ने के लिए आगे बढ़े। वृकोदर (भीम) ने उनका पञ्चत्व कर दिया। तब कर्ण चञ्चल होकर सामने आया। भयङ्कर भीम अपना हृदय दृढ करके निश्शङ्क होकर पास पहुँचा और उसने बाण चलाकर रथ, घोडा, धनुष, झंडा, छत्र सब चूर-चूर करके खून मे मिला दिया। कर्ण तो बिलकुल थक गया। यह देखकर सुयोधन के अनुजो मे से सात निकट आये। भीम ने उन सातो को साथ मारकर गोल बना दिया ताकि वे फिर अलग होकर न चले जायँ। उस समय दुर्योधन को याद आया कि विदुर जी ने यह सब पहले ही जानकर बतलाया था और उसने आँसू गिराते हुए शोक का अनुभव किया। कर्ण भी दूसरे रथ पर चढकर आया। ३४९-३५६ पहले कभी इस प्रकार न फँसा हूँ, ऐसा समझकर सूर्यपुत्र बड़े सन्नाह के साथ सागर के समान गरजता हुआ जब निकट

मटॊरु तेरेऱि ञाणॊलियुमिट्टु
तॆट्टॆन्नटुत्तॆय्तु कण्टॊरु मारुति ३३९
चित्तत्तिलोर्त्तानिटच्चु तीवच्चतु
मद्धये सभं निज भार्ययॆयीऴ्त्ततु ३४०
वस्त्रमऴिच्चतु कळ्ळच्चूतिट्टतुं
बद्धरोषाल् विषच्चोऱशिप्पिच्चतु ३४१
कॊल्लुवान् पान्पुतन्नाल् कटिप्पिच्चतुं
वॆळ्ळत्तिलाम्मारु कॆट्टियॆऱिञ्ञतुं ३४२
मट्टु पलपल कर्म्मङ्ङळ् चॆय्ततु
मुट्टु निरूपिच्चु कोपिच्चटुत्तवन् ३४३
तेरुं कॊटियु कळञ्ञु शरङ्ङळाल् ।
पारं परिभविच्चीटिनान् कर्ण्णनुं । ३४४
कुन्तियोटुळ्ळॊरु सत्यं मऱन्नवन् ।
कुन्तीतनयनॆक्कॊल्लुन्नतुण्टॆन्नु ३४५
तॆट्टॆन्नु मटॊरु तेरेऱिवन्नुट-
नटमिल्लात शस्त्रङ्ङळ् तूकीटिनान् । ३४६
दुर्म्मुखन्तानुमटुत्तानवनुट-
लॆण्मणिपोलॆ चमच्चितु भीमनुं । ३४७
कण्मणि पारमुरुण्टितु कर्ण्णनुं
कुम्मिणिपोलुं कुऱञ्ञील भीमनुं । ३४८

घायल करने के कारण अंविकानन्दन (धृतराष्ट) के पुत्र सहायता के लिए गये। नवकर्ण दूसरे रथ पर बैठकर ज्याघोष करके तुरन्त लड़ने लगा। यह देखकर मारुति (भीम) को वन्द करके आग लगाना, सभा के वीच अपनी पत्नी को खीचना, । ३३४-३४० उसके कपड़े उतारना, झूठा जूआ खेलना, कोप के कारण विषाक्त भोजन खिलाना, मार डालने के लिए साँप से कटवाना, बाँधकर पानी मे उस प्रकार फेकना, और अनेक प्रकार के कुकर्म करना यह सव याद आया और उसने क्रुद्ध होकर रथ और झंडा शरो से तोड डाला । कर्ण भी वहुत परेशान हुआ और कुन्ती के साथ जो शपथ की थी जसे भूल वैठा। कुन्तीपुत्र (भीम) का वध करने का निश्चय करके तुरन्त दूसरे रथ पर बैठकर कर्ण ने असख्य तीर चलाये। दुर्मुख भी लड़ने के लिए आगे बढा पर भीम ने उसके शरीर को तिल के समान पीस डाला। कर्ण की आँखे घूमने लगी, भीम तो तनिक भी न थका। ३४१-३४८ तब वञ्चक सुयोधन के पाँच भाई,

वट्टमिट्टानोन्नतु कण्टु वन्पट
पेट्टन्नटुत्तु शूल मुसलं गद ३६९
शक्तिकळ् मुळ्त्तटि वाळु चुरिकयुं
चक्र परशु वज्रङ्ङळ् कुन्तङ्ङळुं ३७०
शस्त्रङ्ङळु वरिषिच्चितु कर्ण्णने ।
मित्रात्मजनेय्तवटेयु खण्डिच्चु ३७१
वद्धकोपत्तोटु चोल्लिनानिङ्ङने—
बद्धनायीटोला चित्तभयेन नी- ३७२
योर्क्कटो कर्ण्णनेन्नेन्ने वृकोदरा !
ओर्क्क वकनल्ल किर्म्मीरनल्ल ञान्
पार्क्क हिडिबनु मागधनुमल्ल ३७३
ऊक्कु निनक्कुण्टु पारमेन्नाकिलुं
पोर्क्कु करुति वराय्क नीयेन्नुमे । ३७४
पक्षे वनत्तिनु पोय्क्कोळ्कवेण्टतुं
भक्षणमुळ्ळेटमेङ्किलुमामेटो । ३७५
वल्लाते निन्नु मरिञ्ञुनोक्काय्क नी
कोल्लुन्नतल्ल ञानेन्तुमे निर्ण्णयं । ३७६
मण्टिक्कितय्क्कयुवेण्ट किरीटियुं
कोण्टल्नेर्वर्ण्णनुमेङ्ङितवरुटे ३७७
पिन्निलोळिच्चुकोळ्केन्नु चोल्लुंविधौ
मुन्निलाम्मारु वन्नीटिनान् पार्त्थनु- ३७८

यह शरवर्षा लगी और कुछ घबडाने लगा । यह देखकर उसकी सेना आगे बढी और उसने कर्ण पर ३६३-३६९ शूल, मुसल, गदा, शक्ति, तलवार, खड्ग, चक्र, परशु, वज्र, कुन्त आदि अनेक शस्त्रों की वर्षा की । मित्रात्मज (कर्ण) ने तो चलाये गये सभी शस्त्रो का खण्डन करके इस प्रकार कहा—"हे वृकोदर अपने ही डर से बद्ध न होजाओ, याद रखो कि मैं कर्ण हूँ । याद रखो कि मैं न बक हूँ और न किर्म्मीर, देखो कि मैं न हिडिंब हूँ और न मागध, तुम्हारे पास शक्ति बहुत है, फिर भी जान बूझकर लडने न आया करो । तुम वन चले जाओ जहाँ तुम्हे भोजन भी मिल जायगा । वही खड़े-खडे गिर न जाओ, मैं तुम्हारा वध करनेवाला नही हूँ, इसमे सन्देह नही । ३७०-३७६ दौड़ दौड़कर थको मत । अर्जुन और घनश्याम (कृष्ण) कहाँ है । उनके पीछे छिप जाओ ।" ऐसा कह

अॆण्णमिल्लातॊरु बाणङ्ङळॆय्तॆय्तु
कर्ण्णनुटॆयुटल् कीऱिनानेटवु । ३५९
अंग तळर्न्निरिक्कुन्न सुयोधन-
नंगेशनॆक्कॊलचॆय्युमे मारुति ३६०
चॆल्लुविनाशु पट्टुयुमायॆन्नितु
चॊल्लिनान् तन्पिमारोटु नराधिपन् ।
नन्नाय् तुणच्चारवर्कळु कर्ण्णनु । ३६१
नन्नायि कण्टतटुत्तॆन्नु भीमनु
कॊन्नानॊरेऴिनॆप्पिन्नॆयुमन्नेर । ३६२
कर्ण्णनु वन्नॊरु कोपं पऱवति-
नित्तु पणि नमुक्कॆन्नतु निर्ण्णयं । ३६३
भीमनोटेटमणञ्ञु सूर्यात्मजन्
पेमऴपोलॆ शरङ्ङळ् तूकीटिनान् । ३६४
विल्लु मुऱिच्चु तेरुं कळञ्ञानवन्
नल्लनां मारुति भूमियिल् चाटिनान् । ३६५
वाळु परिचयु कैक्कॊण्टटुत्तप्पोळ्
बाणङ्ङळॆय्तु मुऱिच्चान् परिचयु । ३६६
वाळुकॊण्टॊन्नॆऱिञ्ञीटिनान् भीमनु
कोळॆ कऴिवुण्टतिनॆन्नु कर्ण्णनुं ३६७
कूटन् मऴयत्तु पोकुन्नवण्णमे
काट्टिन्मकन् शरमारियुमेटेटु ३६८

पहुँचा तब भीम ने आँखे लाल करते हुए असख्य बाण चलाकर कर्ण के शरीर को चीर डाला। शरीर के थके राजा सुयोधन ने अनुजो से कहा—"भीम तो अगेश (कर्ण) को मार डालेगा, सेना लेकर जल्दी चलो।" और उन्होने कर्ण की खूब सहायता की। "अच्छा हुआ कि तुम लोग निकट दिखाई दे रहे हो" ऐसा कहते हुए भीम ने सात औरे मार डाले। ३५७-३६२ कर्ण का जो क्रोध हुआ उसका वर्णन करना मेरे लिए कठिन काम है। कर्ण ने भीम से तीव्र युद्ध किया और घोर वर्षा के समान शरवर्षा की। उसका धनुष तोड डाला, उसका रथ नष्ट हुआ। सुन्दर भीम भूमि पर कूदा। जब तलवार और चर्म लेकर आगे बढ़ा तब बाणो से उसका चर्म तोड डाला। भीम ने अपने खड्ग को फेका। कर्ण ने कहा "इसके लिए भी उपाय है"। घोर वर्षा मे चलने के समान भीम को

भूरिश्रवावणञ्ञेय्तोरुनेरत्तु
पूरिच्चितन्पुकोण्टाकाशमार्ग्गवुं । ३८९
वृत्रनुमिन्द्रनुमेटपोलेयीरु
युद्धं भयङ्करमुण्टायितन्नेरं । ३९०
शंखपटहादिवाद्यङ्ङळ् घोषिच्चु
शङ्क वेटिञ्ञु नालञ्चारुनाळिक ३९१
रण्टु मलमेल् मळ पोळियुवण्णं
कण्टुकूटातवण्णं पोरुतीटिनार् । ३९२
विल्लेय्तु पोट्टिच्चु तेरु कळञ्ञितु
शल्यतरमुटनन्योन्यमन्नेरं । ३९३
खळ्गचर्म्मङ्ङळ् कैक्कोण्टङ्ङिरुवरुं
पक्षिकळेप्पोले पुष्करे पोङ्ङिनार् । ३९४
कण्टवर्क्कानन्दमाम्मारिरुवरु-
मुण्टायि सगरमेत्र मनोहरं । ३९५
पेट्टेन्नु वाळ् मुरिच्चीटिनान् सात्यकि
मुष्टियुद्धत्तिलेत्तिप्पिटिच्चीटिनान् । ३९६
मुष्टि चुरुट्टित्तेरुत्तेरेक्कुत्तियुं
केट्टियुं कालुं करङ्ङळु तङ्ङळिल् । ३९७
निष्ठुरसांवण्णं मुट्टियु मुट्टुको-
ण्टिट्टु तलय्क्कु तलकोण्टटिक्कयुं । ३९८

लगा और सारा आकाशमार्ग वाणो से भर गया। तव वृत्र और इन्द्र के युद्ध के समान एक भयङ्कर युद्ध हुआ। ३८४-३९० शख, पटह आदि वाद्यो का घोप उठा। चार, पाँच या छ· घटो तक विना शङ्का के दो पहाडो पर वर्षा के गिरने के समान दोनो ऐसे लडे कि उसको देखना कठिन था। धनुष का प्रयोग करके दोनो ने एक दूसरे का रथ तोडकर नष्टकर दिया। हाथ मे खड्ग और चर्म लेकर दोनो, पक्षियो की तरह आकाश मे उठे। प्रेक्षको को आनन्द पैदा करनेवाला मनोहर युद्ध दोनो का हुआ। सात्यकि ने झट से उसका खड्ग तोड डाला। तव मुष्टि-युद्ध मे उसने ज़ोर पकड लिया। मुट्ठी से लगातार घूसे मारे, एक दूसरे के हाथ-पैर पकड लिए। ३९१-३९७ सिर से तीव्र आघात किया, सिर पर आघात खाकर भी सिर ही से मारा। दोनो ने एक दूसरे को पकड लिया, एक दूसरे को मारा, जोर से कूटा, दाँत से काट-पीसा। जब ये

मेन्तेटो निल्लुनिल्लेन्तु पऱ्युन्नु
अन्तु ञान्कूटेयरियरुतेन्नुण्टो ? ३७९
पोर्क्कळंपुक्कु रहस्यं पऱ्युन्न-
ताक्कु तोन्नुं तिरि पोरिनामेङ्किलो । ३८०
अन्तिनिविटेक्कु विल्लुमाय् वन्नितु
चन्तमुण्टेन्नतु काट्टुवानो भवान् ? ३८१
इत्थं पऱ्युन्न वृत्रारिपुत्रनुं
मित्रतनयनुं तम्मिल् पोरुत पो- ३८२
रेत्रयु पारमट्टुत्तु धनञ्जयन्
अर्द्धचन्द्रप्रभमाय शरङ्ङळे- ३८३
य्तत्तल् वरुत्तियोटिच्चानतुनेरं ।
काल् कै तुट तोळ् तल गळमेन्निव ३८४
वेगेन खण्डिच्चु खण्डिच्चु खण्डिच्चुं
आळान वाजिकळेक्कोलचेय्तट्टु- ३८५
त्तालोलकल्लोलहल्लोहलंपोले
कोलाहलत्तोटट्टुक्कुन्न सात्यकि । ३८६
शूरत पूण्टोरु कालारियेप्पोले
भूरिश्रवावट्टुत्तानतिविद्रुतं । ३८७
कोन्नोळिञ्ञेङ्ङुमयय्क्कुन्नतिल्लेन्नु
निन्ने ञानेन्नाशु मन्नवनाकिय ३८८

ही रहे थे कि अर्जुन सामने आ पहुँचा (और बोला) "ठहरो ! ठहरो ! क्या कह रहे हो ? क्या मैं भी सुन नही सकता हूँ ? । रणभूमि आकर रहस्य कहने को किसको सूझता है । अब घूम के लडने आओ, अगर कर सकते हो । धनुप लेकर यहाँ क्यों चले आये ? क्या अपना सौन्दर्य दिखलाना था ?" इस प्रकार कहनेवाले वृत्रारिपुत्र (अर्जुन) और मित्रतनय (कर्ण) का आपस में अत्यन्त तीव्र युद्ध हुआ। धनञ्जय ने अर्धचन्द्र के समान प्रभावाले शर चलाकर परेशान किया और भगा दिया । पैर, हाथ, जाँघ, कन्धा, सिर, गरदन ये सब वेग से काटते हुए आदमियो, हाथियो और घोडो का वध करते हुए आलोल कल्लोल के गरजने के समान कोलाहल करते हुए सात्यकि पहुँचे । शूरता सहित कालारि (शिवजी) के समान भूरिश्रवा भी तुरन्त निकट पहुँचा । "मै विना तुम्हारा वध किये तुम्हे कही नही भेजनेवाला हूँ", ऐसा कहता हुआ राजा भूरिश्रवा सामने आकर तीर चलाने

माधवन्तन्नेयुं पार्त्थनेत्तन्नेयु-
मादरवोटे पुकळ्त्तिनार् कण्टवर् । ४१०
नन्दात्मजरथमेऱिनान् सात्यकि
वन्नटुत्तानतुनेरत्तु कर्ण्णनुं । ४११
तङ्ङळिल्त्तन्ने शरवरिषच्चेय्ता-
रिङ्ङनेयिल्लोरु युद्धमितुपोले । ४१२
पार्त्थनुं भीमनुं सात्यकिवीरनुं
मूर्त्तिकळ् मूवरुमेन्नपोले रुषा ४१३
कूर्त्त शरङ्ङळुं तूकियटुत्तप्पो-
ळार्त्तरायार् तुलो धार्त्तराष्ट्रादिकळ् । ४१४
वृद्धक्षत्रात्मजनाय जयद्रथन्-
मृत्यु तटुप्पानोरुमिच्चु कर्ण्णनुं ४१५
द्रोणरुं पुत्रनु भोजन् शकुनियु
मानियायुळ्ळ कृपर् दुरियोधनन् ४१६
पिन्नेयु चोल्लुळ्ळ तेराळिकळोक्क
निन्नार् पोरुतोरु काणिपळुताते । ४१७
पिन्निल् जयद्रथन्तन्नेयुमाक्किनार् ।
सन्नद्धरायार् मरिप्पतिन्नेवरुं । ४१८
इक्कण्टनामिवरोटु पोर्च्चेय्तु चे-
य्तोक्कयोटुङ्ङियोळिञ्ञवनेक्कोल्वान् ४१९
अेन्नुमयय्ककरुतेन्नु तम्मिल्पऱ-
ञ्ञोन्निच्चिळक्क कळञ्ञु निन्नीटिनार् । ४२०

की सादर प्रशंसा की । सात्यकि कृष्ण के रथ पर चढा, उसी समय कर्ण भी वहाँ आ पहुँचा । दोनो ने एक दूसरे पर शरवर्षा की । उसके समान और कोई युद्ध नही हुआ था । ४०७-४१२ जब अर्जुन, भीम और वीर सात्यकि तीन मूर्तियो के समान क्रोध से तीक्ष्ण बाण छोडते हुए निकट पहुँचे, तब दुर्योधन आदि अत्यन्त घबडाये । वृद्धक्षत्र के पुत्र जयद्रथ को मृत्यु से बचाने के लिए कर्ण, द्रोण, उनका पुत्र, भोज, शकुनि, मानी कृप, दुर्योधन, और सब विख्यात रथी लडने के लिए खडे हो गये ताकि सभी प्रेक्षक उनको देख सके । और जयद्रथ को पीछे कर दिया । और सब मरने के लिए तैयार हो गये । "इन सामने दिखाई देनेवालो से लड़ लड़कर सबको खतम करके उसे (जयद्रथ को) मारना है, अब उसे छोड़ना

अँटुपिटिच्चुमयच्चुमटिच्चुमि-
ङ्डूटमिटिच्चुं कटिच्चु पोटिच्चुम- ३९९
म्माट्लरन्तकन्मारायु मरुविन
कूट्न्मार् तङ्ङळिलेटु पोरुन्नेर ४००
ऊक्कनां भूरिश्रवाविन् चविट्टुकों-
ण्टावक कुरञ्ञु वीणीटिनान् सात्यकि । ४०१
चेन्नु तलमुटि चुट्टिप्पिटिच्चितु
मन्ननिटत्तुकरंकोण्टु मटतिल् ४०२
वाळुमेटुत्तुटन् तूक्किप्पिटिच्चिटट्टु
मेळं कलर्न्नु गळभुवि वेट्टुवान् ४०३
ओङ्ङिय नेरत्तु कृष्णनुतिरुवटि
शार्ङ्गवरायुधन् नारायणन् परन् ४०४
संभ्रमत्तोटरुळ्चेय्तितु पार्थनो-
टुन्परकोन्नन्दन ! वीरा ! विजया ! नी ४०५
सात्यकियेक्कोलचेय्युन्नतु काण्क
पार्त्थिवनाकिय भूरिश्रवावेटो । ४०६
पेट्टेन्नु नोक्कियतुकण्टु फल्गुनन्
मुट्टिनुनेरे मुरिच्चानोरन्पिनाल् । ४०७
वाळुं करवुमायु वीणितकलवे
वाळेटुत्तानतुतन्ने शिनिसुतन् । ४०८
भूरिश्रवाविन् तलयरुत्तीटिनान्
पूरिच्च कोपमियन्नोरु सात्यकि । ४०९

दोनो शत्रुओ के नाशक वृषभ के समान योद्धा इस प्रकार लड रहे थे तब शक्तिशाली भूरिश्रवा की लात खाकर सात्यकि कमजोरी से गिर गया। तब राजा (भूरिश्रवा) ने झट से बाये हाथ से उसकी शिखा पकडकर उसे उठाया और दूसरे हाथ मे तलवार लेकर उसका गरदन काटनेवाला ही था तब पूज्य कृष्ण, शार्ङ्ग आयुधवाला, नारायण, पर, आवेग के साथ अर्जुन से बोले—"हे इन्द्रपुत्र ! वीर ! विजय ! देखो ! राजा भूरिश्रवा सात्यकि की हत्या करनेवाला है।" ३९८-४०६ तव अर्जुन ने यह देखकर एक वाण से उसका घुटना काट डाला। तब हाथ मे लिये तलवार के साथ वह गिर गया। बढा-चढा क्रोधवाले सात्यकि ने उसी तलवार को लेकर भूरिश्रवा का सिर काट डाला। देखनेवालो ने माधव की और पार्थ

अस्तमिच्चीटिनानादित्यदेवनें-
न्नुळ्ळत्तळिरिक्कुल् निनच्चितेल्लावरुं । ४३१
सैन्धवन्तन्ने रक्षिच्चुकळिञ्ञितु
कौन्तेयसत्यवुं मित्थ्ययायिवन्नितें । ४३२
वह्नियिल् वीणु मरिक्कुमाऱायितु
विण्णवर्कोन्मकनिल्लोरु संशयं । ४३३
शेषिच्चरिकळ्क्कु चाकुमाऱायितु
वाळुमाऱायितु धर्म्मजन् काननं । ४३४
इत्थं परञ्ञु कळिच्चुपुळच्चति-
मत्तराय् वन्नितु कौरववीररुं । ४३५
अप्पोळ् जयद्रथन्तन्टे तलयतुं
शिल्पमाय्क्कण्टु मुकुन्दन्तिरुवटि । ४३६
काट्टिक्कोटुत्तितु पार्त्थनु वैकातें
वाट्टंवरातोरु वाणं प्रयोगिच्चु ४३७
कण्ठं मुऱिच्चतु कण्टु ससम्भ्रम
कोण्टलुनेर्वर्ण्णनु पार्त्थनोटोतिनान् । ४३८
ऊळियिल् वीळोला सैन्धवन्तन् तल
वीळुकिलुण्टु विपममऱिकेंटो । ४३९
जिष्णुववन्तलमेलेय्तुटनुटन्
विष्णुपदत्तिङ्कलाक्कीट्टु चोदिच्चान्— ४४०
मल्लारिसूदन ! मल्लविलोचन !
चोल्लेविटेक्कोण्टेयाक्कणमित्तल ? ४४१

(जयद्रथ) की रक्षा हो गयी और अर्जुन की शपथ झूठी निकली। देवों के नायक के पुत्र अर्जुन को अव आग मे कूदकर मरना है इसमे कोई सन्देह नही है। वचे शत्रुओ का भी मरने का समय निकट है। और युधिष्ठर को वन मे जाकर राज करना है।" ४२८-४३४ इस प्रकार कहते हुए और खेलते-कूदते हुए कौरववीर सव मत्त हो गये। उस समय पूज्य मुकुन्द ने जयद्रथ का सिर देखा। तुरन्त ही अर्जुन को उसे दिखा दिया। अर्जुन ने एक अच्छा वाण प्रयोग करके उसका सिर काट डाला। यह देखकर घनश्याम (कृष्ण) ने सभ्रम के साथ अर्जुन से कहा—"सैन्धव (जयद्रथ) के सिर को भूमिपर न गिराओ। अगर वह भूमि पर गिरेगा तो वड़ी दिक्कत होगी।" तव अर्जुन ने उसके सिर को वाण से आकाश मे ले जाकर पूँछा—हे मल्लारिसूदन! हे मल्लविलोचन! वताओ इस सिर को कहाँ

वारणवाजिरथचरणद्ध्वनि
सारमियन्न चेरुञाणोलिद्ध्वनि ४२१
घोरपटहादि वीरवाद्यध्वनि
चारणकिन्नरकिम्पुरुषध्वनि ४२२
कारणपूरुषपाञ्चजन्यद्ध्वनि ।
नारदवीणारवाभिरामद्ध्वनि ४२३
ऍन्निवकॊण्टु मुऴङ्ङी जगत्त्रयं ।
नन्नुनन्नॆन्नु पुकण्णितु नारदन् । ४२४
घोरमायुण्टाय संगर कण्टाशु
दारुकनुं तेरिलेऱि वन्नीटिनान् । ४२५
विण्णवर्नाथना नारायणनॆयु
विण्णवर्कोन्मकन्तन्नॆयुमन्नेर ४२६
विण्णवर् पुष्पवरिपवु चेय्तितु
विण्णिलॆ नारिमारुं विळङ्ङीटिनार् । ४२७
नीङ्ङुकयिल्ल पटयॆन्नु कण्टथ
शार्ङ्गवरायुधनाकिय माधवन् ४२८
उग्रमायुळ्ळ दिवाकरबिंबवु
चक्रमॆट्टुत्तुपिटिच्चु मऱच्चितु । ४२९
शक्रात्मजनुटॆ सत्यत्तॆ रक्षिप्पान्
विक्रमशालियां विश्वैकनायकन् । ४३०

न चाहिये", ऐसा आपस मे तय करके निष्कम्प खड़े होगये । ४१३-४२० हाथी, घोडे, रथ, सैनिको के चरण, दृढ धनुष की ज्या, घोर पटह, वीरो के वाद्य चारण, किन्नर, किंपुरुष, कारणपुरुष का पाञ्चजन्य, नारद की वीणा इन सबकी ध्वनियो से तीनो जगत गूंज उठी । बहुत अच्छा ! बहुत अच्छा ! कहते हुए नारद ने साधुवाद किया । इस घोर युद्ध को देखकर दारुक भी रथ पर बैठकर चला आया । उस समय देवो ने देवो के नाथ नारायण की और देवों के राजा के पुत्र अर्जुन पर पुष्पवृष्टि की । और स्वर्ग की स्त्रियां भी सोल्लास हुई । ४२१-४२७ यह देखकर कि सेना हटनेवाली नही है, शार्ङ्गवर धारण करनेवाले माधव ने अपने चक्र को हाथ मे लेकर उग्रसूर्य के बिंब को ढक दिया । विक्रमशाली और विश्व के एकमात्र नायक ने अर्जुन की शपथ की रक्षा करने के लिए ऐसा किया । सभी ने अपने मन मे सोचा कि सूर्य का अस्तमय होगया । "सैन्धव

चित्ते निनच्चतु साधिक्कुमल्लाय्कि-
लर्त्थपुरुपकारादियुं निष्फल । ४५२
चित्तकारुण्यमुण्टाकेणमेङ्किलो
भक्तियोंळिञ्ञु मटोन्नु वेण्टातानु । ४५३
भक्तना मर्त्त्यनशक्तनेन्नाकिलुं
निर्द्धननाकिलुं नीचनेन्नाकिलु ४५४
उत्तमन्मारिल्वच्चुत्तमनाय्वन्नु
भुक्तियु मुक्तियु साधिक्कुमेवनुं । ४५५
बुद्धि कुरञ्ञोन्नु शुद्धिचेर्न्नुण्टेङ्किल्
मुग्धविलोचननें भजिच्चीटुविन् । ४५६
दीर्घमाय् वीर्त्तु विपादिच्चु कौरवर्
पोर्क्कळंतन्निल्निन्नोट्टुळन्नीटिनार् । ४५७
वेल्लुवान् वेल नमुक्कु रिपुक्कळे
नल्ल मोंळियवर्क्कुण्टेन्नु निर्णय । ४५८
चोल्लाय्क जाळ्यमितेन्नु गुरुसुतन्
निल्लेन्नटुत्तु कृपरुमायन्नेरं ४५९
अन्पुळ्ळ शिष्यनामुन्पर्कोन्पुत्रनु-
मन्पुकळ्कोण्टु पिळर्न्नु कृपरुटल् । ४६०
मोहिच्चु भूमियिल् वीणु कृपाचार्यन्
हा ! हा ! गुरुवधंचेय्तेनितेन्नति- ४६१

निष्फल हो जाते है। चित्तकारुण्य अगर प्राप्त करना है तो भक्ति के अतिरिक्त और कुछ नही चाहिए। जो मानव भक्त है वह अशक्त, निर्धन और नीच क्यो न हो, श्रेष्ठो मे श्रेष्ठ होकर भुक्ति और मुक्ति प्राप्त कर सकता है। ४४९-४५५ अगर तुम्हारी बुद्धि मे कमी है, पर शुद्धि है तो मुग्धविलोचन (कृष्ण) का भजन करो। कौरव दीर्घ निश्वास करते हुए रणभूमि मे खडे दु.खित हुए। (और बोले) "शत्रुओ को मारना हमारे लिए कठिन है, निस्सन्देह उनके पास बल है।" गुरुपुत्र (अश्वत्थामा) ने कहा—'ऐसी कमजोरी की बात न कहो' और कृपाचार्य के साथ आगे बढा। तब प्रेमी शिष्य इन्द्रपुत्र (अर्जुन) ने बाणो से कृप के शरीर को चीरा। कृपाचार्य बेहोश होकर पृथ्वीपर गिरे। हा ! हा ! मैं ने गुरुवध किया ! ऐसा कहता हुआ अर्जुन स्नेह के कारण दुःखित हुआ। तब कृष्ण ने कहा—"केवल बेहोश है, मरे नही।" ४५६-४६२

चौल्लिनानप्पोळवनोटु कृष्णनुं
चौल्लियन्नोरु वृद्धक्षत्रनाकिय ४४२
कल्याणशीलन् जयद्रथन्तन् पिता
चौल्लिनानेन्टे मकन्टे तलयरु- ४४३
त्तूळियिल् वीळ्त्तुन्नवर्कळुटे तल-
येळुनुरुङ्ङि मरिक्कॆन्नतिन्निनि । ४४४
सन्ध्ययॆन्नोर्त्तु वन्नूप्पान् जलं कोरि
मन्त्रवुं चौल्लि निल्क्कुन्नितिप्पोळुटन् ४४५
ऊक्कुन्नतिन्मुन्पे तल्ककरंतन्निल-
ङ्ङाक्कणमित्तलयॆन्नितु कृष्णनुं । ४४६
ऊप्पतिन्नाय्क्कोण्टु कोरिय नीरतिल्
वाय्पोटु वीणितु पुत्रनुटे तल । ४४७
पेट्टेन्नु मुण्डवु नीरुमङ्ङप्पोळु
तिट्टुकळञ्ञु वृद्धक्षत्रनु चत्तान् । ४४८
युद्धे जयिच्चु वृद्धक्षत्रपुत्रनें
वृत्रारिपुत्रनुं सत्यत्तॆ रक्षिच्चान् । ४४९
चक्रवुमिङ्ङटक्कीटिनान् माधव-
नर्क्कनु नन्नाय् तॆळिञ्ञु विळङ्ङिनान् । ४५०
सत्यस्वरूपनामीश्वरन्तन्नुटॆ
चित्तकारुण्यमुण्टङ्किलसारनु ४५१

पहुँचाऊँ ? ४३५-४४१ तब कृष्ण ने उससे कहा—"जयद्रथ के पिता कल्याणशील वृद्धक्षत्र ने पहले ही कहा है मेरे पुत्र का सिर काटकर जो भूमि पर गिरावेगे, उनका सिर सात टुकडे हो जायेगे और वे मरेगे। वह अभी सध्या हो गयी ऐसा समझकर अपनी सध्या करने के लिए हाथ मे पानी लेकर मन्त्र जपता हुआ खडा है उसकी सध्या समाप्त होने के पहले ही इस सिर को उसके हाथ मे गिराओ।" तब सध्या करने के लिए हाथ मे लिए पानी मे अपने पुत्र का सिर गिरा। तुरन्त ही सिर और पानी बहकर नष्ट होगये और वृद्धक्षत्र की मृत्यु हुई। ४४२-४४८ इस प्रकार वृद्धक्षत्र के पुत्र को हराकर अर्जुन ने अपनी शपथ की पूर्ति की। माधव ने अपने चक्र को वापस ले लिया और सूर्य भी साफ चमकने लगा। अगर सत्यस्वरूप ईश्वर का कारुण्य अपने प्रति है तो कोई तुच्छ पुरुष की भी अभिलापा सिद्ध हो जाती है, नही तो सभी साधन और पुरुषकार

चिल्पुमान् भक्तप्रियन् परमेश्वरन् !
नित्यमेनिक्कु तुणयाकमूलमे-
न्नत्तलोळिञ्ञु जयं वरुन्नू सदा । ४७३
आर्क्कुमोर्त्तलिञ्ञियावतल्लातव-
नाक्कमेरुं नृपन्तन्नोटरुळ्चेय्तु— ४७४
मन्नवा ! निन्नुटे कोपं मुळ्क्कयाल्
वन्नीटुमल्लो विजयं विजयनाल् । ४७५
धार्त्तराष्ट्रन्मार् कुलक्षयं प्रापिक्कुं
धात्रीपते ! पुनरिल्लोरु संशयं । ४७६

रात्रियुद्धवुं घटोल्क्कचवधवुं

इत्थं परञ्ञुपरञ्ञवर् मेविनार्
चित्तमुळन्नु सुयोधननन्नेर । १
द्रोणरोटेरेप्परुषं परञ्ञितु
क्षीणतयोटरुळ्चेय्तिताचार्यनु— २
अन्नेप्परुषं परयुन्नतेन्तिनु ?
अन्नालोरुवण्णमावतु चेय्तु ञान् । ३
ओर्क्क नीयु नरनारायणन्मारे-
यार्क्कु जयिक्करुतेन्नरिञ्ञियेणमे । ४

आदि देवो का वन्द्य, इन्द्र आदि अमरो का सेवित, माधव, चित्पुरुष, भक्तो का प्रिय, परमेश्वर, कृष्ण सदैव मेरा सहायक होने के कारण मेरे दु:ख का नाश और मेरी विजय होती रही। जो वस्तुत किसी का भी ज्ञेय नही है (कृष्ण) उसने शक्तिशाली राजा से कहा— 'हे राजन् ! तुम्हारे कोप के बढने से अर्जुन के द्वारा विजय होगी। धृतराष्ट्र के पुत्र समाप्त हो जायेगे ! हे भूपाल ! इसमे कोई सन्देह नही है। ४६९-४७६

रात्रियुद्ध और घटोत्कच का वध

जब वे इस प्रकार आपस मे बात कर रहे थे तब सुयोधन का मन पीड़ित हुआ। उसने द्रोण को खरी सुनाई और आचार्य ने क्षीणता के साथ कहा— "मुझसे क्यों खरी बाते कहते हो ? जो मुझसे हो सकता था मैं ने किया। तुम भी याद रखो कि नर और नारायण को कोई भी जीत नही सकता है। मैं अब युद्ध करने के लिए सूर्योदय तक न

स्नेहपरवशनायितु पार्त्थनुं ।
मोहमत्ते मरिच्चीलेन्नु कृष्णनु- ४६२
माहवचातुर्यमुळ्ळ जलधर-
वाहनपुत्रनें वेल्लुवानायति- ४६३
साहसंपूण्टटुत्तोरु महारथ-
राहन्त ! हाहानिनादेन वाङ्ङिनार् । ४६४
आचार्यपुत्रनुमाशु जयिप्पति-
न्नाशयुण्टायतु पोयोरनन्तरं ४६५
वाङ्ङि सुयोधनसैन्यवुं दुःखिच्चु
शार्ङ्गवरायुधन्तानुं विजयनुं ४६६
ऑन्निच्चु कैनिलपुक्कान् धनञ्जयन्
वन्दिच्चितु नृपन्तन्नेयुमादराल् । ४६७
नन्नु जयद्रथन्तन्नें वधिच्चतु
मन्नव ! फल्गुननेन्नितु कृष्णनुं । ४६८
मन्दस्मितंचेय्तु कोळ्मयिक्कोण्टोरा-
नन्दबाष्पं वार्त्तु वन्दिच्चु चोल्लिनान्— ४६९
नित्यननन्तननादि मुकुन्दनेन्-
चित्ते विळङ्ङुन्न नारायणन् परन् ४७०
कृष्णन् करुणाकरन् कमलावरन्
वृष्णिकुलाधिपन् विश्वैकनायकन् ४७१
विष्णु विमलन् विरिञ्चादिवन्दितन्
जिष्णुमुखामरसेवितन् माधवन् ४७२

युद्ध मे कुशल जलधरवाहन (इन्द्र) के पुत्र को मारने के लिए जो महारथी साहस के साथ आये थे वे हाहा निनाद करते हुए पीछे हटे। जब आचार्यपुत्र (अश्वत्थामा) की जल्दी जीतने की इच्छा समाप्त होगयी, तव सुयोधन की सेना दुःखित होकर पीछे हटी। शार्ङ्गवर धारण करने वाले और अर्जुन दोनो साथ तव गये। अर्जुन ने राजा (युधिष्ठिर) की सादर वन्दना की। "हे राजन् ! अच्छा हुआ कि अर्जुन ने जयद्रथ का वध किया"—ऐसा कृष्ण वोले। ४६३-४६८ तब युधिष्ठिर ने मुस्कराकर स्नेह के कारण आनन्द के आंसू गिराते हुए सादर कहा— नित्य, अनन्त, अनादि, मेरे चित्त मे विराजमान नारायण, पर, करुणाकर, कमला के पति, वृष्णिकुल का नाथ, विश्वैकनायक विष्णु, विमल, ब्रह्मा

भैरवाकारमाय्वन्नितु युद्धवु
पार तळर्न्नु घटोत्क्कचवीरनुं । १६
तोटॊळिच्चानतु कण्टट्टुत्तीटिनान्
काटिन्मकन् पॆरुकूटनॆप्पोलॆय- १७
म्माट्टलर्कूट्टत्तिलूक्कोट्टुपुक्कुटन्
माटि मरुतल निन्नलरीटिनान् । १८
नूट्टवर्मूत्तवनाय सुयोधन-
नाट्टरुतात दुःखं पूण्टतुनेरं । १९
कण्णुनीरालोलमालियन्नाकुलाल्
कर्ण्णनोटल्लल् तीर्क्कॆन्नु चॊल्लीटिनान् । २०
निर्ण्णय पाण्डवन्मारॆ मुटिप्पनॆ-
न्नर्ण्णवंपोलॆयलरिनान् कर्ण्णनुं । २१
ऍन्नतुकेट्टु परञ्ञु कृपाचार्य-
नॆन्ने विशेषमे नन्नितॆटो सखे ! २२
ऍन्नुं कुरय्क्कुन्न पट्टि कटिक्कयि-
ल्लॆन्नु नी केट्टिट्टुमिल्ले सुयोधन ! २३
कॊल्लुक पाण्डवन्मारॆयॆन्नुळ्ळतु
चॊल्लुकयॆन्नि मटॊन्निल्ल कर्ण्णनाल् । २४
कॊल्लुन्नतुण्टॆङ्किलिन्नु ञानॆन्तिनु
चॊल्लुन्नतित्तरमॆन्नितु कर्ण्णनुं । २५

घोर-घोर शरवर्षा करने लगे तब उनकी चिल्लाहट और सिंहनादों से युद्ध भैरवाकार हो गया और वीर घटोत्कच बिलकुल थक गया और हारकर अलग हो गया। यह देखकर एक बड़े सांड के समान वायुपुत्र निकट आया और शत्रुओं के बीच घुसकर उनको डराता हुआ गरजने लगा। सौ भाइयों में ज्येष्ठ सुयोधन असाध्य दुःख प्राप्त करके आँसू गिराता हुआ कर्ण से बोला—"मेरा दुःख दूर करो।" १४-२० "मैं निस्सन्देह पाण्डवों को समाप्त करूँगा।" ऐसा कर्ण ने समुद्र के समान गरजा। यह सुनकर कृपाचार्य बोले—'वही विशेष बात ! अच्छा कहते हो हे मित्र !" हे सुयोधन ! तुमने क्या यह नहीं सुना है कि हमेशा भौंकने वाला कुत्ता काटता नहीं है ? पाण्डवों का वध करना, यह बात तो कर्ण कह सकता है, और कुछ नहीं। तब कर्ण ने कहा—"मैं आज उनका वध करूँगा, पर मुझसे इस तरह क्यों बात करते हो ? "मैं उनको मारूँगा"

पाक्कुन्नतल्ल पुलरुवान् जानिनि-
प्पोक्कॅन्नु तेरिलेऱी गुरुवीरनु । ५
रात्रियिलार्त्तट्टुत्तारतुकण्टोरु-
पार्त्थादिकळुं पुऱप्पेट्टु पोरिनाय् । ६
भीमनादत्तोटट्टुत्तरिवीररे-
व्भीमन् तेरुतेरेक्कोन्नोटुक्कीटिनान् । ७
आतुरनायिताचार्यनुमेत्रयु
भीतिकलर्न्नु सुयोधनसैन्यवुं । ८
सोमदत्तन् महीपालन् महारथन्
पोर्मदत्तोटु शरवरिष चेय्तान् । ९
ॲन्नोटितॆल्लां कणक्कल्ल निल्लु नि-
ल्लॆन्नटुत्तीटिनान् सात्यकिवीरनुं । १०
चॆन्नाननेकमक्षौहिणिसेनयो-
टुन्नतनाय घटोत्क्कचनन्नेरं । ११
वन्नोरसुरप्पटयुं घटोत्क्कचन्-
तन्नुटॆ बाणप्रयोगवुं कण्टिट्टु १२
नन्नायटुत्तितश्वत्थामा दैत्यरे
कोन्नोटुक्कीटिनान् बाणगणङ्ङळाल् । १३
रामनुं रावणन्तानुं पोरुन्पोलॆ
भीमनां द्रौणियुं भीमतनयनु १४
घोरघोरं शरमारिचोरिञ्ञपो-
तारवारङ्ङळुं सिंहनादङ्ङळुं १५

ठहरूगा।" ऐसा कहते हुए रथ पर चढे। सब रात मे सिंहनाद करते हुए निकले और अर्जुन आदि युद्ध के लिए चले। १-६ भयङ्कर नाद करते हुए भीम शत्रुवीरो को समाप्त करता चला। आचार्य अत्यन्त दुःखित हुआ और सुयोधन की सेना भी भयभीत हुई। महारथ महीपाल सोमदत्त ने युद्धमद के साथ शरवर्षा की। "ठहरो! ठहरो! यह सब मुझसे न चलेगा।" ऐसा कहता हुआ वीर सात्यकि उसके निकट गया। उस समय उन्नत, अनेक अक्षौहिणीवाले घटोत्कच ने कहा— असुरसेना को और घटोत्कच के बाणप्रयोग को देखकर अश्वत्थामा ने अत्यन्त निकट आकर बाणो से दैत्यो को समाप्त कर दिया। ७-१३ राम और रावण के युद्ध के समान भयङ्कर अश्वत्थामा और भीमपुत्र (घटोत्कच) जब

गोग्रहणादियु कण्कॊण्टु कण्टीले-
याग्रहं नी पऱयुन्नतॆन्तो कर्ण्ण । ३६
नावरिञ्ञीटुवनित्तरमॆन्नोटु
पेपऱञ्ञीटुकिलॆन्तितु कर्ण्णनु । ३७
मातुलन्तन्नॆप्पऱञ्ञतु केळ्क्कयाल्
कोप मुळ्ळुत्तेळुनेटितश्वत्थामा । ३८
कश्मलनाकिय निन्नॆयिप्पोळ्त्तन्नॆ
कुत्तिनुरुक्कुवनॆन्नु गुरुसुतन् । ३९
अन्तकनॆप्पोलॆ वेगालटुत्तप्पो-
ळन्तरा पुक्कान् दुरियोधनन्तानु । ४०
कण्टवर् चॆन्नु चाटिक्करवुं पिटि-
च्चुण्टाय घोषं पऱयावतल्लेतुं । ४१
कण्टु पॊरुक्कामो धिक्कारमॆन्नतु-
मुण्टां कळिवु चातिक्कारमॆन्नतु । ४२
पण्टुं दुरुक्तिचतिक्कारर् निङ्ङळो
कण्टुकॊण्टालुमतिक्कालमॆङ्किलो । ४३
कण्टिरिक्कुन्नु चतिक्कारर् निङ्ङळु
कण्टिरिक्कुन्नतिक्कालमॆङ्ङळुं । ४४
नीयल्ले पाञ्ञतु नीयल्ले पाञ्ञतु ?
नीयटङ्ङीटङ्ङु नीयटङ्ङीटङ्ङु ४५

कर रहे हो, हे कर्ण !" तव कर्ण ने उत्तर दिया, "अगर इस प्रकार वकोगे तो तुम्हारी जीभ काट डालूँगा ।" अपने मामा को इस प्रकार कहते हुए सुनकर अश्वत्थामा कोप के आवेश मे आया और वोला— "तुझ दुष्ट को मैं अभी-अभी काट डालूँगा ।" ऐसा कहकर जव यमराज के समान आगे दौड़ा तो दुर्योधन वीच मे आया । जिसने भी देखा दौड़कर हाथ पकड़ा । इससे जो कोलाहल मचा उसका वर्णन करना कठिन है । "जो धिक्कार किया गया उसे देखकर कैसे सहा जाय ?" मध्यस्थ लोगो के द्वारा मामला ठीक किया जा सकता है । ३६-४२ 'तुम लोग पहले ही से गाली देनेवाले और धोखा देनेवाले हो ।' 'अव क्या होगा सो देखलो' "तुम लोग देखते रहनेवाले धोखा देनेवाले हो" अव हम लोग भी देखते रहेगे" "तुम ही तो भाग गये थे, तुम ही तो भाग गये थे ?" "तुम दव जाओ, तुम दव जाओ" "तुम्हे कोई नही चाहता

कौल्लुन्नतुण्टेन्नोळिञ्ञु नीयो पण्टु
चौल्लुमारिल्लयल्लो नृपनोटेटो । २६
चेल्लुकयिल्ल किरीटितन् मुन्निल् नी
चेल्लुकिल् निन्नु पौरुकयुमिल्लल्लो । २७
निन्नु पौरुताकिलन्नवन् निन्नेयुं
कौन्नीटुक्कीटुमतिनिल्ल सशय । २८
एट्नाळीक्कवे फल्गुनन्तन्नोटु
तोट्तोळिञ्ञु आन् कण्टीलेटो निन्ने । २९
पाण्डवन्मारुटे शौर्यङ्ङळल्लयो
ताण्डवंचेय्युन्नतु भुवनङ्ङळिल् । ३०
सत्यं यमनियमार्ज्जवसन्तोष-
भक्तिशमदमदानतपोबल- ३१
शक्तिकळुळ्ळवर् पाण्डवन्मारत्रे
शक्तनेन्नुळ्ळ निनवे निनक्कुळ्ळु । ३२
कृष्णाविवाहवुं खाण्डवदाहवुं
वृष्णिकळ्तम्मे जयिच्चप्रकारवु ३३
उत्तरदिक्कु जयिच्चतुं वेगत्तिल्
मृत्युञ्जयन्तन्नोटस्त्र परिच्चतुं । ३४
युद्धे निवातकवचवधादियुं
चित्ररथविजयादियुमोर्क्क नी । ३५

इसके अतिरिक्त पहले ही से तुम राजा से और क्या कहते चले आ रहे हो ? तुम तो अर्जुन के सामने चलोगे ही नही, और चलोगे भी तो खडे होकर लड़ोगे ही नही । २१-२७ अगर खड़े होकर लड़ोगे तो वह आज तुम्हें मारकर समाप्त कर देगा, कोई सन्देह नही । जब भी तुमने उसका सामना किया, मैंने तुम्हे हारा ही देखा, और कुछ नही । पाण्डवो के ही शौर्य इस जगत् मे ताण्डव कर रहे हैं । सत्य, यम, नियम, आर्जव, सन्तोष, भक्ति, शम, दम, दान, तपोवल, ये सब शक्तियाँ पाण्डवो के पास हैं तुम्हारा तो केवल शक्त होने का अभिमान है । द्रौपदी का विवाह, खाण्डवदाह, वृष्णियो को जीतने का प्रकार उत्तरादिक् पर विजय, जल्दी शिवजी से अस्त्र की प्राप्ति, युद्ध मे निवातकवचो (एक समुद्रजीवी असुरवर्ग) का वध, चित्ररथ पर विजय, यह सब याद करो । २८-३५ गोग्रहण भी तुमने अपनी आँखों देखा है, तुम तो केवल अपनी इच्छा प्रकट

पौळ्ळु परञ्ञ दिवाकरनन्दन-
नुळ्ळुळ्ळमोटङ्ङुळरि वाङ्ङीटिनान् । ५६
कर्ण्णसखि दुरियोधननन्नेरं
चन्नु गुरुसुतन्तन्नोटपेक्षिच्चान् ५७
निर्त्तुक नम्मुटे सैन्यमौळियाते
वृत्रारिपुत्रनेक्कोल्लुक वैकाते । ५८
चेट्टु पौरुत्तालुमेन्नु गुरुसुतन्
तेट्टेन्नटुक्कुन्नतु कण्टनेरत्तु । ५९
पाञ्चालवीररटुत्तु पटयुमाय्
चाञ्चाटि निन्नु तुटङ्ङि रिपुक्कळु । ६०
निद्रयु क्षुत्तुं तळर्च्चयु दाहवुं
शस्त्रङ्ङळ्कोण्टु मुरिञ्ञुळ्ळ तापवुं— ६१
कैक्कोण्टोळिच्चु तुटङ्ङि पेरुम्पट ।
वेक्कमटुत्तितु वाह्लिकनन्नेर- ६२
मुग्रनायुळ्ळोरु सात्यकि वैकाते
निग्रहिच्चार्त्तु नटन्नटुत्तीटिनान् । ६३
पन्तवु कत्तिच्चितेटमुयरवे
चन्तमोटेल्लावरुं पट कण्टितु । ६४
योगिप्रतियोगि तम्मिल् तिरियाते
वेगालटुत्तिटकूटि पेरुम्पट । ६५

लकड़ी के समान चमकनेवाले बाणो के लगातार लगने से वे असह्य हो गये । इस लिए कर्ण जिसने झूठ बोला था, भीतर पीडित हुआ और पीछे हटा । ५०-५६ कर्ण के मित्र दुर्योधन उस समय गुरुपुत्र (अश्वत्थामा) के पास गया और बोला— "हमारी सेना को नष्ट हो जाने से रोको और वृत्रारिपुत्र (अर्जुन) का वध अविलम्ब करो ।" गुरुपुत्र ने कहा 'जरा सबर करो' और आगे बढा । तब पाञ्चालवीर अपनी सेना के साथ निकट आये और शत्रु ज़रा हिलने लगे । नीद, भूँख, थकावट, प्यास, शस्त्रो के व्रणो के कारण दर्द यह सब सहने के कारण बड़ी सेना नष्ट होने लगी । तब वाह्लीक जल्दी से आगे बढा । उस समय उग्र सात्यकि अविलम्ब ही मारता हुआ आगे बढा । ५७-६३ ऊँचे पर उल्का जलाई गयी जिससे सभी ने सेना ठीक से देखी । दोनो सेनाये आपस मे ऐसा मिल गयी कि शत्रु और मित्र का भेद करना कठिन हो गया । युद्ध भी अत्यन्त

नी पिटियातवन् नी पिटियातवन्
नी पऱञ्ञालेन्तु नी पऱञ्ञालेन्तु ? ४६
निङ्ङळे ञङ्ङळऱियुमटङ्ङुक
निङ्ङळे ञङ्ङळुमव्वण्णमल्लयो ४७
ऎन्तु ञङ्ङळ्क्कु कुऱवॊन्नु कण्टतु ?
ऎन्तु कुऱवु ञङ्ङळ्क्कॊन्नु कण्टतुं ? ४८
ऎङ्किल् नटप्पिन् पऱयणमो पल-
वॆङ्किल् नटप्पिनुतकात्ततॆन्तिप्पोळ् ? ४९
ञङ्ङळ् पिटियात पॊण्णन्मारॆन्नयुं
निङ्ङळ् नटप्पिन् मिटुक्कुळ्ळवरल्लो । ५०
निङ्ङळ् पऱञ्ञिट्टु चॆल्लेणमो ञङ्ङळ्
ञङ्ङळ्क्कु निङ्ङळ् कूटाञ्ञाल् पणि तुलों ? ५१
इत्थं पलरुं पलवुं विवदिच्चु
चित्त कलङ्ङिच्चमञ्ञतॆल्लावरुं । ५२
कूट्टवु वॆट्टिक्कयर्त्तु कुरुप्पट
वाट्ट कळञ्ञु नटन्नारतुनेर । ५३
शौर्यं नटिच्चटुत्तीटिनानगेशन्
वैरं निनच्चङ्ङटुत्तान् किरीटियुं । ५४
कॊळ्ळिमिन्नुंवण्णं चॆन्नु तॆरुतॆरॆ-
क्कॊळ्ळुन्न बाणङ्ङळेटु पॊऱाय्कयाल् । ५५

है, तुम्हे कोइ नही चाहता है" "तुम्हारे कहने से क्या? तुम्हारे कहने से क्या?" "तुम लोगो को हम जानते है, चुप रहो!' "हम भी तुम लोगो के साथ ऐसे ही है" तुम लोगो ने हममे क्या कमी देखी? और हममे तुम लोगो ने भी क्या कमी देखी? अच्छा! तो चलो! बहुत क्यो कहे? अच्छा! तो तुम लोग भी चलो, अब क्या असुविधा है? ४३-४९ "ये सब निकम्मे है जो हमे पसन्द नही हैं" "तुम लोग चलो अगर इतने होशियार हो!" तुम लोगो के कहने से हम थोडे ही चलेगे? तुम लोग हमारे साथ अगर न होगे तो क्या हो जायेगा?" इस प्रकार बहुतो ने तरह तरह की बाते की और सबका मन क्षुब्ध हुआ। कुरुसेना यह गडबड तोड़कर आगे बढी और सुस्ती छोडकर सब उस समय चले। शौर्य का अभिमान करता हुआ कर्ण निकट पहुँचा और वैर का याद करता हुआ किरीटी (अर्जुन) भी निकट आया। जलती

कर्म्मक्षयकालमॆन्नियॆ कॊल्लुवान्
चॆम्मे पणि परमेश्वरनुमॆटो । ७७
कॊन्नतु ञान् मृतनायतवनिति-
नॆन्नु तोन्नुन्नवाऱॆन्ने पऱयावू । ७८
सत्यस्वरूपन् सकलजगन्मयन्
सत्वरजस्तमोहीनन् सनातनन् ७९
सत्वगुणप्रधानात्मकनव्ययन्
सत्यमायुळ्ळॊरु वस्तु परमात्मा ८०
नित्यन् निराकुलन् निर्म्मलन् निर्म्ममन्
नित्यमनित्यनिवासन् निरामयन् ८१
निर्ग्गुणन् निष्कळन् निश्चलन् निष्क्रियन्
निष्कळङ्कन् निरातङ्कनेकन् परन् ८२
आनन्दपूर्ण्णनन्तननादिया-
मानन्दिनां परमानन्दकोमळन् ८३
ज्ञानस्वरूपनमृतमयनजन्
मानियामर्ज्जुननोटरुळ्चॆय्तप्पोळ् ८४
निर्ज्जरेन्द्रात्मजन्तन्नभिमानवुं
लज्जयुं कुन्पिट्टिताननांभोजवुं । ८५
चॆन्तामरक्कण्णनोटुणर्त्तिच्चितु
पङ्क्तिकण्ठोपमनाय घटोल्क्कचन् । ८६

अवलवन है पूर्वकाल मे कालारि (शिव) का काल को मारना कालवल के अनवलोकन के कारण नही है। हे मित्र, कार्यसिद्धि के लिए काल को देखना है। कर्मक्षय के काल के अतिरिक्त परमेश्वर भी वध नही कर सकता है। "मैं ने मारा, मरा तो वह" यह केवल सोचने का ढग है। ७२-७८ जब सत्यस्वरूप, सकमजगन्मय, सत्त्वरजस्तमोहीन, सनातन, सत्वगुणप्रधानात्मक, अव्यय, सत्य वस्तु, परमात्मा नित्य, निराकुल, निर्मल, निर्मम नित्य अनित्य मे रहनेवाला, निरामत्य, निर्गुण, निष्कल, निश्चल, निष्क्रिय, निष्कलङ्क, निरातङ्क, एक, पर, आनन्दपूर्ण, अनन्त, अनादि, आनन्दियो मे परमानन्दकोमल, ज्ञानस्वरूप, अमृतमय," अज ने मानी अर्जुन से इस प्रकार कहा, तब निर्जरेन्द्रात्मज (अर्जुन) का अभिमान और लज्जा झुकी और मुखकमल भी। ७९-८५ कमललोचन (कृष्ण) से रावण के तुल्य घटोत्कच ने कहा— "डर किस वात का ? यह गुलाम जीतेगा, इसमे

पोरुं भयङ्करमायिच्चमञ्ञतु
पोरुं परञ्ञतु शूरतयेर्रिन ६६
पेरुं पेरुप्पवुमुळ्ळोर मरिच्चितु
कूरम्पुमंबरदेशे वितानिच्चु । ६७
भास्करनन्दननाकिय कर्णनुं
पोक्कोरुमिच्चु वन्नीटिनानन्नेरं । ६८
वन्पट चत्तोंळियुन्नतु कण्टपो-
तुन्परकोन्पुत्रनेवं परञ्ञीटिनान् । ६९
एकादशाक्षौहिणिबलमुळ्ळति-
लेकदेशं गणिच्चीटुन्नताकिलो ७०
एळुमोटुक्कियेनिप्पकलुकोण्टु आ-
नीषलुण्टो निशि शेषमोटुक्कुवान् ? ७१
सूतसुतन्टे वरवु कण्टीलयो
तेरतेळिच्चीटुकतिन्नुनेरे भवान् । ७२
आन् परञ्ञीटुवन् कर्णनोटेल्पति-
न्नान्पोळुतोर्त्तिरिक्कुन्नितु केळेटो । ७३
कालमणञ्ञतिल्लित्तिरियुण्टिनि-
क्कालस्वरूपनल्लो जगदीश्वरन् । ७४
कालबलमवलबनमेवनुं
कालनप्पण्टु कालारि वधिच्चतुं । ७५
कालबलानवलोकनंकोण्टल्ल
कालावलोकनं कार्यसाद्ध्यं सखे । ७६

भयङ्कर हो गया । बस, और क्या कहा जाय ! अत्यन्त शूर विख्यात और शक्तिशाली मरे और आकाश मे तीक्ष्ण शरो का वितान सा वन गया । भास्करनन्दन कर्ण उस समय सबके साथ लडने आया । बड़ी सेना को मर-मरकर समाप्त होती देखकर अर्जुन ने इस प्रकार निवेदन किया । अगर गिना जाय तो ग्यारह अक्षौहिणियो मे से दिन मे, सात समाप्त कर चुका हूँ । रात मे बाकी समाप्त कर दूँगा, इसमे सन्देह हो सकता है ? ६४-७१ सूतपुत्र का आगमन आप ने देखा होगा । उसी की ओर रथ चलाइये । (तब कृष्ण ने कहा) "मै बतलाता हूँ । कर्ण का सामना करने के लिए मैं उचित समय की खोज मे हूँ । सुनो— अभी समय नही आया है, थोड़ा सा बाकी है । जगदीश्वर तो कालस्वरूप है । कालबल सबका

अंगारलोचनतुल्यन् घटोत्क्कच-
नगेशनोटुमसुरवरनोटुं ९८
अँतु कुरयार्तेनिन्नु पिणङ्ङिना-
नातङ्कमुळ्क्कोण्टुयन्ननिसुरेशन् । ९९
अंबरतानवलंबमाय् निन्नोर-
लंबुसन्तन् तल वेट्टियरुत्तुटन् १००
अबिकासूनुतनयनु काळ्चया-
यन्पोटु मुन्पिलिट्टार्त्तान् घटोत्क्कचन् । १०१
अर्क्कतनयनुमप्पोळरक्कनो-
टुग्रतयोटु बाणङ्ङळ् तूकीटिनान् । १०२
कीऴिमुऴिञ्ञितु देहवुमन्नेर-
मेऴिनानवरं मारुतिनन्दनन् । १०३
कूटवे चेन्नु तुणच्चू विजयनु-
माट्टुकालुपेट्टितु भास्करपुत्रनु । १०४
पोरिनणञ्ञु हिडिंबात्मजन्तानु
तेरुं तकर्त्तुपोटिच्चुटनार्त्तितु । १०५
नेरे वधिक्कुमिवनेन्नयेन्नोर्त्तु
पारं वलञ्ञोरु भास्करनन्दनन् । १०६
वेलेटुत्ताशु वेगेन चाट्टीटिनान्
नीलमहामलपोले घटोत्क्कचन् १०७

करो। उसके बाद अलंबुस को मारना आसान होगा" कृष्ण के इस प्रकार कहने के बाद अगारलोचन (शिव) के समान घटोत्कच ने अगेश (कर्ण) और असुरवर (अलबुस) दोनो के साथ बराबर लडा और आवेग मे आकर असुरेश ऊपर उठा। ९३-९९ तब घटोत्कच ने आकाश को अवलबन करके खडे अलबुस का सिर काटकर दुर्योधन के सामने भेट करके सिहनाद किया। तब कर्ण ने बड़ी उग्रता के साथ घटोत्कच पर शरवर्षा की। उसका शरीर चीरा गया और भीम का पुत्र आकाश पर चढ़ा। अर्जुन ने जाकर उसकी सहायता की और कर्ण के पैर काँपने लगे। हिडिबा का पुत्र (घटोत्कच) लडने दौडा और कर्ण के रथ को चूर-चूर करके उसने सिहनाद किया। १००-१०५ 'यह मेरा वध जल्दी करेगा' ऐसा समझकर भास्करनन्दन घबड़ाया। और तुरन्त अपना भल्ला लेकर उसका प्रयोग किया और एक काले पहाड़ के समान घटोत्कच

ऍन्तिनु पेटियटियन् जयिप्पनो-
रन्तरमिल्ल विटवळ्ळ्ङ्ङीट्टुकिल् । ८७
ऍङ्किल् नी चॆल्कॆन्नयच्चोरवर्कळ्ळुं
वन्कटल्पोलॆयणञ्ञानसुरनु । ८८
चॆङ्कतिरोन्मकनाकुलप्पॆट्टोरु
सङ्कटपूण्टतु कण्टु सुयोधनन् ८९
ऊक्कुळ्ळरक्करुं कूटि निल्कुन्नोरु
राक्षसनाकु मलंबुसन्तन्नोटु ९०
मारुतिपुत्रनॆक्कॊल्कॆन्नु चॊल्लिनान्
सूर्यसुतन्नु वलच्चिल् तीर्त्तीटुवान् । ९१
मायाविशारदन्माराय राक्षस-
रायोधनत्तिन्नटुत्तोरु नेरत्तु । ९२
पायुन्नितॆट्वुं पाण्डवसैन्यवु
छायापतीसुतनोन्नु वीर्त्तीटिनान् । ९३
मायाविकळोटटुत्तु घटोल्ककचन्
मायमॊळिच्चु पॊरुतॊटुक्कीटिनान् । ९४
मायामयनाकुमायर्कोनन्नेर
वायुसुतात्मजन्तन्नोटरुळ्चॆय्तु— ९५
संगरत्तिङ्कल् विदग्धनाय् मेविनो-
रगेशनॆक्कॊलचॆय्क विरये नी । ९६
पिन्नॆयां कॊल्वानलंबुसन्तन्नॆयॆ-
न्नण्णोजनेत्रनरुळ्चॆय्तनन्तरं । ९७

सन्देह नहीं' अगर मुझे अवसर दिया जाय।" तब उन्होने कहा— "अच्छा तो चलो" और असुर (घटोत्कच) सागर के समान आगे बढा। कर्ण बहुत आकुल हुआ और उसे देखकर सुयोधन दु खित हुआ और शक्तिशाली राजाओं सहित खडे अलवुस राक्षस से बोला— "मारुतिपुत्र (घटोत्कच) की हत्या करो ताकि कर्ण की तकलीफ दूर हो जाय।" जब मायाप्रयोग मे कुशल राक्षस युद्ध करने के लिए निकट पहुँचे। ८६-९२ पाण्डवो की सेना भागने लगी और छायापति (सूर्य) का पुत्र (कर्ण) खुशी से फूल गया। घटोत्कच मायावियो के निकट पहुंचा और उनकी माया को नाश करके युद्ध को समाप्त कर दिया। तव मायामय कृष्ण ने वायुपुत्र के पुत्र (घटोत्कच) से कहा— "युद्धकुशल अगेश की तुम जल्दी हत्या

उग्रशस्त्रङ्ङळुं क्रोधवुं मानवुं
कैक्कॊण्टटुत्तु मुळुत्तोरिरुट्टत्तु । ११८
तङ्ङळिल्त्तङ्ङळिलेतुं तिरियातॆ
तिङ्ङि वीण्टु पटतम्मिलिटचॆन्नु । ११९
कुत्तुकॊण्टु कुटल्माल तुड्रिक्कयुं
मत्तगजङ्ङळ् पटिञ्ञु किटक्कयु । १२०
चक्रमॆड्रिञ्ञु कळुत्तु मुड्रिक्कयु
मुल्गरंकॊण्टु गात्रङ्ङळमक्कयुं । १२१
मुष्करमायिग्गदकॊण्टटिक्कयुं
खळ्गङ्ङळॆटु खण्डिच्चु विड्रय्क्कयुं । १२२
रक्त पलपल दिक्किलॊलिक्कयु
नक्तञ्चरादिकळार्त्तु कळिक्कयुं । १२३
वानरराक्षसन्मार् पॊरुन्पोलॆयुं
दानवनिर्ज्जरन्मार् पॊरुन्पोलॆयुं १२४
संहाररुद्रन् प्रळयकालत्तिङ्कल्
सहरिच्चीटुन्नितॆन्तकणक्कॆयुं १२५
दारुणमायितु युद्धमतुकण्टु
पोराळिवीरन् धनञ्जयन् चॊल्लिनान्— १२६
मानमेड्रीटुन्न वीररॆल्लावरुं
मानिच्चु ञान् पड्रयुन्नतु केळ्क्कणं । १२७
निद्रादिकॊण्टु पलक्कुं विषममु-
ण्टित्थं मुहूर्त्तमुड्रङ्ङुक नामिनि । १२८

लिए आगे वढे । ११२-११८ अन्धेरे मे आपस मे पहचान न सकने से किसी तरह सेना के अन्दर घुसे । घूसे खाने के कारण उनके आन्त्र निकल आये । मत्त हाथी गिरकर पड़े थे । चक्र फेंककर गरदन काटे गये मुगदर के प्रयोग से शरीर पीसे गये । गदा से तीव्र आघात किये गये । खड्ग लगकर घायल होकर कॉपने लगे । स्थान-स्थान पर रक्त वह रहा था और राक्षस आदि गरजते हुए खेल रहे थे । वानरो और राक्षसो के युद्ध के समान, देवो और दानवो के युद्ध के समान, प्रलयकाल में सहार करनेवाले रुद्र की संहारक्रिया के समान यह युद्ध भी दारुण हुआ । तव युद्धवीर धनञ्जय ने कहा— "सब मानीवीर सुने जो मैं सादर कहने वाला हूँ । ११९-१२७ वहुत लोगो को नीद आ रही है इसलिए हम

जीवनुं वेडिट्टु भूमियिल् वीणितु
पावनितानतिखेदवुं तेटिनान् । १०८
दुःखवुंपूण्टितु धर्म्मात्मजादिकळ्
पुष्करनेत्रन् तेळिञ्ञरुळीटिना- १०९
नर्क्कतनयनु शक्तिपोयी मम
शक्रतनयने रक्षिप्पतिन्निनि ११०
पारं पणियिल्लयेन्नु मुकुन्दनु
कारुण्यवारिधि कल्पिच्चितन्नेरं । १११
भूपतिवर्ग्गमुरक्कमिळय्क्कयु
कोपं मुळुक्कयु खेद पेरुक्कयुं ११२
सादं भविक्कयुं मोदं क्षयिक्कयुं
बोधं मरक्कयुं पोरिन्नटुक्कयुं । ११३
पोकातवण्णं परिभवं वाय्क्कयु
चाकातवर् जळन्मारेन्नुरय्क्कयुं । ११४
पिन्तिरिञ्ञेन्तिनु पोकुन्नतेङ्किल् ना-
मन्तकन्वीटु पूकेणमेन्निङ्ङने ११५
चिन्त वेटिञ्ञटुत्तीटुन्नितु परि-
पन्थिकळुं तिरि निल्लुनिल्लेङ्किलो ११६
कुन्तं गदासि परशुपरिघादि-
सन्ततं तूकिनारन्धकारान्तरे । ११७

अपना प्राण त्यागकर भूमि पर गिरा और भीम अत्यन्त दु.खित हुआ। युधिष्ठिर आदि दुःखित हुए। श्रीकृष्ण कुछ प्रसन्न होकर बोले— "अब कर्ण की शक्ति कम हो गयी है और अर्जुन की रक्षा करना इतना कठिन नही है।" कारुण्यसागर मुकुन्द ने उस समय यही कहा। १०६-१११ राजाओ की तो नीद कम हुई, उनका कोप बढ़ा, खेद अधिक हुआ, उनकी दुर्बलता हुई, प्रमोद नष्ट हुआ, बोध कम हुआ, वे युद्ध की ओर बढ़े। उनको न दूर होनेवाला परिभव हुआ। उनको ऐसा लगा कि जो मरे नही वे सब जड़ है, हम वापस क्यो चले, अगर जाना ही है तो यमराज के घर मे प्रवेश करे। इस प्रकार वे निश्चिन्त होकर आगे बढे। शत्रुगण ने भी, घूमो! 'ठहरो ठहरो' ऐसा कहते हुए अन्धकार मे कुन्त, गदा, तलवार, परिघ आदि शस्त्रों का प्रयोग किया। राजगण घने अन्धकार मे क्रोध और अभिमान के आवेश मे आकर उग्र शस्त्र हाथ मे

आरुमीरु पदं पिन्नोक्कि वय्क्काते
नेरे पोरुविनुरक्कवुं कैविट्टु । १३९
मानमोटे मरिच्चीटुन्नताकिलो
वानवर्नाट्टिल् सुखिच्चु वसिच्चिटां । १४०
शत्रुक्कळोक्कयोट्टुङ्ङि नां जीविक्कि-
लित्रिलोकत्तिल् निरञ्ञ यशस्सोटे १४१
मित्रकळत्रादिकळोटोरुमिच्चु
पृत्थ्वियु वाणु सुखिच्चु वसिच्चिटां । १४२
इत्थं परकयुं वाणङ्ङळ् तूकयुं
वृत्रारिपुत्रन् विळयाट्टु कण्टाशु १४३
चित्तं तेळिञ्ञु गुरुवटुत्तीटिना-
नप्पोळटुत्तान् विराटन् द्रुपदनुं । १४४
कोल्पोटु कोन्नान् भरद्वाजपुत्रनुं
चित्पुरुषन् पुरुषोत्तमन् चोल्लिना- १४५
नुळ्प्रमोदत्तोटु पार्त्थनोटन्नेरं ।
कर्ण्णनेयुं भरद्वाजसुतनेयु- १४६
मिन्नुतन्ने कोलचेय्यणमर्ज्जुना !
नम्मुटे पैतलेक्कोन्नतु चिन्तिक्किल् १४७
चेम्मे जयद्रथनल्लिवरायतुं ।
अेवं पलवुमरुळ्चेय्युन्नेरत्तु १४८
देवन् दिनकरन् सूर्यन्तिरुवटि
चण्डांशु वेदस्वरूपन् विभावसु १४९

भी पद पीछे की ओर न रखकर सब ठीक से लडिये। इज्जत के साथ मरने पर सुख से स्वर्ग मे निवास हो सकेगा। शत्रुओ के नष्ट होने पर अगर हम जीवित रहेगे तो इस त्रिलोकी मे पूर्ण यश के साथ अपने मित्र और कलत्र आदि सहित पृथ्वी का राज करते हुए हम सुख से रह सकेगे।" १३४-१४२ ऐसा कहते हुए और बाण छोड़ते हुए वृत्रारिपुत्र (अर्जुन) की लीला देखकर और प्रसन्न होकर गुरु (द्रोण) निकट आये। तब विराट और द्रुपद भी सामने आये। भरद्वाजपुत्र ने वध करना प्रारम्भ किया तब चित्पुरुष पुरुषोत्तम ने प्रमोद के साथ पार्थ से कहा— "हे अर्जुन, कर्ण को और भरद्वाजपुत्र को आज ही मारना चाहिये जब हम सोचते है कि हमारे बच्चे को इन्होने मरवाया था। यह लोग जयद्रथ

अप्पोऴुदिक्कुममृतकिरणनु
पिल्पाटु काणां जयवुमजयवुं । १२९
योगिप्रतियोगिकळतु केट्टुटन्
रागवशालवनाशियु चौंल्लिनार् । १३०
ॲल्लावरेयुं जयिक्काय् वरिक नी
नल्लनाय् वाऴ्कनेकंनाळ् नरोत्तम ! १३१
कुंभिकुलोत्तमस्कन्धममर्न्नवर्
कुंभिकुंभस्थले वीणुरङ्ङीटिनार् । १३२
संभोगतान्तरायंभोजनेत्रमार्
कुंभस्तनान्तरे वीणुरङ्ङुंपोलें । १३३
पारिल् निन्नीटु पदातिकळ् पारिलुं
तेरिल् मेवुं महावीरन्मार् तेरिलुं १३४
अश्वङ्ङळ्तन्मेलिरुन्नोरविटेयुं
विश्वसिच्चानन्दमुळ्क्कौंण्टुरङ्ङिनार् । १३५
कायिकसादवुं मानसखेदवुं
पोयितॆल्लावनुं निद्रयिलान्नेर । १३६
मन्दमन्दमुयर्न्नीटिनान् चन्द्रनुं
चन्द्रिकयुं पोन्नु पारिल् परन्नुते । १३७
निर्ज्जरेन्द्रात्मजनर्ज्जुननु गुण-
गर्ज्जनवुं चेय्तु चौंल्लिनान् पिन्नेयु । १३८

मुहूर्त भर सोये। तब सूर्य का भी उदय होगा, तत्पश्चात् जय और पराजय की वात देखी जायगी।" यह सुनकर योगी और प्रतियोगी ने प्रेम से धनञ्जय को आशीर्वाद दिया। "सभी पर तुम्हारी जीत हो ! हे नरोत्तम ! अच्छा वनकर तुम चिरकाल तक राज करो।" अपने उत्तम हाथियो के कन्धे दबाकर वे कुभियो (हाथियो) के कुभस्थल पर सिर रखकर सो गये। जैसे सभोग से थक कर अपनी स्त्रियो के कुभस्तनो के बीच लेटकर सो जाते है। १२८-१३३ भूमि पर खड़े पैदल सैनिक भूमि पर, रथ पर स्थित महावीर रथ पर, घोड़ो पर बैठे योद्धा घोडो पर, सविश्वास आनन्द के साथ सो गये। तब सबका शारीरिक दौर्बल्य और चित्त का खेद निद्रा के कारण नष्ट हुआ। धीरे धीरे चान्द उठा और सारी पृथ्वी पर चांदनी फैली। इन्द्रपुत्र अर्जुन ने अपने धनुष की ज्या का गर्जन कराकर फिर कहा— "अव नीद छोड़कर एक

श्रीपति भूपति देवन् जगत्पति
गोपति धर्म्मपति हरि सत्पति ८
वृष्णिपति करुणानिधि श्रीनिधि
कृष्णन् सतांपति सच्चिन्मयन् हरि ९
यज्ञपति मति मत्पति तत्पति
यज्ञविदांपति, यज्ञमयन् परन् १०
कूटस्थनव्ययनाय नारायणन्
गूढस्थनाचार्यवैभवं कण्टिट्टु ११
गूढस्मितंचेय्तिवण्णमरुळ्चेय्तु—
कूटलरन्तकनाय गुरुविन्ने- १२
देवासुरन्मारोरुमिच्चेतिर्क्किलु-
मावतल्लावर्क्कु जयिप्पानिनियुटन् १३
कोल्वानुपाय मकन् मरिच्चानेन्नु
चोल्विन् पोळिपरञ्ञालेन्तु दूषणं ? १४
जीवरक्षय्क्कसत्य चोल्कयेन्नतु ।
देवमुनीश्वरन्मार्क्कु मतमल्लो । १५
अन्नतु केट्टतु चोन्नान् वृकोदरन्
निन्न गुरुवरन् कोपिच्चितन्नेर १६
इन्नेयोटुक्कुवन् पाण्डवरेयेन्नु ।
तन्नेयुकूटे मऱन्नटुत्तीटिनान् । १७
मूलवलादिकळोटु रघुवरन्
कोलाहलत्तोटणञ्ञतुपोलेय- १८

वृष्णपति, करुणानिधि, श्रीनिधि, कृष्ण, सतांपति, सच्चिन्मय, हरि, यज्ञपति. मतिमत्पति, यज्ञजाननेवालो के पति, यज्ञमय, पर, कूटस्थ, अव्यय, नारायण, गूढस्थ ने आचार्य का वैभव देखकर मन्दस्मित करते हुए इस प्रकार निवेदन किया— "शत्रुओ के नाशक गुरुजी को देव और असुर मिलकर भी अगर प्रयत्न करे, जीतना असभव है। उनको जीतने का यही उपाय है कि कहो कि उनके पुत्र का निधन हो गया। झूठ बोलने मे क्या दोष है ? ८-१४ जान बचाने के लिए झूठ बोलना यह तो देव और मुनीश्वरों के लिए भी मान्य है।" यह सुनकर भीम ने कहा— "गुरुवर ने उस समय क्रुद्ध होकर इन पाण्डवो को आज ही समाप्त कर देंगे ऐसा कहते हुए अपने को भी भूलकर आगे बढ़ा था। मानो रघुवर

स्वर्ण्णपिण्डाभ कलन्नं सहस्रांशु-
तन्ने किळक्कु तुटुतुटेक्काणायि । १५०

द्रोणवधं

मन्नवन्मारुं तेंळिञ्ञारतुनेरं
बन्धिच्चु चर्म्मायुधादियोटु तदा १
सन्ध्यानमस्कारवु चेय्तितेवरु-
माशु युधिष्ठिरशासनयालथ । २
केशवनर्ज्जुनन्तन्रे महारथ-
माशुगतुल्यवेगेन नटत्तिनान् । ३
आचार्यने वधिच्चीटुवानन्नेरं
हस्त्यश्वपत्तिरथादिपेरुम्पट-
येत्रयुण्टेन्नु मतिक्करुताक्कुमे । ४
अंबुधिपोले परन्नितु भूमियि-
लंबरदेशवुं भास्करन्तन्नटे ५
बिंबवुं नन्नाय् मरञ्ञुचमञ्ञितु ।
संविल्स्वरूपनव्यक्तनजन् पर- ६
नादिपरन् पुरुषन् परमीशन-
नादिमुकुन्दननन्तननाकुलन् ७

नही है ।" जब इस प्रकार निवेदन कर रहे थे तब देव दिनकर, पूज्य सूर्य, चण्डाशु, वेदस्वरूप, विभावसु स्वर्णपिण्ड की शोभावाले सहस्राशु पूर्व दिशा में स्पष्ट दिखाई दिये । १४३-१५०

द्रोणवध

उस समय राजगण प्रसन्न हुए और उन्होने अपने आयुध और चर्म धारण कर लिया और युधिष्ठिर की आज्ञा से सब ने सन्ध्या का नमस्कार किया । केशव ने अर्जुन के महारथ को बाण के समान वेग से चलाया । आचार्य का वध करने के लिए कितने हाथियो, पैदल सैनिकों और रथादियो की वड़ी सेना निकली, यह कोई भी न कह सकता है । वह समुद्र के समान भूमि पर फैल गयी । आकाश और सूर्य का बिंब दोनो बिलकुल छिप गये । संवित्स्वरूप, अव्यक्त, अज, पर, आदि पर, पुरुष, परमेश, आदिमुकुन्द, अनन्त, अनाकुल, १-७ श्रीपति, भूपति, देव, जगत्पति, गोपति, धर्मपति, हरि, सत्पति

पेट्टेन्नु पोट्टुमिटिक्कुनेर् वैरिकळ्
वेट्टुमारु चेरुआणोलियुमिट्टु २९
निष्ठुरभावमोटेट्मलऱिय-
म्मट्टलर्वाणारिशिष्यशिष्यन् द्रुत ३०
पट़लर्क्कूट्टमोटुक्कित्तुटङ्ङिन्ना-
नटमिल्लातोळ भूपतिवीररु ३१
मुट्टुं चतुरङ्गमायुळ्ळ सैन्यवु
मुट्टुमरनाळिकय्क्ककमन्नेरं ३२
द्रोणरोटुक्कियतु कण्टवर्कळुं
प्राणनिलाश कळञ्ञुनिन्नीटिनार् । ३३
धर्म्मत्तिनाधारमाय नारायणन्
कर्म्मैकसाक्षि जगन्मयनीश्वरन् ३४
सन्मयन् चिन्मयन् जन्महीनन् परन्
कल्मषनाशनन् ब्रह्मात्मकन् हरि ३५
निर्म्मलन् निर्म्ममन् जन्ममृतिहरन्
सच्चिन्मयन् सकलेश्वरन् माधवन् ३६
सम्मत पाण्डवन्मारोटु चोल्लिनान् ।
धर्म्मयुद्धेन जयिक्करुतार्यने ३७
धर्म्मजन्तानोरसत्यं पऱकिले
चेम्मे वधिच्चुकूटू गुरुवीरने । ३८
रोहिताश्वप्रभन् रोहिताश्वद्विजन्
रोहिताश्वास्त्रेण संहरिक्कुंमुन्पे ३९

के लिए चढे कोप से आगे वढे उसी प्रकार कामारि (शिव) के शिष्य (परशुराम) के शिष्य (द्रोण) झट से फूटनेवाले स्तनित के समान, २३-२९ शत्रुओ को कँपानेवाला ज्याघोप करके, निष्ठुर भाव से गरजते हुए शत्रुगणो को समाप्त करने लगा। असख्य भूपतिवीरो को और सम्पूर्ण चतुरङ्गसेना को द्रोण का आधी नाड़िका के अन्दर ही समाप्त कर लेना देखकर वे अपनी प्राणरक्षा की आशा खो बैठे। धर्म के आधार नारायण कर्मैकसाक्षी, जगन्मय, ईश्वर, सन्मय, चिन्मय, जन्महीन, पर, पापनाशन, ब्रह्मात्मक, हरि, निर्मल, निर्मम, जन्म और मरण का नाशक, सच्चिन्मय, सकलेश्वर माधव ने, ३०-३६ पाण्डवो को अपनी अनुमति दी। धर्मयुद्ध से आर्य (द्रोण) हाराया न जा सकता है, युधिष्ठिर के एक झूठ

म्मामुनिनन्दननाथ गुरुवरन्
मामुनिशिष्यन् धनुर्व्वेदपारगन् १९
कण्णिलकप्पेट्ट वैरिकळेयोक्क-
क्कोन्नोटुक्कीटिनानप्पोळतु कण्ट २०
निन्न विश्वामित्रनत्रि वसिष्ठनुं
पिन्नेयुमंगिरस्सादिकळाकिय २१
धन्यतपोधनर् चोल्लिनारादराल्
सन्नाहमित्र वेण्टीला महामते ! २२
पोरुं पोरुततिनियटङ्ङीटुक ।
पोरिलनेकं जनमोटुङ्ङीटिनार् । २३
नल्लतिल्लेतुमहिंसय्क्कु तुल्यमे-
न्नेल्लामुनिकळुं चोन्नतु केट्टवन् २४
नल्लोरु तत्वमवरोटु चोल्लिनान् ।
चोल्लुवान् वेल तत्तात्पर्यमोर्क्किलो २५
ईश्वरेच्छावशन्माराय नामेल्ला-
मीश्वरन्तन्मत चेय्कॆन्नतेवरू । २६
चेय्त शुभाशुभकर्म्मानुभोगवुं
चेय्ते मतियावितेवनु निर्ण्णयं । २७
मारारि पण्टु पुरमेरिच्चेय्वति-
न्नारूढकोपमोटेयटुक्कुवण्ण २८

अपनी प्रधान सेना के साथ बड़े कोलाहल से आगे वढ़ रहे है । महामुनि (भरद्वाज) के पुत्र और महामुनि (परशुराम) के शिष्य, धनुर्वेद के पारगत गुरुवर ने अपनी दृष्टि मे आये सभी शत्रुओ को समाप्त कर दिया । यह देखते खड़े विश्वामित्र, अत्रि, वसिष्ठ और अगिरा आदि धन्य तपोधनो ने कहा— हे महामते ! इतने सन्नाह की आवश्यकता ही न थी । १५-२२ युद्ध तो अब वहुत हो गया, अब शान्त हो जाईये । युद्ध मे अनेक लोग समाप्त हो गये । सभी मुनियो ने कहा कि अहिंसा के समान कुछ भी नही है । यह सुनकर गुरु ने उनको एक अच्छा तत्त्व सुनाया । सोचिये तो उनका (ईश्वर का) तात्पर्य समझाना कठिन है हम जो ईश्वर के वश मे है अवश्य उनकी इच्छा के अनुसार ही चलते है । अपने किये शुभ और अशुभ कर्मो का फल सबको भोगना अवश्य पडता है । पूर्वकाल मे जिस प्रकार मारारि (शिवजी) ने पुरो का दाह करने

इङ्ङने चेन्नानिरुपत्तोरुतुट-
रङ्ङु वाळ्प्पाट्टिलटुत्तीलोरिक्कलुं । ५०
अन्तुमिवनेयिनि वधिच्चीटुवन्
अन्नटुत्तान् गुरुवीरनुमन्नेर । ५१
घुष्यत्गुणनादवुं केट्टु शङ्कर-
शिष्यशिष्यप्रियशिष्यशिष्यन् तदा ५२
निन्नालुमङ्ङेन्नुरचेय्तु मुल्प्पुक्कु
सन्नाहमोटु पोर्चेय्तटुत्तीटिनान् । ५३
मारुति चोन्नान् गुरुविनोटन्नेर
पोरुं पोरुततिनियेन्तोरुकार्य ? ५४
इल्लामोळि भवानेङ्ङळेक्कोल्लुवान्
नल्ल मकन् मरिच्चानतु केट्टीले ? ५५
चोल्लुमाङ्ल्लोरुनाळुमे धर्म्मज—
नोल्लात पोय्येन्नरिक गुरुवर । ५६
उळ्ळतेन्नोर्त्तु कलशोरभवन् निज
विल्लुं विरवोटु वच्चिरुन्नीटिनान् । ५७
कोन्नतु आनल्ल चत्ततवनल्ल
निर्णयिक्कामोन्नोळिञ्ञु मटोन्निल्ल । ५८
संन्यसिच्चेन् मम कर्म्ममेल्लामवि-
च्छिन्नमाय् मेवु परब्रह्मतेजसि । ५९

इक्कीस वार निकट जाने का प्रयत्न किया पर कभी भी तलवार प्रयोग करने योग्य निकट न पहुँच सका । ४४-५० 'अव इसका वध अवश्य करूंगा' ऐसा समझकर गुरुवर निकट आये । तव गूंजते ज्याघोष को सुनकर शिवजी के शिष्य के शिष्य के प्रियशिष्य का शिष्य 'ठहरिये ठहरिये' कहता हुआ आगे वढा और वड़ी तैयारी करके लड़ने लगा । उस समय भीम ने गुरु से कहा— "अव लड़ना वन्द कीजिये, अव लड़कर क्या करना है ?" यह असत्य है कि आप हम लोगों को मारना चाहते हैं । आपके सुपुत्र का निधन हो गया है, सुना नही ? गुरुवर ! जानलीजिये कि युधिष्ठिर कभी निषिद्ध झूठ नही वोलता है । तव उसे सच मानकर द्रोण अपना धनुष रखकर वैठ गये । ५१-५७ न मैं वध करनेवाला हूँ और न वह मरने वाला है । इसमे सन्देह नही कि एक को छोडकर और कुछ नही है । मै अपने सारे कर्म को अविच्छिन्न परब्रह्म के तेज मे

विश्वरक्षार्त्थमायात्मरक्षार्त्थमा-
यश्वत्थामा हतनॆन्नोंन्नु चॊल्लण । ४०
उन्नतनायोरु शत्रुगजत्तिनु
मन्नवनश्वत्थामावॆन्नु पेरिट्टान् । ४१
विश्वनाथन्नियोगत्तालतु वधि-
च्चश्वत्थामा हतनायितिन्निङ्ङने ४२
चॊल्लि युधिष्ठिरनाचार्यनन्नेर-
मल्ललिल् वीणतु चॊल्लवल्लेनहं । ४३
ऒल्लात पॊय् परयुं धर्म्मपुत्रनॆ-
न्नुळ्ळिलॊरुनेरमोर्त्तील ञानय्यो । ४४
विल्लिनि वय्क्कॊन्नतुंवरुं निर्ण्णयं
नल्ल गतियॆनिक्कुण्टॆन्नतु वरुं । ४५
कल्याणदेवताकामुकनाकिय
मल्लारितन्मतं त्रैलोक्यसम्मतं । ४६
दु:खंकलर्न्नु कैयुं तळर्न्नकुलाल्
निल्क्कुं गुरुविनॆ निग्रहिच्चीटुवान् ४७
पॆट्टॆन्नु वाळुमिळक्कियटुत्तितु
निष्ठुरनाय धृष्टद्युम्ननन्नेरं । ४८
बाणङ्ङळ्कॊण्टङ्ङटुत्तुकूटाय्कयाल्
प्राणभयंकॊण्टु वाङ्ङिङ्ङनान् पिन्नेयु । ४९

बोलने से ही गुरुवीर का वध किया जा सकेगा। अग्नि के समान प्रभावाले यह आग्नेयब्राह्मण जब तक विश्वरक्षा और आत्मरक्षा के लिए कहना चाहिये कि अश्वत्थामा मारा गया है। तब राजा (युधिष्ठिर) ने एक बड़े शत्रु के हाथी को अश्वत्थामा नाम दिया। कृष्ण की आज्ञा से उसे मारकर युधिष्ठिर ने 'अश्वत्थामा हत है' ऐसा कहा। आचार्य जो दु.ख मे मग्न हुआ उसका मै वर्णन न करूँगा। ३७-४३ 'युधिष्ठिर बिलकुल निषिद्ध झूठ बोलेगा'— हा! यह मैंने अपने मनमे कभी न सोचा था। अब निस्सन्देह यह भी होगा कि वह धनुष को रख दे। यह भी होगा कि मेरी अच्छी गति हो। कल्याणदेवता (लक्ष्मी) के कामुक और मल्लारि (कृष्ण) का मत त्रैलोक्य के लिए मान्य है। दु:खित होकर थके हाथ, खडे गुरु का निग्रह करने के लिए तुरन्त अपनी तलवार लिए निष्ठुर धृष्टद्युम्न आगे बढा। पर बाणो के कारण वह निकट न पहुँच सका और प्राणभय के कारण पीछे हट गया। इस प्रकार

तानुं भगवानुमोन्निच्चिरिक्कुम्पोळ्
द्रोणरेक्कोल्वानायुण्टाय पाञ्चालन् ७०
निल्लुनिल्लोल्लायितेन्नतेल्लावरुं
चोलिल वाविट्टु कूटुन्नतिन्मुन्नमे ७१
कण्णुमटच्चिरुन्नीटुमाचार्यने-
त्तिणमणञ्ञु तलयरुत्तीटिनान् । ७२
मेल्पट्टु मिन्नल्पोले पोयि देहियुं
कीऴ्पट्टु दारुपोले वीणु देहवुं । ७३
ओटिनार् पेटिमुळ्ळुत्तोरु कौरवर्
वाटि मुखवुं विजयादिकळ्क्केल्लां । ७४
धृष्टनाय् मेवुन्न धृष्टद्युम्ननन्नो-
टोट्टु कोपिच्चु पऱञ्ञितु सात्यकि— ७५
दुष्टतयेन्नयुं कष्टमत्रे तव
तुष्टि वन्नीलितु कण्टवर्क्कार्क्कुमे । ७६
शिष्टनायोरु परमगुरुविने
नष्टमाक्कीटुवानार्क्कु तोन्नु वलाल् ? ७७
तङ्ङळिल् पेपऱञ्ञारोट्टुनेर-
मङ्ङु केट्टानी विशेषं गुरुसुतन् । ७८
कल्पान्तवह्नि लोकं दहिच्चीटुवा-
नुल्भूतनाय् वळर्न्नु ज्वलिच्चेन्नयुं ७९

होकर बैठे थे तव पाञ्चाल (धृष्टद्युम्न) ने, जो द्रोण का वध करने के लिए पैदा हुआ था, औरों के 'ठहरो ठहरो, 'यह ठीक नही, ऐसा चिल्लाते हुए इकट्ठा होने के पहले ही, आँख वद करके बैठे आचार्य को वेग से पकड़कर सिर काट डाला। ६६-७२ विजली के समान आत्मा ऊपर उठी और लकड़ी के समान शरीर नीचे गिरा। आत्यधिक डरकर कौरव भागे-दौड़े और विजय (अर्जुन) आदियो का मुँह उतर गया। धृष्ट धृष्टद्युम्न से क्रुद्ध सात्यकि ने कहा— यह तुमने अत्यन्त शोचनीय दुष्टता की है। जिसने भी देखा, वह असतुष्ट है। शिष्ट परमगुरु को वल से नष्ट करने की यह वात तुम्हे छोडकर किसको सूझेगी ? इस प्रकार जव आपस मे निन्दा कर रहे थे तव गुरुपुत्र (अश्वत्थामा) ने यह समाचार सुना। ७३-७८ लोक को जलाने के लिए पैदा होकर और तेज़ होकर और कोप के कारण गरजता हुआ अग्नि जिस प्रकार आगे वढता है उसी प्रकार वह

नन्दिच्चिवण्णं भरद्वाजनन्दनन्
वन्दिच्चु तेर्त्तटतन्निलिरिक्कुन्पोळ् ६०
चेन्नाररिके कृपरुमंगेशनुं
मन्नवराय गन्धारीतनयरुं ६१
कुन्तीसुतन्मारुमंघ्रियुगत्तिङ्कल्
वन्दिच्चुनिन्नतु कण्टु गुरुवरन् ६२
निङ्ङळ्क्कु नल्लतु मेन्मेल् वरेणमे
निङ्ङळिलिन्निप्पोरुन्नुक वेण्टतु । ६३
आयुधं वच्चितु जानेन्नरिञ्ञालु-
मायुस्सिल्लातवरल्लो मरिच्चतु । ६४
आरुमोरुत्तरेक्कोल्लुमारिल्ल म-
ट्टारुमे कोल्लुकयिल्लेन्नु तेरुक । ६५
आत्माविने परमात्माविलाक्किना-
नात्मज्ञानं कलन्नोरु गुरुवरन् । ६६
प्राणायामं तुटङ्ङीटिनानन्नेर
प्राणिहिंसाकर्म्मणा प्रायश्चित्तमाय् । ६७
प्राणनिरोधवुंचेय्तु लोकत्तिनु
प्राणनां नारायणनेयु ध्यानिच्चु ६८
काणायतेल्लां भगवल्स्वरूपमाय्
काणायनेरमानन्दनिमग्ननाय् ६९

सन्यास कर रहा हूँ। इस प्रकार प्रसन्न होकर और वन्दना करके भरद्वाजपुत्र (द्रोण) रथ पर बैठ गये। तब कृप और कर्ण और भूपाल गान्धारी के पुत्र, और कुन्ती के पुत्र सब आकर उनके चरणो पड़े। यह देखकर (गुरु ने कहा) "तुम लोगो को उत्तरोत्तर भला हो। तुम लोगो मे यह युद्ध नही होना चाहिए। जान लो कि मैंने अपना आयुध रख दिया। जिनकी आयु नही थी वे ही मरे है जान लो कि कोई किसी का वध नही करता है और वध करनेवाला और कोई नही है।" ५८-६५ गुरुवर ने आत्मज्ञान प्राप्त करके अपनी आत्मा को परमात्मा मे विलीन कर दी। प्राणिहिंसा का जो कार्य किया गया था उसके प्रायश्चित्त के रूप मे प्राणायाम प्रारम्भ कर दिया। प्राण का निरोध करके, लोको के प्राण नारायण का ध्यान करते हुए दीखती वस्तुओ को भगवत्स्वरूप समझकर, देखते समय आनन्दनिमग्न होकर जब आचार्य भगवान् से एक

पोरिनु नेरे गुरुसुतन्तन्नोटु
पोरुविनेन्नोटुकूटि मटियाते । ९०
शूरतयुळ्ळरिवीररे वेल्लुकिल
पारिल् परन्नीरु कीर्त्तियुण्टाय्वरुं । ९१
पोरिल् मरिक्किल् परगति साधिक्कु-
मारु मरियातिरिक्कयिल्लूळियिल् । ९२
शत्रुप्रयुक्तमामस्त्रशस्त्रङ्ङळिल्
चित्ते भयपूण्टोळिच्चु मण्टीटुकिल् ९३
पृत्थ्वयिलाशु दुष्कीर्त्तियुण्टाय्वरुं ।
मृत्यु वन्नाल् नरकाप्तियुं निश्चयं । ९४
मुग्धाक्षिमारु परिहसिच्चीटुमे ।
मित्रवर्गङ्ङळु निन्दिक्कुमेत्रयुं । ९५
ॲन्नु परञ्ञणञ्ञीटुन्न मारुति-
तन्नोटु नेरिट्टितश्वत्थामावुतान् । ९६
भीमनेक्कोल्लुमवनेन्न भीतियाल्
श्यामळकोमळनाय नारायणन् ९७
अस्त्र नमस्करिक्केन्नरुळ्चेय्तितु ।
वृत्रारिपुत्रनु चोल्लिनानङ्ङने । ९८
मानिया मारुति कृष्णपार्त्थोक्तिकळ्
मानियाते रणत्तिन्नु कोप्पिट्टप्पोळ् ९९
मारुतितन्नेप्पिटिच्चु पतिप्पिच्चु ।
पारिल् नमस्करिप्पिच्चितु पार्त्थनु १००

कीजिये । शूर और वीर शत्रुओ का वध करने से सारी पृथिवी पर फैलने वाली कीर्ति होगी । युद्ध मे मरने से पर-गति हमे सिद्ध होगी । यहाँ कोई भी मरने से बच न सकता है । शत्रु के अस्त्र और शस्त्रो से डरकर जो सब छोड भागता है उसकी दुष्कीर्ति सारी पृथ्वी पर फैलेगी । और मरने पर वह निस्सन्देह नरक प्राप्त करेगा । ८७-९४ मुग्धाक्षियाँ उसकी हँसी उडायेगी । और मित्रगण निन्दा करेगे" । ऐसा कहते हुए आगे बढनेवाले भीम का अश्वत्थामा ने सामना किया । 'यह भीम का वध करेगा' इस डर से श्यामल और कोमल नारायण ने अस्त्र का नमस्कार करने के लिए कहा । अर्जुन ने भी यही कहा । पर मानी मारुति कृष्ण और पार्थ की बात न मानकर युद्ध करने के लिए आगे बढ़ा ।

कोपिच्चलङ्घियट्टुक्कुन्नतुपोले
वेपिच्चु विल्लुं कुलियेक्कुलच्चेय्तु ८०
शोभिच्च नारायणास्त्र तोंटुत्तवन्
दीपिच्चटुत्ततु कण्टोरु पाण्डवर् । ८१
तापिच्चकन्नितु भीतिपूण्टेवयुं
गोपिच्चुकोण्टितु गोपिकाकान्तनुं । ८२
कण्टुनिन्नोरु सुरासुरर् चोल्लिना-
रुण्टामिनि दुरियोधननु जयं । ८३
अस्त्राग्नियिल् शलभोपममायोरे
पृत्थ्वीपतिकळ् दहिक्कुन्नोरुनेर ८४
मुग्धविलोचनन्तानरुळिच्चेय्तु—
मुक्तशङ्कवरुमस्त्र वणङ्ङुविन् ८५
वीणु नमस्करिच्चीटुविनेवरुं ।
द्रोणजनोटु मटावतिल्लेतुमे । ८६
आदिजगल्गुरुवाय नारायण-
नाधिपोवानरुळ्चेय्ततु केट्टोरु ८७
मेदिनीशन्मार् नमस्करिच्चीटिना-
रादरवोटटङ्ङी तुलोमस्त्रवुं । ८८
आरुं नमस्करिच्चीटाय्क मन्नरे !
पारमभिमानहानियुण्टामतिल् ८९

(अश्वत्थामा) क्रोध से काँपता हुआ, अपने धनुष मे ज्या बाँधकर और चमकनेवाले नारायणास्त्र को लगाकर आगे बढा। उसे देखकर पाण्डव अत्यन्त भयभीत होकर अलग हुए और गोपिकावल्लभ ने भी अपने को छिपा लिया। और देखनेवाले सुर और असुरो ने कहा "अब दुर्योधन की विजय हो जायगी"। अस्त्र के अग्नि मे शलभ के समान जो मरे, उनकी जब राजगण दाह-क्रिया कर रहे थे तब मुग्धविलोचन (कृष्ण) ने कहा— अब निश्शङ्क लगातार अस्त्र आते रहेगे, प्रणाम करो सब साष्टाङ्ग नमस्कार करो। द्रोणपुत्र से और कोई बात न चलेगी। ७९-८६ राजगण ने आदिजगद्गुरु नारायण का खतरा दूर करने के लिए कही बात सुनकर आदर के साथ नमस्कार किया। अस्त्र भी बिलकुल शान्त हुए। "हे राजगण! कोई भी नमस्कार न करो! उसमे हमारी बड़ी प्रतिष्ठाहानि होगी। गुरुपुत्र के विरोध मे मेरे साथ बिना सङ्कोच के युद्ध

तत्वार्थमायुळ्ळ वाक्य वहुविध-
मित्तर द्वैपायननरुळिच्चॆय्तु । १११
वाङ्ङिङ्च्चुकॊण्टु पोयानतु कण्टाशु
वाङ्ङिडनार् पाण्डवरु पटकूट्टवु । ११२
देवकीनन्दनन् देवदेवन् वासु-
देवनु देवराजात्मजन् तानुमाय् ११३
देवकळ् पॆय्युन्न पूमळयेट्टु
देवभूदेवादिकळॆयुं वन्दिच्चु ११४
युद्धनिवृत्तराय् पोकुन्न नेरत्तु
पद्धतितोरुं जयजयशब्दवु ११५
वाद्यघोषत्तोटु चॆन्नु तॊळुतभि-
वाद्यवुचॆय्तु युधिष्ठिराघ्रिद्वयं । ११६
कृष्णना पैतामहनुमतुनेरं
कृष्णसमक्षमिवण्णमरुळ्चॆय्तु । ११७
देवनुमापति रुद्रन् भवन् महा-
देवन् पशुपति वामदेवन् परन् ११८
केवलन् चन्द्रचूडन् त्रिपुरान्तकन्
गोविन्दसेवितन् गोपतिवाहनन् ११९
सेविप्पवर्क्कु जयत्तॆ वरुत्तीटुं
देवदेवनतिनिल्लॊरु संशय । १२०

तुम्हारे पिता के निधन के लिए पैदा हुआ। जान लो कि पहले ही से देवो का यही मत था। द्वैपायन ने तत्त्वार्थ का बोध करानेवाली इस प्रकार की अनेक बातें कही। तब (अश्वत्थामा) वापस चला गया। उसे देखकर पाण्डव और उनकी सेना भी वापस चली गयी। देवकीनन्दन देवदेव, वासुदेव देवराजात्मज (अर्जुन) के साथ देवो की पुष्पवृष्टि को स्वीकार करते हुए, देवो और भूदेवों की वन्दना करते हुए, युद्ध से निवृत्त होकर चले गये। तब पद-पद पर उनका जयघोष हुआ और वाद्यो का घोष भी हुआ। दोनों ने जाकर युधिष्ठिर के चरणो का अभिवादन किया। १०९-११६ उस समय पितामह कृष्णद्वैपायन ने कृष्ण के सामने इस प्रकार निवेदन किया। देव उमापति, रुद्र, भव, महादेव, पशुपति, वामदेव, पर, केवल, चन्द्रचूड, त्रिपुरान्तक, गोविन्द का वन्दित, गोपति (वृषभ) वाहन देवदेव सेवा करनेवालों की विजय ला देता है इसमें कोई

वन्दिच्चितन्नेर वायुतनयनुं ।
मन्दिच्चितेट्वु नारायणास्त्रवु । १०१
अप्पोंळुताग्नेयमस्त्रं गुरुसुतन्
कैल्पोटयच्चानतिनाशु पाण्डवन् १०२
वारुणास्त्रं कोंण्टतिनेत्तटुत्तितु
धीरन् गुरुसुतन् पोरिनु कोप्पिट्टु । १०३
दिव्यास्त्रजालमन्योन्यं प्रयोगिच्चु ।
सव्यसाचिक्कु वळर्न्नितु कोपवु । १०४
वेदान्तवित्ताय वेदव्यासन् मुनि
वेदज्ञनोटड्रियिच्चु पुराणवु । १०५
भूभारनाशनार्थं पुरुषोत्तमन्
भूपति भूमियिल् वन्नु पिरन्नितु १०६
भूसुरसत्तमभारद्वाजात्मज
भूसुरतापसधर्म्मरक्षार्त्थमाय् । १०७
वासुदेवन्मतं नेरे धरियाते
वासवनन्दननोटु कोपिक्कोला । १०८
यज्ञसेनात्मजनाय्पिरन्नू धरा-
यज्ञकुण्डत्तिङ्कल्निन्नु धृष्टद्युम्नन् १०९
निन्नुटे तातमरणत्तिनायतु
मुन्नमे दैवमतमेन्नड्रियणं । ११०

तव अर्जुन ने भीम को पकड़कर और भूमि पर गिरा कर उससे नमस्कार कराया और वायुपुत्र ने वन्दना भी। तब नारायणास्त्र बिलकुल मन्द हो गया। ९५-१०१ तदनन्तर गुरुसुत ने आग्नेयास्त्र का ढग से प्रयोग किया। उसके जवाब मे पाण्डव ने वारुणास्त्र भेजकर उसे रोक दिया। तव धीर गुरुपुत्र फिर युद्ध करने आया और दोनो ने एक दूसरे पर दिव्यास्त्रो का प्रयोग किया। सव्यसाचि (अर्जुन) का कोप बहुत बढ़ा। तव वेदान्त के विद्वान् मुनि वेदव्यास ने वेदज्ञ (अश्वत्थामा) को बीती बाते सुनाई। पृथ्वी का भार हल्का करने के लिए पुरुषोत्तम ने पृथ्वी पर भूपति का रूप धारण किया है। हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! भारद्वाजपुत्र ! ब्राह्मणों और तापसो के धर्म की रक्षा के लिए यह हुआ है। वासुदेव के मत को बिना ठीक से समझे वासवपुत्र (अर्जुन) से कोप न करो। १०२-१०८ धृष्टद्युम्न यज्ञसेन के पुत्र के रूप मे यज्ञकुण्ड से

कर्ण्ण

हर ! हर ! हर ! शिव ! शिव ! शिव !
पुरहर ! मुरहर ! नतपद ! १
भवमृतिभयहर ! स्मरहर !
भव ! मृड ! वृषद्ध्वज ! विषाशन ! २
गिरीश ! शङ्कर ! दुरितनाशन !
गिरिनिलयन ! गिरिजावल्लभ ! ३
पर ! पर ! पर ! परमपाहि मां
परमानन्दमॆन्नते पऱयावू । ४

कर्ण्णन्टॆ सेनाधिपत्य

शुकतरुणि ! निन् वचनपीयूष-
सुखपानमोदलहरिकॊण्टु ञान् १
परवशनायिच्चमञ्ञितेटवुं
पऱक शेषवुमिनि नी वैकातॆ । २
पऱयामॆङ्किलॆन्नवळुं चॊल्लिनाळ्
परप्पु कण्टोळं पणिपणि चॊल्वान् । ३
पलर्क्कुं वेणमॆन्निरिक्किलिन्नियुं
चुरुक्किच्चॊल्लुवन् कथ नटेतिलुं ।
चुरुक्किक्कॊळ्वानुं पणियत्रे तुलों ४

कर्णपर्व

हे हर ! हर ! शिव ! शिव ! शिव ! हे पुरहर ! हे मुरहर ! जिनके चरणो पर लोग पड़ते है ! हे जन्म और मरण का भय दूर करने वाले ! सुरहर ! हे भव ! मृदु ! (करुणा करनेवाले !) वृषध्वज ! विष खानेवाले ! हे गिरीश ! शकर ! पापनाशन ! हे पर्वत पर निवास करनेवाले ! पार्वतीवल्लभ ! हे पर ! पर ! पर ! परम ! मेरी रक्षा करो मैं परमानन्द अनुभव कर रहा हूँ, इतना ही कहना है ! १-४

कर्ण का सेनाधिपत्य

हे शुकतरुणि ! तुम्हारे वचनामृत के सुखपान की आनन्दलहरियो से मैं विलकुल वेवस हो गया हूँ। अव अविलम्ब ही तुम शेष कथा सुनाओ। उसने कहा—अच्छा मैं कहूँगी। परन्तु इतनी विस्तृत दिखाई देती है कि

भावनयालतिभक्तिपूण्टेप्पळ्ळं
सेविच्चुकोळ्ळुविनेन्नरुळ्चेय्तोरु- १२१
वेदव्यासन्मोऴि केट्टु तेळिञ्ञवर्
खेदवुं तीर्त्तार् गुरुमरणोत्भवं । १२२
पार्त्थादिकळु जयिच्चु निलविळि-
च्चार्त्तुकळिच्चुटन् कैनिलपुक्कारे-
न्नास्थया चोल्लीटिनाळ् किळिप्पैतलु । १२३

॥ द्रोणं समाप्तं ॥

सन्देह नही है। अपनी भावना से बड़ी भक्ति के साथ उनकी सेवा करलो। इस प्रकार कहनेवाले वेदव्यास की बात सुनकर वे प्रसन्न हुए और गुरु के निधन से उत्पन्न उनका खेद दूर हुआ। अर्जुन आदि जयघोष करते हुए और खेलते हुए सोल्लास अपने तबू मे चले गये। इस प्रकार शुकी ने सादर कथा सुनाई। ११७-१२३

॥ द्रोणपर्व समाप्त ॥

तनयन्मारुटॆ मरणवुं कण्टु
तनियॆ ञानिनि मरियातॆ भुवि १५
मरुवीटुन्नतु विधिबलमय्यो
मरणं प्रापिप्पान् कऴिवु कण्टील । १६
ऎरियुमग्नितन् नटुविल् वीऴ्कयो
गरळमन्पॊटु कुटिक्कयो नल्लू ? १७
अतिदुरितं चॆय्ततुमनुसरि-
च्चवनियिलिनि वसिच्चतु मति । १८
विविधमित्तरं पऱञ्ञु केऴुन्न
नृपतिवीरनोटुरचॆय्तु सूतन् । १९
मतिनयननाय् मरुवुं मन्नव !
मतिमति खेदमिनियॆल्लांकॊण्टुं । २०
मतिकॆटुळ्ळवर् सुतरॆन्नाकिलु
मतिमान्मारायोर् कळकॆन्नेवरू । २१
अऱिविल्लातोरु नकनॆ लाळिच्चि-
ट्टऱिवुळ्ळोरु नी करकॆन्नुं वन्नू । २२
मऱकळ् वॆव्वेऱॆ पकुत्तवन्तानुं
मऱयवर् कौषारविमुनीन्द्रनुं २३
अऱिवुळ्ळ तव विदुररुं पिन्नॆ-
यरियप्पोकात चपलना ञानुं २४

प्रकार कहा—पुत्रो का मरण देखने के बाद और स्वय मृत्यु से बचकर मैं इस पृथ्वी मे अकेला जो रह गया यह हन्त ! विधि का ही वल है। मरण प्राप्त करने के लिए कोई उपाय भी नही दीखता है। क्या जलती हुई आग मे कूद पड़ूं अथवा खुशी से विषपान करूँ ? इतना घोर पाप करने के बाद अब मुझे इस पृथ्वी पर और न रहना है। इस प्रकार विविध बाते करके विलाप करनेवाले भूपति से सूत (सञ्जय) ने कहा—हे बुद्धि से नयन का काम लेनेवाले भूपाल ! बस. अब सर्वथा खेद करना बद करो। १४-२० बुद्धिमान् लोगो को अपने पुत्रो का भी अगर वे बिगडी बुद्धिवाले हो त्याग करना ही पडेगा। अपने मूढ पुत्र का लालन करने के फलस्वरूप अब आप जैसे बुद्धिमान को भी रोना पड़ रहा है। वेदो का विभाग करनेवाले मुनि, ब्राह्मणलोग, मैत्रेयमुनि, आपका विद्वान् विदुर जी, अज्ञ और चपल मै, नदीतनय (भीष्म), कृप, भोज, वेदान्त के विद्वान्

अहरहरहमघमकलुवा—
नहिकुलपतिशयनलीलकळ् ५
महितभारतचरितव्याजेन
महतामानन्दं वरुवान् चोल्लुवन् । ६
भरद्वाजात्मजन् मरिच्चोरुशेषं
भरिच्चितु पट दिनकरसुतन् । ७
करुत्तुळ्ळर्ज्जुनन्शरत्तालंगेशन्
मरिच्चानेन्नतु परञ्ञु सञ्जयन् । ८
कुरुप्रवीरनां धृतराष्ट्रन्तानु-
मुरक्के वाविट्टङ्ङलरि वन्मर ९
मुरिञ्ञु भूमियिल् चेरिच्चतुपोले
विरञ्ञु वीणितु पेरुत्त दुःखत्ताल् । १०
तोळिच्चलच्चुवीणुरुण्टु पेण्णुङ्ङळ्
कुळप्पं पारमाय् चमञ्ञितन्नेर । ११
विमलमानसन् विदुररेन्नयुं
विरयेच्चेन्नेट्टुत्तरचनेप्पुल्कि । १२
कुळुर्त्त नीर्कोण्टु तळिच्चु मोहवु
तळर्त्तिनान् चिल वचनङ्ङळ्कोण्टु । १३
अतु केट्टु नृपनरुळिच्चेय्ततु
मतिमानाकिय विदुररोटेवं— १४

कहना बहुत कठिन है । अगर सब सुनना चाहते है तो पहले से भी सक्षेप मे कहूँगी । सक्षेप करने मे भी काठिन्य वहुत है । पाप दूर करने के लिए मै प्रतिदिन शेषशायी की लीलाओ को महनीय महाभारत की कथा कहने के वहाने वडो का आनन्द उत्पन्न करने के लिए सुनाऊँगी । १-६ द्रोण के निधन के वाद दिनकरसुत (कर्ण) ने सेना का नेतृत्व किया । सञ्जय ने कहा कि शक्तिशाली अर्जुन के वाणो से अगेश (कर्ण) का निधन हुआ । कुरुप्रवीर धृतराष्ट्र दु खित होकर जोर से चिल्लाता हुआ और काँपता हुआ गिर पडा, मानो एक वड़ा पेड कटकर भूमिपर गिर गया हो । छाती पीटती हुई और लोटती हुई स्त्रियो ने बडा गड़वड़ मचा दिया । विमल मानस वाले विदुर ने तुरन्त जाकर राजा को उठाया और छाती से लगाया । शीतल जल से छिड़ककर और आश्वासन देनेवाली कुछ वाते कहकर मोह कम कर दिया । ७-१३ उनको सुनकर राजा ने वुद्धिशाली विदुर से इस

भयमेल्लामिनिक्ककलेप्पोयितु
जयमिनि वरुमिनिक्कु निर्णयं । ३६
पितृपितामहसमनायुळ्ळोवे !
चतिवेंटिञ्ञोरु सखियायुळ्ळोवे ! ३७
युधिष्ठिरन्तन्नप्पिटिच्चुकेट्टणं
युधि विजयने वधिक्कयुं वेणं । ३८
पणियिल्लेतुमिन्नतिनेनिक्केन्नु
परञ्ञु कोप्पिट्टु पुरप्पेट्टु कर्णन् । ३९
नटत्तिच्चु वाद्यमलरिच्चुं कोण्टु
नटिच्चु नालांगप्पटयुमायटल्- ४०
क्कळत्तिलम्मारु निरञ्ञु कौरवर्
कळिच्चु वीरवादवुं परञ्ञुटन् । ४१
कुतिच्चु चाटुन्न कुतिरकळुटे-
कुळम्पुकळेटु किळरिप्पोङ्ङुन्न- ४२
पोटियुं तेरुरुळोलियुं वैरिकळ्-
पोटियुम्मारलरिन करिकळुं ४३
कुटुकुट निलविळिच्चु कालाळुं
कुटतळकळु कोटिमरङ्ङळुं ४४
परन्न पोर्क्कळं निरञ्ञ वन्पट
निरञ्ञतु कण्टु झटिति पाण्डवर् ४५

ने कहा—"अब मेरा भय दूर हो गया, अब मेरी विजय अवश्य होगी, हे पितामह के समान कर्ण ! हे ! पिता और पितामह के तुल्य ! हे ! कपटरहित मित्र ! अब युधिष्ठिर को पकड़कर बाँधना चाहिए और युद्ध मे अर्जुन का वध भी करना चाहिए।" 'यह काम बहुत आसान होगा' ऐसा कहता हुआ कर्ण युद्ध करने के लिये तैयार हुआ। वाद्य बजवाते हुए अपनी चतुरङ्ग सेना को निकाला और युद्धभूमि कौरवो से भर गयी जो सोल्लास कूदते थे और वीरवाद बकते थे। ३५-४१ कूदते घोड़ो के खुरो के लगने से खुदी भूमि से उठती धूल, घूमते रथो की ध्वनि, शत्रुओ को पीस डालने लायक गर्जन करनेवाले हाथी, चिल्लाते पैदल सैनिक, बड़े छत्र और झण्डो के खभे विशाल युद्धभूमि मे फैली हुई बड़ी सेना, यह

नदीतनयनुं कृपरुं भोजरुं
विदितवेदान्ति सनल्क्कुमारनुं २५
अखिललोकनायकन् परन् पुमान्
निगमक्कातलाय् विळङ्ङुन्न कृष्णन्- २६
तिरुवटितानुमरुळ्चेय्तु मुन्नं
तिरुमुन्पिल्निन्नु पलरुं केळ्क्कवे । २७
अवयोन्नुं तव मनस्सिलेट्टति-
ल्लवनियेक्कोतिच्चोरु सुयोधनन् २८
पऱञ्ञतुतन्ने मनसि कैक्कोण्टु
परिलाळिच्चतु निमित्तमायिप्पोळ् २९
वरुन्नु सन्तापमिनियुं मेल्क्कुमेल्
वरुमतेयतुं सहिच्चिरिक्क नी । ३०
नृपनोटिङ्ङने झटिति सञ्जयन्
कपटं कैविट्टु पऱञ्ञतु केट्टु । ३१
परितापं पूण्टु नरपति चोन्नान्—
पऱक कर्ण्णन्टे मरणवृत्तान्तं ३२
पऱयामेङ्किलेन्नवनुं चोल्लिनान् ।
परन्न वन्पटय्क्कधिपतियाक्कि- ३३
यभिषेकंचेय्तानथ सुयोधनन् ।
तपनपुत्रनाय् विळङ्ङुं कर्ण्णने ३४
पुनरपि कैयुं पिटिच्चवन्तन्नो-
टनुनयत्तोटु पऱञ्ञु भूपनुं— ३५

सनत्कुमारजी, अखिल लोकनायक पर पुरुष, वेदों का मूल पूज्यचरण कृष्ण, इन सबने पहले ही सबके सामने आपसे निवेदन किया था। २१-२७ पर आपने कुछ भी न माना, भूमि (राज्य) के लालचवाले सुयोधन ने जो कुछ कहा उसे स्वीकार किया, उसका परिपालन किया। उसके कारण अब दुःख हो रहा है, आगे और भी आनेवाला है। आपको सहना ही पड़ेगा। सञ्जय ने इस प्रकार राजा से कपट छोडकर सब साफ साफ कह दिया। तब दुःखित होकर राजा ने कहा—"कर्ण की मृत्यु का वृत्तान्त सुनाओ" सञ्जय ने उत्तर दिया—'अच्छा, तो कहूगा'। 'सुयोधन ने तपनपुत्र (सूर्यपुत्र) कर्ण को अपनी बड़ी सेना के अधिपति के रूप में अभिषेक किया॥ २८-३४ तदनन्दर उसके हाथ पकड़कर उसको समझाते हुए राजा

तटिच्च वृत्रनुममर्त्त्यनाथनुं
नटिच्चु पण्टेर्प्पोरुतपोलेयु ५७
महिषनुं दुर्ग्गाभगवतितानु
महितघोरमाय् पोरुतपोलेयुं ५८
दशरथनरपतितनयनु
दशवदननुं पोरुतपोलेयु ५९
भयमाकुंवण्णं पोरुतिरुवरुं
मरियातेकण्टु पिरिञ्ञारन्नेर । ६०
श्रुतकीर्त्तिपतिनृपनुं शल्यरो-
टेतिर्त्तु पोर्चेय्तु मरियाते तोटान् । ६१
दिनकरतनयनुं नकुलनुं
चितमोटु पोरुतुलञ्ञु माद्रेयन् । ६२
कृपरोटेटु तोटितु धृष्टद्युम्नन्
कृतवर्म्माविनोटथ शिखण्डियु । ६३
विषधरध्वजनोटु युधिष्ठिरन्
विषमिच्चुनिन्नु जयिच्चानन्नेरं । ६४
पलरोटुं कूटेर्प्पोरुतानर्ज्जुनन्
परिभवं वन्नतोळिच्चानेवर्क्कुं । ६५
जयिच्चु पाण्डवरोटुक्कं नूटुव-
रोळिच्चु पाञ्ञितु पिरिञ्ञितु पट । ६६

मत्त हाथी आपस मे लड़ रहे हो। ५०-५५ मानो दो समुद्र आपस मे लड़ रहे हो, या दो चट्टान आपस मे लड़ रहे हो। जैसे शक्तिशाली वृत्र और अमर्त्यो (देवो) के नाथ ने पहले आपस में लड़ा था, जिस प्रकार महिषासुर और भगवती दुर्गा ने आपस मे घोर युद्ध किया था, और जैसे राजा दशरथ के पुत्र और दश-वदन (रावण) ने युद्ध किया था। अन्तत विना मरे दोनो अलग हुए। राजा श्रुतकीर्ति के पति शल्य का सामना करके मरा तो नही पर हारा। कर्ण और नकुल ढंग से लड़े और माद्रेय (नकुल) हारा। ५६-६२ युद्ध मे धृष्टघुम्न कृप से हारा और शिखण्डी कृतवर्मा से। युधिष्ठिर तो विषधरध्वज (दुर्योधन) से लड़कर जीत गया। अर्जुन ने बहुतो से युद्ध किया जो सब हटाकर अलग हुए। पाण्डव अन्त मे जीत गये, (धृतराष्ट्र के) शतक (सौ पुत्र) युद्ध से अलग होकर भागे और उनकी सेना विगठित हुई।

पतिनारांदिनमुपसि लोकैक-
पति वसुमतीपति रमापति ४६
पति धर्म्मपति सतांपति हरि
सुरपति स्वाहापति पितृपति ४७
निऋति यादसापति सदागति
निधिपति पशुपति कराष्टक- ४८
पति गोपीजनपति मम पति
यदुपति दयानिधि मखपति ४९
सुरपति धर्म्मपति सतांपति ।
सुरपतिसुतरथमतिलेरि ५०
सुरुचिरमाय वपुषा कण्टाशु
सुखिच्चु पोरिनु पुरप्पेट्टारल्लो । ५१
मकरव्यूहवु चमच्चितु कर्ण्णन्
मकरकुण्डलसखि धनञ्जयन् ५२
पुरन्दरसुतपुरुषकुञ्जरन्
पुरन्दरसेनापतिसमन् पार्त्थन् ५३
चमच्चु चन्द्रार्द्धप्रभमाकु व्यूहं ।
भ्रमिच्चतु कण्टु कुरुवीरन्मारुं । ५४
अेतिर्त्तु भीमसेननोटश्वत्थामा
मदिच्चीरानकळेतिर्त्ततुपोले । ५५
समुद्रङ्ङळ् तम्मिलप्पोरुन्नपोलेयुं
परुत्त शैलङ्ङळ् पोरुन्नपोलेयुं ५६

सब पाण्डवो ने देखा । सोलवे दिन तडकर लौलैकपति, पृथ्वी के पति रमापति, पति, धर्मपति, सज्जनो का पति, हरि, मुरपति, स्वाहापति, पितृपति, निऋति, वरुण, सदागति, निधिपति, पशुपति, कराष्टकपति, गोपीजनपति, मेरा पति, ४२-४९ यदुपति, दयानिधि, मखपति, सुरपति धर्मपति, सताँपति कृष्ण अर्जुन के रथ पर बैठे । अपने सुरुचिर शरीर के साथ बैठे कृष्ण को देखकर सब प्रसन्न हुए और युद्ध के लिये निकले । कर्ण ने मकरव्यूह बनाया । मकरकुण्डल (कृष्ण) के मित्र, धनञ्जय, इन्द्रपुत्र और पुरुपश्रेष्ठ, इन्द्र के सेनापति के तुल्य पार्थ ने तो चन्द्रार्ध के समान प्रभावाले व्यूह की रचना की । उसे देखकर सभी कुरुवीर घबडाये । अश्वत्थामा ने भीमसेन का सामना किया, मानो दो

परशुरामनृतन्ननुग्रहत्तिना-
लौरुवण्णं जयं वरुमेन्नाकिलु ७८
ऒरुवरिल्ल तेर् नटत्तुवानिनि-
य्क्कुटमयोटतिन्नयय्क्क शल्यरे । ७९
अतु केट्टु सुयोधननुमन्नेर-
मनुनयत्तोटु पऱञ्ञु शल्यरो- ८०
टटिमलरिण गतियेनिक्किनि-
यटियनुवेण्टियोरुवस्तु वेणं । ८१
निनविनिक्कॆन्टे जनकनेन्नत्ते
तनयनेन्नेन्नेक्करुतिटेणमे । ८२
पल परिभवमिनिक्कु चेर्त्तोरु-
वलरिपुसुतवधत्तिनिन्नु नी ८३
दिनकरसुतरथं नटत्तणं
मनुकुलवरसमनायुळ्ळोवे ! ८४
अतु सुयोधनन् पऱञ्ञनन्तरं
मतिमान् माद्राधिपतियां शल्यरुं ८५
अभिमतमेन्नङ्ङिडरिक्किलुं तनि-
य्क्कभिमतमल्लेन्नतु भाविच्चुटन् ८६
अतिकोपत्तोटु पऱञ्ञितन्नेर-
मतिनोराळ् कण्टतळकित्तेन्नयुं । ८७

सहायक विद्यमान है। उसका नाम ही विजय है और विजय उसी की होगी। ७०-७७ हाँ परशुराम के अनुग्रह से किसी प्रकार जय हमारी भी होगी, पर अब रथ चलाने के लिए कोई नही है। इसलिए अपनी आज्ञा से शल्य को भेज देना। यह सुनकर सुयोधन ने विनीत होकर शल्य को समझाया। आपके चरणो को छोडकर मेरी कोई गति नही है। इस बन्दे के लिए कृपया एक काम कर दे। मै आपको अपना पिता समझता हूँ और आप कृपया मुझे अपना पुत्र समझे। वलरिपुपुत्र (अर्जुन), जिसने मेरे अनेक परिभव किये है, के वध के लिए आप कर्ण का रथ चलावे, हे! मनुकुल के श्रेष्ठ के तुल्य! ७८-८४ सुयोधन के इस प्रकार कहने के बाद मतिमान् माद्राधिपति शल्य, जिसको वस्तुत वह प्रस्ताव स्वीकार था, अस्वीकार का अभिनय करता हुआ बड़े कोप से बोला—"इस काम के लिए तुमने एक अच्छा आदमी ढूंढ

परञ्ञितु सुयोधननुं कर्ण्णनो-
टनन्यबन्धुवाय् चमञ्ञु आर्नेटो । ६७
अरिकळेक्कोन्नु जयं तरुवति-
न्नरुतु मटाक्कुं निनक्कोळिञ्ञिनि । ६८
गुरुविनुं पितामहनुं मांप्रति
तिरुमनस्सुण्टाय् चमञ्ञीलेतुमे । ६९
चेरुतु पुञ्चिरिकलर्न्नु कर्ण्णनुं
नरवरनोटु परञ्ञानन्नेरं— ७०
अरियुन्नीलयो विजयन्तन्नुटे
चरितमेल्लामे निरूपिच्चु काण्क । ७१
मणिमयमाय मकुटं नल्कियि-
तमरकळ्वरनवनुटे शंखु ७२
कोटियटयाळं कोटिय मारुति
पेरुत्त खाण्डवं दहिप्पिच्चमूल- ७३
मुरत्त गाण्डीवं कोटुत्तितग्नियुं ।
शरमोटुङ्ङात शरधियुमुण्टु । ७४
परमीशन् पशुपति जगन्नाथन्
कोटुत्तोरु पाशुपतवुमुण्टल्लो । ७५
हरि जगन्नाथन् पति नारायण-
नरिकत्तुण्टल्लो तुणयार्येप्पोळु । ७६
विजयनेन्नु पेरवनाकुन्नतु
जयमेल्लांकोण्टुमवने वन्निटू । ७७

सुयोधन ने कर्ण से कहा—"अब तुम्हारे सिवाय मेरा कोई बन्धु नही है। अब तुम्हे छोड़कर और कोई भी शत्रुओ को मारकर विजय न पा सकता है।- गुरु और पितामह (भीष्म) की मेरे प्रति कभी कृपा न रही।"६३-६९ तब कर्ण ने तनिक मुस्कराकर नरवर (सुयोधन) से कहा— क्या तुम विजय का पूरा चरित्र न जानते हो। जरा विचार कर देखो। इन्द्र ने उसको एक मणिमय मुकुट दे रखा है और उसका शंख उसका ध्वज-चिह्न है शक्तिशाली मारुति, विशाल खाण्डव को जला देने के कारण अग्नि ने उसको गाण्डीव धनुष दे रखा है। उसके पास एक तूणीर भी है जिसमें शर कभी समाप्त न होते है। और परमेश्वर, पशुपति, जगन्नाथ शिवका दिया पाशुपत अस्त्र भी है। हरि, जगन्नाथ पति नारायण उसका सदैव

त्रिपुरदहनं-धातृसारथ्यम्

असुरकळ्कुलप्पॆरुमाळ् तारक-
नवनुमक्कळाय् पिऱन्नु मून्नुपेर् । १
अवर्कळ्नामं केट्टरुळ् विद्युन्मालि-
यवनु तन्पि तारकचक्षुस्सॊन्नुं २
अपरनायतु कमलाक्षनव-
रतिशक्तन्मार् मूवरुमॊरुमिच्चु ३
तपस्सु पञ्चाग्निनटुविल्निन्नु चॆ-
य्तमर्त्यवैरिकळ् विरिञ्चन्तन्नॊटाय् ४
विबुधत्वमिरन्नतु किट्टाय्कयाल्
विमलमायुळ्ळ पुरङ्ङळ् कामिच्चार् । ५
ऒरुत्तरालुमङ्ङॊरिक्कलुं नाशं
वरुत्तिक्कूटात्त पुरत्रितयत्ते ६
वरुत्तिक्कॊळ्ळुवान् वरत्ते नल्कणं
करुत्तु अङ्ङळ्क्कु पॆरुक्कयुं वेणं । ७
उरत्तवण्णमे वरिक निङ्ङळ्क्कु
सहस्रवत्सरं तिकयोळंकालं ८
वरिक पिन्नॆ नाशवुंमवट्टिनॆ-
न्नरुळ्चॆय्तु चतुर्म्मुखन् मऱञ्ञप्पोळ् । ९

कि नही ? 'यह परमार्थ मुझे सुनाओ' (शल्य ने कहा)। तव सुयोधन माद्रेश (शल्य) से वोला—"अच्छा तो खुशी से सुनिये कि परमेश ने पुरों को कैसे जलाया था।" १२-१८

त्रिपुरदहन-ब्रह्मा का सारथ्य

असुर कुलो के नेता तारक के तीन पुत्र हुए। उनके नाम सुनिये—विद्युन्माली, उसका अनुज तारकचक्षु, और तीसरा कमलाक्ष। इन तीनो शक्तिशाली अमर्त्यवैरियो (असुरो) ने पञ्चाग्नि के बीच मे स्थित होकर तपस्या की और ब्रह्मा से देवत्व माँगा। जब वह न मिला तब तीन शोभायमान पुर माँगे। "हमको वर दे दीजिये कि हमारी तीन पुरियाँ हो जायँ जिनका कोई भी कभी नाश न कर सके। और हमारी असाधारण शक्ति भी हो।" १-७ तव चतुर्मुख ने कहा—"पूरे सहस्र वर्ष तक

करुत्तेळुं महारथन्मारेज्जयि-
च्चिरिक्कुमेन्नोटु परञ्ञतु नन्नु । ८८
पेरुतु धिक्कारं निनक्कोन्नुळ्ळतु
करुतिक्कोळ्ळामेन्नते परयेण्टू । ८९
धृतराष्ट्रात्मजनतु केट्टप्पोळे
तेरुतेरेत्तोळुतुटने चोल्लिनान्— ९०
कुरयक्कण्टल्ल परञ्ञतेतुं ञान्
कुरिक्कोण्टीटरुततु भवानेतु । ९१
तनिक्कुतान्पोन्न जनङ्ङळुमोक्क-
त्तनिक्कु वेण्टुकिलेळियतुं चेय्यु । ९२
अतिनु नाणक्केटकप्पेटातानुं
मतिगुणमुळ्ळोक्कतु धरिच्चालु । ९३
त्रिपुरन्मारोटु पोरुवानीशनु
तिरमोटु तेरु नटत्ति धातावु । ९४
महिमयेतुमे कुरञ्ञुपोयील
महतामीशनाकिन्न विरिञ्चनुं । ९५
कथय भूपते ! पुरमथननु
रथमुण्टो पण्टु नटत्ति नान्मुखन् ? ९६
परञ्ञु केळ्क्कट्टे परमार्थमेन्नु
परञ्ञु माद्रेशनोटु सुयोधनन् । ९७
परञ्ञानेङ्किलो तेळिञ्ञु केट्टालुं
परमीशन् पुरमेरिच्चेय्ततेल्लां । ९८

निकाला है ! शक्तिशाली महारथियो को जीतनेवाले मुझसे तुमने एक अच्छा प्रस्ताव किया है। तुम्हारा मेरे प्रति यह जो बड़े धिक्कार का भाव है उसे मैं न भूलूंगा, बस इतना ही कहना है।" यह सुनकर धृतराष्ट्रपुत्र (सुयोधन) ने तुरन्त ही हाथ जोड़कर कहा—'आपको छोटा समझकर मैंने यह प्रस्ताव न किया है आप बुरा न मानिये। ८५-९१ हमारे पक्ष मे जो उठे है वे आवश्यकता पड़ने पर सब कुछ कर देते है। समझदार लोगो के लिये उसमें कोई प्रतिष्ठाहानि नही है। यह जान लीजिये। त्रिपुरों के विरुद्ध युद्ध करने के लिये ब्रह्मा ने शिवजी का रथ चलाया था। इससे देवो के नाथ ब्रह्मा की महिमा मे कोई कमी न हुई। हे राजन् ! आपही कहिये। क्या पूर्वकाल मे चतुर्मुख ने शिवजी का रथ चलाया था

स्तुतिच्चतु केट्टु तॆळिञ्ञु रुद्रनु
चिरिच्चरुळ्चॆय्तु विबुधन्मारोटाय्— २०
सुरवरन्मारे ! सुखमल्ली चॊल्लि-
नोरुमिच्चॆल्लारुं वरुवानॆन्तिप्पोळ् ? २१
सुखमल्लीयॆन्नरुळ्चॆय्तप्पोळॆ
सुखमाय् वन्नुते मनसि ञङ्ङळ्क्को २२
त्रिपुरन्मारालुळ्ळुपद्रवत्तिनाल्
त्रिभुवनमॆल्ला नशिच्चु दैवमे । २३
अवरॆ निग्रहिच्चभयं नल्कण-
मखिललोकेशा ! शरणमॆप्पॊळु । २४
अतु केट्टु देवनरुळ्चॆय्तीटिना-
नवरोटु पोरिन्नोरुवस्तुविल्ल । २५
पुरुहूतादिकळतुकेट्टु चॊन्नार्—
पुरन्मारॆ वधिच्चरुळुवानिप्पोळ् २६
कनकमामल वळच्चु विल्लाक्कि-
क्कॊलय्क्क ञाणिनु पॆरुत्त वासुकि २७
शरमाकुन्नतु परन् नारायणन्
मऽकळ् नालुण्टु कुतिरकळ्क्किप्पोळ् २८
रविशशिकळ् तेरुरुळुकळाक्का-
मवनि तेर्त्तट्टु चतुर्म्मुखन् सूतन् । २९

देवगण ने जाकर गिरिजाकान्त (शिव) की स्तुति की। स्तुति सुनकर रुद्र प्रसन्न हुए और हँसते हुए देवो से बोले—हे सुरवर ! क्या आप सुख से है ? बताइये, आप सब मिलकर क्यो चले आये ? आपने जो हमारा सुख पूँछा उसी से हमारा सुख हो गया। १५-२२ इन त्रिपुरो के उपद्रव के कारण त्रिभुवन का नाश हो रहा है। उनका निग्रह करके हमे अभय प्रदान कीजिये, हे अखिललोकेश ! आपही हमारा शरण हैं। यह सुनकर शिवजी ने कहा—"युद्ध करने के लिए कोई सामग्री नही है।" तब इन्द्र आदि बोले—"त्रिपुरो को समाप्त करने के लिए सुवर्णपर्वत को नवाकर धनुष बनाना, लम्बा वासुकि तो डोरी बनेगा, पर नारायण बाण बनेगा, घोडो के काम के लिए चारो वेद है, सूर्य और चन्द्र रथ के चक्र बनेगे। भूमि बनेगी रथ का पीठ और ब्रह्मा तो सारथि है ही, अब युद्ध सामग्री मे क्या कमी है ? जब इन्द्र आदि देवो ने इस प्रकार कहा

वरङ्ङळ्कोण्टवर् मयनोटु चोन्नार्
पुरङ्ङळ् निर्म्मिच्चु तरिकेन्नप्पोळे । १०
अवनियिलोरु शतकयोजना-
वळि विस्तारत्तिलिरुन्पुतन्नालु ११
भुवर्लोकत्तिङ्कल् चमच्चु वेळ्ळिकको-
ण्टमरलोकत्तु कनकंतन्नालुं । १२
परिणाहं मून्नमोरुपोलेतन्ने
परिचोटु वाणारवट्टिल् मून्निलुं । १३
परितापंपूण्टु भुवनवासिकळ्
परवशन्माराय् चमञ्ञितेट्टवु । १४
विबुधरक्कालं विरिञ्चन्तन्नोटु
विविध वेदन पऱञ्ञतुनेर । १५
शतमखादियुं चतुर्म्मुखनुमाय्
शतपत्रायतनयनन् मेविटु- १६
पयःपयोधितन्नुटे करेच्चेन्नु
भयप्रकारङ्ङळुणर्त्तिच्च नेरं । १७
कळिवुण्टाक्कुवन् पोरुत्तालुमव-
र्क्कळिविल्लारालु शिवनालेन्निये । १८
पुनरतु केट्टु पुरन्दरादिकळ्
पुकळ्त्तिनार् चेन्नु गिरिजाकान्तने । १९

वैसा ही हो, जैसा आपने मागा है और उसके बाद सबका नाश हो।" ऐसा कहकर अन्तर्द्धान हो गये। अपने वरो को लेकर वे मय के पास पहुँचे और बोले—"अब पुरियो का निर्माण कर दो।" तुरन्त ही मय ने भूलोक मे एक लोहे की पुरी शत योजन विस्तार वाली, निर्माण कर दी और भुवलोक मे एक चान्दी की पुरी और स्वर्गलोक मे एक स्वर्ण की पुरी निर्माण कर दी। तीनो पुरियो का विस्तार वही थी और तीनो उनमें सुख से रहने लगे। भुवनो के निवासी सब घबड़ाये और अत्यन्त लाचार हुए। ८-१४ तब देवो ने ब्रह्मा से अपने विविध दुःखो का निवेदन किया। इन्द्र आदि देवगण चतुर्मुख के साथ कमलोचन (विष्णु) के निवासस्थान क्षीरसागर के तट पर जाकर अपने भयो का वर्णन किया। (विष्णु ने कहा) "कोई उपाय सोच निकालूंगा। कुछ सबर करो। शिवजी को छोड़कर और कोई इनका नाश नही कर सकता।" यह सुनकर इन्द्र आदि

प्रतिबन्धं कण्टु परञ्ञु माद्रेशन्—
प्रतिकूलभाव कळञ्ञेनेङ्किल् आन् ४०
रवितनयनु हितमाकुवण्ण
पवनवेगेन रथ नटत्तुवन् । ४१
परिकें शिक्षिप्पन् पिळकळ् कण्टाल् आन्
तरणिनन्दननतिनु कोपिक्कु । ४२
अविटें अङ्ङळिल् चेरुतु चीरुन्पो-
ळपजयं वरुमतुमरिञ्ञालु । ४३
अतु केट्टु नागद्ध्वजनुं कर्ण्णनो-
टतिनु कोपियाय्कॅटो सखेयॅन्नान् ४४
वळिये सारथ्यं वहिक्कामेॅङ्किलो
पिळकळ् काणुन्पोळ् परकयुं चेय्या । ४५
अतिनु कोपमिल्लिनिक्कॅन्नु कर्ण्णन्
मतिमान् माद्रेशन् रथवु कूट्टिनान् । ४६
ज्वलिच्चु भास्करसुतशरङ्ङळुं
कोॅलच्चु काळपृष्ठवु धरिच्चुटन् । ४७
नटिच्चु तेरतिल् करयेरीटिना-
नटुत्तु मटुळ्ळ चतुरंगङ्ङळु । ४८
तेॅळिञ्ञु गान्धारीतनयन् तेरतिल्
विळङ्ङु कर्ण्णनोटिवण्णं चॉल्लिनान्— ४९

मैं अपना विरोध त्यागकर रहा हूँ । ३२-४० मै वायु के वेग से रथ चलाऊँगा ताकि कर्ण का हित हो । हाँ, अगर मैंने दोष देखा तो अवश्य डाँटूगा और कर्ण कुपित होगा । हम दोनो आपस मे झगड़ा करते रहेगे उतने मे हम हारेगे, यह भी समझ लो । यह सुनकर नागध्वज (सुयोधन) ने कर्ण से कहा— "यार ! कुपित न होना, अच्छा ? मैं नियम के अनुसार सारथ्य करूँगा और अगर दोष देखूँगा तो बतला भी दूँगा" कर्ण बोला— "अच्छा ! मै बुरा न मानूँगा ।" तब माद्रेश ने रथ को तैयार किया । ४१-४६ कर्ण के वाण चमक रहे थे । उसने ज्या चढाकर अपना धनुष कालपृष्ठ धारण किया । तदनन्तर साभिमान रथ पर चढ बैठा और उसकी चतुरङ्ग सेना भी निकट आ गयी । प्रसन्न होकर सुयोधन ने रथ पर विराजमान कर्ण से इस प्रकार कहा— "विना विलम्व के कपिध्वज (अर्जुन) का वध करो और युधिष्ठिर को पकड़कर

कलहत्तिनेन्तु कुरुविनियेन्नु
वलहन्नादियाममरर् चोन्नप्पोळ् ३०
त्रिपुरन्मारेक्कोन्नोटुक्कुवानीशन्
त्रिदशन्मारुमायिवण्ण कोप्पिट्टान् । ३१
पुरन्दरादिकळ् पलरुं काण्कवे
पुर दहिप्पिच्चान् नयनत्तीयाले । ३२
हर ! हर ! स्मरहर ! पुरहर !
पर ! पर ! पर ! वरद ! शंकर ! ३३
शिव ! शिव ! शिवकर ! शिवात्मक !
भव ! भयमृति भवभयहर ! ३४
जय जय नमो नमो जय अेन्नु
जपिच्चु सेविच्चु सुखिच्चारेवरु- ३५
मतिनु सारथि विरिञ्चनायतु-
ममरकोनु मातलितानल्लयो ? ३६
भुवननायकन् कमलाकामुकन्
कुवलयदलनयनन् माधवन् ३७
कुरुवु तीर्त्तु वार्सविक्कु सारथि
रवितनयनु विजयनें वेल्वान् ३८
रथं विरवोटु नटत्तुक भवा-
ननुवदिच्चालुं कुरुवु वारायें-
न्ननुसरिच्चु चोल्लिन सुयोधनन् ३९

तव शिवजी ने त्रिपुरो को मार समाप्त करने के लिये देवो के साथ तैयारी की ।२३-३१ इन्द्र आदियो के देखते ही त्रिपुर को अपनी आँख की अग्नि से जला दिया । हर! हर! सुरहर! पुरहर! पर! पर! पर! वरद ! शकर! हे शिव ! शिव ! शिवकर ! शिवात्मक ! भव ! भयमृतिभय भयकर ! । जय ! जय ! नमोनम जय ! इस प्रकार जप करते हुए सब ने सेवा की और प्रसन्न हुए । इस (त्रिपुरनाश) मे ब्रह्मा सारथि हुए । आप नही जानते है कि मातलि इन्द्र का सारथि है ? भुवननायक, कमला के पति कुवलयदलनयन माधव अर्जुन के सारथि है और उनकी कोई हानि न हुई । अर्जुन का वध करने के लिए आप रवितनय (कर्ण) के रथ को चलाइये । आप स्वीकार कीजिए, कोई हानि न होगी । इस प्रकार सादर समझाते सुयोधन की परेशानी देखकर माद्रेश वोले । अच्छा तो

तरुवन् नाटुकळ् नगरं ग्रामङ्ङळ्
तुरगवारणरथङ्ङळ् नल्कुवन् । ६१
पौरुतु पार्त्थनेक्कोलचेय्तु पोरिल्
पौरुळवनुळ्ळतटये नल्कुवन् । ६२
ऒविटुत्तोन् पार्त्थनेविटुत्तोन् कृष्णन् ।
कपटं कैविट्टु परविन् कण्टाकिल् । ६३
कळिवुण्टायितुमवनिन्नेन्नुटे
मिळिकळिलकप्पेटुन्नताकिलो । ६४
पलरोटुमित्थ परञ्ञु कर्ण्णनु-
मलमलमेन्तु परञ्ञु शल्यरुं । ६५
पलनाळु निन्टे वचनङ्ङळ्कोण्टे
कलहं कण्टु ञान् पौळियलल कर्ण्णा ! ६६
चपलन्मार्क्किकत्थं परकोन्न शील
कपटवु चत्तालोळिञ्ञुमारुमो ? ६७
ऒरु मुहूर्त्तत्तिनिटय्क्कु पार्त्थने-
त्तिरमोटु काट्टित्तरुन्नतुण्टु ञान् । ६८
अवने विल्लुमायटुत्तु काणुन्पो-
ळवनिमुट्टेप्पाञ्ञटवि तेटुं नी । ६९
अवनुटे कीर्त्ति नटनं चेय्युन्नु
भुवनत्तिङ्कलेन्नरिञ्ञतिल्ले नी ? ७०

तो अविलम्व उनसे कह दो । ५४-६० मैं आज देश, नगर और गाँव दूँगा, मै घोड़े, हाथी और रथ दूँगा। मै आज युद्ध मे अर्जुन को मारकर उसकी सारी सम्पत्ति दान दूँगा। यह पार्थ कहाँ का है और यह कृष्ण कहाँ का है। अगर उनको तुम लोग देखो तो साफ कह दो।' अगर वह आज मेरी दृष्टि मे आयेगा मैं यह अवश्य करूँगा।" जव कर्ण ने वहुतो से इस प्रकार कहा तव शल्य वोला— "वस, वस, वहुत कह चुके हो !' वहुत दिन से मैं देख रहा हूँ कि तुम वातो ही मे युद्ध कर रहे हो, मैं झूठ नही वोल रहा हूँ। इस प्रकार वोलना चपलो का शील है मरने पर भी कपट नष्ट नही होता है। ६१-६७ एक मुहूर्त्त के अन्दर मै अर्जुन को स्पष्ट दिखला दूँगा। उसको धनुष लिए देखकर तुम सारी पृथ्वी पर भागकर कोई वन ढूँढोगे। उसकी कीर्त्ति सारी पृथ्वी पर नाच रही है, यह नही जानते हो, क्या ? धनञ्जय तो नरसिंह के

कपिद्ध्वजन्तन्नॆ वधिक्क वैकातॆ
युधिष्ठिरन्तन्नॆप्पिटिच्चुकॆट्टुक । ५०
निबद्धमॆन्नुळ्ळिलवरिलॆ वैर
कपिद्ध्वजनिलो निनक्कुमुण्टल्लो । ५१
जयिच्चु वैकातॆ वरिकॆन्नु यात्र-
ययच्चु कौरववरनुमन्तॆरं । ५२
अट्टुत्तु राक्षसपिशाचभूतङ्ङ-
ळिटित्तीयुं वीणु विऱच्चु भूमियु । ५३
कुरुनरिकळु करञ्ञितु पार
नरुंचोर पारं चॊरिञ्ञु मेघङ्ङळ् । ५४
चुळलियुं काट्टुं प्रतिकूलमायि-
ट्टुळऱिवन्नितु कॊट्टुतायॆट्टवु । ५५
कळुकुं काकनुं पऱन्नितु मेले-
यॊळुकि कण्णुनीर् कुतिरकळ्क्कॆल्लां । ५६
तटञ्ञु वीणितु गजपदातिक-
ळिटञ्ञु तङ्ङळिल् मुऱिकयुचॆय्तु । ५७
कळिञ्ञवयॊक्ककक्कळिच्चु कर्णनुं
नटन्नितु चित्तमुऱप्पिच्चन्नेरं । ५८
वळियिल् कण्टवर् पलरॊटुमप्पोळ्
मॊळिञ्ञानिङ्ङनॆ विरुतुळ्ळगेशन्— ५९
नरनारायणरिरुवरुमॆङ्ङा-
नॊरुवर् कण्टाकिल् पऱविन् वैकाते । ६०

वॉधो !" मेरे दिल मे उनके प्रति वैर बँधा हुआ है और अर्जुन के प्रति तुम्हारा भी तो है। विजय प्राप्त करके जल्दी आओ, कौरव ने इस प्रकार उसको बिदा किया। राक्षस, पिशाच और भूत निकट आये, बिजली गिरी और पृथ्वी काँपने लगी। ४७-५३ सियार बोलने लगे और बादल भी शुद्ध रक्त बरसाने लगे। और प्रतिकूल वात्या और आँधी बड़े जोर से चलने लगी। गिद्ध और कौए आकाश मे उडने लगे और घोड़े आँसू गिराने लगे। हाथी और पैदल सैनिक एक दूसरे से टक्कर खाये और दोनो को चोट भी हुई। जो कर सकता था वह सब करके कर्ण साभिमान घूमने लगा। और कई पथिक-जनो से योग्य कर्ण ने इस प्रकार कहा— "अगर नर और नारायण को तुम लोग कही देखो

औरुमिच्चु कळिच्चिरुन्नु मद्यवुं
परुकित्ताळवुंपिटिच्चु पाटियु ८१
मदंकोण्टु वीणु मतिमरन्नुटन्
तळर्न्नु तङ्ङळिल् पकर्न्नु भोगिच्चुं । ८२
मरुवीटु जनं तव राज्यत्तिङ्कल्
पेरिके नन्नल्लो पुनरिवयेल्लां । ८३
मनस्सिल्तोन्नियतिनियु चौल्किलुं
निकक्कु नल्लतु परयुन्नुण्टु ञान् । ८४
जळमते ! सूता ! पुनरितु केळ् नी
कळियल्ल पण्टु निनक्कु तुल्यना- ८५
यौरुपेरुंकाकनुळवायानवन्-
चरितङ्ङळेल्लामरिञ्ञतिल्ले नी ? ८६
दिनंतोरुमेच्चिल् कौटुत्तौरु वैश्य-
तनयन्माराय कुमारन्मार् मुन्नं ८७
वळर्त्तानेन्नतुनिमित्तमायक्काकन्
पुळच्चहङ्करिच्चरयन्नङ्ङळे ८८
मदत्तोटु चेन्नु विळिच्चिताळियें-
क्कटक्कणं परन्निनि नामेल्लारुं । ८९
वेळुत्तमेनियु ञेळियुं वेण्मयु-
मिळच्चु मुन्पिनिक्कयय्क्कयु वेण । ९०
अतु केट्टुळ्ळिल् कौतुकत्तोटन्नवु-
मुदधितन्मीते परन्नु मेल्लवे । ९१

लगाकर गाते हुए अन्त मे मद के कारण गिरते है, अपने को भूल जाते है और थककर आपस मे बाँटकर भोग करते है। ७५-८२ इस प्रकार करनेवाले लोग तुम्हारे राज्य मे है। यह सब कितना अच्छा है! और भी मै कह सकता हूँ, जो मुझे सूझता है पर तुम्हारा हित ही मैं कहना चाहता हूँ। हे मूर्ख ! हे सूत ! यह सुन लो। मैं दिल्लगी न कह रहा हूँ। पूर्वकाल मे तुम्हारे ही तुल्य एक बड़ा कौआ था। उसका किस्सा तुम नही जानते हो ? किसी वैश्य के कुमार पुत्रो ने प्रतिदिन उसको जूठा खिलाकर पाला था। इसलिए वह मोटा हो गया था। वह अपने अहङ्कार मे हँसो के पास गया और मद के साथ बोला— "हम सब उडकर समुद्र का पार करे।" ८३-८९ अपने सफेद शरीर और चमकने-

नरसिंहत्तिनुसम धनञ्जयन्
नरियोटोक्कुं नीयवनेयोक्कुन्पोळ् । ७१
परिकें नाणमिल्लयो निनक्कुळ्ळिल्
पौरुवतिनवनोटु सूतात्मजा ! ७२
पुनरतु केट्टु पऱञ्ञु कर्णनुं
मनसि कोप वन्नतु पोऱाय्कयाल् । ७३
मतिमति पारमधिक्षेपिच्चतु
मतिमान्मारायोर्क्कितु गुणमल्ल । ७४
पेरिकें नन्नल्लो भवान् निरूपिक्किल्
परिपालिक्कुन्नतळकितु नाटुं । ७५
पेरुवळि पोकु कुलस्त्रीवर्गत्ते-
क्करबलंकोण्टु पिटिच्चु पुल्कियुं ७६
मऱयवरोटु पऱिच्चुकोल्कयुं
मऱिवुकळेन्नियोरुवक्कुमिल्ल । ७७
पोटिकोण्टे पोकुं मलमूत्रादिकळ्
पोटियाले कुळिकुऱियुमङ्ङने । ७८
कुलभेदङ्ङळुमऱिकयिल्लारुं
कुलशीलमुळ्ळ जनत्ते निन्दिच्चु । ७९
मकळुं मातावुं मकन् मरुमकन्
महिषियुं जनकनुं कनिष्ठनुं ८०

समान है, उसके सामने तुम सियार के समान हो। तुमको शरम नही आती है कि उससे युद्ध करने के लिए सोच रहे हो, हे सूत !" यह सुनकर कर्ण ने कहा' जो अपना कोप सह न सका— "बस ! बस ! तुम मेरा अपमान काफी कर चुके हो। बुद्धिमान् लोगो के लिए यह कोई गुण नही है। ६८-७८ सोचो तो तुम बहुत अच्छे हो और तुम अपने देश का अच्छा परिपालन कर रहे हो। अपने रास्ते चलनेवाली कुलस्त्रियो को बलात्कार से पकड़कर दूषित करना, ब्राह्मणो का धन लूटकर वध करना और धोखा देना, इन कार्यो के अतिरिक्त वहाँ लोग और कुछ न करते है। विना चूरन खाये उनका मल-मूत्र न उतरता है और चूरन से ही उनका स्नान और तिलक धारण भी होता है। कुलभेद कोई भी न जानता है, कुल और शीलवाले जन की निन्दा की जाती है। माँ, बेटी, पुत्र, भाँजा, रानी, पिता, छोटा भाई, सब साथ खेलते हुए और मद्य पीते हुए, ताल

कुटकळालवट्टवुं वेँञ्चामर
कोटि कोटिक्कूड तळविरुतुकळ् १०२
चेँकिटटयुमाडलरिवाद्यङ्ङळ्
जय जय शब्दं चेँरुत्राणोच्चयु १०३
कळिच्चु तन्नत्तान् मडन्नु कौरवर्
विळिच्चहङ्करिच्चटक्कळ पुक्कु । १०४
विळङ्ङुन्नु मुखनळिनङ्ङळेँल्ला—
मिळकुन्नु तेँळिकटञ्ञ शस्त्रङ्ङळ् । १०५
करिमुकिलोत्त करिवरन्मारु
करतारिल् विल्लु शरवुं कैक्कोण्टु १०६
नरवीरन्मारु तुरगपंक्तियु
मरुभरपूण्ट रथकदंबवु १०७
मरणभीतियु वेँटिञ्ञु कालाळुं
मरुतलरुटे निकटं प्रापिच्चार् । १०८
विळिच्चितु सशप्तकन्मारन्नेर
विजयनेँप्पोरिलेँतिर् तरिकेँन्नु । १०९
नटिच्चवर्कळोटेँतिर्त्तु पार्थनुं
पटुत्वमोटवरकलत्ताक्किनार् । ११०
प्लवगपाळियोटेँतिर्त्तु रावणि
पेँरुं शरमारि चोरिञ्ञतुपोलेँ । १११

की तरह माद्रेश ने सोल्लास रथ चलाया। कौरव तो छत्र, राजाओ का आडम्बर, सफेद चँवर, झण्डा, उसका कोश. मोरपँख आदि लेकर कान फोडने लायक वाद्यघोप, जयजय ध्वनि और ज्याघोष करते हुए खेलते हुए अपने को भूलकर अहङ्कार के साथ रणभूमि पहुँचे । ९७-१०४ सभी मुखकमल विराजने लगे और चमकनेवाले शस्त्र चलने लगे। हाथियो की पक्ति जो कालेपन मे बराबर थे, हाथ धनुप-बाण लिए नरवीर, घोडो का ताँता, दृढ रथो का समूह, मृत्युभयहीन सैनिक, ये सब शत्रुओ के निकट पहुँचे । तब सशप्तको ने आवाज दी कि अर्जुन को युद्ध के लिए आगे लाओ । अर्जुन ने साभिमान उनका सामना किया, पर कुशलता के साथ उन्होने उसको दूर किया। जिस प्रकार मेघनाद ने वानरसेना का सामना करके उस पर शरवर्षा की उसी प्रकार सारे भुवन का एकमात्र धनुर्धर कर्ण ने बार-बार शर छोड़कर सेना को

अतिलु मेलूभागत्तधिकं वेगत्ति-
लतिमोदत्तोटु परन्नु काकनुं । ९२
तेळिञ्ञु वायसगणवुमन्नेरं
तळर्न्नु काकनु चिऽकु मन्दिच्चु । ९३
कुळञ्ञु वेळ्ळत्तिल् पिटञ्ञुवीणुटन्
कळिञ्ञु काकन्तन्नहङ्कारमेल्ला । ९४
विधिबलमेन्नु मरिच्चानप्पोळे
विधिविहित केळ् निनक्कुमप्पोले । ९५
विळिच्चरिकेवच्चुरुळयु तन्नु
वळर्त्ति निन्नेयुमिह सुयोधनन् । ९६
अभिमानिक्कुन्नततुकोण्टल्लयो
कुपितनाकोल्ला परमार्थं चोन्नाल् । ९७
पऽञ्ञतु पोरुं परिभविप्पिप्पा-
नरिञ्ञिरिक्कुन्नु सकलवु ञान्तान् । ९८
मरिप्पनेन्नुमे जयिच्चुकूटायिक-
लोरिक्कलुं भयं पुऽत्तु काट्टामो ? ९९
तेळिञ्ञु चम्मट्टियेटुत्तालु तेरु-
तेळिच्चालुमेन्नु परञ्ञु कर्ण्णनु । १००
मधुवैरि रथं नटत्तिटुवण्णं
मदिच्चु माद्रेशन् नटत्तिनान् तेरुं । १०१

वाले शुक्रत्व को दबाकर किसी को पहले ही भेज दो। यह सुनकर एक हँस बडे कौतुक के साथ धीरे-धीरे समुद्र के ऊपर उड़ा। कौआ तो उससे भी ऊपर वेग से बडे प्रमोद के साथ उडा। सारा काकगण प्रसन्न हुआ। वह कौआ तो थका और उसके पक्ष मन्द हुए। क्षीण होकर तडपता हुआ पानी मे गिरा और कौए का सारा अहङ्कार समाप्त हुआ। विधि के बल से उसका मरण हुआ। तुम्हारे लिए विधि ने क्या निश्चय किया है, सुन लो। सुयोधन ने तुम्हें बुलाकर, अपने पास बैठाकर कौरे खिलाकर पाला है। ९०-९६ इसीलिए तो तुम अभिमान करते हो। कुपित न हो जाओ जब मै परमार्थ कहता हूँ।" तब कर्ण ने कहा— "बस, तुमने मेरा अपमान काफी किया है। मै सब जानता हूँ। अगर जीत न सकूँगा तो मरूँगा। कभी भी भय न दिखलाऊँगा। चलो अब खुशी से अपना चाबुक लो और रथ चलाओ।" कृष्ण के रथ चलाने

तट्टुत्तकूट्टमो मम शरङ्ङळे-
प्पटय्क्कु भाविच्चु पुरप्पेटाय्कोटो । १२३
वरिच्चुकोळ्ळुक पलवु शस्त्रङ्ङळ्
मिटुक्कुळ्ळर्ज्जुननरिकित्तिल्लयो ? १२४
इनि ञानेय्कयिल्लतु पेटिक्केण्ट-
यिनिक्कु निन्नेक्कोन्नोरु फलमिल्ल । १२५
पतुक्कप्पोयालु भयप्पेटाय्कयें-
न्नधिक्षेपिच्चंगनरपति चोन्नान् । १२६
कटन्नु कैनिलयकपुक्कु मन्नन्
नटन्नु भीमनुमटक्कळपुक्कान् । १२७
गदयुमाय् दण्डधरनेप्पोले चे-
न्नेतिरिट्टोर्कळेयोटुविकनान् भीमन् । १२८
कुरक्करचरुमरक्करुं मुन्न
तिरक्किप्पोर्चेय्तकणक्कयेन्नेर १२९
परक्के निन्नवर् निरक्के वीळुन्नु
मरिक्कुन्नु चिलर् तिरिञ्ञु मुल्प्पुक्कु- १३०
तिरिक्कुन्नु चिलररिक्कुन्नु चिलर्
भरिक्कुन्नु शर तिरिक्कुन्नु चिलर् । १३१
उरत्त वन्पिनोटटुक्कुमर्क्कजन्
करत्तिले विल्लु ज्वलिप्पिच्चुकोण्टु १३२

आदि करते रहो। हाँ तुम पितृपति (यमराज) के प्रिय तो हो परन्तु मेरा सामना करके अगर युद्ध करोगे तो अवश्य मरोगे। मेरे बाण रोके न जा सकते हैं। इसलिए युद्ध करने के लिए न निकलो। तरह-तरह के शस्त्र चुन लो। युद्धकुशल अर्जुन क्या निकट में नहीं है ? अब मैं तुम पर न मारूँगा, डरो मत। तुम्हारा वध करके मेरा कोई फल सिद्ध न होगा। धीरे-धीरे चले जाओ, डरो मत। इस तरह अगनरपति (कर्ण) ने अपमान किया। १२०-१२६ तब राजा (युधिष्ठिर) चला गया और तबू में प्रविष्ट हुआ। इतने में भीम रणभूमि में आया। यमराज के समान अपनी गदा से भीम ने, जो जो सामने आया, सबको समाप्त कर दिया। पूर्वकाल में जैसे वानरप्रमुख और राक्षस भिड़कर लड़े थे उसी प्रकार वे चारों तरफ फैलकर एक-एक करके गिरे। कोई-कोई मरा, कोई-कोई आगे बढ़कर फिर पीछे हटता है, कोई-कोई बैठ

भुवनैकधनुर्द्धरनामगेशन्
पुनरट्टुत्तेय्तेय्तिळक्किनान् पट । ११२
तिरिच्चु पाण्डवरतुनेरमेऱ्
मरिच्चु पाञ्चालनृपनुटे बल । ११३
अपजय वन्नतऱिञ्ञु धर्म्मज-
नवनिनायकन् पेरुन्तेरेऱिनान् । ११४
अविटेक्कर्ण्णनु युधिष्ठिरन्तानु-
मवनि चाञ्चाटुंपरिचु पोर्चेय्तार् । ११५
मुऱिञ्ञिटरोटे तिरिच्चु धर्म्मजन्
परञ्ञु कर्ण्णनुमवनोटन्नेरं— ११६
उळऱिप्पोकाते तिरिञ्ञु निल्लु नि-
ल्लळको भूपतिवरन्माक्कोट्टुक ? ११७
नृपधर्म्ममोन्नुमऱियुन्निल्लयो
नृपशिखामणे ! मरिक्किलु नन्नु । ११८
मतिमतियेङ्किल् नटन्नालुमेटो
मतिमानाय नी मरिच्चुपोकेण्टा । ११९
पृथिवि पालिप्पानिरिक्क नल्लु नी
पृथिवीनाथ ! धर्म्मज ! पृथात्मज ! १२०
वृथा कुलधर्म्मप्रथन चेय्यायक ।
व्रतयागादिकळनुष्ठिच्चीटुक । १२१
पितृपतिक्केट प्रियनेन्नाकिलुं
मृतिवरुमेन्नोटेतिर्त्तु पोर्चेय्किल् । १२२

हिलाया । १०५-११२ तब पाण्डव पीछे हटे और पाञ्चाल राजा का बल नष्ट हुआ । यह जानकर कि अपजय हुआ, राजा युधिष्ठिर बड़े रथ पर चढे । तब कर्ण और युधिष्ठिर ऐसे लड़े कि सारी भूमि हिलने लगी । चोट खाकर युधिष्ठिर हटा । तब कर्ण ने उससे कहा— "हारकर न भागो घूमकर खड़े हो जाओ । भूपतिवरों के लिए भागना शोभा देता है ? राजधर्म कुछ भी न समझा क्या ? हे नृपशिखामणे ! मर जाना इससे अच्छा है । अगर युद्ध से जी भर गया है तो चले जाओ । तुम बुद्धिमान् हो, अब मर न जाओ । ११३-११९ पृथ्वी का पालन करने के लिए तुम जियो, यही अच्छा है । हे पृथिवीनाथ ! धर्मपुत्र ! कुन्तीपुत्र ! व्यर्थ के लिए कुलधर्म का नाश न करो । व्रत, योग

मदिच्चीरानतन् पॆरुत्त मस्तकं
पॊळिप्पान् केसरियटुत्ततुपोले । १४३
कुतिच्चु तेरतिल् करयेऱि भीम-
नधिक्षेपिच्चेऱ्ऱप्परयुन्न नावि-
न्नरुप्पनॆन्नुटनॆटुत्तु कत्तियु १४४
चॆरुत्तु शल्यरुं पिटिच्चितु करं ।
मुऱिक्कॊल्ला भीमा ! मुटिक्कॊल्ला पार्त्थन् १४५
मुटिञ्ञुपोमितु झटिति नी चॆय्कि-
लटङ्ङुकयॆन्नु परञ्ञु माद्रेशन् १४६
कुतिच्चु तेरतिल् पकर्न्नु भीमनु ।
अँतिर्त्तु गान्धारीतनयन्मारप्पोळ् १४७
मरुत्तवरिलॊरिरुपतुपेरे
विकर्त्तनात्मजपुरत्तिनु विट्टान् १४८
विकर्त्तनात्मजनुणर्न्नितन्नेर ।
निकृत्तदेहनाय् पॆरुत्त कोपेन १४९
करुत्त भावमोटॆटुत्तु चापवु ।
मुऱिच्चु तेरतु तकर्त्तानिगेश- १५०
नॆटुत्तु तन्नुटॆ गद वृकोदरन् ।
पॊटिच्चानानतेर् कुतिरकळेयु- १५१

जैसे कोई सिंह किसी मत्त हाथी का मस्तक फोड़ने के लिए उसके पास जाता है। भीम कूदकर रथ पर चढ़ा और गाली वकनेवाली कर्ण की जीभ को काटने के लिए चाकू निकाला। तव शल्य ने तुरन्त उसका हाथ पकडा। हे भीम! काटो मत! उसको समाप्त न करो! अर्जुन समाप्त हो जायगा अगर तुम जल्दी मे यह काम करोगे। ज़रा शान्त हो जाओ! माद्रेश (शल्य) ने कहा। तव भीम कूदकर रथ से उतरा। तव गान्धारी के पुत्र आकर लड़े। १४१-१४७ शत्रुओ मे से कोई वीस यमपुरी भेजे गये। इतने मे सूर्यपुत्र (कर्ण) जागा। उसके शरीर पर घाव थे। बड़े कोप के साथ और वहुत क्षुब्ध होकर उसने अपना धनुष लिया। कर्ण ने रथ को तोडकर खतम कर दिया। तव वृकोदर (भीम) ने अपनी गदा ली। उसने हाथी, रथ और घोडे नष्ट कर दिये, सभी कुलपर्वतो को हिलाया। पृथ्वी को कम्प उत्पन्न कर दिया और समुद्र को क्षुब्ध कर दिया। शत्रु मरकर लेटे है। रक्त

पोळिक्कुन्नु बाणमतु कण्टु भीम-
नुळटिनोट्टुकूटटुत्तानन्तेर । १३३
तेरुतेरेच्चिल शरनिरकळे-
प्पेरुमळय्क्कुनेर् चोरिञ्ञु मारुति । १३४
विषण्णनाय् निन्नू विकर्त्तनात्मज-
नुळन्नतु कण्टु पऱञ्ञु शल्यरु— १३५
विजयनोटु पोर् करुति वन्नोरु
विरुतन् विल्लाळिवरनल्ले इप्पोळ् १३६
परिभ्रमत्तोटु वयट्टिल् कैवच्चु
परक्के नोक्कुन्नतेविटेक्कु पोवान् ? १३७
मरिक्किलुं नन्नु जयिक्किलुं नन्नु
शरप्रयोगंचेय्कतुपोले नीयुं १३८
अणञ्ञुते भीमन् पऱञ्ञु निल्क्कवे
पिणङ्ङिङनिल्पवर्कुलमोटुक्कुवोन् । १३९
रवितनयनुमनिलपुत्रनु
चेविकुळियवे वलिच्चु बाणङ्ङळ् । १४०
वरिषिक्कुन्नेरं तळर्न्नु कर्णनुं
विरविल् वीणितु मुऱिञ्ञु तेरतिल् १४१
इटरोटु मोहं कलर्न्नु कर्णनुं-
मिटमदमोटङ्ङटुत्तु भीमनुं १४२

जाता है। कोई शर धारण करता है तो कोई घूमता है। बड़े अभिमान के साथ, अपने चमकते हुए धनुष लिए कर्ण ने शरवर्षा की। उसे देखकर भीम क्रुद्ध होकर पास पहुँचा। १२७-१३३ उसने बड़ी वर्षधारा के समान लगातार शरो का प्रयोग किया। तब विकर्तनात्मज (सूर्यपुत्र कर्ण) विपण्ण होकर खडा रहा। शल्य बोले— "अर्जुन से लडने आये तुम विख्यात धनुर्धरवर अब क्या घवड़ा रहे हो और पेट पर हाथ रखकर क्या चारो ओर देख रहे हो ? कहाँ जाओगे ?। मरो तो ठीक है, जीतो तो ठीक है। शरो का प्रयोग तो करो। जब बाते हो रही थी तब भीम वेग से आगे बढा लडनेवालो के कुल समाप्त करने के लिये। कर्ण और भीम ने इतने बाण खीचे कि उनके कान फट जांय। १३४-१४० अन्त मे कर्ण थका और रथ ही पर गिर गया और बेहोश सा हो गया। तब मद के साथ भीम उसके निकट पहुँचा

मिळक्किनान् कुलमलकळेयेल्ला ।
कुलुक्किनानूळि कलक्किनानाळि
मलय्क्कुन्नु चत्तु मरुतलयेल्ला- १५२
मौलिक्कुन्नु चोरप्पुळ पलवळि
चलिक्कुन्नु चित्तमेतिर्प्पवर्क्केल्लां । १५३
कौलय्क्कुन्नु चाप मुरिक्कुन्नु पुन-
रिरक्कुन्नु पल विमानं नारिमार् । १५४
मरक्कुन्नु चित्त कलहिक्कुंनेरं
इरक्कुन्नु तण्णीर् मिळिक्कुन्नु कण्णुं । १५५
मरिक्कुन्नु तेरुतेरे नृपतिकळ्
तरय्क्कुन्नु बाणं परिक्कुन्नु चिल- १५६
रिरिक्कुन्नु चिलरेटुत्तुकोळ्ळुवान्
इरिक्कुन्नु चिलर् मुरिञ्ञिटरोटे । १५७
परक्कुन्न पटयोळिच्चुपोकाय्वान्
भरिक्कुन्नु चिलर् कुलुक्कमेन्नियें । १५८
तेळुतेळेत्तेळि कटञ्ञ शस्त्रङ्ङळ्
गळङ्ङळूटे पोय् नटक्कुन्नु नीळे । १५९
शिव ! शिव ! शिव ! शरङ्ङळ्तन्नाले-
यवनियुं गगनवु मरयुन्नु । १६०
दिनकरसुतप्रमुखन्मारुम-
ङ्ङनिलनन्दनप्रमुखन्मारुमाय् १६१

की नदियाँ चारो ओर बह रही है। शत्रुओ का चित्त बहुत घबड़ा रहा है। धनुषो पर ज्याये चढी, धनुष काटे भी गये। नारियों के विमान उतर रहे है। १४८-१५४ लडते समय स्मृति नष्ट हो रही है। कोई-कोई जल माँग रहा है, आँखे निश्चल होकर देख रही है। नृपति एक-एक करके मर रहे है। शरीर पर बाण लग रहे है, कुछ लोग उनको निकाल रहे है, कोई-कोई बैठा है ताकि लोग आकर उनको ले चले। कुछ लोग घायल होकर दु खित है और बैठे है। फैली हुई सेना को वे पार न कर सकते है। और लोग तो बिना क्षोभ के सब सह रहे है। अत्यन्त चमकनेवाले शस्त्र सीधे जाकर गरदन पर लगते है। शिव ! शिव ! शिव ! पृथ्वी और आसमान शरो से छिपे जा रहे है। जब कर्ण और उसके अनुयायी भीम और उसके अनुयायियो

वरिक नल्लतु निनक्कॆन्नाशियु-
मरुळिच्चॆय्तु पिन्नॆयुमतुनेरं । १८१
पॆरिकॆ नन्नायि रवितनयनॆ-
प्पोरुतु कॊन्नतु तॆळिञ्ञितुपार । १८२
अधिक्षेपिच्चॆय्तु मुरिच्चु कॊल्लातॆ-
ययच्चानॆन्नॆ आनतुमूलमिप्पोळ् १८३
वशक्केटुण्टायितवनॆक्कॊल्कयाल्
वशक्केटु मम शमिप्पिच्चायो नी ? १८४
परुषमाय् नृपनतु पऱञ्ञप्पोळ्
पुरुहूतात्मजनुणर्त्तिच्चीटिनान्— १८५
वधिच्चतिल्ल कर्ण्णनॆयितॆन्नाले
वहिक्कुमोयॆन्नतऱिञ्ञतुमिल्ल । १८६
हरि चराचरगुरु जगन्नाथ-
नरुळुन्नाकिलो वधिप्पन् कर्ण्णनॆ । १८७
अटुत्तोरु संशप्तकन्मारॆयॆल्ला-
मॊटुक्किनानवननुग्रहत्तिनाल् । १८८
अतुकॊण्टंगेशनोटु पॊरुतति-
ल्लटियनॆन्नतु धरिच्चिटेणमे । १८९

तुम्हारा भला हो । और कहा— तुमने अच्छा किया कि युद्ध मे तुमने कर्ण का वध किया । मैं प्रसन्न हूँ । १७७-१८२ उसने मेरा अपमान करके मुझे वाणो से घायल किया और विना जान लिए छोड़ दिया । इसलिए मैं बेबस हो गया हूँ । उसको मारकर तुमने क्या मेरा दुःख दूर कर दिया है या नही ? जब राजा ने इस प्रकार की कडी वात कही तव अर्जुन ने निवेदन किया— "कर्ण का वध नही हुआ और यह काम मुझसे हो सकेगा, यह भी मै नही जानता हूँ । अगर हरि चराचरगुरु जगन्नाथ की कृपा होगी तो कर्ण का वध करूँगा । इधर उनके अनुग्रह से सशप्तको को समाप्त कर दिया है । यह भी एक कारण है कि अगेश के साथ युद्ध न कर सका, जान लीजिये ।" १८३-१८९

विजयन् भीमनोट्टुटने चोल्लिनान्
विजयमार्क्कायितिविटे निङ्ङळिल् । १७२
युधिष्ठिरनेङ्ङु कनिष्ठन्मारेङ्ङु
विशिष्टन्माराय तनयन्मारेङ्ङु । १७३
वरिष्ठनाय सात्यकिसुतनेङ्ङु
करुत्तनां कर्ण्णन् पिणच्चतेन्तोल्लां ? १७४
नृपनुं कर्ण्णनुं पोरुतु तङ्ङळि-
लपजयप्पेट्टु मुरिवु पारमा- १७५
यटच्चु केनिलयकत्तु भूपनुं
किटक्कुन्नु नी चेन्नटिकवस्थकळ् । १७६
अतुकेट्टर्ज्जुननतिशोकत्तोटु-
मरिकळालपहसिक्कप्पेट्टानो । १७७
नरवीरनतिन् परमार्त्थमरि-
ञ्ञरिकळोटु पोरिनियेन्नु पार्त्थन् । १७८
उटने माधवनतिरुवटियुमा-
युटल् वियर्त्तेरेप्परवशनायि १७९
नरवरन्तन्ने नमस्करिच्चितु
नरनुं भक्तिपूण्टतुकण्टु भूपन् १८०

उस समय मिलकर खुशी से युद्ध किया। १६४-१७० असख्य शत्रुओ ने मृत्यु प्राप्त की और अनेक मत्त हाथियो ने भी। अर्जुन ने भीम से पूँछा— "यहां तुम लोगों मे से किसने विजय प्राप्त की ? युधिष्ठर कहां है और छोटे भाई कहां है ? और हमारे पुत्र कहां है जो विशेषत: योग्य है ? और वरिष्ठ सात्यकि कहां है ? और शक्तिशाली कर्ण ने किस-किस मे युद्ध किया ?' (भीम ने उत्तर दिया) "राजा (युधिष्ठिर) और कर्ण आपस मे लड़े। राजा हारे और अत्यन्त घायल होकर अपने तम्बू चले गये। तुम जाकर हाल मालूम करलो।" १७१-१७६ यह सुनकर अर्जुन को बहुत शोक हुआ और चिन्ता हुई कि शत्रुओ ने राजा का उपहास तो नही किया। परमार्थ जानकर अर्जुन शत्रुओ मे युद्ध करने के लिए तैयार हुआ। थकावट के कारण पसीना निकलता था और परेशान हुआ। पर पूज्य माधव के साथ अर्जुन ने राजा (युधिष्ठिर) को भक्ति के साथ नमस्कार किया। यह देखकर राजा ने उनका स्वागत किया और उनको आशिश दी कि

ऒरुनाळुमॊरुसुखमॆनिक्किल्ल
वरुन्नतॊक्कयुं वळर्न्नु दुःखङ्ङळ् । १०
शतमखन्तन्टे मकनायिप्पण्टु
शतशृंगोपरि पिऱन्नतुनेर । ११
जगदेकवीरनिवनॆन्नुण्टायि-
तशरीरिवाक्कुमतुमसत्यमाय् । १२
अरिकळॆयॊक्कयॊटुक्किक्कॊळ्ळुवा-
नॊरु कळिवुण्टॆन्नॆनिक्कुळ्ळिल् तोन्नि । १३
वसुमतीनाथन् परन् नारायणन्
वसुदेवात्मजनसुरनाशनन् १४
अवनुटॆ कैयिल् कॊटुक्क गाण्डीव-
मवनतुकॊण्टु जयिक्कु निर्णय । १५
करत्तिल् वाळुमायटुत्तितर्ज्जुनन्
कळुत्तरुप्पानायतु कण्टप्पॊळे १६
मुरद्वेपि हरि मुकुन्दन् गोविन्दन्
मुतिर्न्नु फल्गुनन्करत्तेयुं वाळुं १७
अटक्कि मॆल्लवे चिरिच्चरुळ्चॆय्तु—
अटङ्ङटङ्ङु नल्लवसरमिप्पोळ् । १८
ऒरु रविसुतनॊळिञ्ञु मटुळ्ळो-
रॊटुङ्ङि वैरिकळऱिञ्ञालुमॆटो । १९

अपनी गति बना लूंगा, यही ठीक होगा। मैं एक दिन भी सुख से न रह सका मेरे दुःख ही आ रहे हैं और बढ रहे हैं। इन्द्र का पुत्र बनकर जब अर्जुन का शतशृंग पर्वत पर जन्म हुआ था। तब एक अशरीरिणी वाक् सुनाई थी कि यह जगत् का एकमात्र वीर है। वह भी अब असत्य निकली। मुझे ऐसा लगा था कि सारे शत्रुओं को समाप्त करने का उपाय विद्यमान है। पृथिवी का नाथ, पर, नारायण, वसुदेवपुत्र, असुरो के नाशक यहाँ विराजमान है उनके हाथ मे अपना गाण्डीव दे दो। अवश्य उससे वे विजय प्राप्त करेगे। ८-१५ तब अर्जुन सिर काटने के लिए हाथ मे तलवार लिए निकला। यह देखकर मुरद्वेपी, हरि, मुकुन्द, गोविन्द उठे और अर्जुन का हाथ और तलवार रोककर मुस्कराते हुए धीरे-धीरे बोले। रुक जाओ, रुक जाओ। यह अवसर अच्छा है। कर्ण को छोड़कर और सब शत्रु समाप्त हो गये है, जान लीजिये। राजकुलो के शिरोमणि का वध न हो, न हो, रुक जाओ, रुक जाओ।

अर्ज्जुनकोपं

अवस्थकळ् केट्टु परिभ्रमिच्चु ञान्
कळल्त्तार् कूप्पुवान् विटकॊण्टीटिनेन् । १
अङ्ङिञ्ञतु मति पऱञ्ञतिङ्ङिनि-
यङ्ङिञ्ञु मुन्नमे पऱञ्ञतिल्ले ञान् । २
जय वरा युद्ध तुटङ्ङियालॆन्नु
नयं पऱञ्ञतु तॆळिञ्ञीलन्नाक्कुं । ३
अपजयमिप्पोळ् वरुन्नु मेल्क्कुमे-
लपनयमायिच्चमञ्ञु युद्धवु । ४
पिळच्चितु निरूपण पोराय्कया-
लॊळिच्चुपोवानुं कळिवु कण्टील । ५
नरनारायणपुरुषन्मार् निङ्ङळ्-
क्करुतातॆवन्नु कुरुवीरन्मारो- ६
टतिबलवानायिरुन्न भीमनु-
मतिचपलनाकिय ञानुं तोटु । ७
अटिमयाय् सुयोधननुटॆ काक्कल्
पॊटियुमेटु पोय् किटक्कॆन्नुं वन्नु । ८
अतु चॆय्युन्नील वनवास चॆय्तु
गति वरुत्तुवनतु नल्लू नूनं । ९

अर्जुन का कोप

यहाँ का हाल सुनकर मैं घबडा गया और चरणस्पर्श करने के लिए मैं उपस्थित हुआ। (तब राजा बोले) बस! मालूम हो गया! और न कहो! मैं पहले ही जानता था। मैंने कहा नही था? मैंने कहा था कि अगर युद्ध प्रारम्भ होगा तो हमारी विजय न होगी। पर किसी ने समझा ही नहीं। अब हमारे एक के बाद एक पराजय हो रहे है और यह सारा युद्ध अपनय का रूप धारण कर रहा है। यह दोष ठीक से विचार न करने का है और इस स्थिति से निकलने का कोई उपाय भी न सूझ रहा है। नर और नारायण, तुम दोनो पुरुष, कुरुवीरो का सामना न कर पा रहे हो। अति शक्तिशाली भीम और अत्यन्त चपल मै, हम दोनो हारे हैं। १-७ अब दास बनकर धूल से ढके हुए सुयोधन के चरणो, पड़ने की नौबत आयी। वह तो मै न करूँगा। वनवास करके

गुरुवधं तानोरसत्यंतानिप्पोळ्
वरुमतु रण्टुमिविटॆ वाराते ३१
कळिवतिनोरु कळिवरुळ्चेय्क
कमलाकामुका ! करुणावारिधे ! ३२
कळल् तोळुतवनिवण्ण चोन्नप्पोळ्
कळिवुण्टेन्नतुमरुळ्चेय्तु देवन् । ३३
गुरुविने 'नी' यॆन्नोरु मोळि चोन्नाल्
गुरुवधं चेय्त फल वरुमल्लो । ३४
वचसा कर्म्मणा मनसा चिन्तिक्किल्
वधिच्चतिनेक्काळ् वलुतेटो सखे ! ३५
परमपूरुषनरुळ्चेय्त नेर
परञ्ञु फल्गुननधिक्षेपिच्चेट— ३६
परिहासत्तोटु पणयं वच्चतु-
मरियाते चूतु पोरुतु नीयल्ले ? ३७
अतिर्त्तु ञङ्ङळ् वैरिकळेक्कोल्लुवान्
मुतिर्त्तु मुटक्कियतुं नीयल्ले ? ३८
परनुटॆ कैयिल् कोटुक्क विल्लेन्नु
परुषं चोन्नतुं वेरुते नीयल्ले ? ३९
पलवुरु नीयेन्नरचनेप्पार्त्थन्
परञ्ञतुनेरं मनसि चिन्तिच्चान् । ४०

प्रकार निवेदन किया गया तब अर्जुन ने कहा— "मैं धर्म और अधर्म जानना चाहता हूँ। २३-३० गुरुवध और सत्योल्लङ्घन यहाँ होनेवाले है ऐसा कोई उपाय बतला दीजिये कि ये दोनो यहाँ न हो, हे कमला-कामुक ! करुणावारिधे ! जब अर्जुन ने चरणो पड़कर इस प्रकार कहा तब देव (कृष्ण) ने निवेदन किया कि उपाय तो अवश्य है। गुरु को 'तू' कहने का वही फल है जो गुरुवध करने का है। वचसा कर्मणा मनसा सोचो तो हे मित्र ! वध करने से भी बड़ा पाप है। परमपुरुष के इस प्रकार कहने के बाद अर्जुन डॉटता हुआ बोला— 'तूने ही तो दिल्लगी मे पण लगाया था और तू ही ने जूआ खेला था। ३१-३७ हम लोग तो शत्रुओ का सामाना करके उनका वध करने को थे। तू ही ने तो हमको रोका। दूसरे के हाथ मे धनुष देने की अपमान की बात भी तू ही ने की थी। इस प्रकार बार-बार गुरु को 'तू' कहने के बाद अर्जुन ने अपने मन मे सोचा। "गुरु की कभी निन्दा न करना चाहिये। मेरा

अरचर्कळ्कुलमुटिमणिवध-
मरुतरुतोळिकोळिकोळिकेन्तान् । २०
मऽक्कामो सत्यमोरिक्कलु नृपन्
मऽिञ्चीटुन्नतु पोरुक्केन्तेवरू । २१
पऽयामो मम मुखत्तु नोक्कीट्टु
परनुटे कैयिल् कोटुक्केन्नायुधं ? २२
पळिवाक्कु केट्टाल् पोरुत्तुकूटुमो
पळकिय सत्य मऽक्कयुमामो ? २३
कळुत्तिलेन् वाळु नटत्तियिप्पळे
कळिप्पनिल्ल किल्लतिनेन्नर्ज्जुनन् । २४
मुतिर्न्नु मुलुप्पुक्कु नटन्नितु कृष्णन्
तिरुवटितन्नेयतु कण्टु देवन् २५
गुरुवधत्तिनु नरकमेन्नियि-
ल्लोरु फलमेन्नु पऽञ्ञितन्नेर । २६
नटे पऽञ्ञतिल् विपरीतंतन्ने-
युटमयोटेऽप्पऽञ्ञु कृष्णनुं । २७
कटक्कोल्ला मम वचनमेन्नतु
कटक्कुन्नोरारुं दुरितवन्कटल् २८
कटक्कुन्नोरल्लेन्नऽिञ्ञिरिक्कणं ।
कटक्क नी रिपुसमुद्रत्तेयिप्पो- २९
ळरुळिच्चेय्तप्पोळमलनर्ज्जुनन्
अऽिकप्पोक धर्म्मवुमधर्म्मवुं । ३०

सब अर्जुन ने कहा। राजा (युधिष्ठिर) को अपना सत्य कभी भूलना न चाहिए। अब उनको मेरा निधन सहना ही पड़ेगा। औरो के हाथ मे आयुध दे दो ऐसा मुझसे कहना क्या उचित था ? । १६-२२ अनुचित बात कैसे सही जा सकती है ? पुराने शपथ को भूलना क्या ठीक है ? मैं अपनी तलवार गरदन पर चलाऊँगा इसमे कोई सन्देह नही— अर्जुन ने कहा। तब पूज्य देव कृष्ण उठकर आगे बढ़े और बोले। गुरुवध का नरक के अतिरिक्त और कोई फल नही है। कृष्ण ने पहले की कही से बहुत अधिक साधिकार बतलाया। 'मेरे वचन का उल्लङ्घन न करो' इस मेरी आज्ञा के विरुद्ध करनेवाले पापो का महासमुद्र कभी पार न करेगे, जान लो। अब तुम जाकर शत्रुसागर को पार करो। जब इस

पारिलेळुन्नु वरिकिलल्लो नमु-
क्कारालेतिर्त्तु पोरुतुकूटू हरे । ४७
सल्गुणनाय युधिष्ठिरनोटथ
निर्ग्गुणनाय भगवानरुळ्चेय्तु । ४८
वृत्रनेक्कोन्नितु वृत्रारि मायया
नक्तञ्चरेन्द्रनेक्कोन्नितु राघवन् । ४९
शत्रुक्कळेयोरुजाति ञानु कोन्नु
शत्रुसंहारत्तिनेङ्डनेयेन्निल्ल । ५०
वल्लकणक्किलु वैरिकळायोरे
कोल्लुक नन्नतु भूपतिमावर्क्केटो । ५१
क्षेपिच्चु चोन्नालभिमानमुळ्ळवर्
कोपिच्चु चाटुमतिनिल्ल सशय । ५२
निन्दावचनं परक नीयेन्नु गो-
विन्दन् परञ्ञतु केट्टोरु धर्म्मजन् ५३
चोन्नान् सुयोधनन्तन्ने निर्भर्त्सिच्चु
मन्नरिल् नाणमिल्लात नराधमा ! ५४
मूढरिल् मुन्पनाय् वंशमोटुक्कुवा-
नूढमोदेन पिरन्न कुलाधम ! ५५
भीमनेक्कोट्टि वेळ्ळत्तिलिट्टोरु निन्-
भीमकर्म्मत्तिन् फलमनुभूतमो ? ५६

युद्ध कर सकते है, हे हरे ! तब निर्गुण भगवान् ने सद्गुण युधिष्ठिर से कहा— ४२-४८ इन्द्र ने वृत्र को माया से मारा, राम ने नक्तञ्चरेन्द्र (रावण) को मारा। मैने भी शत्रुओ को काफी नष्ट किया है। शत्रुओ को कैसे मारा जाय, यह कोई विचार करने की बात नही है। किसी भी प्रकार शत्रुओ को मारना यह राजाओ के लिए ठीक है। अगर डाँटे जावे तो अभिमानी लोग क्रुद्ध होकर कूद पडेगे इसमे सन्देह नही है। इसलिए तुम उसकी निन्दा करो, गोविन्द की यह बात सुनकर युधिष्ठिर ने सुयोधन की निन्दा करते हुए कहा— हे राजाओ मे लज्जाहीन नराधम ! हे कुलाधम ! मूढो मे अगुवा होकर तुम वश को समाप्त करने के लिए पैदा हुए हो ! ४९-५५ भीम को बाँधकर पानी मे फेकने के भीमकर्म का फल अब भोग रहे हो ? तुम ही ने तो साँप से डसवाया, तुम ही ने विष मिला हुआ भात खिलाया, तुम ही ने घर को

गुरुविनें निन्दिक्करुतोरिक्कलुं
गुणं वरिकयिल्लिनियिनिक्केन्नु । ४१
परितापमुळ्ळिल् निऱञ्ञु पात्थनु
परवशनायिच्चमञ्ञानन्नेरं । ४२
इरिक्कुन्निल्ल ञानवनियिलिनि
मरिक्कुन्नेनेन्नु पऱञ्ञु तन्नुटे ४३
करत्तिलें वाळोन्निळक्कि मेल्लवे
कळुत्तऱुप्पानाय् तुनिञ्ञतुनेरं ४४
सकललोकैकपति नारायणन्
सहस्रलोचनतनयन् तन् कर ४५
पिटिच्चु निल्लुनिल्लरुतरुतेंटो
कटुप्प काट्टोला कळिवुण्टाक्कुवन् । ४६
मरणवुमात्मप्रशसयुमोक्कु
महिमानं तव पऱक नीतन्ने । ४७
पऱञ्ञानर्ज्जुनन् निजपराक्रम ।
अऱिञ्ञतारेन्टे करबलमेल्लां ४८
मऱुतलयिल् पातियिलुमेऱे ञा-
नऱुतिचेय्ततेन्नऱिञ्ञिरिक्कण । ४९
असंख्यं पोरानत्तलवन्मारेयु-
मशङ्कं तेराळिकळेयु वेगत्तिल् ५०

भला अब हो ही न सकता है। इस प्रकार पार्थ के भीतर पश्चात्ताप भर जाने के कारण वह बहुत परेशान हुआ। "अब मैं इस पृथ्वी मे न रहूँगा, मै मर जाऊँगा" ऐसा कहता हुआ तलवार हाथ मे लेकर अपनी गरदन काट डालने को ही था, जब सकललोकैकपति नारायण ने सहस्रलोचन (इन्द्र) के पुत्र का हाथ पकड़कर कहा 'ठहरो, ठहरो ! 'यह मत करो' 'यह मत करो' यह निष्ठुरता न दिखलाओ, कोई उपाय सोच निकालूँगा। ३८-४६ मरण और आत्मप्रशसा, दोनो समान है। इसलिए तुम अपनी ही महिमा घोषित करो।" यह सुनकर अर्जुन ने अपने पराक्रमो का वर्णन किया। मेरा बाहुबल कौन जानता है ? जान लीजिये कि आधे से अधिक शत्रुओ को मै समाप्त कर चुका हूँ। असख्य युद्ध के गजप्रवरो को, और निश्शङ्क होकर रथियो को और अपने शफो से कूदनेवाले घोड़ो के पालको

सर्व्वनिन्दाकटाक्षावलोकङ्ङळुं
दुर्व्वारगर्व्ववु दुर्व्वीर्यकर्म्मवु- ६७
मिप्पोळेविटे नी वच्चिचरिक्कुन्नतु ?
दुष्प्रभावंपूण्ट दुर्योधनप्रभो ! ६८
नाणमुण्टेङ्किल् पुऱत्तु पुऱप्पेट्टु
वाणीटवनियेअङ्ङळेक्कोन्नु नी । ६९
नन्नाय् पोरुतु मरिच्चुकोळ्ळलाय्किल्
मन्नवन्मार्क्कुचितङ्ङळी रण्टुमे । ७०
इङ्ङने पेटिच्चोळिच्चु किटक्किलो
अङ्ङळ्क्कुकूटे नाणक्केटकप्पेटुं । ७१
पुरुवशत्तिलल्लो पिऱन्नू भवान्
पोरिलोळिक्कुमाऱिल्लवरारुमे । ७२
धर्म्मजन्वाक्कुकळित्तरं केळ्क्कयाल्
मर्म्मङ्ङळतोरुं मुऱिञ्ञु सुयोधनन् । ७३
केट्टाल् पोरुक्करुतातोरु वाक्कुकळ्
केट्टटङ्ङीटुकयिल्लेन्नु भाविच्चु । ७४
चोल्लिनानुत्तरमल्लोटु तदा
नल्ल युधिष्ठिरन्तन्नोटतुनेर । ७५
नयविनयमुखसकलगुणमुटयभूपते !
नन्नुनन्निन्थ परञ्ञतिनि मति । ७६
मरणभयमकतळिरिलुण्टतिल्लेन्नुमि-
ल्लतु करुतियल्ल वेळ्ळत्तिल्किटन्नतु । ७७

गर्व, दुर्वीय के कर्म यह सब तुमने अब कहाँ रखा है हे दुष्प्रभाववाले प्रभु दुर्योधन ? अगर आत्माभिमान कुछ अवशिष्ट है तो बाहर निकलो, हमलोगो को समाप्त करो और पृथिवी मे राज करो। ६३-६९ नही तो अच्छी तरह लड़कर मरो। राजाओं के लिए ये ही दो मार्ग है। इस तरह डर के अगर छिपे रहोगे तो हमारी भी प्रतिष्ठाहानि होगी। आखिर तुम्हारा जन्म पुरुवश मे हुआ है और पुरुवशवाले युद्ध से मुँह नही मोडते है। युधिष्ठिर की ऐसी बाते सुनकर सुयोधन का एक-एक मर्म कट गया। "असह्य बाते सुनकर दबनेवाला नही हूँ" यह दिखलाने के लिए उसने दु खित होकर उस समय अच्छे युधिष्ठिर से इस प्रकार कहा। नय-विनय आदि समस्त गुणवाले भूपति ! तुमने ठीक कहा,

नीयल्लयो कटिप्पिच्चतु पन्पिनाल्
नीयल्लयो विषच्चोऱ्ऱशिप्पिच्चतु ५७
नीयल्लयो चोल्लटच्चु तीवच्चतु
नीयल्लयो कळ्ळच्चूतु पोरुततु ५८
नीयल्लयो पिटिच्चीळ्त्तत्तु कृष्णये
नीयल्लयो तुकिल् पॆट्टॆन्नळिच्चतु ५९
नीयल्लयो विपिनत्तिनयच्चतु
नीयल्लयो भगवाने निन्दिच्चतु ६०
नीयल्लयो बन्धनायिव्भविच्चतु
नीयल्लयो कुमार वधिप्पिच्चतु ६१
नीयल्लयो गुरुतन्ने वञ्चिच्चतु
नीयल्लयो चतिच्चित्तर कर्म्मङ्ङळ्
नीचरोटॊन्निच्चु चेय्ततु चोल्लु नी । ६२
दुश्शासनन्नॆन्न तन्पियॆङ्ङू तव ?
विश्वासमुळ्ळ शकुनियॆङ्ङू सखे ? ६३
कर्ण्णनायुळ्ळ चॆङ्ङातियॆङ्ङु तव
दुर्न्नयक्कातलायुण्टाय निन्नुटे ६४
बन्धुक्कळु पटयु पुनरॆङ्ङु पोय् ?
अन्तमिल्लातभिमानमिप्पोळॆङ्ङु ? ६५
भैरवमायुळ्ळ वाक्कु पदवियु
पौरुषप्रौढियुं गंभीरभाववु ६६

वन्द करके आग लगाया, तुम ही ने जूए मे वेईमानी की, तुम ही ने द्रौपदी को पकडकर खीचा था, तुम ही ने वस्त्र झट से उतारा था। तुम ही ने हमलोगो को वन भेजा था, तुम ही ने भगवान् की निन्दा की थी, तुम ही तो वाँधे गये थे, तुम ही ने कुमार (अभिमन्यु) को मरवाया था, तुम ही ने गुरु को धोखा दिया था, तुम ही ने नीचो से मिलकर इस प्रकार के कुकर्म करके वञ्चना की थी। ५६-६२ दुश्शासन नाम का तुम्हारा छोटा भाई अव कहाँ है ? वन्धु ! तुम्हारे विश्वास का पात्र शकुनि अव कहाँ ? तुम्हारा दोस्त कर्ण अव कहाँ गया ? दुर्नय के स्थान तुम्हारे वन्धु और सेना अव कहाँ है ? और तुम्हारा निस्सीम अभिमान भी अव कहाँ है ? तुम्हारी भयङ्कर वाते और पदवी, तुम्हारा पौरुप और प्रौढि, तुम्हारा गाभीर्य, सबकी निन्दा करनेवाली तुम्हारी दृष्टियाँ, तुम्हारा दुर्वार

ऒन्निव केट्टॊरु मन्नवन् धर्म्मजन्
चॊन्नान् धृतराष्ट्रपुत्रनोट्टुत्तरं— ८७
ऎन्नुटॆ राज्यत्तॆ निन्नोटिरन्नुकॊ-
ण्टिन्नु आन् मन्नवनायि वाळेणमो ? ८८
पिन्नॆ निनक्कुळ्ळतॆङ्किले केवलं
तन्नुकूटू निनक्कॆन्नुमरिक नी । ८९
जलमतिलॊळिच्चुकॊण्टित्तर वाक्कुकळ्
जळरिल् विरुतुळ्ळ नी चॊन्नतॆल्लां मति । ९०
वरिक रणभुवि विरविल् ञङ्ङळॆक्कॊन्नु नी ।
वाळ्कतल्लायिकलो वानिल् वाणीटुक । ९१
यमतनयनॊटु कुरुकुलाधिपन् चॊल्लिना-
नेकाकियायितु ञानॆङ्किलुमिनि ९२
निङ्ङळॊरुत्तरोटु मतियाय्वरु-
मिङ्ङु रथादिकळिल्लॆनिक्काकयाल् । ९३
द्वन्द्वयुद्धत्तिल् चतिक्कयिल्लॆङ्किलो
वन्नु पॊरुतॊटुक्कीटुवन् निङ्ङळे । ९४
मट्टु पलरुमॊरुत्तनुमाकिलो
चॆट्टु निरूपिच्चुवेणमिनिक्किनि । ९५
ऎन्नतु केट्टु परञ्ञितु धर्म्मजन्
निन्नोटॊरुत्तने ञङ्ङळेतिर्क्कुन्नु । ९६

सुनकर राजा युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र के पुत्र को उत्तर दिया— "क्या मै अपने ही राज्य को तुमसे भीख माँगकर राजा बनूँ और राज करूँ ? फिर जितना तुम्हारा है उतना ही तुमको दिया जा सकता है, यह भी जान लो। पानी मे छिपकर इस तरह की बाते जडों मे अग्रसर तुम काफी कर चुके हो, अब बन्द करो। युद्धभूमि मे आ जाओ और हमलोगो को मारकर राज करो या स्वर्ग मे जाकर रहो। ८५-९१ तब कुरुकुलाधिप (दुर्योधन) ने यमतनय (युधिष्ठिर) से कहा 'मै अकेला हूँ, फिर भी तुमलोगो मे एक-एक से लड़ने के लिए पर्याप्त हूँ, मेरे पास रथादि तो नही है। अगर धोखा न दोगे तो मै निकलकर द्वन्द्वयुद्ध मे तुम लोगो को समाप्त कर दूँगा। अगर मुझे बहुतो से अकेला लडना पडेगा तो मुझे ज़रा सोचना पडेगा। यह सुनकर युधिष्ठिर ने कहा— हम लोगो मे से एक ही तुम से लडेगा। अगर शर्म कुछ शेष है और पुरुष हो तो लड़ने आओ, व्यर्थ की बाते न करो। ९२-९७

पारं मुरिञ्ञुळ्ळ वेदन तीरुवान्
नीरिल् मुळुकिक्किटन्नितु ञानेटो । ७८
ञान् परञ्ञालिनिक्कार्यमायु वरा
तुरगरथकवचशरचापङ्ङळादिया
सुभटसमरागमिल्लोन्नुमेन्नाकिलु ७९
विरवोटेळुनीटु ञान् निङ्ङळेक्कोल्लुवन्
वेणमेन्मानमिल्लेन्नतुयुण्टुळ्ळिल् । ८०
सुहृदनुजसुतगुरुपितामहन्मारुमेन्
तुल्यमल्लात पटयु मुटिञ्ञितु । ८१
शेषिच्च निङ्ङळेयु कोलचेय्तिनि-
श्शेषिच्चु ञानोरुत्तन् वसिच्चीटिनाल् ८२
ओरु सुखवुमिल्लतेल्लां निरूपिच्चु ञा-
नोन्नुण्टु चोल्लुन्नितिन्नु धरापते ! ८३
काननान्तत्तिलिरुन्नु तपस्सुचे-
य्तानन्दमोटे परगति तेटुवन् । ८४
राज्यवु वाणिरुन्नीटुक धर्म्मजन्
पूज्यनायेन्तोरु हानि नमुक्कतिल् ? ८५
अन्नुटे वन्धुक्कळल्लयो निङ्ङळु
चिन्तिक्क धर्म्मजा ! सल्गुणवारिधे ! ८६

बस ! अव समाप्त करो ! ७०-७६ मृत्युभय दिल मे है, यह नही कि नही है, परन्तु इसलिए मैंने पानी मे प्रवेश नही किया। अत्यन्त घायल होने से दर्द दूर करने के लिए मैंने पानी मे प्रवेश किया है। अव मेरा कुछ कहना व्यर्थ होगा। घोड़ा, रथ, कवच, बाण, धनुष आदि अच्छे योद्धा के अङ्गो मे से कुछ भी मेरे पास नही है। फिर भी मैं अव निकलकर तुमलोगो को समाप्त कर दूंगा। मैं जानता हूं कि अपने आत्माभिमान के लिए यह आवश्यक है। मित्र, छोटे भाई, पुत्र, गुरु, पितामह और मेरी अनुपम सेना, सव समाप्त हो गया है। वचे हुए तुम लोगो को भी समाप्त करके 'अगर मै अकेला हो जाऊँगा तो कुछ भी सुख नही होगा। यह सव सोचकर मै आज एक वात करनेवाला हूँ, हे धरापते ! मै कही वन में रहकर तपस्या करके आनन्द के साथ अपनी परगति ढूंढ लूंगा। ७७-८४ तुम युधिष्ठिर राज करो और पूज्य हो जाओ, मेरी उसमे क्या हानि है ? आखिर तुमलोग मेरे वन्धु हो। हे धर्मज ! (युधिष्ठिर !) सद्गुणो का सागर ! सोचो तो। यह सव

कुट्मॊळिञ्ञु पोर् काण्मानतुनेरं
चुट्टुमिरुन्नितु मट्टुळ्ळवर्कळुं । ९
मुन्न पटय्क्कु कोप्पिट्टतरिञ्ञु ता-
नोन्निनुं कूटुन्नतिल्लेन्नु कल्पिच्चु । १०
तीर्त्थमाटीट्टुवान् पोय मुसलियुं
क्षेत्रङ्ङळु पल तीर्त्थङ्ङळु कण्टु ११
पेर्त्तु प्रभासं प्रवेशिच्चितन्नेरं ।
धात्रिभरहरन्तन्नुटे मायया १२
नारदन्तानुमविटेक्कॆळुन्नळ्ळि
भारतवृत्तान्तमोक्कयरियिच्चान् । १३
इप्पोळ् सुयोधननां तव शिष्यनुं
कॆल्प्पुळ्ळ भीमनुं तङ्ङळिलुळ्ळ पोर् १४
आनितु काण्मतिन्नायिता पोकुन्नु
काणेण्टुवोन्नितु पोरिक वैकाते । १५
तेरिलेरीटिनानप्पोळ् मुसलियुं
नारदन् तन्नोटु कूटवे सत्वरं । १६
तेट्टेन्नु पोर्क्कळं पुक्कोरनन्तरं
मट्टुळ्ळवर्कळ् विषण्णरायीटिनार् । १७
उत्थानवन्दनाद्याचारवुं चेय्तु
चित्ताकुलतया निन्नितॆल्लावरुं । १८
सन्तोषमुळ्क्कॊण्टु चेन्तामराक्षनुं
चेन्तारटियिण कुन्पिट्टु कूप्पिनान् । १९

लोग चारो ओर बैठ गये। पहले ही युद्ध की तैयारियाँ देखकर "मै इसमे किसी भी प्रकार भाग न लूँगा" ऐसा सोचकर तीर्थयात्रा करने जो चला गया था वह मुसली (बलराम) वह अनेक देवालय और तीर्थ देखकर उस समय फिर प्रभास पहुँचा। विष्णु की माया से नारद भी उस समय वहाँ पधारे और उन्होने बलराम को भारतयुद्ध के सब वृत्तान्त बतला दिये। ८-१३ अब तुम्हारे शिष्य सुयोधन और शक्तिशाली भीम का आपस मे जो युद्ध होगा उसे देखने के लिए मै जा रहा हूँ। वह देखने योग्य है, मेरे साथ अविलम्ब चलो। तब बलराम तुरन्त ही नारद के साथ रथ पर बैठ गया। जब उन्होने युद्धभूमि मे प्रवेश किया तब और लोग विषण्ण हुए। सबने उठकर वन्दना की और आकुलचित्त

नाणमुण्टेङ्किल् पोरुवान् वरिक नी-
याणाकिल् मटेन्तिनित्तरं चोल्लुन्नु । ९७

भीमदुर्योधनयुद्धं

कुमति कुरुकुलपति कुटन्ञु पोङ्ङीटिनान्
कोप्पुकण्टेट्टं चिरिच्चितेल्लावरु । १
पोरुवतिनु वरिकोरुवन् महावीररे !
पोय् परञ्ञेन्नेच्चतियाय्कयु वेणं । २
ॲन्नु सुयोधनन् चोन्नतु केट्टप्पोळ्
निन्न मुकुन्दन्तिरुवटियु चोन्नान्— ३
अङ्ङळिलारेन्नु चोदिच्चुकोळ्ळाय्क
निङ्ङळ्क्कोरुत्तनुमामल्लवनोटु । ४
पक्षे पवनतनयनु संशय-
मिक्कुरुवीरनेळुतल्ल निर्णयं । ५
शिक्षकोण्टेट्टमधिकन् कुरुपति
मुख्यत शक्तिकोण्टाकिलां भीमनु । ६
तङ्ङळिल्त्तन्ने पोरुकेन्नते वरू
निङ्ङळटङ्ङुविनेन्नु मुररिपु । ७
चोन्नतु केट्टु ञान् कोल्लुन्नतुण्टेन्नु
सन्नद्धनायि मुतिर्न्नान् वृकोदरन् । ८

भीम और दुर्योधन का युद्ध

कुमति कुरुकुलपति पानी से उठ आया और उसका हाल देखकर सब हँसे। (उसने कहा) हे महावीर ! एक आओ मुझसे लड़ने, झूठ बोलकर मुझे धोखा न देना। सुयोधन की बात सुनकर उपस्थित पूज्यपाद मुकुन्द ने कहा— "हम लोगो मे कौन", यह न पूँछो तुम लोगो मे कोई भी उससे न लड सकते हो। परन्तु पवनतनय (भीम) का सामना करना इस कुरुवीर के लिए आसान न होगा। शिक्षा मे कुरुपति ही उत्कृष्ट है और भीम की मुख्य-बात उसकी शक्ति है। यही हो सकता है कि ये दोनो आपस मे लडे, और सब बैठ जायँ, मुरारि ने ऐसा कहा। १-७ यह सुनकर 'मै उसका वध करूँगा' ऐसा कहता हुआ भीम लड़ने के लिए तैयार हुआ। एक निर्दोष युद्ध देखने के लिए और

कळ्ळच्चूतिट्टु चतिच्चु नाटुं वीटु-
मुळ्ळधनङ्ङळुमोक्कप्परिच्चितुं । ३०
अन्नु रजस्वलयाय पाञ्चालियें-
च्चेन्नु पिटिच्चिळच्चेल्लावरु काण्कॆ ३१
उण्टायवस्थ परञ्ञुकूटुन्नत-
ल्लुण्टो मरक्कुन्नतु ञान् कण्टव ? ३२
ऎल्लामरिञ्ञिरिक्कुन्नितु दैवमि-
तॆल्लामतिनॊत्तवण्ण वरुत्तुक । ३३
इत्थ परकयुमट्टहसिक्कयु
मद्ध्ये मिळिकळिल् वारि पॊळिक्कयु ३४
कोप पॆरुक्कयु देहं विरय्क्कयु
पल्लु कटिक्कयुं कण्णु चुवक्कयु । ३५
काणुन्नवर्कळ्क्कु पेटियाकुवण्ण
मानिच्चु मारुति निल्क्कुन्ननेरत्तु ३६
साक्षाल् नरसिहमूर्त्ति कोपत्तॊटे
पोक्कुं हिरण्यकशिपुवॆक्कण्टुटन् ३७
शीघ्रमटुक्कुन्नुतॆन्नु तोन्नी बला-
लाक्रमिक्कामल्लिवनॆयॆन्न जन । ३८
निर्ह्लादवु केट्टु निल्क्कुन्न धर्म्मजन्
प्रह्लादभावं कलर्न्नानतुनेरं । ३९
पोरुं परञ्ञतु वीरिशीखामणे ।
पारं मदमुळ्ळतिन्नटक्कीटुवन् ४०

ही नही, रजस्वला द्रौपदी को पकड़कर सबके सामने खीचा । उस समय की स्थिति का वर्णन न किया जा सकता है । अपनी आँखो देखी बातो को मैं कैसे भूल सकता हूँ ? दैव यह सब जानता है और ऐसा करे कि फल भी इसी के अनुसार हो । इस प्रकार कहता हुआ, अट्टहास करता हुआ, बीच मे आँखो से आँसू गिराता हुआ, २८-३४ अत्यन्त क्रुद्ध होकर, काँपता हुआ, दाँत पीसता हुआ, आँखे लाल करता हुआ, देखनेवालो का भय उत्पन्न करता हुआ अभिमान के साथ भीम खडा हो गया, मानो साक्षात् नरसिंह मूर्त्ति क्रुद्ध होकर हिरण्यकशिपु को देख उसके निकट युद्ध करने के लिए जा रहा हो । जनता ने भी कहा— बल से इस पर आक्रमण करो । सिंहनाद सुनकर उपस्थित युधिष्ठिर उस समय प्रसन्न

भक्त्या नमस्कारवु चेय्तु वन्दिच्चु
चित्त तेळिञ्ञु सुयोधननु निन्नान् । २०
पोक्कु सरस्वतितन्नुटे नल्ककरे-
प्पोक समस्तपापापहमत्रैव । २१
पुण्यदेशं मरिच्चाल् गति निश्चय
अेन्नु केट्टोक्क नटन्नितु मन्नरुं । २२
ञ्ङ्ङळिलुळ्ळ पोर् काण्मतिनाय्क्कोण्टु
निङ्ङळेल्लारुमिरिक्क परक्कवे । २३
अेन्नु सुयोधनन् चोन्नतु केट्टप्पोळ्
मन्नवन्मारुमिरुन्नु वलनुमाय् । २४
चेन्नु पटिञ्ञारिरुन्नु मुयोधन-
नोन्न ङ्ङलरिप्परञ्ञितु भीमनु । २५
नल्लोररक्किकल्लवुं पणितीर्त्तति-
लेल्लावरुमिरिक्केन्नु सम्मानिच्चु २६
चोल्लियतेल्ला परमार्त्थमेन्नोर्त्तु
कल्याणमुळ्क्कोण्टु मुन्नमिरुन्ननाळ् २७
अम्मयु वालकन्माराय ञङ्ङळुं
निर्म्मरियादङ्ङळेतुमरियाते २८
विश्वासमुळ्क्कोण्टुङ्ङुन्ननेरत्तु
वच्चारकत्तिन्नटच्चु ती चुट्टुमे । २९

होकर खडे हो गये। कमललोचन (कृष्ण) ने प्रमुदित होकर चरणपद्म को झुककर हाथ जोड़ा। सुयोधन भी भक्ति के साथ नमस्कार और वन्दना करके खडा हो गया। १४-२० युद्ध के लिए समस्त पापों को हरनेवाले सरस्वती के तट पर चलो। वही पुण्यदेश है, वहाँ मरनेवाले की अच्छी गति निश्चित है। यह सुनकर सभी भूपाल वहाँ चले। "हम दोनो का युद्ध देखने के लिए आप लोग सव चारो ओर वैठे" सुयोधन की यह वात मुनकर भूपाल सव वलराम के साथ वैठ गये। जव सुयोधन पच्छिम की ओर जाकर वैठा तव भीम गरजता हुआ वोला। एक अच्छा जतुगृह वनवाकर उसमे हम सवको सम्मान करके रहने के लिए जो वाते कही गयी थी उनको परमार्थ समझकर जव २१-२७ माताजी और हम वच्चे जो कुछ नही जानते थे वहाँ विश्वास के साथ सो रहे थे तव तुम लोगो ने चारो ओर आग लगायी। झूठा जूआ खेलकर हमारा राज्य और घर और जो कुछ हमारा धन था सव लूट लिया। इतना

मुन्नमे चेय्तवयोर्तु विद्वेषवुं
कोन्नालुमुळ्ळिलटङ्ङात्त रोषवु ९
युद्धकौशल्यङ्ङळ् कण्टु सन्तोषवुं
वद्धदाहेन वक्त्राब्जसंशोषवुं १०
चित्ते कलर्न्नवरोप्प पोरुन्नेरं
चित्र विचित्रं विचित्रमेन्नु जन । ११
इल्लेङ्ङुमे पळुतोन्नु तच्चीटुवा-
नेळ्ळोळमेन्नतु कण्टु वृकोदरन् १२
तन्नुळ्ळिलुळ्ळोरहंभाववु वच्चु
धन्यनां कृष्णनिलायितु चित्तवु । १३
मारुतपुत्रनु भावं क्षयिक्कयुं
कौरववीरनु शौर्य पेरुक्कयुं । १४
कण्टु कण्टाकुलप्पेट्टोरु फल्गुनन्
कोण्टल्नेर्वर्णनोटिङ्ङने चोल्लिनान्— १५
ॲन्टे भगवाने ! दीनदयानिधे !
निन्टे तिरुमनस्सेन्तोन्नु दैवमे ! १६
नोक्कुक मारुतिक्कावक्कं कुरञ्ञितु
पोक्कुं सुयोधननिल्लोरु चञ्चल । १७
ॲन्नुरचेय्ततु केट्टु मुकुन्दनुं
नन्नु सुयोधनन् शिक्ष कोण्टेट्वु । १८

वेष पहनते हुए, सारे ब्रह्माण्ड में गूंजनेवाले घोष करते हुए, चित्त मे पहले किये गये कर्मो का विद्वेष, वध करने के बाद भी शान्त न होनेवाले रोष, और एक-दूसरे का युद्धकौशल देखकर प्रमोद अनुभव करते हुए, प्यास से मुँह सूख जाने पर भी दोनो जब बराबर युद्ध कर रहे थे तब लोगो ने कहा— चित्र ! विचित्र ! विचित्र ! जब भीम ने देखा कि शत्रु का कही भी लेशमात्र भी छिद्र नही है जहाँ मारा जाय तब अपने अभिमान को अलग करके धन्य कृष्ण का ध्यान किया। भीम का उत्साह कुछ शिथिल पडा और कुरुवीर का शौर्य बढा। ८-१४ यह देखकर अर्जुन घबड़ाया और घनश्याम कृष्ण से बोला— "मेरे भगवान् ! दीनो के दयानिधे ! हे देव ! तुम्हारे मन मे क्या हो रहा है ? देखो भीम की शक्ति कम हो रही है दुर्योधन का तो युद्ध मे कोई शैथिल्य नही है।" यह कहना सुनकर मुकुन्द ने कहा— सुयोधन शिक्षा के कारण बहुत अच्छा योद्धा है। 'तुमसे एक ही लड़ेगा' ऐसा युधिष्ठिर के पहले ही वचन देने के कारण

पोरिल् आर्नेन्नु सुयोधनन् चौन्नप्पोळ्
नेरे गदकौण्टटिच्चितु भीमनु । ४१

दुर्योधनवधं

तल्लु तट्टिक्कळञ्ञौन्नटिच्चीटिनान्
चौल्लेळु कौरवन् वायुतनयनें । १
निल्लेंटा निल्लुनिल्लेंन्नु तल्लु तट्-
त्तलल् काणुन्नवर्क्कुळ्ळिल् वाय्क्कुंपटि २
तच्चितु भीमन् तरिच्चितु कैत्तल-
मुच्चत्तिलौच्च पौङ्ङी निलत्तेल्क्कयाल् । ३
अच्युतन्कूटेंच्चिरिच्चानतुनेर-
मच्चिरिपूण्टाननिलतनयनु । ४
चलनपतनोत्थापनभ्रमणङ्ङळिल्
चतुरतकलर्न्न वीरन्मारिरुवरु । ५
तुंगङ्ङळायुळ्ळ शैलङ्ङळिल्निन्नु
चेंङ्कल्ललिञ्ञोळुकीटुन्नतुपोलें- ६
यापादचूडमणिञ्ञितु चोरयु
कोपातिरेकाललरुन्न नादवु- ७
मन्योन्यभीतियुण्टाकुन्न वेपवुं
ब्रह्माण्डमेल्ला मुळङ्ङुन्न घोषवु ८

हुआ। जब सुयोधन ने कहा— "हे वीरशिखामणे! बस! बहुत कह चुके हो! तुम्हारे इस बढे-चढे मद को मै युद्ध मे समाप्त कर दूंगा" तब भीम ने उसको गदा से मारा। ३५-४१

दुर्योधन का वध

गदा के आघात को रोककर विख्यात कौरव ने भीम को मारा। 'ठहरो' 'ठहरो' कहते हुए, और आघात को रोकते हुए, देखनेवालो के दिल मे डर उत्पन्न करते हुए भीम ने भी मारा जिसका हाथ तरस रहा था। आघात भूमि पर लगने से बडी आवाज उठी। कृष्ण हँस पडा और भीम भी उसी प्रकार हँसा। चलन, पतन, उत्थापन और भ्रमण मे दोनो वीर कुशल थे। पाद से सिर तक दोनो का रक्त बह रहा था। मानो ऊँचे पहाड़ के चट्टानो से लाल पत्थर पिघलकर बह रहा हो। अतिकोप के कारण गरजते हुए, १-७ एक दूसरे का भय पैदा करनेवाले

आयोधनत्तिन्नु कोप्पिट्टतिल् पिन्ने-
यायुध तोट्टील आनेन्नरिञ्ञालु । ५०
धार्त्तराष्ट्रन्टे नियोगेन सूतनाय्
पार्त्थनु तेर्तेळिच्चेनतिनेन्त हो ! ५१
इत्तर माधवन् चोन्नोरनन्तरं
चित्तं कलङ्ङिबलभद्रनु चोन्नान् । ५२
कोल्लुमारुण्टु पलरेयु पोरतिल्
तल्लुमारिल्ल मारत्तुनिन्नारुमे । ५३
योग्यमल्लेतुमे मारुति चेय्ततु
योग्यमायुळ्ळते कण्टु पोरुक्कावू । ५४
उण्टो गदय्क्कु कटक परक नी
कण्टिल्लयो चतिचेय्ततु मारुति ? ५५
ॲन्नरुळ्चेय्ततु केट्टु मुकुन्दनु
नन्नुनन्निच्चति कण्टतुमग्रजन् । ५६
ॲत्रतर चतिचेय्तु सुयोधनन् ?
नित्यनामीश्वरनिल्लातेयाकुमो ? ५७
तान्तान् निरन्तर चेय्युन्न कर्म्मङ्ङळ्
तान्ताननुभविच्चीटुकेन्नेवरू । ५८
वेण्टतु तङ्ङळिल् चेय्तालुमेङ्किल् ना
वेण्टतटङ्ङुकेन्नेवरू निर्ण्णय । ५९

की तैयारी के बाद मैने आयुध का स्पर्श तक नही किया, जान लो। सुयोधन की ही आज्ञा से मैने सूत वनकर अर्जुन का रथ चलाया, इसमे क्या है ? माधव के इस प्रकार कहने के वाद वलभद्र का चित्त जरा आकुल हुआ और वह वोला— "युद्ध मे तो वहुत लोग मारे जाते है पर कोई भी छाती पर खड़े होकर नही मारता है। भीम का यह काम विलकुल अनुचित है। उचित काम ही देखकर सहा जा सकता है। गदायुद्ध मे कमर के नीचे मारा जाता है ? तुम ही कहो भीम की यह वञ्चना तुमने नही देखी ?" यह सुनकर मुकुन्द ने कहा— 'ठीक है कि वडे भाई ने यह वञ्जना देखी सुयोधन ने कितने वार वञ्जना की ? नित्य भगवान् है ही देखनेवाला ! ५०-५७ अपने-अपने निरन्तर किये जानेवाले कर्मो का फल स्वय भोगना ही पड़ेगा। वे आपस मे कुछ भी करे। निस्सन्देह हमको तो चुप रहना ही ठीक होगा। कृष्ण की वात

वीरभद्रन् पण्टु दक्षनेक्कोल्लुवान्
वीरोट्टुकूटियटुक्कुन्नतुपोले । ४०
वेगालटुक्कुन्नतु कण्टु माधवन्
योगेशनायुळ्ळ योगस्थनीश्वर- ४१
नागमक्कातलामादिनाथन् परन्
भोगीन्द्रभोगशयनन् मधुरिपु ४२
सच्चिलप्पुमान् पुरुषोत्तमनव्यय-
नच्युतनानन्दमूर्त्ति परापरन् ४३
कोमळन् गोकुलनायकन् केशवन्
रामनेच्चेन्नु मुळुकेत्तळुकिनान् ४४
बन्धुक्कळाय नामोन्निनु कूटरु-
तेन्तु कोपत्तिनु कारणमोर्क्कण । ४५
नम्मुटे तातन् भगिनितन् मक्कळि-
द्धर्म्मजनादिकळेन्नुमरियणं । ४६
पिन्नेस्सुभद्रये वेट्टतुमर्ज्जुनन्
नन्नुनन्नित्तोळिल् चेटटङ्ङेणमे । ४७
कोण्टुं कोटुत्तु नरन्मार्क्कु चार्च्चक-
ळुण्टायवरुमतेन्नोर्त्तरुळेणमे । ४८
पिन्ने विशेषिच्चु तङ्ङळिलुळ्ळति-
नोन्निनुं पोवानवकाशमिल्ल ना । ४९

हल और मुसल लेकर घोर रूप धारण करके (भीम के) निकट पहुँच गया, जैसे पूर्वकाल मे वीरभद्र दक्ष को मारने के लिए क्रोध के साथ उसकी ओर दौडा था। जब वेग से निकट आते देखा। तब योगेश, योगस्थ, ईश्वर, आगमप्रिय, आदिनाथ, पर, भोगीन्द्र (शेषनाग) के भोगो पर लेटनेवाले, मधुरिपु, ३६-४२ सच्चित्पुरुष, पुरुषोत्तम, अव्यय, अच्युत, आनन्दमूर्ति, परापर, कोमल, गोकुलनायक, केशव ने जाकर बलभद्र से छाती लगाया। और कहा— हम इनके बन्धु है, हमको इस मामले मे आना नही चाहिए। कोप का कारण क्या है, यह समझना चाहिए। स्मरण रहे कि युधिष्ठिर आदि हमारे पिता की भगिनी के पुत्र है। ऊपर से अर्जुन ने हमारी सुभद्रा से विवाह किया है। तुमको अच्छा सूझा। जरा दब जाओ। लेने और देने से मनुष्यो के परस्पर संबन्ध बन जाते है, यह याद रखिये। फिर उनके आपस के मामलो मे हमको जाने का कोई अधिकार नही है। ४३-४९ इनके युद्ध

देवकीदेवीतिरुमकनीश्वरन्
देवदेवन् वसुदेवतनयनु— ९१
तेरिङ्ङु कोण्टुवा दारुक ! पोक ना
नेरं कळयरुतेतुमिनियेंटो । ९२
हस्तिनमाय पुरत्तिनु पोकण-
मत्तल् तीर्त्तीटुवान् पाण्डवन्मार्क्कु आन् । ९३
क्रुद्धनाकुं धृतराष्ट्रनृपनेयु-
मन्तिकेचेन्नु गान्धारियेत्तन्नेयु ९४
कण्टु पऱयणमिन्नुतन्नेयेन्नु
कोण्टल्नेर्वर्ण्णनुटनेळुन्नळ्ळिनान् । ९५
भारतकर्त्ता पराशरनन्दनन्
पारातेचेन्नु धृतराष्ट्ररेक्कण्टु । ९६
नाश कुलत्तिनु नी वरुत्तायकेन्नु-
माशु पऱञ्ञु बोधिप्पिच्चु पोकुन्पोळ् ९७
कृष्णनु पौराणिकाचार्यनाकिय
कृष्णन्मलरटि कूप्पिनानादराल् । ९८
पिन्नेयुळरि नगरमकंपुक्कु-
वन्दिच्चितु धृतराष्ट्ररे माधवन् । ९९
कण्णुनीरोटे करञ्ञु करञ्ञुटन्
चेन्नु तोळुतितु गान्धारितन्नेयु । १००
मक्कळ् मरिच्चु दुःखिच्चु करञ्ञुत-
न्नुळ्क्कनं विट्टिरिक्कुं नृपन्तन्नुटे । १०१

लाओ ! हम चले । अव समय नष्ट नही होना चाहिए । पाण्डवो का दु.ख समाप्त करने के लिए मुझे हस्तिनपुर जाना है । ८७-९३ क्रुद्ध नृपति धृतराष्ट्र के और गान्धारी के पास जाकर आज ही सव कहकर समझाना है । ऐसा कहते हुए घनश्याम सिधारे । महाभारत के रचयिता पराशरपुत्र (व्यास) ने जल्दी जाकर धृतराष्ट्र का दर्शन किया । 'कुल का नाश न होने दो' ऐसा कहकर और समझाकर जव विदा हो रहे थे तव कृष्ण ने सादर पौराणिक आचार्य कृष्ण (व्यास) के चरणो की वन्दना की । तदनन्तर नगर के अन्दर जाकर माधव ने धृतराष्ट्र की वन्दना की । आँसू गिराते हुए तुरन्त अन्दर जाकर गान्धारी को प्रणाम किया । ९४-१०० पुत्रो के नाश होने के दुःख से रो-रोकर धैर्य खो

अस्त्रमाग्नेय भरद्वाजनन्दनन्
क्रुद्धनायेय्ततु कोण्टितु वेन्ततु । ८१
नाटु नगरियु धान्यधनङ्ङळु
वीटु विजयवु पाण्डवन्माक्कीयि । ८२
नारिकळेप्परिपालिच्चुकोळ्ळुवा-
नारुमेयिल्ल पुरत्तिङ्कल् वेकाते । ८३
पोक युयुत्सु नमुक्कु नाळेच्चेल्ला-
मिन्नेयुरक्क नमुक्किकविटेयल्ल ।
अन्यदेशत्तु पोकेणमेन्नादराल् । ८४
धर्म्मात्मजनोटु निर्म्मलन् माधवन्
धर्म्मस्थितिकरन्तानरुळ्चेय्तप्पोळ् ८५
पुण्यवानाय युधिष्ठिरन् चोल्लिनान्—
निन्नुटे कारुण्यमेन्येयेन्ताश्रय ८६
ञङ्ङळे रक्षिच्चतारुमटीश्वर !
मंगलमूर्त्ते ! विजयनु सूतनाय् ८७
शत्रुक्कळ्चोन्नोरधिक्षेपवाक्यवुं
शस्त्रङ्ङळुमुळ्ळिलेटु पोरुत्ततुं ८८
ञङ्ङळोटुळ्ळ तिरुवुळ्ळमल्लयो ।
ञङ्ङळ्क्कु मटारुमिल्लिन्नु दैवमे !..८९
गान्धारियाकिय मातावु ञङ्ङळे-
भ्रान्त्या शपिप्पतोळ्ळिच्चरुळेणमे । ९०

गया है । देश और नगर, धन और धान्य, घर और विजय और पाण्डवो की हो गयी । अब नगर मे नारियो की रक्षा के लिए कोई भी नही है, युयुत्सु जल्दी नगर चले । हम कल चले । आज भी हम यहाँ न सोयेगे । मुझे और कही जाना है" जब निर्मल, धर्म की स्थिति करने वाला, माधव ने इस प्रकार युधिष्ठिर से कहा तब पुण्यवान् युधिष्ठिर ने कहा— तुम्हारे कारुण्य के अतिरिक्त हमारा और क्या आश्रय है ? ८०-८६ हे ईश्वर ! तुम्हे छोड़कर और किसने हमारी रक्षा की ? हे मगलमूर्ति ! अर्जुन का सूत बनकर शत्रुओ की गालियो और उनके शस्त्रों का तुमने जो सहन किया सो हमलोगो के प्रति प्रेम के कारण ही तो था । हे भगवान् ! हमारा और कोई नही है । कृपया ऐसा करो कि माता गान्धारी का भ्रम से हम लोगो के ऊपर शाप न पडे । देवकी-देवी का सुपुत्र, ईश्वर, देवदेव, वसुदेवपुत्र ने कहा— हे दारुक ! रथ यहाँ

अङ्ङनेयाकेङ्क्लिन्नवनु चोन्नान्
मंगलनाकिय कृष्णनुमन्नेरं ११३
यात्रयु चोल्लि विरवोटु वन्नितु
पार्थादिकळ् मेवु गोमतितन्करे ११४
पापि सुयोधनन् कालुमोटिञ्ञु स-
न्तापं कलर्न्नु किटक्कुन्नतुनेर । ११५
कुण्ठतयोटु करञ्ञु वरुन्नतु
कण्टितु सञ्जयनन्तन्नेयुमाकुलाल् । ११६
चेन्नु तलोटियरिकेयिरुन्नवन्-
तन्नेयणच्चु तळुकी सुयोधनन् । ११७
कण्णुनीरालोल वीळुन्नतु कण्टु
खिन्नतयोटु तुटच्चितु सञ्जयन् । ११८
मन्नवन् गावल्गणियुटे कण्णुनीर्
मन्दमन्दं तुटच्चीटिनानन्नेर । ११९
युद्धप्रकारवुं मारुति चेय्तोरु
वृत्तान्तवुमरियिच्चु सुयोधनन् । १२०
मानलोभादिकळेरेयुण्टाकयाल्
ञानोरु कारणमायेनितिनेल्लां । १२१
कण्णुंपोटिञ्ञु वयस्सुपुक्केटवु
खिन्ननाय् मक्कळुमोक्क मरिच्चु तन्- १२२

पड़ेगा। हे राजन्! आज्ञा हो तो मैं जाकर पाण्डवो की रक्षा करूंगा।" धृतराष्ट्र ने कहा— "अच्छा तो ऐसा ही हो!"। तव मंगलमूर्ति कृष्ण विदा होकर वहाँ सिधारे जहाँ गोमती के तट पर पाण्डव रह रहे थे। १०८-११४ इतने मे जव पापी सुयोधन टूटे जाँघ दु:खित होकर पड़ा हुआ था तव वहाँ दु:ख से रोता हुआ सञ्जय पहुँचा। और प्रेम से उसके पास वैठ गया और सुयोधन ने भी उससे छाती लगाया। उसके आँसू गिरते देखकर सञ्जय ने खेद के साथ उनको पोछा। उस समय राजा (सुयोधन) ने गावल्गणि (सजय) के आँसुओ को धीरे-धीरे पोछा। सुयोधन ने युद्ध की गति और भीम के किये काम उसको सुना दिये। मान, लोभ आदि दोप अधिक माता मे होने के कारण मैं इस स्थिति का निमित्त हुआ। ११५-१२१ अन्धे और अतिवृद्ध, दु:खित, अपने वच्चो के निधन के वाद अपने राज्य को परतन्त्र देखकर विपण्ण, नैराश्य में

दुःखं केट्टुप्पतिन्नाशु चोल्लीटिनान्
पुष्करनेत्रन् पुरुषोत्तमन् परन्— १०२
नित्यमल्लेतुमिस्ससारमोर्क्कणं
नित्यमाकुन्नतु निश्चयमीश्वरन् । १०३
मुन्नमे वन्नु ञान् निन्नोटु मन्नवा !
चोन्नेनिवण्णवरुमेन्नु सादरं । १०४
नाट्टिलेङ्ङानुमिल्लङ्ङळ्तोरु नट-
न्नूट्टिलुमुण्टु पोरुत्तुकोळ्ळामेन्नु । १०५
निन्नोटुतन्नेयिरन्नितु पाण्डव-
रन्नतु तोन्नीलयल्लो विधिमत । १०६
इन्नु निनक्कु ञान् नल्लतु चोल्लुव-
नोन्निच्चिरिक्क नी पाण्डवन्मारोटुं । १०७
निङ्ङळ्क्कवरे गतियेन्नुरय्क्कणं
निङ्ङळोळिञ्ञवर्क्कु गतियिल्लेतु । १०८
नल्लतवर्क्कुवरुंप्रकार निन-
क्कल्ललकन्नु गान्धारियुमायिनि । १०९
कोल्लुमवरेयुमश्वत्थामाविनि-
च्चेल्लायिकल् ञानङ्ङु निर्णय भूपते । ११०
आरुमे पिन्नेयोरुगतिकूटाते
पारिलिरिक्कुमाय्राकुं भवानिनि- १११
येन्नेयतिन्नयच्चीटुकिल्च्चेन्नु ञान्
मन्नवा ! पाण्डुसुतन्मारे रक्षिप्पन् । ११२

बैठे हुए राजा के दुःख को दूर करने के लिए कमललोचन, पर पुरुषोत्तम ने कहा। स्मरण रहे कि यह ससार नित्य नही है, निस्सन्देह एकमात्र ईश्वर ही नित्य है। हे राजन् ! मैने पहले ही आकर तुमसे सादर कहा था कि सब इस प्रकार होगा। "हम लोग देश के घर-घर घूमकर कही भी खाकर सहन कर लेगे" ऐसा कहते हुए पाण्डवो ने तुम ही से याचना की पर विधि के कारण तुमने यह न स्वीकार किया। आज भी मैं तुम्हारा भला कह रहा हूँ कि पाण्डवो के साथ रहो। १०१-१०७ वे ही तुम लोगो की गति है और तुमलोगो को छोडकर उनकी भी कोई गति नही है। अतएव तुम गान्धारी के साथ ऐसा करो कि उनका भला हो। अगर मैं न जाऊँगा तो निस्सन्देह अश्वत्थामा उनको मारेगा। तब तो तुम्हे बिना किसी भी आश्रय के इस पृथिवी पर अकेला रहना

वेणमेन्नाकिलटुत्तनाळ् चोल्वनें-
न्नानन्दमोटिरुन्नाळ् किळिप्पैतलु । १३४

शल्य समाप्त

वल है' नारायण ! हरे ! नारायण ! हरे ! नारायण ! हरे ! इससे अतिरिक्त क्या कहा जाये ! 'अगर और सुनना है तो कल सुनाऊँगा' ऐसा कहते हुए शुकी आनन्द से रही । १२८-१३४

॥ शल्यपर्व समाप्त ॥

सौप्तिक

नारायण ! जय, नारायण ! जय
नारायण ! जय, वरदहरे ! १
मायामयबहुलीलामय कथ
नीयायतु परकिनियुमेटो । २
नानारसमयवाणीगुणगण-
पानाधिकसुखजनहृदये ३
बाले शुककुलमौले वद वद
कालं कळयरुतिनि वेरुते । ४
आलंबनमनुकूलं त्रिभुवन-
मूलं परिणत विबुधकुलं ५
बालं जलधरनील तिलकित-
फालं मुनिनतपदकमलं ६

सौप्तिक पर्व

हे नारायण ! जय हो, हे नारायण जय हो ! हे नारायण ! वरद ! जय हो ! हे शुकबाले ! हे शुककुल के अलङ्कार ! विविध रसो से पूर्ण वाणी के गुणगण के पान से सुखी जनहृदय के लिए मायामय और लीलामय कथाये और सुनाओ, समय मत खोओ ! हे प्रियमित्र ! उस अनुकूल आलंवन को, त्रिभुवन के मूल को, देवो के कुल के विकास को, बाल,

नाटु परवशप्पेट्टु विपण्णना-
याटल् पूण्टोरु पितावुतन्नोटु नी १२३
चॊल्लुक पोरिल् मरिच्चितु आनॆन्नु
चॊल्लॆळुमॆन्नुटे मातावुतन्नोटु । १२४
मारुतियॆन्नॆच्चतिच्च प्रकारवु
नेरे पऱक पिताक्कन्मारोटुमे । १२५
विश्वासमुळ्ळोरु दूतनॆ विट्टुट-
नश्वत्थामादिकळोटुमऱियिक्क । १२६
ऎन्नु पऱञ्ञङ्ङयच्चानवनॆयुं
पिन्नॆटमॆन्तु पऱयावतीश्वरा । १२७
प्रेतपिशाचनिशाचरन्मारॊटु
भूतवेताळकूळिप्पटतन्नोटुं १२८
नाय्क्कळ् कुऱुनरिक्कूट्ट कळुकुकळ्
नोक्कियु वाय्क्कॊळ्वतिन्नायटुक्कयु १२९
गन्धिच्चु गन्धिच्चु वन्नु कटिप्पति-
न्नन्तिके निल्क्कयुं वीर्प्पुकळ् पार्क्कयु १३०
कालुं करवुमिळक्कुन्ननेरत्तु
नालञ्चटियकन्नन्पोटु वाङ्ङियुं १३१
कूरिरुट्टिल् तुणयारुमे कूटातॆ
पारिल् किटन्नु विधिबलमॆन्नोर्त्तु । १३२
नारायण ! हरे ! नारायण ! हरे !
नारायण ! हरे ! ऎन्ने पऱयावू । १३३

निमग्न मेरे पिता से और मेरी विख्यात माता से भी कह दो कि मैं युद्ध मे मरा हूँ। मेरे माता-पिता से सीधे कह दो कि भीम ने मेरी वञ्चना की। एक विश्वस्त दूत के द्वारा अश्वत्थाम आदिको को समाचार भेज दो। ऐसा कहकर उसको (सञ्जय को) रवाना कर दिया। हे ईश्वर! और क्या कहा जाय? १२२-१२७ प्रेत, पिशाच, निशाचर, भूत, वेताल, अन्य नक्तचर समूह इनके साथ और जब कुत्ते, सियाल, गीध देख-देखकर खाने के लिए निकट आते थे और सूघ-सूघकर काटने के लिए निकट खड़े होते थे और शरीर को फूलते देखकर और हाथ पैर के हिलने के समय चार-पाँच कदम पीछे को हटते थे, घोर अन्धकार मे बिलकुल अकेला पृथिवी पर पड़ा था और मन ही मन कहता था— 'यह सब विधि का ही

रण्टिल्लातोन्ना परब्रह्ममेन्तरिञ्ञालु
कण्टतोक्कयु तानाय् निरञ्ञु वसिप्पवन् । १७
कुण्ठचेतसामोट्टु कण्टुकूटातवन् वै-
कुण्ठन् कौस्तुभकण्ठन् सेवितशितिकण्ठन् । १८
चिन्तिच्चालोरुत्तक्कुमरिञ्ञुकूटातवन्
चिन्तिक्कुन्नवर्क्कु नित्यानन्द कोटुप्पवन् । १९
ऍन्तोन्नु पऱयेण्टतेन्नु ञानरिञ्ञति-
ल्लन्धत्वालुन्मत्तनेप्पोलेयाय्च्चमञ्ञु ञान् । २०
मायया सृष्टिस्थितिसंहारकर्त्ता जग-
न्नायकन्तन्टे लीलपऱञ्ञुतुटङ्ङुन्पोळ् २१
पेयेन्नु पऱञ्ञीटु मूढरायुळ्ळजनं
माययिल् मऱञ्ञु नेरेतुमे काणाय्कयाल् । २२
अङ्ङनेयुळ्ळ जगन्मङ्गलन् वासुदेवन्
मंगलदेवतयेस्सगिच्चीटिन देवन् २३
मङ्ङीटातोरु परमानन्दन् श्रीगोविन्द-
निङ्ङने वृकोदरन्तन्नेक्कोण्टतुकालं २४
दुरियोधनन्तन्टे तुटयु तच्चुपोट्टि-
च्चरियोहरियेन्नु काणिकळ् चोल्लुंनेरं । २५
करुणाकरन् कमलेक्षणन् कामप्रदन्
परमपुमान् परमात्मावु परब्रह्मं । २६

देता है उसी के रूप मे विराजमान है। वह मूर्खो के लिए बिलकुल अदृश्य है, वह वैकुण्ठ है, कण्ठ मे कौस्तुभ धारणकरनेवाले है, शिव की सेवा करनेवाले है। विचार करने पर जो जाना नही जा सकता है और जो मनन करनेवालो को आनन्द देनेवाला है। मै नही जानता हूँ कि क्या कहूँ अन्धा होने के कारण मै पागल सा हो गया हूँ। अपनी माया के द्वारा सृष्टि, स्थिति और सहार करनेवाले जगन्नायक की लीलाओ का जब मै वर्णन करने लगता हूँ तब मूर्खजन मुझे पागल कहते है, क्योकि माया मे छिपा तथ्य अदृश्य है। १६-२२ इस प्रकार का जगन्मंगल देव वासुदेव जो मगल देवता (लक्ष्मी) के पति है अक्षय परमानन्दवाले श्रीगोविन्द ने भीम के द्वारा दुर्योधन की जाँघ को मार तुड़वाया, जिसे देखकर प्रेक्षको ने 'हे हरे! हे हे हरे!' की आवाज़ निकाली। तब करुणाकर, कमललोचन, कामप्रद परमपुरुप, परमात्मा,

काल वहुधृतलील सुमधुर-
शील परिचित पशुपकुल ७
सालकृतमखकोल भृशमन-
काल प्रियसख भज विमल । ८
नरनारायणन्मार् चरणाबुज कूप्पि-
सरसं चोन्नाळ् किळि तदनु मनोहरं । ९
वेरुते काल कळञ्ञीटाते कृष्णन्तन्टे
चरितामृत चोल्वान् मटियिल्लिनिक्केतुं । १०
पार्त्थसारथ्य चेय्तु धात्रितन् भार तीर्त्त
मूर्त्तिया विष्णु परमात्मावु जगन्मयन् ११
दैत्यनाशनन् पुरुपोत्तमनोत्तिन् पर-
मार्त्थमाय् विळङ्ङीटु भक्तलोकार्त्तिहरन् १२
सर्व्वलोकङ्ङळुटे जीवनाकिय परन्
दुर्व्विनीतन्मारुटे गर्व्वनाशनकरन् १३
शर्व्ववन्दितन् परन् शरण्यन् शभुमूर्त्ति
निर्व्विकारात्मा विभु निर्व्विकल्पात्मानन्दन् । १४
अर्णोजविलोचनन् कर्ण्णारिप्रियसखि
तर्ण्णकपालकन् दुग्धार्ण्णवात्मजावरन् १५
निर्ण्णयं तिरञ्ञोळं कण्टुकूटात देव-
नेन्नुटेयुळ्ळिलिरुन्नरुळुं जगन्नाथन् १६

घनश्याम, माथे पर तिलक लगाये हुए, मुनियो के वन्दित पदकमलवाले को काल को, अनेक लीलाये करनेवाले को, मुमधुर शीलवाले को, गोपकुलो के परिचित को, यज्ञमूर्ति को यथा समय ध्यान करो। १-८ नर और नारायण के चरणो की वन्दना करके शुकी ने तदनन्तर सरस और मनोहर ढग से सुनाया। विना समय खोये कृष्ण के चरितामृत पिलाने मे मेरा कोई आलस्य नही है।' अर्जुन का सारथ्य करके पृथिवी का भार जिसने हल्का किया वह विष्णुमूर्ति, परमात्मा जगन्मय, दैत्यो के नाशक, पुरुपोत्तम, वेदो के सार के रूप मे विराजनेवाले, भक्त लोगों का दुख दूर करनेवाले सभी लोको का जीवनभूत, पर, दुर्विनीतो के गर्व का नाश करनेवाले शिव के वन्दित, पर, शरण्य, शभुमूर्त्ति, निर्विकार, विभु, निर्विकल्प आनन्दवाले, कमललोचन, कर्णारि (अर्जुन) का प्रियमित्र, गोप, लक्ष्मी का वर, ९-१५ ढूँढने पर भी अलभ्य देव, मेरे दिल मे विराजमान जगन्नाथ, एक और अद्वितीय ब्रह्म है, जान लीजिये, जो कुछ भी दिखाई

कालदोषत्ताल् वन्नतोरोन्ने पऱकयु-
मोलोल वीळु कण्णीरॊट्टु तुटय्क्कयु । ३८
अय्यो ! काण् विधिवलमॆन्नेऱे विलपिच्चु
मॆय्येऴि नॊन्तुनॊन्तु कैकालु वशंकॆट्टु ३९
पय्यवे वरुन्नोरु वेदन पारमय्यो
कैययच्चरचनॆत्तळुकियिरुन्नुटन् । ४०
मॆय्यॆटुत्तङ्कत्तिन्मेल् चेर्त्तितिन् पकरं ना
चॆय्यणमॆन्नुमिनि किफलमल्लयाय्किल् । ४१
दु खिक्कुन्नतुनेरं गान्धारितनयनु-
मक्षिकळ् तुटच्चवर्तङ्ङळोटुरचॆय्तु— ४२
दुष्कर्म्मवशालितु वन्नुवॆन्निरिक्किलु
दु खवु चुरुक्कि आन् चॊल्वतु केळ्क्कवेण । ४३
मायत्ताल् मरिच्चितु भीष्मद्रोणादिकळुं
मायत्तालॆन्टॆयूरु तकर्त्तु भीमन्तानु । ४४
न्यायत्तॆ निरूपिच्चु निङ्ङळुमितिन्नोरु-
पायत्ताल् प्रतिक्रियचॆय्यामॆङ्किलो चॆय्विन् । ४५
प्राणन् पोमतिन्मुन्पे निङ्ङळॆक्काण्कमूल-
मानन्दमिनिक्कुळ्ळिलेटवुमुण्टाय्वन्नु । ४६

जाकर अश्वत्थामा आदिको को बतला दिया । तब अश्वत्थामा, कृप और भोज ने साथ आकर दुर्योधन का दर्शन दिया । ३१-३६ टूटे जाँघ पृथिवी पर पडे प्राणवेदना का और दुःख का अनुभव करते हुए राजा को देखकर उन्होने कालदोष से हुई भिन्न-भिन्न घटनाओ को सुनाया और गिरती हुई आँसू की बूँदों को पोछा । 'हा हन्त ! देखो विधि का बल !' ऐसा बहुत विलाप किया उसके हाथ पैर बिलकुल वेकार हो गये थे और उसका धीरे-धीरे चढनेवाला दर्द भी वहुत अधिक था । इसलिए उन्होने राजा को हाथ से मालिश की । उसके शरीर को अङ्क मे लेकर कहा 'हमको अव इस का बदला लेना है नही तो हमारे रहने का क्या फल है । जब वे इस प्रकार अपना दु ख प्रकट कर रहे थे तब गान्धारीपुत्र (दुर्योधन) ने आँसू पोंछकर कहा— यद्यपि यह सव मेरे ही कुकर्मो से हुआ फिर भी अपना दु.ख दवाकर मेरा कहना सुन लीजिये । ३७-४३ भीष्म, द्रोण आदि माया से मरे और भीम ने मेरी जाँघ को माया से ही तोड़ डाला । आप लोग न्याय पर विचार करके अगर इसकी प्रतिक्रिया का उपाय सोच निकाल सकते है तो कीजिये । इससे पहले मेरे प्राण निकल जायेगे ।

धर्म्मस्थापनकरन् चिन्मयन् कर्म्मसाक्षि
जन्मनाशादिहीनन् भक्तजन्मार्त्तिहरन् । २७
धर्म्ममानसनाय धर्म्मजन्माविनोटु
निर्म्मलन्माराय् मेवु मट्टुळ्ळ जनत्तोटु २८
कैनिलपुक्कु देवन् कैतवमूर्त्ति कृष्णन्
कैपिटिच्चर्ज्जुनादिवीररोटरुळ् चेय्तु— २९
अय्वरुंकूटि निङ्ङळ् पोरिकेन्नोटुकूटि
कैवन्नु जयमेङ्किलन्निल नीङ्ङीटण । ३०
पैशाचभूतप्रेतपूर्ण्णमामटल्क्कळ
कैवेटिञ्ञिट्टुवेण रात्रियिलुरङ्ङुवान् । ३१
कैवल्य कळ्ळल् तोळुतीटुवोर्क्करुळीटुं
दैवत्तेत्तुणयाक्किक्कोण्टवर्कळुं पोयार् । ३२
कारुण्यमूर्त्तियोटु कूटवे पाण्डुपुत्रर्
धीरतयोटु चेन्नु गोमतीतीर पुक्कार् । ३३
मारुतियोटु पोरुतातुरनायि वीणु
पारतिल् मरियाते किटन्न सुयोधनन् । ३४
तन्नुटेयवस्थकळोटिच्चेन्नरियिच्चु
खिन्नतयोटु दूतरश्वत्थामादियोटुं । ३५
अन्नेरं द्रोणजनु कृपरु भोजन्तानु-
मोन्निच्चु वन्नु दुरियोधनन्तन्नेक्कण्टु । ३६
कालोटिञ्ञवनियिल् प्राणवेदनयोटे
मालियन्निटुं नृपन्तन्नेक्कण्टवर्कळु । ३७

परब्रह्म, धर्म का स्थापन करनेवाले, चिन्मय, कर्मसाक्षि, जन्म और नाश से रहित, भक्तो का दुख हरनेवाले ने धर्ममानस युधिष्ठिर के साथ और अन्य निर्मल जनो के साथ तबू मे प्रवेश किया और हाथ पकडते हुए अर्जुन आदियो से इस प्रकार कहा— आप पॉचो मेरे साथ चलो। विजय तो मिल गयी, पर इस युद्धभूमि से दूर होना चाहिये। २३-३० युद्धक्षेत्र तो पिशाच, प्रेत और भूतों से भरा है। इससे अलग होने के वाद ही रात को सोना चाहिये। चरणसेवा करनेवालो को कैवल्य प्रदान करने वाले देव के साथ वे गये। पाण्डव धैर्य के साथ कारुण्यमूर्त्ति के साथ गये और गोमती के तट पर पहुँचे। भीम से युद्ध करके पीडित होकर जो दुर्योधन रणभूमि में जिन्दा पडा था उसका हाल दूतो ने दौडकर

आलस्यत्तोटु किटन्नुरङ्ङियतुनेर
मालुळ्ळिल् मुळुक्कयालश्वत्थामाविनप्पोळ् ७
वन्नतिल्लेतुं निद्रा चिन्तयुण्टाकमूल-
मन्नेरमुणर्न्निरुन्नवनुमोन्नु कण्टा- ८
नन्धतपूण्टु पकल् मेविन कूमन्तन्ने-
यन्धचित्तन्माराय काकन्मारोरुमिच्चु ९
शत्रुतनिरूपिच्चु कोत्तिनानतुनेर-
मेत्रयुमत्तल्पूण्टु चमञ्ञानतुमूलं । १०
रात्रियिल् काकन्माक्कु नेत्रङ्ङळ् काणापिन्ने
रात्रियिल् काणुमल्लो कूमनु सुखंपोले । ११
मुन्नेतु वच्चुकोण्टिट्टन्नेर कूमन् चेन्नु
सन्नद्धभावत्तोटु रोषत्ते पोरायक्कयाल् १२
काकन्मारुरङ्ङन्पोळ् कोत्तिक्कोन्नोटुक्किना-
नाकुन्पोळ् परिभव वीळुकेन्नतेवरू । १३
अेन्नतु कण्टु गुरुनन्दननश्वत्थामा-
वन्नेरं भोजकृपन्मारेयुमुणर्त्तिनान् । १४
कण्टतिल्लयो निङ्ङळ् कूमन्टे धर्म्म पक-
लुण्टाय परिभवं वीळुन्नोनितुनेरं । १५
ईवण्णं चेय्विनेन्नु नम्मोटोरुपदेशं
दैवत्तिन् नियोगत्ताल् चेय्कयायतुमेटो । १६

युद्ध करने निकले। गाण्डीवधारी अर्जुन आदि के डर से उनके निकट न जा सकने से वे अपना सन्ध्यावन्दन करने के बाद बन के अन्दर गये और एक बड़े वटवृक्ष के तट पर अलस होकर सोने के लिए लेट गये। पर दु.खित होने के कारण अश्वत्थामा को नीद नही आयी और वह चिन्ता मे मग्न हुए। जागते अश्वत्थामा ने उस समय यह देखा। १-८ दिन में अन्धे उल्लू पर अन्धचित्त कौवो ने मिलकर और शत्रु बनकर आक्रमण किया था और वह बहुत ही दु खित हुआ था। कौए रात को देख नही सकते है और उल्लू तो रात को अच्छी तरह से देख सकते है। इसलिए पहले के वैर को दिल मे रखते हुए उल्लू ने कोप न सह सकने से रात को सोये हुए कौवो को काट-काटकर समाप्त कर दिया। जब हो सकता है तभी तो बदला लिया जा सकता है। यह देखकर अश्वत्थामा ने भोज और कृप को जगा दिया। तुम दोनो ने देखा नही इस उल्लू का धर्म जिसने दिन मे सहे पराजय का अब रात को बदला लिया। ९-१५

निङ्ङळ्क्कु परिभव चेर्त्त पाण्डवर्तम्मॆ
निङ्ङळ्चॆन्नॊट्टुक्कणमॆतुमे वैकीटाते । ४७
ऒन्नु चॊल्लिय मन्नन्तन्नुटॆ दुःख कण्टु
तन्नुटॆ तातन्तन्नॆक्कॊन्नतु निरूपिच्चु । ४८
तन्नुळ्ळिल् निरूपिच्चानन्नेरमश्वत्थामा-
विन्नितु योग्यमत्ते वेण्टुवोन्नॆन्नु नून । ४९

अश्वत्थामाविन्टॆ निश्चय

मन्नव ! शत्रुक्कळॆ कॊन्नु ञान् परिभव-
मिन्नु तीर्क्कुन्नतुण्टु निर्णयमॆन्नान् द्रौणि । १
ऎङ्किलो कृपाचार्यनौपधमन्त्रङ्ङळाल्
मगलवरुमारु रक्षकळ् चॆय्तु नन्नाय् । २
चॆय्यण सेनापतियायभिषेकमॆन्नाल्
मय्यल् तीर्न्नीटु गुरुपुत्रनॆन्नितु नृपन् । ३
चॊल्लियवण्णतन्ने चॆय्तवर् मूवरुमाय्
नल्ल पाण्डवन्मारुटॆ पटवीट्टिनु चॆन्नार् । ४
गाण्डीवधरनाय फल्गुनन्मुन्पायुळ्ळ-
पाण्डवन्मारॆप्पेटिच्चटुत्तुकूटाञ्ञवर् ५
सन्ध्यावन्दनं कऴिच्चटवितन्निल् पुक्कु
चन्तमुळ्ळोरु पेरालुतन्नुटॆ चुवट्टिल् पोय् ६

आप लोगो को देखने से मुझे बडा आनन्द हुआ है। आप लोग जाकर पाण्डवो को जल्दी समाप्त कीजिये जिन्होने आपको भी नीचा दिखाया है। इस प्रकार कहनेवाले राजा का दु ख देखकर और अपने पिता के वध का स्मरण करके अश्वत्थामा ने अपने मन मे सोचा— 'यह उचित होगा कि आज मै आवश्यक काम करूँ'' । ४४-४९

अश्वत्थामा का निश्चय

द्रौणि (अश्वत्थामा) ने कहा— हे राजन् ! आज मैं अवश्य शत्रुओ को मारकर अपने परिभव को समाप्त करूँगा। कृपाचार्य ने औपध और मन्त्रो से रक्षाएँ की ताकि मगल हो जाय। राजा ने कहा— अच्छा ! तो दु.ख को दूर करनेवाले गुरुपुत्र को सेनापति के पद मे अभिषेक किया जाय ! उन तीनो ने इस कथन के अनुसार किया और अच्छे पाण्डवो से

आर्नोरु पुरुषनिङ्ङायुधमोटुं कूटि
प्राणनोटिरिक्कुन्पोळ् जीविप्पानयप्पनो ? २७
स्नानभोजनयानमैथुनादिकळिलु
मानमोटरिकळे निग्रहिच्चीटामेन्नाल् २८
एतुमे दोषमिल्ल वोकुन्नेनेन्नानव-
नेतुमे मटिक्केण्टा नटन्नीटुकयेङ्किल् । २९
मरिप्पान् मटियिल्ल यङ्ङळ्क्कुमितुकाल
करुत्तु कुरकिलुमेन्नवरुरचेय्तार् । ३०
भोजनुं कृपरुमायन्नेर गुरुसुतन्
व्याजेन कोल्वान् चेन्नु कैनिलयटुत्तप्पोळ् ३१
वेताळभूतप्रेतपैशाचकूळिकळाल्
भीति पूण्टटुत्तुकूटाञ्ञितु पोक्कंळत्तिल् । ३२
शत्रुक्कळाय पाण्डुपुत्रन्मारेयु पेटि-
च्चेत्रयु प्रयोगिच्चु शस्त्रङ्ङळश्वत्थामा । ३३
नान्दकशरशार्ङ्गशखचक्रादिपूण्टा-
नन्दनन्दनन्मारे काणायितसंख्यमाय् । ३४
विष्णुमूर्त्तिकळाले निरञ्ञु युद्धभूमि
विस्मयिच्चश्वत्थामा पेटिच्चु नाणपूण्टान् । ३५
नल्लतुमाकात्ततु वेण्टतु वेण्टात्ततु
नल्लनां गुरुसुतनोन्नुमे तोन्नीतिल्ल । ३६

अश्वत्थामा कुपित होकर वोला— जब तक मै एक पुरुप होकर सशस्त्र और जिन्दा हूँ तब तक पिता के घातक धृष्टद्युम्न और उसके वन्धुओ को कैसे जीने दे ? स्नान, भोजन, गमन, मैथुन आदि कार्यो मे शत्रुओ को मान के साथ निग्रह किया जा सकता है इसमे कोई दोप नही है, इसलिए मै जा रहा हूँ । तुमलोग भी इसमे विना हिचक के आगे चलो । २३-२९ तव उन्होने कहा— शक्ति कुछ कम अवश्य हो गयी है फिर भी हमलोग मरने के लिए तैयार है । तव भोज और कृप के साथ अश्वत्थामा कपट से मारने के लिए निकला । जब उनके तवू के पास पहुँचे तव वेताळ, भूत, प्रेत, पिशाच आदियो के डर से रणभूमि के निकट न जा सके । शत्रु पाण्डवो से डरकर अश्वत्थामा ने शस्त्रो का प्रयोग किया । तव नान्दक, शार्ङ्गशर, शख, चक्र आदि धारण करनेवाले असख्य नन्दनन्दन दिखाई दिये । सारी युद्धभूमि विष्णुमूर्तियो से भर गयी । अश्वत्थामा विस्मित हुआ, डर गया और दव गया । अच्छे गुरुपुत्र को कुछ भी न

युद्धचेय्तेट् तळर्न्नुरङ्ङु वैरिकळे-
ळ्वद्धरोपेण चेन्नु कोल्लुविन् निङ्ङळेन्नान् । १७
दोपमिल्लेन्नुवन्नु पोकनामिप्पोळ्त्तन्ने
शेपिच्च पाण्डवरेयोटुविकवक्कळवानाय् । १८
नेरोटे पकल चेन्नालावतिल्लवरोटु
कारणं नारायणन् कात्तुकोण्टीटुमल्लो । १९
इत्तरमश्थत्थामा चोन्नतु केट्टु कृप-
रुत्तरमुरचेय्तु सत्वर निरूपिच्चु । २०
रात्रियिल् चतिच्चु ना कोल्लुवान् चेन्नालतु
कीर्त्तिकेटुण्टामन्ने साध्यवुमल्ल नम्माल् । २१
ईश्वरनवरुटे पाङ्ङेन्नु वन्नतिप्पो-
ळाश्रयमाय दुरियोधनन् वीणानल्लो । २२
भाग्यमिल्लातवक्कुवेण्टि वलकळ् चेय्ताल्
योग्यमाय्वन्नुकूटा पार्क्कणमिनियुं ना । २३
विदुरर् सञ्जयनु धृतराष्ट्ररुं पिन्ने
मृतिवन्नटुत्तोरु मन्ननुं मटुळ्ळोरु २४
कूटि नां निरूपिच्चु नाळेयामितु पक्षे
कूटलर्काला गुरुनन्दनायेन्नु कृपर् । २५
अश्वत्थामावु कोपिच्चन्नेरमुरचेय्ता-
नच्छनेक्कोन्न धृष्टद्युम्ननुं वन्धुक्कळुं २६

"इस प्रकार तुम लोग भी करो" ऐसा एक उपदेश इसने दैव के नियोग से हमलोगो को दिया है। उसने कहा— "बहुत युद्ध करने से थककर सोनेवालो को वडे क्रोध के साथ मार डालो"। यह सिद्ध है कि इसमे कोई दोप नही है। इसलिए अवशिष्ट पाण्डवो का वध करने के लिए हम चले। अगर हम दिन मे खुलकर चलेगे तो काम नही वनेगा क्योकि नारायण उनकी रक्षा करेगे। अश्वत्थामा की यह वात सुनकर कृप ने सोचकर तुरन्त उत्तर दिया— "अगर हमलोग रात को मारने चलेगे तो हमारा अपयश होगा और काम भी असाध्य होगा। अव स्पष्ट है कि ईश्वर उनके पक्ष मे है और हमारा आश्रय दुर्योधन भी गिरा है। १६-२२ भाग्यहीनो के लिए अगर काम किया जाय तो वह सफल नही होगा। इसलिए हमलोग जरा ठहरे। विदुर, सञ्जय, धृतराष्ट्र और आसन्नमरण राजा और अन्य जनो के साथ हम विचार करे और कल कुछ करे हे शत्रुओ के नाशक गुरुपुत्र!" ऐसा कृप ने कहा। तव

शभोशाश्वतपरभूतेश ! पुरहर !
कुंभिपाकार्त्तिहर ! गिरिश ! गंगाधर ! ४७
गिरिजावर ! जय ! गिरिमन्दिर ! जय !
परमेश्वर ! जय परशुधर ! जय ! ४८
चतुराननतचरण ! जयजय !
सरसीरुहदळनयनप्रिय ! जय । ४९
कालनाशन ! जय ! धूर्ज्जटे ! पशुपते !
नीललोहित ! भव ! फाललोचन ! जय ! ५०
पालय दीनमेन शरणागतं शिव !
पालय निरन्तरं त्रस्तमत्यन्तभक्त । ५१

अश्वत्थामाविन्टे पराक्रम-पाञ्चालीपुत्रन्मारुटे निग्रह

इङ्ङने शिवस्तुति चेय्तुटनग्नितन्निल्-
च्चेन्नु चाटुवान् तुटङ्ङीटिनोरश्वत्थामा- १
तन्नुटे शत्रुक्कळेयोक्कवेयोटुक्कुवान्
पन्नगाभरणनु नल्किनान् करवाळु । २
चेन्निवरोटुकूटिक्कोन्नालुमरिकळे
नन्नाक मेलिल् निनक्कोन्नरुळ्चेय्तु देवन् । ३

हे शङ्कर ! तुम्हारी जय हो ! हे चन्द्रशेखर ! जय हो ! हे कामदेव के रिपु ! हे हुकृतिवाले हर ! जय हो ! हे शभो ! हे शाश्वत ! पर ! भूतेश ! पुरहर ! हे कुभीपाक के दु ख को दूर करनेवाले ! हे गिरिश ! हे गगाधर ! हे गिरिजापते ! जय हो ! हे गिरिमन्दिर ! जय हो ! हे परमेश्वर ! हे परशुधर ! जय हो ! हे ब्रह्मा के वन्दित चरणवाले ! जय हो ! हे विष्णुप्रिय ! जय हो ! हे कालनाशन ! हे धूर्जटे ! हे पशुपते ! जय हो ! हे नीललोहित ! भव ! फाललोचन ! जय हो ! हे शिव ! इस शरणागत त्रस्त और अत्यन्त भक्त का निरन्तर पालन करो ! ४६-५१

अश्वत्थामा का पराक्रम । पाञ्चाली के पुत्रों का निग्रह ।

इस प्रकार स्तुति करके तुरन्त ही अग्नि मे कूदने को सज्ज अश्वत्थामा को शत्रुओ को समाप्त करने के लिए शिवजी ने एक खड्ग भेट किया । और कहा— अब चलो और इनके साथ शत्रुओ को मारो । और आगे तुम्हारा भला हो ! खड्ग देकर जब अन्तर्धान करने ही वाले थे तब

मातुलन् पऱञ्ञतु केळातॆ नटिच्चुपो-
ऩ्ऩातुरनायितिप्पोळ् आनॆन्नु गुरुसुतन् । ३७
इन्द्रियङ्ङळॆयॆल्लामटक्कि प्राणायामं
मन्दमॆऩ्नियॆ चॆय्तु शिवनॆ ध्यानचॆय्ता- ३८
नन्तर्योगत्तॆत्तुटङ्ङीटिनान् विप्रोत्तम-
नन्तिकॆ काणाय्वन्नु शङ्करमाहात्म्यवु । ३९
मन्तेरं वेदिमद्ध्यॆ कत्तुन्नोरग्नि तन्निल्-
निन्नुण्टायितु चिल शैवभूतङ्ङळॆल्लां । ४०
निटिलक्कण्णु नल्ल कुटिलभ्रूक्कळुमा-
भ्रुकुटीकराळवु कठिनदन्तङ्ङळु ४१
धूसरकेशङ्ङळु भासुरश्मश्रुक्कळुं
मेदुरमुखङ्ङळु भीषणवेषङ्ङळुं
दारुणशूलङ्ङळु कैक्कोण्टु काणाय्वन्नु । ४२
मारणदेवतकळाकिय मूर्त्तिकळुं
कारणनाय पुरनाशनमूर्त्तियॆयु ४३
विश्वनाथनॆक्कण्टोरश्वत्थामावुतानुं
निश्श्वासमोटु वरुमश्रुक्कळतु तुट- ४४
च्चर्च्चनंचॆय्तु वीणु नमस्कारवुं चॆय्तु
विश्वासभक्तियोटु स्तुतिच्चानतुनेरं । ४५
शङ्कर ! जयजय ! चन्द्रशेखर ! जय !
पङ्कजशररिपो ! हुंकृतिहर ! जय ! ४६

सूझा— न अच्छा, न बुरा, न उचित और न अनुचित। तब गुरुपुत्र ने कहा— "मैने मामा की बात न सुनी और अपने ही मन की बात करी। अब तो परेशान हूँ"। ३०-३७ इन्द्रियों का निग्रह करके और जोर से प्राणायाम करके शिवजी का ध्यान किया। इस प्रकार विप्रोत्तम ने अन्तर्योग प्रारम्भ किया और निकट ही में शङ्कर का माहात्म्य दिखाई दिया। वेदि के बीच जलनेवाली आग से कई शैव भूतों का प्रादुर्भाव हुआ। माथे की आँख, कुटिल भौंहे, घोर भ्रुकुटि, कठिन दाँत, धूसर केश, भासुर श्मश्रु, मेदुर मुख और भीषण वेष, और दारुण शूल धारण करनेवाला दिखाई दिया। तब विश्वनाथ को देखनेवाले अश्वत्थामा ने मारणदेवताओं की मूर्तियों को और उन सबके कारण पुरनाशन की मूर्ति को निःश्वास के साथ गिरनेवाले आँसुओं को पोंछते हुए पूजा की और पैरों पड़कर विश्वास और भक्ति के साथ इस प्रकार स्तुति की। ३८-४५

द्वारङ्ङळ्तोरुं निन्नु भोजरु कृपरुमाय्
पारातें कोन्नु कोन्नु वीळ्त्तुन्नोर् तेरुतेरे- १४
प्पुरत्तुळ्ळवर् पेटिच्चकत्तु पाञ्ञुपुक्कु
पुरत्तुपुरप्पेट्टुमकत्तुळ्ळवरेल्ला । १५
वरुन्नोर् वैरिकळेन्नकत्तुळ्ळवरेल्ला-
मकत्तु शत्रुक्कळेन्नुरच्चु पुरत्तुळ्ळोर् । १६
इङ्ङने शिव ! शिव ! तङ्ङळिल्त्तन्ने कोन्नु
तिङ्ङिन पटयोक्क मिक्कतुमोटुङ्ङीतें । १७
कैनिलतन्निलवर् तीयु वच्चितु पिन्ने-
क्कै तल कालु तोळु मुरिञ्ञु वशकेट्टु । १८
चाकाते किटन्नवर् तीपिटिच्चतुनेर
वेकातुळ्ळवयव किटन्नु पिटकयु । १९
करञ्ञु करञ्ञवर् वेन्तुचाकुन्ननेर
मरङ्ङळ् वेन्तु पोट्टियलरुमोच्चकळु । २०
मुटियिल् पिटिपेट्टोरग्नितन् दुर्गन्धवु
तटवु तीर्न्नु कत्तिप्पोङ्ङु ज्वालकळ्मेले । २१
मुळुत्तु पोङ्ङीटुन्न पुकयु कण्टुकण्टु
पिळय्क्कु चेय्ततेल्लामरचनोट चोल्वान् २२
भरद्वाजात्मजादि मूवरुमोरुमिच्चु
पारिच्च मोदत्तोटु वेगत्तिल् नटकोण्टु । २३
दुरियोधनन् वीणु किटक्कुन्निटत्तु चे-
न्निरुन्नारवर्कळुमेत्रयु दुःखत्तोटे । २४

भीतर जाने लगे और जो भीतर थे वे बाहर निकलने लगे। जो भीतर थे वे भीतर घुसनेवालो को और जो वाहर थे वे भीतर के लोगो को शत्रु समझा। हा शिव ! शिव ! इस प्रकार आपस मे मार-काट के वह बडी सेना भी समाप्त हो गयी। फिर उन्होने तबू को आग लगा दी। हाथ, सिर, पैर, और कन्धे टूटकर वेकार हुए। जो ज़िन्दा पड़े थे उनको आग लग गयी। जो अवयव जले न थे वे तडप रहे थे। रोते हुए और जलकर वे मरे। वृक्ष तो जलते समय फूटे और बडी आवाज़ हुई। १५-२० जव आग केशो पर लगी तो वडी दुर्गन्ध हुई। बिना रुकावट के ऊपर को उठनेवाली ज्वालाओ के ऊपर से धुआँ निकल उठा। उसे भी देखकर राजा से बीती वाते कहने के लिए अश्वत्थामा आदि तीनो वडे प्रमोद के साथ चले। और जाकर जहाँ दुर्योधन पड़ा था वहाँ दु.ख

खळ्गवुं नल्कि नेरे निर्गमिच्चनन्तर
भक्तिपूण्टङ्घ्रिपत्म वन्दिच्चु गुरुसुतन् । ४
भर्गन्तन्ननुग्रहालुग्रनामश्वत्थामा-
वुळ्ळकरुत्तोटुकूटि वेक्कत्तिल् वाळुमायि ५
शत्रुक्कळुऱङ्ङुन्पोळ्प्पुक्कानेन्ने वेण्टु ।
वित्रस्तचित्तन्मारा भोजनु कृपरुमाय् ६
धृष्टद्युम्नन्टे तल वेट्टियङ्ङरुत्तितु ।
पेट्टेन्नु पाञ्चालितन् मक्कळेयञ्चु कोन्नु ७
वावुन्नाळर्द्धरात्रिनेरत्तु गुरुसुतन् ।
आवोळं शत्रुक्कळे वेट्टिक्कोन्नरुत्तुटन् ८
भूतनाथनु वलि नल्किनान् चोरकोण्टे ।
भूतङ्ङळार्त्तुकळिच्चीटिनारतुनेर ९
तङ्ङळे मऱन्नुटनुऱङ्ङुन्नवरेल्ला-
मिङ्ङनेयोरु घोपमुण्टायोरनन्तर १०
कम्पवुं पूण्टु तम्मिलेतुमोन्नऱियाते
संभ्रम कलर्न्नुटन् तङ्ङळिल्त्तन्ने वेट्टि- ११
च्चत्तितु चिलरुटनायुधं तिरकयु
शत्रुक्कळेत्रयुण्टेन्नेतुमेयऱियाते १२
वद्धप्पेट्टुटन् मण्टिप्पुऱत्तुचाटुन्नेरं
शस्त्रङ्ङळेट्टु भुवि मुऱिञ्ञुवीणुमेवं १३

गुरुपुत्र ने भक्ति के साथ उनके चरणों की वन्दना की। शिवजी के अनुग्रह से उग्र अश्वत्थामा भीतरी शक्ति के साथ खड्ग हाथ में लिए वहाँ घुस गया जहाँ वे सो रहे थे। वहाँ वित्रस्त भोज और कृप के साथ धृष्टद्युम्न का सिर काट डाला। और तुरन्त गुरुसुत ने अमावास्या की आधी रात को १-७ पाञ्चाली के पाँचों पुत्रों का वध किया। अपनी शक्ति के अनुसार शत्रुओं को मार-मारकर उनके रक्त का भूतनाथ को वलि प्रदान किया। उस समय भूत सोल्लास चिल्लाने लगे। जो अपने को भूलकर सो रहे थे, वे यह घोष सुनकर काँपने लगे और यह न समझकर कि क्या हो रहा है घवड़ा गये और आपस में ही मार काटकर मरे। कोई-कोई आयुध ढूंढने लगा। यह न जानकर कि शत्रु कितने हैं कुछ लोग जल्दी में वाहर निकलने लगे। तव उनको अस्त्र-शस्त्र लगे और वे घायल होकर गिर गये। भोज और कृप ने हर एक द्वार पर खड़े होकर मार-मारकर उनको गिराया। ८-१४ जो वाहर थे वे डरकर

पारातॆ परऽञवळ् पैकॆटुत्तिरियॆन्नु
शारिकप्पैतल्तानु मोदमोटिरुन्नुते । ३५

॥ सौप्तिकं समाप्तं ॥

सुनाकर शुकी भी खाने पीने का सुझाव देकर आराम करने बैठ गयी । २८-३५

॥ सौप्तिक पर्व समाप्त ॥

ऐषिकं

मलर्मानिनियुटॆ मनक्कान्पतिलेऱॆ
मदनामय मरुळिन परमन् १
मदनशरपरवशन्माराय गोप-
मधुवाणिकळुटॆ मनमॆल्ला २
मधुराधरं नल्कि मयक्किच्चमप्पोरु-
मधुरनाथनाय जगदीशन् ३
मधुकैटभमदमथनन् नारायणन्
मधुराकृतियोटुमवनियिल् ४
असुरन्मारायुळ्ळोररचन्मारॆयॆल्ला-
मरुतिवरुत्तुवान् पिऱन्नवन् । ५
चरणसरसिजं शरणमॆन्नु नण्णि-
च्चरतिच्चिरुन्नुळ्ळिल् करुतियुं ६

ऐषिक पर्व

लक्ष्मीदेवी के दिल मे अधिक मदनार्ति पैदा करनेवाले परम, मदन के शरो से बेबस गोपियो के दिलो को अपना मधुर अधर देकर मोहित करनेवाले मधुर नाथ जगदीश, मधु और कैटभ के मद को नाश करनेवाले नारायण, इस पृथिवी पर एक मधुर आकृति लेकर असुर राजाओ को समाप्त करने के लिए जन्म लेनेवाले चरणकमल ही शरण है, ऐसा सोचकर, दुनिया से विरक्त होकर उसी का ध्यान करते हुए, १-६ उसी

पतिनोन्नक्षौहिणिप्पटयुळ्ळरचा ! नी
पतितनायान् भुवि चतियालय्यो कष्ट । २५
अन्धनाय् वयोधिकनाकिय पिताविन्नें-
स्सन्तत रक्षिप्पतिनारिनियुळ्ळतय्यो ? २६
गान्धारिदेवितन्टे दु.खमेन्तोन्नु चोल्लू
कान्तार वाळुकेन्ने वेण्टू ञङ्ङळुमिनि । २७
मन्नव ! सुयोधन ! निन्नोटु सममायि-
प्पोन्नुकळ् पुटवकळ् नल्कुवतारु नाथा ? २८
ञङ्ङळुमाकुन्नतु चेय्तारेन्नरिञ्ञालु-
मिङ्ङने निन्नेक्कण्टु सहियाञ्ञतुमूल । २९
धृष्टद्युम्ननु कृष्णतन्नुटे तनयरु-
मोट्टुमे शेषियाते मटुळ्ळ पटकळु ३०
वेट्टिक्कोन्नोटुक्कीतु रात्रियिल्च्चेन्नु ञङ्ङळ्
चुट्टुपोट्टिच्चितवरिरुन्न गृहङ्ङळु । ३१
ऎन्नतु केट्टु तेळिञ्ञन्नेर सुयोधनन्
विण्णिलङ्ङकपुक्कान् पोरतिल् मरिक्कयाल् । ३२
इप्रकारङ्ङळोक्कस्सञ्जयनरियिच्चान्
केल्प्पुळ्ळ धृतराष्ट्रर् मोहिच्चु वीणानल्लो । ३३
मोहवु तीर्त्तङ्ङिङरुत्तीटिनान् पिन्नेप्पैदा-
हादिकळ् तीर्त्तशेष चोल्वन् ञानिनियेन्नु ३४

के साथ पहुँचे । हे ग्यारह अक्षौहिणी की सेनावाले राजन् ! यह बडे खेद की बात है कि धोखा खाने से तुम इस गिरी हुई स्थिति मे हो। अन्धे और बूढे पिता की अब रक्षा कौन करेगा ? देवी गान्धारी का दु ख, कहो, कितना तीव्र होगा ? अब हमलोगो के लिए बन जाना ही रह गया है। २१-२७ हे राजा सुयोधन ! तुम्हारे समान स्वर्ण और वस्त्र देनेवाला अब कौन है ? हे नाथ ! जान लो कि हमने जो कुछ हो सकता है सो किया है। तुम्हारी इस स्थिति को न सह सकने से हम लोगो ने रात को जाकर धृष्टद्युम्न और कृष्णा के पुत्रो को एक न छोडकर मार डाला है और उनके निवासस्थानो को जला दिया है। यह सुनकर सुयोधन प्रसन्न हुआ और युद्ध मे मरने के कारण भूमि के अन्दर घुस गया। इस प्रकार की बातो को सञ्जय ने जब सुनाया तब शक्तिशाली धृतराष्ट्र भी बेहोश होकर गिर पडा। तदनन्तर बेहोशी को दूर करके बैठाया और कहा कि शेप भूख और प्यास बुझ जाने पर कहूँगा। सब जल्दी

निष्ठुरनाकुमश्वत्थामावु चेय्ततेल्लां
कष्टमेन्तय्योयेन्ने चोल्लावितेनिक्किप्पोळ् । १७
धृष्टद्युम्नन्तु द्रुपदात्मजापुत्रन्मारु-
मोट्टोळियातेयुळ्ळ शेपिच्च पटयोटु १८
पट्टुपोयितु नमुक्केन्नवन् चोन्ननेर
दुष्टनाशननुळ्ळिल् तेळिञ्ञु खेदं पूण्टान् । १९

युधिष्ठिरन्टेयु पाञ्चालियुटेयु दुःख

धर्म्मजादिकळोटे पाञ्चालितानुमप्पो-
ळुल्मुकं चेविकळिल् पुक्कतु पोले केट्टु । १
सम्मोहत्तोटे भूमितन्निल् वीणितु पिन्ने
निर्म्मलन् कृष्णन् तानुमेट्टुत्तु शोक तीर्प्पान् । २
तङ्ङळिलाश्लेपिच्चु तिङ्ङिनशोकत्तोटु
पोङ्ङिन नादत्तोटुं करञ्ञारोट्टुनेरं । ३
अलच्चु तोळिच्चु मेय् विरच्चु पाञ्चालियुं
निलत्तुवीणु किटन्नुरुण्टुं पिरण्टुं पो- ४
यल्ललोटळुतुटन् धर्म्मनन्दननोटु
चोल्लिनाळय्यो पापमिङ्ङने वन्नुवल्लो । ५
मक्कळुमुटप्पिरन्नुळ्ळोरु वीरन्तानुं
दुःखत्तिन्नोरु पात्रमाक्किनारेन्नेयिप्पोळ् । ६

बहुत शोचनीय है, बस इतना ही मै कहूँगा" ऐसा उसने कहा। जब उसने कहा कि धृष्टद्युम्न, द्रौपदी के पुत्र और अवशिष्ट सेना, यह सब समाप्त हो गया है तब दुष्टों का नाशक स्पष्ट दुखित हुआ। १४-१९

युधिष्ठिर और पाञ्चाली का दुःख

युधिष्ठिर और पाञ्चाली ने इस समाचार को जब सुना तब उनको लगा कि उनके कानो मे उल्मुक घुस गया हो। वे बेहोश होकर गिर गये और कृष्ण ने उनको दुख दूर करने के लिए उठाया। बडे दुख के साथ उन्होने एक-दूसरे से गले लगाया और बडे जोर से रोया। द्रौपदी ने अपनी छाती पीटी, उसका शरीर काँपने लगा, और वह भूमि पर गिरकर लोटने लगी। और दुखित होकर युधिष्ठिर के पास जाकर उसने कहा— "हा! कैसा कष्ट है कि यह सब हुआ। मेरे पुत्रो और

चरितं चॊल्लिक्कॊण्टुमतिनॆ केट्टुकॊण्टु
पॆरिकॆ भक्तिपूण्टुळ्ळवर्क्कॆल्ला ७
जननमरणमामरियदुःख तीर्क्कुं
जगदानन्दमूर्त्ति परमात्मा ८
कलिदोषत्तालुण्टां कलुषङ्ङळॆयॆल्लां
कळञ्ञु परगति वरुत्तुवोन् । ९
नळिनशररिपुनळिनभवमुनि-
नमुचिरिपुमुखसुरन्मारु । १०
नळिनाङ्घ्रिकळ् तॊळुतळवु करुणया
नरनायवनिसङ्कट तीर्प्पान् ११
अळविल्लातॆयुळ्ळ कळिकळिनियु नी
कळमांवण्णं चॊल्लु किळिप्पॆण्णे ! १२
कळमावण्णंतन्नॆ परकप्पोका कृष्णन्-
कळिकळॆन्नालुं ञान् चॊरुतु परञ्ञीटा । १३
तुळसिमाल पूण्ट सुन्दरन् नन्दात्मजन्
विळयाट्टुकळॆत्र विचित्रमोर्क्कुतोरु । १४
धर्म्मजादिकळ्क्कॊरु सङ्कटं वराय्वानाय्
निर्म्मलनवरुमाय् वाळुन्न गृहत्तिङ्कल् १५
धृष्टद्युम्नन्टॆ दूतन् पिटॆन्नाळुदिक्कुन्पोळ्
पॆट्टॆन्नु पाञ्ञुचॆन्नु वृत्तान्तमरियिच्चान् । १६

का चरित्रवर्णन करते हुए और सुनते हुए वडी भक्ति अनुभव करनेवालो का जनन, मरण आदि दुःख को समाप्त करनेवाला जगदानन्दमूर्ति परमात्मा कलिदोष से पैदा होनेवाले पापो को दूर करनेवाला और परम गति को प्राप्त करानेवाला, कामदेव का शत्रु शिव, नलिनभव ब्रह्मा, नमुचि का शत्रु इन्द्र आदि देवो के द्वारा चरणो की वन्दना करने के कारण अपनी करुणा से पृथिवी का सङ्कट दूर करने के लिए मनुष्य का रूप धारण करनेवाले की निस्सीम लीलाओ को, हे शुकि ! सुन्दर ढग से तुम सुनाओ। हाँ, सुन्दर ढग से ही सुनाऊँगी, पर थोड़ा ही सुना सकूँगी। ७-१३ तुलसी की माला धारणकरनेवाले सुन्दर नन्दपुत्र की लीलाएँ कितनी विचित्र है ! युधिष्ठिर आदिको को कोई दुःख न हो इस विचार से जब निर्मल (नन्दपुत्र) उनके साथ रह रहे थे तब उस घर मे दूसरे ही दिन धृष्टद्युम्न का दूत अचानक चला आया और उसने समाचार सुनाया। "जो कुछ निष्ठुर अश्वत्थामा ने किया वह सब

अटङ्ङीटुकयॆन्नु धर्म्मजन् पऱञ्ञप्पो-
ऴटङ्ङीटातॊरु शोकमोटवळुळ्ट्टॊटे १७
मारुतियुटॆ मुन्पिलूवीणुरुण्टलऱिनाळ्
नारिमार्कुलमौलियाकिय पाञ्चालियुं । १८
ऎन्नुटॆ भर्त्तावे ! नीयिन्निनु वॆटियॊल्ला
मुन्नमुण्टाय दुःखं तीर्त्ततॊक्कयु नीये । १९
कल्याणसौगन्धिकं वेणमॆन्नतुमॆन्टॆ-
चॊल्लु केट्टुतु चॆन्नु कॊण्टन्नु नल्कियतुं । २०
कीचकन्मारॆक्कॊन्नु खेदत्तॆ कॆटुत्ततुं
नीचनां दुश्शासनन्मारिटं पिळर्न्नतुं । २१
मटुमित्तरमॆन्नॆच्चॊल्लि वेलकळ् चॆय्वान्
मुटुं नीयॊळिञ्ञिल्ल मटारुमिनिक्किप्पोळ् । २२
उट्वर्तन्नॆक्कॊन्न विप्रन्टॆ शिरोमणि
तॆट्टॆन्नु पऱिच्चॆनिक्काशु नी नल्कीटणं । २३
कुट्मिल्लतिनॆन्नु कट्वार्कुळलियु-
मिटिटु वीणीटुन्न कण्णुनीरोटे चॊन्नाळ् । २४
मारुति पाञ्चालितन्वाक्कु केट्टुतुनेर
तेरतिल् करेऱिनानायुधङ्ङळुमायि । २५
वेगत्तिल् भीमसेनन् पोयतु धरिच्चप्पो-
ळागमक्कालतलायोरानन्दमूर्त्ति कृष्णन् २६

दुःखित होती हो । तुम तो यज्ञसेन की पुत्री के रूप मे, यज्ञकुण्ड से निकलकर अयोनिजा हुई हो । जब युधिष्ठिर ने कहा— 'शान्त हो जाओ' तब शान्त न होनेवाले दु.ख के साथ वह तुरन्त ही भीम के सामने जाकर लोट-लोटकर रोने लगी, वह पाञ्चाली जो नारियां के कुल की मुकुट थी । मेरे पतिदेव ! तुम इसकी उपेक्षा न करो ! पहले जो दु.ख हुआ था उसे तुम ही ने तो दूर किया था । जब मैने कहा कि मुझे कल्याण-सौगन्धिक चाहिए तब जाकर उसे लानेवाले तो तुम ही थे । तुम ही ने तो कीचकों को मारकर मेरे खेद को समाप्त किया । नीच दुश्शासन की छाती तुम ही ने फाड़ा था । १५-२१ इस प्रकार मुझसे सबन्ध रखनेवाले काम करानेवाला अब तुम्हे छोड़कर और कोई नही है । अपने बन्धुओं को जिसने मारा उसके शिरोमणि को छीन लाओ और मुझे दे दो । उसमें कोई दोष नही है । इस प्रकार द्रौपदी ने आँसुओ की बूंदे गिराती हुई कहा । पाञ्चाली की बात सुनकर भीम आयुधो को लेकर रथ पर बैठा ।

सोदरन्तन्नेयुमेन् सुतन्मारेयु कोन्न
भूसुराधमन्तन्नेक्कोल्लणमिन्नुतन्ने । ७
अल्लाय्किलिनियिप्पोळ् ञान् मरिच्चीटुन्नतु-
ण्टिल्ल सशयमेन्नु केट्टु धर्म्मजन् चोन्नान् । ८
वल्लात वचनङ्ङळ् चोल्लाते नमुक्कोन्नाल्
पोल्लात फल वरुमोल्लात कर्म्मं चेय्ताल् । ९
पेटिच्चु वनपुक्कोराचार्यसुतन्तन्ने-
त्तेटिनाल् कण्टुकिट्टा कण्टालु कोन्नुकूटा । १०
शत्रुक्कळ्कैयालवर् युद्धत्तिल् मरिच्चति-
नित्र शोकिक्केण्टा नी नीक्कामो कर्म्मफलं । ११
ओत्तुकाणेटो कृष्णे ! धात्रीदेवनेक्कोन्नाल्
कीर्त्तिकेटेन्नियिल्ल नरकमुण्टाय्वरुं । १२
द्रोणरे कोन्नतोरु कार्यवुमल्ल नाथे !
दोपमिल्लतु दैवन्तन्नुटे मतमल्लो । १३
अतिनु तीयिल् मुळच्चुण्टायी धृष्टद्युम्न-
नतिनेस्साधिच्चवन् मरिच्चानङ्ङ्ञालु । १४
अज्ञानमुळ्ळजन दु खिक्कुन्नतुपोले
विज्ञानमुळ्ळ नीयेन्तिङ्ङने चोल्वान् कृष्णे ! १५
यज्ञसेनात्मजयाय्वन्नयोनिजयायि
यज्ञकुण्डत्तिङ्कल्निन्नल्लयो पिरन्नितु । १६

मेरे सहोदर वीर भाई ने मुझे दु ख का पात्र बनाया । जिस भूसुराधम ने मेरे भाई और पुत्रो को मारा वह आज ही समाप्त किया जाय ! १-७ नही तो मै मर जाऊँगी, इसमे कोई सन्देह नही ।" यह सुनकर युधिष्ठिर ने कहा— "कडी बाते मुझसे न कहो ।" क्योकि बुरे काम का फल भी बुरा ही होगा । डर से वन मे घुसे हुए आचार्यपुत्र को ढूँढकर पकड़ना कठिन है, और पकड़ा भी जाय तो मारना कठिन है । शत्रुओ के हाथ वे जो युद्ध मे मारे गये इसके लिये इतना दु:ख न करो । अपना कर्म का फल टाला नही जा सकता है । स्मरण रहे हे कृष्ण ! कि ब्राह्मण को मारने से न केवल अपयश होगा, नरक भी प्राप्त होगा । हे नाथे ! द्रोण जो मारा गया वह कुछ नही है । उसमे कोई दोप नही है । वह दैव का ही मत था । इसीलिए तो धृष्टद्युम्न अग्नि से पैदा हुआ था और उस काम को पूरा करके वह मर गया । यह जान लो । ८-१४ अज्ञ लोग दु ख अनुभव करते है, उनकी तरह विज्ञानवाली तुम भी क्यो

आपत्तु वन्ने वन्पर् कालत्तन्नरियावू
तापत्तिन्नवर् पिन्ने निवुर्न्नीट्टुकयिल्ल । ३६
अन्नरुळ्चेय्तु जगन्नायकनोट्टु कूटि
मन्नवन् किरीटियुमायोरु तेरिलेरि ३७
सत्वर गंगातीर प्रापिच्चु भीमन्तन्नो-
टेत्तिनानवर्कळे कण्टपोतश्वत्थामा ३८
गंगयिल्निन्नु करयेरिनान् भीतिकैक्को-
ण्टगजारातिसमनाचार्यसुतनप्पोळ् । ३९
ब्रह्मास्त्रमेट्टुत्तभिमन्त्रिच्चङ्डयच्चितु
धर्म्मजादिकळुटे सन्ततिपोलुमिप्पो- ४०
ळुन्मूलनाश वरिकेन्नवन् प्रयोगिच्चान्
चिन्मयनाय परमात्मावु कृष्णनप्पोळ् ४१
ब्रह्मास्त्रं प्रयोगिच्चानश्वत्थामावु पार्त्थ !
नम्मे रक्षिप्पान् नीयु ब्रह्मास्त्रमयक्केण । ४२
धर्म्मरक्षणत्तिनु ब्रह्मास्त्र कौण्टेयावू
ब्रह्मास्त्रत्तिन्नुपर ब्रह्मास्त्रमेन्नियिल्ल । ४३
रण्टुभागत्तुमोरु सङ्कट वरायकेन्नु
पण्डितनाय पार्त्थन् ब्रह्मास्त्र प्रयोगिच्चान् । ४४
अस्त्रङ्ङळटत्तुटन् तङ्डळिल् तट्टुन्नेर-
मिन्निलोकवुमाशु भस्ममाय् चमञ्ञोट्टु । ४५

करेगे । इस प्रकार कहनेवाले जगन्नायक (कृष्ण) के साथ राजा (युधिष्ठिर) अर्जुन को भी लेकर रथ पर बैठा और तुरन्त गगातट पर भीम के पास पहुँचा । उनको देखकर अश्वत्थामा डर के मारे गगा से निकला और देखने मे अगजाराति (शिव) के समान लगता था । उसने ब्रह्मास्त्र लेकर और उसे अभिमन्त्रित करके भेजा, इस विचार से, कि युधिष्ठिर आदि की सन्तान तक का उन्मूलन और नाश हो जाये । तब चिन्मय परमात्मा कृष्ण ने भी अश्वत्थामा पर ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया । हे अर्जुन हमारी रक्षा के लिए तुम भी ब्रह्मास्त्र छोडो । ३६-४२. धर्म का रक्षण ब्रह्मास्त्र से ही हो सकता है । और ब्रह्मास्त्र का जवाब ब्रह्मास्त्र से ही हो सकेगा । विद्वान् अर्जुन ने ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया ताकि दोनों ओर कोई विपत्ति न हो । जब दोनों अस्त्र निकट आकर टक्कर खायेगे तो तीनों लोक भस्म हो जायेगे । ब्रह्मा और अन्य देवता डरकर सोचने लगे कि अब क्या किया जाय ? यह देखकर जब जलते हुए

देवदेवेशन् मायामानुषन् नारायणन्
देवकीदेवियुटे पुण्यत्तिन् परिपाक २७
मून्नाय मूर्त्तिकळ्क्कु मूलमा प्रकृतिक्कु
मून्नाय जगत्तिनु मून्नाय परब्रह्म २८
भक्तवत्सलन्तन्टे भक्तरे रक्षिच्चुटन्
भुक्तिमुक्तिकळ् चेर्प्पान् दुष्टरेयोटुक्कुवान् २९
शक्तियोटिटचेन्ने मुग्धलोचननप्पोळ्
बद्धमोदेन मन्दहासवुचेय्तु तदा ३०
धर्म्मनन्दनन्तन्नोटिङ्ङनेयरुळ्चेय्तु
वन्मदमोटु पोयतेन्तिप्पोळ् वृकोदरन् । ३१
नारिमार् चोल्लुकेळ्क्कु भोषन्मार्निमित्तमा-
येरियोरापत्तुण्टामेवर्क्कु कूटिप्पिन्ने । ३२
शत्रुक्कळ् वलावलमेङ्ङनेयरियुन्नु ?
शक्तनेन्नभिमानिच्चीटिन मूढन् भीम-
नभिमानङ्ङळेरेयुळ्ळतङ्ङोट्टुमाका । ३३
अश्वत्थामावुतन्नेक्कोल्लुवान् पोयानल्लो
विश्वत्तिलवन्तन्नेक्कोल्लुवानारुमिल्ल । ३४
वैकाते चेन्नु कूट्टिक्कोण्टु ना पोन्नीटणम्
कैकटन्नीटुमुन्पे पिन्नेयेन्तावतोर्त्ताल् । ३५

भीमसेन के जल्दी चले जाने को देखकर आगमो का सार, आनन्दमूर्ति, देवदेवेश, मायामानुष, नारायण, देवकीदेवी के पुण्य का परिपाक, कृष्ण, तीनो मूर्त्तियो का, मूल प्रकृति का, तीनो लोगो का त्रिरूप परब्रह्म, २२-२८ भक्तवत्सल, अपने भक्तो की रक्षा करके भुक्ति और मुक्ति देने के लिए और दुष्टनिग्रह करने के लिए शक्तिशाली मुग्धलोचन ने मन्दहास करके उस समय युधिष्ठिर से इस प्रकार बोले । "इतने मद के साथ भीम अब क्यो निकला ? महिलाओ की बात सुनकर काम करनेवाले मूर्खो के कारण बडी विपत्ति हो जाती है । शत्रुओ का बल और अबल कैसे जाना जाय ? शक्तिशाली होने का अभिमान रखनेवाले मूर्ख भीम का अभिमान वहाँ चलेगा ही नही । वह निकला है अश्वत्थामा को मारने के लिए, पर इस ससार मे उसको मारनेवाला कोई नही है । अविलम्ब से जाकर उसे हमको लौटाना चाहिये, इसके पहले कि वह कोई बलात्कार कर बैठे । उसके बाद कुछ भी हो सकता है । २९-३५ अभिमानी लोग विपत्ति के आने के बाद ही समझते है । उसके बाद तो पश्चात्ताप भी न

व्यासोपदेशं

कृष्णनां पराशरनन्दनन् वेदव्यासन्
कृष्णमाहात्म्य पार्त्तु विप्रनोटरुळ्चेय्तान् । १
अप्रमेयत्वंपूण्ट सल्प्रभावत्तेत्तु
विप्रसत्तमनाकुमश्वत्थामावे ! केळ् नी । २
रत्नवुं कॊटुत्तुटनिप्पळॆ निकक्कणं
शक्तनां भीमन्तन्टॆ सत्यवु रक्षिक्कणं । ३
ऐकमत्यवुमिनि निङ्ङळिल् वन्निटेण
वैकातॆयुळ्ळिलुळ्ळ वैरवु कळयेणं । ४
रागद्वेषादिकळुमावोळ कुरय्क्कणं
दैवत्तिन्विलासङ्ङळॆन्नतुमुरय्क्कण । ५
निन्नुटॆ शिरोमणि कॊण्टुपोकणमॆन्नाय्
वन्नितु भीमनतु कॊटुत्तेमतियावू । ६
इत्तरं वेदव्यासन् चॊन्नतु केट्टु गुरु-
पुत्रनु सहजमांतन्नुटॆ शिरोमणि ७
चून्नॆटुत्तनिलजनाय भीमनु नल्कि
प्राणवेदनयोटु पोयवन् वनपुक्कान् । ८
नारदन्तानुं वेदव्यासनुमॆळुन्नळ्ळि
पारिटत्तिङ्कलुळ्ळ सङ्कटङ्ङळु तीर्न्नु । ९

व्यास का उपदेश

पराशर के पुत्र वेदव्यास कृष्ण ने श्रीकृष्ण का माहात्म्य देखकर ब्राह्मण (अश्वत्थामा) से कहा। अप्रमेय सत्प्रभाववाले हे ब्राह्मणवर! मेरी बात सुनो। "अपना रत्न देकर कमी को पूरा करो और शक्तिशाली भीम के सत्य की भी रक्षा करो। अब तुमलोगो मे ऐकमत्य होना चाहिए और अविलम्ब से भीतरी वैर को त्याग दो। जहाँ तक हो सके राग और द्वेष कम करो और अपने मन मे निश्चय करो कि यह सब ईश्वर की लीला है। तुम्हारे शिरोमणि ले जाने के लिए तो भीम आया था। उसे दिये बिना काम न चलेगा। १-६ वेदव्यास की यह बात सुनकर गुरुपुत्र ने अपने सहज शिरोमणि को उखाड़कर वायुपुत्र भीम को दे दिया और प्राणवेदना के साथ वन मे प्रवेश किया। नारद और वेदव्यास चले गये और पृथ्वी के सब दुःख समाप्त हुए, कमललोचन

पङ्कजयोनितानुं मट्टुळ्ळ देवकळु
शङ्किच्चु भीतिपूण्टारेन्तोरु कळिवेन्नु । ४६
सारमायेरियुन्नोरस्त्रङ्ङळ् तम्मिलुक्कोण्टु
पारेल्ला मुटिञ्ञीटुमेन्नतु कण्टनेरं ४७
नारदन् तानुं वेदव्यासनुमेळुन्नळ्ळि-
प्पाराते मद्धचेपुक्कारन्नेरं धनञ्जयन् ४८
भक्तिपूण्टवर्कळे वन्दिच्चु वेगत्तोटे
वित्रस्तहृदयनायस्त्रत्तेयतुनेरं
बुद्धिमानुपहरिच्चीटिनान् किरीटियुं । ४९
विस्मयप्पेट्टु लोकरेल्लारुमतु कण्टु
विश्वैकधनुर्द्धरनर्ज्जुननेन्नु चोन्नार् । ५०
तापसन्मारेक्कण्टोराचार्यतनयनुं
तापमायितु पारमेङ्किलुमतुनेर । ५१
अस्त्रं ञानभिमन्त्रिच्चयच्चेनतिनिन्नि
प्रत्यपहार चेय्वानेलयु पणियत्रे । ५२
विप्रनिङ्ङने परञ्ञीटिनोरनन्तर
चित्पुमानाय कृष्णनरुळिच्चेय्तानेवं— ५३
सन्ततियोटुंकूटेप्पाण्डवन्मारे ञानो
सन्तत कात्ततिन्नुं कात्तुकोळ्ळुवन्तानु । ५४
इङ्ङने मूवायिरत्ताण्टेक्कु पोय्क्कोटो
निन्नुटे मुऱयेन्नु शापवुमरुळ्चेय्तु । ५५

दोनो अस्त्रो का आपस मे टक्कर होगा तो सारी पृथिवी जल जायगी नारद और वेदव्यास पधारे और वीच मे घुस गये। तव अर्जुन ने भक्ति के साथ उनकी वन्दना की और काँपते हृदय के साथ उस बुद्धिमान् किरीटी ने अस्त्र का उपसहार कर दिया। ४३-४९ यह देखकर सव लोग विस्मित हुए और वोले— अर्जुन ही विश्व का एकमात्र धनुर्धर है। आचार्यपुत्र तो उस समय तापसो को देखकर अत्यन्त दु खित हुआ। और बोला— "मैंने अभिमन्त्रित करके अस्त्र छोड़ा है उसे वापस लेना अत्यन्त कठिन है।" विप्र के इस प्रकार कहने के वाद चित्पुमान् कृष्ण ने उत्तर दिया— "मैने पाण्डवो की सदैव सन्ततिसहित रक्षा की है और आज भी रक्षा करूँगा।" यह कहकर उसको शाप भी दिया कि तीन हजार वर्ष तक तुम ऐसे ही व्यर्थ घूमते रहो। ५०-५५

नारायणनुटे लीलाविशेषङ्ङ-
ळारालुमोर्त्तलरिञ्ञु कूटाय्कयाल् । ६
नेरे पऱवान् मटियिनिक्कॆन्नयुं
पाराते चॊल्लामरिञ्ञतॊट्टो ञान्ट्टु । ७
आयर्कुलत्तिल् पिऱन्न मायामय-
नायोधनत्तिनु पार्त्थनु सूतनाय् । ८
मायाविकळामसुरराजाक्कळे
माय्मॊळिञ्ञु कॊल्लिच्चोरनन्तरं ९
शौर्यकलर्न्नोरु मारुतियेक्कॊण्टु
दुर्योधनवधं चेय्यिच्चकालत्तु । १०
मक्कळ् मरिच्चोरु दु.ख मुळुक्कया-
लुळ्क्कान्पळिञ्ञु धृतराष्ट्रमन्नवन् । ११
केळुन्ननेरत्तु सञ्जयन् चॊल्लिनान्
केळ्प्पेटाय्क नीयेतुमे मन्नव ! १२
वाळप्पळं तानशिप्पान् करयुन्न
बालक्किटाङ्ङळेप्पोले तुटङ्ङाय्क । १३
कष्ट निरूपिक्किलक्षौहिणि पति-
नेट्टु महाबलराय राजाक्कळु १४
कालवशत्ताल् मरिच्चारतिन्नितु-
कालं करञ्ञळल् तेटाय्क नी वृथा । १५
सञ्जयन् चॊन्नतु केट्टु धृतराष्ट्र-
नञ्जसा मोहिच्चु वीणितु भूमियिल् । १६

हरे ! तुम्हारी जय हो ! नारायण के सभी लीलाविशेष कोई भी न जान सकता है । १-६ इसलिए सब बताना मेरा जी नही चाहता है । जो कुछ मैं जानती हूँ थोड़ा-थोडा करके जल्दी कहूँगी । गोपकुल मे जन्म लेकर मायामय ने युद्ध मे अर्जुन का सारथि बनकर मायावी असुर राजाओ का कपट छोड़कर वध कराने के वाद और शूर भीम से दुर्योधन का वध कराने के वाद, जव पुत्रो के निधन के कारण राजा धृतराष्ट्र दिल खोलकर विलाप करते थे तव सञ्जय ने कहा— हे राजन् ! विलाप न करो ! केला खाने के लिए रोनेवाले वच्चो के समान तुम भी न शुरू करो ! ७-१३ हाँ यह बडा कष्ट ही हुआ कि अठारह अक्षौहिणियाँ (सेनाये) और शक्तिशाली राजगण काल के प्रभाव से समाप्त हुए ।

सारसविलोचनन् गोविन्दन् नारायणन्
नीरदनिरंपूण्ट नीरजासनसेव्यन्। १०
धर्म्मजादिकळोटुकूटयङ्ङ्ळुन्नळिळ
निर्म्मलन् वासुदेवन् नीतियिल् वसिच्चुतन्ने ।११

॥ ऐषिक समाप्तं ॥

गोविन्द, नारायण, नीलमेघ के रगवाले कमलपर वैठनेवाले का सेव्य निर्मल वासुदेव युधिष्ठिर आदिको के साथ गये और सव उनकी नीति के अनुसार रहे। ७-११

॥ ऐपिक पर्व समाप्त ॥

स्त्री

नल्त्तेन्मौळि मम तत्ते ! दिनमनु
चित्ते सुखमरुळुक सरसे ! १
दुग्धोदकनिधिमद्ध्ये मरुविन-
मुग्धेक्षणनुटे नल्चरितरसं २
बद्धादरमति भक्त्या वद वद
मुग्धे ! मुहुरपि मुहुरपि नी। ३
शुद्धात्मनि परतत्वे विहरति
सत्ये ! मम मतिरतिमधुरं। ४
नारायण ! जय नारायण ! हरे !
नारायण ! जय नारायण ! हरे ! ५

स्त्रीपर्व

हे ! शहद के समान मीठी आवाजवाली मेरी शुकि ! प्रतिदिन, हे सरसे ! मेरे चित्त मे सुख पैदा करो। क्षीरसागर के बीच मे विराजमान मुग्धलोचन के रसयुक्त अच्छे चरित को तुम सादर और भक्ति के साथ बार-बार कहो। हे सच्चे ! मेरा मन शुद्धात्म परतत्त्व मे सानन्द रहता है। हे नारायण ! हे हरे ! तुम्हारी जय हो ! हे नारायण ! हे

कालचक्रभ्रमं पार्त्तु कण्टालॊरु-
कालवु दुःखिप्पतिनिल्ल कारण । ६
जीर्ण्णवस्त्रं कळञ्ञन्पॊट्टु मानुषन्
पूर्ण्णशोभ नववस्त्र धरिच्चीटु । ७
जीर्ण्णदेह कळञ्ञन्पोटु देहिकळ्
पूर्ण्णशोभं नवदेहङ्ङळ् कॊळ्ळुन्नु । ८
नित्यमल्लेतुमे देहादिकळितु
नित्यनाकुन्नतु निश्चयमीश्वरन् । ९
चत्तु पिरन्नुमिरिक्कुमिज्जन्तुक्कळ्
चित्ते सुखदुःखमॆन्तिनतिन्नहो ! १०
ऎन्नु तुटङ्ङियतॆन्नुमरिञ्ञति-
ल्लॆन्निनि मारुन्नतॆन्नुमरिञ्ञील । ११
आद्यन्तमिल्लात केवलन्वेलकळ्-
क्काद्यन्तमिल्लॆन्नरिक धरापते ! १२
मुन्पिलिविटेक्कॆविटॆनिन्निक्काल-
मन्पोटु वन्नितु नीयुं महीपते ? १३
पोकुन्नुतिन्नियॆविटेक्कतोर्क्क नी
चाकुन्न कारियमिल्लॆन्नो तोन्नुन्नु । १४
निन्नुटॆ मक्कळो पण्टिवरोर्क्क नी-
यिन्नि निनक्कवर् मक्कळाय् मेवुमो ? १५

है। मानव तो अपना जीर्णवस्त्र को त्याग कर नया पूर्ण शोभावाले वस्त्र पहन लेता है। १-७ देही भी उसी प्रकार अपने जीर्ण शरीर को छोड़कर पूर्ण शोभावाले नये शरीर स्वीकार कर लेते है। ये देह आदि तो नित्य नही है। केवल ईश्वर ही नित्य है। ये सब प्राणी पैदा होते और मरते रहते है, इसलिए सुख और दुःख क्यो किये जायँ ? कोई नही जानता कि यह क्रम कब प्रारम्भ हुआ और कब बन्द होगा यह भी कोई न जानता है। हे भूपाल ! जान लो कि अनादि और अनन्त की इन लीलाओं का भी कोई आदि और अन्त नही है। तुम पहले कहाँ से यहाँ प्रेम से आये हो, हे राजन् ? और कहाँ जानेवाले हो ? सोचो तो । क्या तुम समझते हो कि मरने का प्रश्न ही नही है ? ८-१४ तुम्हारे जो पहले पुत्र थे वे क्या आज फिर तुम्हारे पुत्र हो सकते है ? जो पीछे आये वे पहले ही चले गये और जो पहले आये वे पीछे जायेगे ही। जान

ज्ञानियायुळ्ळ विदुररतुनेरं
दीननायुळ्ळोररचनें मेल्लवे १७
तापालेटुत्तु निर्वत्तियिरुत्तिनान्
तापं कॆटुप्पान् तळिच्चु सलिलवु १८
शोक कॆटुप्पान् परञ्ञु तुटङ्ङिनान् ।
शोभनमायुळ्ळ वाक्कुकळोरोन्ने १९

विदुरन् धृतराष्ट्ररोटु चॆय्युन्न ज्ञानोपदेशं

ज्ञानविज्ञानप्रभावङ्ङळुळ्ळ नी
दीननावानोरु कारणमिल्ल केळ् १
मूढतयुळ्ळवर्क्कुळ्ळ तॊळिलितु
तेटॊला मन्नवा ! पार्त्तु काण्काशु नी । २
पृथ्वीपते ! तव पुत्ररोटॊन्निच्चु
मित्रमायुळ्ळोरु पृथ्वीपतिकळुं ३
ऎत्रयुण्टिङ्ङने मृत्युभविच्चतु
चित्रमोरु कालवैभवं भूपते ! ४
जातनायाल् मृतनामवनॆन्नोरु-
नीति चमच्चितु नीरजसंभवन् । ५

उसके लिए अब रो-रोकर तुम व्यर्थ दुखित न हो जाओ। सञ्जय की बात सुनकर धृतराष्ट्र तुरन्त बेहोश हुए और पृथिवी पर गिर गये। तब ज्ञानी विदुर ने दीन राजा को धीरे-धीरे उठाकर सीधे बैठाया। बेहोशी दूर करने के लिए उनपर जल छिड़का। और शोक नष्ट करने के लिए एक-एक करके इन शोभन बातों को कहा। १४-१९

विदुर द्वारा धृतराष्ट्र को ज्ञानोपदेश

तुम तो ज्ञान और विज्ञान से युक्त हो। कोई कारण नहीं है कि तुम दीन हो जाओ। यह तो मूर्खों का काम है, हे राजन् ! तुम इसमे न पड़ो ! तुम जरा ठहरो और देखो। हे राजन् ! तुम्हारे पुत्रो के साथ कितने मित्र भूपालो ने इस प्रकार मृत्यु प्राप्त की ! हे भूपते ! यह काल का वैभव विचित्र है। नीरजसभव (ब्रह्मा) ने यह नीति निश्चित की है कि जो कोई पैदा होगा, वह मृत्यु भी प्राप्त करेगा। कालचक्र के भ्रमण अगर देखे जायँ तो दुखित होने का कोई कारण न रह जाता

अच्छनेन्नु पुनरम्मयेन्नु तनि-
क्किकच्छयेन्नीट्टु कळत्रमेन्नुं चिलर् । २६
पुत्रनेन्नु चिलर् मित्रमेन्नु चिलर्
चित्तभ्रममिद चित्रमत्रे तुलो । २७
ज्येष्ठकनिष्ठादि नानाविधमाय-
गोष्ठिकळोक्किकलो नाणमामेत्रयु । २८
चेर्च्चयुं चार्च्चयु कैक्कोण्टोरेटत्तु
वाच्च कुतूहलस्नेहबन्धत्तोटु २९
कूटुमोरित्तिरिनेरमवरव-
रीटिन कर्म्मगतिक्कोत्तवण्णमे । ३०
ओरोरो नाळिलोरोरो वळिक्कु पोय्
वेरामतिनेन्तु कारण केळुवान् ? ३१
मूत्तु पळुत्तु वीणीट्टु चिल फल-
मोर्त्तीट्टु पूविल् कोळिञ्ञुपोकु चिल- ३२
पत्रङ्ङळुं पळुत्ताल् कोळियु चिल
पृथ्वीपते ! तळिरु कोळियुं चिल- ३३
नीर्प्पोळपोले शरीरङ्ङळिङ्ङने
वाय्पोट्टु काणा मऴयु पुनरव । ३४
केळ्क्क महीपते ! काणात निन्ने ञान्
केळ्प्पिच्चुतन्नेयुऴप्पिच्चुकूटुमो । ३५
उळ्ळिलेक्कण्कोण्टु काणुन्न काळ्चपो-
लुळ्ळताकुन्नततो भवानुण्टल्लो । ३६

समझते है । किसी को पुत्र समझना और किसी को मित्र मानना यह सब एक विचित्र चित्तभ्रम है । ज्येष्ठ और कनिष्ठ आदि होने के नाते जो चेष्टाये की जाती है वे, सोचने पर, लज्जास्पद होती है । समचित्तता और रिश्ते के आधार पर बडे कुतूहल, स्नेह और संबन्ध से एक स्थान मे थोडी देर के लिए इकट्ठा होते हैं अपने-अपने पूर्व कर्म के अनुसार । २३-३० किसी भी दिन किसी भी मार्ग चलकर अलग हो सकते है, इसमे विलाप करने की क्या वात है ? कोई-कोई फल परिपक्क होकर गिरता है, स्मरण रहे और कोई-कोई फूल ही मे विलीन हो जाता है । पत्ता भी कोई-कोई पक्का होनेपर गिरता है और कोई-कोई तो पल्लवावस्था मे ही गिर जाता है जलसस्य के समान बडे-बडे शरीर-वाले तो होते है पर वे भी नष्ट हो जाते हैं । हे भूपाल ! तुम तो अन्धे

पिन्नालॆ वन्नवर् मुन्पिलॆ पोयिनार्
मुन्नमे वन्नवर् पिन्नालॆयाय्वरु । १६
वाट्टमिल्लात वेगेन नदिकळिल्
काष्ठङ्ङळॆन्तकणक्कॆ धरिक्क नी । १७
पान्थर् पॆरुवळियन्पल तन्निले
तान्तरायुवन्नुटन् कूटुमॊरुनेर । १८
ओरो कथयु परञ्ञु रसिच्चवर्
पार मळतान् वॆयिल्तानिरुट्टुतान् १९
पोवोळमॊन्तिच्चिरुन्नालॊरो वळि
पोवोरवरवर् मुन्पुपिन्पॆन्ततिल् ? २०
पक्षिकळॊक्कप्पलवळि वन्नॊरु-
वृक्षत्तॆयाश्रयिच्चॊट्टुनेरं वसि- २१
च्चॊक्कयोरो वळि पिन्नॆप्परन्नुपो
दु.खिक्कुमारिल्लतिन्नवरारुमे । २२
पर्ण्णङ्ङळ् वायुवशत्तालुणङ्ङियाल्
वन्नॊरिटत्तुकूटुं चिल वायुना २३
पिन्नॆयु तङ्ङळिल् वेरामतुपोलॆ
वन्नुकूटीटुमॊरेटत्तु जन्तुक्कळ् । २४
कर्म्मवशत्तालितॆन्नरि मन्नव !
कर्म्मक्षय वरुं नेरं पिरिकयुं । २५

लो कि ये उन काठ के टुकड़ो के समान है जो वेग से बहनेवाली नदियो मे दिखाई देते है। पथिक राजमार्ग पर स्थित मन्दिर मे थके मान्दे इधर-उधर से आकर इकट्ठा होते हैं। तरह-तरह की कथाएँ कहते हुए आनन्द लेते है, वर्षा या धूप या अन्धेरा समाप्त होने तक साथ रहकर तदनन्तर अपना-अपना रास्ता चले जाते है, इसमे पहले-वाद का प्रश्न ही कहाँ ? चिड़ियाँ भी इधर-उधर से आकर एक ही वृक्ष पर थोड़ी देर रहकर अपने-अपने रास्ते उड़ जाती है। कोई भी दु ख नही करती है। १५-२२ पत्ते हवे से सूखकर एक स्थान मे इकट्ठा हो जाते है। फिर हवा ही से अलग-अलग हो जाते है। उसी प्रकार प्राणी भी एक स्थान मे पहुँच जाते है। हे भूपाल ! जान लीजिये कि यह कर्म के कारण होता है और जब कर्म का क्षय हो जाता है तो वे अलग हो जाते है। किसी को पिता, किसी को माता और किसी को अपने प्रेम का पात्र पत्नी

जन्मवुं नाशवुमिल्लात मंगलन्
निर्म्मलन् धर्म्मस्थितिकरन् निर्म्ममन् ४७
मायामनुष्यनाय् वन्निह भूमियिल्
मायामयमाय कर्म्मङ्ङळ् काट्टुवान् ४८
वृष्णिकुलत्तिल् पिऱन्नु वळर्न्नोरु-
कृष्णनाकुन्नतु विष्णु निरन्तरं । ४९
जिष्णुविन् तेरु नटत्तिय गोपति
जिष्णुमुखामरसेव्यनामव्ययन् । ५०
नित्यमाकुन्नतु मिथ्य मट्टोक्कयु-
मित्थं निरूपिच्चु तच्चरणाबुजं ५१
चित्तत्तिलन्पोटुऱप्पिच्चुकोळ्क नी
मुक्तिवरुवानतेन्नियिल्लेतुमे । ५२
कामवुं क्रोधवुं लोभवुं मोहवुं
प्रेमवुं भीतियुं दु:खसुखङ्ङळुं । ५३
ओक्कवक्कळञ्ञु शमदमसन्तोष-
सत्यार्ज्जवैकान्तभक्तिविश्वासवुं ५४
कैक्कोण्टु वाळुक नीयिनियेन्नुटन्
मुख्यनायुळ्ळ विदुरर् पऱञ्ञप्पोळ् । ५५
संविल्स्वरूपत्तिलाक्कि मनतळि-
रंबिकानन्दननाय नराधिपन् । ५६
क्षत्तावु पिन्नेयुं चोन्नानवनोटु
चित्तविषादं कळञ्ञिनि वैकाते- ५७

धर्म की स्थिति करनेवाला, निर्मम, मायामय कर्म प्रदर्शित करने के लिये इस पृथिवी पर एक मायामय मनुष्य वनकर समागत, वृष्णियो के वश में पैदा होकर पाला गया कृष्ण साक्षाद् विष्णु है। वही गोप है जिसने अर्जुन का रथ चलाया। वह इन्द्र आदि देवताओ का अर्च्य है, अव्यय है। वही नित्य है, और सव मिथ्या है— ऐसा समझकर उसके चरणकमलों को अपने ध्यान में तुम स्थिर करो। यही एक उपाय है मोक्ष प्राप्त करने का। ४५-५२ काम, क्रोध, लोभ, मोह, प्रेम, भय, दु:ख, सुख, यह सव त्याग करो और शम, दम, सन्तोष, सत्य, नेकी, एकान्त भक्ति और विश्वास को अपनाकर रहो— ऐसा जव प्रमुख विदुरजी ने कहा तव राजा अंविकापुत्र ने अपने चित्त को सवित्स्वरूप मे सर्मापित किया। तव

नित्यमल्लिक्कण्टतोन्नुमरिक नी
नित्यमाकुन्नतेन्तेन्नु चोल्लामह । ३७
तत्त्वत्तिनाधारमूलमाय् सत्यमाय्
सत्त्वरजस्तमसामतिदूरमाय् ३८
ज्ञानमाय् मायारहितमायेकमा-
यानन्दपूर्णनायव्यक्तरूपमा- ३९
यादियुमन्तवुमिल्लातवस्तुवा-
याधारमिप्रपञ्चत्तिनाय् सूक्ष्ममाय्- ४०
वाङ्मनोगोचरमल्लात दैवमा-
याम्नायमायतिनन्तमायर्थमाय् ४१
मेवु परब्रह्ममा परमात्मावु
देवकीदेवि तिरुमकनीश्वरन् ४२
देवदेवन्मुकुन्दन् नन्दनन्दनन्
गोविन्दनिन्दिरावल्लभन् सुन्दरन् ४३
निर्ग्गुणनायवन् निर्व्विकारात्मकन्
चिल्घननाकिय सत्पुमानत्भुतन् ४४
पत्मनाभन् जगन्मंगलन् केशवन्
पत्मविलोचनन् नारायणन् परन् ४५
भक्तियुळ्ळोरुटे चित्तत्तिल् मेवुन्न-
भक्तप्रियन् परमेश्वरनच्युतन् ४६

हो। तुमको मै कहाँ तक बाते सुनाकर समझा सकूँगा। अपनी भीतरी आँख से जो तुम्हे दिखाई देता है उसकी सत्यता को तो तुम जानते ही हो। जान लो कि यह जो दिखाई देता है वह नित्य नही है। नित्य क्या है यह मै बतलाऊँगा। ३१-३७ सभी तत्त्वो का आधार, सत्य, सत्त्व, रज और तम से दूर स्थित, ज्ञानात्मक, मायारहित, एक, आनन्द-पूर्ण, अव्यक्तरूप, आदि और अन्त मे हीन वस्तु, इस प्रपञ्च का आधार, सूक्ष्म, वाक् और मन का अगोचर देवता, वेदस्वरूप, वेद का अन्त, वेद का अर्थस्वरूप, परब्रह्म, परमात्मा, देवकीदेवी का सुपुत्र, ईश्वर, देवो का देव, मुकुन्द, नन्दपुत्र, गोविन्द, लक्ष्मीवल्लभ, सुन्दर, निर्गुण, निर्विकार चिद्घन, सत्पुमान्, अद्भुत, ३८-४४ पद्मनाभ, जगन्मङ्गल, केशव, कमललोचन, नारायण, पर, भक्तो के चित्त मे निवास करनेवाला भक्तप्रिय, परमेश्वर, अच्युत, जन्म और नाश से रहित मगलमूर्ति, निर्मल,

केळ्क्क मदीयमां वाक्कु महीपते !
मोक्षमॊ़ळिञ्ञु करुताय्किनियेतु । ६९
मक्कळ् मरिच्चितॆन्नोर्त्तु शोकिक्कॊला
मक्कळल्लोर्क्किल् निनक्कवरारुमे । ७०
मायया मक्कळॆन्नुळ्ळ बुद्धिभ्रमं
मायुमाऱायतिल्ले निनक्किन्नियुं ? ७१
वाट्टं कळञ्ञु सन्तुष्टनाय् वाळ्क नी
केट्टालुमॆङ्किल् च्चॊवितन्नु वास्तव । ७२
भूमियिल्वन्नु पिऱन्नोरसुरर्कळ्
भूमिक्कॊट्टुक्करुतातॆ चमञ्ञतु । ७३
वानवरोट्टुमॊरुमिच्चवर्चॆन्नु
धेनुवाय्निन्नु विरिञ्चनोटोतिनाळ् । ७४
अप्पोळ् विरिञ्चनु देवसमूहवु
पत्मनाभन् वसिक्कुन्न पालाळियिल् ७५
चॆन्नु पुकण्णऱियिच्चितु केट्टपो-
तण्णॊजलोचननाय नारायणन् ७६
देवकीदेवीतिरुमकनाय्वन्नु
देवकळ्क्कुं धरणिक्कुमुण्टायॊरु ७७
तापं कॆटुप्पान् पिऱन्नितऱिक नी
तापमतिन्नु मनस्सिलुण्टाकॊला । ७८

असत्य, इन दोनो मे विवेक करनेवाले महामुनि ने राजा से बुद्धिमान् विदुरजी के सामने, जो तत्त्व सत्य है उसको सुनाया । हे राजन् ! मेरी वात सुनो । मोक्ष के सिवाय अब और कुछ न ढूँढो । यह सोचकर कि पुत्रो का निधन हो गया तुम शोक न करो । सोचो तो ये तुम्हारे पुत्र ही न थे । माया के कारण ये मेरे पुत्र है ऐसा जो तुम्हारा बुद्धिभ्रम हुआ था वह क्या अब भी नष्ट न होने लगा है ? दैन्य छोडकर सन्तुष्ट होकर रहो और ध्यान से मुझसे परमार्थ सुनो । जो असुर पृथिवी पर पैदा हुए थे वे पृथिवी के लिए असह्य हो गये । ६७-७३ देवो के साथ वे गये और एक धेनु के रूप मे उन्होने ब्रह्मा को सव वतला दिया । तव ब्रह्मा और देवगण क्षीरसागर गये जहाँ पद्मनाभ (विष्णु) रहते थे और उनकी प्रशसा करके उनको सब सुना दिया । सुनकर कमललोचन नारायण देवकीदेवी के सुपुत्र बनकर देवो का और पृथिवी का दु.ख दूर करने के लिए पृथिवी पर पैदा हुए, जान लो । उसके लिए चित्त मे

युत्तमयायुळ्ळ गान्धारिदेवियुं
मित्रवर्गङ्ङळुं कूटियोरुमिच्चु ५८
सत्यपरायणन्माराय पाण्डव-
र्क्कत्तलुकेट्टुत्तिनि रक्षिच्चुकोळ्ळुक । ५९
पुत्रराकुन्नतवर्कळ् निङ्ङळ्क्किनि
नित्यसुखत्तोटु रक्षिप्पोर् निङ्ङळे । ६०
द्वेषवुं भेदवु मत्सरमादियां
दोषवुमिल्लवर्क्केन्नरि मन्नव ! ६१
निङ्ङळ्क्कु वेण्टुं परगतियुमवर्
तङ्ङळ् चेय्युन्न कर्म्मत्ताल् वरुत्तुवोर् । ६२
इत्थं विदुरर् परयुन्ननेरत्तु
सत्यवतीसुतनाय मुनीश्वरन् ६३
पुत्रशोकं केट्टुत्तीटुवान् भारत-
कर्त्तावु कृष्णनां द्वैपायनन् तानुं । ६४
वेगमोटेयेळुन्नळ्ळियतुकण्टु-
शोक कलर्न्नु नृपनुं विदुररु ६५
वीणु नमस्करिच्चाशु विनयमो-
टाननपद्मवु ताळ्त्तिनिल्क्कुंविधौ । ६६
नित्यमनित्यमेन्नुळ्ळ रण्टिङ्कलुं
वस्तुविवेकं कलर्न्न महामुनि । ६७
सत्यमाकुन्नतु चोन्नान् नृपनोटु
बुद्धिमानाय विदुररुं केळ्क्कवे । ६८

विदुरजी ने फिर कहा— 'अपने चित्त का विषाद छोड़ो और साध्वी गान्धारी देवी और अन्य मित्रवर्ग के साथ सत्य परायण पाण्डवों का दुःख दूर करके उनकी रक्षा करो। ५३-५९ अब वे ही तुम्हारे पुत्र हैं और वे बड़े सुख से तुम लोगों की रक्षा करेंगे। हे राजन्! जान लो कि वे द्वेष, भेद, मत्सर आदि दोषों से रहित हैं। और वे अपने कर्मों के द्वारा तुमलोगों की परगति पैदा करेंगे। जब विदुरजी इस प्रकार कह रहे थे तब सत्यवती के पुत्र मुनीश्वर महाभारत के रचयिता, कृष्णद्वैपायन को पुत्रशोक को दूर करने के लिए वेग से पधारते देखकर धृतराष्ट्र और विदुर, शोक करते हुए, उनके चरणों पड़े और बड़े विनय के साथ अपने मुखकमल को नीचा करते हुए खड़े हो गये। ६०-६६ तब सत्य और

तान् तान् मरुवुन्न गेहमकपुक्कु
क्लान्तमारायि मुट्टुटङ्ङीटिनार् । ८९
अंबुजलोचनन्तन्नुटे चोल्लिना-
लंबिकानन्दनन्तन् कळ्ळल् कूप्पुवान् ९०
धर्म्मजन्मावुमवरजन्मारुमाय्
सन्मार्ग्गमोटु नटन्नारतुनेर । ९१
आयतलोचननाकिय माधव-
नायसमायोरु भीमरूपत्तेयु ९२
न्यायमुण्टेन्नरुळ्चेय्तेटुप्पिच्चुको-
ण्टायितेळुन्नळ्ळत्तेन्तितिन् कारण ? ९३
मायामयनाय नारायणनुटे
मायाविलासङ्ङळार्क्करिञ्ञीटावू । ९४
प्रीतियुं भीतियुं दुःखवुं भक्तियुं
नीतियुं नाणवुं कैक्कोण्टु धर्म्मजन् ९५
पादसरोजत्तिल् वीणु नमस्करि-
च्चातुरनायेळुनेट्टु निल्क्कुंविधौ । ९६
मन्दमन्दं करंकोण्टु तप्पिप्पिटि-
च्चुण्णी ! वरिक वरिकेन्नरुळ्चेय्तु । ९७
गाढगाढ पुणर्न्नूढमोदं नृपन्
कूटत्तलयिल् मुकर्न्नु मुकर्न्नुटन् ९८
आयुष्मानाकेन्नु पिन्नेयु पिन्नेयु-
माशिस्सुकळरुळ्चेय्तु निर्त्तीटिनान् । ९९

(कृष्ण) के कहने से अम्बिकानन्दन (धृतराष्ट्र) के चरणो की वन्दना करने के लिए युधिष्ठिर और उनके भाई ठीक ढंग से निकले। आयत-लोचन (कृष्ण) माधव भीम की एक लोहे की मूर्ति को 'इसमे एक न्याय है' ऐसा कहते हुए जो उठवा ले जा रहे थे, इसका क्या कारण है! मायामय नारायण के मायाविलासो को कौन समझ सकता है? ८९-९४ जब युधिष्ठिर ने प्रीति, भीति (डर) दुःख, भक्ति, नीति, और लज्जा का अनुभव करते हुए चरणकमलो पडकर नमस्कार किया और दुःखित होकर खड़े हुए तब राजा ने धीरे-धीरे हाथ से टटोलते हुए कहा— 'बेटा! आओ, आओ' और बड़े प्रमोद के साथ उनका आलिङ्गन किया। और सिर को बार-बार चूमते हुए अनेक बार कहा 'आयुष्मान् होओ' और

देवाशमायतु पाण्डवन्मारेन्नु
तेरुक शोकवु माट्टुक तावकं । ७९
मूलविनाशमिवक्कु वरुत्तुवान्
मूलमाय् निन्टे मकनाय् सुयोधनन् । ८०
पारिल् पिरन्नतु पार्क्किल् कलियन्ने
नेरे धरिक्क नी निन्मकनल्लवन् । ८१
नित्यमल्लिक्कण्टतोन्नुमरिक नी
नित्यमाकुन्नतात्मावु नारायणन् । ८२
मिथ्ययेन्नोर्त्तरुळिप्रपञ्चत्ते नी
सत्यमेन्नोर्त्तुपोम्मायकोण्टेवरुं । ८३
इत्थमरुळ्चेय्ततोक्क ग्रहिच्चुटन्
चित्त तेळिञ्ञु विदुररुमादराल् । ८४
अंबिकासुतन् दुःखवुं तीर्त्तुट-
नम्मुनितानु मरञ्ञरुळीटिनान् । ८५
अध्यात्ममायुळ्ळ वाक्कुकळ् केट्टु पोय्
हस्तिनं पुक्कानरचनुमन्नेर । ८६
भर्तृपुत्रादिकळोक्क मरिक्कयाल्
चित्तमुळ्ळन्नु तोळिच्चलच्चेलयु ८७
कान्तमाराकिन कामिनीवर्ग्गवुं
गान्धारियोटुकूटाकुलप्पेट्टु पोय् । ८८

दुःख न करो। जान लो कि पाण्डव देवो के अंश है और अपना शोक समाप्त करो। इनका मूलविनाश करने के लिए तुम्हारा पुत्र सुयोधन निमित्त बना। ७४-८० सोचो तो वह कलि ही था जिसने पृथिवी पर जन्म लिया था। इस वात को ठीक समझो— वह तुम्हारा पुत्र नही था। जो कुछ यहाँ दिखाई देता है वह नित्य नही है। केवल नारायण ही नित्य है जो आत्मा है। इस प्रपञ्च को तुम मिथ्या समझो। माया के ही कारण उसे लोग सत्य समझते है। उनकी कही इन बातो को ग्रहण करने के वाद विदुरजी का सादर चित्त प्रसन्न हुआ। अंबिकापुत्र (धृतराष्ट्र) का दुःख दूर करके वह मुनि (व्यास) भी चले गये। अध्यात्म की इन वातो को सुनने के वाद राजा हस्तिनापुर सिधारे। पतियो और पुत्रों के निधन से प्रेम करनेवाले कामिनीवर्ग का चित्त अत्यन्त सन्तप्त हुआ और गान्धारी के साथ वहुत दुःखित हुआ। ८१-८८ अपने-अपने घर जाकर अत्यन्त क्षीण होने के कारण विलाप करने लगा। अम्वुजलोचन